१ओं सतिगुर प्रसादि॥

आदि
श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी

मूल पाठ सहित हिन्दी अनुवाद

(भाग पहिला)

(अंग १ से ३४६ तक)

१ ੴ सतिगुरु प्रसादि॥

आदि

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी

(मूल पाठ सहित हिन्दी अनुवाद)

भाग पहिला

{अंग १ से ३४६ तक}

अनुवादक :

साहिब सिंघ, चरण सिंघ

डा. अजीत सिंघ औलख

लिप्यन्तरण :

जतिन्द्र कुमार

भा. ... घ

ISBN : 978-81-7601-996-5

प्रथम संस्करण : 2009

भाग पहिला भेटा : 500-00

संपूर्णतः सैट-चार भाग भेटा : 2000-00

प्रकाशक :

भा.चतर सिंघ जीवन सिंघ

बाज़ार माई सेवां, अमृतसर

फोन/फैक्स : 91-183-2547974, 2557973, 2542346

E-mail : csjssales@hotmail.com,
cjgroup77@yahoo.com

Visit website : www.csjs.com

विनती : पोथी का पाठ आरम्भ करने से पूर्व इसके सभी अंग देख लिए जाएं जी। अगर कहीं कोई त्रुटि नजर आए तो इसे प्राप्ति स्थान से बदला लेवें जी।

'भुलण अंदरि सभु को अभुलु गुरू करतारु॥' —प्रकाशक

मुद्रक : जीवन प्रिंटर्ज, अमृतसर।

आमुख

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का आधुनिक अनुवाद समय की मांग पर आधारित है, जो समय की मांग को मुख्य रखकर किया गया है। यह इस मुख्य तथ्य पर आधारित है कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के तत्वज्ञान को पर्याप्त ढंग से समझा जाए। आज सामान्य अनुवाद मिलते हैं जो केवल अनुवाद तक ही सीमित होते हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के मूल सिद्धांत को समझना बड़ा कठिन है, एक तथ्य जिसकी पुनः पुनः व्याख्या की जाती है, वह अनहद शब्द या अनहद नाद है। यह अनहद नाद वास्तव में क्या है, दरअसल अनहद नाद ही प्रभु का नाम है। परन्तु हम अनहद नाद को दरकिनार कर देते हैं। एक शब्द प्रभु द्वारा हमारे कानों में गूंजता है, यदि हम उस शब्द को ही श्रवण नहीं करेंगे तो यों ही पथभ्रष्ट हो जाएंगे। इस अनहद शब्द को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में बहुत बार दोहराया गया है, इसको दोहराने की क्यों आवश्यकता हुई। क्योंकि यह अनहद शब्द ही प्रभु का नाम है, जिसको सुनने से आनंद प्राप्त होता है। अतः इस आशय से भी अन्य तरफ नहीं जाना चाहिए। इस अनहद शब्द को कौन नहीं सुनता अथवा यह किस को सुनाई नहीं देता। जब हम किसी आवाज को एकाग्रचित्त सुनते हैं तो यह आवाज स्पष्ट सुनाई देती है। कुछ लोग जानबूझ कर इस आलौकिक आवाज को नहीं सुनते हैं। शायद वे समझते हैं कि जीवन में क्या रखा है।

आधुनिक सिक्ख विद्वानों ने इस ओर ध्यान दिया है और कुछ लेखकों एवं विद्वानों ने इस बात को समझाने की कोशिश की है कि सिक्ख सिद्धांत क्या है, सिक्ख दर्शन एवं साधारण दर्शन में क्या अन्तर है, इस तथ्य को मुख्य रखकर हमने इस ग्रंथ का इस प्रकार अनुवाद किया है कि उत्तम एवं सार्थक अनुवाद लोगों के समक्ष प्रस्तुत किया जाए। अनेक लोग प्रदेशों में रहते हैं, वे भी श्री गुरु ग्रंथ साहिब का अध्ययन करना चाहते हैं, अतः उनके लिए हिन्दी अनुवाद अनिवार्य हो जाता है। परन्तु इसके उपरांत भी उनकी पंजाबी भाषा के ज्ञान की लालसा दूर नहीं होती, वे यही चाहते हैं कि उनको पंजाबी भाषा का ज्ञान अवश्य हो, पर यह लालसा तब तक पूरी नहीं हो सकती जब तक उनका पंजाबी अक्षरों से परिचय न हो जाए। यह बात भलीभांति समझी जा सकती है कि सिक्खों की कुलें अब अमेरिका, इंगलैंड इत्यादि देशों में रहती है। नवीन पीढ़ी जो विदेशों में रह रही है, उनके लिए भी सिक्खवाद की मौलिक विद्या जरूरी है। कई ऐसे सिक्ख भी हैं, जो अंग्रेजी भाषी स्कूलों में पढ़ते हैं, परन्तु दस गुरुओं के नामों से ही अपरिचित होते हैं।

अखिल विश्व विभिन्न धर्मों में विभक्त है। प्रत्येक धर्म ने अपनी संस्कृति की ओर बल दिया, पर श्री गुरु नानक देव जी ने हिन्दू, मुस्लिम इत्यादि सबको एक परमेश्वर को मानने का उपदेश दिया। पण्डित, ब्राह्मणों ने जातिवाद के आधार पर समाज को पंगु बनाकर रख दिया था, जिस कारण मुगलों, पठानों, अंग्रेजों ने जी भर कर भारत को लूटा एवं अत्याचार किया। गुरु साहिबानों ने जाति-पाति, आडम्बरों, मूर्ति-पूजा इत्यादि का खंडन किया। श्री गुरु नानक देव जी का मूलमंत्र '१ ओअंकार सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि॥ सम्पूर्ण सृष्टि के जीवों, धर्मों को एक परमेश्वर की सत्ता, उसके हुक्म को मानने, रज़ानुसार चलने इत्यादि 'एक' पर अग्रसर कर रहा है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में 'हरिनाम' एक वही है, जिसे हिन्दू धर्म राम, गोविंद, नारायण नाम से पूजा कर रहा है। मुस्लिम धर्म अल्लाह, परवरदगार, खुदा के नाम से बंदगी कर रहा है। सिक्ख धर्म 'वाहिगुरु' नाम जप रहा है, ईसाई धर्म 'GOD' मान रहा है। सब एक वही है।

आदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी

ज्यों हिन्दुओं के लिए रामायण, गीता, मुसलमानों के लिए पावन कुरान शरीफ, ईसाइयों के लिए बाइबल पूज्य है। इसी तरह सिक्खों के लिए 'आदि ग्रंथ' श्री गुरु ग्रंथ साहिब अद्वितीय एवं पूजनीय है। १४३० अंगों का यह एक विशाल वाणी का ग्रंथ है। अतः सिक्ख जगत् इस ग्रंथ को एक पवित्र गुरु मानता है न कि एक धार्मिक पुस्तक।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब अन्य धार्मिक पुस्तकों की तरह न ही इतिहास है, न ही पुराण है और न ही किसी प्रकार की करामातों का संग्रह है। यह धार्मिक गुरुवाणी का संग्रह है, जो ब्रह्माण्ड से ज्ञान एवं विश्व की उत्पत्ति के सिद्धांत की एक झलक को प्रस्तुत करता है, इसलिए यह दुनिया में एक विलक्षण धार्मिक ग्रंथ है। सिक्ख जगत् इसे केवल एक धार्मिक ग्रंथ ही नहीं मानता, अपितु वह इसे दस गुरु साहिबान की ज्योति समझकर उपासना करता है। पावन ईलाही शब्द का कोष होने के कारण वे बड़े आदर से इसकी सेवा करते हैं।

सिक्खों की धार्मिक सभाओं में श्री गुरु ग्रंथ साहिब की उपस्थिति एक पूजनीय व्यक्तित्व के रूप में समझी जाती है। इसका प्रकाश समूचे समारोह को एक पावन धार्मिक रंग में रंग देता है। वहाँ फिर इसके सम्मुख ही शीश निवाया जाता है, अन्य किसी को आदर देना योग्य नहीं समझा जाता है। जहाँ भी प्रकाश होता है, वहाँ निरन्तर उसके ऊपर चँवर किया जाता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की हजूरी में फिर कीर्तन होता है और धार्मिक दीवान सुशोभित किए जाते हैं। धार्मिक पवित्रता एवं साधसंगत के बड़े प्रेम एवं श्रद्धा के कारण हर स्थान एक प्रकार का गुरुद्वारा ही बन जाता है।

जहाँ भी श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश होता है, वहाँ पहले ही चंदोवा लगाया जाता है, जहाँ से इसकी पवित्रता एवं शाही ठाठ की झलक मिलती है। उस समय सभी व्यक्ति हाथ जोड़कर विनम्रता से बैठते हैं। कोई भी व्यक्ति निःसंदेह बादशाह अथवा प्रधानमंत्री हो, वह भी गुरु ग्रंथ साहिब से ऊँचे स्थान पर नहीं बैठ सकता। सभी व्यक्ति फर्श पर बैठते हैं, जिस पर दरी अथवा गलीचे बिछाए जा सकते हैं। सभी व्यक्ति श्री गुरु ग्रंथ साहिब के सन्मुख खड़े होकर हाथ जोड़कर प्रार्थना करते हैं। सिक्खों की कोई भी रस्म, यहाँ तक कि उनके विवाह भी श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की हाजरी के बिना परवान नहीं होते हैं। दूल्हा-दुल्हन जब श्री गुरु ग्रंथ साहिब के इर्द चार लावां लेते हैं तो यह समझ लिया जाता है कि सिक्ख रहत-मर्यादा अनुसार विवाह की रस्म सम्पूर्ण हो गई है। जब श्री गुरु ग्रंथ साहिब को एक स्थान से दूसरे स्थान पर लेकर जाते हैं तो उस समय भी पूरी रहत-मर्यादा रखी जाती है। एक गुरुमुख प्यारा श्री गुरु ग्रंथ साहिब को अपने शीश पर उठाता है तो शेष साध-संगत शब्द पढ़ती आती है। एक व्यक्ति श्री गुरु ग्रंथ साहिब के आगे-आगे खुशबूदार अथवा सादे जल का छिड़काव करता आता है।

गुरुओं एवं भक्तजनों की वाणी का संकलन 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' समूची मानव जाति का आधार है। सामान्य व्यक्ति गुरुवाणी से अनभिज्ञ है। गुरु साहिब की वाणी उद्बोधन करती है–

''बाणी गुरू गुरू है बाणी विचि बाणी अंम्रितु सारे॥''

अतः वाणी ही गुरु है। केवल गुरु ही परमेश्वर है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सर्वप्रथम गुरुओं एवं भक्तों ने ईश्वर का कीर्तिगान किया है और भक्ति भाव की ओर चेताया है। यह ज्ञान का इतना बड़ा सागर है कि इसका अन्त नहीं पाया जा सकता।

उल्लेखनीय है कि गुरु नानक देव जी समय-समय अपनी वाणी लिखते रहे हैं। वह उस वाणी को एक पोथी के रूप में अपने पास ही रखते थे और जब उन्हें धुर से वाणी आती थी तो उसे पोथी में दर्ज कर लेते थे। जब गुरु नानक देव जी (सन् १५३६ में) जगत् यात्रा सम्पूर्ण करके जाने लगे

तो जाते समय उस पोथी को वे अपने उत्तराधिकारी श्री गुरु अंगद देव जी को सौंप गए। गुरु अंगद देव जी ने बेशक वाणी अल्पमात्रा में लिखी, लेकिन वे भी अपनी पोथी में दर्ज करते गए। वे भी संसार को छोड़ते समय अपनी पोथी सहित श्री गुरु नानक देव जी की पोथी (सन् १५५२ में) श्री गुरु अमरदास जी को सौंप गए। फिर गुरु अमरदास जी ने अपनी वाणी लिखी। उनके ६०७ शब्द गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं।

वर्णनीय है कि सभी गुरु साहिबान अपनी गुरुगद्दी अपने जीते जी ही अपने उत्तराधिकारी को अर्पण करते रहे हैं। इसलिए पूरी सूझबूझ से वे अपनी वाणी अपने उत्तराधिकारी को सौंप कर जाते थे। इस प्रकार श्री गुरु अमरदास जी अपनी सम्पूर्ण वाणी श्री गुरु रामदास जी को सौंप गए। तदन्तर श्री गुरु रामदास जी अपनी सम्पूर्ण वाणी श्री गुरु अर्जुन देव जी के सुपुर्द कर गए।

श्री गुरु अर्जुन देव जी के समय गुरु साहिबान की वाणी का प्रामाणिक संकलन उपलब्ध नहीं था। कहा जाता है कि एक बार गुरु दरबार में किसी शिष्य ने अशुद्ध वाणी उच्चरित की तो गुरु जी ने उसे मना किया।

इसी दौरान पृथी चन्द का पुत्र मेहरबान गुरु नानक जी के नाम पर अपनी वाणी लिखने लग गया तो सिक्खों ने गुरु अर्जुन देव जी से शिकायत की। उन्होंने समझा कि सतिगुरु जी की वाणी का निर्णय करना मुश्किल हो जाएगा। अतः श्री गुरु अर्जुन देव जी ने फैसला किया कि सम्पूर्ण वाणी को (गुरु ग्रंथ साहिब) को एक जिल्द में तैयार किया जाए ताकि इस में बाहरी कच्ची वाणियाँ प्रवेश न कर सकें। उस समय बेशक उनके पास पहले पाँच गुरु साहिब की वाणी मौजूद थी, पर गोइंदवाल में जो दो पोथियाँ गुरु अमरदास जी के सुपुत्र बाबा मोहन जी के पास थीं, उनका विश्लेषण करना भी जरूरी था ताकि सम्पूर्ण वाणी का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सके। इसलिए बड़ा उद्यम करके गुरु अर्जुन देव जी ने वह दो पोथियाँ बाबा मोहन जी से लीं। गुरु अर्जुन देव जी ने फिर भाई गुरदास जी को अपने साथ लिया और अपनी निगरानी में उनसे सम्पूर्ण वाणी लिखवाते रहे। समूचे गुरु ग्रंथ का लेखन जब सन् १६०४ ई. में सम्पूर्ण हो गया तो इस ग्रंथ का श्री हरिमन्दिर साहिब में प्रकाश किया गया।

जब सन् १६०४ ई. को श्री गुरु ग्रंथ साहिब का हरिमन्दिर साहिब में प्रकाश किया गया तो इसके प्रथम ग्रंथी बाबा बुड्ढा साहिब जी को नियुक्त किया गया। बाबा बुड्ढा जी नित्य ग्रंथ साहिब का वाक पढ़कर सुनाते थे। वह एक ऐसे पावन व्यक्तित्व के स्वामी थे कि जो श्री गुरु नानक देव जी से लेकर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के सान्निध्य में रहे। वे एक पूर्ण ब्रह्म-ज्ञानी थे। जब गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश श्री हरिमन्दिर साहिब में हुआ था तो उस समय बाबा बुड्ढा जी ने गुरु अर्जुन देव जी से पूछा कि गुरु ग्रंथ साहिब का सुखासन रात्रिकाल कहाँ किया जाएगा ? तो श्री गुरु अर्जुन देव जी ने उत्तर दिया कि कोठा साहिब में एक नवीन पलंग तैयार करवा कर रखा गया है, रात्रिकाल श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का सुखासन उस पलंग पर किया जाएगा और मैं उस कमरे में धरती पर विश्राम करूँगा। कहा जाता है कि उस दिन के पश्चात् गुरु अर्जुन देव जी गुरु ग्रंथ साहिब के पलंग के समीप धरती पर ही विश्राम करते थे। तत्पश्चात् फिर वे अपने निवास गुरु के महिल में नहीं गए थे।

सम्पूर्ण वाणी ३१ रागों में लिखी गई है, जिसमें गुरु तेग बहादुर जी द्वारा रचित राग जैजावंती भी शामिल है। उल्लेखनीय है कि दशमेश पिता गुरु गोबिंद सिंघ जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब को गुरुगद्दी सौंपने से पूर्व गुरु पिता की वाणी भी दर्ज कर दी थी। अतः कुल ३१ राग हैं।

जैसे कि सभी गुरु साहिबान ने अपना नाम 'नानक' ही रखा है, इसलिए गुरु नानक देव, गुरु

अंगद देव, गुरु अमरदास, गुरु रामदास, गुरु अर्जुन देव, गुरु तेग बहादुर बताने के लिए 'महला' पद का इस्तेमाल किया गया है। संकलित समूची वाणी में गुरु नानक देव जी का महला १, गुरु अंगद देव जी का महला २ और इसी तरह शेष गुरु साहिबान का महला ३, महला ४, महला ५, महला ६ के संकेतों से गुरु अमरदास, गुरु रामदास, गुरु अर्जुन देव एवं गुरु तेग बहादर की वाणी का संग्रह है। गुरु साहिबान के बाद भक्तों की वाणी दी गई है। सर्वप्रथम भक्त कबीर जी का नाम अंकित किया गया है। उस समय कई ब्राह्मण भाट भी हुए हैं, जिनका गुरु-घर से बड़ा गहरा रिश्ता था। वे भारतीय मजहबों, धार्मिक परम्परा के बारे में बड़ा गहरा ज्ञान रखते थे। वे गुरु साहिब की आध्यात्मिक और आत्मिक शक्ति से भी भलीभांति परिचित थे। उन्होंने अपने सवैयों में पाँच गुरु साहिबान की (गुरु नानक देव जी से गुरु अर्जुन देव जी तक) महान उपमा एवं उस्तति की है। उनकी भक्ति एवं लेखन कला अति उत्तम है। गुरु अर्जुन देव जी ने उनकी वाणी गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज करके उनका मान बढ़ाया है।

दो डूम कवि जो गुरु अर्जुन देव जी के कीर्तनीए थे, उनके बारे में यह कहा जाता है कि उन्होंने अर्जुन देव जी का दिल दुखाया था। जब गुरु अर्जुन देव जी ने उनको श्राप दे दिया तो कोई उनके सन्मुख नहीं आता था। आखिर उन्होंने लाहौर के एक सिक्ख भाई लधा द्वारा गुरु अर्जुन देव जी से क्षमा याचना की। गुरु अर्जुन देव जी उन्हें क्षमादान देना एक शर्त पर मान गए कि जैसे उन्होंने बड़े सतिगुरु साहिवान की निंदा की है, वैसे ही वे उनकी स्तुति करें। जब वे यह करना मान गए तो गुरु अर्जुन देव जी ने न केवल उन्हें क्षमा ही किया, अपितु उन्हें बड़ी बड़ाई प्रदान की तो उनकी राग रामकली में लिखी वार गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल भी कर ली। इसे सत्ते बलंवड की वार कहते हैं जो 'टिक्के की वार' से सुविख्यात है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के वाणीकार—

गुरु साहिबान

१. श्री गुरु नानक देव जी
२. श्री गुरु अंगद देव जी
३. श्री गुरु अमरदास जी
४. श्री गुरु रामदास जी
५. श्री गुरु अर्जुन देव जी
६. श्री गुरु तेग़ बहादुर जी
७. श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी

गुरुघर के सेवक

१. भाई मरदाना
२. बाबा सुन्दर जी
३. राय बलवंड एवं सत्ता डूम

भक्त

१. कबीर	६. त्रिलोचन	११. सधना
२. शेख फरीद	७. बेणी	१२. पीपा
३. नामदेव	८. जयदेव	१३. सैणि
४. रविदास	९. भीखन	१४. परमानन्द
५. धन्ना	१०. रामानंद	१५. सूरदास

भाट

१. कलसहार
२. कीरत
३. जालप
४. भिक्खा
५. सल्ह
६. बल्ह
७. नल्ह
८. गयंद
९. भल्ह
१०. मथुरा
११. हरिबंस

भक्त नामदेव

भक्त नामदेव जी का जन्म १२७० ई. को महाराष्ट्र में हुआ। आप जी व्यवसाय के तौर पर दर्जी थे। आप जी ने मराठी, अरबी एवं पारसी भाषा का उपयोग किया। अतः इनकी वाणी में मराठी, पारसी एवं अरबी का प्रभाव मिलता है। इनके कुल ६० शब्द १८ रागों में अंकित हैं। आपकी निम्नलिखित रागों में वाणी दर्ज है–

रागु गउड़ी	(अंग ३४५)	रागु रामकली	(अंग ६७२)
रागु आसा	(अंग ४८५)	रागु माली गउड़ा	(अंग ६८८)
रागु गूजरी	(अंग ५२५)	रागु मारू	(अंग ११०५)
रागु सोरठि	(अंग ६५६)	रागु भैरउ	(अंग ११६३)
रागु धनासरी	(अंग ६६२)	रागु बसंतु	(अंग ११६५)
रागु टोडी	(अंग ७१८)	रागु सारंग	(अंग १२५२)
रागु तिलंग	(अंग ७२७)	रागु मलार	(अंग १२६२)
रागु बिलावलु	(अंग ८५७)	रागु कानड़ा	(अंग १३१८)
रागु गोंड	(अंग ८७२)	रागु प्रभाती	(अंग १३५०)

भक्त रविदास

भक्त रविदास जी का जन्म उत्तर प्रदेश में हुआ। आप जी एक मोची थे, लेकिन ईश्वर-भक्ति के फलस्वरूप पूरे विश्व में प्रख्यात हुए। इनके कुल ४१ शब्द १६ रागों में दर्ज हैं। आपकी निम्नलिखित रागों में वाणी दर्ज है–

रागु सिरीरागु	(अंग ९३)	रागु बिलावलु	(अंग ८५८)
रागु गउड़ी	(अंग ३४५)	रागु गोंड	(अंग ८७५)
रागु आसा	(अंग ४८६)	रागु रामकली	(अंग ६७३)
रागु गूजरी	(अंग ५२५)	रागु मारू	(अंग ११०६)
रागु सोरठि	(अंग ६५७)	रा-ु केदारा	(अंग ११२४)
रागु धनासरी	(अंग ६६४)	रागु भैरउ	(अंग ११६७)
रागु जैतसरी	(अंग ७१०)	रागु बसंतु	(अंग ११६६)
रागु सूही	(अंग ७६३-६४)	रागु मलार	(अंग १२६३)

भक्त धन्ना

भक्त धन्ना जी का जन्म ग्राम धुआं राजस्थान में १४२५ ई. को हुआ। आप रामानंद जी के शिष्य थे। इनके ४ शब्द रागु आसा (अंग ४८७), रागु धनासरी (अंग ६९५) में अंकित हैं।

भाई मरदाना

गुरु नानक देव जी का परम शिष्य एवं अभिन्न साथी भाई मरदाना एक मुस्लिम संगीतकार था। वह काफी समय गुरु जी के साथ ही रहा। राग विहागड़ा की वार में इनके ३ शब्द अंकित हैं।

बाबा सुन्दर जी

बाबा सुन्दर जी गुरु अमरदास जी के पौत्र थे। गुरु अमरदास जी के परम ज्योति में विलीन होने के पश्चात् इन्होंने 'सद' का उच्चारण किया था।

इनके 'सद' में ६ शब्द हैं।

राय बलवंड एवं सत्ता डूम

गुरु-घर के चारण सत्ता बलवंड के राग रामकली की वार में ८ शब्द हैं।

भक्त कबीर

भक्त कबीर जी का जन्म सन् १३६८ ई. को बनारस, उत्तर प्रदेश में हुआ। इनको अविवाहित महिला ने जन्म देने के पश्चात् छोड़ दिया था। तदंतर इनका पालन पोषण मुस्लिम जुलाहे नीरू एवं नीमा नामक दम्पति ने किया। आप जी ने हिन्दी, संस्कृति, ब्रज भाषा का इस्तेमाल किया है। इनके ५४१ शब्द एवं श्लोक १७ रागों में दर्ज हैं। आपकी निम्नलिखित रागों में वाणी दर्ज है–

रागु सिरीरागु	(अंग ९१-९२)	रागु गोंड	(अंग ८७०)
रागु गउड़ी	(अंग ३२३)	रागु रामकली	(अंग ९६८)
रागु आसा	(अंग ४७५)	रागु मारू	(अंग ११०२)
रागु गूजरी	(अंग ५२४)	रागु केदारा	(अंग ११२३)
रागु सोरठि	(अंग ६५४)	रागु भैरउ	(अंग ११५७)
रागु धनासरी	(अंग ६९१)	रागु बसंतु	(अंग ११९३)
रागु तिलंग	(अंग ७२७)	रागु सारंग	(अंग १२५१)
रागु सूही	(अंग ७९२)	रागु प्रभाती	(अंग १३४९)
रागु बिलावलु	(अंग ८५५)	श्लोक	(अंग १३६४ से १३७७ तक)

शेख फरीद

शेख फरीद जी का जन्म सन् ११७३ ई. को ग्राम कोठीवाल ज़िला मुलतान (पाकिस्तान) में हुआ। आप जी का पूरा नाम फरीद-उ-दीन-मसूद था। आपके पिता का नाम जमालुदीन सुलेमान एवं माता का नाम करसूम मरियम था। आप जी की वाणी पंजाबी है और कुल ४ शब्द एवं १३० श्लोक श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित हैं। आपकी निम्नलिखित रागों में वाणी दर्ज है–

रागु आसा (अंग ४८८) रागु सूही (अंग ७९४) और श्लोक (अंग १३७७ से १३८५ तक)।

श्री गुरु नानक देव जी

सिक्ख धर्म के संस्थापक श्री गुरु नानक देव जी का जन्म कार्तिक शुदि (पूर्णिमा) सन् १४६६ ई. को राइ भोइ की तलवंडी ननकाना साहिब (वर्तमान पाकिस्तान) में हुआ। मेहता कल्याण दास एवं माता त्रिपता इनके माता-पिता थे। उनका सिद्धांत केवल एक परमेश्वर को मानना था। वे समाज सुधारक के तौर पर उन पीड़ित लोगों का उद्धार करने आए जो जीवन की आशाओं से वंचित हो चुके थे। उन्होंने पाखंड, असत्य एवं जाति-पाति की भावना को तजने की प्रेरणा दी और जन कल्याण के लिए पाँच उदासियां की। आप हिन्द उपमहाद्वीप के विस्तृत क्षेत्रों के अलावा अफगानिस्तान, ईराक, मक्का, श्रीलंका, चीन, तिब्बत इत्यादि में धर्म उपदेश देते रहे। आप जी ने संदेश दिया कि सभी मानव एक समान हैं, प्रभु नाम का जाप करो और सेवा-भक्ति में तल्लीन रहो।

(क) ईश्वर का जाप करो।

(ख) दया, नम्रता, सत्य, संतोष, प्रेम इत्यादि शुभ गुणों को ग्रहण करो।

(ग) विकारों, छूतछात, अहिंसा का त्याग करें।

(घ) सृष्टि के सब जीवों से प्रेम करो।

जन साधारण के लिए यही आपका मुख्य संदेश था।

आप जी के १६ रागों में कुल ६७४ शब्द हैं।

मुख्य वाणियां—

१. जपु जी साहिब
२. आसा की वार
३. पटी
४. आरती
५. ओअंकार
६. सिध गोसटि
७. बारह माहा

श्री गुरु अंगद देव जी

श्री गुरु अंगद देव जी का जन्म ३१ मार्च १५०४ ई. को मत्ते की सराय, मुक्तसर में हुआ। भाई फेरूमल एवं माता दया कौर इनके माता-पिता थे। गुरुगद्दी से पूर्व आप का नाम भाई लहणा था। इससे पूर्व देवी के उपासक थे। एक बार देवी दर्शनों के वक्त गुरु नानक की वाणी सुनी तो अत्यंत प्रभावित हुए और तदंतर गुरु नानक देव जी के शिष्य बन गए। आपने समूचा जीवन गुरु-घर की सेवा में बिता दिया और उनकी सेवा से प्रभावित होकर गुरु नानक देव जी ने उनको अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया।

(क) गुरु जी ने गुरमुखी लिपि में सुधार किया।

(ख) आप ने खेल और व्यायाम को प्रोत्साहन दिया।

(ग) गुरमुखी वर्णमाला से बच्चों को पढ़ाने के लिए खडूर साहिब में एक विद्यालय स्थापित किया।

(घ) आप जी ने गुरु नानक वाणी का संग्रह किया। यह इनका प्रमुख योगदान था।

मानव जाति के लिए आपकी निम्नलिखित मुख्य शिक्षाएं हैं–

(ङ) मानवता से प्रेम करो।

(च) ईश्वरेच्छा पर पूर्ण समर्पण होना चाहिए।

(छ) पाखण्ड, आडम्बर का खंडन करो।

(ज) नित्य परमात्मा की वंदना करें।

(झ) ईश्वर एक है।

वाणी– आप जी के कुल ६३ श्लोक गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित हैं।

गुरु नानक की वारों में

माझ की वार – १२ श्लोक

आसा की वार – १३ श्लोक

मलार की वार – ५ श्लोक

सूही की वार – ११ श्लोक

गुरु अमरदास जी की वारों में

रामकली की वार – ७ श्लोक

मारू की वार – १ श्लोक

गुरु रामदास जी की वारों में

स्री राग की वार – २ श्लोक

सोरठि राग की वार – १ श्लोक

सारंग की वार – ६ श्लोक

श्री गुरु अमरदास जी

सेवा के पुंज श्री गुरु अमरदास जी का जन्म ५ मई सन् १४७६ को ग्राम बासरके अमृतसर में हुआ। भाई तेजभान एवं माता सुलखणी इनके जन्मदाता हैं। उल्लेखनीय है कि श्री गुरु अमरदास जी के भतीजे का विवाह गुरु अंगद देव जी की सुपुत्री बीबी अमरो जी के साथ हुआ था। एक बार जब उन्होंने बीबी अमरो से गुरु नानक की वाणी का पाठ सुना तो उन्हें गुरु दर्शनों की चाह पैदा हुई। गुरु अमरदास जी तब ६२ वर्ष के थे। गुरु अंगद देव जी का साक्षात्कार करने के बाद वे सेवा में जुट गए। वे प्रभात काल गुरु अंगद देव जी के स्नान हेतु जल की गागर कंधे पर उठाकर लाया करते थे। तदंतर गुरु अंगद देव जी ने उनकी निष्काम सेवा भावना पर प्रसन्न होकर गुरुगद्दी पर स्थापित कर दिया। आप जी ने ईश्वर की स्तुति में बृहद वाणी की रचना की।

(क) गुरु जी ने सती प्रथा का बहिष्कार किया।

(ख) छूतछात, जाति-पाति का सख्त खण्डन किया।

(ग) सिक्ख आन्दोलन को मजबूत करने के लिए आप ने मुगलों के २२ परगनों की तरह २२ केन्द्रों की स्थापना कर 'मंजीआ' नाम दिया।

(घ) गुरु साहिब ने गोइंदवाल में बावली का निर्माण किया, जहां जपु जी साहिब के ८४ पाठ से ८४ चक्र से मुक्ति होती है।

(ङ) आप जी ने लंगर प्रणाली को एक नया आयाम दिया, जब मुगल बादशाह अकबर गुरु दर्शन को आया तो उसने पहले लंगर ग्रहण किया। यह सब आप जी का योगदान है।

आप जी के १७ रागों में ६०७ शब्द एवं श्लोक दर्ज हैं। सन् १५५४ ई. में रामकली राग में उच्चरित अनंद साहिब आपकी अद्वितीय रचना है, जो कि रूहानी आनंद के भरपूर आनंद को दर्शाती है।

मुख्य वाणियां–

१. अनंदु साहिब

२. वाहिगुरु स्तोत्र

श्री गुरु रामदास जी

श्री गुरु रामदास जी का जन्म २४ सितम्बर, सन् १५३४ ई. को चूना मण्डी, लाहौर में हुआ। आप जी के पिता का नाम भाई हरिदास एवं माता का नाम दया कौर था। गुरुगद्दी से पूर्व आपका नाम भाई जेठा था। भाई जेठा जी की १२ वर्ष की आयु में सन् १५४६ ई. को गुरु अमरदास जी से भेंट हुई थी। तब से आप गुरु की सेवा में तल्लीन रहे। आप जी के सेवा-भाव से प्रसन्न होकर गुरु अमरदास जी ने अपनी पुत्री बीबी भानी का विवाह कर दिया। सेवा के फलस्वरूप गुरु अमरदास जी ने आपको गुरुगद्दी पर मनोनीत किया।

(क) आप जी ने गुरु अमरदास की कृपा से अमृतसर नगर की स्थापना की, जिसे पहले चक्क गुरु का और रामदासपुरा कहा जाता था।

(ख) आप ने अमृतसर में अमृत सरोवर की खुदाई का काम पूरा करवाया।

(ग) श्री गुरु रामदास जी ने गुरु स्तुति के गान को उत्तम करार दिया।

(घ) आप जी ने जीवों को हरिनाम जपने की प्रेरणा प्रदान की।

(ङ) उन्होंने गुरु रज़ा में चलने के लिए मानव जाति को अग्रसर किया।

(च) आपका उपदेश था कि गुरु सेवा पर सर्वस्व अर्पण कर देना चाहिए।

आप जी ने कुल ६७६ शब्द ३० रागों में उच्चरित किए।

मुख्य वाणियां–

१. लावां

२. घोड़ीआ

३. अलाहणीआ

श्री गुरु अर्जुन देव जी

शान्ति के सागर श्री गुरु अर्जुन देव जी का जन्म १५ अप्रैल, सन् १५६३ ई. को गोइंदवाल में हुआ। गुरु रामदास जी एवं माता भानी जी इनके जन्मदाता हैं। बचपन में ही उनके बारे में श्री गुरु अमरदास जी ने कहा था कि 'दोहिता बाणी का बोहिथा।' आप जी का जीवन-आचरण काफी सहज था। आप मधुरभाषी थे एवं गुरु पिता का परमेश्वर मानकर पूजन करते थे। गुरु जी ने १५८८ ई. में हरिमन्दिर साहिब का निर्माण प्रारंभ किया। उन्होंने तरनतारन में एक तालाब खुदवाने का काम शुरू किया और ज़िला जालंधर में करतारपुर नगर बसाया। आप जी ने १६०४ ई. में ग्रंथ साहिब का संपादन किया। वे पहले शहीद थे, जिन्होंने सिक्ख धर्म में शहीदी की महान परंपरा की आधारशिला रखी। आप जी की उच्चरित वाणी 'सुखमनी' में आत्मा-परमात्मा का मिलन, गुरु, सिद्ध-महापुरुषों की महिमा का वर्णन है।

आप जी ने ३० रागों में २३१२ शब्द उच्चरित किए।

मुख्य वाणियां—

१. बारह माहा मांझ
२. बावन अखरी
३. सुखमनी साहिब
४. गुर स्तोत्र
५. सहंसर नामा
६. गाथा
७. फुनहे
८. चउबोले

श्री गुरु तेग बहादुर साहिब

हिन्द की चादर श्री गुरु तेग बहादुर साहिब जी का जन्म १ अप्रैल सन् १६२१ ई. को अमृतसर में हुआ। श्री गुरु हरिगोबिंद एवं माता नानकी इनके जन्मदाता हैं। आप जी ने अपने श्रद्धालुओं को आशीर्वाद देने के लिए पंजाब सहित, उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल, आसाम, ढाका के अनेक दौरे किए। आप जी ने जिला रोपड़ में आनंदपुर साहिब नगर बसाया। धर्म की रक्षा हेतु गुरु जी ने १६७५ ई. को दिल्ली में बलिदान दिया। त्याग, अनासक्ति इनकी वाणी का मुख्य विषय है।

आप जी के १५ रागों में कुल ११५ शब्द गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं।

मुख्य वाणियां—

१. सलोक

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी

खालसा के पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जन्म पोष शुदि सप्तमी, २२ दिसंबर सन् १६६६ ई. को पटना साहिब में हुआ। गुरु तेग बहादुर साहिब जी एवं माता गुजरी जी इनके माता-पिता हैं। आप जी ने सिक्ख पंथ के लिए मुगलों एवं पहाड़ियों के साथ डट कर मुकाबला किया। आप जी ने सन् १७०८ ई. को सचखंड श्री हजूर साहिब में श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी को गुरुगद्दी प्रदान की।

आप जी का एक दोहा श्री गुरु तेग बहादुर साहिब जी के श्लोकों में सम्मिलित है।

भक्त त्रिलोचन

भक्त त्रिलोचन का जन्म १२६७ ई. को महाराष्ट्र में हुआ। आप जी के ४ शब्द जो रागु सिरीरागु (अंग ६२), रागु गूजरी (अंग ५२५) एवं रागु धनासरी (अंग ६६५) में दर्ज हैं।

भक्त बेणी

भक्त बेणी जी का जन्म उत्तर प्रदेश में हुआ। आप जी के ३ शब्द रागु सिरीरागु (अंग ६३), रागु रामकली (अंग ६७४) और रागु प्रभाती (अंग १३५१) में दर्ज हैं।

भक्त जयदेव

भक्त जयदेव जी का जन्म ११७० ई. को हुआ। आप बंगाली ब्राह्मण थे और बंगाली भाषा ही इनकी वाणी में अधिकतर है। इनके २ शब्द रागु गूजरी (अंग ५२६) और रागु मारू (अंग ११०६) में दर्ज है।

भक्त भीखन

भक्त भीखन एक सूफी मुसलमान थे। इनके २ शब्द रागु सोरठि (अंग ६५६) में अंकित है।

भक्त रामानंद

भक्त रामानंद का जन्म सन् १३५६ को हुआ। आप एक ब्राह्मण थे और प्रयाग, उत्तर प्रदेश से संबंध रखते थे। इनका १ शब्द रागु बसंतु (अंग ११६५) में दर्ज है।

भक्त सधना

भक्त सधना एक मांस विक्रेता थे, जो सिंध से नाता रखते हैं।

इनका १ शब्द रागु बिलावलु (अंग ८५८) में है।

भक्त पीपा

भक्त पीपा जी का जन्म १४२५ ई. को महाराष्ट्र में हुआ। आप एक क्षत्रिय राजा थे। वे रामानंद जी के शिष्य थे। इनका १ शब्द रागु धनासरी (अंग ६६५) में दर्ज है।

भक्त सैणि

भक्त सैणि एक नाई थे जो रीवा, मध्य प्रदेश के थे। इनका एक शब्द रागु धनासरी (अंग ६६५) में अंकित है।

भक्त परमानंद

भक्त परमानंद एक ब्राह्मण थे, जो महाराष्ट्र से हैं। उनका एक शब्द रागु सारंग (अंग १२५३) में है।

भक्त सूरदास

भक्त सूरदास जी का जन्म १४२८ ई. को उत्तर प्रदेश में हुआ। आप एक ब्राह्मण थे। आपकी एक पंक्ति जिसे श्री गुरु अर्जुन ने सम्पूर्ण किया है, वह रागु सारंग (अंग १२५३) में दर्ज है।

भाट

भाटों ने पाँच गुरु साहिबान की स्तुति में १२३ सवैये उच्चरित किए हैं।

	गुरु नानक	गुरु अंगद	गुरु अमरदास	गुरु रामदास	गुरु अर्जुन देव	जोड़ सवैये
१. कलसहार	१०	१०	६	१३	१२	= ५४ सवैये
२. कीरत	-	-	४	४	-	= ८ सवैये
३. जालप	-	-	५	-	-	= ५ सवैये
४. भिक्खा	-	-	२	-	-	= २ सवैये
५. सल्ह	-	-	१	२	-	= ३ सवैये
६. बल्ह	-	-	-	५	-	= ५ सवैये
७. नल्ह	-	-	-	१६	-	= १६ सवैये
८. गयंद	-	-	-	१३	-	= १३ सवैये
६. भल्ह	-	-	१	-	-	= १ सवैये
१०. मथुरा	-	-	-	७	७	= १४ सवैये
११. हरिबंस	-	-	-	-	२	= २ सवैये
	१०	१०	२२	६०	२१	=१२३ सवैये

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के आरम्भ में सर्वप्रथम 'मूलमंत्र' १ ओअंकार सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि है। इससे आगे जपुजी साहिब की वाणी है, जो गुरु नानक देव जी ने उच्चारण की हुई है। इसमें ३८ पउड़ियाँ और २ श्लोक हैं, एक श्लोक आरम्भ में है और एक श्लोक आखिर में दर्ज है। इस वाणी का प्रातः काल वन्दन होता है। इससे अगली वाणी के दो भाग हैं – सो दरु और सो पुरख। सो दरु में ५ शब्द हैं और सो पुरख में ४ शब्द है। यह वाणी संध्या वन्दन हेतु है। इस वाणी को रहरासि साहिब भी कहते हैं। इससे आगे 'सोहिला' है, इसमें ५ शब्द हैं। इस वाणी का रात्रिकाल वन्दन किया जाता है।

तदन्तर सिरीराग से लेकर राग जैजावंती है। पूरी वाणी रागों अनुसार अंकित है, कुल ३१ राग हैं :-

१. रागु सिरीरागु २. रागु माझ, ३. रागु गउड़ी, ४. रागु आसा, ५. रागु गूजरी, ६. रागु देव्गंधारी, ७. रागु बिहागड़ा, ८. रागु वडहंसु, ६. रागु सोरठि, १०. रागु धनासरी, ११. रागु जैतसरी, १२. रागु टोडी, १३. रागु बैराड़ी, १४. रागु तिलंग, १५. रागु सूही, १६. रागु बिलावलु, १७. रागु गोंड, १८. रागु रामकली, १६. रागु नट नाराइन, २०. रागु माली गउड़ा, २१. रागु मारू, २२. रागु तुखारी, २३. रागु केदारा, २४. रागु भैरउ, २५. रागु बसंतु, २६. रागु सारंग, २७. रागु मलार, २८. रागु कानड़ा, २६. रागु कलिआन, ३०. रागु प्रभाती, ३१. रागु जैजावंती।

इसके अतिरिक्त पहरे, वणजारा, दिन रैणि, करहले, थिति, बिरहड़े, कुचजी, सुचजी, गुणवंती, काफी, अंजुलीआ, सोलहे इत्यादि भिन्न-भिन्न संज्ञाओं से प्रस्तुत है।

इन रागों के समाप्त होने पर निम्नलिखित अन्य वाणियाँ भी अंकित है :–

सलोक सहसक्रिती महला १	४ श्लोक
सलोक सहसक्रिती महला ५	६७ श्लोक
गाथा महला ५	२४ बन्द
फुनहे महला ५	२३ बन्द
चउबोले महला ५	११ बन्द
श्लोक भक्त कबीर जी	२४३ श्लोक
श्लोक शेख फरीद के	१३० श्लोक
सवैये स्री मुखवाक्य मः ५	२० सवैये
सवैये गुरुओं की स्तुति में	१२३ सवैये
सलोक वारां ते वधीक (म:१–३३, म:३–६७, म:४–३०, मः ५–२२)	१५२ श्लोक
श्लोक महला ६	५७ श्लोक
मुंदावणी मः ५	२ श्लोक
रागमाला	

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की समाप्ति पर मुंदावणी महला ५ दिया गया है। यह एक पहेली की तरह है, जिसका भाव इस प्रकार है : थाल में तीन वस्तुएँ रखी हैं– सत्य, संतोष एवं सिमरन। जिसमें हरिनामामृत डाला है, जो सबका आधार है। जो भी इस भोजन का सेवन करता है, स्वाद लेता है, उसका कल्याण हो जाता है। यह वस्तु छोड़ी नहीं जा सकती, इसलिए सदा-सर्वदा इसे अपने हृदय में बसाकर रखो। प्रभु-चरणों में लगने से भवसागर पार किया जा सकता है। हे नानक ! हर वस्तु प्रभु का ही प्रसार है।

प्रत्येक राग में वाणी का क्रमबद्ध विवरण निम्नलिखित है :—

शब्द, द्विपदे, त्रिपदे, चौपदे, पंचपदे, अष्टपदियां, छंत, वार और भक्तों के शब्द हैं। सर्वप्रथम गुरु नानक देव जी की वाणी आती है। फिर गुरु अमरदास जी, गुरु रामदास जी, गुरु अर्जुन देव जी, गुरु तेग बहादुर साहिब की वाणी का संकलन है और अन्त में भक्तों की वाणी आती है।

गुरु अंगद देव जी के शब्द नहीं हैं, उनके सिर्फ श्लोक हैं, जो वारों की पउडियों के साथ दर्ज हैं। गुरु तेग बहादुर साहिब के शब्द जिस राग में हैं, वहाँ वह क्रमानुसार गुरु अर्जुन देव जी के शब्दों के पश्चात् दर्ज हैं। गुरु तेग बहादुर साहिब जी ने कोई अष्टपदी नहीं रची है।

आदि ग्रंथ की लिपि निःसंकोच गुरमुखी है। भारतीय भाषाओं के इस कोष में संत भाषा का इस्तेमाल हुआ है, परन्तु पंजाबी, हिन्दी, मराठी, संस्कृत, अरबी, फारसी इत्यादि भी उपयुक्त है। विशेषकर जितनी भी वारें है, पउड़ी उसी गुरु की है, जिसकी वार है, अतः श्लोक व पउड़ी को भिन्न करके अनुवाद है।

वारें

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में कुल २२ वारें हैं, जो परम पिता परमेश्वर, सच्चे गुरु एवं धार्मिक जीवन गुजारने वालों की स्तुति करती है।

श्री गुरु नानक देव जी की तीन वारें हैं-

१. वार माझ की (मलक मुरीद तथा चंद्रहड़ा सोहीआ की धुनी)

२. वार आसा (टुंडे अस राजै की धुनी)

३. वार मलार की (राणे कैलास तथा मालदे की धुनि)

श्री गुरु अमरदास जी की चार वारें हैं-

१. गूजरी की वार (सिकंदर बिराहिम की वार की धुनी)

२. वार सूही की

३. रामकली की वार (जोधै वीरै पूरबाणी की धुनी)

४. मारू वार

श्री गुरु रामदास जी की आठ वारें हैं-

१. सिरी राग की वार

२. गउड़ी की वार

३. बिहागड़े की वार

४. वडहंस की वार (ललां बहलीमा की धुनि)

५. वार सोरठि

६. बिलावलु की वार

७. सारंग की वार (राइ महमे हसने की धुनि)

८. कानड़े की वार (मूसे की वार की धुनि)।

श्री गुरु अर्जुन देव जी की छः वारें हैं-

१. वार गउड़ी की (राइ कमालदी मोजदी की वार की धुनि)

२. वार गूजरी की

३. वार जैतसरी

४. रामकली की वार

५. मारू वार

६. बसंत की वार।

इसके अतिरिक्त एक सत्ते बलवंड की वार है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ऐसे शब्द शामिल किए गए हैं, जो प्रभु की स्तुति में उच्चरित हैं। गुरु इतिहास व भक्तों के साथ संबंधित ऐतिहासिक घटनाएं व प्रसंग भी अंकित कर दिए गए हैं, ताकि जिज्ञासु सज्जनों के ज्ञान में और भी वृद्धि हो सके।

मूलपाठ का लिप्यंत्रण शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा मुद्रित श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के अनुसार ही किया गया है और अंग नम्बर मूल पाठ अनुसार संकलित हैं।

जिज्ञासुओं के लिए यह जानना भी अत्यावश्यक है कि मूल पाठ के शब्दों-- जैसे 'हरिनामु' 'जपु' 'परमेसरु' 'सिमरनि' 'पारब्रहम' इत्यादि के आखिरी व्यंजन के साथ सम्मिलित ह्रस्व 'उ' (ु) 'ई' (ि) मात्राओं का उच्चारण या पाठ नहीं किया जाता।

१४३० अंगों का विशाल ग्रंथ होने के कारण यह चार भागों में अनुवाद जिज्ञासुओं की जिज्ञासा शांत कर सकता है। अतः पाठकों, संतों-भक्तों, जन-जन के लिए यह चार भागों में उपलब्ध है।

साहिब सिंघ
चरण सिंघ
डा. अजीत सिंघ औलख

अंक ज्ञान

हिन्दू अरबी — देवनागरी हिन्दी

एकाई		दहाई		सैकड़ा		हजार	
0	०	10	१०	100	१००	1000	१०००
1	१	11	११	101	१०१	1001	१००१
2	२	12	१२	102	१०२	1002	१००२
3	३	13	१३	103	१०३	1003	१००३
4	४	14	१४	104	१०४	1004	१००४
5	५	15	१५	105	१०५	1005	१००५
6	६	16	१६	106	१०६	1006	१००६
7	७	17	१७	107	१०७	1007	१००७
8	८	18	१८	108	१०८	1008	१००८
9	९	19	१९	109	१०९	1009	१००९

राग सूची

भाग पहिला

भाग दूसरा

भाग तीसरा

भाग चौथा

अर्जुन देव जी ने इस बात का बहुत बुरा मनाया। उन्होंने समझा कि सतिगुरु जी की वाणी का निर्णय करना मुश्किल हो जाएगा। अतः उन्होंने फैसला किया कि सारे गुरु ग्रंथ साहिब को एक जिल्द में तैयार किया जाए ताकि इस में बाहरी कच्ची वाणियाँ प्रवेश न कर सकें। उस समय बेशक उनके पास पहले पाँच गुरु साहिब की वाणी मौजूद थी, पर गोइंदवाल में जो दो पोथियाँ गुरु अमरदास जी के सुपुत्र बाबा मोहन जी के पास पड़ी थीं, उन्हें लाना भी आवश्यक था ताकि सारी वाणी का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सके। इसलिए बड़ा उद्यम करके गुरु अर्जुन देव जी ने वह दो पोथियाँ बाबा मोहन जी से प्राप्त कीं। गुरु अर्जुन देव जी ने फिर भाई गुरदास जी को अपने साथ लिया और अपनी निगरानी में उनसे सारी वाणी लिखवाते रहे। समूचे गुरु ग्रंथ का लेखन जब सन् १६०४ ई. में सम्पूर्ण हो गया तो इस ग्रंथ का श्री हरिमन्दिर साहिब में प्रकाश किया गया। यह सारी वाणी ३१ रागों में लिखी गई है, जिसमें गुरु तेग बहादुर जी द्वारा रचित राग जैजावंती भी शामिल है। जैसे कि सभी गुरु साहिबान ने अपना नाम 'नानक' ही रखा है, इसलिए गुरु नानक देव, गुरु अंगद देव, गुरु अमरदास, गुरु रामदास, गुरु अर्जुन देव, गुरु तेग बहादुर बताने के लिए 'महला' पद का इस्तेमाल किया गया है। गुरु नानक देव जी का महला पहला, गुरु अंगद देव जी का महला दूसरा और इसी तरह शेष गुरु साहिबान का पातिशाही अनुसार दिया गया है। गुरु साहिबान के बाद भक्तों की वाणी दी गई है। सर्वप्रथम भक्त कबीर जी का नाम अंकित किया गया है। उस समय कई ब्राह्मण भाट भी हुए हैं, जिनका गुरु-घर से बड़ा गहरा रिश्ता था। वे भारतीय मजहबों, धार्मिक परम्परा के बारे में बड़ा गहरा ज्ञान रखते थे। वह गुरु साहिब की आध्यात्मिक और आत्मिक शक्ति से भी भलीभांति परिचित थे। उन्होंने अपने सवैयों में पाँच गुरु साहिबान की (गुरु नानक देव जी से गुरु अर्जुन देव जी तक) महान उपमा एवं उस्तति की है। उनकी भक्ति एवं लेखन कला अति उत्तम है। गुरु अर्जुन देव जी ने उनकी वाणी गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज करके उनका मान बढ़ाया है। दो डूम कवि जो गुरु अर्जुन देव जी के कीर्त्तनीए थे, उनके बारे में यह कहा जाता है कि उन्होंने अर्जुन देव जी का दिल दुखाया था। जब गुरु अर्जुन देव जी ने उनको शाप दे दिया तो फिर कोई भी उनके सन्मुख नहीं होता था। आखिर उन्होंने लाहौर के एक सिक्ख भाई लधा द्वारा गुरु अर्जुन देव जी से क्षमादान माँगा। गुरु अर्जुन देव जी उन्हें क्षमादान देना एक शर्त पर मान गए कि जैसे उन्होंने बड़े सतिगुरु साहिबान की निंदा की है, वैसे ही वे उनकी स्तुति करें। जब वे यह करना मान गए तो गुरु अर्जुन देव जी ने न केवल उन्हें क्षमा ही किया, अपितु उन्हें बड़ी बड़ाई प्रदान की तो उनकी राग रामकली में लिखी वार गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल भी कर ली। इसे सत्ते बलंवड की वार कहते हैं जो 'टिक्के की वार' से सुविख्यात है। गुरु ग्रंथ साहिब के अंत में श्लोक भक्त कबीर, श्लोक शेख फरीद और श्लोक गुरु तेग बहादुर साहिब दिए गए हैं। गुरु ग्रंथ साहिब की समाप्ति पर मुंदावणी महला ५ दिया गया है। जिसका भाव इस प्रकार है, थाल में तीन वस्तुएँ रखी हैं– सत्य, संतोष एवं सिमरन। जिसमें हरिनामामृत डाला है, जो सबका आधार है। जो भी इस भोजन का सेवन करता है, स्वाद लेता है, उसका कल्याण हो जाता है। यह वस्तु छोड़ी नहीं जा सकती, इसलिए सदा-सर्वदा इसे अपने हृदय में बसाकर रखो। प्रभु-चरणों में लगने से भवसागर पार किया जा सकता है। हे नानक! हर वस्तु प्रभु का ही प्रसार है।

जब श्री गुरु ग्रंथ साहिब का हरिमन्दिर साहिब में प्रकाश किया गया तो इसके प्रथम ग्रंथी बाबा बुड्ढा साहिब जी को नियुक्त किया गया। बाबा बुड्ढा जी नित्य ग्रंथ साहिब का वाक पढ़कर सुनाते थे। वह एक ऐसे पावन व्यक्तित्व के स्वामी थे कि जिन्होंने गुरु नानक देव जी से लेकर श्री हरिगोबिंद साहिब तक छः गुरु साहिबान का साथ प्राप्त किया था। वह एक पूर्ण ब्रह्म-ज्ञानी थे। जब गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश श्री हरिमन्दिर साहिब में हुआ था तो उस समय बाबा बुड्ढा जी ने गुरु अर्जुन देव जी से पूछा कि गुरु ग्रंथ साहिब का सुखासन रात्रिकाल कहाँ किया जाएगा? तो गुरु अर्जुन देव जी ने उत्तर दिया कि कोठा साहिब में एक नवीन पलंग तैयार करवा कर रखा गया है, रात्रिकाल गुरु ग्रंथ साहिब जी का सुखासन उस पलंग पर किया जाएगा और मैं उस कमरे में धरती पर विश्राम करूँगा।

कहा जाता है कि उस दिन के पश्चात् गुरु अर्जुन देव जी गुरु ग्रंथ साहिब के पलंग के समीप धरती पर ही विश्राम करते थे। उस दिन के पश्चात् फिर वह अपने घर गुरु बाजार में नहीं गए थे।

गुरु ग्रंथ साहिब में जो वाणी अंकित है, उसका शब्द वार विवरण इस प्रकार है :-

गुरु साहिब	शब्द—श्लोक
१. श्री गुरु नानक देव जी	६७४ शब्द
२. श्री गुरु अंगद देव जी	६३ श्लोक
३. श्री गुरु अमरदास जी	६०७ शब्द
४. श्री गुरु रामदास जी	६७६ शब्द
५. श्री गुरु अर्जुन देव जी	२२१८ शब्द (३० रागों में)
६. श्री गुरु तेग़ बहादुर जी	५६ शब्द एवं ५६ श्लोक

गुरुघर के सेवक

१. भाई मरदाना	३ शब्द
२. बाबा सुन्दर जी	६ शब्द (पउड़ियाँ)
३. सत्ता-बलवंड	८ शब्द (पउड़ियाँ)

भक्त	शब्द—श्लोक
१. कबीर	२१२ शब्द, २४१ श्लोक
२. शेख फरीद	१३४ (४ शब्द, १३० श्लोक)
३. नामदेव	६० शब्द
४. रविदास	४१ शब्द
५. धन्ना	४ शब्द
६. त्रिलोचन	४ शब्द
७. बेनी	३ शब्द
८. जयदेव	२ शब्द
९. भीखन	२ शब्द
१०. रामानन्द	१ शब्द
११. सधना	१ शब्द
१२. पीपा	१ शब्द
१३. सैणि	१ शब्द
१४. परमानन्द	१ शब्द
१५. सूरदास	१ शब्द

भट्ट	सवय्ये
१. बल्ह	५ सवय्ये गुरु रामदास जी की स्तुति में।
२. भल्ल	१ सवय्या गुरु अमरदास जी की महिमा में।
३. भीखा	२ सवय्ये गुरु अमरदास जी की महिमा-स्तुति में।
४. गियांद	१३ सवय्ये गुरु रामदास जी की महिमा-स्तुति में।
५. हरबंस	२ सवय्ये गुरु अमरदास जी की महिमा-स्तुति में।
६. जालप	५ सवय्ये गुरु अमरदास जी की कीर्ति में
७. कल्सर	५४ सवय्ये पांचों गुरुओं की महिमा-स्तुति में।
८. कीरत	८—४ सवय्ये गुरु अमरदास एवं ४ सवय्ये गुरु रामदास की स्तुति में।
९. मथुरा	१४—७ सवय्ये गुरु रामदास जी एवं ७ सवय्ये गुरु अर्जुन देव जी की कीर्ति में।
१०. नल्ह	१६ सवय्ये गुरु रामदास जी की स्तुति में।
११. सल्ह	३ सवय्ये गुरु अमरदास जी की महिमा-स्तुति में।

४७.परमपद — मुक्ति, मोक्ष
४८. परवाणु — मंजूर, स्वीकार
४९.परवरदगार — पालनहार, परमात्मा
५०. पैज — लाज, मान-प्रतिष्ठा
५१.बोहिथ — जहाज
५२.बखसिंद — रहमदिल
५३.ठाकुर — स्वामी
५४.बाबा — पुरुष के लिए आदरसूचक शब्द
५५.बिसरत — भुलाना, विस्मृत
५६.भाणा — रज़ा, इच्छा, मर्जी
५७.भगत — प्रभु की भक्ति करने वाला
५८. भरवासा — भरोसा, विश्वास
५९.भउजल — संसार-सागर
६०.भक्तवत्सल — भक्तों से प्रेम करने वाला
६१.मति — शिक्षा, सीख, उपदेश
६२. मनमुख — स्वेच्छाचारी
६३.नदरि — करुणा-दृष्टि, कृपा-दृष्टि
६४.निगुरा — गुरु-विहीन
६५.निरंजन — मायातीत, प्रभु
६६.सतिगुरु — सच्चा गुरु, परमेश्वर
६७.साकत — शाक्त, मतावलंबी
६८.सचिआर — सत्यवादी, सत्यशील
६९.सहु — पति प्रभु
७०.सिमरन — आराधना, वंदन
७१.सतसंगति — सत्संग, साधु-संतों की संगति
७२.सिक्ख — शिष्य, शार्गिद
७३.सबद — शब्द, ब्रह्म, नाम
७४. सिफत — प्रशंसा, स्तुति
७५.सिरंदा — रचयिता
७६.साहिब — मालिक, परमेश्वर
७७.हरि — ईश्वर
७८. सवैये — कविता का एक रूप
७९.सोलहे — सोलह पंक्तियों वाले शब्द
८०. भाई — भ्राता एवं सिक्ख धर्म का प्रचारक
८१.भजु — भजन
८२.रहाउ — रुको, दुबारा चिंतन करो
८३. राखनहार — संरक्षक
८४. रसना — जीभ, जिह्वा
८५. लाव — विवाह का फेरा
८६. वडिआई — बड़ाई, स्तुति, प्रशंसा
८७. विधाता — परमेश्वर
८८. वडभागी — भाग्यवान, भाग्यशाली,
८९. बेपरवाह — सर्वाधिकार सम्पन्न
९०. वार — काव्य रूप, जिससे स्तुतिगान करना
९१. श्लोक — काव्य रचना।

☆☆☆

१ओं सतिगुर प्रसादि॥

ततकरा शबदों का

शब्दार्थ

१. अरदास	— प्रार्थना, वंदना	२९. पैज	— लाज, मान-प्रतिष्ठा
२. अमर	— हुक्म, कानून	३०. बिसरत	— भुलाना, विस्मृत
३. आलम	— संसार, दुनिया	३१. भाणा	— रजा, इच्छा, मर्जी
४. अंतर्यामी	— मन की भावना को जानने वाला	३२. भरवासा	— भरोसा, विश्वास
५. अलख	— अदृष्ट, अलक्ष्य, ईश्वर	३३. भउजल	— संसार-सागर
६. अबिनासी	— अनश्वर, अटल	३४. मति	— बुद्धि, अक्ल, सीख
७. अछल	— छल से रहित	३५. मनमुख	— स्वेच्छाचारी
८. इआणा	— नादान, नासमझ	३६. नदरि	— करुणा-दृष्टि, कृपा-दृष्टि
९. करम	— मेहर, अनुकंपा	३७. निगुरा	— गुरु-विहीन
१०. किलबिख	— पाप, दोष, अपराध	३८. निरंजन	— मायातीत, निर्दोष
११. कुदरत	— ईश्वरीय शक्ति, प्रकृति, माया	३९. सतिगुरु	— सच्चा गुरु, सद्गुरु
१२. कूड़	— झूठ, मिथ्या, नाशवान	४०. साकत	— शाक्त, शक्ति का पुजारी
१३. कामणि	— कामिनी, जीव-स्त्री	४१. सचिआर	— सत्यवादी
१४. खुदा	— अल्लाह	४२. सहु	— पति प्रभु
१५. गुरु	— मार्गदर्शन करने वाला	४३. सतसंगति	— सत्संग, अच्छी संगति
१६. गुरमुख	— गुरु-आज्ञानुसार चलने वाला	४४. सिक्ख	— शिष्य, शार्गिद
१७. गुरसिख	— गुरु का शिष्य	४५. सबद	— शब्द, ब्रह्म, नाम
१८. घाल	— साधना, मेहनत, परिश्रम	४६. सिरंदा	— रचयिता
१९. चाकरी	— सेवा	४७. साहिब	— मालिक, परमेश्वर
२०. ताड़ी	— ध्यान, समाधि	४८. हरि	— परमात्मा
२१. दात	— देन, वरदान	४९. हुक्म	— आदेश, आज्ञा
२२. जिंद	— जिंदगी, जान, प्राण	५०. ठाकुर	— मालिक, स्वामी
२३. हउमै	— अहंत्व, अभिमान, अहंकार	५१. रहाउ	— रुको, दुबारा चिंतन करो
२४. हरिजन	— ईश्वर का उपासक, भक्त	५२. राम	— सर्वव्यापक ईश्वर
२५. प्रसाद	— कृपा, अनुकंपा, आशीर्वाद	५३. रसना	— जीभ, जिह्वा, जुबान
२६. परमपद	— मुक्ति, मोक्ष	५४. वडिआई	— बड़ाई, स्तुति, प्रशंसा, यश
२७. परवाणु	— मंजूर, स्वीकार	५५. विधाता	— परमेश्वर
२८. परवरदगार	— पालनहार, परमात्मा	५६. वडभागी	— भाग्यवान, भाग्यशाली

१ओं सतिगुरु प्रसादि ॥

राग सूची

सैंची पहली

सैंची दूसरी

सैंची तीसरी

सैंची चौथी

☆☆☆

१ ਓं सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

ततकरा रागों का

भाग पहिला

☆☆☆

मूल मंत्र

ੴ
ਸਤਿਨਾਮੁਕਰਤਾਪੁਰਖੁਨਿਰ
ਭਉਨਿਰਵੈਰੁਅਕਾਲਮੂਰ
ਤਿਅਜੂਨੀਸੈਭੰਗੁਰਪ੍ਰਸਾ
ਦਿ ॥ਜਪੁ॥

श्री गुरु अर्जुन देव जी के निशान साहिब करतारपुरी बीड़ साहिब में से।

आदि
श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी

१ ਓੱ सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

१ ਓੱ – इस शब्द का शुद्ध उच्चारण है – 'एक ओंकार'। इसके उच्चारण में इसके तीन अंश किए जाते हैं। इन तीनों के भावार्थ भी अलग-अलग ही हैं।

१ – एक (अद्वितीय)।

ਓ – वही।

ओंकार (⌒) निरंकार ; अर्थात्—ब्रह्म, करतार, ईश्वर, परमात्मा, भगवान, वाहिगुरु।

१ ਓੱ – निरंकार वही एक है।

सति नामु – उसका नाम सत्य है।

करता – वह सृष्टि व उसके जीवों को रचने वाला है।

पुरखु – वह यह सब कुछ करने में परिपूर्ण (शक्तिवान) है।

निरभउ – उसमें किसी तरह का भय व्याप्त नहीं। अर्थात् – अन्य देव-दैत्यों तथा सांसारिक जीवों की भाँति उसमें द्वेष अथवा जन्म-मरण का भय नहीं है ; वह इन सबसे परे है।

निरवैरु– वह वैर से रहित है।

अकाल– वह काल (मृत्यु) से परे है; अर्थात्—वह अविनाशी है।

मूरति – वह अविनाशी होने के कारण उसका अस्तित्व सदैव रहता है।

अजूनी – वह कोई योनि धारण नहीं करता, क्योंकि वह आवागमन के चक्कर से रहित है।

सैभं – वह स्वयं से प्रकाशमान हुआ है।

गुर – अंधकार (अज्ञान) में प्रकाश (ज्ञान) करने वाला (गुरु)।

प्रसादि– कृपा की बख्शिश। अर्थात्—गुरु की कृपा से यह सब उपलब्ध हो सकता है।

आदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के इस प्रथम महावाक्य में सिख मत के आदि गुरु, श्री गुरु नानक देव जी ने निरंकार के स्वरूप को कथन किया है। इस महावाक्य को सिख धर्म का मूल-मन्त्र माना गया है। यही मूल-मन्त्र श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी व जपु जी साहिब जी का मंगलाचरण भी है। इसे श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में अंकित प्रत्येक राग के पूर्व दोहराया गया है और कई स्थानों पर इसे संक्षिप्त रूप में '१ ਓੱ सतिगुर प्रसादि' दिया गया है। इस मूल-मन्त्र के पश्चात् ही प्रथम पिता, आरम्भिक ज्योति श्री गुरु नानक देव जी द्वारा उच्चारण की गई वाणी 'जपु जी साहिब' प्रारम्भ होती है।

॥ जपु ॥

जाप करो।

(इसे गुरु की वाणी का शीर्षक भी माना गया है।)

आदि सचु जुगादि सचु ॥ है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥ १ ॥

निरंकार (अकाल पुरुष) सृष्टि की रचना से पहले सत्य था, युगों के प्रारम्भ में भी सत्य (स्वरूप) था। अब वर्तमान में भी उसी का अस्तित्व है, श्री गुरु नानक देव जी का कथन है – भविष्य में भी उसी सत्यस्वरूप निरंकार का अस्तित्व होगा॥ १॥

सोचै सोचि न होवई जे सोची लख वार ॥ चुपै चुप न होवई जे लाइ रहा लिव तार ॥ भुखिआ भुख न उतरी जे बंना पुरीआ भार ॥ सहस सिआणपा लख होहि त इक न चलै नालि ॥ किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि ॥ हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ॥ १ ॥

यदि कोई लाख बार शौच (स्नानादि) करता रहे तो भी इस शरीर के बाहरी स्नान से मन की पवित्रता नहीं हो सकती। मन की पवित्रता के बिना परमेश्वर (वाहिगुरु) के प्रति विचार भी नहीं किया जा सकता। यदि कोई एकाग्रचित्त समाधि लगाकर मुँह से चुप्पी धारण कर ले तो भी मन की शांति (चुप) प्राप्त नहीं हो सकती; जब तक कि मन से झूठे विकार नहीं निकल जाते। बेशक कोई जगत् की समस्त पुरियों के पदार्थों को ग्रहण कर ले तो भी पेट से भूखे रह कर (व्रतादि करके) इस मन की तृष्णा रूपी भूख को नहीं मिटा सकता। चाहे किसी के पास हज़ारों–लाखों चतुराई भरे विचार हों लेकिन वे सब अहंयुक्त होने के कारण परमेश्वर तक पहुँचने में कभी सहायक नहीं होते। अब प्रश्न पैदा होता है कि फिर परमात्मा के समक्ष सत्य का प्रकाश पुंज कैसे बना जा सकता है, हमारे और निरंकार के बीच मिथ्या की जो दीवार है वह कैसे टूट सकती है ? सत्य रूप होने का मार्ग बताते हुए श्री गुरु नानक देव जी कथन करते हैं – यह सृष्टि के प्रारम्भ से ही लिखा चला आ रहा है कि ईश्वर के आदेश अधीन चलने से ही सांसारिक प्राणी यह सब कर सकता है॥ १॥

हुकमी होवनि आकार हुकमु न कहिआ जाई ॥ हुकमी होवनि जीअ हुकमि मिलै वडिआई ॥ हुकमी उतमु नीचु हुकमि लिखि दुख सुख पाईअहि ॥ इकना हुकमी बखसीस इकि हुकमी सदा भवाईअहि ॥ हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोइ ॥ नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ ॥ २ ॥

(सृष्टि की रचना में) समस्त शरीर (निरंकार के) आदेश द्वारा ही रचे गए हैं, किन्तु उसके आदेश को मुँह से शब्द निकाल कर ब्यान नहीं किया जा सकता। परमेश्वर के आदेश से (इस धरा पर) अनेकानेक योनियों में जीवों का सृजन होता है, उसी के आदेश से ही मान–सम्मान (अथवा ऊँच – नीच का पद) प्राप्त होता है। परमेश्वर (वाहिगुरु) के आदेश से ही जीव श्रेष्ठ अथवा निम्न जीवन प्राप्त करता है, उसके द्वारा ही लिखे गए आदेश से जीव सुख और दुख की अनुभूति करता है। परमात्मा के आदेश से ही कई जीवों को कृपा मिलती है, कई उसके आदेश से आवागमन के चक्र में फँसे रहते हैं। उस सर्वोच्च शक्ति परमेश्वर के अधीन ही सब–कुछ रहता है, उससे बाहर संसार का कोई कार्य नहीं है। हे नानक! यदि जीव उस अकाल पुरुष के आदेश को प्रसन्नचित्त होकर जान ले तो कोई भी अहंकारमयी 'मैं' के वश में नहीं रहेगा। यही अहंत्व सांसारिक वैभव में लिप्त प्राणी को निरंकार के निकट नहीं होने देता॥ २॥

गावै को ताणु होवै किसै ताणु ॥ गावै को दाति जाणै नीसाणु ॥ गावै को गुण वडिआईआ चार ॥ गावै को विदिआ विखमु वीचारु ॥ गावै को साजि करे तनु खेह ॥ गावै को जीअ लै फिरि देह ॥ गावै को जापै दिसै दूरि ॥ गावै को वेखै हादरा हदूरि ॥ कथना कथी न आवै तोटि ॥ कथि कथि कथी कोटी कोटि कोटि ॥ देदा दे लैदे थकि पाहि ॥ जुगा जुगंतरि खाही खाहि ॥ हुकमी हुकमु चलाए राहु ॥ नानक विगसै वेपरवाहु ॥ ३ ॥

(परमेश्वर की कृपा से ही) जिस किसी के पास आत्मिक शक्ति है, वही उस (सर्वशक्तिमान) की ताकत का यश गायन कर सकता है। कोई उसके द्वारा प्रदत्त बख्शिशों को (उसकी) कृपादृष्टि मानकर ही उसकी कीर्ति का गुणगान कर रहा है। कोई जीव उसके अकथनीय गुणों व महिमा को गा रहा है। कोई उसके विषम विचारों (ज्ञान) का गान विद्या द्वारा कर रहा है। कोई उसका गुणगान रचयिता व संहारक ईश्वर का रूप जानकर करता है। कोई उसका बखान इस प्रकार करता है कि वह परम सत्ता जीवन देकर फिर वापिस ले लेती है। कोई जीव उस निरंकार को स्वयं से दूर जानकर उसका यश गाता है। कोई उसे अपने अंग—संग जानकर उसकी महिमा गाता है। अनेकानेक ने उसकी कीर्ति का कथन किया है किन्तु फिर अन्त नहीं हुआ। करोड़ों जीवों ने उसके गुणों का कथन किया है। फिर भी उसका वास्तविक स्वरूप पाया नहीं जा सका। अकाल पुरुष दाता बनकर जीव को भौतिक पदार्थ (अथक) देता ही जा रहा है, (परंतु) जीव लेते हुए थक जाता है। समस्त जीव युगों—युगों से इन पदार्थों का भोग करते आ रहे हैं। आदेश करने वाले निरंकार की इच्छा से ही (सम्पूर्ण सृष्टि के) मार्ग चल रहे हैं। श्री गुरु नानक देव जी सृष्टि के जीवों को सुचेत करते हुए कहते हैं कि वह निरंकार (वाहिगुरु) चिंता रहित होकर (इस संसार के जीवों पर) सदैव प्रसन्न रहता है॥ ३॥

साचा साहिबु साचु नाइ भाखिआ भाउ अपारु ॥ आखहि मंगहि देहि देहि दाति करे दातारु ॥ फेरि कि अगै रखीऐ जितु दिसै दरबारु ॥ मुहौ कि बोलणु बोलीऐ जितु सुणि धरे पिआरु ॥ अंम्रित वेला सचु नाउ वडिआई वीचारु ॥ करमी आवै कपड़ा नदरी मोखु दुआरु ॥ नानक एवै जाणीऐ सभु आपे सचिआरु ॥ ४ ॥

वह अकाल पुरुष (निरंकार) अपने सत्य नाम के साथ स्वयं भी सत्य है, उस (सत्य एवं सत्य नाम वाले) को प्रेम करने वाले ही अनंत कहते हैं। (समस्त देव, दैत्य, मनुष्य तथा पशु इत्यादि) जीव कहते रहते हैं, माँगते रहते हैं, (भौतिक पदार्थ) दे दे करते हैं, वह दाता (परमात्मा) सभी को देता ही रहता है। अब प्रश्न उत्पन्न होते हैं कि (जैसे अन्य राजा — महाराजाओं के समक्ष कुछ भेंट लेकर जाते हैं वैसे ही) उस परिपूर्ण परमात्मा के समक्ष क्या भेंट ले जाई जाए कि उसका द्वार सरलता से दिखाई दे जाए ? जुबां से उसका गुणगान किस प्रकार का करें कि सुनकर वह अनंत शक्ति (ईश्वर) हमें प्रेम— प्रशाद प्रदान करे ? इनका उत्तर गुरु महाराज स्पष्ट करते हैं कि प्रभात काल (अमृत वेला) में (जिस समय व्यक्ति का मन आम तौर पर सांसारिक उलझनों से विरक्त होता है) उस सत्य नाम वाले अकाल पुरुष का नाम—स्मरण करें और उसकी महिमा का गान करें, तभी उसका प्रेम प्राप्त कर सकते हैं। (इससे यदि उसकी कृपा हो जाए तो) गुरु जी बताते हैं कि कर्म मात्र से जीव को यह शरीर रूपी कपड़ा अर्थात् मानव जन्म प्राप्त होता है, इससे मुक्ति नहीं मिलती, मोक्ष प्राप्त करने के लिए उसकी कृपामयी दृष्टि चाहिए। हे नानक ! इस प्रकार का बोध ग्रहण करो कि वह सत्य स्वरूप निरंकार ही सर्वस्व है इससे मनुष्य की समस्त शंकाएँ मिट जाएँगी॥ ४॥

थापिआ न जाइ कीता न होइ ॥ आपे आपि निरंजनु सोइ ॥ जिनि सेविआ तिनि पाइआ मानु॥ नानक गावीऐ गुणी निधानु ॥ गावीऐ सुणीऐ मनि रखीऐ भाउ ॥ दुखु परहरि सुखु घरि लै जाइ॥ गुरमुखि नादं गुरमुखि वेदं गुरमुखि रहिआ समाई ॥ गुरु ईसरु गुरु गोरखु बरमा गुरु पारबती माई ॥ जे हउ जाणा आखा नाही कहणा कथनु न जाई ॥ गुरा इक देहि बुझाई ॥ सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई ॥ ५ ॥

वह परमात्मा किसी के द्वारा मूर्त्त रूप में स्थापित नहीं किया जा सकता, न ही उसे बनाया जा सकता है। वह मायातीत होकर स्वयं से ही प्रकाशमान है। जिस मानव ने उस ईश्वर का नाम-स्मरण किया है उसी ने उसके दरबार में सम्मान प्राप्त किया है। श्री गुरु नानक देव जी का कथन है कि उस गुणों के भण्डार निरंकार की बंदगी करनी चाहिए। उसका गुणगान करते हुए, प्रशंसा सुनते हुए अपने हृदय में उसके प्रति श्रद्धा धारण करें। ऐसा करने से दुखों का नाश होकर घर में सुखों का वास हो जाता है। गुरु के मुँह से निकला हुआ शब्द ही वेदों का ज्ञान है, वही उपदेश रूपी ज्ञान सभी जगह विद्यमान है। गुरु ही शिव, विष्णु, ब्रह्मा और माता पार्वती है, क्योंकि गुरु परम शक्ति हैं। यदि मैं उस सर्गुण स्वरूप परमात्मा के बारे में जानता भी हूँ तो उसे कथन नहीं कर सकता, क्योंकि उसका कथन किया ही नहीं जा सकता। हे सच्चे गुरु ! मुझे सिर्फ यही समझा दो कि समस्त जीवों का जो एकमात्र दाता है मैं कभी भी उसे भूल न पाऊं॥ ५॥

तीरथि नावा जे तिसु भावा विणु भाणे कि नाइ करी ॥ जेती सिरठि उपाई वेखा विणु करमा कि मिलै लई ॥ मति विचि रतन जवाहर माणिक जे इक गुर की सिख सुणी ॥ गुरा इक देहि बुझाई ॥ सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई ॥ ६ ॥

तीर्थ-स्नान भी तभी किया जा सकता है यदि ऐसा करना उसे स्वीकार हो, उस अकाल पुरुष की इच्छा के बिना मैं तीर्थ-स्नान करके क्या करूँगा, क्योंकि फिर तो यह सब अर्थहीन ही होगा। उस रचयिता की पैदा की हुई जितनी भी सृष्टि मैं देखता हूँ, उसमें कर्मों के बिना न कोई जीव कुछ प्राप्त करता है और न ही उसे कुछ मिलता है। यदि सच्चे गुरु का मात्र एक ज्ञान ग्रहण कर लिया जाए तो मानव जीव की बुद्धि रत्न, जवाहर व माणिक्य जैसे पदार्थों से परिपूर्ण हो जाए। हे गुरु जी ! मुझे सिर्फ यही बोध करवा दो कि सृष्टि के समस्त प्राणियों को देने वाला निरंकार मुझ से विस्मृत न हो॥ ६॥

जे जुग चारे आरजा होर दसूणी होइ ॥ नवा खंडा विचि जाणीऐ नालि चलै सभु कोइ ॥ चंगा नाउ रखाइ कै जसु कीरति जगि लेइ ॥ जे तिसु नदरि न आवई त वात न पुछै के ॥ कीटा अंदरि कीटु करि दोसी दोसु धरे ॥ नानक निरगुणि गुणु करे गुणवंतिआ गुणु दे ॥ तेहा कोइ न सुझई जि तिसु गुणु कोइ करे ॥ ७ ॥

यदि किसी मनुष्य अथवा योगी की योग-साधना करके चार युगों से दस गुणा अधिक, अर्थात्-चालीस युगों की आयु हो जाए। नवखण्डों (पौराणिक धर्म-ग्रन्थों में वर्णित इलावृत, किंपुरुष, भद्र, भारत, केतुमाल, हरि, हिरण्य, रम्य और कुश) में उसकी कीर्ति हो, सभी उसके सम्मान में साथ चलें। संसार में प्रख्यात पुरुष बनकर अपनी शोभा का गान करवाता रहे। यदि अकाल पुरुष की कृपादृष्टि में वह मनुष्य नहीं आया तो किसी ने भी उसकी क्षेम नहीं पूछनी। इतने वैभव तथा मान-सम्मान होने के बावजूद भी ऐसा मनुष्य परमात्मा के समक्ष कीटों मे क्षुद्र कीट अर्थात् अत्यंत

अधम समझा जाता है, दोषयुक्त मनुष्य भी उसे दोषी समझेंगे। गुरु नानक जी का कथन है कि वह असीम–शक्ति निरंकार गुणहीन मनुष्यों को गुण प्रदान करता है और गुणी मनुष्यों को अतिरिक्त गुणवान बनाता है। परंतु ऐसा कोई और दिखाई नहीं देता, जो उस गुणों से परिपूर्ण परमात्मा को कोई गुण प्रदान कर सके॥७॥

सुणिऐ सिध पीर सुरि नाथ ॥ सुणिऐ धरति धवल आकास ॥ सुणिऐ दीप लोअ पाताल ॥ सुणिऐ पोहि न सकै कालु ॥ नानक भगता सदा विगासु ॥ सुणिऐ दूख पाप का नासु ॥ ८ ॥

{आगे की चार पउड़ियों में गुरु जी परमात्मा का नाम सुनने के महात्म्य की व्याख्या करते हैं।}
गुरु जी का फुरमान है कि परमात्मा का नाम सुनने, अर्थात्–उसकी कीर्ति में अपने हृदय को लगाने के कारण ही सिद्ध, पीर, देव तथा नाथ इत्यादि को परम–पद की प्राप्ति हुई है। नाम सुनने से ही पृथ्वी, उसको धारण करने वाले वृषभ (पौराणिक धर्म ग्रन्थों के अनुसार जो धौला बैल इस भू–लोक को अपने सींगों पर टिकाए हुए है) तथा आकाश के स्थायित्व की शक्ति का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। नाम सुनने से शाल्मलि, क्रौंच, जम्बू, पलक आदि सप्त द्वीप; भू; भवः, स्वः आदि चौदह लोक तथा अतल, वितल, सुतल आदि सातों पातालों की अन्तर्यामता प्राप्त होती है। नाम सुनने वाले को काल स्पर्श भी नहीं कर सकता। हे नानक! प्रभु के भक्त में सदैव आनंद का प्रकाश रहता है, परमात्मा का नाम सुनने से समस्त दुखों व दुष्कर्मों का नाश होता है॥ ८॥

सुणिऐ ईसरु बरमा इंदु ॥ सुणिऐ मुखि सालाहण मंदु ॥ सुणिऐ जोग जुगति तनि भेद ॥ सुणिऐ सासत सिम्रिति वेद ॥ नानक भगता सदा विगासु ॥ सुणिऐ दूख पाप का नासु ॥ ६ ॥

परमात्मा का नाम सुनने से ही शिव, ब्रह्मा तथा इन्द्र आदि उत्तम पदवी को प्राप्त कर सके हैं। मंदे लोग यानी कि बुरे कर्म करने वाले मनुष्य भी नाम को श्रवण करने मात्र से प्रशंसा के लायक हो जाते हैं। नाम के साथ जुड़ने से योगादि तथा शरीर के विशुद्ध, मणिपूरक, मूलाधार आदि षट्–चक्र के रहस्य का बोध हो जाता है। नाम सुनने से षट्–शास्त्र, (सांख्य, योग, न्याय आदि), सत्ताईस स्मृतियों (मनु, याज्ञवल्कय स्मृति आदि) तथा चारों वेदों का ज्ञान उपलब्ध होता है। हे नानक! संत जनों के हृदय में सदैव आनंद का प्रकाश रहता है। परमात्मा का नाम सुनने से समस्त दुखों व दुष्कर्मों का नाश होता है॥ ६॥

सुणिऐ सतु संतोखु गिआनु ॥ सुणिऐ अठसठि का इसनानु ॥ सुणिऐ पड़ि पड़ि पावहि मानु॥ सुणिऐ लागै सहजि धिआनु ॥ नानक भगता सदा विगासु ॥ सुणिऐ दूख पाप का नासु ॥ १० ॥

नाम सुनने से मनुष्य को सत्य, संतोष व ज्ञान जैसे मूल धर्मों की प्राप्ति होती है। नाम को सुनने मात्र से समस्त तीर्थों में श्रेष्ठ अठसठ तीर्थों के स्नान का फल प्राप्त हो जाता है। निरंकार के नाम को सुनने के बाद बार–बार रसना पर लाने वाले मनुष्य को उसके दरबार में सम्मान प्राप्त होता है। नाम सुनने से परमात्मा में लीनता सरलता से हो जाती है, क्योंकि इससे आत्मिक शुद्धि होकर ज्ञान प्राप्त होता है। हे नानक! प्रभु के भक्तों को सदैव आत्मिक आनंद का प्रकाश रहता है। परमात्मा का नाम सुनने से समस्त दुखों व दुष्कर्मों का नाश होता है॥ १०॥

सुणिऐ सरा गुणा के गाह ॥ सुणिऐ सेख पीर पातिसाह ॥ सुणिऐ अंधे पावहि राहु ॥ सुणिऐ हाथ होवै असगाहु ॥ नानक भगता सदा विगासु ॥ सुणिऐ दूख पाप का नासु ॥ ११ ॥

नाम सुनने से गुणों के सागर श्री हरि में लीन हुआ जा सकता है। नाम–श्रवण के प्रभाव से ही शेख, पीर और बादशाह अपने पद पर शोभायमान हैं। अज्ञानी मनुष्य प्रभु–भक्ति का मार्ग नाम–श्रवण

करने से ही प्राप्त कर सकते हैं। इस भव–सागर की अथाह गहराई को जान पाना भी नाम–श्रवण की शक्ति से सम्भव हो सकता है। हे नानक! सद्–पुरुषों के अंतर में सदैव आनंद का प्रकाश रहता है। परमात्मा का नाम सुनने से समस्त दुखों व दुष्कर्मों का नाश होता है॥ ११॥

मंने की गति कही न जाइ ॥ जे को कहै पिछै पछुताइ ॥ कागदि कलम न लिखणहारु ॥ मंने का बहि करनि वीचारु ॥ ऐसा नामु निरंजनु होइ ॥ जे को मंनि जाणै मनि कोइ ॥ १२ ॥

उस अकाल पुरुष का नाम सुनने के पश्चात उसे मानने वाले अर्थात् उसे अपने हृदय में बसाने वाले मनुष्य की अवस्था कथन नहीं की जा सकती। जो भी उसकी अवस्था का बखान करता है तो उसे अंत में पछताना पड़ता है क्योंकि यह सब कर लेना सरल नहीं है, ऐसी कोई रसना नहीं जो नाम से प्राप्त होने वाले आनन्द का रहस्योद्घाटन कर सके। ऐसी अवस्था को यदि लिखा भी जाए तो इसके लिए न कागज़ है, न कलम और न ही लिखने वाला कोई जिज्ञासु, जो वाहिगुरु में लिवलीन होने वाले का विचार कर सकें। परमात्मा का नाम सर्वश्रेष्ठ व मायातीत है। यदि कोई उसे अपने हृदय में बसा कर उसका चिन्तन करे॥ १२॥

मंनै सुरति होवै मनि बुधि ॥ मंनै सगल भवण की सुधि ॥ मंनै मुहि चोटा ना खाइ ॥ मंनै जम कै साथि न जाइ ॥ ऐसा नामु निरंजनु होइ ॥ जे को मंनि जाणै मनि कोइ ॥ १३ ॥

परमात्मा का नाम सुनकर उसका चिन्तन करने से मन और बुद्धि में उत्तम प्रीति पैदा हो जाती है। चिन्तन करने से सम्पूर्ण सृष्टि का ज्ञान–बोध होता है। चिन्तन करने वाला मनुष्य कभी सांसारिक कष्टों अथवा परलोक में यमों के दण्ड का भोगी नहीं होता। चिन्तनशील मनुष्य अंतकाल में यमों के साथ नरकों में नहीं जाता, बल्कि देवगणों के साथ स्वर्ग–लोक को जाता है। परमात्मा का नाम बहुत ही श्रेष्ठ एवं मायातीत है। यदि कोई उसे अपने हृदय में लीन करके उसका चिन्तन करे॥ १३॥

मंनै मारगि ठाक न पाइ ॥ मंनै पति सिउ परगटु जाइ ॥ मंनै मगु न चलै पंथु ॥ मंनै धरम सेती सनबंधु ॥ ऐसा नामु निरंजनु होइ ॥ जे को मंनि जाणै मनि कोइ ॥ १४ ॥

निरंकार के नाम का चिन्तन करने वाले मानव जीव के मार्ग में किसी प्रकार की कोई बाधा नहीं आती। चिन्तनशील मनुष्य संसार में शोभा का पात्र होता है। ऐसा व्यक्ति दुविधापूर्ण मार्ग अथवा साम्प्रदायिकता को छोड़ धर्म–पथ पर चलता है। चिन्तनशील का धर्म–कार्यों से सुदृढ़ सम्बन्ध होता है। परमात्मा का नाम बहुत ही श्रेष्ठ एवं मायातीत है। यदि कोई उसे अपने हृदय में लीन करके उसका चिन्तन करे॥ १४॥

मंनै पावहि मोखु दुआरु ॥ मंनै परवारै साधारु ॥ मंनै तरै तारे गुरु सिख ॥ मंनै नानक भवहि न भिख ॥ ऐसा नामु निरंजनु होइ ॥ जे को मंनि जाणै मनि कोइ ॥ १५ ॥

प्रभु के नाम का चिन्तन करने वाले मनुष्य मोक्ष द्वार को प्राप्त कर लेते हैं। चिन्तन करने वाले अपने समस्त परिजनों को भी उस नाम का आश्रय देते हैं। चिन्तनशील गुरसिख स्वयं तो इस भव–सागर को पार करता ही है तथा अन्य संगियों को भी पार करवा देता है। चिन्तन करने वाला मानव जीव, हे नानक! दर–दर का भिखारी नहीं बनता। परमात्मा का नाम बहुत ही श्रेष्ठ एवं मायातीत है। यदि कोई उसे अपने हृदय में लीन करके उसका चिन्तन करे॥ १५॥

{उपरोक्त चार पउड़ियों में नाम को सुनने के पश्चात उसका चिन्तन करने तथा निदिध्यासनम् की महिमा का वर्णन किया गया है। यदि गौर किया जाए तो यह गुरु–काल से ही परम्परा चली आ

रही है कि पहले गुरु–मंत्र कानों द्वारा जिज्ञासु के अंतर में प्रवेश करता है फिर उस अमृत नाम का निरंतर चिन्तन जिह्वा द्वारा किया जाता है। यही नाम फिर हृदय में सुमिरन का रूप ले लेता है। हृदय से किए जाने वाले सुमिरन से यूं प्रतीत होता है मानो मुँह, रसना, नेत्र तथा शरीर के रोम–रोम में वाहिगुरु विद्यमान है। इस चिन्तन से ही साधक उत्तम पदवी प्राप्त करता है।}

पंच परवाण पंच परधानु ॥ पंचे पावहि दरगहि मानु ॥ पंचे सोहहि दरि राजानु ॥ पंचा का गुरु एकु धिआनु ॥ जे को कहै करै वीचारु ॥ करते कै करणै नाही सुमारु ॥ धौलु धरमु दइआ का पूतु ॥ संतोखु थापि रखिआ जिनि सूति ॥ जे को बुझै होवै सचिआरु ॥ धवलै उपरि केता भारु ॥ धरती होरु परै होरु होरु ॥ तिस ते भारु तलै कवणु जोरु ॥ जीअ जाति रंगा के नाव ॥ सभना लिखिआ वुड़ी कलाम ॥ एहु लेखा लिखि जाणै कोइ ॥ लेखा लिखिआ केता होइ ॥ केता ताणु सुआलिहु रूपु ॥ केती दाति जाणै कौणु कूतु ॥ कीता पसाउ एको कवाउ ॥ तिस ते होए लख दरीआउ ॥ कुदरति कवण कहा वीचारु ॥ वारिआ न जावा एक वार ॥ जो तुधु भावै साई भली कार ॥ तू सदा सलामति निरंकार ॥ १६ ॥

{इस पउड़ी में अकाल–पुरुष के नाम का चिन्तन व निदिध्यासन करने वाले गुरुमुख को 'पंच' शब्द से शोभायमान किया गया है, क्योंकि ईश्वर का नाम सुनने, मनन करने, निरन्तर चिन्तन करने, आदेशाधीन चलने तथा मन में प्रीत रखने वाले ये पाँचों सद्‌गुण उस मानव जीव में होंगे।}

जिन्होंने प्रभु–नाम का चिन्तन किया है वे श्रेष्ठ संतजन निरंकार के द्वार पर स्वीकृत होते हैं, वे ही वहाँ पर प्रमुख होते हैं। ऐसे गुरुमुख प्यारे अकाल पुरुष की सभा में सम्मान पाते हैं। ऐसे सद्–पुरुष राज दरबार में शोभावान होते हैं। सद्‌गुणी मानव का ध्यान उस एक सतगुरु (निरंकार) में ही दृढ़ रहता है। यदि कोई व्यक्ति उस सृजनहार के बारे में कहना चाहे अथवा उसकी रचना का लेखा करे तो उस रचयिता की कुदरत का आकलन नहीं किया जा सकता। निरंकार द्वारा रची गई सृष्टि धर्म रूपी वृषभ (धौला बैल) ने अपने ऊपर टिका कर रखी हुई है जो कि दया का पुत्र है (क्योंकि मन में दया–भाव होगा तभी धर्म–कार्य इस मानव जीव से सम्भव होगा।) जिसे संतोष रूपी सूत्र के साथ बांधा हुआ है। यदि कोई परमात्मा के इस रहस्य को जान ले तो वह सत्यनिष्ठ हो सकता है। यदि कोई ईश्वर के इस कौतुक को नहीं मानता तो उसके मन में यही शंका उत्पन्न होगी कि उस शरीर धारी बैल पर इस धरती का कितना बोझ है, वह कितना बोझ उठाने की समर्था रखता है। क्योंकि इस धरती पर सृजनहार ने जो रचना की है वह परे से परे है, अनन्त है। फिर उस बैल का बोझ किस शक्ति पर आश्रित है।

सृजनहार की इस रचना में अनेक जातियों, रंगों तथा अलग–अलग नाम से जाने जाने वाले लोग मौजूद हैं। जिनके मस्तिष्क पर परमात्मा की आज्ञा में चलने वाली कलम से कर्मों का लेखा लिखा गया है। किन्तु यदि कोई जन–साधारण इस कर्म–लेख को लिखने की बात कहे तो वह यह भी नहीं जान पाएगा कि यह लिखा जाने वाला लेखा कितना होगा। लिखने वाले उस परमात्मा में कितनी शक्ति होगी, उसका रूप कितना सुन्दर है। उसकी कितनी दात है, ऐसा कौन है जो उसका सम्पूर्ण अनुमान लगा सकता है। अकाल पुरुष के मात्र एक शब्द से समस्त सृष्टि का प्रसार हुआ है। उस एक शब्द रूपी आदेश से ही सृष्टि में एक से अनेक जीव–जन्तु, तथा अन्य पदार्थों के प्रवाह चल पड़े हैं। इसलिए मुझ में इतनी बुद्धि कहाँ कि मैं उस अकथनीय प्रभु की समर्था का विचार कर सकूँ। हे अनन्त स्वरूप! मैं तुझ पर एक बार भी कुर्बान होने के लायक नहीं हूँ। जो तुझे भला लगता है वही कार्य श्रेष्ठ है। हे निरंकार! हे पारब्रह्म! तू सदा शाश्वत रूप हैं॥ १६॥

असंख जप असंख भाउ ॥ असंख पूजा असंख तप ताउ ॥ असंख गरंथ मुखि वेद पाठ ॥ असंख जोग मनि रहहि उदास ॥ असंख भगत गुण गिआन वीचार ॥ असंख सती असंख दातार ॥ असंख सूर मुह भख सार ॥ असंख मोनि लिव लाइ तार ॥ कुदरति कवण कहा वीचारु ॥ वारिआ न जावा एक वार ॥ जो तुधु भावै साई भली कार ॥ तू सदा सलामति निरंकार ॥ १७ ॥

इस सृष्टि में असंख्य लोग उस सृजनहार का जाप करते हैं, असंख्य ही उसको प्रीत करने वाले हैं। असंख्य उसकी अर्चना करते हैं, असंख्य तपी तपस्या कर रहे है। असंख्य लोग धार्मिक ग्रंथों व वेदों आदि का मुँह द्वारा पाठ कर रहे हैं। असंख्य ही योग—साधना में लीन रह कर मन को आसक्तियों से मुक्त रखते हैं। असंख्य ऐसे भक्तजन हैं जो उस गुणी निरंकार के गुणों को विचार कर ज्ञान की उपलब्धि करते हैं। असंख्य सत्य को जानने वाले अथवा परमार्थ—पथ पर चलने वाले तथा दानी सज्जन हैं। असंख्य शूरवीर रणभूमि में शत्रु का सामना करते हुए शस्त्रों की मार सहते हैं। असंख्य मानव जीव मौन धारण करके एकाग्रचित होकर उस अकाल—पुरुष में लिवलीन रहते हैं। इसलिए मुझ में इतनी बुद्धि कहाँ कि मैं उस अकथनीय प्रभु की समर्था का विचार कर सकूँ। हे अनन्त स्वरूप! मैं तुझ पर एक बार भी कुर्बान होने के लायक नहीं हूँ। जो तुझे भला लगता है वही कार्य श्रेष्ठ है। हे निरंकार! हे पारब्रह्म! तू सदा शाश्वत रूप हैं॥ १७॥

असंख मूरख अंध घोर ॥ असंख चोर हरामखोर ॥ असंख अमर करि जाहि जोर ॥ असंख गलवढ हतिआ कमाहि ॥ असंख पापी पापु करि जाहि ॥ असंख कूड़िआर कूड़े फिराहि ॥ असंख मलेछ मलु भखि खाहि ॥ असंख निंदक सिरि करहि भारु ॥ नानकु नीचु कहै वीचारु ॥ वारिआ न जावा एक वार ॥ जो तुधु भावै साई भली कार ॥ तू सदा सलामति निरंकार ॥ १८ ॥

इस सृष्टि में असंख्य मनुष्य विमूढ़ तथा गहन अज्ञानी हैं। असंख्य चोर तथा अभक्ष्य खाने वाले हैं, जो दूसरों का माल चुरा कर खाते हैं। असंख्य ही ऐसे हैं जो अन्य लोगों पर जब्र—जुल्म से अत्याचार का शासन करके इस संसार को त्याग जाते हैं। असंख्य अधर्मी मनुष्य जो दूसरों का गला काट कर हत्या का पाप कमा रहे हैं। असंख्य ही पापी इस संसार से पाप करते हुए चले जाते हैं। असंख्य ही झूठा स्वभाव रखने वाले मिथ्या वचन बोलते फिरते हैं। असंख्य मानव ऐसे हैं जो मलिन बुद्धि होने के कारण विष्टा का भोजन खाते हैं। असंख्य लोग दूसरों की निन्दा करके अपने सिर पर पाप का बोझ रखते हैं। श्री गुरु नानक देव जी स्वयं को निम्न कहते हुए फुरमाते हैं कि हमने तो कुकर्मी जीवों अर्थात् तामसी व आसुरी सम्पदा वाली सृष्टि का कथन किया है। हे अनन्त स्वरूप! मैं तुझ पर एक बार भी कुर्बान होने के लायक नहीं हूँ। जो तुझे भला लगता है वही कार्य श्रेष्ठ है। हे निरंकार! हे पारब्रह्म! तू सदा शाश्वत रूप हैं॥ १८॥

असंख नाव असंख थाव ॥ अगंम अगंम असंख लोअ ॥ असंख कहहि सिरि भारु होइ ॥ अखरी नामु अखरी सालाह ॥ अखरी गिआनु गीत गुण गाह ॥ अखरी लिखणु बोलणु बाणि ॥ अखरा सिरि संजोगु वखाणि ॥ जिनि एहि लिखे तिसु सिरि नाहि ॥ जिव फुरमाए तिव तिव पाहि ॥ जेता कीता तेता नाउ ॥ विणु नावै नाही को थाउ ॥ कुदरति कवण कहा वीचारु ॥ वारिआ न जावा एक वार ॥ जो तुधु भावै साई भली कार ॥ तू सदा सलामति निरंकार ॥ १६ ॥

उस सृजनहार की सृष्टि में असंख्य ही नाम तथा असंख्य ही स्थान वाले जीव विचरन कर रहे हैं; अथवा इस सृष्टि में अकाल—पुरुष के अनेकानेक नाम हैं तथा अनेकानेक ही स्थान हैं, जहाँ पर परमात्मा

का वास रहता है। असंख्य ही अकल्पनीय लोक हैं। किन्तु जो मनुष्य उसकी रचना का गणित करते हुए 'असंख्य' शब्द का प्रयोग करते हैं उनके सिर पर भी भार पड़ता है। शब्दों द्वारा ही उस निरंकार के नाम को जपा जा सकता है, शब्दों से ही उसका गुणगान किया जा सकता है। परमात्मा के गुणों का ज्ञान भी शब्दों द्वारा हो सकता है तथा उसकी प्रशंसा भी शब्दों द्वारा ही कही जा सकती है। शब्दों द्वारा ही उसकी वाणी को लिखा व बोला जा सकता है। शब्दों द्वारा मस्तिष्क पर लिखे गए कर्मों को बताया जा सकता है। किन्तु जिस निरंकार ने यह कर्म लेख लिखे हैं उसके मस्तिष्क पर कोई कर्म–लेख नहीं है; अर्थात्–उसके कर्मों को न तो कोई कह सकता है और न उनका हिसाब रख सकता है। अकाल–पुरुष जिस प्रकार मनुष्य के कर्मों के अनुसार आदेश करता है, वैसे ही वह अपने कर्मों को भोगता है। सृजनहार ने इस सृष्टि का जितना प्रसार किया है, वह समस्त नाम–रूप ही है। कोई भी स्थान उसके नाम से रिक्त नहीं है। इसलिए मुझ में इतनी बुद्धि कहाँ कि मैं उस अकथनीय प्रभु की समर्था का विचार कर सकूँ। हे अनन्त स्वरूप ! मैं तुझ पर एक बार भी कुर्बान होने के लायक नहीं हूँ। जो तुझे भला लगता है वही कार्य श्रेष्ठ है। हे निरंकार ! हे पारब्रह्म ! तू सदा शाश्वत रूप हैं॥ १६॥

भरीऐ हथु पैरु तनु देह ॥ पाणी धोतै उतरसु खेह ॥ मूत पलीती कपड़ु होइ ॥ दे साबूणु लईऐ ओहु धोइ ॥ भरीऐ मति पापा कै संगि ॥ ओहु धोपै नावै कै रंगि ॥ पुंनी पापी आखणु नाहि ॥ करि करि करणा लिखि लै जाहु ॥ आपे बीजि आपे ही खाहु ॥ नानक हुकमी आवहु जाहु ॥ २० ॥

{सतिगुरु जी ने इस पउड़ी में पापयुक्त बुद्धि को पुनः शुद्ध कर लेने का उपाय अकाल–पुरुष के नाम के प्रति श्रद्धा रखना बताया है}

यदि यह शरीर, हाथ–पैर अथवा कोई अन्य अंग मलिन हो जाए तो पानी से धो लेने से उसकी गन्दगी व मिट्टी साफ हो जाती है। यदि कोई वस्त्र पेशाब आदि से अपवित्र हो जाए तो उसे साबुन के साथ धो लिया जाता है। यदि मनुष्य की बुद्धि दुष्कर्मों के करने से मलिन हो जाए तो वह वाहिगुरु के नाम का सिमरन करने से ही पवित्र हो सकती है। पुण्य और पाप मात्र कहने को ही नहीं हैं। अपितु इस संसार में रहकर जैसे–ज़ैसे कर्म किए जाएँगे वही धर्मराज द्वारा भेजे गए चित्र–गुप्त लिख कर ले जाएँगे ; अर्थात् मानव जीव द्वारा इस धरती पर किए जाने वाले प्रत्येक अच्छे व बुरे कर्मों का हिसाब उसके साथ ही जाएगा, जिसके फलानुसार उसे स्वर्ग अथवा नरक की प्राप्ति होगी। सो मनुष्य स्वयं ही कर्म बीज बीजता है और स्वयं ही उसका फल प्राप्त करता है। गुरु नानक का कथन है कि जीव इस संसार में अपने कर्मों का फल भोगने हेतु अकाल–पुरुष के आदेश से आता जाता रहेगा ; अर्थात् जीव के कर्म उसे आवागमन के चक्र में ही रखेंगे, निरंकार जीव के कर्मों के अनुसार ही उसके फल की आज्ञा करेगा॥ २०॥

तीरथु तपु दइआ दतु दानु ॥ जे को पावै तिल का मानु ॥ सुणिआ मंनिआ मनि कीता भाउ ॥ अंतरगति तीरथि मलि नाउ ॥ सभि गुण तेरे मै नाही कोइ ॥ विणु गुण कीते भगति न होइ ॥ सुअसति आथि बाणी बरमाउ॥ सति सुहाणु सदा मनि चाउ ॥ कवणु सु वेला वखतु कवणु कवण थिति कवणु वारु ॥ कवणि सि रुती माहु कवणु जितु होआ आकारु ॥ वेल न पाईआ पंडती जि होवै लेखु पुराणु ॥ वखतु न पाइओ कादीआ जि लिखनि लेखु कुराणु ॥ थिति वारु ना जोगी जाणै रुति माहु ना कोई ॥ जा करता सिरठी कउ साजे आपे जाणै सोई ॥ किव करि आखा किव सालाही किउ वरनी किव जाणा ॥ नानक आखणि सभु को आखै इक दू इकु सिआणा ॥ वडा साहिबु वडी नाई कीता जा का होवै ॥ नानक जे को आपौ जाणै अगै गइआ न सोहै ॥ २१ ॥

तीर्थ–यात्रा, तप–साधना, जीवों पर दया–भाव करके तथा निःस्वार्थ दान देने से ; यदि कोई मनुष्य सम्मान प्राप्त करता है तो वह अति लघु होता है। किन्तु जिन्होंने परमेश्वर के नाम को मन में प्रीत करके सुना व उसका निरन्तर चिन्तन किया है। उन्होंने अपने अंतर के तीर्थ का मानो स्नान कर लिया और अपनी मलिनता को दूर कर लिया। (अर्थात् उस जीव ने अपने हृदय में बसे हुए निरंकार में लीन होकर अपनी अन्तरात्मा की मैल को साफ कर लिया है।) हे सर्गुण स्वरूप ! समस्त गुण आप में हैं, मुझ में शुभ–गुण कोई भी नहीं है। सदाचार के गुणों को धारण किए बिना परमेश्वर की भक्ति भी नहीं हो सकती। हे निरंकार ! तुम्हारी सदा जय हो, तुम कल्याण स्वरूप हो, ब्रह्म रूप हो। तुम सत्य हो, चेतन्य हो और सदैव आनन्द स्वरूप हो। परमात्मा ने यह सृष्टि जब पैदा की थी तब कौन–सा समय, कौन–सा वक्त, कौन–सी तारीख, तथा कौन–सा दिन था। तब कौन–सी ऋतु, कौन–सा महीना था, जब यह प्रसार हुआ था, यह सब कौन जानता है। सृष्टि के प्रसार का निश्चित समय महा विद्वान, ऋषि–मुनि आदि भी नहीं जान पाए, यदि वे जान पाते तो निश्चय ही उन्होंने वेदों अथवा धर्म–ग्रन्थों में इसका उल्लेख किया होता। इस समय का ज्ञान तो काजियों को भी नहीं हो पाया, यदि उन्हें पता होता तो वे कुरानादि में इसका उल्लेख अवश्य करते। इस सृष्टि की रचना का दिन, वार, ऋतु व महीना आदि कोई योगी भी नहीं जान पाया है। इसके बारे में तो जो इस जगत् का रचयिता है वह स्वयं ही जान सकता है कि इस सृष्टि का प्रसार कब किया गया। मैं किस प्रकार उस अकाल पुरुष के कौतुक को कहूँ, कैसे उसकी प्रशंसा करूँ, किस प्रकार वर्णन करूँ और कैसे उसके भेद को जान सकता हूँ ? सतगुरु जी कहते हैं कि कहने को तो हर कोई एक दूसरे से अधिक बुद्धिमान बनकर उस परमात्मा की श्लाघा को कहता है। किंतु परमेश्वर महान् है, उसका नाम उससे भी महान् है, सृष्टि में जो भी हो रहा है वह सब उसके किए से ही हो रहा है। हे नानक ! यदि कोई उसके गुणों को जानने की बात कहता है तो वह परलोक में जाकर शोभा प्राप्त नहीं करता। अर्थात्– यदि कोई जीव उस अभेद निरंकार के गुणात्मक रहस्य को जानने का अभिमान करता है तो उसे इस लोक में तो क्या परलोक में भी सम्मान नहीं मिलता॥ २१॥

पाताला पाताल लख आगासा आगास ॥ ओड़क ओड़क भालि थके वेद कहनि इक वात ॥ सहस अठारह कहनि कतेबा असुलू इकु धातु ॥ लेखा होइ त लिखीऐ लेखै होइ विणासु ॥ नानक वडा आखीऐ आपे जाणै आपु ॥ २२ ॥

सतगुरु जी जन–साधारण के मन में सात आकाश व सात पाताल होने के संशय की निवृत्ति करते हुए कहते हैं कि सृष्टि की रचना में पाताल–दर–पाताल लाखों ही हैं तथा आकाश–दर–आकाश भी लाखों ही हैं। वेद–ग्रंथों में भी यही एक बात कही गई है कि ढूंढने वाले इसको अंतरिम छोर तक ढूँढ कर थक गए हैं किंतु इनका अंत किसी ने नहीं पाया है। सभी धर्म ग्रन्थों में अट्ठारह हजार जगत् होने की बात कही गई है परंतु वास्तव में इनका मूल एक ही परमेश्वर है जो कि इनका स्रष्टा है। यदि उसकी सृष्टि का लेखा हो सके तो कोई लिखे, किंतु यह लेखा करने वाला स्वयं नष्ट हो जाता है। हे नानक ! जिस सृजनहार को इस सम्पूर्ण जगत् में महान कहा जा रहा है वह स्वयं को स्वयं ही जानता है अथवा जान सकता है॥ २२॥

सालाही सालाहि एती सुरति न पाईआ ॥ नदीआ अतै वाह पवहि समुंदि न जाणीअहि ॥ समुंद साह सुलतान गिरहा सेती मालु धनु ॥ कीड़ी तुलि न होवनी जे तिसु मनहु न वीसरहि ॥ २३ ॥

स्तुति करने वाले साधकों ने भी उस परमात्मा की स्तुति करके उसकी सीमा को नहीं पाया। जैसे

नदियां–नाले समुद्र में मिलकर उसका अथाह अंत नहीं पा सकते, बल्कि अपना अस्तित्व भी खो लेते हैं, वैसे ही स्तुति करने वाले स्तुति करते–करते उसमें ही लीन हो जाते हैं। समुद्रों की शाह, शहंशाह होकर, पर्वत समान धन–सम्पत्ति के मालिक होकर भी, उस चींटी के समान नहीं हो सकते, यदि उनके मन से परमेश्वर विस्मृत नहीं हुआ होता॥ २३॥

अंतु न सिफती कहणि न अंतु ॥ अंतु न करणै देणि न अंतु ॥ अंतु न वेखणि सुणणि न अंतु ॥ अंतु न जापै किआ मनि मंतु ॥ अंतु न जापै कीता आकारु ॥ अंतु न जापै पारावारु ॥ अंत कारणि केते बिललाहि ॥ ता के अंत न पाए जाहि ॥ एहु अंतु न जाणै कोइ ॥ बहुता कहीऐ बहुता होइ ॥ वडा साहिबु ऊचा थाउ ॥ ऊचे उपरि ऊचा नाउ ॥ एवडु ऊचा होवै कोइ ॥ तिसु ऊचे कउ जाणै सोइ ॥ जेवडु आपि जाणै आपि आपि ॥ नानक नदरी करमी दाति ॥ २४ ॥

सतिगुरु जी निरंकार के अनंत गुणों, आकार, प्रशंसा तथा उसके द्वारा रची गई सृष्टि के बारे में कथन करते हैं कि उसकी स्तुति करने की कोई सीमा नहीं तथा कहने से भी उसकी प्रशंसा का अन्त नहीं हो सकता। सृजनहार द्वारा रची गई सृष्टि का भी कोई अन्त नहीं परंतु जब वह देता है तब भी उसका कोई अन्त नहीं है। उसके देखने व सुनने का भी अन्त नहीं है, अर्थात्–वह निरंकार सर्वद्रष्टा व सर्वश्रोता है। ईश्वर के हृदय का रहस्य क्या है, उसका बोध भी नहीं हो सकता। इस सृष्टि का प्रसार जो उसने किया उसकी अवधि अथवा सीमा को भी नहीं जाना जा सकता। उसके आदि व अन्त को भी नहीं जाना जा सकता। अनेकानेक जीव उसका अन्त पाने के लिए बिलखते फिर रहे हैं। किन्तु उस अथाह, अनन्त अकाल पुरुष का अंत नहीं पाया जा सकता। उसके गुणों का अन्त कहाँ होता है यह कोई नहीं जान सकता। उस पारब्रह्म की प्रशंसा, स्तुति, आकार अथवा गुणों को जितना कहा जाता है वह उतने ही अधिक होते जाते हैं। निरंकार सर्वश्रेष्ठ है, उसका स्थान सर्वोच्च है। किन्तु उस सर्वश्रेष्ठ निरंकार का नाम महानतम है। यदि कोई शक्ति उससे बड़ी अथवा ऊँची है तो वह ही उस सर्वोच्च मालिक को जान सकती है। निरंकार अपना सर्वस्व स्वयं ही जानता है अथवा जान सकता है, अन्य कोई नहीं। सतिगुरु नानक देव जी का कथन है कि वह कृपासागर जीवों पर करुणा करके उनके कर्मों के अनुसार उन्हें समस्त पदार्थ प्रदान करता है॥ २४॥

बहुता करमु लिखिआ ना जाइ ॥ वडा दाता तिलु न तमाइ ॥ केते मंगहि जोध अपार ॥ केतिआ गणत नही वीचारु ॥ केते खपि तुटहि वेकार ॥ केते लै लै मुकरु पाहि ॥ केते मूरख खाही खाहि ॥ केतिआ दूख भूख सद मार ॥ एहि भि दाति तेरी दातार ॥ बंदि खलासी भाणै होइ ॥ होरु आखि न सकै कोइ ॥ जे को खाइकु आखणि पाइ ॥ ओहु जाणै जेतीआ मुहि खाइ ॥ आपे जाणै आपे देइ ॥ आखहि सि भि केई केइ ॥ जिस नो बखसे सिफति सालाह ॥ नानक पातिसाही पातिसाहु ॥ २५ ॥

उसके उपकार इतने अधिक हैं कि उनको लिखने की समर्था किसी में भी नहीं। वह अनेक बख्शिशें करने वाला होने के कारण बड़ा है किंतु उसे लोभ तिनका मात्र भी नहीं है। कई अनगिणत शूरवीर उसकी कृपा–दृष्टि की चाहना रखते हैं। उनकी संख्या की तो बात ही नहीं हो सकती। कई मानव निरंकार द्वारा प्रदत्त पदार्थों को विकारों हेतु भोगने के लिए जूझ–जूझ कर मर जाते हैं। कई अकाल पुरुष द्वारा दिए जाने वाले पदार्थों को लेकर मुकर जाते हैं। कई मूढ़ व्यक्ति परमात्मा से पदार्थ ले लेकर खाते रहते हैं, कभी उसे स्मरण नहीं करते। कईयों को दुख व भूख की मार सदैव पड़ती रहती है, क्योंकि यह उनके कर्मों में ही लिखा होता है। किन्तु ऐसे सज्जन ऐसी मार को उस परमात्मा की बख्शिश ही मानते हैं। इन्हीं कष्टों के कारण ही मानव जीव को वाहिगुरु का स्मरण होता है। मनुष्य

को माया–मोह के बंधन से छुटकारा भी ईश्वर की आज्ञा में रहने से ही मिलता है। इसके लिए कोई अन्य विधि हो, कोई भी नहीं कह सकता; अर्थात्–ईश्वर की आज्ञा में रहने के अतिरिक्त माया के मोह–बंधन से छुटकारा पाने की कोई अन्य विधि कोई नहीं बता सकता। यदि अज्ञानतावश कोई व्यक्ति इसके बारे में कथन करने की चेष्टा करे तो फिर उसे ही मालूम पड़ेगा कि उसे अपने मुँह पर यमों आदि की कितनी चोटें खानी पड़ी हैं। संसार में सभी जीव कृतघ्न ही नहीं हैं, कई व्यक्ति ऐसे भी हैं जो इस बात को मानते हैं कि परमात्मा संसार के समस्त प्राणियों की जरूरतों को जानता है और उन्हें स्वयं ही प्रदान भी करता है। परमात्मा प्रसन्न होकर जिस व्यक्ति को अपनी स्तुति को गाने की शक्ति प्रदान करता है। हे नानक ! वह बादशाहों का भी बादशाह हो जाता है ; अर्थात्–उसे ऊँचा व उत्तम पद प्राप्त हो जाता है॥ २५॥

अमुल गुण अमुल वापार ॥ अमुल वापारीए अमुल भंडार ॥ अमुल आवहि अमुल लै जाहि ॥ अमुल भाइ अमुला समाहि ॥ अमुलु धरमु अमुलु दीबाणु ॥ अमुलु तुलु अमुलु परवाणु ॥ अमुलु बखसीस अमुलु नीसाणु ॥ अमुलु करमु अमुलु फुरमाणु ॥ अमुलो अमुलु आखिआ न जाइ ॥ आखि आखि रहे लिव लाइ॥ आखहि वेद पाठ पुराण ॥ आखहि पड़े करहि वखिआण ॥ आखहि बरमे आखहि इंद ॥ आखहि गोपी तै गोविंद ॥ आखहि ईसर आखहि सिध ॥ आखहि केते कीते बुध ॥ आखहि दानव आखहि देव ॥ आखहि सुरि नर मुनि जन सेव ॥ केते आखहि आखणि पाहि ॥ केते कहि कहि उठि उठि जाहि ॥ एते कीते होरि करेहि ॥ ता आखि न सकहि केई केइ ॥ जेवडु भावै तेवडु होइ ॥ नानक जाणै साचा सोइ ॥ जे को आखै बोलुविगाड़ु ॥ ता लिखीऐ सिरि गावारा गावारु ॥ २६ ॥

निरंकार के जिन गुणों को कथन नहीं किया जा सकता वे अमूल्य हैं, और इस निरंकार का सुमिरन अमूल्य व्यापार है। यह सुमिरन रूपी व्यापार का मार्गदर्शन करने वाले संत भी अमूल्य व्यापारी हैं और उन संतों के पास जो सद्गुणों का भण्डार है वह भी अमूल्य है। जो व्यक्ति इन संतों के पास प्रभु–मिलाप हेतु आते हैं वे भी अमूल्य हैं और इनसे जो गुण ले जाते हैं वे भी अमूल्य हैं। परस्पर गुरु–सिख का प्रेम अमूल्य है, गुरु के प्रेम से आत्मा को प्राप्त होने वाला आनंद भी अमूल्य है। अकाल–पुरुष का न्याय भी अमूल्य है, उसका न्यायालय भी अमूल्य है। अकाल पुरुष की न्याय करने वाली तुला अमूल्य है, और जीवों के अच्छे–बुरे कर्मों को तोलने हेतु परिमाण (तौल) भी अमूल्य है। अकाल पुरुष द्वारा प्रदान किए जाने वाले पदार्थ भी अमूल्य हैं और उन पदार्थों का चिन्ह भी अमूल्य है। निरंकार की जीव पर होने वाली कृपा भी अमूल्य है तथा उसका आदेश भी अमूल्य है। वह परमात्मा अति अमूल्य है उसका कथन घनिष्ठता से कर पाना असम्भव है। परंतु फिर भी अनेक भक्त जन उसके गुणों का व्याख्यान करके अर्थात् उसकी स्तुति कर–करके भूत, भविष्य व वर्तमान काल में उसमें लिवलीन हो रहे हैं। चारों वेद व अट्ठारह पुराणों में भी उसकी महिमा कही गई है। उनको पढ़ने वाले भी अकाल–पुरुष का व्याख्यान करते हैं। सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा व स्वर्गाधिपति इन्द्र भी उसके अमूल्य गुणों को कथन करते हैं। गिरिधर गोपाल कृष्ण तथा उसकी गोपियाँ भी उस निरंकार का गुणगान करती हैं। महादेव तथा गोरखादि सिद्ध भी उसकी कीर्ति को कहते हैं। उस सृष्टिकर्त्ता ने इस जगत् में जितने भी बुद्धिमान किए हैं वे भी उसके यश को कहते हैं। समस्त दैत्य व देवतादि भी उसकी महिमा को कहते हैं। संसार के सभी पुण्य–कर्मी मानव, नारदादि ऋषि–मुनि तथा अन्य भक्त जन उसकी प्रशंसा के गीत गाते हैं। कितने ही जीव वर्तमान में कह रहे हैं, तथा कितने ही भविष्य में कहने का यत्न करेंगे।

कितने ही जीव भूतकाल में कहते हुए अपना जीवन समाप्त कर चुके हैं। इतने तो हम गिन चुके हैं यदि इतने ही और भी साथ मिला लिए जाएँ तो भी कोई किसी साधन से उसकी अमूल्य स्तुति कह नहीं सकता। जितना स्व–विस्तार चाहता है उतना ही विस्तृत हो जाता है। श्री गुरु नानक देव जी कहते हैं कि वह सत्य स्वरूप निरंकार ही अपने अमूल्य गुणों को जानता है। यदि कोई निरर्थक बोलने वाला परमेश्वर का अंत कहे कि वह इतना है तो उसे महामूर्खों में अंकित किया जाता है।। २६।।

सो दरु केहा सो घरु केहा जितु बहि सरब समाले ॥ वाजे नाद अनेक असंखा केते वावणहारे ॥ केते राग परी सिउ कहीअनि केते गावणहारे ॥ गावहि तुहनो पउणु पाणी बैसंतरु गावै राजा धरमु दुआरे ॥ गावहि चितु गुपतु लिखि जाणहि लिखि लिखि धरमु वीचारे ॥ गावहि ईसरु बरमा देवी सोहनि सदा सवारे॥ गावहि इंद इदासणि बैठे देवतिआ दरि नाले ॥ गावहि सिध समाधी अंदरि गावनि साध विचारे ॥ गावनि जती सती संतोखी गावहि वीर करारे ॥ गावनि पंडित पड़नि रखीसर जुगु जुगु वेदा नाले ॥ गावहि मोहणीआ मनु मोहनि सुरगा मछ पइआले ॥ गावनि रतन उपाए तेरे अठसठि तीरथ नाले ॥ गावहि जोध महाबल सूरा गावहि खाणी चारे ॥ गावहि खंड मंडल वरभंडा करि करि रखे धारे ॥ सेई तुधुनो गावहि जो तुधु भावनि रते तेरे भगत रसाले ॥ होरि केते गावनि से मै चिति न आवनि नानकु किआ वीचारे ॥ सोई सोई सदा सचु साहिबु साचा साची नाई ॥ है भी होसी जाइ न जासी रचना जिनि रचाई ॥ रंगी रंगी भाती करि करि जिनसी माइआ जिनि उपाई ॥ करि करि वेखै कीता आपणा जिव तिस दी वडिआई ॥ जो तिसु भावै सोई करसी हुकमु न करणा जाई ॥ सो पातिसाहु साहा पातिसाहिबु नानक रहणु रजाई ॥ २७ ॥

{इस पउड़ी की प्रथम पंक्ति में उस प्रतिपालक निरंकार के घर–द्वार के बारे में प्रश्न पैदा हो गया, जिसकी निवृत्ति सतिगुरु जी तुरंत ही अगली पंक्तियों में करते हैं।}

उस प्रतिपालक ईश्वर का द्वार तथा घर कैसा है, जहाँ बैठकर वह सम्पूर्ण सृष्टि को सम्भाल रहा है ? (यहाँ पर सतिगुरु जी इस प्रश्न की निवृत्ति में उत्तर देते हैं) हे मानव ! उसके द्वार पर नाना प्रकार के असंख्य वादन गूंज रहे हैं और कितने ही उनको बजाने वाले विद्यमान हैं। कितने ही राग हैं जो रागिनियों के संग वहाँ गान किए जा रहे हैं और उन रागों को गाने वाले गंधर्वादि रागी भी कितने ही हैं। उस निरंकार का यश पवन, जल तथा अग्नि देव गा रहे हैं तथा समस्त जीवों के कर्मों का विश्लेषक धर्मराज भी उसके द्वार पर खड़ा उसकी महिमा को गाता है। जीवों द्वारा किए जाने वाले कर्मों को लिखने वाले चित्र–गुप्त भी उस अकाल–पुरुष का यशोगान करते हैं तथा धर्मराज चित्रगुप्त द्वारा लिखे जाने वाले शुभाशुभ कर्मों का विचार करता है। परमात्मा द्वारा प्रतिपादित शिव, ब्रह्मा व उनकी देवियाँ (शक्ति) जो शोभायमान हैं, सदैव उसका स्तुति–गान करते हैं। हे निरंकार ! समस्त देवताओं व स्वर्ग का अधिपति इन्द्र अपने सिंहासन पर बैठा अन्य देवताओं के साथ मिलकर तुम्हारे द्वार पर खड़ा तुम्हारा यश गा रहे हैं। सिद्ध लोग समाधियों में स्थित हुए तुम्हारा यश गाते हैं, जो विचारवान साधु हैं वे विवेक से यशोगान करते हैं। तुम्हारा स्तुतिगान यति, सती और संतोषी व्यक्ति भी गाते हैं तथा पराक्रमी योद्धा भी तुम्हारी महिमा का गान करते हैं। संसार के समस्त विद्वान व महान् जितेन्द्रिय ऋषि–मुनि युगों–युगों से वेदों को पढ़–पढ़ कर उस अकाल पुरुष का यशोगान कर रहे हैं। मन को मोह लेने वाली समस्त सुन्दर स्त्रियाँ स्वर्ग लोक, मृत्यु लोक व पाताल लोक में तुम्हारा गुणगान कर रही हैं। निरंकार द्वारा उत्पन्न किए हुए चौदह रत्न, संसार के अठसठ तीर्थ तथा उन में विद्यमान संत जन (श्रेष्ठ जन) भी उसके यश को गाते हैं। सभी योद्धा, महाबली, शूरवीर अकाल पुरुष

का यश गाते हैं, उत्पत्ति के चारों स्रोत (अण्डज, जरायुज, स्वेदज व उद्भिज्ज) भी उसके गुणों को गाते हैं। नवखण्ड, मण्डल व सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड, जो उस सृजनहार ने बना–बना कर धारण कर रखे हैं, वे सभी तेरी स्तुति गाते हैं। वास्तव में वे ही तेरी कीर्ति को गा सकते हैं जो तेरी भक्ति में लीन हैं, तेरे नाम के रसिया हैं, और जो तुझे अच्छे लगते हैं। अनेकानेक और भी कई ऐसे जीव मुझे स्मरण नहीं हो रहे हैं, जो तुम्हारा यशोगान करते हैं, हे नानक! मैं कहाँ तक उनका विचार करूँ; अर्थात् यशोगान करने वाले जीवों की गणना मैं कहाँ तक करूँ। वह सत्यस्वरूप अकाल पुरुष भूतकाल में था, वही सद्गुणी निरंकार वर्तमान में भी है। वह भविष्य में सदैव रहेगा, वह सृजनहार परमात्मा न जन्म लेता है और न ही उसका नाश होता है। जिस सृष्टि रचयिता ईश्वर ने रंग–बिरंगी, तरह–तरह के आकार वाली व अनेकानेक जीवों की उत्पत्ति अपनी माया द्वारा की है। अपनी इस उत्पत्ति को कर–करके वह अपनी रुचि अनुसार ही देखता है अर्थात् उनकी देखभाल अपनी इच्छानुसार ही करता है। जो भी उस अकाल पुरुष को भला लगता है वही कार्य वह करता है और भविष्य में करेगा, इसके प्रति उसको आदेश करने वाला उसके समान कोई नहीं है। गुरु नानक जी का फुरमान है कि हे मानव! वह ईश्वर शाहों का शाह अर्थात् शहंशाह है, उसकी आज्ञा में रहना ही उचित है॥ २७॥

मुंदा संतोखु सरमु पतु झोली धिआन की करहि बिभूति ॥ खिंथा कालु कुआरी काइआ जुगति डंडा परतीति ॥ आई पंथी सगल जमाती मनि जीतै जगु जीतु ॥ आदेसु तिसै आदेसु ॥ आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु ॥ २८ ॥

{अग्रिम चार पउड़ियों में गुरु जी ने सिद्धों द्वारा मुद्राएँ, चोली व गुदड़ी आदि धारण किए हुए भेष के यथार्थ को बताते हुए सांसारिक योगी मानव को वास्तविक धर्म के प्रति सुचेत किया है।}

गुरु जी कहते हैं कि हे मानव योगी! तुम संतोष रूपी मुद्राएँ, दुष्कर्मों से लाज रूपी पात्र, पाप रहित होकर लोक–परलोक में बनाई जाने वाली प्रतिष्ठा रूपी चोली ग्रहण कर तथा शरीर को प्रभु की नाम–सिमरन रूपी विभूति लगाकर रख। मृत्यु का स्मरण करना तेरी गुदड़ी है, शरीर का पवित्र रहना योग की युक्ति है, अकाल पुरुष पर दृढ़ विश्वास तुम्हारा डण्डा है। इन सब सदाचारों को ग्रहण करना ही वास्तविक योगी भेष है। (आई पंथ–यह नाथ पंथी सम्प्रदाय की बारह शाखाओं में से नौवीं शाखा मानी जाती है। इस पंथ के योगियों के नाम में अंतिम अक्षर ई होने से यह पंथ 'आई पंथ' प्रचलित हो गया ; जैसे बाल गुंदाई नाथ, सुरजाई नाथ, करकाई नाथ आदि। यह पंथ योगियों में श्रेष्ठ भी माना जाता है।) संसार के समस्त जीवों में तुम्हारा प्रेम हो अर्थात् उनके दुख–सुख को तुम अपना दुख–सुख अनुभव करो, यही तुम्हारा आई पंथ है। कामादिक विकारों से मन को जीत लेना जगत् पर विजय प्राप्त कर लेने के समान है। संसार को किसी अन्य युक्ति अथवा भेष धारण कर लेने से नहीं जीता जा सकता। नमस्कार है, सिर्फ उस सर्गुण स्वरूप निरंकार को नमस्कार है। जो सभी का मूल, रंग रहित, पवित्र स्वरूप, आदि रहित, अनश्वर व अपरिवर्तनीय स्वरूप है॥ २८॥

भुगति गिआनु दइआ भंडारणि घटि घटि वाजहि नाद ॥ आपि नाथु नाथी सभ जा की रिधि सिधि अवरा साद ॥ संजोगु विजोगु दुइ कार चलावहि लेखे आवहि भाग ॥ आदेसु तिसै आदेसु ॥ आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु ॥ २९ ॥

{योगियों द्वारा किए जाने वाले भण्डारे में जो उनका चूरमे का भोजन होता है उसकी चर्चा में गुरु जी कहते हैं कि}

हे मानव! निरंकार की सर्व–व्यापकता के ज्ञान का भण्डार होना तुम्हारा भोजन है, तुम्हारे हृदय

की दया भण्डारिन होगी, क्योंकि दया—भाव रखने से ही सद्‌गुणों की प्राप्ति होती है। घट—घट में जो चेतन सत्ता प्रकट हो रही है वह नाद बजने के समान है। जिसने सम्पूर्ण सृष्टि को एक सूत्र में बांध रखा है, वही सृजनहार परमात्मा नाथ है, सभी ऋद्धियाँ—सिद्धियाँ अन्य प्रकार का स्वाद हैं। संयोग व वियोग रूपी नियम दोनों मिलकर इस सृष्टि का कार्य चला रहे हैं, कर्मानुसार ही जीवों को अपने—अपने भाग्य की प्राप्ति होती है। नमस्कार है, सिर्फ उस सर्गुण स्वरूप निरंकार को नमस्कार है। जो सभी का मूल, रंग रहित, पवित्र स्वरूप, आदि रहित, अनश्वर व अपरिवर्तनीय स्वरूप है॥ २६॥

एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु ॥ इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु ॥ जिव तिसु भावै तिवै चलावै जिव होवै फुरमाणु ॥ ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु॥ आदेसु तिसै आदेसु ॥ आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु ॥ ३० ॥

{अब गुरु जी संसार की उत्पत्ति के बारे में विस्तारपूर्वक कथन करते हैं कि}

एक ब्रह्म की किसी रहस्यमयी युक्ति द्वारा माया की प्रसूति से तीन पुत्र पैदा हुए। इन में से एक ब्रह्मा सृष्टि रचयिता, एक विष्णु संसार का पोषक, और एक शिव संहारक के रूप में दरबार लगाकर बैठ गया। जिस तरह उस अकाल पुरुष को भला लगता है उसी तरह वह इन तीनों को चलाता है और जैसा उसका आदेश होता है वैसा ही कार्य ये देव करते हैं। वह अकाल पुरुष तो इन तीनों को आदि व अन्त समय में देख रहा है किंतु इनको वह अदृश्य स्वरूप निरंकार नज़र नहीं आता, यह अत्याश्चर्यजनक बात है। नमस्कार है, सिर्फ उस सर्गुण स्वरूप निरंकार को नमस्कार है। जो सभी का मूल, रंग रहित, पवित्र स्वरूप, आदि रहित, अनश्वर व अपरिवर्तनीय स्वरूप है॥ ३०॥

आसणु लोइ लोइ भंडार ॥ जो किछु पाइआ सु एका वार ॥ करि करि वेखै सिरजणहारु ॥ नानक सचे की साची कार ॥ आदेसु तिसै आदेसु ॥ आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु ॥ ३१ ॥

{अब प्रश्न पैदा हुआ कि उस परमात्मा रूपी नाथ का आसन कहाँ है? इसके उत्तर में गुरु जी कहते हैं कि}

उसका आसन प्रत्येक लोक में है तथा प्रत्येक लोक में उसका भण्डार है। उस परमात्मा ने सभी भण्डारों को एक ही बार परिपूर्ण कर दिया है। वह सृजनहार रचना कर करके सृष्टि को देख रहा है। हे नानक! उस सत्यस्वरूप निरंकार की सम्पूर्ण रचना भी सत्य है। नमस्कार है, सिर्फ उस सर्गुण स्वरूप निरंकार को नमस्कार है। जो सभी का मूल, रंग रहित, पवित्र स्वरूप, आदि रहित, अनश्वर व अपरिवर्तनीय स्वरूप है॥ ३१॥

इक दू जीभौ लख होहि लख होवहि लख वीस ॥ लखु लखु गेड़ा आखीअहि एकु नामु जगदीस ॥ एतु राहि पति पवड़ीआ चड़ीऐ होइ इकीस ॥ सुणि गला आकास की कीटा आई रीस ॥ नानक नदरी पाईऐ कूड़ी कूड़ै ठीस ॥ ३२ ॥

{ऐसे स्वामी के दर्शन अथवा प्राप्ति हेतु गुरु जी स्पष्ट करते हैं कि}

एक जिह्वा से लाख जिह्वा हो जाएँ, फिर लाख से बीस लाख हो जाएँ। फिर एक—एक जिह्वा से लाख—लाख बार उस जगदीश्वर का एक नाम उच्चारण करें, अर्थात् निशदिन उस प्रभु का नाम सिमरन किया जाए। इस मार्ग से पति—परमेश्वर को मिलने हेतु बनी नाम रूपी सीढ़ियों पर चढ़ कर ही उस अद्वितीय प्रभु से मिलन हो सकता है। वैसे तो ब्रह्म—ज्ञानियों की बड़ी—बड़ी बातें सुनकर

निकृष्ट जीव भी देहाभिमान में अनुकरण करने की इच्छा रखते हैं। परंतु गुरु नानक जी कहते हैं कि उस परमात्मा की प्राप्ति तो उसकी कृपा से ही होती है, वरन् ये तो मिथ्या लोगों की मिथ्या ही बातें हैं॥ ३२॥

आखणि जोरु चुपै नह जोरु ॥ जोरु न मंगणि देणि न जोरु ॥ जोरु न जीवणि मरणि नह जोरु ॥ जोरु न राजि मालि मनि सोरु ॥ जोरु न सुरती गिआनि वीचारि ॥ जोरु न जुगती छुटै संसारु ॥ जिसु हथि जोरु करि वेखै सोइ ॥ नानक उतमु नीचु न कोइ ॥ ३३ ॥

अकाल पुरुष की कृपा–दृष्टि के बिना इस जीव में कुछ भी कहने व चुप रहने की शक्ति नहीं है अर्थात् रसना को चला पाना जीव के वश में नहीं है। माँगने की भी इसमें ताकत नहीं है और न ही कुछ देने की समर्था है। यदि जीव चाहे कि मैं जीवित रहूँ तो भी इसमें बल नहीं है, क्योंकि कई बार मनुष्य उपचाराधीन ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता है, मरना भी उसके वश में नहीं है। धन, सम्पत्ति व वैभव प्राप्त करने में भी इस जीव का कोई बल है, जिन के लिए मन में जो जुनून होता है। श्रुति वेदों के ज्ञान का विचार करने का भी इसमें बल नहीं है। संसार से मुक्त होने की षट्–शास्त्रों में दी गई युक्तियाँ धारण कर लेने की शक्ति भी इसमें नहीं है। जिस अकाल पुरुष के हाथ में ताकत है वही रचना करके देख रहा है। गुरु नानक जी कहते हैं कि फिर तो यही जानना चाहिए कि इस संसार में न कोई स्वेच्छा से नीच है, न उत्तम है, वह प्रभु जिस को कर्मानुसार जैसा रखता है वैसा ही वह रहता है॥ ३३॥

राती रुती थिती वार ॥ पवण पाणी अगनी पाताल ॥ तिसु विचि धरती थापि रखी धरम साल ॥ तिसु विचि जीअ जुगति के रंग ॥ तिन के नाम अनेक अनंत ॥ करमी करमी होइ वीचारु ॥ सचा आपि सचा दरबारु ॥ तिथै सोहनि पंच परवाणु ॥ नदरी करमि पवै नीसाणु ॥ कच पकाई ओथै पाइ ॥ नानक गइआ जापै जाइ ॥ ३४ ॥

{आगे की पउड़ियों में गुरु नानक देव जी कर्मकाण्ड, उपासना काण्ड व ज्ञान काण्ड का वर्णन करते हुए आत्मा के परमात्मा से मिलन हेतु धर्म खण्ड से चल कर सचखण्ड तक का पथ पार करने की विधि बताते हैं कि किस प्रकार जीवात्मा नाम सिमरन का आश्रय लेकर परमात्मा तक पहुँच पाती है।}

रात्रियों, ऋतुओं, तिथियों, सप्ताह के वारों, वायु, जल, अग्नि व पाताल आदि यावत प्रपंच हैं। स्रष्टा प्रभु ने उस में पृथ्वी रूपी धर्मशाला स्थापित करके रखी हुई है, इसी को कर्मभूमि कहते हैं। उस धर्मशाला में नाना प्रकार के जीव हैं, जिनकी अनेक भाँति की धर्म–कर्म की उपासना की युक्ति है और उनके श्वेत–श्यामादि अनेक प्रकार के वर्ण हैं। उनके अनेक प्रकार के अनंत नाम हैं। संसार में विचरन कर रहे उन अनेकानेक जीवों को अपने शुभाशुभ कर्मों के अनुसार ही उन पर विचार किया जाता है। विचार करने वाला वह निरंकार स्वयं भी सत्य है और उसका दरबार भी सत्य है। जो प्रामाणिक संत हैं, जिनके माथे पर कृपालु परमात्मा की कृपा का चिन्ह अंकित होता है। वही उसके दरबार में शोभायमान होते हैं। प्रभु के दरबार में कच्चे–पक्के होने का परीक्षण होता है। हे नानक! इस तथ्य का निर्णय वहाँ जाकर ही होता है॥ ३४॥

धरम खंड का एहो धरमु ॥ गिआन खंड का आखहु करमु ॥ केते पवण पाणी वैसंतर केते कान महेस ॥ केते बरमे घाड़ति घड़ीअहि रूप रंग के वेस ॥ केतीआ करम भूमी मेर केते केते धू उपदेस ॥ केते इंद चंद सूर केते केते मंडल देस ॥ केते सिध बुध नाथ केते केते देवी वेस ॥ केते देव दानव मुनि केते केते रतन समुंद ॥ केतीआ खाणी केतीआ बाणी केते पात नरिंद ॥ केतीआ सुरती सेवक केते नानक अंतु न अंतु ॥ ३५ ॥

(कर्मकाण्ड में) धर्मखण्ड का यही नियम है; जो पूर्व पंक्तियों में कथन किया गया है। (गुरु नानक जी) अब ज्ञान खण्ड का व्यवहार वर्णन करते हैं। (इस संसार में) कितने प्रकार के पवन, जल, अग्नि हैं, और कितने ही रूप कृष्ण व रुद्र (शिव) के हैं। कितने ही ब्रह्मा इस सृष्टि में अनेकानेक रूप—रंगों के भेष में जीव पैदा करते हैं। कितनी ही कर्म भूमियाँ, सुमेर पर्वत, ध्रुव भक्त व उनके उपदेष्टा हैं। इन्द्र व चंद्रमा भी कितने हैं, कितने ही सूर्य, कितने ही मण्डल व मण्डलांतर्गत देश हैं। कितने ही सिद्ध, विद्वान व नाथ हैं, कितने ही देवियों के स्वरूप हैं। कितने ही देव, दैत्य व मुनि हैं और रत्नों से भरपूर कितने ही समुद्र हैं। कितने ही उत्पत्ति के स्रोत हैं (अण्डज—जरायुजादि), कितनी प्रकार की वाणी है (परा, पश्यन्ती आदि) कितने ही बादशाह हैं और कितने ही राजा हैं। कितनी ही वेद—श्रुतियाँ हैं, उनके सेवक भी कितने ही हैं, गुरु नानक जी कहते हैं कि उसकी रचना का कोई अन्त नहीं है; इन सबके अन्त का बोध ज्ञान—खण्ड में जाने से होता है, जहाँ पर जीव ज्ञानवान हो जाता है॥ ३५॥

गिआन खंड महि गिआनु परचंडु ॥ तिथै नाद बिनोद कोड अनंदु ॥ सरम खंड की बाणी रूपु ॥ तिथै घाड़ति घड़ीऐ बहुतु अनूपु ॥ ता कीआ गला कथीआ ना जाहि ॥ जे को कहै पिछै पछुताइ ॥ तिथै घड़ीऐ सुरति मति मनि बुधि ॥ तिथै घड़ीऐ सुरा सिधा की सुधि ॥ ३६ ॥

ज्ञान खण्ड में जो ज्ञान कथन किया है वह प्रबल है। इस खण्ड में रागमयी, प्रसन्नतापूर्ण व कौतुकी आनंद विद्यमान है। (गुरु नानक जी अब उपासना काण्ड व सरम खण्ड का वर्णन करते हैं। इसमें परमेश्वर की भक्ति को प्रमुख माना गया है) परमेश्वर की भक्ति करने का उद्यम करने वाले संतजनों की वाणी मधुर है। वहाँ (सरम खण्ड में) पर अद्वितीय सुन्दरता वाले स्वरूप की गढ़न की जाती है। उनकी बातों का कथन नहीं किया जा सकता। यदि कोई उनकी महिमा कथन करने की चेष्टा करता भी है तो उसे बाद में पछताना पड़ता है। वहाँ पर वेद—श्रुति, ज्ञान, मन और बुद्धि गढ़े जाते हैं। वहाँ पर दिव्य बुद्धि वाले देवों व सिद्ध अवस्था की प्राप्ति वाली सूझ गढ़ी जाती है॥ ३६॥

करम खंड की बाणी जोरु ॥ तिथै होरु न कोई होरु ॥ तिथै जोध महाबल सूर ॥ तिन महि रामु रहिआ भरपूर ॥ तिथै सीतो सीता महिमा माहि ॥ ता के रूप न कथने जाहि ॥ ना ओहि मरहि न ठागे जाहि ॥ जिन कै रामु वसै मन माहि ॥ तिथै भगत वसहि के लोअ ॥ करहि अनंदु सचा मनि सोइ ॥ सच खंडि वसै निरंकारु ॥ करि करि वेखै नदरि निहाल ॥ तिथै खंड मंडल वरभंड ॥ जे को कथै त अंत न अंत ॥ तिथै लोअ लोअ आकार ॥ जिव जिव हुकमु तिवै तिव कार ॥ वेखै विगसै करि वीचारु ॥ नानक कथना करड़ा सारु ॥ ३७ ॥

{गुरु नानक जी अब कर्म खण्ड का वर्णन करते हैं जो कि सचखण्ड का विशेष अंग है। सचखण्ड एक स्वतंत्र खण्ड है। यही समस्त खण्डों—धर्म, ज्ञान, सरम व कर्म को चला रहा है। कर्म खण्ड में आ जाने से जीव पर प्रभु की कृपा हो जाती है जो परमेश्वर के मिलन में सहायक होती है और जीव का सचखण्ड में प्रवेश हो जाता है।}

जिन उपासकों पर परमेश्वर की कृपा हुई उनकी वाणी शक्तिवान हो जाती है। जहाँ पर ये उपासक विद्यमान होते हैं वहाँ पर कोई और नहीं होता। उन उपासकों में देह को जीतने वाले योद्धा, इन्द्रियों को जीतने वाले महाबली तथा मन को जीतने वाले शूरवीर होते हैं। उन में प्रभु राम परिपूर्ण रहते हैं। उन निर्गुण स्वरूप राम के साथ महिमा रूपी सीता चन्द्रमा समान प्रकाशमान व मन को शीतल करने वाली है। ऐसा स्वरूप प्राप्त करने वालों के गुण कथन नहीं किए जा सकते। वे उपासक न तो मरते हैं और न ही ठगे जाते हैं, जिनके हृदय में परमात्मा राम का स्वरूप विद्यमान होता है।

वहाँ कई लोकों के भक्त निवास करते हैं। जिनके हृदय में सत्यस्वरूप निरंकार वास करता है, वे आनंद प्राप्त करते हैं। सत्य धारण करने वालों के हृदय (सचखण्ड) में वह निरंकार निवास करता है; अर्थात् बैकुण्ठ लोक, जहाँ सद्‌गुणी व्यक्तियों का वास है, में वह सर्गुण स्वरूप परमात्मा रहता है। वह सृजनहार परमात्मा अपनी सृजना को रच–रचकर कृपा–दृष्टि से देखता है अर्थात् उसका पोषण करता है। उस सचखण्ड में अनन्त ही खण्ड, मण्डल व ब्रह्माण्ड हैं। यदि कोई उसके अन्त को कथन करे तो अन्त नहीं पा सकता, क्योंकि वह असीम है। वहाँ अनेकानेक लोक विद्यमान हैं और उनमें रहने वालों के अस्तित्व भी अनेक हैं। फिर जिस तरह वह सर्वशक्तिमान परमात्मा आदेश करता है उसी तरह वे कार्य करते हैं। अपने इस रचे हुए प्रपंच को देख कर व शुभाशुभ कर्मों को विचार कर वह प्रसन्न होता है। गुरु नानक जी कहते हैं कि उस निरंकार के मूल–तत्व का जो मैंने उल्लेख किया है उसे कथन करना अत्यंत कठिन है॥ ३७॥

जतु पाहारा धीरजु सुनिआरु ॥ अहरणि मति वेदु हथीआरु ॥ भउ खला अगनि तप ताउ ॥ भांडा भाउ अंम्रितु तितु ढालि ॥ घड़ीऐ सबदु सची टकसाल ॥ जिन कउ नदरि करमु तिन कार ॥ नानक नदरी नदरि निहाल ॥ ३८ ॥

{सुनार व उसकी कार्य–विधि के दृष्टांत को मानव के समक्ष रख कर गुरु नानक जी जिज्ञासु जीव को जीवन में सदाचरण को ग्रहण करने की प्रेरणा देते हैं कि}

इन्द्रिय–निग्रह रूपी भट्ठी हो, संयम रूपी सुनार हो। अचल बुद्धि रूपी अहरन हो, गुरु ज्ञान रूपी हथौड़ा हो। निरंकार के भय को धौंकनी तथा तपोमय जीवन को अग्नि ताप बनाओ। हृदय – प्रेम को बर्तन बनाकर उसमें नाम – अमृत को गलाया जाए। इसी सच्ची टकसाल में नैतिक जीवन को गढ़ा जाता है। अर्थात्–ऐसी टकसाल से ही सद्‌गुणी जीवन बनाया जा सकता है। जिन पर अकाल पुरुष की कृपा–दृष्टि होती है, उन्हीं को ये कार्य करने को मिलते हैं। हे नानक! ऐसे सद्‌गुणी जीव उस कृपासागर परमात्मा की कृपा–दृष्टि के कारण कृतार्थ होते हैं॥ ३८॥

सलोकु ॥ पवणु गुरू पाणी पिता माता धरति महतु ॥ दिवसु राति दुइ दाई दाइआ खेलै सगल जगतु॥ चंगिआईआ बुरिआईआ वाचै धरमु हदूरि ॥ करमी आपो आपणी के नेड़ै के दूरि ॥ जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि ॥ नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि ॥ १ ॥

{इस अन्तिम श्लोक में गुरु नानक जी ने मनुष्य के जीवन और उसकी यथार्थता का बहुत ही उचित ढंग से चित्रण किया है।}

समस्त सृष्टि का गुरु पवन है, पानी पिता है, और पृथ्वी बड़ी माता है। दिन और रात दोनों धाय एवं धीया (बच्चों को खिलाने वाले) के समान हैं तथा सम्पूर्ण जगत् इन दोनों की गोद में खेल रहा है। शुभ व अशुभ कर्मों का विवेचन उस अकाल–पुरुष के दरबार में होगा। अपने शुभाशुभ कर्मों के फलस्वरूप ही जीव परमात्मा के निकट अथवा दूर होता है। जिन्होंने प्रभु का नाम–सुमिरन किया है, वे जप–तप आदि की गई मेहनत को सफल कर गए हैं। गुरु नानक देव जी कथन करते हैं कि ऐसे सद्‌प्राणियों के मुख उज्ज्वल हुए हैं और कितने ही जीव उनके साथ, अर्थात् उनका अनुसरण करके, आवागमन के चक्र से मुक्त हो गए हैं॥ १॥

सो दरु रागु आसा महला १★ १ ਓ सतिगुर प्रसादि ॥

इस शब्द की व्याख्या बेशक जपु जी साहिब के २७वें पद्य 'सो दरु' में हो चुकी है किन्तु इन दोनों में सूक्ष्म शब्द–भेद अवश्य है। इस पद्य के प्रति यह कथम भी प्रचलित है कि जब श्री गुरु नानक देव जी वेईं नदी में डुबकी लगाकर बैकुण्ठ लोक में अकाल–पुरुष के सम्मुख गए थे तो वहाँ उन्होंने इसका उच्चारण 'आसा राग' में किया था। इसके अतिरिक्त यह भी कहा जाता है कि जब आप बैकुण्ठ लोक से वापस आए थे तो बेबे नानकी जी ने वहाँ प्रभु के घर–द्वार बारे आप से पूछा था और आप ने 'जपु जी' का सो दरु सुनाया था, लेकिन इसमें कुछ पाठांतर रख दिया। जिस प्रकार 'जपु जी' वाणी का अमृत–समय में पाठ करने का महात्म्य है, उसी प्रकार इस वाणी का पाठ संध्या–काल में करने का महात्म्य है। इस वाणी को 'रहरासि साहिब' भी कहा जाता है। बेशक इसके बारे में कोई लिखित प्रमाण नहीं है, क्योंकि श्री गुरु ग्रंथ साहिब की सम्पादना के समय तक इसे 'सो दरु' वाणी ही कहा गया है, किंतु 'सो दरु' वाणी के चतुर्थ पद्य में अंकित पंक्ति – गुरमति नामु मेरा प्रान सखाई हरि कीरति हमरी रहरासि॥ ही इसका नाम 'रहरासि' प्रमाणित करती है। वास्तव में 'रहरासि' का अर्थ भी – वंदना, विनय, मर्यादा आदि ही हैं। इसके अतिरिक्त इसमें दसम पिता के काल में चौपई आदि दसम ग्रंथ की वाणी भी सम्मिलित की गई है।

सो दरु तेरा केहा सो घरु केहा जितु बहि सरब समाले ॥ वाजे तेरे नाद अनेक असंखा केते तेरे वावणहारे ॥ केते तेरे राग परी सिउ कहीअहि केते तेरे गावणहारे ॥ गावनि तुधनो पवणु पाणी बैसंतरु गावै राजा धरमु दुआरे ॥ गावनि तुधनो चितु गुपतु लिखि जाणनि लिखि लिखि धरमु बीचारे ॥ गावनि तुधनो ईसरु ब्रहमा देवी सोहनि तेरे सदा सवारे ॥ गावनि तुधनो इंद्र इंद्रासणि बैठे देवतिआ दरि नाले ॥ गावनि तुधनो सिध समाधी अंदरि गावनि तुधनो साध बीचारे ॥ गावनि तुधनो जती सती संतोखी गावनि तुधनो वीर करारे ॥ गावनि तुधनो पंडित पड़नि रखीसुर जुगु जुगु वेदा नाले ॥ गावनि तुधनो मोहणीआ मनु मोहनि सुरगु मछु पइआले ॥ गावनि तुधनो रतन उपाए तेरे अठसठि तीरथ नाले ॥ गावनि तुधनो जोध महाबल सूरा गावनि तुधनो खाणी चारे ॥ गावनि तुधनो खंड मंडल ब्रहमंडा करि करि रखे तेरे धारे ॥ सेई तुधनो गावनि जो तुधु भावनि रते तेरे भगत रसाले ॥ होरि केते तुधनो गावनि से मै चिति न आवनि नानकु किआ बीचारे ॥ सोई सोई सदा सचु साहिबु साचा साची नाई ॥ है भी होसी जाइ न जासी रचना जिनि रचाई ॥ रंगी रंगी भाती करि करि जिनसी माइआ जिनि उपाई ॥ करि करि देखै कीता आपणा जिउ तिस दी वडिआई ॥ जो तिसु भावै सोई करसी फिरि हुकमु न करणा जाई ॥ सो पातिसाहु साहा पतिसाहिबु नानक रहणु रजाई ॥ १ ॥

हे निरंकार ! तेरा वह (अकथनीय) द्वार कैसा है, वह निवास–स्थान कैसा है, जहाँ पर विराजमान

★'महला' शब्द का सम्पूर्ण गुरु ग्रंथ साहिब में एक विशेष स्थान व महात्म्य है। इसके साथ ही अंक १,२,३, आदि भी अंकित किए गए हैं, जिन से स्पष्ट होता है श्रवण अथवा अध्ययन किया जा रहा शब्द किन गुरु साहिबान द्वारा उच्चारण किया गया है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में छः गुरु साहिब की वाणी अंकित है और सभी गुरु साहिब ने वाणी का उच्चारण श्री गुरु नानक देव जी के मार्गदर्शन में किया है। इसी कारण उन्होंने अपनी वाणी में 'नानक' शब्द का प्रयोग किया है जैसे कि 'सिरीरागु महला ३ घरु १' में श्री गुरु अमरदास जी ने उच्चारण किया है-नानक नदरी पाईऐ सचु नामु गुणतासु॥ श्री गुरु नानक देव जी (महला १), श्री गुरु अंगद देव जी (महला २), श्री गुरु अमरदास जी (महला ३), श्री गुरु रामदास जी (महला ४) श्री गुरु अर्जुन देव जी (महला ५) तथा श्री गुरु तेग बहादुर जी (महला ६)

होकर तुम सम्पूर्ण सृष्टि का प्रतिपालन करते हो ; (इसके बारे में कैसे कथन करूँ)। हे अनन्त स्वरूप! तुम्हारे द्वार पर अनगिनत दिव्य नाद गूंज रहे हैं, कितने ही वहाँ पर नादिन् हैं। तुम्हारे द्वार पर कितने ही रागिनियों के संग राग कहते हैं और कितने ही वहाँ पर उन रागों व रागिनियों को गाने वाले हैं। (आगे गाने वालों का वर्णन करते हैं) हे अकाल पुरुष! तुझे पवन, जल व अग्नि देव आदि गाते हैं और धर्मराज भी तुम्हारे द्वार पर तुम्हारा यश गाता है। जीवों के शुभाशुभ कर्म लिखने वाले चित्र–गुप्त तुम्हारा ही यशोगान करते हैं तथा लिख कर शुभ व अशुभ कर्मों का विचार करते हैं। शिव व ब्रह्मा अपनी दैवी–शक्तियों सहित तुम्हारा गुणगान कर रहे हैं, जो तुम्हारे संवारे हुए सदैव शोभा पा रहे हैं। देवताओं के संग अपने सिंहासन पर बैठा इन्द्र भी तुम्हारी महिमा को गा रहा है। समाधि में स्थित हुए सिद्ध भी तुम्हारा यश गा रहे हैं, विचारवान साधु भी तुम्हारी प्रशंसा कर रहे हैं। तुम्हारा गुणगान यति, सत्यवादी व संतोषी व्यक्ति भी कर रहे हैं और शूरवीर भी तुम्हारे गुणों की प्रशंसा कर रहे हैं। युगों–युगों तक वेदाध्ययन द्वारा विद्वान व ऋषि–मुनि आदि तुम्हारी कीर्ति को कहते हैं। मन को मोह लेने वाली स्त्रियाँ स्वर्ग, मृत्यु व पाताल लोक में तुम्हारा यशोगान कर रही हैं। तुम्हारे उत्पन्न किए हुए चौदह रत्न व संसार के अठसठ तीर्थ भी तुम्हारी स्तुति कर रहे हैं। योद्धा, महाबली व शूरवीर भी तुम्हारा यशोगान कर रहे हैं, चारों उत्पत्ति के स्रोत भी तुम्हारे यश को गा रहे हैं। नवखण्ड, द्वीप व ब्रह्माण्ड आदि के जीव भी तुम्हारा गान कर रहे हैं जो तुम ने रच–रच कर इस सृष्टि में स्थित कर रखे हैं। जो तुम्हें अच्छे लगते हैं व तेरे प्रेम में रत हैं वे भक्त ही तुम्हारा यशोगान करते हैं। और भी अनेकानेक तुम्हारा गुणगान कर रहे हैं, वे मेरे चिंतन में नहीं आ रहे हैं। श्री गुरु नानक देव जी कहते हैं कि मैं उनका क्या विचार करूँ। सत्य स्वरूप निरंकार भूतकाल में था और वह सत्य सम्मान वाला अब भी है। पुनः भविष्य में भी वही सत्य स्वरूप होगा, जिसने इस सृष्टि की रचना की है, वह न नष्ट होता है, न नष्ट होगा। अनेक प्रकार के रंगों की और विभिन्न तरह की माया द्वारा पशु–पक्षी आदि जीवों की जिसने रचना की है, वह सृजनहार परमात्मा अपने किए हुए प्रपंच को कर–करके अपनी इच्छानुसार ही देखता है। जो उसे भला लगता है वही करता है, पुनः उस पर आदेश करने वाला कोई भी नहीं है। हे नानक! वह शाहों का शाह शहंशाह है, उसकी आज्ञा में रहना ही उचित है॥ १॥

आसा महला १ ॥ सुणि वडा आखै सभु कोइ ॥ केवडु वडा डीठा होइ ॥ कीमति पाइ न कहिआ जाइ ॥ कहणै वाले तेरे रहे समाइ ॥ १ ॥ वडे मेरे साहिबा गहिर गंभीरा गुणी गहीरा ॥ कोइ न जाणै तेरा केता केवडु चीरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभि सुरती मिलि सुरति कमाई ॥ सभ कीमति मिलि कीमति पाई ॥ गिआनी धिआनी गुर गुरहाई ॥ कहणु न जाई तेरी तिलु वडिआई ॥ २ ॥ सभि सत सभि तप सभि चंगिआईआ ॥ सिधा पुरखा कीआ वडिआईआ ॥ तुधु विणु सिधी किनै न पाईआ ॥ करमि मिलै नाही ठाकि रहाईआ ॥ ३ ॥ आखण वाला किआ वेचारा ॥ सिफती भरे तेरे भंडारा ॥ जिसु तू देहि तिसै किआ चारा ॥ नानक सचु सवारणहारा ॥ ४ ॥ २ ॥

हे निरंकार स्वरूप! (शास्त्रों व विद्वानों से) सुन कर तो प्रत्येक कोई तुझे बड़ा कहता है। किंतु कितना बड़ा है, यह तो तभी कोई बता सकता है यदि किसी ने तुझे देखा हो अथवा तुम्हारे दर्शन किए हों। वास्तव में उस सर्गुण स्वरूप परमात्मा की न तो कोई कीमत आंक सकता है और न ही उसका कोई अंत कह सकता है, क्योंकि वह अनन्त व असीम है। जिन्होंने तेरी महिमा का अंत पाया है अर्थात् तेरे सच्चिदानन्द स्वरूप को जाना है वे तुझ में ही अभेद हो जाते हैं॥ १॥ हे मेरे अकाल पुरुष! तुम सर्वोच्च हो, स्वभाव में स्थिर व गुणों के निधान हो। तुम्हारा कितना विस्तार है, इस तथ्य का ज्ञान

किसी को भी नहीं है॥ १॥ रहाउ॥*

समस्त ध्यान–मग्न होने वाले व्यक्तियों ने मिलकर अपनी वृत्ति लगाई। समस्त विद्वानों ने मिलकर तुम्हारा अन्त जानने की कोशिश की। शास्त्रवेता, प्राणायामी, गुरु व गुरुओं के भी गुरु तेरी महिमा का तिनका मात्र भी व्याख्यान नहीं कर सकते॥ २॥ सभी शुभ–गुण, सभी तप और सभी शुभ कर्म; सिद्ध – पुरुषों सिद्धि समान महानता; तुम्हारी कृपा के बिना पूर्वोक्त गुणों की जो सिद्धियाँ हैं वे किसी ने भी प्राप्त नहीं की। यदि परमेश्वर की कृपा से ये शुभ–गुण प्राप्त हो जाएँ तो फिर किसी के रोके रुक नहीं सकते॥ ३॥ यदि कोई कहे कि हे अकाल–पुरुष! मैं तुम्हारी महिमा कथन कर सकता हूँ तो वह बेचारा क्या कह सकता है। क्योंकि हे परमेश्वर! तेरी स्तुति के भण्डार तो वेदों, ग्रंथों व तेरे भक्तों के हृदय में भरे पड़े हैं। जिन को तुम अपनी स्तुति करने की बुद्धि प्रदान करते हो, उनके साथ किसी का क्या ज़ोर चल सकता है। गुरु नानक जी कहते हैं कि वह सत्यस्वरूप परमात्मा ही सबको शोभायमान करने वाला है॥ ४॥ २॥

आसा महला १ ॥ आखा जीवा विसरै मरि जाउ ॥ आखणि अउखा साचा नाउ ॥ साचे नाम की लागै भूख ॥ उतु भूखै खाइ चलीअहि दूख ॥ १ ॥ सो किउ विसरै मेरी माइ ॥ साचा साहिबु साचै नाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साचे नाम की तिलु वडिआई ॥ आखि थके कीमति नही पाई ॥ जे सभि मिलि कै आखण पाहि ॥ वडा न होवै घाटि न जाइ ॥ २ ॥ ना ओहु मरै न होवै सोगु ॥ देदा रहै न चूकै भोगु ॥ गुणु एहो होरु नाही कोइ ॥ ना को होआ ना को होइ ॥ ३ ॥ जेवडु आपि तेवड तेरी दाति ॥ जिनि दिनु करि कै कीती राति ॥ खसमु विसारहि ते कमजाति ॥ नानक नावै बाझु सनाति ॥ ४ ॥ ३ ॥

{एक बार माता तृप्ता जी ने नानक देव जी को कहा कि हे पुत्र! तुम प्रभु का सिमरन प्रत्येक पल की बजाय एक समय किया करो तो आप ने इस शब्द का उच्चारण करते हुए कहा कि}

हे माता जी! जब तक मैं परमेश्वर का नाम सिमरन करता हूँ तब तक ही मैं जीवित रहता हूँ, जब मुझे यह नाम विस्मृत हो जाता है तो मैं स्वयं को मृत समझता हूँ; अर्थात् मैं प्रभु के नाम में ही सुख अनुभव करता हूँ, वरन् मैं दुखी होता हूँ। किंतु यह सत्य नाम कथन करना बहुत कठिन है। यदि प्रभु के सत्य नाम की (भूख) चाहत हो तो वह चाहत ही समस्त दुखों को नष्ट कर देती है॥ १॥ सो हे माता जी! ऐसा नाम फिर मुझे विस्मृत क्यों हो। वह स्वामी सत्य है और उसका नाम भी सत्य है॥ १॥ रहाउ॥

परमात्मा के सत्य नाम की तिनका मात्र महिमा; (व्यासादि मुनि) कह कर थक गए हैं, किंतु वे उसके महत्व को नहीं जान पाए हैं। यदि सृष्टि के समस्त जीव मिलकर परमेश्वर की स्तुति करने लगें तो वह स्तुति करने से न बड़ा होता है और न निन्दा करने से घटता है॥ २॥

वह निरंकार न तो कभी मरता है और न ही उसे कभी शोक होता है। वह संसार के जीवों को खान–पान देता रहता है जो कि उसके भण्डार में कभी भी समाप्त नहीं होता। दानेश्वर परमात्मा जैसा गुण सिर्फ उसी में ही है, अन्य किसी में नहीं। ऐसे परमेश्वर जैसा न पहले कभी हुआ है और न ही आगे कोई होगा॥ ३॥ जितना महान् परमात्मा स्वयं है उतनी ही महान उसकी बख्शिश है। जिस ने दिन बनाकर फिर रात की रचना की है। (यदि रात न होती तो जीव सांसारिक धन्धों में लिप्त ही मर जाते, इसलिए रात भी अनिवार्य थी। ऐसे परमेश्वर को जो विस्मृत कर दे वह नीच है। गुरु नानक जी कहते हैं कि परमात्मा के नाम–सिमरन के बिना मनुष्य संकीर्ण जाति का होता है॥ ४॥ ३॥

**'रहाउ' का अर्थ विश्राम माना गया है। इस पंक्ति में शब्द का केन्द्रिय-भाव होता है। कई शब्दों में 'रहाउ' एक से अधिक भी होते हैं। सो शब्द का विचार करने के लिए इस पंक्ति का अध्ययन किया जाना चाहिए।*

रागु गूजरी महला ४ ॥ हरि के जन सतिगुर सतपुरखा बिनउ करउ गुर पासि ॥ हम कीरे किरम सतिगुर सरणाई करि दइआ नामु परगासि ॥ १ ॥ मेरे मीत गुरदेव मो कउ राम नामु परगासि ॥ गुरमति नामु मेरा प्रान सखाई हरि कीरति हमरी रहरासि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि जन के वड भाग वडेरे जिन हरि हरि सरधा हरि पिआस ॥ हरि हरि नामु मिलै त्रिपतासहि मिलि संगति गुण परगासि ॥ २ ॥ जिन हरि हरि हरि रसु नामु न पाइआ ते भागहीण जम पासि ॥ जो सतिगुर सरणि संगति नही आए ध्रिगु जीवे ध्रिगु जीवासि ॥ ३ ॥ जिन हरि जन सतिगुर संगति पाई तिन धुरि मसतकि लिखिआ लिखासि ॥ धनु धंनु सतसंगति जितु हरि रसु पाइआ मिलि जन नानक नामु परगासि ॥ ४ ॥ ४ ॥

(इस शब्द का उच्चारण श्री गुरु रामदास जी ने तब किया माना जाता है, जब श्री गुरु अमरदास जी ने अपनी पुत्री बीबी भानी के विवाह के बाद गुरु रामदास जी को कहा कि जेठा जी! हमारे यहाँ की रीति है कि जब दामाद स्वेच्छा से जो माँगता है उसे दिया जाता है। तब गुरु साहिब ने इस शब्द का उच्चारण किया था।)

हे परमात्मा स्वरूप, सतिगुरु, सति पुरुष जी! मेरी आप से यही विनती है कि मैं अति सूक्ष्म कृमियों के समान जीव हूँ, सो हे सतगुरु जी! मैं आपकी शरण में उपस्थित हूँ, कृपा करके मेरे अंत: करण में प्रभु–नाम का प्रकाश कर दो॥ १॥ हे मेरे मित्र गुरुदेव! मुझे राम के नाम का प्रकाश प्रदान करो। गुरु उपदेश के अनुसार जो परमात्मा का नाम सिमरन करता है वही मेरे प्राणों का सहायक है, परमेश्वर की महिमा कथन करना ही मेरी रीति है॥ १॥ रहाउ॥ हे सतिगुरु जी! आपकी कृपा से मैं जानता हूँ कि जिन की प्रभु–नाम में निष्ठा है, और उसको जपने की तृष्णा है उन हरि–भक्तों का सौभाग्य है। क्योंकि उस हरि का हरि–नाम प्राप्त होने से ही उसके भक्तों को संतुष्टि प्राप्त होती है तथा संतों की संगत मिलने से उनके हृदय में हरि के गुणों का ज्ञान रूपी प्रकाश होता है॥ २॥ जिन्होंने हरि के हरि हरि नाम रस को नहीं चखा, अर्थात् जो प्राणी ईश्वर के नाम में लीन नहीं हुए, वे भाग्यहीन यमों के चंगुल में फँस जाते हैं। जो सतिगुरु की शरण में आकर सत्संगति प्राप्त नहीं करते उन विमुख व्यक्तियों के जीवन पर धिक्कार है और भविष्य में उनके जीने पर भी धिक्कार है॥ ३॥ जिन हरि–भक्तों ने सतिगुरु की संगति प्राप्त की है, उनके मस्तिष्क पर अकाल–पुरुष द्वारा जन्म से पूर्व ही शुभ लेख लिखा होता है। सतिगुरु जी का फुरमान है कि हे निरंकार! धन्य है वह सत्संगति, जिस से हरि–रस प्राप्त होता है और प्रभु भक्तों को उसके नाम का ज्ञान–प्रकाश मिलता है। इसलिए हे सतिगुरु जी! मुझे तो अकाल–पुरुष के नाम की बख्शिश करो॥ ४॥ ४॥

रागु गूजरी महला ५ ॥ काहे रे मन चितवहि उदमु जा आहरि हरि जीउ परिआ ॥ सैल पथर महि जंत उपाए ता का रिजकु आगै करि धरिआ ॥ १ ॥ मेरे माधउ जी सतसंगति मिले सु तरिआ ॥ गुर परसादि परम पदु पाइआ सूके कासट हरिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जननि पिता लोक सुत बनिता कोइ न किस की धरिआ ॥ सिरि सिरि रिजकु संबाहे ठाकुरु काहे मन भउ करिआ ॥ २ ॥ ऊडे ऊडि आवै सै कोसा तिसु पाछै बचरे छरिआ ॥ तिन कवणु खलावै कवणु चुगावै मन महि सिमरनु करिआ ॥ ३ ॥ सभि निधान दस असट सिधान ठाकुर कर तल धरिआ ॥ जन नानक बलि बलि सद बलि जाईऐ तेरा अंतु न पारावरिआ ॥ ४ ॥ ५ ॥

(इस शब्द के प्रति साहित्य में यह तथ्य प्रमाणित है कि श्री गुरु अर्जुन देव जी के गुरुगद्दी पर स्थित होने के पश्चात् एक बार लंगर में खर्च की न्यूनता अनुभव की गई, क्योंकि सेवकों व श्रद्धालुओं द्वारा जो भेंट भेजी जाती थी वह पृथी चंद जी सम्भाल लेते थे। उन्हीं दिनों वहाँ भाई गुरदास जी का

आगमन हुआ और उन्होंने लंगर में खर्च के अभाव को देख कर स्वयं उद्यम किया और जो संगत वहाँ गुरु के दर्शन हेतु आई उन्हें स्वयं जाकर गुरु अर्जुन देव जी के गुरुगद्दी पर विराजमान होने के बारे में बताया और उनकी भेंट को लाकर गुरु जी के समक्ष अर्पण किया और संगत को भी गुरु जी के दर्शन करवाए। यह सब देख–सुनकर गुरु साहिब ने इस शब्द के उच्चारण से उपदेश किया कि}

हे मन! तू किसलिए सोचता है, जबकि समस्त सृष्टि के प्रबन्ध का उद्यम तो स्वयं अकाल पुरुष कर रहा है। चट्टानों एवं पत्थरों में जिन जीवों को निरंकार ने पैदा किया है, उनका भोजन भी उसने पहले ही तैयार करके रखा है॥ १॥

हे निरंकार! जो भी संतों की संगति में जाकर बैठा है वह भव–सागर से पार उतर गया है। उसने गुरु की कृपा से परमपद (मोक्ष) प्राप्त किया है और उसका हृदय मानो यूं हो गया जैसे कोई सूखी लकड़ी हरी हो जाती है॥ १॥ रहाउ॥

जीवन में माता, पिता, पुत्र, पत्नी व अन्य सम्बन्धीजन में से कोई भी किसी जगह आश्रय नहीं होता। प्रत्येक जीव को सृष्टि में पैदा करके निरंकार स्वयं भोग पदार्थ पहुँचाता है, फिर हे मन! तू भय किसलिए करता है॥ २॥ कूंजों का समूह उड़ कर सैंकड़ों मील दूर चला आता है और अपने बच्चों को वह पीछे (अपने घौंसले में ही) छोड़ आता है। उनको पीछे कौन खाना खिलाता है, कौन खेल खिलाता है, अर्थात् उनका पोषण उनकी माता के बिना कौन करता है, (उत्तर में कहा) उनकी माता के हृदय में अपने बच्चों का स्मरण होता है, वही उनके पोषण का साधन बन जाता है॥ ३॥ (पदम्–शंखादि) समस्त नौ निधियाँ, (महापुराण श्री मद्भागवत में अंकित) अट्ठारह सिद्धियाँ निरंकार ने अपनी हथेली पर रखी हुई हैं। हे नानक! ऐसे अकाल–पुरुष पर मैं सदा–सर्वदा बलिहार जाता हूँ, असीम निरंकार का कोई पारावार व अंत नहीं है॥ ४॥ ५॥

रागु आसा महला ४ सो पुरखु

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सो पुरखु निरंजनु हरि पुरखु निरंजनु हरि अगमा अगम अपारा ॥ सभि धिआवहि सभि धिआवहि तुधु जी हरि सचे सिरजणहारा ॥ सभि जीअ तुमारे जी तूं जीआ का दातारा ॥ हरि धिआवहु संतहु जी सभि दूख विसारणहारा ॥ हरि आपे ठाकुरु हरि आपे सेवकु जी किआ नानक जंत विचारा ॥ १ ॥ तूं घट घट अंतरि सरब निरंतरि जी हरि एको पुरखु समाणा ॥ इकि दाते इकि भेखारी जी सभि तेरे चोज विडाणा॥ तूं आपे दाता आपे भुगता जी हउ तुधु बिनु अवरु न जाणा ॥ तूं पारब्रहमु बेअंतु बेअंतु जी तेरे किआ गुण आखि वखाणा ॥ जो सेवहि जो सेवहि तुधु जी जनु नानकु तिन कुरबाणा ॥ २ ॥ हरि धिआवहि हरि धिआवहि तुधु जी से जन जुग महि सुखवासी ॥ से मुकतु से मुकतु भए जिन हरि धिआइआ जी तिन तूटी जम की फासी ॥ जिन निरभउ जिन हरि निरभउ धिआइआ जी तिन का भउ सभु गवासी ॥ जिन सेविआ जिन सेविआ मेरा हरि जी ते हरि हरि रूपि समासी ॥ से धंनु से धंनु जिन हरि धिआइआ जी जनु नानकु तिन बलि जासी ॥ ३ ॥ तेरी भगति तेरी भगति भंडार जी भरे बिअंत बेअंता ॥ तेरे भगत तेरे भगत सलाहनि तुधु जी हरि अनिक अनेक अनंता ॥ तेरी अनिक तेरी अनिक करहि हरि पूजा जी तपु तापहि जपहि बेअंता ॥ तेरे अनेक तेरे अनेक पड़हि बहु सिम्रिति सासत जी करि किरिआ खटु करम करंता ॥ से भगत से भगत भले जन नानक जी जो भावहि मेरे हरि भगवंता ॥ ४ ॥ तूं आदि पुरखु अपरंपरु करता जी तुधु जेवडु अवरु न कोई ॥ तूं जुगु जुगु एको सदा सदा तूं एको जी तूं निहचलु करता सोई ॥ तुधु आपे भावै सोई वरतै जी तूं आपे

करहि सु होई ॥ तुधु आपे सिसटि सभ उपाई जी तुधु आपे सिरजि सभ गोई ॥ जनु नानकु गुण गावै करते के जी जो सभसै का जाणोई ॥ ५ ॥ १ ॥

वह अकाल पुरुष सृष्टि के समस्त जीवों में व्यापक है, फिर भी मायातीत है, अगम्य है तथा अनन्त है। हे सत्यस्वरूप सृजनहार परमात्मा! तुम्हारा ध्यान अतीत में भी सब करते थे, अब भी करते हैं और भविष्य में भी करते रहेंगे। सृष्टि के समस्त जीव तुम्हारी ही रचना हैं और तुम ही सब जीवों के प्रतिभोग व मुक्ति दाता हो। हे भक्त जनो! उस निरंकार का सिमरन करो जो समस्त दुखों का नाश करके सुख प्रदान करता है। निरंकार स्वयं स्वामी व स्वयं ही सेवक है, सो हे नानक! मुझ दीन जीव की क्या योग्यता है कि मैं उस अकथनीय प्रभु का वर्णन कर सकूँ॥ १॥

सर्वव्यापक निरंकार समस्त प्राणियों के हृदय में अभेद समा रहा है। संसार में कोई दाता बना हुआ है, कोई भिक्षु का रूप लिया हुआ है, हे परमात्मा! यह सब तुम्हारा ही आश्चर्यजनक कौतुक है। तुम स्वयं ही देने वाले हो और स्वयं ही भोक्ता हो, तुम्हारे बिना मैं किसी अन्य को नहीं जानता। तुम पारब्रह्म हो, तुम तीनों लोकों में अंतरहित हो, मैं तुम्हारे गुणों को मुख से कथन कैसे करूँ। सतगुरु जी कथन करते हैं कि जो जीव आप का अंतर्मन से सिमरन करते हैं, सेवा–भाव से समर्पित होते हैं उन पर मैं न्यौछावर होता हूँ॥ २॥

हे निरंकार! जो आपका मन व वाणी द्वारा ध्यान करते हैं, वो मानव–जीव युगों–युगों तक सुखों का भोग करते हैं। जिन्होंने आपका सिमरन किया है वे इस संसार से मुक्ति प्राप्त करते हैं और उनका यम–पाश टूट जाता है। जिन्होंने भय से मुक्त होकर उस अभय स्वरूप अकाल–पुरुष का ध्यान किया है उनके जीवन का समस्त (जन्म–मरण व यमादि का) भय वह समाप्त कर देता है। जिन्होंने निरंकार का चिन्तन किया, सेवा–भाव से उस में लीन हुए, वे तुम्हारे दुखहर्ता रूप में ही विलीन हो गए। हे नानक! जिन्होंने नारायण स्वरूप निरंकार का सिमरन किया, वे धन्य ही धन्य हैं, मैं उन पर कुर्बान होता हूँ॥ ३॥

हे अनंत स्वरूप! तेरी भक्ति के खजाने भक्तों के हृदय में अनंतानंत भरे हुए हैं। तेरे भक्त तीनों काल तेरी प्रशंसा के गीत गाते हैं कि हे परमेश्वर! तू अनेकानेक व अनंत स्वरूप हैं। संसार में तेरी नाना प्रकार से आराधना और जप–तपादि द्वारा साधना की जाती है। अनेकानेक ऋषि–मुनि व विद्वान कई तरह के शास्त्र, स्मृतियों का अध्ययन करके तथा षट्–कर्म, यज्ञादि धर्म कार्यों द्वारा तुम्हारा स्तुति–गान करते हैं। हे नानक! वे समस्त श्रद्धालु भक्त संसार में भले हैं जो निरंकार को अच्छे लगते हैं॥ ४॥

हे अकाल पुरुष! तुम अपरिमेय पारब्रह्म अनन्त स्वरूप हो, तुम्हारे समान अन्य कोई भी नहीं है। युगों युगों से तुम एक हो, सदा सर्वदा तुम अद्वितीय स्वरूप हो और तुम ही निश्चल रचयिता हो। जो तुम्हें भला लगता है वही घटित होता है, जो तुम स्वेच्छा से करते हो वही कार्य होता है। तुमने स्वयं ही इस सृष्टि की रचना की है और स्वयं ही रच कर उसका संहार भी करता है। हे नानक! मैं उस स्त्रष्टा प्रभु का गुणगान करता हूँ, जो समस्त सृष्टि का सृजक है अथवा जो समस्त जीवों के अन्तर्मन का ज्ञाता है॥ ५॥ १॥

आसा महला ४ ॥ तूं करता सचिआरु मैडा सांई ॥ जो तउ भावै सोई थीसी जो तूं देहि सोई हउ पाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभ तेरी तूं सभनी धिआइआ ॥ जिस नो क्रिपा करहि तिनि नाम रतनु पाइआ ॥ गुरमुखि लाधा मनमुखि गवाइआ ॥ तुधु आपि विछोड़िआ आपि मिलाइआ ॥ १ ॥ तूं दरीआउ सभ तुझ ही माहि ॥ तुझ बिनु दूजा कोई नाहि ॥ जीअ जंत सभि तेरा खेलु ॥ विजोगि मिलि

विछुड़िआ संजोगी मेलु ॥ २ ॥ जिस नो तू जाणाइहि सोई जनु जाणै ॥ हरि गुण सद ही आखि वखाणै ॥ जिनि हरि सेविआ तिनि सुखु पाइआ॥ सहजे ही हरि नामि समाइआ ॥ ३ ॥ तू आपे करता तेरा कीआ सभु होइ ॥ तुधु बिनु दूजा अवरु न कोइ ॥ तू करि करि वेखहि जाणहि सोइ ॥ जन नानक गुरमुखि परगटु होइ ॥ ४ ॥ २ ॥

हे निरंकार! तुम ही सृजनहार हो, सत्यस्वरूप हो और मेरे मालिक हो। जो तुम्हें भला लगता है वही होता है, जो तुम देते हो वही मैं प्राप्त करता हूँ॥ १॥ रहाउ॥ सम्पूर्ण सृष्टि तुम्हारी पैदा की हुई है, तुम्हें सभी जीवों ने स्मरण किया है। किंतु जिन पर तुम्हारी दया होती है, उन्होंने ही तुम्हारा नाम रूपी रत्न–पदार्थ प्राप्त किया है। यह नाम–रत्न श्रेष्ठ साधक पा जाते हैं और स्वेच्छाचारी मनुष्य इसे गंवा बैठते हैं। तुम स्वयं ही विच्छिन्न करते हो और स्वयं ही सम्मिलित करते हो॥ १॥ हे परमेश्वर! तुम नदी हो, सारा प्रपंच तुझ में ही तरंग रूप है। तुम्हारे अतिरिक्त अन्य कोई भी नहीं है। सृष्टि के सभी छोटे–बड़े जीव तुम्हारा ही कौतुक है। वियोगी कर्मों के कारण जो तुम में लीन था, वह विछुड़ गया और संयोग के कारण विछुड़ा हुआ तुम से आ मिला है; अर्थात् तुम्हारी कृपा से जिन्हें सत्संगति प्राप्त नहीं हुई वे तुम से अलग हो गए और जिन्हें संतों का संग मिल गया उन्हें तुम्हारी भक्ति प्राप्त हो गई॥ २॥ हे परमात्मा! जिसे तुम गुरु द्वारा ज्ञान प्रदान करते हो वही इस विधि को जान सकता है। फिर वही सदैव तेरे गुणों का व्याख्यान करता है। जिन्होंने उस अकाल पुरुष का सिमरन किया है, उन्होंने आत्मिक सुखों की प्राप्ति की है। फिर वह परम पुरुष सरलता से ही प्रभु–नाम में समाहित हो जाता है॥ ३॥ तुम स्वयं रचयिता हो, तुम्हारे आदेश से ही सब कुछ होता है। तुम्हारे अतिरिक्त अन्य दूसरा कोई नहीं है। तुम ही रचना कर–करके जीवों के कौतुक देख रहे हो और उनके बारे सब कुछ जानते हो। हे नानक! यह भेद गुरु के उन्मुख होने वाले व्यक्ति के अन्दर प्रकाशमान होता है॥ ४॥ २॥

आसा महला १ ॥ तितु सरवरड़ै भईले निवासा पाणी पावकु तिनहि कीआ ॥ पंकजु मोह पगु नही चालै हम देखा तह डूबीअले ॥ १ ॥ मन एकु न चेतसि मूड़ मना ॥ हरि बिसरत तेरे गुण गलिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ना हउ जती सती नही पड़िआ मूरख मुगधा जनमु भइआ ॥ प्रणवति नानक तिन की सरणा जिन तू नाही वीसरिआ ॥ २ ॥ ३ ॥

हे मन! तेरा ऐसे संसार–सागर में वास हुआ है जहाँ पर शब्द–स्पर्श रूपी रस–गंध जल व तृष्णाग्नि है। वहाँ मोह रूपी कीचड़ में फँस कर तेरा बुद्धि रूपी चरण परमात्मा की भक्ति की ओर नहीं चल पाएगा, उस सागर में हमने स्वेच्छाचारी जीवों (जो मन के होते हैं) को डूबते देखा है॥ १॥ हे विमूढ़ मन! यदि तुम एकाग्रचित होकर प्रभु का सिमरन नहीं करोगे तो हरि–प्रभु के विस्मृत हो जाने से तेरे सभी गुण नष्ट हो जाएँगे, अथवा परमात्मा को विस्मृत कर देने से तेरे गले में (यमादि का) फँदा पड़ जाएगा॥ १॥ रहाउ॥ अतः हे मन! तू अकाल पुरुष के समक्ष विनती कर कि मैं यति, सती व ज्ञानी नहीं हूँ, मेरा जीवन महामूर्खों की भाँति निष्फल हो गया है। हे नानक! जिन को तू विस्मृत नहीं होता, मैं उन संतों की शरण पड़ता हूँ तथा उन्हें प्रणाम करता हूँ॥ २॥ ३॥

आसा महला ५ ॥ भई परापति मानुख देहुरीआ ॥ गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥ अवरि काज तेरै कितै न काम॥ मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ॥ १ ॥ सरंजामि लागु भवजल तरन कै ॥ जनमु ब्रिथा जात रंगि माइआ कै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जपु तपु संजमु धरमु न कमाइआ ॥ सेवा साध न जानिआ हरि राइआ ॥ कहु नानक हम नीच करंमा ॥ सरणि परे की राखहु सरमा ॥ २ ॥ ४ ॥

हे मानव ! तुझे जो यह मानव जन्म प्राप्त हुआ है। यही तुम्हारा प्रभु को मिलने का शुभावसर है ; अर्थात् प्रभु का नाम सिमरन करने हेतु ही यह मानव जन्म तुझे प्राप्त हुआ है। इसके अतिरिक्त किए जाने वाले सांसारिक कार्य तुम्हारे किसी काम के नहीं हैं। सिर्फ तुम साधुओं—संतों का संग करके उस अकाल—पुरुष का चिन्तन ही करो॥ १॥ इसलिए इस संसार—सागर से पार उतरने के उद्यम में लग। अन्यथा माया के प्रेम में रत तुम्हारा यह जीवन व्यर्थ ही चला जाएगा॥ १॥ रहाउ॥ हे मानव ! तुमने जप, तप व संयम नहीं किया और न ही कोई पुनीत कार्य करके धर्म कमाया है। साधु—संतों की सेवा नहीं की है तथा न ही परमेश्वर को स्मरण किया है। हे नानक ! हम मंदकर्मी जीव हैं। मुझ शरणागत की लाज रखो॥ २॥ ४॥

सोहिला रागु गउड़ी दीपकी महला १

सोहिला—इस वाणी की प्रथम पंक्ति में 'कीरति' तथा पूरे शबद में दो बार 'सोहिला' पद्य होने के महात्म्य के मद्देनज़र ही इसका नाम 'सोहिला' विख्यात हुआ है, क्योंकि इनका अर्थ है 'यश'। इसके अतिरिक्त इसे 'कीर्तन सोहिला' भी कहा जाता है, क्योंकि गुरमति मर्यादानुसार गुरुद्वारों में 'सो दरु' के पाठ के पश्चात् शब्द—कीर्तन होता है। कीर्तन के पश्चात् आरती के शबद तथा 'सोहिला' बाणी का पाठ होता है। इस बाणी के तीसरे शबद 'गगन मै थालु रवि चंद' में 'आरती' पद्य होने के कारण इसे 'आरती सोहिला' भी कहा जाता है। अतः इन सब में सर्वव्यापक 'एकमेव अद्वितीय' अकाल पुरुष का गुणगान किया जाता है।

इस वाणी का पाठ पहले—पहल मध्याह्न काल (दूसरी संध्या—दोपहर) में किया जाता था, किन्तु एक दिन श्री गुरु अंगद देव जी ने सेवा करते समय श्री गुरु नानक देव जी के चरणों में से रक्त बहता देख कर कारण पूछा तो आप जी ने बताया कि आज एक भेड़ें चराने वाला भेड़ों के पीछे—पीछे श्रद्धा से 'सोहिला' का पाठ करता जा रहा था, जिसे सुनने हेतु हम भी उसके पीछे—पीछे नंगे पांव चलते रहे, तो मार्ग में कांटे हमारे पांव में चुभ गए। इस पर गुरु अंगद देव जी ने विनय की कि हजूर ! इस वाणी का पाठ रात के समय करने की आज्ञा दी जाए। तब गुरु साहिब के आदेश से इस वाणी का पाठ रात को सोने से पहले किया जाता है।

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जै घरि कीरति आखीऐ करते का होइ बीचारो ॥ तितु घरि गावहु सोहिला सिवरिहु सिरजणहारो ॥ १ ॥ तुम गावहु मेरे निरभउ का सोहिला ॥ हउ वारी जितु सोहिलै सदा सुखु होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नित नित जीअड़े समालीअनि देखैगा देवणहारु ॥ तेरे दानै कीमति ना पवै तिसु दाते कवणु सुमारु ॥ २ ॥ संबति साहा लिखिआ मिलि करि पावहु तेलु ॥ देहु सजण असीसड़ीआ जिउ होवै साहिब सिउ मेलु ॥ ३ ॥ घरि घरि एहो पाहुचा सदड़े नित पवंनि ॥ सदणहारा सिमरीऐ नानक से दिह आवंनि ॥ ४ ॥ १ ॥

जिस सत्संगति में निरंकार की कीर्ति का गान होता है तथा करतार के गुणों का विचार किया जाता है; उसी सत्संगति रूपी घर में जाकर सृष्टि रचयिता के यश का गायन करो और उसी का सिमरन करो॥ १॥ हे मानव ! तुम उस भय—रहित मेरे वाहिगुरु की प्रशंसा के गीत गाओ। साथ में यह कहो कि मैं उस सतिगुरु पर बलिहार जाता हूँ। जिसका सिमरन करने से सदैव सुखों की प्राप्ति होती है॥ १॥ रहाउ॥ हे मानव जीव ! जो पालनहार ईश्वर नित्य—प्रति अनेकानेक जीवों का पोषण कर रहा है, वह तुम पर भी अपनी कृपा—दृष्टि करेगा। उस ईश्वर द्वारा प्रदत्त पदार्थों का कोई मूल्य नहीं है, क्योंकि वे तो अनन्त हैं॥ २॥ इस मृत्यु—लोक का त्याग करके जाने का समय निश्चित किया

हुआ है अर्थात् इस लोक से जाने के लिए साहे–पत्र रूपी संदेश संवत्–दिन आदि लिख कर नियत किया हुआ है, इसलिए वाहिगुरु से मिलाप के लिए अन्य सत्संगियों के साथ मिलकर तेल डालने का शगुन कर लो। अर्थात् – मृत्यु रूपी विवाह होने से पूर्व शुभ–कर्म कर लो। हे मित्रो ! अब शुभाशीष दो कि सतिगुरु से मिलाप हो जाए॥ ३॥ प्रत्येक घर में इस साहे–पत्र को भेजा जा रहा, नित्य यह संदेश किसी न किसी घर पहुँच रहा है। (नित्य ही कोई न कोई मृत्यु को प्राप्त हो रहा है।) श्री गुरु नानक देव जी कथन करते हैं कि हे जीव ! मृत्यु का निमंत्रण भेजने वाले को स्मरण कर, क्योंकि वह दिन निकट आ रहे हैं॥ ४॥ १॥

रागु आसा महला १ ॥ छिअ घर छिअ गुर छिअ उपदेस ॥ गुरु गुरु एको वेस अनेक ॥ १ ॥ बाबा जै घरि करते कीरति होइ ॥ सो घरु राखु वडाई तोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ विसुए चसिआ घड़ीआ पहरा थिती वारी माहु होआ ॥ सूरजु एको रुति अनेक ॥ नानक करते के केते वेस ॥ २ ॥ २ ॥

छिअ घर = छः शास्त्र–सांख्य, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, योग और वेदांत। छिअ गुर = इन शास्त्रों के रचयिता– कपिल मुनि, गौतम ऋषि, कणाद ऋषि, जैमिनी ऋषि, पातञ्जलि ऋषि, आचार्य वेद व्यास जी। छिअ उपदेस = इन शास्त्रों की अलग–अलग मान्यताएँ (उपदेश)। विसुए = आँख के १५ बार फरकने के समान (काष्ठा)। चसिआ = १५ विसुए के समान (चसा)। घड़ीआ = ६० पलों की एक घड़ी (किन्तु ३० चसों का एक पल)। पहरा = साढ़े सात घड़ियों का एक पहर। आठ पहर का रात–दिन होता है। पंद्रह दिनों का एक पक्ष तथा पंद्रह दिनों की पंद्रह ही तिथियाँ होती हैं। सात दिनों का एक सप्ताह (जिन में सात वार होते हैं)। चार सप्ताह का एक माह होता है। बारह माह का एक वर्ष हुआ।

सृष्टि की रचना में छः शास्त्र हुए, इनके छः ही रचयिता तथा उपदेश भी अपने– अपने तौर पर छः ही हैं। किंतु इनका मूल तत्व एक ही केवल परमात्मा है, जिसके भेष अनन्त हैं। हे मनुष्य ! जिस शास्त्र रूपी घर में निरंकार की प्रशंसा हो, उसका गुणगान हो, उस शास्त्र को धारण कर, इससे तेरी इहलोक व परलोक दोनों में शोभा होगी॥ १॥ रहाउ॥ काष्ठा, चसा, घड़ी, पहर, तिथि व वार मिलकर जैसे एक माह बनता है। इसी तरह ऋतुओं के अनेक होने पर भी सूर्य एक ही है। (यह तो इस सूर्य के अलग–अलग अंश हैं।) वैसे ही हे नानक ! कर्त्ता–पुरुष के उपरोक्त सब स्वरूप ही दिखाई पड़ते हैं॥ २॥ २॥

रागु धनासरी महला १ ॥ गगन मै थालु रवि चंदु दीपक बने तारिका मंडल जनक मोती ॥ धूपु मलआनलो पवणु चवरो करे सगल बनराइ फूलंत जोती ॥ १ ॥ कैसी आरती होइ ॥ भव खंडना तेरी आरती ॥ अनहता सबद वाजंत भेरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहस तव नैन नन नैन हहि तोहि कउ सहस मूरति नना एक तोही ॥ सहस पद बिमल नन एक पद गंध बिनु सहस तव गंध इव चलत मोही ॥ २ ॥ सभ महि जोति जोति है सोइ ॥ तिस दै चानणि सभ महि चानणु होइ ॥ गुर साखी जोति परगटु होइ ॥ जो तिसु भावै सु आरती होइ ॥ ३ ॥ हरि चरण कवल मकरंद लोभित मनो अनदिनो मोहि आही पिआसा ॥ क्रिपा जलु देहि नानक सारिंग कउ होइ जा ते तेरै नाइ वासा ॥ ४ ॥ ३ ॥

प्रकृति द्वारा तैयार की गई आरती—सामग्री का संकेत देते हुए सतिगुरु जी का फुरमान है कि सम्पूर्ण गगन रूपी थाल में सूर्य व चंद्रमा दीपक बने हुए हैं, तारों का समूह जैसे थाल में मोती जड़े हुए हों। मलय पर्वत की ओर से आने वाली चंदन की सुगंध धूप के समान है, वायु चंवर कर रही है, समस्त वनस्पति जो फूल आदि खिलते हैं, ज्योति स्वरूप अकाल पुरुष की आरती के लिए समर्पित हैं॥ १॥ सृष्टि के जीवों का जन्म—मरण नाश करने वाले हे प्रभु! प्रकृति में तेरी कैसी अलौकिक आरती हो रही है कि जो एक रस वेद ध्वनि हो रही है वह मानों नगारे बज रहे हों॥ १॥ रहाउ॥ हे सर्वव्यापक निराकार ईश्वर! तुम्हारी हज़ारों आँखें हैं, लेकिन निर्गुण स्वरूप में तुम्हारी कोई भी आँख नहीं है, इसी प्रकार हज़ारों तुम्हारी मूर्तियाँ हैं, परंतु तुम्हारा एक भी रूप नहीं हैं क्योंकि तुम निर्गुण स्वरूप हो, सर्गुण स्वरूप में तुम्हारे हज़ारों निर्मल चरण—कंवल हैं किंतु तुम्हारा निर्गुण स्वरूप होने के कारण एक भी चरण नहीं है, तुम धाणेन्द्रिय (नासिका) रहित भी हो और तुम्हारी हजारों ही नासिकाएँ है; तुम्हारा यह आश्चर्यजनक स्वरूप मुझे मोहित कर रहा है॥ २॥ सृष्टि के समस्त प्राणियों में उस ज्योति—स्वरूप की ज्योति ही प्रकाशमान है। उसी की प्रकाश रूपी कृपा से सभी में जीवन का प्रकाश है। किंतु गुरु उपदेश द्वारा ही इस ज्योति का बोध होता है। जो उस ईश्वर को भला लगता है वही उसकी आरती होती है॥ ३॥ हरि के चरण रूपी पुष्पों के रस को मेरा मन लालायित है, नित्य—प्रति मुझे इसी रस की प्यास रहती है। हे निरंकार! मुझ नानक पपीहे को अपना कृपा—जल दो, जिससे मेरे मन का टिकाव तुम्हारे नाम में हो जाए॥ ४॥ ३॥

{उपरोक्त शबद में सतिगुरु नानक देव जी ने सांसारिक जीवों द्वारा परमात्मा के सिमरन में की गई आरती में विद्यमान पाखंडों का निवारण करते हुए जीव को प्रकृति द्वारा प्रत्यक्ष हो रही आरती का कथन किया है, इसलिए मान्यता है कि यह शबद श्री गुरु नानक देव जी ने हिन्दुओं के पवित्र तीर्थ जगन्नाथ पुरी के मंदिर में हो रही आरती के बाद उच्चारण किया।}

रागु गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ कामि करोधि नगरु बहु भरिआ मिलि साधू खंडल खंडा हे ॥ पूरबि लिखत लिखे गुरु पाइआ मनि हरि लिव मंडल मंडा हे ॥ १ ॥ करि साधू अंजुली पुनु वडा हे ॥ करि डंडउत पुनु वडा हे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साकत हरि रस सादु न जाणिआ तिन अंतरि हउमै कंडा हे ॥ जिउ जिउ चलहि चुभै दुखु पावहि जमकालु सहहि सिरि डंडा हे ॥ २ ॥ हरि जन हरि हरि नामि समाणे दुखु जनम मरण भव खंडा हे ॥ अबिनासी पुरखु पाइआ परमेसरु बहु सोभ खंड ब्रहमंडा हे ॥ ३ ॥ हम गरीब मसकीन प्रभ तेरे हरि राखु राखु वड वडा हे ॥ जन नानक नामु अधारु टेक है हरि नामे ही सुखु मंडा हे ॥ ४ ॥ ४ ॥

यह मानव शरीर काम व क्रोध जैसे विकारों से पूरी तरह भरा हुआ है; लेकिन सन्तजनों के मिलाप से तुमने काम, क्रोध को क्षीण कर दिया हैं। जिस मनुष्य ने पूर्व लिखित कर्मों के माध्यम से गुरु को प्राप्त किया है, उसका चंचल मन ही ईश्वर में लीन हुआ है॥ १॥ संत—जनों को हाथ जोड़कर वंदना करना बड़ा पुण्य कर्म है। उन्हें दण्डवत् प्रणाम करना भी महान् पुण्य कार्य है॥ १॥ रहाउ॥ पतित मनुष्यों (माया में लिप्त अथवा जो परमेश्वर से विस्मृत) ने अकाल पुरुष के रस का आनंद नहीं पाया, क्योंकि उनके अंतर में अहंकार रूपी कांटा होता है। जैसे—जैसे वह अहंकारवश जीवन मार्ग पर चलते हैं, वह अहं का कांटा उन्हें चुभ—चुभ कर कष्ट देता रहता है और अंतिम समय में यमों द्वारा

दी जाने वाली यातना को सहन करते हैं॥ २॥ इसके अतिरिक्त जो मानव जीव सांसारिक वैभव अथवा भौतिक पदार्थों का त्याग करके परमेश्वर के भक्त बन कर उसके सिमरन में लिवलीन रहते हैं, वे आवागमन के चक्र से मुक्ति प्राप्त करके संसार के दुखों से छूट जाते हैं, उन्हें नाश रहित सर्वव्यापक परमात्मा मिल जाता हैं और खण्डों–ब्रह्मण्डों में उनको शोभायमान किया जाता है॥ ३॥ हे प्रभु! हम निर्धन व निराश्रय तुम्हारे ही अधीन हैं, तुम सर्वोच्चत्तम शक्ति हो, इसलिए हमें इन विकारों से बचा लो। हे नानक! जीव को तुम्हारे ही नाम का आश्रय है, हरि के नाम में लिप्त होने से ही आत्मिक सुखों की प्राप्ति होती है॥ ४॥ ४॥

रागु गउड़ी पूरबी महला ५ ॥ करउ बेनंती सुणहु मेरे मीता संत टहल की बेला ॥ ईहा खाटि चलहु हरि लाहा आगै बसनु सुहेला ॥ १ ॥ अउध घटै दिनसु रैणारे ॥ मन गुर मिलि काज सवारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इहु संसारु बिकारु संसे महि तरिओ ब्रहम गिआनी ॥ जिसहि जगाइ पीआवै इहु रसु अकथ कथा तिनि जानी ॥ २ ॥ जा कउ आए सोई बिहाझहु हरि गुर ते मनहि बसेरा ॥ निज घरि महलु पावहु सुख सहजे बहुरि न होइगो फेरा ॥ ३ ॥ अंतरजामी पुरख बिधाते सरधा मन की पूरे ॥ नानक दासु इहै सुखु मागै मो कउ करि संतन की धूरे ॥ ४ ॥ ५ ॥

हे सत्संगी मित्रो! सुनो, मैं तुम्हे प्रार्थना करता हूँ कि यह जो मानव शरीर प्राप्त हुआ हैं, वह संत जनों की सेवा करने का शुभावसर है। यदि यह सेवा करोगे तो इस जन्म में प्रभु के नाम–सिमरन का लाभ प्राप्त होगा, जिससे परलोक में वास सरलता से होगा॥ १॥ हे मन! समय व्यतीत होते हुए निशदिन यह उम्र कम हो रही है। इसलिए तुम गुरु से मिलकर उनकी शिक्षा ग्रहण करके अपने जीवन के पार हेतु समस्त कार्य पूर्ण कर लो॥ १॥ रहाउ॥ इस जगत् में समस्त जीव काम–क्रोधादि विकारों और भ्रमों में लिप्त हैं, यहाँ से कोई तत्वेत्ता यानी ब्रह्म का ज्ञान रखने वाला ही मोक्ष को प्राप्त हुआ है। विकारों में लिप्त जिस मानव को ईश्वर ने स्वयं माया रूपी निद्रा से जगाकर नाम–रस पिला दिया, वही उस अकथनीय प्रभु की अलौकिक कथा को जान सका है॥ २॥ इसलिए हे सत्संगियों! जिस नाम रूप अमूल्य वस्तु का व्यापार करने आए हो उसे ही खरीदो, इस मन में हरि का वास गुरु द्वारा ही होता है। यदि तुम गुरु की शरण लोगे तभी इस हृदय रूपी घर में हरि का स्वरूप बसा सकोगे और आत्मिक सुखों का आनंद प्राप्त करोगे, जिससे फिर इस संसार में आने–जाने का चक्र समाप्त हो जाएगा॥ ३॥ हे मेरे अंतर्मन को जानने वाले सर्वव्यापक सृजनहार! मेरे मन की श्रद्धा को पूर्ण करो। गुरु साहिब कथन करते हैं कि यह सेवक सिर्फ यही कामना करता है कि मुझे केवल संतों की चरण–रज बना दो॥ ४॥ ५॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

ईश्वर एक है, जिसे सतगुरु की कृपा से पाया जा सकता है।

रागु सिरीरागु महला पहिला १ घरु १ ॥

मोती त मंदर ऊसरहि रतनी त होहि जड़ाउ ॥ कसतूरि कुंगू अगरि चंदनि लीपि आवै चाउ॥ मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥ १ ॥ हरि बिनु जीउ जलि बलि जाउ ॥ मै आपणा गुरु पूछि देखिआ अवरु नाही थाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धरती त हीरे लाल जड़ती पलघि लाल जड़ाउ ॥ मोहणी मुखि मणी सोहै करे रंगि पसाउ ॥ मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥ २ ॥ सिधु होवा सिधि लाई रिधि आखा आउ ॥ गुपतु परगटु होइ बैसा लोकु राखै भाउ ॥ मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥ ३ ॥ सुलतानु होवा मेलि लसकर तखति राखा पाउ ॥ हुकमु हासलु करी बैठा नानका सभ वाउ ॥ मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥ ४ ॥ १ ॥

घरु – जैसे कि पहले 'महला' शब्द का वर्णन किया जा चुका है, इसी तरह किन्हीं शब्दों के शीर्षक में 'घरु' शब्द भी अंकित किया गया है। इसका संबंध गायन करते समय ताल से रखा गया है कि आगामी शब्द किस ताल–स्वर में गायन किया जाना है। 'घरु' शब्द के साथ भी १ से १७ तक के सूचकांकों का उल्लेख किया गया है। इसलिए वाणी में जिस प्रकार 'महला' शब्द का विशेष महात्म्य है, उसी तरह 'घरु' शब्द का कीर्तनियों के लिए अति महत्वपूर्ण है।

{एक बार जब कलियुग ने श्री गुरु नानक देव जी को जगन्नाथ में समुद्र के किनारे पर भक्ति में लीन बैठे हुओं को अपना विकराल स्वरूप दिखा कर भयभीत करना चाहा तो उनकी अडोलता को देखकर वह उन्हें भौतिक पदार्थों से भ्रमित करने लगा। इस पर सतिगुरु जी ने इस शब्द के उच्चारण से उसको ईश्वर की भिज्ञता करवाई कि प्रभु व उसका नाम इन सांसारिक पदार्थों से कितना मूल्यवान है। इसमें सतिगुरु जी के परम वैराग का दर्शन होता है।}

यदि मेरे लिए मोती व रत्न जड़ित भवन निर्मित हो जाएँ। उन भवनों पर कस्तूरी, केसर, सुगंधित काष्ठ व चंदन की लकड़ी आदि के लेपन करके मन में उत्साह पैदा हो जाए। कहीं ऐसा न हो कि इन्हें देखकर मैं भूल जाऊँ और निरंकार का नाम अपने हृदय से विस्मृत कर दूँ। (इसलिए मैं ऐसे भ्रमित करने वाले पदार्थों की ओर देखता भी नहीं हूँ)॥ १॥ परमात्मा अथवा उसके नाम सिमरन के बिना जीव तृष्णग्नि में जल जाता है। मैंने अपने अराध्य इष्ट से पूछ कर देख लिया है कि निरंकार के अतिरिक्त अन्य कोई पदार्थ व स्थान जीव की मुक्ति के योग्य नहीं है॥ १॥ रहाउ॥ धरती में हीरे जड़े हुए हों, मेरे घर में पड़ा पलंघ लाल–रत्न से सुशोभित हो। घर में मन को मोह लेने वाली सुन्दर स्त्रियों का मुख मणियों की भाँति प्रकाशमान हो और वे प्रेम–भाव का आनंद प्रकट करती हों। कहीं ऐसा न हो कि इन्हें देखकर मैं भूल जाऊँ और निरंकार का नाम अपने हृदय से विस्मृत कर दूँ। (इसलिए मैं ऐसे भ्रमित करने वाले पदार्थों की ओर देखता भी नहीं हूँ।)॥२॥ सिद्ध होकर सिद्धियाँ भी लगाऊं और ऋद्धियाँ भी कहने मात्र से मेरे पास आ जाएँ। स्वेच्छा से अलोक व आलोक हो जाऊँ, जिससे लोगों के मन में श्रद्धा पैदा हो। कहीं ऐसा न हो कि इन शक्तियों से भ्रमित होकर मैं भूल जाऊँ और निरंकार का नाम अपने हृदय से विस्मृत कर दूँ। इसलिए मैं ऐसे भ्रमित करने वाले पदार्थों की ओर देखता भी नहीं हूँ॥ ३॥ बादशाह होकर सेना एकत्रित कर लूँ और सिंहासन पर विराजमान हो जाऊँ। वहाँ बैठ कर जो चाहूँ आदेश करके प्राप्त कर लूँ, सतिगुरु जी कहते हैं कि यह सब कुछ व्यर्थ है। कहीं ऐसा

न हो कि इन शक्तियों से भ्रमित होकर मैं भूल जाऊँ और निरंकार का नाम अपने हृदय से विस्मृत कर दूँ।। ४ ।। १।।

सिरीरागु महला १ ॥ कोटि कोटी मेरी आरजा पवणु पीअणु अपिआउ ॥ चंदु सूरजु दुइ गुफै न देखा सुपनै सउण न थाउ ॥ भी तेरी कीमति ना पवै हउ केवडु आखा नाउ ॥ १ ॥ साचा निरंकारु निज थाइ ॥ सुणि सुणि आखणु आखणा जे भावै करे तमाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कुसा कटीआ वार वार पीसणि पीसा पाइ ॥ अगी सेती जालीआ भसम सेती रलि जाउ ॥ भी तेरी कीमति ना पवै हउ केवडु आखा नाउ ॥ २ ॥ पंखी होइ कै जे भवा सै असमानी जाउ ॥ नदरी किसै न आवऊ ना किछु पीआ न खाउ ॥ भी तेरी कीमति ना पवै हउ केवडु आखा नाउ ॥ ३ ॥ नानक कागद लख मणा पड़ि पड़ि कीचै भाउ ॥ मसू तोटि न आवई लेखणि पउणु चलाउ ॥ भी तेरी कीमति ना पवै हउ केवडु आखा नाउ ॥ ४ ॥ २ ॥

{जब गुरु नानक देव जी वेईं नदी में प्रवेश करके सचखण्ड में अकाल–पुरुष के सम्मुख गए तब उन्होंने इस शब्द द्वारा परमात्मा की स्तुति की थी}

हे निरंकार ! बेशक मेरी आयु करोड़ों युगों तक हो जाए (समस्त पदार्थों को छोड़कर) पवन ही मेरा खाना–पीना हो। जहाँ पर चंद्रमा व सूर्य दोनों का प्रवेश न हो, ऐसी गुफा में बैठ कर मैं तुम्हारा चिन्तन करूँ और स्वप्न में भी निद्रा का स्थान न हो। (ऐसी कठिन तपस्या करने के उपरान्त भी) मैं तेरा मूल्यांकन नहीं कर सकता, तेरे नाम को मैं कितना महान् कथन करूँ। अर्थात् तेरे नाम की महिमा का व्याख्यान करना कठिन है।। १।। सत्यस्वरूप निरंकार सदा अपनी महिमा में ही स्थित है। शास्त्रों से अध्ययन करके ही कोई उसके गुणों को कथन करता है, किन्तु जिस पर निरंकार की कृपा होती है उसी में (उसके गुण श्रवण व कथन करने की) जिज्ञासा उत्पन्न होती है।। १।। रहाउ।। यदि मैं पुनः पुनः कष्ट देकर काट दिया जाऊँ तथा चक्की में डाल कर पीस दिया जाऊँ। अग्नि में मेरे शरीर को जला दिया जाए अथवा शरीर को भस्म लगा कर रखूं तो भी मैं तेरा मूल्यांकन नहीं कर सकता, तेरे नाम को मैं कितना महान् कथन करूँ, अर्थात् तेरे नाम की महिमा का व्याख्यान करना कठिन है।। २।। (सिद्धियों के बल पर) मैं पक्षी बनकर आकाश में भ्रमण करूँ और इतना ऊँचा चला जाऊँ कि सैंकड़ों ही आसमान छू लूं। ऐसा सूक्ष्म हो जाऊँ कि किसी की दृष्टि में न आऊं और न कुछ पीऊं न कुछ खाऊं। तो भी मैं तेरा मूल्यांकन नहीं कर सकता, तेरे नाम को मैं कितना महान् कथन करूँ, अर्थात् तेरे नाम की महिमा का व्याख्यान करना कठिन है।। ३।। सतगुरु जी कथन करते हैं कि लाखों मन कागज़ पढ़–पढ़ कर, अर्थात् अनेकानेक शास्त्रों व धर्म ग्रंथों का अध्ययन करके, ईश्वर से प्रेम किया जाए। उसकी स्तुति लिखने हेतु स्याही का भी अभाव न हो और कलम पवन की भाँति चलती रहे। तो भी मैं तेरा मूल्यांकन नहीं कर सकता, तेरे नाम को मैं कितना महान् कथन करूँ, अर्थात् तेरे नाम की महिमा का व्याख्यान करना कठिन है।। ४।।२।।

सिरीरागु महला १ ॥ लेखै बोलणु बोलणा लेखै खाणा खाउ ॥ लेखै वाट चलाईआ लेखै सुणि वेखाउ ॥ लेखै साह लवाईअहि पड़े कि पुछण जाउ ॥ १ ॥ बाबा माइआ रचना धोहु ॥ अंधै नामु विसारिआ ना तिसु एह न ओहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीवण मरणा जाइ कै एथै खाजै कालि ॥ जिथै बहि समझाईऐ तिथै कोइ न चलिओ नालि ॥ रोवण वाले जेतड़े सभि बंनहि पंड परालि ॥ २ ॥ सभु को आखै बहुतु बहुतु घटि न आखै कोइ ॥ कीमति किनै न पाईआ कहणि न वडा होइ ॥ साचा साहबु एकु तू होरि जीआ केते लोअ ॥ ३ ॥ नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ॥ नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस ॥ जिथै नीच समालीअनि तिथै नदरि तेरी बखसीस ॥ ४ ॥ ३ ॥

{यहाँ पर सतिगुरु जी मानव जीव को उसके जीवन का हिसाब बताते हैं कि}

हे मानव! शब्दों का बोलना सीमित है। खाना–पीना भी सीमित है। मार्ग पर चलने की सीमा बंधी हुई है, देखने व श्रवण करने की सीमा निश्चित है। यहाँ तक कि स्रष्टा (प्रभु) ने जो तुझे श्वास प्रदान किए हैं उनके लेने की भी सीमा है, (इसकी पुष्टि हेतु) किसी विद्वान से पूछने की क्या आवश्यकता है॥ १॥ इसलिए हे जीव! यह सांसारिक माया सब–कुछ कपट है। जिस अज्ञानी ने परमात्मा का नाम अपने हृदय से विस्मृत कर दिया, उसके हाथ न तो यह माया आई और न उसे परमात्मा की प्राप्ति हुई है॥ १॥ रहाउ॥ जन्म से लेकर मृत्यु काल तक मानव इस संसार में अपने सम्बन्धियों के संग सांसारिक पदार्थों का भोग करता रहता है। किन्तु जिस धर्मराज की सभा में बिठा कर जीव को उसके कर्मों का लेखा बताया जाता है, वहाँ तक जाने के लिए अथवा वहाँ उसकी सहायता करने हेतु कोई साथ नहीं चलता। मृत्यु के पश्चात् जो रोते हैं वे सभी व्यर्थ का भार बांधते हैं:, अर्थात् वे रोने का व्यर्थ–कर्म करते हैं॥ २॥ परमात्मा को प्रत्येक अधिक ही अधिक ही कहता है, अल्प कोई नहीं कहता। किन्तु उसका मूल्यांकन कोई नहीं कर सकता, कहने मात्र से वह बड़ा अथवा महान् नहीं होता है। सत्य स्वरूप निरंकार तू सिर्फ एक ही हैं, तथा अन्य प्राणियों के हृदय में ज्ञान का प्रकाश करने वाला हैं॥ ३॥ निम्न में जो निम्न जाति के लोग हैं और फिर उनमें भी जो अति निम्न प्रभु भक्त हैं। सतिगुरु जी कहते हैं कि हे निरंकार! उनके साथ मेरा मिलाप करो, माया व ज्ञानाभिमान के कारण जो बड़े हैं उनसे मेरी क्या समानता है। जिस स्थान पर उन निम्न व्यक्तियों की सम्भाल की जाती है, वहाँ पर ही हे कृपासागर! मेरे प्रति तेरी कृपा होगी॥ ४॥ ३॥

सिरीरागु महला १ ॥ लबु कुता कूड़ु चूहड़ा ठगि खाधा मुरदारु ॥ पर निंदा पर मलु मुख सुधी अगनि क्रोधु चंडालु ॥ रस कस आपु सलाहणा ए करम मेरे करतार ॥ १ ॥ बाबा बोलीऐ पति होइ ॥ ऊतम से दरि ऊतम कहीअहि नीच करम बहि रोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रसु सुइना रसु रुपा कामणि रसु परमल की वासु ॥ रसु घोड़े रसु सेजा मंदर रसु मीठा रसु मासु ॥ एते रस सरीर के कै घटि नाम निवासु ॥ २ ॥ जितु बोलिऐ पति पाईऐ सो बोलिआ परवाणु ॥ फिका बोलि विगुचणा सुणि मूरख मन अजाण ॥ जो तिसु भावहि से भले होरि कि कहण वखाण ॥ ३ ॥ तिन मति तिन पति तिन धनु पलै जिन हिरदै रहिआ समाइ ॥ तिन का किआ सालाहणा अवर सुआलिउ काइ ॥ नानक नदरी बाहरे राचहि दानि न नाइ ॥ ४ ॥ ४ ॥

खाने में लोभ करने वाला कुत्ते के समान, मिथ्या बोलने वाला भंगी, छल–कपट से दूसरे को खाने वाला शव–भक्षक होता है। दूसरे की निंदा करने से मुँह में सर्वथा पराई मैल पड़ती है, क्रोधाग्नि से मनुष्य चाण्डाल का रूप धारण कर लेता है। आत्म–प्रशंसा खट्टे–मीठे रसों का पदार्थ है, हे करतार! यही तुम से विमुख करने वाले अस्मद्‌ादिक जीवों के कर्म हैं॥ १॥ हे मानव! ऐसे वचन करो जिनसे प्रतिष्ठित हुआ जाए। क्योंकि जो जीव इस लोक में श्रेष्ठ हैं वही परमात्मा के द्वार पर भी उत्तम कहे जाते हैं और मंद कर्मी जीवों को नरकों के कष्ट भोग कर रोना पड़ता है॥ १॥ रहाउ॥ (मानव मन में) सोने के आभूषणों का प्रेम है, चांदी के प्रति स्नेह है, सुंदर स्त्री के भोग का रस है, सुगन्धि का प्यार है, घुड़सवारी की प्रीत है, आकर्षक सेज पर सोने व भव्य महलों में रहने का चाव है, मीठे पदार्थों के खाने तथा माँस–मदिरा सेवन करने की लगन है। ये जो कथन किए हैं, ये सभी रसानंद शरीर में विद्यमान हो रहे हैं तो परमात्मा का नाम–रस अंत: करण के किस स्थान पर निवास करे॥ २॥ जो वचन बोलने से प्रतिष्ठा प्राप्त होती है वही कथन परमात्मा के दरबार में स्वीकृत होता है। हे अज्ञानी मन! सुन, नीरस वचन बोलने वाला व्यक्ति दुखी होता है। जो परमेश्वर को भले लगते हैं वही वचन श्रेष्ठ हैं, और क्या कथन व बखान किया जाए॥ ३॥ उन व्यक्तियों की बुद्धि, प्रतिष्ठा व दैवी

सम्पदा रूपी धन श्रेष्ठ है, जिनके हृदय में परमेश्वर का समावेश है। उनकी प्रशंसा क्या की जाए, अन्य कौन प्रशंसनीय हो सकते हैं। सतिगुरु जी कहते हैं कि जो लोग निरंकार की कृपा–दृष्टि से परे हैं, वे परमात्मा द्वारा प्रदत्त विभूतियों में ही खचित रहते हैं, नाम में नहीं॥ ४॥ ४॥

सिरीरागु महला १ ॥ अमलु गलोला कूड़ का दिता देवणहारि ॥ मती मरणु विसारिआ खुसी कीती दिन चारि ॥ सचु मिलिआ तिन सोफीआ राखण कउ दरवारु ॥ १ ॥ नानक साचे कउ सचु जाणु ॥ जितु सेविऐ सुखु पाईऐ तेरी दरगह चलै माणु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सचु सरा गुड़ बाहरा जिसु विचि सचा नाउ ॥ सुणहि वखाणहि जेतड़े हउ तिन बलिहारै जाउ ॥ ता मनु खीवा जाणीऐ जा महली पाए थाउ ॥ २ ॥ नाउ नीरु चंगिआईआ सतु परमलु तनि वासु ॥ ता मुखु होवै उजला लख दाती इक दाति ॥ दूख तिसै पहि आखीअहि सूख जिसै ही पासि ॥ ३ ॥ सो किउ मनहु विसारीऐ जा के जीअ पराण ॥ तिसु विणु सभु अपवित्रु है जेता पैनणु खाणु ॥ होरि गलां सभि कूड़ीआ तुधु भावै परवाणु ॥ ४ ॥ ५ ॥

{श्री गुरु नानक देव जी देहाभिमान का निषेध करते हुए कहते हैं कि}

प्रदाता निरंकार ने जीव को जो नश्वर शरीर रूपी नशे की गोली प्रदान की है। अर्थात् मानव को जो परमात्मा ने देह प्रदान की है, उसके अभिमान रूपी नशे में जीव अचेत हो रहा है। उसके अभिमान में मस्त बुद्धि ने मृत्यु को भुला रखा है और अल्पकालिक खुशी में परमेश्वर से विमुख हो रहा हैं जिन को यह नशा नहीं हुआ उन सूफियों को सत्य स्वरूप अकाल पुरुष प्राप्त हुआ है ताकि उन्हें बैकुण्ठ में स्थान मिले॥ १॥ इसलिए नानक जी का कथन है कि हे मानव! सत्यस्वरूप अकाल पुरुष को ही निश्चित व सत्य जान। जिसका सिमरन करने से आत्मिक सुखों की प्राप्ति होती है और निरंकार के दरबार में सम्मान प्राप्त होता है॥ १॥ रहाउ॥ वास्तव में मदिरा गुड़ के बिना नहीं बनती, इसलिए निरंकार के नाम की खुमारी हेतु सत्यता रूपी मदिरा में ज्ञान रूपी गुड़ का सम्मिलित होना आवश्यक है, जिसमें प्रभु–नाम मिला हुआ हो। जितने पुरुष नाम के श्रोता व वाचक हैं, उन पर मैं कुर्बान जाता हूँ। इस नाम सिमरन रूपी मदिरा से मन मस्त हुआ तभी जाना जा सकता है, जब जिज्ञासु निरंकार के स्वरूप को प्राप्त कर ले॥२॥ जो नाम–जाप व सत्कर्म रूपी जल में स्नान करते हैं और सत्य वचन रूपी सुगंधि को तन पर लगाते हैं। उनका ही मुँह उज्ज्वल होता है और अन्त लाखों प्राप्तियों में एक नाम की प्राप्ति ही श्रेष्ठ है। दुख भी उसके सम्मुख ही कथन किए जाएँ जिसके पास देने के लिए सुख हों॥ ३॥ फिर उस वाहिगुरु को हृदय से विस्मृत क्योंकर किया जाए, जिसने संसार के समस्त प्राणियों को प्राण दिए हुए हैं। उस निरंकार के बिना खाना–पीना व पहनना सब अपवित्र है। अन्य सभी बातें व्यर्थ अथवा मिथ्या हैं सिर्फ वही सत्य व स्वीकृत हैं जो तुझे भला लगता है॥ ४॥ ५॥

सिरीरागु महलु १ ॥ जालि मोहु घसि मसु करि मति कागदु करि सारु ॥ भाउ कलम करि चितु लेखारी गुर पुछि लिखु बीचारु ॥ लिखु नामु सालाह लिखु लिखु अंतु न पारावारु ॥ १ ॥ बाबा एहु लेखा लिखि जाणु ॥ जिथै लेखा मंगीऐ तिथै होइ सचा नीसाणु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिथै मिलहि वडिआईआ सद खुसीआ सद चाउ ॥ तिन मुखि टिके निकलहि जिन मनि सचा नाउ ॥ करमि मिलै ता पाईऐ नाही गली वाउ दुआउ ॥ २ ॥ इकि आवहि इकि जाहि उठि रखीअहि नाव सलार ॥ इकि उपाए मंगते इकना वडे दरवार ॥ अगै गइआ जाणीऐ विणु नावै वेकार ॥ ३ ॥ भै तेरै डरु अगला खपि खपि छिजै देह ॥ नाव जिना सुलतान खान होदे डिठे खेह ॥ नानक उठी चलिआ सभि कूड़े तुटे नेह ॥ ४ ॥ ६ ॥

(प्रथम सतिगुरु जी ने यह शब्द अपने विद्या—गुरु पांधे के प्रति उच्चारण किया है)

मोह को जलाकर, तदनन्तर रगड़ स्याही बना लें और श्रेष्ठ बुद्धि को कागज़ बना लें। प्रेम—रूपी लेखनी से एकाग्र मन रूपी लेखक द्वारा गुरु से सत्यासत्य का विचार उस बुद्धि रूपी कागज़ पर लिखें। वाहिगुरु का नाम लिखें, उसकी स्तुति को लिखें और फिर उसकी अनंतता को लिखें॥ १॥ हे पांधा जी ! ऐसा लेखा लिखा जाना चाहिए। तांकि जहाँ (परलोक में) जीवों से कर्मो का हिसाब लिया जाता है वहाँ सत्य नाम का चिन्ह साथ हो॥ १॥ रहाउ॥ जिस परलोक में भक्त जनों को सम्मान मिलता है, सदैव प्रसन्नता तथा सदैव आनन्द की प्राप्ति होती है। जिनके हृदय में सत्य नाम बसा हुआ है, उनके ललाट पर तिलक सुशोभित होते हैं। ऐसा नाम जब निरंकार की कृपा हो तभी प्राप्त होता है, अन्यथा जो और वार्ता करनी है वह व्यर्थ है॥२॥ कोई यहाँ जन्मता है और कोई मृत्यु को प्राप्त होता है, किन्हीं यहाँ पर मुखिया बन बैठते हैं। कोई भिखारी पैदा होता है, कोई यहाँ पर बड़े दरबार लगा कर रहते हैं। किन्तु परलोक में जाकर ही प्रतीत होता है कि निरंकार के नाम बिना यह सब—कुछ व्यर्थ है॥ ३॥ हे पांधा जी ! आप के हृदय में परलोक का भय है अथवा नहीं, किन्तु मुझे आगे परलोक का भय बहुत है। इसलिए यह शरीर व्यवहारिक कार्यों में खप—खप कर टूट रहा है। जिनके नाम बादशाह व सरदार होते हैं, वे भी ख्वार होते यहाँ देखे गए हैं। सतिगुरु जी कथन करते हैं कि जब जीव इस नश्वर संसार को त्याग कर चला जाता है तो जितने भी यहाँ पर मिथ्या प्रेम—सम्बन्ध स्थापित किए होते हैं, वे टूट जाते हैं॥ ४॥ ६॥

सिरीरागु महला १ ॥ सभि रस मिठे मंनिऐ सुणिऐ सालोणे॥ खट तुरसी मुखि बोलणा मारण नाद कीए ॥ छतीह अंम्रित भाउ एकु जा कउ नदरि करेइ ॥ १ ॥ बाबा होरु खाणा खुसी खुआरु ॥ जितु खाधै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रता पैनणु मनु रता सुपेदी सतु दानु ॥ नीली सिआही कदा करणी पहिरणु पैर धिआनु ॥ कमरबंदु संतोख का धनु जोबनु तेरा नामु ॥ २ ॥ बाबा होरु पैनणु खुसी खुआरु ॥ जितु पैधै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घोड़े पाखर सुइने साखति बूझणु तेरी वाट ॥ तरकस तीर कमाण सांग तेगबंद गुण धातु ॥ वाजा नेजा पति सिउ परगटु करमु तेरा मेरी जाति ॥ ३ ॥ बाबा होरु चड़णा खुसी खुआरु ॥ जितु चड़िऐ तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घर मंदर खुसी नाम की नदरि तेरी परवारु ॥ हुकमु सोई तुधु भावसी होरु आखणु बहुतु अपारु ॥ नानक सचा पातिसाहु पूछि न करे बीचारु ॥ ४ ॥ बाबा होरु सउणा खुसी खुआरु ॥ जितु सुतै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ४ ॥ ७ ॥

(सतिगुरु जी ने यह शब्द अपने माता—पिता के प्रति उच्चारण करते हुए फुरमान किया है कि)

हे पिता जी ! परमेश्वर के नाम का चिन्तन करने से मीठे रस तथा श्रवण करने से लवणीय रस प्राप्त होते हैं। मुँह से उसकी स्तुति कथन करने से खट्टे व तुर्श पदार्थों का स्वाद प्राप्त होता है और रागों में कीर्तन करने से सर्व प्रकार के मसालों का स्वाद मिलता है। वास्तव में छत्तीस प्रकार का अमृत रूपी भोजन एक परमेश्वर का प्रेम है, परंतु जिन पर परमात्मा की कृपा होती है यह उसी को प्राप्त होते हैं॥ १॥ हे पिता जी ! जिह्वा के स्वाद हेतु अन्य पदार्थों का भक्षण करना ख्वार करता है। जिसके खाने से मन में कामादिक विकारों की प्रवृत्ति हो, उससे परलोक में देह को पीड़ित किया जाता है ॥ १॥ रहाउ॥ मन को वाहिगुरु—नाम में लीन करने को ही मैंने लाल रंग का पहरावा बनाया है, सत्य वचन कथन करने को श्वेत पहरावा बनाया है। पाप रहित होकर प्रभु के चरणों का ध्यान करने को मैंने नील वस्त्र का पहरावा बनाया है। संतोष को कमरबंद और ईश्वर—नाम को धन व यौवन माना है॥ २॥ हे पिता जी ! मन—भावना के अनुसार अन्य पहनने से मानव ख्वार होता है। जिसके पहनने

से तन को पीड़ा हो तथा मन में विकारों की उत्पति हो, ऐसे वस्त्र पहनने व्यर्थ हैं॥१॥ रहाउ॥ धर्म रूपी घोड़े को सत्य वचन की ज़ीन पहना कर, उसको करुणादि स्वर्ण के दुमची भूषण से सजा कर निरंकार की प्राप्ति के मार्ग की सूझ पर मैंने चलना किया है। शुद्धचित्त रूपी तरकश में प्रेम रूपी तीर हैं, परमेश्वर की ओर उन्मुख बुद्धि मेरा कमान है, शांति मेरे लिए बर्छी है, ज्ञान को मैंने म्यान माना है, इन शुभ गुणों की ओर ही मैंने दौड़ना किया है। ईश्वर—कृपा से आपके घर में प्रतिष्ठा से प्रकट होना मेरे लिए धौंसा व भाला है, आपकी साक्षात् कृपा ही मानों मेरी उच्च जाति है॥३॥ हे पिता जी! चित्त प्रसंन करते हेतु किसी अन्य की सवारी करने से मानव ख्वार होता है। जिस पर चढ़ने से तन को पीड़ा हो और मन में विकारों की उत्पति हो, ऐसी सवारी करना व्यर्थ है॥ १॥ रहाउ॥ हे निरंकार! तेरे नाम की प्रसंनता ही मेरे लिए भवनादि हैं और तुम्हारी कृपा—दृष्टि मेरा परिवार है। हे अनंत परमेश्वर! तुम्हारी रज़ा से सांसारिक क्रिया हेतु आदेश होता है, अन्य निरर्थक बातों का करना निष्फल है। सतिगुरु जी का फ़ुरमान है कि वह सत्य स्वरूप अकाल पुरुष किसी अन्य से पूछ कर विचार नहीं करता अर्थात् वह स्वतंत्र शक्ति है॥ ४॥ हे पिता जी! अन्य भोग—विलास की निद्रा से मानव ख्वार होता है। जिस सोने से तन को पीड़ा हो और मन में विकारों की उत्पत्ति हो, ऐसी निद्रा लेना व्यर्थ है॥ १॥ रहाउ॥ ४॥ ७॥

सिरीरागु महला १ ॥ कुंगू की कांइआ रतना की ललिता अगरि वासु तनि सासु ॥ अठसठि तीरथ का मुखि टिका तितु घटि मति विगासु ॥ ओतु मती सालाहणा सचु नामु गुणतासु ॥ १ ॥ बाबा होर मति होर होर ॥ जे सउ वेर कमाईऐ कूड़ै कूड़ा जोरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूज लगै पीरु आखीऐ सभु मिलै संसारु ॥ नाउ सदाए आपणा होवै सिधु सुमारु ॥ जा पति लेखै ना पवै सभा पूज खुआरु ॥ २ ॥ जिन कउ सतिगुरि थापिआ तिन मेटि न सकै कोइ ॥ ओना अंदरि नामु निधानु है नामो परगटु होइ ॥ नाउ पूजीऐ नाउ मंनीऐ अखंडु सदा सचु सोइ ॥ ३ ॥ खेहू खेह रलाईऐ ता जीउ केहा होइ ॥ जलीआ सभि सिआणपा उठी चलिआ रोइ ॥ नानक नामि विसारिऐ दरि गइआ किआ होइ ॥ ४ ॥ ८ ॥

{सतिगुरु जी इस शब्द में मानव को सुचेत करते हैं कि मनुष्य जितना भी विद्वान व बुद्धिमान हो, किन्तु यदि उसने बुद्धि को नाम—सुमिरन में नहीं लगाया तो जीवन व्यर्थ है।}

शुभ कर्म करने से शरीर केसर के समान पवित्र है, वैरागमयी वचन बोलने से जिह्वा रत्न समान है तथा निरंकार का यशोगान करने से शरीर में विद्यमान श्वास चंदन की सुगन्ध के समान हैं। अठसठ तीर्थों के स्नान—फल का तिलक मस्तिष्क पर शोभायमान होता है, ऐसे संतों की बुद्धि में प्रकाश होता है। फिर तो उस प्रकाशमान बुद्धि द्वारा परमेश्वर के गुणों की प्रशंसा की जाए॥ १॥ हे मानव जीव! परमेश्वर के ज्ञान के बिना अन्य सांसारिक विकारों में लिप्त बुद्धि व्यर्थ है। यदि सौ बार लुभावने पदार्थों को अर्जित किया जाए, तो वे मिथ्या पदार्थ व उनका बल मिथ्या है॥ १॥ रहाउ॥ अन्य ज्ञान—बल से पूजा होने लगे, लोग पीर—पीर कहने लगें तथा सम्पूर्ण सृष्टि मिलकर उसके सम्मुख हो जाए। अपना नाम भी कहलाए तथा पुनः सिद्धों में भी गिना जाए। किन्तु यदि अकाल पुरुष के दरबार में उसकी प्रतिष्ठा स्वीकृत न हो तो उसकी यह सब पूजादि उसे ख्वार करती है॥ २॥ जिनको सतिगुरु ने उच्च पद पर आसीन किया है, उन्हें कोई भी नष्ट नहीं कर सकता। क्योंकि उनके अंतर्मन में वाहिगुरु नाम का खजाना है और नाम के कारण ही संसार में उनका अस्तित्व है। जो सत्य स्वरूप, त्रैकालाबाध, भेद रहित निरंकार है उसके नाम के कारण ही (परमात्मा द्वारा प्रतिष्ठित व्यक्ति) वे पूजनीय व मानने योग्य होते हैं॥ ३॥ जब मानव शरीर (मृत्यु के पश्चात्) धूल में मिल जाता है तब जीवात्मा की दशा कैसी होगी। फिर उसकी सभी चतुराइयां जल जाती हैं और वह विलाप करता हुआ यमदूतों के साथ उठ कर चला जाता है। सतिगुरु ज़ी कथन करते हैं कि वाहिगुरु का नाम विस्मृत करके यमों के द्वार पर जाने से क्या होता है॥४॥८॥

सिरीरागु महला १ ॥ गुणवंती गुण वीथरै अउगुणवंती झूरि ॥ जे लोड़हि वरु कामणी नह मिलीऐ पिर कूरि ॥ ना बेड़ी ना तुलहड़ा ना पाईऐ पिरु दूरि ॥ १ ॥ मेरे ठाकुर पूरै तखति अडोलु ॥ गुरमुखि पूरा जे करे पाईऐ साचु अतोलु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु हरिमंदरु सोहणा तिसु महि माणक लाल ॥ मोती हीरा निरमला कंचन कोट रीसाल ॥ बिनु पउड़ी गड़ि किउ चड़उ गुर हरि धिआन निहाल ॥ २ ॥ गुरु पउड़ी बेड़ी गुरू गुरु तुलहा हरि नाउ ॥ गुरु सरु सागरु बोहिथो गुरु तीरथु दरीआउ ॥ जे तिसु भावै ऊजली सत सरि नावण जाउ ॥ ३ ॥ पूरो पूरो आखीऐ पूरै तखति निवास ॥ पूरै थानि सुहावणै पूरै आस निरास ॥ नानक पूरा जे मिलै किउ घाटै गुण तास ॥ ४ ॥ ६ ॥

{सतिगुरु जी ने प्रभु—प्राप्ति का मार्गदर्शन करते हुए इस शब्द का उच्चारण किया है।}

हे मानव ! जो शुभ गुणों से युक्त संत रूप गुणवती (जीवात्मा) है, वह अकाल पुरुष के गुणों का विस्तार करती है और जो अवगुणों से युक्त मनमुख रूप गुणहीन है, वह पश्चाताप करती है। इसलिए यदि जीव रूपी स्त्री पति—परमेश्वर को मिलना चाहती हो तो उसे हृदय में सत्य को धारण करना होगा, क्योंकि झूठ के आश्रय से पति—परमेश्वर प्राप्त नहीं होता। उस जीव—स्त्री के पास तृष्णा रूपी नदी पार करने हेतु न तो भक्ति—भाव की नाव है और न ही प्रेम—भाव का तुल्हा (रस्सों से बांध कर काष्ठ का बनाया हुआ तख्ता) है, इन साधनों के बिना तो वह परमात्मा इतना दूर है कि उसकी प्राप्ति सम्भव नहीं॥ १॥ मेरा निरंकार सर्व—सम्पन्न है और अचल सिंहासन पर विराजमान है। यदि कोई गुरु के उन्मुख होने वाला सद्पुरुष कृपा करे तो अपरिमेय व सत्य स्वरूप परमेश्वर किसी साधक को प्राप्त हो सकता है॥ १॥ रहाउ॥ मानव शरीर रूपी परमेश्वर का मंदिर अत्यंत सुंदर है, उसमें चिन्तन रूपी माणिक्य व प्रेम रूपी लाल विद्यमान हैं। वैराग रूपी मोती है, ज्ञान रूपी निर्मल हीरा है तथा धातुओं में श्रेष्ठ स्वर्ण की भाँति यह मानव देह भी एक श्रेष्ठ मनोहर दुर्ग है। (यहाँ प्रश्न उत्पन्न होता है कि) इस दुर्ग पर बिना सीढ़ी के कैसे चढ़ा जाए, (सतिगुरु जी उत्तर देते हैं) इस मानव देह रूपी दुर्ग पर चढ़ने हेतु, अर्थात् इस मानव शरीर की मुक्ति हेतु, गुरु द्वारा निरंकार का चिन्तन करके प्रसंनचित्त, यानी गुरु उपदेश से परमात्मा का नाम सिमरन करके मुक्ति प्राप्त कर॥२॥ हे मानव ! (इस दुर्ग पर चढ़ने हेतु) गुरु रूप सीढ़ी, (तृष्णा रूपी नदी पार करने हेतु) गुरु रूप नाव व गुरु रूप तुल्हा और (आवागमन से मुक्ति प्राप्ति हेतु) गुरु द्वारा हरिनाम रूपी जहाज का सहारा लिया जा सकता है, अथवा निरंकार के नाम—सिमरन की प्राप्ति के लिए गुरु—उपदेश रूपी सीढ़ी, नाव व तुल्हा को अपना आश्रय बनाओ। गुरु के पास भवसागर पार करने हेतु ज्ञान रूपी जहाज़ है, और गुरु ही पाप कर्मों की निवृत्ति हेतु तीर्थ स्थान व तन शुद्धि हेतु पवित्र दरिया है। यदि निरंकार को उस जीव—स्त्री का आचरण भला लगता है तो उसकी बुद्धि निर्मल होती है और वह सत्संगति रूपी सरोवर में स्नान करने जाती है॥ ३॥ वह जो परिपूर्ण निरंकार है उसकी पूर्ण श्रद्धा से उपासना करें तो उस अधिष्ठान स्वरूप अकाल पुरुष में स्थिर हुआ जा सकता है। परिपूर्ण परमेश्वर को प्राप्त हुआ मानव जीव शोभायमान होकर निराश व्यक्तियों की आशाएँ पूर्ण करने के समर्थ हो जाता है। सतिगुरु जी कथन करते हैं कि वह परिपूर्ण अकाल पुरुष जिसको प्राप्त हो जाए तो उसके शुभ गुणों में कमी कैसे आ सकती है॥४॥६॥

सिरीरागु महला १ ॥ आवहु भैणे गलि मिलह अंकि सहेलड़ीआह ॥ मिलि कै करह कहाणीआ संम्रथ कंत कीआह ॥ साचे साहिब सभि गुण अउगण सभि असाह ॥ १ ॥ करता सभु को तेरै जोरि ॥ एकु सबदु बीचारीऐ जा तू ता किआ होरि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जाइ पुछहु सोहागणी तुसी राविआ किनी गुणी ॥ सहजि संतोखि सीगारीआ मिठा बोलणी ॥ पिरु रीसालू ता मिलै जा गुर का सबदु सुणी ॥ २ ॥ केतीआ तेरीआ कुदरती केवड तेरी दाति ॥ केते तेरे जीअ जंत सिफति करहि दिनु राति ॥ केते तेरे रूप रंग केते जाति अजाति ॥ ३ ॥ सचु मिलै सचु ऊपजै सच महि साचि समाइ ॥ सुरति होवै पति ऊगवै गुर बचनी भउ खाइ ॥ नानक सचा पातिसाहु आपे लए मिलाइ ॥ ४ ॥ १० ॥

{गुरु नानक देव जी जब देश–देशान्तर का भ्रमण करते हुए पाक–पटन में पहुँचे तो वहाँ उनकी मुलाकात शेख फरीद के पोत्रे शेख ब्रह्म के साथ हुई। इस मुलाकात के दौरान ही सतिगुरु जी ने यह शब्द उच्चारण किया।}

हे सत्संगिनी बहन! आओ, मेरे गले मिलो, क्योंकि हम एक ही पति–परमेश्वर की सखियाँ हैं। हम दोनों मिलकर उस सर्वशक्तिमान निरंकार पति की कीर्ति की बातें करें, उस सत्य स्वरूप वाहिगुरु में सर्वज्ञानादि के सभी गुण हैं और हम में सभी अवगुण ही हैं॥ १॥ हे कर्त्ता पुरुष! सम्पूर्ण सृष्टि तेरी शक्ति के कारण ही है। जब एकमेव अद्वितीय ब्रह्म का विचार करें तो तू ही तू व्यापक हैं फिर अन्य किसी की क्या आवश्यकता है॥ १॥ रहाउ॥ हे सखियो! जिन्हें पति–परमेश्वर की प्राप्ति हुई है, उन सौभाग्यवती स्त्रियों से जाकर पूछो कि तुम ने कौन से गुणों के कारण पति–परमेश्वर को प्राप्त किया है, अर्थात् ब्रह्मानंद का उपभोग किया है। (प्रत्युत्तर में कहा है कि) संतोष धारण करने व मधुर–वाणी के कारण स्वाभाविक ही श्रृंगारित हुई हैं। जिज्ञासु रूपी स्त्री जब गुरु का उपदेश श्रवण करे तब उसे सुन्दर स्वरूप अकाल पुरुष रूपी पति मिलता है॥ २॥ हे निरंकार! कितनी ही तेरी शक्तियाँ हैं और तेरा दिया हुआ दान भी कितना महान् है (यह सब अकथनीय है)। कितने ही असंख्य सूक्ष्म व स्थूल जीव–जंतु हैं जो तेरा निशदिन स्तुतिगान कर रहे हैं। असंख्य ही तेरे गौरश्यामादि रूप–रंग हैं तथा कितनी ही ब्राह्मण–क्षत्रियादि उच्च जातियाँ व शूद्रादि निम्न जातियाँ रची हुई हैं॥ ३॥ फिर तो हे सखियो! जब सद्पुरुषों की सत्संगति प्राप्त होती है तो हृदय में सुगुणों की उत्पत्ति होती है और सत्य नाम सुमिरन में श्रद्धा करके जीव सत्यस्वरूप अकाल पुरुष में समा जाता है। (पुनः क्या होता है इसका विचार सतिगुरु जी ने कथन किया है) जब मानव–मन प्रभु चरणों में लीन होता है तब पति–परमेश्वर प्रकट होता है, किन्तु यह सब गुरु–उपदेश द्वारा हृदय में परमात्मा का भय धारण करने से ही सम्भव है। सतिगुरु जी कहते हैं कि वह सत्य स्वरूप निरंकार (बादशाह) ऐसी गुणवती ज्ञानी रूप सुहागिन सखियों को स्वयं ही अपने स्वरूप में अभेद कर लेता है॥४॥१०॥

सिरीरागु महला १ ॥ भली सरी जि उबरी हउमै मुई घराहु ॥ दूत लगे फिरि चाकरी सतिगुर का वेसाहु ॥ कलप तिआगी बादि है सचा वेपरवाहु ॥ १ ॥ मन रे सचु मिलै भउ जाइ ॥ भै बिनु निरभउ किउ थीऐ गुरमुखि सबदि समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ केता आखणु आखीऐ आखणि तोटि न होइ ॥ मंगण वाले केतड़े दाता एको सोइ ॥ जिस के जीअ पराण है मनि वसिऐ सुखु होइ ॥ २ ॥ जगु सुपना बाजी बनी खिन महि खेलु खेलाइ ॥ संजोगी मिलि एकसे विजोगी उठि जाइ ॥ जो तिसु भाणा सो थीऐ अवरु न करणा जाइ ॥ ३ ॥ गुरमुखि वसतु वेसाहीऐ सचु वखरु सचु रासि ॥ जिनी सचु वणंजिआ गुर पूरे साबासि ॥ नानक वसतु पछाणसी सचु सउदा जिसु पासि ॥ ४ ॥ ११ ॥

भला हुआ, जो मेरी बुद्धि अवगुणों से रिक्त हो गई है और मेरे हृदय–घर से अहंत्व व ममत्व विकारों का नाश हो गया है। (जब इन विकारों से हृदय व बुद्धि रिक्त हो गई तो) सतिगुरु का भरोसा प्राप्त हुआ और विकारों में लिप्त रूपी दूत ऐन्द्रिक दूत मेरे दास बन गए। उस निश्चिन्त परमात्मा में निश्चय करते हुए व्यर्थ की कल्पना का त्याग कर दिया है॥ १॥ हे मानव मन! सत्य नाम हृदय में धारण करने से ही यमादि का भय क्षीण होता है। परमेश्वर का भय माने बिना निर्भय कैसे हुआ जा सकता है परमेश्वर का भय पाने हेतु गुरु के मुख से किया गया उपदेश मनन करना पड़ता है॥ १॥ रहाउ॥ फिर तो हे भाई! उस निरंकार का यश कितना कथन किया जाए, क्योंकि उसके यशोगान की तो कोई सीमा ही नहीं है। उस प्रदाता अकाल पुरुष से माँगने वाले तो अनेकानेक जीव हैं और देने वाला वह मात्र एक ही है। जिस के आसरे जीव और प्राण हैं उस निरंकार को मन में बसा लेने से ही आत्मिक सुखों की प्राप्ति हो सकती है॥ २॥ उसके अतिरिक्त अन्य जो जगत् की रचना है वह एक स्वप्न व तमाशा ही है, क्षण मात्र में यह खेल की भाँति समाप्त हो जाएगा; अर्थात् परमात्मा के

बिना यह संसार व अन्य पदार्थ सब नश्वर हैं। जीव संयोगी कर्मों के कारण संसार में एकत्र होते हैं और वियोगी कर्मों से यहाँ से प्रस्थान कर जाते हैं। जो निरंकार को भला लगता है वही होता है, अपनी समर्था से अन्य कोई भी कुछ नहीं कर सकता॥ ३॥ जिनके पास श्रद्धा रूपी पूँजी है उन गुरु के उन्मुख सौदागरों ने ही वाहिगुरु—नाम रूपी सौदा क्रय किया है और वे नामी पुरुष ही आत्म—वस्तु को खरीदते हैं। जिन्होंने गुरु द्वारा सत्य नाम रूपी सौदा खरीदा है, वे परलोक में भी दृढ़ होते हैं। सतिगुरु जी कथन करते हैं कि जिसके पास नाम रूपी सच्चा सौदा है, वही लोक—परलोक में आत्म—वस्तु को पहचान सकेगा॥ ४॥ ११॥

सिरीरागु महलु १ ॥ धातु मिलै फुनि धातु कउ सिफती सिफति समाइ ॥ लालु गुलालु गहबरा सचा रंगु चड़ाउ ॥ सचु मिलै संतोखीआ हरि जपि एकै भाइ ॥ १ ॥ भाई रे संत जना की रेणु ॥ संत सभा गुरु पाईऐ मुकति पदारथु धेणु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऊचउ थानु सुहावणा ऊपरि महलु मुरारि ॥ सचु करणी दे पाईऐ दरु घरु महलु पिआरि ॥ गुरमुखि मनु समझाईऐ आतम रामु बीचारि ॥ २ ॥ त्रिबिधि करम कमाईअहि आस अंदेसा होइ ॥ किउ गुर बिनु त्रिकुटी छुटसी सहजि मिलिऐ सुखु होइ ॥ निज घरि महलु पछाणीऐ नदरि करे मलु धोइ ॥ ३ ॥ बिनु गुर मैलु न उतरै बिनु हरि किउ घर वासु ॥ एको सबदु वीचारीऐ अवर तिआगै आस ॥ नानक देखि दिखाईऐ हउ सद बलिहारै जासु ॥ ४ ॥ १२ ॥

{यहाँ पर सतिगुरु मनमुख व गुरमुख में अंतर कथन करते हैं}

जो माया से प्रीत करने वाला प्राणी पुन: माया में ही लिप्त होता है, अर्थात् आवागमन के चक्र में भ्रमण करता है, और गुरु से मिल कर जो अकाल पुरुष का स्तुति गान करता है वह उस परमेश्वर में ही अभेद हो जाता है। (स्तुति करने वालों को) उन्हें आनंददायक (लाल) अति आनंददायक (गुलाल) व अत्यंतानंददायक (गहबरा) सत्य रंग चढ़ जाता है। यह सत्य रंग संतोषी पुरुषों को मिलता है और जो श्रद्धापूर्वक एकाग्रचित होकर वाहिगुरु—नाम का सिमरन करते हैं॥१॥ हे भाई ! संत जनों की चरण—धूलि होकर रहो। क्योंकि इन संतों की सभा रूपी सत्संगति के कारण ही गुरु की प्राप्ति होती है और वे गुरु मुक्ति जैसा दुर्लभ पदार्थ देने हेतु कामधेनु गाय के समान है॥१॥रहाउ॥ सर्वोच्च व शोभनीय स्थान मानव जन्म है, उसे सर्वश्रेष्ठ मानकर ही निरंकार ने अपना निवास स्थान बनाया है। नाम—सिमरन व जप—तपादि सत्कर्मों के करने से ही मानव देह में जो निरंकार का स्वरूप है, उसके साथ प्रेम प्राप्त होता है। गुरु के मुख से हुए उपदेश द्वारा मन को समझाने से ही जीवात्मा और परमेश्वर दोनों की अभेदता का विचार प्रकट होता है॥ २॥ (नित्य, नैमित्तिक व काम्य अथवा सत्व, रजस् व तमस्) त्रिविध कर्म करने से प्रथम तो स्वर्ग प्राप्ति की आशा होती है, फिर इसके छूट जाने की चिन्ता सताने लगती है। इस तीन गुणों की पेचीदगी गुरु के बिना कैसे छूट सकती है जिससे ज्ञान प्राप्ति होकर आत्मिक सुख उपलब्ध हों। जब निरंकार कृपालु होकर पापों की मैल को धो देता है तभी इस मानव शरीर में विद्यमान अकाल पुरुष का स्वरूप पहचाना जा सकता है॥ ३॥ इसलिए यही निश्चय कर कि गुरु के बिना पापों की यह मैल हृदय से नहीं उतर सकती और (जब तक इस मैल की निवृत्ति नहीं हो जाती तब तक) हरि—परमेश्वर की कृपा नहीं हो सकती तथा आत्मस्वरूप में निवास असम्भव है॥३॥ इसलिए समस्त आशाओं का त्याग करके जिज्ञासु को एक ही गुरु का उपदेश मनन करना चाहिए। सतिगुरु जी कहते हैं कि जो सद्पुरुष (नश्वर पदार्थों का त्याग करके) स्वयं निरंकार को देखते हैं फिर अन्य जिज्ञासुओं को दिखाते हैं, उन पर मैं सदैव कुर्बान जाता हूँ॥४॥१२॥

सिरीरागु महला १ ॥ ध्रिगु जीवणु दोहागणी मुठी दूजै भाइ ॥ कलर केरी कंध जिउ अहिनिसि किरि ढहि पाइ ॥ बिनु सबदै सुखु ना थीऐ पिर बिनु दूखु न जाइ ॥ १ ॥ मुंधे पिर बिनु किआ सीगारु ॥ दरि घरि ढोई न लहै दरगह झूठु खुआरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपि सुजाणु न भुलई सचा वड किरसाणु ॥ पहिला धरती साधि कै सचु नामु दे दाणु ॥ नउ निधि उपजै नामु एकु करमि पवै नीसाणु ॥ २ ॥ गुर कउ जाणि न जाणई किआ तिसु चजु अचारु ॥ अंधुलै नामु विसारिआ मनमुखि अंध गुबारु ॥ आवणु जाणु न चुकई मरि जनमै होइ खुआरु ॥ ३ ॥ चंदनु मोलि अणाइआ कुंगू मांग संधूरु ॥ चोआ चंदनु बहु घणा पाना नालि कपूरु ॥ जे धन कंति न भावई त सभि अडंबर कूड़ु ॥ ४ ॥ सभि रस भोगण बादि हहि सभि सीगार विकार ॥ जब लगु सबदि न भेदीऐ किउ सोहै गुरदुआरि ॥ नानक धंनु सुहागणी जिन सह नालि पिआरु ॥ ५ ॥ १३ ॥

{इस शब्द में सतिगुरु जी सौभाग्यवती व दुर्भाग्यवती स्त्री के दृष्टांत से मनमुखों की निंदा तथा गुरुमुखों की श्लाघा करते हैं।}

जो अभागिन जीव–स्त्री द्वैत–भाव के कारण ठगी गई है उसके जीवन को धिक्कार है। एक के अतिरिक्त किसी अन्य से अनुरक्त होने के कारण अभागिन जीव स्त्री का जीवन कल्लर की दीवार की भाँति है, जो निशदिन किर–किर कर अंत में गिर पड़ती है; अर्थात् मनमुख जीव आवागमन के चक्र में ही फँसा रहता है। गुरु उपदेश के बिना जीव–स्त्री को पति–परमेश्वर के मिलाप का आत्मिक आनंद प्राप्त नहीं होता तथा आत्मानंद के बिना दैहिक एवं दैविक कष्टों की निवृत्ति नहीं होती।।१।। हे मुग्ध जीव–स्त्री ! परमात्मा पति के बिना शृंगार का क्या लाभ है, अर्थात् निरंकार में श्रद्धा–भाव के बिना जप–तपादि का किया हुआ शृंगार क्या सुख देगा? जैसे पति से विमुख हुई स्त्री को उस के घर में समीपता प्राप्त नहीं होती, वैसे ही निरंकार की विमुखता के कारण अभागिन स्त्री की भाँति परलोक में भी झूठ में लिप्त जीव को अपमानित होना पड़ता है।।१।।रहाउ।। निरंकार स्वयं समझदार,सत्य व बड़ा किसान है जो जीवों के कर्मों को नहीं भूलता। पहले तो वह अंतःकरण रूपी बुद्धि को शोध कर फिर उसमें सत्य नाम रूपी बीज को बोता है। उस नाम रूपी एक बीज से नौ निधियों की उत्पत्ति होती है, फिर जीव के मस्तिष्क पर प्रभु की कृपा का चिन्ह अंकित होता है।।२।। किन्तु जो मनमुख जीव वेद–शास्त्रों आदि से गुरु की महिमा जानकर भी अनभिज्ञ हेता है, अर्थात् गुरु–उपदेश को ग्रहण नहीं करता उसके कर्म उत्तम कैसे हो सकते हैं। अज्ञानी पुरुषों ने अज्ञान के अंधेरे कारण ही वाहिगुरु के नाम को विस्मृत कर दिया है। फिर उसका इस संसार से आवागमन समाप्त नहीं होता और वह पुनः–पुनः जन्म–मरण के चक्र में फँस कर (मुक्ति प्राप्ति हेतु) कमजोर होता रहता है अर्थात्–परमात्मा से विमुख होकर कर्म करने वाला जीव इहलोक व परलोक में अपमानित होकर दुखों को भोगता है।। ३।। जैसे कोई स्त्री चंदन केसर को मोल मंगवा लेती है और सिंदूर से माँग भर लेती है। इत्र, कर्पूर व चंदन आदि से कपड़ों को अति सुगंधित कर ले। इतना सब कुछ कर लेने पर भी यदि स्त्री अपने पति को प्रिय न लगी तो शृंगार के किए गए वे सभी आडम्बर मिथ्या हैं, व्यर्थ हैं। अर्थात् जीवात्मा बेशक जप, तप, यज्ञ, उपासना व संन्यासादि के भेष धारण कर ले किंतु जब तक निरंकार से वह विमुख है ये सब निष्फल हैं।। ४।। मनमुख जीव के समस्त रसों का भोगना व्यर्थ है और जप–तपादि का शृंगार करना निरर्थक है। क्योंकि जब तक गुरु–उपदेश को ग्रहण नहीं करता, तब तक वह गुरु के सम्मुख सत्संगति में शोभायमान नहीं होगा। सतिगुरु जी कहते हैं कि उस सौभाग्यवती रूप गुरमुख का जीवन कृतार्थ है जिसका पति–परमात्मा के साथ प्रेम है।। ५।। १३।।

सिरीरागु महला १ ॥ सुंञी देह डरावणी जा जीउ विचहु जाइ ॥ भाहि बलंदी विझवी धूउ न निकसिओ काइ ॥ पंचे रुंने दुखि भरे बिनसे दूजै भाइ ॥ १ ॥ मूड़े रामु जपहु गुण सारि ॥ हउमै ममता मोहणी सभ मुठी अहंकारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनी नामु विसारिआ दूजी कारै लगि ॥ दुबिधा लागे पचि मुए अंतरि त्रिसना अगि ॥ गुरि राखे से उबरे होरि मुठी धंधै ठगि ॥ २ ॥ मुई परीति पिआरु गइआ मुआ वैरु विरोधु ॥ धंधा थका हउ मुई ममता माइआ क्रोधु ॥ करमि मिलै सचु पाईऐ गुरमुखि सदा निरोधु ॥ ३ ॥ सची कारै सचु मिलै गुरमति पलै पाइ ॥ सो नरु जंमै ना मरै ना आवै ना जाइ ॥ नानक दरि परधानु सो दरगहि पैधा जाइ ॥ ४ ॥ १४ ॥

{किसी मृतक शरीर को देखकर वैराग में गुरु जी ने यह शब्द उच्चारण किया है।}

जब पुर्यष्टक सहित चेतन सत्ता शरीर में निकल जाती है तब रिक्त देह भयानक हो जाती है। चेतन सत्ता रूपी अग्नि जो पहले प्रज्वलित हो रही थी, वह जब बुझ गई तो शरीर में से प्राण रूपी धुआं नहीं निकला। पिता—पुत्रादि पांचों सम्बन्धी दुख में रुदन कर रहे हैं, अर्थात् पांचों ज्ञानेन्द्रियाँ वियोग में विलख रही हैं, क्योंकि यह मानव जन्म द्वैत—भाव में ही नाश हो गया॥ १॥ हे मूढ़ जीव! शुभ गुणों को सम्भालते हुए वाहिगुरु नाम का सिमरन करो। जो देहाभिमान स्त्री—पुत्रादि का ममत्व तथा माया का मोह है, इस के कारण सम्पूर्ण सृष्टि ठगी हुई है॥१॥रहाउ॥ जिन्होंने अन्य सांसारिक विकारों में संलग्न होकर वाहिगुरु नाम को भुला दिया है। उनके अंतःकरण में तृष्णाग्नि जल रही है और वे द्वैत—भाव में लग कर जल मरे हैं जिनकी गुरु ने रक्षा की, वे बच निकले तथा अन्य सभी को दुनियावी कार्यों रूपी ठगों ने ठग लिया है॥२॥ अब तो स्त्रियों में जो प्रीत लगी थी वह नष्ट हो गई, सगे—सम्बन्धियों से जो स्नेह था वह भी समाप्त हो गया तथा शत्रु—भाव भी खत्म हो गया है। सांसारिक क्रिया—कलापों से थक गया, अहंत्व, ममत्व व क्रोध नष्ट हो गए। अकाल पुरुष की कृपा द्वारा गुरु उपदेश की प्राप्ति होती है और (उस उपदेश द्वारा ही) चित्तवृतियों का दमन करके निरंकार के सत्य नाम को प्राप्त किया जा सकता है॥३॥ हे मानव! गुरु—उपदेश द्वारा अंतर्मन से नाम सिमरन रूपी सत्कर्म करके सत्य स्वरूप निरंकार की प्राप्ति सम्भव है। फिर तो वह मानव न जन्म लेता है और न मृत्यु को प्राप्त होता है तथा न आता है व न जाता है; अर्थात् वह सांसारिक बंधन व आवागमन के चक्र से मुक्त हो जाता है। सतिगुरु जी कथन करते हैं कि अकाल पुरुष के द्वार पर वह मुखिया होता है और आगे परलोक में भी उसको प्रतिष्ठा प्राप्त होती है॥ ४॥ १४॥

सिरीरागु महल १ ॥ तनु जलि बलि माटी भइआ मनु माइआ मोहि मनूरु ॥ अउगण फिरि लागू भए कूरि वजावै तूरु ॥ बिनु सबदै भरमाईऐ दुबिधा डोबे पूरु ॥ १ ॥ मन रे सबदि तरहु चितु लाइ ॥ जिनि गुरमुखि नामु न बूझिआ मरि जनमै आवै जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तनु सूचा सो आखीऐ जिसु महि साचा नाउ ॥ भै सचि राती देहुरी जिहवा सचु सुआउ ॥ सची नदरि निहालीऐ बहुड़ि न पावै ताउ ॥ २ ॥ साचे ते पवना भइआ पवनै ते जलु होइ ॥ जल ते त्रिभवणु साजिआ घटि घटि जोति समोइ ॥ निरमलु मैला ना थीऐ सबदि रते पति होइ ॥ ३ ॥ इहु मनु साचि संतोखिआ नदरि करे तिसु माहि ॥ पंच भूत सचि भै रते जोति सची मन माहि ॥ नानक अउगण वीसरे गुरि राखे पति ताहि ॥ ४ ॥ १५ ॥

हे मानव जीव! यह जो शरीर प्राप्त हुआ था वह चिन्ता में जल कर राख हो गया और माया में लिप्त मन (मण्डूर) लोहे की जंग के समान निरर्थक हो गया है। जो पाप कर्म किए गए वे उल्ट

कर उन पर ही लागू हो जाते हैं और झूठ उनके समक्ष तुरही बजाता है। गुरु–उपदेश के बिना जीव भटकता रहता है तथा द्वैत–भाव ने पूर्ण समूह को नरकों में धकेल दिया है॥ १॥ हे मन! तू गुरु–उपदेश में चित्त लगा कर इस भवसागर को पार कर। जिन जीवों ने गुरु द्वारा नाम–ज्ञान को प्राप्त नहीं किया, वे बार–बार आवागमन में ही व्यस्त रहते हैं॥ १॥ रहाउ॥ जिस अंतर्मन में सत्य–नाम विद्यमान हो, वही पवित्र कहा जाता है। शरीर सत्य स्वरूप निरंकार के भय में रत है और रसना सत्य–नाम का स्वाद चख रही है। उस जीव पर जब परमेश्वर की कृपा–दृष्टि हो गई तब उसे नरकों की अग्नि का ताप नहीं सहना पड़ता॥२॥ (अब सतिगुरु जी पुनः सृष्टि की रचना का चित्रण करते हैं।) सत्य स्वरूप निरंकार से पवन हुआ, पवन से जल की उत्पत्ति हुई। फिर सृजनहार परमात्मा ने जलादि तत्वों से तीनो लोकों (सम्पूर्ण सृष्टि) की रचना की, फिर इस रचना के कण–कण में उसने जीव रूप में अपनी ज्योति विद्यमान की। गुरु उपदेश में तदाकार होने से जिसका मन निर्मल होता है, वह फिर कभी द्वैत के कारण दूषित नहीं होता, इसी से वह प्रतिष्ठित होता है॥ ३॥ जब यह मन सत्य द्वारा संतुष्ट हो जाता है तब उस पर निरंकार की कृपा होती है। जिस सत्य स्वरूप के भय में पांचों भौतिक तत्व (सम्पूर्ण मानव शरीर) अनुरक्त हैं उस सत्य स्वरूप परमात्मा की परम ज्योति मन में निवास करती है। सतिगुरु जी कथन करते हैं कि उस मानव जीव को समस्त अवगुण विस्मृत हो गए हैं और उसकी प्रतिष्ठा की रक्षा स्वयं गुरु करते हैं॥४॥१५॥

सिरीरागु महला १ ॥ नानक बेड़ी सच की तरीऐ गुर वीचारि ॥ इकि आवहि इकि जावही पूरि भरे अहंकारि ॥ मनहठि मती बूडीऐ गुरमुखि सचु सु तारि ॥ १ ॥ गुर बिनु किउ तरीऐ सुखु होइ ॥ जिउ भावै तिउ राखु तू मै अवरु न दूजा कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आगै देखउ डउ जलै पाछै हरिओ अंगूरु ॥ जिस ते उपजै तिस ते बिनसै घटि घटि सचु भरपूरि ॥ आपे मेलि मिलावही साचै महलि हदूरि ॥ २ ॥ साहि साहि तुझु संमला कदे न विसारेउ ॥ जिउ जिउ साहबु मनि वसै गुरमुखि अंम्रितु पेउ ॥ मनु तनु तेरा तू धणी गरबु निवारि समेउ ॥ ३ ॥ जिनि एहु जगतु उपाइआ त्रिभवणु करि आकारु ॥ गुरमुखि चानणु जाणीऐ मनमुखि मुगधु गुबारु ॥ घटि घटि जोति निरंतरी बूझै गुरमति सारु ॥ ४ ॥ गुरमुखि जिनी जाणिआ तिन कीचै साबासि ॥ सचे सेती रलि मिले सचे गुण परगासि॥ नानक नामि संतोखीआ जीउ पिंडु प्रभ पासि ॥ ५ ॥ १६ ॥

गुरु नानक देव जी कथन करते हैं गुरु–उपदेश का मनन करने से ही सत्य नाम रूपी नौका में सवार होकर जीव भवसागर को पार कर सकता है। लेकिन अनेक जीव अभिमान करते हुए जन्म ले रहे हैं और मृत्यु को प्राप्त कर रहे हैं। हठी इन्सान मन की बुद्धि के कारण संसार–सागर के विकारों में डूबा रहता है, लेकिन गुरु के बताए सत्य मार्ग पर चल कर इस संसार सागर को पार किया जा सकता है॥ १॥ गुरु के आश्रय बिना कैसे यह भवसागर पार किया जा सकता है और कैसे आत्मिक–आनंद प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए उस परमात्मा में ऐसा निश्चय रख कर विनती करो कि जैसे आप को अच्छा लगता है, वैसे ही मेरी रक्षा करो, आप के अतिरिक्त मेरा अन्य कोई आश्रय नहीं है॥ १॥ रहाउ॥ सृष्टि के आश्चर्यजनक दृश्य का वर्णन करते हुए गुरु जी कथन करते हैं कि हे मानव! जब संसार के आगे (श्मशान भूमि में) मैं देखता हूँ तो दावानल प्रज्वलित है, और पीछे (संसार में) देखता हूँ तो अंकुर स्फुटित हो रहे हैं अर्थात् नए जीव पैदा हो रहे हैं। जिस सृष्टिकर्ता के आदेश से यह सांसारिक जीव पैदा हो रहे हैं और जिस संहारक शक्ति की आज्ञा से नष्ट हो रहे हैं, वह परिपूर्ण सत्य परमेश्वर कण–कण में व्याप्त हैं। वह स्वयं गुरु से मिलाप करवाता है और गुरु

से मिलकर जीव सत्य स्वरूप के समक्ष होता है॥ २॥ हे प्रभु ! कृपा करो, मैं श्वास–श्वास आप को स्मरण करूँ, कभी भी न भुलाऊं। हे साहिब ! जब–जब तुम मेरे मन में वास करोगे, तब–तब मैं आत्मिक आनंद देने वाला नाम रूपी अमृत पीता रहूँगा। हे परमात्मा ! मेरा यह तन और मन तुम्हारा ही दिया हुआ है, तुम मेरे स्वामी हो, इसलिए कृपा करके मेरे अंतर्मन से अहंकार दूर करके मुझे अपने में लिवलीन कर लो॥ ३॥ जिस परमात्मा ने इस सृष्टि का निर्माण किया है, उसने इसे तीन लोकों का आकार दिया है। इस रहस्यमयी ज्ञान को गुरमुख जीव ही जानते है, मायाधारी मनमुख विमूढ़ जीव अंधकार में रहते हैं। श्रेष्ठ गुरु की शिक्षा प्राप्त जीव ही सर्वव्यापक ज्योति को निरंतर जान सकता है॥४॥ जिन गुरमुख जीवों ने उस परमात्मा को जान लिया है, वे धन्य हैं। जो परमात्मा के सत्य नाम में लिप्त होकर उसी सत्य में अभेद हो गए हैं। श्री गुरु नानक जी कथन करते हैं कि वे नाम द्वारा संतुष्ट हो गए हैं और उन्होंने अपने प्राण व शरीर उस परमेश्वर को ही अर्पित कर दिए हैं॥ ५॥ १६॥

सिरीरागु महला १ ॥ सुणि मन मित्र पिआरिआ मिलु वेला है एह ॥ जब लगु जोबनि सासु है तब लगु इहु तनु देह ॥ बिनु गुण कामि न आवई ढहि ढेरी तनु खेह ॥ १ ॥ मेरे मन लै लाहा घरि जाहि ॥ गुरमुखि नामु सलाहीऐ हउमै निवरी भाहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुणि सुणि गंढणु गंढीऐ लिखि पड़ि बुझहि भारु ॥ त्रिसना अहिनिसि अगली हउमै रोगु विकारु ॥ ओहु वेपरवाहु अतोलवा गुरमति कीमति सारु ॥ २ ॥ लख सिआणप जे करी लख सिउ प्रीति मिलापु ॥ बिनु संगति साध न ध्रापीआ बिनु नावै दूख संतापु ॥ हरि जपि जीअरे छुटीऐ गुरमुखि चीनै आपु ॥ ३ ॥ तनु मनु गुर पहि वेचिआ मनु दीआ सिरु नालि ॥ त्रिभवणु खोजि ढंढोलिआ गुरमुखि खोजि निहालि ॥ सतगुरि मेलि मिलाइआ नानक सो प्रभु नालि ॥ ४ ॥ १७ ॥

हे प्रिय मित्र मन ! सुनो, यह समय (मानव जन्म) परमात्मा से मिलने का है। जब तक यह यौवनावस्था के श्वास चल रहे हैं, तब तक ही यह शरीर नाम सुमिरन करने के योग्य है। अर्थात्–वृद्धावस्था में निर्बलता सुमिरन नहीं करने देती। शुभ गुणों के बिना यह तन किसी काम का नहीं है, अंत में इसने नष्ट होकर राख का ढेर बन जाना है॥ १॥ हे मेरे प्रिय मन ! तुम नाम–सुमिरन का लाभ उठा कर सत्य स्वरूप के घर जाओ। गुरु के उन्मुख होकर नाम–सुमिरन कर, इससे अहंकार की अग्नि बुझ जाएगी॥ १॥ रहाउ॥ अनेकानेक कथा–कहानियाँ सुन–सुन कर बौद्धिक उधेड़–बुन में लगे रहते हैं, और अनेकानेक लिख–लिख कर, पढ़–पढ़ कर तथा सोच–विचार कर पदों का संग्रह करते हैं वह सब एक बोझ के समान हैं। उनकी तृष्णा में दिन–रात वृद्धि होती रहती है और अहंकार के रोग में ग्रस्त होकर कई तरह के विकार उत्पन्न हो जाते हैं। वह प्रभु निश्चित तथा अपरिमेय है, उसके बारे में ज्ञान गुरु की शिक्षा द्वारा ही होता है॥ २॥ हम लाखों तरह की चतुराई कर लें और लाखों ही लोगों के साथ प्रीत कर लें। (तो भी) संतों की संगति किए बिना तृप्ति नहीं होती तथा नाम सुमिरन के बिना सांसारिक दुख एवं संताप बने रहते हैं। हे जीव ! गुरु उपदेश द्वारा स्वयं को पहचान कर हरि सिमरन करके इन विकारों से छुटकारा पाया जा सकता है॥ ३॥ जिसने अपना तन–मन गुरु के पास बेच दिया है, अंतः करण और सिर भी अर्पित कर दिया है। उसने जिस प्रभु को तीनों लोकों में ढूँढा था, उसे गुरु उपदेश द्वारा खोज कर प्रसंनता प्राप्त की है। गुरु नानक देव जी कथन करते हैं कि सतिगुरु ने अपने साथ मिला कर उस प्रभु से मिलाप करवा दिया है॥ ४॥ १७॥

सिरीरागु महला १ ॥ मरणै की चिंता नही जीवण की नही आस ॥ तू सरब जीआ प्रतिपालही लेखै सास गिरास ॥ अंतरि गुरमुखि तू वसहि जिउ भावै तिउ निरजासि ॥ १ ॥ जीअरे राम जपत मनु

मानु ॥ अंतरि लागी जलि बुझी पाइआ गुरमुखि गिआनु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंतर की गति जाणीऐ गुर मिलीऐ संक उतारि ॥ मुइआ जितु घरि जाईऐ तितु जीवदिआ मरु मारि ॥ अनहद सबदि सुहावणे पाईऐ गुर वीचारि ॥ २ ॥ अनहद बाणी पाईऐ तह हउमै होइ बिनासु ॥ सतगुरु सेवे आपणा हउ सद कुरबाणै तासु ॥ खड़ि दरगह पैनाईऐ मुखि हरि नाम निवासु ॥ ३ ॥ जह देखा तह रवि रहे सिव सकती का मेलु ॥ त्रिहु गुण बंधी देहुरी जो आइआ जगि सो खेलु ॥ विजोगी दुखि विछुड़े मनमुखि लहहि न मेलु ॥ ४ ॥ मनु बैरागी घरि वसै सच भै राता होइ ॥ गिआन महा रसु भोगवै बाहुड़ि भूख न होइ ॥ नानक इहु मनु मारि मिलु भी फिरि दुखु न होइ ॥ ५ ॥ १८ ॥

गुरु के उन्मुख जीवों को न मरने की चिन्ता होती है और न ही जीने की आशा। वह निश्चय करके कहते हैं कि हे प्रभु ! तुम समस्त प्राणियों की प्रतिपालना करने वाले हो, प्रत्येक के श्वास–ग्रास का लेखा तुम्हारे पास है। गुरमुखों के हृदय में तुम वास करते हो, जैसे आपको अच्छा लगता है, वैसे तुम निर्णय लेते हो॥ १॥ हे जीव ! अकाल पुरुष का चिंतन करते हुए मन में निश्चय धारण करो। जब गुरु द्वारा गुरमुख को ज्ञान प्राप्त हुआ तो अंतर्मन में लगी तृष्णा रूपी आग की जलन समाप्त हो गई॥ १॥ रहाउ॥ अंतर्मन का रहस्य तभी जाना जा सकता है, जब सभी शंकाओं को दूर करके गुरु से मिला जाए। मरणोपरान्त जिस यम घर में जाना है, क्यों न जीवित रह कर नाम सिमरन द्वारा उस यम को ही मार लें। गुरु के उपदेश से ही पारब्रह्म की अनाहत वाणी श्रवण करने को मिलती है॥ २॥ जब यह अनाहत वाणी प्राप्त होती है तो अभिमान का विनाश हो जाता है। जो अपने सतिगुरु की सेवा करते हैं, उन पर सदैव कुर्बान जाएँ। जिनके मुँह में हरिनाम का वास होता है, उसे परमात्मा की सभा में ले जाकर प्रतिष्ठा के परिधान से सुशोभित किया जाता है॥ ३॥ जहाँ कहीं भी मेरी दृष्टि पड़ती है, वहाँ पर शिव (चेतन) और शक्ति (प्रवृति) का संयोग है। त्रिगुणी (तम,रज,सत्त्व) आत्मिक माया से यह शरीर बंधा हुआ है, जो इस संसार में आया है, उसने इनके साथ ही खेलना है। जो गुरु से विमुख हैं, वह परमात्मा से बिछुड़ कर दुखी होते हैं तथा मनमुख (स्वेच्छाचारी) मिलाप की अवस्था को प्राप्त नहीं करते॥ ४॥ यदि माया में लिप्त रहने वाला मन सत्य स्वरूप परमात्मा के भय में लीन हो जाए तो वह अपने वास्तविक गृह में निवास प्राप्त कर लेता है। वह ज्ञान द्वारा ब्रह्मानंद रूपी महारस को भोगता है तथा उसे फिर कोई तृष्णा नहीं होती। गुरु नानक जी कथन करते हैं कि इस चंचल मन को मोह–माया से दूर करके परमात्मा से मिलाप करो फिर तुझे कोई दुख–संताप नहीं सताएगा॥ ५॥ १८॥

सिरीरागु महला १ ॥ एहु मनो मूरखु लोभीआ लोभे लगा लुोभानु ॥ सबदि न भीजै साकता दुरमति आवनु जानु ॥ साधू सतगुरु जे मिलै ता पाईऐ गुणी निधानु ॥ १ ॥ मन रे हउमै छोडि गुमानु ॥ हरि गुरु सरवरु सेवि तू पावहि दरगह मानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राम नामु जपि दिनसु राति गुरमुखि हरि धनु जानु ॥ सभि सुख हरि रस भोगणे संत सभा मिलि गिआनु ॥ निति अहिनिसि हरि प्रभु सेविआ सतगुरि दीआ नामु ॥ २ ॥ कूकर कूड़ु कमाईऐ गुर निंदा पचै पचानु ॥ भरमे भूला दुखु घणो जमु मारि करै खुलहानु ॥ मनमुखि सुखु न पाईऐ गुरमुखि सुखु सुभानु ॥ ३ ॥ ऐथै धंधु पिटाईऐ सचु लिखतु परवानु ॥ हरि सजणु गुरु सेवदा गुर करणी परधानु ॥ नानक नामु न वीसरै करमि सचै नीसाणु ॥ ४ ॥ १९ ॥

यह मन विमूढ़ व लोभी है, जो भौतिक पदार्थों की प्राप्ति के लिए लालायित है। शाक्त (शक्ति उपासक लोभी जीवों) का मन गुरु–शब्द (प्रभु–नाम) में लिवलीन नहीं होता, इसलिए दुर्मति वाले

आवागमन के चक्र में पड़े रहते हैं। यदि श्रेष्ठ सतिगुरु की प्राप्ति हो जाए तो शुभ गुणों का कोष (परमात्मा) प्राप्त हो जाता है॥ १॥ हे मेरे चंचल मन! तू अभिमान और गर्व का त्याग कर दे। गुरु को हरि (जो सुखों का सरोवर है) का रूप मान कर उसकी सेवा कर, तभी तुम परमात्मा के दरबार में सम्मान प्राप्त करोगे॥ १॥ रहाउ॥ गुरु के उपदेशानुसार दिन–रात राम–नाम का सुमिरन करो और इस हरि–नाम की पहचान करो। हरि–नाम में ही सभी सुखों का भोग करने को मिलता है, लेकिन ऐसा ज्ञान संत–सभा (सत्संग) में ही प्राप्त होता है। जिनको सत्संगति में सतिगुरु ने हरि का नाम प्रदान किया है, उन्होंने नित्य दिन–रात इस हरि प्रभु की उपासना की है॥ २॥ जो कुत्ते (लोभी पुरुष) मिथ्या कमाई करते हैं, अर्थात् झूठ बोलते हैं, गुरु की निन्दा करना उनका आहार बन जाता है। इसके फलस्वरूप वह भ्रम में विस्मृत हो कर बहुत कष्ट सहन करते हैं और यमों के दण्ड से नष्ट हो जाते हैं। मनमुख जीव कभी आत्मिक सुख प्राप्त नहीं करते, केवल गुरु के उन्मुख प्राणी ही सर्वसुखों को प्राप्त करते हैं॥ ३॥ इहलोक में मनमुख जीव माया के धंधों में खपते रहते हैं, वे असत्य कर्म हैं, लेकिन परमात्मा के दर पर सत्य कर्मों का लेखा ही स्वीकृत है। जो गुरु की सेवा करता है, वह हरि का मित्र है, उसकी करनी श्रेष्ठ है। गुरु नानक जी कहते हैं कि जिनके मस्तिष्क पर सत्य कर्मों का लेखा लिखा है, उनको प्रभु का नाम कभी विस्मृत नहीं होता॥ ४॥ १६॥

सिरीरागु महला १ ॥ इकु तिलु पिआरा वीसरै रोगु वडा मन माहि ॥ किउ दरगह पति पाईऐ जा हरि न वसै मन माहि॥ गुरि मिलिऐ सुखु पाईऐ अगनि मरै गुण माहि ॥ १ ॥ मन रे अहिनिसि हरि गुण सारि ॥ जिन खिनु पलु नामु न वीसरै ते जन विरले संसारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जोती जोति मिलाईऐ सुरती सुरति संजोगु ॥ हिंसा हउमै गतु गए नाही सहसा सोगु ॥ गुरमुखि जिसु हरि मनि वसै तिसु मेले गुरु संजोगु ॥ २ ॥ काइआ कामणि जे करी भोगे भोगणहारु ॥ तिसु सिउ नेहु न कीजई जो दीसै चलणहारु ॥ गुरमुखि रवहि सोहागणी सो प्रभु सेज भतारु ॥ ३ ॥ चारे अगनि निवारि मरु गुरमुखि हरि जलु पाइ ॥ अंतरि कमलु प्रगासिआ अंम्रितु भरिआ अघाइ ॥ नानक सतगुरु मीतु करि सचु पावहि दरगह जाइ ॥ ४ ॥ २० ॥

अल्पतम समय के लिए भी यदि प्रियतम प्रभु विस्मृत हो जाए तो मन में बहुत बड़ा रोग अनुभव होता है, अर्थात् पश्चाताप होता है। जब मन में हरि का वास ही नहीं होगा तो उसके दरबार में प्रतिष्ठा कैसे प्राप्त करेगा। गुरु से मिलाप करके आत्मिक सुखों की प्राप्ति होती है, प्रभु का यशोगान करके तृष्णाग्नि मिट जाती है॥ १॥ हे मन! दिन–रात हरि–गुणों का स्मरण कर। जिनको क्षण–मात्र भी प्रभु का नाम विस्मृत नहीं होता। ऐसे लोग विरले ही इस संसार में होते हैं॥ १॥ रहाउ॥ यदि जीवात्मा को परमात्मा की ज्योति में विलीन कर दिया जाए और निज चेतना को दिव्य चेतना में संलिप्त कर दिया जाए तो मन से हिंसा, अभिमान, शोक, शंका और चंचलता आदि वृत्तियाँ समाप्त हो जाएँगी और साथ ही संशय व शोक भी मिट जाएँगे। जिस गुरमुख के मन में हरि का वास है, उसे सतिगुरु संयोगवश अपने साथ मिला लेते हैं॥ २॥ यदि बुद्धि रूपी स्त्री को निष्काम कर्मों द्वारा शुद्ध करके गुरु उपदेश का श्रेष्ठतम भोग भोगने को तत्पर किया जाए। सभी नश्वर पदार्थों की कामना का त्याग किया जाए तो वह गुरमुख सदैव गुरु उपदेश के कारण सुहागिन जीवन व्यतीत कर सकता है और अपने प्रभु–पति के साथ आनंद प्राप्त कर सकता है॥ ३॥ गुरमुख जीव हरि–नाम रूपी जल डाल कर चहु–अग्नि (हिंसा, मोह, क्रोध, लोभ) बुझा देता है। उनका हृदय कमल की भाँति खिल उठता है, क्योंकि उनके हृदय में नाम–अमृत भरा हुआ है। गुरु जी कथन करते हैं कि हे जीव! तू सतिगुरु को अपना मित्र बना, जिनकी कृपा से तुम परलोक में सुख प्राप्त करोगे॥ ४॥ २०॥

सिरीरागु महला १ ॥ हरि हरि जपहु पिआरिआ गुरमति ले हरि बोलि ॥ मनु सच कसवटी लाईऐ तुलीऐ पूरै तोलि ॥ कीमति किनै न पाईऐ रिद माणक मोलि अमोलि ॥ १ ॥ भाई रे हरि हीरा गुर माहि ॥ सतसंगति सतगुरु पाईऐ अहिनिसि सबदि सलाहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सचु वखरु धनु रासि लै पाईऐ गुर परगासि ॥ जिउ अगनि मरै जलि पाइऐ तिउ त्रिसना दासनि दासि ॥ जम जंदारु न लगई इउ भउजलु तरै तरासि ॥ २ ॥ गुरमुखि कूड़ु न भावई सचि रते सच भाइ ॥ साकत सचु न भावई कूड़ै कूड़ी पांइ ॥ सचि रते गुरि मेलिऐ सचे सचि समाइ ॥ ३ ॥ मन महि माणकु लालु नामु रतनु पदारथु हीरु ॥ सचु वखरु धनु नामु है घटि घटि गहिर गंभीरु ॥ नानक गुरमुखि पाईऐ दइआ करे हरि हीरु ॥ ४ ॥ २१ ॥

हे प्रिय जीव ! हरि—नाम का जाप करो तथा गुरु उपदेश द्वारा प्रभु का नाम—सुमिरन करो। मन को सत्य की कसौटी पर कस कर परमात्मा की यथार्थ तुला पर तोला जाता है। उस मन की कीमत कही नहीं डाली जा सकती, क्योंकि वह माणिक्य की भाँति शुद्ध है और वह मूल्य से अमूल्य है॥ १॥ हे भाई ! हरि रूपी हीरा गुरु के हृदय में ही देखा जा सकता है। उस हीरे को सत्संगति में तथा दिन—रात प्रभु के यशोगान से प्राप्त किया जाता है॥ १॥ रहाउ॥ हे जिज्ञासु ! श्रद्धा रूपी पूँजी लेकर गुरु के ज्ञान—प्रकाश में सत्य सौदा करो। जैसे जल डालने से अग्नि बुझ जाती है, वैसे तृष्णाग्नि गुरु—भक्ति रूपी जल से दासों की दास बन जाती है। इससे जीव यमों के दण्ड से बच जाता है और स्वयं भी भवसागर से पार हो जाता है तथा अन्य को भी पार होने में सहायता करता है॥ २॥ गुरु के उन्मुख जीवों को असत्य अच्छा नहीं लगता, वे प्रायः सत्य परमात्मा में लिप्त रहते हैं और सत्य ही उनको भाता है। शक्ति उपासक (शाक्त) गुरु से विमुख जीव को सत्य नहीं भाता, असत्य की नींव भी असत्य ही होती है। पूर्ण गुरु से मिल कर जो सत्य नाम में रम रहे हैं, वे गुरमुख सत्य होकर सत्य स्वरूप परमात्मा में अभेद हो रहे हैं॥ ३॥ मन में माणिक्य, लाल, हीरे, रत्न के तुल्य हरि—नाम पदार्थ विद्यमान है। वह गहन—गम्भीर प्रभु प्रत्येक हृदय में वास करता है, उसका नाम—धन ही सच्चा सौदा है। नानक जी कहते हैं कि हीरे की भाँति अमूल्य हरि यदि कृपा करे तो गुरु द्वारा ही नाम रूपी सच्चा सौदा प्राप्त किया जा सकता है॥ ४॥ २१॥

सिरीरागु महला १ ॥ भरमे भाहि न विझवै जे भवै दिसंतर देसु ॥ अंतरि मैलु न उतरै ध्रिगु जीवणु ध्रिगु वेसु ॥ होरु कितै भगति न होवई बिनु सतिगुर के उपदेस ॥ १ ॥ मन रे गुरमुखि अगनि निवारि ॥ गुर का कहिआ मनि वसै हउमै त्रिसना मारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु माणकु निरमोलु है राम नामि पति पाइ ॥ मिलि सतसंगति हरि पाईऐ गुरमुखि हरि लिव लाइ ॥ आपु गइआ सुखु पाइआ मिलि सललै सलल समाइ ॥ २ ॥ जिनि हरि हरि नामु न चेतिओ सु अउगुणि आवै जाइ ॥ जिसु सतगुरु पुरखु न भेटिओ सु भउजलि पचै पचाइ ॥ इहु माणकु जीउ निरमोलु है इउ कउडी बदलै जाइ ॥ ३ ॥ जिंना सतगुरु रसि मिलै से पूरे पुरख सुजाण ॥ गुर मिलि भउजलु लंघीऐ दरगह पति परवाणु ॥ नानक ते मुख उजले धुनि उपजै सबदु नीसाणु ॥ ४ ॥ २२ ॥

देश—देशान्तर का भ्रमण करने से भी भ्रमाग्नि शांत नहीं होती, चाहे कोई कितना भी भ्रमण क्यों न कर ले। अंतर्मन से मल दूर नहीं होता, ऐसे जीवन को धिक्कार है, ऐसे भेष को भी धिक्कार है। सतिगुरु के उपदेश बिना किसी भी प्रकार से प्रभु की भक्ति नहीं हो सकती॥ १॥ हे प्रिय मन ! गुरु के मुँह से निकलने वाले उपदेश द्वारा नाम जल लेकर तृष्णाग्नि को बुझा ले। यदि गुरु—उपदेश मन

में बस जाए तो अहंकार व तृष्णग्नि जैसे सभी विकार नष्ट हो जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ परमात्मा के नाम में लिवलीन होकर यह मन अमूल्य माणिक्य बन जाता है, और प्रतिष्ठित होता है। लेकिन परमात्मा का नाम सत्संगति करने से ही प्राप्त होता है, गुरु की शरण पड़ने से ही परमात्मा के चरणों में सुरति लगती है। अहंकार दूर होने से सुख प्राप्त होता है। तब जीवात्मा परमात्मा में उसी प्रकार विलीन हो जाती है, जैसे जल में जल मिल जाता है॥ २॥ जिस ने हरि–हरि नाम का सुमिरन नहीं किया, वह अपने अवगुणों के फलस्वरूप आवागमन के चक्र में ही पड़ा रहता है। जिस ने सतिगुरु महापुरुषों के साथ भेंट नहीं की, वे भवसागर में स्वयं भी दुखों के साथ खपता है और अन्य जीवों को भी खपाता है। यह अमूल्य रत्नों के समान मानव जन्म यूं ही कौड़ी के बदले व्यर्थ चला जाता है॥ ३॥ जिन को सतिगुरु जी प्रसन्न होकर मिले हैं, वे पुरुष पूर्ण ज्ञानी हैं। गुरु से मिल कर ही भवसागर पार किया जा सकता है तथा परलोक में सम्मान प्राप्त होता है। नानक जी कथन करते हैं कि उनके मुख उज्ज्वल होते हैं जिन के मुख से नाम–ध्वनि उत्पन्न हो रही हो और जो गुरु के उपदेश का प्रतीक हैं॥ ४॥ २२॥

सिरीरागु महला १ ॥ वणजु करहु वणजारिहो वखरु लेहु समालि ॥ तैसी वसतु विसाहीऐ जैसी निबहै नालि ॥ अगै साहु सुजाणु है लैसी वसतु समालि ॥ १ ॥ भाई रे रामु कहहु चितु लाइ ॥ हरि जसु वखरु लै चलहु सहु देखै पतीआइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिना रासि न सचु है किउ तिना सुखु होइ ॥ खोटै वणजि वणंजिऐ मनु तनु खोटा होइ ॥ फाही फाथे मिरग जिउ दूखु घणो नित रोइ ॥ २ ॥ खोटे पोतै ना पवहि तिन हरि गुर दरसु न होइ ॥ खोटे जाति न पति है खोटि न सीझसि कोइ ॥ खोटे खोटु कमावणा आइ गइआ पति खोइ ॥ ३ ॥ नानक मनु समझाईऐ गुर कै सबदि सालाह ॥ राम नाम रंगि रतिआ भारु न भरमु तिनाह ॥ हरि जपि लाहा अगला निरभउ हरि मन माह ॥ ४ ॥ २३ ॥

हे जीव रूपी व्यापारियो! नाम रूपी व्यापार करो और सौदा सम्भाल कर रख लो। गुरु–उपदेशानुसार ऐसी वस्तु का क्रय करो जो सदा तुम्हारे साथ रहे। आगे परलोक में परमात्मा रूपी सौदागर बहुत सूझवान बैठा है, वह तुम्हारी वस्तु की सम्भाल कर लेगा। अर्थात्–तुम्हारे सौदे को वह जांच–परख कर ही ग्रहण करेगा॥ १॥ हे भाई! एकाग्रचित होकर राम–नाम जपो। इस संसार में जो श्वास रूपी पूँजी लेकर आए हो, इससे हरि यश का सौदा खरीद कर ले चलो, जिसे देख कर पति–परमात्मा प्रसंन होगा॥ १॥ रहाउ॥ जिनके पास सत्य नाम की पूँजी नहीं है, उनको आत्मिक सुख कैसे प्राप्त हो सकता है। पाप रूपी अनिष्टकारी पदार्थ क्रय कर लेने से मन व तन भी दूषित हो जाता है। ऐसे जीव की दशा जाल में फँसे मृग के समान होती है, वह नित्य प्रति गहन दुखों को सहता हुआ रोता है॥ २॥ जिस प्रकार खोटा सिक्का खजाने में नहीं पड़ता, वैसे ही मिथ्या जीव को परमात्मा का साक्षात्कार नहीं होता। मिथ्या जीव की न कोई जाति है न उसकी कोई प्रतिष्ठा होती है, पाप कर्म करने वाले जीव को आत्मिक जीवन में कभी सफलता नहीं मिलती। मिथ्या पुरुषों के कर्म भी मिथ्या ही होते हैं, इसलिए वे आवागमन में ही अपनी प्रतिष्ठा गंवा लेते हैं॥ ३॥ गुरु नानक जी कथन करते हैं कि हमें गुरु उपदेश द्वारा प्रभु का यशोगान करने हेतु मन को समझाना चाहिए। जो प्रभु–प्रेम में रंगे होते हैं उनको न पापों का भार तथा न ही कोई भ्रम होता है। ऐसे जीवों को हरि के नाम–सुमिरन का बहुत लाभ मिलता है तथा उनके मन में निर्भय परमात्मा का वास होता है॥ ४॥ २३॥

सिरीरागु महला १ घरु २ ॥ धनु जोबनु अरु फुलड़ा नाठीअड़े दिन चारि ॥ पबणि केरे पत जिउ ढलि ढुलि जुंमणहार ॥ १ ॥ रंगु माणि लै पिआरिआ जा जोबनु नउ हुला ॥ दिन थोड़ड़े थके भइआ

पुराणा चोला ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सजण मेरे रंगुले जाइ सुते जीराणि ॥ हं भी वंञा डुमणी रोवा झीणी बाणि ॥ २ ॥ की न सुणेही गोरीए आपण कंनी सोइ ॥ लगी आवहि साहुरै नित न पेईआ होइ ॥ ३॥ नानक सुती पेईऐ जाणु विरती संनि ॥ गुणा गवाई गंठड़ी अवगण चली बंनि ॥ ४ ॥ २४ ॥

मानव जीवन में धन व यौवन तो फूल की भाँति चार दिनों के अतिथि हैं, जो चले जाएँगे। यह पद्मिनी के पत्तों के समान गिर कर गल–सड़ कर नष्ट हो जाने वाले हैं॥ १॥ अतः हे जीव! जब तक यौवन में नवोल्लास है, तब तक नाम–सुमिरन का आनन्द प्राप्त कर ले। तुम्हारे यौवनावस्था के दिन कम रह गए हैं, क्योंकि तुम्हारा शरीर रूपी चोला अब वृद्ध हो गया है॥ १॥ रहाउ॥ मेरे प्रिय मित्र भी (वृद्धावस्था उपरांत) श्मशान में जाकर गहरी निद्रा में सो गए हैं अर्थात्–मृत्यु को प्राप्त हो गए हैं। मैं भी दुविधा में वहाँ जाकर धीमे स्वर में रोऊं॥ २॥ हे सुन्दर जीव रूपी नारी! तुम अपने कानों से ध्यानपूर्वक यह बात क्यों नहीं सुन रही कि तुझे भी परलोक रूपी ससुराल में आना है। मायके रूपी इस लोक में तुम्हारा सदा के दिए वास नहीं हो सकता॥ ३॥ नानक जी कहते हैं कि जो जीवात्मा निश्चित होकर इस लोक में अज्ञान निद्रा में लीन है, उसे दिन के प्रकाश में ही सेंध लग रही है। यह जीव रूप स्त्री सद्गुणों की गठरी गंवा कर अवगुणों को एकत्रित करके चल पड़ी है॥ ४॥ २४॥

सिरीरागु महला १ घरु दूजा २ ॥ आपे रसीआ आपि रसु आपे रावणहारु ॥ आपे होवै चोलड़ा आपे सेज भतारु ॥ १ ॥ रंगि रता मेरा साहिबु रवि रहिआ भरपूरि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे माछी मछुली आपे पाणी जालु ॥ आपे जाल मणकड़ा आपे अंदरि लालु ॥ २ ॥ आपे बहु बिधि रंगुला सखीए मेरा लालु ॥ नित रवै सोहागणी देखु हमारा हालु ॥ ३ ॥ प्रणवै नानकु बेनती तू सरवरु तू हंसु ॥ कउलु तू है कवीआ तू है आपे वेखि विगसु ॥ ४ ॥ २५ ॥

{एक बार गुरु नानक देव जी बाला और मरदाना सहित कहीं भ्रमण कर रहे थे तो मार्ग में एक पुरुष को कामुकता में देख कर बाला और मरदाना कहने लगे कि यह पुरुष कितना पापी है जो दिन में कामवासना में लम्पट हो रहा है। तब गुरु जी ने उन्हें समझाते हुए निम्न पंक्तियों का उच्चारण किया}

गुरु नानक देव जी इन पंक्तियों में परम पिता परमात्मा के गुणों का व्याख्यान करते हुए कहते हैं कि वह परिपूर्ण परमात्मा स्वयं ही रसिया है, स्वयं ही रस रूप है तथा स्वयं ही रमण करने वाला है। स्वयं स्त्री रूप हो रहा है, स्वयं ही सेज और स्वयं ही पति रूप में व्याप्त है॥ १॥ समस्त रूपों में मेरा स्वामी परिपूर्ण होकर रमण कर रहा है॥ १॥ रहाउ॥

{आगे जाकर एक नदी में से मछुआ मछली पकड़ रहा था तो बाला–मरदाना कहने लगे कि कैसे यह तड़पती मछलियों को देख प्रसंन हो रहा है। तभी गुरु जी ने निम्न पंक्तियों द्वारा समझायाः–}

वह स्वयं ही मछुआ है, स्वयं मछली रूप में है, स्वयं जल है और स्वयं ही जाल रूप हो रहा है। स्वयं ही जाल के आगे बंधा हुआ लोहे का मनका है तथा स्वयं ही उस जाल में लगा हुआ माँस का टुकड़ा (लालु) है; अर्थात्– सर्वस्व स्वयं वह परमेश्वर ही है॥ २॥ सतिगुरु जी कथन करते हैं कि हे सखी! मेरा प्रियतम प्रभु स्वयं ही अनेक तरह के आनन्द वाला हो रहा है। वह नित्य ही सुहागिनों (प्रभु–प्रेमियों) को प्रीत करता है, हम द्वैत–भावी जीवों का हाल बहुत बुरा है॥ ३॥ गुरु नानक जी कथन करते हैं कि हे जीव! तुम यही विनती करो कि हे परम पिता! तुम ही स्वयं सरोवर हो, उस पर रहने वाले हंस भी तुम ही हो। तुम स्वयं ही कमल हो, कुमुदिनी भी तुम हो, इन सब को देख कर तुम स्वयं ही प्रसंन होने वाले हो॥ ४॥ २५॥

सिरीरागु महला १ घरु ३ ॥ इहु तनु धरती बीजु करमा करो सलिल आपाउ सारिंगपाणी ॥ मनु किरसाणु हरि रिदै जंमाइ लै इउ पावसि पदु निरबाणी ॥ १ ॥ काहे गरबसि मूड़े माइआ ॥ पित सुतो सगल कालत्र माता तेरे होहि न अंति सखाइआ ॥ रहाउ ॥ बिखै बिकार दुसट किरखा करे इन तजि आतमै होइ धिआई ॥ जपु तपु संजमु होहि जब राखे कमलु बिगसै मधु आस्रमाई ॥ २ ॥ बीस सपताहरो बासरो संग्रहै तीनि खोड़ा नित कालु सारै ॥ दस अठार मै अपरंपरो चीनै कहै नानकु इव एकु तारै ॥ ३ ॥ २६ ॥

उपरोक्त पंक्तियों में गुरु जी कृषक को कृषि करते देख कर अंतर्मन में की जाने वाली कृषि का दृष्टांत देते हुए उच्चारण करते हैं कि इस तन रूपी भूमि में सद्कर्मों का बीजारोपण करके प्रभु—चिन्तन रूपी जल से इसकी सिंचाई करो। मन को कृषक बना कर हृदय में हरि—प्रभु को उगाओ, अर्थात् हृदय में प्रभु को धारण करो तथा इस तरह निर्वाण—पद रूपी फसल प्राप्त कर लोगे॥ १॥ हे विमूढ़ जीव ! माया का अभिमान क्यों करता है। माता, पिता, पुत्र व स्त्री आदि समस्त सगे—सम्बन्धी अंत समय में तेरे सहायक नहीं होंगे॥ रहाउ॥

जिस प्रकार नदीन खेती में उग जाते हैं और कृषक उन्हें उखाड़ फैंकता है, इसी प्रकार हे मानव ! विषय—विकार रूपी नदीनों को हृदय में पनप रही खेती में से उखाड़ कर फैंक दो और इन विकारों को त्याग कर मन की एकाग्रता से प्रभु को स्मरण करो। जप, तप, संयम जब शरीर रूपी भूमि के रक्षक हो जाते हैं तो हृदय में कमल खिलता है और उस में से ब्रह्मानंद रूपी शहद टपक पड़ता है॥ २॥ जब मनुष्य पाँच स्थूल तत्त्व, पाँच सूक्ष्म तत्त्व, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच प्राण तथा मन व बुद्धि के निवास स्थान वश में करे, तीनों अवस्थाओं—बाल्यावस्था, युवावस्था व जरावस्था में काल को स्मरण रखे। दस दिशाओं तथा समस्त वनस्पतियों में अपरम्पार परमेश्वर को जाने तो हे नानक ! ऐसा एकमेय अद्वितीय प्रभु उसको भवसागर से पार उतार लेगा॥ ३॥ २६॥

सिरीरागु महला १ घरु ३ ॥ अमलु करि धरती बीजु सबदो करि सच की आब नित देहि पाणी ॥ होइ किरसाणु ईमानु जंमाइ लै भिसतु दोजकु मूड़े एव जाणी ॥ १ ॥ मतु जाण सहि गली पाइआ ॥ माल कै माणै रूप की सोभा इतु बिधी जनमु गवाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐब तनि चिकड़ो इहु मनु मीडको कमल की सार नही मूलि पाई ॥ भउरु उसतादु नित भाखिआ बोले किउ बूझै जा नह बुझाई ॥ २ ॥ आखणु सुनणा पउण की बाणी इहु मनु रता माइआ ॥ खसम की नदरि दिलहि पसिंदे जिनी करि एकु धिआइआ ॥ ३ ॥ तीह करि रखे पंज करि साथी नाउ सैतानु मतु कटि जाई ॥ नानकु आखै राहि पै चलणा मालु धनु कित कू संजिआही ॥ ४ ॥ २७ ॥

निम्नांकित पंक्तियों में गुरु साहिब एक काजी को आत्मिक शांति प्राप्त करने के लिए कृषि का दृष्टांत देकर समझाते हैं:— गुरु जी कथन करते हैं कि हे जीव ! शुभ कर्मों को भूमि बना कर उसमें गुरु—उपदेश रूपी बीज का रोपण करो और सत्य—नाम रूपी जल से इसकी सिंचाई करो। इस प्रकार तुम कृषक बन कर धार्मिक—निष्ठा को उत्पन्न करो, इससे तुझे स्वर्ग—नरक का ज्ञान प्राप्त होगा ॥ १॥ यह मत समझ लेना कि ज्ञान केवल बातों से ही प्राप्त हो जाता है। धन—सम्पति के अभिमान तथा रूप की शोभा में तुम ने अपना जन्म निष्फल ही गंवा लिया है॥ १॥ रहाउ॥ मानव शरीर में अवगुण कीचड़ की भाँति हैं तथा मन मेंढक समान, ऐसे में निकट ही विकसित हुए कमल की उसे कोई सूझ नहीं है। अर्थात्—अवगुणों के कीचड़ में फँसे मानव मन रूपी मेंढक ने परमात्मा रूपी कमल की पहचान

कदाचित नहीं की है। गुरु रूपी भँवरा नित्य प्रति आकर अपनी भाषा बोलता है, अर्थात–उपदेश देता है, लेकिन मेंढक रूपी मानव मन इसे कैसे समझ सकता है, जब तक प्रभु स्वयं इस मन को समझा न दे॥ २॥ जिनका मन माया में रंजित है, उनको उपदेश देना अथवा उनके द्वारा उपदेश श्रवण करना (पवन की बाणी) व्यर्थ की बात है। स्वामी की कृपा–दृष्टि में तथा हृदय में प्रिय वही जीव हैं, जिन्होंने एक परमेश्वर को स्मरण किया है॥ ३॥ हे काजी! सुनो, तुम तीस रोज़े रखते हो, तथा पाँच समय की नमाज़ तुम्हारी साथी है, किन्तु देखना, कहीं ऐसा न हो (काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार में से कोई) शैतान इन को नष्ट न कर दे। गुरु जी कहते हैं कि हे काज़ी! एक दिन तुम ने भी मृत्यु–मार्ग पर चलना है, फिर यह धन–सम्पत्ति तुम किस के लिए संग्रहित कर रहे हो॥ ४॥ २७॥

सिरीरागु महला १ घरु ४ ॥ सोई मउला जिनि जगु मउलिआ हरिआ कीआ संसारो ॥ आब खाकु जिनि बंधि रहाई धंनु सिरजणहारो ॥ १ ॥ मरणा मुला मरणा ॥ भी करतारहु डरणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ता तू मुला ता तू काजी जाणहि नामु खुदाई ॥ जे बहुतेरा पड़िआ होवहि को रहै न भरीऐ पाई ॥ २ ॥ सोई काजी जिनि आपु तजिआ इकु नामु कीआ आधारो ॥ है भी होसी जाइ न जासी सचा सिरजणहारो ॥ ३ ॥ पंज वखत निवाज गुजारहि पड़हि कतेब कुराणा ॥ नानकु आखै गोर सदेई रहिओ पीणा खाणा ॥ ४ ॥ २८ ॥

{इतने में वहाँ पर मुल्लां भी आ गया। तब गुरु जी दोनों को} उपदेश देते हुए कहते हैं कि}

वही परमात्मा है, जिसने इस जगत् को प्रफुल्लित किया है तथा संसार को हरा–भरा किया है। जिस परमात्मा ने पानी व पृथ्वी आदि पाँच तत्त्वों से सम्पूर्ण सृष्टि को बांध रखा है, वह सृजनहार परमात्मा धन्य है॥ १॥ हे मुल्लां! मृत्यु अपरिहार्य है। (इस पर मुल्लां ने कहा कि यदि मृत्यु ही आनी है तो फिर क्यों न सांसारिक आनंद प्राप्त करें, भयभीत होने की क्या आवश्यकता है) इस पर गुरु जी कहते हैं कि तब भी परमात्मा से डरना चाहिए॥ १॥ रहाउ॥ तभी तुम श्रेष्ठ मुल्लां हो सकते हो, तभी तुम श्रेष्ठ काज़ी हो सकते हो, यदि तुम परमात्मा के नाम के बारे में जानते हो। यदि तुम बहुत विद्वान हो तो भी तुम मृत्यु से बच कर नहीं रह सकते अर्थात् पनघड़ी की भाँति भर जाने पर डूब जाओगे॥ २॥ असली काज़ी तो वही है, जिस ने अहंत्व का त्याग किया है और एक प्रभु के नाम का आश्रय लिया है। सत्य सृष्टि का सृजनहार आज भी है, भविष्य में भी होगा, उसकी यह रचना तो नष्ट हो जाएगी, किन्तु वह नष्ट नहीं होगा॥ २॥ बेशक तुम पांचों समय की नमाज़ पढ़ते हो, चाहे कुरान शरीफ आदि धार्मिक ग्रंथ भी पढ़ते हो। नानक देव जी कहते हैं कि हे काज़ी! जब तुम्हें मृत्यु कब्र की ओर बुलाएगी तो तुम्हारा खाना–पीना ही समाप्त हो जाएगा॥ ४॥ २८॥

सिरीरागु महला १ घरु ४ ॥ एकु सुआनु दुइ सुआनी नालि ॥ भलके भउकहि सदा बइआलि ॥ कूड़ु छुरा मुठा मुरदारु ॥ धाणक रूपि रहा करतार ॥ १ ॥ मै पति की पंदि न करणी की कार ॥ हउ बिगड़ै रूपि रहा बिकराल ॥ तेरा एकु नामु तारे संसारु ॥ मै एहा आस एहो आधारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मुखि निंदा आखा दिनु राति ॥ पर घरु जोही नीच सनाति ॥ कामु क्रोधु तनि वसहि चंडाल ॥ धाणक रूपि रहा करतार ॥ २ ॥ फाही सुरति मलूकी वेसु ॥ हउ ठगवाड़ा ठगी देसु ॥ खरा सिआणा बहुता भारु ॥ धाणक रूपि रहा करतार ॥ ३ ॥ मै कीता न जाता हरामखोरु ॥ हउ किआ मुहु देसा दुसटु चोरु ॥ नानकु नीचु कहै बीचारु ॥ धाणक रूपि रहा करतार ॥ ४ ॥ २९ ॥

{इन पंक्तियों में गुरु साहिब ने मानव मन में विद्यमान दुष्ट वृत्तियों से बचने का उपाय प्रस्तुत किया है।}

गुरु जी कहते हैं कि जीव के साथ लोभ रूपी कुत्ता है तथा आशा व तृष्णा रूपी दो कुत्तियाँ हैं। सदैव प्रातः होते ही ये आहार हेतु भौंकने लग जाते हैं। जीव के पास झूठ रूपी छुरा है, जिससे वह सांसारिक प्राणियों को ठग कर खाता है। अर्थात् जीव झूठ के आसरे अभक्ष्य पदार्थ सेवन करता है। हे प्रभु ! सांसारिक जीव हत्यारे के रूप में रह रहा है॥ १॥ जीव के लिए गुरु जी स्वयं को पुरुष मान कर कहते हैं कि मैंने उस प्रभु–पति की प्रतिष्ठित शिक्षा ग्रहण नहीं की तथा न ही कोई श्रेष्ठ कार्य किया है। मैं ऐसे विकृत विकराल रूप में रह रहा हूँ। हे प्रभु ! आपका एक नाम ही भवसागर पार करने वाला है। मुझे इसी नाम की आशा है और इसी नाम का आश्रय है॥ १॥ रहाउ॥ मैं अपने मुँह से दिन–रात निन्दा करता रहता हूँ। मैं निम्न वर्ग वाला चोरी करने हेतु पराए घरों की ओर देखता रहता हूँ। इस देह में काम–क्रोधादि चाण्डाल बसते हैं। हे प्रभु ! मैं हत्यारे के रूप में रह रहा हूँ॥ २॥ मेरा ध्यान लोगों को फँसाने में लगा रहता है, यद्यपि मेरा बाह्य भेष फकीरों वाला है। मैं बड़ा ठग हूँ तथा दुनिया को ठग रहा हूँ। मैं स्वयं को बहुत चतुर समझता हूँ, लेकिन मेरे ऊपर पापों का बहुत भार पड़ा हुआ है। हे प्रभु ! मैं हत्यारे के रूप में रह रहा हूँ॥ ३॥ मैंने प्रभु के किए उपकारों को भी नहीं जाना, अतः मैं कृतघ्न हूँ। मैं दुष्ट चोर हूँ, सो मैं किस मुँह से परमात्मा के दरबार में जाऊँगा। अर्थात् मैं अपने कुकृत्यों से इतना शर्मिन्दा हूँ कि प्रभु के द्वार पर क्या मुँह लेकर जाऊँ। गुरु नानक देव जी स्वयं को जीव रूप में सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि मैं इतना नीच हो गया हूँ। मैं हत्यारे के रूप में रह रहा हूँ। अर्थात्–इस स्वरूप में मेरी मुक्ति कैसे होगी ?॥ ४॥ २६॥

सिरीरागु महला १ घरु ४ ॥ एका सुरति जेते है जीअ ॥ सुरति विहूणा कोइ न कीअ ॥ जेही सुरति तेहा तिन राहु ॥ लेखा इको आवहु जाहु ॥ १ ॥ काहे जीअ करहि चतुराई ॥ लेवै देवै ढिल न पाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरे जीअ जीआ का तोहि ॥ कित कउ साहिब आवहि रोहि ॥ जे तू साहिब आवहि रोहि ॥ तू ओना का तेरे ओहि ॥ २ ॥ असी बोलविगाड़ विगाड़ह बोल ॥ तू नदरी अंदरि तोलहि तोल ॥ जह करणी तह पूरी मति ॥ करणी बाझहु घटे घटि ॥ ३ ॥ प्रणवति नानक गिआनी कैसा होइ ॥ आपु पछाणै बूझै सोइ ॥ गुर परसादि करे बीचारु ॥ सो गिआनी दरगह परवाणु ॥ ४ ॥ ३० ॥

इस दुनिया में जितने भी जीव हैं, उन सब में एक–सी सूझ है। इस सूझ से वंचित कोई भी नहीं है। जैसी सूझ तुम उनको प्रदान करते हो, वैसा ही मार्ग उनको मिल जाता है। अर्थात्–प्रत्येक जीव अपनी सूझ–बूझ के अनुसार इस संसार में कर्म–मार्ग अपना चुका है। सभी जीवों के कर्मों के निर्णय का नियम एक ही है, जिसके अनुसार वे आवागमन के चक्र में रहते हैं॥ १॥ हे जीव ! तुम चतुराई क्यों करते हो ? वह दाता प्रभु लेने और देने में कभी भी विलम्ब नहीं करता॥ १॥ रहाउ॥ हे परमेश्वर ! यह समस्त जीव तुम्हारे बनाए हुए हैं तथा इन सब जीवों के तुम स्वामी हो। हे प्रभु ! फिर तुम (इन जीवों की भूलों पर) क्रोध क्यों करते हो? यदि तुम इन पर क्रोध करते भी हो। तो भी तुम इन जीवों के हो और ये जीव तुम्हारे हैं॥ २॥ हम अपशब्द बोलने वाले हैं तथा निरर्थक बातें करते हैं। हमारी निरर्थक बातों को तुम अपनी कृपा–दृष्टि में तोलते हो। जहाँ सत्कर्म हैं, वहाँ बुद्धि भी परिपक्व होती है। सत्कर्मों के बिना जीवन में हानि ही हानि है॥ ३॥ नानक देव जी विनयपूर्वक कथन करते हैं कि सूझवान जीव कैसा होना चाहिए? प्रत्युत्तर में कहते हैं, स्वयं को जो पहचानता है और उस परमात्मा को समझता है। उस गुरु रूप परमात्मा की कृपा से उसके गुणों का चिन्तन (विचार) करता है। ऐसा सूझवान, परम ज्ञानी ही परमात्मा के दरबार में अथवा परलोक में स्वीकृत होता है॥ ४॥ ३०॥

सिरीरागु महला १ घरु ४ ॥ तू दरीआउ दाना बीना मै मछुली कैसे अंतु लहा ॥ जह जह देखा तह तह तू है तुझ ते निकसी फूटि मरा ॥ १ ॥ न जाणा मेउ न जाणा जाली ॥ जा दुखु लागै ता तुझै समाली ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तू भरपूरि जानिआ मै दूरि ॥ जो कछु करी सु तेरै हदूरि ॥ तू देखहि हउ मुकरि पाउ ॥ तेरै कंमि न तेरै नाइ ॥ २ ॥ जेता देहि तेता हउ खाउ ॥ बिआ दरु नाही कै दरि जाउ ॥ नानकु एक कहै अरदासि ॥ जीउ पिंडु सभु तेरै पासि ॥ ३ ॥ आपे नेड़ै दूरि आपे ही आपे मंझि मिआनुो ॥ आपे वेखै सुणे आपे ही कुदरति करे जहानुो ॥ जो तिसु भावै नानका हुकमु सोई परवानुो ॥ ४ ॥ ३१ ॥

मछली का दृष्टांत देकर गुरु साहिब परमेश्वर के समक्ष विनती करते हैं कि हे प्रभु ! तुम दरिया के समान विशाल हो, सर्वज्ञाता हो, सर्वद्रष्टा हो और मैं एक छोटी मछली के समान हूँ तो मैं तुम्हारी सीमा को कैसे जान सकता हूँ, (क्योंकि तुम तो असीम प्रभु हो)। जिस ओर भी मेरी दृष्टि जाती है, वहाँ सब ओर तुम परिपूर्ण व्यापक हो, अतः तुम से बिछुड़ कर मैं तड़प कर मर जाऊँगी, अर्थात्—तुम्हारे नाम—सुमिरन से विस्मृत होने पर मैं दुखी होकर मर जाऊँगी॥ १॥ न ही मैं यम रूपी मछुए को जानती हूँ तथा न उसके जाल को जानती हूँ। जीवन में जब भी कोई कष्ट आता है तो मैं तुझे ही स्मरण करती हूँ॥ १॥ रहाउ॥ हे परमात्मा ! तुम सर्वव्यापक हो, किन्तु मैंने तुझे अपनी तुच्छ बुद्धि के कारण कहीं दूर ही समझा है। जो कुछ भी मैं करती हूँ, वह सब कुछ तेरी दृष्टि में ही है। अर्थात्— क्योंकि तुम सर्वव्यापक हो, इसलिए जीव जो भी कर्म करता है वह तुम्हारी उपस्थिति में ही होता है। मेरे किए कर्मों को जबकि तुम देख रहे हो, लेकिन मैं फिर भी इन्कार करती हूँ। न तो मैं तुम्हारे द्वारा स्वीकृत होने वाले कार्य ही करती हूँ तथा न ही मैं तुम्हारा नाम—सुमिरन करती हूँ॥ २॥ हे परमात्मा ! जितना तुम देते हो, मैं उतना ही खाती हूँ। तुम्हारे अतिरिक्त अन्य कोई द्वार नहीं, तो फिर मैं किस द्वार पर जाऊँ। मैं नानक तुम्हारे समक्ष यही एक प्रार्थना करता हूँ कि मेरे प्राण एवं तन—मन आदि सब कुछ तुम्हारे अधीन ही रहें॥ ३॥ तुम स्वयं निकट हो, दूर भी तुम ही हो तथा मध्य स्थान में भी आप हो। तुम स्वयं (हमारे कर्मों को) देखते हो, तुम ही (अच्छे—बुरे वचन) सुनते हो तथा तुम स्वयं ही अपनी शक्ति द्वारा इस सृष्टि की रचना करते हो। नानक देव जी कथन करते हैं कि जो आप को आदेश करना अच्छा लगता है, वही हम सब को मान्य है॥ ४॥ ३१॥

सिरीरागु महला १ घरु ४ ॥ कीता कहा करे मनि मानु ॥ देवणहारे कै हथि दानु ॥ भावै देइ न देई सोइ ॥ कीते कै कहिऐ किआ होइ ॥ १ ॥ आपे सचु भावै तिसु सचु ॥ अंधा कचा कचु निकचु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा के रुख बिरख आराउ॥ जेही धातु तेहा तिन नाउ ॥ फुलु भाउ फलु लिखिआ पाइ ॥ आपि बीजि आपे ही खाइ ॥ २ ॥ कची कंध कचा विचि राजु ॥ मति अलूणी फिका सादु ॥ नानक आणे आवै रासि ॥ विणु नावै नाही साबासि ॥ ३ ॥ ३२ ॥

परमात्मा द्वारा रचित जीव अपने मन में किस प्रकार अभिमान कर सकता है ? जबकि सभी पदार्थ तो उस दाता के हाथ में हैं। जीव को देना अथवा न देना उस प्रभु की ही इच्छा है। जीव के कहने से क्या होता है॥ १॥ वह स्वयं तो सत्य स्वरूप है ही, उसे सत्य ही स्वीकृत भी है। अज्ञानी जीव पूर्णतया कच्चा है॥ १॥ रहाउ॥ जिस कर्त्ता—पुरुष के ये मानव रूपी पेड़—पौधे हैं वही इन्हें संवारता है। जैसी उनकी नस्ल बन जाती है, वैसा ही इनका नाम पड़ जाता है। अर्थात्—जीव के कर्मानुसार ही संसार में उसका नाम प्रसिद्ध होता है। इनकी भावना के अनुसार ही फूल लगता है तथा लिखे हुए कर्मानुसार फल प्राप्त करता है। जीव स्वयं ही बोता है और स्वयं ही खाता है। अर्थात्—जीव जैसे कर्म करता है, वैसे ही फल को भोगता है॥ २॥ जीव की तन रूपी दीवार दुर्बल है और इसके

अन्दर बैठा मन रूपी राज–मिस्त्री भी अनाड़ी है। इसकी बुद्धि भी नाम रूपी नमक से रहित है, इसलिए इसे आत्मिक पदार्थों का स्वाद भी रसहीन ही लगेगा। नानक देव जी कथन करते हैं कि परमेश्वर जब मानव–जीवन को संवारता है तभी उसका जीवन सफल होता है। प्रभु के नाम–सुमिरन के बिना उसको दरबार में सम्मान प्राप्त नहीं होता॥ ३॥ ३२॥

सिरीरागु महला १ घरु ५ ॥ अछल छलाई नह छलै नह घाउ कटारा करि सकै ॥ जिउ साहिबु राखै तिउ रहै इसु लोभी का जीउ टल पलै ॥ १ ॥ बिनु तेल दीवा किउ जलै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पोथी पुराण कमाईऐ ॥ भउ वटी इतु तनि पाईऐ ॥ सचु बूझणु आणि जलाईऐ ॥ २ ॥ इहु तेलु दीवा इउ जलै ॥ करि चानणु साहिब तउ मिलै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इतु तनि लागै बाणीआ ॥ सुखु होवै सेव कमाणीआ ॥ सभ दुनीआ आवण जाणीआ ॥ ३ ॥ विचि दुनीआ सेव कमाईऐ ॥ ता दरगह बैसणु पाईऐ ॥ कहु नानक बाह लुडाईऐ ॥ ४ ॥ ३३ ॥

अछल माया भी मानव को छलने में स्वयं सफल नहीं हो सकती, तथा न ही कटार उसको कोई घाव लगा सकती है। क्योंकि प्रभु सदैव उसका रक्षक है, किन्तु मानव लोभी होने के कारण माया के पीछे भटकता रहता है॥ १॥ नाम सुमिरन रूपी तेल के बिना भला यह आत्मिक प्रकाश करने वाला ज्ञान रूपी दीपक कैसे जल सकता है?॥ १॥ रहाउ॥ गुरु जी प्रत्युत्तर में कथन करते हैं कि ज्ञान रूपी दीपक जलाने के लिए धर्म–ग्रंथों के सिद्धान्तों पर चल कर जीवन को संवारना तेल है। इस शरीर रूपी दीपक में भय की बाती डाली जाए। सत्य ज्ञान रूपी अग्नि की लौ द्वारा यह दीपक जलाया जाए॥ २॥ इस प्रकार की सामग्री से ही यह ज्ञान रूपी दीपक जल सकता है। जब ज्ञान रूपी दीपक प्रकाश करता है तो निरंकार से मिलाप हो जाता है॥ १॥ रहाउ॥ मानव शरीर धारण करने पर जीव को गुरु उपदेश ग्रहण करना चाहिए। प्रभु की उपासना करने से ही सुखों की प्राप्ति होती है। यह समस्त संसार तो आने–जाने वाला है। अर्थात् सम्पूर्ण सृष्टि नश्वर है॥ ३॥ इस दुनिया में रहते हुए ही यदि जीव सेवा–सुमिरन करता रहे। तभी प्रभु के दरबार में बैठने के लिए स्थान प्राप्त होता है। नानक देव जी कथन करते हैं कि यह जीव उन्हीं कर्मों द्वारा चिन्ता मुक्त होकर रह सकता है॥ ४॥ ३३॥

सिरीरागु महला ३ घरु १

{सिरीराग के अंतर्गत महला ३, तीसरी पातिशाही श्री गुरु अमरदास जी की वाणी का आरंभ}

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ हउ सतिगुरु सेवी आपणा इक मनि इक चिति भाइ ॥ सतिगुरु मन कामना तीरथु है जिस नो देइ बुझाइ ॥ मन चिंदिआ वरु पावणा जो इछै सो फलु पाइ ॥ नाउ धिआईऐ नाउ मंगीऐ नामे सहजि समाइ ॥ १ ॥ मन मेरे हरि रसु चाखु तिख जाइ ॥ जिनी गुरमुखि चाखिआ सहजे रहे समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनी सतिगुरु सेविआ तिनी पाइआ नामु निधानु ॥ अंतरि हरि रसु रवि रहिआ चूका मनि अभिमानु ॥ हिरदै कमलु प्रगासिआ लागा सहजि धिआनु ॥ मनु निरमलु हरि रवि रहिआ पाइआ दरगहि मानु ॥ २ ॥ सतिगुरु सेवनि आपणा ते विरले संसारि ॥ हउमै ममता मारि कै हरि राखिआ उर धारि ॥ हउ तिन कै बलिहारणै जिना नामे लगा पिआरु ॥ सेई सुखीए चहु जुगी जिना नामु अखुटु अपारु ॥ ३ ॥ गुर मिलिऐ नामु पाईऐ चूकै मोह पिआस ॥ हरि सेती मनु रवि रहिआ घर ही माहि उदासु ॥ जिना हरि का सादु आइआ हउ तिन बलिहारै जासु ॥ नानक नदरी पाईऐ सचु नामु गुणतासु ॥ ४ ॥ १ ॥ ३४ ॥

इन पंक्तियों में अब तीसरे पातशाह गुरु अमरदास जी अपने गुरु की स्तुति करते हुए मन को प्रेरित कर रहे हैं कि मैं अपने सतिगुरु की सेवा एकाग्रचित और मन व प्रेम–भाव के साथ करता हूँ। मेरा सतिगुरु मनोकामना पूर्ण करने वाला तीर्थ है, किन्तु जिस पर परमेश्वर की कृपा होती है, उसी को ऐसी समझ होती है। प्रभु की स्तुति करने से ही मनवांछित आशीर्वाद प्राप्त किया जा सकता है और इच्छानुसार फल की प्राप्ति होती है। इसलिए उस परमेश्वर का नाम–सुमिरन करें, नाम की ही कामना करें, इसी नाम द्वारा हम सहजावस्था में लीन हो सकते हैं॥ १॥ हे मेरे मन! हरि का नाम–रस चखने से ही तृष्णा मिट सकती है। जिन गुरुमुख जीवों ने इसे चखा है, वे ही सहजावस्था में समाए हैं॥ १॥ रहाउ॥ जिन्होंने सतिगुरु की सेवा की है, उन्होंने परमेश्वर का नाम–कोष प्राप्त किया है। इससे अंतर्मन में हरिनाम रस भरपूर हो जाता है और मन से अभिमान समाप्त हो जाता है। सहजावस्था में लीन हो जाने से हृदय रूपी कंवल खिल जाता है। जिस मन में हरि व्याप्त है, वह निर्मल हो जाता है, और उसने प्रभु के दरबार में सम्मान प्राप्त किया है॥ २॥ वे जीव इस संसार में बहुत कम हैं जो अपने सतिगुरु की सेवा करते हैं। ऐसे जीवों ने अभिमान, मोह आदि विकारों का दमन करके प्रभु को हृदय में धारण कर रखा है। मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ, जिनको प्रभु–नाम के साथ प्रीत हुई है। वे चारों युगों में सुखी हैं, जिनके पास अक्षय एवं अपार नाम की निधि है॥ ३॥ गुरु के मिलने से नाम की प्राप्ति होती है और इसी नाम के कारण ही माया का मोह व विषयों की तृष्णा समाप्त होती है। ऐसे में जीव का मन हरि के साथ मिल जाता है तथा जीव को गृहस्थ जीवन में रह कर ही उदासीनता प्राप्त हो जाती है। जिन को हरि की उपासना का आनंद मिला है, उन पर मैं सदा बलिहारी जाऊँ। नानक देव जी कथन करते हैं कि प्रभु की कृपा–दृष्टि से ही गुणों का खज़ाना सत्य नाम प्राप्त किया जा सकता है॥ ४॥ १॥ ३४॥

सिरीरागु महला ३ ॥ बहु भेख करि भरमाईऐ मनि हिरदै कपटु कमाइ ॥ हरि का महलु न पावई मरि विसटा माहि समाइ ॥ १ ॥ मन रे ग्रिह ही माहि उदासु ॥ सचु संजमु करणी सो करे गुरमुखि होइ परगासु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर कै सबदि मनु जीतिआ गति मुकति घरै महि पाइ ॥ हरि का नामु धिआईऐ सतसंगति मेलि मिलाइ ॥ २ ॥ जे लख इसतरीआ भोग करहि नव खंड राजु कमाहि ॥ बिनु सतगुर सुखु न पावई फिरि फिरि जोनी पाहि ॥ ३ ॥ हरि हारु कंठि जिनी पहिरिआ गुर चरणी चितु लाइ ॥ तिना पिछै रिधि सिधि फिरै ओना तिलु न तमाइ ॥ ४ ॥ जो प्रभ भावै सो थीऐ अवरु न करणा जाइ ॥ जनु नानकु जीवै नामु लै हरि देवहु सहजि सुभाइ ॥ ५ ॥ २ ॥ ३५॥

मनुष्य कितने ही तरह–तरह के भेष बना कर इधर–उधर भटकता है, ऐसा करके वह हृदय में छल अर्जित करता है। छलिया मन के साथ मनुष्य प्रभु के दर्शन नहीं पाता और अंततः मर कर वह नरकों की गंदगी में समा जाता है॥ १॥ हे मन! गृहस्थ जीवन में रह कर ही मोह–मायादि बंधनों से उदासीन होकर रहो। सत्य व संयम की क्रिया वही करता है, जिस मनुष्य को गुरु के उपदेश द्वारा ज्ञान रूपी प्रकाश प्राप्त हो जाता है॥ १॥ रहाउ॥ जिसने गुरु के उपदेश द्वारा विषयों–विकारों से मन को जीत लिया है, उसने गृहस्थ जीवन में ही सद्गति व मुक्ति पा ली है। हरि का नाम–सिमरन करने से ही सत्संगति द्वारा प्रभु से मिलन होता है॥ २॥ मनुष्य यदि लाखों स्त्रियों का भोग कर ले, सम्पूर्ण सृष्टि पर राज्य कर ले। तब भी बिना सतिगुरु के आत्मिक सुख नहीं मिलता तथा मनुष्य पुनः पुनः योनियों में पड़ता है॥ ३॥ जिन्होंने हरि नाम रूपी हार अपने गले में पहन लिया तथा गुरु–चरणों में मन को लीन किया है। उनके पीछे ऋद्धि –सिद्धि आदि सम्पूर्ण शक्तियाँ फिरती हैं, किन्तु उन्हें

इन सब की तिनका मात्र भी लालसा नहीं है॥ ४॥ जो ईश्वर को अच्छा लगे वही होता है, अन्य कुछ भी नहीं किया जा सकता। नानक देव जी कथन करते हैं कि हे प्रभु ! मैं आपके नाम–सिमरन द्वारा ही जीवित रहता हूँ, इसलिए आप मुझे शांत स्वभाव प्रदान कीजिए॥ ५॥ २॥ ३५॥

सिरीरागु महला ३ घरु १ ॥ जिस ही की सिरकार है तिस ही का सभु कोइ ॥ गुरमुखि कार कमावणी सचु घटि परगटु होइ ॥ अंतरि जिस कै सचु वसै सचे सची सोइ ॥ सचि मिले से न विछुड़हि तिन निज घरि वासा होइ ॥ १ ॥ मेरे राम मै हरि बिनु अवरु न कोइ ॥ सतगुरु सचु प्रभु निरमला सबदि मिलावा होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सबदि मिलै सो मिलि रहै जिस नउ आपे लए मिलाइ ॥ दूजै भाइ को ना मिलै फिरि फिरि आवै जाइ ॥ सभ महि इकु वरतदा एको रहिआ समाइ ॥ जिस नउ आपि दइआलु होइ सो गुरमुखि नामि समाइ ॥ २ ॥ पड़ि पड़ि पंडित जोतकी वाद करहि बीचारु ॥ मति बुधि भवी न बुझई अंतरि लोभ विकारु ॥ लख चउरासीह भरमदे भ्रमि भ्रमि होइ खुआरु ॥ पूरबि लिखिआ कमावणा कोइ न मेटणहारु ॥ ३ ॥ सतगुर की सेवा गाखड़ी सिरु दीजै आपु गवाइ ॥ सबदि मिलहि ता हरि मिलै सेवा पवै सभ थाइ ॥ पारसि परसिऐ पारसु होइ जोती जोति समाइ ॥ जिन कउ पूरबि लिखिआ तिन सतगुरु मिलिआ आइ ॥ ४ ॥ मन भुखा भुखा मत करहि मत तू करहि पूकार ॥ लख चउरासीह जिनि सिरी सभसै देइ अधारु ॥ निरभउ सदा दइआलु है सभना करदा सार ॥ नानक गुरमुखि बुझीऐ पाईऐ मोख दुआरु ॥ ५ ॥ ३ ॥ ३६ ॥

जिस परमेश्वर की यह सृष्टि रूपी सरकार है, प्रत्येक जीव उसका ही दास है। गुरु के उपदेशानुसार जिसने भी सद्कर्म किए हैं, उसके हृदय में सत्य स्वरूप परमात्मा प्रकट हुआ है। जिसके हृदय में सत्य विद्यमान है, उस गुरमुख व्यक्ति की सच्ची शोभा होती है। जब जीव सत्य स्वरूप परमेश्वर के साथ मिल जाता है, तो फिर वह उससे कभी नहीं बिछुड़ता क्योंकि उसका आत्म–स्वरूप में निवास हो जाता है॥ १॥ हे मेरे राम! परमेश्वर के बिना मेरा अन्य कोई नहीं है। परन्तु सत्य–स्वरूप एवं पवित्र परमात्मा के साथ मिलन सतिगुरु के उपदेश द्वारा ही होता है॥ १॥ रहाउ॥ जो जीव गुरु के उपदेश को ग्रहण करते हैं, वे परमात्मा से मिल पाते हैं, लेकिन गुरु के उपदेश को भी वही प्राप्त करता है, जिस पर स्वयं परमात्मा कृपा करता है। द्वैत–भाव रखने वाले को परमात्मा नहीं मिलता तथा वह जीव इस संसार में पुनः पुनः आता–जाता रहता है। समस्त प्राणियों में वह एक ही परमात्मा व्याप्त है और सभी जगह वही समाया हुआ है। जिस पर वह स्वयं कृपालु होता है, वही गुरुमुख जीव नाम–सिमरन में लीन होता है॥ २॥ विद्वान तथा ज्योतिषी लोग ग्रंथों को पढ़–पढ़ कर वाद–विवाद निमित्त विचार करते हैं। ऐसे लोगों की बुद्धि तथा विवेक भटक जाते हैं और वे यह नहीं समझते कि उनके अंतर्मन में लोभ का विकार है। वे चौरासी लाख योनियों में भटकते रहते हैं और भटक–भटक कर अपमानित होते हैं। पूर्व कर्मानुसार जो लेख भाग्य में लिखे हैं, उन्हें भोगना ही होगा, उन्हें कोई नहीं मिटा सकता॥ ३॥ सतिगुरु की सेवा करना अति विषम है, इस कार्य के लिए सिर और अहंत्व का त्याग करना पड़ता है। गुरु की सेवा करते हुए जो गुरु–उपदेश प्राप्त होता है उसी से प्रभु–प्राप्ति संभव है तब जाकर कहीं सेवा सफल होती है। गुरु रूपी पारस के संकर्षण से जीव पारस हो जाता है तथा आत्मिक ज्योति परम ज्योति में अभेद हो जाती है। पूर्व–जन्म के कर्मानुसार प्रारब्ध में जिनके लिखा है, उन्हें सतिगुरु आकर मिला है॥ ४॥ हे जीव ! तुम ऐसी बात मत कहो कि मैं भूखा हूँ, मैं भूखा हूँ और न ही चीख–चीख कर पुकार करो। चौरासी लाख योनियों के रूप में जिसने सृष्टि की रचना की है, वही परमात्मा समस्त जीवों को आश्रय देता है। भय–रहित परमात्मा सदैव

दयालु रहा है, वह सभी की रक्षा करता है। नानक देव जी कथन करते हैं कि यह सब क्रीड़ा गुरुमुख जीव ही समझता है और वही मोक्ष—द्वार को प्राप्त करता है॥ ५॥ ३॥ ३६॥

सिरीरागु महला ३ ॥ जिनी सुणि कै मंनिआ तिना निज घरि वासु ॥ गुरमती सालाहि सचु हरि पाइआ गुणतासु ॥ सबदि रते से निरमले हउ सद बलिहारै जासु ॥ हिरदै जिन कै हरि वसै तितु घटि है परगासु ॥ १ ॥ मन मेरे हरि हरि निरमलु धिआइ ॥ धुरि मसतकि जिन कउ लिखिआ से गुरमुखि रहे लिव लाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि संतहु देखहु नदरि करि निकटि वसै भरपूरि ॥ गुरमति जिनी पछाणिआ से देखहि सदा हदूरि ॥ जिन गुण तिन सद मनि वसै अउगुणवंतिआ दूरि ॥ मनमुख गुण तै बाहरे बिनु नावै मरदे झूरि ॥ २ ॥ जिन सबदि गुरू सुणि मंनिआ तिन मनि धिआइआ हरि सोइ ॥ अनदिनु भगती रतिआ मनु तनु निरमलु होइ ॥ कूड़ा रंगु कसुंभ का बिनसि जाइ दुखु रोइ ॥ जिसु अंदरि नाम प्रगासु है ओहु सदा सदा थिरु होइ ॥ ३ ॥ इहु जनमु पदारथु पाइ कै हरि नामु न चेतै लिव लाइ ॥ पगि खिसिऐ रहणा नही आगै ठउरु न पाइ ॥ ओह वेला हथि न आवई अंति गइआ पछुताइ ॥ जिसु नदरि करे सो उबरै हरि सेती लिव लाइ ॥ ४ ॥ देखा देखी सभ करे मनमुखि बूझ न पाइ ॥ जिन गुरमुखि हिरदा सुधु है सेव पई तिन थाइ ॥ हरि गुण गावहि हरि नित पड़हि हरि गुण गाइ समाइ ॥ नानक तिन की बाणी सदा सचु है जि नामि रहे लिव लाइ ॥ ५ ॥ ४ ॥ ३७ ॥

जिन जीवों ने गुरु—उपदेश श्रवण करके उसका चिन्तन किया है, उनका निज—स्वरूप घर में वास हुआ है। जिन्होंने गुरु—उपदेश ग्रहण करके सत्य परमात्मा की स्तुति की है, उन्होंने गुण—निधान हरि को प्राप्त किया है। जो गुरुओं की वाणी में लीन हैं, वे पवित्रात्मा हैं और मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ। जिनके हृदय में हरि का निवास है, उनके हृदय में ज्ञान रूपी प्रकाश होता है॥ १॥ हे मेरे मन! उस पवित्र प्रभु का नाम—सुमिरन कर। जिनके मस्तिष्क पर आदि से ही प्रभु का नाम सुमिरन लिखा हुआ है, वे गुरुमुख बनकर उसमें लीन हो जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ हे संत जनो! अपनी दिव्य दृष्टि से देखो कि वह परमेश्वर परिपूर्ण होकर सभी के अंतःकरण में व्याप्त है। जिन्होंने गुरु—उपदेश के मार्ग पर चल कर उस परमेश्वर को पहचाना है, वे प्रायः उसे अपने समक्ष ही देखते हैं। जो सद्‌गुणी जीव हैं, उनके हृदय में सदा हरि वास करता है, अवगुणी जीवों से वह दूर ही रहता है। स्वेच्छाचारी (मनमुख) जीव गुण—रहित होते हैं और वे बिना नाम—सुमिरन किए यूं ही दुखी होकर मरते हैं॥ २॥

जिन्होंने गुरु—उपदेश को सुन कर उसको मान लिया है, उन्होंने ही उस हरि—परमात्मा को हृदय में स्मरण किया है। प्रतिदिन भक्ति में अनुरक्त होने के कारण उनका तन—मन पवित्र हो जाता है। (गुरु—वाणी में भौतिक पदार्थों की तुलना कुसुम्भ—पुष्प के साथ की गई है। अर्थात् विषयों का आनन्द कुसुम्भ पुष्पवत् शीघ्र नष्ट हो जाने वाला है) जिस प्रकार कुसुम्भ पुष्प का रंग अस्थिर होता है उसी प्रकार भौतिक पदार्थ भी अस्थिर हैं, उनका नाश हो जाने से जीव दुख में व्याकुल होकर रोता है। जिसके हृदय में नाम का प्रकाश है, वह सदा—सदा के लिए प्रभु में स्थिर होता है॥ ३॥ यह मानव—जन्म रूपी पदार्थ पाकर जो जीव एकाग्रचित होकर प्रभु—नाम को स्मरण नहीं करता। वह श्वास रूपी पांव फिसलने के कारण इस संसार में भी नहीं रहता और उसे परलोक में भी ठिकाना नहीं मिलता। फिर यह मानव—जन्म का समय हाथ नहीं लगता तथा अंत में प्रायश्चित करता हुआ इस संसार से चला जाता है। जिन पर परमेश्वर की कृपा होती है, वे परमात्मा में लिवलीन होकर आवागमन के चक्र से बच जाते हैं॥ ४॥ एक—दूसरे को देख कर तो सभी नाम—सुमिरन करने लगते हैं, लेकिन स्वेच्छाचारी इसे समझ नहीं पाता। जिन गुरुमुख जीवों का हृदय पवित्र है, उनकी उपासना

सफल होती है। ऐसे जीव कीर्तन द्वारा हरि का गुणगान करते हैं और धर्म—ग्रंथों में हरि के गुणों को पढ़ते हैं तथा हरि के गुणों को गाते हुए उसी में समाधिस्थ हो जाते हैं। नानक देव जी कथन करते हैं कि जो जीव प्रभु—नाम में लिवलीन रहते हैं, उनकी वाणी सदा सत्य होती है॥ ५॥ ४॥ ३७॥

सिरीरागु महला ३ ॥ जिनी इक मनि नामु धिआइआ गुरमती वीचारि ॥ तिन के मुख सद उजले तितु सचै दरबारि ॥ ओइ अंम्रितु पीवहि सदा सदा सचै नामि पिआरि ॥ १ ॥ भाई रे गुरमुखि सदा पति होइ ॥ हरि हरि सदा धिआईऐ मलु हउमै कढै धोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख नामु न जाणनी विणु नावै पति जाइ ॥ सबदै सादु न आइओ लागे दूजै भाइ ॥ विसटा के कीड़े पवहि विचि विसटा से विसटा माहि समाइ ॥ २ ॥ तिन का जनमु सफलु है जो चलहि सतगुर भाइ ॥ कुलु उधारहि आपणा धंनु जणेदी माइ ॥ हरि हरि नामु धिआईऐ जिस नउ किरपा करे रजाइ ॥ ३ ॥ जिनी गुरमुखि नामु धिआइआ विचहु आपु गवाइ ॥ ओइ अंदरहु बाहरहु निरमले सचे सचि समाइ ॥ नानक आए से परवाणु हहि जिन गुरमती हरि धिआइ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ३८ ॥

जिन्होंने भी गुरु उपदेशानुसार एकाग्र मन से प्रभु के नाम का सुमिरन किया है। इस सत्य स्वरूप परमात्मा के दरबार में उनके मुँह सदा उज्ज्वल होते हैं, अर्थात् वे प्रभु दरबार में सम्मानित होते हैं। वे ही गुरुमुख जीव सत्य नाम के साथ प्रीत करके सदैव ब्रह्मानंद रूपी अमृत—पान करते हैं॥ १॥ हे भाई ! गुरुमुख जीवों का सदा सम्मान होता है। हरि प्रभु का नाम—सुमिरन सदा करें तो वह अहंकार रूपी मैल हृदय से धोकर निकाल देता है॥ १॥ रहाउ॥ स्वेच्छाचारी जीव नाम—सुमिरन के बारे में नहीं जानता तथा नाम—सुमिरन के बिना सम्मान नष्ट हो जाता है। ऐसे जीवों को द्वैत—भाव में लिप्त होने के कारण गुरु—शिक्षा का रस अनुभव नहीं होता। जिस प्रकार विष्ठा के कीड़े विष्ठा में ही पड़े रहते हैं, और वही पर ही मर जाते हैं (उसी प्रकार स्वेच्छाचारी जीव भी विषय—विकारों की गंदगी में लिप्त रह कर अंत में नरकों की गंदगी में समा जाता है)॥ २॥ उन जीवों का जन्म सफल है जो सतिगुरु के विचारानुसार चलते हैं। वह स्वयं ही मुक्त नहीं होते, बल्कि अपने कई कुटुम्ब भी मुक्त कर लेते हैं, ऐसे जीवों की जन्मदात्री माँ धन्य है। सो हे भाई ! परम पिता परमेश्वर का नाम—सुमिरन करो, किन्तु नाम सुमिरन भी वही जीव कर सकता है, जिस पर वह परमात्मा कृपा करता है॥ ३॥ जिन गुरुमुख जीवों ने अहं—भाव त्याग कर नाम—सुमिरन किया है। वे अन्दर—बाहर से (अंतर्मन व तन से) निर्मल हैं और निश्चित ही उस सत्य स्वरूप परमात्मा में अभेद हो रहे हैं। नानक देव जी कथन करते हैं कि उन गुरुमुख जीवों का संसार में आना स्वीकृत है, जिन्होंने गुरु की शिक्षा द्वारा प्रभु का नाम—सुमिरन किया है॥ ४॥ ५॥ ३८॥

सिरीरागु महला ३ ॥ हरि भगता हरि धनु रासि है गुर पूछि करहि वापारु ॥ हरि नामु सलाहनि सदा सदा वखरु हरि नामु अधारु ॥ गुरि पूरै हरि नामु द्रिड़ाइआ हरि भगता अतुटु भंडारु ॥ १ ॥ भाई रे इसु मन कउ समझाइ ॥ ए मन आलसु किआ करहि गुरमुखि नामु धिआइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि भगति हरि का पिआरु है जे गुरमुखि करे बीचारु ॥ पाखंडि भगति न होवई दुबिधा बोलु खुआरु ॥ सो जनु रलाइआ ना रलै जिसु अंतरि बिबेक बीचारु ॥ २ ॥ सो सेवकु हरि आखीऐ जो हरि राखै उरि धारि ॥ मनु तनु सउपे आगै धरे हउमै विचहु मारि ॥ धनु गुरमुखि सो परवाणु है जि कदे न आवै हारि ॥ ३ ॥ करमि मिलै ता पाईऐ विणु करमै पाइआ न जाइ ॥ लख चउरासीह तरसदे जिसु मेले सो मिलै हरि आइ ॥ नानक गुरमुखि हरि पाइआ सदा हरि नामि समाइ ॥ ४ ॥ ६ ॥ ३९ ॥

हरि भक्तों के पास हरि की नाम रूपी पूँजी है और वे गुरु से पूछ कर नाम का व्यापार करते हैं, वे सदैव परमात्मा का नाम स्मरण करते हैं और वे हरिनाम रूपी सौदे के आश्रय में ही रहते हैं। पूर्ण गुरु ने उन्हें परमात्मा का नाम दृढ़ करवाया है, इसलिए उनका अक्षय भण्डार नाम ही है॥ १॥ हे भाई! इस चंचल मन को समझाओ। यह आलस्य क्यों करता है, गुरु के द्वारा इस मन को नाम–स्मरण में लीन करो॥ १॥ रहाउ॥ इन पंक्तियों में गुरु जी हरि–भक्ति का वृत्तांत देते हुए कथन करते हैं कि यदि कोई जीव गुरु उपदेश द्वारा चिन्तन करे कि हरि भक्ति क्या है? तो प्रत्युत्तर है कि हरि–भक्ति हरि–परमेश्वर का प्रेम है। छल–कपट करने से भक्ति नहीं हो सकती, छल–कपट से किए वचन दुविधापूर्ण अर्थात्–द्वैत–भाव वाले होते हैं, जो जीव को अपमानित करते हैं। जिसके अंतर्मन में ज्ञान–विवेक होता है, वह गुरुमुख जीव किसी के मिलाने से नहीं मिलता॥ २॥ वही जीव परमेश्वर का सेवक कहलाता है, जो प्रायः परमात्मा को हृदय में धारण करके रखता है। इसके अतिरिक्त अंतर्मन से अहंत्व का त्याग करके अपना तन–मन उस परमात्मा को अर्पित कर देता है। वह गुरुमुख जीव धन्य एवं परमात्मा के द्वार पर स्वीकृत होता है, जो विषय–विकारों के समक्ष कभी अपनी पराजय स्वीकार करके नहीं आता॥ ३॥ परमात्मा अपनी कृपा से ही किसी जीव को मिले तो उसे प्राप्त किया जा सकता, अन्यथा उसकी कृपा के बिना उसे प्राप्त नहीं किया जा सकता है। चौरासी लाख योनियों के जीव अर्थात्–सृष्टि के समस्त प्राणी उस परमात्मा के मिलन को तरस रहे हैं, किन्तु जिसे वह स्वयं दया–दृष्टि करके मिलाता है, वही परमात्मा से आकर मिल सकता है। नानक देव जी कथन करते हैं जो गुरु उपदेशानुसार हरि–नाम में लीन हुए हैं, उन्होंने ही हरि–प्रभु को प्राप्त किया है॥४॥६॥३६॥

सिरीरागु महला ३ ॥ सुख सागरु हरि नामु है गुरमुखि पाइआ जाइ ॥ अनदिनु नामु धिआईऐ सहजे नामि समाइ ॥ अंदरु रचै हरि सच सिउ रसना हरि गुण गाइ ॥ १ ॥ भाई रे जगु दुखीआ दूजै भाइ ॥ गुर सरणाई सुखु लहहि अनदिनु नामु धिआइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साचे मैलु न लागई मनु निरमलु हरि धिआइ ॥ गुरमुखि सबदु पछाणीऐ हरि अंम्रित नामि समाइ ॥ गुर गिआनु प्रचंडु बलाइआ अगिआनु अंधेरा जाइ ॥ २ ॥ मनमुख मैले मलु भरे हउमै त्रिसना विकारु ॥ बिनु सबदै मैलु न उतरै मरि जंमहि होइ खुआरु ॥ धातुर बाजी पलचि रहे ना उरवारु न पारु ॥ ३ ॥ गुरमुखि जप तप संजमी हरि कै नामि पिआरु ॥ गुरमुखि सदा धिआईऐ एकु नामु करतारु ॥ नानक नामु धिआईऐ सभना जीआ का आधारु ॥ ४ ॥ ७ ॥ ४० ॥

हरि–नाम सुखों का सागर है तथा इसे गुरु के उपदेशानुसार ही पाया जा सकता है। प्रतिदिन प्रभु–नाम का चिंतन करने से जीव स्वाभाविक ही परमेश्वर में समा जाता है। यदि जीव का अंतर्मन सत्य स्वरूप परमात्मा के साथ मिल जाए तो जिह्वा हरि–प्रभु का गुणगान करती है॥ १॥ हे भाई! द्वैत–भाव के कारण सम्पूर्ण जगत् दुखी हो रहा है। यदि गुरु की शरण में आकर जीव नित्य प्रति नाम–स्मरण करता रहे तो वह आत्मिक सुख प्राप्त करता है॥ १॥ रहाउ॥ ऐसे सत्य प्राणी को कभी पापों की मैल नहीं लगती और वह शुद्ध मन से हरि–प्रभु का नाम–सिमरन करता है। गुरु–उपदेश को पहचानने से हरि–प्रभु के अमृत रूपी नाम में समाया जा सकता है। जिस जीव ने अपने हृदय में तीक्ष्ण ज्ञान का दीपक जला लिया तो उसके हृदय से अज्ञानता का अंधेरा नष्ट हो जाता है॥ २॥ स्वेच्छाचारी जीव अहंकार, तृष्णादि विकारों की मैल से मलिन हो रहे हैं। गुरु के उपदेश बिना यह मैल कभी नहीं उतरती, ऐसे में जीव आवागमन के चक्र में फँस कर पीड़ित होता है। वह मायावी क्रीड़ा में खचित हुए रहते हैं और इस कारण वह न तो इस संसार का सुख भोग पाते हैं तथा न ही परलोक

का आनंद ले पाते हैं॥ ३॥ गुरुमुख जीव जप, तप व संयम में रह कर हरि–प्रभु के नाम से प्रीति करता है। ऐसा जीव सदैव ईश्वर के एक नाम का सिमरन करता है। नानक देव जी कथन करते हैं कि समस्त प्राणियों का आसरा केवल नाम सिमरन ही है॥ ४॥ ७॥ ४०॥

स्रीरागु महला ३ ॥ मनमुखु मोहि विआपिआ बैरागु उदासी न होइ ॥ सबदु न चीनै सदा दुखु हरि दरगहि पति खोइ ॥ हउमै गुरमुखि खोईऐ नामि रते सुखु होइ ॥ १ ॥ मेरे मन अहिनिसि पूरि रही नित आसा ॥ सतगुरु सेवि मोहु परजलै घर ही माहि उदासा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि करम कमावै बिगसै हरि बैरागु अनंदु ॥ अहिनिसि भगति करे दिनु राती हउमै मारि निचंदु ॥ वडै भागि सतसंगति पाई हरि पाइआ सहजि अनंदु ॥ २ ॥ सो साधू बैरागी सोई हिरदै नामु वसाए ॥ अंतरि लागि न तामसु मूले विचहु आपु गवाए ॥ नामु निधानु सतगुरू दिखालिआ हरि रसु पीआ अघाए ॥ ३ ॥ जिनि किनै पाइआ साधसंगती पूरै भागि बैरागि ॥ मनमुख फिरहि न जाणहि सतगुरु हउमै अंदरि लागि ॥ नानक सबदि रते हरि नामि रंगाए बिनु भै केही लागि ॥ ४ ॥ ८ ॥ ४१ ॥

स्वेच्छाचारी जीव माया के मोह में फँसा होने के कारण उदासीनता एवं वैराग्य प्राप्त नहीं कर सकता। वह गुरु–उपदेश के रहस्य को नहीं समझता, इसलिए वह परमात्मा के दर पर अपनी प्रतिष्ठा खो देता है। यदि वह गुरुमुख होकर अहंत्व का त्याग करके परमात्मा के नाम में लीन होता है, तभी उसे आत्मिक आनंद की प्राप्ति होगी॥ १॥ हे प्राणी मन ! तुझ में सदैव भौतिक पदार्थों की कामना ही भरी रहती है। परिपूर्ण सतिगुरु की सेवा करने से यह मोह पूरी तरह सड़ जाता है तथा जीव गृहस्थ जीवन में ही उदासीन रहता है॥ १॥ रहाउ॥ गुरु की शरण लेकर यदि जीव धर्म कार्य करे तो वह परमात्मा की प्रसंनता प्राप्त करता है तथा वैराग्य का आनंद उठाता है। वह अपने अंतर्मन से अहंत्व का त्याग करके निश्चिंत होकर नित्य–प्रति दिन–रात ईश्वर की उपासना करता है। ऐसा जीव सौभाग्य से ही सत्संगति पाता है और वह स्वाभाविक ही परमात्मा को प्राप्त कर लेता है॥ २॥ वास्तविक तौर पर साधू और वैरागी वही है जो हृदय में प्रभु–नाम को धारण कर ले। उसके मन में तनिक भी तामसिकता नहीं रहती तथा वह अंतर्मन से अहंत्व को मिटा लेता है। प्रभु का यह नाम रूपी खज़ाना सतिगुरु ने ही दिखाया है और हरि–प्रभु का नाम–रस पीकर वह तृप्त हो गए॥ ३॥ जिस किसी ने भी हरि–नाम को प्राप्त किया तो उसने सौभाग्य, वैराग्य तथा सत्संगति द्वारा ही पाया है। भौतिक पदार्थों में आसक्त जीव (मनमुख) सतिगुरु को नहीं पहचानता अर्थात् वह गुरु का उपदेश ग्रहण नहीं करता, क्योंकि उसके अंदर अहंकार प्रबल होता है तथा वह योनियों में ही भटकता रहता है। नानक देव जी कथन करते हैं कि गुरु के उपदेश में अनुरक्त जीव परमात्मा के नाम में रंग गए तथा यह रंग प्रभु के भय के बिना नहीं लग सकता॥ ४॥ ८॥ ४१॥

सिरीरागु महला ३ ॥ घर ही सउदा पाईऐ अंतरि सभ वथु होइ॥ खिनु खिनु नामु समालीऐ गुरमुखि पावै कोइ ॥ नामु निधानु अखुटु है वडभागि परापति होइ॥ १ ॥ मेरे मन तजि निंदा हउमै अहंकारु ॥ हरि जीउ सदा धिआइ तू गुरमुखि एकंकारु॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखा के मुख उजले गुर सबदी बीचारि ॥ हलति पलति सुखु पाइदे जपि जपि रिदै मुरारि ॥ घर ही विचि महलु पाइआ गुर सबदी वीचारि ॥ २ ॥ सतगुर ते जो मुह फेरहि मथे तिन काले ॥ अनदिनु दुख कमावदे नित जोहे जम जाले ॥ सुपनै सुखु न देखनी बहु चिंता परजाले ॥ ३ ॥ सभना का दाता एकु है आपे बखस करेइ ॥ कहणा किछू न जावई जिसु भावै तिसु देइ ॥ नानक गुरमुखि पाईऐ आपे जाणै सोइ ॥ ४ ॥ ९ ॥ ४२ ॥

शरीर (घर) द्वारा ही नाम रूपी सौदा प्राप्त होता है, क्योंकि अंतर्मन में समस्त पदार्थ व्याप्त हैं। लेकिन यह सौदा किसी विशेष गुरुमुख जीव को प्रतिक्षण नाम–सिमरन करने से ही प्राप्त होता है। प्रभु का नाम–भण्डार अक्षुण्ण है और यह सौभाग्य से ही प्राप्त होता है॥ १॥ हे प्राणी मन! अपने भीतर से निंदा, अहंकार और गर्व का त्याग कर दे। तुम गुरुमुख होकर परमेश्वर हरि–प्रभु को स्मरण करो॥ १॥ रहाउ॥ जो गुरुमुख जीव गुरु उपदेश ग्रहण करके उस पर विचार करता है, वह लोक–परलोक में प्रतिष्ठा को प्राप्त होता है। वह अपने हृदय में मुरारि के नाम को जपने से मृत्युलोक व परलोक में सुखों को प्राप्त करता है। गुरु के उपदेश का चिन्तन करने से वह गृह रूपी अंतः करण में परमात्मा के स्वरूप को पा लेता है॥ २॥ जो जीव सतिगुरु से परामुख होते हैं उनके मुख कलंकित होते हैं। वे प्रतिदिन कष्ट भोगते हैं और नित्य यमों के जाल में फँसते हैं। उनको स्वप्न में भी सुख प्राप्त नहीं होता तथा कई तरह की चिंताग्नि उन्हें पूर्णतया जला देती है॥ ३॥ समस्त प्राणियों को देने वाला ईश्वर एक ही है और वह स्वयं ही अनुग्रह करता है। उसके अनुग्रह के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता, क्योंकि जिसे चाहे वह देता है। नानक देव जी कथन करते हैं कि गुरु की शरण में जाकर जो प्रभु को पाने का उद्यम करता है, वही उसके आनंद को जान सकता है॥ ४॥ ६॥ ४२॥

सिरीरागु महला ३ ॥ सचा साहिबु सेवीऐ सचु वडिआई देइ ॥ गुर परसादी मनि वसै हउमै दूरि करेइ ॥ इहु मनु धावतु ता रहै जा आपे नदरि करेइ ॥ १ ॥ भाई रे गुरमुखि हरि नामु धिआइ ॥ नामु निधानु सद मनि वसै महली पावै थाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख मनु तनु अंधु है तिस नउ ठउर न ठाउ ॥ बहु जोनी भउदा फिरै जिउ सुंञैं घरि काउ ॥ गुरमती घटि चानणा सबदि मिलै हरि नाउ ॥ २ ॥ त्रै गुण बिखिआ अंधु है माइआ मोह गुबार ॥ लोभी अन कउ सेवदे पड़ि वेदा करै पूकार ॥ बिखिआ अंदरि पचि मुए ना उरवारु न पारु ॥ ३ ॥ माइआ मोहि विसारिआ जगत पिता प्रतिपालि ॥ बाझहु गुरू अचेतु है सभ बधी जमकालि ॥ नानक गुरमति उबरे सचा नामु समालि ॥ ४ ॥ १० ॥ ४३ ॥

सत्य परमात्मा की सेवा–उपासना की जाए तो वह सत्य स्वरूप रूपी सम्मान प्रदान करता है। गुरु की कृपा द्वारा वह हृदय में वास करता है और अहंकार को दूर करता है। यह मन भटकने से तभी बच सकता है, जब वह परमेश्वर स्वयं कृपा–दृष्टि करता है॥ १॥ हे भाई! गुरु के उपदेश द्वारा हरि–प्रभु के नाम का सिमरन करो। यदि नाम–भण्डार सदा के लिए मन में स्थिर हो जाए तो जीव उस प्रभु के स्वरूप में स्थान प्राप्त कर लेता है॥ १॥ रहाउ॥ स्वेच्छाचारी जीव का हृदय व शरीर अविद्या के कारण अन्धा हो रहा है, इसलिए उसे ठहरने के लिए कोई आश्रय नहीं होता। वह अनेकानेक योनियों में भटकता फिरता है, जैसे सूने घर में कौवा रहता हो। गुरु की शिक्षा द्वारा हृदय में ज्ञान का प्रकाश होता है और वाणी द्वारा परमेश्वर का नाम प्राप्त होता है॥ २॥ संसार में त्रिगुणी (सत्त्व, रज, तम) विषय–विकारों का अंधेरा छाया हुआ है और माया के मोह की धूलि चढ़ी हुई है। लोभी जीव वेद आदि धर्म ग्रंथों को पढ़–पढ़ कर परमेश्वर को पुकारते तो हैं, लेकिन द्वैत–भाव के कारण वह एकेश्वर के अतिरिक्त किसी अन्य को स्मरण करते हैं। विषय–विकारों की अग्नि में जल कर वे मर गए तथा वह न इस संसार के सुख भोग सके और न ही परलोक में स्थान पा सके॥ ३॥ उन्होंने माया–मोह में लिप्त होकर उस प्रतिपालक परमात्मा को विस्मृत कर दिया है। सम्पूर्ण सृष्टि गुरु के बिना चेतना रहित है और वह यमों के जाल में फँसी हुई है। नानक देव जी कथन करते हैं कि गुरु के उपदेशानुसार सत्य–नाम का सिमरन करके ही जीव यमों के बंधन से बच सकते हैं॥ ४॥ १०॥ ४३॥

सिरीरागु महला ३ ॥ त्रै गुण माइआ मोहु है गुरमुखि चउथा पदु पाइ ॥ करि किरपा मेलाइअनु हरि नामु वसिआ मनि आइ ॥ पोतै जिन कै पुंनु है तिन सतसंगति मेलाइ ॥ १ ॥ भाई रे गुरमति साचि

रहाउ ॥ साचो साचु कमावणा साचै सबदि मिलाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनी नामु पछाणिआ तिन विटहु बलि जाउ ॥ आपु छोडि चरणी लगा चला तिन कै भाइ ॥ लाहा हरि हरि नामु मिलै सहजे नामि समाइ ॥ २ ॥ बिनु गुर महलु न पाईऐ नामु न परापति होइ ॥ ऐसा सतगुरु लोड़ि लहु जिदू पाईऐ सचु सोइ ॥ असुर संघारै सुखि वसै जो तिसु भावै सु होइ ॥ ३ ॥ जेहा सतगुरु करि जाणिआ तेहो जेहा सुखु होइ ॥ एहु सहसा मूले नाही भाउ लाए जनु कोइ ॥ नानक एक जोति दुइ मूरती सबदि मिलावा होइ ॥ ४ ॥ ११ ॥ ४४ ॥

गुरुमुख जीवों ने त्रिगुणी माया का मोह त्याग कर तुरीयावस्था (चौथा पद) को प्राप्त किया है। परमात्मा ने कृपा करके जिस जीव को अपने साथ मिलाया है, उसके हृदय में ही उस हरि–प्रभु का नाम बसा है। जिनके भाग्य रूपी खज़ाने में पुण्य जमा है, प्रभु उनको सत्संगति में मिलाता है॥ १॥ हे भाई! गुरु की शिक्षा द्वारा सत्य में निवास करो। केवल सत्य की साधना करो, जिससे उस सत्य स्वरूप से मिलन संभव हो सके॥ १॥ रहाउ॥ जिन्होंने पारब्रह्म परमेश्वर के नाम को पहचाना है, उन पर मैं बलिहारी जाता हूँ। अहंत्व का त्याग करके उनके चरणों में पड़ जाऊँ और उनकी इच्छानुसार चलूं। क्योंकि उनकी संगति में रह कर नाम–सिमरन का लाभ मिलता है, तथा सहज ही नाम की प्राप्ति हो जाती है॥ २॥ किन्तु गुरु के बिना नाम की प्राप्ति नहीं हो सकती और नाम के बिना सत्य स्वरूप को नहीं पाया जा सकता। फिर कोई ऐसा सत्य गुरु ढूँढ लो, जिसके द्वारा वह सत्य परमात्मा प्राप्त किया जाए। जो जीव गुरु के मार्गदर्शन में सत्य परमात्मा को पा लेता है उसके काम, क्रोध, लोभ रूपी दैत्यों का संहार हो जाता है और वह आत्मिक आनंद का सुख–भोग करता है। जो उस परमात्मा को अच्छा लगता है, वही होता है॥ ३॥ जैसी सतिगुरु में श्रद्धा होगी, वैसा सुख–फल जीव को प्राप्त होगा। इस तथ्य में बिल्कुल भी संदेह नहीं है, निस्संकोच कोई भी जीव सतिगुरु से प्रेम करके देख ले। नानक देव जी कथन करते हैं कि अकाल पुरुष एवं गुरु बेशक दो रूप दिखाई देते हैं, परंतु इन दोनों में ज्योति एक ही है, गुरु के उपदेश द्वारा ही अकाल–पुरुष से मिलन संभव है॥ ४॥ ११॥ ४४॥

सिरीरागु महला ३ ॥ अंम्रितु छोडि बिखिआ लोभाणे सेवा करहि विडाणी ॥ आपणा धरमु गवावहि बूझहि नाही अनदिनु दुखि विहाणी ॥ मनमुख अंध न चेतही डूबि मुए बिनु पाणी ॥ १ ॥ मन रे सदा भजहु हरि सरणाई ॥ गुर का सबदु अंतरि वसै ता हरि विसरि न जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इहु सरीरु माइआ का पुतला विचि हउमै दुसटी पाई ॥ आवणु जाणा जंमणु मरणा मनमुखि पति गवाई ॥ सतगुरु सेवि सदा सुखु पाइआ जोती जोति मिलाई ॥ २ ॥ सतगुर की सेवा अति सुखाली जो इछे सो फलु पाए ॥ जतु सतु तपु पवितु सरीरा हरि हरि मंनि वसाए ॥ सदा अनंदि रहै दिनु राती मिलि प्रीतम सुखु पाए ॥ ३ ॥ जो सतगुर की सरणागती हउ तिन कै बलि जाउ ॥ दरि सचै सची वडिआई सहजे सचि समाउ ॥ नानक नदरी पाईऐ गुरमुखि मेलि मिलाउ ॥ ४ ॥ १२ ॥ ४५ ॥

जो स्वेच्छाचारी जीव नाम–अमृत को छोड़ कर विषय–विकार रूपी विष में मोहित हैं, सत्य वाहिगुरु के अतिरिक्त अन्य कोई पार्थिव पूजा करते हैं। वे मायातीत होकर अपने मूल कर्त्तव्य से विमुख हो रहे हैं और अपने मानव–जन्म का तात्पर्य नहीं समझते तथा अपनी आयु नित्य ही दुखों में व्यतीत करते हैं। ऐसे जीव अज्ञानी होकर उस परमात्मा को स्मरण नहीं करते और वे माया में ग्रसे हुए विषय रूपी सागर में बिना जल के ही डूब कर मर रहे हैं॥ १॥ हे जीव! गुरु की शरण में रह कर हरि–प्रभु का चिन्तन करो। जब गुरु का उपदेश अंतर्मन में प्रविष्ट हो जाता है तो फिर कभी हरि–प्रभु भूल नहीं पाता॥ १॥

रहाउ॥ जीव के माया निर्मित तन में अहंकार रूपी विकार भरा हुआ है। इसलिए जीव स्वेच्छाचारी होकर जन्म–मरण के चक्र में फँस कर परमात्मा समक्ष अपनी प्रतिष्ठा को गंवा रहा है। सतिगुरु की सेवा करने से सदैव सुख की प्राप्ति होती है और आत्म–ज्योति का परमात्म–ज्योति से मिलन हो जाता है॥ २॥ सतिगुरु की सेवा अति सुखदायी है, जिससे मनवांछित फल प्राप्त होता है। सतिगुरु की सेवा के परिणामस्वरूप संयम, सत्य व तप प्राप्त होते हैं और तन पवित्र हो जाता है तथा जीव हरि–नाम को हृदय में धारण कर लेता है। हरि–प्रभु से मिलन होने पर जीव आत्मिक सुख अनुभव करता है और प्रायः रात–दिन आनंद में रहता है॥ ३॥ जो जीव सतिगुरु की शरण में आए हैं, मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ। उस सत्य–स्वरूप परमात्मा की सभा में सत्य को ही सम्मान प्राप्त होता है, ऐसा जीव सहज ही उस सत्य में समा जाता है। नानक देव जी कथन करते हैं कि परमात्मा से मिलाप तो केवल अकाल–पुरुष की कृपा–दृष्टि एवं गुरु–उपदेश द्वारा ही संभव है॥ ४॥ १२॥ ४५॥

सिरीरागु महला ३ ॥ मनमुख करम कमावणे जिउ दोहागणि तनि सीगारु ॥ सेजै कंतु न आवई नित नित होइ खुआरु ॥ पिर का महलु न पावई ना दीसै घरु बारु ॥ १ ॥ भाई रे इक मनि नामु धिआइ ॥ संता संगति मिलि रहै जपि राम नामु सुखु पाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि सदा सोहागणी पिरु राखिआ उर धारि ॥ मिठा बोलहि निवि चलहि सेजै रवै भतारु ॥ सोभावंती सोहागणी जिन गुर का हेतु अपारु ॥ २ ॥ पूरै भागि सतगुरु मिलै जा भागै का उदउ होइ ॥ अंतरहु दुखु भ्रमु कटीऐ सुखु परापति होइ ॥ गुर कै भाणै जो चलै दुखु न पावै कोइ ॥ ३ ॥ गुर के भाणे विचि अंम्रितु है सहजे पावै कोइ ॥ जिना परापति तिन पीआ हउमै विचहु खोइ ॥ नानक गुरमुखि नामु धिआईऐ सचि मिलावा होइ ॥ ४ ॥ १३ ॥ ४६ ॥

स्वेच्छाचारी जीव के लिए सद्कर्म इस प्रकार व्यर्थ होते हैं, जैसे किसी दुहागिन स्त्री के तन पर किया हुआ शृंगार व्यर्थ है। क्योंकि उसकी शय्या पर उसका स्वामी तो आता नहीं और वह नित्य ही ऐसा करके अपमानित होती है। अर्थात्–स्वेच्छाचारी जीव द्वारा नाम–सिमरन रूपी सद्कर्म करने पर परमात्मा उसके समीप नहीं आता और वह पति–परमात्मा का स्वरूप प्राप्त नहीं करता, क्योंकि उसे परमात्मा का घर–द्वार दिखाई ही नहीं देता॥ १॥ हे भाई! एकाग्र मन होकर नाम–सिमरन करो। संतों की संगति में मिल कर रहो, उस सत्संगति में नाम–स्मरण करने से आत्मिक सुख की प्राप्ति होगी॥ १॥ रहाउ॥ गुरुमुख जीव सदा सुहागिन स्त्री की भाँति होता है, क्योंकि उसने पति–परमात्मा को अपने हृदय में धारण करके रखा होता है। उसके बोल मीठे होते हैं और उसका स्वभाव विनम्र होता है, उसी कारण उस हृदय रूपी शय्या पर पति–परमात्मा का रमण प्राप्त होता है। जिनको गुरु का अनंत प्रेम प्राप्त हुआ है, वह गुरुमुख जीव सुहागिन व शोभा वाली स्त्री के समान है॥ २॥ सद्कर्मों के कारण जीव का जब भाग्योदय होता है तभी उसे सौभाग्य से सतिगुरु की प्राप्ति होती है। गुरु के मिलाप द्वारा अंतर्मन से दुख देने वाला भ्रम दूर हो जाता है तथा आत्मिक सुख प्राप्त होता है। जो जीव गुरु की आज्ञानुसार व्यवहार करता है, उसके जीवन में कभी कोई कष्ट नहीं आता॥ ३॥ गुरु की आज्ञा में नाम–अमृत होता है, उस नाम–अमृत को ज्ञान द्वारा ही पाया जा सकता है। जिस जीव ने हृदय में से अहंत्व का त्याग किया है, उसी ने गुरु द्वारा नाम–अमृत प्राप्त करके उसका पान किया है। नानक देव जी कथन करते हैं कि जो जीव गुरुमुख होकर नाम–सिमरन करते हैं, उनका सत्य–स्वरूप परमेश्वर से मिलन होता है॥ ४॥ १३॥ ४६॥

सिरीरागु महला ३ ॥ जा पिरु जाणै आपणा तनु मनु अगै धरेइ ॥ सोहागणी करम कमावदीआ सेई करम करेइ ॥ सहजे साचि मिलावड़ा साचु वडाई देइ ॥ १ ॥ भाई रे गुर बिनु भगति न होइ ॥ बिनु गुर भगति न पाईऐ जे लोचै सभु कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लख चउरासीह फेरु पइआ कामणि दूजै भाइ ॥ बिनु गुर नीद न आवई दुखी रैणि विहाइ ॥ बिनु सबदै पिरु न पाईऐ बिरथा जनमु गवाइ ॥ २ ॥ हउ हउ करती जगु फिरी ना धनु संपै नालि ॥ अंधी नामु न चेतई सभ बाधी जमकालि ॥ सतगुरि मिलिऐ धनु पाइआ हरि नामा रिदै समालि ॥ ३ ॥ नामि रते से निरमले गुर कै सहजि सुभाइ ॥ मनु तनु राता रंग सिउ रसना रसन रसाइ॥ नानक रंगु न उतरै जो हरि धुरि छोडिआ लाइ ॥ ४ ॥ १४ ॥ ४७ ॥

जब जीव रूपी स्त्री परमात्मा को अपना पति मानती है तो वह अपना सर्वस्व उसको अर्पण कर देती है। फिर जो कर्म सुहागिनें करती हैं, वही कर्म तुम भी करो। इससे स्वाभाविक ही सत्य स्वरूप परमात्मा रूपी पति से मिलाप होगा और वह परमात्मा—पति तुझे सत्य प्रतिष्ठा प्रदान करेगा॥ १॥ हे जीव! परमात्मा का चिन्तन गुरु के बिना नहीं हो सकता। बेशक प्रत्येक जीव उस परमात्मा को पाने की कामना करे, किन्तु गुरु के बिना उस परमात्मा की भक्ति प्राप्त नहीं होती॥ १॥ रहाउ॥ जीव रूपी स्त्री द्वैत—भाव में फँस कर चौरासी लाख योनियों के चक्र में भटकती है। गुरु उपदेश के बिना उसे शांति नहीं मिलती और वह दुखों में ही जीवन रूपी रात व्यतीत करती है। गुरु के शब्द बिना वह पति—परमात्मा को प्राप्त नहीं कर पाती और वह अपना जन्म यूं ही व्यर्थ गंवा देती है॥ २॥ ऐसी जीव—कामिनी 'मैं—मैं' करती हुई सम्पूर्ण संसार में भटकती फिरती है, किन्तु यह धन—सम्पत्ति किसी के साथ नहीं गई। भौतिक पदार्थों के लोभ में अंधी हुई सम्पूर्ण सृष्टि प्रभु का नाम—सिमरन नहीं करती और वह यमों के जाल में बंधी पड़ी है। सतिगुरु के मिलाप से जिसने हरि—नाम को हृदय में सम्भाला है, उसने ही सत्य पूँजी अर्जित की है॥ ३॥ जो जीव गुरु के उपदेशानुसार नाम में अनुरक्त हुए हैं, वे ही निर्मल व शांत स्वभाव वाले हुए है। उनका मन व तन प्रभु के प्रेम—रंग में अनुरक्त हुआ है और जिह्वा नाम—रस में रत हो गई। नानक देव जी कथन करते हैं कि जो रंग अकाल—पुरुष ने आरम्भ से लगा दिया है वह कभी नहीं उतरता॥ ४॥ १४॥ ४७॥

सिरीरागु महला ३ ॥ गुरमुखि क्रिपा करे भगति कीजै बिनु गुर भगति न होई ॥ आपै आपु मिलाए बूझै ता निरमलु होवै सोई ॥ हरि जीउ साचा साची बाणी सबदि मिलावा होई ॥ १ ॥ भाई रे भगतिहीणु काहे जगि आइआ ॥ पूरे गुर की सेव न कीनी बिरथा जनमु गवाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे जगजीवनु सुखदाता आपे बखसि मिलाए ॥ जीअ जंत ए किआ वेचारे किआ को आखि सुणाए ॥ गुरमुखि आपे देइ वडाई आपे सेव कराए ॥ २ ॥ देखि कुटंबु मोहि लोभाणा चलदिआ नालि न जाई ॥ सतगुरु सेवि गुण निधानु पाइआ तिस दी कीम न पाई ॥ हरि प्रभु सखा मीतु प्रभु मेरा अंते होइ सखाई ॥ ३ ॥ आपणै मनि चिति कहै कहाए बिनु गुर आपु न जाई ॥ हरि जीउ दाता भगति वछलु है करि किरपा मंनि वसाई ॥ नानक सोभा सुरति देइ प्रभु आपे गुरमुखि दे वडिआई ॥ ४ ॥ १५ ॥ ४८ ॥

सतिगुरु की कृपा हो तो प्रभु—भक्ति की जा सकती है, अन्यथा गुरु के बिना भक्ति संभव नहीं है। जो जीव स्वयं को गुरु के साथ मिला कर नाम का रहस्य समझता है तो वह निर्मल होता है। हरि—प्रभु स्वयं सत्य है, उसका नाम सत्य है, परन्तु गुरु—उपदेश द्वारा उस सत्य स्वरूप से मिलन हो सकता है॥ १॥ हे जीव! जिसने प्रभु—भक्ति नहीं की, उसका इस संसार में आना व्यर्थ है। पूर्ण

गुरु की जिसने सेवा नहीं की, उसने अपना मानव जन्म व्यर्थ गंवा लिया॥ १॥ रहाउ॥ परमात्मा स्वयं ही सांसारिक जीवों का जीवनाधार व सुखों का दाता है और वह जीवों के अवगुण क्षमा करके स्वयं में अभेद कर लेता है। ये बेचारे दीन–हीन जीव–जन्तु क्या समर्था रखते हैं और क्या कुछ कह कर सुना सकते हैं। वह परमेश्वर स्वयं ही गुरुमुख जीवों को नाम द्वारा प्रतिष्ठित करता है और स्वयं ही उन से सेवा करवाता है॥ २॥ स्वेच्छाचारी जीव अपने कुटुम्ब–मोह में लिप्त हो रहा है, किन्तु अंतकाल में किसी ने भी साथ नहीं देना। जिसने सतिगुरु की सेवा करके गुणों के खज़ाने वाले परमात्मा को प्राप्त कर लिया है, उसकी कीमत नहीं आंकी जा सकती। हरि–परमेश्वर सदैवकाल मेरा मित्र व साथी है और अंतकाल में भी वह सहायक होगा॥ ३॥ अपने मन–चित्त में कोई चाहे कहता रहे अथवा किसी अन्य से कहलाए कि मुझ में अभिमान नहीं है, किन्तु गुरु की कृपा के बिना जीव के अंतर्मन से अभिमान समाप्त नहीं होता। परमेश्वर समस्त जीवों का दाता एवं भक्त–वत्सल है, और वह स्वयं ही कृपा करके जीव के हृदय में भक्ति बसाता है। नानक देव जी कथन करते हैं कि परमात्मा स्वयं ही यश व ज्ञान देता है और स्वयं गुरु द्वारा प्रतिष्ठा प्रदान करता है अर्थात्–अकाल–पुरुष स्वयं ही गुरुमुख जीव को आत्म ज्ञान देकर इस लोक में यश तथा परलोक में प्रतिष्ठित पद प्रदान करता है॥ ४॥ १५॥ ४८॥

सिरीरागु महला ३ ॥ धनु जननी जिनि जाइआ धंनु पिता परधानु ॥ सतगुरु सेवि सुखु पाइआ विचहु गइआ गुमानु ॥ दरि सेवनि संत जन खड़े पाइनि गुणी निधानु ॥ १ ॥ मेरे मन गुरमुखि धिआइ हरि सोइ ॥ गुर का सबदु मनि वसै मनु तनु निरमलु होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करि किरपा घरि आइआ आपे मिलिआ आइ ॥ गुर सबदी सालाहीऐ रंगे सहजि सुभाइ ॥ सचै सचि समाइआ मिलि रहै न विछुड़ि जाइ ॥ २ ॥ जो किछु करणा सु करि रहिआ अवरु न करणा जाइ ॥ चिरी विछुंने मेलिअनु सतगुर पंनै पाइ ॥ आपे कार कराइसी अवरु न करणा जाइ ॥ ३ ॥ मनु तनु रता रंग सिउ हउमै तजि विकार ॥ अहिनिसि हिरदै रवि रहै निरभउ नामु निरंकार ॥ नानक आपि मिलाइअनु पूरै सबदि अपार ॥ ४ ॥ १६ ॥ ४९ ॥

वह माता धन्य है, जिसने (गुरु को) जन्म दिया और पिता भी श्रेष्ठ है। ऐसे सतिगुरु की सेवा करके जिन जीवों ने आत्मिक सुख प्राप्त किया है और अपने अंतर्मन से अभिमान को समाप्त किया है। ऐसे सद्कर्मी पुरुष के द्वार पर अनेक जिज्ञासु खड़े सेवा करते हुए गुणनिधान परमात्मा को पा रहे हैं॥ १॥ हे मेरी जीवात्मा! तुम गुरु के मुँह से उच्चारण होने वाले उपदेश द्वारा आचरण करते हुए उस अकाल–पुरुष हरि का सिमरन करो। जब गुरु–उपदेश हृदय में धारण हो जाता है तो तन व मन दोनों पवित्र हो जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ गुरु उपदेशानुसार चिन्तन करने से परमात्मा जीव पर कृपालु होकर उसके अंतर्मन में वास करता है और स्वयं उसे आकर मिलता है। इसलिए गुरु–उपदेश द्वारा उस परमात्मा का गुणगान करें तो स्वाभाविक ही उसके प्रेम का रंग चढ़ जाता है। इस प्रकार जीव निर्मल होकर उस सत्य स्वरूप में लीन हो जाता है और उसके साथ ही मिला रहता है, फिर कभी उससे वियुक्त होकर आवागमन के चक्र में नहीं पड़ता॥ २॥ उस परमात्मा ने जो कुछ करना है, वह कर रहा है, इसके अतिरिक्त कुछ किया भी नहीं जा सकता। सतिगुरु की शरण में डाल कर परमात्मा ने चिरकाल से वियुक्त हुई जीवात्मा को अपने स्वरूप में अभेद कर लिया। वह अपनी इच्छानुसार ही जीवों से कर्म करवाएगा, इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं किया जा सकता॥ ३॥ जिस जीव ने अहंत्व और विषय–विकारों का त्याग करके अपना मन व तन परमात्मा के प्रेम–रंग में लीन कर लिया है, वह जीव निर्भय होकर अपने हृदय में परमात्मा का नाम–सिमरन करता रहता है। नानक

देव जी कथन करते हैं कि परमात्मा ने स्वयं ही ऐसे जीव को परिपूर्ण गुरु के उपदेश द्वारा अपने स्वरूप में मिला लिया है॥ ४॥ १६॥ ४६॥

सिरीरागु महला ३ ॥ गोविदु गुणी निधानु है अंतु न पाइआ जाइ ॥ कथनी बदनी न पाईऐ हउमै विचहु जाइ ॥ सतगुरि मिलिऐ सद भै रचै आपि वसै मनि आइ ॥ १ ॥ भाई रे गुरमुखि बूझै कोइ ॥ बिनु बूझे करम कमावणे जनमु पदारथु खोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनी चाखिआ तिनी सादु पाइआ बिनु चाखे भरमि भुलाइ ॥ अंम्रितु साचा नामु है कहणा कछू न जाइ ॥ पीवत हू परवाणु भइआ पूरै सबदि समाइ ॥ २ ॥ आपे देइ त पाईऐ होरु करणा किछू न जाइ ॥ देवण वाले कै हथि दाति है गुरू दुआरै पाइ ॥ जेहा कीतोनु तेहा होआ जेहे करम कमाइ ॥ ३ ॥ जतु सतु संजमु नामु है विणु नावै निरमलु न होइ ॥ पूरै भागि नामु मनि वसै सबदि मिलावा होइ ॥ नानक सहजे ही रंगि वरतदा हरि गुण पावै सोइ ॥ ४ ॥ १७ ॥ ५० ॥

गुरुबाणी द्वारा लब्ध पारब्रह्म गुणों का भण्डार है, उसका अंत नहीं पाया जा सकता। मात्र कथन कर देने से उसकी प्राप्ति संभव नहीं है, बल्कि वह तो हृदय से अहंत्व का त्याग करने से ही मिलता है। सतिगुरु के मिलन से प्रायः हृदय में परमात्मा का भय रहता है और वह स्वयं ही मन में आकर निवास करता है॥ १॥ हे जीव! गुरुमुख होकर कोई विरला ही इस भेद को जान सकता है। इस भेद को समझे बिना कर्म करने से सम्पूर्ण जीवन को व्यर्थ गंवाना है॥ १॥ रहाउ॥ जिसने नाम–रस को चखा है, उसी ने इसका स्वाद पाया है, अर्थात्–जिस जीव ने प्रभु–नाम का सिमरन किया, उसी ने इसका आनंद अनुभव किया है, नाम–रस चखे बिना तो वह भ्रम में ही भटकते हैं। परमात्मा का सत्य नाम अमृत समान है, उसका आनंद वर्णन नहीं किया जा सकता। जिस जीव ने इस नामामृत का पान किया, यह पीते ही उस प्रभु के दरबार में स्वीकृत हो गया तथा वह परिपूर्ण पारब्रह्म में अभेद हो गया॥ २॥ यह नाम भी यदि वह प्रभु स्वयं कृपालु होकर प्रदान करे तो मिलता है अन्यथा और कुछ नहीं किया जा सकता। उस देने वाले प्रभु के हाथ में ही यह बख्शिश है लेकिन उस दाता को गुरु द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। जीव ने पूर्व जन्म में जो कर्म किए हैं, उनके अनुसार ही अब फल प्राप्त हुआ है और जो वर्तमान में कर्म वह कर रहा है, उस अनुसार फल भविष्य में प्राप्त होगा॥ ३॥ संयम, सत्य और इन्द्रिय–निग्रह ये सभी नाम के अंतर्गत आते हैं, नाम के बिना मन निर्मल नहीं होता। सौभाग्य से ही जीव के मन में नाम बसता है, जिससे पारब्रह्म से मिलाप होता है। नानक देव जी कथन करते हैं कि जो जीव स्वाभाविक ही प्रभु के प्रेम–रंग में रमण करता है, वही हरि–गुणों को प्राप्त करता है॥ ४॥ १७॥ ५०॥

सिरीरागु महला ३ ॥ कांइआ साधै उरध तपु करै विचहु हउमै न जाइ ॥ अधिआतम करम जे करे नामु न कब ही पाइ ॥ गुर कै सबदि जीवतु मरै हरि नामु वसै मनि आइ ॥ १ ॥ सुणि मन मेरे भजु सतगुर सरणा ॥ गुर परसादी छुटीऐ बिखु भवजलु सबदि गुर तरणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रै गुण सभा धातु है दूजा भाउ विकारु ॥ पंडितु पड़ै बंधन मोह बाधा नह बूझै बिखिआ पिआरि ॥ सतगुरि मिलिऐ त्रिकुटी छूटै चउथै पदि मुकति दुआरु ॥ २ ॥ गुर ते मारगु पाईऐ चूकै मोहु गुबारु ॥ सबदि मरै ता उधरै पाए मोख दुआरु ॥ गुर परसादी मिलि रहै सचु नामु करतारु ॥ ३ ॥ इहु मनूआ अति सबल है छडे न कितै उपाइ ॥ दूजै भाइ दुखु लाइदा बहुती देइ सजाइ ॥ नानक नामि लगे से उबरे हउमै सबदि गवाइ ॥ ४ ॥ १८ ॥ ५१ ॥

बेशक यदि जीव शरीर द्वारा साधना कर ले, उर्ध्व तप कर ले, किन्तु यह सब कर लेने से उसके अंतर्मन से अहंत्व नहीं मिट जाता। आत्म–ज्ञान हेतु किए जाने वाले बाह्य कर्म भी कर ले, तब भी वह कभी प्रभु–नाम प्राप्त नहीं कर सकता। परंतु जो जीव गुरु–उपदेश द्वारा जीवित मरता है अर्थात्– मोह–माया से अनासक्त होता है, उसके हृदय में आकर ही प्रभु का नाम बसता है॥ १॥ हे मेरे जीव रूपी मन! सुनो, तुम सतिगुरु की शरण में जाओ। गुरु की कृपा द्वारा ही माया के मोह से बचा जा सकता है और विषय–विकारों से लिप्त भवसागर को पार किया जा सकता है॥ १॥ रहाउ॥ समस्त जीव त्रिगुणात्मक माया की ओर भागते हैं और इसमें जो द्वैत–भाव है, वही विकारों की उत्पत्ति करने वाला है। वेद–शास्त्रादि को पढ़ने वाला पंडित भी मोहपाश में बँधा हुआ है, तथा माया के वश में होने के कारण परमात्मा को भी नहीं बूझता। सतिगुरु के मिलाप द्वारा त्रिकुटी छूट जाती है तथा तुरीयावस्था में पहुँच कर मोक्ष–द्वार की प्राप्ति होती है॥ २॥ यदि गुरु के उपदेश द्वारा ज्ञान–भक्ति रूपी मार्ग पर जीव चले तो मोह रूपी गर्द दूर हो जाती है। यदि जीव गुरु के उपदेश में लीन होकर माया के मोह से मृत हो जाए तो वह भवसागर से तर जाता है। गुरु की कृपा द्वारा ही मानव जीव सत्य नाम वाले परमात्मा को मिल सकता है॥ ३॥ यह चंचल मन अत्यंत बलशाली है, किसी भी यत्न से यह मन जीव को नहीं छोड़ता। द्वैत–भाव वालों को यह मन कष्ट देता है तथा बहुत यातना देता है। गुरु जी कथन करते हैं कि जो जीव गुरु उपदेश द्वारा अहंत्व को गंवा कर नाम–सिमरन में लीन रहते हैं, वे यमों की यातना से बच गए हैं॥ ४॥ १८॥ ५१॥

सिरीरागु महला ३ ॥ किरपा करे गुरु पाईऐ हरि नामो देइ द्रिड़ाइ ॥ बिनु गुर किनै न पाइओ बिरथा जनमु गवाइ ॥ मनमुख करम कमावणे दरगह मिलै सजाइ ॥ १ ॥ मन रे दूजा भाउ चुकाइ ॥ अंतरि तेरै हरि वसै गुर सेवा सुखु पाइ ॥ रहाउ ॥ सचु बाणी सचु सबदु है जा सचि धरे पिआरु ॥ हरि का नामु मनि वसै हउमै क्रोधु निवारि ॥ मनि निरमल नामु धिआईऐ ता पाए मोख दुआरु ॥ २ ॥ हउमै विचि जगु बिनसदा मरि जंमै आवै जाइ ॥ मनमुख सबदु न जाणनी जासनि पति गवाइ ॥ गुर सेवा नाउ पाईऐ सचे रहै समाइ ॥ ३ ॥ सबदि मंनिऐ गुरु पाईऐ विचहु आपु गवाइ ॥ अनदिनु भगति करे सदा साचे की लिव लाइ ॥ नामु पदारथु मनि वसिआ नानक सहजि समाइ ॥ ४ ॥ १६ ॥ ५२ ॥

जब परमेश्वर कृपा करता है, तब गुरु की प्राप्ति होती है, और गुरु हरिनाम को दृढ़ करवा देता है। गुरु के बिना हरिनाम को किसी ने भी प्राप्त नहीं किया और नामहीन व्यक्तियों ने अपना जन्म व्यर्थ गंवाया है। अपने मन की बात मान कर जो व्यक्ति कर्म करते हैं, उन्हें परमात्मा की सभा में सज़ा मिलती है॥ १॥ हे मन! तू द्वैत–भाव को दूर कर दे। क्योंकि तेरे अंदर हरि का वास है, उसकी प्राप्ति के लिए गुरु की सेवा करो, तभी सुखों की प्राप्ति होगी॥ रहाउ॥ जब जीव सत्य–स्वरूप परमात्मा से प्रेम करता है तो उसके वचन एवं कर्म सत्य हो जाते हैं। परमात्मा का नाम मन में बस जाए तो अहम् व क्रोधादि समस्त विकार निवृत्त हो जाते हैं। निर्मल मन से प्रभु के नाम का ध्यान करने से ही जीव मोक्ष द्वार को प्राप्त करता है॥ २॥ अहंकार में ही सम्पूर्ण जगत् नष्ट होता है तथा पुनःपुनः आवागमन के चक्र में पड़ा रहता है। स्वेच्छाचारी जीव गुरु–उपदेश को नहीं जानते, इसलिए वे अपना सम्मान गंवा कर चले जाएँगे। गुरु–सेवा द्वारा प्रभु नाम प्राप्त होता है और उस सत्य स्वरूप परमात्मा में लीन होते हैं॥ ३॥ गुरु–उपदेश मान कर अंत: करण में से अभिमान समाप्त किया जा सकता है तथा सर्वश्रेष्ठ परमात्मा को प्राप्त किया जा सकता है। नित्यप्रति भक्ति करके स्थिर व सत्य–स्वरूप परमात्मा में लीन होना करो। नानक देव जी कथन करते हैं कि जिस जीव के मन में नाम–पदार्थ बस गया, वह सहजावस्था में समा गया॥ ४॥ १६॥ ५२॥

सिरीरागु महला ३ ॥ जिनी पुरखी सतगुरु न सेविओ से दुखीए जुग चारि ॥ घरि होदा पुरखु न पछाणिआ अभिमानि मुठे अहंकारि ॥ सतगुरू किआ फिटकिआ मंगि थके संसारि ॥ सचा सबदु न सेविओ सभि काज सवारणहारु ॥ १ ॥ मन मेरे सदा हरि वेखु हदूरि ॥ जनम मरन दुखु परहरै सबदि रहिआ भरपूरि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सचु सलाहनि से सचे सचा नामु अधारु ॥ सची कार कमावणी सचे नालि पिआरु ॥ सचा साहु वरतदा कोइ न मेटणहारु ॥ मनमुख महलु न पाइनी कूड़ि मुठे कूड़िआर ॥ २ ॥ हउमै करता जगु मुआ गुर बिनु घोर अंधारु ॥ माइआ मोहि विसारिआ सुखदाता दातारु ॥ सतगुरु सेवहि ता उबरहि सचु रखहि उर धारि ॥ किरपा ते हरि पाईऐ सचि सबदि वीचारि ॥ ३ ॥ सतगुरु सेवि मनु निरमला हउमै तजि विकार ॥ आपु छोडि जीवत मरै गुर कै सबदि वीचार ॥ धंधा धावत रहि गए लागा साचि पिआरु ॥ सचि रते मुख उजले तितु साचै दरबारि ॥ ४ ॥ सतगुरु पुरखु न मंनिओ सबदि न लगो पिआरु ॥ इसनानु दानु जेता करहि दूजै भाइ खुआरु ॥ हरि जीउ आपणी क्रिपा करे ता लागै नाम पिआरु ॥ नानक नामु समालि तू गुर कै हेति अपारि ॥ ५ ॥ २० ॥ ५३ ॥

जिन व्यक्तियों ने सतिगुरु की सेवा नहीं की वे चहुं युगों में दुखी रहते हैं। उन्होंने हृदय रूपी घर में स्थिर परमात्मा को नहीं पहचाना, इसलिए वे अभिमान एवं अहंकार आदि विकारों में ग्रस्त होकर ठगे गए हैं। जो व्यक्ति सतिगुरु के धिक्कारे हुए हैं, वे संसार में माँग—माँग कर थक गए हैं। उन्होंने उस सत्य स्वरूप परमात्मा का सिमरन नहीं किया, जो समस्त कार्य संवारने वाला है॥ १॥ हे मेरे मन ! तू हरि को सदैव प्रत्यक्ष ही देख। यदि तुम परमात्मा को परिपूर्ण मान लो तो वह तुम्हें आवागमन के चक्र से मुक्त कर देगा॥ १॥ रहाउ॥ जो सत्य नाम का आश्रय लेकर सत्य की स्तुति करते हैं, वे ही सत्य हैं। जिसने भक्ति रूपी सत्य कर्म किया है, उसका सत्य परमात्मा (वाहिगुरु) के साथ प्रेम है। सत्य स्वरूप परमात्मा ही है, जिसका आदेश चलता है, उसके आदेश को कोई भी मिटा नहीं सकता। स्वेच्छाचारी जीव परमात्मा के महल तक नहीं पहुँचते, वे असत्य जीव मार्ग में ही असत्य द्वारा लूटे जाते हैं॥ २॥ अभिमान करता हुआ सम्पूर्ण संसार नष्ट हो गया, गुरु के बिना इस संसार में अज्ञानता का घोर अंधकार बना रहता है। माया में लिप्त प्राणियों ने सुख प्रदान करने वाले परमात्मा को विस्मृत कर दिया है। यदि प्राणी सतिगुरु की सेवा करेगा, तथा सत्य नाम को हृदय में धारण करेगा, तभी इस अज्ञान रूपी अंधकार से उबर सकेगा। गुरु द्वारा प्रदत्त सत्य उपदेश का मनन करने से ही परमात्मा को प्राप्त किया जा सकता है॥ ३॥ जीव सतिगुरु की सेवा करके अहंकारादि विकारों का त्याग करता हुआ अपने हृदय को पवित्र करे। गुरु उपदेश द्वारा परमात्मा की गुणस्तुति का मनन करके अहंकार को त्याग कर विकारों से क्षीण हो जाता है। जब सत्य के साथ प्रीत हो गई तो सांसारिक मोह—माया के धन्धों से निवृत्ति मिल जाती है। जो सत्य में अनुरक्त हैं, उनके मुँह उस सत्य परमात्मा के दरबार में उज्ज्वल होते हैं॥ ४॥ जिन्होंने सतिगुरु में श्रद्धा व्यक्त नहीं की, उनके उपदेश में प्रीत नहीं लगाई। वे जितना भी तीर्थ—स्नान अथवा दान आदि कर लें, द्वैत—भाव के कारण वे अपमानित होते हैं। जब परमात्मा अपनी कृपा करता है, तभी नाम—सिमरन में प्रीत लगती है। नानक देव जी कथन करते हैं कि हे जीव ! तुम गुरु के अपार प्रेम द्वारा परमात्मा के नाम का सिमरन किया कर॥ ५॥ २०॥ ५३॥

सिरीरागु महला ३ ॥ किसु हउ सेवी किआ जपु करी सतगुर पूछउ जाइ ॥ सतगुर का भाणा मंनि लई विचहु आपु गवाइ ॥ एहा सेवा चाकरी नामु वसै मनि आइ ॥ नामै ही ते सुखु पाईऐ सचै सबदि सुहाइ ॥ १ ॥ मन मेरे अनदिनु जागु हरि चेति ॥ आपणी खेती रखि लै कूंज पड़ैगी खेति ॥ १ ॥

रहाउ ॥ मन कीआ इछा पूरीआ सबदि रहिआ भरपूरि ॥ भै भाइ भगति करहि दिनु राती हरि जीउ वेखै सदा हदूरि ॥ सचै सबदि सदा मनु राता भ्रमु गइआ सरीरहु दूरि ॥ निरमलु साहिबु पाइआ साचा गुणी गहीरु ॥ २ ॥ जो जागे से उबरे सूते गए मुहाइ ॥ सचा सबदु न पछाणिओ सुपना गइआ विहाइ॥ सुंञे घर का पाहुणा जिउ आइआ तिउ जाइ ॥ मनमुख जनमु बिरथा गइआ किआ मुहु देसी जाइ ॥ ३ ॥ सभ किछु आपे आपि है हउमै विचि कहनु न जाइ ॥ गुर कै सबदि पछाणीऐ दुखु हउमै विचहु गवाइ ॥ सतगुरु सेवनि आपणा हउ तिन कै लागउ पाइ ॥ नानक दरि सचे सचिआर हहि हउ तिन बलिहारै जाउ ॥ ४ ॥ २१ ॥ ५४ ॥

जब मैं अपने गुरु से जाकर पूछता हूँ कि किस की सेवा करूँ और कौन—सा जाप करूँ तो आदेश मिलता है कि अपने अंतर्मन से अहंत्व का त्याग करके सतिगुरु का आदेश मान लेना। सतिगुरु का आदेश मानना ही वास्तविक सेवा एवं चाकरी है, इसके द्वारा ही मन में प्रभु का नाम बसता है। ईश्वर के नाम सिमरन द्वारा ही सुखों की प्राप्ति होती है तथा सत्य नाम से ही जीव शोभायमान होता है॥ १॥ हे मेरे मन ! तुम दिन—रात प्रभु के चिन्तन में जागृत रहो। अपने प्रेमा—भक्ति मूलक जीवन को सम्भालो, वरन् आयु रूपी खेती को मृत्यु रूपी कूंज खा जाएगी॥ १॥ रहाउ॥ जिन्होंने ब्रह्म को परिपूर्ण माना है, उनकी सम्पूर्ण मनोकामनाएँ पूर्ण हुई हैं। जो व्यक्ति परमात्मा का भय मानकर दिन—रात प्रेमा—भक्ति करते हैं, वे सदैव परमात्मा को प्रत्यक्ष देखते हैं। उनका मन परमात्मा की गुणस्तुति में स्थिर अनुरक्त रहता है, इसी से शरीर में से भ्रम दूर होता है। वही जीव शुभ—गुण स्वरूप पवित्र खज़ाने वाले परमात्मा को प्राप्त करते हैं॥ २॥ जो जीव मोह—माया से सुचेत रहते हैं, वे विकारों की मृत्यु से बच जाते हैं और जो अज्ञानता की निद्रा में सो जाते हैं, वे शुभ—गुण स्वरूप सम्पति को लुटा गए। वे प्रभु की गुणस्तुति का सार नहीं पहचान पाते और उनका जीवन स्वप्न भाँति व्यतीत हो जाता है। ऐसे जीव खाली घर के अतिथि की भाँति भूखे आते हैं और भूखे ही चले जाते हैं। स्वेच्छाचारी जीव का जन्म व्यर्थ चला जाता है, ऐसे में वह आगे परलोक में जाकर क्या मुँह दिखाएगा ?॥ ३॥ वह परमात्मा ही सर्वस्व है, यह बात अहंकारी जीव द्वारा नहीं कही जा सकती। गुरु का उपदेश पहचान कर ही कष्टदायक अहंकार को हृदय में से निकाला जा सकता है। अपना कर्त्तव्य जान कर जो सतिगुरु की सेवा करता है, मैं उनके चरण स्पर्श करता हूँ। नानक देव जी कथन करते हैं कि सत्यस्वरूप परमात्मा के द्वार पर वे जीव ही सत्य धारण करते हैं और मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ॥ ४॥ २१॥ ५४॥

सिरीरागु महला ३ ॥ जे वेला वखतु वीचारीऐ ता कितु वेला भगति होइ ॥ अनदिनु नामे रतिआ सचे सची सोइ ॥ इकु तिलु पिआरा विसरै भगति किनेही होइ ॥ मनु तनु सीतलु साच सिउ सासु न बिरथा कोइ ॥ १ ॥ मेरे मन हरि का नामु धिआइ ॥ साची भगति ता थीऐ जा हरि वसै मनि आइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहजे खेती राहीऐ सचु नामु बीजु पाइ ॥ खेती जंमी अगली मनूआ रजा सहजि सुभाइ ॥ गुर का सबदु अंम्रितु है जितु पीतै तिख जाइ ॥ इहु मनु साचा सचि रता सचे रहिआ समाइ ॥ २ ॥ आखणु वेखणु बोलणा सबदे रहिआ समाइ ॥ बाणी वजी चहु जुगी सचो सचु सुणाइ ॥ हउमै मेरा रहि गइआ सचै लइआ मिलाइ ॥ तिन कउ महलु हदूरि है जो सचि रहे लिव लाइ ॥ ३ ॥ नदरी नामु धिआईऐ विणु करमा पाइआ न जाइ ॥ पूरै भागि सतसंगति लहै सतगुरु भेटै जिसु आइ ॥ अनदिनु नामे रतिआ दुखु बिखिआ विचहु जाइ ॥ नानक सबदि मिलावड़ा नामे नामि समाइ ॥ ४ ॥ २२ ॥ ५५ ॥

परमात्मा का चिन्तन करने हेतु यदि समय निश्चित करने का विचार करते रहें तो किस समय भक्ति हो सकती है, अर्थात्– कभी भी भक्ति नहीं हो सकती। दिन–रात परमात्मा के नाम में विलीन रहने वाले जीव की शोभा होती है। यदि क्षण भर के लिए भी प्रियतम प्रभु विस्मृत हो जाए तो वह कैसी भक्ति हुई। सत्य सिमरन द्वारा ही मन–तन शीतल रहता है और कोई भी श्वास निष्फल नहीं जाता॥ १॥ हे मेरे मन! तुम भी प्रभु–नाम का सिमरन करो। सत्य भक्ति तभी होती है, जब हरि–प्रभु मन में आकर बस जाए॥ १॥ रहाउ॥ सहजावस्था में स्थिर होकर हृदय–रूपी खेत में सत्य नाम का बीज डाल कर खेती बोई जाए तो शुभगुण रूपी खेती बहुत पैदा होती है, अर्थात्– फसल देख कर मन स्वाभाविक ही तृप्त हो जाता है। गुरु का उपदेश अमृत रूप है, जिसका पान करने से माया की तृष्णा बुझ जाती है। जिस गुरुमुख जीव का यह सत्य मन सत्य नाम में लीन है, वह सत्य–स्वरूप परमात्मा में समा गया है॥ २॥ उनका स्वयं कुछ बोलना, कहना व देखना आदि शब्द गुरु–वाणी में ही समाया होता है। उनके वचन चार–युगों में विख्यात हो जाते हैं, क्योंकि वे पूर्ण रूप से सत्य पर आधारित होते हैं। जीव का अहंकार व अहंभाव समाप्त हो जाता है और सत्य प्रभु उन्हें स्वयं में मिला लेता है। जो जीव सत्य–स्वरूप में लीन हैं, उन्हें परमात्मा का स्वरूप प्रत्यक्ष दिखाई देता है॥ ३॥ परमात्मा की कृपा–दृष्टि से ही परमात्मा का नाम–सिमरन किया जा सकता है, बिना सद्कर्मों के नाम–सिमरन को प्राप्त नहीं किया जा सकता। जिस जीव को सौभाग्य से सत्संगति मिलती है, उसे सतिगुरु आकर मिलते हैं। प्रतिदिन नाम में अनुरक्त होने पर हृदय में से विषय–विकारों का दुख दूर हो जाता है। नानक देव जी कथन करते हैं कि गुरु के उपदेश द्वारा ही जीव का परमात्मा से मिलन होता है तथा नाम–सिमरन में लीन रहता है॥ ४॥ २२॥ ५५॥

सिरीरागु महला ३ ॥ आपणा भउ तिन पाइओनु जिन गुर का सबदु बीचारि ॥ सतसंगती सदा मिलि रहे सचे के गुण सारि ॥ दुबिधा मैलु चुकाईअनु हरि राखिआ उर धारि ॥ सची बाणी सचु मनि सचे नालि पिआरु ॥ १ ॥ मन मेरे हउमै मैलु भर नालि ॥ हरि निरमलु सदा सोहणा सबदि सवारणहारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सचै सबदि मनु मोहिआ प्रभि आपे लए मिलाइ ॥ अनदिनु नामे रतिआ जोती जोति समाइ ॥ जोती हू प्रभु जापदा बिनु सतगुर बूझ न पाइ ॥ जिन कउ पूरबि लिखिआ सतगुरु भेटिआ तिन आइ ॥ २ ॥ विणु नावै सभ डुमणी दूजै भाइ खुआइ ॥ तिसु बिनु घड़ी न जीवदी दुखी रैणि विहाइ ॥ भरमि भुलाणा अंधुला फिरि फिरि आवै जाइ ॥ नदरि करे प्रभु आपणी आपे लए मिलाइ ॥ ३ ॥ सभु किछु सुणदा वेखदा किउ मुकरि पइआ जाइ ॥ पापो पापु कमावदे पापे पचहि पचाइ ॥ सो प्रभु नदरि न आवई मनमुखि बूझ न पाइ ॥ जिसु वेखाले सोई वेखै नानक गुरमुखि पाइ ॥ ४ ॥ २३ ॥ ५६ ॥

जिन्होंने गुरु के उपदेश का मनन किया है, परमेश्वर ने उनके मन में अपना भय डाला है। वे व्यक्ति प्रायः सत्संगति में मिले रहते हैं तथा सत्य परमात्मा के गुणों को ग्रहण करते हैं। परमात्मा ने उनके हृदय में से दुविधा की मैल को दूर कर दिया है तथा ऐसे व्यक्ति परमात्मा के नाम को हृदय में धारण करके रखते हैं। गुरु का सत्य उपदेश उनके मन में बस जाता है और उस सत्यस्वरूप परमात्मा के साथ उनका प्रेम हो जाता है॥ १॥ हे मेरे मन! यह जीव अहंकार रूपी मैल से भरा हुआ है। परमात्मा इस मैल से रहित है और वह पवित्र व सुंदर है, परमात्मा पवित्र जीवों को ही गुरु–उपदेश से जोड़ कर संवारने वाला है॥ १॥ रहाउ॥ गुरु के सत्य उपदेश से जिस जीव का मन मोहित हो गया, उसे प्रभु ने स्वयं ही अपने स्वरूप में मिला लिया। रात–दिन नाम सिमरन में लीन रहने से उनकी

ज्योति प्रभु की ज्योति में समा जाती है। अपने अंतर्मन के प्रकाश द्वारा ही परमात्मा की पहचान होती है, किन्तु सतिगुरु के बिना ऐसा ज्ञान प्राप्त होना असंभव है। जिनके भाग्य में पूर्व काल से ही लिखा है, वे गुरु को आकर मिल गए॥ २॥ नाम–साधना के बिना समस्त जीव द्विचितापन हो रहे हैं और द्वैत–भाव में नष्ट हो रहे हैं। उस परमात्मा के बिना एक क्षण भी सुख के साथ नहीं बिताया जा सकता दुख में ही रात व्यतीत होती है। भ्रम में भूला हुआ अज्ञानी जीव आवागमन के चक्र में भटकता है। परमात्मा अपनी कृपा–दृष्टि करे, तो अपने साथ मिला लेता है॥ ३॥ परमात्मा हमारा सब–कुछ कहा व किया, सुनता व देखता है, फिर उसके समक्ष कैसे इन्कार किया जा सकता है। स्वेच्छाचारी जीव असंख्य पाप कमाते हैं, पापों में गलते–सड़ते रहते हैं। उनको वह परमात्मा दृश्यमान नहीं है, क्योंकि स्वेच्छाचारी जीव ज्ञान प्राप्त नहीं कर पाता। नानक देव जी कथन करते हैं कि जिस गुरुमुख जीव को परमात्मा शुभ–मार्ग दिखाता है, वही उस मार्ग द्वारा परमात्मा को देख पाता है॥ ४॥ २३॥ ५६॥

स्रीरागु महला ३ ॥ बिनु गुर रोगु न तुटई हउमै पीड़ न जाइ ॥ गुर परसादी मनि वसै नामे रहै समाइ ॥ गुर सबदी हरि पाईऐ बिनु सबदै भरमि भुलाइ ॥ १ ॥ मन रे निज घरि वासा होइ ॥ राम नामु सालाहि तू फिरि आवण जाणु न होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि इको दाता वरतदा दूजा अवरु न कोइ ॥ सबदि सालाही मनि वसै सहजे ही सुखु होइ ॥ सभ नदरी अंदरि वेखदा जै भावै तै देइ ॥ २ ॥ हउमै सभा गणत है गणतै नउ सुखु नाहि ॥ बिखु की कार कमावणी बिखु ही माहि समाहि ॥ बिनु नावै ठउरु न पाइनी जम पुरि दूख सहाहि ॥ ३ ॥ जीउ पिंडु सभु तिस दा तिसै दा आधारु ॥ गुर परसादी बुझीऐ ता पाए मोख दुआरु ॥ नानक नामु सलाहि तूं अंतु न पारावारु ॥ ४ ॥ २४ ॥ ५७ ॥

गुरु के बिना नाम की प्राप्ति संभव नहीं, नाम–सिमरन के बिना अहंकार रूपी रोग का निवारण नहीं होता और इस रोग के निवारण के बिना जीव आवागमन के चक्र से मुक्त नहीं होता। गुरु की कृपा द्वारा मन में नाम बसता है और वह जीव नाम में समाया रहता है। गुरु के उपदेश द्वारा हरि परमात्मा को पाया जा सकता है, इसके बिना मनमुख व्यक्ति भ्रम में ही भटकते हैं॥ १॥ हे मेरे मन ! नाम–सिमरन के कारण ही परमात्मा के स्वरूप में निवास होता है। इसलिए तुम राम–नाम की स्तुति करो, तभी तुम्हारा आवागमन छूट सकेगा॥ १॥ रहाउ॥ हरि–परमेश्वर दाता एक ही सम्पूर्ण सृष्टि में व्याप्त है, इसके अतिरिक्त दूसरा अन्य कोई नहीं है। गुरु–उपदेश द्वारा परमात्मा का चिन्तन मन में बस जाए तो सुख सरलता से प्राप्त हो जाता है। वह परमात्मा अपनी दृष्टि में सभी को देखता है, जिसे वह चाहता उसी को सुख प्रदान करता है॥ २॥ समस्त प्राणी अहंकार में लिप्त होकर पाप–पुण्य, धर्म–कर्म अथवा शुभ कर्मों आदि की गणना करते हैं, किन्तु गणना करने वाले को कोई सुख नहीं मिलता। ऐसे जीव विषय–विकारों की कमाई ही करते हैं और अंततः इस विष में ही समा जाते हैं। परमात्मा के नाम के बिना विशेष स्थान प्राप्त नहीं कर पाते तथा परलोक में जाकर दुख सहारते हैं॥ ३॥ जीव को शरीर आदि सब कुछ उस परमात्मा का दिया हुआ है, सभी को उस परमेश्वर का ही आसरा है। गुरु की कृपा द्वारा उस परमात्मा को जाने, तभी मोक्ष द्वार की प्राप्ति होती है। नानक देव जी कहते हैं कि हे जीव ! उस परमात्मा का स्तुति गान करो, जिसके गुणों का अंत नहीं पाया जा सकता॥ ४॥ २४॥ ५७॥

सिरीरागु महला ३ ॥ तिना अनंदु सदा सुखु है जिना सचु नामु आधारु ॥ गुर सबदी सचु पाइआ दूख निवारणहारु ॥ सदा सदा साचे गुण गावहि साचै नाइ पिआरु ॥ किरपा करि कै आपणी दितोनु भगति भंडारु ॥ १ ॥ मन रे सदा अनंदु गुण गाइ ॥ सची बाणी हरि पाईऐ हरि सिउ रहै समाइ ॥ १ ॥

रहाउ ॥ सची भगती मनु लालु थीआ रता सहजि सुभाइ ॥ गुर सबदी मनु मोहिआ कहणा कछू न जाइ ॥ जिहवा रती सबदि सचै अंम्रितु पीवै रसि गुण गाइ ॥ गुरमुखि एहु रंगु पाईऐ जिस नो किरपा करे रजाइ ॥ २ ॥ संसा इहु संसारु है सुतिआ रैणि विहाइ ॥ इकि आपणै भाणै कढि लइअनु आपे लइओनु मिलाइ ॥ आपे ही आपि मनि वसिआ माइआ मोहु चुकाइ ॥ आपि वडाई दितीअनु गुरमुखि देइ बुझाइ ॥ ३ ॥ सभना का दाता एकु है भुलिआ लए समझाइ ॥ इकि आपे आपि खुआइअनु दूजै छडिअनु लाइ ॥ गुरमती हरि पाईऐ जोती जोति मिलाइ ॥ अनदिनु नामे रतिआ नानक नामि समाइ ॥ ४ ॥ २५ ॥ ५८॥

उन जीवों को सुख आनंद की प्राप्ति होती है, जिनको सत्य नाम का आश्रय प्राप्त है। गुरु का उपदेश ग्रहण करने वालों ने सत्य स्वरूप परमात्मा को पाया है, जो समस्त दुखों की निवृत्ति करता है। प्रायः सत्य स्वरूप परमात्मा के गुणों का गायन करें तथा सत्य नाम के साथ प्रेम करें। परमात्मा ने अपनी कृपा–दृष्टि द्वारा उन्हें भक्ति का भण्डार प्रदान किया है॥ १॥ हे मेरे मन! उस परमात्मा के गुणों का गायन करते रहो, तुम्हें सदा आनंद बना रहेगा। सतिगुरु के उपदेश द्वारा हरि–नाम को प्राप्त करें, तो जीव हरि के संग ही समाया रहता है॥ १॥ रहाउ॥ सत्य भक्ति करने वाले जीव का मन गहन रंग में रंग जाता है तथा स्वतः ही परमात्मा में लीन रहता है। गुरु–उपदेश द्वारा गुरुमुख जीवों का मन परमेश्वर में ऐसा मोहित हो गया है कि कुछ कथन ही नहीं किया जा सकता। ऐसे जीवों की जिह्वा सत्य उपदेश में रत है, नाम–अमृत का पान करती है और प्रेम सहित गुणों का गायन करती है। इस परमात्मा के आनंद को गुरु के मुख से उच्चारण होने वाले उपदेश द्वारा वही जीव पाते हैं, जिन पर उस परमात्मा की कृपा होती है॥ २॥ यह संसार संशय रूप है, इसमें जीव आयु रूपी रात सोकर (अज्ञानता में) व्यतीत करता है। कुछेक को वह अपनी इच्छानुसार इस संसार–सागर में से निकाल लेता है, और अपने साथ मिला लेता है। उनके मन में परमात्मा स्वयं ही विद्यमान होता है, जिन्होंने माया का मोह त्याग दिया है। परमात्मा ने स्वयं ही उन्हें सम्मान प्रदान किया है, जिन्हें वह गुरु द्वारा समझा देता है॥ ३॥ समस्त जीवों का दाता परमेश्वर एक है, जो विस्मृत प्राणियों को समझा लेता है। किन्हीं जीवों को उसने स्वयं से विस्मृत आप ही किया हुआ है, उन्हें द्वैत–भाव में लगाया हुआ है। गुरु के उपदेश द्वारा परमात्मा प्राप्त होता है तथा आत्मा को परमात्मा से मिलाता है। नानक देव जी कथन करते हैं कि नित्य–प्रति हरि–नाम के चिन्तन में लीन होकर नाम में ही अभेद होता है॥ ४॥ २५॥ ५८॥

सिरीरागु महला ३ ॥ गुणवंती सचु पाइआ त्रिसना तजि विकार ॥ गुर सबदी मनु रंगिआ रसना प्रेम पिआरि ॥ बिनु सतिगुर किनै न पाइओ करि वेखहु मनि वीचारि ॥ मनमुख मैलु न उतरै जिचरु गुर सबदि न करे पिआरु ॥ १ ॥ मन मेरे सतिगुर कै भाणै चलु ॥ निज घरि वसहि अंम्रितु पीवहि ता सुख लहहि महलु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अउगुणवंती गुणु को नही बहणि न मिलै हदूरि ॥ मनमुखि सबदु न जाणई अवगणि सो प्रभु दूरि ॥ जिनी सचु पछाणिआ सचि रते भरपूरि ॥ गुर सबदी मनु बेधिआ प्रभु मिलिआ आपि हदूरि ॥ २ ॥ आपे रंगणि रंगिओनु सबदे लइओनु मिलाइ ॥ सचा रंगु न उतरै जो सचि रते लिव लाइ ॥ चारे कुंडा भवि थके मनमुख बूझ न पाइ ॥ जिसु सतिगुरु मेले सो मिलै सचै सबदि समाइ ॥ ३ ॥ मित्र घणेरे करि थकी मेरा दुखु काटै कोइ ॥ मिलि प्रीतम दुखु कटिआ सबदि मिलावा होइ ॥ सचु खटणा सचु रासि है सचे सची सोइ ॥ सचि मिले से न विछुड़हि नानक गुरमुखि होइ ॥ ४ ॥ २६ ॥ ५९ ॥

गुणों से विभूषित जीवों ने तृष्णादि विकारों का त्याग करके सत्य स्वरूप को प्राप्त किया है। उसका हृदय गुरु के उपदेश में रंग गया है और जिह्वा परमात्मा के भक्ति प्रेम में रंग गई है। सतिगुरु के बिना परमात्मा को किसी ने भी नहीं पाया, बेशक अपने हृदय में विचार करके देख लो। जब तक जीव गुरु के उपदेश से प्रीति नहीं करता, अर्थात् अपना मन गुरु के उपदेश में नहीं टिकाता, ऐसे मनमुख के हृदय से तब तक विषय–विकारों की मैल नष्ट नहीं होती॥ १॥ हे मेरे मन! तुम सतिगुरु की इच्छानुसार चलो। तभी तुम निज स्वरूप में रह कर नामामृत पान कर सकोगे तथा सुख धाम को प्राप्त करोगे॥ १॥ रहाउ॥ जिस जीव में अवगुण ही विद्यमान हैं, कोई भी गुण नहीं है, उनको प्रभु के सम्मुख बैठने का अवसर प्राप्त नहीं होता। ऐसे स्वेच्छाचारी जीव गुरु के उपदेश को नहीं जानते तथा अवगुणों के कारण वह परमात्मा से दूर रहते हैं। जिन्होंने सत्य–नाम को पहचाना है, वे उस सत्य–स्वरूप में पूर्ण–रूपेण अनुरक्त हैं। उनका हृदय गुरु के उपदेश में बिंधा गया है तथा परमात्मा उन्हें स्वयं प्रत्यक्ष रूप में मिला है॥ २॥ प्रभु ने स्वयं ही जीवों को अपने रंग की मटकी में रंगा है तथा गुरु–उपदेश द्वारा अपने साथ मिला लिया है, जो लिवलीन होकर सत्य परमात्मा में जुड़े हैं, उनका नाम रूपी सत्य रंग नहीं उतरता। स्वेच्छाचारी जीव सम्पूर्ण सृष्टि में भटकता हुआ थक जाए, किन्तु उन्हें कहीं से भी परमात्मा का रहस्य पता नहीं चल सकता। जिस जीव को सत्य गुरु मिलाता है, वही मिल पाता है, वह सत्य ब्रह्म में अभेद हो जाता है॥ ३॥ जीव रूपी स्त्री कहती है कि मैं संसार में अनेकानेक व्यक्तियों को मित्र बना–बना कर थक गई हूँ कि कोई तो मेरा दुख निवृत्त करे। अंततः प्रियतम प्रभु से मिल कर दुख निवृत्त होता है, जिसका मिलन गुरु उपदेश द्वारा ही संभव है। सत्य श्रद्धा रूपी पूँजी द्वारा जिसने सत्य–नाम रूपी पदार्थ को कमाया है, उस सत्य की सत्य शोभा होती है। नानक देव जी कथन करते हैं कि जो जीव गुरुमुख बनकर सत्य स्वरूप में समाए हैं, फिर वे कभी भी सत्य–स्वरूप से बिछुड़ते नहीं हैं॥ ४॥ २६॥ ५६॥

सिरीरागु महला ३ ॥ आपे कारणु करता करे स्रिसटि देखै आपि उपाइ ॥ सभ एको इकु वरतदा अलखु न लखिआ जाइ ॥ आपे प्रभू दइआलु है आपे देइ बुझाइ ॥ गुरमती सद मनि वसिआ सचि रहे लिव लाइ ॥ १ ॥ मन मेरे गुर की मंनि लै रजाइ ॥ मनु तनु सीतलु सभु थीऐ नामु वसै मनि आइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनि करि कारणु धारिआ सोई सार करेइ ॥ गुर कै सबदि पछाणीऐ जा आपे नदरि करेइ ॥ से जन सबदे सोहणे तितु सचै दरबारि ॥ गुरमुखि सचै सबदि रते आपि मेले करतारि ॥ २ ॥ गुरमती सचु सलाहणा जिस दा अंतु न पारावारु ॥ घटि घटि आपे हुकमि वसै हुकमे करे बीचारु ॥ गुर सबदी सालाहीऐ हउमै विचहु खोइ ॥ सा धन नावै बाहरी अवगणवंती रोइ ॥ ३ ॥ सचु सलाही सचि लगा सचै नाइ त्रिपति होइ ॥ गुण वीचारी गुण संग्रहा अवगुण कढा धोइ ॥ आपे मेलि मिलाइदा फिरि वेछोड़ा न होइ ॥ नानक गुरु सालाही आपणा जिदू पाई प्रभु सोइ ॥ ४ ॥ २७ ॥ ६० ॥

परमात्मा स्वयं ही कारण एवं स्वयं ही कर्ता है, जो सृष्टि को उत्पन्न करता है और उसकी परवरिश करता है। समस्त प्राणियों में वह एक ही विद्यमान है, पुनः वह अलक्ष्य भी है जो समझा नहीं जा सकता। स्वयं परमात्मा दयालु भी है जो अपनी कृपा–दृष्टि से अपना स्वरूप समझा भी देता है। गुरु के उपदेश द्वारा जिन जीवों के मन में वह परमात्मा व्याप्त रहता है, वे उस सत्य स्वरूप में सदा लीन रहते हैं॥ १॥ हे मेरे मन! तुम गुरु की आज्ञा मान कर चलो। ऐसा करने से तन–मन शांत हो जाता है और मन में नाम आकर बस जाता है॥ १॥ रहाउ॥ जिस प्रभु ने इस सृष्टि को मूल रूप से रच कर सम्भाल रखा है, वही इसका ध्यान रखता है। यदि गुरु के उपदेश को पहचानें, तभी वह

परमेश्वर स्वयं कृपा–दृष्टि करता है वह मानव जीव गुरु उपदेश द्वारा ही उस सत्य परमात्मा के द्वार पर शोभनीय होते हैं। गुरुन्मुख जीव उस सत्य उपदेश में लीन रहते हैं, उन जीवों को कर्त्ता पुरुष (परमात्मा) ने अपने श्री–चरणों से जोड़ा है॥ २॥ हे जीव! गुरु का उपदेश ग्रहण करके उस सत्य स्वरूप परमात्मा का गुणगान करो, जिसके गुणों की कोई सीमा नहीं है। सर्वव्यापक परमेश्वर अपने ही आदेश से प्रत्येक हृदय में विद्यमान होता तथा अपने आदेश द्वारा ही जीवों की पालना का विचार करता है। हे मानव! गुरु उपदेश द्वारा अपने हृदय में से अहंकार को त्याग कर उस सर्व–सम्पन्न परमात्मा की स्तुति करो। जो नाम–विहीन जीव रूपी स्त्री है। वह अवगुणवती रोती रहती है॥ ३॥ मैं सत्य स्वरूप परमात्मा का चिन्तन करूँ, सत्य में लीन रहूँ तथा सत्य–नाम द्वारा तृप्त रहूँ। शुभ गुणों का विचार करूँ, शुभ गुणों को ही एकत्र करूँ, अवगुणों की मैल को नाम–जल से धोकर बाहर निकाल दूँ। तब परमेश्वर स्वयं ही मिला लेता है और पुनः वियोग नहीं होता। नानक देव जी कथन करते हैं कि अपने पूर्ण गुरु की श्लाघा करूँ, जिनके द्वारा वह प्रभु प्राप्त होता है॥ ४॥ २७॥६०॥

सिरीरागु महला ३ ॥ सुणि सुणि काम गहेलीए किआ चलहि बाह लुडाइ ॥ आपणा पिरु न पछाणही किआ मुहु देसहि जाइ ॥ जिनी सखीं कंतु पछाणिआ हउ तिन कै लागउ पाइ ॥ तिन ही जैसी थी रहा सतसंगति मेलि मिलाइ ॥ १ ॥ मुंधे कूड़ि मुठी कूड़िआरि ॥ पिरु प्रभु साचा सोहणा पाईऐ गुर बीचारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुखि कंतु न पछाणई तिन किउ रैणि विहाइ ॥ गरबि अटीआ त्रिसना जलहि दुखु पावहि दूजै भाइ ॥ सबदि रतीआ सोहागणी तिन विचहु हउमै जाइ ॥ सदा पिरु रावहि आपणा तिना सुखे सुखि विहाइ ॥ २ ॥ गिआन विहूणी पिर मुतीआ पिरमु न पाइआ जाइ ॥ अगिआन मती अंधेरु है बिनु पिर देखे भुख न जाइ ॥ आवहु मिलहु सहेलीहो मै पिरु देहु मिलाइ ॥ पूरै भागि सतिगुरु मिलै पिरु पाइआ सचि समाइ ॥ ३ ॥ से सहीआ सोहागणी जिन कउ नदरि करेइ ॥ खसमु पछाणहि आपणा तनु मनु आगै देइ ॥ घरि वरु पाइआ आपणा हउमै दूरि करेइ ॥ नानक सोभावंतीआ सोहागणी अनदिनु भगति करेइ ॥ ४ ॥ २८ ॥ ६१ ॥

हे कामना में ग्रस्त जीव–रूपी स्त्री! सुनो, तुम बाहें उलार–उलार कर क्यों चलती हो? इस लोक में तो तुम अपने पति–परमात्मा को पहचानती नहीं, आगे परलोक में जाकर क्या मुँह दिखाओगी? जिस ज्ञानवान सखी ने अपने पति–परमात्मा को पहचान लिया है, गुरु जी कहते हैं कि मैं उनके पांव लगती हूँ। मैं उनके सत्संग के मिलन द्वारा उनके जैसी ही हो जाऊँ॥ १॥ हे जीव रूपी मुग्ध स्त्री! तू झूठ द्वारा ठगी हुई झूठी बन रही है। सत्य व सुन्दर पति–परमात्मा गुरु के उपदेश द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है॥ १॥ रहाउ॥ स्वेच्छाचारी जीव रूपी स्त्रियाँ पति–परमेश्वर को नहीं पहचानतीं, इसलिए उनकी जीवन रूपी रात कैसे व्यतीत हो? अहंकार में पूर्ण रूप से भरी हुई वह स्त्री, तृष्णाग्नि में जलती है तथा द्वैत–भाव में दुख पाती है। जो सुहागवती स्त्रियाँ गुरु–उपदेश में रत हैं, उनके हृदय में से अहंत्व नष्ट हो जाता है। वह अपने पति–परमेश्वर के आनंद को सदैव भोगती हैं, इसलिए उनका जीवन पूर्ण सुख में व्यतीत होता है॥ २॥ जो स्त्रियाँ (जीव) ज्ञान–रहित हैं, उनको पति–परमात्मा द्वारा परित्यक्त किया हुआ है और वह पति–परमात्मा का प्रेम ग्रहण नहीं कर पातीं। उनकी बुद्धि में अज्ञानता का अंधकार है, परमात्मा को देखे बिना भौतिक पदार्थों की भूख नहीं जाती। हे सत्संगिनों! सत्संग में आओ और मिल कर विनती करो कि मुझे भी परमात्मा से मिला दो। जिस जीव रूपी स्त्री को सौभाग्य से सतिगुरु की प्राप्ति होती है, उसने ही पति–परमात्मा को प्राप्त किया है और वह सत्य स्वरूप में समा जाती है॥ ३॥ वे सखियाँ सुहागिन होती हैं, जिन पर परमात्मा कृपा–दृष्टि करता है। वह अपना तन–मन अर्पण करके

अपने पति–परमात्मा को पहचानती हैं। गुरु कृपा द्वारा अहंकार दूर करके अपने हृदय रूपी घर में पति–परमात्मा पा लेती हैं। गुरु जी कथन करते हैं कि वह यशस्वी सुहागिनें होती हैं जो प्रतिदिन पति–परमात्मा का चिन्तन करती हैं॥ ४॥ २८॥ ६१॥

सिरीरागु महला ३ ॥ इकि पिरु रावहि आपणा हउ कै दरि पूछउ जाइ ॥ सतिगुरु सेवी भाउ करि मै पिरु देहु मिलाइ ॥ सभु उपाए आपे वेखै किसु नेड़ै किसु दूरि ॥ जिनि पिरु संगे जाणिआ पिरु रावे सदा हदूरि ॥ १ ॥ मुंधे तू चलु गुर कै भाइ ॥ अनदिनु रावहि पिरु आपणा सहजे सचि समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सबदि रतीआ सोहागणी सचै सबदि सीगारि ॥ हरि वरु पाइनि घरि आपणै गुर कै हेति पिआरि ॥ सेज सुहावी हरि रंगि रवै भगति भरे भंडार ॥ सो प्रभु प्रीतमु मनि वसै जि सभसै देइ अधारु ॥ २ ॥ पिरु सालाहनि आपणा तिन कै हउ सद बलिहारै जाउ ॥ मनु तनु अरपी सिरु देई तिन कै लागा पाइ ॥ जिनी इकु पछाणिआ दूजा भाउ चुकाइ ॥ गुरमुखि नामु पछाणीऐ नानक सचि समाइ ॥ ३ ॥ २६ ॥ ६२ ॥

कई जीव रूपी स्त्रियाँ अपने पति–परमेश्वर के साथ सुख मान रही हैं परन्तु मैं किसके द्वार पर जाकर प्रभु–मिलन की युक्ति पूछूँ? गुरु जी कथन करते हैं कि हे प्राणी! तू श्रद्धापूर्वक सच्चे हृदय से अपने सतिगुरु की सेवा कर और सतिगुरु तुझ पर अपार कृपा करके तेरा परमेश्वर–पति से मिलन करवा देगा। अकाल पुरुष समस्त जीवों का रक्षक है और उसके लिए कोई निकट एवं दूर नहीं। जिस प्राणी ने अपने पति–परमेश्वर को पा लिया है, वह उसकी संगति का सदैव आनंद प्राप्त करता है॥ १॥ हे ज्ञानहीन प्राणी! तू अपने गुरु की आज्ञानुसार कर्म करता रह, गुरु के मार्गदर्शन से प्रभु मिलन रूपी फल अवश्य प्राप्त होगा। गुरु के उपदेशानुसार चलने से हे प्राणी! तुझे परमात्मा का रात–दिन सुख अनुभव होगा और तू प्रभु के हृदय में समा जाएगा॥ १॥ रहाउ॥ जो जीवात्माएँ गुरु–शब्दों में लीन हैं, वही सुहागिनें हैं। वे सत्यनाम से श्रृंगार करती हैं। वे गुरु के साथ प्रेम में रहने से अपने अन्तर में हरि–रूपी वर प्राप्त कर लेती हैं। उनकी सेज अति सुन्दर है, जिस पर परमात्मा रूपी पति से उनका मिलन होता है और उनके पास भक्ति के अमूल्य भण्डार विद्यमान होते हैं। वह प्रीतम प्रभु जो संसार के समस्त जीवों का आश्रय है, वह उनके हृदय में निवास करता है॥ २॥ गुरु जी कथन करते हैं कि मैं उन जीवात्माओं (प्रभु–भक्तों) पर बलिहारी जाता हूँ, जो अपने स्वामी की प्रशंसा करती हैं। मैं उन प्रभु–भक्तों पर अपना तन–मन समर्पित करता हूँ और अपना शीश निवाता हूँ। जिन्होंने विषय–विकार एवं द्वैत भावना त्यागकर एक पारब्रह्म को पहचान कर अपना लिया है, वह द्वैतवाद के प्रेम को अस्वीकृत कर देते हैं। गुरु जी वचन करते हैं कि हे नानक! गुरु–उपदेश से ही पारब्रह्म का ज्ञान प्राप्त होता है और गुरु की कृपा से वह ईश्वर में लीन हो जाता है॥ ३॥ २६॥ ६२॥

सिरीरागु महला ३ ॥ हरि जी सचा सचु तू सभु किछु तेरै चीरै ॥ लख चउरासीह तरसदे फिरे बिनु गुर भेटे पीरै ॥ हरि जीउ बखसे बखसि लए सूख सदा सरीरै ॥ गुर परसादी सेव करी सचु गहिर गंभीरै ॥ १ ॥ मन मेरे नामि रते सुखु होइ ॥ गुरमती नामु सलाहीऐ दूजा अवरु न कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धरम राइ नो हुकमु है बहि सचा धरमु बीचारि ॥ दूजै भाइ दुसटु आतमा ओहु तेरी सरकार ॥ अधिआतमी हरि गुण तासु मनि जपहि एकु मुरारि ॥ तिन की सेवा धरम राइ करै धंनु सवारणहारु ॥ २ ॥ मन के बिकार मनहि तजै मनि चूकै मोहु अभिमानु ॥ आतम रामु पछाणिआ सहजे नामि समानु ॥ बिनु सतिगुर मुकति न पाईऐ मनमुखि फिरै दिवानु ॥ सबदु न चीनै कथनी बदनी करे बिखिआ माहि समानु

॥ ३ ॥ सभु किछु आपे आपि है दूजा अवरु न कोइ ॥ जिउ बोलाए तिउ बोलीऐ जा आपि बुलाए सोइ ॥ गुरमुखि बाणी ब्रहमु है सबदि मिलावा होइ ॥ नानक नामु समालि तू जितु सेविऐ सुखु होइ ॥ ४ ॥ ३० ॥ ६३ ॥

हे पूज्य—परमेश्वर ! तू ही सत्य है और सब कुछ तेरे ही वश में है। चौरासी लाख योनियों में प्राणी गुरु—मिलन के बिना सर्वत्र भटकता रहता है और प्रभु प्राप्ति के लिए डगमगाता फिरता है। परमात्मा की कृपा—दृष्टि हो तो क्षमा करने पर मनुष्य देह दुखों से निवृत्त होकर सदा सुख सागर में रहती है। गुरु की दया—दृष्टि से ही प्राणी सच्चे, गहर, गंभीर परम सत्य को प्राप्त करता है॥ १॥ इसलिए हे मेरे मन ! भगवान के नाम में मग्न होने से सुख की उपलब्धि होती है। गुरु उपदेशानुसार परमात्मा के नाम का यश गान करता जा, क्योंकि इसके अतिरिक्त और कोई अन्य उपाय नहीं॥ १॥ रहाउ॥ धर्मराज को सच्चे न्याय का उपदेश उसी परमात्मा ने प्रदान किया था कि सबके साथ बैठ कर एक सच्चा—न्याय कर। उस महान् परमात्मा ने धर्मराज को अधिकार प्रदान किया था कि दुष्ट आत्माएँ जो लोभ, मोह, अहंकार इत्यादि विकारों में ग्रस्त हैं वह तेरे नरकों की प्रजा है। आध्यात्मिक प्राणी जो गुणों के भण्डार से ओतप्रोत हैं तथा परमेश्वर का सिमरन करते हैं। प्रभु—भक्तों की धर्मराज स्वयं उनकी लगन से सेवा करता है, वे प्राणी धन्य हैं और उनका सृजनहार प्रभु धन्य—धन्य है॥ २॥ जिन प्राणियों ने मन के विकार मन से त्याग दिए हैं, वे मोह—अभिमान इत्यादि से मुक्त होकर निर्मल हो जाते हैं। वे प्राणी आत्मा में ही परमात्मा को पहचान लेते हैं और सहज ही हरि नाम में लीन हो जाते हैं। किन्तु सतिगुरु के बिना प्राणी को मोक्ष प्राप्त नहीं होता, वह मनमुखी प्राणी दीवानों की तरह दर—दर भटकता रहता है। वह प्राणी उस प्रभु के शब्द का चिंतन नहीं करता अपितु व्यर्थ ही वाद—विवाद करता रहता है और पापों में ग्रस्त होने के कारण उस जीव की मुक्ति नहीं होती॥ ३॥ पारब्रह्म स्वयं ही सर्वस्व है और इसके अलावा अन्य कोई नहीं। पारब्रह्म जैसे प्राणी को स्वयं बुलाता है, प्राणी वैसे ही बोलता है और प्राणी उसके बुलाने पर ही बोलते हैं। गुरु की वाणी स्वयं ब्रह्म है और गुरु के शब्द द्वारा ही प्रभु से मिलन होता है। हे नानक ! तू उस अकाल पुरुष का नाम सिमरन कर जिसकी आराधना से तुझे शांति एवं सुख उपलब्ध होगा॥ ४॥ ३०॥ ६३॥

सिरीरागु महला ३ ॥ जगि हउमै मैलु दुखु पाइआ मलु लागी दूजै भाइ ॥ मलु हउमै धोती किवै न उतरै जे सउ तीरथ नाइ ॥ बहु बिधि करम कमावदे दूणी मलु लागी आइ ॥ पड़िऐ मैलु न उतरै पूछहु गिआनीआ जाइ ॥ १ ॥ मन मेरे गुर सरणि आवै ता निरमलु होइ ॥ मनमुख हरि हरि करि थके मैलु न सकी धोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनि मैलै भगति न होवई नामु न पाइआ जाइ ॥ मनमुख मैले मैले मुए जासनि पति गवाइ ॥ गुर परसादी मनि वसै मलु हउमै जाइ समाइ ॥ जिउ अंधेरै दीपकु बालीऐ तिउ गुर गिआनि अगिआनु तजाइ ॥ २ ॥ हम कीआ हम करहगे हम मूरख गावार ॥ करणै वाला विसरिआ दूजै भाइ पिआरु ॥ माइआ जेवडु दुखु नही सभि भवि थके संसारु ॥ गुरमती सुखु पाईऐ सचु नामु उर धारि ॥ ३ ॥ जिस नो मेले सो मिलै हउ तिसु बलिहारै जाउ ॥ ए मन भगती रतिआ सचु बाणी निज थाउ ॥ मनि रते जिहवा रती हरि गुण सचे गाउ ॥ नानक नामु न वीसरै सचे माहि समाउ ॥ ४ ॥ ३१ ॥ ६४ ॥

समूचा जगत् मोह—माया में लिप्त होने के कारण अहंकार की मैल से बहुत दुखी है। सांसारिक ममत्व के कारण ही अहंकार की मैल लगती है। यह अहंकार की मैल किसी भी विधि द्वारा निवृत्त नहीं होती, चाहे प्राणी सैंकड़ों तीर्थों का भी स्नान कर ले। अनेकों कर्मकाण्डों द्वारा भी यह मैल दुगुणी हो

जाती है और प्राणी के साथ कर्मों के फलस्वरूप लगी ही रहती है। धर्म ग्रंथों के अध्ययन द्वारा भी यह मलिनता दूर नहीं होती, इस बारे चाहे ब्रह्मवेताओं से पता कर लो॥ १॥ हे मेरे मन ! यद्यपि तू गुरु साहिब के आश्रय में आ जाओ तो इस मलिनता से निवृत्त हो सकते हो। गुरु की शरण में आने से प्राणी निर्मल हो सकता है। मनमुख प्राणी हरि के नाम का उच्चारण भले ही कितना भी करते रहे, वे इससे थक गए हैं किन्तु उनकी मलिनता निवृत्त नहीं हुई॥ १॥ रहाउ॥ मन अशुद्ध होने के कारण भगवान की भक्ति नहीं होती और न ही नाम (प्रभु) प्राप्त होता है। मनमुख प्राणी मलिन ही जीवन व्यतीत करते हैं और फिर मलिन ही इस संसार से प्राण त्याग कर चले जाते हैं। वह अपना मान-सम्मान गंवा कर संसार से कूच कर जाते हैं। यदि गुरु की कृपा-दृष्टि हो तो प्राणी की मलिनता नाश हो जाती है और पारब्रह्म प्राणी के हृदय में वास करता है। जैसे दीपक जलाने से अंधकार में प्रकाश होता है, वैसे ही सतिगुरु की कृपा-दृष्टि से अज्ञान का नाश होकर ज्ञान का आगमन होता है। सतिगुरु के ज्ञान द्वारा अज्ञान रूपी अँधेरा दूर हो जाता है॥ २॥ जो प्राणी कहते फिरते हैं कि हमने किया या हम करेंगे, वे अहंकार के कारण मूर्ख तथा गंवार हैं। वे प्राणी कर्त्ता परमेश्वर को भूलकर गए हैं तथा ईर्ष्या-द्वेष में लिप्त रहते हैं, जिसके कारण उन्हें दुख भोगने पड़ते हैं। प्राणी के लिए कोई पीड़ा इतनी बड़ी नहीं जितनी माया की है, इसलिए प्राणी सारा संसार भ्रमण करके सुख संचय के प्रयास में ही लगा रहता है और धन के लोभ में भ्रष्ट होकर सारे जगत् से थक-हार कर चूर हो जाता है। लेकिन सतिगुरु के उपदेश द्वारा सत्य-नाम को हृदय में बसा कर परमात्मा मिलन का सुख प्राप्त करता है॥ ३॥ जिस पुण्यात्मा को परमात्मा प्राप्त हो जाता है, वही परमेश्वर से मिलन करवाता है, मैं उस पर कुर्बान हूँ। इस मन के ईश्वर-भक्ति में लीन होने से सत्यवाणी द्वारा जीव निजस्वरूप में स्थिर रहता है। मन के लीन होने से जिह्वा भी सत्यस्वरूप परमात्मा की महिमा गायन करती है। हे नानक ! जिन्हें भगवान का नाम विस्मृत नहीं होता, वहीं सत्य में लीन होते हैं॥ ४॥ ३१॥ ६४॥

{महला ४, चौथी पातिशाही श्री गुरु रामदास जी की वाणी का शुभारंभ}

सिरीरागु महला ४ घरु १ ॥ मै मनि तनि बिरहु अति अगला किउ प्रीतमु मिलै घरि आइ ॥ जा देखा प्रभु आपणा प्रभि देखिऐ दुखु जाइ ॥ जाइ पुछा तिन सजणा प्रभु कितु बिधि मिलै मिलाइ ॥ १ ॥ मेरे सतिगुरा मै तुझ बिनु अवरु न कोइ ॥ हम मूरख मुगध सरणागती करि किरपा मेले हरि सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु दाता हरि नाम का प्रभु आपि मिलावै सोइ ॥ सतिगुरि हरि प्रभु बुझिआ गुर जेवडु अवरु न कोइ ॥ हउ गुर सरणाई ढहि पवा करि दइआ मेले प्रभु सोइ ॥ २ ॥ मनहठि किनै न पाइआ करि उपाव थके सभु कोइ ॥ सहस सिआणप करि रहे मनि कोरै रंगु न होइ ॥ कूड़ि कपटि किनै न पाइओ जो बीजै खावै सोइ ॥ ३ ॥ सभना तेरी आस प्रभु सभ जीअ तेरे तूं रासि ॥ प्रभ तुधहु खाली को नही दरि गुरमुखा नो साबासि ॥ बिखु भउजल डुबदे कढि लै जन नानक की अरदासि ॥ ४ ॥ १ ॥ ६५ ॥

मेरी आत्मा व देह विरह की दुख अग्नि में अत्यंत जल रही है। अब मेरा प्रियतम प्रभु किस तरह मेरे हृदय रूपी गृह में आकर मिलेगा। जब मुझे प्रियतम (प्रभु) के दर्शन प्राप्त होते हैं, तो उसके दर्शन-मात्र से ही समस्त दुख निवृत्त हो जाते हैं। जीवात्मा को अपने स्वामी (प्रभु) के दर्शनों की आकांक्षा है और वह कहती है कि मैं साधु-संतों के पास जाकर निवेदन करती हूँ कि किस विधि से मुझे प्रियतम प्रभु के दर्शन प्राप्त हो सकते हैं॥ १॥ हे मेरे सतिगुरु ! आपके बिना मेरा अन्य कोई नहीं। मैं मूर्ख एवं नासमझ हूँ, इसलिए आपकी शरण में आई हूँ, मुझ पर कृपा करके उस प्रीतम-प्रभु से

मिलन करवा दीजिए॥ १॥ रहाउ॥ सतिगुरु ही प्रभु के नाम का दाता है। सतिगुरु ही आत्मा का परमात्मा से सुमेल करवाता है, इसलिए सतिगुरु महान् है। सतिगुरु ने ही अकाल पुरुष को जान लिया है, गुरु के बिना जगत् में अन्य कोई बड़ा नहीं। जीवात्मा कहती है कि मैं गुरु की शरण में नतमस्तक हूँ। अतः गुरु जी की कृपा–दृष्टि द्वारा मेरा मिलन उस परमात्मा से अवश्य होगा॥ २॥ मन के हठ के कारण गुरु विहीन जीव को अकाल पुरुष कदापि प्राप्त नहीं होगा। समस्त लोग प्रत्येक उपाय करके हार गए हैं। हजार चतुराईयों का प्रयोग करके प्राणी असफल हो गए हैं। उनके कोरे मन पर ईश्वर के प्रेम का रंग धारण नहीं हुआ। झूठ एवं छल–कपट का प्रयोग करके कोई भी प्राणी परमेश्वर को नहीं पा सकता। प्राणी जैसे बीज बोता है वैसा ही फल उसे प्राप्त होता है॥ ३॥ हे पारब्रह्म ! इस जगत् के समस्त प्राणी तुम्हारे ही हैं, उन जीवों की समस्त पूँजी तुम ही हो और तुम्हीं से उनकी आशा–उम्मीद हैं। हे अकालपुरुष ! तेरी शरण में आने वाला प्राणी कदापि खाली हाथ नहीं जाता, तुम कृपालु एवं दयालु हो। तेरे दर में आने वाला गुरमुख प्रशस्ति का अधिकारी बन जाता है। गुरु जी वचन करते हैं कि हे परमेश्वर ! मेरी सादर विनती है कि मनुष्य पापों के भयानक समुद्र के भीतर डूब रहे हैं, इनकी रक्षा करो। हे प्रभु ! जगत् के जीवों को भवसागर में डूबने से बचा लो॥ ४॥ १॥ ६५॥

सिरीरागु महला ४ ॥ नामु मिलै मनु त्रिपतीऐ बिनु नामै ध्रिगु जीवासु ॥ कोई गुरमुखि सजणु जे मिलै मै दसे प्रभु गुणतासु ॥ हउ तिसु विटहु चउ खंनीऐ मै नाम करे परगासु ॥ १ ॥ मेरे प्रीतमा हउ जीवा नामु धिआइ ॥ बिनु नावै जीवणु ना थीऐ मेरे सतिगुर नामु द्रिड़ाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु अमोलकु रतनु है पूरे सतिगुर पासि ॥ सतिगुर सेवै लगिआ कढि रतनु देवै परगासि ॥ धंनु वडभागी वडभागीआ जो आइ मिले गुर पासि ॥ २ ॥ जिना सतिगुरु पुरखु न भेटिओ से भागहीण वसि काल ॥ ओइ फिरि फिरि जोनि भवाईअहि विचि विसटा करि विकराल ॥ ओना पासि दुआसि न भिटीऐ जिन अंतरि क्रोधु चंडाल ॥ ३ ॥ सतिगुरु पुरखु अंम्रित सरु वडभागी नावहि आइ ॥ उन जनम जनम की मैलु उतरै निरमल नामु द्रिड़ाइ ॥ जन नानक उतम पदु पाइआ सतिगुर की लिव लाइ ॥ ४ ॥ २ ॥ ६६ ॥

भगवान का नाम मिलने से मन तृप्त हो जाता है लेकिन नामविहीन मनुष्य का जीवन धिक्कार योग्य है। इस बारे गुरु जी उत्तर देते हैं कि यदि सतिगुरु से मिलन हो जाए तो वही मुझे गुणनिधान ईश्वर के बारे में ज्ञान प्रदान करे। जो मुझे नाम का आलोक दे मैं उस पर चार टुकड़े होकर कुर्बान जाऊँ ॥ १॥ हे मेरे प्रियतम प्रभु ! नाम–सिमरन से ही मेरा यह समूचा जीवन है। नाम के बिना मनुष्य जीवन व्यर्थ है। इसलिए हे मेरे सतिगुरु ! मुझ पर प्रभु के नाम का रहस्य दृढ़ करवा दो॥ १॥ रहाउ॥ भगवान का नाम अमूल्य रत्न है, जो सतिगुरु के पास विद्यमान है। सतिगुरु वह उज्ज्वल नाम रूपी रत्न निकाल कर प्रकाशमान कर देते है, जो उनकी श्रद्धापूर्वक सेवा करता है। भाग्यवानों में भी सौभाग्यशाली वे धन्य हैं, जो गुरु के पास आकर उनसे मिलते हैं और नाम रूपी उस खजाने को प्राप्त कर लेते हैं॥ २॥ जो प्राणी सतिगुरु महापुरुष के मिलन से वंचित हैं, वे भाग्यहीन काल (मृत्यु) के अधीन हैं। ऐसे प्राणी पुनः पुनः जन्म–मरण के चक्कर में पड़कर विभिन्न योनियों में भटकते रहते हैं। ऐसे प्राणी मलिनता के भयानक कीट बने पड़े हैं। उनके समीप आकर छूना भी नहीं चाहिए, क्योंकि हृदय के भीतर दुश्वृत्तियाँ पनपती हैं॥ ३॥ महापुरुष सतिगुरु अमृत के सरोवर हैं, जहाँ पर भाग्यशाली इसमें आकर स्नान करते हैं। अर्थात् उनकी कृपा–दृष्टि से कृपा–पात्र बनते हैं। उनकी जन्म–जन्मांतर की मलिनता धुल जाती है और उनके भीतर पवित्र नाम सुदृढ़ हो जाता है। गुरु जी कहते हैं कि हे नानक ! सतिगुरु की ओर सुरति लगाने से (गुरु–भक्तों को) परम पद की प्राप्ति होती है॥ ४॥ २॥ ६६॥

सिरीरागु महला ४ ॥ गुण गावा गुण विथरा गुण बोली मेरी माइ ॥ गुरमुखि सजणु गुणकारीआ मिलि सजण हरि गुण गाइ ॥ हीरै हीरु मिलि बेधिआ रंगि चलूलै नाइ ॥ १ ॥ मेरे गोविंदा गुण गावा त्रिपति मनि होइ ॥ अंतरि पिआस हरि नाम की गुरु तुसि मिलावै सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु रंगहु वडभागीहो गुरु तुठा करे पसाउ ॥ गुरु नामु द्रिड़ाए रंग सिउ हउ सतिगुर कै बलि जाउ ॥ बिनु सतिगुर हरि नामु न लभई लख कोटी करम कमाउ ॥ २ ॥ बिनु भागा सतिगुरु ना मिलै घरि बैठिआ निकटि नित पासि ॥ अंतरि अगिआन दुखु भरमु है विचि पड़दा दूरि पईआसि ॥ बिनु सतिगुर भेटे कंचनु ना थीऐ मनमुखु लोहु बूडा बेड़ी पासि ॥ ३ ॥ सतिगुरु बोहिथु हरि नाव है कितु बिधि चड़िआ जाइ ॥ सतिगुर कै भाणै जो चलै विचि बोहिथ बैठा आइ ॥ धंनु धंनु वडभागी नानका जिना सतिगुरु लए मिलाइ ॥ ४ ॥ ३ ॥ ६७ ॥

हे मेरी माता ! मैं तो उस पारब्रह्म का ही यश गान करता हूँ, उसकी प्रशंसा मैं प्रत्यक्ष करता हूँ और उनके गुणों की व्याख्या करता हूँ। प्रभु प्रेमी गुरमुख परोपकारी एवं गुणों के भण्डार हैं, उनसे मिलकर मैं पारब्रह्म का यश–कीर्ति करता हूँ। गुरु रूपी रत्न से मिलकर मेरा हृदय बंध गया है और हरिनाम से गहन लाल वर्ण रंग गया है।। १।। हे मेरे गोविन्द ! तेरा गुण–गान करने से मेरा मन तृप्त हो गया है। मेरे हृदय के भीतर तेरे नाम की तृष्णा है। परमात्मा कृपा–दृष्टि करे तो गुरु जी हर्षित होकर वह नाम (प्रभु) मुझे प्रदान करें।। १।। रहाउ।। हे प्राणी ! अपने हृदय को प्रभु के प्रेम से रंग लो। हे सौभाग्यशालियो ! गुरु जी आपकी सेवा भावना से प्रसन्न होकर आपको अपनी दातें प्रदान करेंगे। मैं उस सतिगुरु पर बलिहार जाता हूँ, जो मेरे भीतर हरि नाम को प्रीत से दृढ़ करते हैं। सतिगुरु के बिना अकालपुरुष का नाम प्राप्त नहीं होता। चाहे प्राणी लाखों करोड़ों कर्मकाण्ड संस्कार इत्यादि करता रहे, उसे ईश्वर प्राप्त नहीं होता।। २।। प्राणी को भाग्य के बिना सच्चा गुरु प्राप्त नहीं होता चाहे वह गृह में सदा इसके निकट एवं पास ही बैठा है। मनुष्य के भीतर मूर्खता एवं संदेह की पीड़ा ने वास किया हुआ है। मनुष्य एवं परमात्मा के बीच अज्ञान का पर्दा पड़ा हुआ है। जब अज्ञान निवृत्त हो तो ज्ञान के उजाले से मनुष्य एवं परमात्मा के बीच का पर्दा निवृत्त हो जाता है। सतिगुरु के मिलन के बिना प्राणी स्वर्णमय नहीं होता। अपितु अधर्मी लोहे की भाँति डूब जाता है, जबकि नाव इतनी करीब ही हो।। ३।। सतिगुरु जी हरि–नाम रूपी जहाज है, किस विधि द्वारा उस पर सवार हुआ जा सकता है ? गुरु जी कथन करते हैं कि जो सतिगुरु की आज्ञानुसार चलता है, वह हरि नाम रूपी जहाज में बैठ जाता है। हे नानक ! वे व्यक्ति धन्य–धन्य एवं भाग्यवान हैं जिनको सतिगुरु जी अपने साथ मिला कर परमात्मा से मिलन करवाते हैं।। ४।। ३।। ६७।।

सिरीरागु महला ४ ॥ हउ पंथु दसाई नित खड़ी कोई प्रभु दसे तिनि जाउ ॥ जिनी मेरा पिआरा राविआ तिन पीछै लागि फिराउ ॥ करि मिंनति करि जोदड़ी मै प्रभु मिलणै का चाउ ॥ १ ॥ मेरे भाई जना कोई मोकउ हरि प्रभु मेलि मिलाइ ॥ हउ सतिगुर विटहु वारिआ जिनि हरि प्रभु दीआ दिखाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ होइ निमाणी ढहि पवा पूरे सतिगुर पासि ॥ निमाणिआ गुरु माणु है गुरु सतिगुरु करे साबासि ॥ हउ गुरु सालाहि न रजऊ मै मेले हरि प्रभु पासि ॥ २ ॥ सतिगुर नो सभ को लोचदा जेता जगतु सभु कोइ ॥ बिनु भागा दरसनु ना थीऐ भागहीण बहि रोइ ॥ जो हरि प्रभ भाणा सो थीआ धुरि लिखिआ न मेटै कोइ ॥ ३ ॥ आपे सतिगुरु आपि हरि आपे मेलि मिलाइ ॥ आपि दइआ करि मेलसी गुर सतिगुर पीछै पाइ ॥ सभु जगजीवनु जगि आपि है नानक जलु जलहि समाइ ॥ ४ ॥ ४ ॥ ६८ ॥

{इस पद में गुरु साहिब एक जिज्ञासु स्त्री के रूप में सम्बोधन करते हैं।}

जीव रूपी नारी नित्य खड़ी होकर कहती है कि मैं प्रतिदिन अपने प्रियतम प्रभु का मार्ग देखती रहती हूँ कि यदि कोई मुझे मार्गदर्शन करे तो उस प्रियतम–पति के पास जाकर मिल सकूँ। मैं उन महापुरुषों के आगे–पीछे लगी रहती हूँ अर्थात् सेवा–भावना करती हूँ, जिन्होंने परमेश्वर को माना है। मैं उनका अनुकरण करती हूँ क्योंकि मुझे प्रभु–पति के मिलन का चाव है कृपा करके मुझे परमात्मा से मिला दो॥ १॥ हे मेरे भाई ! कोई तो मेरे हरि–प्रभु से मेरा मिलन करवा दे। मैं सतिगुरु पर तन–मन से न्यौछावर हूँ जिन्होंने हरि–प्रभु के दर्शन करवा दिए हैं। सतिगुरु ने मेरी मनोकामना पूर्ण की है॥ १॥ रहाउ॥ मैं अत्यंत विनम्र होकर अपने सतिगुरु पर नतमस्तक होती हूँ। सतिगुरु जी बेसहारा प्राणियों का एकमात्र सहारा हैं। मेरे सतिगुरु ने परमात्मा से मिलन करवा दिया है, इसलिए मैं उनका गुणगान करते तृप्त नहीं होती। जीवात्मा कहती है कि मेरे भीतर सतिगुरु की स्तुति की भूख लगी रहती है॥ २॥ सतिगुरु से समस्त प्राणी उतना ही स्नेह रखते हैं, जितना सारा जगत् एवं सृष्टि कर्त्ता प्रभु प्रेम करते हैं। भाग्यहीन प्राणी दर्शन न होने के कारण अश्रु बहाते रहते हैं क्योंकि जो विधाता को स्वीकार होता है तैसा ही होता है। उस पारब्रह्म के हुक्म से जो लिखा होता है, उसे कोई मिटा नहीं सकता॥ ३॥ हरि–परमेश्वर स्वयं ही सतिगुरु है, वह स्वयं ही जिज्ञासु रूप है और स्वयं ही सत्संग द्वारा मिलन करवाता है। हरि–परमेश्वर प्राणी पर दया करके उसे सतिगुरु की शरण प्रदान करता है। गुरु जी कथन करते हैं कि प्रभु–परमेश्वर ही सम्पूर्ण सृष्टि का जीवनाधार है और प्राणी को स्वयं में विलीन कर लेता है। हे नानक ! जैसे जल में जल अभेद हो जाता है वैसे ही परमात्मा का भक्त परमात्मा के भीतर ही लीन हो जाता है॥ ४॥ ४॥ ६८॥

सिरीरागु महला ४ ॥ रसु अंम्रितु नामु रसु अति भला कितु बिधि मिलै रसु खाइ ॥ जाइ पुछहु सोहागणी तुसा किउ करि मिलिआ प्रभु आइ ॥ ओइ वेपरवाह न बोलनी हउ मलि मलि धोवा तिन पाइ ॥ १ ॥ भाई रे मिलि सजण हरि गुण सारि ॥ सजणु सतिगुरु पुरखु है दुखु कढै हउमै मारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखीआ सोहागणी तिन दइआ पई मनि आइ ॥ सतिगुर वचनु रतंनु है जो मंने सु हरि रसु खाइ ॥ से वडभागी वड जाणीअहि जिन हरि रसु खाधा गुर भाइ ॥ २ ॥ इहु हरि रसु वणि तिणि सभतु है भागहीण नही खाइ ॥ बिनु सतिगुर पलै ना पवै मनमुख रहे बिललाइ ॥ ओइ सतिगुर आगै ना निवहि ओना अंतरि क्रोधु बलाइ ॥ ३ ॥ हरि हरि हरि रसु आपि है आपे हरि रसु होइ ॥ आपि दइआ करि देवसी गुरमुखि अंम्रितु चोइ ॥ सभु तनु मनु हरिआ होइआ नानक हरि वसिआ मनि सोइ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६६ ॥

नाम–रस अमृत समान मधुर तथा सर्वश्रेष्ठ है। इस प्रभु रूपी रस का पान करने के लिए इसे किस तरह प्राप्त किया जाए ? इस जगत् की सुहागिनों से जाकर पता करूँगी कि उन्होंने प्रभु–पति की संगति क्योंकर प्राप्त की है। ऐसा न हो कि वे बेपरवाही से मेरी उपेक्षा करें, किन्तु मैं तो पुनः पुनः उनके चरण धोऊंगी, शायद वह प्रभु मिलन का रहस्य बता दें॥ १॥ हे भाई ! मित्र गुरु से मिल तथा परमात्मा की प्रशंसा करते हुए गुणगान कर। सतिगुरु जी महापुरुष हैं, जो दुख, दरिद्र, कलह एवं अभिमान निवृत्त करते हैं॥ १॥ रहाउ॥ गुरमुख आत्माएँ विवाहित जीवन का सुख एवं प्रसन्नता प्राप्त करती हैं अर्थात् प्रभु–पति को प्राप्त करके वे करुणावती हो जाती हैं। उनके हृदय में दया निवास करती है। सच्चे गुरु की वाणी अनमोल रत्न है, जो कोई प्राणी उसे स्वीकृत करता है, वह हरि रूपी अमृत का पान करता है। वे प्राणी बड़े भाग्यशाली हैं, जिन्होंने गुरु के कथनानुसार हरि–रस का पान किया है॥ २॥ यह हरि–रस वन–तृण

सर्वत्र उपस्थित है अर्थात् सृष्टि के कण–कण में विद्यमान है। लेकिन वे प्राणी भाग्यहीन हैं जो इससे वंचित रहते हैं। सतिगुरु की दया के बिना इसकी सही पहचान असंभव है, इसलिए मनमुखी प्राणी अश्रु बहाते रहते हैं। वे प्राणी सतिगुरु के समक्ष अपना तन–मन समर्पित नहीं करते, अपितु उनके भीतर काम, क्रोध इत्यादि विकार विद्यमान रहते हैं॥ ३॥ वह हरि–प्रभु ही स्वयं नाम का स्वाद है एवं स्वयं ही ईश्वरीय अमृत है। दया करके हरि स्वयं ही गुरु के माध्यम से यह नामामृत दुहकर प्राणी को प्रदान करता है। हे नानक ! प्राणी की देह एवं आत्मा मन में हरिनाम के वस जाने से हर्षित हो जाती है एवं परमात्मा उसके चित्त के भीतर समा जाता है॥ ४॥ ५॥ ६६॥

सिरीरागु महला ४॥ दिनसु चड़ै फिरि आथवै रैणि सबाई जाइ ॥ आव घटै नरु ना बुझै निति मूसा लाजु टुकाइ ॥ गुड़ु मिठा माइआ पसरिआ मनमुखु लगि माखी पचै पचाइ ॥ १ ॥ भाई रे मै मीतु सखा प्रभु सोइ ॥ पुतु कलतु मोहु बिखु है अंति बेली कोइ न होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमति हरि लिव उबरे अलिपतु रहे सरणाइ ॥ ओनी चलणु सदा निहालिआ हरि खरचु लीआ पति पाइ ॥ गुरमुखि दरगह मंनीअहि हरि आपि लए गलि लाइ ॥ २ ॥ गुरमुखा नो पंथु परगटा दरि ठाक न कोई पाइ ॥ हरि नामु सलाहनि नामु मनि नामि रहनि लिव लाइ ॥ अनहद धुनी दरि वजदे दरि सचै सोभा पाइ ॥ ३ ॥ जिनी गुरमुखि नामु सलाहिआ तिना सभ को कहै साबासि ॥ तिन की संगति देहि प्रभ मै जाचिक की अरदासि ॥ नानक भाग वडे तिना गुरमुखा जिन अंतरि नामु परगासि ॥ ४ ॥ ३३ ॥ ३१ ॥ ६ ॥ ७० ॥

दिन उदय होता है एवं पुनः सूर्यास्त हो जाता है और सारी रात्रि बीत जाती है। इस तरह उम्र कम हो रही है लेकिन मनुष्य समझता नहीं, काल रूपी मूषक प्रतिदिन जीवन की रस्सी को कुतर रहा है। उसके आसपास माया रूपी मीठा गुड़ बिखरा पड़ा है और मक्खी की भाँति उससे चिपक कर मनमुख मानव अपना अनमोल जीवन गंवा रहा है॥ १॥ हे भाई ! वह प्रभु ही मेरा मित्र एवं सखा है। सुपुत्रों एवं माया की ममता विष समान है। अंतकाल में प्राणी का कोई भी सहायक नहीं होता॥ १॥ रहाउ॥ जो प्राणी गुरु उपदेशानुसार पारब्रह्म से वृत्ति लगा कर रखता है वह इस संसार से मोक्ष प्राप्त करता है और पारब्रह्म के आश्रय में रहकर इस संसार से अप्रभावित रहते हैं। वह सदैव मृत्यु को अपने नेत्रों के समक्ष रखते हैं और प्रवास हेतु व्यय के लिए परमेश्वर के नाम की राशि एकत्र करते हैं, जिससे लोकों में उन्हें मान–यश प्राप्त होता है। गुरमुख जीवों की प्रभु के दरबार भरपूर प्रशंसा होती है। ईश्वर इन जीवों को आलिंगन में ले लेता है॥ २॥ गुरमुख जीवों हेतु यह मार्ग प्रत्यक्ष है। ईश्वर के दरबार में प्रवेश करने में कोई बाधा नहीं आती। वे सदैव हरिनाम का यशगान करते हैं, उनके नाम में चित्त को भीतर रखते हैं तथा नित्य हरिनाम के यश में लिवलीन रहते हैं। प्रभु के दर पर अनाहत ध्वनि होती है, जो गुरमुख प्राणी प्रभु आश्रय में पहुँचते हैं तथा प्रभु के सच्चे दरबार में सम्मान प्राप्त करते हैं॥ ३॥ जो गुरमुख प्राणी गुरुओं द्वारा प्रभु का यशोगान करते हैं, उन्हें सबकी प्रशंसा प्राप्त होती है। हे मेरे परमेश्वर ! मुझे उन पवित्र आत्माओं की संगति प्रदान करो, मैं तेरा याचक यही वंदना करता हूँ। हे नानक ! उन गुरमुख प्राणियों के बड़े सौभाग्य हैं, जिनके हृदय के भीतर भगवान के नाम का प्रकाश उज्ज्वल है॥ ४॥ ३३॥ ३१॥ ६॥ ७०॥

{महला ५, पाँचवी पातिशाही श्री गुरु अर्जुन देव जी की वाणी का आरंभ}

सिरीरागु महला ५ घरु १ ॥ किआ तू रता देखि कै पुत्र कलत्र सीगार ॥ रस भोगहि खुसीआ करहि माणहि रंग अपार ॥ बहुतु करहि फुरमाइसी वरतहि होइ अफार ॥ करता चिति न आवई मनमुख अंध गवार ॥ १ ॥ मेरे मन सुखदाता हरि सोइ ॥ गुर परसादी पाईऐ करमि परापति होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥

कपड़ि भोगि लपटाइआ सुइना रुपा खाकु ॥ हैवर गैवर बहु रंगे कीए रथ अथाक ॥ किस ही चिति न पावही बिसरिआ सभ साक ॥ सिरजणहारि भुलाइआ विणु नावै नापाक ॥ २ ॥ लैदा बद दुआइ तूं माइआ करहि इकत ॥ जिस नो तूं पतीआइदा सो सणु तुझै अनित ॥ अहंकारु करहि अहंकारीआ विआपिआ मन की मति ॥ तिनि प्रभि आपि भुलाइआ ना तिसु जाति न पति ॥ ३ ॥ सतिगुरि पुरखि मिलाइआ इको सजणु सोइ ॥ हरि जन का राखा एकु है किआ माणस हउमै रोइ ॥ जो हरि जन भावै सो करे दरि फेरु न पावै कोइ ॥ नानक रता रंगि हरि सभ जग महि चानणु होइ ॥ ४ ॥ १ ॥ ७१ ॥

इस पद में गुरु जी माया, पुत्र, स्त्री व भौतिक पदार्थों में लिप्त स्वेच्छाचारी जीव को उपदेश देते हैं कि हे मूर्ख ! तुम अपने पुत्रों, स्त्री व सांसारिक पदार्थों को देखकर इतने मुग्ध क्यों हो रहे हो ? तू संसार के विभिन्न रस भोग रहा है, हर्ष, आनंद तथा अनंत स्वादों में रत हो। तुम बहुत सारे आदेश प्रदान करते हो और लोगों से अहंभाव से व्यवहार करते हो। कर्त्ता–पुरुष परमात्मा तुझे स्मरण नहीं होता, इसलिए तुम मनमुख, अज्ञानी एवं गंवार हो॥१॥ हे मेरे मन ! वास्तविक सुख–समृद्धि प्रदान करने वाला वह भगवान है। मनुष्य के सुकर्मों द्वारा ही उसे गुरु मिलता है और गुरु की अपार कृपा से ही परमेश्वर प्राप्त होता है॥१॥ रहाउ॥ हे मूर्ख ! तुम सुन्दर वस्त्र पहनने, नाना प्रकार के व्यंजन सेवन करने तथा सोने–चांदी के आभूषण व सम्पति इत्यादि एकत्र करने में लगे हो। ये अश्व, हाथी तथा अनेक प्रकार के रथ इत्यादि तुम्हारे पास हैं। वह न थकने वाली गाड़ियाँ जमा करता है। इस वैभव में वह किसी अन्य को स्मरण ही नहीं करता। अपने समस्त संबंधियों की भी उपेक्षा कर दी है। उसने इस सृष्टि के रचनाकार प्रभु को विस्मृत कर दिया है और नाम के बिना वह अपवित्र है॥ २॥ लोगों की बद–दुआएँ ले–लेकर तुमने इतनी धनराशि जमा कर ली है। जिन संबंधियों की प्रसन्नता हेतु तुम यह सब करते हो, वे भी तुम्हारे सहित नश्वर हैं। हे अहंकारी मनुष्य ! तुम अभिमान करते हो तथा घमण्ड में लीन होकर मन–मति पर चलते हो। जिस प्राणी ने कुमार्ग पर चलकर प्रभु को विस्मृत कर दिया है, उसकी न तो कोई जाति है और न ही कोई मान–सम्मान॥३॥ सतिगुरु ने कृपावश उस परम–पुरुष से मुझे मिला दिया है जो कि मेरा अद्वितीय मित्र तथा एकमात्र सहारा है। प्रभु–भक्तों का एक परमेश्वर ही रक्षक है। अहंकारी मनुष्य अहंकारवश व्यर्थ क्यों विलाप करते रहते हो। परमेश्वर वही करता है, जो कुछ भक्तों को अच्छा लगता है। ईश्वर के दरबार से भगवान के भक्तों को कोई लौटा नहीं सकता। हे नानक ! जो मानव जीव भगवान के प्रेम रंग में मग्न हैं वह सम्पूर्ण संसार में प्रकाश पुंज बन जाता है॥ ४॥ १॥ ७१॥

सिरीरागु महला ५ ॥ मनि बिलासु बहु रंगु घणा द्रिसटि भूलि खुसीआ ॥ छत्रधार बादिसाहीआ विचि सहसे परीआ ॥ १ ॥ भाई रे सुखु साधसंगि पाइआ ॥ लिखिआ लेखु तिनि पुरखि बिधातै दुखु सहसा मिटि गइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जेते थान थनंतरा तेते भवि आइआ ॥ धन पाती वड भूमीआ मेरी मेरी करि परिआ ॥ २ ॥ हुकमु चलाए निसंग होइ वरतै अफरिआ ॥ सभु को वसगति करि लइओनु बिनु नावै खाकु रलिआ ॥ ३ ॥ कोटि तेतीस सेवका सिध साधिक दरि खरिआ ॥ गिरंबारी वड साहबी सभु नानक सुपनु थीआ ॥ ४ ॥ २ ॥ ७२ ॥

हे मानव ! तेरा मन आनंद–उल्लास, गहरे तथा अनेकों विलास मनाने तथा नेत्रों के दृश्यों के रस में डूबा होने के कारण जीवन का मनोरथ भूल गया है। छत्रपति बादशाह जिन्हें सिंहासन प्राप्त हुआ हैं, वह भी संशय में पड़े हुए हैं॥ १॥ हे भाई ! सत्संग के भीतर बड़ा सुख प्राप्त होता है। उस विधाता ने जिस पुरुष का शुभ भाग्य लिख दिया है उसकी समस्त चिंताएँ मिट जाती हैं॥१॥ रहाउ॥

मैं इतने स्थानों के भीतर चक्र काट आया हूँ कि जितनी की सर्वत्र हैं। धन के स्वामी एवं बड़े–बड़े जिमींदार 'यह मेरी है, यह मेरी है' पुकारते हुए नश्वर हो गए हैं॥ २॥ वे निर्भय होकर आदेश जारी करते हैं तथा अहंकारवश होकर समस्त कार्य करते हैं। उसने सारे वश में कर लिए हैं, परन्तु हरि–नाम के बिना वे मिट्टी में मिल जाते हैं॥ ३॥ प्रभु के दरबार में तेतीस करोड़ देवी–देवता, सिद्ध इत्यादि कर्मचारियों तथा अभ्यासी अनुचरों की भाँति खड़े थे और जो पहाड़ों, समुद्रों पर साम्राज्य कायम करके शासन करते थे, हे नानक! ये सारे ही स्वप्न हो गए हैं॥ ४॥ २॥ ७२॥

सिरीरागु महला ५ ॥ भलके उठि पपोलीऐ विणु बुझे मुगध अजाणि ॥ सो प्रभु चिति न आइओ छुटैगी बेबाणि ॥ सतिगुर सेती चितु लाइ सदा सदा रंगु माणि ॥ १ ॥ प्राणी तूं आइआ लाहा लैणि ॥ लगा कितु कुफकड़े सभ मुकदी चली रैणि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कुदम करे पसु पंखीआ दिसै नाही कालु ॥ ओतै साथि मनुखु है फाथा माइआ जालि ॥ मुकते सेई भालीअहि जि सचा नामु समालि ॥ २ ॥ जो घरु छडि गवावणा सो लगा मन माहि ॥ जिथै जाइ तुधु वरतणा तिस की चिंता नाहि ॥ फाथे सेई निकले जि गुर की पैरी पाहि ॥ ३ ॥ कोई रखि न सकई दूजा को न दिखाइ ॥ चारे कुंडा भालि कै आइ पइआ सरणाइ ॥ नानक सचै पातिसाहि डुबदा लइआ कढाइ ॥ ४ ॥ ३ ॥ ७३ ॥

मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर अपनी देहि का पालन–पोषण करता है, किन्तु जब तक ईश्वर बारे ज्ञान नहीं होता, वह मूर्ख तथा नासमझ ही बना रहता है। यदि परमेश्वर को स्मरण न किया तो व्यर्थ ही यह (देहि) उजाड़ श्मशान घाट में फैंक दी जाएगी। यदि इस देहि में अर्थात् मानव योनि में रहते हम सतिगुरु को हृदय में बसा लें तो सदैव के लिए आनंद की प्राप्ति होगी॥१॥ हे नश्वर प्राणी! तुम मानव–योनि में लाभ प्राप्ति हेतु आया था। हे प्राणी! तुम व्यर्थ के कर्मों में संलग्न क्यों हो गए हो? जिससे शनैः शनैः तेरी सारी जीवन रात्रि समाप्त होती जा रही है॥१॥ रहाउ॥ जिस तरह पशु–पक्षी क्रीड़ा मग्न रहते हैं और मृत्यु के बारे कुछ नहीं सूझता। इसी प्रकार मनुष्य है जो मोह–माया के जाल में फँसा हुआ है। जो प्राणी सच्चे परमेश्वर के नाम की आराधना करते हैं, उन्हें ही मोक्ष की प्राप्ति होती है॥ २॥ वह घर जिसे त्यागकर खाली कर देना है, वह मन से जुड़ा हुआ है। तुझे उसकी कोई चिन्ता नहीं, जहाँ जाकर तूने निवास करना है। जो प्राणी गुरु के चरण आश्रय में आ जाते हैं, वह फाँसी अर्थात् जीवन–मृत्यु के चक्कर से मोक्ष प्राप्त करते हैं॥३॥ गुरु के बिना कोई बचा नहीं सकता। मुझे अन्य कोई दिखाई नहीं देता। मैं चारों दिशाओं में खोज–भाल करके गुरु की शरण में आ गया हूँ। हे नानक! मैं डूब रहा था, परन्तु सच्चे पातशाह ने मेरी रक्षा करके मुझे पार कर दिया है॥४॥३॥७३॥

सिरीरागु महला ५ ॥ घड़ी मुहत का पाहुणा काज सवारणहारु ॥ माइआ कामि विआपिआ समझै नाही गावारु ॥ उठि चलिआ पछुताइआ परिआ वसि जंदार ॥ १ ॥ अंधे तूं बैठा कंधी पाहि ॥ जे होवी पूरबि लिखिआ ता गुर का बचनु कमाहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरी नाही नह डडुरी पकी वढणहार ॥ लै लै दात पहुतिआ लावे करि तईआरु ॥ जा होआ हुकमु किरसाण दा ता लुणि मिणिआ खेतारु ॥ २ ॥ पहिला पहरु धंधै गइआ दूजै भरि सोइआ ॥ तीजै झाख झखाइआ चउथै भोरु भइआ ॥ कद ही चिति न आइओ जिनि जीउ पिंडु दीआ ॥ ३ ॥ साधसंगति कउ वारिआ जीउ कीआ कुरबाणु ॥ जिस ते सोझी मनि पई मिलिआ पुरखु सुजाणु ॥ नानक डिठा सदा नालि हरि अंतरजामी जाणु ॥ ४ ॥ ४ ॥ ७४ ॥

हे जीव ! तुम घड़ी दो घड़ी के अतिथि बनकर उस दुनिया में आए हो, अतः अपना सिमरन रूपी कार्य संवार लो। किन्तु जीव तो मोह—माया व कामवासना में ही लिप्त है और जीवन के असल मनोरथ को यह मूर्ख समझ ही नहीं रहा। जब इस से यह कूच कर करेगा और यमों के वश में हो जाएगा, तब यह पश्चाताप करेगा॥ १॥ हे अज्ञानी मनुष्य ! तू काल रूपी नदी के तट पर विराजमान है। अर्थात् मृत्यु रूपी सागर के तट पर बैठे हुए हो। यदि तेरे पूर्व कर्म शुभ हैं तो तू गुरु के उपदेश को पा सकता है॥ १॥ रहाउ॥ जैसे कच्ची फसल, कच्ची—पक्की अथवा पूर्ण पक्की फसल किसी भी अवस्था में काटी जा सकती है, वैसे ही बाल्यावस्था, युवावस्था अथवा वृद्धावस्था में कभी भी मृत्यु आ सकती है। जैसे फसल काटने वाले दरांत लेकर कृषक के बुलावे पर फसल काटने के लिए तैयार हो जाते हैं, वैसे ही यम के आदेश पर यमदूत किसी भी समय पाश लेकर मानव को लेने आ जाते हैं। जब कृषक का आदेश हुआ तो फसल काटने वाले सारा खेत काट कर नाप लेते हैं और अपना पारिश्रमिक ले लेते हैं, वैसे ही कृषक रूपी परमात्मा के आदेश होते ही यमदूत मानव जीव का शरीर रूपी खेत नाप लेते हैं अर्थात् श्वासों की गिनती करते हैं और श्वास पूरे होते ही शरीर रूपी खेत श्वास रूपी फसल से रिक्त कर देते हैं॥ २॥ मानव की आयु का प्रथम भाग बाल्यावस्था तो क्रीड़ा में व्यतीत हो गया तथा दूसरा भाग किशोरावस्था गहन निद्रा में चला गया। तीसरा भाग युवावस्था सांसारिक व्यर्थ कार्यों में गुजर गया तथा चौथा भाग वृद्धावस्था के आते ही काल रूपी दिन उदय हो गया। इतने लम्बे समय में वह परमात्मा स्मरण नहीं हुआ, जिसने यह मानव तन प्रदान किया है॥ ३॥ गुरु जी कथन करते है कि मैंने तो साधु—संगति पर जीवन न्यौछावर कर दिया। मुझे ऐसा सतिगुरु रूपी मित्र मिल गया है, जिससे मेरे अन्तर्मन में उस परमात्मा का ज्ञान प्रकाश उदय हुआ। हे नानक ! उस अन्तर्यामी परमात्मा को जान लो, जो सबके साथ रहता है॥ ४॥ ४॥ ७४॥

सिरीरागु महला ५ ॥ सभे गला विसरनु इको विसरि न जाउ ॥ धंधा सभु जलाइ कै गुरि नामु दीआ सचु सुआउ ॥ आसा सभे लाहि कै इका आस कमाउ ॥ जिनी सतिगुरु सेविआ तिन अगै मिलिआ थाउ ॥ १ ॥ मन मेरे करते नो सालाहि ॥ सभे छडि सिआणपा गुर की पैरी पाहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुख भुख नह विआपई जे सुखदाता मनि होइ ॥ कित ही कंमि न छिजीऐ जा हिरदै सचा सोइ ॥ जिसु तूं रखहि हथ दे तिसु मारि न सकै कोइ ॥ सुखदाता गुरु सेवीऐ सभि अवगण कढै धोइ ॥ २ ॥ सेवा मंगै सेवको लाईआं अपुनी सेव ॥ साधू संगु मसकते तूठै पावा देव ॥ सभु किछु वसगति साहिबै आपे करण करेव ॥ सतिगुर कै बलिहारणै मनसा सभ पूरेव ॥ ३ ॥ इको दिसै सजणो इको भाई मीतु ॥ इकसै दी सामगरी इकसै दी है रीति ॥ इकस सिउ मनु मानिआ ता होआ निहचलु चीतु ॥ सचु खाणा सचु पैनणा टेक नानक सचु कीतु ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७५ ॥

मैं प्रत्येक बात भूल जाऊँ, परन्तु एक ईश्वर को कदापि न विस्मृत करूँ। गुरु ने समस्त धंधों को नष्ट करके सत्य आनंद को प्राप्त करने वाला परमेश्वर का नाम प्रदान किया है। मन की सभी आशाएँ त्याग कर केवल एक ही आशा प्रभु—मिलन की आशा मैं अर्जित करूँ। जो प्राणी सतिगुरु की भरपूर सेवा करता है, उसे परलोक में प्रभु के दरबार में बैठने का सम्मान प्राप्त होता है॥ १॥ हे मेरे मन ! सृष्टिकर्ता का गुणगान कर। अपनी समस्त चतुराइयाँ त्याग कर गुरु के चरणों की शरण ग्रहण करो॥ १॥ रहाउ॥ यदि सर्वगुण सम्पन्न सुखदाता परमेश्वर हृदय में बसा हुआ हो तो दुखों एवं तृष्णाओं की लालसा से मुक्ति मिल जाती है। यदि वह सच्चा स्वामी मनुष्य के हृदय में वास कर जाए तो उसे किसी भी कार्य में असफलता नहीं मिलती। परम—परमेश्वर जिसे भी अपना हाथ देकर रक्षा करता है, उसे

कोई भी नहीं मार सकता। सुखों के दाता गुरु की आज्ञानुसार आचरण करना ही सर्वोत्तम है, क्योंकि वह प्राणी के समस्त अवगुणों को धोकर निर्मल कर देते हैं॥ २॥ भक्तजन भगवान के समक्ष विनती करें कि हे प्रभु ! यह सेवक उनकी सेवा करना चाहता है, जिन्हें तूने अपनी सेवा में लगाया हुआ है। हे गुरुदेव ! आपकी प्रसन्नता से ही साधु–संगति एवं नाम–सिमरन का कठिन परिश्रम किया जा सकता है। सृष्टि के समस्त कार्य सच्चे पातशाह के अधीन हैं, वह स्वयं ही सब कुछ करने एवं करवाने वाला है। मैं उस सतिगुरु पर बलिहारी जाता हूँ, जो सभी की कामनाएँ पूर्ण करने वाला है॥ ३॥ हे मेरे मित्र। मुझे वह परमात्मा ही मात्र अपना सज्जन दिखाई देता है और केवल एक ही मेरा भ्राता तथा मित्र है। समूचे ब्रह्माण्ड की सारी सामग्री एक परमेश्वर की ही है और केवल उस हरि ने ही प्रत्येक वस्तु को नियमबद्ध किया है। एक परमेश्वर में ही मेरा मन लीन हो गया, तभी मेरा मन निश्चल हुआ है। हे नानक ! सत्य नाम ही उसके मन का आहार है, सत्य नाम उसकी पोशाक और सत्य नाम को ही उसने अपना आश्रय बनाया है॥ ४॥ ५॥ ७५॥

सिरीरागु महला ५॥ सभे थोक परापते जे आवै इकु हथि ॥ जनमु पदारथु सफलु है जे सचा सबदु कथि ॥ गुर ते महलु परापते जिसु लिखिआ होवै मथि ॥ १ ॥ मेरे मन एकस सिउ चितु लाइ ॥ एकस बिनु सभ धंधु है सभ मिथिआ मोहु माइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लख खुसीआ पातिसाहीआ जे सतिगुरु नदरि करेइ ॥ निमख एक हरि नामु देइ मेरा मनु तनु सीतलु होइ ॥ जिस कउ पूरबि लिखिआ तिनि सतिगुर चरन गहे ॥ २ ॥ सफल मूरतु सफला घड़ी जितु सचे नालि पिआरु ॥ दूखु संतापु न लगई जिसु हरि का नामु अधारु ॥ बाह पकड़ि गुरि काढिआ सोई उतरिआ पारि ॥ ३ ॥ थानु सुहावा पवितु है जिथै संत सभा ॥ ढोई तिस ही नो मिलै जिनि पूरा गुरू लभा ॥ नानक बधा घरु तहां जिथै मिरतु न जनमु जरा ॥ ४ ॥ ६ ॥ ७६ ॥

एक परमेश्वर की प्राप्ति से जीवन की समस्त वस्तुएँ (आनंद–उल्लास) प्राप्त हो जाती हैं। यदि प्रभु का नाम–स्मरण किया जाए तो अमूल्य मनुष्य जीवन भी फलदायक हो जाता है। जिसके मस्तक पर श्रेष्ठ भाग्य लिखा हुआ हो, वह गुरु की कृपा–दृष्टि से परमेश्वर को प्राप्त कर लेता है॥१॥ हे मेरे मन ! एक प्रभु के स्मरण में अपना चित्त लगा। एक परमात्मा के अलावा अन्य कर्म–धर्म समस्त विपदा ही हैं। धन–दौलत की लालसा समस्त मिथ्या है॥ १॥ रहाउ॥ यदि सतिगुरु की कृपा–दृष्टि हो जाए तो लाखों साम्राज्य (उच्च पद) एवं ऐश्वर्य–वैभव के आनंद चरणों में बिखर जाएँ। यदि सतिगुरु एक क्षण–मात्र के लिए भी मुझे परमेश्वर के नाम की अनुकंपा कर दें तो मेरी आत्मा एवं देहि शीतल हो जाएँगे। जिस प्राणी के भाग्य में पूर्व–कर्मों का भाग्य–फल लिखा हुआ हो, वही सतिगुरु के चरणों की शरण लेता है॥२॥ वह मुहूर्त एवं घड़ी भी फलदायक है, जब सत्य स्वरूप परमेश्वर से प्रेम किया जाता है। जिस प्राणी को ईश्वर के नाम का आधार प्राप्त है, उसे कोई भी दुःख–दर्द उत्पन्न नहीं होता। जिस प्राणी को गुरु ने भुजा से पकड़कर उबारा है, वह भवसागर से पार हो जाता है॥३॥ वह स्थान बहुत पावन एवं शोभायमान है, जहाँ प्रभु के नाम का यशगाान (सत्संग) होता है। उस व्यक्ति को ही प्रभु के दरबार का आश्रय मिलता है, जिसको पूर्ण गुरुदेव की प्राप्ति हो गई है। हे नानक ! गुरुन्मुख प्राणी ने अपना घर वहाँ बनाया है, जहाँ न मृत्यु है, न जन्म है और न ही बुढ़ापा है॥४॥६॥७६॥

स्रीरागु महला ५ ॥ सोई धिआईऐ जीअड़े सिरि साहां पातिसाहु ॥ तिस ही की करि आस मन जिस का सभसु वेसाहु ॥ सभि सिआणपा छडि कै गुर की चरणी पाहु ॥ १ ॥ मन मेरे सुख सहज सेती जपि नाउ ॥ आठ पहर प्रभु धिआइ तूं गुण गोइंद नित गाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तिस की सरनी

परु मना जिसु जेवडु अवरु न कोइ ॥ जिसु सिमरत सुखु होइ घणा दुखु दरदु न मूले होइ ॥ सदा सदा करि चाकरी प्रभु साहिबु सचा सोइ ॥ २ ॥ साधसंगति होइ निरमला कटीऐ जम की फास ॥ सुखदाता भै भंजनो तिसु आगै करि अरदासि ॥ मिहर करे जिसु मिहरवानु तां कारजु आवै रासि ॥ ३ ॥ बहुतो बहुतु वखाणीऐ ऊचो ऊचा थाउ ॥ वरना चिहना बाहरा कीमति कहि न सकाउ ॥ नानक कउ प्रभ मइआ करि सचु देवहु अपुणा नाउ ॥ ४ ॥ ७ ॥ ७७ ॥

हे जीव! उस भगवान का ध्यान कर, जो राजाओं और महाराजाओं का भी बादशाह है। उस भगवान की मन में आशा रख, जिस पर सब को भरोसा है। अपनी समस्त चलाकियाँ त्याग कर गुरु के चरणों में शरण प्राप्त कर॥१॥ हे मेरे मन! सुख और शांति से प्रभु के नाम का अभ्यास कर। आठों पहर प्रभु का ध्यान करो तथा गोविन्द–हरि की महिमा नित्य ही गायन करो॥१॥ रहाउ॥ हे मेरे मन! जिस परमात्मा के स्वरूप जितना बड़ा अन्य कोई नहीं है, तुम उस परमात्मा की शरण में रहो। उसकी आराधना करने से बहुत आत्मिक सुख मिलता है तथा पीड़ा एवं दुःख का बिल्कुल नाश हो जाता है। इसलिए तू सदैव उस पारब्रह्म की सेवा अर्थात् यशोगान में रत रहा कर॥२॥ साधू–संतों की संगति करने से मन पवित्र हो जाता है और मृत्यु का फँदा कट जाता है। वह परमात्मा सुखों का दाता तथा भय नाश करने वाला है, इसलिए उसके समक्ष वंदना करो। वह कृपालु तथा दयालु परमात्मा जिस पर अपनी कृपा–दृष्टि करता है, उसके समस्त कार्य सम्पन्न हो जाते हैं॥३॥ उस प्रभु को विशाल से भी विशाल कहा जाता है और उसका निवास ऊँचे से भी ऊँचा सर्वोच्च है। वह वर्ण–भेद जाति–चिन्ह आदि से रहित है और मैं उसके मूल्य का वर्णन नहीं कर सकता। हे सत्य परमेश्वर! नानक पर अपनी दया–दृष्टि करके उसे अपना सत्य–स्वरूप नाम प्रदान करो॥ ४॥ ७॥ ७७॥

स्रीरागु महला ५ ॥ नामु धिआए सो सुखी तिसु मुखु ऊजलु होइ ॥ पूरे गुर ते पाईऐ परगटु सभनी लोइ ॥ साधसंगति कै घरि वसै एको सचा सोइ ॥ १ ॥ मेरे मन हरि हरि नामु धिआइ ॥ नामु सहाई सदा संगि आगै लए छडाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुनीआ कीआ वडिआईआ कवनै आवहि कामि ॥ माइआ का रंगु सभु फिका जातो बिनसि निदानि ॥ जा कै हिरदै हरि वसै सो पूरा परधानु ॥ २ ॥ साधू की होहु रेणुका अपणा आपु तिआगि ॥ उपाव सिआणप सगल छडि गुर की चरणी लागु ॥ तिसहि परापति रतनु होइ जिसु मसतकि होवै भागु ॥ ३ ॥ तिसै परापति भाईहो जिसु देवै प्रभु आपि ॥ सतिगुर की सेवा सो करे जिसु बिनसै हउमै तापु ॥ नानक कउ गुरु भेटिआ बिनसे सगल संताप ॥ ४ ॥ ८ ॥ ७८ ॥

जो व्यक्ति प्रभु का नाम–सिमरन करता है, वह इहलोक में सुखी रहता है तथा उसका मुख प्रभु की सभा में उज्ज्वल होता है किन्तु प्रभु का नाम पूर्ण गुरु द्वारा ही प्राप्त होता है, वह समस्त लोकों में प्रसिद्ध हो जाता है। वह सत्य परमेश्वर साधसंगत के गृह में निवास करता है॥ १॥ हे मेरे मन! तू हरि–परमेश्वर के नाम का ध्यान किया करो। चूंकि भगवान का नाम–सिमरन ही सदैव साथ रहता है और सहायक होता है जो आगे जाकर यमों के कष्टों से छुड़ा लेता है॥ १॥ रहाउ॥ हे जीव! दुनिया का दिया हुआ सम्मान कभी काम नहीं आता। माया का रंग फीका है, जो अन्त में नष्ट हो जाता है। जिसके हृदय में प्रभु वास करता है, वही आदरणीय पूर्ण एवं मुख्य है॥२॥ हे प्राणी! अपनी अहं–भावना त्याग कर संतों के चरणों की धूल हो जाओ। व्यर्थ के उपाय तथा चतुराईयाँ समस्त त्याग दे और गुरु के चरणाश्रय में आ जा। केवल वहीं नाम रूपी रत्न को प्राप्त करता है, जिसके मस्तक

पर भाग्य रेखाएँ उज्ज्वल होती हैं॥३॥ हे सज्जनो ! जिसको परमात्मा स्वयं प्रदान करता है, वही नाम को प्राप्त करता है। जिस मनुष्य ने अपना अहंत्व रूपी रोग दूर कर लिया है, वही सतिगुरु की सेवा कर सकता है। हे नानक ! जिसे गुरु मिला है, उसके सभी दुःख—संताप नष्ट हो गए हैं॥४॥८॥७८॥

सिरीरागु महला ५ ॥ इकु पछाणू जीअ का इको रखणहारु ॥ इकस का मनि आसरा इको प्राण अधारु ॥ तिसु सरणाई सदा सुखु पारब्रहमु करतारु ॥ १ ॥ मन मेरे सगल उपाव तिआगु ॥ गुरु पूरा आराधि नित इकसु की लिव लागु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इको भाई मितु इकु इको मात पिता ॥ इकस की मनि टेक है जिनि जीउ पिंडु दिता ॥ सो प्रभु मनहु न विसरै जिनि सभु किछु वसि कीता ॥ २ ॥ घरि इको बाहरि इको थान थनंतरि आपि ॥ जीअ जंत सभि जिनि कीए आठ पहर तिसु जापि ॥ इकसु सेती रतिआ न होवी सोग संतापु ॥ ३ ॥ पारब्रहमु प्रभु एकु है दूजा नाही कोइ ॥ जीउ पिंडु सभु तिस का जो तिसु भावै सु होइ ॥ गुरि पूरै पूरा भइआ जपि नानक सचा सोइ ॥ ४ ॥ ९ ॥ ७९ ॥

एक परमात्मा ही मनुष्य का ज्ञाता है तथा वही एक उसका संरक्षक है। केवल वही मन का सहारा है और प्राणाधार वही एक प्रभु है। उस पारब्रह्म परमात्मा की शरण लेने से सदैव सुखों की उपलब्धि होती है॥ १॥ हे मेरे मन ! प्रभु—प्राप्ति के अपने अन्य सभी उपाय त्याग दे। केवल परिपूर्ण गुरु की नित्य आराधना करो तथा गुरु के मार्गदर्शन से उसी एक परमात्मा में लिवलीन हो जाओ॥१॥रहाउ॥ एक ईश्वर ही सच्चा भ्राता, मित्र एवं माता—पिता है। मेरे मन के भीतर उस प्रभु का ही आश्रय है, जिसने मुझे आत्मा तथा यह देह प्रदान की है। उस प्रभु को, जो संसार की प्रत्येक वस्तु अपने अधीन रखता है, मुझे अपने मन में कदापि विस्मृत न हो॥ २॥ वह सर्वव्यापक परमेश्वर हृदय रूपी घर में भी विद्यमान है और शरीर के बाहर भी मौजूद है। वह स्वयं ही समस्त स्थानों के भीतर बसा हुआ है। जिस सृष्टिकर्ता ने मनुष्य एवं अन्य जीवों की रचना की है, उसकी आठों पहर आराधना करनी चाहिए। यदि एक ईश्वर के प्रेम में मग्न हो जाओगे तो तुम्हारे समस्त शोक—संतापों का विनाश हो जाएगा॥ ३॥ एक परमात्मा ही पारब्रह्म है, अन्य कोई नहीं। मनुष्य का जीवन एवं शरीर समस्त उसी की देन हैं, जो कुछ उसे अच्छा लगता है, वही होता है। हे नानक ! परिपूर्ण गुरु द्वारा मनुष्य भी सम्पूर्ण हो गया है, क्योंकि उसने गुरुन्मुख होकर भगवान का नाम—सिमरन किया है॥ ४॥ ९॥ ७९॥

सिरीरागु महला ५ ॥ जिना सतिगुर सिउ चितु लाइआ से पूरे परधान ॥ जिन कउ आपि दइआलु होइ तिन उपजै मनि गिआनु ॥ जिन कउ मसतकि लिखिआ तिन पाइआ हरि नामु ॥ १ ॥ मन मेरे एको नामु धिआइ ॥ सरब सुखा सुख ऊपजहि दरगह पैधा जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जनम मरण का भउ गइआ भाउ भगति गोपाल ॥ साधू संगति निरमला आपि करे प्रतिपाल ॥ जनम मरण की मलु कटीऐ गुर दरसनु देखि निहाल ॥ २ ॥ थान थनंतरि रवि रहिआ पारब्रहमु प्रभु सोइ ॥ सभना दाता एकु है दूजा नाही कोइ ॥ तिसु सरणाई छुटीऐ कीता लोड़े सु होइ ॥ ३ ॥ जिन मनि वसिआ पारब्रहमु से पूरे परधान ॥ तिन की सोभा निरमली परगटु भई जहान ॥ जिनी मेरा प्रभु धिआइआ नानक तिन कुरबान ॥ ४ ॥ १० ॥ ८० ॥

जिन्होंने सतिगुरु के उपदेश का चिन्तन किया है, वह मनुष्य पूर्ण व श्रेष्ठ हो जाते हैं। जिन पर भगवान स्वयं कृपालु होता है, उनके मन में ज्ञान उत्पन्न होता है, जिनके माथे पर शुभ भाग्य अंकित होते हैं, वही भगवान का नाम—सिमरन प्राप्त करते हैं॥ १॥ हे मेरे मन ! इसीलिए तुम उस एक परमात्मा के नाम का ध्यान करो, क्योंकि नाम—सिमरन से ही मानव के जीवन में श्रेष्ठ सुख उत्पन्न

होते हैं तथा प्रभु के दरबार में वह प्रतिष्ठित पोशाक पहन कर जाएगा॥ १॥ रहाउ॥ भगवान की प्रेमा–भक्ति करने से मनुष्य जन्म–मरण के भय से मुक्त होता है। संतों की संगति करने से मनुष्य निर्मल हो जाता है जिसके फलस्वरूप स्वामी (प्रभु) स्वयं उसका पालन–पोषण करता है। उनके आवागमन (जन्म–मरण) की मैल कट जाती है और वे सतिगुरु का दर्शन करके कृतार्थ हो जाता है॥ २॥ परम–परमेश्वर कण–कण में विद्यमान है। केवल परमात्मा ही समस्त प्राणियों का स्वामी है, अन्य दूसरा कोई नहीं। उसकी शरण में आने से जीव को जन्म–मरण के बंधनों से मुक्ति मिल जाती है, जो कुछ परमेश्वर करना चाहता है, वही होता है॥३॥ जिनके हृदय में सर्वज्ञाता परमेश्वर वास करता है, वह सम्पूर्ण एवं प्रमुख है। वह जीव शुभ गुणों के कारण श्रेष्ठ पुरुष हो जाते हैं। उनकी सुकीर्ति पवित्र होकर सम्पूर्ण विश्व में फैल जाती है। हे नानक! जिन्होंने मेरे परमात्मा का ध्यान किया है, मैं उन पर कुर्बान हूँ॥ ४॥ १०॥ ८०॥

सिरीरागु महला ५ ॥ मिलि सतिगुर सभु दुखु गइआ हरि सुखु वसिआ मनि आइ ॥ अंतरि जोति प्रगासीआ एकसु सिउ लिव लाइ ॥ मिलि साधू मुखु ऊजला पूरबि लिखिआ पाइ ॥ गुण गोविंद नित गावणे निरमल साचै नाइ ॥ १ ॥ मेरे मन गुर सबदी सुखु होइ ॥ गुर पूरे की चाकरी बिरथा जाइ न कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन कीआ इछां पूरीआ पाइआ नामु निधानु ॥ अंतरजामी सदा संगि करणैहारु पछानु ॥ गुर परसादी मुखु ऊजला जपि नामु दानु इसनानु ॥ कामु क्रोधु लोभु बिनसिआ तजिआ सभु अभिमानु ॥ २ ॥ पाइआ लाहा लाभु नामु पूरन होए काम ॥ करि किरपा प्रभि मेलिआ दीआ अपणा नामु ॥ आवण जाणा रहि गइआ आपि होआ मिहरवानु ॥ सचु महलु घरु पाइआ गुर का सबदु पछानु ॥ ३॥ भगत जना कउ राखदा आपणी किरपा धारि ॥ हलति पलति मुख ऊजले साचे के गुण सारि ॥ आठ पहर गुण सारदे रते रंगि अपार ॥ पारब्रहमु सुख सागरो नानक सद बलिहार ॥ ४॥ ११॥ ८१ ॥

सतिगुरु के मिलन से समस्त दुःख निवृत्त हो गए हैं और सुख स्वरूप परमात्मा हृदय में आ बसा है। एक ईश्वर के साथ सुरति लगाने से अन्तर्मन में पवित्र ज्ञान–ज्योति का प्रकाश हो गया है। साधू–संतों से भेंट करके मेरा चेहरा उज्ज्वल हो गया है तथा पूर्व कर्मों के लिखे शुभ लेख के कारण मैंने परमात्मा को प्राप्त कर लिया है। सृष्टि के स्वामी गोविंद तथा सत्य नाम का यश सदैव करने से मैं निर्मल हो गया हूँ॥१॥ हे मेरे मन! गुरु के शब्द द्वारा ही सुख प्राप्त होता है। सतिगुरु की सेवा कभी व्यर्थ नहीं जाती, अपितु गुरु की सेवा से अवश्य फल प्राप्त होता है॥१॥ रहाउ॥ भगवान ने मेरी मनोकामनाएँ पूर्ण कर दी हैं और मुझे नाम रूपी खजाना प्राप्त हो गया है। अंतर्यामी सदैव तेरे अंग–संग है तथा वह निरपेक्ष कर्त्ता है, उसकी पहचान कर लो। गुरु कृपा द्वारा नाम–सिमरन, दान–पुण्य एवं पवित्र तीर्थ–स्नान करने से मानव का मुख उज्ज्वल हो जाता है अर्थात् ख्याति प्राप्त होती है। ऐसे व्यक्ति के अन्तर्मन से काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि सब नष्ट हो जाते हैं तथा अहंकार का त्याग कर देते हैं॥२॥ जिन्होंने भगवान के नाम–सिमरन का जीवन में लाभार्जित किया है, उनके समस्त कार्य सम्पूर्ण हो जाते हैं। ऐसे जीवों को भगवान स्वयं कृपा करके अपने साथ मिलाता है और उन्हें अपना नाम–सिमरन प्रदान करता है। जिन पर भगवान कृपालु हुआ है, उनका आवागमन समाप्त हो गया है। उन्होंने गुरु के उपदेश का मनन करके सत्यस्वरूप परमात्मा का दर प्राप्त किया है॥ ३॥ परमात्मा अपनी दया–दृष्टि से भक्तों की स्वयं विषय–विकारों से रक्षा करता है। इहलोक एवं परलोक में उनके मुख उज्ज्वल हो जाते हैं, जो पारब्रह्म के गुणों को हृदय में स्मरण करते हैं। दिन के आठों पहर ही वह ईश्वर के सर्वगुणों का यशोगान करते हैं तथा उसकी अनन्त प्रीत में मग्न हैं। हे नानक! मैं सुखों के सागर पारब्रह्म पर सदैव बलिहारी जाता हूँ॥४॥११॥८१॥

सिरीरागु महला ५ ॥ पूरा सतिगुरु जे मिलै पाईऐ सबदु निधानु ॥ करि किरपा प्रभ आपणी जपीऐ अंम्रित नामु ॥ जनम मरण दुखु काटीऐ लागै सहजि धिआनु ॥ १ ॥ मेरे मन प्रभ सरणाई पाइ ॥ हरि बिनु दूजा को नही एको नामु धिआइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कीमति कहणु न जाईऐ सागरु गुणी अथाहु ॥ वडभागी मिलु संगती सचा सबदु विसाहु ॥ करि सेवा सुख सागरै सिरि साहा पातिसाहु ॥ २ ॥ चरण कमल का आसरा दूजा नाही ठाउ ॥ मै धर तेरी पारब्रहम तेरै ताणि रहाउ ॥ निमाणिआ प्रभु माणु तूं तेरै संगि समाउ ॥ ३ ॥ हरि जपीऐ आराधीऐ आठ पहर गोविंदु ॥ जीअ प्राण तनु धनु रखे करि किरपा राखी जिंदु ॥ नानक सगले दोख उतारिअनु प्रभु पारब्रहम बखसिंदु ॥ ४ ॥ १२ ॥ ८२ ॥

मानव को यदि पूर्ण सतिगुरु मिल जाए तो उसे नाम रूपी खजाना मिल जाता है। हे प्रभु ! तुम मुझ पर अपनी ऐसी कृपा करो कि मैं तुम्हारे नामामृत का जाप करूँ। मेरे जन्म–मरण का दुख दूर हो जाए तो मेरा सहजावस्था में ध्यान लग जाए।।१।। हे मेरे मन ! तुम प्रभु की शरण प्राप्त करो। उस एक परमात्मा के नाम का ध्यान करो, क्योंकि उस हरि के बिना अन्य कोई नहीं है।।१।। रहाउ।। उस परमेश्वर का मूल्यांकन कदापि नहीं किया जा सकता। क्योंकि वह परमात्मा अथाह गुणों का सागर है। सौभाग्य के कारण तुम सत्संग में मिल जाओ तथा वहाँ से श्रद्धा रूपी मूल्य देकर गुरु से सत्य उपदेश खरीद लो। उस सुखों के सागर की सेवा कर अर्थात् श्रद्धा सहित उस परमात्मा की आराधना कर, वह राजाओं का भी महाराजा सबसे बड़ा मालिक है।। २।। हमें प्रभु के चरण कंवलों का सहारा है क्योंकि उसके अतिरिक्त अन्य कोई ठिकाना नहीं। हे परमेश्वर ! तुम्हारी शक्ति से ही मेरा अस्तित्व है। मुझे आपका ही आश्रय है और आपके सत्य द्वारा ही मैं जीवित हूँ। हे प्रभु ! सम्मानहीनों का ही तू सम्मान है जिन पर तुम्हारी कृपा हुई है, वह तुझ में ही विलीन हुए हैं।।३।। गोविन्द को आठों प्रहर जपते रहना चाहिए, उसकी आराधना करनी चाहिए। भगवान अपनी कृपा करके जीवों के प्राणों, तन, धन की विषय–विकारों से रक्षा करता है। हे नानक ! परमात्मा ने मेरे समस्त पाप दूर कर दिए हैं, चूंकि वह पारब्रह्म क्षमाशील है।। ४।। १२।। ८२।।

सिरीरागु महला ५ ॥ प्रीति लगी तिसु सच सिउ मरै न आवै जाइ ॥ ना वेछोड़िआ विछुड़ै सभ महि रहिआ समाइ ॥ दीन दरद दुख भंजना सेवक कै सत भाइ ॥ अचरज रूपु निरंजनो गुरि मेलाइआ माइ ॥ १॥ भाई रे मीतु करहु प्रभु सोइ ॥ माइआ मोह परीति ध्रिगु सुखी न दीसै कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दाना दाता सीलवंतु निरमलु रूपु अपारु ॥ सखा सहाई अति वडा ऊचा वडा अपारु ॥ बालकु बिरधि न जाणीऐ निहचलु तिसु दरवारु ॥ जो मंगीऐ सोई पाईऐ निधारा आधारु ॥ २ ॥ जिसु पेखत किलविख हिरहि मनि तनि होवै सांति ॥ इक मनि एकु धिआईऐ मन की लाहि भरांति ॥ गुण निधानु नवतनु सदा पूरन जा की दाति ॥ सदा सदा आराधीऐ दिनु विसरहु नही राति ॥ ३ ॥ जिन कउ पूरबि लिखिआ तिन का सखा गोविंदु ॥ तनु मनु धनु अरपी सभो सगल वारीऐ इह जिंदु ॥ देखै सुणै हदूरि सद घटि घटि ब्रहमु रविंदु ॥ अकिरतघणा नो पालदा प्रभ नानक सद बखसिंदु ॥ ४ ॥ १३ ॥ ८३ ॥

भक्तों की उस परमसत्य परमात्मा से प्रीति लगी है, जो न कभी जन्म लेता है और न ही मरता है। जुदा किए भी वह जुदा नहीं होता क्योंकि वह परमात्मा कण–कण में विद्यमान है। वह प्रभु अनाथों के दुःख–दर्द नाश करता है और अपने भक्तों को आदर–सहित मिलता है। हे मेरी माता ! वह माया रहित प्रभु आश्चर्यजनक स्वरूप वाला है तथा गुरु ने आकर मुझे उससे मिला दिया है।।१।। हे भाई ! उस परमेश्वर को अपना मित्र बना। मोह–माया की प्रीति को धिक्कार है। इससे कोई भी सुखी दिखाई

नहीं देता ॥१॥ रहाउ॥ वह परमेश्वर सर्वज्ञ, महान दाता, शीलवान, पवित्र, सुन्दर तथा बेअंत है। वह प्राणी का साथी, सहायक, महान्, अनंत, विशाल एवं सर्वोच्च है। परमात्मा को न बालक अथवा न ही वृद्ध समझना चाहिए, उस परमात्मा का दरबार सदैव स्थिर है। हम जो कुछ भी परमात्मा के समक्ष श्रद्धापूर्वक याचना करते हैं, वह उससे प्राप्त कर लेते हैं। सर्वगुण सम्पन्न परमात्मा आश्रयहीनों का आश्रय है॥२॥ जिस प्रभु के दर्शन—मात्र से समस्त पाप दूर हो जाते हैं, मन एवं देह शीतल हो जाते हैं तथा मन की समस्त भ्रांतियाँ मिट जाती हैं, उस प्रभु को एकाग्रचित होकर स्मरण करना चाहिए। वह परमेश्वर गुणों का भण्डार है, वह सदैव निरोग एवं दानशील है। उसकी अनुकंपा अपरम्पार है। दिन एवं रात उसे कभी भी विस्मृत मत करो, सदैव उस पारब्रह्म की आराधना करते रहनी चाहिए ॥ ३॥ जिसके माथे पर पूर्व से ही शुभ कर्मो का भाग्य लिखा है, गोविन्द उसका घनिष्ठ बना है। उसे मैं अपना तन, मन, धन सब कुछ समर्पित करता हूँ और यह जीवन भी उस परमेश्वर पर न्यौछावर करता हूँ। सर्वव्यापक परमात्मा नित्य ही जीवों को अपने समक्ष देखता एवं सुनता है। वह घट—घट प्रत्येक हृदय में व्याप्त है। परमात्मा इतना दयालु—कृपालु है कि वह कृतघ्नों का भी पालन—पोषण करता है। हे नानक! वह परमात्मा सदैव क्षमाशील है॥४॥१३॥८३॥

सिरीरागु महला ५ ॥ मनु तनु धनु जिनि प्रभि दीआ रखिआ सहजि सवारि ॥ सरब कला करि थापिआ अंतरि जोति अपार ॥ सदा सदा प्रभु सिमरीऐ अंतरि रखु उर धारि ॥ १ ॥ मेरे मन हरि बिनु अवरु न कोइ ॥ प्रभ सरणाई सदा रहु दूखु न विआपै कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रतन पदारथ माणका सुइना रुपा खाकु ॥ मात पिता सुत बंधपा कूड़े सभे साक ॥ जिनि कीता तिसहि न जाणई मनमुख पसु नापाक ॥ २ ॥ अंतरि बाहरि रवि रहिआ तिस नो जाणै दूरि ॥ त्रिसना लागी रचि रहिआ अंतरि हउमै कूरि ॥ भगती नाम विहूणिआ आवहि वंञहि पूर ॥ ३ ॥ राखि लेहु प्रभु करणहार जीअ जंत करि दइआ ॥ बिनु प्रभ कोइ न रखनहारु महा बिकट जम भइआ ॥ नानक नामु न वीसरउ करि अपुनी हरि मइआ॥ ४॥ १४॥ ८४॥

जिस प्रभु ने यह मन, तन व धन इत्यादि सब कुछ दिया है तथा इनको सजा संवार कर रखा हुआ है। उस प्रभु ने सर्वकला सम्पूर्ण शक्तियों द्वारा शरीर की रचना की है और अन्तर्मन में अपनी ज्योति प्रकट की है। उस प्रभु की सदा आराधना करनी चाहिए तथा हृदय में बसाकर रखें॥१॥ हे मेरे मन! ईश्वर के बिना अन्य कोई समर्थ नहीं। सदैव उस प्रभु की शरण में रहने से तुझे कोई विपत्ति नहीं आएगी॥ १॥ रहाउ॥ स्वर्ण, चांदी, माणिक्य, हीरे—मोती रत्न पदार्थ समस्त मिट्टी समान हैं। माता—पिता, सगे—संबंधी, रिश्तेदार समस्त झूठे रिश्तेदार हैं। जिस प्रभु ने सब कुछ उत्पन्न किया है, उसे स्वेच्छाचारी एवं अपवित्र पशु समान जीव स्मरण नहीं करता॥२॥ परमेश्वर शरीर के अन्दर एवं बाहर परिपूर्ण है, वह कण—कण में व्याप्त है लेकिन उसे मनुष्य दूर समझता है। जीव के अन्तर्मन में भोग विलास की तृष्णा है, वह विषय—विकारों में लिप्त है और उसका हृदय अहंकार एवं झूठ में भरा हुआ है। प्रभु की भक्ति एवं नाम—सिमरन से वंचित होने के कारण प्राणियों के समुदाय योनियों में फँसकर आते जाते रहते हैं॥ ३॥ हे करुणा निधान पारब्रह्म! इन जीव—जन्तुओं पर कृपा—दृष्टि करके उनकी रक्षा करो। यमराज बड़ा विकट हो गया है। प्रभु के बिना अन्य कोई रखवाला नहीं है। नानक जी का कथन है कि हे प्रभु! अपनी कृपा करो तांकि मैं कभी भी तेरा नाम न भूलूँ॥४॥१४॥८४॥

सिरीरागु महला ५ ॥ मेरा तनु अरु धनु मेरा राज रूप मै देसु ॥ सुत दारा बनिता अनेक बहुतु रंग अरु वेस ॥ हरि नामु रिदै न वसई कारजि कितै न लेखि ॥ १ ॥ मेरे मन हरि हरि नामु धिआइ ॥

करि संगति नित साध की गुर चरणी चितु लाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु निधानु धिआईऐ मसतकि होवै भागु ॥ कारज सभि सवारीअहि गुर की चरणी लागु ॥ हउमै रोगु भ्रमु कटीऐ ना आवै ना जागु ॥ २ ॥ करि संगति तू साध की अठसठि तीरथ नाउ ॥ जीउ प्राण मनु तनु हरे साचा एहु सुआउ ॥ ऐथै मिलहि वडाईआ दरगहि पावहि थाउ ॥ ३ ॥ करे कराए आपि प्रभु सभु किछु तिस ही हाथि ॥ मारि आपे जीवालदा अंतरि बाहरि साथि ॥ नानक प्रभ सरणागती सरब घटा के नाथ ॥ ४ ॥ १५ ॥ ८५ ॥

मनुष्य गर्व से कहता है कि यह तन—मन एवं धन मेरा है, इस देश पर शासन मेरा है। मैं सुन्दर स्वरूप वाला हूँ तथा मेरे पुत्र हैं, स्त्री है, पुत्री है और अनेकानेक रंगों के भेष मैं ही धारण कर सकता हूँ। हे भाई ! जिस मानव के हृदय में प्रभु नाम का निवास नहीं है, उसके समस्त किए काम गणना में नहीं आते॥ १॥ हे मेरे मन ! हरि—परमात्मा के नाम की आराधना करो प्रतिदिन साधु—संतों की संगति में रहने का प्रयास करो और गुरु के चरणों में अपने चित्त को लगाओ॥१॥ रहाउ॥ हरि—नाम, जो सर्व प्रकार की निधि है, उसका चिन्तन तभी हो सकता है, यदि मनुष्य के माथे पर शुभ भाग्य अंकित हो। गुरु के चरणों में लगने से समस्त कार्य संवर जाते हैं। इस प्रकार अहंकार के रोग एवं शंकाएँ निवृत्त हो जाती हैं और प्राणी का आवागमन कट जाता है और उसे मोक्ष की प्राप्ति होती है॥२॥ इसलिए हे जीव ! तू साधू की संगति कर, जो अठसठ तीर्थों के स्नान के समान अति पावन है। नाम—सिमरन से तुम्हारी आत्मा, प्राण, मन एवं देहि प्रफुल्लित हो जाएँगे और यही जीवन का सत्य मनोरथ है। यहाँ पर तुझे मान—सम्मान प्राप्त होगा और प्रभु के दरबार में भी श्रेष्ठ स्थान प्राप्त होगा॥३॥ अकाल पुरुष स्वयं ही करने—करवाने वाला है। परमेश्वर सर्व—कर्त्ता है, सब कुछ उसके अधीन है। वह सर्वव्यापक प्रभु कण—कण में विद्यमान है, जो स्वयं ही मारने वाला तथा जीवन दाता है। अन्दर तथा बाहर वह प्राणी का साथी है। हे नानक ! प्रभु समस्त जीवों का स्वामी है, अत: मैं उसकी शरण में आया हूँ॥४॥१५॥८५॥

सिरीरागु महला ५ ॥ सरणि पए प्रभ आपणे गुरु होआ किरपालु ॥ सतगुर कै उपदेसिऐ बिनसे सरब जंजाल ॥ अंदरु लगा राम नामि अंम्रित नदरि निहालु ॥ १ ॥ मन मेरे सतिगुर सेवा सारु ॥ करे दइआ प्रभु आपणी इक निमख न मनहु विसारु ॥ रहाउ ॥ गुण गोविंद नित गावीअहि अवगुण कटणहार ॥ बिनु हरि नाम न सुखु होइ करि डिठे बिसथार ॥ सहजे सिफती रतिआ भवजलु उतरे पारि ॥ २ ॥ तीरथ वरत लख संजमा पाईऐ साधू धूरि ॥ लूकि कमावै किस ते जा वेखै सदा हदूरि ॥ थान थनंतरि रवि रहिआ प्रभु मेरा भरपूरि ॥ ३ ॥ सचु पातिसाही अमरु सचु सचे सचा थानु ॥ सची कुदरति धारीअनु सचि सिरजिओनु जहानु ॥ नानक जपीऐ सचु नामु हउ सदा सदा कुरबानु ॥ ४ ॥ १६ ॥ ८६ ॥

जब मेरा गुरु मुझ पर कृपालु हुआ तो मैं अपने प्रभु की शरण में आ गया। सतिगुरु के उपदेश द्वारा मेरे समस्त बन्धन दूर हो गए हैं। जब अन्तर्मन राम नाम के सिमरन में लीन हो गया तो मैं गुरु की कृपा से कृतार्थ हो गया॥ १॥ हे मेरे मन ! सतिगुरु की सेवा श्रेष्ठ है। उस प्रभु को एक पल के लिए भी विस्मृत मत करना, तभी वह तुझ पर कृपा—दृष्टि करेगा॥ रहाउ॥ हमें प्रतिदिन उस गोविन्द—प्रभु का यशगान करना चाहिए, जो मनुष्य के समस्त अवगुणों को निवृत्त करने वाला है। अनेक व्यक्तियों ने माया के प्रपंच करके देख लिए हैं किन्तु हरि—नाम के अलावा सुख नहीं मिलता। जो व्यक्ति भगवान की उपमा करने में मग्न रहते हैं, वे सहज ही भवसागर से पार हो जाते हैं॥२॥ लाखों तीर्थों के स्नान, लाखों व्रत रखने व इन्द्रियों को विषय—विकारों से रोकने का फल संतजनों की चरण—धूलि ग्रहण करने से ही प्राप्त हो

जाता है। हे भाई! मानव किससे छिपकर पाप कमाता है, जबकि वह प्रभु सदैव समक्ष देख रहा है। मेरा परिपूर्ण परमेश्वर सर्वत्र व्याप्त हो रहा है॥३॥ सत्य परमेश्वर का साम्राज्य सत्य है, उसका आदेश भी सत्य है, उस सत्य परमेश्वर का स्थिर रहने वाला स्थान भी सत्य है। उसने सत्य शक्ति धारण की हुई है और उसने सत्य-सृष्टि की रचना की हुई है। हे नानक! मैं उस पर कुर्बान जाता हूँ, जो सत्यस्वरूप परमात्मा का नाम-सिमरन करता है॥४॥१६॥८६॥

सिरीरागु महला ५ ॥ उदमु करि हरि जापणा वडभागी धनु खाटि ॥ संतसंगि हरि सिमरणा मलु जनम जनम की काटि ॥ १ ॥ मन मेरे राम नामु जपि जापु ॥ मन इछे फल भुंचि तू सभु चूकै सोगु संतापु ॥ रहाउ ॥ जिसु कारणि तनु धारिआ सो प्रभु डिठा नालि ॥ जलि थलि महीअलि पूरिआ प्रभु आपणी नदरि निहालि ॥ २ ॥ मनु तनु निरमलु होइआ लागी साचु परीति ॥ चरण भजे पारब्रहम के सभि जप तप तिन ही कीति ॥ ३ ॥ रतन जवेहर माणिका अंम्रितु हरि का नाउ ॥ सूख सहज आनंद रस जन नानक हरि गुण गाउ ॥ ४ ॥ १७ ॥ ८७ ॥

हे भाग्यवान पुरुष! परिश्रम करके हरि नाम सिमरन रूपी आत्म-धन एकत्र करो। सत्संग में जाकर हरि नाम का सिमरन किया जाता है, जिससे जन्म-जन्म के पापों की मैल कट जाती है॥१॥ हे मेरे मन! राम-नाम रूपी जाप का सिमरन करो। इससे तुझे मनोवांछित फल प्राप्त होंगे और तुम्हारे दुख तथा संताप सब नष्ट हो जाएँगे॥रहाउ॥ जिस भगवान को पाने के लिए यह मानव-देह को धारण किया है, वह प्रभु अपने अंग-संग ही देख लिया है। वह परिपूर्ण प्रभु जल में, धरती में, गगन में सर्वत्र व्यापक है, वह सब प्राणियों को दया की दृष्टि से देखता है॥२॥ सच्चे स्वामी प्रभु के साथ प्रीति लगाने से तन-मन सभी पवित्र हो जाते हैं। जो प्राणी प्रभु के चरणों का ध्यान करता है, मानो उसने समस्त जप-तप (उपासना-तपस्या) कर लिए हैं॥३॥ अमृत रूपी हरि का नाम हीरे, जवाहर-रत्नों की भाँति अमूल्य है। हे नानक! जिसने प्रेम भाव से भगवान की महिमा का गायन किया है, उसे सहज ही अच्युत सुख के आनंद का रस प्राप्त हुआ है॥४॥१७॥८७॥

सिरीरागु महला ५ ॥ सोई सासतु सउणु सोइ जितु जपीऐ हरि नाउ ॥ चरण कमल गुरि धनु दीआ मिलिआ निथावे थाउ ॥ साची पूंजी सचु संजमो आठ पहर गुण गाउ ॥ करि किरपा प्रभु भेटिआ मरणु न आवणु जाउ ॥ १ ॥ मेरे मन हरि भजु सदा इक रंगि ॥ घट घट अंतरि रवि रहिआ सदा सहाई संगि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुखा की मिति किआ गणी जा सिमरी गोविंदु ॥ जिन चाखिआ से त्रिपतासिआ उह रसु जाणै जिंदु ॥ संता संगति मनि वसै प्रभु प्रीतमु बखसिंदु ॥ जिनि सेविआ प्रभु आपणा सोई राज नरिंदु ॥ २ ॥ अउसरि हरि जसु गुण रमण जितु कोटि मजन इसनानु ॥ रसना उचरै गुणवती कोइ न पुजै दानु ॥ द्रिसटि धारि मनि तनि वसै दइआल पुरखु मिहरवानु ॥ जीउ पिंडु धनु तिस दा हउ सदा सदा कुरबानु ॥ ३ ॥ मिलिआ कदे न विछुड़ै जो मेलिआ करतारि ॥ दासा के बंधन कटिआ साचै सिरजणहारि ॥ भूला मारगि पाइओनु गुण अवगुण न बीचारि ॥ नानक तिसु सरणागती जि सगल घटा आधारु ॥ ४ ॥ १८ ॥ ८८ ॥

वह धार्मिक शास्त्र उचित है और वही शगुन शुभ है जिसके द्वारा हरि-नाम का सिमरन किया जाए। जिस मानव जीव को गुरु ने चरण कमल रूपी धन दिया है उस आश्रयहीन व्यक्ति को आश्रय मिल गया। आठ पहर भगवान के गुणों का गायन करना ही सत्य राशि है तथा सत्य संयम है। भगवान स्वयं जिनको कृपा करके मिला है वह जन्म-मरण के चक्कर से मुक्त हो जाता है॥१॥ हे मेरे मन!

तू सदैव एकाग्रचित होकर भगवान का भजन किया कर, चूंकि भगवान तो प्रत्येक हृदय के अन्दर समाया हुआ है तथा जीव के साथ होकर सहायता करता है॥१॥ रहाउ॥ जब प्रभु स्मरण किया तो इतने सुखों की उपलब्धि होती है कि उनकी गिनती नहीं हो सकती। जिसने भी हरि रस को चखा है, वह तृप्त हो गया तथा उस रस को वही आत्मा जानती है। संतों की संगति द्वारा क्षमावान प्रियतम प्रभु हृदय में बसता है। जिसने अपने प्रभु नाम का सिमरन किया है। वह राजाओं का भी राजा है॥ २॥ जिस समय हरि नाम के यश व गुणों का चिन्तन किया जाए, वह करोड़ों तीर्थों के स्नान के पुण्य—फल के समान है। हरि स्मरण द्वारा रसना गुणों वाली हो जाती है, पुनः उसके तुल्य कोई दान नहीं है। अकालपुरुष दयालु एवं मेहरबान है, वह अपनी कृपा—दृष्टि द्वारा जीव के मन व तन में विराजमान होता है। जीव को तन एवं धन उस परमात्मा का दिया हुआ है, मैं उस पर सदैव ही न्यौछावर हूँ॥ ३॥ जिसे कर्त्ता—पुरुष परमात्मा अपने साथ मिला ले, वह परमात्मा से मिला ही रहता है फिर कभी नहीं बिछुड़ता। सृजनहार प्रभु ने अपने सेवकों के माया रूपी बंधनों को काट दिया है। अपने सेवकों के गुणों—अवगुणों का विचार किए बिना भूले हुए को भी भक्ति—मार्ग पर डाल देता है। नानक कथन करते हैं कि उस भगवान की शरण में पड़ जा, जो समस्त जीवों का आधार है॥ ४॥ १८॥ ८८॥

सिरीरागु महला ५ ॥ रसना सचा सिमरीऐ मनु तनु निरमलु होइ ॥ मात पिता साक अगले तिसु बिनु अवरु न कोइ ॥ मिहर करे जे आपणी चसा न विसरै सोइ ॥ १ ॥ मन मेरे साचा सेवि जिचरु सासु ॥ बिनु सचे सभ कूड़ु है अंते होइ बिनासु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साहिबु मेरा निरमला तिसु बिनु रहणु न जाइ ॥ मेरै मनि तनि भुख अति अगली कोई आणि मिलावै माइ ॥ चारे कुंडा भालीआ सह बिनु अवरु न जाइ ॥ २ ॥ तिसु आगै अरदासि करि जो मेले करतारु ॥ सतिगुरु दाता नाम का पूरा जिसु भंडारु ॥ सदा सदा सालाहीऐ अंतु न पारावारु ॥ ३ ॥ परवदगारु सालाहीऐ जिस दे चलत अनेक ॥ सदा सदा आराधीऐ एहा मति विसेख ॥ मनि तनि मिठा तिसु लगै जिसु मसतकि नानक लेख ॥ ४ ॥ १६ ॥ ८६ ॥

यदि सत्य परमात्मा को रसना द्वारा स्मरण किया जाए तो जीव का मन एवं तन दोनों पवित्र हो जाते हैं। जीव के माता—पिता एवं अन्य सगे—संबंधी तो बहुत होते हैं किन्तु इहलोक एवं परलोक में उस परमात्मा के सिवाय अन्य कोई सहायक नहीं है। परमात्मा यदि अपनी कृपा—दृष्टि करे तो मनुष्य उसको क्षण—मात्र के लिए भी विस्मृत नहीं करता॥ १॥ हे मेरे मन! जब तक तेरे प्राण हैं, उस सत्य परमात्मा का सिमरन करता जा। उस परमात्मा के अलावा समस्त सृष्टि मिथ्या है और अंत में नाश हो जाने वाली है॥१॥ रहाउ॥ मेरा परमात्मा बड़ा निर्मल है। उसके बिना मैं कभी नहीं रह सकता। मेरे मन एवं तन के भीतर परमेश्वर हेतु परम तृष्णा है। कोई भी आकर उससे मुझे मिला दे, मैंने चारों दिशाओं में उसकी खोज कर ली है। परम—पिता परमेश्वर के बिना अन्य कोई भी विश्राम स्थल नहीं॥ २॥ उस गुरु के समक्ष प्रार्थना कर, जो तुझे इस सृष्टि के सृजनहार से तेरा मिलाप करवा दे। सतिगुरु जी नाम के दाता हैं, जिनके पास भक्ति का पूर्ण भंडार है। सदैव उस प्रभु की प्रशंसा करो, जिसकी सीमा को अंत तक नहीं जाना जा सकता॥३॥ उस पालनहार परमात्मा की सराहना करो, जिसके अनेक कौतुक हैं। विशेष बुद्धिमत्ता यही है कि उस परमात्मा की हमेशा आराधना करनी चाहिए। हे नानक! परमात्मा का नाम उसी जीव के मन एवं तन को मीठा लगता है, जिसके मस्तक पर शुभ—कर्मों के भाग्य लिखे हुए हैं॥४॥१६॥८६॥

सिरीरागु महला ५ ॥ संत जनहु मिलि भाईहो सचा नामु समालि ॥ तोसा बंधहु जीअ का ऐथै ओथै नालि ॥ गुर पूरे ते पाईऐ अपणी नदरि निहालि ॥ करमि परापति तिसु होवै जिस नो होइ दइआलु ॥ १ ॥ मेरे मन गुर जेवडु अवरु न कोइ ॥ दूजा थाउ न को सुझै गुर मेले सचु सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सगल पदारथ तिसु मिले जिनि गुरु डिठा जाइ ॥ गुर चरणी जिन मनु लगा से वडभागी माइ ॥ गुरु दाता समरथु गुरु गुरु सभ महि रहिआ समाइ ॥ गुरु परमेसरु पारब्रहमु गुरु डुबदा लए तराइ ॥ २ ॥ कितु मुखि गुरु सालाहीऐ करण कारण समरथु ॥ से मथे निहचल रहे जिन गुरि धारिआ हथु ॥ गुरि अंम्रित नामु पीआलिआ जनम मरन का पथु ॥ गुरु परमेसरु सेविआ भै भंजनु दुख लथु ॥ ३ ॥ सतिगुरु गहिर गभीरु है सुख सागरु अघ खंडु ॥ जिनि गुरु सेविआ आपणा जमदूत न लागै डंडु ॥ गुर नालि तुलि न लगई खोजि डिठा ब्रहमंडु ॥ नामु निधानु सतिगुरि दीआ सुखु नानक मन महि मंडु ॥ ४ ॥ २० ॥ ९० ॥

हे भाईयो ! संतजनों की संगति करके सत्यनाम की आराधना करो। जीवन के सफर में रास्ते का नाम रूपी भोजन बुद्धि रूपी दामन के साथ बांध लो, जो इहलोक एवं परलोक में तेरा सहायक होगा। यदि स्वामी अपनी कृपा करे तो यह भोजन गुरु की संगति से प्राप्त कर सकते हो। जिस पर ईश्वर कृपालु हो जाता है, उसे नाम रूपी भोजन शुभ कर्मों द्वारा मिल जाता है॥ १॥ हे मेरे मन ! गुरु जैसा अन्य कोई (महान्) नहीं। मैं किसी अन्य स्थान का ख्याल नहीं कर सकता। केवल गुरु ही मुझे सत्य परमेश्वर से मिला सकता है॥१॥ रहाउ॥ जो प्राणी गुरु जी के दर्शन करता है, उसको संसार के समस्त पदार्थ (धन–दौलत,ऐश्वर्य) प्राप्त हो जाते हैं। हे मेरी माता ! वह प्राणी बड़े सौभाग्यशाली हैं, जिनका मन गुरु–चरणों में लीन हो जाता है। गुरु जी दानशील हैं, गुरु जी सर्वशक्तिमान, गुरु ही ईश्वर रूप सभी के भीतर विद्यमान हैं। गुरु ही परमेश्वर एवं पारब्रह्म हैं। गुरु जी ही डूबते हुओं को पार लगाने वाले हैं जो प्राणियों को जीवन–मृत्यु रूपी सागर से पार करवाते हैं॥२॥ किस मुख से गुरु की प्रशंसा करूँ, जो करने एवं करवाने में समर्थ हैं। वे मस्तक (व्यक्ति) सदैव स्थिर रहते हैं, जिन पर गुरु ने अपना अनुकंपा का हाथ रखा है। गुरु ने मुझे जन्म–मरण का भय नाश करने वाला अमृत नाम पान करवाया है। मैंने गुरु परमेश्वर की भरपूर सेवा का फल प्राप्त किया है, जिसने सब भय–भंजन एवं मेरे दुखों को निवृत्त कर दिया है॥३॥ सतिगुरु गहन, गंभीर एवं सुखों का सागर हैं और समस्त पापों का नाश करने वाले हैं। जिस प्राणी ने अपने गुरु की सेवा का फल प्राप्त किया है, उसे यमदूतों का कदापि दंड नहीं मिलता अपितु वह मोक्ष प्राप्त कर लेता है। गुरु के बराबर कोई भी समर्थ नहीं, क्योंकि मैंने यह सारा ब्रह्माण्ड खोजकर देख लिया है। सतिगुरु ने नाम का खजाना प्रदान कर दिया है और उस द्वारा नानक ने अपने चित्त के भीतर सुख धारण कर लिया है॥४॥२०॥९०॥

सिरीरागु महला ५ ॥ मिठा करि कै खाइआ कउड़ा उपजिआ सादु ॥ भाई मीत सुरिद कीए बिखिआ रचिआ बादु ॥ जांदे बिलम न होवई विणु नावै बिसमादु ॥ १ ॥ मेरे मन सतगुर की सेवा लागु ॥ जो दीसै सो विणसणा मन की मति तिआगु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिउ कूकरु हरकाइआ धावै दह दिस जाइ ॥ लोभी जंतु न जाणई भखु अभखु सभ खाइ ॥ काम क्रोध मदि बिआपिआ फिरि फिरि जोनी पाइ ॥ २ ॥ माइआ जालु पसारिआ भीतरि चोग बणाइ ॥ त्रिसना पंखी फासिआ निकसु न पाए माइ ॥ जिनि कीता तिसहि न जाणई फिरि फिरि आवै जाइ ॥ ३ ॥ अनिक प्रकारी मोहिआ बहु बिधि इहु संसारु ॥ जिस नो रखै सो रहै संम्रिथु पुरखु अपारु ॥ हरि जन हरि लिव उधरे नानक सद बलिहारु ॥ ४ ॥ २१ ॥ ९१ ॥

प्राणी सांसारिक रसों को बड़ा मीठा समझकर भोगता है परन्तु उनका स्वाद बड़ा कटु निकलता है। भाई, मित्र से सुहृद करके व्यर्थ का विवाद उत्पन्न कर लिया है और तुम व्यर्थ ही पापों में ग्रस्त हो गए हो। अलोप होते इनको विलम्ब नहीं होता। नाम के अतिरिक्त सब नश्वर है, व्यक्ति दुख में चूर–चूर हो जाता है॥१॥ हे मेरे मन! सतिगुरु की सेवा में लीन हो जाओ। दुनिया में जो कुछ दिखाई देता है, वह समस्त नश्वर हो जाएगा। हे प्राणी! तू मन की चतुरता को त्याग दे॥१॥रहाउ॥ यह मन इतना दुःशील है कि पागल कुत्ते की भाँति दसों–दिशाओं में भागता तथा भटकता फिरता है। इसी तरह लालची प्राणी कुछ भी ध्यान नहीं करता। लोभी पशु की तरह खाद्य तथा अखाद्य सबको ग्रहण कर लेता है। प्राणी काम, क्रोध तथा अहंकार के नशे में लीन होकर बार–बार योनियों में पड़ता है॥२॥ माया ने अपना जाल (फांसने का) बिछा रखा है और इस जाल में तृष्णा रूपी दाना भी रख दिया है। हे मेरी माता! लालची पक्षी (प्राणी) इसके भीतर वहाँ फँस जाता है और निकल नहीं पाता। मनुष्य उसको नहीं पहचानता जिस सृष्टिकर्त्ता ने इसकी रचना की है और पुनःपुनः आवागमन में भटकता फिरता है॥ ३॥ माया ने इस विश्व को विभिन्न विधियों एवं अनेको ढंगों से मोह कर रखा हुआ है। जिसकी अपार एवं समर्थ अकालपुरुष रक्षा करता है, वह भवसागर से पार हो जाता है। हे नानक! प्रभु भक्तों पर मैं सदैव न्यौछावर हूँ, जो भगवान में सुरति लगाने के कारण भवसागर से पार हो गए हैं॥४॥२१॥६१॥

सिरीरागु महला ५ घरु २ ॥ गोइलि आइआ गोइली किआ तिसु डंफु पसारु ॥ मुहलति पुंनी चलणा तूं संमलु घर बारु ॥ १ ॥ हरि गुण गाउ मना सतिगुरु सेवि पिआरि ॥ किआ थोड़ड़ी बात गुमानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे रैणि पराहुणे उठि चलसहि परभाति ॥ किआ तूं रता गिरसत सिउ सभ फुला की बागाति ॥ २ ॥ मेरी मेरी किआ करहि जिनि दीआ सो प्रभु लोड़ि ॥ सरपर उठी चलणा छडि जासी लख करोड़ि ॥ ३ ॥ लख चउरासीह भ्रमतिआ दुलभ जनमु पाइओइ ॥ नानक नामु समालि तूं सो दिनु नेड़ा आइओइ ॥ ४ ॥ २२ ॥ ६२ ॥

ग्वाला अपनी गायें लेकर थोड़ी देर के लिए चरागाह में आता है। उसका वहाँ आडम्बर करने का क्या अभिप्राय है? हे प्राणी! जब तेरा इस दुनिया में आने का समय खत्म हो जाएगा, तब तूने यहाँ से चले जाना है। इसलिए अपने वास्तविक घर प्रभु–चरणों को याद रख॥१॥ हे मेरे मन! भगवान का गुणगान करो तथा प्रेम से सतिगुरु की सेवा का फल प्राप्त करो। तुम थोड़े समय के लिए मिले इस जीवन का अहंकार क्यों करते हो?॥१॥ रहाउ॥ रात्रिकाल के अतिथि की तरह तुम सुबह–सवेरे उठकर गमन कर जाओगे। हे प्राणी! तुम अपने गृहस्थ के साथ क्यों मोहित हुए फिरते हो? क्योंकि सृष्टि के समस्त पदार्थ उद्यान के पुष्पों की भांति क्षणभंगुर हैं॥ २॥ हे प्राणी! तुम यह क्यों कहते फिरते हो कि 'यह मेरा है, वो मेरा है।' उस ईश्वर को स्मरण कर, जिसने यह सबकुछ तुझे प्रदान किया है। हे प्राणी! तुम इस नश्वर संसार से अवश्य ही गमन कर जाओगे (जब मृत्युकाल की अवधि आएगी और लाखों, करोड़ों अमूल्य पदार्थ सब कुछ त्याग कर ही जाओगे)॥ ३॥ हे प्राणी! चौरासी लाख योनियों में भटकने के पश्चात् तूने यह दुर्लभ मानव जन्म प्राप्त किया है। हे नानक! तू नाम का सिमरन किया कर क्योंकि तेरा इस संसार को छोड़ने का दिवस निकट आ गया है॥४॥२२॥६२॥

सिरीरागु महला ५ ॥ तिचरु वसहि सुहेलड़ी जिचरु साथी नालि ॥ जा साथी उठी चलिआ ता धन खाकू रालि ॥ १ ॥ मनि बैरागु भइआ दरसनु देखणै का चाउ ॥ धंनु सु तेरा थानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिचरु वसिआ कंतु घरि जीउ जीउ सभि कहाति ॥ जा उठी चलसी कंतड़ा ता कोइ न पुछै तेरी बात

॥ २ ॥ पेईअड़ै सहु सेवि तूं साहुरड़ै सुखि वसु ॥ गुर मिलि चजु अचारु सिखु तुधु कदे न लगै दुखु ॥ ३ ॥ सभना साहुरै वंञणा सभि मुकलावणहार ॥ नानक धंनु सोहागणी जिन सह नालि पिआरु ॥ ४ ॥ २३ ॥ ९३ ॥

हे शरीर रूपी स्त्री! तू तब तक ही इस दुनिया में सुखी है, जब तक तेरा साथी (आत्मा) तेरे साथ है। जब आत्मा रूपी साथी निकल जाएगा, यह शरीर रूपी स्त्री मिट्टी में मिल जाएगी॥१॥ हे प्रभु! मेरा मन सांसारिक तृष्णाओं से विरक्त हो गया है और तेरे दर्शनों की तीव्र अभिलाषा है। हे प्रभु! आपका वह निवास स्थान धन्य है॥१॥रहाउ॥ हे शरीर रूपी स्त्री! जब तक तेरा मालिक (आत्मा) तेरे हृदय में रहता है, तब तक सभी लोग तुझे 'जी-जी' कहते हैं अर्थात आदर-सत्कार करते हैं। जब उस देहि से प्राण निकल जाते हैं तो देहि रूपी नारी को कोई भी नहीं पूछता। तदुपरांत पार्थिव शरीर को सभी हटाने के लिए कहेंगे॥२॥ बाबुल के घर (इस संसार) में अपने पति-परमेश्वर की सेवा करो और ससुराल (परलोक) सुख में निवास करो। गुरु की शरण में आकर शुभ आचरण एवं रहन-सहन की शिक्षा ग्रहण कर। फिर तुझे कदाचित दुखी नहीं होना पड़ेगा॥३॥ समस्त जीव स्त्रियों ने अपने पति-परमेश्वर के घर (परलोक में) जाना है और सभी का विवाह उपरांत गौना (विदायगी) होनी है। अर्थात् सभी प्राणियों ने इस संसार में आकर मृत्यु के उपरांत परलोक गमन करना है, इसलिए इस संसार में अपने पिया प्रभु की स्तुति अवश्य करनी चाहिए ताकि उसके घर (परलोक) में स्थान प्राप्त हो। हे नानक! वह सुहागिनें (प्राणी) धन्य हैं, जिन्होंने अपने पति-परमेश्वर का प्रेम प्राप्त कर लिया है॥ ४॥ २३॥ ९३॥

सिरीरागु महला ५ घरु ६ ॥ करण कारण एकु ओही जिनि कीआ आकारु ॥ तिसहि धिआवहु मन मेरे सरब को आधारु ॥ १ ॥ गुर के चरन मन महि धिआइ ॥ छोडि सगल सिआणपा साचि सबदि लिव लाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुखु कलेसु न भउ बिआपै गुर मंत्रु हिरदै होइ ॥ कोटि जतना करि रहे गुर बिनु तरिओ न कोइ ॥ २ ॥ देखि दरसनु मनु साधारै पाप सगले जाहि ॥ हउ तिन कै बलिहारणै जि गुर की पैरी पाहि ॥ ३ ॥ साधसंगति मनि वसै साचु हरि का नाउ ॥ से वडभागी नानका जिना मनि इहु भाउ ॥ ४ ॥ २४ ॥ ९४ ॥

जिस एक परमात्मा ने सृष्टि-रचना की है, वह परमात्मा ही करने एवं कराने वाला है। हे मेरे मन! उसका सिमरन करो, जो समस्त जीवों का आधार है॥१॥ हे मन! अपने हृदय में गुरु के चरणों का ध्यान करो और अपनी समस्त चतुराइयाँ त्यागकर सत्य नाम में सुरति लगाओ॥१॥ रहाउ॥ यदि मनुष्य के हृदय में गुरु का मंत्र (शब्द) बस जाए तो उसके समस्त दुःख-संताप अथवा मृत्यु का भय कदापि आगमन नहीं करते। मनुष्य करोड़ों ही उपाय करके असफल हो गए हैं। परन्तु गुरु के बिना किसी का भी इस भवसागर से उद्धार नहीं हुआ॥२॥ गुरदेव के दर्शन-मात्र से ही आत्मा को सहारा प्राप्त होता है और समस्त दोष निवृत्त हो जाते हैं। मैं उन पर न्यौछावर होता हूँ, जिन्होंने गुरु-चरणों पर स्वयं को अर्पण किया है॥३॥ साधू की संगति करने से ही ईश्वर का सत्य नाम मन में आकर बसता है। हे नानक! वे मनुष्य बड़े सौभाग्यशाली हैं, जिनके हृदय में भगवान के लिए प्रेम है॥४॥२४॥९४॥

सिरीरागु महला ५ ॥ संचि हरि धनु पूजि सतिगुरु छोडि सगल विकार ॥ जिनि तूं साजि सवारिआ हरि सिमरि होइ उधारु ॥ १ ॥ जपि मन नामु एकु अपारु ॥ प्रान मनु तनु जिनहि दीआ रिदे का आधारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कामि क्रोधि अहंकारि माते विआपिआ संसारु ॥ पउ संत सरणी लागु चरणी मिटै

दूखु अंधारु ॥ २ ॥ सतु संतोखु दइआ कमावै एह करणी सार ॥ आपु छोडि सभ होइ रेणा जिसु देइ प्रभु निरंकारु ॥ ३ ॥ जो दीसै सो सगल तूंहै पसरिआ पासारु ॥ कहु नानक गुरि भरमु काटिआ सगल ब्रहम बीचारु ॥ ४ ॥ २५ ॥ ९५ ॥

हे प्राणी ! समस्त पाप विकारों को त्याग दो। सतिगुरु की पूजा करो एवं हरि नाम रूपी धन संचित करो। जिस परमात्मा ने तुझे पैदा करके संवारा है, उसका सिमरन करने से तेरा उद्धार हो जाएगा॥१॥ हे मेरे मन ! एक अपार प्रभु का ही नाम जपो। जिस ईश्वर ने तुझे प्राण, मन एवं तन दिया है, वही समस्त जीवों के हृदय का आधार है॥१॥ रहाउ॥ सम्पूर्ण जगत् काम, क्रोध अहंकार इत्यादि में मग्न है, दुनिया माया के मोह में फँसी हुई है। हे प्राणी ! तू संतों के चरणों में लगकर उनकी शरण में जा। फिर तेरा दुख मिट जाएगा और तेरे मन में से अज्ञानता का अँधेरा दूर हो जाएगा ॥२॥ हे प्राणी ! जीवन की श्रेष्ठ करनी यही है कि तू सत्य, संतोष एवं दया की पूँजी संचित कर। जिस प्राणी पर निरंकार प्रभु ने कृपा-दृष्टि की है, वह अपना अहंकार त्याग कर उसी की चरण धूल बन जाता है॥३॥ समूचा दृश्यमान संसार उसी प्रभु का प्रसार है, वही उसमें व्यापक है। हे नानक ! कहो- गुरु ने जिस व्यक्ति की शंका निवृत्त कर दी है, वह सारे जगत् को ब्रह्म ही समझता है॥ ४॥ २५॥ ९५॥

सिरीरागु महला ५ ॥ दुक्रित सुक्रित मंधे संसारु सगलाणा ॥ दुहहूं ते रहत भगतु है कोई विरला जाणा ॥ १ ॥ ठाकुरु सरबे समाणा ॥ किआ कहउ सुणउ सुआमी तूं वड पुरखु सुजाणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मान अभिमान मंधे सो सेवकु नाही ॥ तत समदरसी संतहु कोई कोटि मंधाही ॥ २ ॥ कहन कहावन इहु कीरति करला ॥ कथन कहन ते मुकता गुरमुखि कोई विरला ॥ ३ ॥ गति अविगति कछु नदरि न आइआ ॥ संतन की रेणु नानक दानु पाइआ ॥ ४ ॥ २६ ॥ ९६ ॥

समूचा जगत् शुभ एवं अशुभ कर्मों के जाल में फँसा हुआ है। कोई विरला प्रभु-भक्त ही मिलता है, जो इन दोनों प्रकार के कर्मों से रहित हो॥१॥ परमात्मा समस्त जीवों में समाया हुआ है। हे मेरे मालिक ! मैं तेरे बारे में क्या कहूँ और क्या सुनुँ? तू सबसे महान चतुर पुरुष है॥१॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति मान-अभिमान में फँसा हुआ है, वह ईश्वर का भक्त नहीं। हे संतो ! करोड़ों मनुष्यों में से कोई विरला ही है जिसे परमतत्व प्रभु का ज्ञान है और जो समस्त जीवों को एक दृष्टि से देखता है॥ २॥ भगवान बारे वाद-विवाद करना दुनिया में व्यर्थ शोभा प्राप्ति का एकमात्र साधन है। लेकिन कोई विरला ही गुरमुख है जो इस वाद-विवाद से परे रहता है। वाद-विवाद करने वालों को गति एवं अवगति की अवस्था कुछ भी दिखाई नहीं देती॥३॥ हे नानक ! मैंने संतों की चरण-धूलि का दान प्राप्त कर लिया है॥४॥२६॥९६॥

सिरीरागु महला ५ घरु ७ ॥ तेरै भरोसै पिआरे मै लाड लडाइआ ॥ भूलहि चूकहि बारिक तूं हरि पिता माइआ ॥ १ ॥ सुहेला कहनु कहावनु ॥ तेरा बिखमु भावनु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हउ माणु ताणु करउ तेरा हउ जानउ आपा ॥ सभ ही मधि सभहि ते बाहरि बेमुहताज बापा ॥ २ ॥ पिता हउ जानउ नाही तेरी कवन जुगता ॥ बंधन मुकतु संतहु मेरी राखै ममता ॥ ३ ॥ भए किरपाल ठाकुर रहिओ आवण जाणा ॥ गुर मिलि नानक पारब्रहमु पछाणा ॥ ४ ॥ २७ ॥ ९७ ॥

हे प्रिय प्रभु ! तेरे भरोसे पर मैंने बालक भाँति प्रीति में रहकर हास-विलास किए हैं। हे भगवान !

तुम ही मेरी माता एवं मेरे पिता हो, मैं तेरा बालक हूँ जो भूल चूक करता हूँ॥१॥ बातें करनी बड़ी सरल हैं। परन्तु आपके विधान अनुसार चलना बड़ा कठिन है॥१॥ रहाउ॥ हे प्रभु! मुझे आपके ऊपर बड़ा मान है, क्योंकि मुझे आपके बल का ही आधार है और मैं आपको अपना रक्षक समझता हूँ। हे परम पिता! आप समस्त जीवों के भीतर मौजूद हो, सबसे बाहर भी आप ही हो॥ २॥ हे मेरे पिता! मैं तेरी युक्ति को नहीं जानता जिससे तू प्रसन्न होता है। हे संतों! वह मुझे समस्त बन्धनों से मुक्ति प्रदान करता है और मेरे लिए ममता—प्यार रखता है॥३॥ मेरा ठाकुर बड़ा दयालु हो गया है और मेरा (जन्म—मरण) आवागमन मिट गया है। हे नानक! गुरु से मिलकर मैंने पारब्रह्म को पहचान लिया है॥ ४॥ २७॥ ६७॥

सिरीरागु महला ५ घरु १ ॥ संत जना मिलि भाईआ कटिअड़ा जमकालु ॥ सचा साहिबु मनि वुठा होआ खसमु दइआलु ॥ पूरा सतिगुरु भेटिआ बिनसिआ सभु जंजालु ॥ १ ॥ मेरे सतिगुरा हउ तुधु विटहु कुरबाणु ॥ तेरे दरसन कउ बलिहारणै तुसि दिता अंम्रित नामु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन तूं सेविआ भाउ करि सेई पुरख सुजान ॥ तिना पिछै छुटीऐ जिन अंदरि नामु निधानु ॥ गुर जेवडु दाता को नही जिनि दिता आतम दानु ॥ २ ॥ आए से परवाणु हहि जिन गुरु मिलिआ सुभाइ ॥ सचे सेती रतिआ दरगह बैसणु जाइ ॥ करते हथि वडिआईआ पूरबि लिखिआ पाइ ॥ ३ ॥ सचु करता सचु करणहारु सचु साहिबु सचु टेक ॥ सचो सचु वखाणीऐ सचो बुधि बिबेक ॥ सरब निरंतरि रवि रहिआ जपि नानक जीवै एक ॥ ४ ॥ २८ ॥ ९८ ॥

हे भाइयो! संतजनों ने मिलकर मेरा यम का भय दूर कर दिया है। मेरा मालिक प्रभु मुझ पर दयालु हो गया है और उस सच्चे परमेश्वर ने मेरे मन में वास कर लिया है। पूर्ण सतिगुरु के मिलन से समस्त बंधन विनष्ट हो गए हैं॥ १॥ हे मेरे सतिगुरु! मैं आप पर बलिहारी जाता हूँ। मैं आपके दर्शनों पर बलिहारी जाता हूँ। आप ने प्रसन्न होकर मुझे अमृत रूप नाम प्रदान किया है॥१॥रहाउ॥ जो प्रेमपूर्वक आपकी सेवा करते हैं, वे पुरुष बड़े बुद्धिमान हैं। जिनके अन्तर्मन में नाम का खजाना है, उनकी संगति में आकर प्राणी जन्म—मरण से मुक्त हो जाता है। गुरु जैसा दानशील दाता इस संसार में कोई भी नहीं, जिन्होंने मेरी आत्मा को नाम दान प्रदान किया है॥ २॥ जो प्रेम भावना से गुरु जी से भेंट करते हैं, उनका मनुष्य जन्म धारण करके जगत् में आगमन प्रभु के दरबार में स्वीकृत है। जो सत्य—प्रभु के प्रेम में लिवलीन हो जाते हैं, उन्हें भगवान के दरबार में बैठने हेतु स्थान प्राप्त हो जाता है। परमात्मा के हाथ समूची उपलब्धियाँ विद्यमान हैं, जिनकी किस्मत में शुभ कर्मों द्वारा लिखा हो, उन्हें प्राप्त हो जाती है॥३॥ सत्य प्रभु समस्त जगत् का कर्त्ता है। सत्य प्रभु ही समस्त जीवों को पैदा करने वाला है। वह सत्य प्रभु ही सबका मालिक है। सत्य प्रभु ही सबका आधार है। उस सत्य प्रभु को सभी सच्चा कहते हैं। मनुष्य को विवेक बुद्धि सत्य प्रभु से ही मिलती है। हे नानक! जो परमात्मा इस जगत् के कण—कण में विद्यमान है, उस परमात्मा का चिंतन करके ही मैं जीवित हूँ॥ ४॥ २८॥ ६८॥

सिरीरागु महला ५ ॥ गुरु परमेसुरु पूजीऐ मनि तनि लाइ पिआरु ॥ सतिगुरु दाता जीअ का सभसै देइ अधारु ॥ सतिगुर बचन कमावणे सचा एहु वीचारु ॥ बिनु साधू संगति रतिआ माइआ मोहु सभु छारु ॥ १ ॥ मेरे साजन हरि हरि नामु समालि ॥ साधू संगति मनि वसै पूरन होवै घाल ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु समरथु अपारु गुरु वडभागी दरसनु होइ ॥ गुरु अगोचरु निरमला गुर जेवडु अवरु न कोइ ॥ गुरु करता गुरु करणहारु गुरमुखि सची सोइ ॥ गुर ते बाहरि किछु नही गुरु कीता लोड़े सु होइ ॥ २ ॥

गुरु तीरथु गुरु पारजातु गुरु मनसा पूरणहारु ॥ गुरु दाता हरि नामु देइ उधरै सभु संसारु ॥ गुरु समरथु गुरु निरंकारु गुरु उचा अगम अपारु ॥ गुर की महिमा अगम है किआ कथे कथनहारु ॥ ३ ॥ जितड़े फल मनि बाछीअहि तितड़े सतिगुर पासि ॥ पूरब लिखे पावणे साचु नामु दे रासि ॥ सतिगुर सरणी आइआं बाहुड़ि नही बिनासु ॥ हरि नानक कदे न विसरउ एहु जीउ पिंडु तेरा सासु ॥ ४ ॥ २६ ॥ ९६ ॥

हे प्राणी ! तन—मन में प्रेम बनाकर परमेश्वर के रुप गुरु की पूजा करनी चाहिए। सतिगुरु जीवों का दाता है। वह सभी को सहारा देता है। सत्य ज्ञान यही है कि सतिगुरु की शिक्षा अनुसार ही आचरण करना चाहिए। साधु—संतों की संगति में लीन हुए बिना माया का मोह धूल समान है॥१॥ हे मेरे मित्र ! तू ईश्वर के हरि—नाम का सिमरन कर। साधु की संगति में रहने से मनुष्य के हृदय में प्रभु निवास करता है और मनुष्य की सेवा सफल हो जाती है॥१॥ रहाउ॥ गुरु ही समर्थावान एवं गुरु ही अनंत है। बड़े सौभाग्य से जीव को उसके दर्शन प्राप्त होते हैं। गुरु ही अगोचर है, गुरु पवित्र पावन है। गुरु जैसा अन्य कोई महान् नहीं। गुरु ही जगत् का कर्त्ता है और गुरु ही सभी को पैदा करने वाले हैं। गुरु द्वारा ही शरण में आए जीव की वास्तविक शोभा है। गुरु की अभिलाषा से परे कुछ भी नहीं। जो कुछ भी गुरु जी चाहते हैं, वहीं होता है॥२॥ गुरु ही सर्वश्रेष्ठ तीर्थ स्थल है, गुरु ही कल्प—वृक्ष और गुरु ही समस्त अभिलाषाएँ पूर्ण करने वाले हैं। गुरु ही दाता है जो ईश्वर का नाम प्रदान करते हैं, जिससे समूचे विश्व का उद्धार हो जाता है। गुरु ही समर्थाशाली है और गुरु ही निरंकार है। गुरु ही माया के गुणों से परे है। गुरु सर्वोच्च, अथाह, अपार है। गुरु की महिमा अपरम्पार है। कोई भी कथन करने वाला उसकी महिमा को कथन नहीं कर सकता॥३॥ प्राणी को समस्त मनोवांछित फल सतिगुरु द्वारा ही प्राप्त होते हैं, जितना भी मन करे उसे सतिगुरु से पाया जा सकता है। गुरु के पास सत्यनाम के धन के भरपूर भण्डार हैं, जिसके भाग्य में लिखा हो, उसे अवश्य प्राप्त होता है। सतिगुरु की शरण में आने से जीवन—मृत्यु के चक्कर से प्राणी को मुक्ति प्राप्त होती है। हे प्रभु ! यह आत्मा, देहि तथा श्वास सब तेरे ही दिए हुए हैं। हे नानक ! परमात्मा मुझे कभी भी विस्मृत न हो॥४॥२६॥९६॥

सिरीरागु महला ५ ॥ संत जनहु सुणि भाईहो छूटनु साचै नाइ ॥ गुर के चरण सरेवणे तीरथ हरि का नाउ ॥ आगै दरगहि मंनीअहि मिलै निथावे थाउ ॥ १ ॥ भाई रे साची सतिगुर सेव ॥ सतिगुर तुठै पाईऐ पूरन अलख अभेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुर विटहु वारिआ जिनि दिता सचु नाउ ॥ अनदिनु सचु सलाहणा सचे के गुण गाउ ॥ सचु खाणा सचु पैनणा सचे सचा नाउ ॥ २ ॥ सासि गिरासि न विसरै सफलु मूरति गुरु आपि ॥ गुर जेवडु अवरु न दिसई आठ पहर तिसु जापि ॥ नदरि करे ता पाईऐ सचु नामु गुणतासि ॥ ३ ॥ गुरु परमेसरु एकु है सभ महि रहिआ समाइ ॥ जिन कउ पूरबि लिखिआ सेई नामु धिआइ ॥ नानक गुर सरणागती मरै न आवै जाइ ॥ ४ ॥ ३० ॥ १०० ॥

हे संतजनो, हे भाइयों, ध्यानपूर्वक सुनो, आपको इस नश्वर संसार के बंधनों से मुक्ति केवल सत्यनाम की प्राप्ति से ही मिल सकती है। आप गुरु के चरणों की उपासना करो तथा ईश्वर के नाम को अपना तीर्थस्थल जानकर स्नान करो। आगे परलोक में प्रभु के दरबार के भीतर निःआश्रयों को आश्रय प्राप्त होता है, आपको मान—यश की प्राप्ति होगी॥ १॥ हे भाई ! केवल सतिगुरु की श्रद्धापूर्वक निष्काम सेवा ही सत्य है। जब सतिगुरु परम—प्रसन्न हो जाते हैं, तभी सर्वव्यापक अगाध, अदृश्य स्वामी प्राप्त होता है॥१॥ रहाउ॥ मैं सतिगुरु पर बलिहारी जाता हूँ, जिसने मुझे सत्य—नाम प्रदान किया है। अब तो रात्रि—दिवस उस सत्यपुरुष का यशोगान करता रहता हूँ और सत्य की ही मैं कीर्ति

करता रहता हूँ। उस सत्य स्वरूप परमात्मा का भोजन भी सत्य है और उसकी पोशाक भी सत्य है और उस सच्चे प्रभु के सत्य नाम का स्मरण करता हूँ॥ २॥ हे प्राणी! श्वास लेते तथा भोजनपान करते मुझे गुरु कभी विस्मृत नहीं होते, जो स्वयं ही दाता गुरु–मूर्ति हैं। गुरु के समान अन्य कोई भी दिखाई नहीं देता, इसलिए दिन के आठों पहर उनकी ही वंदना करनी चाहिए। यदि गुरु जी अपनी कृपा–दृष्टि करें, तब मनुष्य गुणों के भण्डार सत्य नाम को पा लेता है॥३॥ गुरदेव एवं ईश्वर एक है और ईश्वर रूप गुरु सब के भीतर व्यापक हो रहा है। जिनके सुकर्मों से भाग्य में लिखा हो तो वह ईश्वर के नाम का सुमिरन करते हैं। हे नानक! गुरु के आश्रय में आने से जन्म–मरण का चक्कर छूट गया है, वह अब पुनः आवागमन के चक्कर में नहीं आएगा॥४॥ ३०॥१००॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सिरीरागु महला १ घरु १ असटपदीआ ॥

आखि आखि मनु वावणा जिउ जिउ जापै वाइ ॥ जिस नो वाइ सुणाईऐ सो केवडु कितु थाइ॥ आखण वाले जेतड़े सभि आखि रहे लिव लाइ ॥ १ ॥ बाबा अलहु अगम अपारु ॥ पाकी नाई पाक थाइ सचा परवदिगारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरा हुकमु न जापी केतड़ा लिखि न जाणै कोइ ॥ जे सउ साइर मेलीअहि तिलु न पुजावहि रोइ ॥ कीमति किनै न पाईआ सभि सुणि सुणि आखहि सोइ ॥ २ ॥ पीर पैकामर सालक सादक सुहदे अउरु सहीद ॥ सेख मसाइक काजी मुला दरि दरवेस रसीद ॥ बरकति तिन कउ अगली पड़दे रहनि दरूद ॥ ३ ॥ पुछि न साजे पुछि न ढाहे पुछि न देवै लेइ ॥ आपणी कुदरति आपे जाणै आपे करणु करेइ ॥ सभना वेखै नदरि करि जै भावै तै देइ ॥ ४ ॥ थावा नाव न जाणीअहि नावा केवडु नाउ ॥ जिथै वसै मेरा पातिसाहु सो केवडु है थाउ ॥ अंबड़ि कोइ न सकई हउ किस नो पुछणि जाउ ॥ ५ ॥ वरना वरन न भावनी जे किसै वडा करेइ ॥ वडे हथि वडिआईआ जै भावै तै देइ ॥ हुकमि सवारे आपणै चसा न ढिल करेइ ॥ ६ ॥ सभु को आखै बहुतु बहुतु लैणै कै वीचारि ॥ केवडु दाता आखीऐ दे कै रहिआ सुमारि ॥ नानक तोटि न आवई तेरे जुगह जुगह भंडार ॥ ७ ॥ १ ॥

{यहाँ से गुरु नानक देव जी की उक्त छंद की वाणी का श्रीगणेश होता है। आठ पंक्तियों के पद को असटपदीआ कहा गया है। गुरु जी इस पद में बताते हैं कि अल्लाह अगम्य तथा अपार है}

जैसे–जैसे हम मन रूपी वाद्य को बजाते हैं, वैसे–वैसे ही अल्लाह की महिमा को समझते हैं। जितना अधिक वाद्य बजाते हैं, उतना ही उसे समझते हैं। जिसे मन वाद्य बजा कर सुनाया जाता है। वह कितना महान है और किस स्थान पर रहता है। जितने भी अल्लाह का यश करने वाले है, वह सभी उसका यश करते एवं उसमें सुरति लगाते हैं॥१॥ हे बाबा! अल्लाह अगम्य एवं अपार है। उस अल्लाह का नाम बड़ा पवित्र है तथा बड़ा ही पावन स्थल है जहाँ वह रहता है। वह सदैव सत्य है और सारे संसार का पालन पोषण करता है॥१॥ रहाउ॥ हे परमेश्वर! कोई ज्ञान नहीं होता कि तेरा हुक्म कितना महान है? कोई भी तेरे हुक्म को नहीं जानता और न ही वह उसे लिख सकता है। यदि सैंकड़ों कवि एकत्रित हो जाएँ, वे भी तेरे हुक्म को तिल–मात्र वर्णन करने में भी समर्थ नहीं। कोई भी तेरा मूल्यांकन करने में समर्थ नहीं हो सका, सभी लोग दूसरों से सुन कर तेरे बारे कहते जाते हैं॥२॥ मुसलमानों के पीर, पैगम्बर, रहबर, विवेकशील, धैर्यवान फकीर, भद्रपुरुष, धर्म हेतु बलिदान देने वाले। शेख, काजी, मुल्लां, दरवेश, साहिब के दरबार में पहुँचे हुए साधु, जो प्रभु का यशोगान करते रहते

हैं उन्हें प्रभु की कृपा से बड़ा यश प्राप्त होता है॥३॥ परमात्मा जब सृष्टि का निर्माण करता है तो वह किसी की सलाह नहीं लेता और जब विनाश करता है तो भी किसी की सलाह नहीं लेता। वह जीवों को दान किसी से पूछकर नहीं देता और न ही किसी से पूछकर उनसे वापिस लेता है। अपनी कुदरत को वह स्वयं ही जानता है और वह स्वयं ही सारे कार्य सम्पूर्ण करता है। वह सबको समान कृपा दृष्टि से देखता है। परन्तु वह उसको फल प्रदान करता है। जिस पर उसकी प्रसन्नता होती है॥४॥ नाम ने इतने स्थान रचे हुए हैं कि उनके नाम जाने नहीं जा सकते। उस प्रभु का नाम कितना महान् है इस बारे असमर्थ मनुष्य अनभिज्ञ हैं। वह स्थान कितना महान् है, जहाँ मेरा पारब्रह्म परमेश्वर निवास करता है? वहाँ तक कोई भी प्राणी नहीं पहुँच सकता। मैं वहाँ तक जाने का रहस्य किससे पूछूं॥५॥ जब प्रभु किसी एक को बड़ा करता है तो उसे उसकी उच्च अथवा निम्न जाति अच्छी नहीं लगती। परमात्मा समर्थाशाली है, वह जिसे चाहे बड़ाई दे सकता है लेकिन बड़ाई उसी को देता है जिसे वह पसंद करता है। सब कुछ उसी के वश में है। वह अपने हुक्म से उसका जीवन संवार देता है। परमेश्वर क्षण मात्र भी विलम्ब नहीं होने देता॥६॥ उससे प्राप्ति के विचार से सभी इसकी महानता का गुणगान करते हैं कि "मुझे और अधिक प्रदान करो, और अधिक।" किन्तु वह प्रभु बड़ा दानशील है। वह गणना से बाहर बेअंत फल प्रदान करता है। हे नानक ! उस परमात्मा के भण्डार असीम हैं, प्रत्येक युग में परिपूर्ण हैं और कदाचित उनमें कमी नहीं आती॥७॥१॥

महला १ ॥ सभे कंत महेलीआ सगलीआ करहि सीगारु ॥ गणत गणावणि आईआ सूहा वेसु विकारु ॥ पाखंडि प्रेमु न पाईऐ खोटा पाजु खुआरु ॥ १ ॥ हरि जीउ इउ पिरु रावै नारि ॥ तुधु भावनि सोहागणी अपणी किरपा लैहि सवारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर सबदी सीगारीआ तनु मनु पिर कै पासि ॥ दुइ कर जोड़ि खड़ी तकै सचु कहै अरदासि ॥ लालि रती सच भै वसी भाइ रती रंगि रासि ॥ २ ॥ प्रिअ की चेरी कांढीऐ लाली मानै नाउ ॥ साची प्रीति न तुटई साचे मेलि मिलाउ ॥ सबदि रती मनु वेधिआ हउ सद बलिहारै जाउ ॥ ३ ॥ सा धन रंड न बैसई जे सतिगुर माहि समाइ ॥ पिरु रीसालू नउतनो साचउ मरै न जाइ ॥ नित रवै सोहागणी साची नदरि रजाइ ॥ ४ ॥ साचु धड़ी धन माडीऐ कापड़ु प्रेम सीगारु ॥ चंदनु चीति वसाइआ मंदरु दसवा दुआरु ॥ दीपकु सबदि विगासिआ राम नामु उर हारु ॥ ५ ॥ नारी अंदरि सोहणी मसतकि मणी पिआरु ॥ सोभा सुरति सुहावणी साचै प्रेमि अपार ॥ बिनु पिर पुरखु न जाणई साचे गुर कै हेति पिआरि ॥ ६ ॥ निसि अंधिआरी सुतीए किउ पिर बिनु रैणि विहाइ ॥ अंकु जलउ तनु जालीअउ मनु धनु जलि बलि जाइ ॥ जा धन कंति न रावीआ ता बिरथा जोबनु जाइ ॥ ७ ॥ सेजै कंत महेलड़ी सूती बूझ न पाइ ॥ हउ सुती पिरु जागणा किस कउ पूछउ जाइ ॥ सतिगुरि मेली भै वसी नानक प्रेमु सखाइ ॥ ८ ॥ २ ॥

समस्त जीव उस प्राणपति (प्रभु) की स्त्रियाँ हैं एवं सभी जीव—स्त्रियाँ उसे प्रसन्न करने के लिए हार—श्रृंगार करती हैं। जो अपने प्राणपति से अनुकंपा करने की जगह उससे हिसाब—किताब मोल करने आई हैं, उनका दुल्हन—वेष लाल पहरावा भी बेकार है, अर्थात् आडम्बर है। हे जीवात्मा ! आडम्बर से उसकी प्रीति प्राप्त नहीं होती। खोटा आडम्बर विनाशकारी होता है, इससे प्रभु—पति की प्रसन्नता प्राप्त नहीं होती॥१॥ हे प्रभु जी ! प्रियवर अपनी स्त्री से ऐसे रमण करता है। हे ईश्वर ! वही सुहागिन है जो तुझे अच्छी लगती है और अपनी दया—दृष्टि से तुम उसे संवार लेते हो॥१॥ रहाउ॥ गुर—शब्द से वह सुशोभित हुई हैं और उसका तन एवं मन उसके प्रीतम के समक्ष समर्पित है। अपने दोनों हाथ जोड़कर वे प्रभु—परमेश्वर की प्रतीक्षा करती हैं और सच्चे हृदय से

उसके समक्ष वंदना करके सत्य प्राप्ति की लालसा बनाए रखती हैं। वह अपने प्रीतम के प्रेम में लिवलीन हो गई हैं और सत्यपुरुष के भय में रहती हैं। उसकी प्रीत में रंग जाने से उसकी सत्य की रंगत में लिवलीन हो जाती हैं॥२॥ वह अपने प्रियतम की अनुचर कही जाती है, जो अपने नाम को समर्पण होती है। प्रीतम का सच्चा प्रेम कभी टूटता नहीं और वह सच्चे स्वामी के मिलाप अंदर मिल जाती है। गुरुवाणी में रंग जाने से उसका मन बिंध गया है। मैं सदैव उस पर बलिहारी जाता हूँ॥३॥ वह नारी जो अपने सतिगुर के (उपदेशों–शिक्षाओं) भीतर लीन हुई है, वह कदापि विधवा नहीं होती। उसका प्रीतम रसों का घर हमेशा नवीन देह वाला एवं सत्यवादी है। वह जीवन–मृत्यु के चक्कर से विमुक्त है। वह हमेशा अपनी पवित्र–पाक नारी को हर्षित करता है और उस पर अपनी सत्य–दृष्टि रखता है, क्योंकि वह उसकी आज्ञानुसार विचरण करती है॥४॥ ऐसी जीवात्माएँ सत्य की माँग संवारती हैं और प्रभु प्रीत को अपनी पोशाक तथा हार–शृंगार बनाती हैं। स्वामी का हृदय में धारण करने का चन्दन लगाती हैं और दसवें द्वार को अपना महल बनाती हैं। वह गुर–शब्द का दीपक प्रज्वलित करती हैं और राम–नाम ही उनकी माला है॥ ५॥ नारियों में वह अति रूपवान सुन्दर है और अपने मस्तक पर उसने स्वामी के स्नेह का माणिक्य शोभायमान है। उसकी महिमा तथा विवेक अति मनोहर है तथा उसकी प्रीति अनंत प्रभु के लिए सच्ची है। वह अपने प्रियतम के अतिरिक्त किसी को भी परम–पुरुष नहीं समझती। केवल सतिगुरु हेतु ही वह प्रेम तथा अनुराग रखती है॥ ६॥ परन्तु जो अंधेरी निशा में सोई हुई है, वह अपने प्रियतम के अलावा अपनी रात्रि किस तरह व्यतीत करेगी? तेरे अंग जल जाएँगे, तेरी देहि जल जाएगी और तेरा हृदय एवं धन सभी जल जाएँगे। यदि जीव रूपी नारी को प्राणपति सम्मान प्रदान नहीं करता, तब उसका यौवन व्यर्थ जाता है॥ ७॥ जीव रूपी स्त्री एवं मालिक प्रभु दोनों का एक ही हृदय रूपी सेज पर निवास है। लेकिन जीव–स्त्री माया के मोह की निद्रा में मग्न है परन्तु सोई हुई पत्नी को उस बारे ज्ञान ही नहीं। मैं निद्रा–मग्न हूँ, मेरा पति प्रभु जाग रहा है। मैं किसके पास जाकर पूछूं? हे नानक ! जिस जीव–स्त्री को सतिगुरु उसके पति–प्रभु से मिला देते हैं, वह सदैव पति–प्रभु के भय में रहती है। प्रभु का प्रेम उस जीव–स्त्री का साथी बन जाता है॥८॥२॥

सिरीरागु महला १ ॥ आपे गुण आपे कथै आपे सुणि वीचारु ॥ आपे रतनु परखि तूं आपे मोलु अपारु ॥ साचउ मानु महतु तूं आपे देवणहारु ॥ १ ॥ हरि जीउ तूं करता करतारु ॥ जिउ भावै तिउ राखु तूं हरि नामु मिलै आचारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे हीरा निरमला आपे रंगु मजीठ ॥ आपे मोती ऊजलो आपे भगत बसीठु ॥ गुर कै सबदि सलाहणा घटि घटि डीठु अडीठु ॥ २ ॥ आपे सागरु बोहिथा आपे पारु अपारु ॥ साची वाट सुजाणु तूं सबदि लघावणहारु ॥ निडरिआ डरु जाणीऐ बाझु गुरू गुबारु ॥ ३ ॥ असथिरु करता देखीऐ होरु केती आवै जाइ ॥ आपे निरमलु एकु तूं होर बंधी धंधै पाइ ॥ गुरि राखे से उबरे साचे सिउ लिव लाइ ॥ ४ ॥ हरि जीउ सबदि पछाणीऐ साचि रते गुर वाकि ॥ तितु तनि मैलु न लगई सच घरि जिसु ओताकु ॥ नदरि करे सचु पाईऐ बिनु नावै किआ साकु ॥ ५ ॥ जिनी सचु पछाणिआ से सुखीए जुग चारि ॥ हउमै त्रिसना मारि कै सचु रखिआ उर धारि ॥ जग महि लाहा एकु नामु पाईऐ गुर वीचारि ॥ ६ ॥ साचउ वखरु लादीऐ लाभु सदा सचु रासि ॥ साची दरगह बैसई भगति सची अरदासि ॥ पति सिउ लेखा निबड़ै राम नामु परगासि ॥ ७ ॥ ऊचा ऊचउ आखीऐ कहउ न देखिआ जाइ ॥ जह देखा तह एकु तूं सतिगुरि दीआ दिखाइ ॥ जोति निरंतरि जाणीऐ नानक सहजि सुभाइ ॥ ८ ॥ ३ ॥

हे स्वामी ! तू स्वयं ही रत्न में गुण है। तू जौहरी बन कर स्वयं ही रत्न के गुणों को कथन करता है। तुम स्वयं ही ग्राहक बनकर उसके गुणों को सुनते एवं विचार करते हो। तुम स्वयं ही नाम रूपी रतन हो तुम स्वयं ही इसकी परख करने वाले हो और तुम अनन्त मूल्यवान हो। हे ईश्वर ! तुम ही मान–प्रतिष्ठा और महत्ता हो और स्वयं ही दानशील प्रभु उनको मान–सम्मान देने वाले हो॥१॥ हे हरि ! तुम ही जगत् के रचयिता एवं सृजनहार हो। जिस तरह तुझे अच्छा लगता है, मेरी रक्षा करो। हे परमात्मा ! मुझे अपना नाम–सुमिरन एवं जीवन आचरण प्रदान करो॥१॥ रहाउ॥ तुम स्वयं ही शुद्ध–निर्मल रत्न हो और स्वयं ही भक्ति का मजीठ रंग भी हो। तुम ही निर्मल मोती हो और स्वयं ही भक्तों में मध्यस्थ भी हो। गुरु के शब्द द्वारा अदृश्य प्रभु को प्रशंसित किया जाता है और प्रत्येक हृदय में उसके दर्शन किए जाते हैं॥ २॥ हे प्रभु ! तुम स्वयं ही सागर तथा पार होने का जहाज हो तथा स्वयं ही इस पार का किनारा और उस पार का किनारा हो। हे सर्वज्ञ स्वामी ! तू ही सत्य मार्ग है। और तेरा नाम पार करने के लिए मल्लाह है। जो प्रभु के नाम से भय नहीं रखते, वही भवसागर में भयभीत होते हैं। गुरदेव के अतिरिक्त घनघोर अंधकार है॥३॥ केवल सृष्टि का कर्त्ता ही सदैव स्थिर देखा जाता है। अन्य सभी आवागमन के चक्कर में रहते हैं। हे पारब्रह्म ! केवल एक तू ही अपने आप शुद्ध है। शेष सांसारिक कर्मों के भीतर अपने–अपने धंधों में बंधे हुए हैं। जिन प्राणियों की गुरु जी रक्षा करते हैं, वे प्रभु की भक्ति में लिवलीन सांसारिक बंधनों से मुक्ति प्राप्त करते हैं॥ ४॥ नाम द्वारा इन्सान पूज्य प्रभु को पहचान लेता है और गुरु की वाणी द्वारा वह सत्य के रंग में लिवलीन हो जाता है। उस प्राणी की देहि को तुच्छ मात्र भी मलिनता नहीं लगती, जिसने सच्चे घर के भीतर निवास कर लिया है। यदि प्रभु अपनी कृपा–दृष्टि करे तो सत्यनाम प्राप्त हो जाता है। परमात्मा के नाम के अतिरिक्त प्राणी का अन्य संबंधी कौन है?॥ ५॥ जिन्होंने सत्य को अनुभव किया है, वे चारों युगों में सुखी रहते हैं। अहंकार एवं तृष्णा का नाश करके वह सत्य–नाम को अपने हृदय में धारण करके रखते हैं। इस जगत् में केवल नाम (प्रभु–भक्ति) का ही लाभ उचित है। इसकी प्राप्ति केवल गुरु की कृपा सोच–विचार द्वारा ही होती है॥ ६॥ यदि सत्य की पूँजी द्वारा सत्यनाम का सौदा व्यवसायिक तौर पर किया जाए तो सदैव ही लाभ होता है। प्रेममयी सुमिरन एवं सच्ची लगन से प्रार्थना द्वारा मनुष्य ईश्वर के दरबार के अन्दर बैठ जाता है। सर्वव्यापक परमेश्वर के नाम के उजाले में मनुष्य का हिसाब सम्मान–पूर्वक स्पष्टता हो जाता है॥ ७॥ बुलंदों में परम बुलंद स्वामी कहा जाता है, पर वह किसी द्वारा भी नहीं देखा जा सकता। जहाँ कहीं भी मैं देखता हूँ, सर्वत्र मैं केवल तुझे ही पाता हूँ। मुझे सतिगुरु ने आपके दीदार–दर्शन करवा दिए हैं। हे नानक ! प्रेम द्वारा सहज अवस्था प्राप्त होने पर हृदय में विद्यमान प्रभु की ज्योति की सूझ होती है॥ ८॥३॥

सिरीरागु महला १ ॥ मछुली जालु न जाणिआ सरु खारा असगाहु ॥ अति सिआणी सोहणी किउ कीतो वेसाहु ॥ कीते कारणि पाकड़ी कालु न टलै सिराहु ॥ १ ॥ भाई रे इउ सिरि जाणहु कालु ॥ जिउ मछी तिउ माणसा पवै अचिंता जालु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभु जगु बाधो काल को बिनु गुर कालु अफारु ॥ सचि रते से उबरे दुबिधा छोडि विकार ॥ हउ तिन कै बलिहारणै दरि सचै सचिआर ॥ २ ॥ सीचाने जिउ पंखीआ जाली बधिक हाथि ॥ गुरि राखे से उबरे होरि फाथे चोगै साथि ॥ बिनु नावै चुणि सुटीअहि कोइ न संगी साथि ॥ ३ ॥ सचो सचा आखीऐ सचे सचा थानु ॥ जिनी सचा मंनिआ तिन मनि सचु धिआनु ॥ मनि मुखि सूचे जाणीअहि गुरमुखि जिना गिआनु ॥ ४ ॥ सतिगुर अगै अरदासि करि साजनु देइ मिलाइ ॥ साजनि मिलिऐ सुखु पाइआ जमदूत मुए बिखु खाइ ॥ नावै अंदरि हउ वसां नाउ वसै मनि आइ ॥ ५ ॥ बाझु गुरू गुबारु है बिनु सबदै बूझ न पाइ ॥ गुरमती परगासु होइ सचि

रहै लिव लाइ ॥ तिथै कालु न संचरै जोती जोति समाइ ॥ ६ ॥ तूंहै साजनु तूं सुजाणु तूं आपे मेलणहारु ॥ गुर सबदी सालाहीऐ अंतु न पारावारु ॥ तिथै कालु न अपड़ै जिथै गुर का सबदु अपारु ॥ ७ ॥ हुकमी सभे ऊपजहि हुकमी कार कमाहि ॥ हुकमी कालै वसि है हुकमी साचि समाहि ॥ नानक जो तिसु भावै सो थीऐ इना जंता वसि किछु नाहि ॥ ८ ॥ ४ ॥

जब मछली की मृत्यु आई तो उसने मछेरे के जाल की पहचान नहीं की। वह गहरे खारे समुद्र में रहती है। वह बहुत चतुर एवं सुन्दर है। उसने मछेरे पर विश्वास क्यों किया? वह विश्वास करने के कारण ही जाल में पकड़ी गई। उसके सिर पर मृत्यु को टाला नहीं जा सकता, जो अटल है॥ १॥ हे भाई ! इस तरह तू मृत्यु को अपने सिर पर मंडराता हुआ समझ, क्योंकि काल बहुत बलवान है। जिस तरह मछली है, उसी तरह ही मनुष्य है। मृत्यु का जाल अकस्मात ही उस पर आ गिरता है॥ १॥ रहाउ॥ सारे संसार को काल (मृत्यु) ने दबोचा हुआ है। गुरु की कृपा बिना मृत्यु अनिवार्य है। जो सत्य में लिवलीन हो गए हैं और द्वैत-भाव तथा पापों को त्याग देते हैं, वह बच जाते हैं। मैं उन पर कुर्बान हूँ, जो सत्य के दरबार में सत्यवादी माने जाते हैं॥२॥ जैसे बाज पक्षियों को मार देता है और शिकारी के हाथ में पकड़ा हुआ जाल उन्हें फँसा लेता है, वैसे ही माया के मोह के कारण सभी मनुष्य यम के जाल में फँस जाते हैं। जिनकी गुरदेव रक्षा करते हैं, वह यम के जाल से बच जाते हैं, शेष दाने (मृत्यु) के साथ फँस जाते हैं। हरि नाम के बिना वे मृत्यु के वश में दाने की तरह चुन लिए जाएँगे, फिर उनका कोई भी साथी या सहायक नहीं होगा॥३॥ सत्य प्रभु को सभी सत्य कहते हैं। सत्य प्रभु का निवास भी सत्य है सत्य प्रभु उनके हृदय में निवास करता है, जो उसका सिमरन एवं ध्यान करते हैं। गुरु द्वारा ज्ञान प्राप्त करने वाले प्राणियों के हृदय एवं मुख पवित्र माने जाते हैं॥ ४॥ हे प्राणी ! सतिगुरु के समक्ष वंदना करो कि वह तुझे तेरे मित्र (प्रभु) से मिलन करवा दे। मित्र (ईश्वर) के मिलन से सुख-समृद्धि प्राप्त होती है और यमदूत विष सेवन करके कालवश हो जाते हैं। मैं परमात्मा के नाम (भक्ति) में वास करता हूँ और नाम ने मेरी आत्मा में निवास कर लिया है॥ ५॥ गुरु के बिना मनुष्य के हृदय में अज्ञानता का अन्धेरा विद्यमान रहता है और ईश्वर के नाम के बिना उसे ज्ञान-बुद्धि की प्राप्ति नहीं होती। जब गुरु की मति द्वारा उसके भीतर ज्योति का प्रकाश होता है, फिर वह सत्य प्रभु में सुरति लगाकर रखता है। इस अवस्था में वहाँ मृत्यु प्रवेश नहीं करती और मनुष्य की ज्योति (आत्मा) परम ज्योति (परमात्मा) के साथ अभेद हो जाती है॥ ६॥ हे प्रभु ! तुम बुद्धिमान हो, तुम मेरे मित्र हो और तुम ही मनुष्य को अपने साथ मिलाने वाले हो। मैं गुरु की वाणी द्वारा तेरी महिमा करता हूँ। तेरा अन्त नहीं पाया जा सकता एवं ओर-छोर भी नहीं पाया जा सकता। गुरु बेअंत है। जहाँ पर गुरु का अनहद शब्द विद्यमान है, काल वहाँ पर कदापि प्रवेश नहीं करता॥ ७॥ प्रभु की इच्छा द्वारा समस्त जीव-जन्तु उत्पन्न होते हैं और उसकी इच्छानुसार ही वे कार्य व्यवहार करते हैं। प्रभु की इच्छानुसार ही वे काल के अधीन है और उसकी इच्छानुसार वे सत्यस्वरूप परमात्मा में विलीन हो जाते हैं। हे नानक ! जो कुछ भी प्रभु को लुभाता है, वही होता है। सांसारिक जीवों के वश में कुछ भी नहीं॥८॥४॥

सिरीरागु महला १ ॥ मनि जूठै तनि जूठि है जिहवा जूठी होइ ॥ मुखि झूठै झूठु बोलणा किउ करि सूचा होइ ॥ बिनु अभ सबद न मांजीऐ साचे ते सचु होइ ॥ १ ॥ मुंधे गुणहीणी सुखु केहि ॥ पिरु रलीआ रसि माणसी साचि सबदि सुखु नेहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पिरु परदेसी जे थीऐ धन वांढी झूरेइ ॥ जिउ जलि थोड़ै मछुली करण पलाव करेइ ॥ पिर भावै सुखु पाईऐ जा आपे नदरि

करेइ ॥ २ ॥ पिरु सालाही आपणा सखी सहेली नालि ॥ तनि सोहै मनु मोहिआ रती रंगि निहालि ॥ सबदि सवारी सोहणी पिरु रावे गुण नालि ॥ ३ ॥ कामणि कामि न आवई खोटी अवगणिआरि ॥ ना सुखु पेईऐ साहुरै झूठि जली वेकारि ॥ आवणु वंञणु डाखड़ो छोडी कंति विसारि ॥ ४ ॥ पिर की नारि सुहावणी मुती सो कितु सादि ॥ पिर कै कामि न आवई बोले फादिलु बादि ॥ दरि घरि ढोई ना लहै छूटी दूजै सादि ॥ ५ ॥ पंडित वाचहि पोथीआ ना बूझहि वीचारु ॥ अन कउ मती दे चलहि माइआ का वापारु ॥ कथनी झूठी जगु भवै रहणी सबदु सु सारु ॥ ६ ॥ केते पंडित जोतकी बेदा करहि बीचारु ॥ वादि विरोधि सलाहणे वादे आवणु जाणु ॥ बिनु गुर करम न छुटसी कहि सुणि आखि वखाणु ॥ ७ ॥ सभि गुणवंती आखीअहि मै गुणु नाही कोइ ॥ हरि वरु नारि सुहावणी मै भावै प्रभु सोइ ॥ नानक सबदि मिलावड़ा ना वेछोड़ा होइ ॥ ८ ॥ ५ ॥

यदि मन में जूठन है तो तन में भी जूठन आ जाती है और जूठन के कारण जिह्वा भी जूठी हो जाती है। अर्थात् विषय–विकारों में लीन होने के कारण तन–मन–जिह्वा मलिन हो जाती है। मुख झूठा हो तो झूठा मनुष्य असत्य वचन ही व्यक्त करता है, फिर वह किस तरह पवित्र–पावन हो सकता है? नाम (भक्ति) के जल बिना आत्मा स्वच्छ नहीं होती। सत्य नाम द्वारा ही सत्य प्रभु प्राप्त होता है॥ १॥ हे भोली जीव–स्त्री ! गुण के बिना सुख कहाँ है? प्रियतम प्राणपति उनके साथ आनंद एवं रस के साथ रमण करता है जो सत्य नाम की प्रीति के भीतर शांति–सुख अनुभव करते हैं॥ १॥ रहाउ॥ यदि प्राणपति परदेस चला जाए तो नारी (जीवात्मा) वियोग में ऐसे पीड़ित अनुभव करती है जिस तरह थोड़े से जल में मछली तड़पती है। जब प्राणपति को अच्छा लगता है तो वह स्वयं ही अपनी कृपा–दृष्टि करता है और पत्नी को सुख–समृद्धि प्राप्त हो जाती है॥२॥ अपनी सखियों एवं सहेलियों के साथ बैठकर हे जीवात्मा ! तू अपने पति परमेश्वर का यशोगान कर। उसके दर्शन करने से तेरा शरीर सुन्दर तथा मन मोहित हो गया है और तू उसकी प्रीति के साथ रंग गई है। सुन्दर पत्नी, जिसने नाम के साथ शृंगार किया है, वह गुणवती होकर अपने पति की भरपूर सेवा करती है॥३॥ बुराइयों तथा विषय–विकारों में लिप्त नारी गुणहीन होने के कारण पति के किसी भी काम नहीं आती। इस जीवात्मा को न तो बाबुल के घर (इहलोक) में सुख मिलता है और न ही ससुराल (परलोक) में और वह बुराइयों तथा पापों के अंदर व्यर्थ ही तड़पती रहती है। उसका आवागमन (जन्म–मरण) बड़ा दुलर्भ है, जिसे उसके पति ने प्रेम से वंचित करके भुला दिया है॥४॥ प्राणपति परमेश्वर की अति सुन्दर नारी सुहागिन है, किन्तु विषय–विकारों के कारण त्वक्ता के लिए जीवन का कोई भी रस नहीं। जो नारी व्यर्थ ही विवादपूर्ण बकवाद करती है, वह पति के किसी भी काम योग्य नहीं। सांसारिक रसों के कारण वह त्याग दी गई है और उसको अपने स्वामी के द्वार एवं मंदिर में आश्रय नहीं मिलता॥५॥ पण्डित धर्म ग्रंथों का अध्ययन करते हैं परन्तु वे यथार्थ ज्ञान का मनन नहीं करते। वे दूसरों को उपदेश देते रहते हैं। किन्तु स्वयं ज्ञान की उपलब्धि के बिना संसार से चले जाते हैं। उन्होंने उपदेश देने को धन ऐंठने का व्यापार बना लिया है। उनकी झूठी कथनी से गुमराह होकर सारा संसार भटक रहा है। सत्य नाम की कमाई करना ही श्रेष्ठ जीवन आचरण है॥६॥ कितने ही पंडित तथा ज्योतिष वेदों को सोचते–विचारते हैं। वे विवादों एवं निरर्थक झगड़ों की प्रशंसा करते हैं और वाद–विवाद में फँसे जन्म–मरण के चक्कर में आवागमन करते रहते हैं। किन्तु गुरु के बिना उनकी अपने कर्मों से मुक्ति नहीं होनी, चाहे वे जितने भी कथन, श्रवण करें, उपदेश दें अथवा व्याख्या करते रहें। गुरु की अपार कृपा के बिना इनकी मुक्ति नहीं हो सकती॥ ७॥ समस्त जीव–स्त्रियों को गुणवान कहा जाता है

परन्तु मुझ में कोई भी गुण विद्यमान नहीं। यदि प्रभु मुझे भी पसंद करने लगे तो मैं भी प्रभु की सुन्दर पत्नी बन सकती हूँ। हे नानक! जीव–स्त्री का प्रभु–पति से मिलन नाम द्वारा ही होता है। प्रभु से मिलन उपरांत फिर उसका पति से बिछोड़ा कभी नहीं होता॥८॥५॥

सिरीरागु महला १ ॥ जपु तपु संजमु साधीऐ तीरथि कीचै वासु ॥ पुंन दान चंगिआईआ बिनु साचे किआ तासु ॥ जेहा राधे तेहा लुणै बिनु गुण जनमु विणासु ॥ १ ॥ मुंधे गुण दासी सुखु होइ ॥ अवगण तिआगि समाईऐ गुरमति पूरा सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ विणु रासी वापारीआ तके कुंडा चारि ॥ मूलु न बुझै आपणा वसतु रही घर बारि ॥ विणु वखर दुखु अगला कूड़ि मुठी कूड़िआरि ॥ २ ॥ लाहा अहिनिसि नउतना परखे रतनु वीचारि ॥ वसतु लहै घरि आपणै चलै कारजु सारि ॥ वणजारिआ सिउ वणजु करि गुरमुखि ब्रहमु बीचारि ॥ ३ ॥ संतां संगति पाईऐ जे मेले मेलणहारु ॥ मिलिआ होइ न विछुड़ै जिसु अंतरि जोति अपार ॥ सचै आसणि सचि रहै सचै प्रेम पिआर ॥ ४ ॥ जिनी आपु पछाणिआ घर महि महलु सुथाइ ॥ सचे सेती रतिआ सचो पलै पाइ ॥ त्रिभवणि सो प्रभु जाणीऐ साचो साचै नाइ ॥ ५ ॥ सा धन खरी सुहावणी जिनि पिरु जाता संगि ॥ महली महलि बुलाईऐ सो पिरु रावे रंगि ॥ सचि सुहागणि सा भली पिरि मोही गुण संगि ॥ ६ ॥ भूली भूली थलि चड़ा थलि चड़ि डूगरि जाउ ॥ बन महि भूली जे फिरा बिनु गुर बूझ न पाउ ॥ नावहु भूली जे फिरा फिरि फिरि आवउ जाउ ॥ ७ ॥ पुछहु जाइ पधाऊआ चले चाकर होइ ॥ राजनु जाणहि आपणा दरि घरि ठाक न होइ ॥ नानक एको रवि रहिआ दूजा अवरु न कोइ ॥ ८ ॥ ६ ॥

भगवान का भजन किए बिना मनुष्य को जप, तपस्या एवं संयम की साधना करने, तीर्थ स्थलों में जाकर निवास करने, पुण्य–दान इत्यादि अन्य शुभ कर्म करने का कोई लाभ नहीं होता। प्राणी जैसा बोता है, वैसा ही फल काटता है। गुण ग्रहण किए बिना मानव जीवन व्यर्थ ही व्यतीत हो जाता है॥१॥ हे भोली जीव–स्त्री! दासी वाले गुण पैदा करने से सुख उपलब्ध होता है। अवगुणों का त्याग करके गुरु की मति द्वारा पूर्ण प्रभु में समाया जाता है॥१॥ रहाउ॥ जिस व्यापारी के पास गुणों की पूँजी विद्यमान नहीं, वह चारों दिशाओं में व्यर्थ भटकता रहता है। वह मूल–प्रभु का नाम बोध नहीं करता। नाम रूपी वस्तु उसके दसम द्वार रूपी घर में विद्यमान है। इस नाम–वस्तु के बिना वह बहुत दुखी होता है। झूठी माया ने झूठ का व्यापार करने वाले को ठग लिया है॥२॥ जो नाम–रत्न का ध्यान से सिमरन (जांच पड़ताल) करता है, उसे नित्य अधिकाधिक लाभ मिलता है। वह नाम रूपी वस्तु को अपने हृदय गृह में ही पा लेता है और अपने कार्य को संवार गमन करता है अर्थात् जीवन में शुभ कर्म करके अपने जीवन को सफल करके परमात्मा में विलीन हो जाता है। ईश्वर के व्यापारियों (भक्तों) के साथ व्यापार (भक्ति) करो और अपने गुरु से मिलकर परमेश्वर का चिंतन करो॥३॥ साधु–संगति द्वारा ही प्रभु को पाया जाता है, जब प्रभु से मिलन करवाने वाले गुरु जी अपनी दया से प्राणी को परमात्मा से मिलाते हैं। जिस की आत्मा के भीतर प्रभु का अनन्त प्रकाश प्रज्वलित है, वह उसे मिल जाता है और पुनः जुदा नहीं होता अर्थात् जीवन–मृत्यु के चक्र से छूटकर वह मोक्ष प्राप्त करता है। ऐसे पुरुष का निवास सत्य है, जो सत्य के भीतर निवास करता है और सत्य स्वरूप परमेश्वर के प्रेम में सदैव विचरता है॥ ४॥ जीवात्मा का स्वरूप ज्योति है। जिसने अपने इस स्वरूप को पहचान लिया है, वह अपने हृदय गृह के श्रेष्ठ स्थान में ही स्वामी के मन्दिर को पा लेते हैं। सत्य नाम के रंग में लिवलीन होने से सत्य प्रभु प्राप्त हो जाता है। सत्य प्रभु के नाम द्वारा वह उसे पहचान लेते हैं, जो पाताल, धरती एवं आकाश तीनों लोकों में रहता है॥ ५॥ वह जीव–स्त्री बहुत ही सुन्दर है जिसने अपने प्रियतम–प्रभु को समझ लिया है, जो सदैव इसके

साथ रहता है। दसम द्वार रूपी महल में रहने वाला प्रियतम प्रभु जीव–स्त्री को अपने महल में आमन्त्रित कर लेता है। पति उसे बड़ी प्रीति से रखता है। वही नारी सचमुच प्रसन्न तथा गुणवान सुहागिन है, जो अपने प्रियतम पति के गुणों पर मोहित होती है॥६॥ मुझ नाम से भूली हुई को गुरु के बिना नाम की सूझ नहीं होगी। चाहे मैं सारी धरती पर फिरती रहूँ, धरती पर घूमने के पश्चात पर्वतों पर चढ़ जाऊँ और जंगलों में भटकती रहूँ। यदि हरि नाम को विस्मृत करके मैं भटकती रहूँ तो मैं पुनः पुनः आवागमन के चक्र में रहूँगी॥७॥ हे जीव–स्त्री! जाकर उन पथिकों से पता कर लो जो प्रभु के भक्त होकर उसके मार्ग पर चलते हैं। वह ईश्वर को अपना सम्राट मानते हैं और उनको प्रभु के दरबार एवं घर में जाते समय कोई भी रोक नहीं होती। हे नानक! एक परमेश्वर ही सर्वव्यापक है, इसके अलावा अन्य कोई भी अस्तित्व में नहीं॥८॥६॥

सिरीरागु महला १ ॥ गुर ते निरमलु जाणीऐ निरमल देह सरीरु ॥ निरमलु साचो मनि वसै सो जाणै अभ पीर ॥ सहजै ते सुखु अगलो ना लागै जम तीरु ॥ १ ॥ भाई रे मैलु नाही निरमल जलि नाइ ॥ निरमलु साचा एकु तू होरु मैलु भरी सभ जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि का मंदरु सोहणा कीआ करणैहारि ॥ रवि ससि दीप अनूप जोति त्रिभवणि जोति अपार ॥ हाट पटण गड़ कोठड़ी सचु सउदा वापार ॥ २ ॥ गिआन अंजनु भै भंजना देखु निरंजन भाइ ॥ गुपतु प्रगटु सभ जाणीऐ जे मनु राखै ठाइ ॥ ऐसा सतिगुरु जे मिलै ता सहजे लए मिलाइ ॥ ३ ॥ कसि कसवटी लाईऐ परखे हितु चितु लाइ ॥ खोटे ठउर न पाइनी खरे खजानै पाइ ॥ आस अंदेसा दूरि करि इउ मलु जाइ समाइ ॥ ४ ॥ सुख कउ मागै सभु को दुखु न मागै कोइ ॥ सुखै कउ दुखु अगला मनमुखि बूझ न होइ ॥ सुख दुख सम करि जाणीअहि सबदि भेदि सुखु होइ ॥ ५ ॥ बेदु पुकारे वाचीऐ बाणी ब्रहम बिआसु ॥ मुनि जन सेवक साधिका नामि रते गुणतासु ॥ सचि रते से जिणि गए हउ सद बलिहारै जासु ॥ ६ ॥ चहु जुगि मैले मलु भरे जिन मुखि नामु न होइ ॥ भगती भाइ विहूणिआ मुहु काला पति खोइ ॥ जिनी नामु विसारिआ अवगण मुठी रोइ ॥ ७ ॥ खोजत खोजत पाइआ डरु करि मिलै मिलाइ ॥ आपु पछाणै घरि वसै हउमै त्रिसना जाइ ॥ नानक निरमल ऊजले जो राते हरि नाइ ॥ ८ ॥ ७ ॥

जब गुरु द्वारा मनुष्य का शरीर एवं मन निर्मल हो जाते हैं तो निर्मल प्रभु को जाना जाता है। सत्य निर्मल प्रभु मन में आ बसता है। वह परमेश्वर जीव के हृदय की पीड़ा को अनुभव करता है। सहज अवस्था प्राप्त होने पर मन बहुत सुखी होता है और काल (मृत्यु) का बाण उसे नहीं लगता॥ १॥ हे भाई! हरि नाम के निर्मल जल में स्नान करने से तुझे कोई भी मलिनता नहीं लगी रहेगी, अपितु तेरे समस्त अवगुणों की मैल उतर जाएगी। हे प्रभु! एकमात्र तू ही सत्य और निर्मल है, अन्य समस्त स्थानों पर मैल विद्यमान है॥ १॥ रहाउ॥ यह जगत् ईश्वर का अति सुन्दर महल है। सृजनहार प्रभु ने स्वयं इसकी रचना की है। सूर्य एवं चंद्रमा की ज्योतियों की चमक अनूप है। ईश्वर का अनन्त प्रकाश तीनों ही लोकों में प्रज्वलित हो रहा है। तन के अन्दर दुकानें, नगर तथा किले विद्यमान हैं। जहाँ पर व्यापार करने के लिए सत्य नाम का सौदा है॥ २॥ ज्ञान का सुरमा भय को नाश करने वाला है और प्रेम के द्वारा ही पवित्र प्रभु के दर्शन किए जाते हैं। प्राणी अप्रत्यक्ष एवं प्रत्यक्ष समूह को जान लेता है, यदि वह अपने मन को एक स्थान पर केन्द्रित रखे। यदि मनुष्य को ऐसा सतिगुरु मिल जाए तो वह सुखैन ही उसको प्रभु से मिला देता है॥३॥ जैसे सोने को परखने के लिए कसौटी पर परख लिया जाता है, वैसे ही पारब्रह्म अपने उत्पन्न किए हुए प्राणियों के आत्मिक जीवन को बड़े प्रेम से ध्यान लगाकर परखता है। गुणहीन मंदे जीवों को स्थान नहीं मिलता और गुणवान वास्तविक कोष में डाले

जाते हैं। अपनी आशा एवं चिन्ता को निवृत्त कर दे, इस तरह तेरी मलिनता धुल जाएगी॥ ४॥प्रत्येक व्यक्ति सुख की कामना करता है, कोई भी दुख की याचना नहीं करता। रसों—स्वादों के पीछे अत्यंत कष्ट प्राप्त होता है परन्तु मनमुखी प्राणी इसको नहीं समझते। जो सुख और दुख को एक समान जानते हैं और अपनी आत्मा को नाम के साथ अभेद करते हैं, वह ईश्वरीय सुख—समृद्धि प्राप्त करते हैं॥ ५॥ ब्रह्मा के वेद तथा व्यास के शब्दों के पाठ पुकारते हैं कि मौनधारी ऋषि, प्रभु के भक्त एवं साधक गुणों के भण्डार नाम के साथ रंगे हुए हैं। जो सत्यनाम के साथ रंग जाते हैं, वे सदैव विजय प्राप्त करते हैं। मैं उन पर सदैव ही बलिहारी जाता हूँ॥६॥ जिनके मुख में प्रभु का नाम नहीं, वे मैल से भरे रहते हैं और चारों ही युगों में मैले रहते हैं। जो भगवान से प्रेम नहीं करते उन भक्तिहीनों का भगवान के दरबार में मुँह काला किया जाता है और वे अपना मान—सम्मान गंवा लेते हैं। जिन्होंने भगवान के नाम को विस्मृत कर दिया है, उन्हें उनके अवगुणों ने ठग लिया है, इसलिए वे विलाप करते हैं॥७॥ भगवान खोज करने से मिल जाता है। जब मनुष्य के मन में भगवान का भय पैदा हो जाता है फिर गुरु के द्वारा उसे भगवान मिल जाता है। जीवात्मा का स्वरूप ज्योति है। जब जीवात्मा को अपने ज्योति स्वरूप की पहचान हो जाती है तो वह अपने दसम द्वार रूपी घर में जाकर बसती है। उसकी अहंकार एवं तृष्णा मिट जाती है। हे नानक! जो व्यक्ति भगवान के नाम में मग्न रहते हैं, वे निर्मल हो जाते हैं और उनके मुख भी उज्ज्वल हो जाते हैं॥८॥७॥

सिरीरागु महला १ ॥ सुणि मन भूले बावरे गुर की चरणी लागु ॥ हरि जपि नामु धिआइ तू जमु डरपै दुख भागु ॥ दूखु घणो दोहागणी किउ थिरु रहै सुहागु ॥ १ ॥ भाई रे अवरु नाही मै थाउ ॥ मै धनु नामु निधानु है गुरि दीआ बलि जाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमति पति साबासि तिसु तिस कै संगि मिलाउ ॥ तिसु बिनु घड़ी न जीवऊ बिनु नावै मरि जाउ ॥ मै अंधुले नामु न वीसरै टेक टिकी घरि जाउ ॥ २ ॥ गुरू जिना का अंधुला चेले नाही ठाउ ॥ बिनु सतिगुर नाउ न पाईऐ बिनु नावै किआ सुआउ ॥ आइ गइआ पछुतावणा जिउ सुंञै घरि काउ ॥ ३ ॥ बिनु नावै दुखु देहुरी जिउ कलर की भीति ॥ तब लगु महलु न पाईऐ जब लगु साचु न चीति ॥ सबदि रपै घरु पाईऐ निरबाणी पदु नीति ॥ ४ ॥ हउ गुर पूछउ आपणे गुर पुछि कार कमाउ ॥ सबदि सलाही मनि वसै हउमै दुखु जलि जाउ ॥ सहजे होइ मिलावड़ा साचे साचि मिलाउ ॥ ५ ॥ सबदि रते से निरमले तजि काम क्रोधु अहंकारु ॥ नामु सलाहनि सद सदा हरि राखहि उर धारि ॥ सो किउ मनहु विसारीऐ सभ जीआ का आधारु ॥ ६ ॥ सबदि मरै सो मरि रहै फिरि मरै न दूजी वार ॥ सबदै ही ते पाईऐ हरि नामे लगै पिआरु ॥ बिनु सबदै जगु भूला फिरै मरि जनमै वारो वार ॥ ७ ॥ सभ सालाहै आप कउ वडहु वडेरी होइ ॥ गुर बिनु आपु न चीनीऐ कहे सुणे किआ होइ ॥ नानक सबदि पछाणीऐ हउमै करै न कोइ ॥ ८ ॥ ८ ॥

हे मेरे भूले बावले मन! मेरी बात ध्यानपूर्वक सुन। तू गुरु के चरणों में जाकर लग। तू ईश्वर का नाम जप और भगवान का ध्यान किया कर, नाम से यमदूत भी भयभीत होता है और समस्त दुख निवृत्त हो जाते हैं। अभाग्यशाली नारी बहुत कष्ट झेलती है, उसका सुहाग कैसे स्थिर रह सकता है॥ १॥ हे भाई! गुरु के बिना मेरा अन्य कोई भी स्थान नहीं। गुरु ने कृपा करके मुझे हरि—नाम की दौलत का खजाना प्रदान किया है, मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ॥१॥ रहाउ॥ गुरु के उपदेश द्वारा बड़ा यश प्राप्त होता है। ईश्वर करे मेरा उनके साथ मेल—मिलाप हो। उसके बिना मैं क्षण—मात्र भी जीवित नहीं रह सकता। उसके नाम के बिना मैं प्राण त्याग देता हूँ। मुझ नेत्रहीन (ज्ञानहीन) को उस पारब्रह्म—प्रभु का नाम कदापि विस्मृत न हो। उसकी शरण में रह कर मैं अपने धाम (परलोक) में पहुँच जाऊँगा॥२॥

जिनका गुरु नेत्रहीन (ज्ञानहीन) है, उन शिष्यों को कहीं भी स्थान नहीं मिलता। सतिगुरु के बिना परमेश्वर का नाम प्राप्त नहीं होता। नाम के बिना मनुष्य जीवन का क्या मनोरथ है? उजाड़ गृह में कौए की भाँति चक्कर लगाने की तरह मनुष्य अपने आवागमन पर दुःख व्यक्त करता है॥३॥ नाम के बिना मानव देहि ऐसे संताप झेलती है जैसे शोरा लगी ईंटों की दीवार ध्वस्त होती है। जब तक सत्य नाम प्राणी के मन में प्रवेश नहीं करता, तब तक सत्य (प्रभु) की संगति इसे प्राप्त नहीं होती। नाम के साथ रंग जाने से अपने गृह में ही प्राणी को सदैव स्थिर मोक्ष—पद मिल जाता है॥४॥ मैं अपने गुरु से जाकर पूछूंगी और उससे पूछकर आचरण करूँगी। मैं नाम द्वारा भगवान की महिमा करूँगी चूंकि जो वह मेरे मन में आकर बस जाए और मेरे अहंकार का दुख जल जाए। सहज ही मेरा भगवान से मिलन हो जाए और मैं सत्य प्रभु में सदैव के लिए मिली रहूँ॥ ५॥ वही पवित्र पावन हैं जो काम, क्रोध एवं अहंकार को त्याग कर नाम में मग्न रहते हैं। वह सदैव ही नाम की महिमा करते हैं और भगवान को अपने हृदय में बसाते हैं। अपने चित्त के अंदर हम उसको क्यों भुलाएँ, जो समस्त प्राणियों का आधार है?॥ ६॥ जो व्यक्ति शब्द द्वारा अपने अहंकार को मार लेता है। वे मृत्यु के बंधन से मुक्त हो जाता है और पुनः दूसरी बार नहीं मरता। गुर—उपदेश से ही ईश्वर के नाम हेतु प्रीति उत्पन्न हो जाती है और परमात्मा मिल जाता है। ईश्वर के नाम बिना जगत् यथार्थ से अनजान होकर भटकता फिरता और पुनः पुनः आवागमन में पड़ता है॥७॥ हरेक अपने आप की प्रशंसा करता है और अपने आप को महान् बताना चाहता है। गुरु के बिना आत्म—पहचान नहीं हो सकती। केवल कहने—सुनने से क्या हो सकता है? हे नानक! यदि मनुष्य प्रभु के सुमिरन द्वारा आत्म—स्वरूप की पहचान कर ले तो वह अपने आप पर अहंकार नहीं करता॥८॥ ८॥

सिरीरागु महला १ ॥ बिनु पिर धन सीगारीऐ जोबनु बादि खुआरु ॥ ना माणे सुखि सेजड़ी बिनु पिर बादि सीगारु ॥ दूखु घणो दोहागणी ना घरि सेज भतारु ॥ १ ॥ मन रे राम जपहु सुखु होइ ॥ बिनु गुर प्रेमु न पाईऐ सबदि मिलै रंगु होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर सेवा सुखु पाईऐ हरि वरु सहजि सीगारु ॥ सचि माणे पिर सेजड़ी गूड़ा हेतु पिआरु ॥ गुरमुखि जाणि सिञाणीऐ गुरि मेली गुण चारु ॥ २ ॥ सचि मिलहु वर कामणी पिरि मोही रंगु लाइ ॥ मनु तनु साचि विगसिआ कीमति कहणु न जाइ ॥ हरि वरु घरि सोहागणी निरमल साचै नाइ ॥ ३ ॥ मन महि मनूआ जे मरै ता पिरु रावै नारि ॥ इकतु तागै रलि मिलै गलि मोतीअन का हारु ॥ संत सभा सुखु ऊपजै गुरमुखि नाम अधारु ॥ ४ ॥ खिन महि उपजै खिनि खपै खिनु आवै खिनु जाइ ॥ सबदु पछाणै रवि रहै ना तिसु कालु संताइ ॥ साहिबु अतुलु न तोलीऐ कथनि न पाइआ जाइ ॥ ५ ॥ वापारी वणजारिआ आए वजहु लिखाइ ॥ कार कमावहि सच की लाहा मिलै रजाइ ॥ पूंजी साची गुरु मिलै ना तिसु तिलु न तमाइ ॥ ६ ॥ गुरमुखि तोलि तुोलाइसी सचु तराजी तोलु ॥ आसा मनसा मोहणी गुरि ठाकी सचु बोलु ॥ आपि तुलाए तोलसी पूरे पूरा तोलु ॥ ७ ॥ कथनै कहणि न छुटीऐ ना पड़ि पुसतक भार ॥ काइआ सोच न पाईऐ बिनु हरि भगति पिआर ॥ नानक नामु न वीसरै मेले गुरु करतार ॥ ८ ॥ ६ ॥

प्राणपति परमेश्वर के बिना भार्या का हार—श्रृंगार एवं सुन्दर यौवन व्यर्थ एवं विनष्ट है। वह अपने प्राणपति की सेज का आनंद नहीं भोगती। पति की अनुपस्थिति पर उसका समस्त हार—श्रृंगार व्यर्थ है। भाग्यहीन पत्नी को अत्यंत कष्ट होता है। उसका पति उसकी गृह की सेज पर विश्राम नहीं करता॥१॥ हे मेरे मन! राम नाम जप, तभी सुख मिलेगा। गुरु के बिना भगवान से प्रेम नहीं होता। यदि नाम मिल जाए तभी प्यार का रंग चढ़ता है॥१॥ रहाउ॥ गुरु की सेवा से बड़ा सुख मिलता है और ज्ञान का

हार—श्रृंगार करने से पत्नी ईश्वर को अपने पति के तौर पर पा लेती है। प्रभु के प्रगाढ़ प्रेम द्वारा पत्नी निश्चित ही अपने प्रीतम की सेज पर आनंद पाती है। गुरु की कृपा से पत्नी की अपने प्राणपति प्रभु से पहचान होती है। गुरु के मिलन से वह सुशील नेक आचरण वाली हो जाती है॥२॥ हे जीव—स्त्री ! सत्य के द्वारा तू अपने पति से मिलन कर। उससे प्रेम करके तुम अपने प्रियतम पर आकर्षित हो जाओगी। हे जीव—स्त्री ! तेरे पति ने तुझे अपने प्रेम पर आकर्षित किया है, इसलिए उसके प्रेम में लीन हो जा। सत्य परमेश्वर के साथ उसका तन—मन प्रफुल्लित हो जाएँगे और उसका मोल नहीं पाया जा सकता। जिस जीव—स्त्री के हृदय में उसका पति—परमेश्वर समाया है, वह उसके सत्य नाम के साथ पवित्र हुई है॥३॥ यदि वह अपने अहंकार को चित्त के भीतर ही कुचल दे तो प्राणपति प्रभु उसे भरपूर सुख सम्मान देता है। धागे पिरोए हुए मोतियों की माला जैसे गले से मिलकर सुन्दर बनावट होती है, वैसे ही पति—पत्नी एक—दूसरे से मिल जाते हैं। सत्संग के भीतर गुरु द्वारा नाम का आश्रय लेने से सुकून प्राप्त होता है॥ ४॥ मनुष्य का मन एक क्षण में यूं हो जाता है, जैसे मृत जीवित हो जाए। वह एक क्षण में मृत समान हो जाता है। यह एक क्षण में कहाँ से आ जाता है और एक क्षण में कहाँ चला जाता है। यदि यह नाम को पहचान ले और नाम—सिमरन में लगा रहे फिर इसे मृत्यु दुखी नहीं करती॥ ५॥ जीव वणजारे हैं। वह जगत् में नाम का व्यापार करने आते हैं। वह प्रभु के दरबार में अपना वेतन लिखवाकर लाते हैं। जो सत्य की कमाई करते हैं और ईश्वर की इच्छा को स्वीकार करते हैं। वह कर्मों का लाभ कमाते हैं। सत्य की पूँजी द्वारा वही गुरु प्राप्त करते हैं, जिनको तुल्य मात्र भी लोभ—लालच नहीं॥ ६॥ सत्य के तराजू पर सत्य के वजन से गुरमुख प्राणियों को गुरदेव स्वयं तोलते हैं तथा अन्यों को तुलाते हैं। गुरु ने, जिसका वचन सत्य है, आशा—तृष्णा जो सभी को बहका लेती है, उनकी रोकथाम (गुरु) करते हैं॥ परमेश्वर कर्मों अनुसार प्राणियों को स्वयं तराजू पर तोलता है, पूर्ण पुरुष का तोल—परिमाण पूर्ण है॥ ७॥ केवल कहने तथा बातचीत द्वारा किसी की मुक्ति नहीं होती और न ही ढेर सारे ग्रंथों के अध्ययन द्वारा। हरि की भक्ति और प्रीति के बिना तन की पवित्रता प्राप्त नहीं होती। हे नानक ! मुझे भगवान का नाम विस्मृत न हो और गुरु मुझे भगवान से मिला दे॥८॥६॥

सिरीरागु महला १ ॥ सतिगुरु पूरा जे मिलै पाईऐ रतनु बीचारु ॥ मनु दीजै गुर आपणे पाईऐ सरब पिआरु ॥ मुकति पदारथु पाईऐ अवगण मेटणहारु ॥ १ ॥ भाई रे गुर बिनु गिआनु न होइ ॥ पूछहु ब्रहमे नारदै बेद बिआसै कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गिआनु धिआनु धुनि जाणीऐ अकथु कहावै सोइ ॥ सफलिओ बिरखु हरीआवला छाव घणेरी होइ ॥ लाल जवेहर माणकी गुर भंडारै सोइ ॥ २ ॥ गुर भंडारै पाईऐ निरमल नाम पिआरु ॥ साचो वखरु संचीऐ पूरै करमि अपारु ॥ सुखदाता दुख मेटणो सतिगुरु असुर संघारु ॥ ३ ॥ भवजलु बिखमु डरावणो ना कंधी ना पारु ॥ ना बेड़ी ना तुलहड़ा ना तिसु वंझु मलारु ॥ सतिगुरु भै का बोहिथा नदरी पारि उतारु ॥ ४ ॥ इकु तिलु पिआरा विसरै दुखु लागै सुखु जाइ ॥ जिहवा जलउ जलावणी नामु न जपै रसाइ ॥ घटु बिनसै दुखु अगलो जमु पकड़ै पछुताइ ॥ ५ ॥ मेरी मेरी करि गए तनु धनु कलतु न साथि ॥ बिनु नावै धनु बादि है भूलो मारगि आथि॥ साचउ साहिबु सेवीऐ गुरमुखि अकथो काथि ॥ ६ ॥ आवै जाइ भवाईऐ पइऐ किरति कमाइ ॥ पूरबि लिखिआ किउ मेटीऐ लिखिआ लेखु रजाइ ॥ बिनु हरि नाम न छुटीऐ गुरमति मिलै मिलाइ ॥ ७ ॥ तिसु बिनु मेरा को नही जिस का जीउ परानु ॥ हउमै ममता जलि बलउ लोभु जलउ अभिमानु ॥ नानक सबदु वीचारीऐ पाईऐ गुणी निधानु ॥ ८ ॥ १० ॥

यदि प्राणी को पूर्ण सतिगुरु मिल जाए तो उसे ज्ञान रूपी रत्न प्राप्त हो जाता है। यदि अपना मन अपने गुरु को अर्पित कर दे तो उसे सबका प्रेम प्राप्त हो जाता है। उसे गुरु से मोक्ष–रूपी धन मिल जाता है जो समस्त अवगुणों का नाश करने वाला है॥१॥ हे भाई ! गुरु के बिना ज्ञान नहीं मिलता। चाहे कोई भी जाकर ब्रह्मा, नारद एवं वेदों के रचयिता व्यास से पूछ ले॥१॥ रहाउ॥ ज्ञान एवं ध्यान गुरु के शब्द द्वारा ही प्राप्त होते हैं और गुरु अपने सेवक से अकथनीय हरि का वर्णन करवा देते हैं। गुरु जी हरे भरे, फल प्रदान करने वाले एवं छायादार पेड़ के समान हैं। सर्वगुण मणियाँ, जवाहर एवं पन्ने ये गुरु जी के अमूल्य भण्डार में हैं॥ २॥ गुरु जी के कोष गुरुवाणी में से पवित्र–पावन नाम की प्रीति प्राप्त होती है। अनंत परमेश्वर की पूर्ण कृपा द्वारा हम सत्य नाम का सौदा संचित करते हैं। सुखों के दाता सतिगुरु सुख प्रदान करने वाले, कष्ट निवृत्त करने वाले एवं दुष्कर्मों के दैत्यों का संहार करने वाले हैं॥३॥ यह भवसागर बड़ा विषम एवं भयानक है, इसका कोई भी तट नहीं तथा न ही उसका कोई आर–पार किनारा है। इसकी न ही कोई नैया, न ही कोई लकड़ी है, न ही कोई चप्पू और न ही कोई खेवट है। केवल सतिगुरु ही भयानक सागर पर एक जहाज है, जिसकी कृपा–दृष्टि मनुष्यों को पार कर देती है अर्थात् इहलोक से परलोक तक पहुँचाती है॥ ४॥ यदि मैं एक क्षण भर के लिए भी प्रीतम प्रभु को विस्मृत कर दूँ तो मुझे कष्ट घेर लेते हैं तथा सुख चला जाता है। जो जिह्वा प्यार से ईश्वर के नाम का उच्चारण नहीं करती, उसे जल जाना चाहिए, क्योंकि नाम का उच्चारण न करने वाली जिह्वा जलाने योग्य ही है। जब देहि का घड़ा टूट जाता है, मनुष्य बहुत पीड़ा तथा कष्ट भोगता है और यमदूत जब शिकंजे में लेता है तो मनुष्य अफसोस प्रकट करता है॥५॥ मनुष्य "मुझे, मैं, मेरी" पुकारते हुए संसार से चले गए हैं और उनका तन, धन एवं नारियाँ उनके साथ नहीं गईं अर्थात् मृत्युकाल के समय कोई भी साथ नहीं देता। नामविहीन पदार्थ रसहीन है। धन इत्यादि के मोह में बहका हुआ प्राणी कुमार्ग लग जाता है। इसलिए गुरु के आश्रय में आकर परमेश्वर की भक्ति कर और अकथनीय परमात्मा का वर्णन कर॥६॥ प्राणी आवागमन के चक्कर में पड़कर जन्म लेता और मरता रहता है और योनियों में पड़ा रहता है। वह अपने पूर्व जन्म के कर्मों अनुसार काम करता है। विधाता की लिखी विधि को कैसे मिटाया जा सकता है, जबकि लिखी विधि परमेश्वर की इच्छानुसार लिखी गई हो? ईश्वर के नाम के बिना प्राणी की मुक्ति नहीं हो सकती। गुरु उपदेशानुसार ही वह परमात्मा के मिलाप में मिल जाता है॥७॥ मेरे प्राणों के स्वामी परमात्मा के अलावा मेरा कोई भी अपना नहीं, मेरी आत्मा व जीवन सब पर उसका अधिकार है। हे मेरे अहंकार एवं सांसारिक मोह ! तू जल कर राख हो जा, मेरे लोभ, ममता, अभिमान इत्यादि सब जल जाएँ जो मुझे ईश्वर से दूर करते हैं। हे नानक ! नाम की आराधना करने से गुणों के भण्डार (ईश्वर) की प्राप्ति हो जाती है॥॥८॥१०॥

सिरीरागु महला १ ॥ रे मन ऐसी हरि सिउ प्रीति करि जैसी जल कमलेहि ॥ लहरी नालि पछाड़ीऐ भी विगसै असनेहि ॥ जल महि जीअ उपाइ कै बिनु जल मरणु तिनेहि ॥ १ ॥ मन रे किउ छूटहि बिनु पिआर ॥ गुरमुखि अंतरि रवि रहिआ बखसे भगति भंडार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रे मन ऐसी हरि सिउ प्रीति करि जैसी मछुली नीर ॥ जिउ अधिकउ तिउ सुखु घणो मनि तनि सांति सरीर ॥ बिनु जल घड़ी न जीवई प्रभु जाणै अभ पीर ॥ २ ॥ रे मन ऐसी हरि सिउ प्रीति करि जैसी चात्रिक मेह ॥ सर भरि थल हरीआवले इक बूंद न पवई केह ॥ करमि मिलै सो पाईऐ किरतु पइआ सिरि देह ॥ ३ ॥ रे मन ऐसी हरि सिउ प्रीति करि जैसी जल दुध होइ ॥ आवटणु आपे खवै दुध कउ खपणि न देइ ॥ आपे मेलि विछुंनिआ सचि वडिआई देइ ॥ ४ ॥ रे मन ऐसी हरि सिउ प्रीति करि जैसी चकवी सूर ॥ खिनु पलु नीद न सोवई जाणै दूरि हजूरि ॥ मनमुखि सोझी ना पवै गुरमुखि सदा हजूरि ॥ ५ ॥ मनमुखि गणत

गणावणी करता करे सु होइ ॥ ता की कीमति ना पवै जे लोचै सभु कोइ ॥ गुरमति होइ त पाईऐ सचि मिलै सुखु होइ ॥ ६ ॥ सचा नेहु न तुटई जे सतिगुरु भेटै सोइ ॥ गिआन पदारथु पाईऐ त्रिभवण सोझी होइ ॥ निरमलु नामु न वीसरै जे गुण का गाहकु होइ ॥ ७ ॥ खेलि गए से पंखणूं जो चुगदे सर तलि ॥ घड़ी कि मुहति कि चलणा खेलणु अजु कि कलि ॥ जिसु तूं मेलहि सो मिलै जाइ सचा पिड़ु मलि ॥ ८ ॥ बिनु गुर प्रीति न ऊपजै हउमै मैलु न जाइ ॥ सोहं आपु पछाणीऐ सबदि भेदि पतीआइ ॥ गुरमुखि आपु पछाणीऐ अवर कि करे कराइ ॥ ६ ॥ मिलिआ का किआ मेलीऐ सबदि मिले पतीआइ ॥ मनमुखि सोझी ना पवै वीछुड़ि चोटा खाइ ॥ नानक दरु घरु एकु है अवरु न दूजी जाइ ॥ १० ॥ ११ ॥

हे मेरे मन! ईश्वर से ऐसी मुहब्बत कर, जैसी कमल की जल से है। इसको जल की लहरें टपका कर लगातार धकियाती हैं परन्तु फिर भी यह प्रेम के भीतर प्रफुल्लित रहता है। प्रभु जल के भीतर ऐसे प्राणी उत्पन्न करता है, जिनकी जल के बिना मृत्यु हो जाती है॥१॥ हे मेरे मन! प्रभु से प्रेम के बिना तेरी मुक्ति किस तरह होगी ? भगवान तो गुरु के हृदय में निवास करता है और वह जीवों को भक्ति के भण्डार प्रदान करता है अर्थात् गुरु की कृपा से ही भक्ति प्राप्त होती है॥१॥ रहाउ॥ हे मेरे मन! ईश्वर से ऐसी प्रेम–भक्ति कर जैसी मछली की जल से है। जितना अधिक जल बढ़ता है उतना अधिक सुख प्राप्त करती है। मछली आत्मा, तन व शरीर में सुख–शांति अनुभव करती है। जल के बिना वह एक क्षण मात्र भी जीवित नहीं रहती। स्वामी उसके हृदय की पीड़ा को जानता है॥ २॥ हे मेरे मन! ईश्वर से ऐसी प्रीति कर, जैसी चात्रिक की बारिश से प्रीति है। यदि वर्षा की बूँद इसके मुख में न पड़े, तो इसको लबालब भरे तालाबों एवं हरी–भरी धरती का क्या लाभ है? यदि परमेश्वर की कृपा–दृष्टि हो तो वह बारिश की बूँदों की बौछार करेगा, अन्यथा अपने पूर्व कर्मों अनुसार वह अपना शीश दे देता है॥३॥ हे मेरे मन! तू परमेश्वर के साथ ऐसी प्रीति कर जैसी जल की दूध के साथ है। जल स्वयं तपस बर्दाश्त करता है और दूध को जलने नहीं देता। ईश्वर स्वयं ही बिछुड़ों का मिलन करवाता है और स्वयं ही सत्य द्वारा प्रशंसा प्रदान करता है॥४॥ हे मेरे मन! प्रभु से ऐसी प्रीति कर जैसी चकवी की सूर्य के साथ है। कुमार्गी पुरुष को सूझ नहीं पड़ती। गुरमुख के लिए प्रभु सदैव निकट ही है॥५॥ स्वार्थी प्राणी लेखा–जोखा करते हैं, परन्तु जो कुछ सृजनहार की इच्छा हो, वही होता है। चाहे सभी जैसी इच्छा करें, उसका मोल नहीं पाया जा सकता। परन्तु, गुरु की शिक्षा अनुसार इसका बोध होता है। परमात्मा से मिलन द्वारा सुख प्राप्त होता है॥६॥ यदि प्राणी को सतिगुरु मिल जाएँ तो सच्ची प्रीति नहीं टूटती। जब मनुष्य को ज्ञान प्राप्त हो जाता है तो फिर उसे आकाश, पाताल, मृत्युलोक तीनों लोकों की सूझ हो जाती है। यदि प्राणी प्रभु के गुणों का ग्राहक बन जाए तो वह पवित्र नाम को कदापि विस्मृत नहीं करता॥७॥ जो जीव रूपी पक्षी संसार सागर के तट पर दाना चुगते थे, वह जीवन बाजी खेल कर चले गए हैं। प्रत्येक जीव ने एक घड़ी अथवा मुहूर्त उपरांत यहाँ से चले जाना है। उसकी खुशी का खेल आज अथवा कल के लिए है। हे प्रभु! तुझे वहीं मिलता है, जिसे तुम स्वयं मिलाते हो। वह यहाँ से सच्ची बाजी जीत कर जाता है॥८॥ इसलिए गुरु के बिना मनुष्य के मन में प्रभु के लिए प्रेम उत्पन्न नहीं होता और उसकी अहंकार की मलिनता दूर नहीं होती। जो ईश्वर की अपने हृदय में स्तुति करता है और उसके नाम के साथ बिंध गया है, उसकी तृप्ति हो जाती है। जब मनुष्य गुरु के ज्ञान द्वारा अपने स्वरुप को समझ लेता है, तब उसके लिए अन्य क्या करना या करवाना शेष रह जाता है ?॥६॥ उनको परमेश्वर से मिलाने बारे क्या कहना हुआ, जो आगे ही गुरु के शब्द द्वारा उसके मिलन में है। नाम प्राप्त करने से उनको संतोष हो गया है। मनमुख

प्राणियों को प्रभु का ज्ञान नहीं होता। ईश्वर से अलग होकर वे यमों की मार खाते हैं। हे नानक! प्रभु का दर एवं घर ही जीव का एकमात्र सहारा है। उसके लिए अन्य कोई टिकाना नहीं हैं॥१०॥११॥

सिरीरागु महला १ ॥ मनमुखि भुलै भुलाईऐ भूली ठउर न काइ ॥ गुर बिनु को न दिखावई अंधी आवै जाइ ॥ गिआन पदारथु खोइआ ठगिआ मुठा जाइ ॥ १ ॥ बाबा माइआ भरमि भुलाइ ॥ भरमि भुली डोहागणी ना पिर अंकि समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भूली फिरै दिसंतरी भूली ग्रिहु तजि जाइ ॥ भूली डूंगरि थलि चड़ै भरमै मनु डोलाइ ॥ धुरहु विछुंनी किउ मिलै गरबि मुठी बिललाइ ॥ २ ॥ विछुड़िआ गुरु मेलसी हरि रसि नाम पिआरि ॥ साचि सहजि सोभा घणी हरि गुण नाम अधारि ॥ जिउ भावै तिउ रखु तूं मै तुझ बिनु कवनु भतारु ॥ ३ ॥ अखर पड़ि पड़ि भुलीऐ भेखी बहुतु अभिमानु ॥ तीरथ नाता किआ करे मन महि मैलु गुमानु ॥ गुर बिनु किनि समझाईऐ मनु राजा सुलतानु ॥ ४ ॥ प्रेम पदारथु पाईऐ गुरमुखि ततु वीचारु ॥ सा धन आपु गवाइआ गुर कै सबदि सीगारु ॥ घर ही सो पिरु पाइआ गुर कै हेति अपारु ॥ ५ ॥ गुर की सेवा चाकरी मनु निरमलु सुखु होइ ॥ गुर का सबदु मनि वसिआ हउमै विचहु खोइ ॥ नामु पदारथु पाइआ लाभु सदा मनि होइ ॥ ६ ॥ करमि मिलै ता पाईऐ आपि न लइआ जाइ ॥ गुर की चरणी लगि रहु विचहु आपु गवाइ ॥ सचे सेती रतिआ सचो पलै पाइ ॥ ७ ॥ भुलण अंदरि सभु को अभुलु गुरू करतारु ॥ गुरमति मनु समझाइआ लागा तिसै पिआरु ॥ नानक साचु न वीसरै मेले सबदु अपारु ॥ ८ ॥ १२ ॥

मनमुख जीव–स्त्री भगवान को भूल जाती है। माया उसे मोह में फँसाकर भुला देती है। भूली हुई जीव–स्त्री को सहारा लेने हेतु कोई स्थान नहीं मिलता। गुरु के बिना कोई भी उसे प्रभु–मिलन का मार्ग नहीं दिखा सकता। वह ज्ञानहीन जन्मती–मरती रहती है। जिस ने ज्ञान–पदार्थ गंवा लिया है, वह लुट जाता है॥१॥ हे भाई! भ्रम में पड़कर भूली हुई दुहागिन प्रभु पति के आलिंगन में नहीं आ सकती॥१॥ रहाउ॥ वह भूली हुई अपना घर छोड़कर चली जाती है और देश–देशांतरों में भटकती रहती है। संदेह के कारण उसका चित्त डगमगाता फिरता है और वह अपना सद्‌मार्ग भूलकर ऊँचे मैदानों तथा पर्वतों पर आरोहण करती है। वह आदि से ही प्रभु के हुक्म से बिछुड़ी हुई है, वह प्रभु से कैसे मिल सकती है? अहंकारवश ठगी हुई वह दुखी होकर विलाप करती है॥२॥ गुरु जी बिछुड़ी आत्माओं का प्रभु के साथ मिलन करवा देते हैं। ऐसे व्यक्ति प्रेम से नाम जप कर हरि रस का आनंद प्राप्त करते हैं। सत्य ईश्वर के यशोगान से उन्हें सहज अवस्था की उपलब्धि होती है और मनुष्य बहुत शोभा प्राप्त करता है। वे हरि नाम के सहारे रहते हैं। हे प्रभु! जिस तरह तुझे अच्छा लगता है, वैसे ही तुम मुझे रखो चूंकि तेरे अलावा मेरा अन्य कोई नहीं॥३॥ निरंतर ग्रंथों के अध्ययन करके मनुष्य भूल में पड़ जाते हैं और धार्मिक वेष धारण करके वे बहुत अभिमान करते हैं। तीर्थ स्थल पर स्नान करने का क्या लाभ है, जबकि उसके चित्त में अहंकार की मैल है? मन शरीर रूपी नगरी का राजा है, सुलतान है। इसे गुरु बिना अन्य कौन समझा सकता है॥४॥ गुरु द्वारा वास्तविकता को सोचने–समझने से प्रभु–प्रेम का धन प्राप्त होता है। अपने आपको गुरु के शब्द द्वारा श्रृंगार कर, पत्नी ने अपना अहंकार निवृत्त कर दिया है। गुरु के अपार प्रेम द्वारा वह अपने गृह के भीतर ही उस प्रीतम को प्राप्त कर लेती है॥ ५॥ गुरु की चाकरी और सेवा करने से मन निर्मल हो जाता है और उसे सुख की उपलब्धि होती है। जब गुरु का शब्द अंतःकरण में निवास कर लेता है तो अभिमान भीतर से निवृत्त हो जाता है। इससे नाम रूपी दौलत प्राप्त हो जाती है और आत्मा सदैव लाभ अर्जित करती है॥ ६॥ यदि हम पर परमात्मा की अनुकंपा हो तो हमें नाम प्राप्त होता है। हम अपने साधन से इसे

प्राप्त नहीं कर सकते। इसलिए अहंकार का नाश करके गुरु के आश्रय में आओ। सत्यनाम के साथ रंग जाने से सच्चा साहिब परमात्मा प्राप्त हो जाता है॥ ७॥ सारे प्राणी भूल करने वाले हैं परन्तु गुरु और सृष्टिकर्त्ता परमात्मा ही अचूक है। जिसने गुरु के उपदेश द्वारा अपने मन को सुधारा है, उसका ईश्वर से स्नेह हो जाता है। हे नानक! जिसे अपार प्रभु अपने नाम के साथ मिला लेता है। वह सत्यनाम को कदापि विस्मृत नहीं करता॥ ८॥ १२॥

सिरीरागु महला १ ॥ त्रिसना माइआ मोहणी सुत बंधप घर नारि ॥ धनि जोबनि जगु ठगिआ लबि लोभि अहंकारि ॥ मोह ठगउली हउ मुई सा वरतै संसारि ॥ १ ॥ मेरे प्रीतमा मै तुझ बिनु अवरु न कोइ ॥ मै तुझ बिनु अवरु न भावई तूं भावहि सुखु होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु सालाही रंग सिउ गुर कै सबदि संतोखु ॥ जो दीसै सो चलसी कूड़ा मोहु न वेखु ॥ वाट वटाऊ आइआ नित चलदा साथु देखु ॥ २ ॥ आखणि आखहि केतड़े गुर बिनु बूझ न होइ ॥ नामु वडाई जे मिलै सचि रपै पति होइ ॥ जो तुधु भावहि से भले खोटा खरा न कोइ ॥ ३ ॥ गुर सरणाई छुटीऐ मनमुख खोटी रासि ॥ असट धातु पातिसाह की घड़ीऐ सबदि विगासि ॥ आपे परखे पारखू पवै खजानै रासि ॥ ४ ॥ तेरी कीमति ना पवै सभ डिठी ठोकि वजाइ ॥ कहणै हाथ न लभई सचि टिकै पति पाइ ॥ गुरमति तूं सालाहणा होरु कीमति कहणु न जाइ ॥ ५ ॥ जितु तनि नामु न भावई तितु तनि हउमै वादु ॥ गुर बिनु गिआनु न पाईऐ बिखिआ दूजा सादु ॥ बिनु गुण कामि न आवई माइआ फीका सादु ॥ ६ ॥ आसा अंदरि जंमिआ आसा रस कस खाइ ॥ आसा बंधि चलाईऐ मुहे मुहि चोटा खाइ ॥ अवगणि बधा मारीऐ छूटै गुरमति नाइ ॥ ७ ॥ सरबे थाई एकु तूं जिउ भावै तिउ राखु ॥ गुरमति साचा मनि वसै नामु भलो पति साखु ॥ हउमै रोगु गवाईऐ सबदि सचै सचु भाखु ॥ ८ ॥ आकासी पातालि तूं त्रिभवणि रहिआ समाइ ॥ आपे भगती भाउ तूं आपे मिलहि मिलाइ ॥ नानक नामु न वीसरै जिउ भावै तिवै रजाइ ॥ ९ ॥ १३ ॥

मोहिनी माया की तृष्णा पुत्रों, रिश्तेदारों एवं घर की स्त्री सब को लगी हुई है। इस जगत् को धन, यौवन, लालच, लोभ और अहंकार ने छल लिया है। मोह रूपी ठग बूटी के हाथों मैं लुट गई हूँ। ऐसा हाल ही बाकी दुनिया का (इसके द्वारा) होता है॥१॥ हे मेरे प्रियतम प्रभु! तुझ बिन मेरा अन्य कोई नहीं। तुझ बिन, अन्य कुछ भी मुझे नहीं लुभाता। तुझे प्रेम करने से मुझे सुख--शांति प्राप्त होती है॥१॥ रहाउ॥ गुरु के शब्द द्वारा संतोष धारण करो और प्रेमपूर्वक परमात्मा के नाम की सराहना करो। समस्त दृश्यमान संसार नश्वर है, इसके झूठे मोह के साथ प्रीति न लगा। तुम मार्ग के पथिक की भाँति आए हो अर्थात् सारा जगत् यात्री है। प्रतिदिन अपने साथियों को हम चलता देखते हैं॥२॥ कई पुरुष धर्मोपदेश का प्रचार करते हैं, परन्तु गुरु के बिना ज्ञान प्राप्त नहीं होता। यदि व्यक्ति को नाम की प्रशंसा प्राप्त हो जाए तो वह सत्य के साथ रंग जाता है और मान--सम्मान पा लेता है। हे प्रभु! जो तुझे अच्छे लगते हैं, वह सर्वोत्तम हैं। अपने आप कोई भी खोटा अथवा खरा नहीं॥ ३॥ गुरु की शरण लेने से मनुष्य मोक्ष प्राप्त करता है। मनमुख की पूँजी ही असत्य है। बादशाह की अपनी आठ धातुओं पर अधिकार होता है। उसकी इच्छानुसार ही सिक्के ढाले जाते हैं और मूल्य पाया जाता है। परीक्षक स्वयं ही सिक्कों की परीक्षा कर लेता है और विशुद्ध को अपने कोष में डाल लेता है॥४॥ हे प्रभु! तेरा मूल्य नहीं पाया जा सकता। मैंने सब कुछ मूल्यांकन करके देख लिया है। कहने से उसकी गहराई नहीं पाई जा सकती। यदि मनुष्य सत्य के अंदर टिक जाए, वह सम्मान पा लेता है। गुरु के उपदेश द्वारा हे प्रभु! मैं तेरी कीर्ति करता हूँ। कोई अन्य तरीका तेरी कद्र बयान करने का

नहीं।। ५।। जिस तन को नाम अच्छा नहीं लगता, वह तन अहंकार वाद–विवाद का सताया हुआ है। गुरु के बिना ज्ञान प्राप्त नहीं होता, अन्य रस पूरी तरह विषैले हैं। गुणों के बिना कुछ भी काम नहीं आना। धन–दौलत का स्वाद बहुत फीका है।।६।। आशा में ही मनुष्य उत्पन्न हुआ है और आशा के अंदर ही वह मीठे तथा खट्टे पदार्थ सेवन करता है। तृष्णा में बंधा हुआ वह आगे को धकेला जाता है और अपने मुख पर पुनःपुनः चोटें खाता है। अवगुणों का फँसा हुआ वह अपने कर्मों की मार खाता है। लेकिन गुरु की शिक्षा अनुसार नाम–सिमरन करने से उसकी मुक्ति हो जाती है।।७।। हे जगत् के पालनहार ! तुम सर्वव्यापक हो, संसार के कण–कण में तुम विद्यमान हो। जिस तरह तुझे लुभाता है उसी तरह मेरी रक्षा करो। गुरु–उपदेशानुसार सत्यनाम मनुष्य के ह्रदय में वास करता है। नाम की संगति में उसकी बहुत इज्जत होती है। अहंकार के रोग को दूर करके वह परमात्मा के सत्यनाम की आराधना करता है।।८।। हे प्रभु ! तुम आकाश, पाताल तीनों लोकों में समाए हुए हो। तुम ही जीवों को भक्ति में लगाते हो और स्वयं ही तुम अपने मिलाप में मिलाते हो। हे नानक ! मैं प्रभु के नाम को कदाचित विस्मृत न करूँ। हे जगत् के पालनहार ! जैसे तुझे अच्छा लगता है, वैसे ही तेरी इच्छा काम करती है, अपनी इच्छानुसार ही मेरी पालना करो।।६।।१३।।

सिरीरागु महला १ ॥ राम नामि मनु बेधिआ अवरु कि करी वीचारु ॥ सबद सुरति सुखु ऊपजै प्रभ रातउ सुख सारु ॥ जिउ भावै तिउ राखु तूं मै हरि नामु अधारु ॥ १ ॥ मन रे साची खसम रजाइ ॥ जिनि तनु मनु साजि सीगारिआ तिसु सेती लिव लाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तनु बैसंतरि होमीऐ इक रती तोलि कटाइ ॥ तनु मनु समधा जे करी अनदिनु अगनि जलाइ ॥ हरि नामै तुलि न पुजई जे लख कोटी करम कमाइ ॥ २ ॥ अरध सरीरु कटाईऐ सिरि करवतु धराइ ॥ तनु हैमंचलि गालीऐ भी मन ते रोगु न जाइ ॥ हरि नामै तुलि न पुजई सभ डिठी ठोकि वजाइ ॥ ३ ॥ कंचन के कोट दतु करी बहु हैवर गैवर दानु ॥ भूमि दानु गऊआ घणी भी अंतरि गरबु गुमानु ॥ राम नामि मनु बेधिआ गुरि दीआ सचु दानु ॥ ४ ॥ मनहठ बुधी केतीआ केते बेद बीचार ॥ केते बंधन जीअ के गुरमुखि मोख दुआर ॥ सचहु ओरै सभु को उपरि सचु आचारु ॥ ५ ॥ सभु को ऊचा आखीऐ नीचु न दीसै कोइ ॥ इकनै भांडे साजिऐ इकु चानणु तिहु लोइ ॥ करमि मिलै सचु पाईऐ धुरि बखस न मेटै कोइ ॥ ६ ॥ साधु मिलै साधू जनै संतोखु वसै गुर भाइ ॥ अकथ कथा वीचारीऐ जे सतिगुर माहि समाइ ॥ पी अंम्रितु संतोखिआ दरगहि पैधा जाइ ॥ ७ ॥ घटि घटि वाजै किंगुरी अनदिनु सबदि सुभाइ ॥ विरले कउ सोझी पई गुरमुखि मनु समझाइ ॥ नानक नामु न वीसरै छूटै सबदु कमाइ ॥ ८ ॥ १४ ॥

राम नाम से मेरा मन बिंध गया है। इसलिए किसी अन्य के विचार की कोई आवश्यकता नहीं रह गई ? नाम में सुरति लगाने से मन में आनंद उत्पन्न होता है। अब मैं प्रभु के प्रेम में रंग गया हूँ, यही सुख का आधार है। हे ईश्वर ! जैसे तुझे अच्छा लगता है, वैसे ही मुझे रखो, तेरा हरि–नाम मेरा आधार है।।१।। हे मेरे मन ! पति–परमेश्वर की इच्छा ही बिल्कुल सत्य है, तुम उसी के प्रेम में लीन रहो, जिसने तेरे तन एवं मन की रचना करके संवारे हैं।।१।। रहाउ।। यदि मैं अपने तन को रत्ती–रत्ती के टुकड़ों में काटकर अग्नि में जला दूँ, यदि मैं अपने तन तथा मन को ईंधन बना लूँ और दिन–रात इनको अग्नि में प्रज्वलित करूँ और यदि मैं लाखों–करोड़ों धार्मिक यज्ञ करूँ तो भी ये सारे कर्म हरि–नाम के तुल्य नहीं पहुँचते।।२।। यदि मेरे सिर पर आरा रख कर मेरी देहि को दो आधे–आधे टुकड़ों में कटवा दिया जाए अथवा हिमालय की बर्फ में जाकर गाल दिया जाए तो भी मन के रोग निवृत्त नहीं होते। ये ईश्वर के नाम के तुल्य नहीं पहुँचते। यह सब कुछ मैंने जांच–परखकर निर्णय करके देख लिया है।।३।। यदि मैं सोने के किले दान करूँ और बहुत सारे बढ़िया नस्ल के हाथी–घोड़े

दान करूँ और यदि भूमिदान तथा बहुसंख्यक गाएँ भी दान करूँ, तो भी मेरे मन के भीतर अहंकार एवं घमंड विद्यमान रहेगा। राम नाम ने मेरा मन बिंध लिया है और गुरु की कृपा–दृष्टि ने मुझे सच्चा दान प्रदान किया है, इस राम नाम में ही मेरा मन लीन हो गया है।।४।। मनुष्य अपने मन के हठ से कितने ही कर्म अपनी बुद्धि अनुसार करता है और वेदों में बताए हुए अन्य कितने ही कर्मकांड करता है उसकी आत्मा को कितने ही बंधन पड़े हुए हैं। मोक्ष द्वार गुरु द्वारा ही मिलता है। सभी धर्म–कर्म प्रभु के नाम से न्यून हैं। सत्य आचरण सर्वश्रेष्ठ है।। ५।। सभी जीवों को ऊँचा समझना चाहिए और जीवों को अपने से नीचा मत समझो। क्योंकि यह सभी शरीर रूपी बर्तन एक प्रभु की रचना हैं। तीनों लोकों के जीवों में एक ही प्रभु की ज्योति प्रज्वलित हो रही है। प्रभु का सत्य नाम उसकी कृपा से ही मिलता है। आदि से लिखी हुई प्रभु की मेहर को कोई मिटा नहीं सकता।।६।। जब कोई साधु दूसरे साधु से मिलता है तो गुरु की प्रीति द्वारा वह संतोष प्राप्त कर लेता है। यदि मनुष्य सतिगुरु में लीन हो जाए तो वह अकथनीय स्वामी की वार्ता को सोचने समझने लग जाता है। सुधा रस अमृत पान से वह तृप्त हो जाता है और मान–प्रतिष्ठा का वेष धारण करके प्रभु के दरबार को जाता है।।७।। रात–दिन उन सबके हृदय में अनहद शब्द रूपी वीणा बज रही है, जो ईश्वर के नाम से प्रेम करते हैं। कोई विरला प्राणी ही है जो गुरु की अनुकंपा से अपनी आत्मा को सद्‌मार्ग में लगाकर ज्ञान प्राप्त करता है। हे नानक! मुझे भगवान का नाम कभी भी विस्मृत न हो। मनुष्य जन्म–मरण के चक्र में से नाम की साधना करके ही मुक्त हो सकता है।।८।।१४।।

सिरीरागु महला १ ॥ चिते दिसहि धउलहर बगे बंक दुआर ॥ करि मन खुसी उसारिआ दूजै हेति पिआरि ॥ अंदरु खाली प्रेम बिनु ढहि ढेरी तनु छारु ॥ १ ॥ भाई रे तनु धनु साथि न होइ ॥ राम नामु धनु निरमलो गुरु दाति करे प्रभु सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राम नामु धनु निरमलो जे देवै देवणहारु ॥ आगै पूछ न होवई जिसु बेली गुरु करतारु ॥ आपि छडाए छुटीऐ आपे बखसणहारु ॥ २ ॥ मनमुखु जाणै आपणे धीआ पूत संजोगु ॥ नारी देखि विगासीअहि नाले हरखु सु सोगु ॥ गुरमुखि सबदि रंगावले अहिनिसि हरि रसु भोगु ॥ ३ ॥ चितु चलै वितु जावणो साकत डोलि डोलाइ ॥ बाहरि ढूंढि विगुचीऐ घर महि वसतु सुथाइ ॥ मनमुखि हउमै करि मुसी गुरमुखि पलै पाइ ॥ ४ ॥ साकत निरगुणिआरिआ आपणा मूलु पछाणु ॥ रकतु बिंदु का इहु तनो अगनी पासि पिराणु ॥ पवणै कै वसि देहुरी मसतकि सचु नीसाणु ॥ ५ ॥ बहुता जीवणु मंगीऐ मुआ न लोड़ै कोइ ॥ सुख जीवणु तिसु आखीऐ जिसु गुरमुखि वसिआ सोइ ॥ नाम विहूणे किआ गणी जिसु हरि गुर दरसु न होइ ॥ ६ ॥ जिउ सुपनै निसि भुलीऐ जब लगि निद्रा होइ ॥ इउ सरपनि कै वसि जीअड़ा अंतरि हउमै दोइ ॥ गुरमति होइ वीचारीऐ सुपना इहु जगु लोइ ॥ ७ ॥ अगनि मरै जलु पाईऐ जिउ बारिक दूधै माइ ॥ बिनु जल कमल सु ना थीऐ बिनु जल मीनु मराइ ॥ नानक गुरमुखि हरि रसि मिलै जीवा हरि गुण गाइ ॥ ८ ॥ १५ ॥

मनुष्य को अपने चित्रित किए महल दिखाई देते हैं जिनके सफेद एवं सुन्दर द्वार हैं। उसने उन्हें मन में बड़े चाव से माया के प्रेम में बनाया है परन्तु उसका हृदय भगवान के प्रेम के बिना खाली है। उसके ये सुन्दर महल ध्वस्त हो जाएँगे और उसका शरीर भी राख का ढेर हो जाएगा।।१।। हे भाई! मृत्यु के समय तन और धन तेरे साथ नहीं जाएँगे। राम का नाम ही निर्मल धन है। भगवान का रूप गुरु ही नाम का दान जीव को देते हैं।।१।। रहाउ।। राम नाम रूपी निर्मल धन मनुष्य को तभी मिलता है, यदि देने वाला गुरु स्वयं ही प्रदान करें। सृष्टिकर्ता रुप गुरु जिसका मित्र बन जाए, उसकी आगे परलोक में पूछताछ नहीं होती। यदि ईश्वर मनुष्य को स्वयं मुक्त करे, तो वह मुक्ति प्राप्त कर लेता है, क्योंकि वह

स्वयं ही क्षमाशील है।। २।। कुमार्गी पुरुष पुत्र–पुत्रियों एवं सगे–संबंधियों को अपना मान बैठता है। वह अपनी गृहलक्ष्मी पत्नी को देख कर बड़ा प्रसन्न होता है। उसे हर्ष–शोक दोनों का सामना करना पड़ता है। पर गुरमुख गुरु–शब्दों द्वारा हरि–नाम में लिवलीन हैं और वह दिन–रात प्रभु के अमृत का आनंद लेते हैं।। ३।। शाक्त व्यक्ति का मन क्षण–भंगुर धन–दौलत की तलाश में भटकता रहता है। जबकि पदार्थ उनके गृह के पवित्र स्थान में है, मनुष्य उसकी बाहर तलाश करने से बर्बाद हो जाते हैं। गुरमुख इसको अपने दामन में प्राप्त कर लेते हैं, जबकि कुमार्गी अहंकार द्वारा इसको गंवा लेते हैं।।४।। हे गुणहीन शाक्त! तू अपने मूल की पहचान कर। यह शरीर रक्त और वीर्य का बना है। इसका अन्त अग्नि में जलकर राख हो जाने में है। यह शरीर प्राण रूप वायु के वश में है। तेरे माथे पर सच्चा निशान पड़ा हुआ है कि तूने कितने समय तक जीना है।।५।। प्रत्येक प्राणी लम्बी आयु की कामना करता है और कोई भी मरना नहीं चाहता। उसी का जीवन सुखदायक कहा जा सकता है, जिस सज्जन पुरुष के भीतर गुरु–कृपा से प्रभु वास करता है, नाम–विहीन प्राणी का क्या महत्त्व है जिसको भगवान का रूप गुरु के दर्शन नहीं होते।।६।। जिस तरह मनुष्य स्वप्न में रात्रिकाल निद्रा–मग्न रहता है, भूला फिरता है, इसी तरह वह प्राणी मुश्किलों में भटकता है, जिसके हृदय में अहंकार तथा द्वैत–भावना है और जो माया रूपी सर्पिणी के वश में है। गुरु के उपदेशानुसार ही प्राणी अनुभव करता एवं देखता है कि यह संसार केवल स्वप्न मात्र ही है।। ७।। जिस तरह जल से अग्नि बुझ जाती है, जिस तरह माता के दुग्ध से शिशु संतुष्ट हो जाता है। जिस तरह जल के बिना कमल नहीं रहता और जिस तरह जल के बिना मछली मर जाती है, इसी तरह ही हे नानक! यदि मुझे गुरु द्वारा हरि रस मिल जाए तो ही मैं भगवान की महिमा गाकर जीवित रह सकता हूँ।।८।।१५।।

सिरीरागु महला १ ॥ डूंगरु देखि डरावणो पेईअड़ै डरीआसु ॥ ऊचउ परबतु गाखड़ो ना पउड़ी तितु तासु ॥ गुरमुखि अंतरि जाणिआ गुरि मेली तरीआसु ॥ १ ॥ भाई रे भवजलु बिखमु डरांउ ॥ पूरा सतिगुरु रसि मिलै गुरु तारे हरि नाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चला चला जे करी जाणा चलणहारु ॥ जो आइआ सो चलसी अमरु सु गुरु करतारु ॥ भी सचा सालाहणा सचै थानि पिआरु ॥ २ ॥ दर घर महला सोहणे पके कोट हजार ॥ हसती घोड़े पाखरे लसकर लख अपार ॥ किस ही नालि न चलिआ खपि खपि मुए असार ॥ ३ ॥ सुइना रुपा संचीऐ मालु जालु जंजालु ॥ सभ जग महि दोही फेरीऐ बिनु नावै सिरि कालु ॥ पिंडु पड़ै जीउ खेलसी बदफैली किआ हालु ॥ ४ ॥ पुता देखि विगसीऐ नारी सेज भतार ॥ चोआ चंदनु लाईऐ कापड़ु रूपु सीगारु ॥ खेहू खेह रलाईऐ छोडि चलै घर बारु ॥ ५ ॥ महर मलूक कहाईऐ राजा राउ कि खानु ॥ चउधरी राउ सदाईऐ जलि बलीऐ अभिमान ॥ मनमुखि नामु विसारिआ जिउ डवि दधा कानु ॥ ६ ॥ हउमै करि करि जाइसी जो आइआ जग माहि ॥ सभु जगु काजल कोठड़ी तनु मनु देह सुआहि ॥ गुरि राखे से निरमले सबदि निवारी भाहि ॥ ७ ॥ नानक तरीऐ सचि नामि सिरि साहा पातिसाहु ॥ मै हरि नामु न वीसरै हरि नामु रतनु वेसाहु ॥ मनमुख भउजलि पचि मुए गुरमुखि तरे अथाहु ॥ ८ ॥ १६ ॥

मैं अपने पीहर (इहलोक) में भयानक पर्वत देखकर सहम गई हूँ। पर्वत ऊँचा और चढ़ाई कठिन है। वहाँ तक पहुँचने के लिए कोई भी सीढ़ी नहीं। गुरु की कृपा से मैंने पर्वत को भीतर ही पहचान लिया है। गुरु ने मुझे उससे मिला दिया है और मैं (भवसागर) से पार हो गई हूँ।।१।। हे भाई! भवसागर बड़ा विषम एवं भयभीत करने वाला है। यदि हरि रस का पान कराने वाला पूर्ण सतिगुरु मिल जाए तो गुरु उसे भगवान का नाम प्रदान करके भवसागर से पार करवा देते हैं।।१।। रहाउ।। यदि मैं कहूँ, "मैंने चले

जाना है'' इसका मुझे कोई लाभ नहीं होना। परन्तु यदि मैं वास्तव तौर पर अनुभव कर लूँ मैं कूच कर जाने वाला हूँ, तभी होगा। जो कोई भी दुनिया में आया है, वह एक न एक दिन चला जाएगा केवल करतार रूप गुरु ही अमर है। इसलिए सच्चे स्थान सत्संगत में मिलकर श्रद्धा से सत्य परमात्मा की महिमा-स्तुति करनी चाहिए॥२॥ जिनके पास सुन्दर दरवाजे, मकान, मन्दिर एवं हजारों ही मजबूत किले, हाथी-घोड़े पालकियाँ एवं लाखों ही सेना हो, इन में कुछ भी किसी के साथ नहीं जाते। मूर्ख लोग व्यर्थ ही इनके लिए जूझ-जूझकर मरते हैं॥ ३॥ मनुष्य सोना तथा चांदी कितना भी एकत्रित कर ले, परन्तु दौलत मनुष्य को फँसाने वाला जाल है। वह अपनी सल्तनत का ढिंढोरा सारे जगत् में करवा दें परन्तु हरि-नाम के बिना मृत्यु उसके सिर पर सवार है। जब मनुष्य प्राण त्याग देता है तो शरीर पार्थिव हो जाता है और जीवन का अंत हो जाता है। तब दुष्टों का क्या हश्र होगा॥४॥ मनुष्य अपने पुत्रों को देखकर एवं अपनी पत्नी को सेज पर निहार कर बहुत खुश होता है। मनुष्य शरीर पर इत्र और चन्दन लगाता है और सुन्दर वस्त्रों के साथ अपना श्रृंगार करता है। किन्तु जब वह प्राण त्याग कर इस संसार से चला जाता है तो शरीर मिट्टी में मिला दिया जाता है॥५॥ कोई व्यक्ति स्वयं को भूमिपति, महाराजा, बादशाह, उच्चाधिकारी कहलवाता है। कोई स्वयं को चौधरी एवं नवाब कहलवाता है परन्तु ये सभी अभिमान की अग्नि में जल मरते हैं। मनमुख जीव ने भगवान के नाम को भुला दिया है। वह ऐसे बन गया है जैसे जंगल को लगी अग्नि में जला हुआ सरकण्डा होता है॥६॥ जो भी इस संसार में आया है, उसको अभिमान बुरी तरह लिपटा हुआ है और अभिमान का खेल खेलकर गमन कर जाता है। यह संसार कालिख की कुटिया है। शरीर, आत्मा एवं मनुष्य तन सब उसके साथ काले हो जाते हैं। लेकिन जिनकी गुरु जी स्वयं रक्षा करते हैं, वह निर्मल हैं और ईश्वर के नाम के साथ वह तृष्णाओं की अग्नि को बुझा देते हैं॥७॥ हे नानक! सम्राटों के सम्राट परमेश्वर के सत्यनाम के साथ मनुष्य भवसागर पार कर जाता है। हे प्रभु! मुझे आपका हरि-नाम कदापि विस्मृत न हो, मैंने हरि के नाम का आभूषण खरीद लिया है। स्वेच्छाचारी भयानक भवसागर में माया-लिप्त होने के कारण नष्ट हो जाते हैं परन्तु गुरमुख भवसागर से पार हो जाते हैं॥ ८॥ १६॥

सिरीरागु महला १ घरु २ ॥ मुकामु करि घरि बैसणा नित चलणै की धोख ॥ मुकामु ता परु जाणीऐ जा रहै निहचलु लोक ॥ १ ॥ दुनीआ कैसि मुकामे ॥ करि सिदकु करणी खरचु बाधहु लागि रहु नामे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जोगी त आसणु करि बहै मुला बहै मुकामि ॥ पंडित वखाणहि पोथीआ सिध बहहि देव सथानि ॥ २ ॥ सुर सिध गण गंधरब मुनि जन सेख पीर सलार ॥ दरि कूच कूचा करि गए अवरे भि चलणहार ॥ ३ ॥ सुलतान खान मलूक उमरे गए करि करि कूचु ॥ घड़ी मुहति कि चलणा दिल समझु तूं भि पहूचु ॥ ४ ॥ सबदाह माहि वखाणीऐ विरला त बूझै कोइ ॥ नानकु वखाणै बेनती जलि थलि महीअलि सोइ ॥ ५ ॥ अलाहु अलखु अगंमु कादरु करणहारु करीमु ॥ सभ दुनी आवण जावणी मुकामु एकु रहीमु ॥ ६ ॥ मुकामु तिस नो आखीऐ जिसु सिसि न होवी लेखु ॥ असमानु धरती चलसी मुकामु ओही एकु ॥ ७ ॥ दिन रवि चलै निसि ससि चलै तारिका लख पलोइ ॥ मुकामु ओही एकु है नानका सचु बुगोइ ॥ ८ ॥ १७ ॥ महले पहिले सतारह असटपदीआ ॥

यदि कोई प्राणी सांसारिक गृह को अपना स्थाई निवास समझकर बैठा रहे, परन्तु फिर भी उसे यहाँ से गमन कर जाने की (मृत्यु की) सदैव चिन्ता लगी रहती है। इस संसार घर को स्थाई निवास तभी समझा जा सकता है, यदि इस जगत् ने सदैव स्थिर रहना हो, परन्तु यह जगत् तो क्षणभंगुर है॥१॥ यह दुनिया स्थाई कैसे हो सकती है? इसलिए श्रद्धायुक्त होकर शुभ कर्म करके सदाचरण की

कमाई कर और ईश्वर भक्ति में लीन रह॥१॥ रहाउ॥ योगी ध्यान–अवस्था में आसन बनाकर विराजमान होता है और मुल्लां विश्राम स्थल पर विराजता है। ब्राह्मण ग्रंथों का पाठ करते हैं और सिद्ध देव–मन्दिरों में वास करते हैं॥२॥ देवता, सिद्ध–पुरुष, शिवगण, गंधर्व, ऋषि–मुनि, शेख, पीर, सेनापति समस्त उच्चाधिकारी एक–एक करके प्राण त्याग गए हैं और जो दिखाई दे रहे हैं, वे भी चले जाने वाले हैं॥ ३॥ सम्राट, खान, फरिश्ते व सरदार बारी–बारी संसार त्याग गए हैं। प्राणी को एक क्षण या घड़ी में यह संसार त्यागना पड़ेगा। हे मेरे मन! तुम भी वहाँ पहुंचने वाले हो, इस संसार को त्याग कर तुम भी परलोक गमन करोगे॥४॥ शब्दों द्वारा तो सभी कहते हैं परन्तु किसी विरले को ही इस बारे ज्ञान है। नानक प्रार्थना करते हैं कि वह प्रभु जल, थल, पाताल, आकाश में विद्यमान हैं॥ ५॥ अल्लाह को जाना नहीं जा सकता। वह अगम्य एवं कुदरत का मालिक है, सृष्टि–रचयिता एवं जीवों पर मेहर करने वाला है। शेष सारी दुनिया जन्म एवं मृत्यु के अधीन है। परन्तु जीवों पर मेहर करने वाला एक अल्लाह ही सदैव स्थिर है॥६॥ स्थिर केवल उसे ही कहा जा सकता है, जिसके सिर पर कर्मों का आलेख नहीं। गगन तथा धरती नष्ट हो जाएँगे परन्तु सदैव स्थिर केवल ईश्वर ही रहेगा॥ ७॥ दिन में उजाला करने वाला सूर्य नाश हो जाएगा और रात्रि व चाँद नष्ट हो जाएँगे और लाखों ही सितारे लुप्त हो जाएँगे। नानक सत्य कथन करता है कि एक अल्लाह ही अनन्त है॥८॥१७॥ प्रथम सतिगुरु नानक देव जी की सत्रह अष्टपदियाँ।

सिरीरागु महला ३ घरु १ असटपदीआ १ ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुरमुखि क्रिपा करे भगति कीजै बिनु गुर भगति न होइ ॥ आपै आपु मिलाए बूझै ता निरमलु होवै कोइ ॥ हरि जीउ सचा सची बाणी सबदि मिलावा होइ ॥ १ ॥ भाई रे भगतिहीणु काहे जगि आइआ ॥ पूरे गुर की सेव न कीनी बिरथा जनमु गवाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे हरि जगजीवनु दाता आपे बखसि मिलाए ॥ जीअ जंत ए किआ वेचारे किआ को आखि सुणाए ॥ गुरमुखि आपे दे वडिआई आपे सेव कराए ॥ २ ॥ देखि कुटंबु मोहि लोभाणा चलदिआ नालि न जाई ॥ सतिगुरु सेवि गुण निधानु पाइआ तिस की कीम न पाई ॥ प्रभु सखा हरि जीउ मेरा अंते होइ सखाई ॥ ३ ॥ पेईअड़ै जगजीवनु दाता मनमुखि पति गवाई ॥ बिनु सतिगुर को मगु न जाणै अंधे ठउर न काई ॥ हरि सुखदाता मनि नही वसिआ अंति गइआ पछुताई ॥ ४ ॥ पेईअड़ै जगजीवनु दाता गुरमति मंनि वसाइआ ॥ अनदिनु भगति करहि दिनु राती हउमै मोहु चुकाइआ ॥ जिसु सिउ राता तैसो होवै सचे सचि समाइआ ॥ ५ ॥ आपे नदरि करे भाउ लाए गुर सबदी बीचारि ॥ सतिगुरु सेविऐ सहजु ऊपजै हउमै त्रिसना मारि ॥ हरि गुणदाता सद मनि वसै सचु रखिआ उर धारि ॥ ६ ॥ प्रभु मेरा सदा निरमला मनि निरमलि पाइआ जाइ ॥ नामु निधानु हरि मनि वसै हउमै दुखु सभु जाइ ॥ सतिगुरि सबदु सुणाइआ हउ सद बलिहारै जाउ ॥ ७ ॥ आपणै मनि चिति कहै कहाए बिनु गुर आपु न जाई ॥ हरि जीउ भगति वछलु सुखदाता करि किरपा मंनि वसाई ॥ नानक सोभा सुरति देइ प्रभु आपे गुरमुखि दे वडिआई ॥ ८ ॥ १ ॥ १८ ॥

यदि गुरु कृपा करे तो ही मनुष्य भक्ति करता है, गुरु के बिना भक्ति नहीं हो सकती। यदि गुरु जी दया करके अपनी संगति में रखें तो ईश्वर बोध का रहस्य समझकर प्राणी निर्मल हो जाता है। भगवान सत्य है और उसकी वाणी भी सत्य है। शब्द द्वारा ही प्राणी का ईश्वर से मिलन होता है॥१॥ हे भाई! भक्तिविहीन प्राणी इस जगत् में क्यों आया है? यदि इस संसार में उसने पूर्ण गुरु

की सेवा का फल प्राप्त नहीं किया तो उसने यह जीवन व्यर्थ ही गंवा दिया है॥१॥ रहाउ॥ ईश्वर जगत् के जीवों का दाता और जगत् का पालनहार है और क्षमा प्रदान करके तुच्छ जीवों को अपने साथ मिला लेता है। ये जीव–जन्तु बेचारे क्या हैं ? वह क्या कह तथा समझ–सुना सकते हैं? गुरमुख को ईश्वर स्वयं मान–प्रतिष्ठा प्रदान करता है और स्वयं ही अपनी भक्ति में लगाता है॥ २॥ अपने कुटुम्ब को देखकर उसके आकर्षण में प्राणी लुभायमान हो गया है परन्तु मृत्युकाल पर कोई भी साथ नहीं देता अर्थात् परलोक गमन के समय कोई भी सदस्य साथ नहीं जाता। जिसने सतिगुरु की भरपूर सेवा करके गुणों के भण्डार प्रभु को प्राप्त कर लिया है उसका मूल्य नहीं आंका जा सकता। पूज्य प्रभु मेरा मित्र है और अंतिम काल मेरा सहायक होगा॥३॥ जगत् का पालनहार, प्राणदाता, प्रभु पीहर इस संसार में ही है जिसे इसी लोक में पाया जा सकता है। उससे बेखबर मनमुख प्राणी ने अपना सम्मान गंवा दिया है। सतिगुरु के बिना कोई भी ईश्वर का मार्ग नहीं जानता। अज्ञानन्ध प्राणी को परलोक में स्थान नहीं मिलना। यदि सुखदाता परमेश्वर मनुष्य के हृदय में निवास नहीं करता तो अंतिमकाल वह मनुष्य पश्चाताप करता हुआ गमन कर जाता है॥४॥ जिसने गुरु से मति लेकर जगत् के जीवन एवं जीवों के दाता प्रभु को अपने मन में बसा लिया है, वह प्रतिदिन भगवान की भक्ति करता है तथा वह अपने अहंत्व एवं मोह को मिटा देता है। मनुष्य जिसके प्रेम में मग्न रहता है, वह स्वयं भी उस जैसा बन जाता है तथा सत्य में ही समा जाता है॥ ५॥ जिस पर भगवान स्वयं कृपा–दृष्टि करता है, उसके भीतर अपना प्रेम उत्पन्न कर देता है। फिर वह गुरु की वाणी द्वारा भगवान की महिमा का विचार करता है। सतिगुरु की सेवा से प्राणी को बड़ा सुख उत्पन्न होता है और मनुष्य का अहंकार एवं तृष्णा मिट जाती है। गुणदाता प्रभु क्षमाशील है, वह सदैव ही उसके चित्त में वास करता है, जो सत्य को अपने हृदय में बसाए रखता है॥ ६॥ मेरा प्रभु सदैव निर्मल है। निर्मल मन के साथ ही वह प्राप्त होता है। यदि गुणों के भण्डार भगवान का नाम उसके हृदय में बस जाए, तो अहंकार एवं दुःख निवृत्त हो जाते हैं। सतिगुरु ने मुझे परमात्मा का नाम सुनाया है। मैं उन पर सदैव कुर्बान जाता हूँ॥ ७॥ प्राणी के अन्तर्मन का अभिमान कहने–कहलाने अथवा पढ़ने–पढ़ाने से दूर नहीं होता और गुरु के बिना अभिमान का कोई अंत नहीं। हरि आप ही भक्त–वत्सल है, और सुखों का दाता है। वह कृपा करके स्वयं ही मन में आकर बसता है। हे नानक! भगवान स्वयं ही गुरु के माध्यम से मनुष्य को शोभा, सुरति एवं ख्याति प्रदान करता है॥ ८॥ १॥ १८॥

सिरीरागु महला ३ ॥ हउमै करम कमावदे जमडंडु लगै तिन आइ ॥ जि सतिगुरु सेवनि से उबरे हरि सेती लिव लाइ ॥ १ ॥ मन रे गुरमुखि नामु धिआइ ॥ धुरि पूरबि करतै लिखिआ तिना गुरमति नामि समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ विणु सतिगुर परतीति न आवई नामि न लागो भाउ ॥ सुपनै सुखु न पावई दुख महि सवै समाइ ॥ २ ॥ जे हरि हरि कीचै बहुतु लोचीऐ किरतु न मेटिआ जाइ ॥ हरि का भाणा भगती मंनिआ से भगत पए दरि थाइ ॥ ३ ॥ गुरु सबदु दिड़ावै रंग सिउ बिनु किरपा लइआ ना जाइ ॥ जे सउ अंम्रितु नीरीऐ भी बिखु फलु लागै धाइ ॥ ४ ॥ से जन सचे निरमले जिन सतिगुर नालि पिआरु ॥ सतिगुर का भाणा कमावदे बिखु हउमै तजि विकारु ॥ ५ ॥ मनहठि कितै उपाइ न छूटीऐ सिम्रिति सासत्र सोधहु जाइ ॥ मिलि संगति साधू उबरे गुर का सबदु कमाइ ॥ ६ ॥ हरि का नामु निधानु है जिसु अंतु न पारावारु ॥ गुरमुखि सेई सोहदे जिन किरपा करे करतारु ॥ ७ ॥ नानक दाता एकु है दूजा अउरु न कोइ ॥ गुर परसादी पाईऐ करमि परापति होइ ॥ ८ ॥ २ ॥ १९ ॥

जो प्राणी अपने कर्म अहंकारवश करते हैं, उन्हें यमदूतों की बड़ी प्रताड़ना सहन करनी पड़ती है। जो प्राणी सतिगुरु की सेवा करते हैं, वे भगवान में सुरति लगाकर यमदूतों की प्रताड़ना से बच जाते हैं॥ १॥ हे मेरे मन! गुरु की संगति में ईश्वर की आराधना कर। जिनके भाग्य में विधाता ने पूर्व से ही निर्दिष्ट कर लिखा है, वह सतिगुरु के उपदेश द्वारा नाम के अंदर लिवलीन हो जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ सतिगुरु के बिना प्राणी के हृदय में भगवान के प्रति श्रद्धा कायम नहीं होती और न ही ईश्वर नाम के साथ प्रीति उत्पन्न होती है। ऐसे प्राणी को स्वप्न में भी सुख प्राप्त नहीं होता और वह पीड़ा में ही सोता और मरता है॥ २॥ चाहे जीव भगवान का नाम जपने की तीव्र इच्छा रखता हो परन्तु उसके पूर्व जन्म के कर्म मिटाए नहीं जा सकते। भक्तों ने भगवान की इच्छा को ही माना है और ऐसे भक्त भगवान के दरबार पर स्वीकृत हुए हैं॥ ३॥ गुरु बड़ी प्रेम–भावना से उपदेश प्रदान करते हैं परन्तु उसकी कृपा के बिना नाम की प्राप्ति नहीं हो सकती। चाहे विषैले पौधे को सैंकड़ों बार अमृत रस से सींचा जाए, फिर भी विषैले पौधे पर विषैले फल ही लगेंगे॥ ४॥ वह पुरुष सत्यवादी एवं निर्मल हैं, जिनका सतिगुरु के साथ प्रेम है। वह सतिगुरु की इच्छानुसार कर्म करते हैं और अहंकार एवं बुराइयों के विष को त्याग देते हैं॥ ५॥ मन के हठ द्वारा किसी भी विधि से मनुष्य की मुक्ति नहीं हो सकती। चाहे स्मृति, शास्त्रादि प्रामाणिक ग्रंथों का अध्ययन करके देख लो। जो साधु की संगति में मिलकर गुरु की वाणी की साधना करते हैं, वे जन्म–मरण के चक्र से मुक्त हो जाते हैं॥ ६॥ हरि का नाम गुणों का अमूल्य भण्डार है, जिसका कोई अंत अथवा पारावार नहीं। परमात्मा की जिन पर कृपा होती है, वहीं गुरमुख शोभा पाते हैं॥ ७॥ हे नानक! एक प्रभु ही समस्त जीवों का दाता है, अन्य दूसरा कोई नहीं। गुरु की कृपा से ही प्रभु की प्राप्ति होती है और प्रारब्ध द्वारा ही गुरु जी मिलते हैं॥ ८॥ २॥ १६॥

सिरीरागु महला ३ ॥ पंखी बिरखि सुहावड़ा सचु चुगै गुर भाइ ॥ हरि रसु पीवै सहजि रहै उडै न आवै जाइ ॥ निज घरि वासा पाइआ हरि हरि नामि समाइ ॥ १ ॥ मन रे गुर की कार कमाइ ॥ गुर कै भाणै जे चलहि ता अनदिनु राचहि हरि नाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंखी बिरख सुहावड़े ऊडहि चहु दिसि जाहि ॥ जेता ऊडहि दुख घणे नित दाझहि तै बिललाहि ॥ बिनु गुर महलु न जापई ना अंम्रित फल पाहि ॥ २ ॥ गुरमुखि ब्रहमु हरीआवला साचै सहजि सुभाइ ॥ साखा तीनि निवारीआ एक सबदि लिव लाइ ॥ अंम्रित फलु हरि एकु है आपे देइ खवाइ ॥ ३ ॥ मनमुख ऊभे सुकि गए ना फलु तिंना छाउ ॥ तिंना पासि न बैसीऐ ओना घरु न गिराउ ॥ कटीअहि तै नित जालीअहि ओना सबदु न नाउ ॥ ४ ॥ हुकमे करम कमावणे पइऐ किरति फिराउ ॥ हुकमे दरसनु देखणा जह भेजहि तह जाउ ॥ हुकमे हरि हरि मनि वसै हुकमे सचि समाउ ॥ ५ ॥ हुकमु न जाणहि बपुड़े भूले फिरहि गवार ॥ मनहठि करम कमावदे नित नित होहि खुआरु ॥ अंतरि सांति न आवई ना सचि लगै पिआरु ॥ ६ ॥ गुरमुखीआ मुह सोहणे गुर कै हेति पिआरि ॥ सची भगती सचि रते दरि सचै सचिआर ॥ आए से परवाणु है सभ कुल का करहि उधारु ॥ ७ ॥ सभ नदरी करम कमावदे नदरी बाहरि न कोइ ॥ जैसी नदरि करि देखै सचा तैसा ही को होइ ॥ नानक नामि वडाईआ करमि परापति होइ॥ ८॥ ३॥ २०॥

जीव रूपी पक्षी, शरीर रूपी सुन्दर वृक्ष पर विराजमान होकर गुरु जी की इच्छानुसार सत्य नाम रूपी दाना चुगता है। वह हरि रस का पान करता है, और परम आनंद में रहता है और वह वहाँ न ही उड़ता, आता या जाता है। वह अपने आत्म स्वरूप के अन्दर आवास हासिल कर लेता है और हरि–नाम में लीन हो जाता है॥१॥ हे मेरे मन! तू गुरु की सेवा करके उनके उपदेशानुसार पालन

कर। यदि तुम गुरु की इच्छानुसार चलोगे, तब तुम रात–दिन ईश्वर के नाम में लीन रहोगे॥१॥ रहाउ॥ कई शरीर रूपी वृक्ष अत्यन्त सुन्दर हैं परन्तु जीव रूपी पक्षी उन पर टिक कर नहीं बैठते। वह माया रूपी दाना चुगने के लिए उड़कर चारों दिशाओं में जाते रहते हैं। जितना अधिक वह (ऊपर) उड़ते हैं, उतना अधिक कष्ट सहन करते हैं। वे सदैव दुखों–संतापों में ग्रस्त रहकर जलते एवं विलाप करते हैं। गुरु के अतिरिक्त उनको परमेश्वर का महल दिखाई नहीं देता, न ही वह अमृत फल को प्राप्त करते हैं॥२॥ ब्रह्म का रूप गुरुमुख सदैव हरे–भरे वृक्ष जैसा है। उसको स्वाभाविक ही सत्य परमेश्वर की प्रीत की कृपा प्राप्त होती है। वह तीनों शाखाओं (सत्, रज और तम्) को काट कर ऊँचा उठता है और एक शब्द के साथ प्रेम लगाता है। केवल ईश्वर का नाम ही अमृतमयी फल है। वह स्वयं ही कृपा करके इसका सेवन करने के लिए देता है॥३॥ मनमुख ऐसे वृक्ष हैं, जो खड़े–खड़े सूख जाते हैं। उनमें कोई फल और छाया नहीं। इन अज्ञानी प्राणियों की संगति नहीं करनी चाहिए, क्योंकि उनका कोई भी घर और गांव नहीं होता। वे सदैव काटे और जलाए जाते हैं। उनके पास न तो गुरु का उपदेश और न ही हरि का नाम है॥४॥ मनुष्य ईश्वर के आदेश अनुसार कर्म करते हैं और अपने पूर्व–जन्म के कर्मों के अनुकूल भटकते फिरते हैं। ईश्वर के आदेशानुसार गुरमुख उसके दर्शन करते हैं और जहाँ वह उनको भेजता है, वहाँ वह जाते हैं। अपने आदेश द्वारा ईश्वर गुरमुखों के चित्त में टिकता है और उसके आदेश द्वारा ही वह सत्य में लीन हो जाते हैं॥५॥ मूर्ख, दुरात्मा ईश्वर की इच्छा को नहीं समझते और भ्रम में पड़े जन्म–मरण के चक्र में पड़कर भटकते फिरते हैं। मन के हठ अनुसार वह कर्म करते हैं और नित्य ही कलंकित होते हैं। उनके अंदर सुख–शांति नहीं आती और वे सत्य–स्वरूप हरि के साथ प्रेम नहीं कर पाते॥६॥ जो गुरु के साथ प्रीति एवं स्नेह करते हैं। उन गुरमुखों के मुख सुन्दर हो जाते हैं। वे सत्य की भक्ति में लीन रहते हैं और सत्य के साथ रंगे रहते हैं और परमेश्वर के द्वार पर वे सत्यवादी रूप में सम्मानित होते हैं उन मनुष्यों का ही जगत् में आगमन स्वीकृत होता है, और अपनी समस्त कुल का भी उद्धार कर देते हैं॥७॥ प्रत्येक प्राणी ईश्वर की दृष्टि अधीन कर्म करता है। कोई भी प्राणी उसकी दृष्टि से ओझल नहीं। परमात्मा जिस पर जैसी कृपा–दृष्टि करता है, मनुष्य वैसा ही हो जाता है। हे नानक! मनुष्य को नाम द्वारा ही यश मिलता है और नाम की उपलब्धि भगवान की मेहर से होती है॥८॥३॥२०॥

सिरीरागु महला ३ ॥ गुरमुखि नामु धिआईऐ मनमुखि बूझ न पाइ ॥ गुरमुखि सदा मुख ऊजले हरि वसिआ मनि आइ ॥ सहजे ही सुखु पाईऐ सहजे रहै समाइ ॥ १ ॥ भाई रे दासनि दासा होइ ॥ गुर की सेवा गुर भगति है विरला पाए कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सदा सुहागु सुहागणी जे चलहि सतिगुर भाइ ॥ सदा पिरु निहचलु पाईऐ ना ओहु मरै न जाइ ॥ सबदि मिली ना वीछुड़ै पिर कै अंकि समाइ ॥ २ ॥ हरि निरमलु अति ऊजला बिनु गुर पाइआ न जाइ ॥ पाठु पड़ै ना बूझई भेखी भरमि भुलाइ ॥ गुरमती हरि सदा पाइआ रसना हरि रसु समाइ ॥ ३ ॥ माइआ मोहु चुकाइआ गुरमती सहजि सुभाइ ॥ बिनु सबदै जगु दुखीआ फिरै मनमुखा नो गई खाइ ॥ सबदे नामु धिआईऐ सबदे सचि समाइ ॥ ४ ॥ माइआ भूले सिध फिरहि समाधि न लगै सुभाइ ॥ तीने लोअ विआपत है अधिक रही लपटाइ ॥ बिनु गुर मुकति न पाईऐ ना दुबिधा माइआ जाइ ॥ ५ ॥ माइआ किस नो आखीऐ किआ माइआ करम कमाइ ॥ दुखि सुखि एहु जीउ बधु है हउमै करम कमाइ ॥ बिनु सबदै भरमु न चूकई ना विचहु हउमै जाइ ॥ ६ ॥ बिनु प्रीती भगति न होवई बिनु सबदै थाइ न पाइ ॥ सबदे हउमै मारीऐ माइआ का भ्रमु जाइ ॥ नामु पदारथु पाईऐ गुरमुखि सहजि सुभाइ ॥ ७ ॥ बिनु गुर गुण न जापनी बिनु गुण

भगति न होइ ॥ भगति वछलु हरि मनि वसिआ सहजि मिलिआ प्रभु सोइ ॥ नानक सबदे हरि सालाहीऐ करमि परापति होइ ॥ ८ ॥ ४ ॥ २१ ॥

गुरमुख भगवान के नाम का ध्यान करते हैं किन्तु मनमुख को भगवान के ध्यान की सूझ नहीं होती। गुरमुख का मुख हमेशा उज्ज्वल रहता है और भगवान उसके हृदय में निवास करता है। उसे सहज ही सुख की उपलब्धि होती है। वह सहज ही नाम में मग्न रहता है॥१॥ हे भाई ! तू परमात्मा के अनुचरों का अनुचर बन जा। गुरु की सेवा से ही गुरु की भक्ति है किन्तु इसकी उपलब्धि कोई विरला ही प्राप्त करता है॥१॥ रहाउ॥ जो भाग्यशाली नारी सतिगुरु की इच्छानुसार आचरण करती है, वह सदैव सौभाग्यवती होती है। वह अमर व अचल स्वामी को प्राप्त हो जाती है। न वह मरता है और न ही जाता है। वह शब्द द्वारा प्रभु से मिलाप करती है, इसलिए उसे वियोग नहीं होता। अपितु अपने स्वामी की गोद में लीन हो जाती है॥ २॥ हरि पवित्र व अत्यंत उज्ज्वल है। गुरु के बिना वह प्राप्त नहीं होता। धर्म–ग्रंथों के अध्ययन द्वारा मनुष्य को उसका बोध नहीं होता। आडम्बर करने वाले भ्रम–भुलैया में पड़े भटके हुए हैं। भगवान तो सदैव ही गुरु की मति द्वारा प्राप्त हुआ है। गुरमुख की रसना में हरि रस समाया रहता है॥३॥ गुरु के उपदेश द्वारा मनुष्य माया के मोह को नष्ट कर देता है। वह सहज अवस्था प्राप्त करके भगवान के प्रेम में मग्न रहता है। नाम के अतिरिक्त सारा संसार दुखी है। माया मनमुखी प्राणियों को निगल गई है। शब्द द्वारा मनुष्य नाम–सिमरन करता है और शब्द द्वारा ही वह भगवान में समा जाता है॥४॥ माया में फँसकर सिद्ध पुरुष भी भटकते रहते हैं और भगवान के प्रेम में लीन करने वाली उनकी समाधि नहीं लगती। माया आकाश, पाताल, धरती तीनों लोकों में जीवों को अपने मोह में फँसा रही है। वह समस्त जीवों को अत्याधिक लिपटी हुई है। गुरु के बिना माया से मुक्ति प्राप्त नहीं होती और न ही दुविधापन व सांसारिक ममता दूर होते हैं॥५॥ माया किसे कहते हैं? माया क्या कार्य करती है? दुःख व सुख के भीतर माया ने इस प्राणी को जकड़ा हुआ है और जिससे प्राणी अहंकार का कर्म करता है। शब्द के बिना भ्रम दूर नहीं होता और न ही अन्तर्मन से अहंकार दूर होता है॥६॥ प्रेम के बिना भगवान की भक्ति नहीं हो सकती और नाम के अतिरिक्त मनुष्य को प्रभु के दरबार में स्थान नहीं मिलता। जब अहंत्व को नाम द्वारा मार दिया जाता है तो माया का पैदा किया भ्रम दूर हो जाता है। गुरमुख सहज ही हरि–नाम के धन को प्राप्त कर लेता है॥७॥ गुरु के बिना शुभ गुणों का पता नहीं लगता तथा शुभ गुण ग्रहण किए बिना भगवान की भक्ति नहीं होती। जब भक्तवत्सल श्री हरि मन में आकर बसता है तो मनुष्य के भीतर सहज अवस्था उत्पन्न हो जाती है। फिर वह प्रभु स्वयं आकर मिल जाता है। हे नानक ! किस्मत से ही सतिगुरु की प्राप्ति होती है और गुरु के शब्द द्वारा ही भगवान की महिमा–स्तुति करनी चाहिए॥८॥४॥२१॥

सिरीरागु महला ३ ॥ माइआ मोहु मेरै प्रभि कीना आपे भरमि भुलाए ॥ मनमुखि करम करहि नही बूझहि बिरथा जनमु गवाए ॥ गुरबाणी इसु जग महि चानणु करमि वसै मनि आए ॥ १ ॥ मन रे नामु जपहु सुखु होइ ॥ गुरु पूरा सालाहीऐ सहजि मिलै प्रभु सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भरमु गइआ भउ भागिआ हरि चरणी चितु लाइ ॥ गुरमुखि सबदु कमाईऐ हरि वसै मनि आइ ॥ घरि महलि सचि समाईऐ जमकालु न सकै खाइ ॥ २ ॥ नामा छीबा कबीरु जोलाहा पूरे गुर ते गति पाई ॥ ब्रहम के बेते सबदु पछाणहि हउमै जाति गवाई ॥ सुरि नर तिन की बाणी गावहि कोइ न मेटै भाई ॥ ३ ॥ दैत पुतु करम धरम किछु संजम न पड़ै दूजा भाउ न जाणै ॥ सतिगुरु भेटिऐ निरमलु होआ अनदिनु नामु वखाणै ॥ एको पड़ै एको नाउ बूझै दूजा अवरु न जाणै ॥ ४ ॥ खटु दरसन जोगी संनिआसी बिनु

गुर भरमि भुलाए ॥ सतिगुरु सेवहि ता गति मिति पावहि हरि जीउ मंनि वसाए ॥ सची बाणी सिउ चितु लागै आवणु जाणु रहाए ॥ ५ ॥ पंडित पड़ि पड़ि वादु वखाणहि बिनु गुर भरमि भुलाए ॥ लख चउरासीह फेरु पइआ बिनु सबदै मुकति न पाए ॥ जा नाउ चेतै ता गति पाए जा सतिगुरु मेलि मिलाए ॥ ६ ॥ सतसंगति महि नामु हरि उपजै जा सतिगुरु मिलै सुभाए ॥ मनु तनु अरपी आपु गवाई चला सतिगुर भाए ॥ सद बलिहारी गुर अपुने विटहु जि हरि सेती चितु लाए ॥ ७ ॥ सो ब्राहमणु ब्रहमु जो बिंदे हरि सेती रंगि राता ॥ प्रभु निकटि वसै सभना घट अंतरि गुरमुखि विरलै जाता ॥ नानक नामु मिलै वडिआई गुर कै सबदि पछाता ॥ ८ ॥ ५ ॥ २२ ॥

भगवान ने स्वयं ही माया–मोह की रचना की है। उसने स्वयं ही जीवों को माया के मोह में फँसा कर भुलाया हुआ है। मनमुख कर्म तो करते हैं परन्तु उन्हें इसकी सूझ नहीं होती। लेकिन वह अपना जीवन व्यर्थ ही गंवा देते हैं। गुरुवाणी इस संसार में ईश्वरीय प्रकाश है। प्रभु की दया से प्राणी के मन में यह वाणी आकर बसती है॥१॥ हे मेरे मन! भगवान का नाम जपो, इससे ही सुख की उपलब्धि होती है। पूर्ण गुरु की महिमा करने से परमेश्वर सहज ही प्राणी को मिल जाता है॥१॥ रहाउ॥ ईश्वर के चरणों में चित्त लगाने से मनुष्य का माया का भ्रम एवं मृत्यु का भय नाश हो जाता है। जिज्ञासु प्राणी जब गुरु–कृपा से नाम की आराधना करता है तो ईश्वर स्वयं उसके हृदय में निवास करता है। मनुष्य सत्य प्रभु के आत्म स्वरूप रूपी महल के अन्दर लीन हो जाता है और यमदूत उसे कदापि नहीं निगल सकता॥२॥ निम्न जाति के नामदेव छींबे और कबीर जुलाहे ने पूर्ण गुरु की कृपा से मोक्ष प्राप्त किया था। वे गुरु–शब्द का ज्ञान पाकर ब्रह्मज्ञानी बने और उन्होंने जातिगत गौरव अथवा अहंत्व का पूर्ण त्याग कर दिया। देवते एवं मनुष्य उनकी पावन वाणी का गायन करते है। उनकी शोभा कोई भी मिटा नहीं सकता॥३॥ दैत्य हिरण्यकशिपु का पुत्र भक्त प्रहलाद कोई धर्म–कर्म नहीं करता था। वह मन को स्थिर करने वाली संयम, ध्यान एवं समाधि रूप विधियों बारे कुछ भी नहीं जानता था। वह माया के मोह को नहीं जानता था। सतिगुरु से मिलकर वह निर्मल हो गया था वह रात–दिन नाम का जाप करता था और एक नाम को ही जानता था तथा अन्य किसी दूसरे को नहीं जानता था॥४॥ छः शास्त्रों के उपदेशों को मानने वाले योगी, संन्यासी इत्यादि गुरु के बिना संदेह में भूले पड़े हैं। यदि वे सतिगुरु की सेवा का सौभाग्य प्राप्त करें तो वे मोक्ष एवं ईश्वर को खोजने में समर्थ होते हैं और पूज्य हरि को अपने चित्त में टिका लेते हैं। सच्ची गुरुवाणी से उनका मन जुड़ जाता है और उनका आवागमन (जन्म–मरण के चक्र से) मिट जाता है॥५॥ गुरु के बिना भ्रम में भूले हुए पण्डित शास्त्र इत्यादि का अध्ययन करके वाद–विवाद करते हैं, किन्तु शब्द के बिना उन्हें मोक्ष प्राप्त नहीं होता, वे चौरासी लाख योनियों में भटकते फिरते हैं। जब ईश्वर की अनुकंपा होती है तो सतिगुरु से मिलन होता है और जब सतिगुरु के उपदेशानुसार नाम की आराधना करते हैं, तब वह गति प्राप्त करते हैं॥ ६॥ यदि प्राणी का गुरु से मिलन हो जाए तो सत्संग के कारण वह हरि–नाम स्मरण कर पाता है। मैं अपनी आत्मा एवं देहि समर्पित करता हूँ और अपनी अहंकार–भावना त्यागता हूँ और सतिगुरु के उपदेशानुसार आचरण करता हूँ। मैं सदैव अपने गुरु पर कुर्बान जाता हूँ, जो मेरी आत्मा को प्रभु के साथ मिलाते हैं॥ ७॥ ब्राह्मण वही है जिसे ब्रह्म का ज्ञान है और प्रभु की प्रीति के साथ रंगा हुआ है। पारब्रह्म–परमेश्वर समस्त प्राणियों के अति निकट उनके भीतर ही निवास करता है, किन्तु इस रहस्य को कोई विरला प्राणी गुरु के द्वारा ही जानता है। हे नानक! हरि–नाम द्वारा प्राणियों को बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त होती है और गुरु के शब्द द्वारा वह स्वामी को पहचान लेता है॥८॥५॥२२॥

सिरीरागु महला ३ ॥ सहजै नो सभ लोचदी बिनु गुर पाइआ न जाइ ॥ पड़ि पड़ि पंडित जोतकी थके भेखी भरमि भुलाइ ॥ गुर भेटे सहजु पाइआ आपणी किरपा करे रजाइ ॥ १ ॥ भाई रे गुर बिनु सहजु न होइ ॥ सबदै ही ते सहजु ऊपजै हरि पाइआ सचु सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहजे गाविआ थाइ पवै बिनु सहजै कथनी बादि ॥ सहजे ही भगति ऊपजै सहजि पिआरि बैरागि ॥ सहजै ही ते सुख साति होइ बिनु सहजै जीवणु बादि ॥ २ ॥ सहजि सालाही सदा सदा सहजि समाधि लगाइ ॥ सहजे ही गुण ऊचरै भगति करे लिव लाइ ॥ सबदे ही हरि मनि वसै रसना हरि रसु खाइ ॥ ३ ॥ सहजे कालु विडारिआ सच सरणाई पाइ ॥ सहजे हरि नामु मनि वसिआ सची कार कमाइ ॥ से वडभागी जिनी पाइआ सहजे रहे समाइ ॥ ४ ॥ माइआ विचि सहजु न ऊपजै माइआ दूजै भाइ ॥ मनमुख करम कमावणे हउमै जलै जलाइ ॥ जंमणु मरणु न चूकई फिरि फिरि आवै जाइ ॥ ५ ॥ त्रिहु गुणा विचि सहजु न पाईऐ त्रै गुण भरमि भुलाइ ॥ पड़ीऐ गुणीऐ किआ कथीऐ जा मुंढहु घुथा जाइ ॥ चउथे पद महि सहजु है गुरमुखि पलै पाइ ॥ ६ ॥ निरगुण नामु निधानु है सहजे सोझी होइ ॥ गुणवंती सालाहिआ सचे सची सोइ ॥ भुलिआ सहजि मिलाइसी सबदि मिलावा होइ ॥ ७ ॥ बिनु सहजै सभु अंधु है माइआ मोहु गुबारु ॥ सहजे ही सोझी पई सचै सबदि अपारि ॥ आपे बखसि मिलाइअनु पूरे गुर करतारि ॥ ८ ॥ सहजे अदिसटु पछाणीऐ निरभउ जोति निरंकारु ॥ सभना जीआ का इकु दाता जोती जोति मिलावणहारु ॥ पूरै सबदि सलाहीऐ जिस दा अंतु न पारावारु ॥ ९ ॥ गिआनीआ का धनु नामु है सहजि करहि वापारु ॥ अनदिनु लाहा हरि नामु लैनि अखुट भरे भंडार ॥ नानक तोटि न आवई दीए देवणहारि ॥ १० ॥ ६ ॥ २३ ॥

सारी दुनिया सहज सुख की कामना करती है परन्तु गुरु के बिना सहज की प्राप्ति नहीं होती। पण्डित एवं ज्योतिषी वेद एवं शास्त्रों का अध्ययन कर करके थक गए हैं और धार्मिक वेष धारण करने वाले साधु भ्रमों में भूले हुए हैं। जिस पर भगवान स्वयं कृपा करता है, वहीं गुरु से मिलकर सहज सुख को प्राप्त करता है॥१॥ हे भाई ! गुरु के बिना सहज सुख प्राप्त नहीं हो सकता। भगवान का नाम जपने से ही सहज उत्पन्न होता है और फिर भगवान मिल जाता है॥१॥ रहाउ॥ भगवान का गायन किया यश तभी स्वीकृत होता है, यदि वह सहज ही गाया जाए। सहज के बिना भगवान के गुणों की कथा करना व्यर्थ है। सहज से ही मनुष्य के हृदय में भक्ति उत्पन्न होती है। सहज से ही भगवान हेतु प्रेम एवं उसके मिलन हेतु वैराग्य उत्पन्न होता है। सहज से ही सुख एवं शांति मिलती है। सहज के बिना जीवन व्यर्थ है॥२॥ भगवान की महिमा सदैव सहज ही करनी चाहिए और सहज ही समाधि लगानी चाहिए। सहज ही भगवान की महिमा उच्चारण करनी चाहिए और सहज ही सुरति लगाकर भगवान की भक्ति करनी चाहिए। शब्द द्वारा भगवान मन में आकर बसता है और रसना हरि-रस का पान करती है॥३॥ सत्य की शरण में आने वाला प्राणी सहजावस्था में मृत्यु-भय से मुक्त हो जाता है। यदि प्राणी सच्ची जीवन मर्यादा की कमाई करे तो ईश्वर का नाम सहज ही उसके चित्त में टिक जाता है। वे प्राणी बड़े भाग्यशाली हैं, जिन्होंने ईश्वर को पा लिया है और सहज ही उस हरि के नाम में लीन रहते हैं॥४॥ माया में लिप्त प्राणी कभी सहज-ज्ञान को नहीं पा सकता, क्योंकि माया द्वैत-भाव को बढ़ाती है। मनमुख प्राणी चाहे धार्मिक संस्कार करते हैं परन्तु अहंभावना उनको जला देती है। वे कभी जन्म-मरण के चक्र से निवृत नहीं होते अपितु पुनः पुनः जन्म लेते और मृत्यु को प्राप्त होते हैं॥५॥ जब तक माया के तीनों गुणों-रजस्, तमस्, सत में प्राणी का चित्त लिप्त रहता है, वह सहज का अधिकारी नहीं हो पाता; उक्त तीनों गुण भ्रान्ति उत्पन्न करते हैं। ऐसे प्राणी को

पढ़ने–लिखने एवं बोलने का क्या लाभ है, यदि वह जगत् के मूल (प्रभु) को ही विस्मृत किए रहता है। वास्तव में सहज सुख चौथे पद पर लभ्य होता है, जिसकी प्राप्ति केवल गुरमुख के दामन में ही होती है॥६॥ निर्गुण प्रभु का नाम एक अमूल्य भण्डार है। मनुष्य को इसका ज्ञान सहज अवस्था में ही होता है। भगवान की महिमा गुणवान जीव ही करते हैं। भगवान की महिमा करने वाला सच्ची शोभा वाला बन जाता है। प्रभु भूले हुए जीवों को भी सहज द्वारा अपने साथ मिला लेता है। यह मिलाप शब्द द्वारा होता है॥७॥ सहज ज्ञान के बिना सारा जगत् ज्ञानहीन है। मोह–माया की ममता बिल्कुल अंधेरा है। सहज ज्ञान द्वारा अपार सच्चे शब्द की सूझ हो जाती है पूर्ण गुरु करतार स्वयं ही क्षमा करके अपने साथ मिला लेता है॥ ८॥ सहज ज्ञान द्वारा ही उस अदृश्य, निर्भय, निरंकार ज्योति प्रभु को जिज्ञासु प्राणी पहचानता है। समस्त प्राणियों का एकमात्र पालनहार दाता है। वह सबकी ज्योति को अपनी ज्योति के साथ मिलाने में समर्थ है। पूर्ण शब्द द्वारा तू उस परमात्मा का यशोगान कर जिसका कोई अन्त या सीमा नहीं अथवा सागर की भाँति अपरिमित है॥६॥ भगवान का नाम ही ज्ञानियों का धन है। वह सहज अवस्था में रहकर नाम का व्यापार करते हैं। वे दिन–रात हरि नाम रूपी लाभ प्राप्त करते हैं तथा उनके भण्डार नाम से भरे रहते हैं और कभी समाप्त नहीं होते। हे नानक! यह नाम के भण्डार दाता प्रभु ने स्वयं उन्हें दिए हैं और इन भण्डारों में कोई कमी नहीं आती॥१०॥६॥२३॥

सिरीरागु महला ३ ॥ सतिगुरि मिलिऐ फेरु न पवै जनम मरण दुखु जाइ ॥ पूरै सबदि सभ सोझी होई हरि नामै रहै समाइ ॥ १ ॥ मन मेरे सतिगुर सिउ चितु लाइ ॥ निरमलु नामु सद नवतनो आपि वसै मनि आइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि जीउ राखहु अपुनी सरणाई जिउ राखहि तिउ रहणा ॥ गुर कै सबदि जीवतु मरै गुरमुखि भवजलु तरणा ॥ २ ॥ वडै भागि नाउ पाईऐ गुरमति सबदि सुहाई ॥ आपे मनि वसिआ प्रभु करता सहजे रहिआ समाई ॥ ३ ॥ इकना मनमुखि सबदु न भावै बंधनि बंधि भवाइआ ॥ लख चउरासीह फिरि फिरि आवै बिरथा जनमु गवाइआ ॥ ४ ॥ भगता मनि आनंदु है सचै सबदि रंगि राते ॥ अनदिनु गुण गावहि सद निरमल सहजे नामि समाते ॥ ५ ॥ गुरमुखि अंम्रित बाणी बोलहि सभ आतम रामु पछाणी ॥ एको सेवनि एकु अराधहि गुरमुखि अकथ कहाणी ॥ ६ ॥ सचा साहिबु सेवीऐ गुरमुखि वसै मनि आइ ॥ सदा रंगि राते सच सिउ अपुनी किरपा करे मिलाइ ॥ ७ ॥ आपे करे कराए आपे इकना सुतिआ देइ जगाइ ॥ आपे मेलि मिलाइदा नानक सबदि समाइ ॥ ८ ॥ ७ ॥ २४ ॥

यदि सतिगुरु मिल जाए तो प्राणी जन्म–मरण के चक्र से मुक्ति प्राप्त कर लेता है। उसकी जन्म एवं मृत्यु की पीड़ा निवृत्त हो जाती है। पूर्ण गुरु के उपदेश द्वारा सारी समझ आ जाती है और मनुष्य परमात्मा के नाम में लीन रहता है॥१॥ हे मेरे मन! अपना चित्त गुरु के साथ लगाओ। हरि का नित्य नवीन और पवित्र नाम स्वतः साधु के मन में टिक जाता है॥१॥ रहाउ॥ हे मेरे परमेश्वर! मुझे अपने शरणाश्रय में रखो; आप मुझे जैसे रखोगे, मुझे उसी अवस्था में रहना है। गुरु के द्वारा भवसागर से पार तभी हुआ जा सकता है, यदि गुरु के शब्द द्वारा अहंत्व को मार कर जीवन व्यतीत किया जाए॥२॥ भगवान का नाम बड़ी किस्मत से मिलता है। गुरु की मति पर चलकर नाम–सिमरन से जीवन सुन्दर बन जाता है। जगत् का कर्त्ता प्रभु स्वयं ही मनुष्य के हृदय में आकर बसता है। फिर मनुष्य सहज ही भगवान में लीन रहता है॥३॥ कई मनमुखी प्राणियों को प्रभु का नाम अच्छा नहीं लगता। ऐसे मनमुखी प्राणी अज्ञान–बंधन में बंधे चौरासी लाख योनियों में भटकते फिरते हैं। वे चौरासी लाख योनियों के अंदर बारंबार भटकते हैं और अपना अनमोल जीवन व्यर्थ

गंवा देते हैं॥ ४॥ भगवान के भक्तों के मन में आनंद बना रहता है। क्योंकि वे सच्चे शब्द में ही मग्न रहते हैं। वह सदैव ही रात–दिन भगवान की निर्मल महिमा गायन करते हैं और सहज ही नाम में लीन रहते हैं॥५॥ गुरमुख सदैव अमृत समान मधुर वाणी बोलते हैं, क्योंकि वे समस्त प्राणियों के भीतर प्रभु के अंश आत्मा की समानता को पहचानते हैं। गुरमुखों की कथा अकथनीय है। वे एक प्रभु की सेवा एवं आराधना करते हैं॥६॥ गुरमुख सच्चे प्रभु की आराधना करते हैं और प्रभु गुरमुख के मन में आकर बसता है। जो सदैव ही भगवान के प्रेम में मग्न रहते हैं, उन्हें भगवान अपनी कृपा करके अपने साथ मिला लेता है॥७॥ प्रभु स्वयं ही करता है और स्वयं ही करवाता है। वह माया की निद्रा से भी प्राणियों को जगा देता है। हे नानक! गुरु के शब्द में मिलाकर वह स्वयं ही भक्तों को अपने मिलाप में मिला लेता है॥८॥७॥२४॥

सिरीरागु महला ३ ॥ सतिगुरि सेविऐ मनु निरमला भए पवितु सरीर ॥ मनि आनंदु सदा सुखु पाइआ भेटिआ गहिर गंभीरु ॥ सची संगति बैसणा सचि नामि मनु धीर ॥ १ ॥ मन रे सतिगुरु सेवि निसंगु ॥ सतिगुरु सेविऐ हरि मनि वसै लगै न मैलु पतंगु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सचै सबदि पति ऊपजै सचे सचा नाउ ॥ जिनी हउमै मारि पछाणिआ हउ तिन बलिहारै जाउ ॥ मनमुख सचु न जाणनी तिन ठउर न कतहू थाउ ॥ २ ॥ सचु खाणा सचु पैनणा सचे ही विचि वासु ॥ सदा सचा सालाहणा सचै सबदि निवासु ॥ सभु आतम रामु पछाणिआ गुरमती निज घरि वासु ॥ ३ ॥ सचु वेखणु सचु बोलणा तनु मनु सचा होइ ॥ सची साखी उपदेसु सचु सचे सची सोइ ॥ जिंनी सचु विसारिआ से दुखीए चले रोइ ॥ ४॥ सतिगुरु जिनी न सेविओ से कितु आए संसारि ॥ जम दरि बधे मारीअहि कूक न सुणै पूकार ॥ बिरथा जनमु गवाइआ मरि जंमहि वारो वार ॥ ५ ॥ एहु जगु जलता देखि कै भजि पए सतिगुर सरणा ॥ सतिगुरि सचु दिड़ाइआ सदा सचि संजमि रहणा ॥ सतिगुर सचा है बोहिथा सबदे भवजलु तरणा ॥ ६ ॥ लख चउरासीह फिरदे रहे बिनु सतिगुर मुकति न होई ॥ पड़ि पड़ि पंडित मोनी थके दूजै भाइ पति खोई ॥ सतिगुरि सबदु सुणाइआ बिनु सचे अवरु न कोई ॥ ७ ॥ जो सचै लाए से सचि लगे नित सची कार करंनि ॥ तिना निज घरि वासा पाइआ सचै महलि रहंनि ॥ नानक भगत सुखीए सदा सचै नामि रचंनि ॥ ८ ॥ १७ ॥ ८ ॥ २५ ॥

सतिगुरु की सेवा करने से मनुष्य का मन निर्मल और शरीर पवित्र हो जाता है। समुद्र जैसे गहरे एवं गंभीर प्रभु को पाकर मन आनन्दित हो जाता है और परमसुख प्राप्त करता है। सत्संग में बैठने वाला जिज्ञासु सत्यनाम के रहस्य को जानकर मन में धैर्य प्राप्त करता है॥१॥ हे मेरे मन! तू निःशंक होकर अपने सतिगुरु की सेवा कर। सतिगुरु की श्रद्धापूर्वक सेवा करने से मन में प्रभु का वास होता है और तुझे मोह–माया रूपी मलिनता नहीं लगती अपितु चित्त पूर्णतः पावन हो जाता है॥१॥ रहाउ॥ सत्य नाम द्वारा मनुष्य को लोक–परलोक में बड़ी शोभा प्राप्त होती है। सत्य स्वरूप स्वामी का नाम सत्य है। मैं उन प्राणियों पर बलिहारी जाता हूँ, जिन्होंने अपनी अहंकार–भावना का नाश करके सत्य को पहचान लिया है। मनमुखी प्राणी उस सत्य को नहीं पा सकते, उनको कहीं भी पनाह अथवा ठिकाना प्राप्त नहीं होता॥२॥ गुरमुखों का खाना, पहनना एवं रहना सब सत्य ही है। वह सदैव सच्चे स्वामी की प्रशंसा करते हैं और सत्य नाम के अन्दर उनका निवास है। वे समस्त प्राणियों को ब्रह्मस्वरूप से ही पहचानते हैं और स्वयं भी सदैव गुरु उपदेशानुसार अपने आत्म–स्वरूप में रहते हैं॥३॥ वह सत्य देखते हैं और सत्य ही बोलते हैं और उनके तन व मन के भीतर वह सत्य ही होता है। ऐसे भक्तजन ईश्वर का अनुभूत सत्य दूसरों पर प्रकट करते हैं, परम–सत्य का उपदेश देते हैं,

इसी से जगत् में उनकी सच्ची शोभा होती है। जिन्होंने सत्य को विस्मृत कर दिया है, वह सदा दुखी रहते हैं और विलाप करते हुए असफल जीवन के कारण चले जाते हैं॥४॥ जिन्होंने सतिगुरु की सेवा नहीं की, वह संसार में क्यों आए हैं? काल (मृत्यु) के द्वार पर ऐसे प्राणियों को बांधकर पीटा जाता है और कोई भी उनकी चिल्लाहट व विलाप नहीं सुनता। वह अपना जीवन व्यर्थ ही गंवा लेते हैं और पुनः पुनः मरते और जन्मते रहते हैं अर्थात् उन्हें मुक्ति नहीं मिलती॥५॥ इस संसार को मोह–तृष्णा की अग्नि में जलता देखकर जो जिज्ञासु प्राणी भागकर सतिगुरु की शरण लेते हैं। सतिगुरु उनके हृदय में भगवान का सत्य नाम बसा देते हैं और उन्हें संयम द्वारा सदैव ही सत्य प्रभु के नाम में रहने का जीवन जीना सिखा देते हैं। भवसागर से पार होने के लिए सतिगुरु शाश्वत जहाज है। शब्द द्वारा ही भवसागर से पार हुआ जाता है॥६॥ विमुख प्राणी चौरासी लाख योनियों के अन्दर भटकते रहते हैं और गुरु के बिना उन्हें मुक्ति नहीं मिलती। बड़े–बड़े पण्डित धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन करते और मौनधारी साधु समाधि लगाकर थक गए हैं, किन्तु द्वैत–भाव में लीन होने के कारण वह अपनी प्रतिष्ठा गंवा देते हैं। केवल सतिगुरु ने ही उपदेश प्रदान किया है कि सत्य ईश्वर के सिवाय जगत् में मोक्ष का अन्य कोई साधन नहीं॥७॥ जिन्हें सत्य प्रभु ने अपने नाम–सिमरन में लगाया था, वहीं सत्य प्रभु के नाम सिमरन में लगे थे। फिर वे सदैव निर्मल कर्म करते रहे। उन्होंने मरणोपरांत अपने आत्मस्वरूप में निवास प्राप्त कर लिया है और सच्चे महल में ही रहते हैं। हे नानक! भक्तजन सदैव सुखी रहते हैं। वे सत्य प्रभु के नाम में समा जाते हैं॥८॥१७॥८॥२५॥

सिरीरागु महला ५ ॥ जा कउ मुसकलु अति बणै ढोई कोइ न देइ ॥ लागू होए दुसमना साक भि भजि खले ॥ सभो भजै आसरा चुकै सभु असराउ ॥ चिति आवै ओसु पारब्रहमु लगै न तती वाउ ॥ १ ॥ साहिबु निताणिआ का ताणु ॥ आइ न जाई थिरु सदा गुर सबदी सचु जाणु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जे को होवै दुबला नंग भुख की पीर ॥ दमड़ा पलै ना पवै ना को देवै धीर ॥ सुआरथु सुआउ न को करे ना किछु होवै काजु ॥ चिति आवै ओसु पारब्रहमु ता निहचलु होवै राजु ॥ २ ॥ जा कउ चिंता बहुतु बहुतु देही विआपै रोगु ॥ ग्रिसति कुटंबि पलेटिआ कदे हरखु कदे सोगु ॥ गउणु करे चहु कुंट का घड़ी न बैसणु सोइ ॥ चिति आवै ओसु पारब्रहमु तनु मनु सीतलु होइ ॥ ३ ॥ कामि करोधि मोहि वसि कीआ किरपन लोभि पिआरु ॥ चारे किलविख उनि अघ कीए होआ असुर संघारु ॥ पोथी गीत कवित किछु कदे न करनि धरिआ ॥ चिति आवै ओसु पारब्रहमु ता निमख सिमरत तरिआ ॥ ४ ॥ सासत सिंम्रिति बेद चारि मुखागर बिचरे ॥ तपे तपीसर जोगीआ तीरथि गवनु करे ॥ खटु करमा ते दुगुणे पूजा करता नाइ ॥ रंगु न लगी पारब्रहम ता सरपर नरके जाइ ॥ ५ ॥ राज मिलक सिकदारीआ रस भोगण बिसथार ॥ बाग सुहावे सोहणे चलै हुकमु अफार ॥ रंग तमासे बहु बिधी चाइ लगि रहिआ ॥ चिति न आइओ पारब्रहमु ता सरप की जूनि गइआ ॥ ६ ॥ बहुतु धनाढि अचारवंतु सोभा निरमल रीति ॥ मात पिता सुत भाईआ साजन संगि परीति ॥ लसकर तरकसबंद बंद जीउ जीउ सगली कीत ॥ चिति न आइओ पारब्रहमु ता खड़ि रसातलि दीत ॥ ७ ॥ काइआ रोगु न छिद्रु किछु ना किछु काड़ा सोगु ॥ मिरतु न आवी चिति तिसु अहिनिसि भोगै भोगु ॥ सभ किछु कीतोनु आपणा जीइ न संक धरिआ ॥ चिति न आइओ पारब्रहमु जमकंकर वसि परिआ ॥ ८ ॥ किरपा करे जिसु पारब्रहमु होवै साधू संगु ॥ जिउ जिउ ओहु वधाईऐ तिउ तिउ हरि सिउ रंगु ॥ दुहा सिरिआ का खसमु आपि अवरु न दूजा थाउ ॥ सतिगुर तुठै पाइआ नानक सचा नाउ ॥ ९ ॥ १ ॥ २६ ॥

यदि किसी व्यक्ति पर भारी विपत्ति आ जाए, उसे बचाने के लिए कोई उसकी मदद न करे, उसे मारने के लिए उसके दुश्मन उसके पीछे फिरते हों, यदि उसके रिश्तेदार भी उसका साथ छोड़कर भाग गए हों, उसका हर प्रकार का सहारा खत्म हो गया हो। यदि ऐसी विपत्ति के समय उसे भगवान स्मरण हो जाए तो उसको गर्म हवा भी नहीं छू सकती॥१॥ भगवान निर्बलों का बल है। वह जन्मता एवं मरता नहीं, सदैव स्थिर अर्थात् अनश्वर है। गुरु के शब्द द्वारा सत्य प्रभु को समझ लो॥१॥ रहाउ॥ यदि कोई मनुष्य अति दुर्बल है और भूख मिटाने के लिए भोजन का अभाव है और तन ढांपने के लिए वस्त्र भी नहीं, यदि उसके पास कोई धन-राशि नहीं और न ही उसको कोई दिलासा देने वाला है। यदि कोई भी उसका मनोरथ व इच्छाएँ पूर्ण न करे और उसका कोई भी कार्य सम्पूर्ण न हो। यदि वह अपने हृदय में उस पारब्रह्म का स्मरण कर ले तो उसका शासन सदैव स्थिर हो जाता है॥ २॥ जिसे अधिक चिन्ता लगी हो। उसके शरीर को बहुत सारे रोग लगे हों। जो गृहस्थ में पारिवारिक दुःखों-सुखों में घिरा हुआ है और किसी समय हर्ष एवं किसी समय शोक अनुभव करता हो और चारों दिशाओं में भटकता फिरता है और एक क्षण भर के लिए भी बैठ अथवा निद्रा नहीं कर सकता। यदि वह पारब्रह्म परमेश्वर की आराधना करे तो उसका तन-मन शीतल हो जाते हैं॥३॥ जिस प्राणी को काम-क्रोध-मोहादि ने अपने वश में कर रखा है और जो धन-दौलत के निरन्तर लोभ में कृपण बना रहता है, जिसने चारों ही वज्र पाप एवं अन्य कुकर्म किए हों, दानव-प्रवृत्ति के कारण निर्दयता पूर्वक जिसने जीव-हत्या की हो, जिसने कभी कोई धर्म-पुस्तक उपदेश अथवा ईश्वर-प्रेम की कविता तक न सुनी हो, यदि क्षण भर के लिए भी वह मन प्रभु का नाम सिमरन कर ले तो इस भवसागर से पार हो जाता है॥४॥ चाहे प्राणी को चारों वेद, छः शास्त्र और समस्त स्मृतियाँ कण्ठाग्र हों; चाहे वह पश्चातापी, महान ऋषि एवं योगी हो; और अठसठ तीर्थों की यात्रा करे और चाहे वह छः संस्कारों द्वारा कर्मों को करता हो और सुबह एवं शाम स्नान करके उपासना करता हो, फिर भी यदि उसकी प्रीति परमात्मा के रंग में नहीं रंगी गई तो वह निश्चत ही नरक को जाएगा॥५॥ चाहे मनुष्य के पास राज्याधिकार, धन-सम्पत्ति, शासन एवं अन्य असंख्य स्वादिष्ट भोग हो; उसके पास मनोहर व सुन्दर उद्यान हो और जिसके आदेश की सब पालना करते हों, अथवा रंग तमाशों के विषय विलास में आसक्त व्यक्ति हों, फिर भी यदि वह भगवान का सिमरन नहीं करता, तो वह सर्प-योनि में जन्म लेता है॥६॥ मनुष्य यदि धनवान, सदाचारी, निर्मल व्यवहारी तथा सर्वप्रिय हो, उसे माता-पिता, सुत-भाई एवं अन्य स्वजनों से अनुराग भी हों; उसके पास शस्त्र हों, सेना हो और असंख्य लोग उसकी चापलूसी करते हों, तब भी यदि उसका मन पारब्रह्म के निर्मल नाम से रहित है तो उसे ले जाकर कुंभी नरक में फैंक दिया जाता है॥ ७॥ यदि काया भी पूर्णतः नीरोग है और कोई रोग नहीं, यदि उसको कोई शोक-संताप नहीं, वह मृत्यु का ख्याल तक भी नहीं करता हो और दिन-रात भोग विलास में लीन रहता है, यदि उसने भुजबल से सबको अपने अधीन कर लिया है और उसके मन में कोई भय भी न हो, यदि वह परमात्मा को स्मरण नहीं करता तो वह यमदूत के वश में आ जाता है॥८॥ जिस पर भगवान अपनी कृपा करता है, उसे साधु-संतों की संगति प्राप्त होती है। ज्यों ज्यों सत्संग में चित्त लगता है, उतना ही ज्यादा उस प्रभु के साथ प्रेम प्रगाढ़ हो जाता है। परमात्मा ही लोक-परलोक का स्वामी है, उसके बिना प्राणियों के सुख का और कोई आधार नहीं। परन्तु उस परमेश्वर के पवित्र नाम की प्राप्ति सतिगुरु की प्रसन्नता से ही होती है। हे नानक! यदि सतिगुरु प्रसन्न हो जाए तो मनुष्य को सत्य नाम की उपलब्धि हो जाती है॥६॥१॥२६॥

सिरीरागु महला ५ घरु ५ ॥ जानउ नही भावै कवन बाता ॥ मन खोजि मारगु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धिआनी धिआनु लावहि ॥ गिआनी गिआनु कमावहि ॥ प्रभु किन ही जाता ॥ १ ॥ भगउती रहत जुगता ॥ जोगी कहत मुकता ॥ तपसी तपहि राता ॥ २ ॥ मोनी मोनिधारी ॥ सनिआसी ब्रहमचारी ॥ उदासी उदासि राता ॥ ३ ॥ भगति नवै परकारा ॥ पंडितु वेदु पुकारा ॥ गिरसती गिरसति धरमाता ॥ ४ ॥ इक सबदी बहु रूपि अवधूता ॥ कापड़ी कउते जागूता ॥ इकि तीरथि नाता ॥ ५ ॥ निरहार वरती आपरसा ॥ इकि लूकि न देवहि दरसा ॥ इकि मन ही गिआता ॥ ६ ॥ घाटि न किन ही कहाइआ ॥ सभ कहते है पाइआ ॥ जिसु मेले सो भगता ॥ ७ ॥ सगल उकति उपावा ॥ तिआगी सरनि पावा ॥ नानकु गुर चरणि पराता ॥ ८ ॥ २ ॥ २७ ॥

मैं नहीं जानता कि प्रभु को कौन–सी बातें अच्छी लगती हैं। हे मेरे मन! प्रभु को प्रसन्न करने का मार्ग खोज॥१॥ रहाउ॥ ध्यानी इन्सान समाधि लगाकर भगवान में ध्यान लगाता है। ज्ञानी ज्ञान–मार्ग द्वारा प्रभु को समझने का प्रयास करता है। परन्तु कोई विरला पुरुष ही भगवान को जानता है॥१॥ भगवती जन अपनी धार्मिक क्रियाओं में लीन रहता है। योगी अष्टांग–भाव से मुक्ति की कल्पना करते हैं। तपस्वी लोग तपस्या में ही कल्याण मानते हैं॥२॥ मौनी साधु मौन धारण करने में ही ईश्वर की प्राप्ति संभव मानते हैं। संन्यासी ब्रह्मचारी बन गया है। उदासी वैराग्य में मग्न हुआ है॥३॥ कोई कहता है कि वह नौ प्रकार की भक्ति करता है। पण्डित वेदों को सस्वर उच्चारण करते हैं। गृहस्थ–जन धर्मशास्त्रानुसार यज्ञ–दानादि धर्मों के पालन में ही कल्याण समझते हैं॥४॥ कोई साधु एक नाम 'अलख' ही बोलता है। कोई साधु बहुरूपिया बन गया है। कोई साधु नग्न घूमता है और अवधूत कहलाता है। कई साधु शरीर पर विभूति रमाने में ही कल्याण समझते हैं। कापड़िए साधु केसरिया कपड़े पहनते हैं अर्थात् राम–कृष्ण का यशोगान करने वाले कविजन काव्य–गान में मुक्ति समझते हैं, जागूता अर्थात् रात्रि जागरण करने वाले लोग भी जगराते में ही मोक्ष सम्भव मानते हैं। कुछ लोग तीर्थ–यात्रा में स्नान द्वारा भी प्रभु–प्राप्ति की संभावना स्वीकारते हैं॥५॥ निराहार रहने वाले व्रत को ही ईश्वर मिलन का साधन मानते हैं, ऊँची जाति के लोग निम्न जाति से परहेज करते हैं। कुछ लोग गुफाओं में छिपे रहते हैं और किसी को अपने दर्शन नहीं देते। कुछ लोग अपने चित्त के भीतर ही बुद्धिमान हैं॥६॥ कोई भी अपने आपको कम नहीं कहता। हर कोई कहता है कि उसने भगवान को पा लिया है। लेकिन भगवान का भक्त वही होता है जिसे भगवान अपने साथ मिला लेता है॥७॥ हे नानक! मैं समस्त युक्तियाँ एवं उपाय त्याग कर भगवान की शरण में आ गया हूँ। भगवान की प्राप्ति हेतु गुरु के चरणों में पड़ना सर्वोत्तम युक्ति है॥८॥२॥२७॥

१ ਓੰ सतिगुर प्रसादि ॥

सिरीरागु महला १ घरु ३ ॥ जोगी अंदरि जोगीआ ॥ तूं भोगी अंदरि भोगीआ ॥ तेरा अंतु न पाइआ सुरगि मछि पइआलि जीउ ॥ १ ॥ हउ वारी हउ वारणै कुरबाणु तेरे नाव नो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुधु संसारु उपाइआ ॥ सिरे सिरि धंधे लाइआ ॥ वेखहि कीता आपणा करि कुदरति पासा ढालि जीउ ॥ २ ॥ परगटि पाहारै जापदा ॥ सभु नावै नो परतापदा ॥ सतिगुर बाझु न पाइओ सभ मोही माइआ जालि जीउ ॥ ३ ॥ सतिगुर कउ बलि जाईऐ ॥ जितु मिलिऐ परम गति पाईऐ ॥ सुरि नर मुनि जन लोचदे सो सतिगुरि दीआ बुझाइ जीउ ॥ ४ ॥ सतसंगति कैसी जाणीऐ ॥ जिथै एको नामु वखाणीऐ ॥ एको नामु हुकमु है नानक सतिगुरि दीआ बुझाइ जीउ ॥ ५ ॥ इहु जगतु भरमि भुलाइआ ॥ आपहु

तुधु खुआइआ ॥ परतापु लगा दोहागणी भाग जिना के नाहि जीउ ॥ ६ ॥ दोहागणी किआ नीसाणीआ ॥ खसमहु घुथीआ फिरहि निमाणीआ ॥ मैले वेस तिना कामणी दुखी रैणि विहाइ जीउ ॥ ७ ॥ सोहागणी किआ करमु कमाइआ ॥ पूरबि लिखिआ फलु पाइआ ॥ नदरि करे कै आपणी आपे लए मिलाइ जीउ ॥ ८ ॥ हुकमु जिना नो मनाइआ ॥ तिन अंतरि सबदु वसाइआ ॥ सहीआ से सोहागणी जिन सह नालि पिआरु जीउ ॥ ९ ॥ जिना भाणे का रसु आइआ ॥ तिन विचहु भरमु चुकाइआ ॥ नानक सतिगुरु ऐसा जाणीऐ जो सभसै लए मिलाइ जीउ ॥ १० ॥ सतिगुरि मिलिऐ फलु पाइआ ॥ जिनि विचहु अहकरणु चुकाइआ ॥ दुरमति का दुखु कटिआ भागु बैठा मसतकि आइ जीउ ॥ ११ ॥ अंम्रितु तेरी बाणीआ ॥ तेरिआ भगता रिदै समाणीआ ॥ सुख सेवा अंदरि रखिऐ आपणी नदरि करहि निसतारि जीउ ॥ १२ ॥

हे ईश्वर ! तू सृष्टि में अनेक रूपों में विचरण कर रहा है। योगियों में तुम योगीराज हो एवं भोगियों में तुम महाभोगी हो। स्वर्ग लोक के देवता, मृत्युलोक के वासी तथा पाताल के नागादि जीवों ने तुम्हारा भेद नहीं पाया॥१॥ मैं तुझ पर कुर्बान हूँ, मैं तेरे पावन नाम पर न्यौछावर हूँ॥१॥ रहाउ॥ तुम सृष्टि कर्त्ता हो, तुम ने ही संसार की रचना करके उनकी किस्मत निर्धारत करके सांसारिक कार्यों में लगाया है। अपनी रचना का तुम स्वयं ध्यान रखते हो और अपनी माया–शक्ति से इस संसार की चौपड़ पर निरन्तर पासा फैंक रहे हो॥२॥ समूचे विश्व में तुम प्रत्यक्ष दिखते हो। प्रत्येक प्राणी तेरे नाम की कामना करता है। किन्तु सतिगुरु के बिना तुम्हें कोई भी प्राप्त नहीं कर सकता। समस्त प्राणी मोह–माया के जाल में लुभायमान होकर फँसे हुए हैं॥३॥ मैं सतिगुरु पर बलिहार जाता हूँ, जिनके मिलन से परमगति प्राप्त होती है। सतिगुरु ने मुझे उस प्रभु बारे बताया है जिस परमात्मा को पाने की देवता, मानव और ऋषि–मुनि कामना करते हैं॥४॥ सत्संगति किस प्रकार जानी जा सकती है? एक प्रभु के नाम का वहाँ उच्चारण होता है। हे नानक ! हरिनाम ही ईश्वर का हुक्म है, यह बात मुझे गुरु जी ने समझा दी है॥ ५॥ यह संसार संदेह के कारण भ्रम भुलैया में पड़ा हुआ है। हे प्रभु ! तुमने स्वयं ही प्राणियों के कर्मानुसार उन्हें भुलाया है। वे प्राणी जिनके भाग्य में परमात्मा का मिलन नहीं, वियोगिनी स्त्री के समान प्रतिदिन तड़पते रहते हैं॥६॥ दुहागिन नारियों के क्या लक्षण हैं? वे पति द्वारा उपेक्षित मान–रहित होकर भटकती रहती हैं। उन दुर्भाग्यशाली नारियों की वेश–भूषा मलिन होती है और प्रतिदिन तड़प–तड़प कर रात्रि बिताती हैं॥७॥ सुहागिन ने आखिर क्या शुभ कर्म कमाया है? उसे ईश्वर ने पूर्व जन्म के किसी उत्तम कर्म का फल प्रदान किया है। अपनी कृपा–दृष्टि करके परमेश्वर उनको अपने साथ मिला लेता है॥८॥ जिन जिज्ञासु प्राणियों ने परमात्मा के आदेश की पालना की है, वे गुरु का सच्चा उपदेश मन में धारण करते हैं। ऐसी सखियाँ सत्यवती पत्नी हैं, जो अपने पिया के साथ प्रीति करती हैं॥६॥ जो ईश्वर की इच्छानुसार प्रसन्नता अनुभव करती हैं, उनके भीतर से संदेह निवृत्त हो जाते हैं। हे नानक ! सतिगुरु ऐसा दयालु है जो सभी को भगवान के साथ मिला देता है॥१०॥ जो अपने अहंकार को नाश कर देता है, वह सतिगुरु से मिलन करके हरि–नाम रूपी फल प्राप्त कर लेता है। उसकी मंद–बुद्धि की पीड़ा निवृत्त हो जाती है और उसके मस्तक पर भाग्योदय हो जाता है॥११॥ हे प्रभु ! तेरी वाणी अमृत समान है। यह तेरे भक्तों के मन में रमी हुई है। तुम्हारी सेवा में ही वास्तविक सुख की उपलब्धि है और अपनी कृपा–दृष्टि से तुम अपने भक्तों को भवसागर से पार कर देते हो॥१२॥

सतिगुरु मिलिआ जाणीऐ ॥ जितु मिलिऐ नामु वखाणीऐ ॥ सतिगुर बाझु न पाइओ सभ थकी करम कमाइ जीउ ॥ १३ ॥ हउ सतिगुर विटहु घुमाइआ ॥ जिनि भ्रमि भुला मारगि पाइआ॥ नदरि करे जे आपणी आपे लए रलाइ जीउ ॥ १४ ॥ तूं सभना माहि समाइआ ॥ तिनि करतै आपु लुकाइआ

॥ नानक गुरमुखि परगटु होइआ जा कउ जोति धरी करतारि जीउ ॥ १५ ॥ आपे खसमि निवाजिआ ॥ जीउ पिंडु दे साजिआ ॥ आपणे सेवक की पैज रखीआ दुइ कर मसतकि धारि जीउ ॥ १६ ॥ सभि संजम रहे सिआणपा ॥ मेरा प्रभु सभु किछु जाणदा ॥ प्रगट प्रतापु वरताइओ सभु लोकु करै जैकारु जीउ ॥ १७ ॥ मेरे गुण अवगन न बीचारिआ ॥ प्रभि अपणा बिरदु समारिआ ॥ कंठि लाइ कै रखिओनु लगै न तती वाउ जीउ ॥ १८ ॥ मै मनि तनि प्रभू धिआइआ ॥ जीइ इछिअड़ा फलु पाइआ ॥ साह पातिसाह सिरि खसमु तूं जपि नानक जीवै नाउ जीउ ॥ १९ ॥ तुधु आपे आपु उपाइआ ॥ दूजा खेलु करि दिखलाइआ ॥ सभु सचो सचु वरतदा जिसु भावै तिसै बुझाइ जीउ ॥ २० ॥ गुर परसादी पाइआ ॥ तिथै माइआ मोहु चुकाइआ ॥ किरपा करि कै आपणी आपे लए समाइ जीउ ॥ २१ ॥ गोपी नै गोआलीआ ॥ तुधु आपे गोइ उठालीआ ॥ हुकमी भांडे साजिआ तूं आपे भंनि सवारि जीउ ॥ २२ ॥ जिन सतिगुर सिउ चितु लाइआ ॥ तिनी दूजा भाउ चुकाइआ ॥ निरमल जोति तिन प्राणीआ ओइ चले जनमु सवारि जीउ ॥ २३ ॥ तेरीआ सदा सदा चंगिआईआ ॥ मै राति दिहै वडिआईआं ॥ अणमंगिआ दानु देवणा कहु नानक सचु समालि जीउ ॥ २४ ॥ १ ॥

सतिगुरु से मिलन तभी समझा जाता है। यदि इस मिलन द्वारा ईश्वर के नाम का उच्चारण किया जाए। सतिगुरु के बिना किसी को भी प्रभु प्राप्त नहीं हुआ। सारी दुनिया धर्म–कर्म करते–करते थक गई है॥१३॥ मैं अपने सतिगुरु पर बलिहार जाता हूँ, जिसने मुझे माया–तृष्णा के भ्रमों से निकाल कर सद्मार्ग लगाया है। यदि सतिगुरु अपनी कृपा–दृष्टि करे तो वह मनुष्य को अपनी संगति में मिला लेता है॥१४॥ हे भगवान! तुम समस्त प्राणियों के भीतर समाए हुए हो। ईश्वर ने अपनी ज्योति गुप्त रूप में मनुष्य के हृदय में रखी हुई है। हे नानक! जिस मनुष्य के हृदय में ईश्वर ने अपनी ज्योति रखी हुई हैं, ईश्वर गुरु के माध्यम से उस मनुष्य के हृदय में प्रगट हो जाता है॥१५॥ हे ईश्वर! तुमने ही तन की मूर्ति गढ़कर उसमें प्राणों का संचार करके मुझे पैदा किया है। अपने दोनों हाथ उसके मस्तक पर रखकर प्रभु अपने सेवक की प्रतिष्ठा बरकरार रखता है॥१६॥ समूह अटकलें और चतुराईयाँ किसी काम नहीं आती। मेरा प्रभु सब कुछ जानता है। ईश्वर ने मेरा प्रताप सब ओर प्रकट किया है और सब मेरी जय–जयकार करने लगे हैं॥१७॥ परमात्मा ने मेरे गुणों–अवगुणों पर ध्यान नहीं दिया, उसने तो केवल अपने विरद की लाज निभाई है। ईश्वर ने अपने गले लगा कर मेरी रक्षा की है और मुझे गर्म हवा भी नहीं छूती॥१८॥ अपने तन–मन से मैंने प्रभु की स्तुति की है। इसलिए मुझे मनोवांछित फल प्राप्त हुआ है। हे ईश्वर! तुम सम्राटों के भी सम्राट हो, इसलिए हे नानक! मैं तुम्हारे ही नाम–सिमरन से जीवन धारण करता हूँ॥१९॥ हे भगवान! तुमने स्वयं ही सृष्टि की रचना की है और जगत् रूपी खेल को साज कर प्रत्यक्ष किया है। समस्त स्थानों पर सत्य प्रभु के सत्य हुक्म का प्रसार हो रहा है, किन्तु उसके मूल रहस्य को वही समझता है जिसे तुम समझाते हो॥२०॥ गुरु की कृपा से जिसने भगवान को पा लिया है, भगवान ने उसका माया का मोह नष्ट कर दिया है। अपनी कृपा करके वह स्वयं अपने साथ मिला लेता है॥ २१॥ हे प्रभु! तुम ही गोपी हो, तुम ही यमुना हो, तुम ही कृष्ण हो। तूने ही कृष्ण रूप में गोवर्धन पर्वत अपनी उंगली पर उठाया था। तूने ही अपने हृदय में जीवों के शरीर रूपी बर्तन निर्मित किए हैं। तुम स्वयं ही इन शरीर रूपी बर्तनों को नष्ट करते एवं निर्माण करते हो॥२२॥ जिन्होंने अपना चित्त सतिगुरु से लगाया है, उन्होंने माया का मोह दूर कर दिया है। ऐसे प्राणियों की ज्योति निर्मल हो जाती है। वह अपने जीवन को संवार कर परलोक में जाते हैं॥२३॥ हे भगवान! तुम हमेशा ही मुझ पर उपकार करते रहते हो। मुझ पर कृपा करो चूंकि मैं दिन–रात तेरी महिमा करता रहूँ। तू इतना दयालु है कि बिना माँगे ही जीवों को दान देता रहता है। हे नानक! हमेशा ही भगवान का सिमरन करते रहो॥२४॥१॥

सिरीरागु महला ५ ॥ पै पाइ मनाई सोइ जीउ ॥ सतिगुर पुरखि मिलाइआ तिसु जेवडु अवरु न कोइ जीउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गोसाई मिहंडा इठड़ा ॥ अंम अबे थावहु मिठड़ा ॥ भैण भाई सभि सजणा तुधु जेहा नाही कोइ जीउ ॥ १ ॥ तेरै हुकमे सावणु आइआ ॥ मै सत का हलु जोआइआ ॥ नाउ बीजण लगा आस करि हरि बोहल बखस जमाइ जीउ ॥ २ ॥ हउ गुर मिलि इकु पछाणदा ॥ दुया कागलु चिति न जाणदा ॥ हरि इकतै कारै लाइओनु जिउ भावै तिंवै निबाहि जीउ ॥ ३ ॥ तुसी भोगिहु भुंचहु भाईहो ॥ गुरि दीबाणि कवाइ पैनाइओ ॥ हउ होआ माहरु पिंड दा बंनि आदे पंजि सरीक जीउ ॥ ४ ॥ हउ आइआ साम्है तिहंडीआ ॥ पंजि किरसाण मुजेरे मिहडिआ ॥ कंनु कोई कढि न हंघई नानक वुठा घुघि गिराउ जीउ ॥ ५ ॥ हउ वारी घुंमा जावदा ॥ इक साहा तुधु धिआइदा ॥ उजड़ु थेहु वसाइओ हउ तुध विटहु कुरबाणु जीउ ॥ ६ ॥ हरि इठै नित धिआइदा ॥ मनि चिंदी सो फलु पाइदा ॥ सभे काज सवारिअनु लाहीअनु मन की भुख जीउ ॥ ७ ॥ मै छडिआ सभो धंधड़ा ॥ गोसाई सेवी सचड़ा ॥ नउ निधि नामु निधानु हरि मै पलै बधा छिकि जीउ ॥ ८ ॥ मै सुखी हूं सुखु पाइआ ॥ गुरि अंतरि सबदु वसाइआ ॥ सतिगुरि पुरखि विखालिआ मसतकि धरि कै हथु जीउ ॥ ९ ॥ मै बधी सचु धरम साल है ॥ गुरसिखा लहदा भालि कै ॥ पैर धोवा पखा फेरदा तिसु निवि निवि लगा पाइ जीउ ॥ १० ॥ सुणि गला गुर पहि आइआ ॥ नामु दानु इसनानु दिड़ाइआ ॥ सभु मुकतु होआ सैसारड़ा नानक सची बेड़ी चाड़ि जीउ ॥ ११ ॥ सभ स्रिसटि सेवे दिनु राति जीउ ॥ दे कंनु सुणहु अरदासि जीउ ॥ ठोकि वजाइ सभ डिठीआ तुसि आपे लइअनु छडाइ जीउ ॥ १२ ॥ हुणि हुकमु होआ मिहरवाण दा ॥ पै कोइ न किसै रञाणदा ॥ सभ सुखाली वुठीआ इहु होआ हलेमी राजु जीउ ॥ १३ ॥ झिंमि झिंमि अंम्रितु वरसदा ॥ बोलाइआ बोली खसम दा ॥ बहु माणु कीआ तुधु उपरे तूं आपे पाइहि थाइ जीउ ॥ १४ ॥ तेरिआ भगता भुख सद तेरीआ ॥ हरि लोचा पूरन मेरीआ ॥ देहु दरसु सुखदातिआ मै गल विचि लैहु मिलाइ जीउ ॥ १५ ॥ तुधु जेवडु अवरु न भालिआ ॥ तूं दीप लोअ पइआलिआ ॥ तूं थानि थनंतरि रवि रहिआ नानक भगता सचु अधारु जीउ ॥ १६ ॥ हउ गोसाई दा पहिलवानड़ा ॥ मै गुर मिलि उच दुमालड़ा ॥ सभ होई छिंझ इकठीआ दयु बैठा वेखै आपि जीउ ॥ १७ ॥ वात वजनि टंमक भेरीआ ॥ मल लथे लैदे फेरीआ ॥ निहते पंजि जुआन मै गुर थापी दिती कंडि जीउ ॥ १८ ॥ सभ इकठे होइ आइआ ॥ घरि जासनि वाट वटाइआ ॥ गुरमुखि लाहा लै गए मनमुख चले मूलु गवाइ जीउ ॥ १९ ॥ तूं वरना चिहना बाहरा ॥ हरि दिसहि हाजरु जाहरा ॥ सुणि सुणि तुझै धिआइदे तेरे भगत रते गुणतासु जीउ ॥ २० ॥ मै जुगि जुगि दयै सेवड़ी ॥ गुरि कटी मिहडी जेवड़ी ॥ हउ बाहुड़ि छिंझ न नचऊ नानक अउसरु लधा भालि जीउ ॥ २१ ॥ २ ॥ २९ ॥

मैं सतिगुरु के चरणों में पड़कर मन्नत करता हूँ, क्योंकि महापुरुष सतिगुरु ने मुझे उस ईश्वर से मिला दिया है। उस जैसा महान् जगत् में अन्य कोई भी नहीं॥१॥ रहाउ॥ मेरा मालिक प्रभु मुझे बहुत प्रिय है। वह माता और पिता से बहुत मीठा लगता है। हे प्रभु! बहन--भाई, मित्रादि स्वजनों में तुम्हारे जैसा अन्य कोई नहीं॥१॥ तुम्हारे आदेश से श्रावण का महीना आया है। तुम्हारी प्रसन्नता हेतु मैंने सत्य का हल जोड़ा है। इस आशा में कि ईश्वर, अपनी कृपा से दातों का अम्बार उत्पन्न करेगा, मैं नाम बीज बोने लगा हूँ॥२॥ हे ईश्वर! गुरु से मिलन के कारण मैं केवल तुम्हें ही पहचानता हूँ। मैं अपने मन के अन्दर किसी अन्य हिसाब को नहीं जानता हूँ। ईश्वर ने एक कार्य मेरी जिम्मेदारी में लगाया है, जिस तरह उसको अच्छा लगता है, उसी तरह मैं उसको सम्पन्न करता हूँ॥३॥ हे मेरे भाईयो! आप नाम

पदार्थ सेवन करो एवं आनंद मानो। परमेश्वर के दरबार में गुरदेव ने मुझे भक्ति रूपी पोशाक भेंटकर प्रतिष्ठा प्रदान की है। मैं शरीर रूपी गांव का स्वामी हो गया हूँ और काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार इत्यादि अपने पांचों शरीकों को मैंने बांध लिया है॥४॥ हे प्रभु! जब से मैंने तेरी शरण ली है। तब से मेरी पांचों ज्ञानेन्द्रियाँ मेरे सेवकों की भाँति मेरी आज्ञा में रहती हैं। मेरे खिलाफ अब कोई कान (सिर) उठाने का साहस नहीं कर सकता। हे नानक! इसलिए शरीर रूपी गांव आध्यात्मिक सम्पदा की सघन्ता से बस गया है॥५॥ हे मेरे प्रभु! मैं तुझ पर बलिहार हूँ, कुर्बान हूँ'; श्वास–श्वास में तुम्हारा ही नाम जपता हूँ। मेरा मन ऊजड़–गांव (गुण–रहित) की भाँति था, तुमने उसे बसा दिया है, इसलिए मैं तुझ पर बलिहार जाता हूँ॥६॥ हे मेरे प्रियतम प्रभु! तेरा मैं सदैव ही सिमरन करता हूँ और जैसी मेरी अभिलाषा थी मेरी वह कामना पूरी हो गई है। तुमने मेरे समस्त कार्य संवार दिए हैं और मेरी आत्मा की भूख निवृत्त कर दी है॥७॥ मैंने संसार के मिथ्या कार्य त्याग दिए हैं। मैं सृष्टि के स्वामी की आराधना करता हूँ। नवनिधि को देने में समर्थ कल्पवृक्ष–समान हरिनाम मुझे मिला है, जिसे बड़े यत्न से मैंने अन्तर्मन में संजोया हुआ है॥८॥ मैं बहुत सुखी हूँ चूंकि मैंने सुख प्राप्त कर लिया है। गुरु ने मेरे हृदय में भगवान का नाम बसा दिया है। सतिगुरु ने मेरे माथे पर हाथ रखकर अर्थात् आशीर्वाद देकर मुझे भगवान के साक्षात् दर्शन करवा दिए हैं॥६॥ मैंने सच्चाई के मन्दिर की धर्मशाला बनाई है। गुरु के शिष्यों को ढूँढ कर मैं यहाँ पर लेकर आया हूँ। मैं उनके चरण धोता हूँ, पंखा झुलाता और विनम्रतापूर्वक झुक–झुककर उनके चरण स्पर्श करता हूं॥१०॥ गुरु के शिष्यों से बातें सुनकर मैं गुरु के पास आया हूँ। गुरु ने मुझे नाम, दान–पुण्य और स्नान निश्चित करवा दिया है। हे नानक! नाम रूपी सच्ची नाव पर सवार होने के कारण सारा संसार बच गया है॥ ११॥ हे प्रभु! सारी सृष्टि दिन–रात तेरी सेवा का फल पाती है। हे स्वामी! अपना कान देकर मेरी प्रार्थना सुनो। मैंने सभी को भलीभांति निर्णय करके देख लिया है। केवल तुम ही अपनी प्रसन्नता द्वारा प्राणियों को मोक्ष प्रदान करते हो॥१२॥ अब मेहरबान परमात्मा का आदेश जारी हो गया है। कोई भी किसी को दुखी नहीं करता। सारी दुनिया सुखपूर्वक रहती है। क्योंकि अब यहाँ सात्विक का राज्य स्थापित हो गया है॥१३॥ सतिगुरु मेघ की भाँति अमृत बरसा रहे हैं। मैं उस तरह बोलता हूँ, जिस तरह भगवान मुझे बुलाता है। हे दाता! मुझे तुम पर बड़ा गर्व है। तुम स्वयं ही मेरे कर्मों को निर्दिष्ट कर सफल बनाते हो॥१४॥ हे प्रभु! तुम्हारे भक्तों को सदा तुम्हारे दर्शनों की लालसा है। हे प्रभु! मेरी मनोवांछित कामनाओं को सफल करो। हे सुखदाता! मुझे अपने दर्शन देकर अपने गले से लगा लो॥१५॥ तेरे जैसा महान् मुझे अन्य कोई नहीं मिला। तुम धरती, आकाश व पाताल में व्यापक हो। सातों द्वीपों और १४ लोकों में तुम्हारा ही आलोक प्रसारित है। हे नानक! भक्तों को परमात्मा का ही सहारा है॥१६॥ मैं अपने मालिक प्रभु का एक छोटा–सा पहलवान हूँ। गुरु से मिलकर मैंने ऊँची दस्तार सजा ली है। मेरी कुश्ती देखने के लिए तमाशा देखने वालों की भीड़ एकत्र हो गई है और दयालु परमात्मा स्वयं बैठ कर देख रहा है॥१७॥ अखाड़े में बाजे, नगाड़े और तूतीयाँ बज रहे हैं। पहलवान अखाड़े के अन्दर प्रवेश करते हैं और इसके आसपास चक्कर काट रहे हैं। मैंने अकेले ही पाँच जवानों (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) को पराजित कर दिया है और गुरु ने मेरी पीठ पर शाबाश (आशीर्वाद) दी है॥१८॥ समस्त जीव जन्म लेकर दुनिया में इकट्ठे हुए हैं। ये विभिन्न योनियों में पड़कर अपने घर परलोक में चले जाएँगे। गुरमुख नाम रूपी पूँजी का लाभ प्राप्त करके जाएँगे, जबकि मनमुख अपना मूल भी गंवा देंगे॥१६॥ हे प्रभु! तेरा कोई वर्ण अथवा चिन्ह नहीं। परमात्मा प्रत्यक्ष ही सबको दर्शन देता है। हे गुणों के भण्डार! हे पारब्रह्म–परमेश्वर! तुम्हारे भक्त तुम्हारा यशोगान निरन्तर सुनते, तेरा सुमिरन करते और तेरे ही रंग में मग्न हैं॥२०॥ मैं समस्त युगों में भगवान की भक्ति करता रहा हूँ। गुरु ने माया–बन्धन की बेड़ियाँ काट फैंकी है। मैं संसार के अखाड़े में पुनः पुनः दंगल करने नहीं जाऊँगा, क्योंकि हे नानक! मैंने मनुष्य–जीवन का सही मूल्य जानकर उसे सार्थक कर लिया है॥ २१॥२॥२६॥

१ ਓ सतिगुर प्रसादि ॥ सिरीरागु महला १ पहरे घरु १ ॥

पहिलै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा हुकमि पइआ गरभासि ॥ उरध तपु अंतरि करे वणजारिआ मित्रा खसम सेती अरदासि ॥ खसम सेती अरदासि वखाणै उरध धिआनि लिव लागा ॥ ना मरजादु आइआ कलि भीतरि बाहुड़ि जासी नागा ॥ जैसी कलम वुड़ी है मसतकि तैसी जीअड़े पासि ॥ कहु नानक प्राणी पहिलै पहरै हुकमि पइआ गरभासि ॥ १ ॥ दूजै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा विसरि गइआ धिआनु ॥ हथो हथि नचाईऐ वणजारिआ मित्रा जिउ जसुदा घरि कानु ॥ हथो हथि नचाईऐ प्राणी मात कहै सुतु मेरा ॥ चेति अचेत मूड़ मन मेरे अंति नही कछु तेरा ॥ जिनि रचि रचिआ तिसहि न जाणै मन भीतरि धरि गिआनु ॥ कहु नानक प्राणी दूजै पहरै विसरि गइआ धिआनु ॥ २ ॥ तीजै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा धन जोबन सिउ चितु ॥ हरि का नामु न चेतही वणजारिआ मित्रा बधा छुटहि जितु ॥ हरि का नामु न चेतै प्राणी बिकलु भइआ संगि माइआ ॥ धन सिउ रता जोबनि मता अहिला जनमु गवाइआ ॥ धरम सेती वापारु न कीतो करमु न कीतो मितु ॥ कहु नानक तीजै पहरै प्राणी धन जोबन सिउ चितु ॥ ३ ॥ चउथै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा लावी आइआ खेतु ॥ जा जमि पकड़ि चलाइआ वणजारिआ मित्रा किसै न मिलिआ भेतु ॥ भेतु चेतु हरि किसै न मिलिओ जा जमि पकड़ि चलाइआ ॥ झूठा रुदनु होआ दुोआलै खिन महि भइआ पराइआ ॥ साई वसतु परापति होई जिसु सिउ लाइआ हेतु ॥ कहु नानक प्राणी चउथै पहरै लावी लुणिआ खेतु ॥ ४ ॥ १ ॥

{प्रस्तुत पद में गुरु नानक देव जी ने प्राणी को वणजारा एवं आयु को रात्रि संबोधित करके एक रूपक प्रस्तुत किया है। उल्लेखनीय है कि गुरु जी ने वणजारों के एक गांव में एक वणजारे को पुत्र–शोक पर उपदेश प्रदान किया था।}

हे मेरे वणजारे मित्र ! जीवन रूपी रात्रि के प्रथम प्रहर में ईश्वर के आदेशानुसार प्राणी माता के गर्भ में आता है। हे मेरे वणजारे मित्र ! वह गर्भ में उलटा लटका हुआ तपस्या करता है और भगवान के समक्ष प्रार्थना करता रहता है। वह उलटा लटका हुआ भगवान के ध्यान में सुरति लगाता है। वह रस्मों की मर्यादा के बिना दुनिया में नग्न आता है और मरणोपरांत नग्न ही जाता है। विधाता ने प्राणी के कर्मानुसार उसके मस्तक पर जो भाग्य रेखाएँ खींच दी हैं, उसी के अनुसार उसे सुख–दुख उपलब्ध होते हैं। गुरु नानक देव जी कहते हैं कि रात्रि के प्रथम–प्रहर में ईश्वर की इच्छानुसार प्राणी गर्भ में प्रवेश करता है॥१॥ हे मेरे वणजारे मित्र ! जीवन रूपी रात्रि के द्वितीय प्रहर में मनुष्य परमेश्वर के सिमरन को विस्मृत कर देता है। अर्थात्–जब प्राणी गर्भ से बाहर आता और जन्म लेता है तो गर्भ में की गई प्रार्थना को भूल जाता है। उसके परिजन, भाई–बन्धु सब उसे ऐसे नचाते हैं, हर्षित होते हैं, जैसे माता यशोदा के घर कृष्ण नचाया जाता था। हे मेरे वणजारे मित्र ! परिवार के समस्त लोग नश्वर प्राणी उस बच्चे को उछालते–खेलाते हैं और माता मोह–वश उसे अपना पुत्र कहकर बड़ा मान करती है। हे मेरे अज्ञानी एवं मूर्ख मन ! परमात्मा को स्मरण कर। अंतकाल तेरा कोई साथी नहीं होना। तू उसको नहीं समझता जिसने रचना रची है। अब तू अपने मन में ज्ञान प्राप्त कर ले। गुरु जी कहते हैं कि रात्रि के द्वितीय प्रहर में प्राणी परमेश्वर का ध्यान भुला देता है॥२॥ हे वणजारे मित्र ! जीवन रूपी रात्रि के तृतीय प्रहर में प्राणी का मन, धन–यौवन (स्त्री–यौवन) में रम जाता है। वह हरि–नाम का चिंतन नहीं करता, जिसके द्वारा वह संसार–बंधन से मुक्ति पा सकता है। नश्वर प्राणी प्रभु के नाम का सुमिरन नहीं करता और सांसारिक पदार्थों के साथ व्याकुल रहता है। वह भार्या–प्रेम की

आसक्ति और यौवन की मस्ती में ऐसा लीन हो जाता है कि इस अमूल्य जीवन को व्यर्थ ही गंवा देता है। वह न तो धर्मानुसार आचरण करता है और न ही शुभ कर्मों के साथ मैत्री बनाता है। गुरु जी कहते हैं कि हे नानक ! मनुष्य का जीवन रूपी तृतीय प्रहर भी धन–यौवन की तृष्णा में नष्ट हो जाता है॥३॥ हे वणजारे मित्र ! जीवन रूपी रात्रि के चौथे प्रहर (वृद्धावस्था) में जीवन–रूपी कृषि को काटने के लिए यमदूत उपस्थित हो जाते हैं अर्थात् देहि की कृषि तब तक पककर कटने को तैयार हो जाती है। हे वणजारे मित्र ! जब यमदूत उसको पकड़कर चल देते हैं तो प्राणों के अलग होने का रहस्य किसी को भी पता नहीं चलता। इस रहस्य बारे कि कब यमदूतों ने प्राणी को पकड़कर आगे ले जाना है, किसी को भी पता नहीं लगा। सो हरि का चिन्तन कर, हे मनुष्य ! झूठा है रुदन उसके आसपास। एक क्षण में ही प्राणी परदेसी हो जाता है। सगे–संबंधी रुदन करते हैं किन्तु वह भी स्वार्थपूर्ण होने के कारण सब मिथ्या है। आगामी लोक में प्राणी को वही उपलब्धि होती है, जिसमें उसने चित्त एकाग्र किया होता है। गुरु नानक देव जी कहते हैं कि हे नानक ! जीवन रूपी चौथे प्रहर में मानव जीवन पकी कृषि लावी द्वारा काट ली जाती है। अर्थात् वृद्धावस्था में देहि का अन्त निकट आ जाता है और समय पर यमदूत प्राणी को पकड़ कर ले जाते हैं॥४॥१॥

सिरीरागु महला १ ॥ पहिलै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा बालक बुधि अचेतु ॥ खीरु पीऐ खेलाईऐ वणजारिआ मित्रा मात पिता सुत हेतु ॥ मात पिता सुत नेहु घनेरा माइआ मोहु सबाई ॥ संजोगी आइआ किरतु कमाइआ करणी कार कराई ॥ राम नाम बिनु मुकति न होई बूडी दूजै हेति ॥ कहु नानक प्राणी पहिलै पहरै छूटहिगा हरि चेति ॥ १ ॥ दूजै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा भरि जोबनि मै मति ॥ अहिनिसि कामि विआपिआ वणजारिआ मित्रा अंधुले नामु न चिति ॥ राम नामु घट अंतरि नाही होरि जाणै रस कस मीठे ॥ गिआनु धिआनु गुण संजमु नाही जनमि मरहुगे झूठे ॥ तीरथ वरत सुचि संजमु नाही करमु धरमु नही पूजा ॥ नानक भाइ भगति निसतारा दुबिधा विआपै दूजा ॥ २ ॥ तीजै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा सरि हंस उलथड़े आइ ॥ जोबनु घटै जरूआ जिणै वणजारिआ मित्रा आव घटै दिनु जाइ ॥ अंति कालि पछुतासी अंधुले जा जमि पकड़ि चलाइआ ॥ सभु किछु अपुना करि करि राखिआ खिन महि भइआ पराइआ ॥ बुधि विसरजी गई सिआणप करि अवगण पछुताइ ॥ कहु नानक प्राणी तीजै पहरै प्रभु चेतहु लिव लाइ ॥ ३ ॥ चउथै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा बिरधि भइआ तनु खीणु ॥ अखी अंधु न दीसई वणजारिआ मित्रा कंनी सुणै न वैण ॥ अखी अंधु जीभ रसु नाही रहे पराकउ ताणा ॥ गुण अंतरि नाही किउ सुखु पावै मनमुख आवण जाणा ॥ खड़ु पकी कुड़ि भजै बिनसै आइ चलै किआ माणु ॥ कहु नानक प्राणी चउथै पहरै गुरमुखि सबदु पछाणु॥ ४ ॥ ओड़कु आइआ तिन साहिआ वणजारिआ मित्रा जरु जरवाणा कंनि ॥ इक रती गुण न समाणिआ वणजारिआ मित्रा अवगण खड़सनि बंनि ॥ गुण संजमि जावै चोट न खावै ना तिसु जंमणु मरणा ॥ कालु जालु जमु जोहि न साकै भाइ भगति भै तरणा ॥ पति सेती जावै सहजि समावै सगले दूख मिटावै ॥ कहु नानक प्राणी गुरमुखि छूटै साचे ते पति पावै ॥ ५ ॥ २ ॥

हे मेरे वणजारे मित्र ! जीवन रूपी रात्रि के प्रथम प्रहर में जीव बालक बुद्धि वाला एवं ज्ञानहीन होता है। बालक माता का दूध पीता है और उससे बड़ा लाड–प्यार किया जाता है। हे मेरे वणजारे मित्र ! माता–पिता अपने बालक से बड़ा अनुराग करते हैं। संसार में व्याप्त मोह–माया के कारण माता–पिता स्नेह में उसके पोषण में उठाए कष्टों की भी उपेक्षा कर देते हैं। संयोग और पूर्व जन्मों

के कर्मों की बदौलत प्राणी संसार में आता है और अब अपनी अगली जीवन मर्यादा के लिए कर्म कर रहा है। राम नाम के बिना मुक्ति नहीं हो सकती और द्वैत भाव में लीन रहने के कारण समूची सृष्टि का विनाश हो जाता है। हे नानक ! प्राणी जीवन रूपी रात्रि के प्रथम प्रहर में भगवान का नाम–सिमरन करके ही जन्म–मरण के चक्र से मुक्त हो सकता है॥१॥ हे वणजारे मित्र ! जीवन रूपी रात्रि के द्वितीय प्रहर में प्राणी यौवन की भरपूर मस्ती में मस्त रहता है। हे वणजारे मित्र ! दिन–रात वह भोग–विलास में आसक्त रहता है और उस अज्ञानी को भगवान का नाम याद ही नहीं आता। राम नाम उसके हृदय में नहीं बसता। वह अन्यों रसों को ही मीठा समझता है। जिन्हें प्रभु बारे कोई ज्ञान नहीं, जो भगवान का ध्यान नहीं करते, जो प्रभु की महिमा को स्मरण नहीं करते, जो संयम नहीं करते, ऐसे झूठे प्राणी जन्मते–मरते रहेंगे। हे नानक ! जो तीर्थ–स्नान नहीं करते, व्रत नहीं रखते, शुद्धिकरण, संयम एवं पाठ–पूजा नहीं करते, ऐसे प्राणियों का प्रेमपूर्वक भगवान की भक्ति करने से उद्धार हो जाता है। दुविधा में फँसे हुए जीवों को माया का मोह लगा रहता है॥२॥ हे मेरे वणजारे मित्र ! जीवन रूपी रात्रि के तृतीय प्रहर में शरीर–सरोवर पर हंस आ बैठते हैं अर्थात् प्राणी के सिर पर सफेद बाल पकने लगते हैं। हे वणजारे मित्र ! यौवन बीतने पर शरीर की शक्ति क्षीण हो जाती है और धीरे–धीरे शरीर पर प्रौढ़ावस्था हावी होने लगती है। अज्ञानी प्राणी, अन्तकाल पश्चाताप करता है, जब यमदूत इसे आ पकड़ते हैं अर्थात् काल आने पर प्राणी पछतावा करने लगता है। वह सब कुछ जिसे प्रतिदिन वह अपना कहता था, क्षण में ही उससे पराया हो जाता है। यमदूतों के वश पड़ते ही प्राणी का विवेक कुण्ठित हो जाता है। सारी चतुराई धरी रह जाती है और वह अपने अवगुणों को याद कर–करके पछताने लगता है। हे नानक ! जीवन रूपी रात्रि के तृतीय प्रहर में चित्त लगाकर भगवान का सिमरन करो॥३॥ हे मेरे वणजारे मित्र ! जीवन रूपी रात्रि के चतुर्थ प्रहर में शरीर वृद्ध होकर क्षीण हो जाता है। तन में कमजोरी आ जाती है। हे मेरे वणजारे मित्र ! आँखों–कानों की शक्ति भी चली जाती है, उसे आँखों से दिखाई नहीं देता और कानों से वह सुन नहीं पाता। दाँतों की असमर्थता के कारण जिव्हा का रस भी जाता रहता है और वह पराए सहारे की आशा में जीवनयापन करने लगता है। उस मनमुख के भीतर कोई आध्यात्मिक गुण कभी नहीं पनपता, इसलिए उसे सुख कैसे प्राप्त हो। बेचारा यूं ही जीवन–मरण के चक्र में पड़ा रहता है। शरीर–रूपी खेती पककर झुक जाती है। कभी अपने आप अंग टूटते लगते हैं, शरीर नष्ट हो जाता है। प्राणी के जीवन–मरण की इस लोक में कोई प्रतिष्ठा नहीं रह जाती। हे नानक ! प्राणी को अपनी जीवन रूपी रात्रि के चतुर्थ प्रहर में गुरु के माध्यम से नाम की पहचान करनी चाहिए॥४॥ हे मेरे वणजारे मित्र ! जब जीव को मिले श्वासों का अन्तिम समय निकट आ जाता है तो जालिम बुढापा उसके कंधों पर आ चढ़ता है। हे मेरे वणजारे मित्र ! जिस जीव ने अपने हृदय में कोई गुण संचित नहीं किए, उसके अवगुण ही उसे बांधकर ले जाते हैं। जो जीव संयम,ध्यान एवं समाधि द्वारा अपने भीतर गुण पैदा करके दुनिया से जाता है, वह यमों की मार नहीं खाता और उसका जन्म–मरण मिट जाता है। वह यम के जाल में नहीं फँसता और यम उसकी तरफ दृष्टि नहीं करता। वह प्रेमपूर्वक भगवान की भक्ति करके भवसागर से पार हो जाता है। फिर प्रभु के दरबार में उसे बड़ी शोभा प्राप्त होती है। वह सहज ही भगवान में समा जाता है और उसके सभी दुःख मिट जाते हैं। हे नानक ! गुरु के माध्यम से ही प्राणी की जीवन–मृत्यु से मुक्ति होती है और वह सत्य प्रभु से सम्मान प्राप्त करता है॥५॥२॥

सिरीरागु महला ४ ॥ पहिलै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा हरि पाइआ उदर मंझारि ॥ हरि धिआवै हरि उचरै वणजारिआ मित्रा हरि हरि नामु समारि ॥ हरि हरि नामु जपे आराधे विचि अगनी हरि

जपि जीविआ ॥ बाहरि जनमु भइआ मुखि लागा सरसे पिता मात थीविआ ॥ जिस की वसतु तिसु चेतहु प्राणी करि हिरदै गुरमुखि बीचारि ॥ कहु नानक प्राणी पहिलै पहरै हरि जपीऐ किरपा धारि ॥ १ ॥ दूजै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा मनु लागा दूजै भाइ ॥ मेरा मेरा करि पालीऐ वणजारिआ मित्रा ले मात पिता गलि लाइ ॥ लावै मात पिता सदा गल सेती मनि जाणै खटि खवाए ॥ जो देवै तिसै न जाणै मूड़ा दिते नो लपटाए ॥ कोई गुरमुखि होवै सु करै वीचारु हरि धिआवै मनि लिव लाइ ॥ कहु नानक दूजै पहरै प्राणी तिसु कालु न कबहूं खाइ ॥ २ ॥ तीजै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा मनु लगा आलि जंजालि ॥ धनु चितवै धनु संचवै वणजारिआ मित्रा हरि नामा हरि न समालि ॥ हरि नामा हरि हरि कदे न समालै जि होवै अंति सखाई ॥ इहु धनु संपै माइआ झूठी अंति छोडि चलिआ पछुताई ॥ जिस नो किरपा करे गुरु मेले सो हरि हरि नामु समालि ॥ कहु नानक तीजै पहरै प्राणी से जाइ मिले हरि नालि ॥ ३ ॥ चउथै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा हरि चलण वेला आदी ॥ करि सेवहु पूरा सतिगुरू वणजारिआ मित्रा सभ चली रैणि विहादी ॥ हरि सेवहु खिनु खिनु ढिल मूलि न करिहु जितु असथिरु जुगु जुगु होवहु ॥ हरि सेती सद माणहु रलीआ जनम मरण दुख खोवहु ॥ गुर सतिगुर सुआमी भेदु न जाणहु जितु मिलि हरि भगति सुखांदी ॥ कहु नानक प्राणी चउथै पहरै सफलिओु रैणि भगता दी ॥ ४ ॥ १ ॥ ३ ॥

{यह चौथी पातशाही श्री गुरु रामदास जी का पद है और जीवन–रूपी रात्रि के चारों प्रहरों में वणजारे को सम्बोधन कर रहे हैं।}

हे मेरे वणजारे मित्र ! जीवन रूपी रात्रि के प्रथम प्रहर में ईश्वर प्राणी को माँ के गर्भ में डाल देता है। हे वणजारे मित्र ! माँ के उदर में पड़ा प्राणी ईश्वर की आराधना करता है, वह हरि का नाम अपने मुख से उच्चरित करता रहता है। वह अपने मन द्वारा हरि नाम का सिमरन करता रहता है। प्राणी बार–बार हरि–नाम की स्तुति और आराधना करता है। गर्भ की अग्नि में वह परमात्मा के नाम के कारण ही जीवित रह पाता है। जब वह जन्म लेकर माँ के गर्भ में से बाहर आता है तो माता–पिता उसका मुख देखकर प्रसन्न होते हैं। हे प्राणी ! जिसकी यह वस्तु (बालक) है। उसे स्मरण करो। गुरु की दया से अपने हृदय में हरि–नाम का स्मरण करो। हे नानक ! जीवन रूपी रात्रि के प्रथम प्रहर में तभी नाम–सिमरन किया जा सकता है। यदि भगवान अपनी कृपा धारण करें।।१।। हे मेरे वणजारे मित्र ! जीवन रूपी रात्रि के द्वितीय प्रहर में प्राणी का मन माया के आकर्षणों में लीन हो जाता है। माता–पिता उसे 'मेरा–मेरा' करके बड़े प्यार से पालन–पोषण करते हैं और उसे अपने गले से लगाते हैं। माता–पिता (स्वार्थवश) गले से लगाते हुए सोचते हैं कि वह बड़ा होकर उन्हें कमाकर खिलाएगा। प्राणी कितना मूर्ख है कि देने वाले (दाता) को तो पहचानने का प्रयास नहीं करता और उसकी प्रदान की हुई नश्वर वस्तुओं से लिपटता फिरता है। कोई गुरमुख ही भक्ति करता है और वह अपने मन में सुरति लगाकर भगवान का ध्यान करता है। हे नानक ! जीवन रूपी रात्रि के द्वितीय प्रहर में जो प्राणी भगवान का ध्यान करता है, उसे काल कदापि नहीं निगलता।।२।। हे मेरे वणजारे मित्र ! जीवन रूपी रात्रि के तृतीय प्रहर में मनुष्य का मन दुनिया के धंधे–व्यवहार में आसक्त हो जाता है। वह धन–दौलत का ही ध्यान करता है और धन–दौलत ही संग्रह करता है। हे मेरे वणजारे मित्र ! परन्तु हरि–नाम और हरि का चिन्तन नहीं करता। वह कदाचित हरि–नाम और स्वामी हरि को स्मरण नहीं करता, जो अंत में उसका सहायक होना है। यह धन–सम्पत्ति और मोह–माया सब झूठे हैं। जिसे अन्तकाल त्याग कर पश्चाताप करते

हुए प्राणी चला जाता है। जिस पर ईश्वर की कृपा होती है, उसका गुरु से मिलन होता है और वह ईश्वर की उपासना में लीन हो जाता है। गुरु जी उद्बोधन करते हैं हे नानक! जीवन रूपी रात्रि के तृतीय प्रहर में जो प्राणी हरि-भजन करता है, वह प्रभु में ही विलीन हो जाता है॥ ३॥ हे मेरे वणजारे मित्र! जीवन रूपी रात्रि के चतुर्थ प्रहर में ईश्वर ने मृत्यु काल निकट ला दिया है। इसलिए हे मित्र! अपने हाथों से पूर्ण सतिगुरु की श्रद्धापूर्वक सेवा कर, क्योंकि जीवन रूपी समूची रात्रि अब व्यतीत होती जा रही है। प्रतिक्षण परमेश्वर की सेवा करो, इसमें विलम्ब उचित नहीं, क्योंकि इससे तुम युग-युग के लिए अमर हो जाओगे। हे प्राणी! ईश्वर के रंग में आनंद मनाओ और जन्म-मरण के दु:ख को सदैव के लिए भुला दो। सतिगुरु एवं भगवान में कोई अन्तर मत समझो। सतिगुरु को मिलकर भगवान की भक्ति अच्छी लगती है। हे नानक! जीवन रूपी रात्रि के चतुर्थ प्रहर में जो प्राणी भगवान की भक्ति करते हैं, उन भक्तों की जीवन-रात्रि सफल हो जाती है॥४॥१॥३॥

सिरीरागु महला ५ ॥ पहिलै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा धरि पाइता उदरै माहि ॥ दसी मासी मानसु कीआ वणजारिआ मित्रा करि मुहलति करम कमाहि ॥ मुहलति करि दीनी करम कमाणे जैसा लिखतु धुरि पाइआ ॥ मात पिता भाई सुत बनिता तिन भीतरि प्रभू संजोइआ ॥ करम सुकरम कराए आपे इसु जंतै वसि किछु नाहि ॥ कहु नानक प्राणी पहिलै पहरै धरि पाइता उदरै माहि ॥ १ ॥ दूजै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा भरि जुआनी लहरी देइ ॥ बुरा भला न पछाणई वणजारिआ मित्रा मनु मता अहंमेइ ॥ बुरा भला न पछाणै प्राणी आगै पंथु करारा ॥ पूरा सतिगुरु कबहूं न सेविआ सिरि ठाढे जम जंदारा ॥ धरम राइ जब पकरसि बवरे तब किआ जबाबु करेइ ॥ कहु नानक दूजै पहरै प्राणी भरि जोबनु लहरी देइ ॥ २ ॥ तीजै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा बिखु संचै अंधु अगिआनु ॥ पुत्रि कलत्रि मोहि लपटिआ वणजारिआ मित्रा अंतरि लहरि लोभानु ॥ अंतरि लहरि लोभानु परानी सो प्रभु चिति न आवै ॥ साधसंगति सिउ संगु न कीआ बहु जोनी दुखु पावै ॥ सिरजनहारु विसारिआ सुआमी इक निमख न लगो धिआनु ॥ कहु नानक प्राणी तीजै पहरै बिखु संचे अंधु अगिआनु ॥ ३ ॥ चउथै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा दिनु नेड़ै आइआ सोइ ॥ गुरमुखि नामु समालि तूं वणजारिआ मित्रा तेरा दरगह बेली होइ ॥ गुरमुखि नामु समालि पराणी अंते होइ सखाई ॥ इहु मोहु माइआ तैरै संगि न चालै झूठी प्रीति लगाई ॥ सगली रैणि गुदरी अंधिआरी सेवि सतिगुरु चानणु होइ ॥ कहु नानक प्राणी चउथै पहरै दिनु नेड़ै आइआ सोइ ॥ ४ ॥ लिखिआ आइआ गोविंद का वणजारिआ मित्रा उठि चले कमाणा साथि ॥ इक रती बिलम न देवनी वणजारिआ मित्रा ओनी तकड़े पाए हाथ ॥ लिखिआ आइआ पकड़ि चलाइआ मनमुख सदा दुहेले ॥ जिनी पूरा सतिगुरु सेविआ से दरगह सदा सुहेले ॥ करम धरती सरीरु जुग अंतरि जो बोवै सो खाति ॥ कहु नानक भगत सोहहि दरवारे मनमुख सदा भवाति ॥ ५ ॥ १ ॥ ४ ॥

{यह पद पाँचवीं पातिशाही श्री गुरु अर्जुन देव जी का है।}

हे मेरे वणजारे मित्र! जीवन रूपी रात्रि के प्रथम प्रहर में ईश्वर प्राणी को माता के उदर में डाल देता है। माता के उदर में ही प्रभु दस माह में उसे मनुष्य बना देता है। प्रभु उसे जीवन रूपी समय देता है और इस समय में प्राणी शुभ-अशुभ कर्म करता है। प्रभु यह जीवन-अवधि निर्धारित कर देता है। जीव के पूर्व जन्म के कर्मों अनुसार उसके माथे पर ऐसी किस्मत लिख दी जाती है, जैसे वह कर्म करता है। परमात्मा प्राणी को माता-पिता, भाई, पुत्र-पत्नी इत्यादि के संबंधों में बांध देता है। हरि

स्वयं ही शुभ अथवा अशुभ कर्म प्राणी से करवाता है तथा प्राणी के अपने वश में कुछ नहीं। हे नानक ! जीवन रूपी रात्रि के प्रथम प्रहर में भगवान प्राणी को माता के उदर में डाल देता है॥१॥ हे मेरे वणजारे मित्र ! जीवन रूपी रात्रि के द्वितीय प्रहर में प्राणी की भरी जवानी नदी के समान काम, मोह और तृष्णा की तरंगों में बहती है। हे मेरे वणजारे मित्र ! अहंकार में मदमस्त होने के कारण प्राणी बुरा–भला पहचानने में असमर्थ होता है। प्राणी अच्छे–बुरे की पहचान नहीं करता और आगे बढ़ने का मार्ग उसके लिए अधिक कठोर है। वह सतिगुरु को पहचानकर उसकी सेवा में लीन नहीं होता और निर्दयी यमदूत उसके सिर पर (मृत्यु रूपी) दण्ड धारण किए खड़ा रहता है। हे मूर्ख मनुष्य ! जब धर्मराज तुझे पकड़कर पूछेगा? तुम उसको अपने कर्मों का क्या उत्तर दोगे? हे नानक ! जीवन रूपी रात्रि के द्वितीय प्रहर में प्राणी की भरी जवानी नदी के समान काम, मोह एवं तृष्णा की तरंगों में बहती है॥२॥ हे मेरे वणजारे मित्र ! जीवन रूपी रात्रि के तृतीय प्रहर में ज्ञानहीन, मूर्ख प्राणी विषय–वासनाओं का विष संग्रह करता है। वह अपने पुत्र एवं पत्नी के मोह में फँसा हुआ है और उसके मन में लोभ की लहरें उठती हैं। मन में आकर्षक पदार्थों के लोभ की लहरें विद्यमान हैं। वह ईश्वर की ओर चित्त नहीं लगाता और ईश्वर–उपासना नहीं करता। वह सत्संग के साथ मेल–मिलाप नहीं करता और विभिन्न योनियों के अन्दर कष्ट सहन करता है। जगत् के सृजनहार स्वामी को उसने विस्मृत कर दिया है और वह एक क्षण मात्र भी अपनी वृत्ति प्रभु की तरफ नहीं लगाता। हे नानक ! जीवन रूपी रात्रि के तृतीय प्रहर में अज्ञान में अंधा हुआ प्राणी विषय–वासनाओं का विष संचित करता रहता है॥३॥ हे मेरे वणजारे मित्र ! जीवन रूपी रात्रि के चतुर्थ प्रहर में मृत्यु का दिन निकट आ रहा है। हे मेरे वणजारे मित्र ! तू सतिगुरु की शरण लेकर ईश्वर का नाम स्मरण कर, वह परलोक में तेरा एकमात्र सहारा होगा। हे प्राणी ! गुरु–उपदेशानुसार नाम को स्मरण कर और अंत में यही तेरा सखा होगा। जिस मोह–माया के साथ तुमने लगन लगा रखी है, यह मिथ्या है, मृत्यु के समय यह तुम्हारा साथ नहीं देगी। तेरी जीवन रूपी समूह रात्रि अज्ञानता के अंधेरे में बीत गई है, अब भी यदि सतिगुरु की शरण लेकर उनकी सेवा करोगे तो तेरे अर्न्तमन में ज्ञान का प्रकाश उदय हो जाएगा। हे नानक ! जीवन रूपी रात्रि के चतुर्थ प्रहर में मृत्यु–काल निकट आ रहा है॥४॥ हे मेरे वणजारे मित्र ! जब भगवान का सन्देश आ जाता है तो प्राणी इस दुनिया को छोड़कर चल देता है। उसके किए कर्म उसके साथ जाते हैं। हे मेरे वणजारे मित्र ! वह एक क्षण की भी देरी नहीं करने देते। यमदूत नश्वर प्राणी को मजबूत हाथों से पकड़कर ले जाते हैं। प्रभु का लिखित आदेश मिलते ही प्राणी को यमदूत संसार से अलग कर देते हैं। ऐसे में मनमुखी प्राणी सदा कष्ट सहन करते हैं। जो प्राणी पूर्ण सतिगुरु की भरपूर सेवा करते हैं, वे परमात्मा के दरबार में सदैव सुखी रहते हैं। इस कलियुग में शरीर धरती रूप है। इस शरीर रूपी धरती में मनुष्य जो कर्म रूपी बीज बोता है, वह उसका वही फल प्राप्त करता है। हे नानक ! भगवान के भक्त उसके दरबार में सुन्दर लगते हैं और मनमुख हमेशा ही जन्म–मरण के चक्र में पड़कर भटकते रहते हैं॥५॥१॥४॥

सिरीरागु महला ४ घरु २ छंत ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

मुंध इआणी पेईअड़ै किउ करि हरि दरसनु पिखै ॥ हरि हरि अपनी किरपा करे गुरमुखि साहुरड़ै कंम सिखै ॥ साहुरड़ै कंम सिखै गुरमुखि हरि हरि सदा धिआए ॥ सहीआ विचि फिरै सुहेली हरि दरगह बाह लुडाए ॥ लेखा धरम राइ की बाकी जपि हरि हरि नामु किरखै ॥ मुंध इआणी पेईअड़ै गुरमुखि हरि दरसनु दिखै ॥ १ ॥ वीआहु होआ मेरे बाबुला गुरमुखे हरि पाइआ ॥ अगिआनु अंधेरा कटिआ

गुर गिआनु प्रचंडु बलाइआ ॥ बलिआ गुर गिआनु अंधेरा बिनसिआ हरि रतनु पदारथु लाधा ॥ हउमै रोगु गइआ दुखु लाथा आपु आपै गुरमति खाधा ॥ अकाल मूरति वरु पाइआ अबिनासी ना कदे मरै न जाइआ ॥ वीआहु होआ मेरे बाबोला गुरमुखे हरि पाइआ ॥ २ ॥ हरि सति सते मेरे बाबुला हरि जन मिलि जंञ सुहंदी ॥ पेवकड़ै हरि जपि सुहेली विचि साहुरड़ै खरी सोहंदी ॥ साहुरड़ै विचि खरी सोहंदी जिनि पेवकड़ै नामु समालिआ ॥ सभु सफलिओ जनमु तिना दा गुरमुखि जिना मनु जिणि पासा ढालिआ ॥ हरि संत जना मिलि कारजु सोहिआ वरु पाइआ पुरखु अनंदी ॥ हरि सति सति मेरे बाबोला हरि जन मिलि जंञ सोहंदी ॥ ३ ॥ हरि प्रभु मेरे बाबुला हरि देवहु दानु मै दाजो ॥ हरि कपड़ो हरि सोभा देवहु जितु सवरै मेरा काजो ॥ हरि हरि भगती काजु सुहेला गुरि सतिगुरि दानु दिवाइआ ॥ खंडि वरभंडि हरि सोभा होई इहु दानु न रलै रलाइआ ॥ होरि मनमुख दाजु जि रखि दिखालहि सु कूड़ु अहंकारु कचु पाजो ॥ हरि प्रभ मेरे बाबुला हरि देवहु दानु मै दाजो ॥ ४ ॥ हरि राम राम मेरे बाबोला पिर मिलि धन वेल वधंदी ॥ हरि जुगह जुगो जुग जुगह जुगो सद पीड़ी गुरू चलंदी ॥ जुगि जुगि पीड़ी चलै सतिगुर की जिनी गुरमुखि नामु धिआइआ ॥ हरि पुरखु न कब ही बिनसै जावै नित देवै चड़ै सवाइआ ॥ नानक संत संत हरि एको जपि हरि हरि नामु सोहंदी ॥ हरि राम राम मेरे बाबुला पिर मिलि धन वेल वधंदी ॥ ५ ॥ १ ॥

यदि नवयौवन जीव–स्त्री अपने बाबुल (इहलोक) के घर में ज्ञानहीन ही रहे तो वह अपने पति–प्रभु के दर्शन कैसे कर सकती है? जब भगवान अपनी कृपा करता है तो वह गुरु के माध्यम से ससुराल (परलोक) के कार्य सीख लेती है। गुरमुख पत्नी पिया के घर के कामकाज सीखती है और सदैव ही अपने ईश्वर का चिन्तन करती है। वह अपनी सत्संगी सखियों में रहकर सुखी जीवन व्यतीत करती है और मरणोपरांत वह अपनी बाह घुमाती हुई अर्थात निश्चिंत होकर हरि के दरबार में जाती है। हरि–परमेश्वर के नाम का उच्चारण करने से वह धर्मराज के हिसाब–किताब से बच जाती है। इस तरह अपने पीहर (इहलोक) में ही ज्ञानहीन नवयौवन जीव–स्त्री अपने पति–परमेश्वर के साक्षात् दर्शन कर लेती है॥१॥ हे मेरे बाबुल ! अब मेरा विवाह हो गया है, गुरु के उपदेश द्वारा मैंने पति–परमेश्वर को पा लिया है। गुरु ने मेरे अन्तर्मन से अज्ञान का अंधेरा दूर कर दिया है। गुरु ने मेरे अन्तर्मन में ज्ञान का प्रचण्ड दीपक प्रज्वलित कर दिया है। गुरु का प्रदान किया हुआ ज्ञान का प्रकाश होने पर अँधेरा नष्ट हो गया है और उस आलोक में हरि के नाम का अमूल्य रत्न–पदार्थ मिल गया है। मेरे अहंकार का रोग दूर हो गया है और मेरा दुख मिट गया है। गुरु के उपदेश अधीन अपने अहंकार को मैंने स्वयं ही निगल लिया है। मैंने अकालमूर्ति को अपना पति वरण कर लिया है। वह अनश्वर है और इसलिए वह जन्म और मरण से सदा ऊपर है। हे मेरे बाबुल ! अब मेरा विवाह हो गया है और गुरु के उपदेश अनुसार पति–परमेश्वर हरि को प्राप्त कर लिया है॥२॥ हे मेरे बाबुल ! मेरा हरि–परमेश्वर सत्यस्वरूप है; भगवान के भक्त मिलकर भगवान की बारात में आए हैं। उनके आगमन से बारात बहुत सुन्दर लगती है। मैं अपने पीहर (इहलोक) में भगवान का नाम जपकर सुखपूर्वक रहती हूँ। अब मैं अपने ससुराल (परलोक) में शोभा प्राप्त कर रही हूँ। जिन्होंने अपने पीहर (इहलोक) में नाम–सिमरन किया होता है, उनकी ससुराल (परलोक) में बड़ी शोभा होती है। उनका समूचा जीवन सफल हो जाता है, जिन्होंने गुरु के उपदेशानुसार मन की तृष्णाओं पर विजय प्राप्त की है। ईश्वर के सन्तजनों से भेंट करके मेरा विवाह कार्य सफल हुआ है और आनन्द के स्वरूप प्रभु को मैंने पति के तौर पर पा लिया है। हे मेरे बाबुल ! भगवान सत्यस्वरूप है। भगवान के भक्तों के आगमन से बारात बहुत सुन्दर लगती है॥३॥ हे मेरे बाबुल ! मुझे दहेज में हरि–प्रभु के नाम

का दान दो। वस्त्रों के स्थान पर हरि का नाम दो और शोभा बढ़ाने वाले आभूषणों इत्यादि के स्थान पर भगवान का नाम ही दो। भगवान के नाम से मेरा विवाह कार्य संवर जाएगा। भगवान की भक्ति से ही विवाह–कार्य सुखदायक होता है। सतिगुरु ने मुझे भगवान की भक्ति का ही दान दिलवाया है। इस दान से समूचे ब्रह्माण्ड एवं समस्त खण्डों में मेरी शोभा हो गई है। कोई अन्य दान इस दान की बराबरी नहीं कर सकता। हरिनाम के दहेज के अतिरिक्त जो लोग दान–दहेज का प्रदर्शन करते हैं, वे मिथ्याडम्बरी और अहंकारी हैं। हे मेरे बाबुल! मुझे दहेज में केवल हरि–नाम का ही दान व दहेज प्रदान करो॥४॥ हे मेरे बाबुल! प्रभु–परमेश्वर सर्वव्यापक है। हे मेरे बाबुल! हरि प्रभु को मिलकर जीव–स्त्री की लता विकसित होती है। अनेक युगों से गुरु वंश सदैव चला आता है। जो गुरु के माध्यम से नाम–सिमरन करते हैं वहीं गुरु का वंश होता है। सतिगुरु का वंश प्रत्येक युग में चलता है। सर्वशक्तिमान परमेश्वर कदापि मरता या जन्मता नहीं। वह जो कुछ देता है सदैव ही बढ़ता जाता है। हे नानक! अद्वितीय प्रभु संतों का संत है। ईश्वर के नाम का उच्चारण करने से पत्नी सुशोभित हो जाती है। हे मेरे बाबुल! मुझे हरि–रूप पति मिला है, हरि सर्वव्यापक है। अपने पति से मिलकर पत्नी की अपने परिवार में अभिवृद्धि हुई है॥५॥१॥

सिरीरागु महला ५ छंत ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

मन पिआरिआ जीउ मित्रा गोबिंद नामु समाले ॥ मन पिआरिआ जी मित्रा हरि निबहै तेरै नाले ॥ संगि सहाई हरि नामु धिआई बिरथा कोइ न जाए ॥ मन चिंदे सेई फल पावहि चरण कमल चितु लाए ॥ जलि थलि पूरि रहिआ बनवारी घटि घटि नदरि निहाले ॥ नानकु सिख देइ मन प्रीतम साधसंगि भ्रमु जाले ॥ १ ॥ मन पिआरिआ जी मित्रा हरि बिनु झूठु पसारे ॥ मन पिआरिआ जीउ मित्रा बिखु सागरु संसारे ॥ चरण कमल करि बोहिथु करते सहसा दूखु न बिआपै ॥ गुरु पूरा भेटै वडभागी आठ पहर प्रभु जापै ॥ आदि जुगादी सेवक सुआमी भगता नामु अधारे ॥ नानकु सिख देइ मन प्रीतम बिनु हरि झूठ पसारे ॥ २ ॥ मन पिआरिआ जीउ मित्रा हरि लदे खेप सवली ॥ मन पिआरिआ जीउ मित्रा हरि दरु निहचलु मली ॥ हरि दरु सेवे अलख अभेवे निहचलु आसणु पाइआ ॥ तह जनम न मरणु न आवण जाणा संसा दूखु मिटाइआ ॥ चित्र गुपत का कागदु फारिआ जमदूता कछू न चली ॥ नानकु सिख देइ मन प्रीतम हरि लदे खेप सवली ॥ ३ ॥ मन पिआरिआ जीउ मित्रा करि संता संगि निवासो ॥ मन पिआरिआ जीउ मित्रा हरि नामु जपत परगासो ॥ सिमरि सुआमी सुखह गामी इछ सगली पुंनीआ ॥ पुरबे कमाए स्रीरंग पाए हरि मिले चिरी विछुंनिआ ॥ अंतरि बाहरि सरबति रविआ मनि उपजिआ बिसुआसो ॥ नानकु सिख देइ मन प्रीतम करि संता संगि निवासो ॥ ४ ॥ मन पिआरिआ जीउ मित्रा हरि प्रेम भगति मनु लीना ॥ मन पिआरिआ जीउ मित्रा हरि जल मिलि जीवे मीना ॥ हरि पी आघाने अंम्रित बाने स्रब सुखा मन वुठे ॥ स्रीधर पाए मंगल गाए इछ पुंनी सतिगुर तुठे ॥ लड़ि लीने लाए नउ निधि पाए नाउ सरबसु ठाकुरि दीना ॥ नानक सिख संत समझाई हरि प्रेम भगति मनु लीना ॥ ५ ॥ १ ॥ २ ॥

हे मेरे प्रिय मित्र मन! भगवान का नाम–सिमरन करो। हे मेरे प्रिय मित्र मन! भगवान का नाम हमेशा तेरे साथ रहेगा। अतः भगवान के नाम का ध्यान करो। यह तेरे साथ रहेगा और तेरी सहायता करेगा। नाम–सिमरन करने वाला कोई भी दुनिया से खाली हाथ नहीं जाता। जो भगवान के चरण–कमलों में अपना चित्त लगाता है, उसे मनोवांछित फल प्राप्त होता है। वह प्रभु जल एवं थल

में सर्वव्यापक है। वह समस्त जीवों के हृदय में विद्यमान है और सबको अपनी कृपा–दृष्टि से देखता है। नानक शिक्षा देते हैं कि हे मेरे प्रिय मन! संतों की संगति करके माया के भ्रम–जाल को नष्ट कर दो॥१॥ हे मेरे प्रिय मित्र मन! भगवान के बिना माया का जगत् रूप प्रसार झूठा है। यह संसार विष से भरा हुआ सागर है। अतः ईश्वर के चरणों को अपना जहाज बनाओ फिर तुझे कोई दुःख एवं भय नहीं लगेगा। जिस भाग्यशाली को पूर्ण गुरु मिल जाता है, वह आठ प्रहर प्रभु नाम का भजन करता रहता है। हे प्रभु! तू सृष्टि के आदि एवं युगों से ही अपने सेवकों का स्वामी है। तेरा नाम भक्तों का आधार है। नानक शिक्षा देते हैं कि हे मेरे प्रिय मित्र मन! भगवान के बिना जगत् का यह माया–प्रसार झूठा है॥२॥ हे मेरे प्रिय मित्र मन! हरिनाम के व्यापार में ही लाभ है। हे मेरे मित्र मन! ईश्वर के द्वार पर आसन जमा ले। जिन प्राणियों ने अगाध व भेद–रहित ईश्वर का द्वार पकड़ा है, वे वहीं समाधिस्थ हो गए हैं। वे जन्म–मरण तथा आवागमन से मुक्त हो गए हैं, उनके संशयों एवं दुःखों का नाश हो जाता है। चित्रगुप्त द्वारा उनके कर्मों का लेखा–जोखा भी मिट जाता है और यमदूत विवश हो जाते हैं। नानक शिक्षा देते हैं कि हरि नाम रूपी व्यापार लाभदायक है। अतः इस व्यापार को लेकर अपने साथ ले जाओ॥३॥ हे मेरे प्रिय मित्र मन! संतों की संगति में निवास करो। हे मेरे मित्र मन! ईश्वर का नाम जपने से ज्ञान का प्रकाश उज्ज्वल होता है। प्रभु जगत् का स्वामी है और जीवों को सुख देने वाला है। उसकी आराधना करने से समस्त कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। वही सर्वोत्तम प्राणी ईश्वर को पाता है, जिसके पूर्व जन्म के कर्म शुभ होते हैं, वह लम्बे वियोग से मुक्त होकर अपने भगवान में मिल जाता है। मेरे चित्त के भीतर उसमें विश्वास उत्पन्न हो गया है जो प्रत्येक जगह अन्दर और बाहर व्यापक हो रहा है। नानक शिक्षा देते हैं कि हे मेरे प्रिय मित्र मन! संतों की संगति में निवास करो॥४॥ हे मेरे प्रिय मित्र मन! जैसे मछली जल को मिल कर ही जीवित रहती है। वैसे ही मनुष्य का मन भगवान की भक्ति में लीन होकर उसमें मिलकर जीवित रहता है। जो व्यक्ति अमृत वाणी द्वारा भगवान के नाम रूपी जल को पीकर तृप्त हो जाते हैं, उनके मन में सर्व सुख आ बसते हैं। वह भगवान को पा लेते हैं और भगवान का मंगल गायन करते हैं। सतिगुरु उन पर प्रसन्न हो जाते हैं और उनकी मनोकामनाएँ पूरी हो जाती हैं। प्रभु उन्हें अपने साथ मिला लेता है। जगत् का स्वामी प्रभु उन्हें अपना नाम प्रदान करता है, जो नवनिधियाँ प्रदान करने वाला है। हे नानक! जिसे संतों ने नाम–सिमरन की शिक्षा समझा दी है, वह भगवान की प्रेम–भक्ति में मग्न रहता है॥५॥१॥२॥

सिरीराग के छंत महला ५ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

डखणा ॥ हठ मझाहू मा पिरी पसे किउ दीदार ॥ संत सरणाई लभणे नानक प्राण अधार ॥ १ ॥ छंतु ॥ चरन कमल सिउ प्रीति रीति संतन मनि आवए जीउ ॥ दुतीआ भाउ बिपरीति अनीति दासा नह भावए जीउ ॥ दासा नह भावए बिनु दरसावए इक खिनु धीरजु किउ करै ॥ नाम बिहूना तनु मनु हीना जल बिनु मछुली जिउ मरै ॥ मिलु मेरे पिआरे प्रान अधारे गुण साधसंगि मिलि गावए ॥ नानक के सुआमी धारि अनुग्रहु मनि तनि अंकि समावए ॥ १ ॥

{इसमें श्री गुरु अर्जुन देव जी के पाँच डखणे तथा छन्त हैं। दोहे अथवा सोरठे के प्रवाह का जो छन्द बहावलपुरी तथा सिंधी भाषा में लिखा जाए तथा जिसमें 'द' की जगह 'ड' एवं 'स' के स्थान पर 'ह' का इस्तेमाल हो, उसे डखणा कहते हैं। छंत छन्द को कहा जाता है।}

डखणा॥ मेरा प्रिय–प्रभु मेरे अन्तर्मन में ही निवास करता है। फिर मैं उसके दर्शन कैसे करूँ। हे नानक! संतों की शरण ग्रहण करने से प्राणों का आधार प्रभु मिल जाता है॥ १॥ छंद॥ प्रभु के

चरण–कमलों से प्रेम करने की मर्यादा संतों के मन में बसती है। माया से प्रेम करना मर्यादा और नीति के विरुद्ध है। प्रभु के भक्तों को यह विपरीत मर्यादा अच्छी नहीं लगती। भगवान के दर्शनों के बिना उसके भक्त एक क्षण भर के लिए भी कैसे धैर्य कर सकते हैं ? जैसे मछली जल के बिना तड़प–तड़प कर मर जाती है, वैसे ही नाम के बिना प्रभु–भक्तों का मन एवं तन मृत समान हो जाते हैं। हे मेरे प्राणों के आधार प्रिय प्रभु ! मुझे मिलो, चूंकि संतों की सभा में मिलकर मैं तेरी महिमा–स्तुति करूँ। हे नानक के स्वामी ! मुझ पर कृपा करो, चूंकि मेरा मन एवं तन तेरे ही स्वरूप में समा जाए॥ १॥

डखणा ॥ सोहंदड़ो हभ ठाइ कोइ न दिसै डूजड़ो ॥ खुल्हड़े कपाट नानक सतिगुर भेटते ॥ १ ॥ छंतु ॥ तेरे बचन अनूप अपार संतन आधार बाणी बीचारीऐ जीउ ॥ सिमरत सास गिरास पूरन बिसुआस किउ मनहु बिसारीऐ जीउ ॥ किउ मनहु बेसारीऐ निमख नही टारीऐ गुणवंत प्रान हमारे ॥ मन बांछत फल देत है सुआमी जीअ की बिरथा सारे ॥ अनाथ के नाथे स्रब कै साथे जपि जूऐ जनमु न हारीऐ ॥ नानक की बेनंती प्रभ पहि क्रिपा करि भवजलु तारीऐ ॥ २ ॥

डखणा॥ हे नानक ! सतिगुरु को मिलने से मेरे कपाट खुल गए हैं। अब मुझे ज्ञान हो गया है कि परमात्मा सर्वव्यापक है। उस प्रभु के अलावा मुझे अन्य कोई भी दिखाई नहीं देता॥१॥ छंद॥ हे संतों के आधार प्रभु ! तेरे वचन बहुत सुन्दर एवं अपार हैं। मनुष्य को वाणी का ही चिन्तन करना चाहिए। जो व्यक्ति श्वास– श्वास एवं भोजन के ग्रास के साथ प्रभु के नाम का सिमरन करते हैं, उनकी प्रभु में पूर्ण आस्था हो जाती है। हे प्रभु ! तुम्हें हम क्यों विस्मृत करें? हे अनंत गुणों वाले प्रभु ! तुम ही मेरे प्राण हो। फिर तुझे एक क्षण भर के लिए भी क्यों विस्मृत किया जाए। मेरा प्रभु मुझे मनोवांछित फल प्रदान करता है। वह मेरे मन की पीड़ा को जानता है। हे अनाथों के नाथ प्रभु ! तू हमेशा समस्त जीवों के साथ रहता है। तेरा नाम–स्मरण करने से मानव जन्म जुए की बाजी की तरह व्यर्थ नहीं जाता। नानक की प्रभु के समक्ष यही प्रार्थना है कि हे प्रभु ! कृपा करके मुझे भवसागर से पार कर दीजिए॥ २॥

डखणा ॥ धूड़ी मजनु साध खे साई थीए क्रिपाल ॥ लधे हभे थोकड़े नानक हरि धनु माल ॥ १ ॥ छंतु ॥ सुंदर सुआमी धाम भगतह बिस्राम आसा लगि जीवते जीउ ॥ मनि तने गलतान सिमरत प्रभ नाम हरि अंम्रितु पीवते जीउ ॥ अंम्रितु हरि पीवते सदा थिरु थीवते बिखै बनु फीका जानिआ ॥ भए किरपाल गोपाल प्रभ मेरे साधसंगति निधि मानिआ ॥ सरबसो सूख आनंद घन पिआरे हरि रतनु मन अंतरि सीवते ॥ इकु तिलु नही विसरै प्रान आधारा जपि जपि नानक जीवते ॥ ३ ॥

डखणा॥ हे नानक ! संतों की चरण–धूलि में वही व्यक्ति स्नान करता है, जिस पर मालिक–प्रभु कृपालु होता है। जिन्हें हरि–नाम रूपी धन मिल जाता है, समझ लो उन्हें सभी पदार्थ मिल गए हैं॥ १॥ छंद॥ जगत् के स्वामी प्रभु का धाम अत्यंत सुन्दर है। वह प्रभु के भक्तों का निवास–स्थान है। प्रभु के भक्त उस सुन्दर स्थान की प्राप्ति की आशा में जीते हैं। वह अपने मन एवं तन द्वारा भगवान का नाम–सिमरन करने में मग्न रहते हैं। वे हरि–रस का पान करते हैं और सदैव स्थिर जीवन वाले हो जाते हैं। वे विष रूप संसार के रसों को फीका समझते हैं। जब मेरा गोपाल प्रभु मुझ पर कृपालु हो गया तो मेरे मन ने सत्संगति को नाम की निधि स्वीकार कर लिया। प्रभु के प्रिय भक्त समस्त सुख एवं बड़ा आनंद प्राप्त करते हैं। वह हरि–नाम रूपी रत्न को अपने हृदय में पिरो कर रखते हैं। हे नानक ! प्राणों का आधार प्रभु उन्हें तिल भर समय के लिए भी विस्मृत नहीं होता। वे हर समय उसका नाम–सिमरन करके ही जीवित रहते हैं॥ ३॥

डखणा ॥ जो तउ कीने आपणे तिना कूं मिलिओहि ॥ आपे ही आपि मोहिओहु जसु नानक आपि सुणिओहि ॥ १ ॥ छंतु ॥ प्रेम ठगउरी पाइ रीझाइ गोबिंद मनु मोहिआ जीउ ॥ संतन कै परसादि अगाधि कंठे लगि सोहिआ जीउ ॥ हरि कंठि लगि सोहिआ दोख सभि जोहिआ भगति लख्यण करि वसि भए ॥ मनि सरब सुख वुठे गोविद तुठे जनम मरणा सभि मिटि गए ॥ सखी मंगलो गाइआ इछ पुजाइआ बहुड़ि न माइआ होहिआ ॥ करु गहि लीने नानक प्रभ पिआरे संसारु सागरु नही पोहिआ ॥ ४ ॥

डखणा॥ हे प्रभु ! तुम उन्हें ही मिलते हो, जिन्हें तुम अपना बना लेते हो। हे नानक ! प्रभु भक्तजनों से अपनी महिमा सुनकर स्वयं मुग्ध हो जाता है॥१॥ छंद॥ भक्तों ने प्रेम की नशीली बूटी से भगवान को प्रसन्न करके अपने मोह–जाल में फँसा लिया है। संतों की दया से अथाह परमेश्वर के गले लगकर वह शोभा प्राप्त करता है। वह भगवान के कण्ठ से लगकर शोभा प्राप्त करता है और उसके सभी दुख नाम के फलस्वरूप नष्ट हो गए हैं। उसकी भक्ति के गुणों के कारण प्रभु उसके वश में हो गया है और सभी सुख उसके मन में आकर बस गए हैं। जीव रूपी स्त्री ने अपनी सत्संगी सहेलियों के साथ मिलकर मंगल गायन किया है। उसकी मनोकामनाएँ पूरी हो गई है। अब वह माया के मोह में नहीं फँसेगी। हे नानक ! प्रिय प्रभु ने जिनका हाथ पकड़ा है उसे भवसागर ने स्पर्श नहीं किया॥४॥

डखणा ॥ साई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो ॥ जिना भाग मथाहि से नानक हरि रंगु माणदो ॥ १ ॥ छंतु ॥ कहते पवित्र सुणते सभि धंनु लिखतीं कुलु तारिआ जीउ ॥ जिन कउ साधू संगु नाम हरि रंगु तिनी ब्रहमु बीचारिआ जीउ ॥ ब्रहमु बीचारिआ जनमु सवारिआ पूरन किरपा प्रभि करी ॥ करु गहि लीने हरि जसो दीने जोनि ना धावै नह मरी ॥ सतिगुर दइआल किरपाल भेटत हरे कामु क्रोधु लोभु मारिआ ॥ कथनु न जाइ अकथु सुआमी सदकै जाइ नानकु वारिआ ॥ ५ ॥ १ ॥ ३ ॥

डखणा॥ ईश्वर का नाम अमूल्य है। इसका मूल्य कोई भी नहीं जानता। जिनके मस्तक पर भाग्य रेखाएँ विद्यमान हैं, हे नानक ! वे ईश्वर की प्रीति का आनंद प्राप्त करते हैं॥ छंद॥ हरिनाम इतना पावन है कि उसका मुख से उच्चारण करने वाले पवित्र हो जाते है। वे सभी धन्य हैं, जो प्रभु के नाम को सुनते हैं और प्रभु नाम महिमा को लिखने वालों का तो समूचा वंश ही भवसागर से पार हो जाता है। जिन्हें संतों की संगति मिल जाती हैं, वे परमात्मा के नाम में मग्न हो जाता है और ईश्वर का चिन्तन करता हैं। जो ब्रह्म का चिन्तन करते हैं वे अपना जीवन सफल कर लेते हैं और उन पर ठाकुर की बड़ी कृपा होती है। ईश्वर उनका हाथ थाम कर उन्हें यश प्रदान करता है और योनियों के आवागमन से मुक्त होकर जन्म–मरण के बंधन में नहीं पड़ते। दयालु एवं कृपालु सतिगुरु को मिलकर काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अहंकार नष्ट हो गए हैं। जगत् का स्वामी अकथनीय है और उसकी महिमा कथन नहीं की जा सकती। नानक उस पर तन–मन से न्यौछावर हैं। इसलिए वह उस पर कुर्बान जाता है॥ ५॥ १॥ ३॥

सिरीरागु महला ४ वणजारा ੧ਓ सति नामु गुर प्रसादि ॥

हरि हरि उतमु नामु है जिनि सिरिआ सभु कोइ जीउ ॥ हरि जीअ सभे प्रतिपालदा घटि घटि रमईआ सोइ ॥ सो हरि सदा धिआईऐ तिसु बिनु अवरु न कोइ ॥ जो मोहि माइआ चितु लाइदे से छोडि चले दुखु रोइ ॥ जन नानक नामु धिआइआ हरि अंति सखाई होइ ॥ १ ॥ मै हरि बिनु अवरु

न कोइ ॥ हरि गुर सरणाई पाईऐ वणजारिआ मित्रा वडभागि परापति होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संत जना विणु भाईआ हरि किनै न पाइआ नाउ ॥ विचि हउमै करम कमावदे जिउ वेसुआ पुतु निनाउ ॥ पिता जाति ता होईऐ गुरु तुठा करे पसाउ ॥ वडभागी गुरु पाइआ हरि अहिनिसि लगा भाउ ॥ जन नानकि ब्रहमु पछाणिआ हरि कीरति करम कमाउ ॥ २ ॥ मनि हरि हरि लगा चाउ ॥ गुरि पूरै नामु द्रिड़ाइआ हरि मिलिआ हरि प्रभ नाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब लगु जोबनि सासु है तब लगु नामु धिआइ ॥ चलदिआ नालि हरि चलसी हरि अंते लए छडाइ ॥ हउ बलिहारी तिन कउ जिन हरि मनि वुठा आइ ॥ जिनी हरि हरि नामु न चेतिओ से अंति गए पछुताइ ॥ धुरि मसतकि हरि प्रभि लिखिआ जन नानक नामु धिआइ ॥ ३ ॥ मन हरि हरि प्रीति लगाइ ॥ वडभागी गुरु पाइआ गुर सबदी पारि लघाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि आपे आपु उपाइदा हरि आपे देवै लेइ ॥ हरि आपे भरमि भुलाइदा हरि आपे ही मति देइ ॥ गुरमुखा मनि परगासु है से विरले केई केइ ॥ हउ बलिहारी तिन कउ जिन हरि पाइआ गुरमते ॥ जन नानकि कमलु परगासिआ मनि हरि हरि वुठड़ा हे ॥ ४ ॥ मनि हरि हरि जपनु करे ॥ हरि गुर सरणाई भजि पउ जिंदू सभ किलविख दुख परहरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घटि घटि रमईआ मनि वसै किउ पाईऐ कितु भति ॥ गुरु पूरा सतिगुरु भेटीऐ हरि आइ वसै मनि चिति ॥ मै धर नामु अधारु है हरि नामै ते गति मति ॥ मै हरि हरि नामु विसाहु है हरि नामे ही जति पति ॥ जन नानक नामु धिआइआ रंगि रतड़ा हरि रंगि रति ॥ ५ ॥ हरि धिआवहु हरि प्रभु सति ॥ गुर बचनी हरि प्रभु जाणिआ सभ हरि प्रभु ते उतपति ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन कउ पूरबि लिखिआ से आइ मिले गुर पासि ॥ सेवक भाइ वणजारिआ मित्रा गुरु हरि हरि नामु प्रगासि ॥ धनु धनु वणजु वापारीआ जिन वखरु लदिअड़ा हरि रासि ॥ गुरमुखा दरि मुख उजले से आइ मिले हरि पासि ॥ जन नानक गुरु तिन पाइआ जिना आपि तुठा गुणतासि ॥ ६ ॥ हरि धिआवहु सासि गिरासि ॥ मनि प्रीति लगी तिना गुरमुखा हरि नामु जिना रहरासि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ १ ॥

जिस परमात्मा ने यह सृष्टि–रचना की है, उसका 'हरि–हरि' नाम सबसे उत्तम है। वह हरि–परमेश्वर समस्त जीवों का पालन–पोषण करता है और वहीं राम सर्वव्यापक है। इसलिए सदैव उस परमात्मा का ध्यान करना चाहिए। चूंकि उसके अतिरिक्त जीव का अन्य कोई सहारा नहीं है। जो व्यक्ति अपना चित्त माया के मोह में लगाकर रखते हैं, वे मृत्यु समय दुखी होकर विलाप करते हुए सबकुछ दुनिया में छोड़कर ही चले जाते हैं। हे नानक ! जो व्यक्ति भगवान का नाम–सिमरन करते हैं, अन्तिम समय भगवान का नाम ही उनका साथी बनता है॥ १॥ मेरे भगवान के अलावा मेरा अन्य कोई सहारा नहीं है। हे मेरे वणजारे मित्र ! भगवान तो गुरु की शरण ग्रहण करने से ही मिलता है। यदि मनुष्य की किस्मत अच्छी हो तो ही भगवान मिलता है॥१॥ रहाउ॥ हे भाई ! संतजनों की कृपा बिना ईश्वर का नाम प्राप्त नहीं हुआ। स्वेच्छाचारी अहंकारवश ऐसे कर्म करते हैं, जैसे वेश्या–पुत्र पिता का नाम नहीं जानता। वैसे ही ऐसे लोगों का प्रभु पिता का पता नहीं चलता। प्राणी पितृ–जाति को तभी प्राप्त करता है, यदि गुरु जी प्रसन्न होकर उस पर कृपा धारण करे। मनुष्य को बड़े सौभाग्य से गुरु प्राप्त होता है और दिन–रात वह प्रभु की प्रीति में लगा रहता है। हे नानक ! जिसने ब्रह्म को पहचान लिया है, वहीं भगवान की महिमा का कर्म करता है॥२॥ उसके हृदय में भगवान के सिमरन हेतु चाव उत्पन्न हो गया है। पूर्ण गुरु ने उसके हृदय में नाम बसा दिया है। जिसके कारण उसे हरि–प्रभु का नाम मिल गया है और भगवान भी मिल गया है॥१॥ रहाउ॥ जब तक शरीर स्वस्थ है,

और उसमें प्राणों का संचार होता है, तब तक तुम हरि–नाम की आराधना करो। तेरे नश्वर संसार से गमन करते समय ईश्वर का नाम तेरे साथ जाएगा और अंत में स्वामी तुझे मृत्यु से मुक्त कराएगा। मैं उन पर कुर्बान जाता हूँ, जिनके हृदय में ईश्वर ने आकर वास कर लिया है। जो लोग दुखभंजक हरि के नाम का चिन्तन नहीं करते, वे अंतिम समय पश्चाताप करते हुए चले जाएँगे। हे नानक! ईश्वर ने जिसके मस्तक पर भाग्य–रेखा लिखी है, वह ईश्वर के नाम का स्मरण करते हैं॥३॥ हे मेरे मन! तू ईश्वर के नाम के साथ प्रीति लगा। किसी भाग्यशाली व्यक्ति को ही गुरु मिलता है और गुरु के उपदेश द्वारा मनुष्य भवसागर से पार हो जाता है॥१॥ रहाउ॥ ईश्वर इस सृष्टि को स्वयं उत्पन्न करता है और स्वयं ही प्राण देता और लेता है। हरि स्वयं ही मोह–माया के भ्रम में भुला देता है और स्वयं ही बुद्धि प्रदान करता है। गुरमुखों के मन में आत्मिक प्रकाश होता है और ऐसे व्यक्ति विरले ही होते हैं। मैं उन पर कुर्बान जाता हूँ, जिन्होंने गुरु के उपदेश द्वारा ईश्वर को प्राप्त किया है। हे नानक! मेरा हृदय प्रफुल्लित हो गया है और मेरे चित्त के अन्दर ईश्वर आकर बस गया है॥४॥ हे मेरे मन! तू ईश्वर के नाम का जाप कर। हे मेरे मन! तू भागकर ईश्वर रूप गुरु की शरण ग्रहण कर। वह तेरे सर्व पापों–दुःखों का निवारण कर देंगे॥१॥ रहाउ॥ राम प्रत्येक प्राणी के हृदय में वास करता है। कैसे और किस भेद से वह प्राप्त किया जा सकता है? यदि प्राणी को भाग्यवश पूर्ण सतिगुरु मिल जाए तभी उसके हृदय में हरि आकर टिक जाता है। ईश्वर का नाम ही मेरा आश्रय और निर्वाह है। स्वामी के नाम से ही मुझे मोक्ष एवं मुक्तिदायिनी सूझ मिलती है। ईश्वर के नाम में मेरा विश्वास है और ईश्वर का नाम ही मेरी जाति एवं प्रतिष्ठा है। नानक ने नाम की आराधना की है और वह ईश्वर–रंग में मग्न उसी का नाम स्मरण करता है॥५॥ भगवान का ध्यान करो, भगवान सदैव सत्य है। गुरु के शब्द द्वारा मनुष्य ईश्वर को समझता है। परमेश्वर ही सृष्टि का कर्त्ता है॥१॥ रहाउ॥ जिन प्राणियों के भाग्य में प्राप्ति लिखी है, वे गुरु के पास आते हैं और उनको मिलते हैं। हे मेरे वणजारे मित्र! जो व्यक्ति श्रद्धा भावना से गुरु के पास आते हैं, गुरु उनके हृदय में भगवान के नाम का प्रकाश कर देता है। वह व्यापार और व्यापारी दोनों ही धन्य हैं, जिन्होंने ईश्वर के नाम का व्यापार किया है अर्थात् जो श्रद्धा की पूँजी लगाकर प्रभु नाम की सामग्री लादते हैं। गुरमुख जनों के मुख प्रभु–दरबार में उज्ज्वल हैं। ईश्वर के दरबार में वह प्रभु के पास आते हैं और उसमें लीन हो जाते हैं। हे नानक! गुरु उन्हें ही मिलता है, जिन पर गुणों का भण्डार भगवान स्वयं प्रसन्न होता है॥६॥ हे मनुष्य! प्रत्येक श्वास एवं भोजन के ग्रास के साथ तुम ईश्वर का ध्यान करो। जिन्होंने भगवान के नाम को अपने जीवन सफर की पूँजी बनाया है, उन गुरमुखों के मन में भगवान के लिए प्रेम उत्पन्न होता है॥ १॥ रहाउ॥१॥

੧ਓ सतिगुर प्रसादि ॥ सिरीराग की वार महला ४ सलोका नालि ॥

सलोक मः ३ ॥ रागा विचि स्रीरागु है जे सचि धरे पिआरु ॥ सदा हरि सचु मनि वसै निहचल मति अपारु ॥ रतनु अमोलकु पाइआ गुर का सबदु बीचारु ॥ जिहवा सची मनु सचा सचा सरीर अकारु ॥ नानक सचै सतिगुरि सेविऐ सदा सचु वापारु ॥ १ ॥

{'वार' यशोगान की कविता को कहते हैं। 'पउड़ी' एक तरह का छन्द है, जिसमें वीरता की गाथा का वर्णन किया जाता है। यहाँ पर गुरु जी भगवान की महिमा कर रहे हैं।}

श्लोक महला ३॥ रागों में श्री राग तभी सर्वोत्तम राग है, यदि इसके द्वारा प्राणी का सत्य–परमेश्वर से प्रेम हो जाए। फिर मन में हमेशा ही सत्य प्रभु निवास करता है और प्राणी की बुद्धि अपार प्रभु में स्थिर होती है। गुरु के शब्द का चिंतन करने से प्राणी नाम रूपी अमूल्य रत्न को प्राप्त

कर लेता है। नाम–सिमरन करने से मनुष्य की जिह्वा एवं मन सत्य हो जाते हैं और उसका शरीर एवं आकार भी सत्य हो जाता है। हे नानक ! नाम का सत्य व्यापार हमेशा सत्य के पुंज सतिगुरु की सेवा करने से ही होता है॥ १॥

मः ३ ॥ होरु बिरहा सभ धातु है जब लगु साहिब प्रीति न होइ ॥ इहु मनु माइआ मोहिआ वेखणु सुनणु न होइ ॥ सह देखे बिनु प्रीति न ऊपजै अंधा किआ करेइ ॥ नानक जिनि अखी लीतीआ सोई सचा देइ ॥ २ ॥

महला ३॥ जब तक प्रभु से सच्चा प्यार नहीं होता, मनुष्य की शेष प्रीति निरर्थक है। मन को माया ने मोहित कर रखा है, इसलिए वह प्रभु को देखता–सुनता ही नहीं। पति–परमेश्वर के दर्शन के बिना प्रेम उत्पन्न नहीं होता। अंधा अर्थात ज्ञानहीन आदमी क्या कर सकता है? हे नानक ! जिस प्रभु ने मनुष्य को नेत्रहीन (ज्ञानहीन) किया है, वही उसे ज्ञान रूपी नेत्र दे भी सकता है॥२॥

पउड़ी ॥ हरि इको करता इकु इको दीबाणु हरि ॥ हरि इकसै दा है अमरु इको हरि चिति धरि ॥ हरि तिसु बिनु कोई नाहि डरु भ्रमु भउ दूरि करि ॥ हरि तिसै नो सालाहि जि तुधु रखै बाहरि घरि ॥ हरि जिस नो होइ दइआलु सो हरि जपि भउ बिखमु तरि ॥ १ ॥

पउड़ी॥ एक ईश्वर ही समस्त जीवों का रचयिता है और एक ही ईश्वर का दरबार है। एक ईश्वर का ही आदेश सब पर चल रहा है और तुम एक ईश्वर को उपने हृदय में धारण करो। उस स्वामी के अलावा अन्य कोई नहीं। तुम अपना डर, संदेह तथा भय निवृत्त कर दो। उस हरि की ही स्तुति करो, जो तेरे घर के अन्दर व बाहर रक्षा करता है। ईश्वर जिस पर दयालु होता है, वह प्रभु का भजन करने से भय के विकराल सागर से पार हो जाता है॥१॥

सलोक मः १ ॥ दाती साहिब संदीआ किआ चलै तिसु नालि ॥ इक जागंदे ना लहंनि इकना सुतिआ देइ उठालि ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ समस्त नियामतें उस भगवान की दी हुई हैं। उसके साथ कोई बल नहीं चल सकता है ? कई प्राणी जागते हुए भी उससे नियामतें प्राप्त नहीं कर सकते और कई प्राणियों को वह नींद से जगाकर नियामतें देता है॥१॥

मः १ ॥ सिदकु सबूरी सादिका सबरु तोसा मलाइकां ॥ दीदारु पूरे पाइसा थाउ नाही खाइका ॥ २ ॥

महला १॥ विश्वास एवं संतोष धैर्यशालियों के गुण हैं और सहनशीलता फरिश्तों का यात्रा–व्यय हैं। ऐसे व्यक्ति पूर्ण प्रभु के दर्शन कर लेते हैं परन्तु दोषियों को कहीं भी स्थान नहीं मिलता॥२॥

पउड़ी ॥ सभ आपे तुधु उपाइ कै आपि कारै लाई ॥ तूं आपे वेखि विगसदा आपणी वडिआई ॥ हरि तुधहु बाहरि किछु नाही तूं सचा साई ॥ तूं आपे आपि वरतदा सभनी ही थाई ॥ हरि तिसै धिआवहु संत जनहु जो लए छडाई ॥ २ ॥

पउड़ी॥ हे प्रभु ! इस दुनिया की रचना आपने की है और स्वयं ही तुमने दुनिया को अलग–अलग धंधों में लगाया है। अपनी महानता को देखकर तुम स्वयं ही प्रसन्न होते हो। मेरे प्रभु तेरे अलावा अन्य कुछ भी नहीं। तुम सच्चे मालिक हो। तुम स्वयं ही सर्वत्र व्यापक हो। हे संतजनो ! आप उस परमेश्वर की उपासना करो, जो अंतिम समय तुम्हें मुक्ति प्रदान करेगा॥२॥

सलोक मः १ ॥ फकड़ जाती फकड़ु नाउ ॥ सभना जीआ इका छाउ ॥ आपहु जे को भला कहाए ॥ नानक ता परु जापै जा पति लेखै पाए ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ ऊँची जाति एवं नाम का अहंकार व्यर्थ है। समस्त जीवों में एक ही ईश्वर रूपी वृक्ष की छाया का सुख उपलब्ध है। हे नानक! यदि कोई व्यक्ति स्वयं को अच्छा कहलवाता है तो उसे तभी अच्छा जाना जाएगा, यदि उसका सम्मान प्रभु के दरबार में स्वीकृत होगा॥१॥

मः २ ॥ जिसु पिआरे सिउ नेहु तिसु आगै मरि चलीऐ ॥ ध्रिगु जीवणु संसारि ता कै पाछै जीवणा ॥ २ ॥

महला २॥ जिस प्रियतम से प्रेम होता है, उसके ज्योति ज्योत समाने से पूर्व ही जगत् में प्राण त्याग कर चले जाना बेहतर है। प्रियतम के पश्चात् जीना संसार में धिक्कार का जीवन व्यतीत करना है॥२॥

पउड़ी ॥ तुधु आपे धरती साजीऐ चंदु सूरजु दुइ दीवे ॥ दस चारि हट तुधु साजिआ वापारु करीवे ॥ इकना नो हरि लाभु देइ जो गुरमुखि थीवे ॥ तिन जमकालु न विआपई जिन सचु अंम्रितु पीवे ॥ ओइ आपि छुटे परवार सिउ तिन पिछै सभु जगतु छुटीवे ॥ ३ ॥

पउड़ी॥ हे प्रभु! तूने स्वयं इस धरती की रचना की है, चाँद एवं सूर्य ये दो दीपक बनाए हैं। तुम्हीं ने इस ब्रह्माण्ड में चौदह पुरियों की रचना की है, जहाँ पर प्राणियों के कर्मों का व्यापार होता है। जो प्राणी गुरमुख हो जाते हैं, ईश्वर उन्हें मोक्ष रूपी लाभ प्रदान करता है। जो सत्य नाम के अमृत का पान करते हैं, उन्हें यमदूत नहीं पकड़ते। ऐसे ईश्वर से स्नेह करने वाले प्राणी स्वयं भी मुक्त होते हैं और उनका परिवार भी बच जाता है तथा जो उनके पीछे चलता है, वह भी बच जाता है॥३॥

सलोक मः १ ॥ कुदरति करि कै वसिआ सोइ ॥ वखतु वीचारे सु बंदा होइ ॥ कुदरति है कीमति नही पाइ ॥ जा कीमति पाइ त कही न जाइ ॥ सरै सरीअति करहि बीचारु ॥ बिनु बूझे कैसे पावहि पारु ॥ सिदकु करि सिजदा मनु करि मखसूदु ॥ जिह धिरि देखा तिह धिरि मउजूदु ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ भगवान अपनी कुदरत की रचना करके स्वयं ही इसमें निवास कर रहा है। जो प्राणी जीवन काल का विचार करता है, वही परमात्मा का सच्चा भक्त होता है। भगवान कुदरत में निवास करता है परन्तु उसका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। यदि इन्सान मूल्य जान भी ले, तो वह ब्यान नहीं कर सकता। कुछ लोग शरीयत द्वारा मालिक–प्रभु बारे विचार करते हैं। परन्तु ईश्वर को समझने के बिना वह किस तरह पार हो सकते हैं? धैर्य को नमन करो और मन को नाम–सिमरन में लगाने का जीवन–मनोरथ बनाओ। फिर जिस तरफ भी देखोगे, उधर ही ईश्वर के प्रत्यक्ष दर्शन करोगे॥१॥

मः ३ ॥ गुर सभा एव न पाईऐ ना नेड़ै ना दूरि ॥ नानक सतिगुरु तां मिलै जा मनु रहै हदूरि ॥ २॥

महला ३॥ गुरु की संगति (शारीरिक रूप से) निकट अथवा दूर रहने से प्राप्त नहीं होती। हे नानक! सतिगुरु तभी मिलते हैं, यदि मन उनकी उपस्थिति के अन्दर सदैव विचरण करे॥२॥

पउड़ी ॥ सपत दीप सपत सागरा नव खंड चारि वेद दस असट पुराणा ॥ हरि सभना विचि तूं वरतदा हरि सभना भाणा ॥ सभि तुझै धिआवहि जीअ जंत हरि सारग पाणा ॥ जो गुरमुखि हरि आराधदे तिन हउ कुरबाणा ॥ तूं आपे आपि वरतदा करि चोज विडाणा ॥ ४ ॥

पउड़ी॥ सृष्टि में सात द्वीप, सात समुद्र, नौ खण्ड, चार वेद एवं अठारह पुराण हैं। हे प्रभु! तुम इन सबमें विद्यमान हो और तुम सबको प्रिय हो। हे सारिंगपाणि ईश्वर! समस्त जीव–जन्तु सदैव तुम्हारा ही सिमरन करते हैं। जो गुरमुख हरि की वंदना करते हैं, मैं उन पर कुर्बान जाता हूँ। हे ईश्वर! तुम ही आश्चर्यजनक लीलाओं को रचकर स्वयं ही सबमें विद्यमान हो रहे हो॥४॥

सलोक मः ३ ॥ कलउ मसाजनी किआ सदाईऐ हिरदै ही लिखि लेहु ॥ सदा साहिब कै रंगि रहै कबहूं न तूटसि नेहु ॥ कलउ मसाजनी जाइसी लिखिआ भी नाले जाइ ॥ नानक सह प्रीति न जाइसी जो धुरि छोडी सचै पाइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ *(एक बार गुरु अमरदास जी श्रद्धालुओं को उपदेश प्रदान कर रहे थे कि तभी किसी सिक्ख ने उनके उपदेश लिख लेने के लिए कलम–दवात मंगवाई। इसी पर यह श्लोक उच्चरित किया गया।)*

लेखनी और दवात मंगवाने की क्या आवश्यकता है? जो लिखना चाहते हो, उसे अपने हृदय में ही लिखो। हृदय में लिख लेने से तुम सदैव प्रभु के प्रेम में लीन रहोगे और कभी भी उस परमेश्वर से विलग नहीं होगे। कलम और दवात नाशवान हैं, लिखित कागज भी नष्ट हो जाएगा। हे नानक! जो प्रेम प्रभु ने प्रारम्भ से ही जीव की किस्मत में लिख दिया है, वह प्रेम कभी भी मिट नहीं सकता॥१॥

मः ३ ॥ नदरी आवदा नालि न चलई वेखहु को विउपाइ ॥ सतिगुरि सचु द्रिड़ाइआ सचि रहहु लिव लाइ ॥ नानक सबदी सचु है करमी पलै पाइ ॥ २ ॥

महला ३॥ जो वस्तु दृश्यमान है, वह कभी अनतकाल तक प्राणी का साथ नहीं देती। चाहे तुम परख कर देख सकते हो। अतः सतिगुरु ने सदैव सत्य की प्रेरणा दी है; उसी सत्य में सुरति लगाने से सत्य की प्राप्ति होगी। हे नानक! वह सत्य प्रभु नाम द्वारा ही मिलता है, किन्तु उसकी उपलब्धि शुभ कर्मों से होती है॥२॥

पउड़ी ॥ हरि अंदरि बाहरि इकु तूं तूं जाणहि भेतु ॥ जो कीचै सो हरि जाणदा मेरे मन हरि चेतु ॥ सो डरै जि पाप कमावदा धरमी विगसेतु ॥ तूं सचा आपि निआउ सचु ता डरीऐ केतु ॥ जिना नानक सचु पछाणिआ से सचि रलेतु ॥ ५ ॥

पउड़ी॥ हे प्रभु! अन्दर–बाहर अर्थात् समस्त सृष्टि में तू ही मौजूद है। इस रहस्य को तू ही जानता है। मनुष्य जो कुछ भी करता है, उसको परमात्मा जानता है। हे मेरे मन! तू ईश्वर का चिन्तन कर। जो प्राणी पाप करता है, केवल वही भय में रहता है। परन्तु धर्म करने वाला नित्य प्रसन्नचित्त रहता है। हे भगवान! तुम सत्य–स्वरूप हो, तुम्हारा न्याय भी सत्य है। अतः (प्रभु की शरण में) हमें किस बात का भय है। हे नानक! जिन्होंने सत्य (परमात्मा) को पहचान लिया, वे उस सत्य में ही विलीन हो जाते हैं॥५॥

सलोक मः ३ ॥ कलम जलउ सणु मसवाणीऐ कागदु भी जलि जाउ ॥ लिखण वाला जलि बलउ जिनि लिखिआ दूजा भाउ ॥ नानक पूरबि लिखिआ कमावणा अवरु न करणा जाइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ दवात सहित कलम भी जल जाए, लिखा हुआ कागज भी जल जाए, स्वयं लिखने वाला भी जल कर मर जाए, जिसने द्वैत–भाव बारे लिखा है। हे नानक! प्राणी वही कर्म करता है, जो उसके पूर्व–जन्म के कर्म–फलानुसार है। अन्य कुछ नहीं किया जा सकता॥१॥

मः ३ ॥ होरु कूड़ु पड़णा कूड़ु बोलणा माइआ नालि पिआरु ॥ नानक विणु नावै को थिरु नही पड़ि पड़ि होइ खुआरु ॥ २ ॥

महला ३॥ भगवान के नाम के सिवाय अन्य कुछ पढ़ना एवं बोलना मिथ्या है। ये तो माया से प्रेम उत्पन्न करते हैं। हे नानक! भगवान के नाम के सिवाय कुछ भी अटल नहीं रह सकता। इसके अलावा अन्य पढ़-पढ़कर मनुष्य नष्ट ही होते हैं॥

पउड़ी ॥ हरि की वडिआई वडी है हरि कीरतनु हरि का ॥ हरि की वडिआई वडी है जा निआउ है धरम का ॥ हरि की वडिआई वडी है जा फलु है जीअ का ॥ हरि की वडिआई वडी है जा न सुणई कहिआ चुगल का ॥ हरि की वडिआई वडी है अपुछिआ दानु देवका ॥ ६ ॥

पउड़ी॥ भगवान की महिमा महान है और भगवान का भजन करना ही जीव हेतु उत्तम है। भगवान की महिमा महान है, क्योंकि भगवान का न्याय धर्म का है। भगवान की महिमा महान है, जो जीव को महिमा करने का ही फल प्राप्त होता है। भगवान की महिमा महान है, जो वह निंदक की बात नहीं सुनता। भगवान की महिमा महान है, क्योंकि वह बिना पूछे ही सबकी कामनाएँ पूरी करता है॥६॥

सलोक मः ३ ॥ हउ हउ करती सभ मुई संपउ किसै न नालि ॥ दूजै भाइ दुखु पाइआ सभ जोही जमकालि ॥ नानक गुरमुखि उबरे साचा नामु समालि ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ सारी दुनिया मैं-मैं अर्थात् अहंकार करती हुई नष्ट हो गई है। मृत्यु के समय यह धन-संपत्ति किसी के साथ नहीं जाती। मोह-माया में फँसकर सभी ने दुःख ही प्राप्त किया है। यमदूत सभी को प्रताड़ित करता है। हे नानक! सत्य नाम की आराधना करने से गुरमुख प्राणियों को मोक्ष प्राप्त हुआ है॥१॥

मः १ ॥ गलीं असी चंगीआ आचारी बुरीआह ॥ मनहु कुसुधा कालीआ बाहरि चिटवीआह ॥ रीसा करिह तिनाड़ीआ जो सेवहि दरु खड़ीआह ॥ नालि खसमै रतीआ माणहि सुखि रलीआह ॥ होदै ताणि निताणीआ रहहि निमानणीआह ॥ नानक जनमु सकारथा जे तिन कै संगि मिलाह ॥ २ ॥

महला १॥ बातों में हम उत्तम विचार व्यक्त करते हैं परन्तु आचरण से अपवित्र हैं। मन में हम अशुद्ध और मलिन हैं परन्तु बाहरी वेशभूषा से सफेद दिखते हैं। हम उनकी समानता करते हैं जो प्रभु के द्वार पर उसकी सेवा में मग्न हैं। किन्तु वे अपने पति-परमेश्वर के रंग में लीन हैं और सुख एवं आनंद भोगती हैं। वे सशक्त होने पर भी विनीत होती हुई सदैव दीन एवं नम्र हैं। हे नानक! हमारा जीवन तभी सफल हो सकता है, यदि हम उन मुक्तात्माओं के साथ संगति करें॥२॥

पउड़ी ॥ तूं आपे जलु मीना है आपे आपे ही आपि जालु ॥ तूं आपे जालु वताइदा आपे विचि सेबालु ॥ तूं आपे कमलु अलिपतु है सै हथा विचि गुलालु ॥ तूं आपे मुकति कराइदा इक निमख घड़ी करि खिआलु ॥ हरि तुधहु बाहरि किछु नही गुर सबदी वेखि निहालु ॥ ७ ॥

पउड़ी॥ हे जगत् के स्वामी! तू स्वयं ही जल है और स्वयं ही जल में रहने वाली मछली है। हे प्रभु! तू स्वयं ही मछली को फँसाने वाला जाल है। तुम स्वयं ही मछेरा बनकर मछली को पकड़ने हेतु जाल फैंकते हो और स्वयं ही जल में रखा हुआ टुकड़ा हो। हे ईश्वर! तुम स्वयं ही सैंकड़ों हाथ

गहरे जल में गहरे लाल रंग का निर्लिप्त कमल हो। हे भगवान ! जो प्राणी क्षण भर के लिए भी तुम्हारा चिन्तन करते हैं। उन्हें तुम स्वयं ही जन्म-मरण के चक्र से मुक्त कर देते हो। हे परमेश्वर ! तेरे हुक्म से परे कुछ भी नहीं। गुरु के शब्द द्वारा तेरे दर्शन करके प्राणी कृतार्थ हो जाता है॥ ७॥

सलोक मः ३ ॥ हुकमु न जाणै बहुता रोवै ॥ अंदरि धोखा नीद न सोवै ॥ जे धन खसमै चलै रजाई ॥ दरि घरि सोभा महलि बुलाई ॥ नानक करमी इह मति पाई ॥ गुर परसादी सचि समाई ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ जो जीव-स्त्री परमेश्वर के आदेश को नहीं जानती, वह बहुत विलाप करती है। उसके मन में छल-कपट विद्यमान होता है, सो वह सुख की गहरी नींद नहीं सोती। यदि जीव-स्त्री अपने पति-प्रभु की इच्छानुसार चले, तो वह अपने प्रभु के दरबार एवं घर में ही सम्मान पा लेती है और पति-प्रभु उसे अपने आत्म-स्वरूप में बुला लेता है। हे नानक ! उसे यह ज्ञान भगवान की कृपा द्वारा ही होता है। गुरु की कृपा से वह सत्य में ही समा जाती है॥१॥

मः ३ ॥ मनमुख नाम विहूणिआ रंगु कसुंभा देखि न भुलु ॥ इस का रंगु दिन थोड़िआ छोछा इस दा मुलु ॥ दूजै लगे पचि मुए मूरख अंध गवार ॥ बिसटा अंदरि कीट से पइ पचहि वारो वार ॥ नानक नाम रते से रंगुले गुर कै सहजि सुभाइ ॥ भगती रंगु न उतरै सहजे रहै समाइ ॥ २ ॥

महला ३॥ हे नामविहीन मनमुख ! माया का रंग कुसुंभे के फूल जैसा सुन्दर होता है। तू इसे देखकर भूल मत जाना। इसका रंग थोड़े दिन ही रहता है। इसका मूल्य भी बहुत न्यून है। जो व्यक्ति माया से प्रेम करते हैं, वे मूर्ख ज्ञानहीन एवं गंवार हैं। वे माया के मोह में जल कर मरते हैं। मरणोपरांत वे विष्टा के कीड़े बनते हैं, जो पुनः पुनः जन्म लेकर विष्टा में जलते रहते हैं। हे नानक ! जो व्यक्ति सहज अवस्था में गुरु के प्रेम द्वारा प्रभु-नाम में मग्न रहते हैं, वे सदैव ही सुख भोगते हैं। उनका भक्ति का प्रेम कभी नाश नहीं होता और वे सहज अवस्था में समाए रहते हैं॥२॥

पउड़ी ॥ सिसटि उपाई सभ तुधु आपे रिजकु संबाहिआ ॥ इकि वलु छलु करि कै खावदे मुहहु कूड़ु कुसतु तिनी ढाहिआ ॥ तुधु आपे भावै सो करहि तुधु ओतै कंमि ओइ लाइआ ॥ इकना सचु बुझाइओनु तिना अतुट भंडार देवाइआ ॥ हरि चेति खाहि तिना सफलु है अचेता हथ तडाइआ ॥ ८ ॥

पउड़ी॥ हे ईश्वर ! तुमने समूची सृष्टि की रचना की है और स्वयं ही भोजन देकर सबका पालन करते हो। कई प्राणी छल-कपट करके भोजन खाते हैं और अपने मुख से वह झूठ एवं असत्यता व्यक्त करते हैं। हे प्रभु ! जो तुम्हें भला प्रतीत होता है, तुम वहीं करते हो और प्राणियों को अलग-अलग कार्यों में लगाते हो और वह वही कुछ करते हैं। कई प्राणियों को तुमने सत्य नाम की सूझ प्रदान की है और उनको गुरु द्वारा नाम के अमूल्य भण्डार दिलवाए हैं। जो प्राणी ईश्वर का सिमरन करके खाते हैं उनका खाना फलदायक है। जो प्राणी ईश्वर को स्मरण नहीं करते, वह दूसरे से माँगने के लिए हाथ फैलाते हैं॥८॥

सलोक मः ३ ॥ पड़ि पड़ि पंडित बेद वखाणहि माइआ मोह सुआइ ॥ दूजै भाइ हरि नामु विसारिआ मन मूरख मिलै सजाइ ॥ जिनि जीउ पिंडु दिता तिसु कबहूं न चेतै जो देंदा रिजकु संबाहि ॥ जम का फाहा गलहु न कटीऐ फिरि फिरि आवै जाइ ॥ मनमुखि किछू न सूझै अंधुले पूरबि लिखिआ कमाइ ॥ पूरै भागि सतिगुरु मिलै सुखदाता नामु वसै मनि आइ ॥ सुखु माणहि सुखु पैनणा सुखे सुखि विहाइ ॥ नानक सो नाउ मनहु न विसारीऐ जितु दरि सचै सोभा पाइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ माया–मोह के स्वाद कारण पण्डित वेदों को पढ़–पढ़कर उनकी कथा करते हैं। माया के प्रेम में मूर्ख मन ने भगवान के नाम को विस्मृत कर दिया है। अतः उसे प्रभु के दरबार में अवश्य दण्ड मिलेगा। जिस परमेश्वर ने मनुष्य को प्राण और शरीर दिया है, उसे वह कदाचित स्मरण नहीं करता, जो सबका भोजन देकर पालन कर रहा है। मनमुख प्राणियों के गले यम–पाश प्रतिदिन बना रहता है और वे सदैव जन्म–मरण के बंधन में कष्ट सहन करते हैं। ज्ञानहीन मनमुख इन्सान कुछ भी नहीं समझता और वही कुछ करता है जो पूर्व–जन्म के कर्मों अनुसार लिखा है। सौभाग्यवश जब सुखदाता सतिगुरु जी मिलते हैं तो हरि–नाम मनुष्य के हृदय में निवास करने लगता है। ऐसा व्यक्ति सुख ही भोगता है। उसके लिए सुख ही वस्त्रों का पहनावा है और उसका समूचा जीवन सुख में ही व्यतीत होता है। हे नानक! अपने हृदय में से उस नाम को विस्मृत मत करो, जिसकी बदौलत सत्य के दरबार में शोभा प्राप्त होती है॥१॥

मः ३ ॥ सतिगुरु सेवि सुखु पाइआ सचु नामु गुणतासु ॥ गुरमती आपु पछाणिआ राम नाम परगासु ॥ सचो सचु कमावणा वडिआई वडे पासि ॥ जीउ पिंडु सभु तिस का सिफति करे अरदासि ॥ सचै सबदि सालाहणा सुखे सुखि निवासु ॥ जपु तपु संजमु मनै माहि बिनु नावै ध्रिगु जीवासु ॥ गुरमती नाउ पाईऐ मनमुख मोहि विणासु ॥ जिउ भावै तिउ राखु तूं नानकु तेरा दासु ॥ २ ॥

महला ३॥ भगवान का सत्यनाम गुणों का खजाना है। जिसने सतिगुरु की सेवा की है, उसे सुख ही उपलब्ध हुआ है। जिस व्यक्ति ने गुरु की मति द्वारा अपने स्वरूप को पहचान लिया है, उसके हृदय में प्रभु नाम का प्रकाश हो जाता है। जो व्यक्ति सत्य–नाम का सिमरन करते हैं, उन्हें भगवान से बड़ी शोभा मिलती है। मैं उस भगवान की महिमा करता हूँ और प्रार्थना करता हूँ कि हे प्रभु! मेरे प्राण एवं मेरा शरीर यह सब कुछ तेरा ही दिया हुआ है। यदि सत्य प्रभु की महिमा नाम द्वारा की जाए तो मनुष्य अनंत सुख भोगता है। मन द्वारा भगवान की महिमा करनी ही जप, तप एवं संयम है। नामविहीन मनुष्य का जीवन धिक्कार योग्य है। नाम गुरु की मति द्वारा ही मिलता है। माया के मोह में फँसकर मनमुख व्यक्ति का विनाश हो जाता है। हे जगत् के स्वामी! जिस तरह तुझे अच्छा लगता है, वैसे ही मेरी रक्षा करो, नानक तेरा सेवक है॥२॥

पउड़ी ॥ सभु को तेरा तूं सभसु दा तूं सभना रासि ॥ सभि तुधै पासहु मंगदे नित करि अरदासि ॥ जिसु तूं देहि तिसु सभु किछु मिलै इकना दूरि है पासि ॥ तुधु बाझहु थाउ को नाही जिसु पासहु मंगीऐ मनि वेखहु को निरजासि ॥ सभि तुधै नो सालाहदे दरि गुरमुखा नो परगासि ॥ ६ ॥

पउड़ी॥ हे प्रभु! सारे प्राणी तेरी संतान हैं और तुम सबके पिता हो। तुम हरेक प्राणी की पूँजी हो। सभी जीव प्रार्थना करके हमेशा तुझसे माँगते रहते हैं। हे प्रभु! जिस किसी को भी तुम देते हो, वह सब कुछ पा लेता है। कई जीवों को तू कहीं दूर ही निवास करता लगता है और कई तुझे अपने पास ही निवास करते समझते हैं। तेरे अलावा कोई स्थान नहीं जिससे माँगा जाए। अपने मन में इसका निर्णय करके देख ले। हे प्रभु! सभी तेरी उपमा करते हैं, गुरमुखों को तेरे दरबार पर तेरे प्रकाश के दर्शन होते हैं॥६॥

सलोक मः ३ ॥ पंडितु पड़ि पड़ि उचा कूकदा माइआ मोहि पिआरु ॥ अंतरि ब्रहमु न चीनई मनि मूरखु गावारु ॥ दूजै भाइ जगतु परबोधदा ना बूझै बीचारु ॥ बिरथा जनमु गवाइआ मरि जमै वारो वार ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ पण्डित ग्रंथ पढ़–पढ़कर उच्च स्वर में लोगों को सुनाता है। उसे तो माया–मोह से ही प्रेम है। वह मूर्ख एवं गंवार है जो अपने हृदय में विद्यमान परमात्मा को नहीं पहचानता। वह माया–मोह में मुग्ध हुआ जगत् के लोगों को उपदेश देता है और ज्ञान को नहीं समझता। उसने अपना जन्म व्यर्थ गंवा दिया है और वह बार–बार जन्मता एवं मरता रहता है॥१॥

मः ३ ॥ जिनी सतिगुरु सेविआ तिनी नाउ पाइआ बूझहु करि बीचारु ॥ सदा सांति सुखु मनि वसै चूकै कूक पुकार ॥ आपै नो आपु खाइ मनु निरमलु होवै गुर सबदी वीचारु ॥ नानक सबदि रते से मुकतु है हरि जीउ हेति पिआरु ॥ २ ॥

महला ३॥ विचार करके यह बात समझ लो कि जिन्होंने सतिगुरु की सेवा की है, उन्होंने ईश्वर के नाम को प्राप्त किया है। उनके चित्त में सदैव सुख–शांति का निवास होता है और उनके दुःख, विलाप–शिकायत नष्ट हो जाते हैं। जब मन गुरु के शब्द को विचार कर अपने अहंत्व को स्वयं ही नष्ट कर देता है तो वह निर्मल हो जाता है। हे नानक! जो प्राणी हरिनाम में लीन रहते हैं, वे मोक्ष प्राप्त करते हैं और भगवान से उनका प्रेम हो जाता है॥२॥

पउड़ी ॥ हरि की सेवा सफल है गुरमुखि पावै थाइ ॥ जिसु हरि भावै तिसु गुरु मिलै सो हरि नामु धिआइ ॥ गुर सबदी हरि पाईऐ हरि पारि लघाइ ॥ मनहठि किनै न पाइओ पुछहु वेदा जाइ ॥ नानक हरि की सेवा सो करे जिसु लए हरि लाइ ॥ १० ॥

पउड़ी॥ हरि की सेवा तभी सफल होती है, जब वह गुरु द्वारा इसे स्वीकृत करता है। जिस पर प्रभु प्रसन्न होता है, उसको गुरु जी मिल जाते हैं, केवल वही हरिनाम का ध्यान करता है। गुरु की वाणी द्वारा वह प्रभु को पा लेता है। फिर भगवान उसे भवसागर से पार कर देता है। मन के हठ से किसी को भी ईश्वर प्राप्त नहीं हुआ। चाहे वेदों–शास्त्रों का मनन करके देख लो। हे नानक! वही प्राणी ईश्वर की भक्ति करता है, जिसको भगवान अपने साथ मिला लेता है॥१०॥

सलोक मः ३ ॥ नानक सो सूरा वरीआमु जिनि विचहु दुसटु अहंकरणु मारिआ ॥ गुरमुखि नामु सालाहि जनमु सवारिआ ॥ आपि होआ सदा मुकतु सभु कुलु निसतारिआ ॥ सोहनि सचि दुआरि नामु पिआरिआ ॥ मनमुख मरहि अहंकारि मरणु विगाड़िआ ॥ सभो वरतै हुकमु किआ करहि विचारिआ ॥ आपहु दूजै लगि खसमु विसारिआ ॥ नानक बिनु नावै सभु दुखु सुखु विसारिआ ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ हे नानक! वही व्यक्ति शूरवीर एवं महान योद्धा है, जिसने अपने अन्तर्मन से दुष्ट अहंकार का नाश कर लिया है। उसने गुरु के माध्यम से नाम की महिमा करके अपना जन्म संवार लिया है। वह स्वयं सदैव के लिए मुक्त हो जाता है तथा अपने समूचे वंश को भी भवसागर से बचा लेता है। वह सत्य प्रभु के दरबार पर बड़ी शोभा प्राप्त करता है और उसे प्रभु का नाम ही प्रिय लगता है। मनमुख प्राणी अहंकार में मरते हैं और अपनी मृत्यु को भी दुःखदायक बना लेते हैं। सब ओर ईश्वर का आदेश चलता है। बेचारे प्राणी क्या कर सकते हैं? उन्होंने स्वयं ही माया के प्रेम में लगकर प्रभु को विस्मृत कर दिया है। हे नानक! नाम से विहीन होने के कारण उन्हें दुःख आकर लग जाते हैं तथा सुख तो उन्हें भूल ही जाता है॥१॥

मः ३ ॥ गुरि पूरै हरि नामु दिड़ाइआ तिनि विचहु भरमु चुकाइआ ॥ राम नामु हरि कीरति गाई करि चानणु मगु दिखाइआ ॥ हउमै मारि एक लिव लागी अंतरि नामु वसाइआ ॥ गुरमती जमु जोहि

न साकै साचै नामि समाइआ ॥ सभु आपे आपि वरतै करता जो भावै सो नाइ लाइआ ॥ जन नानकु नामु लए ता जीवै बिनु नावै खिनु मरि जाइआ ॥ २ ॥

महला ३॥ जिन्हें पूर्ण गुरु ने भगवान का नाम दृढ़ करवा दिया है, उन्होंने अपने अन्तर्मन में से भ्रम को दूर कर लिया है। वह राम नाम द्वारा भगवान की महिमा–स्तुति करते है। भगवान ने उनके अन्तर्मन में अपनी ज्योति का प्रकाश करके उन्हें भक्ति–मार्ग दिखा दिया है। उन्होंने अपने अहंकार को नष्ट करके एक प्रभु में सुरति लगाई है, जिससे उनके अन्तर्मन में भगवान के नाम का निवास हो गया है। गुरु की मति पर अनुसरण करने से मृत्यु उन्हें देख भी नहीं सकती। वे सत्य–प्रभु के नाम में ही मग्न रहते हैं। सृष्टिकर्त्ता स्वयं सब में मौजूद हो रहा है। जो उसे अच्छा लगता है, उसे वह अपने नाम–सिमरन में लगा देता है। यदि नानक भगवान का नाम–सिमरन करता रहता है तो ही वह जीवित रहता है। नाम के बिना तो वह एक क्षण में ही मर जाता है॥२॥

पउड़ी ॥ जो मिलिआ हरि दीबाण सिउ सो सभनी दीबाणी मिलिआ ॥ जिथै ओहु जाइ तिथै ओहु सुरखरू उस कै मुहि डिठै सभ पापी तरिआ ॥ ओसु अंतरि नामु निधानु है नामो परवरिआ ॥ नाउ पूजीऐ नाउ मंनीऐ नाइ किलविख सभ हिरिआ ॥ जिनी नामु धिआइआ इक मनि इक चिति से असथिरु जगि रहिआ ॥ ११ ॥

पउड़ी॥ जो प्रभु के दरबार में सम्मानित होता है, वह संसार की समस्त सभाओं के भीतर सम्मानित होता है। जहाँ कहीं भी वह जाता है, उधर ही वह प्रफुल्लित हो जाता है। उसका चेहरा देखने से सारे दोषी पार हो जाते है। उसके भीतर नाम का अमूल्य भण्डार है और हरि के नाम द्वारा ही वह स्वीकृत होता है। नाम की वह पूजा करता है, नाम पर ही उसका निश्चय है और हरिनाम ही उसके समस्त पापों को नष्ट करता है। जो प्राणी प्रभु के नाम का, एक मन व एक चित्त से सिमरन करते हैं, वह इस संसार के अन्दर अमर रहते हैं॥११॥

सलोक मः ३ ॥ आतमा देउ पूजीऐ गुर कै सहजि सुभाइ ॥ आतमे नो आतमे दी प्रतीति होइ ता घर ही परचा पाइ ॥ आतमा अडोलु न डोलई गुर कै भाइ सुभाइ ॥ गुर विणु सहजु न आवई लोभु मैलु न विचहु जाइ ॥ खिनु पलु हरि नामु मनि वसै सभ अठसठि तीरथ नाइ ॥ सचे मैलु न लगई मलु लागै दूजै भाइ ॥ धोती मूलि न उतरै जे अठसठि तीरथ नाइ ॥ मनमुख करम करे अहंकारी सभु दुखो दुखु कमाइ ॥ नानक मैला उजलु ता थीऐ जा सतिगुर माहि समाइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ सहज अवस्था में गुरु की आज्ञानुसार परमात्मा की पूजा करो। जब जीवात्मा की परमात्मा में आस्था हो जाती है तो जीवात्मा का अपने हृदय–घर में ही भगवान से प्रेम हो जाता है। गुरु के आचरण में रहकर जीवात्मा अटल हो जाती है और वह कहीं भी डगमगाती नहीं। गुरु के बिना सहज सुख उपलब्ध नहीं होता और मन में से लालच की मलिनता दूर नहीं होती। यदि हरि का नाम एक पल व क्षण भर के लिए चित्त में वास कर जाए तो अठसठ तीर्थों के स्नान का फल मिल जाता है। पवित्रात्मा कभी मैली नहीं होती परन्तु यह मैल माया के प्रेम द्वारा ही लगती है। चाहे मनुष्य अठसठ तीर्थस्थलों पर स्नान कर ले, यह मैल धोने से बिल्कुल दूर नहीं होती। मनमुख व्यक्ति अहंकार में धर्म–कर्म करता है और वह सदैव दुःखों का बोझ वहन करता है। हे नानक ! मैला मन तभी पवित्र होता है, यदि वह सतिगुरु में लीन हुआ रहे॥१॥

मः ३ ॥ मनमुखु लोकु समझाईऐ कदहु समझाइआ जाइ ॥ मनमुखु रलाइआ ना रलै पइऐ किरति फिराइ ॥ लिव धातु दुइ राह है हुकमी कार कमाइ ॥ गुरमुखि आपणा मनु मारिआ सबदि कसवटी लाइ ॥ मन ही नालि झगड़ा मन ही नालि सथ मन ही मंझि समाइ ॥ मनु जो इछे सो लहै सचै सबदि सुभाइ ॥ अंम्रित नामु सद भुंचीऐ गुरमुखि कार कमाइ ॥ विणु मनै जि होरी नालि लुझणा जासी जनमु गवाइ ॥ मनमुखी मनहठि हारिआ कूड़ु कुसतु कमाइ ॥ गुर परसादी मनु जिणै हरि सेती लिव लाइ ॥ नानक गुरमुखि सचु कमावै मनमुखि आवै जाइ ॥ २ ॥

महला ३॥ यदि मनमुख व्यक्ति को समझाने का प्रयास भी किया जाए तो वे समझाने से भी कभी नहीं समझते। ऐसे मनमुख प्राणियों को यदि गुरमुखों के साथ मिलाने का प्रयास करें तो भी कर्म—बन्धनों के कारण आवागमन में भटकते रहते हैं। प्रभु की प्रीति व माया की लगन दो मार्ग हैं, मनुष्य कौन—सा कर्म करता है अर्थात् किस मार्ग चलता है, वह प्रभु की इच्छा पर निर्भर है। गुरुवाणी की कसौटी का अभ्यास करने से गुरमुख ने अपने मन को वश में कर लिया है। अपने मन के साथ वह विवाद करता है, मन के साथ ही वह सुलह की बात करता है और मन के साथ ही वह संघर्ष के लिए जुटता है। सच्ची गुरुवाणी की प्रीति से मनुष्य सब कुछ पा लेता है जो कुछ वह चाहता है। वह हमेशा अमृत नाम का पान करता है और गुरु के उपदेशानुसार कर्म करता है। जो अपने मन के अलावा किसी अन्य के साथ झगड़ा करता है, वह अपना जीवन व्यर्थ ही गंवा कर चला जाएगा। मन के हठ और झूठ तथा मिथ्या कुत्सा के कर्म द्वारा मनमुख प्राणी जीवन का खेल हार जाते हैं। विवेकशील गुरमुख गुरु की दया से अपने मंदे—अहंकार पर विजय पा लेता है और उसकी प्रीति हरि के साथ लग जाती है। हे नानक ! गुरमुख सत्य नाम की कमाई करता है और मनमुख प्राणी आवागमन के चक्र में फँसा रहता है॥२॥

पउड़ी ॥ हरि के संत सुणहु जन भाई हरि सतिगुर की इक साखी ॥ जिसु धुरि भागु होवै मुखि मसतकि तिनि जनि लै हिरदै राखी ॥ हरि अंम्रित कथा सरेसट ऊतम गुर बचनी सहजे चाखी ॥ तह भइआ प्रगासु मिटिआ अंधिआरा जिउ सूरज रैणि किराखी ॥ अदिसटु अगोचरु अलखु निरंजनु सो देखिआ गुरमुखि आखी ॥ १२ ॥

पउड़ी॥ हे भगवान के संतजनों, भाईओ ! भगवान रूप सतिगुरु की एक कथा सुनो। जिस व्यक्ति के माथे पर प्रारम्भ से ही उसकी किस्मत में लिखा होता है, वहीं इस कथा को सुनकर अपने हृदय में बसाता है। भगवान की अमृत कथा सर्वोत्तम एवं श्रेष्ठ है। गुरु की वाणी द्वारा सहज ही इसका स्वाद प्राप्त होता है। उनके हृदय में प्रभु की ज्योति का प्रकाश हो जाता है। उसके हृदय में से अज्ञान रूपी अँधेरा यूं मिट जाता है जैसे सूर्य रात्रि के अन्धेरे को नाश कर देता है। गुरमुख अपने नेत्रों से उस अदृष्ट, अगोचर, अलक्ष्य परमेश्वर के साक्षात् दर्शन कर लेता है॥ १२॥

सलोक मः ३ ॥ सतिगुरु सेवे आपणा सो सिरु लेखै लाइ ॥ विचहु आपु गवाइ कै रहनि सचि लिव लाइ ॥ सतिगुरु जिनी न सेविओ तिना बिरथा जनमु गवाइ ॥ नानक जो तिसु भावै सो करे कहणा किछू न जाइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ जो व्यक्ति अपने सतिगुरु की सेवा करते हैं, वह अपना सिर प्रभु के लेखे में लगा देते हैं अर्थात् वह अपना जन्म सफल कर लेते हैं। ऐसा मनुष्य अपने अहंकार का नाश करके

सत्यस्वरूप ईश्वर की प्रीति में लीन रहते हैं। जिन्होंने सतिगुरु की सेवा नहीं की, वह मनुष्य अपना जीवन व्यर्थ गंवा देते हैं। हे नानक ! परमात्मा वहीं कुछ करता है, जो कुछ उसे अच्छा लगता है। उसमें किसी का कोई हस्तक्षेप नहीं॥ १॥

मः ३ ॥ मनु वेकारी वेड़िआ वेकारा करम कमाइ ॥ दूजै भाइ अगिआनी पूजदे दरगह मिलै सजाइ ॥ आतम देउ पूजीऐ बिनु सतिगुर बूझ न पाइ ॥ जपु तपु संजमु भाणा सतिगुरू का करमी पलै पाइ ॥ नानक सेवा सुरति कमावणी जो हरि भावै सो थाइ पाइ ॥ २ ॥

महला ३॥ जिसका मन पापों में घिरा हुआ है, वह मंदे कर्म करता है। ज्ञानहीन मनुष्य माया के मोह में फँसकर माया की पूजा करते हैं। जिसके फलस्वरुप उन्हें भगवान के दरबार में दण्ड मिलता है। अतः हमें सदैव ही भगवान की पूजा करनी चाहिए परन्तु सतिगुरु के बिना मनुष्य को ज्ञान नहीं मिलता। सतिगुरु की आज्ञा में रहने वाले प्राणी को ईश्वर की दया से जप—तप, संयम सब कुछ सहज ही मिल जाता है। हे नानक ! भगवान की सेवा—भक्ति उसके चरणों में सुरति लगाने से होती है। जो भगवान को बेहतर लगता है, वहीं उसे स्वीकार होता है॥ २॥

पउड़ी ॥ हरि हरि नामु जपहु मन मेरे जितु सदा सुखु होवै दिनु राती ॥ हरि हरि नामु जपहु मन मेरे जितु सिमरत सभि किलविख पाप लहाती ॥ हरि हरि नामु जपहु मन मेरे जितु दालदु दुख भुख सभ लहि जाती ॥ हरि हरि नामु जपहु मन मेरे मुखि गुरमुखि प्रीति लगाती ॥ जितु मुखि भागु लिखिआ धुरि साचै हरि तितु मुखि नामु जपाती ॥ १३ ॥

पउड़ी॥ हे मेरे मन ! उस हरि—परमेश्वर के नाम का हमेशा भजन करो, जिससे तुझे दिन—रात सदैव सुख उपलब्ध होता है। हे मेरे मन ! तू हरिनाम का भजन कर, जिसका सिमरन करने से तेरे पाप मिट जाते हैं। हे मेरे मन ! उस हरि—परमेश्वर के नाम का जाप करो, जिससे दरिद्रता, दुख एवं भूख सब दूर हो जाती है। हे मेरे मन ! तू हरिनाम का चिन्तन कर, जिससे जिज्ञासु की सतिगुरु से आसक्ति होती है। जिसके माथे पर परमेश्वर ने भाग्य लिखा है, वह अपने मुख से हरि के नाम का भजन करता है॥ १३॥

सलोक मः ३ ॥ सतिगुरु जिनी न सेविओ सबदि न कीतो वीचारु ॥ अंतरि गिआनु न आइओ मिरतकु है संसारि ॥ लख चउरासीह फेरु पइआ मरि जंमै होइ खुआरु ॥ सतिगुर की सेवा सो करे जिस नो आपि कराए सोइ ॥ सतिगुर विचि नामु निधानु है करमि परापति होइ ॥ सचि रते गुर सबद सिउ तिन सची सदा लिव होइ ॥ नानक जिस नो मेले न विछुड़ै सहजि समावै सोइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ जो प्राणी सतिगुरु की सेवा नहीं करते और न ही गुरु—शब्द का चिन्तन करते हैं, उनके अन्तर्मन में ज्ञान प्रवेश नहीं करता और वह इस जगत् में मृतक समान हैं। ऐसे प्राणी चौरासी लाख योनियों में चक्र काटते हैं और जीवन—मृत्यु के चक्र में पड़कर नष्ट होते हैं। सतिगुरु की सेवा वही करता है, जिससे प्रभु स्वयं करवाता है। सतिगुरु में नाम रूपी खजाना है, जो प्रभु की दया से उपलब्ध होता है। जो व्यक्ति गुरु की वाणी द्वारा सत्य प्रभु के प्रेम में मग्न रहते हैं, उनकी सच्ची सुरति हमेशा ही प्रभु में लगी रहती है। हे नानक ! जिसे परमात्मा अपने साथ मिला लेता है, वह उससे कभी भी जुदा नहीं होता और सहज ही उसमें लीन हो जाता है॥ १॥

मः ३ ॥ सो भगउती जुो भगवंतै जाणै ॥ गुर परसादी आपु पछाणै ॥ धावतु राखै इकतु घरि आणै ॥ जीवतु मरै हरि नामु वखाणै ॥ ऐसा भगउती उतमु होइ ॥ नानक सचि समावै सोइ ॥ २ ॥

महला ३।। भगवद् भक्त का पद उसी को दिया जा सकता है, जो भगवान को जानता है। गुरु की कृपा से वह अपने स्वरूप को पहचान लेता है। वह अपने भटकते हुए मन को संयमित करके एक स्थान पर स्थिर कर देता है। वह जीवित ही मृतक समान रहता है और हरिनाम का जाप करता है। ऐसा भगवद् भक्त ही उत्तम होता है। हे नानक! वह सत्य (परमात्मा) में ही समा जाता है।। २।।

मः ३ ॥ अंतरि कपटु भगउती कहाए ॥ पाखंडि पारब्रहमु कदे न पाए ॥ पर निंदा करे अंतरि मलु लाए ॥ बाहरि मलु धोवै मन की जूठि न जाए ॥ सतसंगति सिउ बादु रचाए ॥ अनदिनु दुखीआ दूजै भाइ रचाए ॥ हरि नामु न चेतै बहु करम कमाए ॥ पूरब लिखिआ सु मेटणा न जाए ॥ नानक बिनु सतिगुर सेवे मोखु न पाए ॥ ३ ॥

महला ३।। जिस व्यक्ति के हृदय में छल–कपट है और वह अपने आपको सच्चा भक्त कहलवाता है। ऐसा पाखंडी व्यक्ति परमात्मा को कभी भी प्राप्त नहीं कर सकता। जो व्यक्ति पराई निंदा करता है, वह अपने हृदय को अहंकार की मैल लगाता रहता है। वह स्नान करके बाहर से शरीर की मैल को ही स्वच्छ करता है परन्तु उसके मन की अपवित्रता दूर नहीं होती। साधु–संतों से वह विवाद खड़ा कर लेता है। वह द्वैत–भाव में लीन हुआ दिन–रात दुखी रहता है। वह हरि नाम का चिन्तन नहीं करता और अधिकतर कर्मकाण्ड करता है। जो कुछ उसकी किस्मत में पूर्व–जन्म के कर्मों द्वारा लिखा हुआ है, वह मिटाया नहीं जा सकता। हे नानक! सतिगुरु की सेवा के बिना वह मुक्ति नहीं प्राप्त कर सकता।।३।।

पउड़ी ॥ सतिगुरु जिनी धिआइआ से कड़ि न सवाही ॥ सतिगुरु जिनी धिआइआ से त्रिपति अघाही ॥ सतिगुरु जिनी धिआइआ तिन जम डरु नाही ॥ जिन कउ होआ क्रिपालु हरि से सतिगुर पैरी पाही ॥ तिन ऐथै ओथै मुख उजले हरि दरगह पैधे जाही ॥ १४ ॥

पउड़ी।। जो व्यक्ति सतिगुरु को स्मरण करते हैं, वह जलकर राख नहीं होते। जो व्यक्ति सतिगुरु का चिन्तन करते हैं, वह संतुष्ट और तृप्त हो जाते हैं। जो व्यक्ति सतिगुरु का ध्यान करते हैं, उनको मृत्यु का कोई भय नहीं होता। जिन पर परमात्मा दयालु होता है, वह सतिगुरु पर नतमस्तक होते हैं। लोक तथा परलोक में उनके चेहरे उज्ज्वल होते हैं। वह परमात्मा के दरबार में प्रतिष्ठा की पोशाक धारण करके जाते हैं।। १४।।

सलोक मः २ ॥ जो सिरु सांई ना निवै सो सिरु दीजै डारि ॥ नानक जिसु पिंजर महि बिरहा नही सो पिंजरु लै जारि ॥ १ ॥

श्लोक महला २।। जो सिर ईश्वर की याद में नमन नहीं होता, उस सिर को काट देना चाहिए। हे नानक! उस मनुष्य ढांचे को लेकर जला देना चाहिए, जिस मनुष्य ढांचे में ईश्वर से विरह की पीड़ा नहीं।।१।।

मः ५ ॥ मुंढहु भुली नानका फिरि फिरि जनमि मुईआसु ॥ कसतूरी कै भोलड़ै गंदे डुंमि पईआसु ॥ २ ॥

महला ५।। हे नानक! जो जीव–स्त्री जगत् के मूल प्रभु को भूली हुई है, वह पुनः पुनः जन्मती और मरती है। वह कस्तूरी के भ्रम में गंदे पानी के गड्ढे में पड़ी हुई है।। २।।

पउड़ी ॥ सो ऐसा हरि नामु धिआईऐ मन मेरे जो सभना उपरि हुकमु चलाए ॥ सो ऐसा हरि नामु जपीऐ मन मेरे जो अंती अउसरि लए छडाए ॥ सो ऐसा हरि नामु जपीऐ मन मेरे जु मन की त्रिसना

सभ भुख गवाए ॥ सो गुरमुखि नामु जपिआ वडभागी तिन निंदक दुसट सभि पैरी पाए ॥ नानक नामु अराधि सभना ते वडा सभि नावै अगै आणि निवाए ॥ १५ ॥

पउड़ी॥ हे मेरे मन ! तू हरि–परमेश्वर के ऐसे नाम का ध्यान कर, जो समस्त जीवों पर अपना हुक्म चलाता है। हे मेरे मन ! तू हरि–परमेश्वर के ऐसे नाम का जाप कर, जो अंतिम समय तुझे मोक्ष प्रदान करेगा। हे मेरे मन ! तू हरि–परमेश्वर के ऐसे नाम का सिमरन कर, जो तेरे चित्त की समस्त तृष्णाएँ एवं भूख को मिटा देता है। वे गुरमुख बड़े सौभाग्यशाली हैं, जो उस परमेश्वर के नाम का चिन्तन करके निन्दकों–दुष्टों को अपने अधीन कर लेते हैं। हे नानक ! उस नाम की आराधना करो जो सबसे महान है। प्रभु ने तो समस्त जीवों को नाम के समक्ष झुका दिया है॥१५॥

सलोक मः ३ ॥ वेस करे कुरूपि कुलखणी मनि खोटै कूड़िआरि ॥ पिर कै भाणै ना चलै हुकमु करे गावारि ॥ गुर कै भाणै जो चलै सभि दुख निवारणहारि ॥ लिखिआ मेटि न सकीऐ जो धुरि लिखिआ करतारि ॥ मनु तनु सउपे कंत कउ सबदे धरे पिआरु ॥ बिनु नावै किनै न पाइआ देखहु रिदै बीचारि ॥ नानक सा सुआलिओ सुलखणी जि रावी सिरजनहारि ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ कुरूप एवं आचरणहीन जीव–स्त्री बड़े सुन्दर वस्त्र सुशोभित करती है परन्तु मन में खोट होने के कारण वह झूठी है। वह अपने पति–प्रभु की इच्छानुसार नहीं चलती। वह गंवार अपने पति–प्रभु पर आदेश चलाती है। जो जीव–स्त्री गुरु की आज्ञानुसार चलती है, वह समस्त दुःखों से बच जाती है। परमात्मा ने पूर्व–कर्म फल रूप में जो लिख दिया है, वह मिटाया अथवा बदला नहीं जा सकता। इसलिए उसे अपना तन–मन पति–परमेश्वर को अर्पण करके नाम में अपना प्रेम लगाना चाहिए। अपने मन में विचार करके देख लो कि नाम–स्मरण के अलावा किसी को भी परमात्मा प्राप्त नहीं हुआ। हे नानक ! वहीं जीव–स्त्री सुन्दर एवं सुलक्षणा है, जिसकी सेज पर सृजनहार स्वामी रमण करता है॥१॥

मः ३ ॥ माइआ मोहु गुबारु है तिस दा न दिसै उरवारु न पारु ॥ मनमुख अगिआनी महा दुखु पाइदे डुबे हरि नामु विसारि ॥ भलके उठि बहु करम कमावहि दूजै भाइ पिआरु ॥ सतिगुरु सेवहि आपणा भउजलु उतरे पारि ॥ नानक गुरमुखि सचि समावहि सचु नामु उर धारि ॥ २ ॥

महला ३॥ माया का मोह अज्ञानता का अँधकार है। यह मोह रूपी अँधेरा एक समुद्र की तरह है, जिसका कोई आर–पार नजर नहीं आता। अज्ञानी मनमुख व्यक्ति ईश्वर के नाम को विस्मृत करके डूब जाते हैं और भयानक दुःख सहन करते हैं। वह माया के मोह में मुग्ध हुए प्रातः काल उठकर बहुत सारे कर्मकाण्ड करते हैं। जो व्यक्ति अपने सतिगुरु की सेवा करते हैं, वह भवसागर से पार हो जाते हैं। हे नानक ! गुरमुख जन सत्यनाम को अपने हृदय में लगा कर रखते हैं और सत्य प्रभु में लीन हो जाते हैं॥२॥

पउड़ी ॥ हरि जलि थलि महीअलि भरपूरि दूजा नाहि कोइ ॥ हरि आपि बहि करे निआउ कूड़िआर सभ मारि कढोइ ॥ सचिआरा देइ वडिआई हरि धरम निआउ कीओइ ॥ सभ हरि की करहु उसतति जिनि गरीब अनाथ राखि लीओइ ॥ जैकारु कीओ धरमीआ का पापी कउ डंडु दीओइ ॥ १६ ॥

पउड़ी॥ ईश्वर सागर, मरुस्थल, धरती एवं गगन के अन्दर परिपूर्ण है। उसके अलावा अन्य दूसरा कोई नहीं। ईश्वर अपने दरबार में विराजमान होकर जीवों के कर्मों का स्वयं न्याय करता है और समस्त झूठों को पीटकर बाहर निकाल देता है। सत्यवादियों को परमेश्वर शोभा प्रदान करता है

और कर्मानुसार प्रत्येक प्राणी को फल देकर न्याय करता है। इसलिए तुम सभी हरि की महिमा– स्तुति करो, जो निर्धनों एवं अनाथों की रक्षा करता है। वह भद्रपुरुषों को मान–प्रतिष्ठा प्रदान करता है और दोषियों को वह दण्ड देता है॥१६॥

सलोक मः ३ ॥ मनमुख मैली कामणी कुलखणी कुनारि ॥ पिरु छोडिआ घरि आपणा पर पुरखै नालि पिआरु ॥ त्रिसना कदे न चुकई जलदी करे पूकार ॥ नानक बिनु नावै कुरूपि कुसोहणी परहरि छोडी भतारि ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ मनमुख जीव–स्त्री विषय–विकारों से मलिन, कुलक्षणी एवं बुरी नारी है। वह अपने स्वामी एवं घर को त्याग देती है और पराए पुरुष के साथ प्रीत करती है। उसकी तृष्णा कभी बुझती नहीं, वह तृष्णाग्नि में जलती है और तृष्णग्नि में जलती हुई विलाप करती रहती है। हे नानक ! हरिनाम के अलावा वह कुरूप और कुलक्षणी है और उसके स्वामी ने उसे त्याग दिया है॥ १॥

मः ३ ॥ सबदि रती सोहागणी सतिगुर कै भाइ पिआरि ॥ सदा रावे पिरु आपणा सचै प्रेमि पिआरि ॥ अति सुआलिउ सुंदरी सोभावंती नारि ॥ नानक नामि सोहागणी मेली मेलणहारि ॥ २ ॥

महला ३॥ सुहागिन जीव–स्त्री सतिगुरु की रज़ा में प्रेमपूर्वक नाम में मग्न रहती है। वह सत्य–प्रेम से अपने पति–प्रभु के साथ सदैव ही रमण करती है। वह बड़ी सुन्दर रूप वाली सुन्दरी एवं शोभावान नारी है। हे नानक ! मिलाने वाले पति–प्रभु ने नाम में मग्न हुई सुहागिन को अपने साथ मिला लिया है॥ २॥

पउड़ी ॥ हरि तेरी सभ करहि उसतति जिनि फाथे काढिआ ॥ हरि तुधनो करहि सभ नमसकारु जिनि पापै ते राखिआ ॥ हरि निमाणिआ तूं माणु हरि डाढी हूं तूं डाढिआ ॥ हरि अहंकारीआ मारि निवाए मनमुख मूड़ साधिआ ॥ हरि भगता देइ वडिआई गरीब अनाथिआ ॥ १७ ॥

पउड़ी॥ हे भगवान ! माया–मोह के जाल में से जिन जीवों को तूने निकाला है, वे सभी तेरी महिमा–स्तुति करते हैं। जिन जीवों की तूने पापों से रक्षा की है, वे सभी तुझे नमन करते हैं। हे हरि ! तुम मान–हीनों के मान हो। तुम बलशालियों में बलशाली हो। हे प्रभु ! तूने अहंकारियों को दण्डित करके झुका दिया है। मनमुख विमूढ़ जीवों का तूने ही सुधार किया है। हे भगवान ! तुम हमेशा ही अपने निर्धन एवं अनाथ भक्तों को मान–प्रतिष्ठा प्रदान करते हो॥१७॥

सलोक मः ३ ॥ सतिगुर कै भाणै जो चलै तिसु वडिआई वडी होइ ॥ हरि का नामु उतमु मनि वसै मेटि न सकै कोइ ॥ किरपा करे जिसु आपणी तिसु करमि परापति होइ ॥ नानक कारणु करते वसि है गुरमुखि बूझै कोइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ जो व्यक्ति सतिगुरु की रजा अनुसार चलता है, वह बड़ा यश प्राप्त करता है। हरि का उत्तम नाम उसके हृदय में वास करता है और इस नाम को उसके हृदय में से कोई भी मिटा नहीं सकता। जिस पर ईश्वर अपनी कृपा करता है, वह शुभ कर्मों के कारण भाग्य से नाम को प्राप्त कर लेता है। हे नानक ! सृष्टि की तमाम रचना का कारण परमात्मा के अधीन है। कोई गुरमुख व्यक्ति ही इस भेद को समझता है॥ १॥

मः ३ ॥ नानक हरि नामु जिनी आराधिआ अनदिनु हरि लिव तार ॥ माइआ बंदी खसम की तिन अगै कमावै कार ॥ पूरै पूरा करि छोडिआ हुकमि सवारणहार ॥ गुर परसादी जिनी बुझिआ तिनि

पाइआ मोख दुआरु ॥ मनमुख हुकमु न जाणनी तिन मारे जम जंदारु ॥ गुरमुखि जिनी अराधिआ तिनी तरिआ भउजलु संसारु ॥ सभि अउगण गुणी मिटाइआ गुरु आपे बखसणहारु ॥ २ ॥

महला ३॥ हे नानक! जो व्यक्ति हरि के नाम का सिमरन करते हैं, वह रात–दिन ईश्वर के एक रस स्नेह में बसते हैं। भगवान की दासी माया उनकी सेवा करती है। संवारने वाले प्रभु के हुक्म में पूर्ण सतिगुरु ने उन व्यक्तियों को गुणों से पूर्ण कर दिया है। गुरु की कृपा से जिन्होंने भगवान को पहचान लिया है, उन्हें ही मोक्ष द्वार प्राप्त हुआ है। मनमुख व्यक्ति परमात्मा के हुक्म को नहीं जानते, इसलिए यमदूत उन्हें मारता रहता है। जो गुरमुख व्यक्ति ईश्वर की आराधना करते हैं, वह भयानक जगत् सागर से पार हो जाते हैं। गुरु जी स्वयं ही क्षमावान हैं, वह जीवों को गुण प्रदान करके उनके समस्त अवगुण मिटा देते हैं॥ २॥

पउड़ी ॥ हरि की भगता परतीति हरि सभ किछु जाणदा ॥ हरि जेवडु नाही कोई जाणु हरि धरमु बीचारदा ॥ काड़ा अंदेसा किउ कीजै जा नाही अधरमि मारदा ॥ सचा साहिबु सचु निआउ पापी नरु हारदा ॥ सालाहिहु भगतहु कर जोड़ि हरि भगत जन तारदा ॥ १८ ॥

पउड़ी॥ भगवान के भक्तों की भगवान पर पूर्ण आस्था है। हरि–प्रभु सब कुछ जानता है। परमेश्वर जैसा महान कोई अन्य मत समझो। हरि पूर्ण न्याय करता है। जब परमात्मा अन्याय करके किसी को भी मारता नहीं तो फिर हम क्यों चिंता एवं भय करें? वह परमात्मा सत्य है और उसका न्याय भी सत्य है। उसके दरबार में पापी व्यक्ति ही पराजित होते हैं। हे भक्तजनो! दोनों हाथ जोड़कर भगवान की महिमा–स्तुति करो। भगवान अपने भक्तजनों को भवसागर से पार कर देता है॥ १८॥

सलोक मः ३ ॥ आपणे प्रीतम मिलि रहा अंतरि रखा उरि धारि ॥ सालाही सो प्रभ सदा सदा गुर कै हेति पिआरि ॥ नानक जिसु नदरि करे तिसु मेलि लए साई सुहागणि नारि ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ मेरी यही कामना है कि मैं अपने प्रियतम–प्रभु से मिली रहूँ और उसे अपने हृदय में हमेशा बसाकर रखूं। गुरु के स्नेह एवं अनुराग द्वारा मैं हमेशा प्रभु की स्तुति करती रहूँ। हे नानक! जिस जीव–स्त्री पर प्रभु अपनी कृपा–दृष्टि करता है, उसे वह अपने साथ मिला लेता है और वही जीव–स्त्री सुहागिन है॥ १॥

मः ३ ॥ गुर सेवा ते हरि पाईऐ जा कउ नदरि करेइ ॥ माणस ते देवते भए धिआइआ नामु हरे ॥ हउमै मारि मिलाइअनु गुर कै सबदि तरे ॥ नानक सहजि समाइअनु हरि आपणी क्रिपा करे ॥ २ ॥

महला ३॥ जिस पर ईश्वर दयालु होता है, वह गुरु की सेवा से उसको पा लेता है। जो लोग हरिनाम की आराधना करते हैं, वह मनुष्य से देवते बन जाते हैं। वह अपने अहंकार को मिटा देते हैं तथा प्रभु के साथ मिल जाते हैं और गुरु के शब्द द्वारा पार हो जाते हैं। हे नानक! जिन पर ईश्वर अपनी कृपा–दृष्टि करता है, वह सहज ही उसमें लीन हो जाते हैं॥ २॥

पउड़ी ॥ हरि आपणी भगति कराइ वडिआई वेखालीअनु ॥ आपणी आपि करे परतीति आपे सेव घालीअनु ॥ हरि भगता नो देइ अनंदु थिरु घरी बहालिअनु ॥ पापीआ नो न देई थिरु रहणि चुणि नरक घोरि चालिअनु ॥ हरि भगता नो देइ पिआरु करि अंगु निसतारिअनु ॥ १६ ॥

पउड़ी॥ भगवान ने स्वयं ही भक्तजनों से अपनी भक्ति करवा कर उन्हें अपनी महिमा दिखाई है। भगवान स्वयं ही भक्तों के हृदय में अपनी आस्था उत्पन्न करता है। वह स्वयं ही उनसे अपनी सेवा

करवाता है। भगवान भक्तों को आनंद प्रदान करता है और उन्हें अपने अटल घर में स्थिर करके विराजमान करता है। वह पापियों को स्थिर नहीं रहने देता और उन्हें चुन–चुनकर घोर नरकों में डालता है। भगवान अपने भक्तों से बहुत प्रेम करता है और उनका पक्ष लेते हुए उन्हें भवसागर से पार कर देता है॥ १६॥

सलोक मः १ ॥ कुबुधि डूमणी कुदइआ कसाइणि पर निंदा घट चूहड़ी मुठी क्रोधि चंडालि ॥ कारी कढी किआ थीऐ जां चारे बैठीआ नालि ॥ सचु संजमु करणी कारां नावणु नाउ जपेही ॥ नानक अगै ऊतम सेई जि पापां पंदि न देही ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ गुरु साहिब जी फुरमाते हैं कि हे पण्डित! तेरे शरीर रूपी घर में कुबुद्धि का निवास है, जो डोमनी है, हिंसा का भी निवास है, जो कसाइन है, जो पराई निंदा रहती है, वह भंगिन है और क्रोध चाण्डाल के रूप में रहता है। यह सभी वृत्तियाँ तेरे शुभ गुणों को लूट रही हैं। लकीरें खींचने का तुझे क्या लाभ है, जब ये चारों ही तेरे साथ विराजमान हैं ? सत्य को अपना संयम, शुभ आचरण को अपनी लकीरें एवं नाम स्मरण को अपना स्नान बना। हे नानक! परलोक में केवल वही सर्वश्रेष्ठ होंगे, जो गुनाहों के मार्ग पर नहीं चलते॥ १॥

मः १ ॥ किआ हंसु किआ बगुला जा कउ नदरि करेइ ॥ जो तिसु भावै नानका कागहु हंसु करेइ ॥ २ ॥

महला १॥ हे नानक! यदि प्रभु चाहे तो वह विष्टा खाने वाले कौए को भी मोती चुगने वाला हंस बना देता है। जिस पर प्रभु अपनी कृपा–दृष्टि करता है, वह बगुले जैसे पाखंडी पापी को भी हंस जैसा पवित्र बना देता है॥ २॥

पउड़ी ॥ कीता लोड़ीऐ कंमु सु हरि पहि आखीऐ ॥ कारजु देइ सवारि सतिगुर सचु साखीऐ ॥ संता संगि निधानु अंम्रितु चाखीऐ ॥ भै भंजन मिहरवान दास की राखीऐ ॥ नानक हरि गुण गाइ अलखु प्रभु लाखीऐ ॥ २० ॥

पउड़ी॥ यदि कोई कार्य करने की आवश्यकता पड़ जाए तो उसकी सफलता के लिए भगवान के पास प्रार्थना करनी चाहिए। सतिगुरु की शिक्षा द्वारा सत्य प्रभु अपने सेवक का कार्य संवार देता है। संतों की संगति में मिलकर ही नाम रूपी अमृत भण्डार को चखा जाता है। हे भय को नाश करने वाले मेहरबान प्रभु! अपने सेवकों की लाज–प्रतिष्ठा रखो। हे नानक! भगवान की महिमा–स्तुति करने से अलक्ष्य प्रभु से साक्षात्कार हो जाता है॥ २०॥

सलोक मः ३ ॥ जीउ पिंडु सभु तिस का सभसै देइ अधारु ॥ नानक गुरमुखि सेवीऐ सदा सदा दातारु ॥ हउ बलिहारी तिन कउ जिनि धिआइआ हरि निरंकारु ॥ ओना के मुख सद उजले ओना नो सभु जगतु करे नमसकारु ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ यह शरीर एवं प्राण सब कुछ भगवान की देन है, वह सभी जीवों को सहारा देता है। हे नानक! गुरु के माध्यम से हमेशा ही उस दाता–प्रभु का सिमरन करना चाहिए। मैं उन पर कुर्बान जाता हूँ जो निरंकार प्रभु की आराधना करते हैं। उनके मुख सदैव उज्ज्वल रहते हैं और सारा संसार उनको प्रणाम करता है॥ १॥

मः ३ ॥ सतिगुर मिलिऐ उलटी भई नव निधि खरचिउ खाउ ॥ अठारह सिधी पिछै लगीआ फिरनि निज घरि वसै निज थाइ ॥ अनहद धुनी सद वजदे उनमनि हरि लिव लाइ ॥ नानक हरि भगति तिना कै मनि वसै जिन मसतकि लिखिआ धुरि पाइ ॥ २ ॥

महला ३॥ यदि सतिगुरु मिल जाए तो मनुष्य की वृत्ति माया से हट जाती है। उसे नवनिधियों की उपलब्धि हो जाती है, जिन्हें वह खाता एवं खर्च करता है। समस्त अठारह सिद्धियाँ उसके आगे–पीछे लगी रहती हैं। वह अपने आत्म–स्वरूप निज घर में जाकर रहता है। उसके मन में हमेशा ही अनहद ध्वनि बजती रहती है। वह परमानंद अवस्था में रहता हुआ भगवान में सुरति लगाकर रखता है। हे नानक ! जिनके माथे पर प्रारम्भ से ही उनकी किस्मत में लिखा होता है, उनके मन में ही भगवान की भक्ति निवास करती है॥ २॥

पउड़ी ॥ हउ ढाढी हरि प्रभ खसम का हरि कै दरि आइआ ॥ हरि अंदरि सुणी पूकार ढाढी मुखि लाइआ ॥ हरि पुछिआ ढाढी सदि कै कितु अरथि तूं आइआ ॥ नित देवहु दानु दइआल प्रभ हरि नामु धिआइआ ॥ हरि दातै हरि नामु जपाइआ नानकु पैनाइआ ॥ २१ ॥ १ ॥ सुधु

पउड़ी॥ मैं अपने मालिक हरि–प्रभु का चारण हूँ और प्रभु के द्वार पर आया हूँ। ईश्वर ने भीतर से मेरी ऊँची पुकार सुनकर मुझ चारण को अपनी उपस्थिति में बुलवा लिया। भगवान ने मुझे बुलाकर पूछा कि तुम किस मनोरथ हेतु मेरे पास आए हो। हे मेरे दयावान परमात्मा ! मुझे हमेशा ही अपने हरि नाम–सिमरन का दान दीजिए। नानक की यह विनती सुनकर दाता–प्रभु ने उसे हरि–नाम स्मरण करवाया तथा उसे सम्मान की पोशाक पहनाई॥ २१॥ १॥ सुधु॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सिरीरागु कबीर जीउ का ॥ एकु सुआनु कै घरि गावणा॥

जननी जानत सुतु बडा होतु है इतना कु न जानै जि दिन दिन अवध घटतु है ॥ मोर मोर करि अधिक लाडु धरि पेखत ही जम राउ हसै ॥ १ ॥ ऐसा तैं जगु भरमि लाइआ ॥ कैसे बूझै जब मोहिआ है माइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहत कबीर छोडि बिखिआ रस इतु संगति निहचउ मरणा ॥ रमईआ जपहु प्राणी अनत जीवण बाणी इन बिधि भव सागरु तरणा ॥ २ ॥ जां तिसु भावै ता लागै भाउ ॥ भरमु भुलावा विचहु जाइ ॥ उपजै सहजु गिआन मति जागै ॥ गुर प्रसादि अंतरि लिव लागै ॥ ३ ॥ इतु संगति नाही मरणा ॥ हुकमु पछाणि ता खसमै मिलणा ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥

माता सोचती है कि उसका पुत्र बड़ा होता जा रहा है परन्तु वह इतना नहीं समझती कि प्रतिदिन उसकी आयु के दिन कम होते जा रहे हैं। माता बड़े लाड–प्यार से उसको 'मेरा–मेरा' कह कर स्नेह करती है। परन्तु यमराज यह मोह देखकर मुस्कराता है॥ १॥ हे प्रभु ! आप ने ही इस तरह जगत् को भ्रम में डाला हुआ है। हे प्रभु ! माया ने जगत् को अपने मोह में फँसाया हुआ है, फिर जगत् इस भेद को कैसे समझ सकता है?॥ १॥ रहाउ॥ कबीर जी कहते हैं कि हे प्राणी ! तू पापों का विषय–रस त्याग दे, क्योंकि इनकी संगति से तुम निश्चित ही मर जाओगे। हे नश्वर प्राणी ! राम नाम का भजन करो, क्योंकि वहीं अनन्त जीवनदायक वाणी है। इस विधि से तुम भयानक सागर से पार हो जाओगे॥ २॥ जब भगवान को उपयुक्त लगता है तो ही जीव का उससे प्रेम होता है। उसके मन में से दुविधा में डालने वाला भ्रम दूर हो जाता है। फिर मन में सहज अवस्था उत्पन्न होने से उसकी

सोई हुई ज्ञान बुद्धि जाग जाती है। गुरु की कृपा से उसके अन्तर्मन में भगवान से सुरति लग जाती है॥ ३॥ परमात्मा की संगति में रहने से जन्म–मरण का चक्र समाप्त हो जाता है। ईश्वर की आज्ञा को पहचान कर ही जीव का उससे मिलन हो जाता है॥ १॥ रहाउ दूसरा॥

सिरीरागु त्रिलोचन का ॥ माइआ मोहु मनि आगलड़ा प्राणी जरा मरणु भउ विसरि गइआ ॥ कुटंबु देखि बिगसहि कमला जिउ पर घरि जोहहि कपट नरा ॥ १ ॥ दूड़ा आइओहि जमहि तणा ॥ तिन आगलड़ै मै रहणु न जाइ ॥ कोई कोई साजणु आइ कहै ॥ मिलु मेरे बीठुला लै बाहड़ी वलाइ ॥ मिलु मेरे रमईआ मै लेहि छडाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनिक अनिक भोग राज बिसरे प्राणी संसार सागर पै अमरु भइआ ॥ माइआ मूठा चेतसि नाही जनमु गवाइओ आलसीआ ॥ २ ॥ बिखम घोर पंथि चालणा प्राणी रवि ससि तह न प्रवेसं ॥ माइआ मोहु तब बिसरि गइआ जां तजीअले संसारं ॥ ३ ॥ आजु मेरै मनि प्रगटु भइआ है पेखीअले धरम राओ॥ तह कर दल करनि महाबली तिन आगलड़ै मै रहणु न जाइ ॥ ४ ॥ जे को मूं उपदेसु करतु है ता वणि त्रिणि रतड़ा नाराइणा॥ ऐ जी तूं आपे सभ किछु जाणदा बदति त्रिलोचनु रामईआ ॥ ५ ॥ २ ॥

हे प्राणी ! तेरे मन में मोह–माया की इतनी आसक्ति है कि तुझे बुढ़ापा और मृत्यु का भय भी भूल गया है। जैसे कमल का फूल जल में खिलता है, वैसे ही तुम अपने परिवार को देखकर प्रसन्न होते हो। परन्तु हे कपटी मानव ! तुम पराई–नारी को देखते रहते हो॥१॥ जब बलवान यमदूत आते हैं तो मैं उनके समक्ष टिक नहीं सकता। कोई विरला ही संत है जो इस जगत् में आकर यह बात कहता है। हे मेरे प्रभु ! मुझे दर्शन दीजिए और अपनी भुजाएँ गले में डालकर मुझसे भेंट करो। हे मेरे राम ! मुझे मिलो और बन्धन से मुक्त करो॥१॥ रहाउ॥ हे प्राणी ! तूने विभिन्न प्रकार के भोग–विलासों एवं राजकीय शान–शौकत में पड़कर ईश्वर को विस्मृत कर दिया है तथा इस संसार सागर में पड़कर तुम ध्यान करते हो कि तुम अमर हो गए हो। तुझे माया ने छल लिया है इसलिए तू प्रभु को स्मरण ही नहीं करता। हे आलसी प्राणी ! तूने अपना अमूल्य जीवन व्यर्थ ही गंवा दिया है॥ २॥ हे प्राणी ! मरणोपरांत तुझे यमपुरी जाते वक्त बहुत ही भयानक अंधकारमय मार्ग से चलना पड़ेगा। उस यमपुरी में सूर्य एवं चन्द्रमा का भी प्रवेश नहीं। जब प्राणी संसार को त्याग देता है, तब वह माया के मोह को भूल जाता है॥३॥ आज मेरे मन में यमराज प्रगट हो गया था और मैंने उसे नेत्रों से देख लिया है। वहाँ यमराज के शक्तिशाली दूत लोगों को अपने हाथों से दलन करते हैं और मैं उनके समक्ष टिक नहीं सकता॥४॥ हे नारायण ! जब कोई मुझे उपदेश करता है तो मुझे यूं लगता है कि जैसे तुम वनों एवं घास के तृणों में भी विद्यमान हो। भक्त त्रिलोचन जी प्रार्थना करते हैं कि हे मेरे राम ! तुम स्वयं ही सबकुछ जानते हो॥५॥२॥

स्रीरागु भगत कबीर जीउ का ॥ अचरज एकु सुनहु रे पंडीआ अब किछु कहनु न जाई ॥ सुरि नर गण गंध्रब जिनि मोहे त्रिभवण मेखुली लाई ॥ १ ॥ राजा राम अनहद किंगुरी बाजै ॥ जा की दिसटि नाद लिव लागै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भाठी गगनु सिंङिआ अरु चुंङिआ कनक कलस इकु पाइआ ॥ तिसु महि धार चुऐ अति निरमल रस महि रसन चुआइआ ॥ २ ॥ एक जु बात अनूप बनी है पवन पिआला साजिआ ॥ तीनि भवन महि एको जोगी कहहु कवनु है राजा ॥ ३ ॥ ऐसे गिआन प्रगटिआ पुरखोतम कहु कबीर रंगि राता ॥ अउर दुनी सभ भरमि भुलानी मनु राम रसाइन माता ॥ ४ ॥ ३ ॥

हे पण्डित ! परमात्मा की माया की एक आश्चर्यजनक बात सुनो। उस बारे अब कुछ कहा नहीं जा सकता, उसने देवते, मनुष्य, स्वर्ग के गण–गंधर्व सभी मोहित कर रखे हैं और उसने तीनों लोकों–

आकाश, पाताल एवं पृथ्वी को जकड़ा हुआ है॥१॥ हे मेरे राम ! तेरी वीणा बज रही है, जिससे अनहद नाद उत्पन्न हो रहा है। तेरी कृपा–दृष्टि से भक्तों की उस नाद में सुरति लगती है॥१॥ रहाउ॥ (दशम द्वार पर मदिरा खींचने की भट्ठी है, इड़ा–पिंगला दोनों नलकियाँ हैं और शुद्ध अन्तःकरण मदिरा भरने के लिए स्वर्ण–पात्र है।) मुझे दशम द्वार की भट्ठी सहित एक नलकी अंदर खींचने वाली और एक नलिका बाहर फैंकने वाली के अन्तःकरण का स्वर्ण–पात्र प्राप्त हुआ है। उस पात्र में निर्मल हरि रस की धारा स्रवित होती है। यह बहने वाला हरि रस अन्यों रसों से श्रेष्ठ रस है॥ २॥ एक बहुत ही सुन्दर बात बनी है कि प्रभु ने श्वास रूपी पवन को हरि रस पान करने के लिए प्याला बना दिया है। तीनों लोकों में एक प्रभु ही योगी रूप में निवास कर रहा है। बताओ, उस प्रभु के अतिरिक्त इस जगत् का राजा अन्य कौन है?॥ ३॥ भक्त कबीर जी कहते हैं कि मेरे अन्तर्मन में पुरुषोत्तम प्रभु का ऐसा ज्ञान प्रगट हो गया है कि मैं प्रभु के प्रेम में मग्न हो गया हूँ। शेष सारी दुनिया भ्रम में भूली हुई है। मैं तो समस्त रसों के स्रोत प्रभु नाम में मग्न रहता हूँ॥४॥३॥

स्रीराग बाणी भगत बेणी जीउ की ॥ पहरिआ कै घरि गावणा ॥ १ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

रे नर गरभ कुंडल जब आछत उरध धिआन लिव लागा ॥ मिरतक पिंडि पद मद ना अहिनिसि एकु अगिआनु सु नागा ॥ ते दिन संमलु कसट महा दुख अब चितु अधिक पसारिआ ॥ गरभ छोडि म्रित मंडल आइआ तउ नरहरि मनहु बिसारिआ ॥ १ ॥ फिरि पछुतावहिगा मूड़िआ तूं कवन कुमति भ्रमि लागा ॥ चेति रामु नाही जम पुरि जाहिगा जनु बिचरै अनराधा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बाल बिनोद चिंद रस लागा खिनु खिनु मोहि बिआपै ॥ रसु मिसु मेधु अंम्रितु बिखु चाखी तउ पंच प्रगट संतापै ॥ जपु तपु संजमु छोडि सुक्रित मति राम नामु न अराधिआ ॥ उछलिआ कामु काल मति लागी तउ आनि सकति गलि बांधिआ ॥ २ ॥ तरुण तेजु पर त्रिअ मुखु जोहहि सरु अपसरु न पछाणिआ ॥ उनमत कामि महा बिखु भूलै पापु पुंनु न पछानिआ ॥ सुत संपति देखि इहु मनु गरबिआ रामु रिदै ते खोइआ ॥ अवर मरत माइआ मनु तोले तउ भग मुखि जनमु विगोइआ ॥ ३ ॥ पुंडर केस कुसम ते धउले सपत पाताल की बाणी ॥ लोचन स्रमहि बुधि बल नाठी ता कामु पवसि माधाणी ॥ ता ते बिखै भई मति पावसि काइआ कमलु कुमलाणा ॥ अवगति बाणि छोडि म्रित मंडलि तउ पाछै पछुताणा ॥ ४ ॥ निकुटी देह देखि धुनि उपजै मान करत नही बूझै ॥ लालचु करै जीवन पद कारन लोचन कछू न सूझै ॥ थाका तेजु उडिआ मनु पंखी घरि आंगनि न सुखाई ॥ बेणी कहै सुनहु रे भगतहु मरन मुकति किनि पाई ॥ ५ ॥

(प्रस्तुत पद को 'पहरे' वाणी के स्वर में गाने का आदेश दिया गया है।)

हे मानव ! जब तुम मातृ–गर्भ में थे तो सिर के बल खड़े होकर ईश्वर के स्मरण में लीन थे। उस समय तुझे पार्थिव देहि की गरिमा का अहंकार नहीं था और अज्ञानी एवं पूर्ण विहीन होने के कारण तुम दिन–रात एक हरि की आराधना करते थे। कष्ट एवं दुखों के वह दिन स्मरण करो। अब तुमने अपने मन के जाल को अत्याधिक फैला लिया है। जब से गर्भ को त्याग कर तू इस नश्वर संसार में आया है। तब से तूने हे मानव ! ईश्वर को अपने मन से विस्मृत कर दिया॥१॥ हे मूर्ख ! तुम्हें फिर पछताना पड़ेगा। क्यों भ्रम में पड़कर तुम कुमति कर रहे हो। राम का चिन्तन कर, अन्यथा यमपुरी जाओगे। हे मानव ! मूर्खों की भाँति क्यों भटकते फिरते हो?॥१॥ रहाउ॥ तू अपने बचपन में मनपसंद क्रीड़ाओं–विनोद के स्वाद में लीन रहा है। तुझे क्षण–क्षण उनका मोह उलझा रहा था। अब युवावस्था

में तू विष रूप माया के रसों को पवित्र समझ कर भोग रहा है। इसलिए काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अहंकार पांचों विकार तुझे दुखी कर रहे हैं। तूने जप, तप, संयम एवं शुभ कर्मों वाली बुद्धि छोड़ दी है। तू राम नाम की आराधना भी नहीं करता। तेरे अन्तर्मन में कामवासना का वेग तरंगें मार रहा है। तुझे काल रूपी बुद्धि आ लगी है। अब तूने कामपिपासा हेतु स्त्री को लाकर अपने गले लगा लिया है॥ २॥ यौवन के जोश में तू पराई–नारियों को देखता है और भले–बुरे की पहचान नहीं करता। तू कामवासना में मग्न रहकर विष रूपी प्रबल माया के मोह में फँसकर भटकता रहता है। फिर तू पाप एवं पुण्य की पहचान नहीं करता। अपने पुत्रों एवं सम्पत्ति को देखकर तेरा यह मन अहंकारी हो गया है और अपने ह्रदय से तूने राम को विस्मृत कर दिया है। सगे–सम्बन्धियों की मृत्यु पर तू अपने मन में सोचता है कि तुझे उसका कितना धन प्राप्त होगा। हे मानव ! सौभाग्य से मिले अपने अमूल्य जीवन को तूने व्यर्थ गंवा दिया है॥ ३॥ बुढ़ापे में तेरे बाल चमेली के फूलों से भी अधिकतर सफ़ेद हैं और तेरी वाणी इतनी धीमी पड़ गई है, जैसे वह सातवें लोक से आती हो। तेरे नेत्रों से जल बह रहा है। तेरी बुद्धि एवं बल शरीर में से लुंप्त हो गए हैं। ऐसी अवस्था में काम तेरे मन में से यूं मंथन करता है, जैसे दूध का मंथन किया जाता है। इसलिए तेरी बुद्धि में विषय–विकारों की झड़ी लगी हुई है। तेरा शरीर मुरझाए हुए फूल जैसा हो गया है। तुम अलक्ष्य प्रभु की वाणी को छोड़कर नश्वर जगत् के कार्यों में लीन हो रहे हो। तदुपरांत तुम पश्चाताप करोगे॥४॥ नन्हे–मुन्ने छोटे बच्चों को देखकर तेरे मन में बड़ा प्रेम उत्पन्न होता है और तू उन पर गर्व करता है परन्तु तू ईश्वर बारे कोई सूझ प्राप्त नहीं करता। चाहे तेरे नेत्रों से कुछ भी नहीं दिखाई देता फिर भी तू लम्बी आयु की लालच करता है। अंत को शरीर का बल काम करने से थक जाता है और मन रूपी पक्षी शरीर रूपी पिंजरे में से उड़ जाता है। घर के आंगन में पड़ा मृतक शरीर किसी को अच्छा नहीं लगता। भक्त बेणी जी कहते हैं, हे भक्तो ! सुनो, मृत्यु के पश्चात किसी ने भी मुक्ति प्राप्त नहीं की॥५॥

सिरीरागु ॥ तोही मोही मोही तोही अंतरु कैसा ॥ कनक कटिक जल तरंग जैसा ॥ १ ॥ जउ पै हम न पाप करंता अहे अनंता ॥ पतित पावन नामु कैसे हुंता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम्ह जु नाइक आछहु अंतरजामी ॥ प्रभ ते जनु जानीजै जन ते सुआमी ॥ २ ॥ सरीरु आराधै मो कउ बीचारु देहू ॥ रविदास सम दल समझावै कोऊ ॥ ३ ॥

सिरीरागु॥ हे प्रभु ! तू ही मैं हूँ और मैं ही तुम हूँ। तेरे और मेरे बीच कोई अन्तर नहीं है। यह अन्तर ऐसा है जैसे स्वर्ण एवं स्वर्ण से बने आभूषण का है। जैसे जल एवं इसकी लहरों में है। वैसे ही प्राणी और ईश्वर है॥१॥ हे अनंत परमेश्वर ! यदि मैं पाप न करता तो तेरा पतितपावन नाम कैसे होता ?॥१॥ रहाउ॥ हे अन्तर्यामी प्रभु ! तुझे जगत् का स्वामी कहा जाता है। प्रभु से उसके दास की एवं दास से उसके स्वामी की पहचान हो जाती है॥ २॥ हे प्रभु ! मुझे यह ज्ञान दीजिए कि जब तक मेरा यह शरीर है, तब तक मैं तेरा नाम–सिमरन करता रहूँ। भक्त रविदास जी का कथन है कि हे प्रभु ! मेरी यही कामना है कि कोई महापुरुष आकर मुझे यह ज्ञान दे जाए कि तू समस्त स्थानों में विद्यमान है॥३॥

॥ सिरीराग समाप्त ॥

रागु माझ चउपदे घरु १ महला ४

ੴ सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

सबका मालिक एक है, उसका नाम सत्य है, वह सृष्टि की रचना करने वाला सर्वशक्तिमान, निर्भय, निर्वैर, अकालमूर्ति, अयोनि एवं स्वयंभू है, जिसकी लब्धि गुरु की कृपा से होती है।

हरि हरि नामु मै हरि मनि भाइआ ॥ वडभागी हरि नामु धिआइआ ॥ गुरि पूरै हरि नाम सिधि पाई को विरला गुरमति चलै जीउ ॥ १ ॥ मै हरि हरि खरचु लइआ बंनि पलै ॥ मेरा प्राण सखाई सदा नालि चलै ॥ गुरि पूरै हरि नामु दिड़ाइआ हरि निहचलु हरि धनु पलै जीउ ॥ २ ॥ हरि हरि सजणु मेरा प्रीतमु राइआ ॥ कोई आणि मिलावै मेरे प्राण जीवाइआ ॥ हउ रहि न सका बिनु देखे प्रीतमा मै नीरु वहे वहि चलै जीउ ॥ ३ ॥ सतिगुरु मित्रु मेरा बाल सखाई ॥ हउ रहि न सका बिनु देखे मेरी माई ॥ हरि जीउ क्रिपा करहु गुरु मेलहु जन नानक हरि धनु पलै जीउ ॥ ४ ॥ १ ॥

हरि–परमेश्वर एवं उसका 'हरि–हरि' नाम मुझे मन में अति प्रिय है। मेरे सौभाग्य ही हैं कि मैं हरि–नाम का सिमरन करता रहता हूँ। हरि–नाम सिमरन की सिद्धि मैंने पूर्ण गुरु से प्राप्त की है। कोई विरला पुरुष ही गुरु की मति पर चलता है॥१॥ मैंने परलोक में जाने हेतु यात्रा व्यय हेतु हरि–नाम का धन दामन में बांध लिया है। हरि–नाम मेरे प्राणों का साथी बन गया है और यह हमेशा ही मेरे साथ रहता है। पूर्ण गुरु ने मेरे मन में हरि का नाम बसा दिया है। यह हरि धन सदैव स्थिर रहने वाला है। गुरु ने हरिनाम रूपी धन मेरे दामन में डाल दिया है॥२॥ हरि–परमेश्वर मेरा सज्जन एवं प्रियतम बादशाह है। कोई संत–महापुरुष आकर मुझे हरि से मिला दे, क्योंकि वह मेरे प्राणों का जीवन है। हे मेरी माँ! मैं अपने प्रियतम के दर्शनों बिना रह नहीं सकता। मेरे नेत्रों में से अश्रु बह रहे हैं॥ ३॥ सद्गुरु मेरा मित्र एवं मेरा बचपन का साथी है। हे मेरी माँ! मैं उसके दर्शनों से वंचित हुआ जीवित नहीं रह सकता। हे हरि! मुझ पर कृपा करो और मुझे गुरु से मिला दो। हे नानक! गुरु हरि–नाम रूपी धन मेरे दामन में डाल देगा॥४॥१॥

माझ महला ४ ॥ मधुसूदन मेरे मन तन प्राना ॥ हउ हरि बिनु दूजा अवरु न जाना ॥ कोई सजणु संतु मिलै वडभागी मै हरि प्रभु पिआरा दसै जीउ ॥ १ ॥ हउ मनु तनु खोजी भालि भालाई ॥ किउ पिआरा प्रीतमु मिलै मेरी माई ॥ मिलि सतसंगति खोजु दसाई विचि संगति हरि प्रभु वसै जीउ ॥ २ ॥ मेरा पिआरा प्रीतमु सतिगुरु रखवाला ॥ हम बारिक दीन करहु प्रतिपाला ॥ मेरा मात पिता गुरु सतिगुरु पूरा गुर जल मिलि कमलु विगसै जीउ ॥ ३ ॥ मै बिनु गुर देखे नीद न आवै ॥ मेरे मन तनि वेदन गुर बिरहु लगावै ॥ हरि हरि दइआ करहु गुरु मेलहु जन नानक गुर मिलि रहसै जीउ ॥ ४ ॥ २ ॥

हे मधुसूदन! तू ही मेरा मन, तन एवं प्राण हैं, क्योंकि हरि के अलावा मैं किसी अन्य को नहीं जानता। भाग्य से यदि कोई सज्जन संत मुझे मिल जाए तो वह मुझे मेरे प्रियतम हरि–प्रभु का मार्गदर्शन करेगा॥१॥ मैं अपने मन एवं तन की खोज से उस परमेश्वर को ढूँढ रहा हूँ। हे मेरी माँ! मेरा प्रियतम प्रभु मुझे किस प्रकार मिले? संतों की संगति में रहकर मैं उस ईश्वर का पता पूछता हूँ क्योंकि संतों की संगति के बीच हरि–प्रभु का निवास है॥२॥ हे प्रभु! मुझे मेरे प्रिय प्रियतम सतिगुरु

से मिला दो, जो मेरा रखवाला है। मैं एक विवश बालक हूँ, मेरा पालन–पोषण कीजिए। पूर्ण सतिगुरु ही मेरे माता–पिता हैं। उनके दर्शन रूपी जल के मिलन से मेरा हृदय रूपी कमल प्रफुल्लित हो जाता है॥ ३॥ गुरु के दर्शनों के बिना मुझे नींद नहीं आती क्योंकि मेरा मन एवं तन गुरु के विरह की पीड़ा सहता है। हे हरि प्रभु ! मुझ पर दया कीजिए और मेरा गुरु से मिलन करवा दो। गुरु के मिलन से दास नानक आनंदित हो जाता है॥४॥२॥

माझ महला ४ ॥ हरि गुण पड़ीऐ हरि गुण गुणीऐ ॥ हरि हरि नाम कथा नित सुणीऐ ॥ मिलि सतसंगति हरि गुण गाए जगु भउजलु दुतरु तरीऐ जीउ ॥ १ ॥ आउ सखी हरि मेलु करेहा ॥ मेरे प्रीतम का मै देइ सनेहा ॥ मेरा मितु सखा सो प्रीतमु भाई मै दसे हरि नरहरीऐ जीउ ॥ २ ॥ मेरी बेदन हरि गुरु पूरा जाणै ॥ हउ रहि न सका बिनु नाम वखाणे ॥ मै अउखधु मंत्रु दीजै गुर पूरे मै हरि हरि नामि उधरीऐ जीउ ॥ ३ ॥ हम चात्रिक दीन सतिगुर सरणाई ॥ हरि हरि नामु बूंद मुखि पाई ॥ हरि जलनिधि हम जल के मीने जन नानक जल बिनु मरीऐ जीउ ॥ ४ ॥ ३ ॥

हमें हरि–परमेश्वर की महिमा को ही पढ़ना चाहिए और हरि की महिमा का ही चिन्तन करना चाहिए। सदैव ही हरि नाम की कथा को सुनना चाहिए तथा संतों की सभा में मिलकर हरि की महिमा–स्तुति का गायन करना चाहिए। इस प्रकार भवसागर से पार हुआ जा सकता है॥१॥ हे मेरी सखियो ! आओ हम हरि मिलन का प्रयास करें। कोई मुझे मेरे प्रियतम का संदेश दे जाए। केवल वही मेरा मित्र एवं सखा है, वही प्रियतम एवं बन्धु है, जो मुझे नरसिंह–हरि का मार्गदर्शन करता है॥२॥ मेरी वेदना को पूर्ण हरि–रूप गुरु जी समझते हैं। मैं प्रभु का नाम सिमरन किए बिना रह नहीं सकता। हे मेरे पूर्ण गुरदेव जी ! मुझे नाम मंत्र रूपी औषधि दीजिए एवं हरि के नाम द्वारा मेरा उद्धार कर दीजिए॥ ३॥ मैं दीन चातक हूँ और सतिगुरु की शरण में आया हूँ। गुरु जी ने हरि प्रभु के नाम की बूँद मुख में डाली है। हरि जल का समुद्र है और मैं उस जल की मछली हूँ। हे नानक ! इस जल के बिना मैं मर जाती हूँ॥४॥३॥

माझ महला ४ ॥ हरि जन संत मिलहु मेरे भाई ॥ मेरा हरि प्रभु दसहु मै भुख लगाई ॥ मेरी सरधा पूरि जगजीवन दाते मिलि हरि दरसनि मनु भीजै जीउ ॥ १ ॥ मिलि सतसंगि बोली हरि बाणी ॥ हरि हरि कथा मेरै मनि भाणी ॥ हरि हरि अंम्रितु हरि मनि भावै मिलि सतिगुर अंम्रितु पीजै जीउ ॥ २ ॥ वडभागी हरि संगति पावहि ॥ भागहीन भ्रमि चोटा खावहि ॥ बिनु भागा सतसंगु न लभै बिनु संगति मैलु भरीजै जीउ ॥ ३ ॥ मै आइ मिलहु जगजीवन पिआरे ॥ हरि हरि नामु दइआ मनि धारे ॥ गुरमति नामु मीठा मनि भाइआ जन नानक नामि मनु भीजै जीउ ॥ ४ ॥ ४ ॥

हे मेरे हरि के संतजनों ! हे भाइओ ! मुझे मिलो। मुझे मेरे हरि प्रभु बारे बताओ, क्योंकि मुझे हरि के दर्शनों की भूख लगी हुई है। हे जगत् के जीवन दाता ! मेरी मनोकामना पूरी करो। हरि से मिलकर उसके दर्शन करके मेरा मन प्रसन्न हो जाएगा॥१॥ सत्संग में मिलकर मैं हरि की वाणी बोलता हूँ। हरि की कथा मेरे मन को बहुत अच्छी लगती है। हरि का हरि नाम रूपी अमृत मेरे मन को मधुर लगता है। गुरु से भेंट करके मैं नाम अमृत का पान करता हूँ॥२॥ भाग्यशाली व्यक्ति हरि की संगति प्राप्त करता है। किन्तु भाग्यहीन मनुष्य भ्रम में भटकते और चोटें सहते हैं। भाग्य के बिना सत्संगति नहीं मिलती। सत्संग के बिना मनुष्य पापों की मलिनता के साथ लथपथ हो जाता है॥३॥ हे मेरे प्रियतम ! हे जगजीवन ! आकर मुझे दर्शन दीजिए। अपने मन में दया धारण करके मुझे हरि नाम प्रदान कीजिए। गुरु के उपदेश से मेरे मन को हरि–नाम मधुर एवं अच्छा लगने लग गया है। हे नानक ! मेरा मन हरि नाम से भीग गया है॥४॥४॥

माझ महला ४ ॥ हरि गुर गिआनु हरि रसु हरि पाइआ ॥ मनु हरि रंगि राता हरि रसु पीआइआ ॥ हरि हरि नामु मुखि हरि हरि बोली मनु हरि रसि टुलि टुलि पउदा जीउ ॥ १ ॥ आवहु संत मै गलि मेलाईऐ ॥ मेरे प्रीतम की मै कथा सुणाईऐ ॥ हरि के संत मिलहु मनु देवा जो गुरबाणी मुखि चउदा जीउ ॥ २ ॥ वडभागी हरि संतु मिलाइआ ॥ गुरि पूरै हरि रसु मुखि पाइआ ॥ भागहीन सतिगुरु नही पाइआ मनमुखु गरभ जूनी निति पउदा जीउ ॥ ३ ॥ आपि दइआलि दइआ प्रभि धारी ॥ मलु हउमै बिखिआ सभ निवारी ॥ नानक हट पटण विचि कांइआ हरि लैंदे गुरमुखि सउदा जीउ ॥ ४ ॥ ५ ॥

मैंने हरि बारे गुरु के दिए ज्ञान द्वारा हरि–रस प्राप्त किया है। जब गुरु ने मुझे हरि–रस का पान करवाया तो मेरा मन हरि के प्रेम में मग्न हो गया। मैं हरि का हरिनाम अपने मुख से बोलता रहता हूँ। मेरा मन हरि रस पान करने को उत्सुक होता है॥१॥ हे संतजनो ! आओ और मुझे अपने गले से लगाओ। मेरे प्रियतम प्रभु की कथा सुनाओ। हे हरि के संतजनो ! मुझे मिलो। जो मेरे मुँह में गुरुवाणी डालता है, मैं उसे अपना मन अर्पण कर दूँगा॥२॥ पूर्ण सौभाग्य से ईश्वर ने मुझे अपने संत से मिला दिया है। पूर्णगुरु ने मेरे मुख में हरि–रस डाल दिया है। भाग्यहीन मनुष्य को सतिगुरु प्राप्त नहीं होता। मनमुख व्यक्ति सदा गर्भ–योनि में प्रवेश करता है॥३॥ दयालु ईश्वर ने स्वयं मुझ पर दया की है और उसने अहंकार की समस्त विषैली मलिनता हटा दी है। हे नानक ! गुरमुख मनुष्य देह रूपी नगर में इन्द्रिय रूपी दुकानों पर ईश्वर के नाम का सौदा खरीदते हैं॥४॥५॥

माझ महला ४ ॥ हउ गुण गोविंद हरि नामु धिआई ॥ मिलि संगति मनि नामु वसाई ॥ हरि प्रभ अगम अगोचर सुआमी मिलि सतिगुर हरि रसु कीचै जीउ ॥ १ ॥ धनु धनु हरि जन जिनि हरि प्रभु जाता ॥ जाइ पुछा जन हरि की बाता ॥ पाव मलोवा मलि मलि धोवा मिलि हरि जन हरि रसु पीचै जीउ ॥ २ ॥ सतिगुर दातै नामु दिड़ाइआ ॥ वडभागी गुर दरसनु पाइआ ॥ अंम्रित रसु सचु अंम्रितु बोली गुरि पूरै अंम्रितु लीचै जीउ ॥ ३ ॥ हरि सतसंगति सत पुरखु मिलाईऐ ॥ मिलि सतसंगति हरि नामु धिआईऐ ॥ नानक हरि कथा सुणी मुखि बोली गुरमति हरि नामि परीचै जीउ ॥ ४ ॥ ६ ॥

मैं गोविन्द का गुणानुवाद करता हूँ और हरि नाम का ध्यान करने में ही मग्न रहता हूँ। मैं सत्संग में मिलकर नाम को अपने मन में बसाता हूँ। मेरा स्वामी हरि–प्रभु अगम्य एवं अगोचर है तथा सतिगुरु से मिलकर मैं हरि–रस का आनंद प्राप्त करता हूँ॥१॥ वह हरि के सेवक धन्य हैं, जिन्होंने हरि–प्रभु को समझ लिया है। मैं जाकर ऐसे सेवकों से हरि की बातें पूछता हूँ। मैं उनके चरण दबाता हूँ और उन्हें स्वच्छ करता एवं धोता हूँ। हरि के सेवकों से भेंट करके मैं हरि–रस का पान करता हूँ॥२॥ दाता सतिगुरु ने मेरे हृदय में ईश्वर का नाम बसा दिया है। परम सौभाग्य से मुझे गुरु के दर्शन प्राप्त हुए हैं। सतिगुरु सत्य अमृत रस का पान करते हैं और सत्य अमृत वाणी ही बोलते हैं। अतः पूर्ण गुरु से अमृत नाम प्राप्त करो॥३॥ हे प्रभु ! मुझे सद्पुरुषों की संगति में मिलाओ। पवित्र पुरुषों की सभा में मिलकर मैं हरि के नाम की आराधना करता रहूँ। हे नानक ! मैं हरि कथा ही सुनता हूँ और अपने मुँह से वाणी ही बोलता हूँ। गुरु के उपदेश द्वारा हरि के नाम से मैं तृप्त हो जाता हूँ॥४॥६॥

माझ महला ४ ॥ आवहु भैणे तुसी मिलहु पिआरीआ ॥ जो मेरा प्रीतमु दसे तिस कै हउ वारीआ ॥ मिलि सतसंगति लधा हरि सजणु हउ सतिगुर विटहु घुमाईआ जीउ ॥ १ ॥ जह जह देखा तह तह सुआमी ॥ तू घटि घटि रविआ अंतरजामी ॥ गुरि पूरै हरि नालि दिखालिआ हउ सतिगुर विटहु सद वारिआ जीउ ॥ २ ॥ एको पवणु माटी सभ एका सभ एका जोति सबाईआ ॥ सभ इका जोति

वरतै भिनि भिनि न रलई किसै दी रलाईआ ॥ गुर परसादी इकु नदरी आइआ हउ सतिगुर विटहु वताइआ जीउ ॥ ३ ॥ जनु नानकु बोलै अंम्रित बाणी ॥ गुरसिखां कै मनि पिआरी भाणी ॥ उपदेसु करे गुरु सतिगुरु पूरा गुरु सतिगुरु परउपकारीआ जीउ ॥ ४ ॥ ७ ॥ सत चउपदे महले चउथे के ॥

हे मेरी प्यारी सत्संगी बहनो ! तुम मुझे आकर मिलो। जो मुझे मेरे प्रियतम प्रभु का पता बताएगी, मैं उस पर कुर्बान हो जाऊँगी। सत्संग में मिलकर मैंने अपने साजन हरि को ढूँढ लिया है। अपने सतिगुरु पर मैं बलिहारी जाती हूँ॥१॥ जहाँ कहीं भी मैं देखती हूँ, उधर ही मैं अपने स्वामी को देखती हूँ। हे अन्तर्यामी प्रभु ! तू सर्वत्र व्यापक है। पूर्ण गुरु ने मेरे परमेश्वर को मेरे साथ ह्रदय में बसता दिखा दिया है। मैं सतिगुरु पर हमेशा कुर्बान जाती हूँ॥२॥ समस्त शरीरों में एक ही पवन है, एक ही मिट्टी है और सबमें एक ही ज्योति विद्यमान है। भिन्न–भिन्न शरीरों में एक ही ज्योति कार्य कर रही है। परन्तु एक शरीर की ज्योति दूसरे शरीर की ज्योति में नहीं मिलाई जा सकती। गुरु की कृपा से मुझे एक परमात्मा ही सबमें मौजूद दिखाई देता है। मैं अपने सतिगुरु पर न्यौछावर हूँ॥३॥ सेवक नानक अमृत वाणी उच्चारण करता है। गुरु के सिक्खों के ह्रदय को यह वाणी बड़ी प्यारी एवं अच्छी लगती है। पूर्ण सतिगुरु वाणी द्वारा उपदेश देते हैं और वह सतिगुरु बड़े परोपकारी हैं॥४॥७॥ सात चउपदे सतिगुरु रामदास जी के हैं।

माझ महला ५ चउपदे घरु १ ॥

मेरा मनु लोचै गुर दरसन ताई ॥ बिलप करे चात्रिक की निआई ॥ त्रिखा न उतरै सांति न आवै बिनु दरसन संत पिआरे जीउ ॥ १ ॥ हउ घोली जीउ घोलि घुमाई गुर दरसन संत पिआरे जीउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरा मुखु सुहावा जीउ सहज धुनि बाणी ॥ चिरु होआ देखे सारिंगपाणी ॥ धंनु सु देसु जहा तूं वसिआ मेरे सजण मीत मुरारे जीउ ॥ २ ॥ हउ घोली हउ घोलि घुमाई गुर सजण मीत मुरारे जीउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इक घड़ी न मिलते ता कलिजुगु होता ॥ हुणि कदि मिलीऐ प्रिअ तुधु भगवंता ॥ मोहि रैणि न विहावै नीद न आवै बिनु देखे गुर दरबारे जीउ ॥ ३ ॥ हउ घोली जीउ घोलि घुमाई तिसु सचे गुर दरबारे जीउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भागु होआ गुरि संतु मिलाइआ ॥ प्रभु अबिनासी घर महि पाइआ ॥ सेव करी पलु चसा न विछुड़ा जन नानक दास तुमारे जीउ ॥ ४ ॥ हउ घोली जीउ घोलि घुमाई जन नानक दास तुमारे जीउ ॥ रहाउ ॥ १ ॥ ८ ॥

{इतिहास साक्षी है कि गुरु रामदास जी ने लाहौर में अपने एक संबंधी भाई सिहारी मल के लड़के के विवाह पर गुरु अर्जुन देव जी को भेजा था। गुरु रामदास जी ने कहा था कि जब तक हम न बुलाएँ आप मत आना। इस तरह गुरु अर्जुन देव जी को लाहौर में दो वर्ष बीत गए थे। प्रस्तुत पद के विभिन्न अंश अलग–अलग लिखे गए थे। गुरु अर्जुन देव जी पिता गुरु रामदास जी को मिलने की आज्ञा पाने हेतु एक–एक अंश भेजते रहे}

मेरे मन को गुरु के दर्शनों की तीव्र अभिलाषा हो रही है। यह चातक की भाँति विलाप करता है। हे सन्तजनों के प्रिय ! आपके दर्शनों के बिना मेरी प्यास नहीं बुझती और न ही मुझे शांति प्राप्त होती है॥१॥ हे संत जनों के प्रिय ! गुरु के दर्शनों पर मैं तन, मन से न्यौछावर हूँ और सदैव ही कुर्बान जाता हूँ॥१॥ रहाउ॥ हे मेरे गुरु ! तेरा मुख अति सुन्दर है और तेरी वाणी की ध्वनि मन को आनंद प्रदान करती है। हे सारंगपाणि ! तेरे दर्शन किए मुझे चिरकाल हो चुका है। हे मेरे सज्जन एवं मित्र

प्रभु! वह धरती धन्य है जहाँ तुम वास करते हो॥२॥ हे मेरे सज्जन एवं मित्र प्रभु रूप गुरु जी! मैं आप पर तन–मन से न्यौछावर हूँ और आप पर कुर्बान जाता हूँ॥ १॥ रहाउ॥ यदि मैं तुझे एक क्षण भर नहीं मिलता तो मेरे लिए कलियुग उदय हो जाता है। हे मेरे प्रिय भगवान! मैं तुझे अब कब मिलूंगा? आपका दरबार देखे बिना न ही मुझे नींद आती है, न ही मेरी रात्रि बीतती है। मैं पूज्य गुरु के सच्चे दरबार पर तन–मन से कुर्बान जाता हूँ॥१॥ रहाउ॥ मेरे भाग्य उदय हो गए हैं और संत–गुरु से मिल पाया हूँ। मैंने अनश्वर प्रभु को अपने हृदय–घर में ही प्राप्त कर लिया है। हे नानक! मैं प्रभु के सेवकों की सेवा करता रहता हूँ और मैं उनसे एक पल अथवा क्षण मात्र भी जुदा नहीं होता। हे नानक! मैं प्रभु के सेवकों पर तन एवं मन से कुर्बान जाता हूँ॥ रहाउ॥१॥८॥

रागु माझ महला ५ ॥ सा रुति सुहावी जितु तुधु समाली ॥ सो कंमु सुहेला जो तेरी घाली ॥ सो रिदा सुहेला जितु रिदै तूं वुठा सभना के दातारा जीउ ॥ १ ॥ तूं साझा साहिबु बापु हमारा ॥ नउ निधि तेरै अखुट भंडारा ॥ जिसु तूं देहि सु त्रिपति अघावै सोई भगतु तुमारा जीउ ॥ २ ॥ सभु को आसै तेरी बैठा ॥ घट घट अंतरि तूंहै वुठा ॥ सभे साझीवाल सदाइनि तूं किसै न दिसहि बाहरा जीउ ॥ ३ ॥ तूं आपे गुरमुखि मुकति कराइहि ॥ तूं आपे मनमुखि जनमि भवाइहि ॥ नानक दास तेरै बलिहारै सभु तेरा खेलु दसाहरा जीउ ॥ ४ ॥ २ ॥ ६ ॥

हे प्रभु! वहीं ऋतु अति सुन्दर है जब मैं तेरा सिमरन करता हूँ। वहीं कार्य मुझे सुखदायक लगता है। जो कार्य मैं तेरे नाम–सिमरन के लिए करता हूँ। हे समस्त जीवों के दाता! वही हृदय सुखी है, जिस हृदय में तुम्हारा निवास होता है॥१॥ हे मालिक! तुम हम सब के संयुक्त पिता हो। तेरे पास नवनिधियाँ हैं, तेरा भण्डार अक्षय है। तू जिसे यह भण्डार देता है, वह मन और तन से तृप्त हो जाता है और वही तेरा भक्त बन जाता है॥२॥ हे मेरे मालिक! सभी प्राणी तेरी आशा में ही बैठे हैं। तू घट–घट में वास कर रहा है। समस्त प्राणी तेरे भागीदार कहलाते हैं और किसी भी प्राणी को ऐसा नहीं लगता कि तुम उससे बाहर किसी अन्य स्थान पर निवास करते हो॥३॥ गुरमुखों को तुम स्वयं ही बंधनों से मुक्त कराते हो और मनमुख प्राणियों को तुम स्वयं जीवन–मृत्यु के बंधन में धकेल देते हो। दास नानक तुझ पर कुर्बान जाता है। हे प्रभु! यह सबकुछ तेरा ही खेल तमाशा है॥ ४॥ २॥ ६॥

माझ महला ५ ॥ अनहदु वाजै सहजि सुहेला ॥ सबदि अनंद करे सद केला ॥ सहज गुफा महि ताड़ी लाई आसणु ऊच सवारिआ जीउ ॥ १ ॥ फिरि घिरि अपुने ग्रिह महि आइआ ॥ जो लोड़ीदा सोई पाइआ ॥ त्रिपति अघाइ रहिआ है संतहु गुरि अनभउ पुरखु दिखारिआ जीउ ॥ २ ॥ आपे राजनु आपे लोगा ॥ आपि निरबाणी आपे भोगा ॥ आपे तखति बहै सचु निआई सभ चूकी कूक पुकारिआ जीउ ॥ ३ ॥ जेहा डिठा मै तेहो कहिआ ॥ तिसु रसु आइआ जिनि भेदु लहिआ ॥ जोती जोति मिली सुखु पाइआ जन नानक इकु पसारिआ जीउ ॥ ४ ॥ ३ ॥ १० ॥

मेरे मन में सुखदायक अनहद शब्द मधुर ध्वनि में बजता रहता है। उस अनहद शब्द को सुनकर मेरा मन सदैव आनंदित एवं प्रसन्न रहता है। मन ने सहज गुफा में समाधि लगाई है और उच्चमण्डलों में अपना आसन बना लिया है॥ १॥ मन बाहर भटकने के पश्चात अपने आत्म स्वरूप रूपी घर में आया है। जिस प्रभु को पाने की कामना थी, उसे मैंने पा लिया है। हे सन्तजनो! अब मेरा मन तृप्त तथा शांत हो गया है क्योंकि गुरदेव ने मुझे निडर स्वामी के दर्शन करवा दिए हैं॥२॥ प्रभु स्वयं ही राजन है और स्वयं ही प्रजा है। वह स्वयं ही विरक्त है और स्वयं ही पदार्थों को भोगता है। सत्य प्रभु

सिंघासन पर विराजमान होकर स्वयं ही सत्य का न्याय करता है, मेरे अन्तर्मन की चीख–पुकार दूर हो गई है।।३।। जैसा प्रभु मैंने देखा है, वैसा ही मैंने कह दिया है। जब मेरी ज्योति परम–ज्योति प्रभु में विलीन हो गई तो मुझे सुख उपलब्ध हो गया। हे नानक ! एक प्रभु का ही सारे जगत् में प्रसार हो रहा है।। ४।। ३।। १०।।

माझ महला ५ ॥ जितु घरि पिरि सोहागु बणाइआ ॥ तितु घरि सखीए मंगलु गाइआ ॥ अनद बिनोद तितै घरि सोहहि जो धन कंति सिगारी जीउ ॥ १ ॥ सा गुणवंती सा वडभागणि ॥ पुत्रवंती सीलवंति सोहागणि ॥ रूपवंति सा सुघड़ि बिचखणि जो धन कंत पिआरी जीउ ॥ २ ॥ अचारवंति साई परधाने ॥ सभ सिंगार बणे तिसु गिआने ॥ सा कुलवंती सा सभराई जो पिरि कै रंगि सवारी जीउ ॥ ३ ॥ महिमा तिस की कहणु न जाए ॥ जो पिरि मेलि लई अंगि लाए ॥ थिरु सुहागु वरु अगमु अगोचरु जन नानक प्रेम साधारी जीउ ॥ ४ ॥ ४ ॥ ११ ॥

हे सखी ! जिस जीव–स्त्री के हृदय–घर में पति–प्रभु ने सुहाग बना लिया है अर्थात् अपना निवास कर लिया है, उसके हृदय–घर में मंगल गायन किया जाता है। जिस जीव–स्त्री को पति–प्रभु ने शुभ गुणों से अलंकृत कर दिया है, उसके हृदय–घर में आनंद एवं उल्लास बना रहता है।।१।। जो जीव–स्त्री अपने पति–प्रभु को प्यारी लगती है, वही जीव–स्त्री गुणवान, सौभाग्यशालिनी, पुत्रवती, शीलवान एवं सुहागिन है और वह जीव–स्त्री रूपवान, चतुर एवं पटरानी है।। २।। जो जीव–स्त्री पति–प्रभु के प्रेम में मग्न होकर सुन्दर बन जाती है, वही शुभ आचरण वाली एवं सर्वश्रेष्ठ है। उस ज्ञानवान को सभी श्रृंगार सुन्दर लगते हैं। जो पति–प्रभु के प्रेम में संवारी गई है, वही कुलीना एवं पटरानी हैं।। ३।। जिसे पति–प्रभु ने अपने गले से लगाकर अपने साथ मिला लिया है, उसकी महिमा कथन नहीं की जा सकती। हे नानक ! जो पति–प्रभु अगम्य एवं अगोचर है, वह उस जीव–स्त्री का सदैव स्थिर रहने वाला सुहाग बन जाता है। पति–प्रभु का प्रेम उस जीव–स्त्री का आधार बन जाता है।। ४।। ४।। ११।।

माझ महला ५ ॥ खोजत खोजत दरसन चाहे ॥ भाति भाति बन बन अवगाहे ॥ निरगुणु सरगुणु हरि हरि मेरा कोई है जीउ आणि मिलावै जीउ ॥ १ ॥ खटु सासत बिचरत मुखि गिआना ॥ पूजा तिलकु तीरथ इसनाना ॥ निवली करम आसन चउरासीह इन महि सांति न आवै जीउ ॥ २ ॥ अनिक बरख कीए जप तापा ॥ गवनु कीआ धरती भरमाता ॥ इकु खिनु हिरदै सांति न आवै जोगी बहुड़ि बहुड़ि उठि धावै जीउ ॥ ३ ॥ करि किरपा मोहि साधु मिलाइआ ॥ मनु तनु सीतलु धीरजु पाइआ ॥ प्रभु अबिनासी बसिआ घट भीतरि हरि मंगलु नानकु गावै जीउ ॥ ४ ॥ ५ ॥ १२ ॥

हे मेरे प्रभु ! तुझे ढूँढता–ढूँढता मैं तेरे दर्शनों का अभिलाषी बन गया हूँ। मैंने विभिन्न प्रकार के वनों में भ्रमण किया है। मेरा हरि–प्रभु निर्गुण भी है और सगुण भी है। क्या कोई ऐसा महापुरुष है जो आकर मुझे उससे मिला दे?।।१।। कई लोग छः शास्त्रों का ज्ञान अपने मुँह से बोलकर दूसरों को सुनाते हैं। कई लोग तीर्थों के स्नान करते हैं। कई लोग देवतों की पूजा करते हैं और माथे पर तिलक लगाते हैं। कई लोग निम्नस्तरीय कर्म करते हैं और कई लोग चौरासी प्रकार के आसन लगाते हैं परन्तु इन विधियों द्वारा मन को शांति नहीं मिलती।।२।। कुछ लोगों ने अनेक वर्ष जप एवं तप किए हैं। योगी धरती पर भ्रमण कर रहा है और अनेकों स्थानों पर भी गया है परन्तु उसके हृदय में एक क्षण भर के लिए भी शांति प्राप्त नहीं होती। योगी का मन पुनःपुन विषयों की तरफ दौड़ता रहता है।।३।। प्रभु ने कृपा करके मुझे संतों से मिला दिया है। मेरा मन और तन अत्यंत शीतल हो गए हैं और मुझे धैर्य

मिल गया है। अमर परमात्मा ने मेरे हृदय में निवास कर लिया है और नानक ईश्वर का मंगल रूप गुणानुवाद ही करता है॥४॥५॥१२॥

माझ महला ५ ॥ पारब्रहम अपरंपर देवा ॥ अगम अगोचर अलख अभेवा ॥ दीन दइआल गोपाल गोबिंदा हरि धिआवहु गुरमुखि गाती जीउ ॥ १ ॥ गुरमुखि मधुसूदनु निसतारे ॥ गुरमुखि संगी क्रिसन मुरारे ॥ दइआल दमोदरु गुरमुखि पाईऐ होरतु कितै न भाती जीउ ॥ २ ॥ निरहारी केसव निरवैरा ॥ कोटि जना जा के पूजहि पैरा ॥ गुरमुखि हिरदै जा कै हरि हरि सोई भगतु इकाती जीउ ॥ ३ ॥ अमोघ दरसन बेअंत अपारा ॥ वड समरथु सदा दातारा ॥ गुरमुखि नामु जपीऐ तितु तरीऐ गति नानक विरली जाती जीउ ॥ ४ ॥ ६ ॥ १३ ॥

पारब्रह्म—प्रभु अपरंपार एवं हम सबका पूज्य देव है। वह अगम्य, अगोचर एवं अलक्ष्य है और उसका भेद पाया नहीं जा सकता। परमात्मा दीनदयालु एवं जीवों का पालनहार है। गुरु के माध्यम से उस प्रभु का ध्यान करो जो मोक्षदाता है॥१॥ हे मधुसूदन ! आपने गुरमुखों को पार किया है। हे कृष्ण मुरारी ! आप गुरमुखों के साथी हो। गुरु की कृपा से दयालु दामोदर प्राप्त होता है और किसी अन्य विधि से वह प्राप्त नहीं होता॥२॥ हे केशव ! आप हमेशा निराहारी, निर्वैर हो। करोड़ों ही मनुष्य आपके चरणों की पूजा करते हैं। जिसके मन में गुरु के द्वारा हरि—परमेश्वर का नाम बसता है वहीं उसका अनन्य भक्त है॥३॥ प्रभु अनंत एवं अपार है और उसके दर्शन अवश्य ही फलदायक हैं। वह बहुत महान एवं सब कुछ करने में समर्थ है। वह सदैव ही जीवों को दान देता रहता है। जो व्यक्ति गुरु के माध्यम से उसका नाम—सिमरन करता है, वह भवसागर से पार हो जाता है। हे नानक ! ऐसे गुरमुख की गति को कोई विरला पुरुष ही जानता है॥४॥६॥१३॥

माझ महला ५ ॥ कहिआ करणा दिता लैणा ॥ गरीबा अनाथा तेरा माणा ॥ सभ किछु तूंहै तूंहै मेरे पिआरे तेरी कुदरति कउ बलि जाई जीउ ॥ १ ॥ भाणै उझड़ भाणै राहा ॥ भाणै हरि गुण गुरमुखि गावाहा ॥ भाणै भरमि भवै बहु जूनी सभ किछु तिसै रजाई जीउ ॥ २ ॥ ना को मूरखु ना को सिआणा ॥ वरतै सभ किछु तेरा भाणा ॥ अगम अगोचर बेअंत अथाहा तेरी कीमति कहणु न जाई जीउ ॥ ३ ॥ खाकु संतन की देहु पिआरे ॥ आइ पइआ हरि तेरै दुआरै ॥ दरसनु पेखत मनु आघावै नानक मिलणु सुभाई जीउ ॥ ४ ॥ ७ ॥ १४ ॥

हे प्रभु ! जो तुम कथन करते हो, वहीं कुछ मैं करता हूँ और जो कुछ तुम मुझे देते हो, मैं वहीं कुछ लेता हूँ। गरीब एवं अनाथ तुझ पर गर्व करते हैं। हे मेरे प्रिय प्रभु ! जगत् में सब कुछ तू ही कर रहा है और मैं तेरी कुदरत पर कुर्बान जाता हूँ॥१॥ हे प्रभु ! तेरी इच्छा से हम पथ भ्रष्ट होते हैं और तेरी इच्छा पर ही हम सद्मार्ग लगते हैं। गुरमुख प्राणी प्रभु की इच्छा पर ही प्रभु की महिमा गाते हैं। तेरी इच्छा पर ही जीव भ्रमवश योनियों के अन्दर भटकते हैं। इस तरह सब कुछ प्रभु के आदेश पर ही हो रहा है॥२॥ इस जगत् में न कोई मूर्ख है और न ही कोई बुद्धिमान है। प्रत्येक स्थान पर तेरी इच्छा ही कारगर हो रही है। हे मेरे परमात्मा ! तुम अगम्य, अगोचर, अनन्त और अपार हो। तेरा मूल्यांकन नहीं किया जा सकता॥३॥ हे प्रियतम प्रभु ! मुझे संतों के चरणों की धूल प्रदान करो। हे परमेश्वर ! मैं तेरे द्वार पर आकर नतमस्तक हो गया हूँ। प्रभु के दर्शनों से मेरा मन तृप्त हो जाता हैं। हे नानक ! प्रभु से मिलन उसकी इच्छा से ही होता है॥४॥७॥१४॥

माझ महला ५ ॥ दुखु तदे जा विसरि जावै ॥ भुख विआपै बहु बिधि धावै ॥ सिमरत नामु सदा सुहेला जिसु देवै दीन दइआला जीउ ॥ १ ॥ सतिगुरु मेरा वड समरथा ॥ जीइ समाली ता सभु दुखु लथा ॥ चिंता रोगु गई हउ पीड़ा आपि करे प्रतिपाला जीउ ॥ २ ॥ बारिक वांगी हउ सभ किछु मंगा ॥ देदे तोटि नाही प्रभ रंगा ॥ पैरी पै पै बहुतु मनाई दीन दइआल गोपाला जीउ ॥ ३ ॥ हउ बलिहारी सतिगुर पूरे ॥ जिनि बंधन काटे सगले मेरे ॥ हिरदै नामु दे निरमल कीए नानक रंगि रसाला जीउ ॥ ४ ॥ ८ ॥ १५ ॥

मनुष्य जब भगवान को विस्मृत कर देता है तो वह बहुत दुखी होता है। जब मनुष्य को धन-दौलत की भूख लगती है तो वह अनेक विधियों द्वारा धन प्राप्ति हेतु भरसक प्रयास करता है। दीनदयालु प्रभु जिसे अपना नाम देता है, वही उसका नाम-सिमरन करके सदैव सुखी रहता है॥१॥ मेरा सतिगुरु सर्वशक्तिमान है। यदि मैं अपने मन में उसका चिंतन करूँ, तब मेरे समस्त दुख निवृत्त हो जाते हैं। मेरी चिंता का रोग व अहंकार का दर्द दूर हो गए हैं और प्रभु स्वयं ही मेरा पालन-पोषण करता है॥ २॥ बालक की भाँति मैं भगवान से सबकुछ माँगता रहता हूँ। वह मुझे बड़े प्यार से सबकुछ देता रहता है और उसकी दी हुई वस्तुओं में मुझे कोई कमी नहीं आती। मैं अपने दीनदयालु गोपाल के चरणों में बारंबार पड़-पड़कर मनाता रहता हूँ॥३॥ मैं अपने पूर्ण सतिगुरु पर बलिहारी जाता हूँ, जिसने मेरे समस्त बन्धन काट दिए हैं। सतिगुरु ने मेरे हृदय में नाम देकर मुझे निर्मल कर दिया है। हे नानक ! परमेश्वर के प्रेम से मैं अमृत का घर बन गया हूँ॥४॥८॥१५॥

माझ महला ५ ॥ लाल गोपाल दइआल रंगीले ॥ गहिर गंभीर बेअंत गोविंदे ॥ ऊच अथाह बेअंत सुआमी सिमरि सिमरि हउ जीवां जीउ ॥ १ ॥ दुख भंजन निधान अमोले ॥ निरभउ निरवैर अथाह अतोले ॥ अकाल मूरति अजूनी संभौ मन सिमरत ठंढा थीवां जीउ ॥ २ ॥ सदा संगी हरि रंग गोपाला ॥ ऊच नीच करे प्रतिपाला ॥ नामु रसाइणु मनु त्रिपताइणु गुरमुखि अंम्रितु पीवां जीउ ॥ ३ ॥ दुखि सुखि पिआरे तुधु धिआई ॥ एह सुमति गुरू ते पाई ॥ नानक की धर तूंहै ठाकुर हरि रंगि पारि परीवां जीउ ॥ ४ ॥ ६ ॥ १६ ॥

हे मेरे प्रियतम प्रभु ! तुम सृष्टि के पालनहार, दयालु एवं परम सुखी हो। हे मेरे गोविन्द ! तू गहरे सागर की तरह है। तू बड़ा गंभीर स्वभाव वाला एवं अनंत है। तुम सर्वोच्च, असीम एवं बेअंत हो। हे प्रभु ! मैं तुझे मन-तन से स्मरण करके ही जीवित रहता हूँ॥१॥ हे दुखों के नाशक ! तू अमूल्य गुणों का भण्डार है। तू निर्भय, निर्वैर, असीम एवं अतुलनीय है। हे अकालमूर्ति ! तू अयोनि एवं स्वयंभू है और मन में तेरा सिमरन करने से बड़ी शांति प्राप्त होती है॥ २॥ भगवान सदैव जीवों के साथ रहता है। वह जगत् का पालनहार एवं आनंद का स्रोत है। हमेशा ऊँच-नीच की वह रक्षा करता है। अमृत के घर परमेश्वर के नाम से मेरा मन तृप्त हो जाता है। गुरु की दया से मैं नाम रूपी अमृत का पान करता हूँ॥३॥ हे प्रियतम प्रभु ! मैं दुख और सुख में तुझे ही स्मरण करता हूँ। यह सुमति मैंने गुरु से प्राप्त की है। हे ठाकुर जी ! तुम ही नानक का सहारा हो। मैं हरि के प्रेम में मग्न होकर भवसागर से पार हो जाऊँगा॥४॥६॥१६॥

माझ महला ५ ॥ धंनु सु वेला जितु मै सतिगुरु मिलिआ ॥ सफलु दरसनु नेत्र पेखत तरिआ ॥ धंनु मूरत चसे पल घड़ीआ धंनि सु ओइ संजोगा जीउ ॥ १ ॥ उदमु करत मनु निरमलु होआ ॥ हरि

मारगि चलत भ्रमु सगला खोइआ ॥ नामु निधानु सतिगुरू सुणाइआ मिटि गए सगले रोगा जीउ ॥ २ ॥ अंतरि बाहरि तेरी बाणी ॥ तुधु आपि कथी तै आपि वखाणी ॥ गुरि कहिआ सभु एको एको अवरु न कोई होइगा जीउ ॥ ३ ॥ अंम्रित रसु हरि गुर ते पीआ ॥ हरि पैनणु नामु भोजनु थीआ ॥ नामि रंग नामि चोज तमासे नाउ नानक कीने भोगा जीउ ॥ ४ ॥ १० ॥ १७ ॥

वह समय बड़ा शुभ है, जब मुझे मेरे सतिगुरु मिले। गुरु के दर्शन सफल हो गए हैं, क्योंकि नेत्रों से उनके दर्शन करके मैं भवसागर से पार हो गया हूँ। वह मुहूर्त, पल और घड़ी एवं संयोग भी शुभ है, जिससे मेरा सतिगुरु से मिलन हुआ है॥ १॥ पुरुषार्थ करने से मेरा मन पवित्र हो गया है। हरि–प्रभु के मार्ग पर चलने से मेरा भ्रम दूर हो गया है। सतिगुरु ने मुझे गुणों का भण्डार नाम सुनाया है और नाम सुनकर मेरे तमाम रोग नाश हो गए हैं॥२॥ हे प्रभु ! घर के अन्दर और बाहर मैं तेरी वाणी गाता रहता हूँ। यह वाणी तूने स्वयं ही उच्चारण की है और स्वयं ही इसका वर्णन किया है। गुरु ने कहा है कि समस्त स्थानों पर एक प्रभु ही है और एक प्रभु ही होगा और प्रभु जैसा जगत् में अन्य कोई नहीं होगा॥ ३॥ मैंने हरि–रस रूपी अमृत गुरु से पान किया है। अब हरि का नाम ही मेरा पहरावा एवं भोजन बन गया है। हे नानक ! नाम में मग्न रहना ही मेरे लिए आनंद, खेल एवं मनोरंजन है और नाम ही पदार्थों का भोग है॥ ४॥ १०॥ १७॥

माझ महला ५ ॥ सगल संतन पहि वसतु इक मांगउ ॥ करउ बिनंती मानु तिआगउ ॥ वारि वारि जाई लख वरीआ देहु संतन की धूरा जीउ ॥ १ ॥ तुम दाते तुम पुरख बिधाते ॥ तुम समरथ सदा सुखदाते ॥ सभ को तुम ही ते वरसावै अउसरु करहु हमारा पूरा जीउ ॥ २ ॥ दरसनि तेरै भवन पुनीता ॥ आतम गड़ु बिखमु तिना ही जीता ॥ तुम दाते तुम पुरख बिधाते तुधु जेवडु अवरु न सूरा जीउ ॥ ३ ॥ रेनु संतन की मेरै मुखि लागी ॥ दुरमति बिनसी कुबुधि अभागी ॥ सच घरि बैसि रहे गुण गाए नानक बिनसे कूरा जीउ ॥ ४ ॥ ११ ॥ १८ ॥

मैं समस्त संतजनों से एक वस्तु ही माँगता हूँ। मैं एक प्रार्थना करता हूँ कि मैं अपना अहंकार त्याग दूँ। मैं संतजनों पर लाख–लाख बार कुर्बान जाता हूँ। हे प्रभु ! मुझे संतों की चरण–धूलि प्रदान कीजिए॥१॥ हे प्रभु ! तुम ही जीवों के दाता हो और तुम ही विधाता हो। तुम सर्वशक्तिमान हो और तुम ही सदैव सुख देने वाले हो। हे प्रभु ! सभी जीव तुझसे ही मनोकामनाएँ प्राप्त करते हैं। मेरा यह अमूल्य जीवन मेरे लिए तुझ से मिलने का एक सुनहरी अवसर है, अतः मेरा जीवन समय सफल कर दीजिए॥२॥ हे प्रभु ! जिन लोगों ने तेरे दर्शन करके अपने शरीर रूपी भवन को पवित्र कर लिया है। उन्होंने मन रूपी विषम किले पर विजय प्राप्त की है। तुम ही जीवों के दाता और तुम ही विधाता हो तथा जगत् में तेरे जैसा अन्य कोई शूरवीर नहीं॥३॥ जब संतों के चरणों की धूल मेरे माथे में लगी, तब मेरी खोटी बुद्धि और कुबुद्धि लुप्त हो गई। हे नानक ! अब मैं सत्य घर में बसता हूँ और परमात्मा का यशोगान ही करता हूँ। मेरे अन्तर्मन से मेरा झूठ भी नाश हो गया है॥४॥११॥१८॥

माझ महला ५ ॥ विसरु नाही एवड दाते ॥ करि किरपा भगतन संगि राते ॥ दिनसु रैणि जिउ तुधु धिआई एहु दानु मोहि करणा जीउ ॥ १ ॥ माटी अंधी सुरति समाई ॥ सभ किछु दीआ भलीआ जाई ॥ अनद बिनोद चोज तमासे तुधु भावै सो होणा जीउ ॥ २ ॥ जिस दा दिता सभु किछु लैणा ॥ छतीह अंम्रित भोजनु खाणा ॥ सेज सुखाली सीतलु पवणा सहज केल रंग करणा जीउ ॥ ३ ॥ सा बुधि दीजै जितु विसरहि नाही ॥ सा मति दीजै जितु तुधु धिआई ॥ सास सास तेरे गुण गावा ओट नानक गुर चरणा जीउ ॥ ४ ॥ १२ ॥ १९ ॥

हे इतने महान दानशील प्रभु ! मैं तुझे कदापि विस्मृत न करूँ। इसलिए मुझ पर ऐसी कृपा करो कि मेरा मन तेरे भक्तों के प्रेम में मग्न रहे। हे प्रभु ! जिस तरह तुझे अच्छा लगे, मुझे यह दान दीजिए कि दिन–रात मैं तेरा ही सिमरन करता रहूँ॥१॥ जीवों के शरीर ज्ञानहीन मिट्टी के बने हुए हैं और इन शरीरों में चेतन सुरति समाई हुई है। हे प्रभु ! तू जीवों को सबकुछ देता है। तू जीवों को रहने के लिए अच्छे स्थान देता है और ये जीव विभिन्न प्रकार के विलास, विनोद, आश्चर्यमयी कौतुक एवं मनोरंजन प्राप्त करते हैं। जो कुछ तुझे भाता है, वही होता है॥२॥ (उस परमात्मा को स्मरण करो) जिस भगवान का दिया हुआ हम सब कुछ ले रहे हैं और छत्तीस प्रकार के भोजन खा रहे हैं। हमें सुखदायक सेज सोने के लिए मिल रही है, हम शीतल पवन का आनंद लेते हैं तथा विलासपूर्ण क्रीड़ाएँ करते हैं॥३॥ हे प्रियतम प्रभु ! मुझे वह बुद्धि दीजिए, जो तुझे विस्मृत न करे। मुझे ऐसी मति प्रदान करो जिससे मैं तेरा ही ध्यान करता रहूँ। हे प्रभु ! अपने प्रत्येक श्वास से मैं तेरा यशोगान करता हूँ। नानक ने गुरु के चरणों की शरण ली है॥४॥१२॥१९॥

माझ महला ५ ॥ सिफति सालाहणु तेरा हुकमु रजाई ॥ सो गिआनु धिआनु जो तुधु भाई ॥ सोई जपु जो प्रभ जीउ भावै भाणै पूर गिआना जीउ ॥ १ ॥ अंम्रितु नामु तेरा सोई गावै ॥ जो साहिब तेरै मनि भावै ॥ तूं संतन का संत तुमारे संत साहिब मनु माना जीउ ॥ २ ॥ तूं संतन जी करहि प्रतिपाला ॥ संत खेलहि तुम संगि गोपाला ॥ अपुने संत तुधु खरे पिआरे तू संतन के प्राना जीउ ॥ ३ ॥ उन संतन कै मेरा मनु कुरबाने ॥ जिन तूं जाता जो तुधु मनि भाने ॥ तिन कै संगि सदा सुखु पाइआ हरि रस नानक त्रिपति अघाना जीउ ॥ ४ ॥ १३ ॥ २० ॥

हे प्रभु ! तेरी महिमा–स्तुति करना ही तेरे हुक्म एवं इच्छा को मानना है। जो तुझे अच्छा लगता है, उसे भला समझना ही ज्ञान एवं ध्यान है। जो पूज्य प्रभु को भाता है, वही जप है, उसकी इच्छा में रहना ही पूर्ण ज्ञान है॥१॥ हे प्रभु ! तेरा नाम अमृत है परन्तु इस नाम को वहीं गाता है, जो तेरे मन को प्यारा लगता है। तुम संतों के हो और संत तुम्हारे हैं। हे स्वामी ! संतों का चित्त तुझ में माना हुआ है॥२॥ हे ईश्वर ! तुम संतों का पालन करते हो। हे गोपाल ! संत तेरे साथ प्यार की खेल खेलते हैं। तुझे अपने संत अति प्रिय हैं। तुम अपने संतों के प्राण हो॥३॥ मेरा मन उन संतों पर कुर्बान जाता है, जिन्होंने तुझे पहचान लिया है और जो तेरे मन को अच्छे लगते हैं। उनकी संगति में रहकर मैंने सदैव सुख पा लिया है। हे नानक ! हरि रस का पान करके मैं तृप्त एवं संतुष्ट हो गया हूँ॥४॥ १३॥ २०॥

माझ महला ५ ॥ तूं जलनिधि हम मीन तुमारे ॥ तेरा नामु बूंद हम चात्रिक तिखहारे ॥ तुमरी आस पिआसा तुमरी तुम ही संगि मनु लीना जीउ ॥ १ ॥ जिउ बारिकु पी खीरु अघावै ॥ जिउ निरधनु धनु देखि सुखु पावै ॥ त्रिखावंत जलु पीवत ठंढा तिउ हरि संगि इहु मनु भीना जीउ ॥ २ ॥ जिउ अंधिआरै दीपकु परगासा ॥ भरता चितवत पूरन आसा ॥ मिलि प्रीतम जिउ होत अनंदा तिउ हरि रंगि मनु रंगीना जीउ ॥ ३ ॥ संतन मोकउ हरि मारगि पाइआ ॥ साध क्रिपालि हरि संगि गिझाइआ ॥ हरि हमरा हम हरि के दासे नानक सबदु गुरू सचु दीना जीउ ॥ ४ ॥ १४ ॥ २१ ॥

हे परमेश्वर ! तुम जलनिधि हो और हम जल में रहने वाली तेरी मछलियाँ हैं। तेरा नाम वर्षा की बूँद है और हम प्यासे पपीहे हैं। तुम ही मेरी आशा हो और मुझे तेरे नाम रूपी अमृत का पान करने की प्यास लगी हुई है। मुझ पर ऐसी कृपा करो ताकि मेरा मन तुझ में ही लीन हुआ रहे॥१॥ जिस

तरह बालक दुग्धपान करके तृप्त होता है, जैसे एक निर्धन दौलत मिल जाने पर प्रसन्न होता है, जैसे प्यासा पुरुष शीतल जल पान करके शीतल हो जाता है वैसे ही मेरा यह मन भगवान के प्रेम में भीग गया है॥२॥ जिस तरह दीपक अंधेरे में प्रकाश कर देता है, जिस तरह अपने पति का ध्यान करने वाली पत्नी की आशा पूरी हो जाती है, जिस तरह प्राणी अपने प्रियतम से मिलकर प्रसन्न होता है, वैसे ही मेरा यह मन भगवान के प्रेम में मग्न हो गया है॥३॥ संतजनों ने मुझे प्रभु के मार्ग लगा दिया है। संतों की कृपा से मेरा मन भगवान से मिल गया है। भगवान मेरा स्वामी है और मैं भगवान का सेवक हूँ। हे नानक! गुरदेव ने मुझे सत्य नाम का दान दिया है॥४॥१४॥२१॥

माझ महला ५ ॥ अंम्रित नामु सदा निरमलीआ ॥ सुखदाई दूख बिडारन हरीआ ॥ अवरि साद चखि सगले देखे मन हरि रसु सभ ते मीठा जीउ ॥ १ ॥ जो जो पीवै सो त्रिपतावै ॥ अमरु होवै जो नाम रसु पावै ॥ नाम निधान तिसहि परापति जिसु सबदु गुरू मनि वूठा जीउ ॥ २ ॥ जिनि हरि रसु पाइआ सो त्रिपति अघाना ॥ जिनि हरि सादु पाइआ सो नाहि डुलाना ॥ तिसहि परापति हरि हरि नामा जिसु मसतकि भागीठा जीउ ॥ ३ ॥ हरि इकसु हथि आइआ वरसाणे बहुतेरे ॥ तिसु लगि मुकतु भए घणेरे ॥ नामु निधाना गुरमुखि पाईऐ कहु नानक विरली डीठा जीउ ॥ ४ ॥ १५ ॥ २२ ॥

भगवान का अमृतमयी नाम सदैव ही निर्मल रहता है। भगवान सुख देने वाला और दुखों का नाश करने वाला है। हे मेरे मन! तूने अन्य स्वाद चखकर देख लिए हैं परन्तु हरि–रस ही सबसे मीठा है॥१॥ जो कोई भी इस हरि–रस का पान करता है, वह प्रसन्न हो जाता है। जो नाम रस को प्राप्त कर लेता है, वह अमर हो जाता है। नाम की निधि उसको मिलती है, जिसके हृदय में गुरु की वाणी वास करती है॥२॥ जिसने भी हरि रस को पाया है, वह तृप्त हो गया है। जो व्यक्ति हरि–रस का स्वाद प्राप्त कर लेता है, वह फिर कभी डगमगाता नहीं। भगवान का हरि नाम उसे ही प्राप्त होता है, जिसके मस्तक पर भाग्य विद्यमान होता है॥३॥ परमात्मा अकेले गुरु के हाथ लगा है, जिससे बहुत ही लाभ प्राप्त करते हैं। उससे संगति करके बहुत सारे लोग मुक्त हो जाते हैं। नाम की निधि गुरदेव से ही प्राप्त होती है। हे नानक! उस नाम–निधि के विरले पुरुषों ने ही दर्शन किए हैं॥४॥ १५॥२२॥

माझ महला ५ ॥ निधि सिधि रिधि हरि हरि हरि मेरै ॥ जनमु पदारथु गहिर गंभीरै ॥ लाख कोट खुसीआ रंग रावै जो गुर लागा पाई जीउ ॥ १ ॥ दरसनु पेखत भए पुनीता ॥ सगल उधारे भाई मीता ॥ अगम अगोचरु सुआमी अपुना गुर किरपा ते सचु धिआई जीउ ॥ २ ॥ जा कउ खोजहि सरब उपाए ॥ वडभागी दरसनु को विरला पाए ॥ ऊच अपार अगोचर थाना ओहु महलु गुरू देखाई जीउ ॥ ३ ॥ गहिर गंभीर अंम्रित नामु तेरा ॥ मुकति भइआ जिसु रिदै वसेरा ॥ गुरि बंधन तिन के सगले काटे जन नानक सहजि समाई जीउ ॥ ४ ॥ १६ ॥ २३ ॥

हरि–परमेश्वर का हरि–नाम ही मेरी निधियाँ, सिद्धियाँ एवं ऋद्धियाँ हैं। गहरे एवं गम्भीर ईश्वर की दया से मुझे दुर्लभ मनुष्य जन्म मिला है। जो प्राणी गुरु की चरण–सेवा में लगा है, वह लाखों, करोड़ों खुशियाँ एवं आनन्द भोगता है॥१॥ गुरु के दर्शन करके प्राणी पवित्र हो जाता है और वह अपने भ्राताओं एवं सज्जनों को बचा लेता है। गुरदेव की दया से मैं अपने अगम्य, अगोचर व महान सत्य परमात्मा का चिन्तन करता हूँ॥२॥ जिस भगवान की उसके उत्पन्न किए हुए समस्त जीव खोज करते रहते हैं, उसके दर्शन कोई विरला भाग्यशाली ही प्राप्त करता है। प्रभु का निवास सर्वोच्च, अपार एवं अगोचर है तथा गुरु ने मुझे प्रभु निवास के दर्शन करवा दिए हैं॥३॥ हे प्रभु! तू

गहरा और गम्भीर है, तेरा नाम अमृत रूप है। जिसके हृदय में प्रभु वास करता है, वह मुक्त हो जाता है। हे नानक! गुरदेव ने जिनके समस्त बन्धन काट दिए हैं, वह सहज ही प्रभु में विलीन हो जाता है॥४॥१६॥२३॥

माझ महला ५ ॥ प्रभ किरपा ते हरि हरि धिआवउ ॥ प्रभू दइआ ते मंगलु गावउ ॥ ऊठत बैठत सोवत जागत हरि धिआईऐ सगल अवरदा जीउ ॥ १ ॥ नामु अउखधु मोकउ साधू दीआ ॥ किलबिख काटे निरमलु थीआ ॥ अनदु भइआ निकसी सभ पीरा सगल बिनासे दरदा जीउ ॥ २ ॥ जिस का अंगु करे मेरा पिआरा ॥ सो मुकता सागर संसारा ॥ सति करे जिनि गुरू पछाता सो काहे कउ डरदा जीउ ॥ ३ ॥ जब ते साधू संगति पाए ॥ गुर भेटत हउ गई बलाए ॥ सासि सासि हरि गावै नानकु सतिगुर ढाकि लीआ मेरा पड़दा जीउ ॥ ४ ॥ १७ ॥ २४ ॥

प्रभु की कृपा से मैं हरि—परमेश्वर का ध्यान करता हूँ। प्रभु की दया से मैं उसका मंगल गायन करता हूँ। उठते—बैठते, सोते और जागते सब अवस्थाओं में हमें हरि का ध्यान करना चाहिए॥१॥ संतों ने मुझे नाम रूपी औषधि प्रदान की है। इसने मेरे समस्त पाप काट दिए हैं और मैं पवित्र हो गया हूँ। मेरी सारी पीड़ा दूर हो गई है और मेरे कष्ट मिट गए हैं तथा बड़ा आनंद प्राप्त हो रहा है॥२॥ मेरा प्रियतम प्रभु जिसकी सहायता करता है, वह संसार सागर से मुक्त हो जाता है। जिस व्यक्ति ने गुरु को सत्य रूप में समझ लिया है, वह मृत्यु से क्यों भयभीत हो॥३॥ जब से मैंने साधु की संगति प्राप्त की है, तब से गुरु को मिलने से अहंकार का भूत दूर हो गया है। हे प्रभु! श्वास—श्वास से नानक परमात्मा की कीर्ति गायन करता है। सतिगुरु ने मेरे पाप ढाँप लिए हैं॥४॥१७॥२४॥

माझ महला ५ ॥ ओति पोति सेवक संगि राता ॥ प्रभ प्रतिपाले सेवक सुखदाता ॥ पाणी पखा पीसउ सेवक कै ठाकुर ही का आहरु जीउ ॥ १ ॥ काटि सिलक प्रभि सेवा लाइआ ॥ हुकमु साहिब का सेवक मनि भाइआ ॥ सोई कमावै जो साहिब भावै सेवकु अंतरि बाहरि माहरु जीउ ॥ २ ॥ तूं दाना ठाकुरु सभ बिधि जानहि ॥ ठाकुर के सेवक हरि रंग माणहि ॥ जो किछु ठाकुर का सो सेवक का सेवकु ठाकुर ही संगि जाहरु जीउ ॥ ३ ॥ अपुनै ठाकुरि जो पहिराइआ ॥ बहुरि न लेखा पुछि बुलाइआ ॥ तिसु सेवक कै नानक कुरबाणी सो गहिर गभीरा गउहरु जीउ ॥ ४ ॥ १८ ॥ २५ ॥

भगवान अपने सेवकों से ताने—बाने की तरह मिला रहता है। सुखदाता परमेश्वर अपने सेवकों का पालन करता है। हे ईश्वर! जो भक्त तेरे भजन में लीन हैं, मैं उनके घर पानी ढ़ोता, पंखा करता एवं चक्की से आटा पीसता हूँ॥१॥ हे परमात्मा! आपने मेरी वासना रूपी फाँसी को काट मुझे अपनी सेवा में प्रवृत्त कर लिया है। इसलिए प्रभु का हुक्म सेवक के मन को अच्छा लगता है। सेवक वही कर्म करता है जो प्रभु के मन को भला लगता है। इसलिए सेवक भीतर—बाहर सेवा करने में परिपक्व हो जाता है॥२॥ हे प्रभु! तुम बुद्धिमान स्वामी हो और समस्त युक्तियों में सर्वज्ञ हो। परमात्मा के सेवक ईश्वर की प्रीति का आनन्द भोगते हैं। जो कुछ परमात्मा का है, वही उसके सेवक का है। सेवक अपने परमात्मा की संगति में जगत् में लोकप्रिय होता है। जिसको उसका परमात्मा प्रतिष्ठा की पोशाक पहनाता है, उसे फिर बुलाकर उसके कर्मों का लेखा नहीं पूछता। हे नानक! मैं उस सेवक पर सदैव कुर्बान हूँ जो प्रभु की तरह अथाह, गंभीर एवं अमूल्य मोती बन जाता है॥४॥१८॥२५॥

माझ महला ५ ॥ सभ किछु घर महि बाहरि नाही ॥ बाहरि टोलै सो भरमि भुलाही ॥ गुर परसादी जिनी अंतरि पाइआ सो अंतरि बाहरि सुहेला जीउ ॥ १ ॥ झिमि झिमि वरसै अंम्रित धारा ॥ मनु पीवै

सुनि सबदु बीचारा ॥ अनद बिनोद करे दिन राती सदा सदा हरि केला जीउ ॥ २ ॥ जनम जनम का विछुड़िआ मिलिआ ॥ साध क्रिपा ते सूका हरिआ ॥ सुमति पाए नामु धिआए गुरमुखि होए मेला जीउ ॥ ३ ॥ जल तरंगु जिउ जलहि समाइआ ॥ तिउ जोती संगि जोति मिलाइआ ॥ कहु नानक भ्रम कटे किवाड़ा बहुड़ि न होईऐ जउला जीउ ॥ ४ ॥ १६ ॥ २६ ॥

सब कुछ शरीर रूपी घर में ही है और शरीर से बाहर कुछ भी नहीं है। जो व्यक्ति भगवान को हृदय से बाहर ढूँढता है, वह भ्रम में पड़कर भटकता रहता है। गुरु की दया से जिसने भगवान को हृदय में पाया है, वह अन्दर एवं बाहर से सुखी है॥ १॥ उसके अन्दर नाम रूपी अमृत की धारा रिमझिम कर बरसती है। मन उस नाम रूपी अमृत का पान करता है। अनहद शब्द को सुनकर मन उस बारे चिन्तन करता है। मेरा मन दिन–रात आनंद प्राप्त करता है और भगवान के साथ विलास करता है॥२॥ मैं भगवान से जन्म–जन्मांतरों का बिछुड़ा हुआ उससे मिल गया हूँ। साधु की कृपा से मेरा मुरझाया हुआ मन प्रफुल्लित हो गया है। गुरु से सुमति प्राप्त करके नाम–सिमरन करने से मेरा भगवान से मिलाप हो गया है॥३॥ जिस तरह जल की लहरें जल में मिल जाती हैं, इसी तरह मेरी ज्योति परमात्मा की ज्योति में मिल गई है। हे नानक! भगवान ने भ्रम रूपी किवाड़ काट दिए हैं और अब मेरा मन पुनः माया के पीछे नहीं भटकेगा॥४॥१६॥२६॥

माझ महला ५ ॥ तिसु कुरबाणी जिनि तूं सुणिआ ॥ तिसु बलिहारी जिनि रसना भणिआ ॥ वारि वारि जाई तिसु विटहु जो मनि तनि तुधु आराधे जीउ ॥ १ ॥ तिसु चरण पखाली जो तेरै मारगि चालै ॥ नैन निहाली तिसु पुरख दइआलै ॥ मनु देवा तिसु अपुने साजन जिनि गुर मिलि सो प्रभु लाधे जीउ ॥ २ ॥ से वडभागी जिनि तुम जाणे ॥ सभ कै मधे अलिपत निरबाणे ॥ साध कै संगि उनि भउजलु तरिआ सगल दूत उनि साधे जीउ ॥ ३ ॥ तिन की सरणि परिआ मनु मेरा ॥ माणु ताणु तजि मोहु अंधेरा ॥ नामु दानु दीजै नानक कउ तिसु प्रभ अगम अगाधे जीउ ॥ ४ ॥ २० ॥ २७ ॥

हे ईश्वर! मैं उस महापुरुष पर कुर्बान जाता हूँ, जिसने तेरा नाम श्रवण किया है। जिसने अपनी जिह्वा से तेरे नाम का उच्चारण किया है, मैं उस महापुरुष पर कुर्बान जाता हूँ। हे प्रभु! जो प्राणी मन–तन से तेरी आराधना करता है, मैं सदैव ही तन–मन से उस पर न्यौछावर हूँ॥१॥ मैं उस व्यक्ति के चरण धोता हूँ जो तेरे मार्ग पर चलता है। मैं उस दयालु महापुरुष के नयनों से दर्शन करता हूँ। मैं अपना मन अपने उस मित्र को अर्पण करता हूँ, जिसने गुरु से मिलकर उस प्रभु को ढूँढ लिया है॥२॥ हे भगवान! वे मनुष्य बड़े भाग्यशाली हैं, जिन्होंने तुझे समझ लिया है। वे पुरुष सबके मध्य निर्लिप्त और निर्विकार हैं। संतों की संगति करके वे भवसागर से पार हो जाते हैं और काम आदि सकल दूत वश में कर लिए हैं॥३॥ अहंकार, बल एवं अँधेरा पैदा करने वाले मोह को त्याग कर मेरा मन उनकी शरण में आ गया है। हे प्रभु! नानक को अगम्य, अगोचर परमात्मा के नाम का दान प्रदान कीजिए॥४॥२०॥२७॥

माझ महला ५ ॥ तूं पेडु साख तेरी फूली ॥ तूं सूखमु होआ असथूली ॥ तूं जलनिधि तूं फेनु बुदबुदा तुधु बिनु अवरु न भालीऐ जीउ ॥ १ ॥ तूं सूतु मणीए भी तूंहै ॥ तूं गंठी मेरु सिरि तूंहै ॥ आदि मधि अंति प्रभु सोई अवरु न कोइ दिखालीऐ जीउ ॥ २ ॥ तूं निरगुणु सरगुणु सुखदाता ॥ तूं निरबाणु रसीआ रंगि राता ॥ अपणे करतब आपे जाणहि आपे तुधु समालीऐ जीउ ॥ ३ ॥ तूं ठाकुरु सेवकु फुनि आपे ॥ तूं गुपतु परगटु प्रभ आपे ॥ नानक दासु सदा गुण गावै इक भोरी नदरि निहालीऐ जीउ ॥ ४ ॥ २१ ॥ २८ ॥

हे पूज्य परमेश्वर ! तू एक पेड़ है और यह सृष्टि तेरी प्रफुल्लित हुई शाखा है। तू सूक्ष्म रूप से स्थूल रूप में बदल गया है। तू जल का सागर है और तू ही इसकी झाग से पैदा हुआ बुलबुला है। तेरे अलावा जगत् में मुझे अन्य कोई दिखाई नहीं देता॥१॥ हे ईश्वर ! देहि रूपी माला के लिए तुम ही प्राण रूपी सूत हो। उस माला की गांठ भी तुम हो और सब मनकों के ऊपर मेरु मनका भी तुम ही हो। जगत् के आदि, मध्य और अंत में वही परमेश्वर है, तुझ से अलग कोई दृष्टिगोचर नहीं होता॥२॥ हे सुखदाता परमेश्वर ! तू ही निर्गुण एवं तू ही सगुण है। तू स्वयं ही निर्लेप, आनंदकारी और समस्त रंगों में अनुरक्त है। हे प्रभु ! अपनी कला में तुम स्वयं ही दक्ष हो और तुम स्वयं ही अपना सिमरन करते हो॥२१॥ तुम ठाकुर हो और फिर तुम स्वयं ही सेवक। हे पारब्रह्म ! तू स्वयं ही गुप्त भी है और तू ही प्रगट भी है। सेवक नानक सदैव ही प्रभु का यशोगान करता है। एक बार तो अपनी दया दृष्टि से देख॥४॥२१॥२८॥

माझ महला ५ ॥ सफल सु बाणी जितु नामु वखाणी ॥ गुर परसादि किनै विरलै जाणी ॥ धंनु सु वेला जितु हरि गावत सुनणा आए ते परवाना जीउ ॥ १ ॥ से नेत्र परवाणु जिनी दरसनु पेखा ॥ से कर भले जिनी हरि जसु लेखा ॥ से चरण सुहावे जो हरि मारगि चले हउ बलि तिन संगि पछाणा जीउ ॥ २ ॥ सुणि साजन मेरे मीत पिआरे ॥ साधसंगि खिन माहि उधारे ॥ किलविख काटि होआ मनु निरमलु मिटि गए आवण जाणा जीउ ॥ ३ ॥ दुइ कर जोड़ि इकु बिनउ करीजै ॥ करि किरपा डुबदा पथरु लीजै ॥ नानक कउ प्रभ भए क्रिपाला प्रभ नानक मनि भाणा जीउ ॥ ४ ॥ २२ ॥ २६ ॥

वहीं वाणी शुभ फलदायक है, जिससे हरि के नाम का जाप किया जाता है। कोई विरला ही पुरुष है, जिसने गुरु की कृपा से ऐसी वाणी को समझा है। वह समय बड़ा शुभ है, जब परमात्मा का यशोगान किया जाता एवं सुना जाता है। जगत् में जन्म लेकर उनका आगमन ही स्वीकृत है, जो भगवान का यश गाते एवं सुनते हैं॥ १॥ भगवान को वहीं नेत्र स्वीकृत होते हैं, जिन्होंने भगवान के दर्शन किए हैं। वह हाथ प्रशंसनीय है जो (ईश्वर की) उपमा लिखते हैं। वह चरण सुन्दर हैं जो परमेश्वर के मार्ग पर चलते हैं। मैं उस पर कुर्बान जाता हूँ जिनकी संगति करके मैंने भगवान को पहचान लिया है॥ २॥ हे मेरे प्रिय मित्र एवं सज्जन ! सुनो, भगवान ने मुझे संतों की संगति में मिलाकर एक क्षण में ही मेरा उद्धार कर दिया है। उसने मेरे पाप काट दिए हैं और मेरा मन निर्मल हो गया है। अब मेरा जन्म–मरण का चक्र मिट गया है॥ ३॥ हे प्रभु ! अपने दोनों हाथ जोड़कर मैं एक प्रार्थना करता हूँ। मुझ पर दया कीजिए और डूबते हुए पत्थर को बचा लीजिए। भगवान नानक पर दयालु हो गया है और नानक के मन को भगवान ही अच्छा लगता है॥ ४॥ २२॥ २६॥

माझ महला ५ ॥ अंम्रित बाणी हरि हरि तेरी ॥ सुणि सुणि होवै परम गति मेरी ॥ जलनि बुझी सीतलु होइ मनूआ सतिगुर का दरसनु पाए जीउ ॥ १ ॥ सूखु भइआ दुखु दूरि पराना ॥ संत रसन हरि नामु वखाना ॥ जल थल नीरि भरे सर सुभर बिरथा कोइ न जाए जीउ ॥ २ ॥ दइआ धारी तिनि सिरजनहारे ॥ जीअ जंत सगले प्रतिपारे ॥ मिहरवान किरपाल दइआला सगले त्रिपति अघाए जीउ ॥ ३ ॥ वणु त्रिणु त्रिभवणु कीतोनु हरिआ ॥ करणहारि खिन भीतरि करिआ ॥ गुरमुखि नानक तिसै अराधे मन की आस पुजाए जीउ ॥ ४ ॥ २३ ॥ ३० ॥

हे हरि–परमेश्वर ! तेरी वाणी अमृत है। इस अमृत वाणी को सुन–सुनकर मुझे परमगति प्राप्त हुई है। सतिगुरु के दर्शन करके मेरे मन की तृष्णा रूपी जलन बुझ गई है और मेरा मन शीतल हो

गया है॥ १॥ जब सन्तजन अपनी जिह्वा से परमात्मा के नाम का उच्चारण करते हैं, तो उसे सुनकर बड़ा सुख प्राप्त होता है और दुख दूर भाग जाते हैं। जैसे वर्षा होने से तमाम सरोवर जल से भलीभांति भर जाते हैं, वैसे ही गुरु के पास आया कोई भी व्यक्ति खाली हाथ नहीं जाता॥ २॥ सृजनहार प्रभु ने अपनी दया न्यौछावर की है और समस्त जीव–जन्तुओं की पालना की है। भगवान मेहरबान है, कृपालु एवं बड़ा दयालु है। भगवान की दी हुई नियामतों से सभी जीव–जन्तु तृप्त एवं संतुष्ट हो गए हैं। वन, तृण, तीनों लोक प्रभु ने हरे–भरे कर दिए हैं। कर्त्ता परमेश्वर ने एक क्षण में ही यह सब कुछ कर दिया। हे नानक! जो व्यक्ति गुरु के माध्यम से भगवान की आराधना करता है, भगवान उसके मन की आशा पूरी कर देता है॥ ४॥ २३॥ ३०॥

माझ महला ५ ॥ तूं मेरा पिता तूंहै मेरा माता ॥ तूं मेरा बंधपु तूं मेरा भ्राता ॥ तूं मेरा राखा सभनी थाई ता भउ केहा काड़ा जीउ ॥ १ ॥ तुमरी क्रिपा ते तुधु पछाणा ॥ तूं मेरी ओट तूंहै मेरा माणा ॥ तुझ बिनु दूजा अवरु न कोई सभु तेरा खेलु अखाड़ा जीउ ॥ २ ॥ जीअ जंत सभि तुधु उपाए ॥ जितु जितु भाणा तितु तितु लाए ॥ सभ किछु कीता तेरा होवै नाही किछु असाड़ा जीउ ॥ ३ ॥ नामु धिआइ महा सुखु पाइआ ॥ हरि गुण गाइ मेरा मनु सीतलाइआ ॥ गुरि पूरै वजी वाधाई नानक जिता बिखाड़ा जीउ ॥ ४ ॥ २४ ॥ ३१ ॥

हे भगवान! तू ही मेरा पिता है एवं तू ही मेरी माता है। तू ही मेरा रिश्तेदार है और तू ही मेरा भ्राता है। जब तू ही समस्त स्थानों में मेरा रक्षक है तो मुझे कैसा भय व चिंता कैसी होगी॥ १॥ तुम्हारी दया से मैं तुझे समझता हूँ। तू ही मेरी शरण है और तू ही मेरी प्रतिष्ठा है। तेरे बिना मेरा अन्य कोई नहीं। यह सारी सृष्टि तेरी एक खेल है और यह धरती जीवों के लिए जीवन खेल का मैदान है॥ २॥ हे भगवान! समस्त जीव–जन्तु तूने ही उत्पन्न किए हैं। जिस तरह तेरी इच्छा है वैसे ही कार्यों में तूने उन्हें कार्यरत किया है। जगत् में जो कुछ भी हो रहा है, सब तेरा ही किया हो रहा है। इसमें हमारा कुछ भी नहीं॥ ३॥ तेरे नाम की आराधना करने से मुझे महासुख प्राप्त हुआ है। हरि प्रभु का यशोगान करने से मेरा मन शीतल हो गया है। हे नानक! पूर्ण गुरु की दया से मैंने काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अहंकार रूपी विषम मैदान–ए–जंग जीत लिया है और मुझे विजय की शुभकामनाएँ मिल रही हैं॥ ४॥ २४॥ ३१॥

माझ महला ५ ॥ जीअ प्राण प्रभ मनहि अधारा ॥ भगत जीवहि गुण गाइ अपारा ॥ गुण निधान अंम्रितु हरि नामा हरि धिआइ धिआइ सुखु पाइआ जीउ ॥ १ ॥ मनसा धारि जो घर ते आवै ॥ साधसंगि जनमु मरणु मिटावै ॥ आस मनोरथु पूरनु होवै भेटत गुर दरसाइआ जीउ ॥ २ ॥ अगम अगोचर किछु मिति नही जानी ॥ साधिक सिध धिआवहि गिआनी ॥ खुदी मिटी चूका भोलावा गुरि मन ही महि प्रगटाइआ जीउ ॥ ३ ॥ अनद मंगल कलिआण निधाना ॥ सूख सहज हरि नामु वखाना ॥ होइ क्रिपालु सुआमी अपना नाउ नानक घर महि आइआ जीउ ॥ ४ ॥ २५ ॥ ३२ ॥

भगवान अपने भक्तों की आत्मा, प्राण एवं मन का आधार है। भक्त भगवान की अपार महिमा–स्तुति गायन करके ही जीते हैं। भगवान का नाम अमृत एवं गुणों का भण्डार है और भगवान के भक्त उसका नाम–सिमरन करके बड़ा सुख प्राप्त करते हैं॥ १॥ जो व्यक्ति अभिलाषा धारण करके घर से आता है, वह संतों की संगति करके अपना जन्म–मरण का चक्र मिटा लेता है। गुरु के दर्शन करने से समस्त मनोरथ व दिल की इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं॥ २॥ अगम्य व अगोचर प्रभु का अंत

जाना नहीं जा सकता। ज्ञानी, सिद्ध, साधक उस भगवान का ही ध्यान करते हैं। जिस व्यक्ति का अहंकार मिट जाता है और भ्रम दूर हो जाता है, गुरु उसके हृदय में ही भगवान को प्रगट कर देते हैं॥ ३॥ भगवान के नाम का जाप करने से आनंद एवं खुशियाँ प्राप्त हो जाती हैं और यह मुक्तिदायक एवं गुणों का भण्डार है। जो व्यक्ति भगवान के नाम का सिमरन करता है, उसे सुख एवं आनंद उपलब्ध हो जाते हैं। हे नानक! जिस व्यक्ति पर मेरा स्वामी कृपालु हो जाता है, उसके हृदय–घर में ही भगवान का नाम आ बसता है॥ ४॥ २५॥ ३२॥

माझ महला ५ ॥ सुणि सुणि जीवा सोइ तुमारी ॥ तूं प्रीतमु ठाकुरु अति भारी ॥ तुमरे करतब तुम ही जाणहु तुमरी ओट गोपाला जीउ ॥ १ ॥ गुण गावत मनु हरिआ होवै ॥ कथा सुणत मलु सगली खोवै ॥ भेटत संगि साध संतन कै सदा जपउ दइआला जीउ ॥ २ ॥ प्रभु अपुना सासि सासि समारउ ॥ इह मति गुर प्रसादि मनि धारउ ॥ तुमरी क्रिपा ते होइ प्रगासा सरब मइआ प्रतिपाला जीउ ॥ ३ ॥ सति सति सति प्रभु सोई ॥ सदा सदा सद आपे होई ॥ चलित तुमारे प्रगट पिआरे देखि नानक भए निहाला जीउ ॥ ४ ॥ २६ ॥ ३३ ॥

हे प्रभु! अपने कानों से तेरी शोभा सुन–सुनकर ही जीता हूँ। हे मेरे महान ठाकुर! तुम मेरे प्रियतम हो। हे गोपाल! अपने कर्म तू ही जानता है। मुझे तेरा ही आश्रय है॥ १॥ तेरी महिमा–स्तुति गाने से मन प्रफुल्लित हो जाता है। तेरी कथा सुनने से मन के विकारों की तमाम मलिनता दूर हो जाती है। साधुओं एवं संतों की संगति में मिलकर मैं सदैव दया के घर परमात्मा का चिन्तन करता हूँ॥ २॥ अपने प्रभु को मैं श्वास–श्वास से स्मरण करता हूँ। यह मति गुरु की कृपा से अपने मन में धारण करो। हे भगवान! तेरी कृपा से ही मेरे मन में तेरी ज्योति का प्रकाश हुआ है। तू समस्त जीव–जन्तुओं तथा सबका रक्षक है॥ ३॥ वह प्रभु सदैव ही सत्य है और आप ही सदैव होता है। हे प्रिय प्रभु! तेरी अद्भुत लीलाएँ जगत् में प्रत्यक्ष हैं। हे नानक! मैं प्रभु की उन अद्भुत लीलाओं को देखकर कृतार्थ हो गया हूँ॥ ४॥ २६॥ ३३॥

माझ महला ५ ॥ हुकमी वरसण लागे मेहा ॥ साजन संत मिलि नामु जपेहा ॥ सीतल सांति सहज सुखु पाइआ ठाढि पाई प्रभि आपे जीउ ॥ १ ॥ सभु किछु बहुतो बहुतु उपाइआ ॥ करि किरपा प्रभि सगल रजाइआ ॥ दाति करहु मेरे दातारा जीअ जंत सभि ध्रापे जीउ ॥ २ ॥ सचा साहिबु सची नाई ॥ गुर परसादि तिसु सदा धिआई ॥ जनम मरण भै काटे मोहा बिनसे सोग संतापे जीउ ॥ ३ ॥ सासि सासि नानकु सालाहे ॥ सिमरत नामु काटे सभि फाहे ॥ पूरन आस करी खिन भीतरि हरि हरि हरि गुण जापे जीउ ॥ ४ ॥ २७ ॥ ३४ ॥

भगवान के हुक्म से मेघ बरसने लगे हैं। सज्जन संत मिलकर भगवान के नाम का जाप करते हैं। संतों के हृदय शीतल एवं शांत हो गए हैं और उन्हें सहज सुख उपलब्ध हो गया है। भगवान ने स्वयं ही संतों के हृदय में शांति प्रदान की है॥ १॥ भगवान ने सब कुछ अत्यधिक मात्रा में उत्पन्न किया है। अपनी कृपा से परमात्मा ने सभी को सन्तुष्ट कर दिया है। हे मेरे दाता! अपनी देन प्रदान करो ताकि सभी जीव–जन्तु तृप्त हो जाएँ॥ २॥ मेरा मालिक प्रभु सदैव सत्य है और उसकी महिमा भी सत्य है। गुरु की कृपा से मैं सदैव ही उसका ध्यान करता रहता हूँ। उस प्रभु ने मेरा जन्म–मरण का भय एवं माया का मोह नाश कर दिया है॥३॥ नानक तो श्वास–श्वास से भगवान की महिमा–स्तुति ही करता है। भगवान का सिमरन करने से उसकी तमाम जंजीरें कट गई हैं। भगवान ने एक क्षण में उसकी आशा पूरी कर दी है, अब तो वह भगवान के नाम का ही जाप करता रहता है और उसकी ही महिमा गाता रहता है॥ ४॥ २७॥ ३४॥

आउ साजन संत मीत पिआरे ॥ मिलि गावह गुण अगम अपारे ॥ गावत सुणत सभे ही मुकते सो धिआईऐ जिनि हम कीए जीउ ॥ १ ॥ जनम जनम के किलबिख जावहि ॥ मनि चिंदे सेई फल पावहि ॥ सिमरि साहिबु सो सचु सुआमी रिजकु सभसु कउ दीए जीउ ॥ २ ॥ नामु जपत सरब सुखु पाईऐ ॥ सभु भउ बिनसै हरि हरि धिआईऐ ॥ जिनि सेविआ सो पारगिरामी कारज सगले थीए जीउ ॥ ३ ॥ आइ पइआ तेरी सरणाई ॥ जिउ भावै तिउ लैहि मिलाई ॥ करि किरपा प्रभु भगती लावहु सचु नानक अंम्रितु पीए जीउ ॥ ४ ॥ २८ ॥ ३५ ॥

हे मेरे सन्तजनों एवं प्रिय मित्रों ! आओ हम मिलकर अगम्य व अनन्त प्रभु का यशोगान करें। भगवान की महिमा गाने एवं सुनने वाले सभी व्यक्ति माया के बन्धनों से मुक्त हो जाते हैं। आओ हम उस प्रभु की आराधना करें जिसने हमें उत्पन्न किया है।। १।। भगवान का सिमरन करने से जन्म–जन्मांतरों के तमाम पाप नष्ट हो जाते हैं और मनोवांछित फल प्राप्त होता है। उस सत्य प्रभु–परमेश्वर की आराधना करो, जो सभी को भोजन पदार्थ देता है।। २।। भगवान के नाम का जाप करने से सर्व सुख मिल जाते हैं। हरि–प्रभु की आराधना करने से तमाम भय नाश हो जाते हैं। जो परमात्मा की सेवा करता है, वह पूर्ण पुरुष है और उसके समस्त कार्य संवर जाते हैं।। ३।। हे प्रभु ! मैं तेरी शरण में आ गया हूँ, जैसे तुझे अच्छा लगता है वैसे ही मुझे अपने साथ मिला लो। हे प्रभु ! कृपा करके मुझे अपनी भक्ति में लगा लो जिससे हे नानक ! वह प्रभु के सत्य नाम रूपी अमृत का पान करता रहे।। ४।। २८।। ३५।।

माझ महला ५ ॥ भए क्रिपाल गोविंद गुसाई ॥ मेघु वरसै सभनी थाई ॥ दीन दइआल सदा किरपाला ठाढि पाई करतारे जीउ ॥ १ ॥ अपुने जीअ जंत प्रतिपारे ॥ जिउ बारिक माता संमारे ॥ दुख भंजन सुख सागर सुआमी देत सगल आहारे जीउ ॥ २ ॥ जलि थलि पूरि रहिआ मिहरवाना ॥ सद बलिहारि जाईऐ कुरबाना ॥ रैणि दिनसु तिसु सदा धिआई जि खिन महि सगल उधारे जीउ ॥ ३ ॥ राखि लीए सगले प्रभि आपे ॥ उतरि गए सभ सोग संतापे ॥ नामु जपत मनु तनु हरीआवलु प्रभ नानक नदरि निहारे जीउ ॥ ४ ॥ २९ ॥ ३६ ॥

जैसे बादल समस्त स्थानों पर वर्षा करता है, वैसे ही सृष्टि का स्वामी गोविन्द गुसाईं समस्त जीवों पर दयालु हो गया है। सृष्टिकर्ता सदैव ही दीनदयालु एवं कृपालु है और उसने अपने भक्तों के हृदय शीतल कर दिए हैं।। १।। जैसे माता अपने शिशु की देखभाल करती है, वैसे ही प्रभु अपने जीव–जन्तुओं की पालना करता है। भगवान दुखनाशक एवं सुखों का सागर है। वह समस्त जीवों को खाने के लिए भोजन देता है।। २।। दयालु परमात्मा जल एवं धरती में सर्वत्र समाया हुआ है। मैं सदैव उस पर बलिहारी व कुर्बान जाता हूँ। दिन–रात हमें सदैव ही उस भगवान का ध्यान करना चाहिए जो एक क्षण में ही सभी का उद्धार कर देता है।। ३।। भगवान ने स्वयं ही अपने भक्तों की रक्षा की है और उनके सभी दुःख एवं संताप दूर हो गए हैं। हे नानक ! भगवान जब कृपा–दृष्टि से देखता है तो उसका नाम–सिमरन करने से मनुष्य का मन एवं तन हरा–भरा हो जाता है।। ४।। २९।। ३६।।

माझ महला ५ ॥ जिथै नामु जपीऐ प्रभ पिआरे ॥ से असथल सोइन चउबारे ॥ जिथै नामु न जपीऐ मेरे गोइदा सेई नगर उजाड़ी जीउ ॥ १ ॥ हरि रुखी रोटी खाइ समाले ॥ हरि अंतरि बाहरि नदरि निहाले ॥ खाइ खाइ करे बदफैली जाणु विसू की वाड़ी जीउ ॥ २ ॥ संता सेती रंगु न लाए ॥ साकत संगि विकरम कमाए ॥ दुलभ देह खोई अगिआनी जड़ अपुणी आपि उपाड़ी जीउ ॥ ३ ॥ तेरी सरणि

मेरे दीन दइआला ॥ सुख सागर मेरे गुर गोपाला ॥ करि किरपा नानकु गुण गावै राखहु सरम असाड़ी जीउ ॥ ४ ॥ ३० ॥ ३७ ॥

हे प्रियतम प्रभु ! जिस स्थान पर तेरे नाम का जाप किया जाता है, वह स्थान स्वर्ण के चौबारे के तुल्य है। हे मेरे गोबिन्द ! जिस स्थान पर तेरे नाम का जाप नहीं किया जाता, वह नगर वीरान भूमि के तुल्य है॥१॥ जो व्यक्ति रूखी-सूखी रोटी खा कर भगवान का सिमरन करता रहता है, उसे भगवान घर एवं बाहर सर्वत्र कृपा-दृष्टि से देखता रहता है। जो व्यक्ति भगवान के दिए पदार्थ खा-खाकर दुष्कर्म करता रहता है, उसे विष की वाटिका समझो॥ २॥ जो व्यक्ति संतों से प्रेम नहीं करता और शाक्तों के साथ मिलकर दुष्कर्म करता है, ऐसा ज्ञानहीन व्यक्ति अपने दुर्लभ जन्म को व्यर्थ गंवा रहा है तथा वह अपनी जड़ को स्वयं ही उखाड़ रहा है॥ ३॥ हे दीनदयाल ! मैं तेरी शरण में आया हूँ। हे मेरे गुरु गोपाल ! तू सुखों का सागर है। मुझ पर कृपा करो। नानक तेरी ही महिमा गायन करता है। मेरी लाज-प्रतिष्ठा रखो॥४॥३०॥३७॥

माझ महला ५ ॥ चरण ठाकुर के रिदै समाणे ॥ कलि कलेस सभ दूरि पइआणे ॥ सांति सूख सहज धुनि उपजी साधू संगि निवासा जीउ ॥ १ ॥ लागी प्रीति न तूटै मूले ॥ हरि अंतरि बाहरि रहिआ भरपूरे ॥ सिमरि सिमरि सिमरि गुण गावा काटी जम की फासा जीउ ॥ २ ॥ अंम्रितु वरखै अनहद बाणी ॥ मन तन अंतरि सांति समाणी ॥ त्रिपति अघाइ रहे जन तेरे सतिगुरि कीआ दिलासा जीउ ॥ ३ ॥ जिस का सा तिस ते फलु पाइआ ॥ करि किरपा प्रभ संगि मिलाइआ ॥ आवण जाण रहे वडभागी नानक पूरन आसा जीउ ॥ ४ ॥ ३१ ॥ ३८ ॥

जब भगवान के सुन्दर चरण मेरे हृदय में स्थित हो गए तो मेरे तमाम दुःख एवं संताप नाश हो गए। संतों की संगति में निवास होने से मेरे अन्तर्मन में अनहद शब्द की मधुर ध्वनि उत्पन्न हो गई और मन में शांति एवं सहज सुख उपलब्ध हो गया है॥ १॥ भगवान से ऐसी प्रीति लगी है, जो कदापि नहीं टूटती। भगवान मेरे अन्दर व बाहर सर्वत्र व्यापक हो रहा है। भगवान का सदैव नाम-सिमरन करने तथा उसकी महिमा-स्तुति द्वारा मेरी मृत्यु की फाँसी कट गई है॥२॥ मेरे मन में अनहद शब्द के प्रगट होने से हरि-रस रूपी अमृत-वर्षा होने लग गई है। मेरे मन एवं तन में शांति प्रवेश कर गई है। हे भगवान ! सतिगुरु ने तेरे भक्तों को आश्वासन दिया है और हरि-रस रूपी अमृत का पान करवा कर उन्हें तृप्त एवं संतुष्ट कर दिया है॥३॥ जिस भगवान का मैं सेवक था, उससे मैंने अपनी की हुई सेवा का फल पाया है। सतिगुरु ने कृपा करके मुझे भगवान से मिला दिया है। हे नानक ! सौभाग्य से मेरा जन्म-मरण का चक्र मिट गया है और भगवान से मिलन की कामना पूरी हो गई है॥४॥३१॥३८॥

माझ महला ५ ॥ मीहु पइआ परमेसरि पाइआ ॥ जीअ जंत सभि सुखी वसाइआ ॥ गइआ कलेसु भइआ सुखु साचा हरि हरि नामु समाली जीउ ॥ १ ॥ जिस के से तिन ही प्रतिपारे ॥ पारब्रहम प्रभ भए रखवारे ॥ सुणी बेनंती ठाकुरि मेरै पूरन होई घाली जीउ ॥ २ ॥ सरब जीआ कउ देवणहारा ॥ गुर परसादी नदरि निहारा ॥ जल थल महीअल सभि त्रिपताणे साधू चरन पखाली जीउ ॥ ३ ॥ मन की इछ पुजावणहारा ॥ सदा सदा जाई बलिहारा ॥ नानक दानु कीआ दुख भंजनि रते रंगि रसाली जीउ ॥ ४ ॥ ३२ ॥ ३६ ॥

वर्षा हुई है, इसे परमेश्वर ने ही बरसाया है। इससे प्रभु ने समस्त जीव-जन्तुओं को सुखी बसा दिया है। हरि-परमेश्वर के नाम का सिमरन करने से उनकी पीड़ा दूर हो गई है और उनको सच्चा

सुख मिल गया है॥१॥ ये जीव–जन्तु जिस परमात्मा के उत्पन्न किए हुए हैं, उसने ही उनकी रक्षा की है। पारब्रह्म–परमेश्वर उनका रक्षक बन गया है। मेरे ठाकुर जी ने मेरी प्रार्थना सुन ली है और मेरी भक्ति सफल हो गई है॥२॥ परमेश्वर समस्त प्राणियों को देने वाला है। गुरु की दया से मैंने उसको अपने नेत्रों में देख लिया है। सागर, धरती एवं गगन में रहने वाले समस्त प्राणी तृप्त हो गए हैं। मैं संत–गुरु के चरण धोता हूँ॥३॥ परमात्मा मन की इच्छा पूरी करने वाला है। मैं सदैव ही उस पर कुर्बान जाता हूँ। हे नानक ! दुख नाशक प्रभु ने मुझे यह दान दिया है कि मैं उसकी प्रीति में मग्न हो गया हूँ जो प्रसन्नता का घर है॥४॥३२॥३६॥

माझ महला ५ ॥ मनु तनु तेरा धनु भी तेरा ॥ तूं ठाकुरु सुआमी प्रभु मेरा ॥ जीउ पिंडु सभु रासि तुमारी तेरा जोरु गोपाला जीउ ॥ १ ॥ सदा सदा तूंहै सुखदाई ॥ निवि निवि लागा तेरी पाई ॥ कार कमावा जे तुधु भावा जा तूं देहि दइआला जीउ ॥ २ ॥ प्रभ तुम ते लहणा तूं मेरा गहणा ॥ जो तूं देहि सोई सुखु सहणा ॥ जिथै रखहि बैकुंठु तिथाई तूं सभना के प्रतिपाला जीउ ॥ ३ ॥ सिमरि सिमरि नानक सुखु पाइआ ॥ आठ पहर तेरे गुण गाइआ ॥ सगल मनोरथ पूरन होए कदे न होइ दुखाला जीउ ॥ ४ ॥ ३३ ॥ ४० ॥

हे भगवान ! मेरा मन एवं तन तेरा ही दिया हुआ है और धन भी तेरा ही दिया हुआ है। हे ईश्वर ! तुम मेरे ठाकुर एवं स्वामी हो। हे प्रभु ! मेरे प्राण एवं तन तेरी ही पूँजी है। हे गोपाल ! मेरी प्रभुता तुझ से ही है॥१॥ हे परमेश्वर ! सर्वदा तुम सुख प्रदान करने वाले हो। मैं नतमस्तक होकर तुझे ही नमन करता हूँ और तेरे चरण स्पर्श करता हूँ। हे दयालु परमात्मा ! मैं वहीं कार्य करूँगा जो तू मुझे करने के लिए देगा और जो तुझे अच्छा लगे॥ २॥ हे भगवान ! मैं सबकुछ तुझ से ही लेता हूँ और तुम ही मेरे आभूषण हो। हे अकालपुरुष ! जो कुछ तुम मुझे दुःख–सुख देते हो, मैं उसको सुख समझकर सहता हूँ। हे भगवान ! जहाँ कहीं भी तुम मुझे रखते हो, वही मेरा स्वर्ग है। तुम सबकी रक्षा करने वाले हो॥३॥ हे नानक ! उस परम पिता परमेश्वर की आराधना करने से मुझे सुख उपलब्ध हो गया है। हे प्रभु ! दिन के आठों प्रहर तेरी महिमा गायन करता हूँ। उसके हृदय के समस्त मनोरथ पूर्ण हो गए हैं और अब वह कभी भी दुखी नहीं होता॥४॥३३॥४०॥

माझ महला ५ ॥ पारब्रहमि प्रभि मेघु पठाइआ ॥ जलि थलि महीअलि दह दिसि वरसाइआ ॥ सांति भई बुझी सभ त्रिसना अनदु भइआ सभ ठाई जीउ ॥ १ ॥ सुखदाता दुख भंजनहारा ॥ आपे बखसि करे जीअ सारा ॥ अपने कीते नो आपि प्रतिपाले पइ पैरी तिसहि मनाई जीउ ॥ २ ॥ जा की सरणि पइआ गति पाईऐ ॥ सासि सासि हरि नामु धिआईऐ ॥ तिसु बिनु होरु न दूजा ठाकुरु सभ तिसै कीआ जाई जीउ ॥ ३ ॥ तेरा माणु ताणु प्रभ तेरा ॥ तूं सचा साहिबु गुणी गहेरा ॥ नानकु दासु कहै बेनंती आठ पहर तुधु धिआई जीउ ॥ ४ ॥ ३४ ॥ ४१ ॥

पारब्रह्म प्रभु ने मेघ को वर्षा करने के लिए भेजा है। मेघ ने सागर, धरती एवं आकाश दसों दिशाओं में वर्षा की है। वर्षा से जीवों के अर्न्तमन में सुख–शांति हो गई है तथा उनकी सारी प्यास मिट गई है और समस्त स्थानों पर प्रसन्नता हो गई है॥१॥ हे भगवान ! तू सुख प्रदान करने वाला और दुःख नाश करने वाला है। तू स्वयं ही समस्त प्राणियों को क्षमा करता है। अपनी सृष्टि का वह स्वयं ही पालन पोषण करता है। मैं उसके चरणों में नतमस्तक होकर उसे प्रसन्न करता हूँ॥२॥ जिस भगवान की शरण लेने से मुक्ति प्राप्त होती है, श्वास–श्वास से उस भगवान के नाम का ही ध्यान करना चाहिए। उसके अलावा अन्य कोई दूसरा स्वामी नहीं। समस्त स्थान केवल उसी के हैं॥३॥ हे प्रभु ! मुझे तेरा ही मान एवं तेरा ही बल है। तू ही मेरा सच्चा स्वामी एवं गुणों का सागर है। दास नानक एक प्रार्थना करता है कि हे प्रभु ! दिन के आठों प्रहर मैं तेरा ही ध्यान करता रहूँ॥४॥३४॥ ४१॥

माझ महला ५ ॥ सभे सुख भए प्रभ तुठे ॥ गुर पूरे के चरण मनि वुठे ॥ सहज समाधि लगी लिव अंतरि सो रसु सोई जाणै जीउ ॥ १ ॥ अगम अगोचरु साहिबु मेरा ॥ घट घट अंतरि वरतै नेरा ॥ सदा अलिपतु जीआ का दाता को विरला आपु पछाणै जीउ ॥ २ ॥ प्रभ मिलणै की एह नीसाणी ॥ मनि इको सचा हुकमु पछाणी ॥ सहजि संतोखि सदा त्रिपतासे अनदु खसम कै भाणै जीउ ॥ ३ ॥ हथी दिती प्रभि देवणहारै ॥ जनम मरण रोग सभि निवारे ॥ नानक दास कीए प्रभि अपुने हरि कीरतनि रंग माणे जीउ ॥ ४ ॥ ३५ ॥ ४२ ॥

जब प्रभु प्रसन्न हो जाते हैं तो समस्त सुख उपलब्ध हो जाते हैं। फिर पूर्ण गुरु के चरण मन में निवास कर लेते हैं। जिसकी प्रभु की सुरति में सहज समाधि लग जाती है, वही व्यक्ति इस आनंद को जानता है॥१॥ मेरा परमेश्वर अगम्य एवं अगोचर है। वह प्रत्येक हृदय में निकट ही रहता है। वह सदैव निर्लेप है और जीवों का दाता है। कोई विरला पुरुष ही अपने स्वरूप को समझता है॥२॥ प्रभु के मिलन का यही लक्षण है कि मनुष्य अपने मन में एक सत्यस्वरूप परमात्मा के हुक्म की ही पहचान करता है। प्रभु की इच्छानुसार चलने वाले मनुष्य को सदैव सुख, संतोष, तृप्ति एवं हर्ष प्राप्त होता है॥३॥ दाता परमेश्वर ने मुझे अपना हाथ दिया है अर्थात् सहारा दिया है और प्रभु ने जीवन-मृत्यु के समूह कष्ट दूर कर दिए हैं। हे नानक ! जिनको परमात्मा ने अपना सेवक बना लिया है, वह प्रभु का यशोगान करने का आनंद प्राप्त करते हैं॥४॥३५॥४२॥

माझ महला ५ ॥ कीनी दइआ गोपाल गुसाई ॥ गुर के चरण वसे मन माही ॥ अंगीकारु कीआ तिनि करतै दुख का डेरा ढाहिआ जीउ ॥ १ ॥ मनि तनि वसिआ सचा सोई ॥ बिखड़ा थानु न दिसै कोई ॥ दूत दुसमण सभि सजण होए एको सुआमी आहिआ जीउ ॥ २ ॥ जो किछु करे सु आपे आपै ॥ बुधि सिआणप किछू न जापै ॥ आपणिआ संता नो आपि सहाई प्रभि भरम भुलावा लाहिआ जीउ ॥ ३ ॥ चरण कमल जन का आधारो ॥ आठ पहर राम नामु वापारो ॥ सहज अनंद गावहि गुण गोविंद प्रभ नानक सरब समाहिआ जीउ ॥ ४ ॥ ३६ ॥ ४३ ॥

सृष्टि के पालनहार गोपाल ने मुझ पर कृपा-दृष्टि की है और गुरु के चरण मेरे मन में स्थित हो गए हैं। अब उस सृजनहार प्रभु ने मुझे अपना सेवक स्वीकार करके मुसीबतों का डेरा ही ध्वस्त कर दिया है॥१॥ मेरे तन एवं मन में सत्यस्वरूप परमेश्वर वास करता है और अब मुझे कोई स्थान दुखदायी नहीं लगता। काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अहंकार रूपी दूत जो मेरे शत्रु थे, अब वह सभी मेरे मित्र बन गए हैं, क्योंकि मुझे एक जगत् का स्वामी ही प्रिय है॥२॥ भगवान जो कुछ भी करता है, वह स्वयं ही करता है। उसके कार्यों में किसी अन्य की बुद्धि एवं चतुराई काम नहीं करती। ईश्वर अपने संतों का स्वयं ही सहायक होता है। उसने मेरा भ्रम व संशय दूर कर दिया है॥३॥ प्रभु के चरण कमल उसके भक्तों का सहारा है। वह दिन-रात आठ प्रहर राम नाम का व्यापार करते हैं। वह सहज अवस्था में आनंदपूर्वक गोविन्द की महिमा गायन करते रहते हैं। हे नानक ! प्रभु समस्त जीवों में समाया हुआ है॥४॥३६॥४३॥

माझ महला ५ ॥ सो सचु मंदरु जितु सचु धिआईऐ ॥ सो रिदा सुहेला जितु हरि गुण गाईऐ ॥ सा धरति सुहावी जितु वसहि हरि जन सचे नाम विटहु कुरबाणो जीउ ॥ १ ॥ सचु वडाई कीम न पाई ॥ कुदरति करमु न कहणा जाई ॥ धिआइ धिआइ जीवहि जन तेरे सचु सबदु मनि माणो जीउ ॥ २ ॥ सचु सालाहणु वडभागी पाईऐ ॥ गुर परसादी हरि गुण गाईऐ ॥ रंगि रते तेरै तुधु भावहि सचु

नामु नीसाणो जीउ ॥ ३ ॥ सचे अंतु न जाणै कोई ॥ थानि थनंतरि सचा सोई ॥ नानक सचु धिआईऐ सद ही अंतरजामी जाणो जीउ ॥ ४ ॥ ३७ ॥ ४४ ॥

सत्य का मन्दिर वहीं है, जहाँ सत्य प्रभु का सिमरन किया जाता है। वही हृदय सुखी है, जिससे भगवान की महिमा का गायन किया जाता है। वह धरती बड़ी सुन्दर है, जहाँ प्रभु के भक्त रहते हैं। वे तेरे सत्य नाम पर कुर्बान जाते हैं॥१॥ सत्य–स्वरूप परमात्मा की महिमा का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। परमेश्वर की कुदरत एवं करम का वर्णन नहीं किया जा सकता। हे प्रभु! तेरे भक्त सदैव तुझे स्मरण करके जीते हैं। उनकी आत्मा सत्य रूपी वाणी का आनंद लेती हैं॥२॥ सद्पुरुष परमात्मा की महिमा करनी सौभाग्य से ही प्राप्त होती है। गुरु की दया से परमात्मा का गुणगान किया जाता है। जो तेरी प्रीति में मग्न रहते हैं, वह तुझे अच्छे लगते हैं। हे प्रभु! तेरे दरबार में जाने के लिए सत्यनाम उनका परिचय चिन्ह है॥३॥ सत्यस्वरूप परमात्मा का अंत कोई नहीं जानता। सच्चा प्रभु सर्वव्यापक है। हे नानक! उस सत्य प्रभु का सदैव ही सिमरन करना चाहिए, वह अन्तर्यामी समस्त जीवों की भावना को जानता है॥ ४॥ ३७॥ ४४॥

माझ महला ५ ॥ रैणि सुहावड़ी दिनसु सुहेला ॥ जपि अंम्रित नामु संतसंगि मेला ॥ घड़ी मूरत सिमरत पल वंञहि जीवणु सफलु तिथाई जीउ ॥ १ ॥ सिमरत नामु दोख सभि लाथे ॥ अंतरि बाहरि हरि प्रभु साथे ॥ भै भउ भरमु खोइआ गुरि पूरै देखा सभनी जाई जीउ ॥ २ ॥ प्रभु समरथु वड ऊच अपारा ॥ नउ निधि नामु भरे भंडारा ॥ आदि अंति मधि प्रभु सोई दूजा लवै न लाई जीउ ॥ ३ ॥ करि किरपा मेरे दीन दइआला ॥ जाचिकु जाचै साध रवाला ॥ देहि दानु नानकु जनु मागै सदा सदा हरि धिआई जीउ ॥ ४ ॥ ३८ ॥ ४५ ॥

वह रात्रि सुन्दर है और वह दिन भी बड़ा सुखदायक है, जब संतों की सभा में मिलकर अमृत नाम का जाप किया जाता है। जहाँ जीवन–समय की घड़ियाँ, मुहूर्त एवं पल सभी नाम–सिमरन में व्यतीत होते हैं, वहाँ जीवन सफल हो जाता है॥१॥ नाम की स्तुति करने से मेरे समस्त दोष मिट गए हैं और अन्दर–बाहर हरि–प्रभु मेरे साथ रहता है। पूर्ण गुरु ने मेरे भीतर से भय, खौफ व भ्रम निवृत्त कर दिए हैं और अब मैं परमेश्वर को सर्वत्र देखता हूँ॥२॥ परमात्मा सर्वशक्तिमान, महान, सर्वश्रेष्ठ एवं अनन्त है। नवनिधियाँ प्रदान करने वाले नाम से उसके भण्डार भरे हुए हैं। परमात्मा जगत् के आदि, अन्त एवं मध्य तक विद्यमान है। किसी अन्य को मैं अपने निकट नहीं आने देता॥३॥ हे दीनदयाल! मुझ पर दया कीजिए। मैं तेरे दर का भिखारी हूँ और संतों की चरण–धूलि ही माँगता हूँ। हे प्रभु! दास नानक तुझ से यहीं माँगता है कि मुझे यह दान दीजिए कि मैं सदैव ही तेरा सिमरन करता रहूँ॥४॥३८॥४५॥

माझ महला ५ ॥ ऐथै तूंहै आगै आपे ॥ जीअ जंत्र सभि तेरे थापे ॥ तुधु बिनु अवरु न कोई करते मै धर ओट तुमारी जीउ ॥ १ ॥ रसना जपि जपि जीवै सुआमी ॥ पारब्रहम प्रभ अंतरजामी ॥ जिनि सेविआ तिन ही सुखु पाइआ सो जनमु न जूऐ हारी जीउ ॥ २ ॥ नामु अवखधु जिनि जन तेरै पाइआ ॥ जनम जनम का रोगु गवाइआ ॥ हरि कीरतनु गावहु दिनु राती सफल एहा है कारी जीउ ॥ ३ ॥ द्रिसटि धारि अपना दासु सवारिआ ॥ घट घट अंतरि पारब्रहमु नमसकारिआ ॥ इकसु विणु होरु दूजा नाही बाबा नानक इह मति सारी जीउ ॥ ४ ॥ ३९ ॥ ४६ ॥

हे प्रभु! इस मृत्यु लोक में तू ही (मेरा आधार) है और आगे परलोक में भी तू ही (मेरा आधार) है। समस्त जीव-जंतु तेरी ही रचना है। हे सृजनहार प्रभु! तेरे अलावा मेरा अन्य कोई नहीं। तुम ही मेरा सहारा और आधार हो॥१॥ हे जगत् के स्वामी! मैं तेरा नाम अपनी रसना से जप-जप कर जीता हूँ। पारब्रह्म प्रभु बड़ा अन्तर्यामी है। जो प्राणी प्रभु की भक्ति करता है, वह सुख प्राप्त करता है। वह अपना मनुष्य जीवन जुए के खेल में नहीं हारता॥२॥ हे प्रभु! तेरे जिन भक्तों ने नाम रूपी औषधि को पा लिया है, उन्होंने अपना जन्म-जन्मांतरों का पुराना रोग दूर कर लिया है। हे मानव! दिन-रात भगवान का भजन करते रहो, क्योंकि यहीं कार्य फलदायक है॥३॥ अपनी कृपा-दृष्टि करके प्रभु अपने जिस भक्त को गुणवान बना देता है, वह भक्त प्रत्येक हृदय में विद्यमान प्रभु को नमस्कार करता रहता है। एक ईश्वर के अलावा अन्य कोई नहीं है। हे नानक! यही मति सर्वश्रेष्ठ है॥४॥३६॥४६॥

माझ महला ५ ॥ मनु तनु रता राम पिआरे ॥ सरबसु दीजै अपना वारे ॥ आठ पहर गोविंद गुण गाईऐ बिसरु न कोई सासा जीउ ॥ १ ॥ सोई साजन मीतु पिआरा ॥ राम नामु साधसंगि बीचारा ॥ साधू संगि तरीजै सागरु कटीऐ जम की फासा जीउ ॥ २ ॥ चारि पदारथ हरि की सेवा ॥ पारजातु जपि अलख अभेवा ॥ कामु क्रोधु किलबिख गुरि काटे पूरन होई आसा जीउ ॥ ३ ॥ पूरन भाग भए जिसु प्राणी ॥ साधसंगि मिले सारंगपाणी ॥ नानक नामु वसिआ जिसु अंतरि परवाणु गिरसत उदासा जीउ ॥ ४ ॥ ४० ॥ ४७ ॥

यह मन एवं तन तो प्रिय राम के प्रेम में ही मग्न रहना चाहिए। हमें अपना सर्वस्व ही प्रभु को न्यौछावर कर देना चाहिए। हमें दिन के आठ प्रहर भगवान की महिमा-स्तुति करनी चाहिए और कोई एक सांस लेते भी उस प्रभु को भूलना नहीं चाहिए॥१॥ वहीं मेरा प्रिय मित्र एवं सज्जन है, जो सत्संग में राम के नाम का चिन्तन करता है। संतों की संगति करने से ही भवसागर पार किया जाता है और मृत्यु की फाँसी कट जाती है॥२॥ चारों पदार्थ-धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष प्रभु की भक्ति से प्राप्त होते हैं। अदृष्य एवं भेद रहित परमात्मा की उपासना ही कल्प वृक्ष है। सतिगुरु जिस व्यक्ति के अन्तर्मन से काम, क्रोध एवं पाप निवृत कर देते हैं, उसकी प्रभु मिलन की आशा पूरी हो जाती है॥३॥ जिस प्राणी के पूर्ण भाग्य उदय होते हैं, उसे संतों की संगति करने से सारंगपाणि भगवान मिल जाता है। हे नानक! जिसके हृदय में प्रभु का नाम निवास कर जाता है, वह गृहस्थ जीवन व्यतीत करता हुआ भी माया से उदासीन रहता है और भगवान के दरबार में स्वीकृत हो जाता है॥४॥४०॥४७॥

माझ महला ५ ॥ सिमरत नामु रिदै सुखु पाइआ ॥ करि किरपा भगतीं प्रगटाइआ ॥ संतसंगि मिलि हरि हरि जपिआ बिनसे आलस रोगा जीउ ॥ १ ॥ जा कै ग्रिहि नव निधि हरि भाई ॥ तिसु मिलिआ जिसु पुरब कमाई ॥ गिआन धिआन पूरन परमेसुर प्रभु सभना गला जोगा जीउ ॥ २ ॥ खिन महि थापि उथापनहारा ॥ आपि इकंती आपि पसारा ॥ लेपु नही जगजीवन दाते दरसन डिठे लहनि विजोगा जीउ ॥ ३ ॥ अंचलि लाइ सभ सिसटि तराई ॥ आपणा नाउ आपि जपाई ॥ गुर बोहिथु पाइआ किरपा ते नानक धुरि संजोगा जीउ ॥ ४ ॥ ४१ ॥ ४८ ॥

हरि का नाम-सिमरन करने से मुझे हृदय में सुख प्राप्त हुआ है। भगवान के भक्तों ने कृपा करके उसे मेरे मन में प्रगट कर दिया है। संतों की सभा में मिलकर मैंने हरि-प्रभु के नाम का ही जाप किया है और मेरा आलस्य रोग मिट गया है॥१॥ हे भाई! जिस (भगवान) के गृह में नवनिधियाँ हैं, भगवान उस व्यक्ति को ही मिलता है, जिसने पूर्व जन्म में नाम-सिमरन के शुभ कर्म किए हैं। पूर्ण परमेश्वर

ज्ञान एवं ध्यान से भरपूर है। प्रभु सब कुछ करने में समर्थ है॥२॥ परमेश्वर क्षण में ही जगत् की उत्पत्ति तथा विनाश करने वाला है। ईश्वर स्वयं ही निराकार स्वरूप है और ब्रह्माण्ड रूप सगुण भी स्वयं ही है। प्रभु जगत् का जीवन एवं दाता है और माया उसे प्रभावित नहीं करती, वह निर्लिप्त है। उस प्रभु के दर्शन करने से विरह की पीड़ा निवृत्त हो जाती है॥३॥ वह परमात्मा गुरु के आंचल से लगाकर सारी सृष्टि को भवसागर से पार करवाता है। भगवान गुरु द्वारा अपने नाम की जीवों से स्वयं ही आराधना करवाता है। हे नानक! जिसकी किस्मत में प्रारब्ध से ही संयोग लिखे होते हैं, उसे भगवान की कृपा से भवसागर पार करने के लिए गुरु रूपी जहाज मिल जाता है॥४॥४१॥४८॥

माझ महला ५ ॥ सोई करणा जि आपि कराए ॥ जिथै रखै सा भली जाए ॥ सोई सिआणा सो पतिवंता हुकमु लगै जिसु मीठा जीउ ॥ १ ॥ सभ परोई इकतु धागै ॥ जिसु लाइ लए सो चरणी लागै ॥ ऊंध कवलु जिसु होइ प्रगासा तिनि सरब निरंजनु डीठा जीउ ॥ २ ॥ तेरी महिमा तूंहै जाणहि ॥ अपणा आपु तूं आपि पछाणहि ॥ हउ बलिहारी संतन तेरे जिनि कामु क्रोधु लोभु पीठा जीउ ॥ ३ ॥ तूं निरवैरु संत तेरे निरमल ॥ जिन देखे सभ उतरहि कलमल ॥ नानक नामु धिआइ धिआइ जीवै बिनसिआ भ्रमु भउ धीठा जीउ ॥ ४ ॥ ४२ ॥ ४६ ॥

हे भगवान! मैं वही कुछ करता हूँ जो तुम स्वयं ही मुझ से करवाते हो। मेरे लिए वहीं स्थान उत्तम है, जिस स्थान पर तुम रखते हो। वहीं व्यक्ति बुद्धिमान और प्रतिष्ठित है जिसको ईश्वर का हुक्म मीठा लगता है॥१॥ सारी सृष्टि भगवान ने माया रूपी एक धागे में पिरोई हुई है। वहीं व्यक्ति भगवान के चरणों में लगता है, जिसे वह स्वयं अपने चरणों में लगाता है। भगवान का निवास मनुष्य के हृदय—कमल में है। यह कमल पहले उलटा पड़ा होता है परन्तु भगवान के सिमरन द्वारा सीधा हो जाता है। फिर इस सीधे हुए कमल में भगवान की ज्योति का प्रकाश हो जाता है। जो व्यक्ति उस प्रकाश को देखता है, वह उस सर्वव्यापक निरंजन के दर्शन करता है॥२॥ हे भगवान! अपनी महिमा को तुम स्वयं ही जानते हो और तुम अपने स्वरूप को स्वयं ही पहचान सकते हो। मैं तेरे संतों पर कुर्बान जाता हूँ, जिन्होंने अपने काम, क्रोध एवं लालच को पीस दिया है॥३॥ हे ईश्वर! तुम निर्वैर हो और तेरे सन्त पवित्र हैं, जिनके दर्शनों से समस्त पाप दूर हो जाते हैं। हे नानक! मैं प्रभु के नाम की वंदना एवं सिमरन करके ही जीवित हूँ और मेरा कठोर स्वभाव, भ्रम एवं भय नाश हो गए हैं॥४॥४२॥४६॥

मांझ महला ५ ॥ झूठा मंगणु जे कोई मागै ॥ तिस कउ मरते घड़ी न लागै ॥ पारब्रहमु जो सद ही सेवै सो गुर मिलि निहचलु कहणा ॥ १ ॥ प्रेम भगति जिस कै मनि लागी ॥ गुण गावै अनदिनु निति जागी ॥ बाह पकड़ि तिसु सुआमी मेलै जिस कै मसतकि लहणा ॥ २ ॥ चरन कमल भगतां मनि वुठे ॥ विणु परमेसर सगले मुठे ॥ संत जनां की धूड़ि नित बांछहि नामु सचे का गहणा ॥ ३ ॥ ऊठत बैठत हरि हरि गाईऐ ॥ जिसु सिमरत वरु निहचलु पाईऐ ॥ नानक कउ प्रभ होइ दइआला तेरा कीता सहणा ॥ ४ ॥ ४३ ॥ ५० ॥

यदि कोई व्यक्ति झूठी माया की याचना करे तो उसे मृत्युकाल में एक क्षण भी नहीं लगता। जो व्यक्ति पारब्रह्म प्रभु की सदैव भक्ति करता रहता है, वह गुरु से मिलकर सदैव जीवन प्राप्त कर लेता है॥१॥ जिसका मन प्रभु की भक्ति में मग्न है, वह दिन—रात प्रभु की कीर्ति गायन करता है और सदैव मग्न रहता है। जिसकी किस्मत में नाम की देन लेने का लेख विद्यमान है, उसे ही भुजा से पकड़ कर प्रभु अपने साथ मिला लेता है॥२॥ हरि के चरण कमल उसके भक्तों के हृदय में बसते हैं। महान

परमेश्वर की दया के अलावा सारे ठगे जाते हैं। जो व्यक्ति संतों की चरण–धूलि की नित्य कामना करते रहते हैं, उन्हें संतों द्वारा सत्य प्रभु का नाम रूपी आभूषण मिल जाता है॥३॥ उठते–बैठते हर वक्त हमें भगवान की महिमा–स्तुति करते रहना चाहिए, भगवान का सिमरन करने से अटल प्रभु मिल जाता है। हे नानक! परमात्मा उस पर दयालु हुआ है। हे प्रभु! तुम जो कुछ करते हो, मैं सहर्ष स्वीकार करता हूँ॥४॥ ४३॥ ५०॥

रागु माझ असटपदीआ महला १ घरु १ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सबदि रंगाए हुकमि सबाए ॥ सची दरगह महलि बुलाए ॥ सचे दीन दइआल मेरे साहिबा सचे मनु पतीआवणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी सबदि सुहावणिआ ॥ अंम्रित नामु सदा सुखदाता गुरमती मंनि वसावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ना को मेरा हउ किसु केरा ॥ साचा ठाकुरु त्रिभवणि मेरा ॥ हउमै करि करि जाइ घणेरी करि अवगण पछोतावणिआ ॥ २ ॥ हुकमु पछाणै सु हरि गुण वखाणै ॥ गुर कै सबदि नामि नीसाणै ॥ सभना का दरि लेखा सचै छूटसि नामि सुहावणिआ ॥ ३ ॥ मनमुखु भूला ठउरु न पाए ॥ जम दरि बधा चोटा खाए ॥ बिनु नावै को संगि न साथी मुकते नामु धिआवणिआ ॥ ४ ॥ साकत कूड़े सचु न भावै ॥ दुबिधा बाधा आवै जावै ॥ लिखिआ लेखु न मेटै कोई गुरमुखि मुकति करावणिआ ॥ ५ ॥ पेईअड़ै पिरु जातो नाही ॥ झूठि विछुंनी रोवै धाही ॥ अवगणि मुठी महलु न पाए अवगण गुणि बखसावणिआ ॥ ६ ॥ पेईअड़ै जिनि जाता पिआरा ॥ गुरमुखि बूझै ततु बीचारा ॥ आवणु जाणा ठाकि रहाए सचै नामि समावणिआ ॥ ७ ॥ गुरमुखि बूझै अकथु कहावै ॥ सचे ठाकुर साचो भावै ॥ नानक सचु कहै बेनंती सचु मिलै गुण गावणिआ ॥ ८ ॥ १ ॥

ईश्वर के हुक्म द्वारा सभी गुरु के शब्द में मग्न हैं और परमात्मा के सत्य दरबार में उसकी उपस्थिति में आमंत्रित किए जाते हैं। हे मेरे मालिक! तू दीनदयाल एवं सदैव सत्य है और तेरे सत्य से मेरा मन प्रसन्न हो गया है॥ १॥ मैं उन पर तन–मन से न्यौछावर हूँ, जिन्होंने शब्द द्वारा अपना जीवन सुन्दर बना लिया है। प्रभु का अमृत नाम सदा ही सुख देने वाला है। गुरु के उपदेश द्वारा मैंने प्रभु के नाम को अपने मन में बसा लिया है॥ १॥ रहाउ॥ न ही कोई मेरा है, न ही मैं किसी का हूँ। तीनों लोकों का स्वामी सत्य परमात्मा ही मेरा है। अनेक जीव अहंकार करके प्राण त्याग गए हैं। दुष्कर्म करके प्राणी को बड़ा पश्चाताप होता है॥ २॥ जो परमात्मा के हुक्म को पहचानता है, वही उसका यशोगान करता है। वह गुरु के शब्द द्वारा नाम रूपी परवाना अपने साथ लेकर दरबार में जाता है। सत्य प्रभु के दरबार में समस्त जीवों के कर्मों का लेखा होता है। वहाँ वहीं व्यक्ति मुक्त होते हैं, जो नाम द्वारा अपना जीवन सुन्दर बना लेते हैं॥ ३॥ मनमुख व्यक्ति को कहीं भी सुख नहीं मिलता। मृत्यु के द्वार पर बंधा हुआ वह चोटें खाता है। वहाँ नाम के अलावा मनुष्य का कोई मित्र अथवा सज्जन नहीं होता। नाम सिमरन करने वाला व्यक्ति मोक्ष प्राप्त करता है॥ ४॥ झूठे शाक्त को सत्य उत्तम नहीं लगता। वह दुविधा में फँसा होने के कारण जन्म–मरण के चक्र में पड़ा रहता है। जीव की किस्मत को कोई मिटा नहीं सकता। गुरु की दया से ही मनुष्य मोक्ष पाता है॥ ५॥ जिस जीव–स्त्री ने अपने पीहर (इहलोक) में अपने मालिक–प्रभु को नहीं समझा, वह झूठी प्रभु से जुदा हुई ऊँची ऊँची विलाप करती है। उस अवगुणों की ठगी हुई जीव–स्त्री को प्रभु के महल में स्थान नहीं मिलता। गुणों का स्वामी प्रभु स्वयं ही जीव के अवगुणों को क्षमा कर देता है॥ ६॥ जिस जीव–स्त्री ने अपने पीहर (मृत्युलोक) में अपने पति–प्रभु को समझ लिया है, वह गुरु के माध्यम से परम तत्त्व अर्थात् प्रभु के

गुणों को समझ लेती है। प्रभु उसके जन्म–मरण के चक्र को मिटा देता है। तदुपरांत वह सत्य प्रभु के नाम में लीन रहती है॥ ७॥ गुरमुख प्रभु के गुणों को स्वयं समझता है और दूसरों से अकथनीय प्रभु की लीला एवं उसके गुणों की कथा करवाता है। सच्चे ठाकुर प्रभु को सत्य नाम ही अच्छा लगता है। हे नानक! वह सत्य प्रभु के समक्ष सच्ची प्रार्थना करता है कि उसे सत्य नाम मिले ताकि वह उसकी महिमा करता रहे॥ ८॥ १॥

माझ महला ३ घरु १ ॥ करमु होवै सतिगुरू मिलाए ॥ सेवा सुरति सबदि चितु लाए ॥ हउमै मारि सदा सुखु पाइआ माइआ मोहु चुकावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी सतिगुर कै बलिहारणिआ ॥ गुरमती परगासु होआ जी अनदिनु हरि गुण गावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तनु मनु खोजे ता नाउ पाए ॥ धावतु राखै ठाकि रहाए ॥ गुर की बाणी अनदिनु गावै सहजे भगति करावणिआ ॥ २ ॥ इसु काइआ अंदरि वसतु असंखा ॥ गुरमुखि साचु मिलै ता वेखा ॥ नउ दरवाजे दसवै मुकता अनहद सबदु वजावणिआ ॥ ३ ॥ सचा साहिबु सची नाई ॥ गुर परसादी मंनि वसाई ॥ अनदिनु सदा रहै रंगि राता दरि सचै सोझी पावणिआ ॥ ४ ॥ पाप पुंन की सार न जाणी ॥ दूजै लागी भरमि भुलाणी ॥ अगिआनी अंधा मगु न जाणै फिरि फिरि आवण जावणिआ ॥ ५ ॥ गुर सेवा ते सदा सुखु पाइआ ॥ हउमै मेरा ठाकि रहाइआ ॥ गुर साखी मिटिआ अंधिआरा बजर कपाट खुलावणिआ ॥ ६ ॥ हउमै मारि मंनि वसाइआ ॥ गुर चरणी सदा चितु लाइआ ॥ गुर किरपा ते मनु तनु निरमलु निरमल नामु धिआवणिआ ॥ ७ ॥ जीवणु मरणा सभु तुधै ताई ॥ जिसु बखसे तिसु दे वडिआई ॥ नानक नामु धिआइ सदा तूं जंमणु मरणु सवारणिआ ॥ ८ ॥ १ ॥ २ ॥

जिस व्यक्ति पर परमात्मा की मेहर हो जाती है, उसे वह सतिगुरु से मिला देता है। फिर वह व्यक्ति अपनी सुरति प्रभु की सेवा में लगाता और अपना मन शब्द में जोड़ता है। वह अपने अहंकार को त्याग कर सदैव सुख पाता है और अपने माया के मोह को मिटा देता है॥ १॥ मैं अपने सतिगुरु पर तन एवं मन से न्यौछावर हूँ, क्योंकि गुरु की मति द्वारा उसके हृदय में प्रभु ज्योति का प्रकाश हो जाता है। वह व्यक्ति प्रतिदिन भगवान की महिंमा–स्तुति करता रहता है॥ १॥ रहाउ॥ जब मनुष्य अपने तन एवं मन में ही उसकी खोज करता है तो उसे ईश्वर का नाम प्राप्त हो जाता है। वह अपने भटकते मन को स्थिर करता है और इसको अपने वश में रखता है। वह रात–दिन गुरु की वाणी गायन करता है और सहज ही प्रभु की भक्ति में जुट जाता है॥ २॥ इस शरीर में विद्यमान अनंत गुणों वाली नाम रूपी वस्तु जब किसी को मिल जाती है तो वह सत्य प्रभु के दर्शन करता है। शरीर रूपी घर को आँखें, कान, नाक, मुँह इत्यादि नौ द्वार लगे हुए है। इन दरवाजों द्वारा मन बाहर भटकता रहता है। जब वह विकारों एवं मोह–माया से मुक्त होकर निर्मल हो जाता है तो वह दसम द्वार में आ जाता है। फिर निर्मल मन में अनहद शब्द बजने लगता है॥ ३॥ परमात्मा सदैव सत्य है एवं उसकी महिमा भी सत्य है। गुरु की कृपा से ही परमात्मा मन में आकर निवास करता है। फिर व्यक्ति दिन–रात परमात्मा के प्रेम में मग्न रहता है और उसे सत्य दरबार की सूझ हो जाती है॥ ४॥ मनमुख प्राणी को पाप एवं पुण्य की पहचान नहीं होती। उसकी बुद्धि मोह–माया में मग्न हो जाती है, जिससे वह भ्रम में फँसकर भटकती रहती है। मोह–माया में ज्ञानहीन मनमुख भगवान के मिलन के मार्ग को नहीं जानता, जिसके कारण वह बार–बार जन्मता एवं मरता रहता है॥ ५॥ गुरमुख गुरु की सेवा करके सदैव ही सुख प्राप्त करते हैं। वह अहंकार को नष्ट करके अपने भटकते हुए मन को विकारों की तरफ जाने से वर्जित करते हैं। गुरु की शिक्षा से उनका अज्ञानता का अँधेरा मिट जाता है और वज्र कपाट

खुल जाते हैं॥६॥ वह अपना अहंकार मिटाकर भगवान को अपने मन में बसा लेते हैं। फिर वह अपना चित्त सदैव ही गुरु के चरणों में लगाकर रखते हैं। गुरु की कृपा से उनका मन एवं तन निर्मल हो जाता है। फिर वह भगवान के निर्मल नाम का सिमरन करते रहते हैं॥ ७॥ हे प्रभु ! जीवों का जन्म एवं मृत्यु सब कुछ तुझ पर निर्भर है और हे प्रभु ! आप उसे महानता प्रदान करते हैं, जिसे तुम क्षमा कर देते हो। हे नानक ! तू सदैव ही परमेश्वर के नाम का भजन कर, जो मनुष्य के जन्म और मृत्यु को संवार देता है॥८॥१॥२॥

माझ महला ३ ॥ मेरा प्रभु निरमलु अगम अपारा ॥ बिनु तकड़ी तोलै संसारा ॥ गुरमुखि होवै सोई बूझै गुण कहि गुणी समावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी हरि का नामु मंनि वसावणिआ ॥ जो सचि लागे से अनदिनु जागे दरि सचै सोभा पावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे सुणै तै आपे वेखै ॥ जिस नो नदरि करे सोई जनु लेखै ॥ आपे लाइ लए सो लागै गुरमुखि सचु कमावणिआ ॥ २ ॥ जिसु आपि भुलाए सु किथै हथु पाए ॥ पूरबि लिखिआ सु मेटणा न जाए ॥ जिन सतिगुरु मिलिआ से वडभागी पूरै करमि मिलावणिआ ॥ ३ ॥ पेईअड़ै धन अनदिनु सुती ॥ कंति विसारी अवगणि मुती ॥ अनदिनु सदा फिरै बिललादी बिनु पिर नीद न पावणिआ ॥ ४ ॥ पेईअड़ै सुखदाता जाता ॥ हउमै मारि गुर सबदि पछाता ॥ सेज सुहावी सदा पिरु रावे सचु सीगारु बणावणिआ ॥ ५ ॥ लख चउरासीह जीअ उपाए ॥ जिस नो नदरि करे तिसु गुरू मिलाए ॥ किलबिख काटि सदा जन निरमल दरि सचै नामि सुहावणिआ ॥ ६ ॥ लेखा मागै ता किनि दीऐ ॥ सुखु नाही फुनि दूऐ तीऐ ॥ आपे बखसि लए प्रभु साचा आपे बखसि मिलावणिआ ॥ ७ ॥ आपि करे तै आपि कराए ॥ पूरे गुर कै सबदि मिलाए ॥ नानक नामु मिलै वडिआई आपे मेलि मिलावणिआ ॥ ८ ॥ २ ॥ ३ ॥

मेरा निर्मल प्रभु अगम्य एवं अपार है। वह तराजु के बिना जगत् को तोलता है। इस तथ्य को वहीं व्यक्ति समझता है, जो गुरु के सान्निध्य में रहता है। वह प्रभु के गुणों को कह–कह कर उसी में विलीन हो जाता है॥१॥ जो व्यक्ति भगवान के नाम को अपने हृदय में बसाते हैं। मेरा तन–मन उन पर न्यौछावर है। जो व्यक्ति सत्य प्रभु के नाम–सिमरन में मग्न हैं, वह रात–दिन जागृत रहते है और सत्य दरबार में बड़ी शोभा पाते हैं॥१॥ रहाउ॥ हे प्रभु ! तू स्वयं ही समस्त जीवों की प्रार्थना सुनता है और स्वयं ही उन्हें देखता रहता है। जिस पर प्रभु अपनी कृपा–दृष्टि करता है, वह व्यक्ति प्रभु के दरबार में स्वीकृत हो जाता है। जिसे प्रभु स्वयं ही अपने सिमरन में लगाता है, वहीं व्यक्ति उसके सिमरन में लगता है। गुरमुख ही सत्य नाम की साधना करते हैं॥२॥ वह किस का आश्रय ले सकता है, जिसको प्रभु स्वयं गुमराह करता है? विधाता के विधान को मिटाया नहीं जा सकता अर्थात् पूर्व जन्म का लिखा लेख मिटाया नहीं जाता। वह व्यक्ति बड़े भाग्यशाली हैं, जिन्हें सतिगुरु मिले हैं। पूर्ण भाग्य से ही सतिगुरु जी मिलते हैं॥३॥ मनमुख जीव–स्त्री अपने पीहर (इहलोक) में दिन–रात अज्ञानता में निद्रामग्न रहती है। उसके पति–प्रभु ने उसे विस्मृत कर दिया है और अवगुणों के कारण वह त्याग दी गई है। वह रात–दिन सदैव ही विलाप करती रहती है। अपने पति–प्रभु के बिना उसको सुख की निद्रा नहीं आती॥ ४॥ गुरमुख जीव–स्त्री ने अपने पीहर (इहलोक) में सुखदाता पति–प्रभु को जान लिया है। उसने अपना अहंकार त्याग कर गुरु के शब्द द्वारा अपने पति–प्रभु को पहचान लिया है। वह सदैव ही सुन्दर शय्या पर शयन करती है और पति–प्रभु के साथ रमण करती है। ऐसी जीव–स्त्री प्रभु के सत्य–नाम को अपना शृंगार बनाती है॥५॥ पारब्रह्म–प्रभु ने चौरासी लाख योनियों में अनंत जीव उत्पन्न किए हैं। जिस जीव पर वह अपनी दया–दृष्टि करता है, उसको गुरु से मिला

देता है। वह जीव अपने पापों को धोकर हमेशा के लिए पवित्र हो जाता है और सत्य दरबार के अन्दर नाम से सुहावना लगता है॥६॥ यदि प्रभु कर्मों का हिसाब माँगेगा, वह तब कौन दे सकेगा? तब द्वैत अथवा त्रिगुणी अवस्था में कोई सुख प्राप्त नहीं होना। सत्यस्वरूप परमात्मा स्वयं क्षमाशील है और क्षमा करके अपने आप से मिला लेता है॥७॥ प्रभु स्वयं ही सब कुछ करता है और स्वयं ही जीवों से करवाता है। पूर्ण गुरु के उपदेश से ही प्रभु अपने साथ मिला लेता है। हे नानक! जिस जीव को प्रभु के नाम की शोभा मिलती है, सृष्टि का स्वामी स्वयं ही उसे अपने मिलाप में मिलाता है॥ ८॥२॥३॥

माझ महला ३ ॥ इको आपि फिरै परछंना ॥ गुरमुखि वेखा ता इहु मनु भिंना ॥ त्रिसना तजि सहज सुखु पाइआ एको मंनि वसावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी इकसु सिउ चितु लावणिआ ॥ गुरमती मनु इकतु घरि आइआ सचै रंगि रंगावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इहु जगु भूला तैं आपि भुलाइआ ॥ इकु विसारि दूजै लोभाइआ ॥ अनदिनु सदा फिरै भ्रमि भूला बिनु नावै दुखु पावणिआ ॥ २ ॥ जो रंगि राते करम बिधाते ॥ गुर सेवा ते जुग चारे जाते ॥ जिस नो आपि देइ वडिआई हरि कै नामि समावणिआ ॥ ३ ॥ माइआ मोहि हरि चेतै नाही ॥ जम पुरि बधा दुख सहाही ॥ अंना बोला किछु नदरि न आवै मनमुख पापि पचावणिआ ॥ ४ ॥ इकि रंगि राते जो तुधु आपि लिव लाए ॥ भाइ भगति तेरै मनि भाए ॥ सतिगुरु सेवनि सदा सुखदाता सभ इछा आपि पुजावणिआ ॥ ५ ॥ हरि जीउ तेरी सदा सरणाई ॥ आपे बखसिहि दे वडिआई ॥ जमकालु तिसु नेड़ि न आवै जो हरि हरि नामु धिआवणिआ ॥ ६ ॥ अनदिनु राते जो हरि भाए ॥ मेरै प्रभि मेले मेलि मिलाए ॥ सदा सदा सचे तेरी सरणाई तूं आपे सचु बुझावणिआ ॥ ७ ॥ जिन सचु जाता से सचि समाणे ॥ हरि गुण गावहि सचु वखाणे ॥ नानक नामि रते बैरागी निज घरि ताड़ी लावणिआ ॥ ८ ॥ ३ ॥ ४ ॥

एक परमेश्वर ही अदृष्य होकर सर्वत्र भ्रमण करता रहता है। जिस व्यक्ति ने गुरु के माध्यम से उसके दर्शन कर लिए हैं, उसका मन उसके प्रेम में भीग गया है। उसने अपनी तृष्णा को त्यागकर सहज सुख प्राप्त कर लिया है। फिर उसने एक प्रभु को ही अपने मन में बसाया है॥१॥ मैं उन पर कुर्बान हूँ, मेरी आत्मा कुर्बान है, जो एक ईश्वर से अपनी सुरति लगाते हैं। गुरु की मति द्वारा उसका मन एक ही आत्मस्वरूप घर में आकर बसता है और सत्य प्रभु के प्रेम में मग्न हो जाता है॥१॥ रहाउ॥ हे प्रभु! यह संसार भ्रम में पड़ा हुआ है और तूने स्वयं ही इसे भ्रम में डाल दिया है। एक ईश्वर को विस्मृत करके यह लोभ लालच में ग्रस्त हुआ पड़ा है। रात–दिन यह भ्रम का भ्रमित हुआ हमेशा भटकता रहता है और नाम के बिना कष्ट उठाता है॥२॥ जो भाग्य विधाता के प्रेम में मग्न रहते हैं, वह गुरु की सेवा करके चारों युगों में प्रसिद्ध हो जाते हैं। जिस प्राणी को प्रभु स्वयं महानता प्रदान करता है, वह ईश्वर के नाम में लीन हो जाता है॥३॥ माया–मोह में ग्रस्त मनुष्य परमेश्वर को स्मरण नहीं करता। फिर यमदूतों की नगरी में जकड़ा हुआ वह कष्ट सहन करता है। मनमुख व्यक्ति अन्धा एवं बहरा है, उसे कुछ भी दृष्टिगोचर नहीं होता और गुनाहों में ही नष्ट हो जाता है॥४॥ हे प्रभु! कई जीव तेरे प्रेम में मग्न रहते हैं, जिन्हें तूने ही नाम के साथ लगाया है। प्रेमा–भक्ति द्वारा वह तेरे हृदय को अच्छे लगते हैं। वह सदैव सुखदाता सतिगुरु की सेवा करते रहते हैं और ईश्वर स्वयं ही उनकी समस्त मनोकामनाएँ पूरी करता है॥५॥ हे पूज्य परमेश्वर! जो व्यक्ति सदैव तेरी शरण में रहता है, तू स्वयं ही उसे क्षमादान करके शोभा प्रदान करते हो। जो व्यक्ति भगवान का नाम–सिमरन करता रहता है, यम उसके निकट नहीं आता॥६॥ जो व्यक्ति भगवान को अच्छे लगते हैं, वह रात–दिन भगवान के प्रेम में मग्न रहते हैं। मेरे प्रभु ने उनका सतिगुरु से मिलाप करवा कर अपने साथ मिला

लिया है। हे सत्य स्वरूप परमेश्वर! जो व्यक्ति सदैव तेरी शरण में हैं। तुम स्वयं ही उन्हें सत्य का ज्ञान प्रदान करते हो॥७॥ जो व्यक्ति सत्य प्रभु को समझ लेते हैं, वे सत्य में ही लीन रहते हैं। वह हरि का यशोगान करते हैं और सत्य का ही बखान करते हैं। हे नानक! जो नाम में मग्न रहते हैं, वे निर्लेप हैं और अपने निज घर आत्मस्वरूप में समाधि लगाते हैं॥८॥३॥४॥

माझ महला ३ ॥ सबदि मरै सु मुआ जापै ॥ कालु न चापै दुखु न संतापै ॥ जोती विचि मिलि जोति समाणी सुणि मन सचि समावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी हरि कै नाइ सोभा पावणिआ ॥ सतिगुरु सेवि सचि चितु लाइआ गुरमती सहजि समावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काइआ कची कचा चीरु हंढाए ॥ दूजै लागी महलु न पाए ॥ अनदिनु जलदी फिरै दिनु राती बिनु पिर बहु दुखु पावणिआ ॥ २ ॥ देही जाति न आगै जाए ॥ जिथै लेखा मंगीऐ तिथै छुटै सचु कमाए ॥ सतिगुरु सेवनि से धनवंते ऐथै ओथै नामि समावणिआ ॥ ३ ॥ भै भाइ सीगारु बणाए ॥ गुर परसादी महलु घरु पाए ॥ अनदिनु सदा रवै दिनु राती मजीठै रंगु बणावणिआ ॥ ४ ॥ सभना पिरु वसै सदा नाले ॥ गुर परसादी को नदरि निहाले ॥ मेरा प्रभु अति ऊचो ऊचा करि किरपा आपि मिलावणिआ ॥ ५ ॥ माइआ मोहि इहु जगु सुता ॥ नामु विसारि अंति विगुता ॥ जिस ते सुता सो जागाए गुरमति सोझी पावणिआ ॥ ६ ॥ अपिउ पीऐ सो भरमु गवाए ॥ गुर परसादि मुकति गति पाए ॥ भगती रता सदा बैरागी आपु मारि मिलावणिआ ॥ ७ ॥ आपि उपाए धंधै लाए ॥ लख चउरासी रिजकु आपि अपड़ाए ॥ नानक नामु धिआइ सचि राते जो तिसु भावै सु कार करावणिआ ॥ ८ ॥ ४ ॥ ५ ॥

जो व्यक्ति शब्द द्वारा अपने अहंकार को नष्ट कर देता है, वही मृत माना जाता है। उसे काल (मृत्यु) भी नहीं कुचलता और न ही कोई कष्ट दुखी करता है। उसकी ज्योत परम ज्योति में मिलकर उस में ही समा जाती है। उसका मन भी सत्य नाम को सुनकर सत्य में ही समा जाता है॥१॥ मैं उन पर कुर्बान हूँ, जो ईश्वर के नाम द्वारा जगत् में शोभा पाते हैं। जो व्यक्ति सतिगुरु की सेवा करते हैं एवं सत्य प्रभु में अपना चित्त लगाते हैं, वह गुरु के उपदेश द्वारा सहज अवस्था में लीन रहते हैं॥१॥ रहाउ॥ मनुष्य का शरीर कच्चा अर्थात् क्षणभंगुर है। शरीर जीवात्मा का वस्त्र है और जीवात्मा इस क्षणभंगुर वस्त्र को पहनकर रखती है। जीवात्मा माया के मोह में लीन रहने के कारण अपने आत्मस्वरूप को नहीं पा सकती। वह दिन–रात तृष्णाग्नि में जलती रहती है और पति–प्रभु के बिना बहुत दुखी रहती है॥२॥ मनुष्य का शरीर एवं जाति परलोक में नहीं जाते। जहाँ कर्मों का लेखा तलब किया जाता है, वहाँ सत्य की कमाई द्वारा ही वह मोक्ष को प्राप्त होगा। जो सतिगुरु की श्रद्धापूर्वक सेवा करते हैं, वह धनवान हैं। वह लोक तथा परलोक में हरिनाम में विलीन रहते हैं॥३॥ जो जीव–स्त्री प्रभु के भय एवं प्रेम को अपना हार–शृंगार बनाती है, वह गुरु की दया से अपने घर में ही उसकी उपस्थिति को पा लेती है। वह दिन–रात हमेशा उपने प्रियतम के साथ रमण करती है और मजीठ जैसे पक्की रंगत निश्चित कर लेती है॥४॥ समस्त जीव–स्त्रियों का प्रियतम प्रभु हमेशा ही सभी के साथ रहता है। गुरु की दया से कोई विरला ही अपने नेत्रों से उसके दर्शन करता है। मेरा प्रभु सर्वश्रेष्ठ है। वह अपनी कृपा करके स्वयं ही जीव–स्त्री को अपने साथ मिला लेता है॥ ५॥ यह जगत् मोह–माया में फँसकर अज्ञानता की निद्रा में सोया हुआ है। प्रभु के नाम को विस्मृत करके यह अंतः नष्ट हो जाता है। जिस परमात्मा के हुक्म से यह जगत् निद्रामग्न है, वही इसे ज्ञान प्रदान करके जगाता है। गुरु के उपदेश द्वारा इसको सूझ प्राप्त होती है॥६॥ जो व्यक्ति नाम रूपी अमृत पान करता है, वह अपना भ्रम निवृत्त कर देता है। गुरु की दया से वह मोक्ष की पदवी को प्राप्त कर लेता है।

जो परमेश्वर की भक्ति में मग्न रहता है, वह सदैव ही निर्लेप है। अपने अहं को मारकर वह अपने प्रभु को मिल जाता है॥७॥ हे ईश्वर ! तूने स्वयं ही सृष्टि की रचना करके प्राणी उत्पन्न किए हैं और अपने–अपने कर्म में लगा दिया है। हे प्रभु ! चौरासी लाख योनियों को स्वयं ही तुम जीविका पहुँचाते हो। हे नानक ! जो व्यक्ति प्रभु का नाम–सिमरन करते रहते हैं, वे सत्य प्रभु के प्रेम में मग्न रहते हैं। वह वहीं कार्य करते हैं, जो प्रभु को अच्छा लगता है॥८॥४॥५॥

माझ महला ३ ॥ अंदरि हीरा लालु बणाइआ ॥ गुर कै सबदि परखि परखाइआ ॥ जिन सचु पलै सचु वखाणहि सचु कसवटी लावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी गुर की बाणी मंनि वसावणिआ ॥ अंजन माहि निरंजनु पाइआ जोती जोति मिलावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इसु काइआ अंदरि बहुतु पसारा ॥ नामु निरंजनु अति अगम अपारा ॥ गुरमुखि होवै सोई पाए आपे बखसि मिलावणिआ ॥ २ ॥ मेरा ठाकुरु सचु द्रिड़ाए ॥ गुर परसादी सचि चितु लाए ॥ सचो सचु वरतै सभनी थाई सचे सचि समावणिआ ॥ ३ ॥ वेपरवाहु सचु मेरा पिआरा ॥ किलविख अवगण काटणहारा ॥ प्रेम प्रीति सदा धिआईऐ भै भाइ भगति द्रिड़ावणिआ ॥ ४ ॥ तेरी भगति सची जे सचे भावै ॥ आपे देइ न पछोतावै ॥ सभना जीआ का एको दाता सबदे मारि जीवावणिआ ॥ ५ ॥ हरि तुधु बाझहु मै कोई नाही ॥ हरि तुधै सेवी तै तुधु सालाही ॥ आपे मेलि लैहु प्रभ साचे पूरै करमि तूं पावणिआ ॥ ६ ॥ मै होरु न कोई तुधै जेहा ॥ तेरी नदरी सीझसि देहा ॥ अनदिनु सारि समालि हरि राखहि गुरमुखि सहजि समावणिआ ॥ ७ ॥ तुधु जेवडु मै होरु न कोई ॥ तुधु आपे सिरजी आपे गोई ॥ तूं आपे ही घड़ि भंनि सवारहि नानक नामि सुहावणिआ ॥ ८ ॥ ५ ॥ ६ ॥

भगवान ने आत्मस्वरूप में हीरे एवं लाल जैसा अमूल्य नाम रखा हुआ है। गुरु के शब्द द्वारा इसकी परख की तथा करवाई जाती है। जिनके पास सत्यनाम है, वह सत्य–नाम का ही बखान करते हैं तथा इसकी परख करने के लिए सत्यनाम की ही कसौटी लगानी पड़ती है॥१॥ जिन्होंने गुरु की वाणी को अपने मन में बसा लिया है, मैं उन पर तन–मन से न्यौछावर हूँ। वह माया के अंजन में ही निरंजन प्रभु को पा लेते हैं। वह अपनी ज्योति को प्रभु की परम–ज्योति में मिला देते हैं॥१॥ रहाउ॥ जैसे ब्रह्माण्ड में परमात्मा ने अपना प्रसार किया हुआ है, वैसे ही उसने मनुष्य की काया में अपना अत्यधिक प्रसार किया हुआ है। प्रभु का निरंजन नाम अत्यंत अगम्य एवं अपरंपार है। जो व्यक्ति गुरु के सान्निध्य में रहता है, इस नाम की लब्धि उसे ही हो सकती है। प्रभु गुरमुख व्यक्ति को क्षमा करके स्वयं ही अपने साथ मिला लेता है॥२॥ मेरा ठाकुर प्रभु जिस व्यक्ति के हृदय में सत्य नाम बसा देता है और गुरु की कृपा से वह सत्य में ही अपना चित्त लगाता है। सत्य का पुंज परमेश्वर स्वयं ही सर्वव्यापक है। वह मनुष्य सत्य प्रभु में ही लीन रहता है॥३॥ मेरा प्रिय प्रभु सदैव सत्य एवं बेपरवाह है। वह जीवों के पापों एवं अवगुणों को नाश करने वाला है। अतः प्रेमपूर्वक सदैव ही उसका सिमरन करते रहना चाहिए। उसका भय मानते हुए प्रेमपूर्वक उसकी भक्ति को अपने हृदय में बसाना चाहिए॥४॥ हे भगवान ! तेरी भक्ति सदैव सत्य है और इसकी देन जीव को तेरी इच्छानुसार ही मिलती है। तू स्वयं ही अपनी भक्ति की देन प्रदान करता है परन्तु देन देकर तू पश्चाताप नहीं करता। समस्त जीव–जन्तुओं का दाता एक प्रभु ही है। वह नाम द्वारा जीवों के अहंकार को नष्ट करके उन्हें सत्य जीवन प्रदान करने वाला है॥ ५॥ हे भगवान ! तेरे सिवाय मेरा अन्य कोई नहीं। मैं तेरी ही भक्ति करता हूँ और तेरी ही महिमा–स्तुति करता हूँ। हे सत्य परमेश्वर ! आप ही मुझे अपने साथ मिला लो। तेरी पूर्ण कृपा से ही तुझे पाया जा सकता है॥ ६॥ हे भगवान ! मुझे तेरे जैसा अन्य कोई नजर नहीं

आता। तेरी कृपा–दृष्टि से मेरा शरीर सफल हो सकता है। भगवान प्रतिदिन जीवों की देखरेख करके उनकी रक्षा करता है। अतः गुरमुख सहज ही प्रभु में लीन रहते हैं॥ ७॥ हे भगवान! तेरे जैसा महान मुझे अन्य कोई भी नहीं दिखता। तू स्वयं ही सृष्टि की रचना करता है और स्वयं ही इसका विनाश करता है। हे भगवान! तू स्वयं ही सृष्टि का निर्माण करके एवं विनाश करके संवारता है। हे नानक! भगवान जीवों को अपने नाम में लगाकर उन्हें सुन्दर बना देता है॥८॥५॥६॥

माझ महला ३ ॥ सभ घट आपे भोगणहारा ॥ अलखु वरतै अगम अपारा ॥ गुर कै सबदि मेरा हरि प्रभु धिआईऐ सहजे सचि समावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी गुर सबदु मंनि वसावणिआ ॥ सबदु सूझै ता मन सिउ लूझै मनसा मारि समावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंच दूत मुहहि संसारा ॥ मनमुख अंधे सुधि न सारा ॥ गुरमुखि होवै सु अपणा घरु राखै पंच दूत सबदि पचावणिआ ॥ २ ॥ इकि गुरमुखि सदा सचै रंगि राते ॥ सहजे प्रभु सेवहि अनदिनु माते ॥ मिलि प्रीतम सचे गुण गावहि हरि दरि सोभा पावणिआ ॥ ३ ॥ एकम एकै आपु उपाइआ॥ दुबिधा दूजा त्रिबिधि माइआ ॥ चउथी पउड़ी गुरमुखि ऊची सचो सचु कमावणिआ ॥ ४ ॥ सभु है सचा जे सचे भावै ॥ जिनि सचु जाता सो सहजि समावै ॥ गुरमुखि करणी सचे सेवहि साचे जाइ समावणिआ ॥ ५ ॥ सचे बाझहु को अवरु न दूआ ॥ दूजै लागि जगु खपि खपि मूआ ॥ गुरमुखि होवै सु एको जाणै एको सेवि सुखु पावणिआ ॥ ६ ॥ जीअ जंत सभि सरणि तुमारी ॥ आपे धरि देखहि कची पकी सारी ॥ अनदिनु आपे कार कराए आपे मेलि मिलावणिआ ॥ ७ ॥ तूं आपे मेलहि वेखहि हदूरि ॥ सभ महि आपि रहिआ भरपूरि ॥ नानक आपे आपि वरतै गुरमुखि सोझी पावणिआ ॥ ८ ॥ ६ ॥ ७ ॥

समस्त जीवों में व्यापक होकर भगवान स्वयं ही पदार्थों को भोगने वाला है। अदृष्य, अगम्य, अनन्त परमात्मा सर्वत्र व्यापक हो रहा है। गुरु के शब्द द्वारा मेरे प्रभु–परमात्मा का ध्यान करने से मनुष्य सहज ही सत्य में लीन हो जाता है॥१॥ मैं तन–मन से उन पर न्यौछावर हूँ, जो गुरु की वाणी को अपने हृदय में बसाते हैं। यदि मनुष्य को गुरु की वाणी का ज्ञान हो जाता है, तब वह अपने मन से युद्ध करता है और अपनी तृष्णा को निवृत्त करके परमेश्वर में समा जाता है॥१॥ रहाउ॥ माया के पाँच दूत–काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार जगत् के जीवों के सद्गुणों को लूट रहे हैं। ज्ञानहीन अन्धे मनमुख को इसका कोई ज्ञान नहीं। जो गुरमुख हो जाता है, वह अपना हृदय रूपी घर इन दूतों से बचा लेता है। पांचों ही कट्टर वैरी गुरु के उपदेश से नाश किए जाते हैं॥२॥ कई गुरमुख हमेशा सत्यस्वरूप ईश्वर के प्रेम में मग्न रहते हैं। वह स्वाभाविक ही अपने ईश्वर की भक्ति करते हैं और रात–दिन उसके प्रेम में मस्त रहते हैं। जो मनुष्य प्रियतम गुरु से मिलकर सत्यस्वरूप परमात्मा का यशोगान करते हैं, वह ईश्वर के दरबार में शोभा पाते हैं॥३॥ पहले, प्रभु निराकार था। वह स्वयंभू है और उसने स्वयं ही अपना एक साकार रूप पैदा किया, दूसरा, द्वैत–भाव की सूझ को और तीसरा, रज, तम एवं सत त्रिगुणात्मक माया उत्पन्न की। त्रिगुणात्मक माया द्वारा सृष्टि–रचना हुई। त्रिगुणात्मक माया के जीव चौरासी लाख योनियों के चक्र में पड़े रहते हैं। इन जीवों को ब्रह्म–ज्ञान का उपदेश देने के लिए संत, साधु, भक्त एवं ब्रह्मज्ञानी उत्पन्न किए गए जिन्हें गुरमुख कहा जाता है। यह चौथे पद की अवस्था वाले होते हैं। जिसे तुरीया पद भी कहा जाता है। गुरमुख अवस्था सर्वोच्च अवस्था है। वह नाम–सिमरन की साधना करते हैं॥४॥ जो सत्यस्वरूप परमात्मा को अच्छा लगता है, सब सत्य है। जो सत्य को पहचानता है, वह प्रभु में विलीन हो जाता है। गुरमुख की जीवन–मर्यादा सद्पुरुष की भक्ति–सेवा ही करती है। वे जाकर सत्य में ही समा जाते हैं॥५॥ सत्य (ईश्वर) के

अलावा अन्य कोई दूसरा नहीं। माया के मोह में फँस कर दुनिया बड़ी व्याकुल होकर मरती है। जो गुरमुख होता है, वह केवल एक ईश्वर को ही जानता है और एक ईश्वर की भक्ति करके सुख पाता है॥६॥ हे भगवान! समस्त जीव–जन्तु तुम्हारी शरण में हैं। यह जगत् एक चौपड़ की खेल है। तूने जीवों को इस खेल की कच्ची–पक्की गोटियाँ बनाया है। तू स्वयं ही जीवों की देखभाल करता है। तू स्वयं ही जीवों से कामकाज करवाता है और तू स्वयं ही इन्हें गुरु से मिलाकर अपने साथ मिलाने वाला है॥ ७॥ हे प्रभु! जो जीव तुझे प्रत्यक्ष देखते हैं, तू उन्हें स्वयं ही अपने साथ मिला लेता है। तू स्वयं ही समस्त जीवों में विद्यमान हो रहा है। हे नानक! भगवान स्वयं ही सर्वव्यापक है परन्तु इसका ज्ञान गुरमुखों को ही होता है॥८॥६॥७॥

माझ महला ३ ॥ अंम्रित बाणी गुर की मीठी ॥ गुरमुखि विरलै किनै चखि डीठी ॥ अंतरि परगासु महा रसु पीवै दरि सचै सबदु वजावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी गुर चरणी चितु लावणिआ ॥ सतिगुरु है अंम्रित सरु साचा मनु नावै मैलु चुकावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरा सचे किनै अंतु न पाइआ ॥ गुर परसादि किनै विरलै चितु लाइआ ॥ तुधु सालाहि न रजा कबहूं सचे नावै की भुख लावणिआ ॥ २ ॥ एको वेखा अवरु न बीआ ॥ गुर परसादी अंम्रितु पीआ ॥ गुर कै सबदि तिखा निवारी सहजे सूखि समावणिआ ॥ ३ ॥ रतनु पदारथु पलरि तिआगै ॥ मनमुखु अंधा दूजै भाइ लागै ॥ जो बीजै सोई फलु पाए सुपनै सुखु न पावणिआ ॥ ४ ॥ अपनी किरपा करे सोई जनु पाए ॥ गुर का सबदु मंनि वसाए ॥ अनदिनु सदा रहै भै अंदरि भै मारि भरमु चुकावणिआ ॥ ५ ॥ भरमु चुकाइआ सदा सुखु पाइआ ॥ गुर परसादि परम पदु पाइआ ॥ अंतरु निरमलु निरमल बाणी हरि गुण सहजे गावणिआ ॥ ६ ॥ सिम्रिति सासत बेद वखाणै ॥ भरमे भूला ततु न जाणै ॥ बिनु सतिगुर सेवे सुखु न पाए दुखो दुखु कमावणिआ ॥ ७ ॥ आपि करे किसु आखै कोई ॥ आखणि जाईऐ जे भूला होई ॥ नानक आपे करे कराए नामे नामि समावणिआ ॥ ८ ॥ ७ ॥ ८ ॥

{इस पद में वाणी का फल एवं स्वरूप विद्यमान है।}

अमृत रूपी गुरु की वाणी बड़ी मीठी है। कोई विरला गुरमुख ही इसको चख कर देखता है। जो इस अमृत रूपी महारस का पान करता है, उसके हृदय में ज्ञान का प्रकाश हो जाता है और सत्य प्रभु के दरबार में अनहद शब्द बजने लगता है॥१॥ मैं उन पर तन–मन से न्योछावर हूँ, जो गुरु के चरणों में मन को लगाते हैं। सतिगुरु अमृत का सत्य सरोवर है। जब मन इसमें स्नान करता है तो वह अपने विकारों की मैल दूर कर लेता है॥१॥ रहाउ॥ हे सत्यस्वरूप ईश्वर! तेरा अन्त कोई भी नहीं जानता। गुरु की दया से कोई विरला पुरुष ही तेरे चरणों में अपना मन लगाता है। इतनी बड़ी क्षुधा सत्यनाम की मुझे लगी हुई है कि तेरी उपमा करने से मुझे कदाचित तृप्ति नहीं होती॥ २॥ मैं केवल एक ईश्वर को देखता हूँ और किसी अन्य दूसरे को नहीं। गुरु की दया से मैंने नाम रूपी अमृत पान कर लिया है। गुरु के शब्द से मेरी तृष्णा बुझ गई है और मैं स्वाभाविक ही सदैव सुख में लीन हो गया हूँ॥३॥ ज्ञानहीन मनमुख व्यक्ति माया के प्रेम में लीन हो जाता है और रत्न जैसे अमूल्य नाम को व्यर्थ ही त्याग देता है। वह जैसा बीज बोता है, वह तैसा ही फल पाता है। जिसके कारण स्वप्न में भी उसे सुख प्राप्त नहीं होता॥४॥ जिस मनुष्य पर परमात्मा अपनी दया करता है, वही गुरु को प्राप्त करता है। गुरु के शब्द को वह अपने हृदय में बसाता है। दिन–रात वह सदा ही प्रभु के भय में रहता है और यम के भय को मिटा कर वह अपने संशय को निवृत्त कर देता है॥५॥ जो व्यक्ति अपने मन का भ्रम दूर कर देता है, वह सदैव ही सुखी रहता है। गुरु की कृपा से वह परमपद (मोक्ष)

प्राप्त कर लेता है। निर्मल वाणी से उसका अन्तर्मन भी निर्मल हो जाता है और वह सहज ही भगवान की महिमा–स्तुति करता रहता है॥६॥ पण्डित स्मृतियों, शास्त्रों एवं वेदों की कथा लोगों को सुनाता रहता है परन्तु वह स्वयं ही भ्रम में पड़कर भटकता रहता है और परम तत्व ब्रह्म को नहीं जानता। सतिगुरु की सेवा किए बिना उसको सुख नहीं मिलता और वह दुःख ही दुःख अर्जित करता है॥७॥ परमात्मा स्वयं ही सब कुछ करता है। फि . किसी को कोई क्या समझा सकता है? किसी को समझाने की तभी आवश्यकता है यदि वह भूल करता हो। हे नानक! परमात्मा स्वयं ही सब कुछ करता और जीवों से करवाता है। नाम सिमरन करके जीव नाम में ही लीन हो जाता है॥८॥७॥८॥

माझ महला ३ ॥ आपे रंगे सहजि सुभाए ॥ गुर कै सबदि हरि रंगु चड़ाए ॥ मनु तनु रता रसना रंगि चलूली भै भाइ रंगु चड़ावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी निरभउ मंनि वसावणिआ ॥ गुर किरपा ते हरि निरभउ धिआइआ बिखु भउजलु सबदि तरावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख मुगध करहि चतुराई ॥ नाता धोता थाइ न पाई ॥ जेहा आइआ तेहा जासी करि अवगण पछोतावणिआ ॥ २ ॥ मनमुख अंधे किछू न सूझै ॥ मरणु लिखाइ आए नही बूझै ॥ मनमुख करम करे नही पाए बिनु नावै जनमु गवावणिआ ॥ ३ ॥ सचु करणी सबदु है सारु ॥ पूरै गुरि पाईऐ मोख दुआरु ॥ अनदिनु बाणी सबदि सुणाए सचि राते रंगि रंगावणिआ ॥ ४ ॥ रसना हरि रसि राती रंगु लाए ॥ मनु तनु मोहिआ सहजि सुभाए ॥ सहजे प्रीतमु पिआरा पाइआ सहजे सहजि मिलावणिआ ॥ ५ ॥ जिसु अंदरि रंगु सोई गुण गावै ॥ गुर कै सबदि सहजे सुखि समावै ॥ हउ बलिहारी सदा तिन विटहु गुर सेवा चितु लावणिआ ॥ ६ ॥ सचा सचो सचि पतीजै ॥ गुर परसादी अंदरु भीजै ॥ बैसि सुथानि हरि गुण गावहि आपे करि सति मनावणिआ ॥ ७ ॥ जिस नो नदरि करे सो पाए ॥ गुर परसादी हउमै जाए ॥ नानक नामु वसै मन अंतरि दरि सचै सोभा पावणिआ ॥ ८ ॥ ८ ॥ ६ ॥

भगवान स्वयं ही जीव को सहज स्वभाव द्वारा अपने प्रेम में रंग देता है और गुरु के शब्द द्वारा अपने प्रेम का रंग चढ़ा देता है। उसका मन एवं तन प्रेम में रंग जाता है और उसकी जिह्वा पोस्त के पुष्प की भाँति लाल वर्ण धारण कर लेती है। भगवान उसे यह नाम रंग उसके मन में अपना भय एवं प्रेम उत्पन्न करके चढ़ाता है॥१॥ मैं उन पर न्यौछावर हूँ मेरा जीवन उन पर कुर्बान है, जो निडर परमात्मा को अपने हृदय में बसाते हैं। गुरु की दया से वे निर्भय परमेश्वर को स्मरण करते हैं और उनकी वाणी द्वारा विषैले संसार सागर को पार कर जाते हैं॥१॥ रहाउ॥ मनमुख मूर्ख व्यक्ति चतुरता करता है। अपने स्नान व स्वच्छता के बावजूद वह स्वीकृत नहीं होता। जिस तरह वह जगत् में आया था, वैसे ही पापों पर पश्चाताप करता हुआ चला जाता है॥२॥ ज्ञानहीन मनमुखों को कुछ भी ज्ञान नहीं होता क्योंकि वह प्रारम्भ से ही अपनी किस्मत में अपनी मृत्यु के लेख लिखवा कर जगत् में आते हैं। वे अपने जीवन–मनोरथ को नहीं समझते। मनमुख कर्म करते रहते हैं परन्तु उन्हें नाम प्राप्त नहीं होता। नामविहीन होकर वह अपना जीवन व्यर्थ ही गंवा देते हैं॥३॥ सत्यनाम की साधना ही सर्वश्रेष्ठ है। पूर्णगुरु के द्वारा मोक्ष द्वार मिलता है। गुरु जी प्रतिदिन अपनी वाणी द्वारा सिक्खों को नाम सुनाते रहते हैं और वह शब्द द्वारा सत्य प्रभु के प्रेम में मग्न हुए नाम रंग में लीन हो जाते हैं॥४॥ गुरमुख की रसना हरि–रस में रंग जाती है और प्रभु से ही प्यार करती है। सहज स्वभाव ही उसका मन एवं तन प्रभु प्रेम से मुग्ध हो जाता है। वह सहज ही अपने प्रियतम प्रभु को पा लेता है। फिर वह सहज ही सहज अवस्था में समा जाता है॥५॥ जिस मनुष्य में प्रभु का प्रेम विद्यमान है। वह ईश्वर का यशोगायन करता है और गुरु के शब्द द्वारा सहज ही आत्मिक आनंद में समा जाता है। मैं सदैव ही

उन पर कुर्बान जाता हूँ, जो अपने मन को गुरु की सेवा में समर्पित करते हैं॥६॥ वही व्यक्ति सत्यवादी है जो सत्य नाम द्वारा सत्य प्रभु से विश्वस्त हो जाता है। गुरु की कृपा से उसका हृदय नाम—रस से भीग जाता है। वह साध संगत रूपी सुन्दर स्थान पर बैठकर भगवान की महिमा—स्तुति ही करता है। भगवान स्वयं ही उस पर कृपा करके उसके मन में यह श्रद्धा पैदा करता है कि सत्य का गुणानुवाद ही सत्यकर्म है॥७॥ जिस पर प्रभु अपनी दया—दृष्टि करता है, वह उसके नाम को पाता है। गुरु की दया से उसका अहंकार निवृत्त हो जाता है। हे नानक! जिसके मन में ईश्वर का नाम निवास करता है, वह सत्य दरबार में बड़ी शोभा पाता है॥८॥८॥६॥

माझ महला ३ ॥ सतिगुरु सेविऐ वडी वडिआई ॥ हरि जी अचिंतु वसै मनि आई ॥ हरि जीउ सफलिओ बिरखु है अंम्रितु जिनि पीता तिसु तिखा लहावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी सचु संगति मेलि मिलावणिआ ॥ हरि सतसंगति आपे मेलै गुर सबदी हरि गुण गावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु सेवी सबदि सुहाइआ ॥ जिनि हरि का नामु मंनि वसाइआ ॥ हरि निरमलु हउमै मैलु गवाए दरि सचै सोभा पावणिआ ॥ २ ॥ बिनु गुर नामु न पाइआ जाइ ॥ सिध साधिक रहे बिललाइ ॥ बिनु गुर सेवे सुखु न होवी पूरै भागि गुरु पावणिआ ॥ ३ ॥ इहु मनु आरसी कोई गुरमुखि वेखै ॥ मोरचा न लागै जा हउमै सोखै ॥ अनहत बाणी निरमल सबदु वजाए गुर सबदी सचि समावणिआ ॥ ४ ॥ बिनु सतिगुर किहु न देखिआ जाइ ॥ गुरि किरपा करि आपु दिता दिखाइ ॥ आपे आपि आपि मिलि रहिआ सहजे सहजि समावणिआ ॥ ५ ॥ गुरमुखि होवै सु इकसु सिउ लिव लाए ॥ दूजा भरमु गुर सबदि जलाए ॥ काइआ अंदरि वणजु करे वापारा नामु निधानु सचु पावणिआ ॥ ६ ॥ गुरमुखि करणी हरि कीरति सारु ॥ गुरमुखि पाए मोख दुआरु ॥ अनदिनु रंगि रता गुण गावै अंदरि महलि बुलावणिआ ॥ ७ ॥ सतिगुरु दाता मिलै मिलाइआ ॥ पूरै भागि मनि सबदु वसाइआ ॥ नानक नामु मिलै वडिआई हरि सचे के गुण गावणिआ ॥ ८ ॥ ६ ॥ १० ॥

सतिगुरु की सेवा करने से बड़ी शोभा प्राप्त होती है और पूज्य परमेश्वर अकस्मात ही हृदय में आकर निवास करता है। हरि—परमेश्वर एक फलदायक पौधा है जो इसके नाम रूपी अमृत का पान करता है, उसकी प्यास बुझ जाती है॥१॥ मेरा तन, मन एवं प्राण उस प्रभु पर न्यौछावर हैं जो जीवों को सत्संग में मिलाकर अपने साथ मिला लेता है। भगवान स्वयं ही जीवों को सत्संग में मिलाता है और गुरु के शब्द द्वारा जीव भगवान की महिमा—स्तुति करता रहता है॥१॥ रहाउ॥ जो सतिगुरु की सेवा करता है, गुरु की वाणी से शोभा पा रहा है। जिस व्यक्ति ने भगवान का नाम अपने मन में बसा लिया है, निर्मल भगवान उसके मन की अहंकार रूपी मैल को दूर कर देता है और वह व्यक्ति सत्य के दरबार में शोभा प्राप्त करता है॥२॥ गुरु के बिना नाम की प्राप्ति नहीं होती। सिद्ध—साधक इससे विहीन होकर विलाप करते हैं। गुरु की सेवा के बिना सुख नहीं मिलता लेकिन बड़े सौभाग्य से सुकर्मों द्वारा गुरु जी मिलते हैं॥३॥ यह मन एक दर्पण है। कोई विरला गुरमुख ही उसमें अपने—आपको देखता है। यदि मनुष्य अपना अहंकार जला दे तो उसे अहंकार रूपी जंगाल नहीं लगता। जिस गुरमुख के मन में अनहद ध्वनि वाला निर्मल अनहद बजने लग जाता है, वह गुरु के शब्द द्वारा सत्य (परमेश्वर) में समा जाता है॥४॥ सतिगुरु के बिना परमेश्वर किसी तरह भी देखा नहीं जा सकता। अपनी दया करके गुरदेव ने स्वयं ही मुझे ईश्वर के दर्शन करवा दिए हैं। ईश्वर अपने आप स्वयं ही सर्वव्यापक हो रहा है। ब्रह्म—ज्ञान द्वारा मनुष्य सहज ही उसमें लीन हो जाता है॥५॥ जो व्यक्ति गुरमुख बन जाता है, वह एक ईश्वर के साथ स्नेह करता है। गुरु के शब्द द्वारा वह मोह माया रूपी

भ्रम को जला फैंकता है। अपनी देहि में ही वह नाम रूपी वस्तु का व्यापार करता है और सत्यनाम की निधि पा लेता है॥६॥ भगवान की महिमा—स्तुति करना ही गुरमुख की श्रेष्ठ करनी है। इसलिए गुरमुख मोक्ष द्वार को पा लेता है। प्रभु के स्नेह में रंगा हुआ वह रात—दिन उसकी कीर्ति का गायन करता रहता है और प्रभु उसे अपने आत्म—स्वरूप में आमंत्रित कर लेता है॥७॥ सतिगुरु नाम का दाता है और सतिगुरु भगवान का मिलाया हुआ ही जीव को मिलता है। जिस व्यक्ति के पूर्ण भाग्य होते हैं, सतिगुरु उसके मन में नाम बसा देते हैं। हे नानक! यदि सत्यस्वरूप परमात्मा की महिमा—स्तुति की जाए तो ही मनुष्य को नाम की शोभा प्राप्त होती है॥८॥६॥१०॥

माझ महला ३ ॥ आपु वंञाए ता सभ किछु पाए ॥ गुर सबदी सची लिव लाए ॥ सचु वणंजहि सचु संघरहि सचु वापारु करावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी हरि गुण अनदिनु गावणिआ ॥ हउ तेरा तूं ठाकुरु मेरा सबदि वडिआई देवणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वेला वखत सभि सुहाइआ ॥ जितु सचा मेरे मनि भाइआ ॥ सचे सेविऐ सचु वडिआई गुर किरपा ते सचु पावणिआ ॥ २ ॥ भाउ भोजनु सतिगुरि तुठै पाए ॥ अन रसु चूकै हरि रसु मंनि वसाए ॥ सचु संतोखु सहज सुखु बाणी पूरे गुर ते पावणिआ ॥ ३ ॥ सतिगुरु न सेवहि मूरख अंध गवारा ॥ फिरि ओइ किथहु पाइनि मोख दुआरा ॥ मरि मरि जंमहि फिरि फिरि आवहि जम दरि चोटा खावणिआ ॥ ४ ॥ सबदै सादु जाणहि ता आपु पछाणहि ॥ निरमल बाणी सबदि वखाणहि ॥ सचे सेवि सदा सुखु पाइनि नउ निधि नामु मंनि वसावणिआ ॥ ५ ॥ सो थानु सुहाइआ जो हरि मनि भाइआ ॥ सतसंगति बहि हरि गुण गाइआ ॥ अनदिनु हरि सालाहहि साचा निरमल नादु वजावणिआ ॥ ६ ॥ मनमुख खोटी रासि खोटा पासारा ॥ कूड़ु कमावनि दुखु लागै भारा ॥ भरमे भूले फिरनि दिन राती मरि जनमहि जनमु गवावणिआ ॥ ७ ॥ सचा साहिबु मै अति पिआरा ॥ पूरे गुर कै सबदि अधारा ॥ नानक नामि मिलै वडिआई दुखु सुखु सम करि जानणिआ ॥ ८ ॥ १० ॥ ११ ॥

यदि मनुष्य अपने अहंत्व को त्याग दे तो वह सब कुछ प्राप्त कर लेता है। गुरु के शब्द द्वारा वह सत्य परमेश्वर में सुरति लगाता है। वह सत्य—नाम का व्यापार करता है और सत्य नाम रूपी धन ही एकत्रित करता है और सत्य नाम का ही वह दूसरों से व्यापार करवाता है॥१॥ मैं तन—मन से उन पर बलिहारी जाता हूँ, जो सदैव ही ईश्वर का यशोगान करते हैं। हे प्रभु! मैं तेरा सेवक हूँ, तुम मेरे ठाकुर हो। तुम मुझे नाम की शोभा प्रदान करते हो॥१॥ रहाउ॥ वह समय एवं क्षण सभी सुन्दर हैं, जब सत्यस्वरूप परमात्मा मेरे चित्त को अच्छा लगता है। सत्य प्रभु की सेवा—भक्ति द्वारा सच्ची महानता प्राप्त होती है किन्तु गुरु की दया से ही सत्यस्वरूप ईश्वर मिलता है॥२॥ प्रभु प्रीति का भोजन तभी मिलता है जब सतिगुरु जी परम प्रसन्न होते हैं। मनुष्य अन्य रस भूल जाता है जब वह हरि रस को अपने मन में बसा लेता है। प्राणी पूर्ण गुरु की वाणी से ही सत्य, संतोष एवं सहज सुख प्राप्त करता है॥३॥ मूर्ख, अंधे, गंवार मनुष्य सतिगुरु की सेवा नहीं करते। तब वह किस तरह मोक्ष—द्वार को प्राप्त होंगे? वह बार—बार मरते और जन्म लेते हैं और पुनःपुनः जीवन—मृत्यु के बंधन में फँसकर आवागमन करते हैं। मृत्यु के द्वार पर वह चोटें खाते हैं॥४॥ वह अपने स्वरूप की तभी पहचान कर सकते हैं, यदि वह शब्द के स्वाद को जानते हो और निर्मल वाणी द्वारा नाम—सिमरन करते हों। गुरमुख सत्य परमेश्वर की भक्ति द्वारा सदैव सुख प्राप्त करते हैं और अपने चित्त में ईश्वर के नाम की नवनिधि को बसाते हैं॥५॥ वह स्थान अति सुन्दर है जो परमेश्वर के मन को लुभाता है। केवल वही सत्संग है, जिस में बैठकर मनुष्य हरि—प्रभु का यशोगान करता है। गुरमुख प्रतिदिन भगवान की महिमा—स्तुति

करते रहते हैं और उनके मन में निर्मल नाद अर्थात् अनहद शब्द बजने लग जाता है॥६॥ मनमुख व्यक्ति माया—धन संचित करते हैं जो खोटी पूँजी है और वह इस खोटी पूँजी का ही प्रसार करते हैं। वह माया धन की मिथ्या कमाई करते हैं और अत्यंत कष्ट सहन करते हैं। वे भ्रम में फँसकर दिन—रात भटकते रहते हैं और जीवन—मृत्यु के बंधन में पड़कर अपना जीवन व्यर्थ गंवा देते हैं॥७॥ सत्यस्वरूप परमात्मा मुझे अत्यन्त प्रिय है। पूर्ण गुरु का शब्द मेरा जीवन आधार है। हे नानक! जिनको परमात्मा के नाम की शोभा प्राप्त होती है, वह दुख—सुख को एक समान जानते हैं॥८॥१०॥११॥

माझ महला ३ ॥ तेरीआ खाणी तेरीआ बाणी ॥ बिनु नावै सभ भरमि भुलाणी ॥ गुर सेवा ते हरि नामु पाइआ बिनु सतिगुर कोइ न पावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी हरि सेती चितु लावणिआ ॥ हरि सचा गुर भगती पाईऐ सहजे मंनि वसावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु सेवे ता सभ किछु पाए ॥ जेही मनसा करि लागै तेहा फलु पाए ॥ सतिगुरु दाता सभना वथू का पूरै भागि मिलावणिआ ॥ २ ॥ इहु मनु मैला इकु न धिआए ॥ अंतरि मैलु लागी बहु दूजै भाए ॥ तटि तीरथि दिसंतरि भवै अहंकारी होरु वधेरै हउमै मलु लावणिआ ॥ ३ ॥ सतिगुरु सेवे ता मलु जाए ॥ जीवतु मरै हरि सिउ चितु लाए ॥ हरि निरमलु सचु मैलु न लागै सचि लागै मैलु गवावणिआ ॥ ४ ॥ बाझु गुरू है अंध गुबारा ॥ अगिआनी अंधा अंधु अंधारा ॥ बिसटा के कीड़े बिसटा कमावहि फिरि बिसटा माहि पचावणिआ ॥ ५ ॥ मुकते सेवे मुकता होवै ॥ हउमै ममता सबदे खोवै ॥ अनदिनु हरि जीउ सचा सेवी पूरै भागि गुरु पावणिआ ॥ ६ ॥ आपे बखसे मेलि मिलाए ॥ पूरे गुर ते नामु निधि पाए ॥ सचै नामि सदा मनु सचा सचु सेवे दुखु गवावणिआ ॥ ७ ॥ सदा हजूरि दूरि न जाणहु ॥ गुर सबदी हरि अंतरि पछाणहु ॥ नानक नामि मिलै वडिआई पूरे गुर ते पावणिआ॥ ८ ॥ ११ ॥ १२ ॥

हे ठाकुर जी! चारों ही उत्पत्ति के स्रोत तेरे हैं और चारों ही वाणी तेरी है। प्रभु के नाम के बिना सारी दुनिया भ्रम में भटकी हुई है। गुरु की सेवा करने से ईश्वर का नाम प्राप्त होता है। सतिगुरु के बिना किसी को भी ईश्वर का नाम नहीं मिल सकता॥१॥ मैं उन पर कुर्बान हूँ, जो ईश्वर के साथ अपना चित्त लगाते हैं। सत्यस्वरूप ईश्वर गुरु—भक्ति से ही प्राप्त होता है और प्रभु सहज ही मनुष्य के हृदय में निवास करता है॥१॥ रहाउ॥ यदि मनुष्य सतिगुरु की श्रद्धापूर्वक सेवा करे, तो वह सबकुछ प्राप्त कर लेता है। जिस तरह की कामना हेतु वह सेवा में सक्रिय होता है, वैसा ही फल वह प्राप्त करता है। सतिगुरु समस्त पदार्थों का दाता है। भगवान सौभाग्यशाली व्यक्ति को ही गुरु से मिलाता है॥२॥ यह मलिन मन एक ईश्वर की आराधना नहीं करता। मोह—माया में फँसने के कारण इसके भीतर बहुत सारी मैल लगी हुई है। अहंकारी मनुष्य दरिया के तट, धार्मिक स्थलों व प्रदेशों में भटकता रहता है परन्तु वह अपने मन को अहंकार की अधिक मैल लगा लेता है॥३॥ यदि वह सतिगुरु की सेवा करे तो उसकी मैल दूर हो जाती है। वह अहंत्व को मारकर हरि प्रभु में अपना चित्त लगाता है। भगवान निर्मल है और उस सत्य प्रभु को अहंकार की मैल नहीं लगती। जो व्यक्ति सत्य के साथ जुड़ जाता है वह अपनी मैल गंवा देता है॥४॥ गुरु के बिना जगत् में अज्ञानता का घोर अंधकार है। ज्ञानहीन व्यक्ति अज्ञानता के अंधेरे में अंधा बना रहता है। उसका ऐसा हाल होता है जैसे विष्टा के कीड़े का होता है, जो विष्टा खाने का कार्य करता है और विष्टा में ही जलकर मर जाता है॥५॥ जो व्यक्ति माया से मुक्त होकर गुरु की सेवा करता है, वही माया से मुक्त होता है। वह नाम द्वारा अपने अहंकार को दूर कर लेता है और रात—दिन पूज्य परमेश्वर की भक्ति करता रहता है। उसे पूर्ण भाग्य से गुरु मिलता है॥६॥ भगवान स्वयं ही मनुष्य को क्षमा कर देता है और उसे गुरु से मिलाकर

अपने साथ मिला लेता है। वह पूर्ण गुरु से नाम रूपी निधि प्राप्त कर लेता है। उसका मन सदैव ही सत्य नाम द्वारा प्रभु का सिमरन करता रहता है। फिर प्रभु का सिमरन करके वह अपना दुख मिटा लेता है॥७॥ भगवान स्वयं ही जीव के समीप रहता है, इसलिए उसे कहीं दूर मत समझो। गुरु के शब्द द्वारा भगवान को अपने मन में विद्यमान समझो। हे नानक! नाम से जीव को बड़ी शोभा प्राप्त होती है परन्तु नाम पूर्ण गुरु द्वारा ही मिलता है॥८॥११॥१२॥

माझ महला ३ ॥ ऐथै साचे सु आगै साचे ॥ मनु सचा सचै सबदि राचे ॥ सचा सेवहि सचु कमावहि सचो सचु कमावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी सचा नामु मंनि वसावणिआ ॥ सचे सेवहि सचि समावहि सचे के गुण गावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंडित पड़हि सादु न पावहि ॥ दूजै भाइ माइआ मनु भरमावहि ॥ माइआ मोहि सभ सुधि गवाई करि अवगण पछोतावणिआ ॥ २ ॥ सतिगुरु मिलै ता ततु पाए ॥ हरि का नामु मंनि वसाए ॥ सबदि मरै मनु मारै अपना मुकती का दरु पावणिआ ॥ ३ ॥ किलविख काटै क्रोधु निवारे ॥ गुर का सबदु रखै उर धारे ॥ सचि रते सदा बैरागी हउमै मारि मिलावणिआ ॥ ४ ॥ अंतरि रतनु मिलै मिलाइआ ॥ त्रिबिधि मनसा त्रिबिधि माइआ ॥ पड़ि पड़ि पंडित मोनी थके चउथे पद की सार न पावणिआ ॥ ५ ॥ आपे रंगे रंगु चड़ाए ॥ से जन राते गुर सबदि रंगाए ॥ हरि रंगु चड़िआ अति अपारा हरि रसि रसि गुण गावणिआ ॥ ६ ॥ गुरमुखि रिधि सिधि सचु संजमु सोई ॥ गुरमुखि गिआनु नामि मुकति होई ॥ गुरमुखि कार सचु कमावहि सचे सचि समावणिआ ॥ ७ ॥ गुरमुखि थापे थापि उथापे ॥ गुरमुखि जाति पति सभु आपे ॥ नानक गुरमुखि नामु धिआए नामे नामि समावणिआ ॥ ८ ॥ १२ ॥ १३ ॥

जो व्यक्ति इहलोक में सत्यवादी है, वह आगे परलोक में भी सत्यवादी है। वह मन सत्य है जो सत्य नाम में लीन रहता है। वह सत्यस्वरूप परमात्मा की आराधना करता है, सत्य नाम का वह जाप करता है और शुद्ध सत्य का ही वह कर्म करता है॥१॥ मेरा तन, मन सर्वस्व उन पर न्यौछावर है, जो व्यक्ति सत्य-नाम को अपने हृदय में बसाते हैं। वे सत्य प्रभु की सेवा करते हैं, सत्य नाम में ही लीन रहते हैं और सत्य-परमेश्वर का ही यश गायन करते हैं॥१॥ रहाउ॥ पण्डित धार्मिक ग्रंथ पढ़ते हैं परन्तु उन्हें आनंद नहीं मिलता। क्योंकि द्वैत भाव के कारण उनका हृदय सांसारिक पदार्थों में भटकता रहता है। माया-मोह की लगन ने उनकी बुद्धि भ्रष्ट कर दी है और दुष्कर्मों के कारण वे पश्चाताप करते हैं॥२॥ यदि मनुष्य को सतिगुरु मिल जाए तो उसे ज्ञान प्राप्त हो जाता है, फिर वह भगवान के नाम को अपने हृदय में बसाता है। वह नाम द्वारा अपने अहंकार को नष्ट करके विनम्रता धारण करता है। वह अपने मन को वश में करके मोक्ष द्वार को पा लेता है॥३॥ वह अपने पापों को नाश कर देता है और क्रोध को दूर कर देता है। वह गुरु की वाणी को अपने हृदय में बसाकर रखता है। वह सत्य नाम के प्रेम में मग्न रहता है और उसके मन में प्रभु-मिलन का वैराग्य बना रहता है। वह अपने अहंकार को नष्ट करके प्रभु को मिल पाता है॥४॥ मनुष्य के हृदय में नाम रूपी अमूल्य रत्न है। यह रत्न उसे गुरु के मिलाने से ही प्राप्त होता है। माया (रज, तम, सत) त्रिगुणात्मक है अतः मन की इच्छाएँ भी तीन प्रकार की होती हैं। पण्डित एवं मौनधारी ऋषि धार्मिक ग्रंथों को पढ़-पढ़कर थक चुके हैं परन्तु उन्हें चतुर्थ पद तुरीया अवस्था का ज्ञान नहीं हुआ॥५॥ ईश्वर स्वयं ही जीवों को अपना प्रेम रंग चढ़ाकर रंग देता है। लेकिन वही पुरुष प्रभु के प्रेम में रंग जाते हैं जो गुरु की वाणी के प्रेम में रंग जाते हैं। उन्हें अपार परमात्मा के प्रेम का रंग इतना चढ़ जाता है कि वह स्वाद ले लेकर भगवान की महिमा-स्तुति करते रहते हैं॥६॥ गुरमुख के लिए वह सद्पुरुष ही ऋद्धि, सिद्धि और

संयम है। गुरमुख को ज्ञान प्राप्त हो जाता है और हरिनाम द्वारा वह माया से मुक्त हो जाता है। पवित्रात्मा गुरमुख सत्य कर्म करता है और सत्य प्रभु के सत्य नाम में लीन हो जाता है॥७॥ भगवान स्वयं ही मनुष्य को गुरमुख बनाता है और गुरमुख यही अनुभव करता है कि ईश्वर ही सृष्टि की रचना करके स्वयं ही प्रलय करता है। गुरमुख का ईश्वर स्वयं ही जाति और समूह सम्मान है। हे नानक! गुरमुख सत्यनाम की आराधना करता है और परमेश्वर के नाम में ही लीन हो जाता है॥८॥१२॥१३॥

माझ महला ३॥ उतपति परलउ सबदे होवै ॥ सबदे ही फिरि ओपति होवै ॥ गुरमुखि वरतै सभु आपे सचा गुरमुखि उपाइ समावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी गुरु पूरा मंनि वसावणिआ ॥ गुर ते साति भगति करे दिनु राती गुण कहि गुणी समावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि धरती गुरमुखि पाणी ॥ गुरमुखि पवणु बैसंतरु खेलै विडाणी ॥ सो निगुरा जो मरि मरि जंमै निगुरे आवण जावणिआ ॥ २ ॥ तिनि करतै इकु खेलु रचाइआ ॥ काइआ सरीरै विचि सभु किछु पाइआ ॥ सबदि भेदि कोई महलु पाए महले महलि बुलावणिआ ॥ ३ ॥ सचा साहु सचे वणजारे ॥ सचु वणंजहि गुर हेति अपारे ॥ सचु विहाझहि सचु कमावहि सचो सचु कमावणिआ ॥ ४ ॥ बिनु रासी को वथु किउ पाए ॥ मनमुख भूले लोक सबाए ॥ बिनु रासी सभ खाली चले खाली जाइ दुखु पावणिआ ॥ ५ ॥ इकि सचु वणंजहि गुर सबदि पिआरे ॥ आपि तरहि सगले कुल तारे ॥ आए से परवाणु होए मिलि प्रीतम सुखु पावणिआ ॥ ६ ॥ अंतरि वसतु मूड़ा बाहरु भाले ॥ मनमुख अंधे फिरहि बेताले ॥ जिथै वथु होवै तिथहु कोइ न पावै मनमुख भरमि भुलावणिआ ॥ ७ ॥ आपे देवै सबदि बुलाए ॥ महली महलि सहज सुखु पाए ॥ नानक नामि मिलै वडिआई आपे सुणि सुणि धिआवणिआ ॥ ८ ॥ १३ ॥ १४ ॥

सृष्टि की रचना एवं प्रलय शब्द द्वारा ही होती है और शब्द द्वारा ही प्रलय के उपरांत ही पुनः सृष्टि की उत्पत्ति होती है। वह सत्य–परमेश्वर स्वयं ही गुरु के रूप में सर्वव्यापक है। गुरु–परमेश्वर स्वयं ही सृष्टि–रचना करके इसमें समाया हुआ है॥१॥ मैं उन पर तन–मन से न्यौछावर हूँ, जिन्होंने पूर्ण गुरु को अपने हृदय में बसाया है। गुरु से ही मनुष्य को शांति प्राप्त होती है और वह दिन–रात भगवान की भक्ति करता रहता है। वह प्रभु के गुण अपने मुख से उच्चरित करता रहता है और गुणों के स्वामी परमात्मा में ही समा जाता है॥१॥ रहाउ॥ गुरु ने ही धरती, जल, पवन एवं अग्नि को पैदा किया है और गुरु स्वयं ही एक अद्‌भुत खेल को खेल रहा है। निगुरा वह व्यक्ति होता है, जो जन्मता–मरता रहता है। निगुरा जन्म–मरण के चक्र में ही पड़ा रहता है॥२॥ उस सृष्टिकर्त्ता परमेश्वर ने यह जगत् अपनी एक खेल रचा हुआ है। उसने मानव शरीर में सब कुछ डाल दिया है जो व्यक्ति शब्द द्वारा भगवान के आत्मस्वरूप का भेद समझ लेता है, भगवान उस व्यक्ति को अपने आत्मस्वरूप में आमंत्रित कर लेता है॥३॥ वह परमात्मा ही सच्चा साहूकार है और जीव सच्चे व्यापारी हैं। जीव अनंत प्रभु के रूप गुरु से प्रेम करके सत्य नाम का व्यापार करते हैं। वे सत्य नाम खरीदते हैं और सत्य नाम की कमाई करते रहते हैं। वह सत्य द्वारा सत्य नाम ही कमाते हैं॥४॥ सत्य नाम की पूँजी के बिना सत्य नाम रूपी वस्तु को कोई कैसे प्राप्त कर सकता है? मनमुख व्यक्ति भटके हुए हैं और नाम रूपी पूँजी के बिना वह दुनिया से खाली हाथ चले जाते हैं और खाली हाथ बड़े दुःखी होते हैं॥५॥ जो व्यक्ति गुरु के शब्द द्वारा सत्य नाम का व्यापार करते हैं, वह भवसागर से पार हो जाते हैं और अपनी वंशावलि के समस्त सदस्यों को भी पार करवा देते हैं। ऐसे लोगों का ही जन्म लेकर दुनिया में आगमन सफल होता है और वे अपने प्रिय प्रभु से मिलकर सुखी रहते हैं॥६॥प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में नाम रूपी वस्तु विद्यमान है परन्तु मूर्ख मनमुख इसे अपने शरीर से बाहर ढूँढता

रहता है। ज्ञानहीन मनमुख प्रेतों की तरह पागल हुए फिरते रहते हैं। जहाँ नाम रूपी वस्तु मिलती है, वहाँ कोई भी उसे प्राप्त नहीं करता। मनमुख व्यक्ति भ्रम में फँसकर भटकते रहते हैं॥७॥ परमात्मा स्वयं ही जीव को आमंत्रित करके शब्द द्वारा नाम रूपी वस्तु देता है। जीव परमात्मा के स्वरूप में पहुँच कर परमानंद एवं सुख भोगता है। हे नानक! नाम में लीन रहने वाले को भगवान के दरबार में बड़ी शोभा मिलती है और वह स्वयं ही सुन-सुनकर ध्यान लगाता है॥८॥१३॥१४॥

माझ महला ३ ॥ सतिगुर साची सिख सुणाई ॥ हरि चेतहु अंति होइ सखाई ॥ हरि अगमु अगोचरु अनाथु अजोनी सतिगुर कै भाइ पावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी आपु निवारणिआ ॥ आपु गवाए ता हरि पाए हरि सिउ सहजि समावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूरबि लिखिआ सु करमु कमाइआ ॥ सतिगुरु सेवि सदा सुखु पाइआ ॥ बिनु भागा गुरु पाईऐ नाही सबदै मेलि मिलावणिआ ॥ २ ॥ गुरमुखि अलिपतु रहै संसारे ॥ गुर कै तकीऐ नामि अधारे ॥ गुरमुखि जोरु करे किआ तिस नो आपे खपि दुखु पावणिआ ॥ ३ ॥ मनमुखि अंधे सुधि न काई ॥ आतम घाती है जगत कसाई ॥ निंदा करि करि बहु भारु उठावै बिनु मजूरी भारु पहुचावणिआ ॥ ४ ॥ इहु जगु वाड़ी मेरा प्रभु माली ॥ सदा समाले को नाही खाली ॥ जेही वासना पाए तेही वरतै वासू वासु जणावणिआ ॥ ५ ॥ मनमुखु रोगी है संसारा ॥ सुखदाता विसरिआ अगम अपारा ॥ दुखीए निति फिरहि बिललादे बिनु गुर सांति न पावणिआ ॥ ६ ॥ जिनि कीते सोई बिधि जाणै ॥ आपि करे ता हुकमि पछाणै ॥ जेहा अंदरि पाए तेहा वरतै आपे बाहरि पावणिआ ॥ ७ ॥ तिसु बाझहु सचे मै होरु न कोई ॥ जिसु लाइ लए सो निरमलु होई ॥ नानक नामु वसै घट अंतरि जिसु देवै सो पावणिआ ॥ ८ ॥ १४ ॥ १५ ॥

सतिगुरु ने यही सच्ची शिक्षा सुनाई है कि भगवान का भजन करो, जो अंतिमकाल तेरा सहायक बनेगा। भगवान अगम्य, अगोचर एवं अयोनि है, जिसका कोई भी स्वामी नहीं। ऐसे प्रभु को सतिगुरु के प्रेम द्वारा ही पाया जाता है॥१॥ मैं उन पर तन-मन से न्यौछावर हूँ, जो अपने अहंत्व को दूर कर देते हैं। जो व्यक्ति अपने अहंत्व को छोड़ देता है, वह भगवान को पा लेता है और सहज ही भगवान में समा जाता है॥ १॥ रहाउ॥ जीव वही कर्म करता है, जो उसकी किस्मत में पूर्व-जन्म के कर्मों द्वारा लिखा होता है। सतिगुरु की सेवा से वह सदा सुख प्राप्त करता है। भाग्य के बिना मनुष्य को गुरु नहीं मिलता। गुरु नाम द्वारा ही जीव को परमेश्वर से मिलाता है॥२॥ गुरमुख इस संसार में निर्लिप्त होकर रहता है। उसको गुरु का आश्रय एवं नाम का सहारा है। जो गुरमुख है उसके साथ कौन अन्याय कर सकता है? दुष्ट अपने आप ही मर मिटता है और कष्ट झेलता है॥३॥ ज्ञानहीन मनमुख को कोई ज्ञान नहीं होता। वह आत्मघाती और संसार का जल्लाद है। दूसरों की निंदा करके वह पापों का बोझ उठाता है। वह उस मजदूर जैसा है जो बिना मजदूरी लिए दूसरों का भार उठाकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाता है॥४॥ यह संसार एक उपवन है और मेरा प्रभु इसका बागबां है। वह सदा ही इसकी रक्षा करता है। इसका कोई भाग उसकी देखरेख से अधूरा नहीं हुआ। जिस तरह की महक ईश्वर पुष्प में डालता है, वह वैसी ही उसमें प्रबल होती है। सुगंधित पुष्प अपनी सुगंध से जाना जाता है॥५॥ मनमुख प्राणी इस संसार में रोगग्रस्त रोगी है। उसने सुखदाता अगम्य व अनन्त प्रभु को विस्मृत कर दिया है। मनमुख हमेशा ही दुखी होकर रोते-चिल्लाते रहते हैं। गुरु के बिना उनको शांति प्राप्त नहीं होती॥६॥ जिस प्रभु ने उनकी सृजना की है, वह उनकी दशा को समझता है। यदि प्रभु स्वयं दया करे, तब मनुष्य उसके हुक्म की पहचान करता है। जिस तरह की बुद्धि ईश्वर प्राणी में डालता है, वैसे ही प्राणी कार्यरत होता है। परमात्मा स्वयं ही प्राणी को बाहर जगत् में जीवन-मार्ग पर लगाता है॥७॥ उस सत्यस्वरूप परमेश्वर

के अलावा मैं अन्य किसी को भी नहीं जानता। जिसको प्रभु अपनी भक्ति में लगाता है वह पवित्र हो जाता है। हे नानक! परमेश्वर का नाम मनुष्य के हृदय में निवास करता है। लेकिन जिसे प्रभु अपना नाम देता है, वही इसको प्राप्त करता है॥८॥१४॥१५॥

माझ महला ३॥ अंम्रित नामु मंनि वसाए ॥ हउमै मेरा सभु दुखु गवाए ॥ अंम्रित बाणी सदा सलाहे अंम्रिति अंम्रितु पावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी अंम्रित बाणी मंनि वसावणिआ ॥ अंम्रित बाणी मंनि वसाए अंम्रितु नामु धिआवणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंम्रितु बोलै सदा मुखि वैणी ॥ अंम्रितु वेखै परखै सदा नैणी ॥ अंम्रित कथा कहै सदा दिनु राती अवरा आखि सुनावणिआ ॥ २ ॥ अंम्रित रंगि रता लिव लाए ॥ अंम्रितु गुर परसादी पाए ॥ अंम्रितु रसना बोलै दिनु राती मनि तनि अंम्रितु पीआवणिआ ॥ ३ ॥ सो किछु करै जु चिति न होई ॥ तिस दा हुकमु मेटि न सकै कोई ॥ हुकमे वरतै अंम्रित बाणी हुकमे अंम्रितु पीआवणिआ ॥ ४ ॥ अजब कंम करते हरि केरे ॥ इहु मनु भूला जांदा फेरे ॥ अंम्रित बाणी सिउ चितु लाए अंम्रित सबदि वजावणिआ ॥ ५ ॥ खोटे खरे तुधु आपि उपाए ॥ तुधु आपे परखे लोक सबाए ॥ खरे परखि खजानै पाइहि खोटे भरमि भुलावणिआ ॥ ६ ॥ किउ करि वेखा किउ सालाही ॥ गुर परसादी सबदि सलाही ॥ तेरे भाणे विचि अंम्रितु वसै तूं भाणै अंम्रितु पीआवणिआ ॥ ७ ॥ अंम्रित सबदु अंम्रित हरि बाणी ॥ सतिगुरि सेविऐ रिदै समाणी ॥ नानक अंम्रित नामु सदा सुखदाता पी अंम्रितु सभ भुख लहि जावणिआ ॥ ८ ॥ १५ ॥ १६ ॥

जो व्यक्ति अमृत–नाम को अपने हृदय में बसा लेता है, वह 'मैं' मेरा कहने वाले अहंत्व एवं समस्त दुःखों को नाश कर देता है। वह अमृत–वाणी द्वारा सदैव ही भगवान की महिमा–स्तुति करता रहता है और अमृत–वाणी द्वारा अमृत–नाम को पा लेता है॥१॥ मैं उन पर तन–मन से न्यौछावर हूँ, जो अमृत वाणी को अपने हृदय में बसा लेते हैं। वह अमृत वाणी को अपने हृदय में बसाकर अमृत नाम का ध्यान करता रहता है॥१॥ रहाउ॥ वह अपने मुँह से वचनों द्वारा हमेशा ही अमृत–नाम बोलता रहता है और अपनी आँखों से अमृत रूप परमात्मा को सर्वव्यापक देखता है एवं सत्य की परख करता रहता है। वह सदैव ही दिन–रात हरि की अमृत कथा करता है तथा दूसरों को भी यह कथा बोलकर सुनाता है॥२॥ अमृत–नाम के प्रेम में मग्न हुआ व्यक्ति भगवान में सुरति लगाता है और यह अमृत–नाम उसे गुरु की कृपा से ही मिलता है। वह दिन–रात नाम–अमृत को अपनी रसना से बोलता रहता है और भगवान उसे मन एवं तन द्वारा नाम–अमृत ही पान करवाता है॥३॥ भगवान वही कुछ करता है, जो मनुष्य की कल्पना में भी नहीं होता। उसके हुक्म को कोई भी मिटा नहीं सकता। भगवान के हुक्म से ही गुरु के माध्यम से जीवों को अमृत वाणी का पान करवाया जाता है। भगवान अपने हुक्म से ही मनुष्य को नाम–अमृत का पान करवाता है॥४॥ हे सृजनहार परमेश्वर! तेरे कौतुक बड़े अद्‌भुत हैं। जब यह मन भटक जाता है तो तू ही उसे सन्मार्ग लगाता है। जब मनुष्य अमृत–वाणी में अपना चित्त लगाता है तो तू उसके अन्तर्मन में अमृत अनहद शब्द बजा देता है॥५॥ हे भगवान! बुरे एवं भले जीव तूने ही पैदा किए हैं। समस्त लोगों के अच्छे एवं दुष्कर्मों की परख तू स्वयं ही करता है। भले जीवों को तुम अपने भक्ति–कोष में डाल देते हो परन्तु बुरे जीवों को तुम भ्रम में फँसाकर कुमार्ग लगा देते हो॥६॥ हे भगवान! मैं तेरे दर्शन कैसे करूँ? और कैसे तेरी महिमा–स्तुति करूँ? गुरु की कृपा से ही मैं वाणी द्वारा तेरी ही महिमा कर सकता हूँ। हे प्रभु! तेरी इच्छा से ही नाम–अमृत की वर्षा होती है और तू अपनी इच्छानुसार ही जीव को नाम–अमृत का पान करवाता है॥७॥ हे भगवान! तेरा नाम अमृत है और तेरी वाणी भी अमृत है। सतिगुरु की सेवा करने से ही तेरी वाणी

मनुष्य के हृदय में समा जाती है। हे नानक! अमृत–नाम सदैव ही सुखदाता है और नाम रूपी अमृत का पान करने से मनुष्य की तमाम भूख मिट जाती है॥८॥१५॥१६॥

माझ महला ३ ॥ अंम्रितु वरसै सहजि सुभाए ॥ गुरमुखि विरला कोई जनु पाए ॥ अंम्रितु पी सदा त्रिपतासे करि किरपा त्रिसना बुझावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी गुरमुखि अंम्रितु पीआवणिआ ॥ रसना रसु चाखि सदा रहै रंगि राती सहजे हरि गुण गावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर परसादी सहजु को पाए ॥ दुबिधा मारे इकसु सिउ लिव लाए ॥ नदरि करे ता हरि गुण गावै नदरी सचि समावणिआ ॥ २ ॥ सभना उपरि नदरि प्रभ तेरी ॥ किसै थोड़ी किसै है घणेरी ॥ तुझ ते बाहरि किछु न होवै गुरमुखि सोझी पावणिआ ॥ ३ ॥ गुरमुखि ततु है बीचारा ॥ अंम्रिति भरे तेरे भंडारा ॥ बिनु सतिगुर सेवे कोई न पावै गुर किरपा ते पावणिआ ॥ ४ ॥ सतिगुरु सेवै सो जनु सोहै ॥ अंम्रिति नामि अंतरु मनु मोहै ॥ अंम्रिति मनु तनु बाणी रता अंम्रितु सहजि सुणावणिआ ॥ ५ ॥ मनमुखु भूला दूजै भाइ खुआए ॥ नामु न लेवै मरै बिखु खाए ॥ अनदिनु सदा विसटा महि वासा बिनु सेवा जनमु गवावणिआ ॥ ६ ॥ अंम्रितु पीवै जिस नो आपि पीआए ॥ गुर परसादी सहजि लिव लाए ॥ पूरन पूरि रहिआ सभ आपे गुरमति नदरी आवणिआ ॥ ७ ॥ आपे आपि निरंजनु सोई ॥ जिनि सिरजी तिनि आपे गोई ॥ नानक नामु समालि सदा तूं सहजे सचि समावणिआ ॥ ८ ॥ १६ ॥ १७ ॥

नाम–अमृत सहज–स्वभाव ही बरस रहा है। गुरु के माध्यम से इसे कोई विरला पुरुष ही प्राप्त करता है। नाम–अमृत का पान करने वाले सदैव तृप्त रहते हैं। अपनी दया करके प्रभु उनकी प्यास बुझा देता है॥१॥ मैं उन पर न्यौछावर हूँ, जिन्हें गुरु जी नाम अमृत का पान करवाते हैं। नाम अमृत को चखकर जिह्वा सदैव प्रभु की प्रीति में लीन रहती है और सहज ही हरि प्रभु का यशोगान करती है॥१॥ रहाउ॥ गुरु की कृपा से कोई विरला प्राणी ही सहज अवस्था को प्राप्त करता है और अपनी दुविधा का नाश करके एक ईश्वर के साथ सुरति लगाता है। जब परमात्मा दया–दृष्टि करता है तो प्राणी उस प्रभु के गुण गायन करता है और उसकी दया से सत्य में लीन हो जाता है॥२॥ हे मेरे हरि–प्रभु! तेरी कृपा–दृष्टि समस्त जीवों पर है किन्तु यह (कृपा–दृष्टि) किसी पर कम और किसी पर अधिकतर है। आपके सिवाय कुछ भी नहीं होता। इस बात का ज्ञान मनुष्य को गुरु के माध्यम से ही प्राप्त होता है॥३॥ गुरमुख इस तथ्य पर चिंतन करते हैं कि तेरे भण्डार नाम–अमृत से परिपूर्ण हैं। सतिगुरु की सेवा करने के अलावा कोई भी नाम अमृत को प्राप्त नहीं कर सकता। यह तो गुरु की दया से ही मिलता है॥४॥ जो पुरुष सतिगुरु की सेवा करता है, वह शोभनीय है। प्रभु का अमृत–नाम मनुष्य के मन एवं हृदय को मोहित कर देता है। जिनके मन एवं तन अमृत वाणी में मग्न हो जाते हैं, प्रभु उन्हें सहज ही अपना अमृत–नाम सुनाता है॥५॥ स्वेच्छाचारी जीव भटका हुआ है और मोह–माया में फँसकर नष्ट हो जाता है। प्रभु नाम का वह जाप नहीं करता और माया रूपी विष सेवन करके प्राण त्याग देता है। रात–दिन उसका बसेरा सदैव विष्टा रूपी विषय–विकारों में रहता है। गुरु की सेवा के बिना वह अपना अमूल्य जीवन व्यर्थ ही गंवा देता है॥६॥ जिसको प्रभु स्वयं पिलाता है वही नाम अमृत का पान करता है। गुरु की कृपा से सहज ही वह परमात्मा में सुरति लगाता है। पूर्ण परमेश्वर स्वयं ही सर्वत्र परिपूर्ण हो रहा है। गुरु की मति द्वारा वह प्रत्यक्ष दिखाई देता है॥७॥ वह निरंजन प्रभु सब कुछ अपने आप से ही है। जिस प्रभु ने सृष्टि की रचना की है, वह स्वयं ही इसका विनाश भी करता है। हे नानक! तुम सदैव ही प्रभु नाम का सिमरन करो। ऐसे तुम सहज ही परमात्मा में विलीन हो जाओगे॥८॥१६॥१७॥

माझ महला ३ ॥ से सचि लागे जो तुधु भाए ॥ सदा सचु सेवहि सहज सुभाए ॥ सचै सबदि सचा सलाही सचै मेलि मिलावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी सचु सालाहणिआ ॥ सचु धिआइनि से सचि राते सचे सचि समावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जह देखा सचु सभनी थाई ॥ गुर परसादी मंनि वसाई ॥ तनु सचा रसना सचि राती सचु सुणि आखि वखानणिआ ॥ २ ॥ मनसा मारि सचि समाणी ॥ इनि मनि डीठी सभ आवण जाणी ॥ सतिगुरु सेवे सदा मनु निहचलु निज घरि वासा पावणिआ " ३ ॥ गुर कै सबदि रिदै दिखाइआ ॥ माइआ मोहु सबदि जलाइआ ॥ सचो सचा वेखि सालाही गुर सबदी सचु पावणिआ ॥ ४ ॥ जो सचि राते तिन सची लिव लागी ॥ हरि नामु समालहि से वडभागी ॥ सचै सबदि आपि मिलाए सतसंगति सचु गुण गावणिआ ॥ ५ ॥ लेखा पड़ीऐ जे लेखे विचि होवै ॥ ओहु अगमु अगोचरु सबदि सुधि होवै ॥ अनदिनु सच सबदि सालाही होरु कोइ न कीमति पावणिआ ॥ ६ ॥ पड़ि पड़ि थाके सांति न आई ॥ त्रिसना जाले सुधि न काई ॥ बिखु बिहाझहि बिखु मोह पिआसे कूड़ु बोलि बिखु खावणिआ ॥ ७ ॥ गुर परसादी एको जाणा ॥ दूजा मारि मनु सचि समाणा ॥ नानक एको नामु वरतै मन अंतरि गुर परसादी पावणिआ ॥ ८ ॥ १७ ॥ १८ ॥

हे ईश्वर ! जो तुझे अच्छे लगते हैं, वहीं सत्य (नाम) में लगते हैं। वह सहज–स्वभाव सदैव ही परमेश्वर की सेवा भक्ति करते हैं। वह सत्य–नाम द्वारा सत्य–प्रभु की सराहना करते हैं और सत्य–नाम उन्हें सत्य से मिला देता है॥१॥ मैं उन पर तन–मन से कुर्बान हूँ, जो सत्य परमेश्वर की सराहना करते हैं। जो सत्य परमेश्वर का ध्यान करते हैं, वह सत्य में ही रंग जाते हैं और सत्यवादी बन कर सत्य में लीन हो जाते हैं॥१॥ रहाउ॥ मैं जहाँ कहीं भी देखता हूँ, सत्य परमात्मा मुझे सर्वत्र दिखाई देता है। वह गुरु की कृपा से मनुष्य के मन में आकर निवास करता है। फिर उस मनुष्य का शरीर शाश्वत हो जाता है और उसकी रसना सत्य में ही मग्न हो जाती है। वह मनुष्य सत्य नाम को सुनकर स्वयं भी मुँह से सत्य का ही बखान करता है॥२॥ जब बुद्धि मन की अभिलाषा को नष्ट करके सत्य में समा गई तो इस मन ने देख लिया कि यह सृष्टि जन्मती एवं मरती रहती है। जो व्यक्ति हमेशा ही सतिगुरु की सेवा करता है, उसका मन अटल हो जाता है और अपने आत्म–स्वरूप में निवास प्राप्त कर लेता है॥३॥ गुरु के शब्द ने मुझे प्रभु हृदय में ही दिखा दिया है और मेरे अन्तर्मन में से माया के मोह को जला दिया है। सत्य–प्रभु के दर्शन करके अब मैं उस सत्य–परमात्मा की ही महिमा–स्तुति करता रहता हूँ। वह सत्य गुरु के शब्द द्वारा ही मिलता है॥४॥ जो व्यक्ति सत्य–परमेश्वर के प्रेम में मग्न हो जाते हैं, उनकी प्रभु में सुरति लग जाती है। वह व्यक्ति बड़े भाग्यशाली हैं, जो हरि–नाम का सिमरन करते हैं। सत्य–परमेश्वर उन्हें स्वयं ही अपने साथ मिला लेता है, जो सत्संग में मिलकर सत्य–परमेश्वर का गुणगान करते हैं॥५॥ परमात्मा लेखे से परे है। उसका लेखा–जोखा हम तब ही पढ़ें, यदि वह किसी लेखे–जोखे में आता हो। वह तो अगम्य एवं अगोचर है तथा उसकी सूझ गुरु के शब्द से ही होती है। मैं प्रतिदिन सत्य वाणी द्वारा उसकी महिमा–स्तुति करता रहता हूँ तथा अन्य कोई भी उसका मूल्यांकन नहीं कर सकता॥६॥ कई विद्वान ग्रंथ पढ़–पढ़कर थक चुके हैं परन्तु उन्हें शान्ति प्राप्त नहीं हुई। वे तृष्णाग्नि में ही जलते रहे और प्रभु बारे कोई ज्ञान नहीं मिला। वह जीवन भर विष रूप माया ही खरीदते रहे और उन्हें विष रूप मोह–माया की प्यास ही लगी रही। अतः वह झूठ बोल–बोलकर विष रूप माया ही सेवन करते रहे॥७॥ जिस व्यक्ति ने गुरु की कृपा से एक परमेश्वर को जाना है, उसका मन माया के मोह को नष्ट करके सत्य में समा गया है। हे नानक ! जिसके मन में एक परमात्मा ही प्रवृत हो रहा है, गुरु की कृपा से वहीं भगवान को प्राप्त करता है॥८॥१७॥१८॥

माझ महला ३ ॥ वरन रूप वरतहि सभ तेरे ॥ मरि मरि जंमहि फेर पवहि घणेरे ॥ तूं एको निहचलु अगम अपारा गुरमती बूझ बुझावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी राम नामु मंनि वसावणिआ ॥ तिसु रूपु न रेखिआ वरनु न कोई गुरमती आपि बुझावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभ एका जोति जाणै जे कोई ॥ सतिगुरु सेविऐ परगटु होई ॥ गुपतु परगटु वरतै सभ थाई जोती जोति मिलावणिआ ॥ २ ॥ तिसना अगनि जलै संसारा ॥ लोभु अभिमानु बहुतु अहंकारा ॥ मरि मरि जनमै पति गवाए अपणी बिरथा जनमु गवावणिआ ॥ ३ ॥ गुर का सबदु को विरला बूझै ॥ आपु मारे ता त्रिभवणु सूझै ॥ फिरि ओहु मरै न मरणा होवै सहजे सचि समावणिआ ॥ ४ ॥ माइआ महि फिरि चितु न लाए ॥ गुर कै सबदि सद रहै समाए ॥ सचु सलाहे सभ घट अंतरि सचो सचु सुहावणिआ ॥ ५ ॥ सचु सालाही सदा हजूरे ॥ गुर कै सबदि रहिआ भरपूरे ॥ गुर परसादी सचु नदरी आवै सचे ही सुखु पावणिआ ॥ ६ ॥ सचु मन अंदरि रहिआ समाइ ॥ सदा सचु निहचलु आवै न जाइ ॥ सचे लागै सो मनु निरमलु गुरमती सचि समावणिआ ॥ ७ ॥ सचु सालाही अवरु न कोई॥ जितु सेविऐ सदा सुखु होई ॥ नानक नामि रते वीचारी सचो सचु कमावणिआ ॥८॥१८॥१६॥

हे प्रभु ! जगत् में विभिन्न वर्ण एवं रूप वाले जितने भी जीव है, वह तेरे ही रूप हैं और तू स्वयं ही उन में प्रवृत्त हो रहा है। ये समस्त जीव बार–बार जन्मते एवं मरते रहते हैं और इन्हें जन्म–मरण के अधिकतर चक्र पड़े रहते हैं। लेकिन हे ईश्वर ! एक तू ही अमर, अगम्य एवं अपरंपार है और इस तथ्य का ज्ञान जीवों को तू गुरु की मति द्वारा ही देता है॥१॥ मैं उन पर तन–मन से न्यौछावर हूँ, जो राम नाम को अपने हृदय में बसाते हैं। प्रभु का कोई भी रूप–रंग आकार–प्रकार अथवा वर्ण नहीं है। वह स्वयं ही गुरु की मति द्वारा जीवों को ज्ञान प्रदान करता है॥१॥ रहाउ॥ समस्त जीवों में एक प्रभु की ही ज्योति विद्यमान है परन्तु इस भेद को कोई विरला ही जानता है। सतिगुरु की सेवा करने से यह ज्योति मनुष्य के हृदय में प्रगट हो जाती है अर्थात् उसे अपने हृदय में ही प्रकाश के प्रत्यक्ष दर्शन हो जाते हैं। भगवान अप्रत्यक्ष एवं प्रत्यक्ष रूप में सर्वत्र विद्यमान हैं एवं मनुष्य की ज्योति प्रभु की परम ज्योति में विलीन हो जाती है॥२॥ सारा संसार तृष्णा की अग्नि में जल रहा है। जीवों में लोभ, अभिमान तथा अहंकार अधिकतर बढ़ रहा है। जीव बार–बार मरता और जन्म लेता है तथा अपनी प्रतिष्ठा गंवाता है। इस तरह वह अपना अनमोल जीवन व्यर्थ ही गंवा देता है॥३॥ कोई विरला पुरुष ही गुरु के शब्द को समझता है। जब मनुष्य अपने अहंकार को नष्ट कर देता है, तब उसको तीनों लोकों का ज्ञान हो जाता है। यद्यपि मनुष्य मिथ्या–तत्व की परख उपरांत मृत्यु प्राप्त करे तो इसके पश्चात मृत्यु नहीं होती और वह सहज ही सत्य–परमात्मा में लीन हो जाता है॥४॥ तब वह अपना मन मोह–माया में नहीं लगाता और गुरु की वाणी में सदैव लीन हुआ रहता है। वह सत्य परमेश्वर की ही महिमा–स्तुति करता है जो सर्वव्यापक है। उसे यूं प्रतीत होता है कि एक सत्य–परमेश्वर ही सब में शोभायमान हो रहा है॥५॥ मैं सत्य–परमेश्वर की ही सराहना करता रहता हूँ और उसे ही सदैव प्रत्यक्ष समझता हूँ। गुरु के शब्द द्वारा मुझे प्रभु सारे जगत् में ही विद्यमान लगता है। सत्य–परमेश्वर के गुरु की कृपा से ही दर्शन होते हैं और सत्य–परमेश्वर से ही सुख प्राप्त होता है॥६॥ सत्य–परमेश्वर प्रत्येक जीव के मन में समाया हुआ है। वह सत्य–परमेश्वर सदैव अमर है और जन्म–मरण में कभी नहीं आता। जो मन सत्य–परमेश्वर के साथ प्रेम करता है, वह निर्मल हो जाता है और गुरु की मति द्वारा सत्य में ही समाया रहता है॥७॥ मैं तो एक परमेश्वर की ही सराहना करता रहता हूँ तथा किसी अन्य की पूजा नहीं करता। उसकी सेवा करने से सदैव ही सुख मिलता रहता है। हे नानक ! जो व्यक्ति परमेश्वर के नाम में मग्न रहते हैं, वे परमेश्वर के बारे ही विचार करते रहते हैं और सत्य–परमेश्वर के सत्य–नाम की ही कमाई करते हैं॥८॥ १८॥१६॥

माझ महला ३ ॥ निरमल सबदु निरमल है बाणी ॥ निरमल जोति सभ माहि समाणी ॥ निरमल बाणी हरि सालाही जपि हरि निरमलु मैलु गवावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी सुखदाता मंनि वसावणिआ ॥ हरि निरमलु गुर सबदि सलाही सबदो सुणि तिसा मिटावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निरमल नामु वसिआ मनि आए ॥ मनु तनु निरमलु माइआ मोहु गवाए ॥ निरमल गुण गावै नित साचे के निरमल नादु वजावणिआ ॥ २ ॥ निरमल अंम्रितु गुर ते पाइआ ॥ विचहु आपु मुआ तिथै मोहु न माइआ ॥ निरमल गिआनु धिआनु अति निरमलु निरमल बाणी मंनि वसावणिआ ॥ ३ ॥ जो निरमलु सेवे सु निरमलु होवै ॥ हउमै मैलु गुर सबदे धोवै ॥ निरमल वाजे अनहद धुनि बाणी दरि सचे सोभा पावणिआ ॥ ४ ॥ निरमल ते सभ निरमल होवै ॥ निरमलु मनूआ हरि सबदि सोहै ॥ निरमल नामि लगे बडभागी निरमलु नामि सुहावणिआ ॥ ५ ॥ सो निरमलु जो सबदे सोहै ॥ निरमल नामि मनु तनु मोहै ॥ सचि नामि मलु कदे न लागै मुखु ऊजलु सचु करावणिआ ॥ ६ ॥ मनु मैला है दूजै भाइ ॥ मैला चउका मैलै थाइ ॥ मैला खाइ फिरि मैलु वधाए मनमुख मैलु दुखु पावणिआ ॥ ७ ॥ मैले निरमल सभि हुकमि सबाए ॥ से निरमल जो हरि साचे भाए ॥ नानक नामु वसै मन अंतरि गुरमुखि मैलु चुकावणिआ ॥ ८ ॥ १९ ॥ २० ॥

शब्द निर्मल है और वाणी भी निर्मल है। भगवान की निर्मल ज्योति समस्त जीवों में समाई हुई है। मैं निर्मल वाणी द्वारा भगवान की महिमा—स्तुति करता रहता हूँ और निर्मल परमात्मा का भजन करके अपने मन की अहंत्व रूपी मैल को दूर करता हूँ॥१॥ मैं तन एवं मन से उन पर कुर्बान हूँ, जो सुखदाता परमात्मा को अपने हृदय में बसाते हैं। मैं गुरु के शब्द द्वारा निर्मल भगवान की महिमा—स्तुति करता हूँ और नाम को सुनकर अपनी तृष्णा को मिटा देता हूँ॥१॥ रहाउ॥ अब निर्मल नाम आकर मेरे मन में बस गया है, जिससे मेरा मन एवं तन निर्मल हो गया है और मेरे अन्तर्मन में से मोह—माया का विनाश हो गया है। जो व्यक्ति नित्य ही सत्य—परमेश्वर का गुणानुवाद करता है, उसके मन में निर्मल नाद अर्थात, अनहद शब्द गूंजने लग जाता है॥२॥ जो व्यक्ति गुरु से नाम रूपी निर्मल अमृत प्राप्त कर लेता है, उसके मन में से अहंकार नष्ट हो जाता है और उसके अन्तर्मन में माया का मोह नहीं रहता। उसके मन में निर्मल ज्ञान उत्पन्न हो जाता है और निर्मल प्रभु में उसका पूर्ण ध्यान लगता है। वह निर्मल वाणी को अपने हृदय में बसा लेता है॥३॥ जो व्यक्ति निर्मल परमात्मा की सेवा करता है, वह भी निर्मल हो जाता है। वह गुरु के शब्द द्वारा अपने अन्तर्मन में से अहंकार की मैल को स्वच्छ कर लेता है। उसके मन में अनहद वाणी की निर्मल ध्वनि गूंजने लग जाती है और वह सत्य परमेश्वर के दरबार में बड़ी शोभा प्राप्त करता है॥४॥ निर्मल प्रभु से सभी निर्मल हो जाते हैं। निर्मल भगवान का नाम मनुष्य के मन को स्वयं में पिरो लेता है। सौभाग्यशाली व्यक्ति ही निर्मल नाम में लगते हैं और निर्मल नाम द्वारा शोभा के पात्र बन जाते हैं॥५॥ वहीं व्यक्ति निर्मल हैं, जो शब्द द्वारा सुन्दर हो जाते हैं। निर्मल नाम उनके तन एवं मन को मुग्ध कर देता है। सत्य—नाम में ध्यान लगाने से मन को कभी भी अहंकार की मैल नहीं लगती। सत्य—नाम उसके मुख को प्रभु के दरबार में उज्ज्वल करा देता है॥६॥ मन माया के मोह में फँसकर मैला हो जाता है। यदि मन मैला हो तो उसका चौका भी अपवित्र है और वह स्थान भी अपवित्र है। वह अपवित्र भोजन सेवन करके अपने पापों की मैल और भी अधिक बढ़ा लेता है। ऐसा मनमुख पापों की मैल के कारण बड़ा दुखी होता है॥७॥ सभी जीव भगवान के हुक्म में ही मैले अथवा निर्मल बने हैं। लेकिन वही मनुष्य निर्मल है जो सत्य—परमेश्वर को प्रिय लगता है। हे नानक ! जो गुरु के माध्यम से अपने अहंकार की मैल को दूर कर लेता है, नाम उसके मन में ही आकर निवास करता है॥८॥२०॥२१॥

माझ महला ३॥ गोविंदु ऊजलु ऊजल हंसा ॥ मनु बाणी निरमल मेरी मनसा ॥ मनि ऊजल सदा मुख सोहहि अति ऊजल नामु धिआवणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी गोबिंद गुण गावणिआ ॥ गोबिदु गोबिदु कहै दिन राती गोबिद गुण सबदि सुणावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गोबिदु गावहि सहजि सुभाए ॥ गुर कै भै ऊजल हउमै मलु जाए ॥ सदा अनंदि रहहि भगति करहि दिनु राती सुणि गोबिद गुण गावणिआ ॥ २ ॥ मनूआ नाचै भगति द्रिड़ाए ॥ गुर कै सबदि मनै मनु मिलाए ॥ सचा तालु पूरे माइआ मोहु चुकाए सबदे निरति करावणिआ ॥ ३ ॥ ऊचा कूके तनहि पछाड़े ॥ माइआ मोहि जोहिआ जमकाले ॥ माइआ मोहु इसु मनहि नचाए अंतरि कपटु दुखु पावणिआ ॥ ४ ॥ गुरमुखि भगति जा आपि कराए ॥ तनु मनु राता सहजि सुभाए ॥ बाणी वजै सबदि वजाए गुरमुखि भगति थाइ पावणिआ ॥ ५ ॥ बहु ताल पूरे वाजे वजाए ॥ ना को सुणे न मंनि वसाए ॥ माइआ कारणि पिड़ बंधि नाचै दूजै भाइ दुखु पावणिआ ॥ ६ ॥ जिसु अंतरि प्रीति लगै सो मुकता ॥ इंद्री वसि सच संजमि जुगता ॥ गुर कै सबदि सदा हरि धिआए एहा भगति हरि भावणिआ ॥ ७ ॥ गुरमुखि भगति जुग चारे होई ॥ होरतु भगति न पाए कोई ॥ नानक नामु गुर भगती पाईऐ गुर चरणी चितु लावणिआ ॥ ८ ॥ २० ॥ २१ ॥

गोविन्द उज्ज्वल (सरोवर) है और गोविन्द का अंश जीवात्मा भी उज्ज्वल है। नाम-सिमरन से मेरा मन, वाणी एवं बुद्धि सब निर्मल हो गए हैं। मन उज्ज्वल होने से मेरा मुख हमेशा ही सुन्दर लगता है। मैं अत्यन्त उज्ज्वल नाम का सिमरन करता रहता हूँ॥१॥ मैं उस पर तन एवं मन से कुर्बान हूँ जो गोबिन्द का यशोगान करता है। वह दिन-रात गोविन्द-गोविन्द बोलता रहता है और वाणी द्वारा दूसरों को भी गोविन्द की महिमा सुनाता रहता है॥१॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति सहज-स्वभाव ही गोविन्द का गुणानुवाद करता है, गुरु के भय से उसकी अहंकार रूपी मैल दूर हो जाती है और वह उज्ज्वल हो जाता है। जो व्यक्ति दिन-रात भगवान की भक्ति करता है, वह सदैव आनंदपूर्वक रहता है। वह दूसरों से भगवान की महिमा सुनता है और स्वयं भी उसकी महिमा-स्तुति करता है॥२॥ भक्ति करने से मनुष्य का मन प्रसन्न होकर नृत्य करने लग जाता है। वह गुरु की वाणी द्वारा अपने अशुद्ध मन को शुद्ध मन में ही मिलाकर रखता है। माया के मोह को दूर करना ही गुरमुख का ताल बजाना है। उसका नाम-सिमरन ही नृत्य करना है॥३॥ जो जोर-जोर से चिल्लाता है और अपने तन को गिराता है, माया ने उसे मुग्ध किया हुआ है। यम उसकी तरफ देख रहा है। जो इस मन को मोह-माया में नचाता है तथा मन में कपट है, वह बड़ा दुःखी होता है॥४॥ जब भगवान स्वयं मनुष्य से गुरु के सान्निध्य द्वारा अपनी भक्ति करवाता है तो सहज-स्वभाव ही उसका मन एवं तन भगवान के प्रेम में मग्न हो जाता है। जब वाणी का बजाया हुआ अनहद शब्द गुरमुख के हृदय में गूंजने लग जाता है तो ही उसकी भक्ति प्रभु को स्वीकार होती है॥५॥ स्वेच्छाचारी अत्यधिक ताल लगाते एवं बाजे बजाते हैं परन्तु उन में कोई भी न ही प्रभु के नाम को सुनता है और न ही नाम को अपने मन में बसाते हैं। वह तो माया के लिए अखाड़ा बांध कर नाचते हैं और माया के मोह में फँसकर दुःखी होते रहते हैं॥६॥ जिस व्यक्ति के मन में प्रभु की प्रीति उत्पन्न हो जाती है, वही मोह-माया से मुक्त है। इन्द्रियों को नियंत्रण में कर लेना ही संयम रूप सच्ची युक्ति है। भगवान को यही भक्ति अच्छी लगती है कि उसे हमेशा ही गुरु की वाणी द्वारा स्मरण किया जाए॥७॥ भगवान की भक्ति चारों युगों में गुरु के माध्यम से ही होती रही है। किसी अन्य विधि द्वारा भगवान की भक्ति होती ही नहीं। हे नानक ! गुरु के चरणों में चित्त लगाने से भगवान का नाम गुरु-भक्ति द्वारा प्राप्त होता है॥८॥२०॥२१॥

माझ महला ३ ॥ सचा सेवी सचु सालाही ॥ सचै नाइ दुखु कब ही नाही ॥ सुखदाता सेवनि सुखु पाइनि गुरमति मंनि वसावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी सुख सहजि समाधि लगावणिआ ॥ जो हरि सेवहि से सदा सोहहि सोभा सुरति सुहावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभु को तेरा भगतु कहाए ॥ सेई भगत तेरै मनि भाए ॥ सचु बाणी तुधै सालाहनि रंगि राते भगति करावणिआ ॥ २ ॥ सभु को सचे हरि जीउ तेरा ॥ गुरमुखि मिलै ता चूकै फेरा ॥ जा तुधु भावै ता नाइ रचावहि तूं आपे नाउ जपावणिआ ॥ ३ ॥ गुरमती हरि मंनि वसाइआ ॥ हरखु सोगु सभु मोहु गवाइआ ॥ इकसु सिउ लिव लागी सद ही हरि नामु मंनि वसावणिआ ॥ ४ ॥ भगत रंगि राते सदा तेरै चाए ॥ नउ निधि नामु वसिआ मनि आए ॥ पूरै भागि सतिगुरु पाइआ सबदे मेलि मिलावणिआ ॥ ५ ॥ तूं दइआलु सदा सुखदाता ॥ तूं आपे मेलिहि गुरमुखि जाता ॥ तूं आपे देवहि नामु वडाई नामि रते सुखु पावणिआ ॥ ६ ॥ सदा सदा साचे तुधु सालाही ॥ गुरमुखि जाता दूजा को नाही ॥ एकसु सिउ मनु रहिआ समाए मनि मंनिऐ मनहि मिलावणिआ ॥ ७ ॥ गुरमुखि होवै सो सालाहे ॥ साचे ठाकुर वेपरवाहे ॥ नानक नामु वसै मन अंतरि गुर सबदी हरि मेलावणिआ ॥ ८ ॥ २१ ॥ २२ ॥

मैं तो सत्यस्वरूप परमात्मा की ही सेवा करता हूँ और उस सत्यस्वरूप परमात्मा की ही महिमा–स्तुति करता रहता हूँ। सत्य परमेश्वर का नाम–सिमरन करने से दुःख कभी भी निकट नहीं आता। जो व्यक्ति सुखदाता भगवान की सेवा करते हैं और गुरु की मति द्वारा उसे अपने हृदय में बसाकर रखते हैं, ऐसे व्यक्ति सदैव सुखी रहते हैं॥१॥ मैं उन पर तन एवं मन से न्यौछावर हूँ, जो सहज सुखदायक समाधि लगाते हैं। जो व्यक्ति भगवान की सेवा करते हैं, वह सदैव ही सुन्दर लगते हैं। वह भगवान में वृत्ति लगाकर शोभा के पात्र बन जाते हैं और भगवान के दरबार में बड़ी शोभा प्राप्त करते हैं॥१॥ रहाउ॥ हे प्रभु–परमेश्वर ! प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को तेरा भक्त कहलवाता है परन्तु तेरे भक्त वहीं हैं जो तेरे मन को प्रिय लगते हैं। वह सच्ची वाणी द्वारा तेरी सराहना करते रहते हैं और तेरे प्रेम में मग्न हुए तेरी भक्ति करते रहते हैं॥२॥ हे सच्चे परमेश्वर ! प्रत्येक जीव तेरा ही उत्पन्न किया हुआ है। यदि मनुष्य को गुरु मिल जाए तो उसका जीवन एवं मृत्यु का चक्र मिट जाता है। हे भगवान ! जब तुझे उपयुक्त लगता है तो तू अपने नाम में जीव की रुचि उत्पन्न कर देता है और तू स्वयं ही उससे अपना नाम जपवाता है॥३॥ हे पूज्य–परमेश्वर ! गुरु के उपदेश द्वारा तू मनुष्य के मन में अपना नाम बसा देता है और उसका हर्ष, शोक एवं मोह सब नष्ट कर देता है। जिसकी सुरति सदैव ही एक परमेश्वर में लीन रहती है, वह भगवान के नाम को अपने मन में बसा लेता है॥४॥ हे प्रभु परमेश्वर ! तेरे भक्त हमेशा ही बड़े चाव से तेरे प्रेम में मग्न रहते हैं और नवनिधियाँ प्रदान करने वाला तेरा नाम, उनके मन में आकर बस जाता है। जो व्यक्ति सौभाग्य से सतिगुरु को पा लेता है, गुरु उसे शब्द द्वारा भगवान से मिला देता है॥५॥ हे प्रभु ! तू बड़ा दयालु एवं सदैव ही जीवों को सुख देता रहता है। तू स्वयं ही जीवों को अपने साथ मिला लेता है और तुझे गुरु के माध्यम से ही जाना जाता है। तू स्वयं ही जीवों को नाम रूपी महानता प्रदान करता है। जो व्यक्ति तेरे नाम में मग्न रहते हैं, वे सदैव ही सुखी रहते हैं॥६॥ हे सत्यस्वरूप परमेश्वर ! मैं हमेशा ही तेरी महिमा–स्तुति करता रहता हूँ। तुझे गुरमुख ने ही जाना है और कोई दूसरा तुझे जान ही नहीं सकता। यदि मनुष्य का मन विश्वस्त हो जाए और वह एक परमेश्वर में ही समाया रहे तो सतिगुरु उसे उसके मन में ही प्रभु से मिला देता है॥७॥ हे मेरे सच्चे ठाकुर ! तू बेपरवाह है, तेरी महिमा–स्तुति वही मनुष्य करता है जो गुरमुख बन जाता है। हे नानक ! जिनके मन में नाम का निवास हो जाता है, गुरु अपनी वाणी द्वारा उसे भगवान से मिला देते हैं॥८॥२१॥२२॥

माझ महला ३ ॥ तेरे भगत सोहहि साचै दरबारे ॥ गुर कै सबदि नामि सवारे ॥ सदा अनंदि रहहि दिनु राती गुण कहि गुणी समावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी नामु सुणि मंनि वसावणिआ ॥ हरि जीउ सचा ऊचो ऊचा हउमै मारि मिलावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि जीउ साचा साची नाई ॥ गुर परसादी किसै मिलाई ॥ गुरि सबदि मिलहि से विछुड़हि नाही सहजे सचि समावणिआ ॥ २ ॥ तुझ ते बाहरि कछू न होइ ॥ तूं करि करि वेखहि जाणहि सोइ ॥ आपे करे कराए करता गुरमति आपि मिलावणिआ ॥ ३ ॥ कामणि गुणवंती हरि पाए ॥ भै भाइ सीगारु बणाए ॥ सतिगुरु सेवि सदा सोहागणि सच उपदेसि समावणिआ ॥ ४ ॥ सबदु विसारनि तिना ठउरु न ठाउ ॥ भ्रमि भूले जिउ सुंञै घरि काउ ॥ हलतु पलतु तिनी दोवै गवाए दुखे दुखि विहावणिआ ॥ ५ ॥ लिखदिआ लिखदिआ कागद मसु खोई ॥ दूजै भाइ सुखु पाए न कोई ॥ कूड़ु लिखहि तै कूड़ु कमावहि जलि जावहि कूड़ि चितु लावणिआ ॥ ६ ॥ गुरमुखि सचो सचु लिखहि वीचारु ॥ से जन सचे पावहि मोख दुआरु ॥ सचु कागदु कलम मसवाणी सचु लिखि सचि समावणिआ ॥ ७ ॥ मेरा प्रभु अंतरि बैठा वेखै ॥ गुर परसादी मिलै सोई जनु लेखै ॥ नानक नामु मिलै वडिआई पूरे गुर ते पावणिआ ॥ ८ ॥ २२ ॥ २३ ॥

हे सत्यस्वरूप परमेश्वर ! तेरे भक्त तेरे सत्य–दरबार में बैठे बड़ी शोभा पा रहे हैं। तूने उन्हें गुरु के शब्द द्वारा नाम में लगाकर ही संवारा है। वह दिन–रात सदैव आनंद में रहते हैं और गुणों के भण्डार प्रभु का गुणानुवाद कर–करके उसमें ही लीन रहते हैं॥१॥ मैं उन पर तन एवं मन से न्यौछावर हूँ जो भगवान के नाम को सुनकर अपने हृदय में बसाते हैं। हे पूज्य परमेश्वर ! तू सदैव सत्य एवं सर्वोपरि है। भगवान जीव के अहंकार को नष्ट करके उसे स्वयं ही अपने साथ मिला लेता है॥१॥ रहाउ॥पूज्य परमेश्वर सत्यस्वरूप है और उसकी महिमा भी सत्य है। गुरु की कृपा से वह परमेश्वर किसी विरले को ही अपने साथ मिलाता है। जो जीव गुरु की वाणी द्वारा प्रभु से मिल जाते हैं, फिर वह कभी भी प्रभु से जुदा नहीं होते और सहज ही सत्य में समाए रहते हैं॥२॥ हे परमेश्वर ! तेरे हुक्म से बाहर कुछ भी नहीं होता। तू ही जगत् की रचना करके उसकी देखरेख करता है और तू ही सबकुछ जानता है। सृष्टिकर्त्ता स्वयं ही सबकुछ करता और जीवों से करवाता है। वह स्वयं ही गुरु की मति द्वारा जीवों को अपने साथ मिला लेता है॥३॥ गुणवान जीव–स्त्री प्रियतम–प्रभु को पा लेती है। वह प्रभु के भय एवं प्रेम को ही अपना शृंगार बनाती है। जो जीव–स्त्री सतिगुरु की सेवा करती है, वह सदा सुहागिन है और वह सत्य–उपदेश में ही समाई रहती है॥४॥ जो व्यक्ति भगवान के नाम को भुला देते हैं, उन्हें सहारा लेने के लिए कहीं भी आश्रय एवं स्थान नहीं मिलता। वह भ्रम में फँसकर भटकते रहते हैं। वह जगत् में से खाली हाथ यूं ही चले जाते हैं जैसे किसी सूने घर में से कौआ खाली चला जाता है ऐसे व्यक्ति अपना लोक–परलोक दोनों ही गंवा देते हैं और जीवन भर दुखी ही होते रहते हैं॥५॥ मनमुख व्यक्ति माया के लेख लिखते–लिखते अनेक कागज एवं स्याही खत्म कर लेते हैं। कोई भी व्यक्ति माया के मोह में फँसकर सुख नहीं पा सकता। मनमुख मिथ्या माया के लेखे लिखते रहते हैं और मिथ्या माया ही कमाते रहते हैं। मिथ्या माया के मोह में चित्त लगाने वाले तृष्णाग्नि में जलते रहते हैं॥६॥ गुरमुख सत्य–प्रभु का नाम एवं गुणों बारे लिखते रहते हैं। वह सत्यवादी बन जाते हैं और वह मोक्ष का द्वार प्राप्त कर लेते हैं। सत्य नाम ही उनका कागज, कलम एवं स्याही हैं। वे प्रभु की महिमा को लिख–लिख कर सत्य में ही समा जाते हैं॥७॥ मेरा प्रभु समस्त जीवों के हृदय में बैठकर उनके कर्म देख रहा है। जो पुरुष गुरु की दया से परमात्मा को मिलता है, जगत् में उसका आगमन ही सफल है। हे नानक ! प्रभु के नाम से उसके दरबार में महानता प्राप्त होती है और पूर्णगुरु द्वारा ही नाम पाया जाता है॥८॥२२॥२३॥

माझ महला ३ ॥ आतम राम परगासु गुर ते होवै ॥ हउमै मैलु लागी गुर सबदी खोवै ॥ मनु निरमलु अनदिनु भगती राता भगति करे हरि पावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी आपि भगति करनि अवरा भगति करावणिआ ॥ तिना भगत जना कउ सद नमसकारु कीजै जो अनदिनु हरि गुण गावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे करता कारणु कराए ॥ जितु भावै तितु कारै लाए ॥ पूरै भागि गुर सेवा होवै गुर सेवा ते सुखु पावणिआ ॥ २ ॥ मरि मरि जीवै ता किछु पाए ॥ गुर परसादी हरि मंनि वसाए ॥ सदा मुकतु हरि मंनि वसाए सहजे सहजि समावणिआ ॥ ३ ॥ बहु करम कमावै मुकति न पाए ॥ देसंतरु भवै दूजै भाइ खुआए ॥ बिरथा जनमु गवाइआ कपटी बिनु सबदै दुखु पावणिआ ॥ ४ ॥ धावतु राखै ठाकि रहाए ॥ गुर परसादी परम पदु पाए ॥ सतिगुरु आपे मेलि मिलाए मिलि प्रीतम सुखु पावणिआ ॥ ५ ॥ इकि कूड़ि लागे कूड़े फल पाए ॥ दूजै भाइ बिरथा जनमु गवाए ॥ आपि डुबे सगले कुल डोबे कूड़ु बोलि बिखु खावणिआ ॥ ६ ॥ इसु तन महि मनु को गुरमुखि देखै ॥ भाइ भगति जा हउमै सोखै ॥ सिध साधिक मोनिधारी रहे लिव लाइ तिन भी तन महि मनु न दिखावणिआ ॥ ७ ॥ आपि कराए करता सोई ॥ होरु कि करे कीतै किआ होई ॥ नानक जिसु नामु देवै सो लेवै नामो मंनि वसावणिआ ॥ ८ ॥ २३ ॥ २४ ॥

मनुष्य के ह्रदय में आत्म–राम का प्रकाश गुरु की कृपा से होता है। जब मनुष्य अपने मन को लगी अहंत्व की मैल को गुरु की वाणी द्वारा स्वच्छ कर लेता है तो उसका निर्मल मन रात–दिन भगवान की भक्ति में मग्न रहता है और भक्ति करके वह भगवान को पा लेता है।।१।। मैं उन पर तन एवं मन से न्यौछावर हूँ जो स्वयं भी भगवान की भक्ति करते हैं और दूसरों से भी भक्ति करवाते हैं। उन भक्तजनों को सदैव ही प्रणाम करो, जो रात–दिन ईश्वर का यशोगान करते हैं।।१।। रहाउ।। सृजनहार प्रभु स्वयं ही कारण बनाता है। जैसे उसको अच्छा लगता है, वैसे ही जीवों को कामकाज में लगाता है। पूर्ण सौभाग्य से ही गुरदेव की सेवा की जाती है और गुरु की सेवा से ही सुख प्राप्त होता है।।२।। यदि मनुष्य अपने आपको मोह–माया से निर्लिप्त करके प्रभु भक्ति में जीवे तो उसे सबकुछ प्राप्त होता है। गुरु की कृपा से वह ईश्वर को अपने ह्रदय में बसाता है। जो प्राणी ईश्वर को अपने ह्रदय में बसा लेता है वह हमेशा के लिए मुक्त हो जाता है और सहज ही प्रभु में समा जाता है।।३।। जो व्यक्ति अधिकतर धर्म–कर्म करता है, वह मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकता। जो व्यक्ति देश–देशांतर भटकता रहता है, वह भी मोह–माया में फँसकर नष्ट हो जाता है। कपटी प्राणी व्यर्थ ही अपना जीवन गंवा देता है। हरि–नाम के बिना वह बहुत कष्ट सहन करता है।।४।। जो व्यक्ति विषय–विकारों में भटकते हुए अपने मन को नियंत्रित कर लेता है, वह गुरु की कृपा से (परमपद) मोक्ष प्राप्त कर लेता है। सतिगुरु स्वयं ही जीव का भगवान से मिलाप करवाते हैं। फिर वह जीव अपने प्रियतम प्रभु को मिलकर सुख की अनुभूति करता है।।५।। कई व्यक्ति मिथ्या माया के मोह में फँसे हुए हैं। वे मिथ्या माया रूपी फल ही प्राप्त करते हैं। द्वैत–भाव में फँसकर वह अपना जीवन व्यर्थ ही गंवा लेते हैं। वह स्वयं तो भवसागर में डूब जाते हैं और अपने समूह वंशों को भी डुबा लेते हैं। झूठ बोलकर वह माया रूपी विष सेवन करते हैं।।६।। गुरु के माध्यम से कोई विरला पुरुष ही अपने शरीर में अपने मन को देखता है। जब वह अपने अहंकार को मिटा देता है तो ही उसके अन्तर्मन में भगवान की प्रेम–भक्ति उत्पन्न होती है। प्रेम–भक्ति द्वारा उसका अहंकार सूख जाता है। सिद्ध,साधक और मौनधारी सुरति लगाकर थक गए हैं। उन्होंने भी अपने तन में मन को नहीं देखा।।७।। वह सृजनहार प्रभु स्वयं ही जीवों से कार्य करवाता है। अन्य कोई क्या कर सकता है? प्रभु के उत्पन्न किए जीवों द्वारा करने से क्या हो सकता है? हे नानक! जिसको प्रभु अपने नाम की अनुकंपा करता है, वही उसको पाता है और वह मनुष्य नाम को सदैव ही अपने ह्रदय में बसाकर रखता है।।८।।२३।।२४।।

माझ महला ३॥ इसु गुफा महि अखुट भंडारा ॥ तिसु विचि वसै हरि अलख अपारा ॥ आपे गुपतु परगटु है आपे गुर सबदी आपु वंञावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी अंम्रित नामु मंनि वसावणिआ ॥ अंम्रित नामु महा रसु मीठा गुरमती अंम्रितु पीआवणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हउमै मारि बजर कपाट खुलाइआ ॥ नामु अमोलकु गुर परसादी पाइआ ॥ बिनु सबदै नामु न पाए कोई गुर किरपा मंनि वसावणिआ ॥ २ ॥ गुर गिआन अंजनु सचु नेत्री पाइआ ॥ अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥ जोती जोति मिली मनु मानिआ हरि दरि सोभा पावणिआ ॥ ३ ॥ सरीरहु भालणि को बाहरि जाए ॥ नामु न लहै बहुतु वेगारि दुखु पाए ॥ मनमुख अंधे सूझै नाही फिरि घिरि आइ गुरमुखि वथु पावणिआ ॥ ४ ॥ गुर परसादी सचा हरि पाए ॥ मनि तनि वेखै हउमै मैलु जाए ॥ बैसि सुथानि सद हरि गुण गावै सचै सबदि समावणिआ ॥ ५ ॥ नउ दर ठाके धावतु रहाए ॥ दसवै निज घरि वासा पाए ॥ ओथै अनहद सबद वजहि दिनु राती गुरमती सबदु सुणावणिआ ॥ ६ ॥ बिनु सबदै अंतरि आनेरा ॥ न वसतु लहै न चूकै फेरा ॥ सतिगुर हथि कुंजी होरतु दरु खुलै नाही गुरु पूरै भागि मिलावणिआ ॥ ७ ॥ गुपतु परगटु तूं सभनी थाई ॥ गुर परसादी मिलि सोझी पाई ॥ नानक नामु सालाहि सदा तूं गुरमुखि मंनि वसावणिआ ॥ ८ ॥ २४ ॥ २५ ॥

इस शरीर रूपी गुफा में ही नाम का अमूल्य भण्डार मौजूद हैं। इस गुफा में ही अलक्ष्य एवं अपरंपार प्रभु निवास करता है। वह स्वयं ही अप्रत्यक्ष एवं स्वयं ही प्रत्यक्ष है और गुरु के शब्द से आत्माभिमान नष्ट हो जाता है॥१॥ मैं उन पर तन–मन से न्यौछावर हूँ जो अमृत नाम को अपने हृदय में बसाते हैं। यह अमृत नाम महारस है और इसका स्वाद बड़ा मधुर है। यह नाम रूपी अमृत गुरु के उपदेश द्वारा पान किया जाता है॥१॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति अपने अहंकार को नष्ट करके वज्र कपाट खोल लेता है, वह गुरु की कृपा से अमूल्य नाम को प्राप्त कर लेता है। गुरु के शब्द बिना किसी को भी नाम प्राप्त नहीं होता। नाम को गुरु की दया से ही हृदय में बसाया जा सकता है॥ २॥ जो व्यक्ति गुरु का ज्ञान रूपी सच्चा सुरमा अपने नेत्रों में डालता है, उसके हृदय में ज्ञान का प्रकाश हो जाता है और अज्ञानता का अँधेरा मिट जाता है। उसकी ज्योति परम ज्योति में विलीन हो जाती है तथा उसका मन नाम–सिमरन से संतुष्ट हो जाता है और भगवान के दरबार में वह बड़ी शोभा प्राप्त करता है॥३॥ यदि कोई व्यक्ति अपनी देहि से बाहर किसी अन्य स्थान पर प्रभु की तलाश में जाए तो वह नाम को नहीं पाता, अपितु बेगारी की तरह अधिक कष्ट सहन करता है। ज्ञानहीन मनमुख व्यक्ति इधर–उधर भटकने के पश्चात पुनः अपने घर लौट आता है परन्तु उसे नाम का ज्ञान नहीं होता। लेकिन सतिगुरु द्वारा वह असली पदार्थ को भीतर से ही प्राप्त कर लेता है॥४॥ गुरु की कृपा से वह सत्यस्वरूप परमात्मा को पा लेता है। उसकी अहंकार की मलिनता दूर हो जाती है और अपने मन एवं तन में वह प्रभु के ही दर्शन करता है। श्रेष्ठ स्थान सत्संग में विराजमान होकर वह सदैव प्रभु का यशोगान करता है और सत्य–परमेश्वर में लीन हो जाता है॥५॥ शरीर रूपी घर को दो नेत्र, दो कान, दो नासिका, मुँह, गुदा एवं इन्द्री यह नौ द्वार लगे हुए हैं। इनके द्वारा ही मन बाहर भटकता रहता है। जो व्यक्ति इन द्वारों को बंद करके अपने भटकते मन को नियंत्रित कर लेता है तो उसका मन अपने आत्म–स्वरूप में निवास कर लेता है। वहाँ पर दिन–रात अनहद शब्द गूंजता रहता है। अनहद शब्द को गुरु की मति द्वारा ही सुना जा सकता है॥६॥ शब्द के बिना अन्तर्मन में अज्ञानता का अँधेरा बना रहता है। मनुष्य को नाम रूपी वस्तु प्राप्त नहीं होती और उसका आवागमन का चक्र मिटता नहीं। सतिगुरु के पास ब्रह्म–विद्या रूपी कुंजी है। किसी अन्य विधि से यह द्वार खुलता नहीं

और गुरु पूर्ण भाग्य से ही मिलता है॥७॥ हे ईश्वर! तू गुप्त अथवा प्रत्यक्ष रूप में सर्वत्र विद्यमान है। गुरु की कृपा से प्रभु को मिलने से ही मनुष्य को इस भेद का ज्ञान होता है। हे नानक! तू सदैव भगवान के नाम की महिमा—स्तुति किया कर, चूंकि गुरु के माध्यम से ही मनुष्य के मन में नाम का निवास होता है॥ ८॥ २४॥ २५॥

माझ महला ३ ॥ गुरमुखि मिलै मिलाए आपे ॥ कालु न जोहै दुखु न संतापे ॥ हउमै मारि बंधन सभ तोड़ै गुरमुखि सबदि सुहावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी हरि हरि नामि सुहावणिआ ॥ गुरमुखि गावै गुरमुखि नाचै हरि सेती चितु लावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि जीवै मरै परवाणु ॥ आरजा न छीजै सबदु पछाणु ॥ गुरमुखि मरै न कालु न खाए गुरमुखि सचि समावणिआ ॥ २ ॥ गुरमुखि हरि दरि सोभा पाए॥ गुरमुखि विचहु आपु गवाए ॥ आपि तरै कुल सगले तारे गुरमुखि जनमु सवारणिआ ॥ ३ ॥ गुरमुखि दुखु कदे न लगै सरीरि ॥ गुरमुखि हउमै चूकै पीर ॥ गुरमुखि मनु निरमलु फिरि मैलु न लागै गुरमुखि सहजि समावणिआ ॥ ४ ॥ गुरमुखि नामु मिलै वडिआई ॥ गुरमुखि गुण गावै सोभा पाई ॥ सदा अनंदि रहै दिनु राती गुरमुखि सबदु करावणिआ ॥ ५ ॥ गुरमुखि अनदिनु सबदे राता ॥ गुरमुखि जुग चारे है जाता ॥ गुरमुखि गुण गावै सदा निरमलु सबदे भगति करावणिआ ॥ ६ ॥ बाझु गुरू है अंध अंधारा॥ जमकालि गरठे करहि पुकारा ॥ अनदिनु रोगी बिसटा के कीड़े बिसटा महि दुखु पावणिआ ॥ ७॥ गुरमुखि आपे करे कराए ॥ गुरमुखि हिरदै वुठा आपि आए ॥ नानक नामि मिलै वडिआई पूरे गुर ते पावणिआ ॥ ८ ॥ २५ ॥ २६ ॥

जो व्यक्ति गुरु की शरण में आता है, उसे भगवान मिल जाता है और भगवान स्वयं ही गुरु से मिलाकर अपने साथ मिला लेता है। ऐसे व्यक्ति को मृत्यु देख भी नहीं सकती और कोई दुख—क्लेश उसे पीड़ित नहीं कर सकता। ऐसा व्यक्ति अपने अहंकार को नष्ट करके माया के तमाम बन्धनों को तोड़ देता है। गुरु की शरण में रहने वाला व्यक्ति नाम द्वारा सुशोभित हो जाता है॥१॥ मैं उन पर तन—मन से न्यौछावर हूँ जो हरि—प्रभु के नाम से सुन्दर बन जाते हैं। गुरमुख भगवान की महिमा—स्तुति करता रहता है और मस्त होकर नाचता झूमता है और वह भगवान से अपना चित्त लगाकर रखता है॥१॥ रहाउ॥ गुरमुख का जीना एवं मरना प्रमाणिक है। उसका जीवन व्यर्थ नहीं जाता, क्योंकि वह परमात्मा को पहचानता है। गुरमुख मरता नहीं और न ही उसको मृत्यु निगलती है। गुरमुख सत्य में लीन रहता है॥२॥ ऐसे गुरमुख ईश्वर के दरबार में बड़ी शोभा पाते हैं। गुरमुख अपने मन में से अहंकार को मिटा देता है। गुरमुख स्वयं भवसागर से पार हो जाता है और अपने समूचे वंश को भी पार कर लेता है और अपना जीवन संवार लेता है॥३॥ गुरमुख के शरीर को कभी कोई दुःख नहीं लगता। गुरमुख के अहंकार की वेदना—पीड़ा दूर हो जाती है। गुरमुख का मन अहंत्व की मैल से निर्मल हो जाता है और उसे फिर अहंत्व की मैल नहीं लगती। गुरमुख सहज ही समाया रहता है॥४॥ गुरमुख ईश्वर के नाम की महानता प्राप्त करता है। गुरमुख भगवान का गुणानुवाद करता है और दुनिया में बड़ी शोभा प्राप्त करता है। वह सदैव ही दिन—रात आनंदपूर्वक रहता है। गुरमुख भगवान के नाम की ही साधना करता है॥५॥ गुरमुख रात—दिन शब्द में मग्न रहता है। गुरमुख चारों युगों में जाना जाता है। गुरमुख सदा निर्मल प्रभु का यशोगान करता है और शब्द द्वारा भगवान की भक्ति करता रहता है॥६॥ गुरु के बिना घनघोर अंधकार है। यमदूत द्वारा जकड़े हुए मनुष्य जोर—जोर से चिल्लाते हैं। वह रात—दिन रोगी बने रहते हैं, जैसे विष्टा के कीड़े विष्टा में दुखी होते रहते हैं॥७॥ गुरमुख स्वयं ही भगवान की भक्ति करते एवं अन्यों से भी करवाते हैं। गुरमुख के हृदय में परमेश्वर स्वयं आकर निवास कर लेता है। हे नानक! प्रभु के नाम से महानता प्राप्त होती है। पूर्ण गुरु द्वारा ही नाम पाया जाता है॥८॥२५॥२६॥

माझ महला ३ ॥ एका जोति जोति है सरीरा ॥ सबदि दिखाए सतिगुरु पूरा ॥ आपे फरकु कीतोनु घट अंतरि आपे बणत बणावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी हरि सचे के गुण गावणिआ ॥ बाझु गुरू को सहजु न पाए गुरमुखि सहजि समावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तूं आपे सोहहि आपे जगु मोहहि ॥ तूं आपे नदरी जगतु परोवहि ॥ तूं आपे दुखु सुखु देवहि करते गुरमुखि हरि देखावणिआ ॥ २ ॥ आपे करता करे कराए ॥ आपे सबदु गुर मंनि वसाए ॥ सबदे उपजै अंम्रित बाणी गुरमुखि आखि सुणावणिआ ॥ ३ ॥ आपे करता आपे भुगता ॥ बंधन तोड़े सदा है मुकता ॥ सदा मुकतु आपे है सचा आपे अलखु लखावणिआ ॥ ४ ॥ आपे माइआ आपे छाइआ ॥ आपे मोहु सभु जगतु उपाइआ ॥ आपे गुणदाता गुण गावै आपे आखि सुणावणिआ ॥ ५ ॥ आपे करे कराए आपे ॥ आपे थापि उथापे आपे ॥ तुझ ते बाहरि कछू न होवै तूं आपे कारै लावणिआ ॥ ६ ॥ आपे मारे आपि जीवाए ॥ आपे मेले मेलि मिलाए ॥ सेवा ते सदा सुखु पाइआ गुरमुखि सहजि समावणिआ ॥ ७ ॥ आपे ऊचा ऊचो होई ॥ जिसु आपि विखाले सु वेखै कोई ॥ नानक नामु वसै घट अंतरि आपे वेखि विखालणिआ ॥ ८ ॥ २६ ॥ २७ ॥

समस्त शरीरों में जो ज्योति विद्यमान है, वह ज्योति एक ही है अर्थात् एक ईश्वर की ज्योति सब में विद्यमान है। पूर्ण सतिगुरु शब्द द्वारा मनुष्य को इस ज्योति के दर्शन करवा देते हैं। विभिन्न शरीरों में ईश्वर ने स्वयं ही विविधता उत्पन्न की है और स्वयं ही जीवों के शरीर की रचना की है॥१॥ मैं उन पर तन–मन से कुर्बान हूँ जो सत्यस्वरूप परमेश्वर का गुणगान करते हैं। गुरु के अलावा किसी को भी सहज प्राप्त नहीं होता। गुरमुख सहज ही समाया रहता है॥१॥ रहाउ॥ हे प्रभु ! तू स्वयं ही सर्वत्र सुन्दर रूप में शोभा दे रहा है और स्वयं ही जगत् को मोहित कर रहा है। तूंने स्वयं ही अपनी कृपा–दृष्टि से समूचे जगत् को मोह–माया में पिरोया हुआ है। हे मेरे हरि–परमेश्वर ! तुम स्वयं ही दुख और सुख प्रदान करते हो और गुरमुखों को हरि–दर्शन करवाते हो॥२॥ जगत् का रचयिता प्रभु स्वयं ही सब कुछ करता और जीवों से करवाता है। वह स्वयं गुरु का शब्द मनुष्य के हृदय में बसाता है। शब्द से अमृत–वाणी उत्पन्न होती है। गुरमुख इस अमृत–वाणी को बोलकर दूसरों को सुनाते हैं॥३॥ हरि–प्रभु स्वयं ही कर्त्ता और स्वयं ही जगत् के पदार्थों को भोगने वाला है। भगवान जिस व्यक्ति के बन्धनों को तोड़ देता है, वह हमेशा के लिए मुक्त हो जाता है। सत्य स्वरूप परमेश्वर स्वयं भी माया के बन्धनों से हमेशा के लिए मुक्त है। वह अलक्ष्य परमेश्वर स्वयं ही अपने स्वरूप के दर्शन करवाता है॥४॥ परमेश्वर स्वयं ही माया है और स्वयं ही उस माया में प्रतिबिम्बित है। उस प्रभु ने स्वयं ही माया के मोह को पैदा किया है और स्वयं ही जगत् की रचना की है। परमेश्वर स्वयं ही गुणदाता और वह स्वयं ही अपने गुण गा रहा है। वह स्वयं ही अपने गुण बोलकर सुना रहा है॥५॥ प्रभु स्वयं है। प्राणियों का कर्त्ता और उनसे कर्म करवाता है। परमात्मा स्वयं ही सृष्टि–रचना करता है और स्वयं ही सृष्टि का विनाश भी करता है। हे प्रभु ! तेरे हुक्म के बिना कुछ भी नहीं हो सकता। तुमने स्वयं ही प्राणियों को विभिन्न कर्मों में लगाया हुआ है॥६॥ भगवान स्वयं ही जीवों को मारता है और स्वयं ही उन्हें जीवित भी रखता है। वह स्वयं ही जीवों को गुरु से मिलाता है और उन्हें गुरु के सम्पर्क में रखकर अपने साथ मिला लेता है। गुरु की सेवा करने से मनुष्य को सदैव ही सुख प्राप्त होता है और गुरु की प्रेरणा से जीव सहज ही सत्य में समा जाता है॥७॥ हे भगवान ! तू स्वयं ही बड़ों से भी बड़ा अर्थात् सर्वश्रेष्ठ है। जिस व्यक्ति को तू स्वयं अपना रूप दिखाता है, वहीं तेरे दर्शन कर सकता है। हे नानक ! जिसके हृदय में नाम का निवास हो जाता है, फिर प्रभु स्वयं ही उसके हृदय में प्रगट होकर अपने स्वरूप के दर्शन करवा देता है॥८॥२६॥२७॥

माझ महला ३ ॥ मेरा प्रभु भरपूरि रहिआ सभ थाई ॥ गुर परसादी घर ही महि पाई ॥ सदा सरेवी इक मनि धिआई गुरमुखि सचि समावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी जगजीवनु मंनि वसावणिआ ॥ हरि जगजीवनु निरभउ दाता गुरमति सहजि समावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घर महि धरती धउलु पाताला ॥ घर ही महि प्रीतमु सदा है बाला ॥ सदा अनंदि रहै सुखदाता गुरमति सहजि समावणिआ ॥ २ ॥ काइआ अंदरि हउमै मेरा ॥ जंमण मरणु न चूकै फेरा ॥ गुरमुखि होवै सु हउमै मारे सचो सचु धिआवणिआ ॥ ३ ॥ काइआ अंदरि पापु पुंनु दुइ भाई ॥ दुही मिलि कै स्रिसटि उपाई ॥ दोवै मारि जाइ इकतु घरि आवै गुरमति सहजि समावणिआ ॥ ४ ॥ घर ही माहि दूजै भाइ अनेरा ॥ चानणु होवै छोडै हउमै मेरा ॥ परगटु सबदु है सुखदाता अनदिनु नामु धिआवणिआ ॥ ५ ॥ अंतरि जोति परगटु पासारा ॥ गुर साखी मिटिआ अंधिआरा ॥ कमलु बिगासि सदा सुखु पाइआ जोती जोति मिलावणिआ ॥ ६ ॥ अंदरि महल रतनी भरे भंडारा ॥ गुरमुखि पाए नामु अपारा ॥ गुरमुखि वणजे सदा वापारी लाहा नामु सद पावणिआ ॥ ७ ॥ आपे वथु राखै आपे देइ ॥ गुरमुखि वणजहि केई केइ ॥ नानक जिसु नदरि करे सो पाए करि किरपा मंनि वसावणिआ ॥ ८ ॥ २७ ॥ २८ ॥

मेरा प्रभु समस्त स्थानों में रहता है। गुरु की कृपा से मैंने उसको अपने हृदय घर में ही पा लिया है। मैं हमेशा ईश्वर की सेवा करता हूँ और एकाग्रचित्त होकर उसका ही ध्यान करता हूँ। गुरु के द्वारा मैं सत्यस्वरूप परमात्मा में लीन हो गया हूँ॥१॥ मैं तन–मन से उन पर कुर्बान हूँ जो अपने मन में जगजीवन को बसाते हैं। भगवान जगत् का जीवन, निर्भीक एवं दाता है। गुरु की मति द्वारा जीव सहज ही उसमें समा जाता है॥१॥ रहाउ॥ धरती, धवल एवं पाताल–यह सबकुछ मानव के शरीर रूपी घर में ही हैं। मेरा नितनूतन प्रियतम परमेश्वर भी शरीर रूपी घर में ही रहता है। सुखदाता प्रभु सदैव ही आनंदपूर्वक रहता है और गुरु की मति द्वारा मनुष्य सहज ही उसमें समा जाता है॥२॥ जब तक काया के भीतर अहंकार एवं ममत्व है, तब तक जन्म–मरण का चक्र समाप्त नहीं होता। जो प्राणी गुरमुख बन जाता है, वह अपने अहंकार को निवृत्त कर लेता है और परम सत्य प्रभु का ध्यान करता है॥३॥ पाप एवं पुण्य दोनों भाई शरीर में ही रहते हैं। इन दोनों ने मिलकर सृष्टि को पैदा किया है जो व्यक्ति इन दोनों का वध करके आत्म–स्वरूप में निवास कर लेता है, वह गुरु की मति द्वारा सहज ही समाया रहता है॥४॥ मोह–माया में फँसने के कारण मनुष्य के हृदय–घर में अज्ञानता का अँधेरा बना रहता है। यदि वह अहंत्व एवं ममत्व की भावना को त्याग दे तो उसके हृदय में प्रभु–ज्योति का प्रकाश हो जाता है। जब सुखदाता अनहद शब्द मन में प्रगट हो जाता है तो मनुष्य प्रतिदिन नाम का ध्यान करता रहता है॥५॥ जिस परमात्मा ने जगत् को प्रगट किया है, समस्त जीवों में उसकी ही ज्योति विद्यमान है। मनुष्य का अज्ञानता का अँधेरा गुरु की शिक्षा से मिट जाता है और उसका हृदय कंवल प्रफुल्लित हो जाता है। फिर मनुष्य की ज्योति परम–ज्योति प्रभु में विलीन हो जाती है॥६॥ भगवान के आत्म–स्वरूप रूपी महल में नाम रूपी रत्न के भण्डार भरे हुए हैं परन्तु मनुष्य अनंत प्रभु के नाम को गुरु के माध्यम से ही प्राप्त करता है। जीव रूपी व्यापारी हमेशा ही गुरु के माध्यम से नाम का व्यापार करता है और हमेशा ही नाम रूपी लाभ प्राप्त करता है॥७॥ भगवान स्वयं ही अपने आत्म–स्वरूप रूपी महल में नाम–वस्तु को रखता है और स्वयं यह नाम–वस्तु गुरु के माध्यम से जीवों को देता है। कोई विरला पुरुष गुरु के माध्यम से ही यह व्यापार करता है। हे नानक ! परमेश्वर जिस पर अपनी कृपा–दृष्टि करता है, वहीं नाम को प्राप्त करता है। परमेश्वर अपनी कृपा करके नाम को उसके हृदय में बसा देता है॥८॥२७॥२८॥

माझ महला ३ ॥ हरि आपे मेले सेव कराए ॥ गुर कै सबदि भाउ दूजा जाए ॥ हरि निरमलु सदा गुणदाता हरि गुण महि आपि समावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी सचु सचा हिरदै वसावणिआ ॥ सचा नामु सदा है निरमलु गुर सबदी मंनि वसावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे गुरु दाता करमि बिधाता ॥ सेवक सेवहि गुरमुखि हरि जाता ॥ अंम्रित नामि सदा जन सोहहि गुरमति हरि रसु पावणिआ ॥ २ ॥ इसु गुफा महि इकु थानु सुहाइआ ॥ पूरै गुरि हउमै भरमु चुकाइआ ॥ अनदिनु नामु सलाहनि रंगि राते गुर किरपा ते पावणिआ ॥ ३ ॥ गुर कै सबदि इहु गुफा वीचारे ॥ नामु निरंजनु अंतरि वसै मुरारे ॥ हरि गुण गावै सबदि सुहाए मिलि प्रीतम सुखु पावणिआ ॥ ४ ॥ जमु जागाती दूजै भाइ करु लाए ॥ नावहु भूले देइ सजाए ॥ घड़ी मुहत का लेखा लेवै रतीअहु मासा तोल कढावणिआ ॥ ५ ॥ पेईअड़ै पिरु चेते नाही ॥ दूजै मुठी रोवै धाही ॥ खरी कुआलिओ कुरूपि कुलखणी सुपनै पिरु नही पावणिआ ॥ ६ ॥ पेईअड़ै पिरु मंनि वसाइआ ॥ पूरै गुरि हदूरि दिखाइआ ॥ कामणि पिरु राखिआ कंठि लाइ सबदे पिरु रावै सेज सुहावणिआ ॥ ७ ॥ आपे देवै सदि बुलाए ॥ आपणा नाउ मंनि वसाए ॥ नानक नामु मिलै वडिआई अनदिनु सदा गुण गावणिआ ॥ ८ ॥ २८ ॥ २९ ॥

भगवान स्वयं ही जीव को अपने साथ मिलाता है और उससे अपनी सेवा करवाता है। फिर गुरु के शब्द द्वारा माया का प्रेम जीव के मन से दूर हो जाता है। भगवान निर्मल है और सदैव ही गुणों का दाता है। भगवान स्वयं ही जीव को अपने गुणों में लीन करता है॥१॥ मैं कुर्बान हूँ और मेरा जीवन भी उन पर कुर्बान है जो परम सत्य परमात्मा को अपने अन्तर्मन में बसाते हैं। सत्य नाम हमेशा ही निर्मल है। इस निर्मल नाम को जीव गुरु के शब्द द्वारा अपने मन में बसा लेता है॥१॥ रहाउ॥ भगवान स्वयं ही जीवों को नाम की देन देने वाला गुरु है और स्वयं ही जीवों के कर्मों का भाग्यविधाता है। भगवान के सेवक उसकी सेवा करते हैं और गुरु के माध्यम से वह भगवान को पहचान लेते हैं। जो व्यक्ति हमेशा ही नाम–अमृत का पान करते रहते हैं वह सुन्दर बन जाते हैं। वह गुरु की मति द्वारा हरि–रस को प्राप्त कर लेते हैं॥२॥ इस शरीर रूपी गुफा में आत्मस्वरूप रूपी एक अत्यंत सुन्दर स्थान है। पूर्ण गुरु ने जिनका अहंकार नाश कर दिया है, वे रात–दिन प्रेमपूर्वक मग्न होकर नाम की सराहना करते रहते हैं। ऐसे लोगों को गुरु की कृपा से ही नाम प्राप्त होता है॥३॥ जो व्यक्ति गुरु के शब्द द्वारा इस गुफा का चिन्तन करता है, उसके हृदय में मुरारि प्रभु का निरंजन नाम बस जाता है। वह भगवान की महिमा गाता है और शब्द द्वारा प्रभु के दरबार में शोभा प्राप्त करता है। फिर वह अपने प्रियतम–प्रभु से मिलकर सुख अनुभव करता है॥४॥ कर वसूल करने वाला यम द्वैत भाव रखने वाले लोगों पर कर लगाता है। जो ईश्वर के नाम को विस्मृत करते हैं वह उनको दण्ड देता है। यम प्रत्येक जीव से प्रत्येक घड़ी एवं मुहूर्त में किए कर्मों का लेखा–जोखा लेता है और उनके अंश के कण मात्र वजन के कर्मों को भी तोलता है॥ ५॥ जो जीव–स्त्री अपने पीहर (मृत्युलोक) में अपने पति–परमेश्वर को स्मरण नहीं करती, वह माया के प्रेम में फँसकर लुटी जा रही है, वह कर्मों का लेखा देते समय चिल्ला–चिल्ला कर विलाप करती है। वह नीच घराने की बहुत कुरुप और कुलक्षणी है और स्वप्न में भी वह अपने पति–परमेश्वर से नहीं मिलती॥ ६॥ जिस जीव–स्त्री ने अपने पति–प्रभु को अपने मन में बसा लिया है, पूर्ण गुरु ने उसे पति–प्रभु के प्रत्यक्ष दर्शन करवा दिए हैं। ऐसी जीव–स्त्री अपने प्रियतम को अपने हृदय के साथ लगाए रखती है और नाम द्वारा अपने प्रियतम के साथ उसकी सुन्दर सेज पर रमण करती है॥७॥ भगवान स्वयं ही अपने सेवक को बुला कर उसे नाम की देन प्रदान करता है। वह अपना नाम उसके मन में बसा देता है। हे नानक! नाम द्वारा सेवक को भगवान के दरबार में बड़ी शोभा मिलती है। फिर भगवान का सेवक रात–दिन सदैव ही उसका गुणगान करता रहता है॥८॥२८॥२९॥

माझ महला ३ ॥ ऊतम जनमु सुथानि है वासा ॥ सतिगुरु सेवहि घर माहि उदासा ॥ हरि रंगि रहहि सदा रंगि राते हरि रसि मनु त्रिपतावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी पड़ि बुझि मंनि वसावणिआ ॥ गुरमुखि पड़हि हरि नामु सलाहहि दरि सचै सोभा पावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अलख अभेउ हरि रहिआ समाए ॥ उपाइ न किती पाइआ जाए ॥ किरपा करे ता सतिगुरु भेटै नदरी मेलि मिलावणिआ ॥ २ ॥ दूजै भाइ पड़ै नही बूझै ॥ त्रिबिधि माइआ कारणि लूझै ॥ त्रिबिधि बंधन तूटहि गुर सबदी गुर सबदी मुकति करावणिआ ॥ ३ ॥ इहु मनु चंचलु वसि न आवै ॥ दुबिधा लागै दह दिसि धावै ॥ बिखु का कीड़ा बिखु महि राता बिखु ही माहि पचावणिआ ॥ ४ ॥ हउ हउ करे तै आपु जणाए ॥ बहु करम करै किछु थाइ न पाए ॥ तुझ ते बाहरि किछू न होवै बखसे सबदि सुहावणिआ ॥ ५ ॥ उपजै पचै हरि बूझै नाही ॥ अनदिनु दूजै भाइ फिराही ॥ मनमुख जनमु गइआ है बिरथा अंति गइआ पछुतावणिआ ॥ ६ ॥ पिरु परदेसि सिगारु बणाए ॥ मनमुख अंधु ऐसे करम कमाए ॥ हलति न सोभा पलति न ढोई बिरथा जनमु गवावणिआ ॥ ७ ॥ हरि का नामु किनै विरलै जाता ॥ पूरे गुर कै सबदि पछाता ॥ अनदिनु भगति करे दिनु राती सहजे ही सुखु पावणिआ ॥ ८ ॥ सभ महि वरतै एको सोई ॥ गुरमुखि विरला बूझै कोई ॥ नानक नामि रते जन सोहहि करि किरपा आपि मिलावणिआ ॥ ९ ॥ २९ ॥ ३० ॥

जो व्यक्ति सत्संगति रूपी श्रेष्ठ स्थान पर रहते हैं, उनका जन्म उत्तम बन जाता है। ऐसे व्यक्ति अपने सच्चे गुरु की सेवा करते रहते हैं और गृहस्थ में रहते हुए भी निर्लिप्त रहते हैं। वह सदैव ही प्रभु के प्रेम में मग्न रहते हैं। उनका मन हरि–रस का पान करके तृप्त हो जाता है॥१॥ मैं उन पर कुर्बान हूँ, मेरा जीवन उन पर बलिहारी है जो ब्रह्म–ज्ञान को पढ़कर एवं समझकर अपने मन में बसाते हैं। गुरमुख ब्रह्म–ज्ञान को पढ़कर हरि–नाम की महिमा–स्तुति करते हैं और सत्य के दरबार में शोभा पाते हैं॥१॥ रहाउ॥ अलक्ष्य एवं अभेद परमात्मा सर्वव्यापक है। किसी भी उपाय से वह प्राप्त नहीं किया जा सकता। यदि परमात्मा कृपा करे तो मनुष्य को गुरु मिल जाता है। परमात्मा अपनी कृपा–दृष्टि से मनुष्य को सतिगुरु से मिलाकर उस द्वारा अपने साथ मिला लेता है॥२॥ जो व्यक्ति द्वैतभाव के कारण ग्रंथों का अध्ययन करता है, उसे कुछ भी ज्ञान प्राप्त नहीं होता। वह त्रिगुणात्मक माया के लिए उलझता रहता है। लेकिन त्रिगुणात्मक माया के बंधन गुरु के शब्द से टूट जाते हैं और गुरु के शब्द से ही मोह–माया से मोक्ष प्राप्त होता है॥३॥ मनुष्य का यह मन बड़ा ही चंचल है और यह मनुष्य के वश में नहीं आता। यह दुविधा उत्पन्न करने वाली माया के पीछे लगकर दसों दिशाओं में भटकता रहता है। इस तरह मनुष्य विष–रूपी माया का कीड़ा बनकर विष रूपी विषय–विकारों में मग्न रहता है और विष रूपी माया के विषय–विकारों में ही गल–सड़ जाता है॥४॥ जो व्यक्ति अहंकार से बोलता है और स्वयं को बड़ा प्रगट करता है, वह अधिकतर धर्म–कर्म करता है परन्तु प्रभु के दरबार में स्वीकार नहीं होता। हे प्रभु ! तेरे हुक्म से बाहर कुछ भी नहीं होता। जिसे तुम क्षमा कर देते हो, वह शब्द द्वारा सुन्दर बन जाता है॥५॥ मनमुख जन्मता एवं मरता रहता है। उसे भगवान का ज्ञान ही नहीं होता। वह रात–दिन माया के मोह में फँसकर भटकता रहता है। इस तरह मनमुख व्यक्ति अपना अमूल्य जन्म व्यर्थ ही गंवा देता है और अन्त में पश्चाताप करता हुआ जगत् से चला जाता है॥६॥ मनमुख ऐसे व्यर्थ कर्म करता है, जैसे कोई स्त्री जिसका पति तो परदेस गया हुआ है परन्तु फिर भी वह अपने शरीर का श्रृंगार करती रहती है। उसकी न इहलोक में शोभा होती है और न ही उसे परलोक में कोई सहारा मिलता है। उसका जीवन व्यर्थ ही चला जाता है॥७॥ किसी विरले ने ही

भगवान के नाम को जाना है। नाम की पहचान पूर्ण गुरु के शब्द द्वारा ही होती है। जो व्यक्ति दिन–रात हर समय भगवान की भक्ति करता रहता है, उसे सहज ही सुख उपलब्ध हो जाता है॥ ८॥एक परमेश्वर समस्त जीवों में मौजूद है। परन्तु इस भेद को गुरु के माध्यम से कोई विरला पुरुष ही समझता है। हे नानक ! भगवान के दरबार में वहीं व्यक्ति शोभा प्राप्त करते हैं, जो उसके नाम में मग्न रहते हैं। भगवान स्वयं ही कृपा करके जीव को अपने साथ मिला लेता है॥७॥२६॥३०॥

माझ महला ३ ॥ मनमुख पड़हि पंडित कहावहि ॥ दूजै भाइ महा दुखु पावहि ॥ बिखिआ माते किछु सूझै नाही फिरि फिरि जूनी आवणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी हउमै मारि मिलावणिआ ॥ गुर सेवा ते हरि मनि वसिआ हरि रसु सहजि पीआवणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वेदु पड़हि हरि रसु नही आइआ ॥ वादु वखाणहि मोहे माइआ ॥ अगिआनमती सदा अंधिआरा गुरमुखि बूझि हरि गावणिआ ॥ २ ॥ अकथो कथीऐ सबदि सुहावै ॥ गुरमती मनि सचो भावै ॥ सचो सचु रवहि दिनु राती इहु मनु सचि रंगावणिआ ॥ ३ ॥ जो सचि रते तिन सचो भावै ॥ आपे देइ न पछोतावै ॥ गुर कै सबदि सदा सचु जाता मिलि सचे सुखु पावणिआ ॥ ४ ॥ कूड़ु कुसतु तिना मैलु न लागै ॥ गुर परसादी अनदिनु जागै ॥ निरमल नामु वसै घट भीतरि जोती जोति मिलावणिआ ॥ ५ ॥ त्रै गुण पड़हि हरि ततु न जाणहि ॥ मूलहु भुले गुर सबदु न पछाणहि ॥ मोह बिआपे किछु सूझै नाही गुर सबदी हरि पावणिआ ॥ ६ ॥ वेदु पुकारै त्रिबिधि माइआ ॥ मनमुख न बूझहि दूजै भाइआ ॥ त्रै गुण पड़हि हरि एकु न जाणहि बिनु बूझे दुखु पावणिआ ॥ ७ ॥ जा तिसु भावै ता आपि मिलाए ॥ गुर सबदी सहसा दूखु चुकाए ॥ नानक नावै की सची वडिआई नामो मंनि सुखु पावणिआ ॥ ८ ॥ ३० ॥ ३१ ॥

स्वेच्छाचारी जीव द्वैतभाव में ग्रंथ पढ़ते रहते हैं और स्वयं को विद्वान कहलवाते हैं। वे माया के मोह में फँसकर बहुत दुखी होते हैं। वह विष रूपी माया के मोह में मग्न रहते हैं और प्रभु बारे उन्हें कोई ज्ञान नहीं मिलता, जिसके कारण वह पुनः पुनः योनियों के चक्र में पड़े रहते हैं॥१॥ मैं कुर्बान हूँ, मेरा जीवन उन पर कुर्बान है जो अपने अहंकार को नष्ट करके ईश्वर में विलीन हो जाते हैं। गुरु की सेवा से ईश्वर मनुष्य के हृदय में आ बसता है और वह सहज ही हरि–रस पान करता रहता है॥१॥ रहाउ॥ कुछ व्यक्ति वेद पढ़ते हैं परन्तु उन्हें हरि–रस का आनंद नहीं मिलता। मोह–माया के कारण बुद्धिहीन हुए वह वाद–विवाद करते रहते हैं। अज्ञान बुद्धि वाले हमेशा अज्ञानता के अँधकार में हैं। गुरमुख ईश्वर को जान लेते हैं और हरि का यशोगान करते रहते हैं॥२॥ जो व्यक्ति अकथनीय प्रभु की महिमा का कथन करता रहता है, वह नाम द्वारा सुन्दर बन जाता है। गुरु की मति द्वारा सत्य–प्रभु उसके मन को प्रिय लगता है। वह दिन–रात सत्य–परमेश्वर का ही सिमरन करता रहता है। उसका यह मन सत्य–प्रभु के प्रेम में मग्न रहता है॥३॥ जो सत्य–प्रभु के प्रेम में मग्न रहते हैं, उन्हें सत्य–प्रभु ही प्रिय लगता है। प्रभु उन्हें अपने प्रेम की देन स्वयं ही देता है और यह देन देकर वह अफसोस नहीं करता। गुरु के शब्द से सत्य प्रभु सदैव ही जाना जाता है। सत्यस्वरूप प्रभु को मिलने से बड़ा आनंद प्राप्त होता है॥४॥ झूठ एवं कपट की मैल उनको नहीं लगती क्योंकि वे रात–दिन गुरु की कृपा से भजन में जागते हैं। निर्मल नाम उनके हृदय में निवास करता है और उनकी ज्योति प्रभु की ज्योति में विलीन हो जाती है॥५॥ मनमुख ऐसी पुस्तकें पढ़ते हैं, जिनका संबंध त्रिगुणात्मक माया से होता है। वह परम तत्व ईश्वर को नहीं समझ सकते। ऐसे व्यक्ति जगत् के मूल प्रभु को भूले हुए हैं परन्तु गुरु की वाणी का बोध नहीं करते। वे मोह–माया में मग्न हैं और उन्हें इस बात का ज्ञान नहीं होता कि भगवान गुरु की वाणी द्वारा ही मिलता है॥६॥ वेद पुकार–पुकार कर

कह रहे हैं कि माया त्रिगुणात्मक है परन्तु स्वेच्छाचारी जीवों को कोई सूझ ही नहीं होती, उन्हें तो माया का मोह ही प्यारा लगता है। वह त्रिगुणात्मक माया से संबंधित ग्रंथ पढ़ते रहते हैं परन्तु उस एक ईश्वर को नहीं जान सकते। वह एक ईश्वर को समझे बिना बहुत दुःखी होते हैं॥७॥ जब भगवान को उपयुक्त लगता है तो ही वह जीव को अपने साथ मिला लेता है। भगवान गुरु–शब्द द्वारा जीव का भय एवं दुःख दूर कर देता है। हे नानक! भगवान जिसे अपने नाम की महानता प्रदान कर देता है, वह अपने मन में नाम को बसाकर सुख प्राप्त करता है॥८॥३०॥३१॥

माझ महला ३ ॥ निरगुणु सरगुणु आपे सोई ॥ ततु पछाणै सो पंडितु होई ॥ आपि तरै सगले कुल तारै हरि नामु मंनि वसावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी हरि रसु चखि सादु पावणिआ ॥ हरि रसु चाखहि से जन निरमल निरमल नामु धिआवणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सो निहकरमी जो सबदु बीचारे ॥ अंतरि ततु गिआनि हउमै मारे ॥ नामु पदारथु नउ निधि पाए त्रै गुण मेटि समावणिआ ॥ २ ॥ हउमै करै निहकरमी न होवै ॥ गुर परसादी हउमै खोवै ॥ अंतरि बिबेकु सदा आपु वीचारे गुर सबदी गुण गावणिआ ॥ ३ ॥ हरि सरु सागरु निरमलु सोई ॥ संत चुगहि नित गुरमुखि होई ॥ इसनानु करहि सदा दिनु राती हउमै मैलु चुकावणिआ ॥ ४ ॥ निरमल हंसा प्रेम पिआरि ॥ हरि सरि वसै हउमै मारि ॥ अहिनिसि प्रीति सबदि साचै हरि सरि वासा पावणिआ ॥ ५ ॥ मनमुखु सदा बगु मैला हउमै मलु लाई ॥ इसनानु करै परु मैलु न जाई ॥ जीवतु मरै गुर सबदु बीचारै हउमै मैलु चुकावणिआ ॥ ६ ॥ रतनु पदारथु घर ते पाइआ ॥ पूरै सतिगुरि सबदु सुणाइआ ॥ गुर परसादि मिटिआ अंधिआरा घटि चानणु आपु पछानणिआ ॥ ७ ॥ आपि उपाए तै आपे वेखै ॥ सतिगुरु सेवै सो जनु लेखै ॥ नानक नामु वसै घट अंतरि गुर किरपा ते पावणिआ ॥ ८ ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

ईश्वर स्वयं ही निर्गुण और स्वयं ही सगुण है। जो इस ज्ञान को समझ लेता है वही पण्डित बन जाता है। जो मनुष्य हरिनाम अपने हृदय में बसा लेता है, वह स्वयं भवसागर से पार हो जाता है और अपने समूचे वंश को भी भवसागर से पार करवा देता है॥१॥ मैं कुर्बान हूँ, मेरा जीवन भी उन पर कुर्बान है जो हरि रस का पान करते हैं और इसके स्वाद को प्राप्त करते हैं। जो हरि रस का पान करते हैं, वह पवित्र पुरुष हैं और वह निर्मल नाम का सिमरन करते हैं॥१॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति शब्द का चिन्तन करता है, वहीं कर्मयोगी है। उसके हृदय में परम तत्व प्रभु का ज्ञान प्रगट हो जाता है और वह अपने अहंकार को नष्ट कर देता है। वह नाम–पदार्थ से नवनिधि पा लेता है और माया के त्रिगुणों को मिटाकर भगवान में लीन हो जाता है॥२॥ जो व्यक्ति अहंकार करता है, वह कर्मों के बंधनों से मुक्त नहीं होता। लेकिन गुरु की कृपा से मनुष्य अपना अहंकार नष्ट कर देता है। उसके अन्तर्मन में विवेक उत्पन्न हो जाता है, वह सदा अपने स्वरूप का चिंतन करता है और गुरु के शब्द से हरि–प्रभु का यशोगान करता है॥३॥ निर्मल भगवान स्वयं ही सरोवर है और स्वयं ही सागर है। संत रूपी हंस गुरु के माध्यम से सदैव ही इस सरोवर में से नाम रूपी मोती चुगते हैं। वह भगवान रूपी सरोवर में दिन–रात स्नान करते रहते हैं और अपने अहंकार की मैल स्वच्छ करते रहते हैं॥४॥ जीव रूपी हंस प्रेम एवं प्यार से निर्मल हो जाते हैं और अपने अहंकार को मार कर भगवान रूपी सरोवर में निवास करते हैं। वह दिन–रात सत्य नाम के प्रेम में अनुरक्त रहते हैं और भगवान के सागर में बसेरा कर लेते हैं॥५॥ मनमुख पाखंडी बगुले की तरह हमेशा मैला रहता है, जिसके मन को अहंकार की मैल लगी हुई है। वह तीर्थों पर स्नान करता है परन्तु उसके अहंकार की मैल दूर नहीं होती। उसकी अहंकार की मैल तभी दूर हो सकती है, यदि वह गुरु–शब्द का चिंतन करे और नम्रतापूर्वक जीवन व्यतीत करे॥६॥ जब

पूर्ण सतिगुरु ने उसे अपना शब्द सुनाया तो उसने अपनी आत्मा में ही हरि नाम रूपी अमूल्य रत्न पदार्थ पा लिया। गुरु की दया से उसके मन में से अज्ञानता का अंधकार मिट गया है। उसके हृदय में ज्योति का प्रकाश हो गया है और उसने स्वयं ही अपने स्वरूप को पहचान लिया है॥७॥ प्रभु ने स्वयं ही जीवों की रचना की है और स्वयं ही अपनी रचना की देखभाल करता है। जो मनुष्य सतिगुरु की सेवा करता है, वह प्रभु के दरबार में स्वीकार हो जाता है। हे नानक! जिसके हृदय में प्रभु का नाम निवास करता है, गुरु की कृपा से वह प्रभु को प्राप्त कर लेता है॥८॥३१॥३२॥

माझ महला ३ ॥ माइआ मोहु जगतु सबाइआ ॥ त्रै गुण दीसहि मोहे माइआ ॥ गुर परसादी को विरला बूझै चउथै पदि लिव लावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी माइआ मोहु सबदि जलावणिआ ॥ माइआ मोहु जलाए सो हरि सिउ चितु लाए हरि दरि महली सोभा पावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ देवी देवा मूलु है माइआ ॥ सिंम्रिति सासत जिंनि उपाइआ ॥ कामु क्रोधु पसरिआ संसारे आइ जाइ दुखु पावणिआ ॥ २ ॥ तिसु विचि गिआन रतनु इकु पाइआ ॥ गुर परसादी मंनि वसाइआ ॥ जतु सतु संजमु सचु कमावै गुरि पूरै नामु धिआवणिआ ॥ ३ ॥ पेईअड़ै धन भरमि भुलाणी ॥ दूजै लागी फिरि पछोताणी ॥ हलतु पलतु दोवै गवाए सुपनै सुखु न पावणिआ ॥ ४ ॥ पेईअड़ै धन कंतु समाले ॥ गुर परसादी वेखै नाले ॥ पिर कै सहजि रहै रंगि राती सबदि सिंगारु बणावणिआ ॥ ५ ॥ सफलु जनमु जिना सतिगुरु पाइआ ॥ दूजा भाउ गुर सबदि जलाइआ ॥ एको रवि रहिआ घट अंतरि मिलि सतसंगति हरि गुण गावणिआ ॥ ६ ॥ सतिगुरु न सेवै सो काहे आइआ ॥ ध्रिगु जीवणु बिरथा जनमु गवाइआ ॥ मनमुखि नामु चिति न आवै बिनु नावै बहु दुखु पावणिआ ॥ ७ ॥ जिनि सिसटि साजी सोई जाणै ॥ आपे मेलै सबदि पछाणै ॥ नानक नामु मिलिआ तिन जन कउ जिन धुरि मसतकि लेखु लिखावणिआ ॥ ८ ॥ १ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

सम्पूर्ण संसार मोह–माया में लिप्त है। त्रिगुणी प्राणी माया में मोहित हुए दिखाई देते हैं। गुरु की कृपा से कोई विरला पुरुष ही सत्य का बोध करता है और अपनी वृत्ति सहज ही चतुर्थ अवस्था में लगाता है॥ १॥ मैं उन पर तन–मन से कुर्बान हूँ जो गुरु की वाणी से मोह–माया की तृष्णा को जला देते हैं। जो प्राणी मोह–माया की तृष्णा को जला देता है और अपना मन हरि–प्रभु से लगाता है, वह हरि के दरबार में बड़ी शोभा पाता है॥ १॥ रहाउ॥ देवी–देवताओं का मूल माया है, जिन्होंने स्मृतियों एवं शास्त्रों को उत्पन्न किया है। इस संसार में काम, क्रोध प्रवृत्त है, इसलिए प्राणी आवागमन के चक्र में पड़कर जन्मता–मरता एवं कष्ट सहन करता है॥ २॥ भगवान ने मानव शरीर में एक ज्ञान रूपी रत्न डाल दिया है, जिसे गुरु की कृपा से हृदय में बसाया जाता है। वे ब्रह्मचार्य, जितेन्द्रिय, संयम धारण करके सत्य की भक्ति करते हैं परन्तु पूर्ण गुरु की दया से नाम का स्मरण प्राप्त होता है॥३॥ जो जीव–स्त्री अपने पीहर (मृत्युलोक) में भ्रम में पड़कर कुमार्ग लगी हुई है। द्वैतभाव में फँसी हुई वह अन्तः पश्चाताप करती है। वह अपना लोक तथा परलोक दोनों ही गंवा देती है और स्वप्न में भी उसको सुख नहीं मिलता॥ ४॥ जो जीव–स्त्री इहलोक में अपने पति–परमेश्वर को स्मरण करती है, गुरु की कृपा से वह पति–परमेश्वर के निकट ही दर्शन करती है। वह सहज ही अपने प्रियतम के प्रेम में मग्न रहती है और उसकी वाणी को अपना हार–श्रृंगार बनाती है॥ ५॥ उनका ही जन्म सफल है जिन्होंने सतिगुरु को पाया है। गुरु के शब्द द्वारा उन्होंने माया–मोह को जला दिया है। सत्संग में सम्मिलित होकर वह एक ईश्वर का यशोगान करते हैं जो सबके हृदय में व्यापक है॥ ६॥ जो मनुष्य सतिगुरु की सेवा नहीं करता, वह संसार में क्यों आया है? उसके जीवन को धिक्कार है। उसने अपना अनमोल मनुष्य जीवन व्यर्थ ही गंवाया है। मनमुख नाम का सुमिरन नहीं करता। हरि नाम के बिना

वह बहुत कष्ट सहन करता है॥ ७॥ जिस प्रभु ने इस सृष्टि की रचना की है, वह इस बारे सबकुछ जानता है। प्रभु उनको अपने साथ मिला लेता है जो गुरु–शब्द को सदैव अपने नेत्रों में रखता है। हे नानक! नाम उन्हें ही मिलता है, जिनके मस्तक पर सुकर्मों के कारण आदि से ही भाग्य रेखाएँ विद्यमान हैं॥ ८॥ १॥ ३२॥ ३३॥

माझ महला ४ ॥ आदि पुरखु अपरंपरु आपे ॥ आपे थापे थापि उथापे ॥ सभ महि वरतै एको सोई गुरमुखि सोभा पावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी निरंकारी नामु धिआवणिआ॥ तिसु रूपु न रेखिआ घटि घटि देखिआ गुरमुखि अलखु लखावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तू दइआलु किरपालु प्रभु सोई ॥ तुधु बिनु दूजा अवरु न कोई ॥ गुरु परसादु करे नामु देवै नामे नामि समावणिआ ॥ २ ॥ तूं आपे सचा सिरजणहारा ॥ भगती भरे तेरे भंडारा ॥ गुरमुखि नामु मिलै मनु भीजै सहजि समाधि लगावणिआ ॥ ३ ॥ अनदिनु गुण गावा प्रभ तेरे ॥ तुधु सालाही प्रीतम मेरे ॥ तुधु बिनु अवरु न कोई जाचा गुर परसादी तूं पावणिआ ॥ ४ ॥ अगमु अगोचरु मिति नही पाई ॥ अपणी क्रिपा करहि तूं लैहि मिलाई ॥ पूरे गुर कै सबदि धिआईऐ सबदु सेवि सुखु पावणिआ ॥ ५ ॥ रसना गुणवंती गुण गावै ॥ नामु सलाहे सचे भावै ॥ गुरमुखि सदा रहै रंगि राती मिलि सचे सोभा पावणिआ ॥ ६ ॥ मनमुखु करम करे अहंकारी ॥ जूऐ जनमु सभ बाजी हारी ॥ अंतरि लोभु महा गुबारा फिरि फिरि आवण जावणिआ ॥ ७ ॥ आपे करता दे वडिआई ॥ जिन कउ आपि लिखतु धुरि पाई ॥ नानक नामु मिलै भउ भंजनु गुर सबदी सुखु पावणिआ ॥ ८ ॥ १ ॥ ३४ ॥

हे ईश्वर! तुम ही आदिपुरुष, अपरम्पार एवं सर्वज्ञ हो। वह स्वयं ही सृष्टि की रचना करता है और स्वयं ही प्रलय करके सृष्टि का विनाश भी करता है। सबके भीतर एक ईश्वर ही व्यापक है। इस प्रकार अनुभव करके गुरमुख प्रभु के दरबार में बड़ी शोभा पाते हैं॥ १॥ मैं तन–मन से उन पर बलिहारी हूँ, जो निरंकार परमात्मा के नाम का ध्यान करते हैं। उस प्रभु का न ही कोई रूप है अथवा न ही कोई रेखा है, उसे गुरमुखों ने घट–घट में देखा है। गुरमुख दूसरों को भी प्रभु के स्वरूप के दर्शन करवाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ हे ईश्वर! तुम बड़े दयालु एवं कृपालु हो और तेरे अलावा अन्य कोई भी नहीं। जिस पर गुरु कृपा करता है, उसे ही वह अपना नाम देता है। वह व्यक्ति नाम द्वारा तेरे नाम में ही समा जाता है॥ २॥ हे नाथ! तुम स्वयं ही सच्चे सृजनहार हो। तेरे भण्डार प्रभु–भक्ति से परिपूर्ण हैं। जिसे गुरु के माध्यम से तेरा नाम मिल जाता है, उसका मन प्रसन्न हो जाता है और वह सहज ही समाधि लगाता है॥ ३॥ हे प्रभु! रात–दिन मैं तेरा ही यशोगान करता हूँ। हे मेरे प्रियतम प्रभु! मैं तेरी ही सराहना करता हूँ। हे ईश्वर! तेरे अलावा मैं किसी अन्य से नहीं माँगता। गुरु की दया से ही तुम प्राप्त होते हो॥ ४॥ हे अगम्य, अगोचर प्रभु! तेरी सीमा का पार नहीं पाया जा सकता। हे सृष्टिकर्त्ता! अपनी कृपा से तुम प्राणी को अपने साथ मिला लेते हो। तेरा ध्यान पूर्ण गुरु के शब्द द्वारा ही करना चाहिए। परमेश्वर की सेवा से बड़ा सुख प्राप्त होता है॥ ५॥ वही रसना गुणवान है जो प्रभु का गुणगान करती है। नाम की उपमा करने से प्राणी सत्य स्वरूप ईश्वर को अच्छा लगने लग जाता है। पवित्रात्मा अपने प्रियतम–प्रभु के प्रेम में मग्न रहती है और सत्य से मिलकर बड़ी शोभा प्राप्त करती है॥ ६॥ मनमुख अपना कर्म–धर्म अहंकारवश ही करता है। वह अपना समूचा जीवन जुए के खेल में पराजित कर देता है। उसके हृदय में लालच एवं अज्ञानता का घोर अंधकार है, इसलिए वह पुनःपुनः जन्म लेता और मरता है अर्थात् आवागमन के चक्र में फँसा रहता है॥ ७॥ हे सृष्टिकर्त्ता! तुम उन्हें स्वयं ही महानता प्रदान करते हो, जिनकी किस्मत में उसने स्वयं ही आदि से ऐसा लेख लिखा हुआ है। हे नानक! जिसे गुरु के शब्द द्वारा भयनाशक परमात्मा का नाम मिल जाता है, वह बहुत सुख प्राप्त करता है॥ ८॥ १॥ ३४॥

माझ महला ५ घरु १ ॥ अंतरि अलखु न जाई लखिआ ॥ नामु रतनु लै गुझा रखिआ ॥ अगमु अगोचरु सभ ते ऊचा गुर कै सबदि लखावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी कलि महि नामु सुणावणिआ ॥ संत पिआरे सचै धारे वडभागी दरसनु पावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधिक सिध जिसै कउ फिरदे ॥ ब्रहमे इंद्र धिआइनि हिरदे ॥ कोटि तेतीसा खोजहि ता कउ गुर मिलि हिरदै गावणिआ ॥ २ ॥ आठ पहर तुधु जापे पवना ॥ धरती सेवक पाइक चरना ॥ खाणी बाणी सरब निवासी सभना कै मनि भावणिआ ॥ ३ ॥ साचा साहिबु गुरमुखि जापै ॥ पूरे गुर कै सबदि सिञापै ॥ जिन पीआ सेई त्रिपतासे सचे सचि अघावणिआ ॥ ४ ॥ तिसु घरि सहजा सोई सुहेला ॥ अनद बिनोद करे सद केला ॥ सो धनवंता सो वड साहा जो गुर चरणी मनु लावणिआ ॥ ५ ॥ पहिलो दे तैं रिजकु समाहा ॥ पिछो दे तैं जंतु उपाहा ॥ तुधु जेवडु दाता अवरु न सुआमी लवै न कोई लावणिआ ॥ ६ ॥ जिसु तूं तुठा सो तुधु धिआए ॥ साध जना का मंतु कमाए ॥ आपि तरै सगले कुल तारे तिसु दरगह ठाक न पावणिआ ॥ ७ ॥ तूं वडा तूं ऊचो ऊचा ॥ तूं बेअंतु अति मूचो मूचा ॥ हउ कुरबाणी तेरै वंञा नानक दास दसावणिआ ॥ ८ ॥ १ ॥ ३५ ॥

अलक्ष्य परमात्मा जीव के हृदय में ही विद्यमान है लेकिन उसे देखा नहीं जा सकता। उसने नाम–रत्न को आत्म–स्वरूप में गुप्त रखा हुआ है। अगम्य, अगोचर परमात्मा सर्वश्रेष्ठ है, जिसे गुरु के शब्द द्वारा ही जाना जा सकता है॥ १॥ मैं तन–मन से उन पर कुर्बान हूँ, जो इस कलियुग में जीवों को भगवान का नाम सुनाते हैं। हे सच्चे परमेश्वर ! तुझे संत अति प्रिय हैं, जिन्हें तूने सहारा दिया हुआ है। बड़े सौभाग्य से उनके दर्शन प्राप्त होते हैं॥ १॥ रहाउ॥ जिस प्रभु को पाने के लिए साधक, सिद्ध ढूँढते फिरते हैं, ब्रह्मा, इन्द्र भी अपने हृदय में उसी का ध्यान करते हैं और जिसे तेतीस करोड़ देवी–देवता तलाशते हैं, गुरु से भेंट करके उस प्रभु का संतजन अपने मन में यशोगान करते रहते हैं॥२॥ हे प्रभु ! वायु देवता आठ प्रहर तेरा ही सिमरन करता रहता है और धरती माता तेरे चरणों की सेवा करती है। हे ईश्वर ! समस्त दिशाओं एवं समस्त वाणियों में तेरा निवास है। सर्वव्यापक परमात्मा सबके मन को अच्छा लगता है॥ ३॥ हे सत्यस्वरूप परमात्मा ! गुरमुख तेरा ही जाप करते हैं। लेकिन पूर्ण गुरु की वाणी द्वारा ही बोध होता है। जो परमात्मा के नाम अमृत का पान करते हैं, वे तृप्त हो जाते हैं। वे सत्य प्रभु के सत्य–नाम से कृतार्थ हो गए हैं॥ ४॥ जिस व्यक्ति के हृदय–घर में सहज अवस्था विद्यमान है वही सुखी रहता है। वह मोद–प्रमोद से सदैव आनन्द करता है। वही धनवान है और वही परम सम्राट है, जो गुरु चरणों में अपना हृदय लगाता है॥ ५॥ हे अकाल पुरुष ! सर्वप्रथम तूने प्राणियों के लिए भोजन पहुँचाया है। तदुपरांत तुमने प्राणियों को उत्पन्न किया है। हे मेरे स्वामी ! तेरे जैसा महान दाता अन्य कोई भी नहीं। हे प्रभु ! कोई भी तेरी बराबरी नहीं कर सकता॥ ६॥ हे ईश्वर ! जिस पर तुम परम–प्रसन्न हुए हो, वही तेरी आराधना करता है। ऐसा व्यक्ति ही संत–जनों के मंत्र का अनुसरण करता है। वह स्वयं इस संसार सागर से पार हो जाता है और अपने समूचे वंश को भी पार करवा देता है। प्रभु के दरबार में पहुँचने में उसे कोई रोक–टोक नहीं होती॥७॥ हे प्रभु ! तुम महान हो, तुम सर्वोच्च एवं सर्वोपरि हो। हे दाता ! तुम अनन्त हो और सर्वश्रेष्ठ हो। हे प्रभु ! मैं तुझ पर बलिहारी जाता हूँ। हे नानक ! मैं प्रभु के दासों का दास हूँ॥ ८॥ १॥ ३५॥

माझ महला ५ ॥ कउणु सु मुकता कउणु सु जुगता ॥ कउणु सु गिआनी कउणु सु बकता ॥ कउणु सु गिरही कउणु उदासी कउणु सु कीमति पाए जीउ ॥ १ ॥ किनि बिधि बाधा किनि बिधि छूटा ॥ किनि बिधि आवणु जावणु तूटा ॥ कउण करम कउण निहकरमा कउणु सु कहै कहाए जीउ

॥ २ ॥ कउणु सु सुखीआ कउणु सु दुखीआ ॥ कउणु सु सनमुखु कउणु वेमुखीआ ॥ किनि बिधि मिलीऐ किनि बिधि बिछुरै इह बिधि कउणु प्रगटाए जीउ ॥ ३ ॥ कउणु सु अखरु जितु धावतु रहता ॥ कउणु उपदेसु जितु दुखु सुखु सम सहता ॥ कउणु सु चाल जितु पारब्रहमु धिआए किनि बिधि कीरतनु गाए जीउ ॥ ४ ॥ गुरमुखि मुकता गुरमुखि जुगता ॥ गुरमुखि गिआनी गुरमुखि बकता ॥ धंनु गिरही उदासी गुरमुखि गुरमुखि कीमति पाए जीउ ॥ ५ ॥ हउमै बाधा गुरमुखि छूटा ॥ गुरमुखि आवणु जावणु तूटा ॥ गुरमुखि करम गुरमुखि निहकरमा गुरमुखि करे सु सुभाए जीउ ॥ ६ ॥ गुरमुखि सुखीआ मनमुखि दुखीआ ॥ गुरमुखि सनमुखु मनमुखि वेमुखीआ ॥ गुरमुखि मिलीऐ मनमुखि विछुरै गुरमुखि बिधि प्रगटाए जीउ ॥ ७ ॥ गुरमुखि अखरु जितु धावतु रहता ॥ गुरमुखि उपदेसु दुखु सुखु सम सहता ॥ गुरमुखि चाल जितु पारब्रहमु धिआए गुरमुखि कीरतनु गाए जीउ ॥ ८ ॥ सगली बणत बणाई आपे ॥ आपे करे कराए थापे ॥ इकसु ते होइओ अनंता नानक एकसु माहि समाए जीउ ॥ ६ ॥ २ ॥ ३६ ॥

{यहाँ पर गुरुदेव ने चौबीस प्रश्न प्रस्तुत किए हैं और बाद में प्रश्नों के उत्तर दिए हैं।}

वह कौन है जो माया के बंधनों से मुक्त हो गया है? और कौन परमात्मा से नाम द्वारा जुड़ा हुआ है? कौन ज्ञानी है? और कौन वक्ता है? कौन गृहस्थी है? और कौन त्यागी है? और परमेश्वर का मूल्य कौन पा सकता है?॥ १॥ मनुष्य कैसे माया के बंधनों में बंध जाता है? और कैसे मुक्त हो जाता है? किस विधि द्वारा जीव आवागमन (जन्म–मरण) से बच सकता है? धर्म–कर्म करने वाला कौन है? और वासना रहित होकर कर्म करने वाला कौन है? कौन ईश्वर के नाम की महिमा करता और अन्यों से महिमा करवाता है॥ २॥ जगत् में कौन सुखी है और कौन दुखी है? कौन समक्ष है और कौन विमुख? किस विधि से परमात्मा मिलता है और किस विधि से मनुष्य उससे बिछुड़ जाता है? यह विधि मुझे कौन बतलाएगा?॥ ३॥ वह कौन–सा दिव्य अक्षर है, जिसके अध्ययन से मन का भटकना मिट जाता है? वह कौन–सा उपदेश है? जिसके द्वारा प्राणी सुख–दुख को एक समान जानकर सहन करता है। वह कौन–सी युक्ति है? जिसके द्वारा प्राणी पारब्रह्म–परमेश्वर की आराधना करे? किस विधि द्वारा प्रभु का भजन कर सकता है?॥ ४॥ गुरु जी उत्तर देते हैं कि गुरमुख मुक्त है और गुरमुख ईश्वर से जुड़ा रहता है। गुरमुख ज्ञानी है और गुरमुख वक्ता है। धन्य है वह गुरमुख चाहे वह गृहस्थी हो अथवा त्यागी। गुरमुख ही प्रभु का मूल्यांकन जानता है॥ ५॥ जीव अहंकारवश माया के बंधनों में बंध जाता है परन्तु गुरमुख माया के बधनों से मुक्त हो जाता है। गुरमुख का आवागमन जीवन–मृत्यु का चक्र समाप्त हो जाता है। गुरमुख सुकर्म (धर्म–कर्म) करता है, परन्तु फल की इच्छा नहीं रखता। गुरमुख प्रभु–प्रेम में जो भी कर्म करता है, वह शोभनीय है॥ ६॥ इस दुनिया में गुरमुख सदैव सुखी रहता है परन्तु मनमुख सदैव दुखी रहता है। गुरमुख हमेशा ही भगवान के समक्ष रहता है किन्तु मनमुख भगवान से विमुख हो जाता है। गुरमुख ही भगवान से मिलता है। परन्तु मनमुख भगवान से बिछुड़ जाता है। गुरु ही भगवान से मिलन की विधि प्रगट करता है॥ ७॥ गुरु का उपदेश दिव्य अक्षर है, जिससे भटका हुआ मन वश में आ जाता है। गुरु के उपदेश द्वारा मनुष्य दुःख एवं सुख को एक समान समझता है। गुरु का उपदेश ही सद्मार्ग है, जिस द्वारा पारब्रह्म प्रभु का चिन्तन किया जाता है। गुरमुख ही परमेश्वर का कीर्तन गायन करते हैं॥ ८॥ जगत–रचना की सारी संरचना प्रभु ने आप ही की है। परमात्मा प्राणियों का कर्त्ता है, स्वयं ही कर्म करवाता है और स्वयं ही जीवों को पैदा करता है। वह सृष्टि रचना के समय अनन्त रूप हो जाता है। हे नानक! जगत् के प्रलयकाल में समस्त प्राणी एक ईश्वर में ही समा जाते हैं॥ ६॥ २॥ ३६॥

माझ महला ५ ॥ प्रभु अबिनासी ता किआ काड़ा ॥ हरि भगवंता ता जनु खरा सुखाला ॥ जीअ प्रान मान सुखदाता तूं करहि सोई सुखु पावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी गुरमुखि मनि तनि भावणिआ ॥ तूं मेरा परबतु तूं मेरा ओला तुम संगि लवै न लावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरा कीता जिसु लागै मीठा ॥ घटि घटि पारब्रहमु तिनि जनि डीठा ॥ थानि थनंतरि तूंहै तूंहै इको इकु वरतावणिआ ॥ २ ॥ सगल मनोरथ तूं देवणहारा ॥ भगती भाइ भरे भंडारा ॥ दइआ धारि राखे तुधु सेई पूरै करमि समावणिआ ॥ ३ ॥ अंध कूप ते कंढै चाड़े ॥ करि किरपा दास नदरि निहाले ॥ गुण गावहि पूरन अबिनासी कहि सुणि तोटि न आवणिआ ॥ ४ ॥ ऐथै ओथै तूंहै रखवाला ॥ मात गरभ महि तुम ही पाला ॥ माइआ अगनि न पोहै तिन कउ रंगि रते गुण गावणिआ ॥ ५ ॥ किआ गुण तेरे आखि समाली ॥ मन तन अंतरि तुधु नदरि निहाली ॥ तूं मेरा मीतु साजनु मेरा सुआमी तुधु बिनु अवरु न जानणिआ ॥ ६ ॥ जिस कउ तूं प्रभ भइआ सहाई ॥ तिसु तती वाउ न लगै काई ॥ तू साहिबु सरणि सुखदाता सतसंगति जपि प्रगटावणिआ ॥ ७ ॥ तूं ऊच अथाहु अपारु अमोला ॥ तूं साचा साहिबु दासु तेरा गोला ॥ तूं मीरा साची ठकुराई नानक बलि बलि जावणिआ ॥ ८ ॥ ३ ॥ ३७ ॥

हे अविनाशी प्रभु ! जब तू मेरा रखवाला है तो मुझे क्या चिंता है ? हे हरि–परमेश्वर ! जब तू मेरा रक्षक है तो मैं तेरा उपासक बहुत सुखी रहता हूँ। तू ही मेरी आत्मा, प्राण एवं मान–प्रतिष्ठा है और तू ही सुखदाता है। तुम जो कुछ भी करते हो, उससे ही मैं सुख प्राप्त करता हूँ॥ १॥ मैं उन गुरमुखों पर तन–मन से बलिहारी हूँ जिनके मन एवं तन को तुम अच्छे लगते हो। तू ही मेरा पर्वत है और तू ही मेरा आधार है। हे प्रभु ! तेरे साथ कोई भी समानता नहीं कर सकता॥ १॥ रहाउ॥ जिस व्यक्ति को तेरा किया (इच्छा) मीठा लगता है, उसे पारब्रह्म–प्रभु प्रत्येक जीव के हृदय में विद्यमान दिखाई देता है। एक तू ही समस्त स्थानों में रहता है। एक तू ही सर्वत्र अपना हुक्म चला रहा है॥ २॥ हे प्रभु ! तुम समस्त मनोरथ पूर्ण करने वाले हो। तेरे भण्डार प्रेम एवं भक्ति से भरे हुए हैं। हे नाथ ! जिन पर तुम दया करके रक्षा करते हो, वह तेरी पूर्ण कृपा से तुझ में ही समा जाते हैं॥ ३॥ हे ईश्वर ! तूने अपनी कृपा–दृष्टि करके अपने भक्तों को कृतार्थ कर दिया है और उन्हें संसार रूपी अंधकूप में से निकाल कर पार कर दिया है। हे पूर्ण अविनाशी प्रभु ! सेवक तेरे गुणों का गुणगान करते हैं। कहने एवं श्रवण करने से भी प्रभु के गुणों में कभी कमी नहीं आती॥ ४॥ हे प्रभु ! इहलोक तथा परलोक में तुम ही रक्षक हो। तुम ही माता के गर्भ में आए शिशु का पालन–पोषण करते हो। जो प्रभु के प्रेम में मग्न हुए उसकी कीर्ति का गायन करते हैं, उन्हें माया की अग्नि प्रभावित नहीं कर सकती॥ ५॥ हे परमात्मा ! मैं तेरे कौन–कौन से गुणों को कहकर स्मरण करूँ? मैं अपने मन एवं तन में तुझे ही मौजूद देखता हूँ। हे प्रभु ! तुम ही मेरे मित्र, मेरे साजन एवं मेरे स्वामी हो। तेरे अलावा मैं अन्य किसी को भी नहीं जानता॥ ६॥ हे प्रभु ! जिस पुरुष के तुम सहायक सिद्ध हुए हो, उसे कोई गर्म हवा भी नहीं लगती अर्थात् किसी प्रकार की कोई पीड़ा नहीं आती। हे परमात्मा ! तू सबका मालिक है, तू ही आश्रयदाता एवं सुखदाता है। सत्संग में तेरे नाम की आराधना करने से तुम प्रकट हो जाते हो॥ ७॥ हे प्रभु ! तुम सर्वोच्च, अथाह, अनन्त एवं अनमोल हो। तू ही मेरा सच्चा साहिब है और मैं तेरा सेवक एवं दास हूँ। तुम सम्राट हो और तेरा साम्राज्य सत्य है। हे नानक ! मैं प्रभु पर तन–मन से न्यौछावर हूँ॥ ८॥ ३॥ ३७॥

माझ महला ५ घरु २ ॥ नित नित दयु समालीऐ ॥ मूलि न मनहु विसारीऐ ॥ रहाउ ॥ संता संगति पाईऐ ॥ जितु जम कै पंथि न जाईऐ ॥ तोसा हरि का नामु लै तेरे कुलहि न लागै गालि जीउ ॥ १ ॥ जो सिमरंदे सांईऐ ॥ नरकि न सेई पाईऐ ॥ तती वाउ न लगई जिन मनि वुठा आइ जीउ ॥ २ ॥ सेई सुंदर सोहणे ॥ साधसंगि जिन बैहणे ॥ हरि धनु जिनी संजिआ सेई गंभीर अपार जीउ ॥ ३ ॥ हरि अमिउ रसाइणु पीवीऐ ॥ मुहि डिठै जन कै जीवीऐ ॥ कारज सभि सवारि लै नित पूजहु गुर के पाव जीउ ॥ ४ ॥ जो हरि कीता आपणा ॥ तिनहि गुसाई जापणा ॥ सो सूरा परधानु सो मसतकि जिस दै भागु जीउ ॥ ५ ॥ मन मंधे प्रभु अवगाहीआ ॥ एहि रस भोगण पातिसाहीआ ॥ मंदा मूलि न उपजिओ तरे सची कारै लागि जीउ ॥ ६ ॥ करता मंनि वसाइआ ॥ जनमै का फलु पाइआ ॥ मनि भावंदा कंतु हरि तेरा थिरु होआ सोहागु जीउ ॥ ७ ॥ अटल पदारथु पाइआ ॥ भै भंजन की सरणाइआ ॥ लाइ अंचलि नानक तारिअनु जिता जनमु अपार जीउ ॥ ८ ॥ ४ ॥ ३८ ॥

हे प्राणी ! हमें सदैव ही दयालु भगवान का सिमरन करना चाहिए और उस प्रभु को कभी भी अपने हृदय से विस्मृत नहीं करना चाहिए॥ १॥ रहाउ॥ यदि सन्तों की संगति की जाए तो जीव को यम–मार्ग में नहीं जाना पड़ेगा। हरि के नाम का यात्रा–खर्च प्राप्त करो। उसे प्राप्त करने से तेरी वंश को कोई कलंक नहीं लगेगा॥ १॥ जो व्यक्ति परमात्मा की आराधना करते हैं, उन्हें नरक में नहीं डाला जाता। जिनके मन में ईश्वर ने आकर निवास कर लिया है, उनको गर्म हवा भी नहीं लगती अर्थात् उन्हें कोई दुःख नहीं पहुँचता॥ २॥ वहीं व्यक्ति सुन्दर एवं शोभनीय हैं जो सत्संग में वास करते हैं। जिन्होंने ईश्वर के नाम का धन अर्जित किया है वह बड़े दूरदर्शी और अपरम्पार हैं॥ ३॥ जो प्रभु–भक्त सत्संग में मिलकर हरि–नाम रूपी अमृत रस का पान करता है, मैं उस भक्त के दर्शन करके ही जीता हूँ। हे प्राणी ! सदैव गुरु–चरणों की पूजा करके अपने समस्त कार्य संवार लो॥ ४॥ जिसे प्रभु ने अपना सेवक बना लिया है, वहीं भगवान का सिमरन करता है। वही शूरवीर है और वही प्रधान है जिसके मस्तक पर भाग्य रेखाएँ विद्यमान हैं॥ ५॥ जिस व्यक्ति ने भगवान का अपने मन में सिमरन किया है, उसने ही इस रस का पान किया है। हरि–रस का भोग ही प्रभुत्ता के रस मानने की भाँति है। नाम–सिमरन करने वालों के मन में कदाचित बुराई उत्पन्न नहीं होती। वे नाम–सिमरन के शुभ–कर्म में लगकर भवसागर से पार हो जाते हैं॥ ६॥ जिसने सृष्टि–कर्त्ता प्रभु को अपने हृदय में बसा लिया है उसने मानव जीवन का फल प्राप्त कर लिया है। हे जीव–स्त्री ! तुझे अपना मनपसंद हरि–प्रभु मिल गया है और अब तेरा सुहाग स्थिर हो गया है॥ ७॥ भयनाशक प्रभु की शरण में आने से तुझे हरि–नाम रूपी अटल पदार्थ मिल गया है। हे नानक ! भगवान ने अपने दामन से लगाकर तुझे भवसागर से पार कर दिया है और तूने अपनी जीवन–बाजी को जीत कर अपार प्रभु को प्राप्त कर लिया है॥ ८॥ ४॥ ३८॥

१ओं सितिगुर प्रसादि ॥ माझ महला ५ घरु ३ ॥

हरि जपि जपे मनु धीरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिमरि सिमरि गुरदेउ मिटि गए भै दूरे ॥ १ ॥ सरनि आवै पारब्रहम की ता फिरि काहे झूरे ॥ २ ॥ चरन सेव संत साध के सगल मनोरथ पूरे ॥ ३ ॥ घटि घटि एकु वरतदा जलि थलि महीअलि पूरे ॥ ४ ॥ पाप बिनासनु सेविआ पवित्र संतन की धूरे ॥ ५ ॥ सभ छडाई खसमि आपि हरि जपि भई ठरूरे ॥ ६ ॥ करतै कीआ तपावसो दुसट मुए होइ मूरे ॥ ७ ॥ नानक रता सचि नाइ हरि वेखै सदा हजूरे ॥ ८ ॥ ५ ॥ ३६ ॥ १ ॥ ३२ ॥ १ ॥ ५ ॥ ३६॥

भगवान का नाम जपने से मेरे मन को धैर्य हो गया है॥ १॥ रहाउ॥ गुरदेव का नाम–सिमरन करने से मेरे तमाम भय मिट गए हैं॥ १॥ जो पारब्रह्म की शरण में आ जाता है, वह फिर चिन्ता क्यों करेगा ?॥ २॥ संतों व साधुजनों के चरणों की सेवा करने से मेरी समस्त अभिलाषाएँ पूर्ण हो गई हैं॥ ३॥ कण–कण में एक ईश्वर ही विद्यमान है। जल, थल एवं गगन में भी वही समाया हुआ है॥ ४॥ संतों के चरणों की धूलि द्वारा पवित्र होकर मैंने पापों के विनाशक प्रभु की सेवा की है॥ ५॥ सारी सृष्टि को मालिक प्रभु ने स्वयं ही माया–जाल में से मुक्त किया है और सारी सृष्टि भगवान का नाम जप कर शीतल हो गई है॥ ६॥ सृजनहार प्रभु ने स्वयं इन्साफ किया है और काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि सभी दुष्ट मूक होकर प्राण त्याग गए हैं॥ ७॥ हे नानक ! जो व्यक्ति सत्य–नाम में मग्न हो जाता है, वह प्रभु–परमेश्वर को सदैव अपने नेत्रों के समक्ष प्रत्यक्ष देखता है॥ ८॥ ५॥ ३६॥ १॥ ३२॥ १॥ ५॥ ३६॥

बारह माहा मांझ महला ५ घरु ४ १ओं सितिगुर प्रसादि ॥

किरति करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम ॥ चारि कुंट दह दिस भ्रमे थकि आए प्रभ की साम ॥ धेनु दुधै ते बाहरी कितै न आवै काम ॥ जल बिनु साख कुमलावती उपजहि नाही दाम ॥ हरि नाह न मिलीऐ साजनै कत पाईऐ बिसराम ॥ जितु घरि हरि कंतु न प्रगटई भठि नगर से ग्राम ॥ स्रब सीगार तंबोल रस सणु देही सभ खाम ॥ प्रभ सुआमी कंत विहूणीआ मीत सजण सभि जाम ॥ नानक की बेनंतीआ करि किरपा दीजै नामु ॥ हरि मेलहु सुआमी संगि प्रभ जिस का निहचल धाम ॥ १ ॥

हे मेरे राम ! पूर्व जन्म के कृत–कर्मों के अनुसार लिखी किस्मत के कारण हम तुझसे बिछुड़ गए हैं, अतः कृपा करके हमें अपने साथ मिला लो। हे प्रभु ! चारों ही कोनों उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम एवं दसों दिशाओं में भटकने के पश्चात थककर हम तेरी शरण में आए हैं। दूध न देने वाली गाय किसी भी कार्य नहीं आती। जल के बिना फसल मुरझा जाती है और उससे दाम बटोरने हेतु अनाज पैदा नहीं होता। यदि हम प्रभु–पति अपने मित्र से न मिलें तो हम किस तरह विश्राम पा सकते हैं ? वह घर, गांव एवं नगर जहाँ पर हरि प्रभु प्रत्यक्ष नहीं होता, अग्निकुण्ड के तुल्य है। समूह हार–शृंगार, पान एवं रस सहित शरीर के सभी अंग व्यर्थ हैं। प्रभु–परमेश्वर के बिना सभी मित्र एवं सखा यमदूत के तुल्य हैं। नानक की विनती है कि हे प्रभु ! अपनी कृपा करके मुझे अपना नाम प्रदान कीजिए। हे सतिगुरु ! मुझे मेरे स्वामी प्रभु से मिला दो, जिसका धाम (बैकुण्ठ) सदैव अटल है॥ १॥

चेति गोविंदु अराधीऐ होवै अनंदु घणा॥ संत जना मिलि पाईऐ रसना नामु भणा॥ जिनि पाइआ प्रभु आपणा आए तिसहि गणा॥ इकु खिनु तिसु बिनु जीवणा बिरथा जनमु जणा ॥ जलि थलि महीअलि पूरिआ रविआ विचि वणा ॥ सो प्रभु चिति न आवई कितड़ा दुखु गणा ॥ जिनी राविआ सो प्रभू तिंना भागु मणा ॥ हरि दरसन कंउ मनु लोचदा नानक पिआस मना॥ चेति मिलाए सो प्रभू तिस कै पाइ लगा॥ २ ॥

यदि चैत्र के महीने में गोविन्द का सिमरन किया जाए तो बड़ा आनन्द प्राप्त होता है। संतजनों से मिलकर जिह्वा से नाम का जाप करने से हरि–प्रभु पाया जाता है। जिन्होंने हरि–प्रभु को प्राप्त कर लिया है, उनका ही जगत् में जन्म लेना सफल है। प्रभु को एक क्षण भर के लिए भी स्मरण न करने से मनुष्य के तमाम जन्म को ही व्यर्थ गया समझो। परमेश्वर जल, थल, एवं गगन में सर्वत्र विद्यमान

है और वनों में भी मौजूद है। यदि ऐसा प्रभु मुझे स्मरण न हो तो कैसे बताऊं कि मुझे कितना दुःख होता है? जिन्होंने उस पारब्रह्म-प्रभु को स्मरण किया है, वे बड़े भाग्यवान हैं। हे नानक! मेरा मन हरि के दर्शन करने हेतु अभिलाषी है और मेरे मन में उसके दर्शनों की तीव्र लालसा बनी हुई है। मैं उसके चरण स्पर्श करता हूँ जो मुझे चैत्र के महीने में उस ईश्वर से मिला दे॥ २॥

वैसाखि धीरनि किउ वाढीआ जिना प्रेम बिछोहु ॥ हरि साजनु पुरखु विसारि कै लगी माइआ धोहु ॥ पुत्र कलत्र न संगि धना हरि अविनासी ओहु ॥ पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु ॥ इकसु हरि के नाम बिनु अगै लईअहि खोहि ॥ दयु विसारि विगुचणा प्रभ बिनु अवरु न कोइ ॥ प्रीतम चरणी जो लगे तिन की निरमल सोइ ॥ नानक की प्रभ बेनती प्रभ मिलहु परापति होइ ॥ वैसाखु सुहावा तां लगै जा संतु भेटै हरि सोइ ॥ ३ ॥

वैसाख के महीने में वह जीव-स्त्रियाँ कैसे धैर्य करें, जिनका अपने प्रियतम से विरहा हुआ है। अपने हरि-प्रभु साजन को भुलाकर वह झूठी माया के मोह में फँस गई हैं। मरणोपरांत पुत्र, पत्नी तथा धन-दौलत प्राणी के साथ नहीं जाते अपितु अविनाशी प्रभु ही उसका रक्षक बनता है। सारी दुनिया झूठे कर्मों की लगन में मोहबद्ध उलझ-उलझकर नष्ट हो गई है। आगे परलोक में एक ईश्वर के नाम के अलावा मनुष्य के किए हुए सभी कर्म-धर्म छीन लिए जाते हैं। अर्थात् उन्हें कोई फल नहीं मिलता। दयालु परमात्मा को विस्मृत करके मनुष्य तबाह हो जाता है। हरि-प्रभु के अलावा अन्य कोई भी जीव का रक्षक नहीं बनता। जो प्रियतम के चरणों में लग जाते हैं, वे बड़े पवित्र हैं और उनकी बहुत शोभा होती है। नानक की प्रभु के समक्ष प्रार्थना है कि हे प्रभु! मुझे आकर मिलो एवं मुझे तेरे दर्शन प्राप्त होते रहें। वैसाख का महीना मुझे तभी सुन्दर लगता है यदि कोई हरि का संत मिल जाए॥ ३॥

हरि जेठि जुड़ंदा लोड़ीऐ जिसु अगै सभि निवंनि ॥ हरि सजण दावणि लगिआ किसै न देई बंनि ॥ माणक मोती नामु प्रभ उन लगै नाही संनि ॥ रंग सभे नाराइणै जेते मनि भावंनि ॥ जो हरि लोड़े सो करे सोई जीअ करंनि ॥ जो प्रभि कीते आपणे सेइ कहीअहि धंनि ॥ आपण लीआ जे मिलै विछुड़ि किउ रोवंनि ॥ साधू संगु परापते नानक रंग माणंनि ॥ हरि जेठु रंगीला तिसु धणी जिस कै भागु मथंनि ॥ ४ ॥

ज्येष्ठ के महीने में सिमरन द्वारा उस भगवान से जुड़ने की आवश्यकता है जिसके समक्ष जगत् के सभी जीव अपना सिर झुकाते हैं। जो व्यक्ति हरि-मित्र के दामन से जुड़ा हुआ है अर्थात् शरण में है, उसे यम इत्यादि कोई भी बंदी नहीं बना सकता। प्रभु का नाम ऐसे माणिक-मोतियों के तुल्य है, जिसे कोई भी सेंध लगाकर चुरा नहीं सकता। जितने भी रंग-रूप मन को प्रिय लगते हैं, वे सभी रंग नारायण के ही हैं। भगवान वही कुछ करता है, जो उसकी इच्छा होती है और जगत् के सभी जीव भी वहीं कुछ करते हैं। जिनको प्रभु ने अपना सेवक बनाया है, लोग उन्हें ही धन्य-धन्य कहते हैं। यदि मनुष्य को भगवान उसके अपने प्रयास से मिल सकता हो तो वह उनसे जुदा होकर क्यों विलाप करें? हे नानक! जिन्हें संतों की संगति मिल जाती है, वे प्रभु से मिलकर आनंद भोगते हैं। ज्येष्ठ का महीना उसके लिए ही हर्षोल्लास वाला है, जिसे जगत् का स्वामी भगवान मिल जाता है। लेकिन भगवान उसे ही मिलता है जिसके माथे पर किस्मत के शुभ लेख होते हैं॥ ४॥

आसाड़ु तपंदा तिसु लगै हरि नाहु न जिंना पासि ॥ जगजीवन पुरखु तिआगि कै माणस संदी आस ॥ दुयै भाइ विगुचीऐ गलि पईसु जम की फास ॥ जेहा बीजै सो लुणै मथै जो लिखिआसु ॥ रैणि

विहाणी पछुताणी उठि चली गई निरास ॥ जिन कौ साधू भेटीऐ सो दरगह होइ खलासु ॥ करि किरपा प्रभ आपणी तेरे दरसन होइ पिआस ॥ प्रभ तुधु बिनु दूजा को नही नानक की अरदासि ॥ आसाड़ु सुहंदा तिसु लगै जिसु मनि हरि चरण निवास ॥ ५ ॥

आषाढ़ का महीना, उसे ही तपता हुआ लगता है जिसके पास हरि–प्रभु नहीं है। जो जीव–स्त्री जगजीवन प्रभ् को त्याग कर मनुष्य पर उम्मीद और विश्वास रखती है, वह मोह–माया में फँसकर नष्ट हो जाती है और मरणोपरांत उसके गले में यम की फाँसी डाली जाती है। मनुष्य जैसा कर्म करेगा, वैसा ही फल प्राप्त होगा अर्थात् प्राणी जिस तरह बोएगा वैसे ही काटेगा, जो कुछ मस्तक में भाग्य विद्यमान है। जब जीव–स्त्री की जीवन–रात्रि व्यतीत हो जाती है तो वह पश्चाताप करती है और निराश होकर संसार त्याग देती है। जो संतों से मिलते हैं, वह प्रभु के दरबार में बन्धनमुक्त हुए शोभायमान होते हैं। हे प्रभु ! मुझ पर कृपा कीजिए जिससे तेरे दर्शनों की अभिलाषा हो। नानक की यही प्रार्थना है कि हे प्रभु ! तेरे अलावा मेरा अन्य कोई भी नहीं। आषाढ़ का महीना उसे ही सुहावना लगता है, जिसके हृदय में ईश्वर के चरणों का निवास हो जाता है॥ ५॥

सावणि सरसी कामणी चरन कमल सिउ पिआरु ॥ मनु तनु रता सच रंगि इको नामु अधारु ॥ बिखिआ रंग कूड़ाविआ दिसनि सभे छारु ॥ हरि अंम्रित बूंद सुहावणी मिलि साधू पीवणहारु ॥ वणु तिणु प्रभ संगि मउलिआ संम्रथ पुरख अपारु ॥ हरि मिलणै नो मनु लोचदा करमि मिलावणहारु ॥ जिनी सखीए प्रभु पाइआ हंउ तिन कै सद बलिहार ॥ नानक हरि जी मइआ करि सबदि सवारणहारु ॥ सावणु तिना सुहागणी जिन राम नामु उरि हारु ॥ ६ ॥

श्रावण के महीने में वहीं जीव–स्त्री वनस्पति की तरह प्रफुल्लित हो जाती है, जिसका प्रभु के चरण कंवलों से प्रेम है। उसका तन–मन सद्पुरुष के प्रेम से मग्न हो जाता है और सत्य–परमेश्वर का नाम ही उसका एकमात्र सहारा बन जाता है। विष–रूपी माया का मोह झूठा है। सब कुछ जो दृष्टिमान होता है, वह क्षणभंगुर है। हरि–नाम रूपी अमृत की बूँद बहुत सुन्दर है। संतों–गुरुओं से मिलकर मनुष्य उनका पान करता है। प्रभु के मिलन से सारी वनस्पति वन एवं तृण प्रफुल्लित हो गए हैं। प्रभु बेअंत एवं सब कुछ करने में समर्थ है। ईश्वर के मिलन हेतु मेरा हृदय बहुत व्याकुल है। परन्तु प्रभु अपनी कृपा से ही जीव को अपने साथ मिलाता है। जो सखियाँ ईश्वर को प्राप्त हुई हैं, उन पर मैं सदैव कुर्बान हूँ। नानक जी का कथन है कि हे प्रभु ! मुझ पर दया करो। प्रभु अपने नाम द्वारा जीव को संवारने वाला है। श्रावण का महीना उन सुहागिनों के लिए ही सुन्दर है, जिन्होंने राम नाम को अपने हृदय का हार बना लिया है॥ ६॥

भादुइ भरमि भुलाणीआ दूजै लगा हेतु ॥ लख सीगार बणाइआ कारजि नाही केतु॥ जितु दिनि देह बिनससी तितु वेलै कहसनि प्रेतु ॥ पकड़ि चलाइनि दूत जम किसै न देनी भेतु॥ छडि खड़ोते खिनै माहि जिन सिउ लगा हेतु॥ हथ मरोड़ै तनु कपे सिआहहु होआ सेतु॥ जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु ॥ नानक प्रभ सरणागती चरण बोहिथ प्रभ देतु॥ से भादुइ नरकि न पाईअहि गुरु रखण वाला हेतु॥ ७॥

भाद्रों के महीने में जो जीवात्मा पति–प्रभु को छोड़कर द्वैतभाव से प्रीति लगाती है, वह भ्रम में भटकी हुई है। चाहे वह लाखों ही हार–शृंगार कर ले परन्तु वह किसी भी लाभ के नहीं। जिस दिन शरीर नाश होता है, उस समय लोग उसे प्रेत कहते हैं। यमदूत आत्मा को पकड़ कर चल देते हैं और

किसी को भी भेद नहीं बताते। जिनके साथ मनुष्य का बड़ा स्नेह होता है, एक क्षण में उस को त्याग कर दूर चले जाते हैं। जब मनुष्य की मृत्यु आती है तो वह अपने हाथ मरोड़ता है। यमदूतों को देख कर उसका शरीर कांपता है और प्राण निकलने के पश्चात् उसका शरीर काले से सफेद हो जाता है। मनुष्य जैसा बोता है वैसा ही काटता है अर्थात् जैसे कर्म करता है वैसा ही फल पाता है। हे नानक ! जो व्यक्ति प्रभु की शरण में आता है, प्रभु उसे भवसागर से पार होने के लिए चरण रूपी जहाज दे देता है अर्थात् अपने चरणों की सेवा प्रदान करता है। भाद्रों के महीने में जो व्यक्ति रक्षक गुरु से स्नेह करते हैं, वे नरककुण्ड में नहीं पड़ते॥ ७॥

असुनि प्रेम उमाहड़ा किउ मिलीऐ हरि जाइ ॥ मनि तनि पिआस दरसन घणी कोई आणि मिलावै माइ ॥ संत सहाई प्रेम के हउ तिन कै लागा पाइ ॥ विणु प्रभ किउ सुखु पाईऐ दूजी नाही जाइ ॥ जिन्ही चाखिआ प्रेम रसु से त्रिपति रहे आघाइ ॥ आपु तिआगि बिनती करहि लेहु प्रभू लड़ि लाइ ॥ जो हरि कंति मिलाईआ सि विछुड़ि कतहि न जाइ ॥ प्रभ विणु दूजा को नही नानक हरि सरणाइ ॥ असू सुखी वसंदीआ जिना मइआ हरि राइ ॥ ८ ॥

आश्विन के महीने में मेरे मन में प्रभु से प्रेम करने के लिए उत्साह उत्पन्न हुआ है। मैं कैसे जाकर ईश्वर से मिलूं ? मेरे मन एवं तन में ईश्वर के दर्शनों की अधिकतर तृष्णा है। हे मेरी जननी ! कोई संत आकर मुझे उससे मिला दे। मैं संतों के चरणों में लगा हूँ क्योंकि संत प्रभु से प्रेम करने वालों की सहायता करते हैं। परमेश्वर के बिना सुख की उपलब्धि हेतु अन्य कोई स्थान नहीं है। जिन्होंने प्रभु प्रेम का अमृतपान किया है, वह तृप्त एवं संतुष्ट रहते हैं। अपना अहंकार त्याग कर वह प्रार्थना करते हैं, "हे ईश्वर ! हमें अपने दामन के साथ लगा लो।" जिन जीव–स्त्रियों को प्रभु पति ने अपने साथ मिला लिया है, वह कदापि जुदा होकर अन्य कहीं भी नहीं जाती। हे नानक ! भगवान की शरण लो, क्योंकि उस प्रभु के अलावा अन्य कोई भी शरण देने में समर्थ नहीं है। आश्विन के महीने में जिन पर परमेश्वर की दया होती है, वह बहुत सुखपूर्वक रहती हैं॥ ८॥

कतिकि करम कमावणे दोसु न काहू जोगु ॥ परमेसर ते भुलिआं विआपनि सभे रोग ॥ वेमुख होए राम ते लगनि जनम विजोग ॥ खिन महि कउड़े होइ गए जितड़े माइआ भोग ॥ विचु न कोई करि सकै किस थै रोवहि रोज ॥ कीता किछू न होवई लिखिआ धुरि संजोग ॥ वडभागी मेरा प्रभु मिलै तां उतरहि सभि बिओग ॥ नानक कउ प्रभ राखि लेहि मेरे साहिब बंदी मोच ॥ कतिक होवै साधसंगु बिनसहि सभे सोच ॥ ९ ॥

कार्तिक माह में हे प्राणी ! पूर्व जन्मों में किए शुभ–अशुभ कर्मों के फल भोगने ही पड़ते हैं। अत : किसी अन्य पर दोष लगाना न्यायसंगत नहीं। पारब्रह्म–प्रभु को विस्मृत करके मनुष्य को समस्त रोग लग जाते हैं। जो व्यक्ति राम से विमुख हो जाते हैं, वे जन्म–जन्म के लिए जुदा हो जाते हैं। जितने भी भोगने वाले पदार्थ हैं, वह एक क्षण में ही उसके लिए कड़वे हो जाते हैं। फिर अपने रोज के दुःख किसके समक्ष रोएँ ? जुदाई को दूर करने के लिए कोई भी मध्यस्थ नहीं बनता। मनुष्य के करने से कुछ भी नहीं हो सकता, यदि प्रारम्भ से ही मनुष्य की किस्मत में ऐसा संयोग लिखा हुआ था। सौभाग्य से मेरा प्रभु मिल जाता है तो जुदाई के समूह दुख दूर हो जाते हैं। नानक का कथन है कि हे मेरे प्रभु ! तू जीवों को माया के बंधनों से मुक्त करने वाला है इसलिए नानक को भी बंधनों से मुक्त कर दो। यदि कार्तिक के महीने में संतों की संगति हो जाए तो समस्त चिंताएँ मिट जाती हैं॥ ९॥

मंघिरि माहि सोहंदीआ हरि पिर संगि बैठड़ीआह ॥ तिन की सोभा किआ गणी जि साहिबि मेलड़ीआह ॥ तनु मनु मउलिआ राम सिउ संगि साध सहेलड़ीआह ॥ साध जना ते बाहरी से रहनि इकेलड़ीआह ॥ तिन दुखु न कबहू उतरै से जम कै वसि पड़ीआह ॥ जिनी राविआ प्रभु आपणा से दिसनि नित खड़ीआह ॥ रतन जवेहर लाल हरि कंठि तिना जड़ीआह ॥ नानक बांछै धूड़ि तिन प्रभ सरणी दरि पड़ीआह ॥ मंघिरि प्रभु आराधणा बहुड़ि न जनमड़ीआह ॥ १० ॥

मार्गशीर्ष महीने में जीव–स्त्रियाँ भगवान के साथ बैठी भजन करती हुई बहुत सुन्दर लगती हैं। उनकी शोभा वर्णन नहीं की जा सकती, जिनको ईश्वर ने अपने साथ मिला लिया है। अपनी सत्संगी सहेलियों के साथ सत्संग में मिलकर राम का सिमरन करने से मेरा मन एवं तन प्रफुल्लित हो गया है। जो जीव–स्त्रियाँ संतजनों की संगति से वंचित रहती हैं, वे पति–प्रभु से जुदा होने के कारण अकेली रहती हैं। उनका पति–प्रभु से जुदाई का दुःख कभी दूर नहीं होता और वह यमदूत के पंजे में फँस जाती हैं। जिन्होंने अपने ईश्वर के साथ रमण किया है, वह उसकी सेवा में सदैव खड़ी दिखती हैं। उनका कण्ठ प्रभु–नाम रुपी रत्न–जवाहर, माणिकों तथा हीरों से जड़ित हुआ है। हे नानक ! वह उनके चरणों की धूलि का अभिलाषी है, जो ईश्वर के दरबार पर उसकी शरण में पड़े हैं। जो लोग मार्गशीर्ष महीने में ईश्वर की आराधना करते हैं, वह मुड़ कर जीवन–मृत्यु के बंधन में नहीं पड़ते और मुक्त हो जाते हैं।। १०।।

पोखि तुखारु न विआपई कंठि मिलिआ हरि नाहु ॥ मनु बेधिआ चरनारबिंद दरसनि लगड़ा साहु ॥ ओट गोविंद गोपाल राइ सेवा सुआमी लाहु ॥ बिखिआ पोहि न सकई मिलि साधू गुण गाहु ॥ जह ते उपजी तह मिली सची प्रीति समाहु ॥ करु गहि लीनी पारब्रहमि बहुड़ि न विछुड़ीआहु ॥ बारि जाउ लख बेरीआ हरि सजणु अगम अगाहु ॥ सरम पई नाराइणै नानक दरि पईआहु ॥ पोखु सोहंदा सरब सुख जिसु बखसे वेपरवाहु ॥ ११ ॥

पोष के महीने में हरि–प्रभु जिस जीव–स्त्री को उसके गले से लगकर मिलता है, उसे शीत नहीं लगती। प्रभु के चरण–कमलों का प्रेम उसके मन को बांधकर रखता है और उसकी सुरति मालिक–प्रभु के दर्शनों में लगी रहती है। वह गोविन्द गोपाल का सहारा लेती है और अपने स्वामी की सेवा करके नाम रूपी लाभ प्राप्त करती है। विष रूपी माया उसे प्रभावित नहीं कर सकती और वह संतों से मिलकर भगवान की महिमा गायन करती रहती है। वह जिस प्रभु से उत्पन्न हुई है, उसे मिलकर उसके प्रेम में लीन रहती है। पारब्रह्म प्रभु ने उसका हाथ पकड़ लिया है, वह पुनः जुदा नहीं होती। मैं लाख बार अपने अगम्य एवं अगोचर साजन हरि पर कुर्बान जाता हूँ। हे नानक ! जो जीव–स्त्रियाँ नारायण के द्वार पर नतमस्तक हो गई हैं, वह उनकी लाज–प्रतिष्ठा रखता है। पोष महीना उसके लिए सुन्दर एवं सर्वसुख प्रदान करने वाला है, जिसको बेपरवाह परमेश्वर क्षमा कर देता है।। ११।।

माघि मजनु संगि साधूआ धूड़ी करि इसनानु ॥ हरि का नामु धिआइ सुणि सभना नो करि दानु ॥ जनम करम मलु उतरै मन ते जाइ गुमानु ॥ कामि करोधि न मोहीऐ बिनसै लोभु सुआनु ॥ सचै मारगि चलदिआ उसतति करे जहानु ॥ अठसठि तीरथ सगल पुंन जीअ दइआ परवानु ॥ जिस नो देवै दइआ करि सोई पुरखु सुजानु ॥ जिना मिलिआ प्रभु आपणा नानक तिन कुरबानु ॥ माघि सुचे से कांढीअहि जिन पूरा गुरु मिहरवानु ॥ १२ ॥

माघ के महीने में साधुओं की चरणरज में स्नान करने को तीर्थ स्थलों के स्नान तुल्य समझो। भगवान के नाम का ध्यान करो एवं उसे सुनो तथा दूसरों को भी नाम का दान दो। नाम–सिमरन से जन्म–जन्मान्तरों की दुष्कर्मों की मलिनता दूर हो जाती है और मन का अहंकार दूर हो जाता है। इस तरह काम–क्रोध मोहित नहीं करते और लालच का कूकर (कुत्ता) नाश हो जाता है। संसार उनकी महिमा करता है जो सद्‌मार्ग पर चलते हैं। अठसठ तीर्थ स्थानों पर स्नान करने एवं समस्त दान–पुण्य करने से प्राणियों पर दया करना अधिकतर स्वीकार्य है। जिस पर दया करके ईश्वर यह गुण प्रदान करता है वह बुद्धिमान पुरुष है। नानक उन पर बलिहारी जाता है जो अपने ईश्वर से मिल गए हैं। माघ महीने में वहीं पवित्र कहे जाते हैं जिन पर पूर्ण गुरदेव जी मेहरबान हैं॥ १२॥

फलगुणि अनंद उपारजना हरि सजण प्रगटे आइ ॥ संत सहाई राम के करि किरपा दीआ मिलाइ ॥ सेज सुहावी सरब सुख हुणि दुखा नाही जाइ ॥ इछ पुनी वडभागणी वरु पाइआ हरि राइ ॥ मिलि सहीआ मंगलु गावही गीत गोविंद अलाइ ॥ हरि जेहा अवरु न दिसई कोई दूजा लवै न लाइ ॥ हलतु पलतु सवारिओनु निहचल दितीअनु जाइ ॥ संसार सागर ते रखिअनु बहुड़ि न जनमै धाइ ॥ जिहवा एक अनेक गुण तरे नानक चरणी पाइ ॥ फलगुणि नित सलाहीऐ जिस नो तिलु न तमाइ ॥ १३ ॥

फाल्गुन के महीने में केवल वही आनंद प्राप्त करते हैं, जिनके हृदय में साजन हरि प्रभु प्रकट हुआ है। संतजन राम से मिलन करवाने हेतु जीव की सहायता कहते हैं। प्रभु ने कृपा करके संतों से मिला दिया है। उसकी हृदय रूपी शैय्या बहुत सुन्दर है, अब सर्व सुख प्राप्त हुए हैं और दुखों के लिए अब कोई स्थान नहीं। भाग्यशाली जीव–स्त्री की इच्छा पूरी हो गई है, उसे हरि–प्रभु वर के रूप में मिल गया है। वह अपनी सत्संगी सखियों सहित मंगल गीत गायन करती है और वह गोविन्द का ही भजन करती रहती है। हरि–प्रभु समान उसे अन्य कोई दिखाई नहीं देता। उस प्रभु के समान अन्य कोई नहीं है। प्रभु ने उसका लोक–परलोक संवार दिया है और उसे अटल स्थान दे दिया है। प्रभु ने उसे भवसागर से बचा लिया है और वह पुनः जन्म–मरण के चक्र में नहीं आएगी। हे नानक ! मनुष्य की रसना तो एक है परन्तु प्रभु के गुण असीम हैं। मनुष्य उसके चरणों से लगकर भवसागर से पार हो जाता है। हे मनुष्य ! फाल्गुन के महीने में हमें सदैव उस प्रभु की महिमा–स्तुति करनी चाहिए, जिसे तिल मात्र भी अपनी महिमा करवाने की लालसा नहीं॥ १३॥

जिनि जिनि नामु धिआइआ तिन के काज सरे ॥ हरि गुरु पूरा आराधिआ दरगह सचि खरे ॥ सरब सुखा निधि चरण हरि भउजलु बिखमु तरे ॥ प्रेम भगति तिन पाईआ बिखिआ नाहि जरे ॥ कूड़ गए दुबिधा नसी पूरन सचि भरे ॥ पारब्रहमु प्रभु सेवदे मन अंदरि एकु धरे ॥ माह दिवस मूरत भले जिस कउ नदरि करे ॥ नानकु मंगै दरस दानु किरपा करहु हरे ॥ १४ ॥ १ ॥

जिन–जिन प्राणियों ने भगवान का नाम–सिमरन किया है, उनके समस्त कार्य सम्पूर्ण हुए हैं। जो परमेश्वर स्वरूप पूर्ण गुरु का चिन्तन करते हैं, वह हरि के दरबार में सच्चे एवं शुद्ध सिद्ध हुए हैं। ईश्वर के चरण सर्व–सुखों का भण्डार हैं। प्रभु द्वारा मनुष्य भयानक एवं विषम संसार–सागर से पार हो जाता है। वे प्रेमा–भक्ति को प्राप्त होते हैं और विषय–वासनाओं में नहीं जलते। उनका झूठ लुप्त हो गया है और द्वैत भाव भाग गया है और वह सत्य के साथ पूर्ण तौर पर निश्चय से भरे हुए हैं। वह पारब्रह्म प्रभु की भरपूर सेवा करते हैं और अद्वितीय प्रभु को अपने हृदय में धारण करते हैं। सारे महीने, दिवस एवं मुहूर्त उनके लिए भले हैं जिन पर प्रभु दया–दृष्टि करता है। हे परमात्मा ! नानक तेरे दर्शनों के दान की याचना करता है। हे प्रभु ! अपनी कृपा उस पर न्यौछावर कीजिए॥ १४॥ १॥

माझ महला ५ दिन रैणि १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सेवी सतिगुरु आपणा हरि सिमरी दिन सभि रैण ॥ आपु तिआगि सरणी पवां मुखि बोली मिठड़े वैण ॥ जनम जनम का विछुड़िआ हरि मेलहु सजणु सैण ॥ जो जीअ हरि ते विछुड़े से सुखि न वसनि भैण ॥ हरि पिर बिनु चैनु न पाईऐ खोजि डिठे सभि गैण ॥ आप कमाणै विछुड़ी दोसु न काहू देण ॥ करि किरपा प्रभ राखि लेहु होरु नाही करण करेण ॥ हरि तुधु विणु खाकू रूलणा कहीऐ किथै वैण ॥ नानक की बेनंतीआ हरि सुरजनु देखा नैण ॥ १ ॥ जीअ की बिरथा सो सुणे हरि संम्रिथ पुरखु अपारु ॥ मरणि जीवणि आराधणा सभना का आधारु ॥ ससुरै पेईऐ तिसु कंत की वडा जिसु परवारु ॥ ऊचा अगम अगाधि बोध किछु अंतु न पारावारु ॥ सेवा सा तिसु भावसी संता की होइ छारु ॥ दीना नाथ दैआल देव पतित उधारणहारु ॥ आदि जुगादी रखदा सचु नामु करतारु ॥ कीमति कोइ न जाणई को नाही तोलणहारु ॥ मन तन अंतरि वसि रहे नानक नही सुमारु ॥ दिनु रैणि जि प्रभ कंउ सेवदे तिन कै सद बलिहार ॥ २ ॥ संत अराधनि सद सदा सभना का बखसिंदु ॥ जीउ पिंडु जिनि साजिआ करि किरपा दितीनु जिंदु ॥ गुर सबदी आराधीऐ जपीऐ निरमल मंतु ॥ कीमति कहणु न जाईऐ परमेसुरु बेअंतु ॥ जिसु मनि वसै नराइणो सो कहीऐ भगवंतु ॥ जीअ की लोचा पूरीऐ मिलै सुआमी कंतु ॥ नानकु जीवै जपि हरी दोख सभे ही हंतु ॥ दिनु रैणि जिसु न विसरै सो हरिआ होवै जंतु ॥ ३ ॥ सरब कला प्रभ पूरणो मंञु निमाणी थाउ ॥ हरि ओट गही मन अंदरे जपि जपि जीवां नाउ ॥ करि किरपा प्रभ आपणी जन धूड़ी संगि समाउ ॥ जिउ तूं राखहि तिउ रहा तेरा दिता पैना खाउ ॥ उदमु सोई कराइ प्रभ मिलि साधू गुण गाउ ॥ दूजी जाइ न सुझई किथै कूकण जाउ ॥ अगिआन बिनासन तम हरण ऊचे अगम अमाउ ॥ मनु विछुड़िआ हरि मेलीऐ नानक एहु सुआउ ॥ सरब कलिआणा तितु दिनि हरि परसी गुर के पाउ ॥ ४ ॥ १ ॥

हे प्रभु ! मैं अपने सतिगुरु की सेवा करके समस्त दिन–रात्रि तेरी आराधना करता रहूँ। अपना अहंकार त्याग कर मैं ईश्वर का आश्रय ग्रहण करूँ और अपने मुख से मधुर वचन उच्चारण करूँ। हे मेरे मित्र एवं संबंधी प्रभु ! अनेक जन्मों से मैं तुझ से बिछुड़ा हुआ हूँ, मुझे अपने साथ मिला लो। हे मेरी बहन ! जो प्राणी ईश्वर से बिछुड़े हुए हैं, वह सुख में नहीं बसते। मैंने समस्त मण्डल खोज कर देख लिए हैं। ईश्वर पति के अलावा सुख प्राप्त नहीं होता। क्योंकि अपने मंदे कर्मों ने ही मुझे ईश्वर से जुदा किया है। फिर मैं किस पर दोष लगाऊँ ? हे नाथ ! कृपा करके मेरी रक्षा करें। तेरे सिवाय अन्य कोई भी कुछ करने एवं करवाने में समर्थ नहीं। हे हरि ! तेरे अलावा धूल में मिलना है। मैं अपने दुखों के वचन किसके समक्ष व्यक्त करूँ ? नानक यही प्रार्थना करता है, अपने नेत्रों से मैं महान परमात्मा के ही दर्शन करूँ॥ १॥ जो सर्वशक्तिमान एवं अनन्त हरि है, वही प्राणी की पीड़ा को सुनता है। मृत्यु एवं जीवन में उसकी ही आराधना करनी चाहिए, जो सबका आधार है। लोक–परलोक में जीव–स्त्री उस प्रभु की है, जिसका बड़ा परिवार है। प्रभु सर्वोच्च एवं अगम्य है। उसका ज्ञान अथाह है और उसके आर–पार का कोई अन्त नहीं। उसे वही सेवा भली लगती है जो सन्तों की चरण धूलि बनकर की जाती है। वह परमात्मा दीनानाथ एवं दयालु है और पापियों का कल्याण करने वाला है। सृष्टि के आदि–जुगादि काल से ही सृजनहार का सत्य नाम भक्तों की रक्षा करता रहा है। स्वामी के मूल्य को कोई भी नहीं जानता और न ही कोई इसका वजन करने वाला है। हे नानक ! जो परमात्मा गणना से परे है, वह मन एवं तन में निवास कर रहा है। मैं सदैव उन पर बलिहारी जाता

हूँ जो परमात्मा की दिन–रात सेवा करते हैं॥ २॥ संतजन हमेशा ही भगवान की आराधना करते रहते हैं, जो समस्त जीवों पर क्षमावान है और जिसने आत्मा एवं तन की सृजना की है और दया करके प्राण प्रदान किए हैं। हे प्राणी! गुरु के शब्द द्वारा उस प्रभु की आराधना करनी चाहिए और निर्मल मंत्र रूपी नाम को स्मरण करना चाहिए। उस अनन्त परमेश्वर का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। उस व्यक्ति को ही भाग्यवान कहा जाता है, जिसके हृदय में नारायण निवास करता है। प्रभु–पति को मिलने से हृदय की समस्त अभिलाषाएँ पूर्ण हो जाती हैं। नानक ईश्वर की स्तुति करने से जीता है और उसके समस्त पाप नष्ट हो गए हैं। दिन–रात जो ईश्वर को विस्मृत नहीं करता वह प्राणी कृतार्थ हो जाता है॥ ३॥ सर्वकला सम्पूर्ण परमेश्वर परिपूर्ण है। मुझ निराश्रित का तू ही आश्रय है। अपने हृदय में मैंने प्रभु का आश्रय लिया हुआ है और मैं नाम स्मरण एवं चिन्तन करने से जीता हूँ। हे ईश्वर! अपनी ऐसी कृपा कीजिए जो तेरे दासों की चरणधूलि के साथ मैं मिल जाऊँ। हे नाथ! जिस तरह तुम मुझे रखते हो, वैसे ही मैं रहता हूँ। जो तुम मुझे देते हो, मैं वही पहनता और खाता हूँ। हे प्रभु! मुझे वह उपाय प्रदान करो जिससे मैं संतों से मिलकर तेरा यशोगान करूँ। तेरे सिवाय मैं किसी अन्य का ख्याल नहीं कर सकता। फिर मैं विनती करने के लिए कहाँ जाऊँ? हे प्रभु! तुम अज्ञान का नाश करने वाले हो, तमोगुण के भी विनाशक, सर्वोच्च, अगम्य एवं माप से रहित हो। हे प्रभु! नानक का एक यही स्वार्थ है कि मुझ बिछुड़े हुए मन को अपने साथ मिला लो। हे प्रभु! उस दिन सर्व कल्याण होगा अर्थात् मोक्ष जानूंगा, जब मैं गुरु के चरण स्पर्श करूँगा॥ ४॥ १॥

वार माझ की तथा सलोक महला १

मलक मुरीद तथा चंद्रहड़ा सोहीआ की धुनी गावणी ॥ १ ओं सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

सलोकु मः १ ॥ गुरु दाता गुरु हिवै घरु गुरु दीपकु तिह लोइ ॥ अमर पदारथु नानका मनि मानिऐ सुखु होइ ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ गुरु नाम का दाता है और गुरु ही हिम अर्थात् शांति का घर है। गुरु ही तीनों लोकों में ज्ञान का प्रकाश करने वाला दीपक है। हे नानक! नाम रूपी पदार्थ जीव को अमर करने वाला है। यदि मनुष्य का मन गुरु की शरण लेने हेतु विश्वस्त हो जाए तो सुख उपलब्ध हो जाता है॥ १॥

मः १ ॥ पहिलै पिआरि लगा थण दुधि ॥ दूजै माइ बाप की सुधि ॥ तीजै भया भाभी बेब ॥ चउथै पिआरि उपंनी खेड ॥ पंजवै खाण पीअण की धातु ॥ छिवै कामु न पुछै जाति ॥ सतवै संजि कीआ घर वासु ॥ अठवै क्रोधु होआ तन नासु ॥ नावै धउले उभे साह ॥ दसवै दधा होआ सुआह ॥ गए सिगीत पुकारी धाह ॥ उडिआ हंसु दसाए राह ॥ आइआ गइआ मुइआ नाउ ॥ पिछै पतलि सदिहु काव ॥ नानक मनमुखि अंधु पिआरु ॥ बाझु गुरू डुबा संसारु ॥ २ ॥

महला १॥ अपने जीवन की प्रथम अवस्था बचपन में प्राणी माता के दुग्ध से प्रेम पाता है। द्वितीय अवस्था में उसको अपने माता–पिता का ज्ञान होता है। तृतीय अवस्था में वह अपने भाई, भाभी एवं अपनी बहन को पहचानता है। चौथी अवस्था में उसमें खेलने की रुचि उत्पन्न हो जाती है। पंचम अवस्था में वह खाने–पीने की ओर दौड़ता है। छठी अवस्था में उसके भीतर कामवासना उत्पन्न होती है और वह कामवासना से अंधा हुआ जाति–कुजाति भी नहीं देखता। सप्तम अवस्था में वह धन–दौलत एकत्रित करता है और अपने घर में निवास कर लेता है। आठवीं अवस्था में उसका तन क्रोध में नष्ट हो जाता है। नौवीं अवस्था में उसके बाल–सफेद हो जाते हैं, और उसका सांस लेना कठिन हो जाता है। दसवीं अवस्था में उसका शरीर जल कर भस्म हो जाता है, उसके संगी साथी चित्ता तक उसके साथ जाते

हैं और अश्रु बहाते हैं। राजहंस (आत्मा) उड़ जाती है और जाने का मार्ग पूछती है। वह इस संसार में आया था और चला गया है और उसका नाम भी मर मिट गया है। उसके उपरांत पत्तलों पर भोजन दिया जाता है और कौए बुलाए जाते हैं अर्थात् श्राद्ध किए जाते हैं। हे नानक! स्वेच्छाचारी जीव का जगत् से मोह ज्ञानहीनों वाला है। गुरु के बिना सारा जगत् ही भवसागर में डूब रहा है॥ २॥

मः १ ॥ दस बालतणि बीस रवणि तीसा का सुंदरु कहावै ॥ चालीसी पुरु होइ पचासी पगु खिसै सठी के बोढेपा आवै ॥ सतरि का मतिहीणु असीहां का विउहारु न पावै ॥ नवै का सिहजासणी मूलि न जाणै अप बलु ॥ ढंढोलिमु ढूढिमु डिठु मै नानक जगु धूए का धवलहरु ॥ ३ ॥

महला १॥ मनुष्य के दस वर्ष बचपन में बीत जाते हैं। बीस वर्ष का युवक और तीस वर्ष का सुन्दर कहा जाता है। चालीस पर वह पूर्ण होता है। पचास वर्ष में उसके पग पीछे मुड़ जाते हैं और साठ वर्ष में वृद्धावस्था आ जाती है। सत्तर वर्ष में उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है और अस्सी वर्ष की आयु में वह अपने कार्य नहीं कर सकता। नब्बे वर्ष में उसका आसन बिस्तर पर होता है और क्षीण होने के कारण वह बिल्कुल नहीं समझता कि शक्ति क्या है? खोज–तलाश करके मैंने देख लिया है, हे नानक! यह संसार धुएँ का क्षणभंगुर महल है॥ ३॥

पउड़ी ॥ तूं करता पुरखु अगंमु है आपि स्रिसटि उपाती ॥ रंग परंग उपारजना बहु बहु बिधि भाती ॥ तूं जाणहि जिनि उपाईऐ सभु खेलु तुमाती॥ इकि आवहि इकि जाहि उठि बिनु नावै मरि जाती ॥ गुरमुखि रंगि चलूलिआ रंगि हरि रंगि राती ॥ सो सेवहु सति निरंजनो हरि पुरखु बिधाती ॥ तूं आपे आपि सुजाणु है वड पुरखु वडाती ॥ जो मनि चिति तुधु धिआइदे मेरे सचिआ बलि बलि हउ तिन जाती ॥ १ ॥

पउड़ी॥ हे कर्त्ता प्रभु! तू सर्वशक्तिमान एवं अगम्य है। तूने स्वयं सृष्टि की रचना की है। तूने अनेक प्रकार के रंग तथा विविध प्रकार के पक्षियों के रंग–बिरंगे पंख उपजाए हैं। तू ही जिसने यह सृष्टि–रचना की है, इस भेद को जानता है कि क्यों रचना की है। यह जगत् तेरी एक लीला है। कई प्राणी जन्म लेते हैं और कई संसार त्याग कर चले जाते हैं। नाम सिमरन के बिना सभी नाश हो जाते हैं। गुरमुख सदैव भगवान के प्रेम में गहरे लाल रंग की भाँति मग्न रहते हैं। उस सदैव सत्य एवं निरंजन प्रभु की सेवा करो जो हम सबका विधाता है। हे प्रभु! तू स्वयं चतुर है और जगत् में सबसे बड़ा महापुरुष है। हे मेरे सत्य परमेश्वर! मैं उन पर तन–मन से न्यौछावर हूँ जो एकाग्रचित होकर तेरा ध्यान करते रहते हैं॥ १॥

सलोक मः १ ॥ जीउ पाइ तनु साजिआ रखिआ बणत बणाइ ॥ अखी देखै जिहवा बोलै कंनी सुरति समाइ ॥ पैरी चलै हथी करणा दिता पैनै खाइ ॥ जिनि रचि रचिआ तिसहि न जाणै अंधा अंधु कमाइ ॥ जा भजै ता ठीकरु होवै घाड़त घड़ी न जाइ ॥ नानक गुर बिनु नाहि पति पति विणु पारि न पाइ ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ भगवान ने पंचभूतक तन की रचना करके उसमें प्राण कला प्रदान की है और इसकी रक्षा का प्रबंध किया है। मनुष्य अपने नेत्रों से देखता है, और जिह्वा से बोलता है। इसके कानों में सुनने की शक्ति समाई हुई है। वह पैरों से चलता है, हाथों से कार्य करता है और जो कुछ उसे मिलता है, उसको पहनता एवं सेवन करता है। लेकिन बड़े दुःख की बात है कि जिस परमात्मा ने मानव की रचना की है, उसे यह जानता ही नहीं। अंधा मनुष्य ज्ञानहीन होने के कारण बुरे कर्म करता

है। जब मनुष्य का शरीर रूपी घड़ा टूटता है तो वह टुकड़े–टुकड़े हो जाता है और इसकी बनावट पुनः नहीं की जा सकती। हे नानक ! गुरु के बिना मान–सम्मान नहीं मिलता और इस मान–सम्मान के अलावा मनुष्य संसार से पार नहीं हो सकता॥ १॥

मः २ ॥ देंदे थावहु दिता चंगा मनमुखि ऐसा जाणीऐ ॥ सुरति मति चतुराई ता की किआ करि आखि वखाणीऐ ॥ अंतरि बहि कै करम कमावै सो चहु कुंडी जाणीऐ ॥ जो धरमु कमावै तिसु धरम नाउ होवै पापि कमाणै पापी जाणीऐ ॥ तूं आपे खेल करहि सभि करते किआ दूजा आखि वखाणीऐ ॥ जिचरु तेरी जोति तिचरु जोती विचि तूं बोलहि विणु जोती कोई किछु करिहु दिखा सिआणीऐ ॥ नानक गुरमुखि नदरी आइआ हरि इको सुघड़ु सुजाणीऐ ॥ २ ॥

महला २॥ मनमुख ऐसा समझता है कि देने वाले प्रभु से उसकी दी हुई वस्तु उत्तम है। उसकी बुद्धिमत्ता, समझ एवं चतुरता बारे क्या कथन किया जाए ? चाहे वह अपने घर में बैठकर छिपकर दुष्कर्म करता है परन्तु फिर भी चारों दिशाओं में लोगों को इनका पता लग जाता है। जो व्यक्ति धर्म करता है, उसका नाम धर्मात्मा हो जाता है और जो पाप करता है, वह पापी जाना जाता है। हे सृजनहार प्रभु ! तुम स्वयं ही समस्त लीलाएँ रचते हो। किसी अन्य की क्यों बात एवं कथा करें ? हे प्रभु ! जब तक तेरी ज्योति मानव शरीर में है, तब तक तुम ज्योतिमान देहि में बोलते हो। यदि कोई प्राणी दिखा दे कि उसने तेरी ज्योति के अलावा कुछ कर लिया है तो मैं उसको बुद्धिमान कहूँगा। हे नानक ! गुरमुख को तो सर्वत्र एक चतुर एवं सर्वज्ञ प्रभु ही दिखाई देता है॥ २॥

पउड़ी ॥ तुधु आपे जगतु उपाइ कै तुधु आपे धंधै लाइआ ॥ मोह ठगउली पाइ कै तुधु आपहु जगतु खुआइआ ॥ तिसना अंदरि अगनि है नह तिपतै भुखा तिहाइआ ॥ सहसा इहु संसारु है मरि जंमै आइआ जाइआ ॥ बिनु सतिगुर मोहु न तुटई सभि थके करम कमाइआ ॥ गुरमती नामु धिआईऐ सुखि रजा जा तुधु भाइआ ॥ कुलु उधारे आपणा धंनु जणेदी माइआ ॥ सोभा सुरति सुहावणी जिनि हरि सेती चितु लाइआ ॥ २ ॥

पउड़ी॥ हे प्रभु ! तुमने स्वयं ही जगत् को उत्पन्न किया और तुमने स्वयं ही इसको कामकाज में लगा दिया है। सांसारिक मोह रूपी नशीली बूटी खाने के लिए देकर तुमने स्वयं ही संसार को कुमार्ग लगा दिया है। प्राणी के भीतर तृष्णा की अग्नि विद्यमान है। वह तृप्त नहीं होता और भूखा तथा प्यासा ही रहता है। यह संसार सहसा भूल–भुलैया है। यह मरता, जन्म लेता, आता और जाता रहता है। सतिगुरु के बिना मोह नहीं टूटता। सभी प्राणी अपने कर्म करके थक चुके हैं। हे स्वामी ! जब तुझे अच्छा लगता है, गुरु के उपदेश से प्राणी तेरे नाम की आराधना करके प्रसन्नता से संतुष्ट हो जाता है। वह अपने वंश का कल्याण कर लेता है। ऐसे व्यक्ति को जन्म देने वाली माता धन्य है। जिन्होंने प्रभु से अपना चित्त लगाया है, उनकी जगत् में बड़ी शोभा होती है एवं उनकी सुरति सुन्दर हो जाती है॥ २॥

सलोकु मः २ ॥ अखी बाझहु वेखणा विणु कंना सुनणा ॥ पैरा बाझहु चलणा विणु हथा करणा ॥ जीभै बाझहु बोलणा इउ जीवत मरणा ॥ नानक हुकमु पछाणि कै तउ खसमै मिलणा ॥ १ ॥

श्लोक महला २॥ यहाँ पर गुरु जी जीवनमुक्त मनुष्य के लक्षण इस प्रकार बताते हैं कि नेत्रों के बिना देखना, कानों के बिना सुनना, पैरों के बिना चलना, हाथों के बिना कार्य करना और जिह्वा के बिना वचन करना, अर्थात् नेत्रों से नहीं सुरति द्वारा ईश्वर को देखना चाहिए और स्थूल कानों से

नहीं अपितु श्रंद्धा से प्रभु का यशोगान श्रवण करना चाहिए और हाथों के बिना मानसिक पूजा रूपी कर्म करना चाहिए, स्थूल जिह्वा के बिना प्रेम जिह्वा से उसका यश करना चाहिए। हे नानक ! प्रभु का हुक्म पहचान कर प्राणी अपने पति-परमेश्वर को मिल सकता है॥ १॥

मः २ ॥ दिसै सुणीऐ जाणीऐ साउ न पाइआ जाइ ॥ रुहला टुंडा अंधुला किउ गलि लगै धाइ ॥ भै के चरण कर भाव के लोइण सुरति करेइ ॥ नानकु कहै सिआणीए इव कंत मिलावा होइ ॥ २ ॥

महला २॥ मनुष्य को अपने नेत्रों से भगवान सर्वत्र दिखाई देता भी है, वह महापुरुषों से सुनता भी है कि वह सर्वव्यापक है और उसे ज्ञान हो भी जाता है कि वह हर जगह मौजूद है परन्तु फिर भी वह उससे मिलकर आनंद प्राप्त नहीं कर सकता। वह भगवान को मिले भी कैसे? क्योंकि उसको मिलने हेतु उसके पास पैर नहीं है, हाथ नहीं है और आँखे भी नहीं हैं। एक लंगड़ा, अपाहिज और नेत्रहीन पुरुष किस तरह दौड़कर परमात्मा को गले लगा सकता है ? इसलिए नानक कहते हैं कि हे चतुर जीव-स्त्री ! प्रभु से इस तरह मिलन हो सकता है कि तू ईश्वर के भय को अपने चरण, उसके प्रेम को अपने हाथ एवं उसके ज्ञान को अपने नेत्र बना॥ २॥

पउड़ी ॥ सदा सदा तूं एकु है तुधु दूजा खेलु रचाइआ ॥ हउमै गरबु उपाइ कै लोभु अंतरि जंता पाइआ ॥ जिउ भावै तिउ रखु तू सभ करे तेरा कराइआ ॥ इकना बखसहि मेलि लैहि गुरमती तुधै लाइआ ॥ इकि खड़े करहि तेरी चाकरी विणु नावै होरु न भाइआ ॥ होरु कार वेकार है इकि सची कारै लाइआ ॥ पुतु कलतु कुटंबु है इकि अलिपतु रहे जो तुधु भाइआ ॥ ओहि अंदरहु बाहरहु निरमले सचै नाइ समाइआ ॥ ३ ॥

पउड़ी॥ हे प्रभु ! तुम सदैव एक हो, अन्य क्रीड़ा रूपी संसार तूने माया द्वारा पैदा किया है। हे नाथ ! तूने अहंकार एवं ममत्व पैदा करके प्राणियों के भीतर लोभ इत्यादि अवगुणों को डाल दिया है। हे स्वामी ! जिस तरह तुझे अच्छा लगता है, वैसे ही जीवों को रखो। प्रत्येक प्राणी वैसा ही कर्म करता है जिस तरह तुम करवाते हो। कुछ जीवों को तूने क्षमा करके अपने साथ मिला लिया है और कुछ जीवों को तूने ही गुरु की मति में लगाया है। कई तेरे मन्दिर में खड़े होकर भक्ति करते हैं। नाम के अलावा उनको कुछ भी अच्छा नहीं लगता। कईओं को तुमने सत्य कर्म में लगा दिया है। कोई अन्य कर्म उनके लिए लाभहीन है। जिन प्राणियों का कर्म तुझे लुभाया है, वे प्राणी स्त्री, पुत्र एवं परिवार से तटस्थ रहते हैं। हे प्रभु ! ऐसे व्यक्ति अन्दर एवं बाहर से पवित्र हैं और वे सत्य नाम में लीन रहते हैं॥ ३॥

सलोकु मः १ ॥ सुइने कै परबति गुफा करी कै पाणी पइआलि ॥ कै विचि धरती कै आकासी उरधि रहा सिरि भारि ॥ पुरु करि काइआ कपड़ु पहिरा धोवा सदा कारि ॥ बगा रता पीअला काला बेदा करी पुकार ॥ होइ कुचीलु रहा मलु धारी दुरमति मति विकार ॥ ना हउ ना मै ना हउ होवा नानक सबदु वीचारि ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ चाहे मैं स्वर्गलोक में जाकर सोने के सुमेर पर्वत पर रहने के लिए गुफा बना लूँ, चाहे पाताललोक में जाकर जल में रहूँ, चाहे मैं धरती अथवा आकाश के किसी लोक में सिर के बल उलटा खड़ा होकर तपस्या करूँ, चाहे मैं पूरी तरह शरीर को स्वच्छ करके वस्त्र पहनूँ और हमेशा ही यह कर्म करके अपने शरीर एवं वस्त्रों को स्वच्छ करता रहूँ, चाहे मैं सफेद, लाल, पीले एवं काले वस्त्र पहनकर चारों वेद-ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद का पाठ करूँ, चाहे मैं गन्दा एवं मलिन रहूँ। परन्तु यह सब कर्म दुर्बुद्धि होने के कारण व्यर्थ ही हैं। हे नानक ! मैं केवल शब्द का चिन्तन करता हूँ, जिसके अलावा किसी भी मूल्य का मैं नहीं था, न ही मैं हूँ और न ही मैं होऊंगा॥ १॥

मः १ ॥ वसत्र पखालि पखाले काइआ आपे संजमि होवै ॥ अंतरि मैलु लगी नही जाणै बाहरहु मलि मलि धोवै ॥ अंधा भूलि पइआ जम जाले ॥ वसतु पराई अपुनी करि जानै हउमै विचि दुखु घाले ॥ नानक गुरमुखि हउमै तुटै ता हरि हरि नामु धिआवै ॥ नामु जपे नामो आराधे नामे सुखि समावै ॥ २ ॥

महला १॥ जो व्यक्ति अपने वस्त्र धो कर एवं स्नान करके संयमी बन बैठता है, उसे अपने मन में लगी अहंकार रूपी मैल का पता ही नहीं लगता और वह अपने शरीर को बाहर से ही रगड़ रगड़ कर स्वच्छ करता रहता है। वह ज्ञानहीन होता है और कुमार्ग में पड़कर यम के जाल में फँस जाता है। वह पराई वस्तु को अपनी समझता है और अहंकारवश बड़े दुख सहन करता है। हे नानक ! जब गुरु के माध्यम से मनुष्य का अहंकार नष्ट हो जाता है तो वह हरि—परमेश्वर के नाम का ध्यान करता रहता है। वह नाम का जाप करता है, नाम को स्मरण करता है और नाम द्वारा सुख में समा जाता है॥ २॥

पवड़ी ॥ काइआ हंसि संजोगु मेलि मिलाइआ ॥ तिन ही कीआ विजोगु जिनि उपाइआ ॥ मूरखु भोगे भोगु दुख सबाइआ ॥ सुखहु उठे रोग पाप कमाइआ ॥ हरखहु सोगु विजोगु उपाइ खपाइआ ॥ मूरख गणत गणाइ झगड़ा पाइआ ॥ सतिगुर हथि निबेड़ु झगड़ु चुकाइआ ॥ करता करे सु होगु न चलै चलाइआ ॥ ४ ॥

पउड़ी॥ भगवान ने संयोग बनाकर तन एवं आत्मा का मिलन कर दिया है। जिस प्रभु ने इनकी रचना की है, उसी ने उनको जुदा किया है। मूर्ख प्राणी भोग भोगता रहता है और यह भोग ही उसके तमाम दुःखों का कारण बनता है। वह सुख की उपलब्धि हेतु पाप करता है और इन सुखों से उसके शरीर में रोग उत्पन्न हो जाते हैं। हर्ष से शोक तथा संयोग से वियोग और जन्म से मृत्यु उत्पन्न होते हैं। मूर्ख प्राणी ने दुष्कर्मों की गिनती गिनाकर जीवन—मृत्यु का विवाद खड़ा कर लिया है अर्थात् मूर्ख दुष्कर्मों में फँस जाता है। निर्णय सतिगुरु के हाथ में है, जो इस विवाद को खत्म कर देते हैं। सृष्टिकर्त्ता प्रभु जो करता है, वही कुछ होता है और प्राणी का चलाया हुक्म नहीं चलता॥ ४॥

सलोकु मः १ ॥ कूड़ु बोलि मुरदारु खाइ ॥ अवरी नो समझावणि जाइ ॥ मुठा आपि मुहाए साथै ॥ नानक ऐसा आगू जापै ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ जो व्यक्ति झूठ बोलकर दूसरों का हक खाता है वह मुर्दे को खाता है अर्थात् हराम खाता है। फिर भी वह दूसरों को उपदेश करने जाता है कि झूठ मत बोलो। हे नानक ! वह इस तरह का नेता मालूम होता है, जो स्वयं लुटा जा रहा है और अपने साथियों को भी लुटा रहा है॥ १॥

महला ४ ॥ जिस दै अंदरि सचु है सो सचा नामु मुखि सचु अलाए ॥ ओहु हरि मारगि आपि चलदा होरना नो हरि मारगि पाए ॥ जे अगै तीरथु होइ ता मलु लहै छपड़ि नातै सगवी मलु लाए ॥ तीरथु पूरा सतिगुरू जो अनदिनु हरि हरि नामु धिआए ॥ ओहु आपि छुटा कुटंब सिउ दे हरि हरि नामु सभ स्रिसटि छडाए ॥ जन नानक तिसु बलिहारणै जो आपि जपै अवरा नामु जपाए ॥ २ ॥

महला ४॥ जिसके हृदय में सत्य विद्यमान है, वही सत्यवादी है और वह अपने मुख से सत्य बोलता है। वह स्वयं हरि के मार्ग चलता है और दूसरों को भी हरि के मार्ग लगाता है। यदि सामने पवित्र तीर्थ रूपी सत्संग हो, तब मैल उतर जाती है। लेकिन मंदे पुरुषों के साथ संगति करने से मैल उतरने की जगह और भी मैल लग जाती है। सतिगुरु जी पूर्णरूपेण तीर्थ हैं जो दिन—रात हरि—प्रभु

के नाम का ध्यान करते रहते हैं। वह अपने कुटुंब सहित संसार सागर से पार हो जाता है अर्थात् उसे मोक्ष मिल जाता है और हरि—परमेश्वर का नाम प्रदान करके सारे संसार को पार कर देता है। हे नानक ! मैं उन पर कुर्बान जाता हूँ, जो स्वयं हरि के नाम का जाप करता है और दूसरों से भी नाम का जाप करवाता है॥ २॥

पउड़ी ॥ इकि कंद मूलु चुणि खाहि वण खंडि वासा ॥ इकि भगवा वेसु करि फिरहि जोगी संनिआसा ॥ अंदरि त्रिसना बहुतु छादन भोजन की आसा ॥ बिरथा जनमु गवाइ न गिरही न उदासा ॥ जमकालु सिरहु न उतरै त्रिबिधि मनसा ॥ गुरमती कालु न आवै नेड़ै जा होवै दासनि दासा ॥ सचा सबदु सचु मनि घर ही माहि उदासा ॥ नानक सतिगुरु सेवनि आपणा से आसा ते निरासा ॥ ५ ॥

पउड़ी॥ कई साधू वन प्रदेश में निवास करते हैं और कंदमूल चुनकर उनका सेवन करते हैं। कई भगवे रंग के वस्त्र पहन कर योगियों एवं संन्यासियों की भाँति फिरते हैं। उनके भीतर अधिकतर तृष्णा है और वे वस्त्रों एवं भोजन की लालसा करते हैं। वह अपना अनमोल जीवन व्यर्थ ही गंवा देते हैं। इस तरह न वह गृहस्थी हैं और न ही त्यागी। यमराज उनके सिर पर मंडराता रहता है क्योंकि वे त्रिगुणात्मक वासना के शिकार हैं। जब गुरु के उपदेश से प्राणी परमात्मा के सेवकों का सेवक हो जाता है, तो काल उनके निकट नहीं आता। सत्य—नाम उसके सत्यवादी हृदय में निवास करता है और वे घर में रहते हुए भी निर्लिप्त रहते हैं। हे नानक ! जो प्राणी अपने सतिगुरु की श्रद्धापूर्वक सेवा करते हैं, वे सांसारिक अभिलाषाओं से तटस्थ हो जाते हैं॥ ५॥

सलोकु मः १ ॥ जे रतु लगै कपड़ै जामा होइ पलीतु ॥ जो रतु पीवहि माणसा तिन किउ निरमलु चीतु ॥ नानक नाउ खुदाइ का दिलि हछै मुखि लेहु ॥ अवरि दिवाजे दुनी के झूठे अमल करेहु ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ यदि वस्त्रों को रक्त लग जाए तो वस्त्र अपवित्र हो जाता है। जो व्यक्ति दूसरों पर अत्याचार करके उनका रक्त चूसते हैं, उनका मन किस तरह पवित्र हो सकता है ? हे नानक ! उस अल्लाह का नाम साफ दिल से मुख से बोलो। नाम के बिना आपके सभी कार्य दुनिया के दिखावा मात्र ही हैं और आप सभी झूठे कर्म करते हैं॥ १॥

मः १ ॥ जा हउ नाही ता किआ आखा किहु नाही किआ होवा ॥ कीता करणा कहिआ कथना भरिआ भरि भरि धोवां ॥ आपि न बुझा लोक बुझाई ऐसा आगू होवां ॥ नानक अंधा होइ कै दसे राहै सभसु मुहाए साथै ॥ अगै गइआ मुहे मुहि पाहि सु ऐसा आगू जापै ॥ २ ॥

महला १॥ जब मैं कुछ भी नहीं तो दूसरों को मैं क्या उपदेश कर सकता हूँ ? अथवा जब मुझ में कोई भी गुण नहीं तो मैं कैसे गुणों का दिखावा करूँ ? जिस तरह का ईश्वर ने मुझे बनाया है, वैसे ही मैं करता हूँ। जिस तरह उसने मुझे कहा है, वैसे ही मैं बोलता हूँ। मैं बुरे कर्मों के कारण पापों से भरा हुआ हूँ। उनको अब मैं धोने का प्रयास करता हूँ। मैं स्वयं समझता नहीं लेकिन फिर भी दूसरों को समझाता हूँ। मैं इस तरह का ज्ञानहीन मार्गदर्शक बन सकता हूँ। हे नानक ! जो व्यक्ति स्वयं ज्ञानहीन अंधा होकर मार्ग—दर्शन करता है, वह अपने साथियों को भी लुटवा देता है। आगे परलोक में जाकर उसके मुख पर जूते पड़ते हैं और फिर पता चलता है कि वह किस तरह का पाखंडी मार्गदर्शक था॥२॥

पउड़ी ॥ माहा रुती सभ तूं घड़ी मूरत वीचारा ॥ तूं गणतै किनै न पाइओ सचे अलख अपारा ॥ पड़िआ मूरखु आखीऐ जिसु लबु लोभु अहंकारा ॥ नाउ पड़ीऐ नाउ बुझीऐ गुरमती वीचारा ॥ गुरमती

नामु धनु खटिआ भगती भरे भंडारा ॥ निरमलु नामु मंनिआ दरि सचै सचिआरा ॥ जिस दा जीउ पराणु है अंतरि जोति अपारा ॥ सचा साहु इकु तूं होरु जगतु वणजारा ॥ ६ ॥

पउड़ी॥ हे अकालपुरुष! समस्त महीनों, ऋतुओं, घड़ी, मुहूर्त में मैं तेरी वन्दना करता हूँ। हे सच्चे अलख, अपार प्रभु! कर्मों की गणना करके तुझे किसी ने भी नहीं पाया। उस पढ़े हुए विद्वान व्यक्ति को महामूर्ख ही समझो, जिसके अन्तर्मन में लोभ, लालच एँव अहंकार है। गुरु की मति द्वारा हमें विचार करके नाम को पढ़ना एवं समझना चाहिए। जिस व्यक्ति ने गुरु की मति द्वारा नाम रूपी धन की कमाई की है, उसके भण्डार भक्ति से भर गए हैं। जिस व्यक्ति ने निर्मल नाम का मन से सिमरन किया है, वह सत्य के दरबार में सत्यवादी स्वीकृत हो जाता है। जिसने प्रत्येक जीव को आत्मा एवं प्राण दिए हैं, वह प्रभु अनंत है और उसकी ज्योति प्रत्येक जीव के ह्रदय में विद्यमान है। हे प्रभु! एक तू ही सच्चा शाह है और शेष सारा जगत् वणजारा है॥ ६॥

सलोकु मः १ ॥ मिहर मसीति सिदकु मुसला हकु हलालु कुराणु ॥ सरम सुंनति सीलु रोजा होहु मुसलमाणु ॥ करणी काबा सचु पीरु कलमा करम निवाज ॥ तसबी सा तिसु भावसी नानक रखै लाज ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ जीवों पर दया करना ही मस्जिद में जाकर सजदा करना है। अल्लाह पर पूर्ण श्रद्धा रखना ही मुसल्ले पर बैठ कर नमाज पढ़ना है। हक–हलाल अर्थात् धर्म–कर्म करना ही कुरान को पढ़ना है। नाम की कमाई करना ही सुन्नत करवाना है। शील स्वभाव का बनना ही रोजा रखना है। तभी तुम एक सच्चे मुसलमान बनोगे। सत्य कर्म करना ही मक्का जाकर काबे के दर्शन करना है। सच्चे खुदा को जानना ही पीर की पूजा करना है। शुभ कर्म करना ही कलमा एवं नमाज है। अल्लाह की रजा में रहना ही माला फेर कर नाम जपना है। हे नानक! जो इन गुणों से युक्त होगा तो ही अल्लाह को अच्छा लगेगा और ऐसे मुसलमान की खुदा लाज–प्रतिष्ठा रखता है॥ १॥

मः १ ॥ हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ ॥ गुरु पीरु हामा ता भरे जा मुरदारु न खाइ ॥ गली भिसति न जाईऐ छुटै सचु कमाइ ॥ मारण पाहि हराम महि होइ हलालु न जाइ ॥ नानक गली कूड़ीई कूड़ो पलै पाइ ॥ २ ॥

महला १॥ हे नानक! पराया हक खाना मुसलमान के लिए सूअर खाने के समान है और हिन्दू के लिए गाय खाने के समान है। हिन्दुओं का गुरु एवं मुसलमानों का पीर खुदा की दरगाह में तभी मनुष्य की रक्षा की हामी भरेंगे यदि वह पराया हक न खाए। अधिक बातें करने से प्राणी स्वर्गलोक को नहीं जाता। मुक्ति तो सत्य की कमाई द्वारा ही संभव है। हराम के भोजन में मसाला डालने से वह हलाल नहीं हो जाता, क्योंकि रिश्वत का धन दान करने से शुद्ध नहीं होता। हे नानक! झूठी बातों से केवल झूठ ही हासिल होता है॥ २॥

मः १ ॥ पंजि निवाजा वखत पंजि पंजा पंजे नाउ ॥ पहिला सचु हलाल दुइ तीजा खैर खुदाइ ॥ चउथी नीअति रासि मनु पंजवी सिफति सनाइ ॥ करणी कलमा आखि कै ता मुसलमाणु सदाइ ॥ नानक जेते कूड़िआर कूड़ै कूड़ी पाइ ॥ ३ ॥

महला १॥ मुसलमानों के लिए पाँच नमाज़ें हैं, एवं नमाज़ों के लिए पाँच ही वक्त हैं और पाँचों नमाजों के पाँच अलग–अलग नाम हैं। पहली नमाज यह है कि सच्चे खुदा की बंदगी करो। दूसरी

नमाज है कि हक हलाल अर्थात् धर्म की कमाई करो। तीसरी नमाज यह है कि अल्लाह से सबकी भलाई माँगो, दान–पुण्य करो। चौथी नमाज यह है कि अपनी नीयत एवं मन को साफ रखो। पाँचवी नमाज यह है कि अल्लाह की महिमा एवं प्रशंसा करो। तू शुभ कर्मों का कलमा पढ़ और तभी तू स्वयं को सच्चा मुसलमान कहलवा सकता है। हे नानक ! जितने भी झूठे हैं, उनकी प्रतिष्ठा भी झूठी है और उन्हें झूठ ही प्राप्त होगा॥ ३॥

पउड़ी ॥ इकि रतन पदारथ वणजदे इकि कचै दे वापारा ॥ सतिगुरि तुठै पाईअनि अंदरि रतन भंडारा ॥ विणु गुर किनै न लधिआ अंधे भउकि मुए कूड़िआरा ॥ मनमुख दूजै पचि मुए ना बूझहि वीचारा ॥ इकसु बाझहु दूजा को नही किसु अगै करहि पुकारा ॥ इकि निरधन सदा भउकदे इकना भरे तुजारा ॥ विणु नावै होरु धनु नाही होरु बिखिआ सभु छारा ॥ नानक आपि कराए करे आपि हुकमि सवारणहारा ॥ ७ ॥

पउड़ी॥ जीव जगत् में व्यापार करने आते हैं। कई जीव नाम रूपी रत्न पदार्थों का व्यापार करते हैं और कई जीव कांच अर्थात् क्षणभंगुर सुखों का व्यापार करते हैं। यदि सतिगुरु प्रसन्न हो जाए तो यह नाम रूपी रत्न–पदार्थों का अक्षय भण्डार मिल जाता है। जीव के हृदय में ही नाम रूपी रत्न पदार्थों का भण्डार है परन्तु यह भण्डार गुरु के बिना किसी को भी नहीं मिला। अर्थात् परमेश्वर प्राप्त नहीं होता। झूठे एवं अज्ञानी लोग टक्करें मार–मारकर प्राण त्याग गए हैं। मनमुख लोग द्वैत भाव में पड़कर गल सड़कर मर जाते हैं और ज्ञान को नहीं समझते। एक ईश्वर के अलावा संसार में दूसरा कोई भी नहीं। वह किसके समक्ष जाकर फरियाद करें? कई धनहीन निर्धन हैं और हमेशा भटकते फिरते हैं और कईओं के खजाने दौलत से परिपूर्ण हैं। लेकिन इस संसार में हरि नाम के अलावा शेष कोई भी धन जीव के साथ जाने वाला नहीं। अन्य सब कुछ विष रूपी माया–धन धूलि के तुल्य है। हे नानक ! ईश्वर स्वयं ही सब कुछ करता है और स्वयं ही जीवों से करवाता है। अपने आदेश द्वारा वह प्रभु स्वयं ही प्राणियों को संवारने वाला है॥ ७॥

सलोकु मः १ ॥ मुसलमाणु कहावणु मुसकलु जा होइ ता मुसलमाणु कहावै ॥ अवलि अउलि दीनु करि मिठा मसकल माना मालु मुसावै ॥ होइ मुसलिमु दीन मुहाणै मरण जीवण का भरमु चुकावै ॥ रब की रजाइ मंने सिर उपरि करता मंने आपु गवावै ॥ तउ नानक सरब जीआ मिहरंमति होइ त मुसलमाणु कहावै ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ मुसलमान कहलाना बड़ा कठिन है। यदि कोई गुणों से युक्त सच्चा मुसलमान है, तो ही वह अपने आपको मुसलमान कहलवा सकता है। सच्चा मुसलमान बनने के लिए सर्वप्रथम बात यह है कि वह अपने पैगम्बर के चलाए धर्म को मीठा समझकर माने। दूसरी बात यह है कि वह अपनी मेहनत की कमाई का धन गरीबों में यूं बांट दे जैसे रंग मार लोहे के जंग को दूर कर देता है। वह अपने पैगम्बर के धर्म का सच्चा मुरीद (शिष्य) होकर मृत्यु एवं जीवन के भ्रम को मिटा दे। सच्चे दिल से वह ईश्वर की इच्छा को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकृत करे, सृष्टिकर्त्ता परमात्मा की वन्दना करे और अपना अहंकार नष्ट कर दे। हे नानक ! यदि वह समस्त प्राणियों पर दयालु हो तो ही वह मुसलमान कहलवा सकता है॥१॥

महला ४ ॥ परहरि काम क्रोधु झूठु निंदा तजि माइआ अहंकारु चुकावै ॥ तजि कामु कामिनी मोहु तजै ता अंजन माहि निरंजनु पावै ॥ तजि मानु अभिमानु प्रीति सुत दारा तजि पिआस आस राम लिव लावै ॥ नानक साचा मनि वसै साच सबदि हरि नामि समावै ॥ २ ॥

महला ४॥ जो व्यक्ति काम, क्रोध, झूठ, निंदा एवं धन—दौलत को त्यागकर अपना अहंकार मिटा देता है, कामवासना का त्याग करके अपनी स्त्री का मोह त्याग देता है, वह माया में रहता हुआ भी निरंजन प्रभु को पा लेता है। हे नानक! सत्यस्वरूप प्रभु उस व्यक्ति के मन में आकर निवास करता है, जो व्यक्ति मान—अभिमान, अपने पुत्र एवं स्त्री का प्रेम, माया की तृष्णा एवं इच्छा को त्याग कर राम में सुरति लगाता है। ऐसा व्यक्ति सच्चे शब्द द्वारा हरिनाम में ही समा जाता है॥ २॥

पउड़ी ॥ राजे रयति सिकदार कोइ न रहसीओ ॥ हट पटण बाजार हुकमी ढहसीओ ॥ पके बंक दुआर मूरखु जाणै आपणे ॥ दरबि भरे भंडार रीते इकि खणे ॥ ताजी रथ तुखार हाथी पाखरे ॥ बाग मिलख घर बार किथै सि आपणे ॥ तंबू पलंघ निवार सराइचे लालती ॥ नानक सच दातारु सिनाखतु कुदरती ॥ ८ ॥

पउड़ी॥ राजा, प्रजा एवं प्रधानों में किसी ने भी इस संसार में नहीं रहना। दुकानें, नगर एवं बाज़ार ईश्वर की इच्छा से नष्ट हो जाएँगे। मूर्ख मनुष्य सुन्दर द्वारों वाले पक्के मन्दिरों को अपना समझते हैं। धन—दौलत से परिपूर्ण भण्डार एक क्षण में ही खाली हो जाते हैं। घोड़ों, सुन्दर रथों, ऊँट, अम्बारियों वाले हाथी, उद्यान, सम्पत्तियाँ, घर एवं इमारतें इत्यादि जिन्हें मनुष्य अपना जानता है, वे अपने कहाँ हैं? तम्बू, निवार के पलंग, अतलस की कनातें सब क्षणभंगुर हैं। हे नानक! सदैव स्थिर एक सत्य परमेश्वर ही है, जो लोगों को यह सब वस्तुएँ देने वाला दाता है। उसकी पहचान उसकी कुदरत द्वारा ही होती है॥ ८॥

सलोकु मः १ ॥ नदीआ होवहि धेणवा सुंम होवहि दुधु घीउ ॥ सगली धरती सकर होवै खुसी करे नित जीउ ॥ परबतु सुइना रुपा होवै हीरे लाल जड़ाउ ॥ भी तूंहै सालाहणा आखण लहै न चाउ ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ हे भगवान! यदि मेरे लिए नदियां कामधेनु गाय बन जाएँ, समुद्रों का जल दूध एवं घी बन जाए, सारी धरती शक्कर बन जाए और मेरा मन इन पदार्थों का सेवन करके प्रसन्न होता हो, यदि हीरे एवं जवाहरों से जड़ित सोने एवं चांदी का पर्वत भी मुझे मिल जाए, मैं फिर भी तेरा ही यशोगान करूँगा और तेरी महिमा करने की मेरी उमंग खत्म नहीं होगी॥ १॥

मः १ ॥ भार अठारह मेवा होवै गरुड़ा होइ सुआउ ॥ चंदु सूरजु दुइ फिरदे रखीअहि निहचलु होवै थाउ ॥ भी तूंहै सालाहणा आखण लहै न चाउ ॥ २ ॥

महला १॥ हे प्रभु! यदि मेरे लिए अठारह भार वाली सारी वनस्पति मेवा बन जाए, जिसका स्वाद गुड़ जैसा मीठा हो, यदि मेरा निवास स्थान अटल हो जाए, जिसके आस—पास सूर्य एवं चंद्रमा दोनों ही घूमते रहें, फिर भी मैं तेरा ही यश करूँगा और तेरा यश करने का मेरा चाव हृदय से नहीं हटेगा॥ २॥

मः १ ॥ जे देहै दुखु लाईऐ पाप गरह दुइ राहु ॥ रतु पीणे राजे सिरै उपरि रखीअहि एवै जापै भाउ ॥ भी तूंहै सालाहणा आखण लहै न चाउ ॥ ३ ॥

महला १॥ हे भगवान! यदि मेरे शरीर को दुख लग जाए और दोनों पापी ग्रह राहु—केतु मुझे कष्ट दें। यदि रक्तपिपासु राजा मेरे सिर पर शासन करते हों मुझे फिर भी यूं ही लगे कि जैसे तुम मुझे प्रेम करते हो, हे ईश्वर! फिर भी मैं तेरी ही सराहना करूँगा और तेरा यश करने की चाहत खत्म नहीं होगी॥ ३॥

मः १ ॥ अगी पाला कपड़ु होवै खाणा होवै वाउ ॥ सुरगै दीआ मोहणीआ इसतरीआ होवनि नानक सभो जाउ ॥ भी तूहै सालाहणा आखण लहै न चाउ ॥ ४ ॥

महला १॥ यदि मेरे लिए अग्नि एवं शीत मेरा परिधान हो, हवा मेरा भोजन हो और यदि स्वर्ग की मोहिनी अप्सराएँ मेरी पत्नियाँ हों, हे नानक ! यह सब पदार्थ क्षणभंगुर हैं। हे प्रभु ! तो भी मैं तेरी ही महिमा गायन करूँगा। तेरी महिमा करने की तीव्र लालसा मिटती ही नहीं॥ ४॥

पवड़ी ॥ बदफैली गैबाना खसमु न जाणई ॥ सो कहीऐ देवाना आपु न पछाणई ॥ कलहि बुरी संसारि वादे खपीऐ ॥ विणु नावै वेकारि भरमे पचीऐ ॥ राह दोवै इकु जाणै सोई सिझसी ॥ कुफर गोअ कुफराणै पइआ दझसी ॥ सभ दुनीआ सुबहानु सचि समाईऐ ॥ सिझै दरि दीवानि आपु गवाईऐ ॥ ६ ॥

पउड़ी॥ जो दुष्कर्मी हैवान है, वह परमात्मा को नहीं जानता। वह पागल कहा जाता है जो अपने स्वरूप को नहीं समझता। इस संसार में कलह हानिकारक है, क्योंकि वाद–विवाद में मनुष्य व्यर्थ ही पीड़ित हो जाता है। हरिनाम के अलावा प्राणी व्यर्थ है और भ्रम–विकारों में वह नष्ट हो जाता है। जो दोनों मार्गों को एक प्रभु की ओर जाते समझता है वह मुक्त हो जाएगा। झूठ बोलने वाला नरक में पड़कर जलकर राख हो जाता है। यदि मनुष्य सत्य में लीन रहता है तो उसके लिए सारी दुनिया ही सुन्दर है। वह अपना अहंकार मिटाकर प्रभु के दरबार में मान–प्रतिष्ठा प्राप्त करने में सफल हो जाता है॥ ६॥

मः १ सलोकु ॥ सो जीविआ जिसु मनि वसिआ सोइ ॥ नानक अवरु न जीवै कोइ ॥ जे जीवै पति लथी जाइ ॥ सभु हरामु जेता किछु खाइ ॥ राजि रंगु मालि रंगु ॥ रंगि रता नचै नंगु ॥ नानक ठगिआ मुठा जाइ ॥ विणु नावै पति गइआ गवाइ ॥ १ ॥

महला १ श्लोक॥ जिसके मन में भगवान का निवास है, उस व्यक्ति को ही जिया समझो। हे नानक ! भगवान के नाम बिना किसी को भी जिया नहीं कहा जा सकता, वह तो मृतक के समान होता है। यदि वह जीता भी है तो वह जगत् में से अपनी मान–प्रतिष्ठा गंवा कर चला जाता है। वह जो कुछ भी खाता है, वह सब हराम बन जाता है। किसी व्यक्ति का शासन से प्रेम है और किसी का धन–दौलत से प्रेम है। ऐसा बेशर्म व्यक्ति मिथ्या माया के मोह में मग्न हुआ नग्न नृत्य कर रहा है। हे नानक ! वह ठगा और लुटपुट जाता है। ईश्वर के नाम के अलावा वह अपनी प्रतिष्ठा गंवा कर चला जाता है॥ १॥

मः १ ॥ किआ खाधै किआ पैधै होइ ॥ जा मनि नाही सचा सोइ ॥ किआ मेवा किआ घिउ गुड़ु मिठा किआ मैदा किआ मासु ॥ किआ कपड़ु किआ सेज सुखाली कीजहि भोग बिलास ॥ किआ लसकर किआ नेब खवासी आवै महली वासु ॥ नानक सचे नाम विणु सभे टोल विणासु ॥ २ ॥

महला १॥ हे जीव ! यदि तेरे मन में उस भगवान का निवास ही नहीं तो स्वादिष्ट भोजन खाने एवं सुन्दर वस्त्र पहनने का क्या अभिप्राय है? मेवा, घी, मीठा गुड़, मैदा एवं माँस खाने का क्या अभिप्राय है? सुन्दर वस्त्र पहनने, सुखदायक शय्या पर विश्राम करने और भोग–विलास का आनंद प्राप्त करने का क्या अभिप्राय है? सेना, द्वारपाल, कर्मचारी रखने एवं महलों में निवास करने का क्या अभिप्राय है ? हे नानक ! सत्य–परमेश्वर के नाम के सिवाय सभी पदार्थ क्षणभंगुर हैं॥२॥

पवड़ी ॥ जाती दै किआ हथि सचु परखीऐ ॥ महुरा होवै हथि मरीऐ चखीऐ ॥ सचे की सिरकार जुगु जुगु जाणीऐ ॥ हुकमु मंने सिरदारु दरि दीबाणीऐ ॥ फुरमानी है कार खसमि पठाइआ ॥ तबलबाज बीचार सबदि सुणाइआ ॥ इकि होए असवार इकना साखती ॥ इकनी बधे भार इकना ताखती ॥ १० ॥

पउड़ी॥ उच्च जाति वाले के वश में कुछ भी नहीं है, क्योंकि परमात्मा तो जीवों के शुभ–अशुभ कर्मों की ही जाँच करता है। ऊँची जाति का अभिमान विष समान है। यदि किसी व्यक्ति के हाथ में विष हो तो वह उस विष को खा कर प्राण त्याग देता है। सत्य परमेश्वर की सरकार युग–युग में जानी जाती है। जो उसके हुक्म का पालन करता है, वह उसके दरबार में प्रतिष्ठित हो जाता है। सत्य प्रभु का यही हुक्म है कि नाम–सिमरन का कर्म करो। इसलिए प्रभु ने मनुष्य को संसार में भेजा है। गुरु नगाड़ची ने वाणी द्वारा इस परमेश्वर की आराधना लोगों को सुनाई है। इसको श्रवण करके गुरमुख अपने घोड़ों पर सवार हो गए हैं और कई उनको तैयार कर रहे हैं। कईओं ने अपना सामान बांध लिया है और कई तो सवार होकर चले भी गए हैं॥ १०॥

सलोकु मः १ ॥ जा पका ता कटिआ रही सु पलरि वाड़ि ॥ सणु कीसारा चिथिआ कणु लइआ तनु झाड़ि ॥ दुइ पुड़ चकी जोड़ि कै पीसण आइ बहिठु ॥ जो दरि रहे सु उबरे नानक अजबु डिठु ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ जब अनाज पक जाता है तो किसान उसे काट लेता है। केवल घासफूस और बाड़ रह जाती है। अनाज फसल से उतार लिया जाता है और उड़ा कर फसल से दाने अलग कर लिए जाते हैं। चक्की के दोनों पाट इकट्ठे करके मनुष्य आकर दानों को पीसने बैठ जाते हैं। जो केन्द्रीय धुरे से जुड़े रहते हैं, वह बच जाते हैं। हे नानक! यह एक आश्चर्यजनक बात देखी है॥ १॥

मः १ ॥ वेखु जि मिठा कटिआ कटि कुटि बधा पाइ ॥ खुंढा अंदरि रखि कै देनि सु मल सजाइ ॥ रसु कसु टटरि पाईऐ तपै तै विललाइ ॥ भी सो फोगु समालीऐ दिचै अगि जालाइ ॥ नानक मिठै पतरीऐ वेखहु लोका आइ ॥ २ ॥

महला १॥ देखो कि गन्ना कट जाता है। इसको साफ करके ठोक पीटकर बन्धनों में बांधा है। बेलनों के बीच रखकर मलकर अथवा पहलवानों के समान जो पुरुष हैं वह इसको दबाते और दण्ड देते हैं। उसका रस खींचकर कड़ाहे में डाला जाता है और यह जलता हुआ चीखता–चिल्लाता है। गन्ने की खोई भी जिसका रस निकाल लिया है उसे भी इकट्ठा करके अग्नि में जला दिया जाता है। हे नानक! मीठे पत्तों वाले गन्ने से किस तरह का व्यवहार हुआ है, हे प्राणियों! आकर देखो॥ २॥

पवड़ी ॥ इकना मरणु न चिति आस घणेरिआ ॥ मरि मरि जंमहि नित किसै न केरिआ ॥ आपनड़ै मनि चिति कहनि चंगेरिआ ॥ जमराजै नित नित मनमुख हेरिआ ॥ मनमुख लूण हाराम किआ न जाणिआ ॥ बधे करनि सलाम खसम न भाणिआ ॥ सचु मिलै मुखि नामु साहिब भावसी ॥ करसनि तखति सलामु लिखिआ पावसी ॥ ११ ॥

पउड़ी॥ कुछ लोगों को मृत्यु स्मरण नहीं, उनके मन में दुनिया के सुख भोगने की अधिक आशा होती है। वह हमेशा जन्मते–मरते रहते हैं तथा किसी के भी सच्चे मित्र नहीं बनते। वह अपने मन ही मन में अपने आपको भला कहते हैं। यमराज हमेशा इन मनमुखों को समाप्त करने के लिए देखता रहता है। मनमुख नमक खाकर हराम करने वाला है और अपने ऊपर किए हुए परमेश्वर के उपकार का धन्यवादी नहीं होता। जो दबाव अधीन प्रणाम करते हैं वह प्रभु को अच्छे नहीं लगते। जो मुख से सत्यनाम बोलते हैं वह ईश्वर के मन को अच्छे लगने लग जाते हैं॥ ११॥

मः १ सलोकु ॥ मछी तारू किआ करे पंखी किआ आकासु ॥ पथर पाला किआ करे खुसरे किआ घर वासु ॥ कुते चंदनु लाईऐ भी सो कुती धातु ॥ बोला जे समझाईऐ पड़ीअहि सिंम्रिति पाठ ॥ अंधा चानणि रखीऐ दीवे बलहि पचास ॥ चउणे सुइना पाईऐ चुणि चुणि खावै घासु ॥ लोहा मारणि पाईऐ ढहै न होइ कपास ॥ नानक मूरख एहि गुण बोले सदा विणासु ॥ १ ॥

महला १ श्लोक॥ मछली को गहरे जल का क्या लाभ है, यदि वह उसे मछेरे से नहीं बचा सकता? खुले आकाश का पक्षी को क्या लाभ है, यदि वह उसे शिकारी से नहीं बचा सकता ? पत्थर को शीत का क्या लाभ है, जब उस पर सर्दी का कोई प्रभाव ही नहीं होता ? नपुंसक को विवाह करवाने का क्या लाभ है, यदि वह दुल्हन से भोग का आनंद ही नहीं ले सकता ? यदि कुत्ते को चंदन लगा दिया जाए तो फिर भी उसका कुत्ते वाला स्वभाव ही रहेगा और कुतिया की ओर ही दौड़ेगा। यदि बहरे मनुष्य को स्मृतियों का पाठ पढ़कर सुनाए तो भी वह सुनकर समझता नहीं। यदि अंधे मनुष्य के समक्ष पचास दीपकों का प्रकाश भी कर दिया जाए तो भी उसे कुछ भी दिखाई नहीं देगा। मनुष्य चाहे गाय एवं भैंसों के समूह के पास सोना रख दे तो भी वह घास को ही चुन–चुनकर खाएँगे। लोहे को कपास के समान लकड़ी के साथ झाड़ें तो भी वह नरम नहीं होता। हे नानक ! मूर्ख मनुष्य में यही गुण होते हैं कि वह जो कुछ भी बोलता है, उससे उसका अपना ही विनाश होता है॥ १॥

मः १ ॥ कैहा कंचनु तुटै सारु ॥ अगनी गंढु पाए लोहारु ॥ गोरी सेती तुटै भतारु ॥ पुतीं गंढु पवै संसारि ॥ राजा मंगै दितै गंढु पाइ ॥ भुखिआ गंढु पवै जा खाइ ॥ काला गंढु नदीआ मीह झोल ॥ गंढु परीती मिठे बोल ॥ बेदा गंढु बोले सचु कोइ ॥ मुइआ गंढु नेकी सतु होइ ॥ एतु गंढि वरतै संसारु ॥ मूरख गंढु पवै मुहि मार ॥ नानकु आखै एहु बीचारु ॥ सिफती गंढु पवै दरबारि ॥ २ ॥

महला १॥ जब कांस्य, सोना एवं लोहा टूट जाए तो सुनार अग्नि से गांठ लगा देता है। यदि पत्नी के साथ पति नाराज़ हो जाए तो पुत्र के द्वारा जगत् में पुनः संबंध कायम हो जाते हैं। राजा अपनी प्रजा से कर माँगता है और उसे कर देने से प्रजा का राजा से संबंध बना रहता है। भूखे लोगों का दानी सज्जनों से संबंध बन जाता है क्योंकि वे उनसे माँगकर भोजन खाते रहते हैं। अकाल पड़ने से लोगों का नदियों से संबंध तब बनता है, जब वर्षा होने पर उनमें से बहुत जल मिलने लगता है। प्रेम व मधुर वचनों का मेलजोल है। यदि कोई सत्य बोले तो उसका संबंध वेदों से हो जाता है। जो व्यक्ति अपने जीवन में भलाई करते हैं और दान देते हैं, मरणोपरांत उनका संबंध दुनिया से बना रहता है। इस तरह का मेल–मिलाप इस संसार में प्रचलित है। मूर्ख के सुधार का हल केवल यही है कि वह मुँह की मार खाए। नानक एक ज्ञान की बात कहता है कि भगवान की महिमा–स्तुति करने से मनुष्य का उसके दरबार से संबंध कायम हो जाता है॥ २॥

पउड़ी ॥ आपे कुदरति साजि कै आपे करे बीचारु ॥ इकि खोटे इकि खरे आपे परखणहारु ॥ खरे खजानै पाईअहि खोटे सटीअहि बाहर वारि ॥ खोटे सची दरगह सुटीअहि किसु आगै करहि पुकार ॥ सतिगुर पिछै भजि पवहि एहा करणी सारु ॥ सतिगुरु खोटिअहु खरे करे सबदि सवारणहारु ॥ सची दरगह मंनीअनि गुर कै प्रेम पिआरि ॥ गणत तिना दी को किआ करे जो आपि बखसे करतारि ॥ १२ ॥

पउड़ी॥ परमेश्वर स्वयं ही सृष्टि की रचना करके स्वयं ही विचार करता है। कई जीव दुष्ट हैं और कई जीव धर्मात्मा हैं। इन दुष्ट एवं धर्मी जीवों की जाँच भगवान स्वयं ही करता है। जैसे खजानची शुद्ध सिक्कों को खजाने में डाल देता है और खोटे सिक्कों को खजाने से बाहर फैंक देता है, वैसे

ही पापियों को प्रभु के दरबार में से बाहर फैंक दिया जाता है। वे पापी जीव किसके समक्ष विनती कर सकते हैं। वह दौड़कर सतिगुरु की शरण में आएँ, यही कर्म श्रेष्ठ है। सतिगुरु पापियों को पवित्र बना देता है। वह पापी मनुष्य को प्रभु के नाम से सुशोभित करने वाला है। गुरु के साथ प्रेम एवं स्नेह करने से प्राणी सत्य दरबार में प्रशंसा के पात्र हो जाते हैं। जिन्हें सृष्टिकर्त्ता परमेश्वर ने स्वयं क्षमा कर दिया है, उनके कर्मों का कौन मूल्यांकन कर सकता है॥ १२॥

सलोकु मः १ ॥ हम जेर जिमी दुनीआ पीरा मसाइका राइआ ॥ मे रवदि बादिसाहा अफजू खुदाइ ॥ एक तूही एक तुही ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ पीर, शेख एवं राजा इत्यादि सभी दुनिया के लोग जमीन में दफन कर दिए जाते हैं। बादशाह भी अंत में दुनिया से चले जाते हैं। केवल एक खुदा ही सदैव विद्यमान है। हे अल्लाह! एक तू ही हैं और तू ही इस दुनिया में हमेशा रहने वाला है।

मः १ ॥ न देव दानवा नरा ॥ न सिध साधिका धरा ॥ असति एक दिगरि कुई ॥ एक तुई एक तुई ॥ २ ॥

महला १॥ धरती पर सदैव रहने वाले न देवता हैं, न दैत्य हैं, न ही मनुष्य हैं, न ही सिद्ध एवं साधक हैं। यह सभी क्षणभंगुर हैं। हे ईश्वर! एक तेरे सिवाय दूसरा कोई भी सदैव स्थिर नहीं है। तीनों कालों में एक तू ही सदैव सत्य है॥ २॥

मः १ ॥ न दादे दिहंद आदमी ॥ न सपत जेर जिमी ॥ असति एक दिगरि कुई ॥ एक तुई एक तुई ॥ ३ ॥

महला १॥ जगत् में न धरती के उपरोक्त आकाश के सप्त लोक स्थिर हैं, जहाँ मनुष्यों के कर्मो का न्याय करने वाले देवते रहते हैं, न जमीन के नीचे सात पाताल के लोग स्थिर हैं, जहाँ दैत्य रहते हैं। सभी क्षणभंगुर हैं। हे प्रभु! एक तेरे सिवाय दूसरा कोई भी अमर नहीं है। एक तुम ही हो, आदि में भी तुम ही हो और अन्त में भी तुम ही हो॥ ३॥

मः १ ॥ न सूर ससि मंडलो ॥ न सपत दीप नह जलो ॥ अंन पउण थिरु न कुई ॥ एकु तुई एकु तुई ॥ ४ ॥

महला १॥ न सूर्यमण्डल, न चंद्र मण्डल, न ही सप्त द्वीप, न ही सागर, न ही अनाज और हवा कोई भी स्थिर नहीं। हे प्रभु! केवल तुम ही हो, तीनों कालों में एक तुम ही हो॥ ४॥

मः १ ॥ न रिजकु दसत आ कसे ॥ हमा रा एकु आस वसे ॥ असति एकु दिगर कुई ॥ एक तुई एकु तुई ॥ ५ ॥

महला १॥ जगत् के समस्त जीवों का भोजन पदार्थ उस प्रभु के सिवाय किसी अन्य के वश में नहीं है। हम सबको एक प्रभु की ही आशा है। शेष सब क्षणभंगुर है। हे प्रभु! एक तेरे सिवाय अन्य कोई दूसरा सदैव स्थिर नहीं है। तीनों कालों में केवल तुम ही हो॥ ५॥

मः १ ॥ परंदए न गिराह जर ॥ दरखत आब आस कर ॥ दिहंद सुई ॥ एक तुई एक तुई ॥ ६ ॥

महला १॥ परिंदों के न अपने घर हैं और न ही उनके पास धन है। वह जीने के लिए जल एवं वृक्षों में अपनी आशा रखते हैं। उन्हें भी आहार देने वाला एक प्रभु ही है। हे प्रभु! तीनों कालों में तुम ही हो। एक तू ही अटल है॥ ६॥

मः १ ॥ नानक लिलारि लिखिआ सोइ ॥ मेटि न साकै कोइ ॥ कला धरै हिरै सुई ॥ एकु तुई एकु तुई ॥ ७ ॥

महला १॥ हे नानक! इन्सान के माथे पर जो तकदीर के लेख परमात्मा ने लिख दिए हैं, उन्हें कोई भी मिटा नहीं सकता। हे प्रभु! एक तू ही जीवों में प्राण—कला को धारण करते हो, तुम ही उसे वापिस निकाल लेते हो। हे ठाकुर! तीनों कालों में तुम ही हो। एक तू ही अनश्वर है॥ ७॥

पउड़ी ॥ सचा तेरा हुकमु गुरमुखि जाणिआ ॥ गुरमती आपु गवाइ सचु पछाणिआ ॥ सचु तेरा दरबारु सबदु नीसाणिआ ॥ सचा सबदु वीचारि सचि समाणिआ ॥ मनमुख सदा कूड़िआर भरमि भुलाणिआ ॥ विसटा अंदरि वासु सादु न जाणिआ ॥ विणु नावै दुखु पाइ आवण जाणिआ ॥ नानक पारखु आपि जिनि खोटा खरा पछाणिआ ॥ १३ ॥

पउड़ी॥ हे भगवान! तेरा हुक्म सदैव सत्य है और इसे गुरु द्वारा ही जाना जा सकता है। जो व्यक्ति गुरु के उपदेश द्वारा अपने अहंत्व को त्याग देता है, वह भगवान को पहचान लेता है। हे प्रभु! तेरा दरबार सत्य है और तेरा शब्द तेरे दरबार में जाने हेतु निशान है। जो व्यक्ति सत्य—नाम का चिंतन करता है, वह सत्य में ही समा जाता है। मनमुख सदैव झूठे हैं और भ्रम में पड़कर भटके हुए हैं। मरणोपरांत उनका निवास विष्टा में ही होता है क्योंकि अपने जीवन में कभी भी नाम के स्वाद को जाना नहीं होता अर्थात् उन्होंने कभी भी नाम—सिमरन नहीं किया होता। नाम के बिना वे बहुत दुःखी होते हैं। वे योनियों के चक्र में फँस कर जन्मते—मरते रहते हैं। हे नानक! ईश्वर स्वयं ही पारखी है, वह पापी एवं धर्मी की पहचान कर लेता है॥१३॥

सलोकु मः १ ॥ सीहा बाजा चरगा कुहीआ एना खवाले घाह ॥ घाहु खानि तिना मासु खवाले एहि चलाए राह ॥ नदीआ विचि टिबे देखाले थली करे असगाह ॥ कीड़ा थापि देइ पातिसाही लसकर करे सुआह ॥ जेते जीअ जीवहि लै साहा जीवाले ता कि असाह ॥ नानक जिउ जिउ सचे भावै तिउ तिउ देइ गिराह ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ यदि भगवान की इच्छा हो तो वह शेरों, बाजों, चीलों तथा कुईयों इत्यादि माँसाहारी पशु—पक्षियों को घास खिला देता है। जो घास खाने वाले पशु हैं, उनको वह माँस खिला देता है। वह जीवों को ऐसे मार्ग पर चला देता है। वह नदियों में टीले बनाकर दिखा देता है और रेगिस्तान में गहरा सागर बना देता है। वह चाहे तो तुच्छ जीव को भी साम्राज्य सौंप देता है और राजाओं की सशक्त सेना का वध करके राख बना देता है। जगत् में जितने भी जीव हैं वे सभी श्वास लेकर जीते हैं अर्थात् श्वासों के बिना जीवित नहीं रह सकते परन्तु यदि परमात्मा की इच्छा हो तो उन्हें श्वासों के बिना भी जीवित रख सकता है। हे नानक! जिस तरह सत्य प्रभु को अच्छा लगता है, वैसे ही वह जीवों को आहार देता है॥ १॥

मः १ ॥ इकि मासहारी इकि त्रिणु खाहि ॥ इकना छतीह अंम्रित पाहि ॥ इकि मिटीआ महि मिटीआ खाहि ॥ इकि पउण सुमारी पउण सुमारि ॥ इकि निरंकारी नाम आधारि ॥ जीवै दाता मरै न कोइ ॥ नानक मुठे जाहि नाही मनि सोइ ॥ २ ॥

महला १॥ कई जीव माँसाहारी हैं जैसे शेर, बाघ, चीते एवं बाज इत्यादि। कई जीव घास खाते हैं जैसे गाय, भैंस एवं घोड़े इत्यादि। कई जीव छत्तीस प्रकार के स्वादिष्ट भोजन खाते है जैसे मनुष्य। कई जीव मिट्टी में ही रहते हैं और मिट्टी ही खाते हैं। कई जीव पवन आहारी गिने जाते हैं। कई जीव निरंकार के पुजारी हैं और उन्हें नाम का ही आधार है। जीवनदाता प्रभु सदैव जीवित है। कोई भी जीव

भूखा नहीं मरता क्योंकि प्रभु सबको आहार देता है। हे नानक ! जो उस परमेश्वर को अपने हृदय में नहीं बसाते, वे मोह—माया के हाथों ठगे जाते हैं॥ २॥

पउड़ी ॥ पूरे गुर की कार करमि कमाईऐ ॥ गुरमती आपु गवाइ नामु धिआईऐ ॥ दूजी कारै लगि जनमु गवाईऐ ॥ विणु नावै सभ विसु पैझै खाईऐ ॥ सचा सबदु सालाहि सचि समाईऐ ॥ विणु सतिगुरु सेवे नाही सुखि निवासु फिरि फिरि आईऐ ॥ दुनीआ खोटी रासि कूड़ु कमाईऐ ॥ नानक सचु खरा सालाहि पति सिउ जाईऐ ॥ १४ ॥

पउड़ी॥ भाग्य से ही पूर्ण गुरु की सेवा की जाती है। गुरु की मति द्वारा हमें अपने अहंत्व को मिटाकर भगवान के नाम का ध्यान करते रहना चाहिए। धन—दौलत कमाने के कार्य में लगकर हम अपना अमूल्य जीवन व्यर्थ ही गंवा देते हैं। नाम के सिवाय हमारा वस्त्र पहनना एवं भोजन ग्रहण करना सब कुछ ही विष खाने के समान है। अतः सत्यनाम की महिमा—स्तुति करने से ही सत्य में समाया जा सकता है। सतिगुरु की सेवा किए बिना मनुष्य का सुख में निवास नहीं होता और वह बार—बार जन्मता एवं मरता है। झूठे संसार में प्राणी झूठे कर्म करता रहता है। हे नानक ! निर्मल सत्य नाम का यशोगान करने से मनुष्य सत्य के दरबार में सम्मानपूर्वक संसार से जाता है॥ १४॥

सलोकु मः १ ॥ तुधु भावै ता वावहि गावहि तुधु भावै जलि नावहि ॥ जा तुधु भावहि ता करहि बिभूता सिंङी नादु वजावहि ॥ जा तुधु भावै ता पड़हि कतेबा मुला सेख कहावहि ॥ जा तुधु भावै ता होवहि राजे रस कस बहुतु कमावहि ॥ जा तुधु भावै तेग वगावहि सिर मुंडी कटि जावहि ॥ जा तुधु भावै जाहि दिसंतरि सुणि गला घरि आवहि ॥ जा तुधु भावै नाइ रचावहि तुधु भाणे तूं भावहि ॥ नानकु एक कहै बेनंती होरि सगले कूड़ु कमावहि ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ हे भगवान ! जब तुझे अच्छा लगता है तो मनुष्य संगीतमय बाजे बजाता और गाता है। जब तेरी इच्छा होती है तो वह जल में स्नान करता है। जब तुझे अच्छा लगता है तो प्राणी अपने शरीर पर विभूति मलता है और सिंगी नाद बजाता है। जब तुझे अच्छा लगता है तो मनुष्य कुरान पढ़ता है और मुल्लां और शेख कहलाया जाता है। हे नाथ ! जब तेरी इच्छा होती है, तो कई राजा बन जाते हैं और अधिकतर स्वादों का आनंद लेते हैं। हे ठाकुर ! जब तुझे उपयुक्त लगता है तो मनुष्य तलवार चलाते हैं और शीश को धड़ से काट फैंकते हैं। हे स्वामी ! जब तेरी इच्छा होती है तो लोग देश—देशांतरों में जाते हैं और अनेकों सूचनाएँ श्रवण करके घर लौट आते हैं। हे प्राणपति ! जब तुझे उपयुक्त लगता है, तो मनुष्य तेरे नाम में लीन हो जाता है और जब तेरी इच्छा होती है, वह तुझे अच्छा लगने लग जाता है। नानक एक प्रार्थना करता है कि हे प्रभु ! तेरी इच्छा में चलने वालों के अलावा शेष सभी जीव झूठ ही कमाते हैं॥ १॥

मः १ ॥ जा तूं वडा सभि वडिआंईआ चंगै चंगा होई ॥ जा तूं सचा ता सभु को सचा कूड़ा कोइ न कोई ॥ आखणु वेखणु बोलणु चलणु जीवणु मरणा धातु ॥ हुकमु साजि हुकमै विचि रखै नानक सचा आपि ॥ २ ॥

महला १॥ हे ईश्वर ! जब तू महान है, तो सारी महानता तुझ से ही प्रकट होती है। तुम स्वयं भले हो और तुझसे भला ही होना है। जब तू स्वयं सत्य है तो जो तेरी पूजा करते हैं वह सभी सत्यवादी बन जाते हैं। तेरे सच्चे भक्त को कोई भी मनुष्य झूठा दिखाई नहीं देता। जीवों का कहना, देखना, बोलना, चलना, जीना एवं मरना इत्यादि यह तेरी माया खेल ही है। हे नानक ! सत्यस्वरूप परमात्मा स्वयं ही अपने हुक्म द्वारा सृष्टि रचना करता है और अपने हुक्म में ही समस्त प्राणियों को रखता है॥ २॥

पउड़ी ॥ सतिगुरु सेवि निसंगु भरमु चुकाईऐ ॥ सतिगुरु आखै कार सु कार कमाईऐ ॥ सतिगुरु होइ दइआलु त नामु धिआईऐ ॥ लाहा भगति सु सारु गुरमुखि पाईऐ ॥ मनमुखि कूड़ु गुबारु कूड़ु कमाईऐ ॥ सचे दै दरि जाइ सचु चवांईऐ ॥ सचै अंदरि महलि सचि बुलाईऐ ॥ नानक सचु सदा सचिआरु सचि समाईऐ ॥ १५ ॥

पउड़ी॥ यदि हम सतिगुरु की निष्काम सेवा करें तो भ्रम दूर हो जाते है। हमें वहीं कार्य करना चाहिए जो सतिगुरु करने के लिए कहते हैं। यदि सतिगुरु जी दयालु हो जाएँ, तो ही हम नाम सिमरन कर सकते हैं। मनमुख व्यक्ति के लिए अज्ञानता का अँधेरा बना रहता और वे झूठे धन की ही कमाई करते रहते हैं। जो व्यक्ति सत्य के दर सत्य प्रभु का नाम–सिमरन करता है, ऐसे सत्यवादी को सत्य प्रभु के आत्मस्वरूप में बुला लिया जाता है। हे नानक! जो व्यक्ति हमेशा ही सत्य–नाम का सिमरन करता रहता है, वहीं सत्यवादी है और वह सत्य में ही समा जाता है॥ १५॥

सलोकु मः १ ॥ कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिआ ॥ कूड़ु अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कह चड़िआ ॥ हउ भालि विकुंनी होई ॥ आधेरै राहु न कोई ॥ विचि हउमै करि दुखु रोई ॥ कहु नानक किनि बिधि गति होई ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ कलियुग छुरी है और बादशाह कसाई है। धर्म पंख लगाकर दुनिया में से उड़ गया है अर्थात् कलियुग में धर्म का नाश हो गया है। झूठ की इस अमावस्या की रात्रि में सत्य का चाँद कहीं उदय हुआ दिखाई नहीं देता अर्थात हर तरफ झूठ ही विद्यमान है और सत्य का नाश हो गया है। मैं सत्य की खोज–तलाश करती हुई पागल हो गई हूँ, सारी दुनिया ही झूठ के अंधेरे में अहंकारवश दुखी होकर विलाप कर रही है। हे नानक! इस झूठ से किस विधि द्वारा जीवों की मुक्ति होगी ?॥ १॥

मः ३ ॥ कलि कीरति परगटु चानणु संसारि ॥ गुरमुखि कोई उतरै पारि ॥ जिस नो नदरि करे तिसु देवै ॥ नानक गुरमुखि रतनु सो लेवै ॥ २ ॥

महला ३॥ कलियुग में भगवान की महिमा दुनिया में ज्ञान रूपी प्रकाश प्रगट कर देती है। कोई विरला गुरमुख ही भवसागर को तर कर पार होता है। हे नानक! जिस व्यक्ति पर भगवान अपनी कृपा–दृष्टि करता है, उसे ही अपनी महिमा की देन प्रदान करता है किन्तु गुरमुख ही नाम रूपी रत्न प्राप्त करता है॥ २॥

पउड़ी ॥ भगता तै सैसारीआ जोड़ु कदे न आइआ ॥ करता आपि अभुलु है न भुलै किसै दा भुलाइआ ॥ भगत आपे मेलिअनु जिनी सचो सचु कमाइआ ॥ सैसारी आपि खुआइअनु जिनी कूड़ु बोलि बोलि बिखु खाइआ ॥ चलण सार न जाणनी कामु करोधु विसु वधाइआ ॥ भगत करनि हरि चाकरी जिनी अनदिनु नामु धिआइआ ॥ दासनि दास होइ कै जिनी विचहु आपि गवाइआ ॥ ओना खसमै कै दरि मुख उजले सचै सबदि सुहाइआ ॥ १६ ॥

पउड़ी॥ भगवान के भक्तों एवं दुनिया के जीवों में मिलाप कभी भी योग्य नहीं बना। भगवान स्वयं अचूक है। वह किसी दूसरे के भुलाने से भी भूल नहीं करता। जिन्होंने सत्यवादी बनकर सत्य की ही साधना की है ऐसे भक्तों को भगवान ने स्वयं ही अपने साथ मिलाया हुआ है। जिन लोगों ने झूठ बोल–बोलकर माया रूपी विष खाया है, ऐसे लोगों को भगवान ने स्वयं ही कुमार्गगामी कर दिया हैं। जिन्होंने दिन–रात नाम का ही ध्यान किया है, ऐसे भक्तजन ही भगवान की भक्ति एवं सेवा करते रहते हैं। जिन्होंने प्रभु के दासों के दास बनकर अपने अन्तर्मन से अहंकार को मिटा दिया है, मालिक–प्रभु के दरबार में उनके ही मुख उज्ज्वल होते हैं और वे सत्य नाम द्वारा सत्य के दरबार में बड़ी शोभा प्राप्त करते हैं॥ १६॥

सलोकु मः १ ॥ सबाही सालाह जिनी धिआइआ इक मनि ॥ सेई पूरे साह वखतै उपरि लड़ि मुए ॥ दूजै बहुते राह मन कीआ मती खिंडीआ ॥ बहुतु पए असगाह गोते खाहि न निकलहि ॥ तीजै मुही गिराह भुख तिखा दुइ भउकीआ ॥ खाधा होइ सुआह भी खाणे सिउ दोसती ॥ चउथै आई ऊंघ अखी मीटि पवारि गइआ ॥ भी उठि रचिओनु वादु सै वरि्आ की पिड़ बधी ॥ सभे वेला वखत सभि जे अठी भउ होइ ॥ नानक साहिबु मनि वसै सचा नावणु होइ ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ जो व्यक्ति प्रातः काल एकाग्रचित होकर ईश्वर का यश करते और उसे स्मरण करते हैं, वही पूर्ण सम्राट हैं और सही वक्त पर लड़कर मृत्यु को प्राप्त हुए हैं। दूसरे प्रहर में मन की वृत्ति बिखर जाती है और मन अनेक मार्गो पर दौड़ता है। मनुष्य बहुत सारे धंधों के झंझटों रूपी अथाह सागर में गिर जाता है और ऐसे गोते खाता है कि उसमें से बाहर निकल ही नहीं सकता। तीसरे प्रहर में जब भूख और प्यास रूपी दोनों कुत्ते भौंकने लग जाते हैं तो मनुष्य को उनके मुँह में भोजन एवं पानी डालना पड़ता है, जब पहला भोजन का ग्रास हजम हो जाता है तो और भोजन खाने की लालसा उत्पन्न होती है। चौथे प्रहर में मनुष्य को निद्रा आ जाती है, वह अपने नेत्र बन्द कर लेता है और स्वप्न मण्डलों में चला जाता है। फिर निद्रा से उठकर, वह पुनः विवाद खड़ा कर देता है और यूं अखाड़ा बनता है, जिस तरह उसने सैकड़ों वर्ष जीना है। यद्यपि मनुष्य के मन में आठों प्रहर परमात्मा का भय बना रहे तो उसके लिए सभी वक्त नाम–सिमरन हेतु शुभ हैं। हे नानक ! यदि भगवान मनुष्य के हृदय में निवास कर ले तो उसका यह सच्चा स्नान हो जाता है॥१॥

मः २ ॥ सेई पूरे साह जिनी पूरा पाइआ ॥ अठी वेपरवाह रहनि इकतै रंगि ॥ दरसनि रूपि अथाह विरले पाईअहि ॥ करमि पूरै पूरा गुरू पूरा जा का बोलु ॥ नानक पूरा जे करे घटै नाही तोलु ॥ २ ॥

महला २॥ वही व्यक्ति पूर्ण शाह हैं, जिन्होंने पूर्ण प्रभु को पा लिया है। वह दुनिया से बेपरवाह होकर आठों प्रहर एक परमेश्वर के प्रेम में मग्न रहते हैं। ऐसे विरले पुरुष हैं जो अनंत परमात्मा के दर्शन प्राप्त करते हैं। बड़ी तकदीर से ही पूर्ण गुरु मिलता है, जिस गुरु के सारे ही किए वचन पूर्ण होते हैं। हे नानक ! यदि गुरु जी किसी सेवक को सम्पूर्ण बना दें तो उसका विवेक कम नहीं होता॥ २॥

पउड़ी ॥ जा तूं ता किआ होरि मै सचु सुणाईऐ ॥ मुठी धंधै चोरि महलु न पाईऐ ॥ एनै चिति कठोरि सेव गवाईऐ ॥ जितु घटि सचु न पाइ सु भंनि घड़ाईऐ ॥ किउ करि पूरै वटि तोलि तुलाईऐ ॥ कोइ न आखै घटि हउमै जाईऐ ॥ लईअनि खरे परखि दरि बीनाईऐ ॥ सउदा इकतु हटि पूरै गुरि पाईऐ ॥ १७ ॥

पउड़ी॥ हे मेरे प्रभु ! मैं सत्य कहता हूँ जब तुम मेरे हो, तो मुझे शेष और क्या चाहिए ? जिस जीव–स्त्री को लौकिक कार्यों रूपी चोरों ने लूट लिया है, वह प्रभु के आत्म–स्वरूप को प्राप्त नहीं कर सकती। उसने अपने निष्ठुर हृदय के कारण सेवा–भक्ति का अवसर गंवा दिया है। जिसके हृदय में सत्यस्वरूप परमात्मा का निवास नहीं होता उसको नष्ट करके नए तरीके से बनाया जाता है। अर्थात् उसका जन्म–मरण होता रहता है। ऐसा व्यक्ति अपने कर्मो का लेखा देते वक्त पूरे माप सहित तोलने से कैसे पूरा तोला जाएगा? यदि जीव का अहंकार दूर हो जाए तो उसके कर्मो के तोल को कोई भी कम नहीं कहेगा। सभी जीव चतुर प्रभु के दरबार पर परखे जाते हैं कि वह धर्मात्मा है अथवा पापी हैं। नाम का सौदा एक सत्संग रूपी दुकान से ही मिलता है। यह पूर्ण गुरु द्वारा ही प्राप्त होता है॥ १७॥

सलोक मः २ ॥ अठी पहरी अठ खंड नावा खंडु सरीरु ॥ तिसु विचि नउ निधि नामु एकु भालहि गुणी गहीरु ॥ करमवंती सालाहिआ नानक करि गुरु पीरु ॥ चउथै पहरि सबाह कै सुरतिआ उपजै चाउ ॥ तिना दरीआवा सिउ दोसती मनि मुखि सचा नाउ ॥ ओथै अंम्रितु वंडीऐ करमी होइ पसाउ ॥ कंचन काइआ कसीऐ वंनी चड़ै चड़ाउ ॥ जे होवै नदरि सराफ की बहुड़ि न पाई ताउ ॥ सती पहरी सतु भला बहीऐ पड़िआ पासि ॥ ओथै पापु पुंनु बीचारीऐ कूड़ै घटै रासि ॥ ओथै खोटे सटीअहि खरे कीचहि साबासि ॥ बोलणु फादलु नानका दुखु सुखु खसमै पासि ॥ १ ॥

श्लोक महला २॥ दिन–रात के वक्त को आठ भागों में विभक्त किया हुआ है, जिन्हें आठ प्रहर कहा जाता है। एक प्रहर तीन घण्टों का होता है। इन आठों प्रहरों में से एक प्रहर का संबंध शरीर से है। इस प्रहर को अगली तुकों में प्रातः काल का चतुर्थ प्रहर कहा गया है। उस शरीर में अद्वितीय परमात्मा के नाम की नवनिधि है। भले और गंभीर पुरुष उन निधियों को ढूँढते हैं। हे नानक! भाग्यशाली मनुष्य गुरु अथवा पीर धारण करके भगवान की महिमा गायन करते हैं। दिन के चौथे प्रहर प्रातः काल नाम में वृत्ति लगाने वाले व्यक्तियों के मन में उत्साह उत्पन्न होता है। उनकी मित्रता नदियों से होती है अर्थात् सत्संग रूपी नदिया पर जाकर स्नान है और उनके मन एवं मुख में सत्य नाम विद्यमान है। उस सत्संग में अमृत रूप ईश्वर का नाम बांटा जाता है और भाग्यशालियों को नाम की देन प्राप्त होती है। उनके सोने जैसे अर्थात् शुद्ध तन को जब नाम रूपी कसौटी लगाई जाती है तो उनके तन को भक्ति का सुन्दर रंग चढ़ जाता है। जब सतिगुरु रूपी सर्राफ की उन पर कृपा–दृष्टि हो जाती है तो उन्हें जन्म–मरण रूपी कष्ट नहीं मिलता। शेष सातों प्रहरों में सत्य बोलना एवं विद्वानों के पास बैठना अति उत्तम है। वहाँ पाप एवं पुण्य की पहचान होती है और झूठ की पूँजी कम होती है। वहाँ खोटे पुरुष दूर फैंके जाते हैं और भले पुरुषों को शाबाशी मिलती है। हे नानक! जीवों को दुःख एवं सुख भगवान स्वयं ही देता है और मनुष्य का किसी प्रकार का शिकवा करना व्यर्थ है॥ १॥

मः २ ॥ पउणु गुरू पाणी पिता माता धरति महतु ॥ दिनसु राति दुइ दाई दाइआ खेलै सगल जगतु ॥ चंगिआईआ बुरिआईआ वाचे धरमु हदूरि ॥ करमी आपो आपणी के नेड़ै के दूरि ॥ जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि ॥ नानक ते मुख उजले होर केती छुटी नालि ॥ २ ॥

महला २॥ सारी दुनिया का गुरु पवन है, जल पिता है और पृथ्वी बड़ी माता है। दिन एवं रात्रि दोनों उपपिता एवं उपमाता है, जिनकी गोद में सारी दुनिया खेल रही है। परलोक में भगवान के समक्ष यमराज जीवों के शुभ–अशुभ कर्मों का विवेचन करता है। अपने–अपने कर्मों के अनुसार कुछ जीव ईश्वर के निकट एवं कुछ जीव दूर होते हैं। जिन्होंने भगवान का नाम–सिमरन किया है, वे पूजा–तपस्या इत्यादि की मेहनत को साकार कर गए हैं। हे नानक! ऐसे प्राणियों के चेहरे उज्ज्वल हुए हैं और अनेकों ही उनके साथ वाले मुक्ति प्राप्त कर गए हैं॥ २॥

पउड़ी ॥ सचा भोजनु भाउ सतिगुरि दसिआ ॥ सचे ही पतीआइ सचि विगसिआ ॥ सचै कोटि गिरांइ निज घरि वसिआ ॥ सतिगुरि तुठै नाउ प्रेमि रहसिआ ॥ सचै दै दीबाणि कूड़ि न जाईऐ ॥ झूठो झूठु वखाणि सु महलु खुआईऐ ॥ सचै सबदि नीसाणि ठाक न पाईऐ ॥ सचु सुणि बुझि वखाणि महलि बुलाईऐ ॥ १८ ॥

पउड़ी॥ सतिगुरु ने जिस व्यक्ति को यह ज्ञान बता दिया है कि भगवान का प्रेम ही खाने योग्य सत्य–भोजन है, वही व्यक्ति सत्य प्रभु में निष्ठावान हुआ है और सत्य में समाकर फूल की तरह खिल

गया है। उसके गांव रूपी शरीर में जो भगवान का आत्मस्वरूप रूपी किला है, वहाँ स्थित हो गया है। सतिगुरु ने प्रसन्न होकर उसे नाम प्रदान किया है और वह भगवान के प्रेम से कृतार्थ हो गया है। कोई भी व्यक्ति सत्य के दरबार में झूठ की कमाई करके नहीं जा सकता। जो व्यक्ति केवल झूठ ही बोलता रहता है, वह आत्मस्वरूप में नहीं जा सकता। जो व्यक्ति सत्य–नाम का परवाना लेकर जाता है, उसे आत्मस्वरूप में जाने से कोई भी रोक नहीं सकता। जो व्यक्ति भगवान के सत्यनाम को सुनता, समझता एवं उसे जपता है, वह आत्म–स्वरूप में निमंत्रित कर लिया जाता है॥१८॥

सलोकु मः १ ॥ पहिरा अगनि हिवै घरु बाधा भोजनु सारु कराई ॥ सगले दूख पाणी करि पीवा धरती हाक चलाई ॥ धरि ताराजी अंबरु तोली पिछै टंकु चड़ाई ॥ एवडु वधा मावा नाही सभसै नथि चलाई ॥ एता ताणु होवै मन अंदरि करी भि आखि कराई ॥ जेवडु साहिबु तेवड दाती दे दे करे रजाई ॥ नानक नदरि करे जिसु उपरि सचि नामि वडिआई ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ यदि मैं अग्नि की पोशाक धारण कर लूँ, हिम में अपना घर बना लूँ और लोहे को अपना आहार बना लूँ, समस्त दुखों को यदि मैं जल की भाँति पान कर लूँ और धरती को पशुओं की भाँति हाँक कर चलाऊँ। आकाश को तराजू में रखकर तोलूँ और यदि मैं दूसरी ओर चार माशे के तोल से तोलूँ, यदि मैं अपने शरीर को इतना बड़ा कर लूँ कि कहीं भी समा न सकूँ और यदि मैं समस्त जीवों के नाक में नुकेल डालकर अपने हुक्म में चलाता रहूँ, यदि मेरे मन में इतना बल हो कि इस तरह की बातें मैं करूँ और अपने कथन से दूसरों से भी कराऊँ पर यह सब कुछ व्यर्थ है। जितना महान परमेश्वर है उतने महान ही उसके दान हैं। वह अपनी इच्छानुसार जीवों को दान देता है। हे नानक ! जिस पर प्रभु अपनी कृपा–दृष्टि करता है, उसको सत्य नाम की महानता प्राप्त होती है॥१॥

मः २ ॥ आखणु आखि न रजिआ सुनणि न रजे कंन ॥ अखी देखि न रजीआ गुण गाहक इक वंन ॥ भुखिआ भुख न उतरै गली भुख न जाइ ॥ नानक भुखा ता रजै जा गुण कहि गुणी समाइ ॥ २ ॥

महला २॥ इन्सान का मुँह बातें कह–कह कर तृप्त नहीं होता, उसके कान बातें अथवा संगीत सुन–सुनकर संतुष्ट नहीं होते और उसकी आँखें सुन्दर रूप देख–देखकर तृप्त नहीं होतीं। प्रत्येक अंग एक प्रकार की विशेषता का ग्राहक है। भूखों की भूख निवृत्त नहीं होती। मौखिक बातों से भूख दूर नहीं होती। हे नानक ! भूखा मनुष्य तभी तृप्त होता है यदि वह गुणों के भण्डार परमात्मा की महिमा करके उसमें समा जाता है॥ २॥

पउड़ी ॥ विणु सचे सभु कूड़ु कूड़ु कमाईऐ ॥ विणु सचे कूड़िआरु बंनि चलाईऐ ॥ विणु सचे तनु छारु छारु रलाईऐ ॥ विणु सचे सभ भुख जि पैझै खाईऐ ॥ विणु सचे दरबारु कूड़ि न पाईऐ ॥ कूड़ै लालचि लगि महलु खुआईऐ ॥ सभु जगु ठगिओ ठगि आईऐ जाईऐ ॥ तन महि त्रिसना अगि सबदि बुझाईऐ ॥ १६ ॥

पउड़ी॥ सत्य नाम के अलावा सभी कार्य झूठे हैं और झूठ का ही कर्म करते हैं। सत्यनाम के सिवाय अन्य झूठे कार्य करने वाले लोगों को यमदूत बांधकर यमपुरी ले जाते हैं। सत्य नाम के अलावा यह तन मिट्टी समान है और मिट्टी में ही मिल जाता है। सत्यनाम के सिवाय मनुष्य जितना बढ़िया पहनता एवं खाता है, उससे उसकी भूख में ही वृद्धि होती है। मनुष्य सत्य नाम के बिना झूठे कार्य करके प्रभु के दरबार को प्राप्त नहीं कर सकता। सच्चे परमात्मा के अलावा झूठे लोग ईश्वर के मन्दिर

को प्राप्त नहीं होते। झूठे लोभ से सम्मिलित होकर मनुष्य प्रभु के मन्दिर को गंवा देता है। सारा जगत् धोखेबाज माया ने छल लिया है और प्राणी योनियों में फँसकर जन्म लेता और मरता रहता है। प्राणी के तन में तृष्णा की अग्नि विद्यमान है। यह प्रभु के नाम से ही बुझाई जा सकती है॥ १६॥

सलोक मः १ ॥ नानक गुरु संतोखु रुखु धरमु फुलु फल गिआनु ॥ रसि रसिआ हरिआ सदा पकै करमि धिआनि ॥ पति के साद खादा लहै दाना कै सिरि दानु ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ हे नानक! गुरु संतोष रूपी वृक्ष है, इस वृक्ष को धर्म रूपी फूल लगता है और ज्ञान रूपी फल लगते हैं। हरि-रस रूपी जल से सींचा हुआ यह वृक्ष सदैव ही हरा-भरा रहता है। भगवान की कृपा से ध्यान द्वारा यह ज्ञान रूपी फल पकते हैं। इस ज्ञान रूपी फल को खाने वाला मनुष्य पति-प्रभु के मिलाप के आनंद को प्राप्त करता है। ज्ञान रूपी दान ही समस्त दानों में से बड़ा दान है॥ १॥

मः १ ॥ सुइने का बिरखु पत परवाला फुल जवेहर लाल ॥ तितु फल रतन लगहि मुखि भाखित हिरदै रिदै निहालु ॥ नानक करमु होवै मुखि मसतकि लिखिआ होवै लेखु ॥ अठिसठि तीरथ गुर की चरणी पूजै सदा विसेखु ॥ हंसु हेतु लोभु कोपु चारे नदीआ अगि ॥ पवहि दझहि नानका तरीऐ करमी लगि ॥ २ ॥

महला १॥ गुरु सोने का वृक्ष है, जिसके पत्ते मूंगे हैं और इसके पुष्प जवाहर एवं माणिक हैं। उस पौधे को गुरु के मुखारबिंद के वचन की मणि का फल लगा हुआ है। जो व्यक्ति गुरु के वचनों को अपने हृदय में बसा लेता है, वह कृतार्थ हो जाता है। हे नानक! गुरु के शब्द रूपी फल उस व्यक्ति के मुँह में ही पड़ते हैं, जिस पर भगवान की कृपा होती है और उसके माथे पर तकदीर का शुभ लेख लिखा होता है। गुरु के चरणों में आने से अठसठ तीर्थों के स्नान से भी अधिक फल मिलता है। अतः हमेशा ही गुरु के चरणों की पूजा करनी चाहिए। हे नानक! हिंसा, मोह, लालच एवं क्रोध यह चारों ही अग्नि की नदियाँ हैं। इनमें पड़ने से प्राणी दग्ध हो जाता है। इन नदियों में से वहीं मनुष्य पार होते हैं जो भगवान की कृपा से नाम-सिमरन में लग जाते हैं॥ २॥

पउड़ी ॥ जीवदिआ मरु मारि न पछोताईऐ॥ झूठा इहु संसारु किनि समझाईऐ ॥ सचि न धरे पिआरु धंधै धाईऐ ॥ कालु बुरा खै कालु सिरि दुनीआईऐ ॥ हुकमी सिरि जंदारु मारे दाईऐ ॥ आपे देइ पिआरु मंनि वसाईऐ ॥ मुहतु न चसा विलंमु भरीऐ पाईऐ ॥ गुर परसादी बुझि सचि समाईऐ ॥ २० ॥

पउड़ी॥ जीवित ही मर जाओ अर्थात् अपने अहंकार को नष्ट कर दो। अहंकार को नष्ट करने के उपरांत पश्चाताप नहीं होगा। यह दुनिया झूठी है, परन्तु किसी विरले ने ही यह बात गुरु से समझी है। मनुष्य सत्यनाम से प्रेम नहीं करता और दुनिया के धंधों में लगकर भटकता रहता है। यम बहुत निर्दयी है और जीवों का नाश करने वाला है। यह दुनिया के लोगों पर सवार है। ईश्वर के आदेश से यमदूत अवसर पाकर मनुष्य के सिर पर डण्डा मारता है। परमेश्वर स्वयं ही अपना प्रेम प्रदान करता है और इसे प्राणी के मन में वास कराता है। मनुष्य का शरीर त्यागने में मुहूर्त अथवा क्षण भर का विलम्ब नहीं होता। गुरु की कृपा से इस भेद को समझ कर प्राणी सत्य में ही समा जाता है॥ २०॥

सलोकु मः १ ॥ तुमी तुमा विसु अकु धतूरा निमु फलु॥ मनि मुखि वसहि तिसु जिसु तूं चिति न आवही॥ नानक कहीऐ किसु हंढनि करमा बाहरे ॥ १॥

श्लोक महला १॥ हे प्रभु! जिस व्यक्ति को तू हृदय में याद नहीं आता, उस व्यक्ति के मन एवं मुँह में तुंबी, विष, आक, धतूरा एवं नीम फल जैसी कड़वाहट बनी रहती है। हे नानक! ऐसे भाग्यहीन व्यक्ति भटकते रहते हैं और उनकी दुखद दशा किसे बताई जाए॥ १॥

मः १॥ मति पंखेरू किरतु साथि कब उतम कब नीच ॥ कब चंदनि कब अकि डालि कब उची परीति ॥ नानक हुकमि चलाईऐ साहिब लगी रीति ॥ २ ॥

महला १॥ आदमी की मति एक पक्षी है। आदमी की किस्मत उस पक्षी के पंख हैं जो उसके साथ रहते हैं। यह पक्षी पंखों से उड़कर कभी उत्तम एवं कभी नीच स्थानों पर बैठता है। यह कभी स्वर्ग रूपी चंदन के वृक्ष और कभी नरक रूपी आक की डाली पर बैठता है। यह कभी भगवान से भी प्रेम कर लेता है। हे नानक ! भगवान प्राणियों को अपनी इच्छानुसार चलाता है। यह रीति आदिकाल से प्रचलित है॥ २॥

पउड़ी ॥ केते कहहि वखाण कहि कहि जावणा ॥ वेद कहहि वखिआण अंतु न पावणा ॥ पड़िऐ नाही भेदु बुझिऐ पावणा ॥ खटु दरसन कै भेखि किसै सचि समावणा ॥ सचा पुरखु अलखु सबदि सुहावणा ॥ मंने नाउ बिसंख दरगह पावणा ॥ खालक कउ आदेसु ढाढी गावणा ॥ नानक जुगु जुगु एकु मंनि वसावणा ॥ २१॥

पउड़ी॥ कितने ही लोग भगवान के गुणों का बखान कर रहे हैं और कितने ही लोग बखान कर करके दुनिया से चले गए हैं। वेद भगवान के गुणों का बखान करते हैं परन्तु उसके गुणों का अंत नहीं पा सकते। पढ़ने से उसका भेद नहीं पाया जा सकता। उसका भेद ज्ञान से ही पाया जाता है। षट्दर्शन के छः मत्त हैं परन्तु उनके द्वारा कोई विरला पुरुष ही परमात्मा में लीन होता है। जिस प्राणी ने गुरु की शिक्षा से सच्चा अलख पुरुष पाया है, वह शोभायमान है। जिन्होंने अनन्त ईश्वर के नाम का चिंतन–मनन किया है, वह उसके दरबार में जाता है। मैं ढाडी हूँ और सृष्टि के सृजनहार को प्रणाम करता उसका यशोगान करता रहता हूँ। हे नानक ! वह एक ईश्वर प्रत्येक युग में विद्यमान है और उसे ही अपने मन में बसाना चाहिए॥ २१॥

सलोकु महला २ ॥ मंत्री होइ अठूहिआ नागी लगै जाइ ॥ आपण हथी आपणै दे कूचा आपे लाइ ॥ हुकमु पइआ धुरि खसम का अती हू धका खाइ ॥ गुरमुख सिउ मनमुखु अड़ै डुबै हकि निआइ ॥ दुहा सिरिआ आपे खसमु वेखै करि विउपाइ ॥ नानक एवै जाणीऐ सभ किछु तिसहि रजाइ ॥ १ ॥

श्लोक महला २॥ यदि कोई आदमी मन्त्र तो बिच्छू का जानता हो, लेकिन सर्पों को जाकर पकड़ ले तो वह अपने हाथों से स्वयं अपने आपको अग्नि का लूका लगा लेता है। आदिकाल से ही ईश्वर का यह हुक्म हुआ है कि जो बुरा करता है वह भारी ठोकर खाता है। जो मनमुख इन्सान गुरमुख से विरोध करता है, वह नष्ट हो जाता है। यही सच्चा न्याय है। लोक एवं परलोक दोनों तरफ का न्याय करने वाला मालिक–प्रभु स्वयं ही न्याय करके देखता है। हे नानक ! इसे इस तरह समझो कि सबकुछ परमात्मा की इच्छानुसार ही हो रहा है॥ १॥

महला २ ॥ नानक परखे आप कउ ता पारखु जाणु ॥ रोगु दारू दोवै बुझै ता वैदु सुजाणु ॥ वाट न करई मामला जाणै मिहमाणु ॥ मूलु जाणि गला करे हाणि लाए हाणु ॥ लबि न चलई सचि रहै सो विसटु परवाणु ॥ सरु संधे आगास कउ किउ पहुचै बाणु ॥ अगै ओहु अगंमु है वाहेदड़ु जाणु ॥ २ ॥

महला २॥ हे नानक ! यदि मनुष्य अपने आप को परखे, केवल तभी उसे पारखी समझो। यदि मनुष्य रोग एवं औषधि दोनों को समझता हो तो ही वह चतुर वैद्य है। मानव को चाहिए कि वह इस दुनिया में स्वयं को एक अतिथि समझे तथा धर्म–मार्ग पर चलता हुआ दूसरों से विवाद मत करे। वह जगत् के मूल प्रभु को समझकर दूसरों से प्रभु बारे विचार–विमर्श करे। वह दुनिया में नाम–सिमरन

करने आया है तथा उसे कामादिक हानिकारक पापों को नष्ट कर देना चाहिए। जो लालच के मार्ग पर नहीं चलता और सत्य में वास करता है, वह मध्यस्थ ही प्रभु के दरबार में स्वीकृत होता है। यदि बाण आकाश को मारा जाए, वह बाण किस तरह वहाँ पहुँच सकता है? ऊपर वह आकाश अगम्य है, इसलिए समझ लीजिए कि बाण उलटकर बाण चलाने वाले पर ही लगेगा॥ २॥

पउड़ी ॥ नारी पुरख पिआरु प्रेमि सीगारीआ ॥ करनि भगति दिनु राति न रहनी वारीआ ॥ महला मंझि निवासु सबदि सवारीआ ॥ सचु कहनि अरदासि से वेचारीआ ॥ सोहनि खसमै पासि हुकमि सिधारीआ ॥ सखी कहनि अरदासि मनहु पिआरीआ ॥ बिनु नावै ध्रिगु वासु फिटु सु जीविआ ॥ सबदि सवारीआसु अंम्रितु पीविआ ॥ २२ ॥

पउड़ी॥ जीव–स्त्रियाँ अपने प्रभु–पति से मुहब्बत करती हैं और उन्होंने प्रेम का श्रृंगार किया हुआ है। दिन–रात वह प्रभु की भक्ति करती हैं और भक्ति करने से वह रुकती नहीं। परमेश्वर के मन्दिर में उनका निवास है और प्रभु के नाम से वह संवरी हुई हैं। वह विनीत होकर सच्चे हृदय से प्रार्थना करती हैं। वह अपने स्वामी के पास सुन्दर लगती हैं और पति–प्रभु के हुक्म में उसके पास पहुँची हैं। वह प्रभु को श्रद्धा से प्रेम करती है। वे सभी सखियां प्रभु के समक्ष प्रार्थना करती हैं। प्रभु–नाम के बिना मनुष्य का जीवन धिक्कार–योग्य है और उसका निवास भी धिक्कार योग्य है। जो जीव–स्त्री नाम द्वारा संवर गई है उसने ही नाम रूपी अमृत पान कर लिया है॥ २२॥

सलोकु मः १ ॥ मारू मीहि न त्रिपतिआ अगी लहै न भुख ॥ राजा राजि न त्रिपतिआ साइर भरे किसुक ॥ नानक सचे नाम की केती पुछा पुछ ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ जैसे मरुस्थल वर्षा से तृप्त नहीं होता वैसे ही अग्नि की भूख लकड़ियों से दूर नहीं होती। कोई भी सम्राट साम्राज्य से तृप्त नहीं होता और सागर को कभी कोई नहीं भर सका। हे नानक! भक्तजनों को सत्य नाम की कितनी भूख लगी रहती है, वह बताई नहीं जा सकती अर्थात् भक्त नाम जप–जप कर तृप्त ही नहीं होते॥१॥

महला २ ॥ निहफलं तसि जनमसि जावतु ब्रहम न बिंदते ॥ सागरं संसारसि गुर परसादी तरहि के ॥ करण कारण समरथु है कहु नानक बीचारि ॥ कारणु करते वसि है जिनि कल रखी धारि ॥ २ ॥

महला २॥ जब तक इन्सान को परमेश्वर का ज्ञान नहीं होता उसका जीवन व्यर्थ है। गुरु की कृपा से विरले पुरुष ही संसार सागर से पार होते हैं। नानक विचार कर कहते हैं कि परमेश्वर सब कार्य करने में समर्थ है। जगत् का कारण सृजनहार प्रभु के वश में है और प्रभु की कला ने इस जगत् को धारण किया हुआ है॥ २॥

पउड़ी ॥ खसमै कै दरबारि ढाढी वसिआ ॥ सचा खसमु कलाणि कमलु विगसिआ ॥ खसमहु पूरा पाइ मनहु रहसिआ ॥ दुसमन कढे मारि सजण सरसिआ ॥ सचा सतिगुरु सेवनि सचा मारगु दसिआ ॥ सचा सबदु बीचारि कालु विधउसिआ ॥ ढाढी कथे अकथु सबदि सवारिआ ॥ नानक गुण गहि रासि हरि जीउ मिले पिआरिआ ॥ २३ ॥

पउड़ी॥ भाट (यशोगान करने वाला) प्रभु के दरबार में वास करता है। सत्यस्वरूप परमेश्वर की महिमा गायन करने से उसका हृदय कंवल प्रफुल्लित हो गया है। ईश्वर से पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने से अपने हृदय में वह परम प्रसन्न हो गया है। उसने अपने हृदय में काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अहंकार इत्यादि शत्रुओं को मार कर बाहर निकाल दिया है और उसके सज्जन–सत्य, संतोष, दया एवं धर्म इत्यादि

प्रसन्न हो गए हैं। सच्चे सतिगुरु ने उसे प्रभु–मिलन का सन्मार्ग बता दिया है। सत्यस्वरूप ब्रह्म का चिन्तन करने से उसने काल (मृत्यु) को नष्ट कर दिया है। यशोगान करने वाला चारण अकथनीय प्रभु की महिमा बखान करता है और प्रभु नाम से श्रृंगारा गया है अर्थात् उसका जन्म सफल हो गया है। हे नानक! शुभ गुणों की पूँजी पकड़ कर रखने से उसने पूज्य परमेश्वर हरि से भेंट कर ली है॥ २३॥

सलोकु मः १ ॥ खतिअहु जंमे खते करनि त खतिआ विचि पाहि ॥ धोते मूलि न उतरहि जे सउ धोवण पाहि ॥ नानक बखसे बखसीअहि नाहि त पाही पाहि ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ हम जीवों के जन्म पूर्वकृत किए पापों के कारण हुए हैं। हम जन्म लेकर अब फिर पाप किए जा रहे हैं और अगले जन्मों में भी हम पाप कर्मों में ही पड़ेंगे। हमारे यह पाप धर्म–कर्म करने से बिल्कुल ही नहीं मिटते, चाहे हम हजारों बार तीर्थ–स्नान करके पाप धोने का प्रयास ही कर लें। हे नानक! यदि प्रभु क्षमादान कर दें तो यह पाप क्षमा कर दिए जाते हैं, अन्यथा अत्यन्त प्रताड़ना मिलती है॥१॥

मः १ ॥ नानक बोलणु झखणा दुख छडि मंगीअहि सुख ॥ सुखु दुखु दुइ दरि कपड़े पहिरहि जाइ मनुख ॥ जिथै बोलणि हारीऐ तिथै चंगी चुप ॥ २ ॥

महला १॥ हे नानक! यदि हम भगवान से दुखों को छोड़कर सुख ही माँगें, तो यह बोलना व्यर्थ ही है। सुख एवं दुख यह दोनों ही भगवान के दरबार से मिले हुए वस्त्र हैं, जिन्हें मानव दुनिया में आकर पहनता है। जहाँ बोलने से पराजित ही होना है, वहाँ चुप रहने में ही भलाई है॥ २॥

पउड़ी ॥ चारे कुंडा देखि अंदरु भालिआ ॥ सचै पुरखि अलखि सिरजि निहालिआ ॥ उझड़ि भुले राह गुरि वेखालिआ ॥ सतिगुर सचे वाहु सचु समालिआ ॥ पाइआ रतनु घराहु दीवा बालिआ ॥ सचै सबदि सलाहि सुखीए सच वालिआ ॥ निडरिआ डरु लगि गरबि सि गालिआ ॥ नावहु भुला जगु फिरै बेतालिआ ॥ २४ ॥

पउड़ी॥ चारों दिशाओं में ढूँढने के पश्चात मैंने परमात्मा को अपने हृदय में ही ढूँढ लिया है। उस अलक्ष्य, सद्पुरुष एवं सृष्टिकर्त्ता को देखकर कृतार्थ हो गया हूँ। मैं उजाड़ संसार में भटक गया था लेकिन गुरदेव ने मुझे सद्मार्ग दिखा दिया है। सत्य के पुंज सतिगुरु धन्य हैं, जिनकी दया से मैंने सत्य स्वरूप परमात्मा की आराधना की है। सतिगुरु ने मेरे अन्तर्मन में ही ज्ञान रूपी दीपक प्रज्वलित कर दिया है, जिससे मैंने अपने हृदय–घर में नाम रूपी रत्न को पा लिया है। गुरु के शब्द द्वारा सत्यस्वरूप परमात्मा की महिमा–स्तुति करके मैं सुखी हो गया हूँ और सत्यवादी बन गया हूँ। जिन लोगों को प्रभु का भय नहीं, उन्हें यम का भय लगा रहता है और वे अहंकार में ही नष्ट हो जाते हैं। नाम को विस्मृत करके संसार प्रेत की भाँति भटकता रहता है॥ २४॥

सलोकु मः ३ ॥ भै विचि जंमै भै मरै भी भउ मन महि होइ ॥ नानक भै विचि जे मरै सहिला आइआ सोइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ मानव भय में जन्म लेता है और भय में ही प्राण त्याग देता है। जन्म–मरण के उपरांत भी उसके मन में भय ही बना रहता है। हे नानक! यदि मानव प्रभु के भय में मरता है अर्थात् मानता है तो उसका जगत् में आगमन सफल सुखदायक हो जाता है॥ १॥

मः ३ ॥ भै विणु जीवै बहुतु बहुतु खुसीआ खुसी कमाइ ॥ नानक भै विणु जे मरै मुहि कालै उठि जाइ ॥ २ ॥

महला ३॥ ईश्वर का भय धारण किए बिना प्राणी बहुत ज्यादा देर तक जीता और आनन्द ही आनन्द प्राप्त करता है। हे नानक ! यदि वह ईश्वर के भय बिना प्राण त्याग दे तो वह चेहरे पर कालिख लगा कर दुनिया से चला जाता है॥ २॥

पउड़ी ॥ सतिगुरु होइ दइआलु त सरधा पूरीऐ ॥ सतिगुरु होइ दइआलु न कबहूं झूरीऐ ॥ सतिगुरु होइ दइआलु ता दुखु न जाणीऐ ॥ सतिगुरु होइ दइआलु ता हरि रंगु माणीऐ ॥ सतिगुरु होइ दइआलु ता जम का डरु केहा ॥ सतिगुरु होइ दइआलु ता सद ही सुखु देहा ॥ सतिगुरु होइ दइआलु ता नव निधि पाईऐ ॥ सतिगुरु होइ दइआलु त सचि समाईऐ ॥ २५ ॥

पउड़ी॥ जिस व्यक्ति पर सतिगुरु दयालु हो जाते हैं, उसकी श्रद्धा पूर्ण हो जाती है। जब सतिगुरु दयालु हो जाएँ तो मनुष्य कभी पश्चाताप नहीं करता। जब सतिगुरु दयालु हो जाएँ तो मनुष्य दुख को जानता ही नहीं। जब सतिगुरु दयालु हो जाएँ तो मनुष्य हरि की प्रीति का आनंद प्राप्त करता है। जब सतिगुरु जी दयालु हो जाएँ तो मनुष्य को यम का भय नहीं रहता। जब सतिगुरु जी दयालु हो जाएँ तो तन को सदा सुख प्राप्त होता है। जब सतिगुरु जी दयालु हो जाएँ तो नवनिधियाँ प्राप्त हो जाती हैं। जब सतिगुरु दयालु हो जाएँ तो मनुष्य सत्य में ही समा जाता है॥२५॥

सलोकु मः १ ॥ सिरु खोहाइ पीअहि मलवाणी जूठा मंगि मंगि खाही ॥ फोलि फदीहति मुहि लैनि भड़ासा पाणी देखि सगाही ॥ भेडा वागी सिरु खोहाइनि भरीअनि हथ सुआही ॥ माऊ पीऊ किरतु गवाइनि टबर रोवनि धाही ॥ ओना पिंडु न पतलि किरिआ न दीवा मुए किथाऊ पाही ॥ अठसठि तीरथ देनि न ढोई ब्रहमण अंनु न खाही ॥ सदा कुचील रहहि दिनु राती मथै टिके नाही ॥ झुंडी पाइ बहनि निति मरणै दड़ि दीबाणि न जाही ॥ लकी कासे हथी फुंमण अगो पिछी जाही ॥ ना ओइ जोगी ना ओइ जंगम ना ओइ काजी मुंला ॥ दयि विगोए फिरहि विगुते फिटा वतै गला ॥ जीआ मारि जीवाले सोई अवरु न कोई रखै ॥ दानहु तै इसनानहु वंजे भसु पई सिरि खुथै ॥ पाणी विचहु रतन उपंने मेरु कीआ माधाणी ॥ अठसठि तीरथ देवी थापे पुरबी लगै बाणी ॥ नाइ निवाजा नातै पूजा नावनि सदा सुजाणी ॥ मुइआ जीवदिआ गति होवै जां सिरि पाईऐ पाणी ॥ नानक सिरखुथे सैतानी एना गल न भाणी ॥ वुठै होइऐ होइ बिलावलु जीआ जुगति समाणी ॥ वुठै अंनु कमादु कपाहा सभसै पड़दा होवै ॥ वुठै घाहु चरहि निति सुरही सा धन दही विलोवै ॥ तितु घिइ होम जग सद पूजा पइऐ कारजु सोहै ॥ गुरु समुंदु नदी सभि सिखी नातै जितु वडिआई ॥ नानक जे सिरखुथे नावनि नाही ता सत चटे सिरि छाई ॥ १ ॥

श्लोक महला १॥ वह सिर के केश उखड़वाते हैं, मलिन जल पीते और दूसरों की जूठन बार–बार माँगते और खाते हैं। वह गंदगी बिखेरते हैं, अपने मुख से गन्दी हवा लेते हैं और जल देखने से संकोच करते हैं। भस्म से लथपथ हुए हाथों से भेड़ों की भाँति वह अपने केश उखड़वाते हैं। माता–पिता के प्रति जो कर्म था अर्थात् उनकी सेवा की मर्यादा वह त्याग देते हैं और उनके सगे–संबंधी फूट–फूट कर अश्रु बहाते हैं। उनके लिए कोई भी पिण्डदान, पत्तल क्रिया नहीं करता है, न ही अन्तिम संस्कार करता है, न ही कोई मिट्टी का दीपक प्रज्वलित करता है। मरणोपरांत वह कहाँ फैंके जाएँगे ? अठसठ तीर्थ स्थान भी उनको आश्रय नहीं देते और ब्राह्मण उनका भोजन नहीं करते। वह सदा दिन–रात मलिन रहते हैं और उनके माथे पर तिलक भी नहीं। शोक करने वालों की भाँति वह समूह बना कर बैठते हैं। अथवा जैसे मृतक के घर महिलाएँ मुख पर कपड़ा डालकर शोक

मनाती हैं और प्रभु—भक्तों के सत्संग में नहीं जाते। वे कमर से माँगने वाले प्याले लटकाते हुए और हाथों में धागों के गुच्छों सहित आगे—पीछे चलते हैं। न ही वह योगी हैं, न ही वह शिव के उपासक, न ही वह काजी और न ही मुल्लां हैं। प्रभु द्वारा कुमार्गगामी किए हुए वह अपमानित हुए फिरते हैं और उनका समूह समुदाय भ्रष्ट हो जाता है। वह यह भी नहीं समझते कि प्राणियों को केवल वही परमात्मा मारता और पुनर्जीवित करता है। दूसरा कोई भी उनको बचा नहीं सकता। वह पुण्य करने एवं स्नान करने से वंचित रह जाते हैं। उनके उखड़े हुए सिरों पर राख पड़ती है। वह इस बात को भी नहीं समझते कि जब देवताओं एवं दैत्यों ने मिलकर क्षीर सागर को सुमेर पर्वत की मथनी बनाकर मंथन किया था तो जल में से १४ रत्न निकले थे। देवताओं ने अठसठ तीर्थ—स्थलों को नियुक्त किया है। जहाँ पर्व त्यौहार मनाए जाते हैं और भजन गाए जाते हैं। अर्थात् वहाँ वाणी द्वारा हरि की कथा होती है। स्नान उपरांत मुसलमान नमाजें पढ़ते हैं और स्नान करके हिन्दु पूजा—अर्चना करते हैं और सभी बुद्धिमान सदैव नहाते हैं। जब मनुष्य जम्मते—मरते हैं, तब उनके सिर पर जल डाला जाता है ताकि उनकी गति हो जाए। हे नानक! सिर उखड़ाने वाले शैतान हैं और स्नान की बात उन्हें अच्छी नहीं लगती। जब जल बरसता है, हर तरफ प्रसन्नता होती है। प्राणियों के जीवन की युक्ति जल में विद्यमान है। जब जल बरसता है, अनाज, गन्ना, कपास इत्यादि जो सबके पोषक हैं उत्पन्न होते हैं। कपास, जो सबको ढांपने वाली चादर बनती है। जब मेघ बरसते हैं, गाएँ सदा घास चरती हैं और उनके दूध से दहीं होता है। तब स्त्रियां मंथन करती हैं। उसमें से जो घी निकलता है, उससे होम, यज्ञ, पवित्र भण्डारे और नित्य पूजा सदा ही सम्पन्न होते हैं और घी से अन्य संस्कार सुशोभित होते हैं। गुरु सागर है, गुरु—वाणी सभी नदियां (उनकी सेविकाएँ) हैं, जिन में स्नान करने से महानता प्राप्त होती है। हे नानक! यदि सिर मुंडाने वाले मुनि स्नान नहीं करते हैं तो उनके सिर पर सौ अंजुलि भस्म ही पड़ती है॥ १॥

मः २ ॥ अगी पाला कि करे सूरज केही राति ॥ चंद अनेरा कि करे पउण पाणी किआ जाति ॥ धरती चीजी कि करे जिसु विचि सभु किछु होइ ॥ नानक ता पति जाणीऐ जा पति रखै सोइ ॥ २ ॥

महला २॥ सर्दी अग्नि का क्या बिगाड़ सकती है? रात्रि सूर्य का क्या बिगाड़ सकती है? अंधेरा चाँद का क्या बिगाड़ सकता है? कोई जाति पवन एवं जल का क्या बिगाड़ सकती है? धरती का वस्तुएँ क्या बिगाड़ सकती हैं, जिसके भीतर सब वस्तुएँ उत्पन्न होती हैं। हे नानक! प्राणी केवल तभी प्रतिष्ठित समझा जाता है, जब प्रभु उसका मान—सम्मान बरकरार रखे॥ २॥

पउड़ी ॥ तुधु सचे सुबहानु सदा कलाणिआ ॥ तूं सचा दीबाणु होरि आवण जाणिआ ॥ सचु जि मंगहि दानु सि तुधै जेहिआ ॥ सचु तेरा फुरमानु सबदे सोहिआ ॥ मंनिऐ गिआनु धिआनु तुधै ते पाइआ ॥ करमि पवै नीसानु न चलै चलाइआ ॥ तूं सचा दातारु नित देवहि चड़हि सवाइआ ॥ नानकु मंगै दानु जो तुधु भाइआ ॥ २६ ॥

पउड़ी॥ हे मेरे आश्चर्यजनक परमेश्वर! मैं सदैव तेरी महिमा—स्तुति करता हूँ। तू सदैव स्थिर है और तेरा दरबार सत्य है तथा अन्य सभी जीव जन्मते—मरते रहते हैं। हे प्रभु! जो तुझसे सत्यनाम का दान माँग लेता है, वह तेरा नाम जप—जप कर तेरे जैसा ही बन जाता है। तेरा हुक्म सत्य है और मनुष्य तेरे नाम से शोभा पाते हैं। हे प्रभु! तेरा हुक्म मानने से ही मनुष्य को तुझसे ज्ञान—ध्यान की सूझ मिलती है। तेरे दरबार में जाने हेतु नाम रूपी परवाना तेरी कृपा से ही मिलता है तथा वहाँ अन्य कोई परवाना चलाया नहीं चलता। हे प्रभु! तू ही सच्चा दाता हैं और सदैव ही जीवों को देते रहते हो। तेरे भण्डार कभी भी समाप्त नहीं होते अपितु अधिकतर होते जाते हैं। हे प्रभु! नानक तुझसे वहीं दान माँगता है, जो तुझे अच्छा लगता है॥ २६॥

सलोकु मः २ ॥ दीखिआ आखि बुझाइआ सिफती सचि समेउ ॥ तिन कउ किआ उपदेसीऐ जिन गुरु नानक देउ ॥ १ ॥

श्लोक महला २॥ जिन्हें गुरु ने शिक्षा अथवा उपदेश देकर समझा दिया है, वे सत्यनाम की महिमा करके सत्य में ही समा गए हैं। अब उनको उपदेश देने का क्या अभिप्राय है? जिनका गुरु नानक देव है॥१॥

मः १ ॥ आपि बुझाए सोई बूझै ॥ जिसु आपि सुझाए तिसु सभु किछु सूझै ॥ कहि कहि कथना माइआ लूझै ॥ हुकमी सगल करे आकार ॥ आपे जाणै सरब वीचार ॥ अखर नानक अखिओ आपि ॥ लहै भराति होवै जिसु दाति ॥ २ ॥

महला १॥ जिसको प्रभु स्वयं समझा देता है, वही उसको समझता है। जिसे ईश्वर स्वयं ज्ञान प्रदान करता है, वह सर्वज्ञ जान लेता है। जो व्यक्ति कह–कह कर कथन ही करता रहता है, वह माया के झंझटों में फँसा रहता है। प्रभु ने अपने हुक्म से ही सूर्य, चन्द्रमा एवं पृथ्वी इत्यादि की रचना की है। वह स्वयं ही सबके विचारों को समझता है। हे नानक! प्रभु ने स्वयं ही वाणी का उच्चारण किया है। जिसको यह देन मिल जाती है, उसका अज्ञानता का अँधेरा दूर हो जाता है॥ २॥

पउड़ी ॥ हउ ढाढी वेकारु कारै लाइआ ॥ राति दिहै कै वार धुरहु फुरमाइआ ॥ ढाढी सचै महलि खसमि बुलाइआ ॥ सची सिफति सालाह कपड़ा पाइआ ॥ सचा अंम्रित नामु भोजनु आइआ ॥ गुरमती खाधा रजि तिनि सुखु पाइआ ॥ ढाढी करे पसाउ सबदु वजाइआ ॥ नानक सचु सालाहि पूरा पाइआ ॥ २७ ॥ सुधु

पउड़ी॥ मुझ बेकार ढाढी को प्रभु ने अपनी भक्ति कार्य में लगा लिया है। आदिकाल से प्रभु ने मुझे रात–दिन अपना यशोगान करने का हुक्म दिया है। स्वामी ने ढाढी को अपने सत्य दरबार में निमंत्रण दिया है। परमात्मा ने अपनी सच्ची महिमा–स्तुति की पोशाक मुझे पहना दी है। तब से सत्यनाम मेरा अमृत स्वरूप आहार बन गया है। जो गुरु के उपदेश से इस आहार को पेट भर कर सेवन करते हैं, वे सदा सुख पाते हैं। गुरु–वाणी गायन करने से मैं चारण परमेश्वर की महानता का प्रसार करता हूँ। हे नानक! सत्यनाम की स्तुति करके मैंने परमात्मा को प्राप्त कर लिया है॥ २७॥ सुधु॥

{रागु माझ समाप्त}

☆☆☆

रागु गउड़ी गुआरेरी महला १ चउपदे दुपदे

१ ਓ सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

परमात्मा एक है, उसका नाम सत्य है। वह सृष्टि का रचयिता सर्वशक्तिमान है। वह निडर है, उसकी किसी से शत्रुता नहीं, वह कालातीत, अयोनि एवं स्वयंभू है। उसकी लब्धि गुरु–कृपा से होती है।

भउ मुचु भारा वडा तोलु ॥ मन मति हउली बोले बोलु ॥ सिरि धरि चलीऐ सहीऐ भारु ॥ नदरी करमी गुर बीचारु ॥ १ ॥ भै बिनु कोइ न लंघसि पारि ॥ भै भउ राखिआ भाइ सवारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भै तनि अगनि भखै भै नालि ॥ भै भउ घड़ीऐ सबदि सवारि ॥ भै बिनु घाड़त कचु निकच ॥ अंधा सचा अंधी सट ॥ २ ॥ बुधी बाजी उपजै चाउ ॥ सहस सिआणप पवै न ताउ ॥ नानक मनमुखि बोलणु वाउ ॥ अंधा अखरु वाउ दुआउ ॥ ३ ॥ १ ॥

ईश्वर का भय बहुत भारी और बड़ा वजनदार है। मन की मति पर चलने वाला मनुष्य तुच्छ मति अनुसार अपने मुँह से घटिया वचन ही बोलता है। प्रभु का भय अपने सिर पर धारण करके चलना चाहिए और उसका बोझ सहन करना चाहिए। प्रभु की कृपा–दृष्टि एवं भाग्य से ही मनुष्य को गुरु की शिक्षा मिलती है॥ १॥ परमात्मा के भय बिना कोई भी प्राणी संसार सागर से पार नहीं हो सकता। प्रभु के साथ जीव के प्रेम को प्रभु का भय ही संवार कर रखता है॥ १॥ रहाउ॥ मनुष्य के शरीर की क्रोध रूपी अग्नि ईश्वर के भय से जल जाती है। प्रभु के भय से शब्द की रचना सुन्दर बन जाती है। प्रभु के भय के बिना शब्द की रचना बहुत ही कच्ची रह जाती है। शब्द रचने वाला सांचा अर्थात् मनुष्य की बुद्धि ज्ञानहीन होती है और ज्ञानहीन बुद्धि पर ज्ञान रूपी हथौड़े की चोट कोई प्रभाव नहीं करती॥ २॥ जीवन बाजी खेलने का चाव मनुष्य की बुद्धि द्वारा ही उत्पन्न होता है। हजारों ही चतुराइयों के बावजूद ईश्वर–भय की तपस (आंच) नहीं लगती। हे नानक! मनमुख की बातचीत निरर्थक होती है। उसका उपदेश निकम्मा और व्यर्थ होता है॥ ३॥ १॥

गउड़ी महला १ ॥ डरि घरु घरि डरु डरि डरु जाइ ॥ सो डरु केहा जितु डरि डरु पाइ ॥ तुधु बिनु दूजी नाही जाइ ॥ जो किछु वरतै सभ तेरी रजाइ ॥ १ ॥ डरीऐ जे डरु होवै होरु ॥ डरि डरि डरणा मन का सोरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ना जीउ मरै न डूबै तरै ॥ जिनि किछु कीआ सो किछु करै ॥ हुकमे आवै हुकमे जाइ ॥ आगै पाछै हुकमि समाइ ॥ २ ॥ हंसु हेतु आसा असमानु ॥ तिसु विचि भूख बहुतु नै सानु ॥ भउ खाणा पीणा आधारु ॥ विणु खाधे मरि होहि गवार ॥ ३ ॥ जिस का कोइ कोई कोइ कोइ ॥ सभु को तेरा तूं सभना का सोइ ॥ जा के जीअ जंत धनु मालु ॥ नानक आखणु बिखमु बीचारु ॥ ४ ॥ २ ॥

अपने हृदय–घर में प्रभु के भय को धारण करना चाहिए। जब प्रभु का भय हृदय–घर में निवास कर जाता है तो मृत्यु का भय भयभीत होकर भाग जाता है। यह प्रभु भय किस प्रकार का है, जिस द्वारा मृत्यु का भय भयभीत हो जाता है। हे भगवान! तेरे अलावा दूसरा कोई सुख का स्थान नहीं। जो कुछ भी होता है, सब तेरी इच्छानुसार ही होता है॥ १॥ हे प्रभु! हम भयभीत तब हों, जब कोई दूसरा भय कायम रहे। ईश्वर–भय बिना दूसरे के भय से सहम जाना मन का शोर है॥ १॥ रहाउ॥ आत्मा न ही मरती है, न ही जल में डूबती है और न ही जल में तैरती है। जिस परमात्मा ने सृष्टि

रचना की है, वहीं सब कुछ करता है। मनुष्य ईश्वर के हुक्म से संसार में आता है और उसके हुक्मानुसार संसार से कूच करता है। वर्तमान काल एवं भविष्य काल में भी प्राणी उसके हुक्म में लीन रहता है॥ २॥ जिस व्यक्ति के हृदय में हिंसा, मोह, आशा एवं अहंकार होता है उसमें नदी के जल की तरह माया की अत्यधिक भूख होती है। ऐसे व्यक्ति को इनसे मुक्ति पाने के लिए प्रभु के भय को अपना भोजन—पानी एवं जीवन का आधार बनाना चाहिए। जो मूर्ख व्यक्ति प्रभु के भय का सेवन नहीं करते, वह मरते एवं बर्बाद होते रहते हैं॥३॥ यदि प्राणी का कोई अपना है तो वह कोई बहुत ही विरला है। हे परमेश्वर! सभी जीव तेरे हैं और तुम सबके हो। हे नानक! जिस भगवान के ये जीव—जन्तु एवं धनमाल निर्मित किए हैं, उस बारे कहना एवं विचार करना बड़ा कठिन है॥ ४॥ २॥

गउड़ी महला १ ॥ माता मति पिता संतोखु ॥ सतु भाई करि एहु विसेखु ॥ १ ॥ कहणा है किछु कहणु न जाइ ॥ तउ कुदरति कीमति नही पाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सरम सुरति दुइ ससुर भए ॥ करणी कामणि करि मन लए ॥ २ ॥ साहा संजोगु वीआहु विजोगु ॥ सचु संतति कहु नानक जोगु ॥ ३ ॥ ३ ॥

मैंने बुद्धि को अपनी माता, संतोष को अपना पिता और सत्य को अपना भाई बना लिया है। बुद्धि, संतोष एवं सत्य मेरे अच्छे संबंधी हैं॥ १॥ भगवान के बारे में कुछ कहना चाहता हूँ परन्तु मुझसे कुछ कहा नहीं जा सकता। हे भगवान! तेरी कुदरत का मूल्यांकन नहीं पाया जा सकता॥ १॥ रहाउ॥ लज्जा एवं सुरति दोनों मेरे सास—ससुर बन गए हैं। सदाचरण को मैंने अपनी पत्नी बना लिया है॥ २॥ सत्संग मेरे विवाह का समय है और संसार से टूट जाना मेरा विवाह है। हे नानक! ऐसे प्रभु मिलन से मेरे यहाँ सत्य की संतान उत्पन्न हुई है॥ ३॥ ३॥

गउड़ी महला १ ॥ पउणै पाणी अगनी का मेलु ॥ चंचल चपल बुधि का खेलु ॥ नउ दरवाजे दसवा दुआरु ॥ बुझु रे गिआनी एहु बीचारु ॥ १ ॥ कथता बकता सुनता सोई ॥ आपु बीचारे सु गिआनी होई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ देही माटी बोलै पउणु ॥ बुझु रे गिआनी मूआ है कउणु ॥ मूई सुरति बादु अहंकारु ॥ ओहु न मूआ जो देखणहारु ॥ २ ॥ जै कारणि तटि तीरथ जाही ॥ रतन पदारथ घट ही माही ॥ पड़ि पड़ि पंडितु बादु वखाणै ॥ भीतरि होदी वसतु न जाणै ॥ ३ ॥ हउ न मूआ मेरी मुई बलाइ ॥ ओहु न मूआ जो रहिआ समाइ ॥ कहु नानक गुरि ब्रहमु दिखाइआ ॥ मरता जाता नदरि न आइआ ॥ ४ ॥ ४ ॥

मानव—शरीर की रचना पवन, जल एवं अग्नि के मिलन से हुई है। यह शरीर चंचल मन एवं चतुर बुद्धि का बनाया हुआ एक खिलौना है। इस शरीर को दो नेत्र, दो कान, दो नासिका, मुँह, गुदा एवं इन्द्री रूपी नौ द्वार लगे हुए हैं और दसम द्वार गुप्त है। हे ज्ञानी! इस विचार को समझो॥ १॥ भगवान स्वयं ही कथा करने वाला, बोलने वाला एवं सुनने वाला है। वहीं व्यक्ति ज्ञानी होता है जो अपने आत्मिक जीवन को सोचता—समझता है॥ १॥ रहाउ॥ यह शरीर मिट्टी है और पवन उसमें बोलती है। हे ज्ञानी! इस तथ्य को समझो कि वह कौन हैं? जो प्राण त्याग गया है? यह शरीर एवं विवाद पैदा करने वाला अहंकार मरे हैं। भगवान का अंश आत्मा नहीं मरी जो दुनिया रूपी खेल देखने वाली है॥ २॥ जिस नाम रूपी रत्न—पदार्थ के लिए तुम तीर्थों के तट पर जाते हो, वह नाम रूपी अमूल्य रत्न तेरे हृदय में ही विद्यमान है। पण्डित ग्रंथ पढ़—पढ़ कर परस्पर विवाद करते हैं परन्तु वह उस नाम रूपी अमूल्य वस्तु को नहीं जानते जो उनके हृदय में ही है॥३॥ मैं नहीं मरा, अपितु मेरी विपदा लाने वाली अज्ञानता रूपी बला मरी है। वह आत्मा नहीं मरी, जो सब में समाई हुई है। हे नानक! गुरु ने मुझे ब्रह्म के दर्शन करवा दिए हैं और अब मुझे कोई भी मरता एवं जन्म लेता दिखाई नहीं देता॥ ४॥ ४॥

गउड़ी महला १ दखणी ॥ सुणि सुणि बूझै मानै नाउ ॥ ता कै सद बलिहारै जाउ ॥ आपि भुलाए ठउर न ठाउ ॥ तूं समझावहि मेलि मिलाउ ॥ १ ॥ नामु मिलै चलै मै नालि ॥ बिनु नावै बाधी सभ कालि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खेती वणजु नावै की ओट ॥ पापु पुंनु बीज की पोट ॥ कामु क्रोधु जीअ महि चोट ॥ नामु विसारि चले मनि खोट ॥ २ ॥ साचे गुर की साची सीख ॥ तनु मनु सीतलु साचु परीख ॥ जल पुराइनि रस कमल परीख ॥ सबदि रते मीठे रस ईख ॥ ३ ॥ हुकमि संजोगी गड़ि दस दुआर ॥ पंच वसहि मिलि जोति अपार ॥ आपि तुलै आपे वणजार ॥ नानक नामि सवारणहार ॥ ४ ॥ ५ ॥

मैं हमेशा ही उस पर कुर्बान जाता हूँ, जो प्रभु–नाम को निरन्तर सुनकर उसे समझने का प्रयास करता, एवं उस पर आस्था रखता है। हे प्रभु ! जिसे तू स्वयं विस्मृत कर देता है, उसे कहीं भी स्थान नहीं मिलता। तू ही जीव को ज्ञान देता है और फिर उसे गुरु से साक्षात्कार करवा कर अपने साथ मिला लेता है॥ १॥ मेरी यही कामना है कि मुझे नाम प्राप्त हो, जो मेरे साथ परलोक में जाएगा। प्रभु के नाम के अलावा सारी दुनिया काल ने बंधन में डाली हुई है॥ १॥ रहाउ॥ मेरी कृषि एवं व्यापार प्रभु के नाम के आश्रय में ही है। मनुष्य ने अपने सिर पर पाप एवं पुण्य रूपी कर्मों के बीज की पोटली उठाई हुई है। काम, क्रोध प्राणी के अन्तर्मन में घाव हैं। खोटे मन वाले प्रभु नाम को विस्मृत करके संसार से चले जाते हैं॥ २॥ सच्चे गुरु की शिक्षा सत्य है। सत्य नाम का सही मूल्यांकन जानने से तन एवं मन शीतल हो जाते हैं। सतिगुरु की यही परख है कि वह विकारों रूपी स्वादों से यूं निर्लिप्त रहता है जैसे कमल का फूल कीचड़ से निर्लिप्त रहता है। प्रभु के नाम में मग्न हुआ वह गन्ने के रस की भाँति मीठा है॥ ३॥ यह दस द्वारों वाला शरीर रूपी किला परमात्मा के हुक्म में बनाया गया है। इसमें अपार प्रभु की ज्योति के साथ मिलकर पाँच ज्ञान–इन्द्रियाँ रहती हैं। परमात्मा स्वयं ही व्यापारी है और स्वयं ही तुलने वाला सौदा है। हे नानक ! परमात्मा का नाम ही जीव का जीवन सुन्दर बनाने वाला है॥४॥५॥

गउड़ी महला १ ॥ जातो जाइ कहा ते आवै ॥ कह उपजै कह जाइ समावै ॥ किउ बाधिओ किउ मुकती पावै ॥ किउ अबिनासी सहजि समावै ॥ १ ॥ नामु रिदै अंम्रितु मुखि नामु ॥ नरहर नामु नरहर निहकामु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहजे आवै सहजे जाइ ॥ मन ते उपजै मन माहि समाइ ॥ गुरमुखि मुकतो बंधु न पाइ ॥ सबदु बीचारि छुटै हरि नाइ ॥ २ ॥ तरवर पंखी बहु निसि बासु ॥ सुख दुखीआ मनि मोह विणासु ॥ साझ बिहाग तकहि आगासु ॥ दह दिसि धावहि करमि लिखिआसु ॥ ३ ॥ नाम संजोगी गोइलि थाटु ॥ काम क्रोध फूटै बिखु माटु ॥ बिनु वखर सूनो घरु हाटु ॥ गुर मिलि खोले बजर कपाट ॥ ४ ॥ साधु मिलै पूरब संजोग ॥ सचि रहसे पूरे हरि लोग ॥ मनु तनु दे लै सहजि सुभाइ ॥ नानक तिन कै लागउ पाइ ॥ ५ ॥ ६ ॥

क्या यह जाना जा सकता है कि आत्मा कहाँ से आई है ? वह कहाँ से उत्पन्न हुई है और वह कहाँ जाकर समा जाती है ? वह किस तरह मोह–माया के बंधनों में फँस जाती है और कैसे बंधनों से मुक्ति प्राप्त करती है ? वह किस तरह सहज ही अविनाशी प्रभु में समा जाती है॥ १॥ जिसके हृदय में परमात्मा का नाम निवास करता है और मुँह से भी अमृत–नाम उच्चरित होता है। वह प्रभु का अमृत नाम निष्काम होकर जपता रहता है और इच्छा रहित हो जाता है॥ १॥ रहाउ॥ मनुष्य सहज ही इस दुनिया में आता है और सहज ही दुनिया से चला जाता है अर्थात् वह सहज ही जन्मता–मरता रहता है। मन (की तृष्णाओं) से वह उत्पन्न हुआ है और मन (की तृष्णाओं) में ही वह समा जाता है। गुरमुख मोह–माया के बंधनों से मोक्ष प्राप्त कर लेता है और वह सांसारिक बंधनों में

नहीं पड़ता। वह शब्द का चिन्तन करता है और प्रभु—नाम द्वारा मुक्त हो जाता है॥ २॥ बहुत सारे पक्षी रात्रिकाल को पेड़ पर आकर निवास करते हैं। कई सुखी हैं और कई दुखी हैं। मन के मोह कारण वह सारे नाश हो जाते हैं। जब रात्रि बीतती है और सूर्योदय होता है, वह आकाश की ओर देखते हैं। विधाता की विधि अनुसार कर्मों के कारण वे दसों दिशाओं में उड़ जाते हैं॥ ३॥ जो नाम संजोगी हैं, वह संसार को चरागाह में एक अस्थिर स्थान समझते हैं। भोग—विलास एवं अहंकार की विषैली गागर अन्त में फूट जाती है। नाम के सौदे सूत के बिना देहि रूपी घर एवं मन की दुकान शून्य है। गुरु के मिलन से वज्र कपाट खुल जाते हैं॥ ४॥ किस्मत से ही संत मिलते हैं। परमात्मा के भक्त सत्य में हर्षित होते हैं। हे नानक ! मैं उनके चरणों पर नतमस्तक हूँ, जो अपना मन एवं तन समर्पित करने से सहज ही अपने प्रभु को पा लेते हैं॥ ५॥ ६॥

गउड़ी महला १ ॥ कामु क्रोधु माइआ महि चीतु ॥ झूठ विकारि जागै हित चीतु ॥ पूंजी पाप लोभ की कीतु ॥ तरु तारी मनि नामु सुचीतु ॥ १ ॥ वाहु वाहु साचे मै तेरी टेक ॥ हउ पापी तूं निरमलु एकु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अगनि पाणी बोलै भड़वाउ ॥ जिहवा इंद्री एकु सुआउ ॥ दिसटि विकारी नाही भउ भाउ ॥ आपु मारे ता पाए नाउ ॥ २ ॥ सबदि मरै फिरि मरणु न होइ ॥ बिनु मूए किउ पूरा होइ ॥ परपंचि विआपि रहिआ मनु दोइ ॥ थिरु नाराइणु करे सु होइ ॥ ३ ॥ बोहिथि चड़उ जा आवै वारु ॥ ठाके बोहिथ दरगह मार ॥ सचु सालाही धंनु गुरदुआरु ॥ नानक दरि घरि एकंकारु ॥ ४ ॥ ७ ॥

तेरा मन काम, क्रोध एवं माया के मोह में लीन है। उनके मोह के कारण तेरे मन में झूठ एवं पाप उदय हो गए हैं। तुमने पाप एवं लोभ की पूँजी संग्रह की हुई है। अतः तू शुद्ध हृदय से मन द्वारा पावन नाम का जाप करके भवसागर से पार हो जा॥ १॥ हे मेरे सच्चे प्रभु ! तू धन्य—धन्य है। मुझे केवल तेरा ही सहारा है। हे प्रभु ! मैं पापी हूँ, एक तू ही पावन हैं॥ १॥ रहाउ॥ अग्नि व जल इत्यादि पंच तत्वों से बने शरीर में श्वास ऊँची—ऊँची गूँजते हैं। जिह्वा व इन्द्रिय अपना—अपना स्वाद प्राप्त करते हैं। तेरी दृष्टि विकारों में लीन है और तुझे प्रभु का भय एवं प्रेम नहीं। यदि प्राणी अपना अहंकार नष्ट कर दे तो वह नाम को प्राप्त कर लेता है॥ २॥ जो व्यक्ति शब्द द्वारा अहंकार को समाप्त कर देता है, उसे दोबारा मरना नहीं पड़ता। अहंकार को समाप्त किए बिना वह पूरा कैसे हो सकता है ? मन दुनिया के प्रपंचों एवं द्वैतभाव में लीन हो रहा है। एक नारायण ही स्थिर है और दुनिया में वही होता है जो वह करता है॥३॥ जब मेरी बारी आएगी तो मैं भवसागर से पार होने के लिए नाम रूपी जहाज पर सवार हो जाऊँगा। जो जहाज पर सवार होने से वर्जित हो जाते हैं, उनकी प्रभु के दरबार में खूब पिटाई होती है। गुरु का दरबार धन्य है, जहाँ सत्यस्वरूप परमात्मा का यशोगान किया जाता है। हे नानक ! अद्वितीय एक ईश्वर प्रत्येक हृदय—घर में व्यापक हो रहा है॥ ४॥ ७॥

गउड़ी महला १ ॥ उलटिओ कमलु ब्रहमु बीचारि ॥ अंम्रित धार गगनि दस दुआरि ॥ त्रिभवणु बेधिआ आपि मुरारि ॥ १ ॥ रे मन मेरे भरमु न कीजै ॥ मनि मानिऐ अंम्रित रसु पीजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जनमु जीति मरणि मनु मानिआ ॥ आपि मूआ मनु मन ते जानिआ ॥ नजरि भई घरु घर ते जानिआ ॥ २ ॥ जतु सतु तीरथु मजनु नामि ॥ अधिक बिथारु करउ किसु कामि ॥ नर नाराइण अंतरजामि ॥ ३ ॥ आन मनउ तउ पर घर जाउ ॥ किसु जाचउ नाही को थाउ ॥ नानक गुरमति सहजि समाउ ॥ ४ ॥ ८ ॥

ब्रह्म का चिंतन करने से मोह—माया में उल्टा पड़ा हृदय—कमल बदल कर सीधा हो जाता है। दसम द्वार रूपी गगन से अमृत रस की धारा बहने लग जाती है। मुरारि—प्रभु तीनों लोकों में स्वयं ही

व्यापक हो रहा है॥ १॥ हे मेरे मन! किसी दुविधा में मत पड़। यदि मन विश्वस्त हो जाए तो वह नाम रूपी अमृत रस का पान करने लगता है॥ १॥ रहाउ॥ जब मन अपने अहंत्व को नाश करना स्वीकृत कर लेता है तो यह जीवन की बाजी को विजय कर लेता है। जब मन का अहंत्व नाश हो जाता है तो उसे हृदय में ही परमात्मा बारे ज्ञान हो जाता है। जब परमात्मा की कृपा होती है तो हृदय–घर में उसे आत्म–स्वरूप की पहचान हो जाती है॥ २॥ ईश्वर का नाम ही सच्चा ब्रह्मचार्य, सत्य तीर्थ एवं स्नान है। यदि मैं नाम को छोड़ कर अन्य अधिकतर आडम्बर करूँ तो वह सब व्यर्थ हैं। चूंकि नारायण बड़ा अन्तर्यामी है॥३॥ यदि भगवान के सिवाय मैं किसी दूसरे पर श्रद्धा धारण करूँ, तो ही मैं पराए घर जाऊँ। मैं नाम की देन किससे माँगूं? भगवान के सिवाय मेरे लिए कोई स्थान नहीं है। हे नानक! गुरु के उपदेश से मैं सहज ही सत्य में समा जाऊँगा॥ ४॥८॥

गउड़ी महला १ ॥ सतिगुरु मिलै सु मरणु दिखाए ॥ मरण रहण रसु अंतरि भाए ॥ गरबु निवारि गगन पुरु पाए ॥ १ ॥ मरणु लिखाइ आए नही रहणा ॥ हरि जपि जापि रहणु हरि सरणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु मिलै त दुबिधा भागै ॥ कमलु बिगासि मनु हरि प्रभ लागै ॥ जीवतु मरै महा रसु आगै ॥ २ ॥ सतिगुरि मिलिऐ सच संजमि सूचा ॥ गुर की पउड़ी ऊचो ऊचा ॥ करमि मिलै जम का भउ मूचा ॥ ३ ॥ गुरि मिलिऐ मिलि अंकि समाइआ ॥ करि किरपा घरु महलु दिखाइआ ॥ नानक हउमै मारि मिलाइआ ॥ ४ ॥ ६ ॥

यदि सतिगुरु मिल जाए तो वह जीवित ही मृत्यु का मार्ग दिखा देता है। इस तरह की मृत्यु उपरांत जीवित रहने की प्रसन्नता मन को लुभाती है। अहंकार को मिटाकर ही दसम द्वार पाया जाता है॥ १॥ मानव जीव अपनी मृत्यु का समय लिखवा कर ही दुनिया में आते हैं और वे दुनिया में अधिक समय निवास नहीं कर सकते। इसलिए मनुष्य को दुनिया में आकर हरि का जाप करते रहना और हरि की शरणागत वास करना चाहिए॥ १॥ रहाउ॥ यदि सतिगुरु मिल जाए तो समस्त दुविधा भाग जाती है। हृदय कमल प्रफुल्लित हो जाता है और मन हरि–प्रभु के साथ जुड़ जाता है। जो व्यक्ति अहंकार का नाश करके जीता है, वह परलोक में नाम रूपी महारस का पान करता है॥ २॥ सतिगुरु के मिलन से मनुष्य सत्यवादी, त्यागी एवं पावन हो जाता है। गुरु का मार्ग धर्म की सीढ़ी है और उस सीढ़ी द्वारा मनुष्य सर्वोच्च आत्मिक अवस्था वाला हो जाता है। सतिगुरु भगवान की कृपा से ही मिलता है और मृत्यु का भय नाश हो जाता है॥ ३॥ गुरु को मिलने से मनुष्य प्रभु से मिल जाता है और उसकी गोद में समा जाता है। अपनी कृपा–दृष्टि करके गुरु जी प्राणी को उसके अपने हृदय–घर में प्रभु के आत्म–स्वरूप के दर्शन करवा देते हैं। हे नानक! गुरु प्राणी के अहंकार को नाश करके परमेश्वर के साथ मिला देते हैं॥ ४॥ ६॥

गउड़ी महला १ ॥ किरतु पइआ नह मेटै कोइ ॥ किआ जाणा किआ आगै होइ ॥ जो तिसु भाणा सोई हूआ ॥ अवरु न करणै वाला दूआ ॥ १ ॥ ना जाणा करम केवड तेरी दाति ॥ करमु धरमु तेरे नाम की जाति ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तू एवडु दाता देवणहारु ॥ तोटि नाही तुधु भगति भंडार ॥ कीआ गरबु न आवै रासि ॥ जीउ पिंडु सभु तेरै पासि ॥ २ ॥ तू मारि जीवालहि बखसि मिलाइ ॥ जिउ भावी तिउ नामु जपाइ ॥ तूं दाना बीना साचा सिरि मेरै ॥ गुरमति देइ भरोसै तेरै ॥ ३ ॥ तन महि मैलु नाही मनु राता ॥ गुर बचनी सचु सबदि पछाता ॥ तेरा ताणु नाम की वडिआई ॥ नानक रहणा भगति सरणाई ॥ ४ ॥ १० ॥

पूर्व जन्म के कर्मों के कारण जो मेरी किस्मत में लिखा हुआ है, उसे कोई भी मिटा नहीं सकता। मैं नहीं जानता कि मेरे साथ आगे क्या बीतेगा ? जो कुछ ईश्वर की इच्छा है, वहीं कुछ हुआ है। प्रभु के अलावा दूसरा कोई करने वाला नहीं॥ १॥ हे ईश्वर ! मैं नहीं जानता कि तेरी कृपा की देन कितनी बड़ी है। सभी शुभ कर्म, धर्म, श्रेष्ठ जाति तेरे नाम अधीन हैं॥१॥ रहाउ॥ हे ईश्वर ! तू देन देने वाला इतना बड़ा दाता है कि तेरी भक्ति के भण्डार कभी कम नहीं होते। अहंकार करने से कोई भी कार्य सम्पूर्ण नहीं होता। हे प्रभु ! मेरी आत्मा एवं शरीर सभी तेरे पास अर्पण हैं॥ २॥ हे भगवान ! तू जीव को मार कर फिर जीवित कर देता है और तू ही क्षमा करके जीव को अपने साथ मिल लेता है। जैसे तुझे उपयुक्त लगता है वैसे ही तू जीव से अपना नाम सिमरन करवाता है। हे मेरे परमेश्वर ! तुम बड़े बुद्धिमान हो और मेरे मन की दशा जानते हो, तुम मेरे रक्षक हो और सत्य स्वरूप हो। हे प्रभु ! मुझे गुरु की मति दीजिए, चूंकि मैं तेरे भरोसे पर ही बैठा हूँ॥ ३॥ जिसका हृदय प्रभु के प्रेम में मग्न है, उसके तन में पापों की कोई मलिनता नहीं। मैंने तेरे सत्य–नाम को गुरु की वाणी द्वारा पहचान लिया है। मेरे शरीर में तेरा ही दिया हुआ बल है और तूने ही मुझे अपने नाम की ख्याति प्रदान की है। हे नानक! मुझे तो तेरी भक्ति की शरण में ही रहना है॥ ४॥ १०॥

गउड़ी महला १ ॥ जिनि अकथु कहाइआ अपिओ पीआइआ ॥ अन भै विसरे नामि समाइआ ॥ १ ॥ किआ डरीऐ डरु डरहि समाना ॥ पूरे गुर कै सबदि पछाना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसु नर रामु रिदै हरि रासि ॥ सहजि सुभाइ मिले साबासि ॥ २ ॥ जाहि सवारै साझ बिआल ॥ इत उत मनमुख बाधे काल ॥ ३ ॥ अहिनिसि रामु रिदै से पूरे ॥ नानक राम मिले भ्रम दूरे ॥ ४ ॥ ११ ॥

जिस प्राणी ने अकथनीय परमात्मा को स्मरण किया है और दूसरों को आराधना हेतु प्रेरित किया है, उस प्राणी ने स्वयं अमृत पान किया है। वह प्राणी दूसरे समस्त भय विस्मृत कर देता है, क्योंकि वह ईश्वर के नाम में समा जाता है॥ १॥ हम क्यों भयभीत हों, जब तमाम भय परमात्मा के भय में नष्ट हो जाते हैं। पूर्ण गुरु के शब्द द्वारा मैंने ईश्वर को पहचान लिया है॥ १॥ रहाउ॥ जिस व्यक्ति के हृदय में राम का निवास हो जाता है, उसे हरि–नाम की पूँजी मिल जाती है और उसे सहज ही प्रभु के दरबार में प्रशंसा भी मिलती है॥ २॥ परमात्मा जिन स्वेच्छाचारी जीवों को संध्याकाल एवं प्रातःकाल मोह–माया रुपी निद्रा में मग्न रखता है, ऐसे मनमुख इहलोक तथा परलोक में काल द्वारा बंधे रहते हैं॥ ३॥ जिन व्यक्तियों के हृदय में दिन–रात राम का निवास होता है, वहीं पूर्ण संत हैं। हे नानक ! जिसे राम मिल जाता है, उसका भ्रम दूर हो जाता है॥ ४॥ ११॥

गउड़ी महला १ ॥ जनमि मरै त्रै गुण हितकारु ॥ चारे बेद कथहि आकारु ॥ तीनि अवसथा कहहि वखिआनु ॥ तुरीआवसथा सतिगुर ते हरि जानु ॥ १ ॥ राम भगति गुर सेवा तरणा ॥ बाहुड़ि जनमु न होइ है मरणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चारि पदारथ कहै सभु कोई ॥ सिम्रिति सासत पंडित मुखि सोई ॥ बिनु गुर अरथु बीचारु न पाइआ ॥ मुकति पदारथु भगति हरि पाइआ ॥ २ ॥ जा कै हिरदै वसिआ हरि सोई ॥ गुरमुखि भगति परापति होई ॥ हरि की भगति मुकति आनंदु ॥ गुरमति पाए परमानंदु ॥ ३ ॥ जिनि पाइआ गुरि देखि दिखाइआ ॥ आसा माहि निरासु बुझाइआ ॥ दीना नाथु सरब सुखदाता ॥ नानक हरि चरणी मनु राता ॥ ४ ॥ १२ ॥

जिस व्यक्ति का त्रिगुणात्मक दुनिया से प्रेम है, वह जन्मता–मरता ही रहता है। चारों ही वेद सृष्टि का कथन करते हैं। वह मन की तीन अवस्थाओं का बखान करते हैं। मन की तुरीयावस्था भगवान रूप सतिगुरु से ही जानी जाती है॥ १॥ राम की भक्ति एवं गुरु की सेवा करने से प्राणी भवसागर से पार

हो जाता है। जो भवसागर से पार हो जाता है, उसका पुनः दुनिया में जन्म-मरण नहीं होता॥ १॥ रहाउ॥ प्रत्येक प्राणी धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चार उत्तम पदार्थों का वर्णन करता है। सत्ताइस स्मृतियों, छः शास्त्रों और पण्डितों के मुख से यही सुना जाता है। गुरु के बिना अर्थ का ज्ञान किसी ने भी नहीं पाया। मुक्ति पदार्थ अर्थात् मोक्ष ईश्वर की भक्ति द्वारा ही प्राप्त होता है॥ २॥ जिस व्यक्ति के हृदय में परमात्मा का निवास हो जाता है, उसे गुरु के माध्यम से परमात्मा की भक्ति प्राप्त हो जाती है। परमात्मा की भक्ति करने से मोक्ष एवं आनंद प्राप्त हो जाता है। गुरु की मति द्वारा उसे परमानन्द प्राप्त होता है॥ ३॥ जिसने गुरु को पा लिया है, गुरु स्वयं ही उसे भगवान के दर्शन करवा देता है। मुझे आशावादी को गुरु ने निर्लिप्त रहना सिखा दिया है। दीनानाथ प्रभु जीवों को सर्व सुख प्रदान करने वाला है। हे नानक! मेरा मन भगवान के सुन्दर चरणों में मग्न हो गया है॥ ४॥ १२॥

गउड़ी चेती महला १ ॥ अंम्रित काइआ रहै सुखाली बाजी इहु संसारो ॥ लबु लोभु मुचु कूड़ु कमावहि बहुतु उठावहि भारो ॥ तूं काइआ मै रुलदी देखी जिउ धर उपरि छारो ॥ १ ॥ सुणि सुणि सिख हमारी ॥ सुक्रितु कीता रहसी मेरे जीअड़े बहुड़ि न आवै वारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हउ तुधु आखा मेरी काइआ तूं सुणि सिख हमारी ॥ निंदा चिंदा करहि पराई झूठी लाइतबारी ॥ वेलि पराई जोहहि जीअड़े करहि चोरी बुरिआरी ॥ हंसु चलिआ तूं पिछै रहीएहि छुटड़ि होईअहि नारी ॥ २ ॥ तूं काइआ रहीअहि सुपनंतरि तुधु किआ करम कमाइआ ॥ करि चोरी मै जा किछु लीआ ता मनि भला भाइआ ॥ हलति न सोभा पलति न ढोई अहिला जनमु गवाइआ ॥ ३ ॥ हउ खरी दुहेली होई बाबा नानक मेरी बात न पुछै कोई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ताजी तुरकी सुइना रुपा कपड़ केरे भारा ॥ किस ही नालि न चले नानक झड़ि झड़ि पए गवारा ॥ कूजा मेवा मै सभ किछु चाखिआ इकु अंम्रितु नामु तुमारा ॥ ४ ॥ दे दे नीव दिवाल उसारी भसमंदर की ढेरी ॥ संचे संचि न देई किस ही अंधु जाणै सभ मेरी ॥ सोइन लंका सोइन माड़ी संपै किसै न केरी ॥ ५ ॥ सुणि मूरख मंन अजाणा ॥ होगु तिसै का भाणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साहु हमारा ठाकुरु भारा हम तिस के वणजारे ॥ जीउ पिंडु सभ रासि तिसै की मारि आपे जीवाले ॥ ६ ॥ १ ॥ १३ ॥

यह सुन्दर काया स्वयं को अमर समझकर जीवन के सुख भोगने में लगी रहती है किन्तु उसे यह ज्ञान नहीं कि यह दुनिया तो (भगवान की) एक खेल है। हे मेरी काया! तू लालच, लोभ एवं बहुत झूठ कमा रही है और तू अपने सिर पर पापों का अत्यधिक भार उठा रही है। हे मेरी काया! मैंने तुझे पृथ्वी पर राख की भाँति बर्बाद होते देखा है॥ १॥ हे मेरी काया! मेरी सीख ध्यानपूर्वक सुन। तेरे किए हुए शुभ कर्म ही अन्तिम समय तेरे साथ रहेंगे। हे मेरे मन! इस तरह का सुनहरी अवसर दोबारा तेरे हाथ नहीं लगेगा॥ १॥ रहाउ॥ हे मेरी काया! मैं तुझे फिर कहता हूँ, मेरी सीख को ध्यानपूर्वक सुन। तुम दूसरों की निन्दा और प्रशंसा करती हो और झूठी चुगली करती रहती हो। हे मन! तुम पराई नारी को कुदृष्टि से देखते हो, तुम चोरी करते हो और कुकर्म करते हो। हे मेरी काया! जब आत्मा रूपी राजहंस निकल कर परलोक चला जाएगी तो तू पीछे यही रह जाएगा और परित्यक्ता स्त्री की तरह हो जाओगी॥ २॥ हे मेरी काया! तुम स्वप्न की तरह वास करती हो। तुमने कौन-सा शुभ कर्म किया है। जब मैं चोरी करके कोई वस्तु लाया तो यह हृदय को अच्छा लगता रहा। इस मृत्यु लोक में मुझे कोई शोभा नहीं मिली और परलोक में मुझे कोई सहारा नहीं मिलेगा। मैंने अपना अनमोल मानव जीवन व्यर्थ ही गंवा लिया है॥ ३॥ हे बाबा नानक! मैं बहुत दुखी हो गई हूँ, और कोई भी मेरी चिन्ता नहीं

करता॥ १॥ रहाउ॥ हे नानक! यदि किसी के पास तुर्की घोड़े, सोना–चांदी एवं वस्त्रों के अम्बार हो परन्तु अन्तिम समय यह उसके साथ नहीं जाते। हे मूर्ख जीव! ये सभी दुनिया में ही रह जाते हैं। हे प्रभु! मैंने मिश्री एवं मेवा इत्यादि सभी फल खा कर देखे हैं, परन्तु एक तुम्हारा ही नाम अमृत है॥ ४॥ गहरी नींव रख–रख कर मनुष्य मकान की दीवार खड़ी करता है। परन्तु (काल आने पर) यह मन्दिर भी ध्वस्त होकर मिट्टी का ढेर बन जाता है। मूर्ख प्राणी धन–दौलत संचित करता है और किसी को भी नहीं देता। मूर्ख प्राणी ख्याल करता है कि सब कुछ उसका अपना है। परन्तु (यह नहीं जानता कि) सोने की लंका, सोने के महल (रावण के भी नहीं रहे, तू कौन बेचारा है) यह धन किसी का भी नहीं बना रहता॥ ५॥ हे मूर्ख एवं अज्ञानी मन! मेरी बात सुनो, उस ईश्वर की रज़ा ही फलीभूत होगी॥ १॥ रहाउ॥ मेरा ठाकुर–प्रभु बहुत बड़ा साहूकार है और मैं उसका एक व्यापारी हूँ। मेरी आत्मा एवं शरीर यह सब उसकी दी हुई पूँजी है। वह स्वयं ही जीवों को मार कर पुनः जीवित कर देता है॥ ६॥ १॥ १३॥

गउड़ी चेती महला १ ॥ अवरि पंच हम एक जना किउ राखउ घर बारु मना ॥ मारहि लूटहि नीत नीत किसु आगै करी पुकार जना ॥ १ ॥ स्री राम नामा उचरु मना ॥ आगै जम दलु बिखमु घना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उसारि मड़ोली राखै दुआरा भतिरि बैठी सा धना ॥ अंम्रित केल करे नित कामणि अवरि लुटेनि सु पंच जना ॥ २ ॥ ढाहि मड़ोली लूटिआ देहुरा सा धन पकड़ी एक जना ॥ जम डंडा गलि संगलु पड़िआ भागि गए से पंच जना ॥ ३ ॥ कामणि लोड़ै सुइना रुपा मित्र लुड़ेनि सु खाधाता ॥ नानक पाप करे तिन कारणि जासी जमपुरि बाधाता ॥ ४ ॥ २ ॥ १४ ॥

हे मेरे मन! मेरे काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अहंकार पाँच शत्रु हैं, मैं अकेला हूँ, मैं इनसे अपना घर किस तरह बचाऊं, ये पाँच मुझे प्रतिदिन मारते और लूटते रहते हैं। फिर मैं किस के समक्ष विनती करूँ॥ १॥ हे मेरे मन! श्री राम के नाम का सिमरन कर। तेरे समक्ष यमराज की बेशुमार सेना दिखाई दे रही है॥ १॥ रहाउ॥ परमात्मा ने देहि का देहुरा बनाया है, इसको दस द्वार लगाए हैं और इसके भीतर ईश्वर के आदेश से आत्मा रूपी स्त्री बैठी है। परन्तु देहि को अमर जानकर कामिनी सदैव खेल–तमाशे करती है और कामादिक पांचों वैरी भीतरी शुभ गुण लूटते रहते हैं॥ २॥ अंतः मृत्यु देहि रूपी इमारत को ध्वस्त कर देती है, मन्दिर को लूट लेती है और अकेली कामिनी पकड़ी जाती है। पांचों विकार भाग जाते हैं। जीव–स्त्री की गर्दन में जंजीरें पड़ती हैं और उसके सिर पर यम का दण्ड पड़ता है॥ ३॥ कामिनी (जीव–स्त्री) सोने–चांदी के आभूषणों की माँग करती है, उसके संबंधी स्वादिष्ट भोजन पदार्थ माँगते रहते हैं। हे नानक! इनकी खातिर प्राणी पाप करता है। अंतत : पापों के कारण बंधा हुआ यम (मृत्यु) की नगरी में जाता है॥ ४॥ २॥ १४॥

गउड़ी चेती महला १ ॥ मुंद्रा ते घट भीतरि मुंद्रा कांइआ कीजै खिंथाता ॥ पंच चेले वसि कीजहि रावल इहु मनु कीजै डंडाता ॥ १ ॥ जोग जुगति इव पावसिता ॥ एकु सबदु दूजा होरु नासति कंद मूलि मनु लावसिता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मूंडि मुंडाइऐ जे गुरु पाईऐ हम गुरु कीनी गंगाता ॥ त्रिभवण तारणहारु सुआमी एकु न चेतसि अंधाता ॥ २ ॥ करि पटंबु गली मनु लावसि संसा मूलि न जावसिता ॥ एकसु चरणी जे चितु लावहि लबि लोभि की धावसिता ॥ ३ ॥ जपसि निरंजनु रचसि मना ॥ काहे बोलहि जोगी कपटु घना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काइआ कमली हंसु इआणा मेरी मेरी करत बिहाणीता ॥ प्रणवति नानकु नागी दाझै फिरि पाछै पछुताणीता ॥ ४ ॥ ३ ॥ १५ ॥

हे योगी ! तू अपने हृदय में संतोष उत्पन्न कर, यही तेरे कानों में पहनने वाले वास्तविक कुण्डल हैं। अपने नश्वर शरीर को ही गुदड़ी बना। हे योगी ! अपने पाँच शिष्यों ज्ञानेन्द्रियों को वश में कर और इस मन को अपना डण्डा बना।। १।। इस तरह तुझे योग करने की युक्ति मिल जाएगी। एक प्रभु का नाम ही सदैव स्थिर है, शेष सब कुछ क्षणभंगुर है। अपने मन को नाम–सिमरन में लगा, यह नाम ही तेरे लिए कन्दमूल रूपी भोजन है।। १।। रहाउ।। यदि गंगा पर जाकर सिर मुंडाने से गुरु मिलता है तो मैंने तो पहले ही गुरु को गंगा बना लिया है अर्थात् गुरु ही पवित्र तीर्थ है। एक ईश्वर तीनों लोकों (के प्राणियों) को पार करने में समर्थ है। ज्ञानहीन मनुष्य प्रभु को स्मरण नहीं करता।। २।। हे योगी ! तुम आडम्बर रचते हो और मौखिक बातों से अपने मन को लगाते हो। लेकिन तेरा संशय कदापि दूर नहीं होगा। यदि तुम अपना मन एक प्रभु के चरणों से लगा लो तो झूठ, लोभ के कारण बनी तेरी दुविधा दूर हो जाए।। ३।। हे योगी ! निरंजन प्रभु की आराधना करने से तेरा मन उस में लीन हो जाएगा। हे योगी ! तुम इतना बड़ा छल–कपट क्यों बोलते हो।। १।। रहाउ।। तेरी काया बावली है और मन मूर्ख है। तेरी समस्त अवस्था माया के मोह में बीतती जा रही है। नानक विनती करता है कि नग्न देहि जब जल जाती है तो समय समाप्त हुआ जानकर आत्मा पश्चाताप करती है।। ४।। ३।। १५।।

गउड़ी चेती महला १ ॥ अउखध मंत्र मूलु मन एकै जे करि द्रिड़ु चितु कीजै रे ॥ जनम जनम के पाप करम के काटनहारा लीजै रे ॥ १ ॥ मन एको साहिबु भाई रे ॥ तेरे तीनि गुणा संसारि समावहि अलखु न लखणा जाई रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सकर खंडु माइआ तनि मीठी हम तउ पंड उचाई रे ॥ राति अनेरी सूझसि नाही लजु टूकसि मूसा भाई रे ॥ २ ॥ मनमुखि करहि तेता दुखु लागै गुरमुखि मिलै वडाई रे ॥ जो तिनि कीआ सोई होआ किरतु न मेटिआ जाई रे ॥ ३ ॥ सुभर भरे न होवहि ऊणे जो राते रंगु लाई रे ॥ तिन की पंक होवै जे नानकु तउ मूड़ा किछु पाई रे ॥ ४ ॥ ४ ॥ १६ ॥

हे मेरे मन ! यदि तू समस्त रोगों की औषधि रूपी मूल मन्त्र (प्रभु–नाम) को अपने हृदय में बसा ले, तो तू जन्म–जन्मांतरों में किए पापों का नाश करने वाले परमेश्वर को प्राप्त कर लेगा।। १।। हे मेरे भाई ! मेरे मन को एक ईश्वर ही अच्छा लगता है। हे परमेश्वर ! तेरी तीन विशेषताओं में जगत् समाया हुआ है अर्थात् त्रिगुणी इन्द्रियां संसार के मोह में लगी हुई हैं और उस अलक्ष्य परमेश्वर को समझा नहीं जा सकता।।१।। रहाउ।। यह माया शक्कर व चीनी की भाँति शरीर को मधुर लगती है। हम प्राणियों ने माया का बोझ उठाया हुआ है। ज्ञानहीन रूपी अंधेरी रात में कुछ दिखाई नहीं देता और मृत्यु का चूहा (यमराज) जीवन की रस्सी काटता जा रहा है।। २।। स्वेच्छाचारी जीव जितना अधिक धर्म कर्म करता है, उतना अधिक वह दुखी होता है। लेकिन गुरमुख को यश प्राप्त होता है। जो कुछ परमात्मा करता है, वही होता है, जीव की किस्मत मिटाई नहीं जा सकती।। ३।। जो प्राणी परमात्मा के चरणों में प्रीति लगाते और मग्न रहते हैं, वे प्रेम–रस से परिपूर्ण रहते हैं और प्रेम से शून्य नहीं होते। यदि नानक उनके चरणों की धूलि बन जाए तो उस विमूढ़ (मन) को भी कुछ प्राप्त हो जाए।। ४।। ४।। १६।।

गउड़ी चेती महला १ ॥ कत की माई बापु कत केरा किदू थावहु हम आए ॥ अगनि बिंब जल भीतरि निपजे काहे कंमि उपाए ॥ १ ॥ मेरे साहिबा कउणु जाणै गुण तेरे ॥ कहे न जानी अउगण मेरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ केते रुख बिरख हम चीने केते पसू उपाए ॥ केते नाग कुली महि आए केते पंख उडाए ॥ २ ॥ हट पटण बिज मंदर भंनै करि चोरी घरि आवै ॥ अगहु देखै पिछहु देखै तुझ ते कहा छपावै ॥ ३ ॥ तट तीरथ हम नव खंड देखे हट पटण बाजारा ॥ लै कै तकड़ी तोलणि लागा घट ही

महि वणजारा ॥ ४ ॥ जेता समुंदु सागरु नीरि भरिआ तेते अउगण हमारे ॥ दइआ करहु किछु मिहर उपावहु डुबदे पथर तारे ॥ ५ ॥ जीअड़ा अगनि बराबरि तपै भीतरि वगै काती ॥ प्रणवति नानकु हुकमु पछाणै सुखु होवै दिनु राती ॥ ६ ॥ ५ ॥ १७ ॥

{हम जीवों को पापों के कारण अनेक योनियों में भटकना पड़ता है, फिर हम क्या व्यक्त करें कि}

कब की हमारी माता कौन है, कब का हमारा पिता कौन है, किस–किस स्थान से हम आए हैं ? पिता के जल रूपी वीर्य के बुलबुले से माता की गर्भ–अग्नि में पड़कर हम उत्पन्न हुए हैं लेकिन पता नहीं भगवान ने किस मकसद से हमारी रचना की है॥ १॥ हे मेरे भगवान ! तेरे गुणों को कौन जान सकता है ? मुझ में इतने अवगुण हैं कि उनका वर्णन नहीं किया जा सकता॥ १॥ रहाउ॥ हमने अनेक वृक्षों की योनियां देखीं। अनेक बार पशु–योनियों में उत्पन्न हुए। अनेक बार हम सर्पों के वंशों में उत्पन्न हुए और अनेक बार पक्षी बन–बनकर उड़ते रहे॥ २॥ मनुष्य नगरों की दुकानें एवं मजबूत महलों को सेंध लगाता है और वहाँ चोरी करके घर आ जाता है। वह मूर्ख अपने आगे देखता है और अपने पीछे भी देखता है किन्तु मूर्ख मनुष्य ईश्वर से अपने आपको कहाँ छिपा सकता है ?॥ ३॥ मैंने पावन तीर्थ–स्थलों के तट, नवखण्ड, नगर की दुकानें एवं व्यापार के केन्द्र देखे हैं। जीव रूपी व्यापारी अपने हृदय में तराजू लेकर अपने कमाए नाम रूपी धन को तोलता है॥ ४॥ हे प्रभु ! जितना सागर में जल भरा हुआ है, हमारे अवगुण उतने ही हैं। हे ईश्वर ! मुझ पर अपनी दया एवं कुछ कृपादृष्टि करो और मुझ डूबते पत्थर को भवसागर में से पार कर दो॥ ५॥ मेरा हृदय अग्नि की भाँति देदीप्यमान हो रहा है और उसके भीतर तृष्णा रूपी कैंची चल रही है। नानक प्रार्थना करता है कि हे मेरे प्रभु ! यदि मैं तेरे हुक्म को पहचान लूँ तो मुझे दिन–रात सुख मिलता रहेगा॥ ६॥ ५॥ १७॥

गउड़ी बैरागणि महला १ ॥ रैणि गवाई सोइ कै दिवसु गवाइआ खाइ ॥ हीरे जैसा जनमु है कउडी बदले जाइ ॥ १ ॥ नामु न जानिआ राम का ॥ मूड़े फिरि पाछै पछुताहि रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनता धनु धरणी धरे अनत न चाहिआ जाइ ॥ अनत कउ चाहन जो गए से आए अनत गवाइ ॥ २ ॥ आपण लीआ जे मिलै ता सभु को भागठु होइ ॥ करमा उपरि निबड़ै जे लोचै सभु कोइ ॥ ३ ॥ नानक करणा जिनि कीआ सोई सार करेइ॥ हुकमु न जापी खसम का किसै वडाई देइ ॥ ४ ॥ १ ॥ १८ ॥

मनुष्य अपनी रात्रि सोकर और दिन खा–पीकर व्यर्थ ही गंवा देता है। उसका हीरे समान अनमोल जीवन (भक्ति के बिना) कौड़ी के भाव व्यर्थ चला जाता है॥ १॥ हे मूर्ख ! तूने राम के नाम को नहीं जाना। तुम फिर मरणोपरांत पश्चाताप करोगे॥ १॥ रहाउ॥ तूने नाशवान धन संग्रह करके धरती में दबाकर रखा हुआ है। इस धन के कारण ही तेरे मन में अनन्त परमेश्वर के स्मरण की इच्छा उत्पन्न नहीं होती। जो भी नाशवान धन पदार्थ की ओर दौड़ते फिरते हैं, वे अनन्त प्रभु के नाम–धन को गंवा कर आए हैं॥ २॥ यदि केवल चाहने से धन मिलता हो तो सभी मनुष्य धनवान बन जाएँ। चाहे सभी मनुष्य धन की तृष्णा में रहते हैं परन्तु उनकी किस्मत का उनके कर्मों अनुसार ही फैसला होता है॥ ३॥ हे नानक ! जिसने सृष्टि की रचना की है, वही सबका पालन–पोषण करता है। मालिक–प्रभु का हुक्म जाना नहीं जा सकता कि वह किसे महानता प्रदान करता है॥ ४॥ १॥ १८॥

गउड़ी बैरागणि महला १ ॥ हरणी होवा बनि बसा कंद मूल चुणि खाउ ॥ गुर परसादी मेरा सहु मिलै वारि वारि हउ जाउ जीउ ॥ १ ॥ मै बनजारनि राम की ॥ तेरा नामु वखरु वापारु जी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोकिल होवा अंबि बसा सहजि सबद बीचारु ॥ सहजि सुभाइ मेरा सहु मिलै दरसनि रूपि

अपारु ॥ २ ॥ मछुली होवा जलि बसा जीअ जंत सभि सारि ॥ उरवारि पारि मेरा सहु वसै हउ मिलउगी बाह पसारि ॥ ३ ॥ नागनि होवा धर वसा सबदु वसै भउ जाइ ॥ नानक सदा सोहागणी जिन जोती जोति समाइ ॥ ४ ॥ २ ॥ १६ ॥

यदि मुझे मृगिनी बनकर वन में निवास करना पड़े तो मैं वहाँ कन्दमूल चुन–चुनकर खा लिया करूँगी। यदि गुरु की कृपा से मुझे मेरा पति–प्रभु मिल जाए तो मैं बार–बार उस पर कुर्बान जाऊँ॥ १॥ मैं राम की वनजारिन (व्यापारी) हूँ। हे प्रभु ! तेरा नाम ही व्यापार करने के लिए मेरा सौदा है॥ १॥ रहाउ॥ यदि मुझे कोयल बन कर आम के पौधे पर रहना पड़े तो भी मैं सहज ही नाम की आराधना करूँगी। यदि मुझे सहज–स्वभाव मेरा पति–प्रभु मिल जाए तो उसके अपार रूप के दर्शन करूँगी॥ २॥ यदि मुझे मछली बनकर जल में निवास करना पड़े तो भी मैं उसकी आराधना करूँगी, जो समस्त जीव–जन्तुओं की देखभाल करता है। प्रियतम प्रभु (इस संसार–सागर के अथाह जल के) दोनों ओर निवास करता है। अपनी भुजाएँ फैलाकर मैं उससे मिलूंगी॥ ३॥ यदि मुझे नागिन बनकर पृथ्वी में निवास करना पड़े तो भी मैं अपने प्रभु के नाम में ही निवास करूँगी और मेरा भय निवृत्त हो जाएगा। हे नानक ! वह जीव–स्त्री सदा सुहागिन है, जिसकी ज्योति प्रभु–ज्योति में समाई रहती है॥ ४॥ २॥ १६॥

गउड़ी पूरबी दीपकी महला १ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

जै घरि कीरति आखीऐ करते का होइ बीचारो ॥ तितु घरि गावहु सोहिला सिवरहु सिरजणहारो ॥ १ ॥ तुम गावहु मेरे निरभउ का सोहिला ॥ हउ वारी जाउ जितु सोहिलै सदा सुखु होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नित नित जीअड़े समालीअनि देखैगा देवणहारु ॥ तेरे दानै कीमति ना पवै तिसु दाते कवणु सुमारु ॥ २ ॥ संबति साहा लिखिआ मिलि करि पावहु तेलु ॥ देहु सजण आसीसड़ीआ जिउ होवै साहिब सिउ मेलु ॥ ३ ॥ घरि घरि एहो पाहुचा सदड़े नित पवंनि ॥ सदणहारा सिमरीऐ नानक से दिह आवंनि ॥ ४ ॥ १ ॥ २० ॥

जिस सत्संगति में परमात्मा की कीर्ति का गान होता है और सृष्टिकर्त्ता की महिमा का चिंतन किया जाता है, उस सत्संगति रूपी घर में जाकर यश के गीत गायन करो और उस करतार की ही आराधना करो॥ १॥ हे मन ! तू सत्संगियों के साथ मिलकर निडर प्रभु की स्तुति के गीत गायन कर। मैं उस स्तुति के गीत पर कुर्बान जाता हूँ, जिस द्वारा सदैव सुख प्राप्त होता है॥ १॥ रहाउ॥

हे मानव ! जो पालनहार ईश्वर नित्यप्रति अनेकानेक जीवों का पोषण कर रहा है, वह तुझ पर भी कृपा–दृष्टि करेगा। उस ईश्वर द्वारा प्रदत्त पदार्थो का कोई मूल्यांकन नहीं है, क्योंकि वे तो अनन्त हैं॥ २॥ इस मृत्युलोक से जाने का समय निश्चित किया हुआ है अर्थात् इहलोक से जाने हेतु साहे–पत्र रूपी संदेश संवत–दिन इत्यादि लिखकर तय किया हुआ है, इसलिए भगवान से मिलाप हेतु सत्संगियों के साथ मिलकर तेल डालने का शगुन कर लो अर्थात् मृत्यु रूपी विवाह होने से पूर्व शुभ कर्म कर लो। हे सज्जनो ! मुझे अपना आशीर्वाद दो कि मेरा प्रभु–पति से मिलन हो जाए॥ ३॥ प्रत्येक घर में इस साहे–पत्र को भेजा जा रहा है, नित्य ही यह सन्देश किसी न किसी घर पहुँच रहा है अर्थात् नित्य ही कोई न कोई मृत्यु को प्राप्त हो रहा है। नानक कथन करते हैं कि हे जीव ! मृत्यु का निमंत्रण भेजने वाले को स्मरण कर, चूंकि वह दिन निकट आ रहे हैं॥ ४॥ १॥ २०॥

रागु गउड़ी गुआरेरी ॥ महला ३ चउपदे ॥ ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुरि मिलिऐ हरि मेला होई ॥ आपे मेलि मिलावै सोई ॥ मेरा प्रभु सभ बिधि आपे जाणै ॥ हुकमे मेले सबदि पछाणै ॥ १ ॥ सतिगुर कै भइ भ्रमु भउ जाइ ॥ भै राचै सच रंगि समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरि मिलिऐ हरि मनि वसै सुभाइ ॥ मेरा प्रभु भारा कीमति नही पाइ ॥ सबदि सालाहै अंतु न पारावारु ॥ मेरा प्रभु बखसे बखसणहारु ॥ २ ॥ गुरि मिलिऐ सभ मति बुधि होइ ॥ मनि निरमलि वसै सचु सोइ ॥ साचि वसिऐ साची सभ कार ॥ ऊतम करणी सबद बीचार ॥ ३ ॥ गुर ते साची सेवा होइ ॥ गुरमुखि नामु पछाणै कोइ ॥ जीवै दाता देवणहारु ॥ नानक हरि नामे लगै पिआरु ॥ ४ ॥ १ ॥ २१ ॥

यदि गुरु मिल जाए तो ईश्वर से मिलन हो जाता है। वह ईश्वर स्वयं ही गुरु से मिलाकर अपने साथ मिला लेता है। मेरा प्रभु जीवों को अपने साथ मिलाने की समस्त युक्तियां जानता है। अपने हुक्म द्वारा वह उनको अपने साथ मिला लेता है, जो उसके नाम को पहचानते हैं॥ १॥ सतिगुरु के भय—आदर में रहने से संशय एवं दूसरे खौफ लुप्त हो जाते हैं। जो गुरु के भय में हर्षित रहता है, वह सत्य के प्रेम में लीन रहता है॥ १॥ रहाउ॥ यदि गुरु मिल जाए तो ईश्वर सहज ही मनुष्य के ह्रदय में निवास कर जाता है। मेरा प्रभु महान है, उसका मूल्यांकन नहीं पाया जा सकता। गुरु के उपदेश से मैं प्रभु की सराहना करता हूँ, जिसका कोई अन्त नहीं, उसके अस्तित्व का ओर—छोर नहीं मिल सकता। मेरा परमेश्वर क्षमाशील है। वह दोषी जीवों को भी क्षमा कर देता है॥ २॥ गुरु के मिलन से समस्त चतुराइयां एवं सद्बुद्धि प्राप्त हो जाती है। इस तरह मन निर्मल हो जाता है और सत्यस्वरूप परमेश्वर उसमें निवास कर लेता है। यदि मनुष्य सत्य में निवास कर ले तो उसके कर्म सच्चे (श्रेष्ठ) हो जाते हैं। ईश्वर का नाम—सिमरन ही शुभ कर्म है॥ ३॥ गुरु के द्वारा सत्यस्वरूप प्रभु की सेवा—भक्ति की जाती है। गुरु की दया से कोई विरला पुरुष ही हरिनाम को पहचानता है। समस्त जीवों को देने वाला दाता सदैव ही जीवित रहता है। हे नानक! मनुष्य का हरि—नाम से ही प्रेम हो जाता है॥ ४॥ १॥ २१॥

गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ गुर ते गिआनु पाए जनु कोइ ॥ गुर ते बूझै सीझै सोइ ॥ गुर ते सहजु साचु बीचारु ॥ गुर ते पाए मुकति दुआरु ॥ १ ॥ पूरै भागि मिलै गुरु आइ ॥ साचै सहजि साचि समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरि मिलिऐ त्रिसना अगनि बुझाए ॥ गुर ते सांति वसै मनि आए ॥ गुर ते पवित पावन सुचि होइ ॥ गुर ते सबदि मिलावा होइ ॥ २ ॥ बाझु गुरू सभ भरमि भुलाई ॥ बिनु नावै बहुता दुखु पाई ॥ गुरमुखि होवै सु नामु धिआई ॥ दरसनि सचै सची पति होई ॥ ३ ॥ किस नो कहीऐ दाता इकु सोई ॥ किरपा करे सबदि मिलावा होई ॥ मिलि प्रीतम साचे गुण गावा ॥ नानक साचे साचि समावा ॥ ४ ॥ २ ॥ २२ ॥

कोई विरला पुरुष ही गुरु से ज्ञान प्राप्त करता है। जो व्यक्ति गुरु से ईश्वर बारे ज्ञान प्राप्त कर लेता है, उसका जीवन—मनोरथ सफल हो जाता है। गुरु से ही सत्यस्वरूप परमात्मा का नाम—स्मरण प्राप्त होता है। गुरु द्वारा ही मोक्ष का द्वार पाया जाता है॥ १॥ गुरु उसे ही आकर मिलता है, जिसके पूर्ण भाग्य होते हैं। वह परमात्मा का सिमरन करके सहज ही सत्य में समा जाता है॥ १॥ रहाउ॥ गुरु को मिलने से तृष्णा की अग्नि बुझ जाती है। गुरु के द्वारा सुख—शांति आकर मन में निवास करती है। गुरु के द्वारा मनुष्य पवित्र पावन एवं निर्मल हो जाता है। गुरु द्वारा ही प्रभु से मिलन होता है॥ २॥

गुरु के बिना सारी दुनिया भ्रम में भटकती रहती है। नाम के बिना प्राणी बहुत कष्ट सहन करता है। जो प्राणी गुरमुख बन जाता है, वहीं व्यक्ति ईश्वर के नाम का ध्यान करता है। सद्पुरुष के दर्शनों से मनुष्य को सच्ची शोभा प्राप्त होती है॥ ३॥ केवल एक वही दाता है, दूसरा किसी का क्यों जिक्र किया जाए? जिस व्यक्ति पर प्रभु कृपा कर देता है, उसका शब्द द्वारा उससे मिलाप हो जाता है। मैं अपने प्रियतम गुरु से मिलकर सत्यस्वरूप परमात्मा की गुणस्तुति करता रहता हूँ। हे नानक! मैं सच्चे गुरु की कृपा से सत्यस्वरूप परमात्मा में समाया रहता हूँ॥ ४॥ २॥ २२॥

गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ सु थाउ सचु मनु निरमलु होइ ॥ सचि निवासु करे सचु सोइ ॥ सची बाणी जुग चारे जापै ॥ सभु किछु साचा आपे आपै ॥ १ ॥ करमु होवै सतसंगि मिलाए ॥ हरि गुण गावै बैसि सु थाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जलउ इह जिहवा दूजै भाइ ॥ हरि रसु न चाखै फीका आलाइ ॥ बिनु बूझे तनु मनु फीका होइ ॥ बिनु नावै दुखीआ चलिआ रोइ ॥ २ ॥ रसना हरि रसु चाखिआ सहजि सुभाइ ॥ गुर किरपा ते सचि समाइ ॥ साचे राती गुर सबदु वीचार ॥ अंम्रितु पीवै निरमल धार ॥ ३ ॥ नामि समावै जो भाडा होइ ॥ ऊंधै भांडै टिकै न कोइ ॥ गुर सबदी मनि नामि निवासु ॥ नानक सचु भांडा जिसु सबद पिआस ॥ ४ ॥ ३ ॥ २३ ॥

वह (सत्संग का) स्थान सत्य का पावन स्थल है, जहाँ मन निर्मल हो जाता है। वह निवास भी सत्य है, जहाँ सत्यस्वरूप परमात्मा निवास करता है। सच्ची वाणी चारों ही युगों में प्रसिद्ध है। सत्य स्वरूप परमात्मा स्वयं ही सब कुछ है॥ १॥ यदि परमात्मा की कृपा हो जाए तो मनुष्य को संतों की संगति मिल जाती है। फिर वह उस श्रेष्ठ स्थान पर विराजमान होकर भगवान की महिमा—स्तुति करता रहता है॥ १॥ रहाउ॥ यह जिह्वा जल जाए, जो दूसरे स्वादों में लगी रहती है अर्थात् दूसरों की प्रीति की चाहवान है। यह हरि—रस का आस्वादन नहीं करती और मन्दे वचन बोलती रहती है। ईश्वर को समझे बिना तन एवं मन फीके हो जाते हैं। स्वामी के नाम के बिना दुःखी होकर मनुष्य विलाप करता हुआ दुनिया से चला जाता है। २॥ जिनकी जिह्वा सहज ही हरि—रस का पान करती है, वह गुरु की कृपा से सत्य में ही समा जाती है। वह गुरु के शब्द का चिंतन करती रहती है और सत्य में ही मग्न रहती है। फिर वह अमृत रस की निर्मल धारा का पान करती रहती है॥ ३॥ भगवान का नाम उस व्यक्ति के हृदय रूपी बर्तन में तभी समाता है, यदि वह शुद्ध हो तथा अशुद्ध हृदय रूपी बर्तन में कुछ भी नहीं ठहरता। गुरु के शब्द द्वारा मन में भगवान के नाम का निवास हो जाता है। हे नानक! जिस व्यक्ति के हृदय में प्रभु—नाम को पान करने की तीव्र लालसा होती है, उसका ही हृदय—रूपी बर्तन शुद्ध होता है॥ ४॥ ३॥ २३॥

गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ इकि गावत रहे मनि सादु न पाइ ॥ हउमै विचि गावहि बिरथा जाइ ॥ गावणि गावहि जिन नाम पिआरु ॥ साची बाणी सबद बीचारु ॥ १ ॥ गावत रहै जे सतिगुर भावै ॥ मनु तनु राता नामि सुहावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इकि गावहि इकि भगति करेहि ॥ नामु न पावहि बिनु असनेह ॥ सची भगति गुर सबद पिआरि ॥ अपना पिरु राखिआ सदा उरि धारि ॥ २ ॥ भगति करहि मूरख आपु जणावहि ॥ नचि नचि टपहि बहुतु दुखु पावहि ॥ नचिऐ टपिऐ भगति न होइ ॥ सबदि मरै भगति पाए जनु सोइ ॥ ३ ॥ भगति वछलु भगति कराए सोइ ॥ सची भगति विचहु आपु खोइ ॥ मेरा प्रभु साचा सभ बिधि जाणै ॥ नानक बखसे नामु पछाणै ॥ ४ ॥ ४ ॥ २४ ॥

कई व्यक्ति प्रभु—यश गाते रहते हैं परन्तु उनके हृदय को आनंद नहीं आता। जो व्यक्ति अहंकार में गाते हैं उनका सब कुछ व्यर्थ ही जाता है। अर्थात् उन्हें उसका कोई फल नहीं मिलता। जो व्यक्ति

ईश्वर के नाम से प्रेम करते हैं, वही असल में प्रभु के गीत गाते हैं। वह सच्ची वाणी एवं शब्द का चिंतन करते हैं॥ १॥ यदि सतिगुरु को अच्छा लगे तो मनुष्य प्रभु का यशोगान करता रहता है। उसका मन एवं तन नाम में मग्न हो जाता है और नाम से उसका जीवन सुन्दर बन जाता है॥ १॥ रहाउ॥ कई प्राणी प्रभु के गुणों के गीत गाते हैं और कई भक्ति करते हैं। परन्तु मन में प्रेम न होने के कारण उन्हें नाम प्राप्त नहीं होता। जो व्यक्ति गुरु के शब्द से प्रेम करता है उसकी ही भक्ति सच्ची है। ऐसा व्यक्ति सदैव ही अपने प्रियतम प्रभु को अपने हृदय में बसाकर रखता है॥ २॥ कई मूर्ख व्यक्ति रास प्रदर्शन करके भक्ति करते हैं और स्वयं को भक्त होने का दिखावा ही करते हैं। वे निरन्तर नृत्य करते और कूदते हैं और बहुत दुख सहन करते हैं। नृत्य करने एवं कूदने से प्रभु की भक्ति नहीं होती। प्रभु की भक्ति वही व्यक्ति प्राप्त करता है, जो गुरु के शब्द द्वारा अपने अहंकार को नष्ट कर देता है॥ ३॥ भक्तवत्सल प्रभु स्वयं ही भक्तों से अपनी भक्ति करवाता है। अपने अन्तर्मन में से अहंकार को नाश करना ही सच्ची भक्ति है। मेरा सत्यस्वरूप प्रभु जीवों से भक्ति करवाने की समस्त विधियों को जानता है। हे नानक! भगवान उन्हें ही क्षमा कर देता है, जो उसके नाम को पहचान लेता है॥ ४॥ ४॥ २४॥

गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ मनु मारे धातु मरि जाइ ॥ बिनु मूए कैसे हरि पाइ ॥ मनु मरै दारू जाणै कोइ ॥ मनु सबदि मरै बूझै जनु सोइ ॥ १ ॥ जिस नो बखसे दे वडिआई ॥ गुर परसादि हरि वसै मनि आई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि करणी कार कमावै ॥ ता इसु मन की सोझी पावै ॥ मनु मै मतु मैगल मिकदारा ॥ गुरु अंकसु मारि जीवालणहारा ॥ २ ॥ मनु असाधु साधै जनु कोइ ॥ अचरु चरै ता निरमलु होइ ॥ गुरमुखि इहु मनु लइआ सवारि ॥ हउमै विचहु तजे विकार ॥ ३ ॥ जो धुरि राखिअनु मेलि मिलाइ ॥ कदे न विछुड़हि सबदि समाइ ॥ आपणी कला आपे ही जाणै ॥ नानक गुरमुखि नामु पछाणै ॥ ४ ॥ ५ ॥ २५ ॥

जब मनुष्य अपने मन को नियंत्रण में कर लेता है तो उसकी समस्त दुविधा समाप्त हो जाती है। मन को नियंत्रण में किए बिना भगवान की प्राप्ति कैसे हो सकती है? कोई विरला पुरुष ही मन को नियंत्रण में करने की औषधि को जानता है। मन भगवान के नाम द्वारा ही नियंत्रण में आता है परन्तु इस भेद को वही जानता है जो नाम-सिमरन करता है॥ १॥ ईश्वर जिसे क्षमा कर देता है, उसे ही वह शोभा प्रदान करता है। गुरु की कृपा से ईश्वर आकर उसके हृदय में निवास करता है॥ १॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति गुरमुख बनकर शुभ कर्मों के आचरण की कमाई करता है, उसे ही मन के स्वभाव की सूझ होती है। मनुष्य का मन मदिरा में मस्त हुए हाथी की भाँति है। गुरु ही आत्मिक रूप से मृत इस मन को अपनी वाणी द्वारा अंकुश लगाकर आत्मिक जीवन प्रदान करने में समर्थ है॥ २॥ यह मन सहज रूप में नियंत्रण में आने वाला नहीं। कोई विरला पुरुष ही इसे नियंत्रण में करता है। यदि मनुष्य मन के स्वेच्छाचरण को नष्ट कर दे, केवल तभी यह मन पवित्र होता है। गुरमुख ने यह मन सुन्दर बना लिया है। वह अपने भीतर से अहंकार रूपी विकार को बाहर निकाल देता है॥ ३॥ जिन लोगों को परमात्मा ने आदि से ही साधुओं के मिलाप में मिला रखा है, वह कदाचित अलग नहीं होते और ईश्वर में ही लीन रहते हैं। सर्वकला सम्पूर्ण परमात्मा अपनी कला (शक्ति) स्वयं ही जानता है। हे नानक! गुरमुख ही नाम को पहचानता है॥ ४॥ ५॥ २५॥

गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ हउमै विचि सभु जगु बउराना ॥ दूजै भाइ भरमि भुलाना ॥ बहु चिंता चितवै आपु न पछाना ॥ धंधा करतिआ अनदिनु विहाना ॥ १ ॥ हिरदै रामु रमहु मेरे भाई ॥ गुरमुखि रसना हरि रसन रसाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि हिरदै जिनि रामु पछाता ॥ जगजीवनु सेवि जुग चारे

जाता ॥ हउमै मारि गुर सबदि पछाता ॥ क्रिपा करे प्रभ करम बिधाता ॥ २ ॥ से जन सचे जो गुर सबदि मिलाए ॥ धावत वरजे ठाकि रहाए ॥ नामु नव निधि गुर ते पाए ॥ हरि किरपा ते हरि वसै मनि आए ॥ ३ ॥ राम राम करतिआ सुखु सांति सरीर ॥ अंतरि वसै न लागै जम पीर ॥ आपे साहिबु आपि वजीर ॥ नानक सेवि सदा हरि गुणी गहीर ॥ ४ ॥ ६ ॥ २६ ॥

सारी दुनिया अहंकार में फँसकर पागल हो रही है तथा द्वैत–भाव के कारण भ्रम में पड़कर कुमार्गगामी हो रही है। चिंता में पड़कर लोग बहुत सोचते रहते हैं परन्तु अपने स्वरूप की पहचान नहीं करते। अपने कर्म (धंधा) करते हुए उनके रात–दिन बीत जाते हैं॥ १॥ हे मेरे भाई! अपने हृदय में राम का सिमरन करते रहो। गुरमुख की जिह्वा हरि–रस का आनंद प्राप्त करती रहती है॥ १॥ रहाउ॥

जो गुरमुख अपने हृदय में राम को पहचान लेते हैं, वह जगजीवन प्रभु की सेवा करके चारों युगों में प्रसिद्ध हो जाते हैं। वह अपना अहंकार नष्ट कर के गुरु के शब्द द्वारा प्रभु को समझ लेते हैं। कर्मविधाता प्रभु उन पर अपनी कृपा करता है॥ २॥ जिन लोगों को गुरु के शब्द द्वारा भगवान अपने साथ मिला लेता है, वहीं व्यक्ति सत्यवादी हैं। वह अपने मन को विकारों की ओर दौड़ने से वर्जित करते हैं और उस पर विराम लगाते हैं। नवनिधियाँ प्रदान करने वाले नाम को वह गुरु से प्राप्त करते हैं। भगवान अपनी कृपा करके उनके मन में आकर निवास कर लेता है॥ ३॥ 'राम–राम' नाम का सिमरन करने से शरीर को बड़ा सुख एवं शांति प्राप्त होती है। जिस प्राणी के हृदय में प्रभु–नाम आ बसता है, उसको मृत्यु की पीड़ा स्पर्श नहीं करती। ईश्वर स्वयं ही जगत् का स्वामी है और स्वयं ही मंत्री है। हे नानक! सदैव ही गुणों के भण्डार भगवान की सेवा करते रहो॥ ४॥ ६॥ २६॥

गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ सो किउ विसरै जिस के जीअ पराना ॥ सो किउ विसरै सभ माहि समाना ॥ जितु सेविऐ दरगह पति परवाना ॥ १ ॥ हरि के नाम विटहु बलि जाउ ॥ तूं विसरहि तदि ही मरि जाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तिन तूं विसरहि जि तुधु आपि भुलाए ॥ तिन तूं विसरहि जि दूजै भाए ॥ मनमुख अगिआनी जोनी पाए ॥ २ ॥ जिन इक मनि तुठा से सतिगुर सेवा लाए ॥ जिन इक मनि तुठा तिन हरि मंनि वसाए ॥ गुरमती हरि नामि समाए ॥ ३ ॥ जिना पोतै पुंनु से गिआन बीचारी ॥ जिना पोतै पुंनु तिन हउमै मारी ॥ नानक जो नामि रते तिन कउ बलिहारी ॥ ४ ॥ ७ ॥ २७ ॥

उस भगवान को हम क्यों विस्मृत करें? जिसके हमें ये आत्मा और प्राण दिए हुए हैं। उसे हम क्यों विस्मृत करें? जो समस्त जीवों में समाया हुआ है। जिसकी सेवा–भक्ति करने से जीव उसके दरबार में स्वीकार हो जाता है तथा वहाँ उसे बड़ा आदर–सत्कार मिलता है॥ १॥ मैं हरि के नाम पर बलिहारी जाता हूँ। हे मेरे प्रभु! जब मैं तुझे विस्मृत करूँ, मैं उसी क्षण ही प्राण त्याग देता हूँ॥ १॥ रहाउ॥

हे परमात्मा! तू उन्हें ही विस्मृत हो जाता है, जिन्हें तूने स्वयं ही कुमार्गगामी बनाया है। तू उन्हें ही विस्मृत होता है जो माया के मोह में लीन रहते हैं। तू ज्ञानहीन स्वेच्छाचारी जीवों को योनियों में डालकर रखता है॥ २॥ जिन प्राणियों पर परमात्मा प्रसन्न होता है, उनको वह सतिगुरु की सेवा में लगा देता है। जिन प्राणियों पर भगवान बड़ा प्रसन्न होता है, भगवान स्वयं को उनके मन में बसा देता है। गुरु के उपदेश से वह हरि के नाम में लीन हो जाते हैं॥ ३॥ जिन्होंने पुण्य–कर्म किए हुए हैं, वे ज्ञान का चिंतन करते रहते हैं और अपने अहंकार को नष्ट कर देते हैं। हे नानक! जो ईश्वर के नाम में मग्न रहते हैं, मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ॥ ४॥ ७॥ २७॥

गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ तूं अकथु किउ कथिआ जाहि ॥ गुर सबदु मारणु मन माहि समाहि ॥ तेरे गुण अनेक कीमति नह पाहि ॥ १ ॥ जिस की बाणी तिसु माहि समाणी ॥ तेरी अकथ कथा गुर सबदि वखाणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जह सतिगुरु तह सतसंगति बणाई ॥ जह सतिगुरु सहजे हरि गुण गाई ॥ जह सतिगुरु तहा हउमै सबदि जलाई ॥ २ ॥ गुरमुखि सेवा महली थाउ पाए ॥ गुरमुखि अंतरि हरि नामु वसाए ॥ गुरमुखि भगति हरि नामि समाए ॥ ३ ॥ आपे दाति करे दातारु ॥ पूरे सतिगुर सिउ लगै पिआरु ॥ नानक नामि रते तिन कउ जैकारु ॥ ४ ॥ ८ ॥ २८ ॥

हे भगवान! तू अकथनीय है। फिर तुझे किस तरह कथन किया जा सकता है? जो व्यक्ति गुरु के शब्द से अपने मन को वश में कर लेते हैं, भगवान उसके मन में आ बसता है। हे ईश्वर! तेरे गुण अनेक हैं और उनका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता॥ १॥ यह गुरुवाणी जिस (परमेश्वर) की है, उस (प्रभु) में ही लीन रहती है। हे प्रभु! तेरी अकथनीय कथा को गुरु के शब्द द्वारा ही वर्णन किया गया है॥ १॥ रहाउ॥

जहाँ सतिगुरु जी होते हैं, वहाँ सत्संगति हो जाती है। सतिगुरु सत्संगति में सहज ही भगवान की गुणस्तुति करते हैं। जहाँ सतिगुरु जी होते हैं, वहाँ नाम द्वारा प्राणियों का अहंकार जल जाता है॥ २॥ गुरमुख ईश्वर की सेवा-भक्ति करके उसके आत्म-स्वरूप में स्थान प्राप्त कर लेता है। गुरमुख ही अपने हृदय में भगवान के नाम को बसा लेता है। गुरमुख भक्ति द्वारा भगवान के नाम में ही समा जाता है॥ ३॥ दाता प्रभु जिस व्यक्ति को नाम की देन प्रदान करता है, उस व्यक्ति का पूर्ण सतिगुरु से प्रेम हो जाता है। हे नानक! जो व्यक्ति नाम में मग्न रहते हैं, उनकी लोक-परलोक में जय-जयकार होती है॥ ४॥ ८॥ २८॥

गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ एकसु ते सभि रूप हहि रंगा ॥ पउणु पाणी बैसंतरु सभि सहलंगा ॥ भिंन भिंन वेखै हरि प्रभु रंगा ॥ १ ॥ एकु अचरजु एको है सोई ॥ गुरमुखि वीचारे विरला कोई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहजि भवै प्रभु सभनी थाई ॥ कहा गुपतु प्रगटु प्रभि बणत बणाई ॥ आपे सुतिआ देइ जगाई ॥ २ ॥ तिस की कीमति किनै न होई ॥ कहि कहि कथनु कहै सभु कोई ॥ गुर सबदि समावै बूझै हरि सोई ॥ ३ ॥ सुणि सुणि वेखै सबदि मिलाए ॥ वडी वडिआई गुर सेवा ते पाए ॥ नानक नामि रते हरि नामि समाए ॥ ४ ॥ ६ ॥ २६ ॥

एक ईश्वर से ही समस्त रूप एवं रंग उत्पन्न हुए हैं। पवन, जल एवं अग्नि सब में मिले हुए हैं। हरि-प्रभु इन भिन्न-भिन्न रंगों वाले जीवों एवं पदार्थों को देखकर प्रसन्न होता है॥ १॥ यह एक अद्भुत कौतुक है कि यह सारा जगत-प्रसार एक ईश्वर का ही है और वह स्वयं इसमें विद्यमान है। कोई विरला पुरुष ही गुरु के माध्यम से इस कौतुक पर विचार करता है॥ १॥ रहाउ॥

परमेश्वर सहज ही सर्वव्यापक हो रहा है। परमेश्वर ने ऐसी सृष्टि रचना की है कि किसी स्थान पर वह लुप्त है और कहीं प्रत्यक्ष है। भगवान स्वयं ही अज्ञानता की निद्रा में सोए हुए जीवों को ज्ञान देकर जगा देता है॥ २॥ उसका मूल्यांकन कोई नहीं कर सका चाहे सभी लोग उसके गुणों को कह-कहकर कथन कर रहे हैं। जो प्राणी गुरु के शब्द में लीन होता है, वह भगवान को समझ लेता है॥ ३॥ भगवान जीवों की प्रार्थना सुन-सुनकर उनकी जरुरतों को देखता और उन्हें नाम द्वारा अपने साथ मिला लेता है। गुरु की सेवा करने से मनुष्य को बड़ी शोभा प्राप्त होती है। हे नानक! जो व्यक्ति नाम में मग्न रहते हैं, वह भगवान के नाम में ही समा जाते हैं॥ ४॥ ६॥ २६॥

गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ मनमुखि सूता माइआ मोहि पिआरि ॥ गुरमुखि जागे गुण गिआन बीचारि ॥ से जन जागे जिन नाम पिआरि ॥ १ ॥ सहजे जागै सवै न कोइ ॥ पूरे गुर ते बूझै जनु कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ असंतु अनाड़ी कदे न बूझै ॥ कथनी करे तै माइआ नालि लूझै ॥ अंधु अगिआनी कदे न सीझै ॥ २ ॥ इसु जुग महि राम नामि निसतारा ॥ विरला को पाए गुर सबदि वीचारा ॥ आपि तरै सगले कुल उधारा ॥ ३ ॥ इसु कलिजुग महि करम धरमु न कोई ॥ कली का जनमु चंडाल कै घरि होई ॥ नानक नाम बिना को मुकति न होई ॥ ४ ॥ १० ॥ ३०॥

स्वेच्छाचारी जीव माया के मोह एवं प्रेम में फँस कर अज्ञानता की निद्रा में सोया रहता है परन्तु गुरमुख भगवान के गुणों का चिंतन करके ज्ञान द्वारा जागता रहता है। जो व्यक्ति प्रभु के नाम से प्रेम करते हैं, वहीं जागते रहते हैं॥ १॥ जो व्यक्ति सहज ही जागता रहता है, वह अज्ञानता की निद्रा में नहीं सोता। इस तथ्य को कोई पुरुष पूर्ण गुरु द्वारा समझता है॥ १॥ रहाउ॥

दुष्ट एवं अनाड़ी व्यक्ति समझाने से कभी भी नहीं समझता। वह बातें तो बहुत करता रहता है परन्तु माया से ही उलझा रहता है। मोह–माया में अन्धा हुआ ज्ञानहीन व्यक्ति कभी भी अपने जीवन–मनोरथ में सफल नहीं होता॥ २॥ इस युग में राम के नाम द्वारा ही मोक्ष संभव है। कोई विरला पुरुष ही गुरु के शब्द द्वारा इस तथ्य को समझता है। वह स्वयं तो भवसागर से पार होता है और अपने समूचे वंश को भी बचा लेता है॥ ३॥ इस कलियुग में कोई भी व्यक्ति धर्म–कर्म करने में सफल नहीं होता। कलियुग का जन्म चंडाल के घर में हुआ है। हे नानक! परमात्मा के नाम बिना कोई भी मोक्ष नहीं पा सकता॥ ४॥ १०॥ ३०॥

गउड़ी महला ३ गुआरेरी ॥ सचा अमरु सचा पातिसाहु ॥ मनि साचै राते हरि वेपरवाहु ॥ सचै महलि सचि नामि समाहु ॥ १ ॥ सुणि मन मेरे सबदु वीचारि ॥ राम जपहु भवजलु उतरहु पारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भरमे आवै भरमे जाइ ॥ इहु जगु जनमिआ दूजै भाइ ॥ मनमुखि न चेतै आवै जाइ ॥ २ ॥ आपि भुला कि प्रभि आपि भुलाइआ ॥ इहु जीउ विडाणी चाकरी लाइआ ॥ महा दुखु खटे बिरथा जनमु गवाइआ ॥ ३ ॥ किरपा करि सतिगुरू मिलाए ॥ एको नामु चेते विचहु भरमु चुकाए ॥ नानक नामु जपे नाउ नउ निधि पाए ॥ ४ ॥ ११ ॥ ३१ ॥

भगवान विश्व का सच्चा बादशाह है और उसका हुक्म भी सत्य अर्थात् अटल है। जो व्यक्ति अपने मन से सत्यस्वरूप एवं बेपरवाह भगवान के प्रेम में मग्न रहते हैं। वे उसके सच्चे महल में निवास प्राप्त कर लेते है और उसके सत्य–नाम में ही समा जाते हैं॥ १॥ हे मेरे मन! सुनो, प्रभु का चिन्तन करो। राम का भजन करो और भवसागर से पार हो जाओ॥ १॥ रहाउ॥

जीव मोह–माया के भ्रम में फँसने के कारण जन्मता एवं मरता रहता है। इस जगत् के जीवों ने माया के प्रेम कारण जन्म लिया है। स्वेच्छाचारी मनुष्य प्रभु को स्मरण नहीं करता इसलिए वह जन्मता–मरता रहता है॥ २॥ क्या प्राणी स्वयं कुमार्गगामी होता है अथवा ईश्वर स्वयं उसको कुमार्गगामी करता है ? यह आत्मा माया की सेवा में लिप्त हुई है। भगवान ने इस जीव को माया की सेवा में लगाया है, जिसके फलस्वरूप यह भारी दुःख प्राप्त करता है और अपना अनमोल जीवन व्यर्थ ही गंवा देता है॥ ३॥ प्रभु अपनी कृपा करके मनुष्य का सतिगुरु से मिलन करवाता है। वह तब, केवल नाम का ही स्मरण करता है और अपने अन्तर्मन से वह भ्रम को निकाल देता है। हे नानक! वह नाम का जाप करता है और ईश्वर के नाम की नवनिधि प्राप्त कर लेता है॥ ४॥ ११॥ ३१॥

गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ जिना गुरमुखि धिआइआ तिन पूछउ जाइ ॥ गुर सेवा ते मनु पतीआइ ॥ से धनवंत हरि नामु कमाइ ॥ पूरे गुर ते सोझी पाइ ॥ १ ॥ हरि हरि नामु जपहु मेरे भाई ॥ गुरमुखि सेवा हरि घाल थाइ पाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपु पछाणै मनु निरमलु होइ ॥ जीवन मुकति हरि पावै सोइ ॥ हरि गुण गावै मति ऊतम होइ ॥ सहजे सहजि समावै सोइ ॥ २ ॥ दूजै भाइ न सेविआ जाइ ॥ हउमै माइआ महा बिखु खाइ ॥ पुति कुटंबि ग्रिहि मोहिआ माइ ॥ मनमुखि अंधा आवै जाइ ॥ ३ ॥ हरि हरि नामु देवै जनु सोइ ॥ अनदिनु भगति गुर सबदी होइ ॥ गुरमति विरला बूझै कोइ ॥ नानक नामि समावै सोइ ॥ ४ ॥ १२ ॥ ३२ ॥

जिन लोगों ने गुरु की प्रेरणा से भगवान के नाम का ध्यान किया है, मैं उन से जाकर पूछता हूँ। गुरु की सेवा करने से मन संतुष्ट हो जाता है। वहीं धनवान हैं जो हरि का नाम धन कमाते हैं। इस बात का ज्ञान पूर्ण—गुरु से ही प्राप्त होता है॥ १॥ हे मेरे भाई ! हरि—परमेश्वर के नाम का जाप करते रहो। गुरु की प्रेरणा से की हुई सेवा—भक्ति के परिश्रम को भगवान स्वीकार कर लेता है॥ १॥ रहाउ॥ अपने स्वरूप की पहचान करने से मन निर्मल हो जाता है। वह अपने जीवन में माया के बंधनों से मुक्त होकर भगवान को पा लेता है। जो व्यक्ति भगवान की गुणस्तुति करता है, उसकी बुद्धि श्रेष्ठ हो जाती है। वह सहज ही ईश्वर में लीन हो जाता है॥ २॥ मोह—माया में फँसने से परमात्मा की सेवा—भक्ति नहीं की जा सकती। मनुष्य अहंकारवश माया रूपी महा विष सेवन करता है। उसके पुत्र, कुटुंब एवं घर इत्यादि के मोह के कारण माया उसे ठगती रहती है और वह ज्ञानहीन स्वेच्छाचारी व्यक्ति जन्मता—मरता रहता है॥ ३॥ जिस मनुष्य को हरि—प्रभु अपना नाम देता है, वह उसका भक्त बन जाता है। भगवान की भक्ति रात—दिन सदैव ही गुरु के शब्द से होती है। परन्तु कोई विरला पुरुष ही गुरु की मति द्वारा इस भेद को समझता है। हे नानक ! ऐसा व्यक्ति हमेशा ही ईश्वर के नाम में लीन रहता है॥ ४॥ १२॥ ३२॥

गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ गुर सेवा जुग चारे होई ॥ पूरा जनु कार कमावै कोई ॥ अखुटु नाम धनु हरि तोटि न होई ॥ ऐथै सदा सुखु दरि सोभा होई ॥ १ ॥ ए मन मेरे भरमु न कीजै ॥ गुरमुखि सेवा अंम्रित रसु पीजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु सेवहि से महा पुरख संसारे ॥ आपि उधरे कुल सगल निसतारे ॥ हरि का नामु रखहि उर धारे ॥ नामि रते भउजल उतरहि पारे ॥ २ ॥ सतिगुरु सेवहि सदा मनि दासा ॥ हउमै मारि कमलु परगासा ॥ अनहदु वाजै निज घरि वासा ॥ नामि रते घर माहि उदासा ॥ ३ ॥ सतिगुरु सेवहि तिन की सची बाणी ॥ जुगु जुगु भगती आखि वखाणी ॥ अनदिनु जपहि हरि सारंगपाणी ॥ नानक नामि रते निहकेवल निरबाणी ॥ ४ ॥ १३ ॥ ३३ ॥

गुरु की सेवा चारों युगों (सतियुग, त्रैता, द्वापर एवं कलियुग) में सफल हुई है। कोई पूर्ण मनुष्य ही गुरु अनुसार कार्य करता है। सेवा करने वाला मनुष्य अक्षय हरि—नाम रूपी धन संचित कर लेता है और उस नाम—धन में कभी कोई कमी नहीं आती। उस मनुष्य को इहलोक में सदैव सुख मिलता है और वह प्रभु के दरबार में भी शोभा प्राप्त करता है॥ १॥ हे मेरे मन ! इसके बारे कोई शंका मत कर। अमृत रस गुरु की सेवा करके ही पान किया जाता है॥ १॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति सतिगुरु की तन—मन से सेवा करते हैं, वह इस संसार में महापुरुष हैं। वह स्वयं भवसागर से पार हो जाते हैं और अपने समूचे वंशों को भी पार कर देते हैं। हरि के नाम को वह अपने हृदय में धारण करके रखते हैं। हरि के नाम में मग्न हुए वह भवसागर से पार हो जाते हैं॥ २॥ जो व्यक्ति मन में विनीत भावना रखकर अपने सतिगुरु की श्रद्धापूर्वक सेवा करते हैं, वे अपने अहंत्व को नष्ट कर देते हैं और उनका हृदय कमल प्रफुल्लित हो जाता

है। उनके मन में अनहद शब्द गूंजने लगता है और वे आत्म–स्वरूप में निवास कर लेते हैं। नाम के साथ अनुरक्त हुए वे अपने घर में निर्लिप्त रहते हैं॥ ३॥ उनकी वाणी सत्य है जो सतिगुरु की सेवा करते हैं। प्रत्येक युग में भगवान के भक्तों ने वाणी की रचना करके उसका बखान किया है। वे दिन–रात सारंगपाणि प्रभु का सिमरन करते रहते हैं। हे नानक! जो व्यक्ति भगवान के नाम में मग्न रहते हैं, वे वासना–रहित एवं पवित्र हो जाते हैं॥ ४॥ १३॥ ३३॥

गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ सतिगुरु मिलै वडभागि संजोग ॥ हिरदै नामु नित हरि रस भोग ॥ १ ॥ गुरमुखि प्राणी नामु हरि धिआइ ॥ जनमु जीति लाहा नामु पाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गिआनु धिआनु गुर सबदु है मीठा ॥ गुर किरपा ते किनै विरलै चखि डीठा ॥ २ ॥ करम कांड बहु करहि अचार ॥ बिनु नावै ध्रिगु ध्रिगु अहंकार ॥ ३ ॥ बंधनि बाधिओ माइआ फास ॥ जन नानक छूटै गुर परगास ॥ ४ ॥ १४ ॥ ३४ ॥

सौभाग्य एवं संयोग से सतिगुरु जी मनुष्य को मिलते हैं। फिर उस मनुष्य के हृदय में नाम का निवास हो जाता है और वह नित्य ही हरि–रस का भोग करता रहता है॥ १॥ जो प्राणी गुरु के सान्निध्य में रहकर भगवान के नाम का ध्यान करता है, वह अपनी जीवनबाजी जीत लेता है और उसे नाम धन का लाभ प्राप्त हो जाता है॥ १॥ रहाउ॥ जिसे गुरु का शब्द मधुर–मीठा लगता है, वह ज्ञान एवं ध्यान को पा लेता है। गुरु की कृपा से किसी विरले पुरुष ने ही इसका रस चखकर देखा है॥ २॥ जो व्यक्ति अधिकतर कर्मकाण्ड के आचरण करता है, भगवान के नाम बिना उसके यह कर्म अहंकार रूप होते हैं। ऐसा नामविहीन व्यक्ति धिक्कार योग्य है॥ ३॥ हे दास नानक! ऐसा व्यक्ति बंधनों में जकड़ा और मोह–माया में फँसा हुआ है, और वह गुरु के ज्ञान–प्रकाश द्वारा ही बन्धनों से मुक्त होता है॥ ४॥ १४॥ ३४॥

महला ३ गउड़ी बैरागणि ॥ जैसी धरती ऊपरि मेघुला बरसतु है किआ धरती मधे पाणी नाही ॥ जैसे धरती मधे पाणी परगासिआ बिनु पगा वरसत फिराही ॥ १ ॥ बाबा तूं ऐसे भरमु चुकाही ॥ जो किछु करतु है सोई कोई है रे तैसे जाइ समाही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इसतरी पुरख होइ कै किआ ओइ करम कमाही ॥ नाना रूप सदा हहि तेरे तुझ ही माहि समाही ॥ २ ॥ इतने जनम भूलि परे से जा पाइआ ता भूले नाही ॥ जा का कारजु सोई परु जाणै जे गुर कै सबदि समाही ॥ ३ ॥ तेरा सबदु तूंहै हहि आपे भरमु कहा ही ॥ नानक ततु तत सिउ मिलिआ पुनरपि जनमि न आही ॥ ४ ॥ १ ॥ १५ ॥ ३५ ॥

जिस तरह मेघ धरती पर जल बरसाते हैं, (इसी तरह गुरुवाणी नाम के जल की बरसात करती है)। परन्तु क्या धरती में जल नहीं है? जिस तरह धरती में जल व्याप्त है (इसी तरह प्राचीन धार्मिक ग्रंथों में नाम–जल व्याप्त है) परन्तु मेघ पैरों के बिना अधिक मात्रा में बरसता रहता है॥ १॥ हे बाबा! इस तरह तू अपने भ्रम को दूर कर दे। जो कुछ भी परमात्मा मनुष्य को बनाता है, वहीं कुछ वह हो जाता है। उस तरह वह जाकर उस में ही मिल जाता है॥ १॥ रहाउ॥ स्त्री एवं पुरुष होकर (तेरी महानता के बिना) वह कौन–सा कर्म सम्पूर्ण कर सकते हैं? हे प्रभु! भिन्न–भिन्न रूप सदैव ही तेरे हैं और तुझ में ही लीन हो जाते हैं॥ २॥ मैं अनेक जन्मों से भूला हुआ था, अब जब परमात्मा का ज्ञान प्राप्त कर लिया है, मैं पुनः उसे विस्मृत नहीं करूँगा। यदि मनुष्य गुरु के शब्द में लीन रहे तो वह अनुभव करेगा कि जिसका यह कर्म है, वही इसको भलीभांति जानता है॥ ३॥ हे प्रभु! जो तेरा नाम है, वह भी तू

स्वयं ही है। तू स्वयं ही सबकुछ है, फिर भ्रम कहाँ है? हे नानक! जब आत्म–तत्व अर्थात् जीवात्मा परम तत्व प्रभु में मिल जाता है तो फिर उसका पुनः पुनः जन्म नहीं होता॥ ४॥ १॥ १५॥ ३५॥

गउड़ी बैरागणि महला ३ ॥ सभु जगु कालै वसि है बाधा दूजै भाइ ॥ हउमै करम कमावदे मनमुखि मिलै सजाइ ॥ १ ॥ मेरे मन गुर चरणी चितु लाइ ॥ गुरमुखि नामु निधानु लै दरगह लए छडाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लख चउरासीह भरमदे मनहठि आवै जाइ ॥ गुर का सबदु न चीनिओ फिरि फिरि जोनी पाइ ॥ २ ॥ गुरमुखि आपु पछाणिआ हरि नामु वसिआ मनि आइ ॥ अनदिनु भगती रतिआ हरि नामे सुखि समाइ ॥ ३ ॥ मनु सबदि मरै परतीति होइ हउमै तजे विकार ॥ जन नानक करमी पाईअनि हरि नामा भगति भंडार ॥ ४ ॥ २ ॥ १६ ॥ ३६ ॥

यह सारा जगत् मृत्यु के अधीन है और मोह–माया के बंधन में फँसा हुआ है। स्वेच्छाचारी अपना कर्म अहंकारवश करते हैं और परिणामस्वरूप उनको सत्य के दरबार में दण्ड मिलता है॥ १॥ हे मेरे मन! अपना चित्त गुरु के चरणों में लगा। गुरु के सान्निध्य में नाम–निधि को प्राप्त कर। प्रभु के दरबार में यह तेरी मुक्ति करवा देगी और बड़ी शोभा मिलेगी॥ १॥ रहाउ॥ मन के हठ कारण मनुष्य चौरासी लाख योनियों में भटकते हैं और संसार में जन्मते–मरते रहते हैं। वह गुरु के शब्द को अनुभव नहीं करते और पुनःपुनः गर्भ योनियों में डाले जाते हैं॥ २॥ जब मनुष्य गुरु के माध्यम से अपने आत्मिक जीवन को समझ लेता है तो हरि का नाम उसके मन में निवास कर जाता है। वह रात–दिन भगवान की भक्ति में मग्न रहता है और भगवान के नाम द्वारा सुख में समा जाता है॥ ३॥ जब मनुष्य का मन गुरु के शब्द द्वारा अहंत्व से रहित हो जाता है तो उस मनुष्य की श्रद्धा बन जाती है और वह अपना अहंकार एवं विकारों को त्याग देता है। हे नानक! ईश्वर की कृपा से ही मनुष्य उसके नाम एवं भक्ति के भण्डार को प्राप्त करता है॥ ४॥ २॥ १६॥ ३६॥

गउड़ी बैरागणि महला ३ ॥ पेईअड़ै दिन चारि है हरि हरि लिखि पाइआ ॥ सोभावंती नारि है गुरमुखि गुण गाइआ ॥ पेवकड़ै गुण संमलै साहुरै वासु पाइआ ॥ गुरमुखि सहजि समाणीआ हरि हरि मनि भाइआ ॥ १ ॥ ससुरै पेईऐ पिरु वसै कहु कितु बिधि पाईऐ ॥ आपि निरंजनु अलखु है आपे मेलाईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे ही प्रभु देहि मति हरि नामु धिआईऐ ॥ वडभागी सतिगुरु मिलै मुखि अंम्रितु पाईऐ ॥ हउमै दुबिधा बिनसि जाइ सहजे सुखि समाईऐ ॥ सभु आपे आपि वरतदा आपे नाइ लाईऐ ॥ २ ॥ मनमुखि गरबि न पाइओ अगिआन इआणे ॥ सतिगुर सेवा ना करहि फिरि फिरि पछुताणे ॥ गरभ जोनी वासु पाइदे गरभे गलि जाणे ॥ मेरे करते एवै भावदा मनमुख भरमाणे ॥ ३ ॥ मेरै हरि प्रभि लेखु लिखाइआ धुरि मसतकि पूरा ॥ हरि हरि नामु धिआइआ भेटिआ गुरु सूरा ॥ मेरा पिता माता हरि नामु है हरि बंधपु बीरा ॥ हरि हरि बखसि मिलाइ प्रभ जनु नानकु कीरा ॥ ४ ॥ ३ ॥ १७ ॥ ३७ ॥

हरि–प्रभु ने (प्रत्येक जीव के मस्तक पर यही भाग्य) लिखकर रख दिया है कि जीव–स्त्री ने अपने मायके (मृत्युलोक) चार दिनों (कुछ दिन) के लिए रहना है। वही जीव–स्त्री शोभावान है जो गुरु के माध्यम से ईश्वर की महिमा गायन करती है। जो अपने मायके (इहलोक) में सदाचार को सँभालती है, वह अपने ससुराल (परलोक) में बसेरा पा लेती है। गुरमुख के हृदय को हरि–प्रभु ही अच्छा लगता है, और वह सहज ही उसमें लीन हो जाता है॥ १॥ प्रियतम (प्रभु) इस लोक एवं परलोक में निवास करता है। बताइए, उसको किस विधि से प्राप्त किया जा सकता है? निरंजन प्रभु स्वयं ही

अलक्ष्य है और वह जीव को स्वयं ही अपने साथ मिला लेता है॥ १॥ रहाउ॥ परमेश्वर स्वयं ही सुमति प्रदान करता है और मनुष्य हरि के नाम का ध्यान करता है। बड़े सौभाग्य से सतिगुरु जी मिलते हैं, जो उसके मुख (हरिनाम का) अमृत डालते हैं। जब अहंकार एवं दुविधा नष्ट हो जाते हैं, वह सहज ही सुख में लीन हो जाता है। प्रभु स्वयं ही सर्वव्यापक हो रहा है और स्वयं ही मनुष्य को अपने नाम-सिमरन में लगाता है॥ २॥ स्वेच्छाचारी अहंकारवश ईश्वर को प्राप्त नहीं कर सकते, वे मूर्ख एवं ज्ञानहीन हैं। वे सतिगुरु की सेवा-भक्ति नहीं करते और पुनः पुनः पश्चाताप करते हैं। गर्भयोनि में उनको निवास मिलता है और गर्भ में ही गल-सड़ जाते हैं। मेरे सृजनहार प्रभु को यहीं भला लगता है कि स्वेच्छाचारी भटकते रहें॥ ३॥ मेरे हरि-प्रभु ने आदि से ही प्राणी के मस्तक पर उसका भाग्य लिख दिया था। जब मनुष्य शूरवीर गुरु से मिलता है, वह हरि-परमेश्वर के नाम की आराधना करता है। हरि का नाम मेरा पिता एवं मेरी माता है। भगवान ही मेरा संबंधी और भ्राता है। हे प्रभु ! कृमि सेवक नानक को क्षमादान करके अपने साथ मिला लो॥ ४॥ ३॥ १७॥ ३७॥

गउड़ी बैरागणि महला ३ ॥ सतिगुर ते गिआनु पाइआ हरि ततु बीचारा ॥ मति मलीण परगटु भई जपि नामु मुरारा ॥ सिवि सकति मिटाईआ चूका अंधिआरा ॥ धुरि मसतकि जिन कउ लिखिआ तिन हरि नामु पिआरा ॥ १ ॥ हरि कितु बिधि पाईऐ संत जनहु जिसु देखि हउ जीवा ॥ हरि बिनु चसा न जीवती गुर मेलिहु हरि रसु पीवा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हउ हरि गुण गावा नित हरि सुणी हरि हरि गति कीनी ॥ हरि रसु गुर ते पाइआ मेरा मनु तनु लीनी ॥ धनु धनु गुरु सत पुरखु है जिनि भगति हरि दीनी ॥ जिसु गुर ते हरि पाइआ सो गुरु हम कीनी ॥ २ ॥ गुणदाता हरि राइ है हम अवगणिआरे ॥ पापी पाथर डूबदे गुरमति हरि तारे ॥ तूं गुणदाता निरमला हम अवगणिआरे ॥ हरि सरणागति राखि लेहु मूड़ मुगध निसतारे ॥ ३ ॥ सहजु अनंदु सदा गुरमती हरि हरि मनि धिआइआ ॥ सजणु हरि प्रभु पाइआ घरि सोहिला गाइआ ॥ हरि दइआ धारि प्रभ बेनती हरि हरि चेताइआ ॥ जन नानकु मंगै धूड़ि तिन जिन सतिगुरु पाइआ ॥ ४ ॥ ४ ॥ १८ ॥ ३८ ॥

सतिगुरु से ज्ञान प्राप्त करके मैंने परम तत्व ईश्वर के मूल का चिन्तन किया है। मुरारि प्रभु के नाम का जाप करने से मेरी मलिन बुद्धि निर्मल हो गई है। ईश्वर ने माया का नाश कर दिया है और मेरा अज्ञानता का अंधकार दूर हो गया है। जिनके मस्तक पर आदि से ही भाग्य-रेखाएँ विद्यमान हों, उनको हरि का नाम प्रिय लगता है॥ १॥ हे सन्तजनो ! कौन-से साधनों द्वारा परमात्मा को पाया जा सकता है ? जिसके दर्शन करके मैं जीवित रहती हूँ। परमात्मा के बिना मैं निमेष मात्र भी जीवित नहीं रह सकती। मुझे गुरु के साथ मिला दीजिए चूंकि जो मैं हरि-रस का पान करूँ॥ १॥ रहाउ॥ मैं नित्य ईश्वर की गुणस्तुति करती हूँ और प्रतिदिन परमेश्वर की महिमा ही सुनती हूँ। मुझे हरि-प्रभु ने (संसार से) मुक्त कर दिया है। हरि-रस मैंने गुरु से प्राप्त किया है। मेरा मन एवं तन उसमें लीन हो गए हैं। वह सत्यपुरुष गुरु धन्य-धन्य है, जिन्होंने मुझे भगवान की भक्ति प्रदान की है। मैंने उसे ही अपना गुरु धारण किया है, जिस गुरु के द्वारा मैंने परमात्मा को पाया है॥ २॥ विश्व का मालिक प्रभु गुणों का दाता है परन्तु हम जीवों में अनेक अवगुण विद्यमान हैं। पानी में डूबते पत्थरों की तरह भवसागर में डूबते पापी जीवों को भगवान ने गुरु की मति देकर पार कर दिया है। हे गुणों के दाता ! तू बड़ा निर्मल है लेकिन हम जीवों में अनेक अवगुण भरे हुए हैं। हे भगवान ! तू महांमूर्खों को भी भवसागर से पार कर देता है, अतः मैं तेरी ही शरण में आया हूँ और मुझे भी भवसागर से पार कर दो॥ ३॥ जो व्यक्ति गुरु की मति द्वारा अपने मन में हरि-परमेश्वर का ध्यान करते हैं, उन्हें हमेशा ही सहज सुख एवं आनंद प्राप्त होता है। वे अपने सज्जन प्रभु को पाकर अपने हृदय-घर में उसकी

महिमा–स्तुति के गीत गाते रहते हैं। हे हरि ! मुझ पर दया करो। हे प्रभु ! मेरी यही विनती है कि मैं सर्वदा ही हरि–परमेश्वर का नाम याद करता रहूँ। जन नानक उन महापुरुषों की चरण–धूलि की ही कामना करता है, जिन्होंने सतिगुरु को पाया है॥ ४॥ ४॥ १८॥ ३८॥

गउड़ी गुआरेरी महला ४ चउथा चउपदे १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

पंडितु सासत सिम्रिति पड़िआ॥ जोगी गोरखु गोरखु करिआ ॥ मै मूरख हरि हरि जपु पड़िआ ॥ १ ॥ ना जाना किआ गति राम हमारी ॥ हरि भजु मन मेरे तरु भउजलु तू तारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संनिआसी बिभूत लाइ देह सवारी ॥ पर त्रिअ तिआगु करी ब्रहमचारी ॥ मै मूरख हरि आस तुमारी ॥ २ ॥ खत्री करम करे सूरतणु पावै ॥ सूदु वैसु पर किरति कमावै ॥ मै मूरख हरि नामु छडावै ॥ ३ ॥ सभ तेरी स्रिसटि तूं आपि रहिआ समाई ॥ गुरमुखि नानक दे वडिआई ॥ मै अंधुले हरि टेक टिकाई ॥ ४ ॥ १ ॥ ३९ ॥

पण्डित शास्त्रों एवं स्मृतियों का अध्ययन करता है। योगी अपने गुरु का नाम ''गोरख गोरख'' पुकारता है। लेकिन मैं मूर्ख हरि–परमेश्वर के नाम का ही जाप करता हूँ॥ १॥ हे मेरे राम ! मैं नहीं जानता कि मेरी क्या हालत होगी। हे मेरे मन ! तू भगवान का भजन करके भवसागर से पार हो जा॥ १॥ रहाउ॥

संन्यासी विभूति लगाकर अपने शरीर का शृंगार करता है। वह पराई नारी को त्याग कर ब्रह्मचारी बनता है। हे हरि ! मुझ मूर्ख को तुझ पर ही भरोसा है॥ २॥ क्षत्रिय शूरवीरता के कर्म करता है और वीरता पाता है। शूद्र एवं वैश्य दूसरों की सेवा का कर्म करते हैं। मुझ मूर्ख को भगवान का नाम ही मुक्त करवाएगा॥ ३॥ हे प्रभु ! यह सारी सृष्टि तेरी ही रचना है और तू स्वयं ही समस्त जीवों में समाया हुआ है। हे नानक ! गुरमुख को प्रभु महानता प्रदान करता है। मुझ ज्ञानहीन ने भगवान का ही सहारा लिया है॥ ४॥ १॥ ३६॥

गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ निरगुण कथा कथा है हरि की ॥ भजु मिलि साधू संगति जन की ॥ तरु भउजलु अकथ कथा सुनि हरि की ॥ १ ॥ गोबिंद सतसंगति मेलाइ ॥ हरि रसु रसना राम गुन गाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जन धिआवहि हरि हरि नामा ॥ तिन दासनि दास करहु हम रामा ॥ जन की सेवा ऊतम कामा ॥ २ ॥ जो हरि की हरि कथा सुणावै ॥ सो जनु हमरै मनि चिति भावै ॥ जन पग रेणु वडभागी पावै ॥ ३ ॥ संत जन सिउ प्रीति बनि आई ॥ जिन कउ लिखतु लिखिआ धुरि पाई ॥ ते जन नानक नामि समाई ॥ ४ ॥ २ ॥ ४० ॥

हरि की कथा माया के तीनों गुणों से परे है। संतजनों की संगति में मिलकर भगवान का भजन करो और हरि की अकथनीय कथा को सुनकर भवसागर से पार हो जाओ॥ १॥ हे गोविन्द ! मुझे संतों की संगति में मिला दो चूंकि मेरी रसना राम के गुण गा–गाकर हरि–रस का पान करती रहे॥ १॥ रहाउ॥

हे मेरे राम ! मुझे उन पुरुषों के दासों का दास बना दो, जो हरि–परमेश्वर के नाम का ध्यान करते रहते हैं। तेरे सेवक की सेवा एक उत्तम कार्य है॥ २॥ जो व्यक्ति मुझे हरि की हरि कथा सुनाता है, वह मेरे मन एवं चित्त को बहुत अच्छा लगता है। ईश्वर के सेवकों की चरण–धूलि भाग्यवान ही प्राप्त करते हैं॥ ३॥ संतजनों से उनकी प्रीति होती है, जिनके मस्तक पर विधाता ने ऐसा भाग्य लिख दिया है। हे नानक ! ऐसे व्यक्ति प्रभु के नाम में समा जाते हैं॥ ४॥ २॥ ४०॥

गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ माता प्रीति करे पुतु खाइ ॥ मीने प्रीति भई जलि नाइ ॥ सतिगुर प्रीति गुरसिख मुखि पाइ ॥ १ ॥ ते हरि जन हरि मेलहु हम पिआरे ॥ जिन मिलिआ दुख जाहि हमारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिउ मिलि बछरे गऊ प्रीति लगावै ॥ कामनि प्रीति जा पिरु घरि आवै ॥ हरि जन प्रीति जा हरि जसु गावै ॥ २ ॥ सारिंग प्रीति बसै जल धारा ॥ नरपति प्रीति माइआ देखि पसारा ॥ हरि जन प्रीति जपै निरंकारा ॥ ३ ॥ नर प्राणी प्रीति माइआ धनु खाटे ॥ गुरसिख प्रीति गुरु मिलै गलाटे ॥ जन नानक प्रीति साध पग चाटे ॥ ४ ॥ ३ ॥ ४१ ॥

जब पुत्र कोई स्वादिष्ट पदार्थ खाता है तो माता बड़ी प्रसन्न होकर प्रेम करती है। जब मछली जल में स्नान करती है तो उसका जल से प्रेम हो जाता है। सतिगुरु का प्रेम गुरसिक्ख के मुख में नाम रूपी भोजन डालने से है॥ १॥ हे प्रिय प्रभु! मुझे ऐसे हरि के भक्तों से मिला, जिनको मिलने से मेरे दुःख दूर हो जाएँ॥ १॥ रहाउ॥ जिस तरह अपने गुम हुए बछड़े से मिलकर गाय प्रेम करती है, जैसे कामिनी (पत्नी) अपने पति से मिलकर प्रेम करती है, जब वह घर लौट कर आता है, वैसे ही जब प्रभु का भक्त प्रभु का यशोगान करता है तो उसका मन प्रभु के प्रेम में लीन हो जाता है॥ २॥ पपीहा मूसलाधार वर्षा के जल से प्रेम करता है। नरपति (सम्राट) को धन–दौलत का आडम्बर (विस्तार) देखने का चाव है। हरि का सेवक निरंकार की आराधना करने से प्रेम करता है॥ ३॥ मनुष्य को धन–दौलत एवं सम्पत्ति कमाने से अति प्रेम है। गुरु के सिक्ख को गुरु से प्रेम होता है, जब गुरु उसे गले लगकर मिलता है। नानक तो संतों के चरण चूमने से ही प्रेम करता है॥ ४॥ ३॥ ४१॥

गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ भीखक प्रीति भीख प्रभ पाइ ॥ भूखे प्रीति होवै अंनु खाइ ॥ गुरसिख प्रीति गुर मिलि आघाइ ॥ १ ॥ हरि दरसनु देहु हरि आस तुमारी ॥ करि किरपा लोच पूरि हमारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चकवी प्रीति सूरजु मुखि लागै ॥ मिलै पिआरे सभ दुख तिआगै ॥ गुरसिख प्रीति गुरू मुखि लागै ॥ २ ॥ बछरे प्रीति खीरु मुखि खाइ ॥ हिरदै बिगसै देखै माइ ॥ गुरसिख प्रीति गुरू मुखि लाइ ॥ ३ ॥ होरु सभ प्रीति माइआ मोहु काचा ॥ बिनसि जाइ कूरा कचु पाचा ॥ जन नानक प्रीति त्रिपति गुरु साचा ॥ ४ ॥ ४ ॥ ४२ ॥

भिखारी को भिक्षा से प्रेम है, जो वह किसी दानी से प्राप्त करता है। भूखे का प्रेम भोजन खाने से है। गुरु के सिक्ख की प्रीति गुरु से भेंट करके तृप्त होने से है॥ १॥ हे प्रभु! मुझे अपने हरि दर्शन दीजिए। मुझे एक तेरी ही आशा है। हे प्रभु! मुझ पर कृपा करके मेरी कामना पूरी करो॥ १॥ रहाउ॥

चकवी को प्रसन्नता तब होती है, जब उसे सूर्य के दर्शन होते हैं। अपने प्रियतम से मिलकर उसके सारे दुःख दूर हो जाते हैं। गुरु का सिक्ख तब प्रसन्न होता है जब उसे गुरु के दर्शन होते हैं॥ २॥ बछड़ा (अपनी माता का) अपने मुख से दूध चूषन करके प्रसन्न होता है। अपनी माता को देखकर उसका हृदय प्रफुल्लित हो जाता है। (इसी तरह) गुरु का सिक्ख गुरु के दर्शन करके बड़ा हर्षित होता है॥ ३॥ (गुरु–परमात्मा के अलावा) दूसरा मोह झूठा है, चूंकि माया की प्रीति क्षणभंगुर है। यह झूठी प्रीति कांच की तरह टूट कर नाश हो जाती है। जन नानक सच्चे गुरु से ही प्रेम करता और उसके दर्शन करके तृप्त हो जाता है॥ ४॥ ४॥ ४२॥

गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ सतिगुर सेवा सफल है बणी ॥ जितु मिलि हरि नामु धिआइआ हरि धणी ॥ जिन हरि जपिआ तिन पीछै छूटी घणी ॥ १ ॥ गुरसिख हरि बोलहु मेरे भाई ॥ हरि बोलत सभ पाप लहि जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब गुरु मिलिआ तब मनु वसि आइआ ॥ धावत पंच रहे हरि

धिआइआ ॥ अनदिनु नगरी हरि गुण गाइआ ॥ २ ॥ सतिगुर पग धूरि जिना मुखि लाई ॥ तिन कूड़ तिआगे हरि लिव लाई ॥ ते हरि दरगह मुख ऊजल भाई ॥ ३ ॥ गुरू सेवा आपि हरि भावै ॥ क्रिसनु बलभद्रु गुर पग लगि धिआवै ॥ नानक गुरमुखि हरि आपि तरावै ॥ ४ ॥ ५ ॥ ४३ ॥

जिस सतिगुरु को मिलकर जगत् के स्वामी परमात्मा के नाम का ध्यान किया जाता है, उस सतिगुरु की सेवा फलदायक है। जिन्होंने ईश्वर का नाम–स्मरण किया है, उनका अनुसरण करके बहुत सारे लोग भवसागर से मुक्त हो गए हैं॥ १॥ हे मेरे भाइयो ! गुरु के शिष्यो, 'हरि–हरि' बोलो। हरि बोलने से मनुष्य के समस्त पाप दूर हो जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ जब गुरु जी मिलते हैं तो मन वश में आ जाता है। भगवान का ध्यान करने से पांचों ज्ञानेन्द्रियां (विकारों की ओर) दौड़ने से रुक जाती हैं और रात–दिन मनुष्य अपनी शरीर रूपी नगरी में ईश्वर का यशोगान करता रहता है॥ २॥ जो व्यक्ति सतिगुरु की चरण–धूलि अपने चेहरे पर लगाते हैं, वह झूठ को त्याग देते हैं और प्रभु के साथ वृत्ति लगा लेते हैं। हे भाई ! प्रभु के दरबार में उनके चेहरे ही उज्ज्वल होते हैं॥ ३॥ गुरु की सेवा परमेश्वर को भी स्वयं भली लगती है। श्री कृष्ण एवं बलभद्र ने अपने गुरु संदीपन के चरणों में नतमस्तक होकर भगवान का ही ध्यान किया था। हे नानक ! गुरमुखों को परमात्मा भवसागर से स्वयं पार करवाता है॥ ४॥ ५॥ ४३॥

गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ हरि आपे जोगी डंडाधारी ॥ हरि आपे रवि रहिआ बनवारी ॥ हरि आपे तपु तापै लाइ तारी ॥ १ ॥ ऐसा मेरा रामु रहिआ भरपूरि ॥ निकटि वसै नाही हरि दूरि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि आपे सबदु सुरति धुनि आपे ॥ हरि आपे वेखै विगसै आपे ॥ हरि आपि जपाइ आपे हरि जापे ॥ २ ॥ हरि आपे सारिंग अंम्रितधारा ॥ हरि अंम्रितु आपि पीआवणहारा ॥ हरि आपि करे आपे निसतारा ॥ ३ ॥ हरि आपे बेड़ी तुलहा तारा ॥ हरि आपे गुरमती निसतारा ॥ हरि आपे नानक पावै पारा ॥ ४ ॥ ६ ॥ ४४ ॥

ईश्वर स्वयं ही (हाथों में) डंडा रखने वाला योगी है। (जगत् का) बनवारी परमेश्वर सर्वव्यापक हो रहा है। ईश्वर स्वयं ही समाधि लगाकर तपस्या करता है॥ १॥ मेरा राम ऐसा है जो सर्वत्र स्थानों में भरपूर है। ईश्वर (प्राणी के) निकट ही रहता है, वह कहीं दूर नहीं है॥ १॥ रहाउ॥ ईश्वर स्वयं ही अनहद शब्द है और स्वयं ही अनहद शब्द की ध्वनि को सुनने वाली सुरति है। ईश्वर स्वयं ही अपनी सृष्टि को देख–देख कर स्वयं ही प्रसन्न होता है। प्रभु स्वयं ही अपने नाम का जाप करता है और जीवों से भी अपने ही नाम का जाप करवाता है॥ २॥ ईश्वर स्वयं ही पपीहा है और स्वयं ही नाम–अमृत की धारा है। ईश्वर स्वयं ही जीवों को नाम–अमृत पिलाने वाला है। ईश्वर स्वयं ही जीवों को उत्पन्न करता है और स्वयं ही जीवों को भवसागर से पार करवाता है॥ ३॥ परमात्मा स्वयं ही नाव, तुला और नावक है। गुरु के उपदेश से ईश्वर स्वयं ही प्राणियों का उद्धार करता है। हे नानक ! ईश्वर स्वयं ही प्राणियों को संसार–सागर से पार करवाता है॥ ४॥ ६॥ ४४॥

गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ साहु हमारा तूं धणी जैसी तूं रासि देहि तैसी हम लेहि ॥ हरि नामु वणंजह रंग सिउ जे आपि दइआलु होइ देहि ॥ १ ॥ हम वणजारे राम के ॥ हरि वणजु करावै दे रासि रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लाहा हरि भगति धनु खटिआ हरि सचे साह मनि भाइआ ॥ हरि जपि हरि वखरु लदिआ जमु जागाती नेड़ि न आइआ ॥ २ ॥ होरु वणजु करहि वापारीए अनंत तरंगी दुखु माइआ ॥ ओइ जेहै वणजि हरि लाइआ फलु तेहा तिन पाइआ ॥ ३ ॥ हरि हरि वणजु सो जनु करे जिसु क्रिपालु होइ प्रभु देई ॥ जन नानक साहु हरि सेविआ फिरि लेखा मूलि न लेई ॥ ४ ॥ १ ॥ ७ ॥ ४५ ॥

हे ईश्वर ! तू ही मेरा शाह एवं मालिक हैं। जैसी पूँजी तुम मुझे देते हो, वैसी ही पूँजी मैं लेता हूँ। यदि तुम दयालु होकर स्वयं मुझे हरि–नाम दो तो ही मैं हरि–नाम का व्यापार करूँ॥ १॥ हे भाई ! मैं तो राम का व्यापारी हूँ और भगवान अपनी पूँजी देकर मुझसे अपने नाम का व्यापार करवाता है॥ १॥ रहाउ॥ मैंने हरि–भक्ति के नाम रूपी धन का लाभ कमाया है और सच्चे साहूकार परमेश्वर के हृदय को पसंद आ गया हूँ। मैंने हरि का नाम जपकर हरि–नाम रूपी सौदा सत्य के दरबार में ले जाने के लिए लाद लिया है और कर लेने वाला यमदूत मेरे निकट नहीं आता॥ २॥ जो व्यापारी नाम के सिवाय अन्य पदार्थों का व्यापार करते हैं, वह अनंत तरंगों वाली माया के मोह में फँसकर बड़ा दुखी होते हैं। जिस तरह का व्यापार ईश्वर ने उनके लिए लगाया है, वैसा ही फल वे प्राप्त करते हैं॥ ३॥ भगवान के नाम का व्यापार वहीं व्यक्ति करते हैं, जिन्हें प्रभु कृपालु होकर नाम का व्यापार करने के लिए देता है। हे नानक ! जो व्यक्ति साहूकार भगवान की सेवा करता है, भगवान फिर उससे बिल्कुल ही कर्मों का लेखा नहीं माँगता॥ ४॥ १॥ ७॥ ४५॥

गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ जिउ जननी गरभु पालती सुत की करि आसा ॥ वडा होइ धनु खाटि देइ करि भोग बिलासा ॥ तिउ हरि जन प्रीति हरि राखदा दे आपि हथासा ॥ १ ॥ मेरे राम मै मूरख हरि राखु मेरे गुसईआ ॥ जन की उपमा तुझहि वडईआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मंदरि घरि आनंदु हरि हरि जसु मनि भावै ॥ सभ रस मीठे मुखि लगहि जा हरि गुण गावै ॥ हरि जनु परवारु सधारु है इकीह कुली सभु जगतु छडावै ॥ २ ॥ जो किछु कीआ सो हरि कीआ हरि की वडिआई ॥ हरि जीअ तेरे तूं वरतदा हरि पूज कराई ॥ हरि भगति भंडार लहाइदा आपे वरताई ॥ ३ ॥ लाला हाटि विहाझिआ किआ तिसु चतुराई ॥ जे राजि बहाले ता हरि गुलामु घासी कउ हरि नामु कढाई ॥ जनु नानकु हरि का दासु है हरि की वडिआई ॥ ४ ॥ २ ॥ ८ ॥ ४६ ॥

जैसे कोई माता यह आशा रखकर गर्भ में पड़े शिशु की नौ माह रक्षा करती है कि उसे पुत्र पैदा होगा और वह बड़ा होकर धन कमा कर सुख एवं आनंद हेतु उसे देगा, वैसे ही भगवान अपने भक्तों से प्रेम करता है, और उन्हें अपनी सहायता का हाथ देता है॥ १॥ हे मेरे राम ! हे मेरे गुसाई ! मैं मूर्ख हूँ, मेरी रक्षा कीजिए। हे प्रभु ! तेरे सेवक की उपमा तेरी अपनी ही कीर्त्ति है॥ १॥ रहाउ॥ जिसके हृदय को हरि–प्रभु का यश लुभाता है, वह अपने हृदय रूपी मन्दिर एवं धाम में आनन्द भोगता है। जब वह परमात्मा का यश गायन करता है तो उसका मुख समस्त मीठे रसों (कामनाओं) को चखता है। प्रभु का सेवक अपने परिवार का कल्याण करने वाला है। वह अपने इक्कीस वंशों (सात पिता के, सात माता के, सात ससुर के) के समस्त प्राणियों का उद्धार कराता है॥ २॥ जो कुछ किया है, परमेश्वर ने किया है और परमेश्वर का यश है । मेरे प्रभु–परमेश्वर समस्त जीव–जन्तु तेरे हैं। तुम उनमें व्यापक हो रहे हो और उनसे अपनी पूजा–अर्चना करवाते हो। परमेश्वर स्वयं ही प्राणियों को अपनी सेवा–भक्ति का खजाना दिलवाता है और स्वयं ही इसे बांटता है॥ ३॥ मैं तो दुकान से खरीदा हुआ तेरा गुलाम हूँ, मैं क्या चतुरता कर सकता हूँ ? यदि हे प्रभु ! तू मुझे सिंघासन पर आरूढ़ कर दे तो भी मैं तेरा ही गुलाम रहूँगा तथा एक घसियारे की अवस्था में भी तुम मुझसे अपने नाम का ही जाप करवा। नानक तो परमात्मा का दास है और परमात्मा की ही स्तुति करता रहता है॥ ४॥ २॥ ८॥ ४६॥

गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ किरसाणी किरसाणु करे लोचै जीउ लाइ ॥ हलु जोतै उदमु करे मेरा पुतु धी खाइ ॥ तिउ हरि जनु हरि हरि जपु करे हरि अंति छडाइ ॥ १ ॥ मै मूरख की गति कीजै मेरे राम ॥ गुर सतिगुर सेवा हरि लाइ हम काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लै तुरे सउदागरी सउदागरु धावै ॥ धनु

खटै आसा करै माइआ मोहु वधावै ॥ तिउ हरि जनु हरि हरि बोलता हरि बोलि सुखु पावै ॥ २ ॥ बिखु संचै हटवाणीआ बहि हाटि कमाइ ॥ मोह झूठु पसारा झूठ का झूठे लपटाइ ॥ तिउ हरि जनि हरि धनु संचिआ हरि खरचु लै जाइ ॥ ३ ॥ इहु माइआ मोह कुटंबु है भाइ दूजै फास ॥ गुरमती सो जनु तरै जो दासनि दास ॥ जनि नानकि नामु धिआइआ गुरमुखि परगास ॥ ४ ॥ ३ ॥ ६ ॥ ४७ ॥

कृषक बड़े चाव से एवं दिल लगाकर कृषि करता है। वह हल चलाता है और कड़ी मेहनत करता है और लालसा करता है कि उसके पुत्र एवं पुत्री संतुष्ट होकर खाएँ। इसी तरह प्रभु का सेवक प्रभु के नाम का जाप करता रहता है, जिसके फलस्वरूप परमेश्वर अन्तिम समय उसे मोह-माया के पन्जे से मुक्त कराता है॥ १॥ हे मेरे राम! मुझ मूर्ख की मुक्ति करो। भगवान ने मुझे गुरु-सतिगुरु की सेवा के कार्य में लगा दिया है॥ १॥ रहाउ॥ व्यापारी कुशल घोड़े लेकर उनके व्यापार हेतु चलता है। वह धन कमाता है और अधिकतर धन की आशा करता है। फिर मोह-माया के साथ अपनी लालसा को बढ़ाता है। इसी तरह हरि का सेवक हरि-परमेश्वर का नाम बोलता है और हरि बोलकर सुख पाता है॥ २॥ दुकानदार दुकान में बैठकर दुकानदारी करता है और माया रूपी धन एकत्रित करता है। जो उसके आत्मिक जीवन में विष का काम करती है। माया ने जीवों को फँसाने हेतु झूठे मोह का प्रसार किया हुआ है और वे माया के झूठे मोह से लिपटे हुए हैं। इसी तरह हरि का सेवक हरि-नाम रूपी धन संचित करता है और हरि-नाम रूपी धन को वह जीवन-यात्रा हेतु खर्च के रूप में ले जाता है॥ ३॥ माया धन एवं परिवार के मोह के कारण मनुष्य माया की मोह रूपी फाँसी में फँस जाता है। गुरु के उपदेश से वहीं मनुष्य भवसागर से पार होता है जो प्रभु के सेवकों का सेवक बन जाता है। जन नानक ने गुरु के माध्यम से भगवान के नाम का ही ध्यान किया है और उसके हृदय में प्रभु-ज्योति का प्रकाश हो गया है॥ ४॥ ३॥ ६॥ ४७॥

गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ नित दिनसु राति लालचु करे भरमै भरमाइआ ॥ वेगारि फिरै वेगारीआ सिरि भारु उठाइआ ॥ जो गुर की जनु सेवा करे सो घर कै कंमि हरि लाइआ ॥ १ ॥ मेरे राम तोड़ि बंधन माइआ घर कै कंमि लाइ ॥ नित हरि गुण गावह हरि नामि समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नरु प्राणी चाकरी करे नरपति राजे अरथि सभ माइआ ॥ कै बंधै कै डानि लेइ कै नरपति मरि जाइआ ॥ धंनु धनु सेवा सफल सतिगुरू की जितु हरि हरि नामु जपि हरि सुखु पाइआ ॥ २ ॥ नित सउदा सूदु कीचै बहु भाति करि माइआ कै ताई ॥ जा लाहा देइ ता सुखु मने तोटै मरि जाई ॥ जो गुण साझी गुर सिउ करे नित नित सुखु पाई ॥ ३ ॥ जितनी भूख अन रस साद है तितनी भूख फिरि लागै ॥ जिसु हरि आपि क्रिपा करे सो वेचे सिरु गुर आगै॥ जन नानक हरि रसि त्रिपतिआ फिरि भूख न लागै ॥ ४ ॥ ४ ॥ १० ॥ ४८ ॥

जो व्यक्ति नित्य दिन-रात लालच करता है। मोह-माया की प्रेरणा से भ्रम में ही भटकता रहता है। वह उस वेगारी के तुल्य है जो अपने सिर पापों का बोझ उठाकर बेगार करता है। जो व्यक्ति गुरु की सेवा करता है, उसे ही भगवान ने अपने घर की सेवा अर्थात् नाम-सिमरन में लगाया है॥ १॥ हे मेरे राम! हमें मोह-माया के बंधन से मुक्त कर और हमें अपने घर की सेवा नाम- सिमरन में लगा। मैं प्रतिदिन प्रभु की गुणस्तुति ही करता हूँ और प्रभु के नाम में लीन रहता हूँ॥ १॥ रहाउ॥ नश्वर मनुष्य धन की खातिर राजा-महाराजा की नौकरी करता है। राजा कई बार किसी आरोप के कारण उसे बंदी बना लेता है अथवा कोई (जुर्माना इत्यादि) दण्ड देता है अथवा राजा जब स्वयं ही प्राण त्याग देता है तो उसकी नौकरी ही समाप्त हो जाती है। परन्तु सतिगुरु की सेवा धन्य-धन्य और फलदायक

है जिसकी बदौलत मनुष्य प्रभु–परमेश्वर का नाम–स्मरण करके सुख प्राप्त करता है॥ २॥ धन–दौलत की खातिर मनुष्य विभिन्न प्रकार का व्यापार करता है। यदि व्यापार में लाभ प्राप्त हो तो वह सुख अनुभव करता है। लेकिन क्षति (घाटा) होने पर उसका दिल टूट जाता है। परन्तु जो गुरु के साथ गुणों (भलाई) को सांझा करता है वह सदा के लिए सुख प्राप्त कर लेता है॥ ३॥ मनुष्य को जितनी ज्यादा भूख दूसरे रसों एवं आस्वादनों के लिए है उतनी अधिक भूख (लालसा) उसे बार–बार लगती है। जिस पर परमात्मा कृपा–दृष्टि करता है, वह अपना शीश गुरु के समक्ष बेच देता है। हे नानक ! जो व्यक्ति हरि–रस से तृप्त हो जाता है, उसे दोबारा भूख नहीं लगती॥ ४॥ ४॥ १०॥ ४८॥

गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ हमरै मनि चिति हरि आस नित किउ देखा हरि दरसु तुमारा ॥ जिनि प्रीति लाई सो जाणता हमरै मनि चिति हरि बहुतु पिआरा ॥ हउ कुरबानी गुर आपणे जिनि विछुड़िआ मेलिआ मेरा सिरजनहारा ॥ १ ॥ मेरे राम हम पापी सरणि परे हरि दुआरि ॥ मतु निरगुण हम मेलै कबहूं अपुनी किरपा धारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हमरे अवगुण बहुतु बहुतु है बहु बार बार हरि गणत न आवै ॥ तूं गुणवंता हरि हरि दइआलु हरि आपे बखसि लैहि हरि भावै ॥ हम अपराधी राखे गुर संगती उपदेसु दीओ हरि नामु छडावै ॥ २ ॥ तुमरे गुण किआ कहा मेरे सतिगुरा जब गुरु बोलह तब बिसमु होइ जाइ ॥ हम जैसे अपराधी अवरु कोई राखै जैसे हम सतिगुरि राखि लीए छडाइ ॥ तूं गुरु पिता तूंहै गुरु माता तूं गुरु बंधपु मेरा सखा सखाइ ॥ ३ ॥ जो हमरी बिधि होती मेरे सतिगुरा सा बिधि तुम हरि जाणहु आपे ॥ हम रुलते फिरते कोई बात न पूछता गुर सतिगुर संगि कीरे हम थापे ॥ धंनु धंनु गुरू नानक जन केरा जितु मिलिऐ चूके सभि सोग संतापे ॥ ४ ॥ ५ ॥ ११ ॥ ४६ ॥

हे भगवान ! मेरे मन एवं चित्त में सदैव ही यह उम्मीद बनी रहती है मैं कैसे हरि–दर्शन करूँ ? जो प्रभु से प्रेम करता है वही इसको समझता है। मेरे मन एवं चित्त को ईश्वर अत्यन्त ही प्यारा लगता है। मैं अपने उस गुरु पर कुर्बान जाता हूँ, जिसने मुझे मेरे सृजनहार प्रभु से मिला दिया है, जिससे मैं जुदा हुआ था॥ १॥ हे मेरे राम ! मैं पापी हूँ। मैंने तेरी शरण ली है और मैं तेरे द्वार पर आ पड़ा हूँ चूंकि तुम अपनी कृपा करके मुझ अल्पबुद्धि, गुणहीन एवं मलिन को कभी अपने साथ मिला लो॥ १॥ रहाउ॥ मुझ में अत्यंत अवगुण हैं और मेरे अवगुण गिने नहीं जा सकते और मैं बार–बार अवगुण करता जाता हूँ। हे प्रभु–परमेश्वर ! तुम गुणवान एवं दयालु हो। हे प्रभु ! जब तुझे भला लगता है, तुम स्वयं ही क्षमा कर देते हो। मुझ अपराधी को गुरु की संगति ने बचा लिया है। गुरु जी ने मुझे उपदेश दिया है कि ईश्वर का नाम जीवन से मुक्ति दिलवा देता है॥ २॥ हे मेरे सतिगुरु ! मैं तेरे गुण कैसे बताऊं? जब गुरु जी मधुर वचन करते हैं तो मैं आश्चर्य से सुप्रसन्न हो जाता हूँ। क्या कोई दूसरा मुझ जैसे अपराधी को बचा सकता है जैसे सतिगुरु ने मुझे बचाकर भवसागर से मुक्त कर दिया है। हे मेरे गुरु ! तुम मेरे पिता हो। तुम ही मेरी माता हो और तुम ही मेरे भाई–बन्धु, साथी एवं सहायक हो॥ ३॥ हे मेरे सतिगुरु जी ! जो अवस्था मेरी थी उस अवस्था को तुम हे हरि रूप गुरु जी स्वयं ही जानते हो। हे प्रभु ! मैं मिट्टी में ठोकरें खा रहा था और कोई भी मेरी बात नहीं पूछता था अर्थात् कोई भी चिन्ता नहीं करता था। सतिगुरु ने अपनी संगति देकर मुझ तुच्छ कीड़े को सम्मान प्रदान किया है। नानक का गुरु धन्य–धन्य है। जिसको मिलने से मेरे सारे दुख एवं संताप मिट गए हैं॥ ४॥ ५॥ ११॥ ४६॥

गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ कंचन नारी महि जीउ लुभतु है मोहु मीठा माइआ ॥ घर मंदर घोड़े खुसी मनु अन रसि लाइआ ॥ हरि प्रभु चिति न आवई किउ छूटा मेरे हरि राइआ ॥ १ ॥ मेरे राम इह

नीच करम हरि मेरे ॥ गुणवंता हरि हरि दइआलु करि किरपा बखसि अवगण सभि मेरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ किछु रूपु नही किछु जाति नाही किछु ढंगु न मेरा ॥ किआ मुहु लै बोलह गुण बिहून नामु जपिआ न तेरा ॥ हम पापी संगि गुर उबरे पुंनु सतिगुर केरा ॥ २ ॥ सभु जीउ पिंडु मुखु नकु दीआ वरतण कउ पाणी ॥ अंनु खाणा कपड़ु पैनणु दीआ रस अनि भोगाणी ॥ जिनि दीए सु चिति न आवई पसू हउ करि जाणी ॥ ३ ॥ सभु कीता तेरा वरतदा तूं अंतरजामी ॥ हम जंत विचारे किआ करह सभु खेलु तुम सुआमी ॥ जन नानकु हाटि विहाझिआ हरि गुलम गुलामी ॥ ४ ॥ ६ ॥ १२ ॥ ५० ॥

मेरा मन सुन्दर नारी के मोह में फँसा हुआ है एवं माया का मोह मुझे बड़ा मीठा लगता है। मुझे घर, मन्दिर, घोड़े देख–देखकर बड़ी खुशी होती है और दूसरे रसों के आनन्द में मेरा मन चाव से लगा हुआ है। प्रभु–परमेश्वर को मैं स्मरण नहीं करता। हे मेरे प्रभु ! फिर मुझे कैसे मोक्ष मिलेगा॥ १॥ हे मेरे राम ! ऐसे मेरे नीच कर्म हैं। हे मेरे गुणनिधि एवं दयालु प्रभु–परमेश्वर ! मुझ पर कृपा–दृष्टि करके मेरे समस्त अवगुण क्षमा कर दीजिए॥ १॥ रहाउ॥ हे ईश्वर ! न मेरा (सुन्दर) रूप है, न मेरी उच्च जाति है, न ही मेरा जीवन आचरण अच्छा है। मुझ गुणहीन ने तेरा नाम भी नहीं जपा, अतः मैं कौन–सा मुँह लेकर बोलूं? सतिगुरु ने मुझ पर बड़ा उपकार किया है। मैं अपराधी गुरु की संगति से (मोह–माया से) बच गया हूँ॥ २॥ परमात्मा ने समस्त प्राणियों को आत्मा, देह, मुख, नाक और प्रयोग करने के लिए जल दिया है। प्रभु ने उनको खाने के लिए भोजन, पहनने के लिए वस्त्र एवं अनेक रस ऐश्वर्य भोग करने के लिए दिए हैं। जिस प्रभु ने प्राणियों की रचना करके यह कुछ दिया है, मनुष्य को वह (प्रभु) स्मरण नहीं होता। यह मनुष्य पशु के समान है जो यह समझता है कि यह सब कुछ मैंने स्वयं प्राप्त किया है॥ ३॥ हे ईश्वर ! दुनिया में सब कुछ तेरा किया हो रहा है, तुम अंतर्यामी हो। हे परमात्मा ! हम जीव बेचारे क्या कर सकते हैं ? अर्थात् हमारे वश में कुछ भी नहीं। हे मेरे स्वामी ! यह सारी दुनिया तेरी एक लीला है। (जिस तरह कोई गुलाम मण्डी से खरीदा जाता है वैसे ही) मण्डी में से मूल्य लिया हुआ सेवक नानक प्रभु के सेवकों का सेवक है॥ ४॥ ६॥ १२॥ ५०॥

गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ जिउ जननी सुतु जणि पालती राखै नदरि मझारि ॥ अंतरि बाहरि मुखि दे गिरासु खिनु खिनु पोचारि ॥ तिउ सतिगुरु गुरसिख राखता हरि प्रीति पिआरि ॥ १ ॥ मेरे राम हम बारिक हरि प्रभ के है इआणे ॥ धंनु धंनु गुरू गुरु सतिगुरु पाधा जिनि हरि उपदेसु दे कीए सिआणे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसी गगनि फिरंती ऊडती कपरे बागे वाली ॥ ओह राखै चीतु पीछै बिचि बचरे नित हिरदै सारि समाली ॥ तिउ सतिगुर सिख प्रीति हरि हरि की गुरु सिख रखै जीअ नाली ॥ २ ॥ जैसे काती तीस बतीस है विचि राखै रसना मास रतु केरी ॥ कोई जाणहु मास काती कै किछु हाथि है सभ वसगति है हरि केरी ॥ तिउ संत जना की नर निंदा करहि हरि राखै पैज जन केरी ॥ ३ ॥ भाई मत कोई जाणहु किसी कै किछु हाथि है सभ करे कराइआ ॥ जरा मरा तापु सिरति सापु सभु हरि कै वसि है कोई लागि न सकै बिनु हरि का लाइआ ॥ ऐसा हरि नामु मनि चिति निति धिआवहु जन नानक जो अंती अउसरि लए छडाइआ ॥ ४ ॥ ७ ॥ १३ ॥ ५१ ॥

जैसे माता पुत्र को जन्म देकर उसकी परवरिश करती है और उसको अपनी दृष्टि में रखती है। घर के भीतर एवं बाहर वह उसके मुख में ग्रास देती है और क्षण–क्षण उसको दुलारती है। वैसे ही सतिगुरु अपने सिक्खों को भगवान का प्रेम–प्यार देकर रखते हैं॥ १॥ हे मेरे राम ! हम हरि–प्रभु के नादान बच्चे हैं। गुरु–सतिगुरु उपदेशदाता धन्य–धन्य है, जिसने हमें हरि–नाम का उपदेश देकर

बुद्धिमान बना दिया है॥ १॥ रहाउ॥ जैसे श्वेत पंखों वाली (चिड़िया) गगन में उड़ती फिरती है, परन्तु उसका मन अपने पीछे छोड़े बच्चों में अटका रहता है और अपने मन में सदा उन्हें स्मरण करती है, वैसे ही सतिगुरु गुरु के सिक्ख में हरि–प्रभु का प्रेम दे कर गुरु सिक्ख को अपने हृदय से लगाकर रखते हैं॥ २॥ जैसे परमेश्वर माँस एवं रुधिर की बनी हुई जिह्वा की तीस अथवा बत्तीस दांतों की कैंची में से रक्षा करता है। कोई यह न समझे कि इस तरह करना जिह्वा अथवा कैंची के कुछ वश में है। प्रत्येक वस्तु परमेश्वर के वश में है। इसी तरह ही मनुष्य संतजनों की आलोचना–निन्दा करता है तो परमेश्वर अपने सेवक की प्रतिष्ठा को बचाता है॥ ३॥ मेरे भाइओ! कोई यह न समझे कि किसी के कुछ वश में है। सभी लोग वहीं कर्म करते है, जो परमेश्वर उनसे करवाता है। बुढ़ापा, मृत्यु, बुखार, सिर–दर्द एवं ताप सभी रोग परमेश्वर के वश में हैं। परमेश्वर के हुक्म के बिना कोई रोग प्राणी को स्पर्श नहीं कर सकता। हे दास नानक! अपने चित्त एवं मन में ऐसे परमात्मा के नाम का नित्य ध्यान करो जो अन्तिम समय (यम इत्यादि से) मुक्ति करवाता है॥ ४॥ ७॥ १३॥ ५१॥

गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ जिसु मिलिऐ मनि होइ अनंदु सो सतिगुरु कहीऐ ॥ मन की दुबिधा बिनसि जाइ हरि परम पदु लहीऐ ॥ १ ॥ मेरा सतिगुरु पिआरा कितु बिधि मिलै ॥ हउ खिनु खिनु करी नमसकारु मेरा गुरु पूरा किउ मिलै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करि किरपा हरि मेलिआ मेरा सतिगुरु पूरा ॥ इछ पुंनी जन केरीआ ले सतिगुर धूरा ॥ २ ॥ हरि भगति द्रिड़ावै हरि भगति सुणै तिसु सतिगुर मिलीऐ ॥ तोटा मूलि न आवई हरि लाभु निति द्रिड़ीऐ ॥ ३ ॥ जिस कउ रिदै विगासु है भाउ दूजा नाही ॥ नानक तिसु गुर मिलि उधरै हरि गुण गावाही ॥ ४ ॥ ८ ॥ १४ ॥ ५२ ॥

जिसको मिलने से मन को खुशी मिलती है, उसे ही सतिगुरु कहा जाता है। मन की दुविधा दूर हो जाती है और हरि के परमपद की प्राप्ति हो जाती है॥ १॥ मेरा प्रिय सतिगुरु मुझे किस विधि से मिल सकता है? मैं उस गुरु को क्षण–क्षण प्रणाम करता रहता हूँ। मुझे मेरा पूर्ण गुरु कैसे मिल सकता हैं?॥ १॥ रहाउ॥ अपनी कृपा करके ईश्वर ने मुझे मेरे पूर्ण सतिगुरु से मिला दिया है। सतिगुरु की चरण–धूलि प्राप्त करने से उसके सेवक की कामना पूर्ण हो गई है॥ २॥ मनुष्य को उस सतिगुरु से मिलना चाहिए, जिससे वह भगवान की भक्ति के बारे में सुने एवं उसे भगवान की भक्ति हृदय में दृढ़ करवा दे। उससे मिलकर मनुष्य हमेशा ही भगवान का नाम रूपी लाभ प्राप्त करता रहता है और उसे बिल्कुल ही कोई कमी नहीं आती॥ ३॥ हे नानक! जिसके हृदय में प्रसन्नता विद्यमान है और परमात्मा के सिवाय कोई मोह नहीं, उस गुरु से मिलकर मनुष्य भवसागर से पार हो जाता है, जो ईश्वर का यशोगान करवाता है॥ ४॥ ८॥ १४॥ ५२॥

महला ४ गउड़ी पूरबी ॥ हरि दइआलि दइआ प्रभि कीनी मेरै मनि तनि मुखि हरि बोली ॥ गुरमुखि रंगु भइआ अति गूड़ा हरि रंगि भीनी मेरी चोली ॥ १ ॥ अपुने हरि प्रभ की हउ गोली ॥ जब हम हरि सेती मनु मानिआ करि दीनो जगतु सभु गोल अमोली ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करहु बिबेकु संत जन भाई खोजि हिरदै देखि ढंढोली ॥ हरि हरि रूपु सभ जोति सबाई हरि निकटि वसै हरि कोली ॥ २ ॥ हरि हरि निकटि वसै सभ जग कै अपरंपर पुरखु अतोली ॥ हरि हरि प्रगटु कीओ गुरि पूरै सिरु वेचिओ गुर पहि मोली ॥ ३ ॥ हरि जी अंतरि बाहरि तुम सरणागति तुम वड पुरख वडोली ॥ जनु नानकु अनदिनु हरि गुण गावै मिलि सतिगुर गुर वेचोली ॥ ४ ॥ १ ॥ १५ ॥ ५३ ॥

दयालु हरि–परमेश्वर ने मुझ पर अपनी दया की है और उसने मेरे मन, तन एवं मुँह में हरि की वाणी डाल दी है। मेरी हृदय रूपी चोली हरि–रंग में भीग गई है। गुरु का आश्रय लेकर वह रंग बहुत

गहरा हो गया है॥ १॥ मैं अपने प्रभु—परमेश्वर की दासी हूँ। जब प्रभु के साथ मेरा मन प्रसन्न हो गया तो उसने सारे जगत् को मेरा बिना मूल्य दास बना दिया॥ १॥ रहाउ॥ हे सन्तजनो, भाइओ! विचार करो! अपने हृदय में ही खोज—तलाश करके ईश्वर को देख लो। यह सारी दुनिया भगवान का रूप है और समस्त जीवों में उसकी ही ज्योति विद्यमान है। भगवान प्रत्येक जीव के निकट एवं पास ही निवास करता है॥ २॥ अनन्त, सर्वशक्तिमान एवं अतुलनीय प्रभु—परमेश्वर सारे जगत् के निकट ही रहता है। उस ईश्वर को पूर्ण गुरु ने मेरे हृदय में ही प्रकट किया है, (इसलिए) मैंने अपना सिर गुरु के पास बेच दिया है॥ ३॥ हे पूज्य परमेश्वर! तू जीवों के अन्दर एवं बाहर सर्वत्र विद्यमान है और अन्दर एवं बाहर मैं तेरी शरण में हूँ, (मेरे लिए) तुम दुनिया के सबसे बड़े महापुरुष हो। जन नानक मध्यस्थ—सतिगुरु से मिलकर रात—दिन प्रभु की महिमा—स्तुति करता रहता है॥ ४॥ १॥ १५॥ ५३॥

गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ जगजीवन अपरंपर सुआमी जगदीसुर पुरख बिधाते ॥ जितु मारगि तुम प्रेरहु सुआमी तितु मारगि हम जाते ॥ १ ॥ राम मेरा मनु हरि सेती राते ॥ सतसंगति मिलि राम रसु पाइआ हरि रामै नामि समाते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि हरि नामु हरि हरि जगि अवखधु हरि हरि नामु हरि साते ॥ तिन के पाप दोख सभि बिनसे जो गुरमति राम रसु खाते ॥ २ ॥ जिन कउ लिखतु लिखे धुरि मसतकि ते गुर संतोख सरि नाते ॥ दुरमति मैलु गई सभ तिन की जो राम नाम रंगि राते ॥ ३ ॥ राम तुम आपे आपि आपि प्रभु ठाकुर तुम जेवड अवरु न दाते ॥ जनु नानकु नामु लए तां जीवै हरि जपीऐ हरि किरपा ते ॥ ४ ॥ २ ॥ १६ ॥ ५४ ॥

हे प्रभु! तू जगत् का जीवन, अपरम्पार एवं हम सबका स्वामी है। हे जगदीश्वर! तुम सर्वशक्तिमान एवं भाग्यविधाता हो। हे मेरे स्वामी! हम प्राणियों को तुम जिस मार्ग की भी प्रेरणा करते हो, उसी मार्ग में हम चलते हैं॥१॥ हे मेरे राम! मेरा मन प्रभु के प्रेम में मग्न हो गया है। सत्संग में मिलकर मैंने राम रस प्राप्त किया है और अब मेरा मन हरि—राम के नाम में लीन रहता है॥ १॥ रहाउ॥ हरि—परमेश्वर का नाम जगत् में समस्त रोगों की औषधि है। हरि—परमेश्वर का नाम सदैव सत्य है। जो व्यक्ति गुरु के उपदेश से राम रस को चखते हैं, उनके तमाम पाप एवं दोष नाश हो जाते हैं॥ २॥ जिनके मस्तक पर विधाता ने प्रारम्भ से ही ऐसा भाग्य लिख दिया है, वह गुरु रूपी संतोष सरोवर में स्नान करते हैं। जो राम—नाम के प्रेम में मग्न रहते हैं, उनकी मंदबुद्धि में से पापों की तमाम मैल दूर हो जाती है॥ ३॥ हे मेरे राम! तुम स्वयं ही सबकुछ हो। तुम स्वयं ही समस्त जीवों के ठाकुर हो और तेरे जैसा महान दाता दूसरा कोई नहीं। नानक केवल ईश्वर का नाम लेने से ही जीता है। प्रभु की दया से ही प्रभु का जाप होता है॥ ४॥ २॥ १६॥ ५४॥

गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ करहु क्रिपा जगजीवन दाते मेरा मनु हरि सेती राचे ॥ सतिगुरि बचनु दीओ अति निरमलु जपि हरि हरि हरि मनु माचे ॥ १ ॥ राम मेरा मनु तनु बेधि लीओ हरि साचे ॥ जिह काल कै मुखि जगतु सभु ग्रसिआ गुर सतिगुर कै बचनि हरि हम बाचे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन कउ प्रीति नाही हरि सेती ते साकत मूड़ नर काचे ॥ तिन कउ जनमु मरणु अति भारी विचि विसटा मरि मरि पाचे ॥ २ ॥ तुम दइआल सरणि प्रतिपालक मो कउ दीजै दानु हरि हम जाचे ॥ हरि के दास दास हम कीजै मनु निरति करे करि नाचे ॥ ३ ॥ आपे साह वडे प्रभ सुआमी हम वणजारे हहि ता चे ॥ मेरा मनु तनु जीउ रासि सभ तेरी जन नानक के साह प्रभ साचे ॥ ४ ॥ ३ ॥ १७ ॥ ५५ ॥

हे जगजीवन ! हे दाता ! मुझ पर अपनी ऐसी कृपा करो कि मेरा मन प्रभु की स्मृति में लीन रहे। सतिगुरु ने मुझे अत्यन्त निर्मल वचन किया है और हरि—परमेश्वर के नाम का जाप करने से मेरा मन प्रसन्न हो गया है॥ १॥ हे मेरे राम ! मेरा मन एवं तन सच्चे परमेश्वर ने बींध लिया है। हे हरि—परमेश्वर ! गुरु—सतिगुरु के उपदेश से मैं उस काल (मृत्यु) से बच गया हूँ, जिसके मुख (पंजे) में सारा जगत् फँसा हुआ है॥ १॥ रहाउ॥ जिनकी प्रीति परमेश्वर से नहीं, वह अधर्मी, मूर्ख एवं झूठे पुरुष हैं। वह जन्म एवं मृत्यु का अत्यंत भारी दुख उठाते हैं और बार—बार जन्मते—मरते और विष्टा में सड़ते रहते हैं॥ २॥ हे प्रभु ! तुम दया के घर एवं शरणार्थियों के पालनहार हो। हे ठाकुर ! मैं याचना करता हूँ कि मुझे अपने प्रेम का दान प्रदान करो। मुझे प्रभु के सेवकों का सेवक बना दे, चूंकि मेरा मन प्रेम धारण करके नृत्य करे॥ ३॥ हे मेरे स्वामी प्रभु ! तू स्वयं ही बड़ा साहूकार है और मैं तेरा व्यापारी हूँ। मेरा मन, तन एवं जीवन सब कुछ तेरी ही पूँजी है। हे सच्चे प्रभु ! तुम नानक के साहूकार हो॥ ४॥ ३॥ १७॥ ५५॥

गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ तुम दइआल सरब दुख भंजन इक बिनउ सुनहु दे काने ॥ जिस ते तुम हरि जाने सुआमी सो सतिगुरु मेलि मेरा प्राने ॥ १ ॥ राम हम सतिगुर पारब्रहम करि माने ॥ हम मूड़ मुगध असुध मति होते गुर सतिगुर कै बचनि हरि हम जाने ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जितने रस अन रस हम देखे सभ तितने फीक फीकाने ॥ हरि का नामु अंम्रित रसु चाखिआ मिलि सतिगुर मीठ रस गाने ॥ २ ॥ जिन कउ गुरु सतिगुरु नही भेटिआ ते साकत मूड़ दिवाने ॥ तिन के करमहीन धुरि पाए देखि दीपकु मोहि पचाने ॥ ३ ॥ जिन कउ तुम दइआ करि मेलहु ते हरि हरि सेव लगाने ॥ जन नानक हरि हरि हरि जपि प्रगटे मति गुरमति नामि समाने ॥ ४ ॥ ४ ॥ १८ ॥ ५६ ॥

हे प्रभु ! तुम बड़े दयालु एवं सर्व दुःखों का नाश करने वाले हो। अतः मेरी एक प्रार्थना ध्यानपूर्वक सुनो। हे मेरे स्वामी हरि ! मुझ उस सतिगुरु से मिला दो जिसकी कृपा से तुझे जाना जाता है और जो मेरे प्राण हैं॥ १॥ हे मेरे राम ! मैं सतिगुरु को पारब्रह्म कह कर मानता हूँ। मैं मूर्ख, मक्कार और खोटी बुद्धि वाला हूँ। हे ईश्वर ! मैंने तुझे सतिगुरु की वाणी से जान लिया है॥ १॥ रहाउ॥ संसार के जितने भी विभिन्न रस हैं, मैंने देख लिए हैं परन्तु ये सभी बिल्कुल फीके हैं। सतिगुरु से मिलकर मैंने हरि—नाम रूपी अमृत रस चख लिया है, जो गन्ने के रस के समान बड़ा मीठा है॥ २॥ जो व्यक्ति गुरु—सतिगुरु से नहीं मिले, वह मूर्ख, दीवाने एवं शाक्त हैं। (लेकिन उनके भी क्या वश ?) उन भाग्यहीनों की किस्मत में प्रारम्भ से ही ऐसे नीचे कर्म लिखे हुए हैं। वे माया के मोह में फँसकर यूं जलते हैं जैसे पतंगा दीपक को देखकर जल जाता है॥३॥ हे हरि—परमेश्वर ! जिनको तुम दया करके गुरु से मिला देते हो, वह तेरी सेवा—भक्ति में जुट जाते हैं। हे नानक ! ऐसे मनुष्य हरि—परमेश्वर के नाम का जाप करने से दुनिया में प्रसिद्ध हो जाते हैं और गुरु के उपदेश से नाम में लीन रहते हैं॥ ४॥ ४॥ १८॥ ५६॥

गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ मेरे मन सो प्रभु सदा नालि है सुआमी कहु किथै हरि पहु नसीऐ ॥ हरि आपे बखसि लए प्रभु साचा हरि आपि छडाए छुटीऐ ॥ १ ॥ मेरे मन जपि हरि हरि हरि मनि जपीऐ ॥ सतिगुर की सरणाई भजि पउ मेरे मना गुर सतिगुर पीछै छुटीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे मन सेवहु सो प्रभ स्रब सुखदाता जितु सेविऐ निज घरि वसीऐ ॥ गुरमुखि जाइ लहहु घरु अपना घसि चंदनु हरि जसु घसीऐ ॥ २ ॥ मेरे मन हरि हरि हरि हरि हरि जसु ऊतमु लै लाहा हरि मनि हसीऐ ॥ हरि हरि आपि दइआ करि देवै ता अंम्रितु हरि रसु चखीऐ ॥ ३ ॥ मेरे मन नाम बिना जो दूजै लागे ते साकत नर जमि घुटीऐ ॥ ते साकत चोर जिना नामु विसारिआ मन तिन कै निकटि न भिटीऐ ॥ ४ ॥ मेरे मन सेवहु अलख निरंजन नरहरि जितु सेविऐ लेखा छुटीऐ ॥ जन नानक हरि प्रभि पूरे कीए खिनु मासा तोलु न घटीऐ ॥ ५ ॥ ५ ॥ १६ ॥ ५७ ॥

हे मेरे मन ! वह स्वामी—प्रभु सदैव हमारे साथ रहता है। बताओ ! परमेश्वर से भागकर हम कहाँ जा सकते हैं ? सत्यस्वरूप प्रभु—परमेश्वर स्वयं ही जीवों को क्षमा कर देता है। यदि प्रभु स्वयं मनुष्य को मुक्त करे तो ही वह मुक्त होता है॥ १॥ हे मेरे मन ! हृदय से हरि—परमेश्वर का हरि—नाम ही जपते रहना चाहिए। हे मेरे मन ! भाग कर सतिगुरु की शरण लो। सतिगुरु का आश्रय लेने से तेरी (मोह—माया के बंधनों से) मुक्ति हो जाएगी॥ १॥ रहाउ॥ हे मेरे मन ! उस सर्वसुखदाता परमेश्वर की सेवा—भक्ति करो, जिसकी सेवा—भक्ति करने से आत्मस्वरूप में निवास हो जाता है। गुरु के माध्यम से अपने आत्मस्वरूप रूपी घर में जाकर निवास करो और जैसे चन्दन को शिला पर घिसाया जाता है, वैसे ही हरि—यश को अपने मन पर घिसाओ॥ २॥ हे मेरे मन ! हरि—परमेश्वर का हरि—नाम जप। हरि—परमेश्वर का यश सर्वोत्तम है। हरि—परमेश्वर का नाम रूपी लाभ प्राप्त करके हृदय में सुप्रसन्न होना चाहिए। यदि हरि—परमेश्वर स्वयं दया कर दे तो मनुष्य हरि—रस रूपी अमृत को चखता है॥ ३॥ हे मेरे मन ! जो प्रभु के नाम से विहीन होकर माया—मोह में तल्लीन हैं, उन शाक्त पुरुषों को यमदूत दबोचकर मार देता है। हे मेरे मन ! जिन्होंने परमात्मा के नाम को भुला दिया है, उनके निकट नहीं आना चाहिए, क्योंकि वे तो शाक्त एवं प्रभु के चोर हैं॥ ४॥ हे मेरे मन ! उस अलख निरंजन नृसिंह भगवान की सेवा—भक्ति करो, जिसकी सेवा—भक्ति करने से कर्मों का लेखा जोखा समाप्त हो जाता है। हे नानक ! जिन्हें हरि—प्रभु ने तोल में पूर्ण कर दिया है, उनका फिर तोल एक माशा मात्र भी कम नहीं होता॥ ५॥ ५॥ १६॥ ५७॥

गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ हमरे प्रान वसगति प्रभ तुमरै मेरा जीउ पिंडु सभ तेरी ॥ दइआ करहु हरि दरसु दिखावहु मैरै मनि तनि लोच घणेरी ॥ १ ॥ राम मैरै मनि तनि लोच मिलण हरि केरी ॥ गुर क्रिपालि क्रिपा किंचत गुरि कीनी हरि मिलिआ आइ प्रभु मेरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो हमरै मन चिति है सुआमी सा बिधि तुम हरि जानहु मेरी ॥ अनदिनु नामु जपी सुखु पाई नित जीवा आस हरि तेरी ॥ २ ॥ गुरि सतिगुरि दातै पंथु बताइआ हरि मिलिआ आइ प्रभु मेरी ॥ अनदिनु अनदु भइआ वडभागी सभ आस पुजी जन केरी ॥ ३ ॥ जगंनाथ जगदीसुर करते सभ वसगति है हरि केरी ॥ जन नानक सरणागति आए हरि राखहु पैज जन केरी ॥ ४ ॥ ६ ॥ २० ॥ ५८ ॥

हे मेरे ईश्वर ! मेरे प्राण तेरे ही वश में हैं। मेरी आत्मा एवं शरीर सभी तेरे ही हैं। हे प्रभु ! मुझ पर दया करके अपने दर्शन दीजिए, क्योंकि मेरे मन एवं तन में तेरे दर्शनों की तीव्र लालसा है॥ १॥ हे मेरे राम ! मेरे मन एवं तन में प्रभु—मिलन की तीव्र लालसा है। हे प्राणी ! जब कृपा के घर गुरु ने मुझ पर थोड़ी—सी कृपा की, तो मेरा प्रभु—परमेश्वर आकर मुझे मिल गया॥ १॥ रहाउ॥

हे प्रभु—परमेश्वर ! जो कुछ भी मेरे मन एवं चित्त में है, मेरी उस अवस्था को तुम जानते हो। हे प्रभु ! रात—दिन मैं तेरे नाम का जाप करता और सुख पाता हूँ। मैं सदा ही तेरी आशा में जीता हूँ॥ २॥ जब दाता सतिगुरु ने मुझे सन्मार्ग दिखाया तो हरि—प्रभु आकर मुझसे प्रत्यक्ष आ मिला। तकदीर से मेरे हृदय में रात—दिन आनंद बना रहता है। प्रभु ने मुझ सेवक की अभिलाषा पूरी कर दी है॥ ३॥ हे जगन्नाथ ! हे जगदीश्वर ! हे कर्त्ता—प्रभु ! सारी जगत् क्रीड़ा तेरे वश में है। हे प्रभु ! नानक तेरी शरणागत आया है, अपने सेवक की लाज—प्रतिष्ठा रखो॥ ४॥ ६॥ २०॥ ५८॥

गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ इहु मनूआ खिनु न टिकै बहु रंगी दह दह दिसि चलि चलि हाढे ॥ गुरु पूरा पाइआ वडभागी हरि मंत्रु दीआ मनु ठाढे ॥ १ ॥ राम हम सतिगुर लाले कांढे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हमरै मसतकि दागु दगाना हम करज गुरू बहु साढे ॥ परउपकारु पुंनु बहु कीआ भउ दुतरु तारि

पराढे ॥ २ ॥ जिन कउ प्रीति रिदै हरि नाही तिन कूरे गाढन गाढे ॥ जिउ पाणी कागदु बिनसि जात है तिउ मनमुख गरभि गलाढे ॥ ३ ॥ हम जानिआ कछू न जानह आगै जिउ हरि राखै तिउ ठाढे ॥ हम भूल चूक गुर किरपा धारहु जन नानक कुतरे काढे ॥ ४ ॥ ७ ॥ २१ ॥ ५६ ॥

यह चंचल मन माया के अनेक रंग–तमाशों में फँसकर क्षण–मात्र भी नहीं टिकता। यह दसों–दिशाओं में दौड़–दौड़कर भटकता रहता है। लेकिन बड़े सौभाग्य से मुझे पूर्ण गुरु मिल गए हैं, जिन्होंने मुझे हरि नाम रूपी मंत्र प्रदान किया है, जिससे यह अस्थिर मन शांत हो गया है॥ १॥ हे मेरे राम! मुझे सतिगुरु का गुलाम कहा जाता है॥ १॥ रहाउ॥

मेरे मस्तक पर सतिगुरु के गुलाम होने का चिन्ह लगा हुआ है। गुरु के उपकार का मैंने बहुत अधिक कर्जा अदा करना है अर्थात् मैं गुरु कर्जा उतार नहीं सकता इसलिए गुरु का गुलाम बन गया। गुरु ने मुझ पर बहुत बड़ा परोपकार एवं उदार किया है और मुझे इस कठिन एवं भयानक संसार–सागर से पार कर दिया है॥ २॥ जिन लोगों के ह्रदय में प्रभु का प्यार नहीं होता, वे झूठी योजनाएँ ही बनाते रहते हैं। जैसे जल में कागज का नाश हो जाता है, वैसे ही स्वेच्छाचारी जीव अहंकार में योनियों के चक्र में फँसकर नष्ट हो जाता है॥ ३॥ मुझे भूतकाल का कुछ पता नहीं, न ही मैं भविष्यकाल बारे कुछ जानता हूँ, जैसे परमेश्वर हमें रखता है, उसी अवस्था में हम रहते हैं। हे गुरु जी! हम बहुत भूल–चूक करते रहते हैं अतः हम पर कृपा करो। हे नानक! मुझे गुरु के घर का कुत्ता कहा जाता है॥ ४॥ ७॥ २१॥ ५६॥

गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ कामि करोधि नगरु बहु भरिआ मिलि साधू खंडल खंडा हे ॥ पूरबि लिखत लिखे गुरु पाइआ मनि हरि लिव मंडल मंडा हे ॥ १ ॥ करि साधू अंजुली पुंनु वडा हे ॥ करि डंडउत पुनु वडा हे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साकत हरि रस सादु न जानिआ तिन अंतरि हउमै कंडा हे ॥ जिउ जिउ चलहि चुभै दुखु पावहि जमकालु सहहि सिरि डंडा हे ॥ २ ॥ हरि जन हरि हरि नामि समाणे दुखु जनम मरण भव खंडा हे ॥ अबिनासी पुरखु पाइआ परमेसरु बहु सोभ खंड ब्रहमंडा हे ॥ ३ ॥ हम गरीब मसकीन प्रभ तेरे हरि राखु राखु वड वडा हे ॥ जन नानक नामु अधारु टेक है हरि नामे ही सुखु मंडा हे ॥ ४ ॥ ८ ॥ २२ ॥ ६० ॥

यह मानव शरीर रूपी–नगर काम–क्रोध जैसे विकारों से पूरी तरह भरा हुआ है। लेकिन सन्तजनों के मिलाप से तुमने इन्हें क्षीण कर दिया है। जिस मनुष्य ने पूर्व लिखित कर्मों के माध्यम से गुरु को प्राप्त किया है, उसका चंचल मन ही भगवान में लीन हुआ है॥ १॥ संतजनों को हाथ जोड़कर नमन करना बड़ा पुण्य कर्म है। उन्हें दण्डवत् प्रणाम करना भी महान् पुण्य कर्म है॥ १॥ रहाउ॥

पतित मनुष्यों (माया में लिप्त अथवा जो भगवान से विस्मृत) ने हरि–रस का आनंद प्राप्त नहीं किया, क्योंकि उनके अन्तर्मन में अहंकार रूपी कांटा होता है। जैसे–जैसे वह अहंकारवश जीवन मार्ग पर चलते हैं, वह अहं का कांटा उन्हें चुभ–चुभकर कष्ट देता रहता है और अन्तिम समय में यमों द्वारा दी जाने वाली यातना को सहन करते हैं॥ २॥ प्रभु के भक्त प्रभु–परमेश्वर के नाम सिमरन में लीन रहते हैं और वे आवागमन के चक्र से मुक्ति प्राप्त करके संसार के दुखों से छूट जाते हैं। फिर वे अविनाशी सर्वव्यापक प्रभु को पा लेते हैं और वे खण्डों–ब्रह्मण्डों में शोभा पाते हैं॥ ३॥ हे प्रभु! हम निर्धन व निराश्रय तुम्हारे ही अधीन हैं तुम सर्वोच्चत्तम शक्ति हो, इसलिए हमें इन विकारों से बचा लो। हे नानक! जीव को तुम्हारे ही नाम का आधार है, हरि–नाम में लिप्त होने से ही आत्मिक सुखों की उपलब्धि होती है॥ ४॥ ८॥ २२॥ ६०॥

गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ इसु गड़ महि हरि राम राइ है किछु सादु न पावै धीठा ॥ हरि दीन दइआलि अनुग्रहु कीआ हरि गुर सबदी चखि डीठा ॥ १ ॥ राम हरि कीरतनु गुर लिव मीठा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि अगमु अगोचरु पारब्रहमु है मिलि सतिगुर लागि बसीठा ॥ जिन गुर बचन सुखाने हीअरै तिन आगै आणि परीठा ॥ २ ॥ मनमुख हीअरा अति कठोरु है तिन अंतरि कार करीठा ॥ बिसीअर कउ बहु दूधु पीआईऐ बिखु निकसै फोलि फुलीठा ॥ ३ ॥ हरि प्रभ आनि मिलावहु गुरु साधू घसि गरुड़ु सबदु मुखि लीठा ॥ जन नानक गुर के लाले गोले लगि संगति करूआ मीठा ॥ ४ ॥ ६ ॥ २३ ॥ ६१ ॥

मानव—शरीर रूपी दुर्ग में जगत् के बादशाह हरि—परमेश्वर का निवास है परन्तु निर्लज्ज प्राणी उसके स्वाद को प्राप्त नहीं करता। जब दीनदयालु ईश्वर ने मुझ पर करुणा—दृष्टि की तो मैंने गुरु के शब्द द्वारा हरि—रस के स्वाद को चख कर देख लिया॥ १॥ हे मेरे राम! गुरु में सुरति धारण करने से परमेश्वर का यश गायन करना मुझे मीठा लगने लग गया॥ १॥ रहाउ॥ हरि—परमेश्वर अगम्य, अगोचर एवं पारब्रह्म है। सतिगुरु—मध्यस्थ के साथ मिलने से वह मिलता है। जिनके हृदय को गुरु का वचन सुखदायक लगता है, गुरु उनके समक्ष नाम रूपी अमृत रस सेवन करने के लिए परोस देता है॥ २॥ स्वेच्छाचारी का हृदय बड़ा निष्ठुर है, उनके भीतर माया के विकारों की कालिख ही कालिख होती है। यदि हम साँप को कितना भी दूध पिलाएँ, जाँच पड़ताल करने पर उसके भीतर से विष ही निकलेगा॥ ३॥ हे मेरे हरि—प्रभु! मुझे गुरदेव से मिला दीजिए चूंकि जो साँप का विष नाश करने के लिए मैं अपने मुख से गुरुवाणी को नीलकण्ठ के मन्त्र के तौर पर पीकर सेवन करूँ (गायन करूँ)। हे नानक! मैं गुरु का सेवक एवं गुलाम हूँ। उनकी सत्संग से मिलकर कड़वा विष भी मीठा अमृत बन जाता है॥ ४॥ ६॥ २३॥ ६१॥

गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ हरि हरि अरथि सरीरु हम बेचिआ पूरे गुर कै आगे ॥ सतिगुर दातै नामु दिड़ाइआ मुखि मसतकि भाग सभागे ॥ १ ॥ राम गुरमति हरि लिव लागे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घटि घटि रमईआ रमत राम राइ गुर सबदि गुरू लिव लागे ॥ हउ मनु तनु देवउ काटि गुरू कउ मेरा भ्रमु भउ गुर बचनी भागे ॥ २ ॥ अंधिआरै दीपक आनि जलाए गुर गिआनि गुरू लिव लागे ॥ अगिआनु अंधेरा बिनसि बिनासिओ घरि वसतु लही मन जागे ॥ ३ ॥ साकत बधिक माइआधारी तिन जम जोहनि लागे ॥ उन सतिगुर आगै सीसु न बेचिआ ओइ आवहि जाहि अभागे ॥ ४ ॥ हमरा बिनउ सुनहु प्रभ ठाकुर हम सरणि प्रभू हरि मागे ॥ जन नानक की लज पाति गुरू है सिरु बेचिओ सतिगुर आगे ॥ ५ ॥ १० ॥ २४ ॥ ६२ ॥

हरि—परमेश्वर का नाम लेने की खातिर मैंने अपना शरीर पूर्ण गुरु के समक्ष बेच दिया है। दाता सतिगुरु ने मेरे हृदय में ईश्वर का नाम सुदृढ़ कर दिया है। मेरे चेहरे एवं मस्तक पर भाग्य जाग गए हैं, मैं बड़ा सौभाग्यशाली हूँ॥ १॥ हे मेरे राम! गुरु की मति से मेरी सुरति भगवान में लग गई है॥ १॥ रहाउ॥ राम प्रत्येक हृदय में विद्यमान है। गुरु के शब्द एवं गुरु द्वारा प्रभु में वृत्ति लगती है। अपने मन एवं तन के टुकड़े—टुकड़े करके मैं उनको गुरु के समक्ष अर्पण करता हूँ। गुरु के वचन द्वारा मेरा भ्रम एवं भय निवृत्त हो गए॥ २॥ जब अज्ञानता के अन्धेरे में गुरु ने अपना ज्ञान—रूपी दीपक प्रज्वलित कर दिया तो मेरी वृत्ति परमात्मा में लग गई। मेरे हृदय में से अज्ञानता का अँधेरा नाश हो गया और माया के मोह में निद्रामग्न मेरा मन जाग गया। मेरे मन को हृदय—घर में ही नाम रूपी वस्तु मिल गई है॥ ३॥ भगवान से विमुख, हिंसक, पतित एवं मायाधारी जीवों को ही यमदूत मृत्यु के बन्धन में बांधता

है। जिन्होंने सतिगुरु के समक्ष अपना सिर नहीं बेचा, वे भाग्यहीन आवागमन (जीवन–मृत्यु) के चक्र में पड़े रहते हैं॥ ४॥ हे प्रभु–ठाकुर! मेरी एक विनती सुनो। मैं प्रभु की शरणागत हूँ और हरि नाम की याचना करता हूँ। गुरु ही नानक की लाज–प्रतिष्ठा रखने वाला है। उसने अपना सिर सतिगुरु के समक्ष बेच दिया है॥ ५॥ १०॥ २४॥ ६२॥

गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ हम अहंकारी अहंकार अगिआन मति गुरि मिलिऐ आपु गवाइआ ॥ हउमै रोगु गइआ सुखु पाइआ धनु धंनु गुरू हरि राइआ ॥ १ ॥ राम गुर कै बचनि हरि पाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरै हीअरै प्रीति राम राइ की गुरि मारगु पंथु बताइआ ॥ मेरा जीउ पिंडु सभु सतिगुर आगै जिनि विछुड़िआ हरि गलि लाइआ ॥ २ ॥ मेरै अंतरि प्रीति लगी देखन कउ गुरि हिरदे नालि दिखाइआ ॥ सहज अनंदु भइआ मनि मोरै गुर आगै आपु वेचाइआ ॥ ३ ॥ हम अपराध पाप बहु कीने करि दुसटी चोर चुराइआ ॥ अब नानक सरणागति आए हरि राखहु लाज हरि भाइआ ॥ ४ ॥ ११ ॥ २५ ॥ ६३ ॥

हम (प्राणी) बड़े अहंकारी हैं, हमारी बुद्धि अहंकार और अज्ञानता वाली बनी रहती है। लेकिन गुरु से मिलकर हमारा अहंकार नष्ट हो गया है। हमारे हृदय में से अहंकार का रोग निवृत्त हो गया है और हमें सुख उपलब्ध हो गया है। हरि–परमेश्वर का रूप गुरु धन्य–धन्य हैं॥ १॥ हे मेरे राम! गुरु के वचन द्वारा मैंने प्रभु को पा लिया है॥ १॥ रहाउ॥ मेरे हृदय में राम का प्रेम है। गुरु ने मुझे प्रभु–मिलन का मार्ग दिखा दिया है। मेरी आत्मा एवं देहि सब कुछ सतिगुरु के समक्ष समर्पित हैं, जिन्होंने मुझ बिछुड़े को परमात्मा के आलिंगन लगा दिया है॥ २॥ मेरे अन्तर्मन में प्रभु के दर्शनों की प्रीति उत्पन्न हुई है। गुरु ने मुझे मेरे हृदय में ही मेरे साथ विद्यमान प्रभु को दिखा दिया है। मेरे मन में सहज आनंद उत्पन्न हो गया है। मैंने खुद को गुरु के समक्ष बेच दिया है॥ ३॥ मैंने बहुत अपराध एवं पाप किए हैं। जैसे कोई चोर अपनी की हुई चोरी को छिपाता है, वैसे ही मैंने बुराइयां करके उन्हें छिपाया है। हे नानक! अब मैं हरि की शरण में आया हूँ। हे हरि! जैसे तुझे उपयुक्त लगे, वैसे ही मेरी लाज रखो॥ ४॥ ११॥ २५॥ ६३॥

गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ गुरमति बाजै सबदु अनाहदु गुरमति मनूआ गावै ॥ वडभागी गुर दरसनु पाइआ धनु धंनु गुरू लिव लावै ॥ १ ॥ गुरमुखि हरि लिव लावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हमरा ठाकुरु सतिगुरु पूरा मनु गुर की कार कमावै ॥ हम मलि मलि धोवह पाव गुरू के जो हरि हरि कथा सुनावै ॥ २ ॥ हिरदै गुरमति राम रसाइणु जिहवा हरि गुण गावै ॥ मन रसकि रसकि हरि रसि आघाने फिरि बहुरि न भूख लगावै ॥ ३ ॥ कोई करै उपाव अनेक बहुतेरे बिनु किरपा नामु न पावै ॥ जन नानक कउ हरि किरपा धारी मति गुरमति नामु द्रिड़ावै ॥ ४ ॥ १२ ॥ २६ ॥ ६४ ॥

गुरु के उपदेश से मेरे अन्तर में अनहद शब्द गूंजने लग गया है और गुरु के उपदेश से ही मेरा मन परमात्मा का यश गायन करता है। बड़े सौभाग्य से मुझे गुरु जी के दर्शन नसीब हुए हैं। वह गुरु धन्य–धन्य है, जिसने मेरी वृत्ति ईश्वर से लगा दी है॥ १॥ गुरु के माध्यम से ही ईश्वर में वृत्ति लगती है॥ १॥ रहाउ॥ पूर्ण सतिगुरु ही मेरा ठाकुर है और मेरा मन गुरु की ही सेवा करता है। मैं गुरु के चरण मल–मल कर धोता हूँ, जो मुझे हरि की हरि कथा सुनाता है॥ २॥ गुरु के उपदेश से रसों का घर प्रभु मेरे हृदय में आकर बस गया है। मेरी जिह्वा ईश्वर का यश गायन करती रहती है। मेरा मन प्रेम में भीगकर ईश्वर के अमृत से तृप्त हो गया है और तदुपरांत इसको दोबारा भूख नहीं

लगती॥ ३॥ चाहे कोई अनेक उपाय करे किन्तु प्रभु की कृपा बिना उसको नाम प्राप्त नहीं होता। नानक पर हरि–परमेश्वर ने अपनी कृपा धारण की है, गुरु के उपदेश से उसकी बुद्धि में हरि का नाम बस गया है॥ ४॥ १२॥ २६॥ ६४॥

रागु गउड़ी माझ महला ४ ॥ गुरमुखि जिंदू जपि नामु करंमा ॥ मति माता मति जीउ नामु मुखि रामा ॥ संतोखु पिता करि गुरु पुरखु अजनमा ॥ वडभागी मिलु रामा ॥ १ ॥ गुरु जोगी पुरखु मिलिआ रंगु माणी जीउ ॥ गुरु हरि रंगि रतड़ा सदा निरबाणी जीउ ॥ वडभागी मिलु सुघड़ सुजाणी जीउ ॥ मेरा मनु तनु हरि रंगि भिंना ॥ २ ॥ आवहु संतहु मिलि नामु जपाहा ॥ विचि संगति नामु सदा लै लाहा जीउ ॥ करि सेवा संता अंम्रितु मुखि पाहा जीउ ॥ मिलु पूरबि लिखिअड़े धुरि करमा ॥ ३ ॥ सावणि वरसु अंम्रिति जगु छाइआ जीउ ॥ मनु मोरु कुहुकिअड़ा सबदु मुखि पाइआ ॥ हरि अंम्रितु वुठड़ा मिलिआ हरि राइआ जीउ ॥ जन नानक प्रेमि रतंना ॥ ४ ॥ १ ॥ २७ ॥ ६५ ॥

हे मेरे प्राण! गुरु के सान्निध्य में रहकर परमात्मा के नाम का जाप करो। हे मेरे प्राण! उस बुद्धि को अपनी माता बना, बुद्धि को ही अपना जीवन–आधार बना और मुँह में राम का नाम जप। संतोष को अपना पिता और गुरु को अपना अजन्मा सत्पुरुष बना। हे सौभाग्यशाली! राम से मिल॥ १॥ मैं, योगी गुरु परमेश्वर से मिल गया हूँ और उसके रंग में आनंद प्राप्त करता हूँ। गुरु परमेश्वर के प्रेम में मग्न रहता है और सदैव पावन–पवित्र है। सौभाग्य से मैं चतुर एवं सर्वज्ञ प्रभु से मिल गया हूँ। मेरा मन एवं तन परमेश्वर के रंग में मग्न है॥ २॥ हे संतजनों! आओ हम मिलकर प्रभु के नाम का जाप करें। हम सत्संगति में मिलकर सदैव नाम रूपी लाभ प्राप्त करें। संतों की सेवा करके हम अपने मुख में नाम रूपी अमृत डालें। प्रारम्भ से किस्मत में पूर्व कर्मों के लिखे लेखों अनुसार प्रभु से जा मिलो॥ ३॥ श्रावण के महीने में नाम अमृत वाला बादल जगत् पर छाया हुआ है। नाम अमृत को चखकर मेरे मन का मोर प्रसन्न होकर चहचहाने लग गया। जब हरि–नाम रूपी अमृत मेरे हृदय में आ बसा तो मुझे प्रभु–परमेश्वर मिल गया। हे नानक! मैं प्रभु की प्रीति में मग्न हो गया हूँ॥ ४॥ १॥ २७॥ ६५॥

गउड़ी माझ महला ४ ॥ आउ सखी गुण कामण करीहा जीउ ॥ मिलि संत जना रंगु माणिह रलीआ जीउ ॥ गुर दीपकु गिआनु सदा मनि बलीआ जीउ ॥ हरि तुठै ढुलि ढुलि मिलीआ जीउ ॥ १ ॥ मेरै मनि तनि प्रेमु लगा हरि ढोले जीउ ॥ मै मेले मित्रु सतिगुरु वेचोले जीउ ॥ मनु देवां संता मेरा प्रभु मेले जीउ ॥ हरि विटड़िअहु सदा घोले जीउ ॥ २ ॥ वसु मेरे पिआरिआ वसु मेरे गोविदा हरि करि किरपा मनि वसु जीउ ॥ मनि चिंदिअड़ा फलु पाइआ मेरे गोविंदा गुरु पूरा वेखि विगसु जीउ ॥ हरि नामु मिलिआ सोहागणी मेरे गोविंदा मनि अनदिनु अनदु रहसु जीउ ॥ हरि पाइअड़ा वडभागीई मेरे गोविंदा नित लै लाहा मनि हसु जीउ ॥ ३ ॥ हरि आपि उपाए हरि आपे वेखै हरि आपे कारै लाइआ जीउ ॥ इकि खावहि बखस तोटि न आवै इकना फका पाइआ जीउ ॥ इकि राजे तखति बहहि नित सुखीए इकना भिख मंगाइआ जीउ ॥ सभु इको सबदु वरतदा मेरे गोविदा जन नानक नामु धिआइआ जीउ ॥ ४ ॥ २ ॥ २८ ॥ ६६ ॥

हे मेरी सत्संगी सखियों! आओ, हम प्रभु को वश में करने के लिए शुभ गुणों के जादू–टोने तैयार करें और संतजनों से मिलकर हम प्रभु–प्रेम का सुख एवं आनंद भोगें। मेरे हृदय में गुरु के ज्ञान का दीपक सदैव प्रज्वलित रहता है। परम प्रसन्न एवं दया से कोमल होकर प्रभु मुझे मिल गया है॥ १॥ मेरे मन एवं तन में प्रियतम प्रभु का प्रेम लगा हुआ है। मेरी यही कामना है कि मध्यस्थ सतिगुरु मुझे

मेरे प्रिय मित्र प्रभु से मिला दे। मैं अपना मन उन संतों को अर्पण कर दूँगा जो मुझे मेरे प्रभु से मिला देंगे। प्रभु पर मैं सदैव कुर्बान जाता हूँ॥ २॥ हे मेरे प्रिय गोविन्द ! मेरे मन में आकर निवास करो। हे प्रभु ! कृपा करके मेरे मन में आकर निवास करो। हे मेरे गोविन्द ! मुझे मनोवांछित फल मिल गया है। पूर्ण गुरु के दर्शन करके मैं अत्यंत प्रसन्न हो गई हूँ। हे मेरे गोविन्द ! मुझे गुरु से हरि–नाम मिल गया है और मैं सुहागिन बन गई हूँ। अब मेरे मन में दिन–रात प्रसन्नता एवं आनंद बना रहता है। हे मेरे गोविन्द ! बड़े भाग्य से मैंने प्रभु को पाया है और मैं नित्य ही नाम रूपी लाभ प्राप्त करके अपने मन में मुस्कराती रहती हूँ॥ ३॥ भगवान ने स्वयं ही जीवों को उत्पन्न किया है और वह स्वयं ही उनकी देखभाल करता है। भगवान ने स्वयं ही जीवों को कामकाज में लगाया है। कई प्रभु की नियामतें सेवन करते हैं, जिनमें कभी कमी नहीं आती और कइयों को केवल मुट्ठी भर दानों की मिलती है। भगवान ने कई जीवों को राजा बनाया है, वे राजसिंघासन पर विराजमान होते हैं और सदा ही सुखी रहते हैं और भगवान कई जीवों को भिखारी बनाकर उनसे दर–दर से भीख मंगवाता है। हे मेरे गोविन्द ! सर्वत्र एक तेरा ही नाम विद्यमान है। हे नानक ! प्रभु का सेवक प्रभु नाम का ही ध्यान करता है॥ ४॥ २॥ २८॥ ६६॥

गउड़ी माझ महला ४ ॥ मन माही मन माही मेरे गोविंदा हरि रंगि रता मन माही जीउ ॥ हरि रंगु नालि न लखीऐ मेरे गोविदा गुरु पूरा अलखु लखाही जीउ ॥ हरि हरि नामु परगासिआ मेरे गोविंदा सभ दालद दुख लहि जाही जीउ ॥ हरि पदु ऊतमु पाइआ मेरे गोविंदा वडभागी नामि समाही जीउ ॥ १ ॥ नैणी मेरे पिआरिआ नैणी मेरे गोविदा किनै हरि प्रभु डिठड़ा नैणी जीउ ॥ मेरा मनु तनु बहुतु बैरागिआ मेरे गोविंदा हरि बाझहु धन कुमलैणी जीउ ॥ संत जना मिलि पाइआ मेरे गोविदा मेरा हरि प्रभु सजणु सैणी जीउ ॥ हरि आइ मिलिआ जगजीवनु मेरे गोविंदा मै सुखि विहाणी रैणी जीउ ॥ २ ॥ मै मेलहु संत मेरा हरि प्रभु सजणु मै मनि तनि भुख लगाईआ जीउ ॥ हउ रहि न सकउ बिनु देखे मेरे प्रीतम मै अंतरि बिरहु हरि लाईआ जीउ ॥ हरि राइआ मेरा सजणु पिआरा गुरु मेले मेरा मनु जीवाईआ जीउ ॥ मेरै मनि तनि आसा पूरीआ मेरे गोविंदा हरि मिलिआ मनि वाधाईआ जीउ ॥ ३ ॥ वारी मेरे गोविंदा वारी मेरे पिआरिआ हउ तुधु विटड़िअहु सद वारी जीउ ॥ मेरै मनि तनि प्रेमु पिरंम का मेरे गोविदा हरि पूंजी राखु हमारी जीउ ॥ सतिगुरु विसटु मेलि मेरे गोविंदा हरि मेले करि रैबारी जीउ ॥ हरि नामु दइआ करि पाइआ मेरे गोविंदा जन नानकु सरणि तुमारी जीउ ॥ ४ ॥ ३ ॥ २९ ॥ ६७ ॥

हे मेरे गोविन्द ! मैं अपने मन में ही हरि–रंग में मग्न हो गया हूँ। हरि रंग प्रत्येक जीव के भीतर उसके साथ ही रहता है परन्तु उसे देखा नहीं जा सकता। हे मेरे गोविन्द ! पूर्ण गुरु ने मुझे अदृश्य प्रभु के दर्शन करा दिए हैं। हे मेरे गोविन्द ! जब गुरु ने मेरे हृदय में हरि–परमेश्वर के नाम का प्रकाश कर दिया तो मेरी दरिद्रता के तमाम दुख निवृत्त हो गए। हे मेरे गोविन्द ! मैंने हरि–मिलन की उच्च पदवी प्राप्त कर ली है और बड़े भाग्य से मैं हरि के नाम में लीन हो गया हूँ॥ १॥ हे मेरे प्रिय गोविन्द ! हरि–प्रभु को किसी विरले पुरुष ने ही अपने नेत्रों से देखा है। हे मेरे गोविन्द ! मेरा मन एवं तन तेरे विरह में वैराग्यवान हो गया है। मालिक–प्रभु के बिना मैं ज़ीव–स्त्री बहुत उदास हो गई हूँ। हे मेरे गोविन्द ! संतजनों से मिलकर मैंने अपने मित्र एवं सज्जन हरि–प्रभु को पा लिया है। हे मेरे गोविन्द ! जगजीवन हरि आकर मुझे मिल गया है और अब मेरी जीवन रूपी रात्रि सुख से बीत रही है॥ २॥ हे संतजनो ! मुझे मेरे सज्जन हरि–प्रभु से मिलाओ। मेरे मन एवं तन को उसके मिलन की भूख लगी हुई है। मैं अपने प्रियतम के दर्शनों के बिना जीवित नहीं रह सकती। मेरे मन में प्रभु की जुदाई की

पीड़ा विद्यमान है। सम्राट प्रभु मेरा सर्वप्रिय मित्र है। गुरदेव ने मुझे उनसे मिला दिया है और मेरा मन पुनः जीवित होकर ईश्वर–परायण हो गया है। मेरे मन एवं तन की आशाएँ पूर्ण हो गई हैं। हे मेरे गोविन्द ! ईश्वर को मिलने से मेरे मन को शुभकामनाएँ मिल रही हैं॥ ३॥ हे मेरे प्रिय गोविन्द ! मैं तुझ पर तन एवं मन से कुर्बान हूँ। हे मेरे गोविन्द ! मेरे मन एवं तन में मेरे प्रियतम–पति की प्रीति है। हे प्रभु ! मेरी प्रेमी रूपी पूँजी की रक्षा कीजिए। हे मेरे गोविन्द ! मुझे मेरे मध्यस्थ सतिगुरु से मिला दो, जो अपने मार्गदर्शन से मुझे परमेश्वर से मिला देगा। हे मेरे गोविन्द ! तेरी दया से मैंने हरि का नाम प्राप्त किया है। नानक ने तेरी ही शरण ली है॥ ४॥ ३॥ २६॥ ६७॥

गउड़ी माझ महला ४ ॥ चोजी मेरे गोविंदा चोजी मेरे पिआरिआ हरि प्रभु मेरा चोजी जीउ ॥ हरि आपे कान्हु उपाइदा मेरे गोविदा हरि आपे गोपी खोजी जीउ ॥ हरि आपे सभ घट भोगदा मेरे गोविंदा आपे रसीआ भोगी जीउ ॥ हरि सुजाणु न भुलई मेरे गोविंदा आपे सतिगुरु जोगी जीउ ॥ १ ॥ आपे जगतु उपाइदा मेरे गोविदा हरि आपि खेलै बहु रंगी जीउ ॥ इकना भोग भोगाइदा मेरे गोविंदा इकि नगन फिरहि नंग नंगी जीउ ॥ आपे जगतु उपाइदा मेरे गोविदा हरि दानु देवै सभ मंगी जीउ ॥ भगता नामु आधारु है मेरे गोविंदा हरि कथा मंगहि हरि चंगी जीउ ॥ २ ॥ हरि आपे भगति कराइदा मेरे गोविंदा हरि भगता लोच मनि पूरी जीउ ॥ आपे जलि थलि वरतदा मेरे गोविदा रवि रहिआ नही दूरी जीउ ॥ हरि अंतरि बाहरि आपि है मेरे गोविदा हरि आपि रहिआ भरपूरी जीउ ॥ हरि आतम रामु पसारिआ मेरे गोविंदा हरि वेखै आपि हदूरी जीउ ॥ ३ ॥ हरि अंतरि वाजा पउणु है मेरे गोविंदा हरि आपि वजाए तिउ वाजै जीउ ॥ हरि अंतरि नामु निधानु है मेरे गोविंदा गुर सबदी हरि प्रभु गाजै जीउ ॥ आपे सरणि पवाइदा मेरे गोविंदा हरि भगत जना राखु लाजै जीउ ॥ वडभागी मिलु संगती मेरे गोविंदा जन नानक नाम सिधि काजै जीउ ॥ ४ ॥ ४ ॥ ३० ॥ ६८ ॥

हे मेरे प्रिय गोविन्द ! तू बड़ा विनोदी है, मेरा प्रभु–परमेश्वर विनोदी है। परमेश्वर ने स्वयं ही कृष्ण को उत्पन्न किया है। हरि स्वयं ही कृष्ण को खोजने वाली गोपी है। हे मेरे गोविन्द ! हरि स्वयं ही समस्त शरीरों में पदार्थों को भोगता है और स्वयं ही रस भोगने वाला भोगी है। हे मेरे गोविन्द ! ईश्वर चतुर एवं अचूक है। वह स्वयं ही भोगों से निर्लिप्त सतिगुरु है॥ १॥ हे मेरे गोविन्द ! ईश्वर स्वयं सृष्टि की रचना करता है और स्वयं ही अनेकों विधियों से खेलता है। हे मेरे गोविन्द ! कई प्राणियों को वह नियामतें प्रदान करता है, जिससे वे आनंद प्राप्त करते हैं और कई प्राणी नग्न होकर (जिनके तन पर वस्त्र नहीं) नंगे भटकते फिरते हैं। हे मेरे गोविन्द ! ईश्वर स्वयं सृष्टि की रचना करता है और माँगने वाले समस्त प्राणियों को दान प्रदान करता है, हे मेरे गोविन्द ! भक्तों को प्रभु–नाम का ही आधार है। और वे श्रेष्ठ हरि कथा की माँग करते रहते हैं॥ २॥ हे मेरे गोविन्द ! ईश्वर स्वयं ही भक्तों से अपनी भक्ति करवाता है और अपने भक्तों की मनोकामनाएँ पूरी करता है। हे मेरे गोविन्द ! हरि जल–थल सर्वत्र विद्यमान है। वह सर्वव्यापक है और कहीं दूर नहीं रहता। हे मेरे गोविन्द ! भीतर एवं बाहर प्रभु स्वयं ही विद्यमान है। ईश्वर स्वयं ही समस्त स्थानों को परिपूर्ण कर रहा है। हे मेरे गोविन्द ! राम स्वयं ही इस जगत्–प्रसार को प्रसारित कर रहा है। प्रभु स्वयं निकट से सभी को देखता है॥ ३॥ हे मेरे गोविन्द ! प्राणियों के भीतर पवन का नाद (बज रहा) है। जैसे ईश्वर स्वयं इसको बजाता है, वैसे ही यह गूंजता है। हे मेरे गोविन्द ! हम जीवों के अन्तर्मन में नाम रूपी खजाना है। गुरु के उपदेश से हरि–प्रभु प्रकट हो जाता है। हे मेरे गोविन्द ! ईश्वर स्वयं ही मनुष्य को अपनी शरणागत में प्रवेश करवाता है और भक्तजनों की लाज रखता है। हे मेरे गोविन्द ! कोई सौभाग्यशाली मनुष्य ही सत्संग में जुड़ता है। हे नानक ! प्रभु के नाम से उसके जीवन मनोरथ सफल हो जाते हैं॥४॥ ४॥ ३०॥ ६८॥

गउड़ी माझ महला ४ ॥ मै हरि नामै हरि बिरहु लगाई जीउ ॥ मेरा हरि प्रभु मितु मिलै सुखु पाई जीउ ॥ हरि प्रभु देखि जीवा मेरी माई जीउ ॥ मेरा नामु सखा हरि भाई जीउ ॥ १ ॥ गुण गावहु संत जीउ मेरे हरि प्रभ केरे जीउ ॥ जपि गुरमुखि नामु जीउ भाग वडेरे जीउ ॥ हरि हरि नामु जीउ प्रान हरि मेरे जीउ ॥ फिरि बहुड़ि न भवजल फेरे जीउ ॥ २ ॥ किउ हरि प्रभ वेखा मेरै मनि तनि चाउ जीउ ॥ हरि मेलहु संत जीउ मनि लगा भाउ जीउ ॥ गुर सबदी पाईऐ हरि प्रीतम राउ जीउ ॥ वडभागी जपि नाउ जीउ ॥ ३ ॥ मेरै मनि तनि वडड़ी गोविंद प्रभ आसा जीउ ॥ हरि मेलहु संत जीउ गोविद प्रभ पासा जीउ ॥ सतिगुर मति नामु सदा परगासा जीउ ॥ जन नानक पूरिअड़ी मनि आसा जीउ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ३१ ॥ ६९ ॥

हे भद्रपुरुषो ! हरि ने मुझे हरि–नाम की प्रेम–प्यास लगा दी है। यदि मेरा मित्र हरि–प्रभु मुझे मिल जाए तो मुझे बड़ा सुख उपलब्ध होगा। हे मेरी माँ ! मैं हरि को देख कर ही जीवित रहती हूँ। हरि का नाम मेरा सखा एवं भाई है॥ १॥ हे पूज्य संतो ! मेरे हरि–प्रभु का यश–गायन करो। गुरु के माध्यम से प्रभु के नाम का जाप करने से भाग्य उदय हो जाते हैं। हरि–परमेश्वर का नाम और हरि मेरे प्राण एवं आत्मा हैं। नाम का जाप करने से मुझे दोबारा भवसागर पार नहीं करना पड़ेगा॥ २॥ मेरे मन एवं तन में बड़ा चाव बना हुआ है कि मैं कैसे हरि–प्रभु के दर्शन करूँ? हे संतजनो ! मुझे हरि से मिला दीजिए। मेरे मन में हरि के लिए प्रेम उत्पन्न हो गया है। गुरु के शब्द से प्रियतम प्रभु प्राप्त होता है। हे सौभाग्यशाली प्राणी ! तू प्रभु के नाम का जाप कर॥ ३॥ मेरे मन एवं तन में गोविन्द प्रभु के मिलन की बड़ी लालसा बनी हुई है। हे संतजनो ! मुझे गोविन्द प्रभु से मिला दीजिए, जो मेरे पास ही रहता है। सतिगुरु की शिक्षा द्वारा हमेशा जीव के हृदय में नाम का प्रकाश होता है। हे नानक ! मेरे मन की अभिलाषा पूरी हो गई है॥ ४॥ ५॥ ३१॥ ६९॥

गउड़ी माझ महला ४ ॥ मेरा बिरही नामु मिलै ता जीवा जीउ ॥ मन अंदरि अंम्रितु गुरमति हरि लीवा जीउ ॥ मनु हरि रंगि रतड़ा हरि रसु सदा पीवा जीउ ॥ हरि पाइअड़ा मनि जीवा जीउ ॥ १ ॥ मेरै मनि तनि प्रेमु लगा हरि बाणु जीउ ॥ मेरा प्रीतमु मित्रु हरि पुरखु सुजाणु जीउ ॥ गुरु मेले संत हरि सुघड़ु सुजाणु जीउ ॥ हउ नाम विटहु कुरबाणु जीउ ॥ २ ॥ हउ हरि हरि सजणु हरि मीतु दसाई जीउ ॥ हरि दसहु संतहु जी हरि खोजु पवाई जीउ ॥ सतिगुरु तुठड़ा दसे हरि पाई जीउ ॥ हरि नामे नामि समाई जीउ ॥ ३ ॥ मै वेदन प्रेमु हरि बिरहु लगाई जीउ ॥ गुर सरधा पूरि अंम्रितु मुखि पाई जीउ ॥ हरि होहु दइआलु हरि नामु धिआई जीउ ॥ जन नानक हरि रसु पाई जीउ ॥ ४ ॥ ६ ॥ २० ॥ १८ ॥ ३२ ॥ ७० ॥

यदि मुझसे जुदा हुआ प्रिय नाम मुझे मिल जाए तो ही मैं जीवित रह सकता हूँ। मेरे मन में नाम रूपी अमृत है। गुरु के उपदेश से मैं हरि से यह नाम लेता हूँ। मेरा मन हरि के प्रेम में अनुरक्त है। मैं सदैव हरि–रस का पान करता रहता हूँ। मैंने प्रभु को हृदय में पा लिया है, इसलिए मैं जीवित हूँ॥ १॥ हरि का प्रेम रूपी तीर मेरे मन एवं तन में लग गया है। मेरा प्रिय मित्र हरि पुरुष बहुत चतुर है। कोई संत गुरु ही जीव को चतुर एवं दक्ष हरि से मिला सकता है। मैं हरि के नाम पर बलिहारी जाता हूँ॥ २॥ मैं अपने सज्जन एवं मित्र हरि–परमेश्वर का पता पूछता हूँ। हे संतजनों ! हरि के बारे में बताओ, मैं हरि की खोज करता रहता हूँ। यदि सतिगुरु प्रसन्न होकर मुझे बता दें तो मैं हरि को पा सकता हूँ और हरि के नाम द्वारा हरि–नाम में ही समा सकता हूँ॥३॥ हरि ने मेरे अन्तर्मन में प्रेम

वेदना लगा दी है। गुरु ने मेरी श्रद्धा पूरी कर दी है और मेरे मुँह में नाम रूपी अमृत डाल दिया है। हे हरि ! मुझ पर दयालु हो जाओ चूंकि मैं हरि–नाम का ध्यान करता रहूँ। नानक ने तो हरि रस पा लिया है॥ ४॥ ६॥ २०॥ १८॥ ३२॥ ७०॥

महला ५ रागु गउड़ी गुआरेरी चउपदे १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

किन बिधि कुसलु होत मेरे भाई ॥ किउ पाईऐ हरि राम सहाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कुसलु न ग्रिहि मेरी सभ माइआ ॥ ऊचे मंदर सुंदर छाइआ ॥ झूठे लालचि जनमु गवाइआ ॥ १ ॥ हसती घोड़े देखि विगासा ॥ लसकर जोड़े नेब खवासा ॥ गलि जेवड़ी हउमै के फासा ॥ २ ॥ राजु कमावै दह दिस सारी ॥ माणै रंग भोग बहु नारी ॥ जिउ नरपति सुपनै भेखारी ॥ ३ ॥ एकु कुसलु मो कउ सतिगुरू बताइआ ॥ हरि जो किछु करे सु हरि किआ भगता भाइआ ॥ जन नानक हउमै मारि समाइआ ॥ ४ ॥ इन बिधि कुसल होत मेरे भाई ॥ इउ पाईऐ हरि राम सहाई ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥

हे मेरे भाई ! किस विधि से आत्मिक सुख उपलब्ध हो सकता है। उस सहायक हरि को कैसे पाया जा सकता है॥ १॥ रहाउ॥ यदि मनुष्य के घर में दुनिया की तमाम दौलत आ जाए और वह यह माने यह सारी दौलत मेरी ही है तो भी उसे सुख उपलब्ध नहीं होता। यदि मनुष्य के पास ऊँचे महल और छाया वाले सुन्दर बाग हो तो वह इनके झूठे लालच में फँसकर अपना जन्म व्यर्थ ही गंवा देता है॥ १॥ मनुष्य अपने हाथी और घोड़े देखकर बड़ा प्रसन्न होता है। वह भारी भरकम फौज इकट्ठी करता है और मंत्री तथा शाही नौकर रखता है लेकिन यह सबकुछ अहंकार की फाँसी रूपी रस्सी है जो उसके गले में पड़ जाती है॥ २॥ दसों दिशाओं में शासन करना, अनेक भोगों में आनन्द प्राप्त करना, अधिकतर नारियों से भोग–विलास करना एक भिखारी के स्वप्न में राजा बनने के समान है॥ ३॥ सतिगुरु ने मुझे सुखी होने की एक विधि बताई है। वह विधि यह है कि जो कुछ भी ईश्वर करता है, वह प्रभु के भक्तों को अच्छा लगता है। हे नानक ! गुरमुख अपने अहंकार को मिटा कर प्रभु में समा जाता है॥ ४॥ हे मेरे भाई ! इस विधि से सुखी हुआ जाता है और इस तरह सहायक प्रभु पाया जाता है॥ १॥ रहाउ दूजा॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ किउ भ्रमीऐ भ्रमु किस का होई ॥ जा जलि थलि महीअलि रविआ सोई ॥ गुरमुखि उबरे मनमुख पति खोई ॥ १ ॥ जिसु राखै आपि रामु दइआरा ॥ तिसु नही दूजा को पहुचनहारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभ महि वरतै एकु अनंता ॥ ता तूं सुखि सोउ होइ अचिंता ॥ ओहु सभु किछु जाणै जो वरतंता ॥ २ ॥ मनमुख मुए जिन दूजी पिआसा ॥ बहु जोनी भवहि धुरि किरति लिखिआसा ॥ जैसा बीजहि तैसा खासा ॥ ३ ॥ देखि दरसु मनि भइआ विगासा ॥ सभु नदरी आइआ ब्रहमु परगासा ॥ जन नानक की हरि पूरन आसा ॥ ४ ॥ २ ॥ ७१ ॥

हम क्यों भ्रम करें ? किस बात का भ्रम करना है ? जब वह प्रभु जल, थल, धरती और आकाश में विद्यमान हो रहा है। गुरमुख भवसागर से बच जाते हैं परन्तु स्वेच्छाचारी अपनी प्रतिष्ठा गंवा लेते हैं॥ १॥ उसकी समानता कोई दूसरा नहीं कर सकता, जिसकी दया का घर राम स्वयं रक्षा करता है॥ १॥ रहाउ॥ समस्त जीवों में एक अनन्त परमेश्वर व्यापक हो रहा है। इसलिए तू निश्चिंत होकर सुख से सो जा। संसार में जो कुछ हो रहा है प्रभु सब कुछ जानता है॥ २॥ जिन स्वेच्छाचारी जीवों को माया की तृष्णा लग जाती है, वे माया के मोह में फँसकर मरते हैं। वह अनेक योनियों में भटकते रहते हैं। उनकी किस्मत में प्रारम्भ से ही ऐसा कर्म–लेख लिखा होता है। जैसा वह बोते हैं (कर्म करते हैं), वैसा ही वह खाते हैं॥ ३॥ प्रभु के दर्शन प्राप्त करके मेरा हृदय प्रसन्न हो गया है। अब में सर्वत्र परमेश्वर का प्रकाश देखता हूँ। नानक की प्रभु ने अभिलाषा पूर्ण कर दी है॥ ४॥ २॥ ७१॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ कई जनम भए कीट पतंगा ॥ कई जनम गज मीन कुरंगा ॥ कई जनम पंखी सरप होइओ ॥ कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ ॥ १ ॥ मिलु जगदीस मिलन की बरीआ ॥ चिरंकाल इह देह संजरीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कई जनम सैल गिरि करिआ ॥ कई जनम गरभ हिरि खरिआ ॥ कई जनम साख करि उपाइआ ॥ लख चउरासीह जोनि भ्रमाइआ ॥ २ ॥ साधसंगि भइओ जनमु परापति ॥ करि सेवा भजु हरि हरि गुरमति ॥ तिआगि मानु झूठु अभिमानु ॥ जीवत मरहि दरगह परवानु ॥ ३ ॥ जो किछु होआ सु तुझ ते होगु ॥ अवरु न दूजा करणै जोगु ॥ ता मिलीऐ जा लैहि मिलाइ ॥ कहु नानक हरि हरि गुण गाइ ॥ ४ ॥ ३ ॥ ७२ ॥

हे प्राणी ! तू अनेकों जन्मों में कीड़ा और पतंगा बना हुआ था। अनेकों जन्मों में तू हाथी, मछली एवं मृग था। अनेक योनियों में तू पक्षी एवं सर्प बना था। अनेक योनियों में तू घोड़ा और बैल बनकर जोता गया था॥ १॥ अब तुझे मानव—जन्म में जगत् के ईश्वर को मिलने का समय मिला है, अतः तू उसे मिल। चिरकाल पश्चात् यह मानव—जन्म तुझे प्राप्त हुआ है॥ १॥ रहाउ॥ अनेक योनियों में तू चट्टान एवं पहाड़ों में उत्पन्न किया गया था। अनेक जन्मों में तेरी माँ का गर्भ ही गिर गया था। अनेक योनियों में तू वनस्पति बन कर उत्पन्न किया गया था। इस तरह तू चौरासी लाख योनियों में भटकाया गया था॥ २॥ अब तुझे अमूल्य मानव जीवन मिला है। अतः तू संतों की संगति किया कर। तू संतों की निष्काम सेवा किया कर और गुरु की मति द्वारा हरि—परमेश्वर का भजन कर। तू अपना अहंकार, झूठ एवं अभिमान त्याग दे। यदि तू अपने अहंकार को नष्ट कर देगा तो ही प्रभु के दरबार में स्वीकृत होगा॥ ३॥ हे परमात्मा ! जो कुछ भी हुआ है अथवा होगा, वह तुझ पर निर्भर है। दूसरा कोई उसको करने में समर्थ नहीं। हे प्रभु ! यदि तू मिलाए तो केवल तभी मनुष्य तुझे मिलता है। हे नानक ! हे प्राणी ! तू हरि—परमेश्वर का यश—गायन कर॥ ४॥ ३॥ ७२॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ करम भूमि महि बोअहु नामु ॥ पूरन होइ तुमारा कामु ॥ फल पावहि मिटै जम त्रास ॥ नित गावहि हरि हरि गुण जास ॥ १ ॥ हरि हरि नामु अंतरि उरि धारि ॥ सीघर कारजु लेहु सवारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपने प्रभ सिउ होहु सावधानु ॥ ता तूं दरगह पावहि मानु ॥ उकति सिआणप सगली तिआगु ॥ संत जना की चरणी लागु ॥ २ ॥ सरब जीअ हहि जा कै हाथि ॥ कदे न विछुड़ै सभ कै साथि ॥ उपाव छोडि गहु तिस की ओट ॥ निमख माहि होवै तेरी छोटि ॥ ३ ॥ सदा निकटि करि तिस नो जाणु ॥ प्रभ की आगिआ सति करि मानु ॥ गुर कै बचनि मिटावहु आपु ॥ हरि हरि नामु नानक जपि जापु ॥ ४ ॥ ४ ॥ ७३ ॥

हे प्राणी ! शरीर रूपी कर्म—भूमि में तू नाम का बीज बो। तेरा कर्म सफल हो जाएगा। तुम फल (मोक्ष) प्राप्त कर लोगे और तेरा मृत्यु का भय दूर हो जाएगा। इसलिए हमेशा प्रभु—परमेश्वर के गुण एवं उपमा गायन कर। हरि—परमेश्वर के नाम को तू अपने हृदय एवं मन से लगाकर रख और शीघ्र ही अपने कार्य संवार लो॥ १॥ रहाउ॥ अपने प्रभु की सेवा के लिए सदा सावधान रह। तब तुझे उसके दरबार में प्रतिष्ठा प्राप्त होगी। अपनी युक्तियां एवं समस्त चतुरता त्याग दे और संतजनों के चरणों से लग जा॥ २॥ जिस भगवान के वश में समस्त जीव हैं, जो सदा जीवों के साथ रहता है, वह कभी उनसे अलग नहीं होता। हे प्राणी ! अपनी युक्तियां त्याग और उसकी शरण में आ। एक क्षण में तेरी मुक्ति हो जाएगी॥ ३॥ प्रभु को हमेशा अपने निकट समझ। प्रभु की आज्ञा को सत्य करके स्वीकार कर। गुरु के उपदेश से अपने अहंत्व को मिटा दे। हे नानक ! हरि—परमेश्वर का नाम जप, हमेशा प्रभु के गुणों का जाप करता रह॥ ४॥ ४॥ ७३॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ गुर का बचनु सदा अबिनासी ॥ गुर कै बचनि कटी जम फासी ॥ गुर का बचनु जीअ कै संगि ॥ गुर कै बचनि रचै राम कै रंगि ॥ १ ॥ जो गुरि दीआ सु मन कै कामि ॥ संत का कीआ सति करि मानि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर का बचनु अटल अछेद ॥ गुर कै बचनि कटे भ्रम भेद ॥ गुर का बचनु कतहु न जाइ ॥ गुर कै बचनि हरि के गुण गाइ ॥ २ ॥ गुर का बचनु जीअ कै साथ ॥ गुर का बचनु अनाथ को नाथ ॥ गुर कै बचनि नरकि न पवै ॥ गुर कै बचनि रसना अंम्रितु रवै ॥ ३ ॥ गुर का बचनु परगटु संसारि ॥ गुर कै बचनि न आवै हारि ॥ जिसु जन होए आपि क्रिपाल ॥ नानक सतिगुर सदा दइआल ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७४ ॥

गुरु का वचन सदा अविनाशी है। गुरु के वचन द्वारा मृत्यु की फाँसी कट जाती है। गुरु का वचन सदैव जीव के साथ रहता है। गुरु के वचन द्वारा मनुष्य राम के प्रेम में लीन रहता है॥ १॥ गुरु जो कुछ भी देते हैं, वह आत्मा के लाभ हेतु है। जो कुछ भी संत करते हैं, उसको सत्य जानकर स्वीकार करो॥ १॥ रहाउ॥ गुरु का वचन अटल एवं शाश्वत है। गुरु के वचन से तमाम भ्रम एवं भेदभाव मिट जाते हैं। गुरु का वचन मनुष्य को छोड़कर कहीं नहीं जाता। गुरु के वचन से ही प्राणी हरि का यश गायन करता है॥ २॥ गुरु का वचन जीव के साथ रहता है। गुरु का वचन अनाथों का नाथ है। गुरु के वचन द्वारा प्राणी नरक में नहीं जाता। गुरु के वचन द्वारा प्राणी की रसना नाम रूपी अमृत का आनंद प्राप्त करती है॥ ३॥ गुरु का वचन विश्व में प्रकट है। गुरु के वचन से प्राणी कभी पराजित नहीं होता। हे नानक ! जिस प्राणी पर प्रभु स्वयं कृपालु हो जाता है, उस पर सतिगुरु जी हमेशा ही दयालु रहते हैं॥ ४॥ ५॥ ७४॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ जिनि कीता माटी ते रतनु ॥ गरभ महि राखिआ जिनि करि जतनु ॥ जिनि दीनी सोभा वडिआई ॥ तिसु प्रभ कउ आठ पहर धिआई ॥ १ ॥ रमईआ रेनु साधु जन पावउ ॥ गुर मिलि अपुना खसमु धिआवउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनि कीता मूड़ ते बकता ॥ जिनि कीता बेसुरत ते सुरता ॥ जिसु परसादि नवै निधि पाई ॥ सो प्रभु मन ते बिसरत नाही ॥ २ ॥ जिनि दीआ निथावे कउ थानु ॥ जिनि दीआ निमाने कउ मानु ॥ जिनि कीनी सभ पूरन आसा ॥ सिमरउ दिनु रैनि सास गिरासा ॥ ३ ॥ जिसु प्रसादि माइआ सिलक काटी ॥ गुर प्रसादि अंम्रितु बिखु खाटी ॥ कहु नानक इस ते किछु नाही ॥ राखनहारे कउ सालाही ॥ ४ ॥ ६ ॥ ७५ ॥

जिस भगवान ने मिट्टी से मेरे शरीर की रचना करके इसे रत्न जैसा अमूल्य बना दिया है, जिसने प्रयास करके मातृ–गर्भ में मेरी रक्षा की है, जिसने मुझे शोभा एवं बड़ाई प्रदान की है, मैं उस भगवान का आठ प्रहर सिमरन करता रहता हूँ॥ १॥ हे मेरे राम ! मुझे संतजनों की चरण धूलि प्राप्त हो। गुरु से मिलकर मैं अपने परमेश्वर का ध्यान करता रहूँ॥ १॥ रहाउ॥ जिसने मुझे मूर्ख से प्रचारक बना दिया, अचेत पुरुष से जिसने मुझे चतुर बना दिया है, जिसकी दया से मुझे नवनिधि प्राप्त हुई है, उस प्रभु को मेरा हृदय विस्मृत नहीं करता॥ २॥ जिस (प्रभु) ने मुझ निराश्रित को आश्रय दिया और जिस (प्रभु) ने मुझ तुच्छ प्राणी को आदर–सत्कार प्रदान किया है, जिसने मेरी समस्त अभिलाषाएँ पूर्ण की हैं। हे प्राणी ! दिन–रात, प्रत्येक श्वास एवं ग्रास से उसका ध्यान करो॥ ३॥ जिसके प्रसाद (दया) से मोह–माया के बंधन कट गए हैं। गुरु की कृपा से (मोह–माया का) खट्टा विष अमृत बन गया है। हे नानक ! इस जीव से कुछ नहीं हो सकता। मैं रक्षक–प्रभु की सराहना करता हूँ॥ ४॥ ६॥ ७५॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ तिस की सरणि नाही भउ सोगु ॥ उस ते बाहरि कछू न होगु ॥ तजी सिआणप बल बुधि बिकार ॥ दास अपने की राखनहार ॥ १ ॥ जपि मन मेरे राम राम रंगि ॥ घरि बाहरि तेरै सद संगि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तिस की टेक मनै महि राखु ॥ गुर का सबदु अंम्रित रसु चाखु ॥ अवरि जतन कहहु कउन काज ॥ करि किरपा राखै आपि लाज ॥ २ ॥ किआ मानुख कहहु किआ जोरु ॥ झूठा माइआ का सभु सोरु ॥ करण करावनहार सुआमी ॥ सगल घटा के अंतरजामी ॥ ३ ॥ सरब सुखा सुखु साचा एहु ॥ गुर उपदेसु मनै महि लेहु ॥ जा कउ राम नाम लिव लागी ॥ कहु नानक सो धंनु वडभागी ॥ ४ ॥ ७ ॥ ७६ ॥

उस भगवान की शरण में आने से कोई भय एवं चिंता नहीं रहती। उसके हुक्म बिना कुछ भी किया नहीं जा सकता। मैंने चतुराई, बल एवं मन्दबुद्धि त्याग दी है। वह अपने दास की प्रतिष्ठा बचाने वाला है॥ १॥ हे मेरे मन! तू प्रेमपूर्वक राम—नाम का सिमरन कर। वह हृदय—घर में एवं बाहर सदैव तेरे साथ रहता है॥ १॥ रहाउ॥

अपने मन में उसके सहारे की आशा रख। हे प्राणी! गुरु का शब्द अमृत रस है और इस अमृत रस का पान कर। हे भाई! बताओ, तेरे अन्य प्रयास किस काम के हैं? प्रभु स्वयं ही कृपा करके मनुष्य की लाज बचाता है॥ २॥ बेचारा मनुष्य क्या कर सकता है? बताइए, उसमें कौन—सा बल है? धन—दौलत का शोर—शराबा सब झूठा है। जगत् का स्वामी प्रभु स्वयं ही सब कुछ करने एवं कराने वाला है। अन्तर्यामी (प्रभु) सर्वज्ञाता है॥ ३॥ सर्व सुखों में सच्चा सुख यही है कि गुरु की शिक्षा को अपने हृदय में स्मरण रखो। हे नानक! जिसकी वृत्ति राम नाम में लगी हुई है, वह बड़े धन्य एवं भाग्यवान हैं॥ ४॥ ७॥ ७६॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ सुणि हरि कथा उतारी मैलु ॥ महा पुनीत भए सुख सैलु ॥ वडै भागि पाइआ साधसंगु ॥ पारब्रहम सिउ लागो रंगु ॥ १ ॥ हरि हरि नामु जपत जनु तारिओ ॥ अगनि सागरु गुरि पारि उतारिओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करि कीरतनु मन सीतल भए ॥ जनम जनम के किलविख गए ॥ सरब निधान पेखे मन माहि ॥ अब ढूढन काहे कउ जाहि ॥ २ ॥ प्रभ अपुने जब भए दइआल ॥ पूरन होई सेवक घाल ॥ बंधन काटि कीए अपने दास ॥ सिमरि सिमरि सिमरि गुणतास ॥ ३ ॥ एको मनि एको सभ ठाइ ॥ पूरन पूरि रहिओ सभ जाइ ॥ गुरि पूरै सभु भरमु चुकाइआ ॥ हरि सिमरत नानक सुखु पाइआ ॥ ४ ॥ ८ ॥ ७७ ॥

जिन्होंने हरि की कथा सुनकर अपने मन की अहंत्व रूपी मैल उतार दी है, वे बहुत ही पवित्र एवं सुखी हो गए हैं। उन्हें बड़े भाग्य से संतों की संगति मिल गई है और उनका पारब्रह्म से प्रेम पड़ गया है॥ १॥ हरि—परमेश्वर के नाम की आराधना करने वाले सेवक भवसागर से पार हो गए हैं। गुरु जी ने उन्हें तृष्णा रूपी अग्नि—सागर से पार कर दिया है॥ १॥ रहाउ॥

प्रभु का कीर्तन करने से उनका हृदय शीतल हो गया है और जन्म—जन्मांतरों के पाप धुल गए हैं। समस्त खजाने उन्होंने अपने हृदय में देख लिए हैं। अब वह सुखों को ढूँढने के लिए बाहर क्यों जाएँ?॥ २॥ जब मेरा प्रभु दयालु हो गया तो उसके सेवक की सेवा सम्पूर्ण हो गई है। उसने (मोह—माया के) बंधन काट कर अपना दास बना लिया है। अब वे गुणों के भण्डार प्रभु का सिमरन करते रहते हैं॥ ३॥ केवल वही अंतःकरण में है और केवल वही सर्वत्र विद्यमान है। सम्पूर्ण प्रभु समस्त स्थानों को पूर्णतया भर रहा है। पूर्ण गुरु ने समस्त भ्रम निवृत्त कर दिए हैं। हे नानक! हरि का सिमरन करके उसने सुख प्राप्त किया है॥ ४॥ ८॥ ७७॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ अगले मुए सि पाछै परे ॥ जो उबरे से बंधि लकु खरे ॥ जिह धंधे महि ओइ लपटाए ॥ उन ते दुगुण दिड़ी उन माए ॥ १ ॥ ओह बेला कछु चीति न आवै ॥ बिनसि जाइ ताहू लपटावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आसा बंधी मूरख देह ॥ काम क्रोध लपटिओ असनेह ॥ सिर ऊपरि ठाढो धरम राइ ॥ मीठी करि करि बिखिआ खाइ ॥ २ ॥ हउ बंधउ हउ साधउ बैरु ॥ हमरी भूमि कउणु घाले पैरु ॥ हउ पंडितु हउ चतुरु सिआणा ॥ करणैहारु न बुझै बिगाना ॥ ३ ॥ अपुनी गति मिति आपे जानै ॥ किआ को कहै किआ आखि वखानै ॥ जितु जितु लावहि तितु तितु लगना ॥ अपना भला सभ काहू मंगना ॥ ४ ॥ सभ किछु तेरा तूं करणैहारु ॥ अंतु नाही किछु पारावारु ॥ दास अपने कउ दीजै दानु ॥ कबहू न विसरै नानक नामु ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७८ ॥

हमारे जो पूर्वज प्राण त्याग चुके हैं, वह हमें भूल गए हैं। जो बच गए हैं, वह कमर बांधकर धन एकत्रित करने के लिए खड़े हैं। वह उन काम-धंधों में व्यस्त होते हैं, जिन में पूर्वज लीन हुए थे। उनके मुकाबले में वह धन को दुगुणी शक्ति से जोड़ते हैं॥ १॥ मृत्यु के उस समय को मनुष्य स्मरण नहीं करता। वह उससे चिपकता है, जिसने नाश हो जाना है॥ १॥ रहाउ॥ मूर्ख इन्सान का शरीर तृष्णाओं ने बांधा हुआ है। वह काम, क्रोध एवं सांसारिक मोह में फँसा रहता है। उसके सिर पर धर्मराज खड़ा है। मूर्ख इन्सान माया रूपी विष को मीठा समझकर खाता है॥ २॥ (मूर्ख अहंकार में बातें करता है कि) मैं अपने शत्रु को बांध लूँगा और उसे पछाड़ दूँगा। मेरी धरती पर कौन चरण रख सकता है! मैं विद्वान हूँ, मैं चतुर एवं बुद्धिमान हूँ। लेकिन मूर्ख इन्सान अपने कर्त्तार को नहीं जानता॥ ३॥ (परन्तु इन्सान के वश में क्या) अपनी गति एवं मूल्य प्रभु स्वयं ही जानता है। कोई क्या कह सकता है? इन्सान किस तरह उसको कथन एवं वर्णन कर सकता है? जिस किसी से हरि इन्सान को मिलाता है, उसी से वह मिल जाता है। हरेक इन्सान अपनी भलाई माँगता है॥ ४॥ हे प्रभु! तू सृजनहार है, सब कुछ तेरे वश में है। तेरे गुणों का कोई अन्त नहीं, तेरे स्वरूप का ओर-छोर नहीं मिल सकता। हे प्रभु! अपने दास को नाम का दान दीजिए। हे नानक! मुझे प्रभु का नाम कभी विस्मृत न हो॥ ५॥ ६॥ ७८॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ अनिक जतन नही होत छुटारा ॥ बहुतु सिआणप आगल भारा ॥ हरि की सेवा निरमल हेत ॥ प्रभ की दरगह सोभा सेत ॥ १ ॥ मन मेरे गहु हरि नाम का ओला ॥ तुझै न लागै ताता झोला ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिउ बोहिथु भै सागर माहि ॥ अंधकार दीपक दीपाहि ॥ अगनि सीत का लाहसि दूख ॥ नामु जपत मनि होवत सूख ॥ २ ॥ उतरि जाइ तेरे मन की पिआस ॥ पूरन होवै सगली आस ॥ डोलै नाही तुमरा चीतु ॥ अंम्रित नामु जपि गुरमुखि मीत ॥ ३ ॥ नामु अउखधु सोई जनु पावै ॥ करि किरपा जिसु आपि दिवावै ॥ हरि हरि नामु जा कै हिरदै वसै ॥ दूखु दरदु तिह नानक नसै ॥ ४ ॥ १० ॥ ७६ ॥

अनेक यत्नों से भी (माया के बंधनों से) मुक्ति नहीं होती। अधिक चतुराई करने से पापों का बोझ सिर पर और भी बढ़ता है। जो व्यक्ति निर्मल मन एवं प्रेम से भगवान की सेवा करता है, वह प्रभु के दरबार में शोभा का पात्र बन जाता है॥ १॥ हे मेरे मन! ईश्वर के नाम का आश्रय लो। तुझे हवा का गर्म झोंका भी स्पर्श नहीं करेगा॥ १॥ रहाउ॥ जैसे भयानक सागर में जहाज सहायक होता है, जैसे दीपक अंधेरे में उजाला कर देता है, जैसे अग्नि सर्दी की पीड़ा को दूर कर देती है, वैसे ही नाम-स्मरण से मन को शांति प्राप्त हो जाती है॥ २॥ नाम-सिमरन से तेरे मन की तृष्णा बुझ जाएगी, समस्त आकांक्षा पूर्ण हो जाएँगी, तेरा मन डावांडोल नहीं होगा, यदि हे मित्र! तू गुरु की दया से नाम

अमृत का स्मरण करे॥ ३॥ केवल वही मनुष्य नाम रूपी औषधि प्राप्त करता है, जिसे प्रभु स्वयं दया धारण करके गुरु से दिलवाता है। हे नानक! जिसके हृदय में हरि–परमेश्वर का नाम निवास करता है, उसके दु:ख–दर्द दूर हो जाते हैं॥ ४॥ १०॥ ७६॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ बहुतु दरबु करि मनु न अघाना ॥ अनिक रूप देखि नह पतीआना ॥ पुत्र कलत्र उरझिओ जानि मेरी ॥ ओह बिनसै ओइ भसमै ढेरी ॥ १ ॥ बिनु हरि भजन देखउ बिललाते ॥ ध्रिगु तनु ध्रिगु धनु माइआ संगि राते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिउ बिगारी कै सिरि दीजहि दाम ॥ ओइ खसमै कै ग्रिहि उन दूख सहाम ॥ जिउ सुपनै होइ बैसत राजा ॥ नेत्र पसारै ता निरारथ काजा ॥ २ ॥ जिउ राखा खेत ऊपरि पराए ॥ खेतु खसम का राखा उठि जाए ॥ उसु खेत कारणि राखा कड़ै ॥ तिस कै पालै कछू न पड़ै ॥ ३ ॥ जिस का राजु तिसै का सुपना ॥ जिनि माइआ दीनी तिनि लाई त्रिसना ॥ आपि बिनाहे आपि करे रासि ॥ नानक प्रभ आगै अरदासि ॥ ४ ॥ ११ ॥ ८० ॥

अधिकतर धन संग्रह करने से भी इन्सान का मन तृप्त नहीं होता। अनेक रूपसियों का सौन्दर्य देखकर भी इन्सान संतुष्ट नहीं होता। अपने पुत्र एवं पत्नी के मोह में मेरे प्राण उलझे हुए हैं। मेरी धन–दौलत नाश हो जाएगी और वह संबंधी राख का अम्बार हो जाएँगे॥ १॥ हरि–भजन के बिना मैं प्राणियों को विलाप करते देखता हूँ। जो व्यक्ति माया के मोह में मग्न रहते हैं, उनका तन एवं मन धिक्कार योग्य है॥ १॥ रहाउ॥ जैसे धन–दौलत की पोटली बेगारी के सिर पर रख दी जाती है, वह धन–दौलत की पोटली स्वामी के घर पहुँच जाती है परन्तु बेगारी भार उठाने का कष्ट सहन करता है। जैसे स्वप्न में साधारण पुरुष राजा बनकर विराजमान हो जाता है परन्तु जब वह अपने नेत्र खोलता है, तो उसका सारा कार्य व्यर्थ हो जाता है॥ २॥ जैसे कोई रखवाला पराई फसल पर रक्षा करता है, फसल तो स्वामी की बन जाती है और रखवाला उठकर अपने घर चला जाता है। उस फसल के कारण रखवाला अधिक कष्ट सहन करता है, परन्तु उसमें आखिर उसे कुछ नहीं मिलता॥ ३॥ जिस प्रभु का दिया हुआ शासन मिलता है। उसी का दिया हुआ स्वप्न भी होता है। जिसने धन–दौलत प्रदान की है, उसने ही इसलिए तृष्णा उत्पन्न की है। परमेश्वर स्वयं प्राणी का विनाश करता है और स्वयं ही उसका मनोरथ सफल करता है। हे नानक! प्रभु के समक्ष प्रार्थना किया कर॥ ४॥ ११॥ ८०॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ बहु रंग माइआ बहु बिधि पेखी ॥ कलम कागद सिआनप लेखी ॥ महर मलूक होइ देखिआ खान ॥ ता ते नाही मनु त्रिपतान ॥ १ ॥ सो सुखु मो कउ संत बतावहु ॥ त्रिसना बूझै मनु त्रिपतावहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ असु पवन हसति असवारी ॥ चोआ चंदनु सेज सुंदरि नारी ॥ नट नाटिक आखारे गाइआ ॥ ता महि मनि संतोखु न पाइआ ॥ २ ॥ तखतु सभा मंडन दोलीचे ॥ सगल मेवे सुंदर बागीचे ॥ आखेड़ बिरति राजन की लीला ॥ मनु न सुहेला परपंचु हीला ॥ ३ ॥ करि किरपा संतन सचु कहिआ ॥ सरब सूख इहु आनंदु लहिआ ॥ साधसंगि हरि कीरतनु गाईऐ ॥ कहु नानक वडभागी पाईऐ ॥ ४ ॥ जा कै हरि धनु सोई सुहेला ॥ प्रभ किरपा ते साधसंगि मेला ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ १२ ॥ ८१ ॥

बहुरंगी मोहिनी मैंने अनेक विधियों से लुभाती हुई देखी है। अनेक विद्वानों ने अपनी कलम से कागज पर प्रवीण बातें लिखी हैं। मैंने कुछ लोगों को चौधरी, राजा और सामन्त बनते देखा है। परन्तु ऐसा बन जाने पर भी उनका मन तृप्त नहीं हुआ॥ १॥ हे सन्तजनो! मुझे वह सुख बताएँ, जिससे तृष्णा मिट जाए और मन तृप्त हो जाए॥ १॥ रहाउ॥ चाहे मेरे पास वायुगतिगामी घोड़ों एवं हाथियों की सवारी हो, चन्दन का इत्र, सुन्दर नारियों की सेज हो, रंगभूमि में नटों के नाटक, मेरे लिए गाने वाले कलाकार

हों, परन्तु उन में से हृदय को संतोष प्राप्त नहीं होता॥ २॥ राजसिंहासन, राजकीय दरबार, आभूषण, गलीचे, समूह फल, सुन्दर उद्यान, आखेट का शौक और राजाओं की क्रीड़ाएँ—मनोरंजन, ऐसे झूठे प्रयासों से हृदय प्रसन्न नहीं होता॥ ३॥ संतों ने कृपा करके यह सत्य ही कहा है कि यह आनंद एवं सर्व सुख वही मनुष्य प्राप्त करता है, जो संतों की संगति करके भगवान का कीर्तन गायन करता है। हे नानक! संतों की संगति सौभाग्यवश ही मिलती है॥ ४॥ जिसके पास हरि नाम रूपी धन है, वही सुप्रसन्न है। प्रभु की दया से संतों की संगति प्राप्त होती है॥ १॥ रहाउ दूजा॥ १२॥ ८१॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ प्राणी जाणै इहु तनु मेरा ॥ बहुरि बहुरि उआहू लपटेरा ॥ पुत्र कलत्र गिरसत का फासा ॥ होनु न पाईऐ राम के दासा ॥ १ ॥ कवन सु बिधि जितु राम गुण गाइ ॥ कवन सु मति जितु तरै इह माइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो भलाई सो बुरा जानै ॥ साचु कहै सो बिखै समानै ॥ जाणै नाही जीत अरु हार ॥ इहु वलेवा साकत संसार ॥ २ ॥ जो हलाहल सो पीवै बउरा ॥ अंम्रितु नामु जानै करि कउरा ॥ साधसंग कै नाही नेरि ॥ लख चउरासीह भ्रमता फेरि ॥ ३ ॥ एकै जालि फहाए पंखी ॥ रसि रसि भोग करहि बहु रंगी ॥ कहु नानक जिसु भए क्रिपाल ॥ गुरि पूरै ता के काटे जाल ॥ ४ ॥ १३ ॥ ८२ ॥

प्राणी विचार करता है कि यह शरीर उसका अपना है। वह बार—बार उस शरीर से ही लिपटता है। जितनी देर तक पुत्र, स्त्री एवं गृहस्थ के मोह का फँदा उसके गले में पड़ा रहता है, तब तक वह राम का दास नहीं बनता॥ १॥ वह कौन—सी विधि है, जिससे राम का यश गायन किया जाए? हे माता! वह कौन—सी बुद्धि है, जिससे यह प्राणी माया से पार हो जाए॥ १॥ रहाउ॥ जो कार्य मानव की भलाई का है, उसको वह बुरा समझता है। यदि कोई उसको सत्य कहे, तो वह उसको विष के समान कड़वा लगता है। वह नहीं जानता कि जीत क्या है और हार क्या है? इस दुनिया में शाक्त व्यक्ति का यही जीवन—आचरण है॥ २॥ जो विष है, पागल पुरुष उसको पान करता है। प्रभु के अमृत नाम को वह कड़वा समझता है। वह साधु—संतों की संगति के निकट नहीं आता, जिससे वह चौरासी लाख योनियों में भटकता फिरता है॥ ३॥ समस्त जीव रूपी पक्षी माया ने अपने मोह रूपी जाल में फँसाए हुए हैं। मनुष्य स्वाद लेकर अनेक प्रकार के भोग भोगता है। हे नानक! कहो— जिस व्यक्ति पर प्रभु कृपालु हो गया है, पूर्ण गुरु ने उसके मोह—माया के बंधन काट दिए हैं॥ ४॥ १३॥ ८२॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ तउ किरपा ते मारगु पाईऐ ॥ प्रभ किरपा ते नामु धिआईऐ ॥ प्रभ किरपा ते बंधन छुटै ॥ तउ किरपा ते हउमै तुटै ॥ १ ॥ तुम लावहु तउ लागह सेव ॥ हम ते कछू न होवै देव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुधु भावै ता गावा बाणी ॥ तुधु भावै ता सचु वखाणी ॥ तुधु भावै ता सतिगुर मइआ ॥ सरब सुखा प्रभ तेरी दइआ ॥ २ ॥ जो तुधु भावै सो निरमल करमा ॥ जो तुधु भावै सो सचु धरमा ॥ सरब निधान गुण तुम ही पासि ॥ तूं साहिबु सेवक अरदासि ॥ ३ ॥ मनु तनु निरमलु होइ हरि रंगि ॥ सरब सुखा पावउ सतसंगि ॥ नामि तेरै रहै मनु राता ॥ इहु कलिआणु नानक करि जाता ॥ ४ ॥ १४ ॥ ८३ ॥

हे प्रभु! तेरी कृपा से जीवन—मार्ग मिलता है। प्रभु की कृपा से नाम का ध्यान किया जाता है। प्रभु की कृपा से प्राणी बन्धनों से मुक्ति प्राप्त कर लेता है। हे प्रभु! तेरी कृपा से अहंकार दूर हो जाता है॥ १॥ हे ईश्वर! यदि तू मुझे अपनी सेवा में लगाए, तो ही मैं तेरी सेवा—भक्ति में लगता हूँ। हे देव! अपने आप मैं कुछ भी नहीं कर सकता॥ १॥ रहाउ॥ हे ईश्वर! यदि तुझे अच्छा लगे तो मैं

तेरी वाणी गा सकता हूँ। हे प्रभु ! यदि तुझे अच्छा लगे तो मैं सत्य बोलता हूँ। यदि तुझे अच्छा लगे तो ही सतिगुरु की दया जीव पर होती है। हे मेरे ठाकुर ! तेरी दया से ही जीव को सर्व सुख प्राप्त होते हैं॥ २॥ हे प्रभु ! जो तुझे उपयुक्त लगता है, वही पवित्र कर्म है। हे नाथ ! जो तुझे लुभाता है, वही सत्य धर्म है। सर्वगुणों का खजाना तेरे पास है। हे प्रभु ! तू मेरा स्वामी है और तेरा सेवक तेरे समक्ष यही प्रार्थना करता है॥ ३॥ ईश्वर के प्रेम से मन एवं तन पवित्र हो जाते हैं। सत्संग में जाने से सर्व सुख प्राप्त हो जाते हैं। हे प्रभु ! मेरा मन तेरे नाम में ही मग्न रहे। हे नानक ! मैं उसे ही कल्याण समझता हूँ॥ ४॥ १४॥ ८३॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ आन रसा जेते तै चाखे ॥ निमख न त्रिसना तेरी लाथे ॥ हरि रस का तूं चाखहि सादु ॥ चाखत होइ रहहि बिसमादु ॥ १ ॥ अंम्रितु रसना पीउ पिआरी ॥ इह रस राती होइ त्रिपतारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे जिहवे तूं राम गुण गाउ ॥ निमख निमख हरि हरि हरि धिआउ ॥ आन न सुनीऐ कतहूं जाईऐ ॥ साधसंगति वडभागी पाईऐ ॥ २ ॥ आठ पहर जिहवे आराधि ॥ पारब्रहम ठाकुर आगाधि ॥ ईहा ऊहा सदा सुहेली ॥ हरि गुण गावत रसन अमोली ॥ ३ ॥ बनसपति मउली फल फुल पेडे ॥ इह रस राती बहुरि न छोडे ॥ आन न रस कस लवै न लाई ॥ कहु नानक गुर भए है सहाई ॥ ४ ॥ १५ ॥ ८४ ॥

हे मेरी जिह्वा ! हरि–रस के सिवाय अन्य जितने भी रस तू चखती है, उनसे तेरी तृष्णा एक क्षण–मात्र के लिए भी दूर नहीं होती। यदि तू हरि–रस की मिठास चख ले तो तू इसको चखकर चकित हो जाएगी॥ १॥ हे मेरी प्रिय जिह्वा ! तू हरि–रस रूपी अमृत का पान कर। इस हरि–रस के स्वाद में अनुरक्त हुई तू तृप्त हो जाएगी॥ १॥ रहाउ॥ हे जिह्वा ! तू राम का यशोगान कर। क्षण–क्षण तू हरि–परमेश्वर के नाम का ध्यान कर। हरि–परमेश्वर के नाम के अलावा कुछ भी सुनना नहीं चाहिए और सत्संगति के अलावा कहीं ओर नहीं जाना चाहिए। सत्संग बड़े सौभाग्य से मिलती है॥ २॥ हे जिह्वा ! आठ प्रहर ही तू अगाध एवं जगत् के ठाकुर पारब्रह्म की आराधना कर। यहाँ (इहलोक) और वहाँ (परलोक) तू सदैव सुप्रसन्न रहेगी। हे जिह्वा ! प्रभु का यशोगान करने से तू अमूल्य गुणों वाली हो जाएगी॥ ३॥ चाहे वनस्पति खिली रहती है और पेड़ों को फल एवं फूल लगे होते हैं परन्तु हरि–रस में मग्न हुई जिह्वा इस हरि–रस को नहीं छोड़ती चूंकि कोई दूसरे मीठे व नमकीन स्वाद इसके तुल्य नहीं। हे नानक ! गुरु मेरे सहायक हो गए हैं॥ ४॥ १५॥ ८४॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ मनु मंदरु तनु साजी बारि ॥ इस ही मधे बसतु अपार ॥ इस ही भीतरि सुनीअत साहु ॥ कवनु बापारी जा का ऊहा विसाहु ॥ १ ॥ नाम रतन को को बिउहारी ॥ अंम्रित भोजनु करे आहारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु तनु अरपी सेव करीजै ॥ कवन सु जुगति जितु करि भीजै ॥ पाइ लगउ तजि मेरा तेरै ॥ कवनु सु जनु जो सउदा जोरै ॥ २ ॥ महलु साह का किन बिधि पावै ॥ कवन सु बिधि जितु भीतरि बुलावै ॥ तूं वड साहु जा के कोटि वणजारे ॥ कवनु सु दाता ले संचारे ॥ ३ ॥ खोजत खोजत निज घरु पाइआ ॥ अमोल रतनु साचु दिखलाइआ ॥ करि किरपा जब मेले साहि ॥ कहु नानक गुर कै वेसाहि ॥ ४ ॥ १६ ॥ ८५ ॥

मन एक मन्दिर है और तन को इसके पास मेड़ बनाया गया है। इस मन्दिर में अनन्त प्रभु की नाम–रूपी वस्तु विद्यमान है। संतों से सुनते हैं कि इस मन्दिर में ही नाम देने वाला साहूकार प्रभु निवास करता है। वह कौन–सा व्यापारी है, जिसका वहाँ विश्वास किया जाता है॥ १॥ कोई विरला

ही व्यापारी है, जो नाम रत्न का व्यापार करता है। वह व्यापारी नाम रूपी अमृत को अपना आहार बनाता है॥ १॥ रहाउ॥ मैं अपना मन एवं तन उसे अर्पण करके उसकी सेवा करूँगा जो मुझे यह बताए कि वह कौन-सी युक्ति है जिससे परमात्मा हर्षित होता है। अपना अहंत्व मेरी-तेरी गंवा कर मैं उसके चरण स्पर्श करता हूँ। वह कौन-सा मनुष्य है, जो मुझे भी नाम के व्यापार में लगा दे॥ २॥ किस विधि से मैं उस व्यापारी के मन्दिर पहुँच सकता हूँ। वह कौन-सी विधि है जिस द्वारा वह मुझे अन्दर बुलवा ले ? हे प्रभु ! तू बड़ा व्यापारी है, जिसके करोड़ों ही दुकानदार हैं। वह कौन-सा दाता है जो मुझे हाथ से पकड़ कर उसके मन्दिर में पहुँचा दे॥ ३॥ खोजते-खोजते मैंने अपना धाम (गृह) पा लिया है। सत्यस्वरूप प्रभु ने मुझे अमूल्य रत्न दिखा दिया है। जब व्यापारी (प्रभु) कृपा करता है, वह प्राणी को अपने साथ मिला लेता है। हे नानक ! यह तब होता है, जब प्राणी गुरु जी पर विश्वास धारण कर लेता है॥ ४॥ १६॥ ८५॥

गउड़ी महला ५ गुआरेरी ॥ रैणि दिनसु रहै इक रंगा ॥ प्रभ कउ जाणै सद ही संगा ॥ ठाकुर नामु कीओ उनि वरतनि ॥ त्रिपति अघावनु हरि कै दरसनि ॥ १ ॥ हरि संगि राते मन तन हरे ॥ गुर पूरे की सरनी परे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरण कमल आतम आधार ॥ एकु निहारहि आगिआकार ॥ एको बनजु एको बिउहारी ॥ अवरु न जानहि बिनु निरंकारी ॥ २ ॥ हरख सोग दुहहू ते मुकते ॥ सदा अलिपतु जोग अरु जुगते ॥ दीसहि सभ महि सभ ते रहते ॥ पारब्रहम का ओइ धिआनु धरते ॥ ३ ॥ संतन की महिमा कवन वखानउ ॥ अगाधि बोधि किछु मिति नही जानउ ॥ पारब्रहम मोहि किरपा कीजै ॥ धूरि संतन की नानक दीजै ॥ ४ ॥ १७ ॥ ८६ ॥

जो व्यक्ति दिन-रात भगवान के प्रेम में मग्न रहते हैं और प्रभु को हमेशा अपने आसपास समझते हैं, उन्होंने ठाकुर के नाम को अपना जीवन-आचरण बना लिया है। वह ईश्वर के दर्शनों द्वारा संतुष्ट एवं तृप्त हो जाते हैं॥ १॥ ईश्वर के साथ अनुरक्त होने से उनका मन एवं तन प्रफुल्लित हो जाते हैं। वे पूर्ण गुरु की शरण लेते हैं॥ १॥ रहाउ॥ ईश्वर के चरण कमल उनकी आत्मा का आधार बन जाता है। वह एक ईश्वर को ही देखते हैं और उसके आज्ञाकारी बन जाते हैं। वे एक नाम का ही व्यापार करते हैं और नाम-सिमरन ही उनका व्यवसाय बन जाता है। निरंकार परमेश्वर के बिना वह किसी को भी नहीं जानते॥ २॥ वे हर्ष एवं शोक दोनों से मुक्त हैं। हमेशा ही संसार से निर्लिप्त और प्रभु से जुड़े रहने की विधि उनको आती है। वे सबसे प्रेम करते दिखाई देते हैं और सबसे अलग भी दिखाई देते हैं। वे पारब्रह्म-प्रभु के स्मरण में वृत्ति लगाकर रखते हैं॥ ३॥ संतों की महिमा का मैं क्या-क्या वर्णन कर सकता हूँ। उनका बोध अनन्त है लेकिन मैं उनका मूल्य नहीं जानता। हे पारब्रह्म-परमेश्वर ! मुझ पर कृपा कीजिए। नानक को संतों की चरण-धूलि प्रदान करो॥ ४॥ १७॥ ८६॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ तूं मेरा सखा तूंही मेरा मीतु ॥ तूं मेरा प्रीतमु तुम संगि हीतु ॥ तूं मेरी पति तूहै मेरा गहणा ॥ तुझ बिनु निमखु न जाई रहणा ॥ १ ॥ तूं मेरे लालन तूं मेरे प्रान ॥ तूं मेरे साहिब तूं मेरे खान ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिउ तुम राखहु तिव ही रहना ॥ जो तुम कहहु सोई मोहि करना ॥ जह पेखउ तहा तुम बसना ॥ निरभउ नामु जपउ तेरा रसना ॥ २ ॥ तूं मेरी नव निधि तूं भंडारु ॥ रंग रसा तूं मनहि अधारु ॥ तूं मेरी सोभा तुम संगि रचीआ ॥ तूं मेरी ओट तूं है मेरा तकीआ ॥ ३ ॥ मन तन अंतरि तुही धिआइआ ॥ मरमु तुमारा गुर ते पाइआ ॥ सतिगुर ते द्रिड़िआ इकु एकै ॥ नानक दास हरि हरि हरि टेकै ॥ ४ ॥ १८ ॥ ८७ ॥

हे ईश्वर ! तू ही मेरा साथी है और तू ही मेरा मित्र। तू ही मेरा प्रियतम है और तेरे साथ ही मेरा प्रेम है। तू ही मेरी प्रतिष्ठा है और तू ही मेरा आभूषण है। तेरे बिना मैं एक क्षण भर भी नहीं रह सकता।। १।। हे प्रभु ! तू ही मेरा सुन्दर लाल है और तू ही मेरे प्राण है। तू मेरा स्वामी है और तू ही मेरा सामन्त है।। १।। रहाउ।। हे ठाकुर ! जैसे तुम मुझे रखते हो, वैसे ही मैं रहता हूँ। जो कुछ तुम कहते हो, वही मैं करता हूँ। जहाँ कहीं भी मैं देखता हूँ, उधर ही मैं तेरा निवास पाता हूँ। हे निर्भय प्रभु ! अपनी जिह्वा से मैं तेरे नाम का जाप करता रहता हूँ।। २।। हे प्रभु ! तू मेरी नवनिधि है और तू ही मेरा भण्डार है। हे स्वामी ! तेरे प्रेम से मैं सींचा हुआ हूँ और तू मेरे मन का आधार है। तू ही मेरी शोभा है और तेरे साथ ही मैं सुरति लगाकर रखता हूँ। तू मेरी शरण है और तू ही मेरा आश्रय है।। ३।। हे प्रभु ! मैं अपने मन एवं तन में तेरा ही ध्यान करता रहता हूँ। तेरा भेद मैंने गुरु जी से प्राप्त किया है। सतिगुरु से मैंने एक ईश्वर का नाम–सिमरन ही दृढ़ किया है। हे नानक ! हरि–परमेश्वर का नाम ही मेरा एक आधार है।। ४।। १८।। ८७।।

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ बिआपत हरख सोग बिसथार ॥ बिआपत सुरग नरक अवतार ॥ बिआपत धन निरधन पेखि सोभा ॥ मूलु बिआधी बिआपसि लोभा ॥ १ ॥ माइआ बिआपत बहु परकारी ॥ संत जीवहि प्रभ ओट तुमारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिआपत अहंबुधि का माता ॥ बिआपत पुत्र कलत्र संगि राता ॥ बिआपत हसति घोड़े अरु बसता ॥ बिआपत रूप जोबन मद मसता ॥ २ ॥ बिआपत भूमि रंक अरु रंगा ॥ बिआपत गीत नाद सुणि संगा ॥ बिआपत सेज महल सीगार ॥ पंच दूत बिआपत अंधिआर ॥ ३ ॥ बिआपत करम करै हउ फासा ॥ बिआपति गिरसत बिआपत उदासा ॥ आचार बिउहार बिआपत इह जाति ॥ सभ किछु बिआपत बिनु हरि रंग रात ॥ ४ ॥ संतन के बंधन काटे हरि राइ ॥ ता कउ कहा बिआपै माइ ॥ कहु नानक जिनि धूरि संत पाई ॥ ता कै निकटि न आवै माई ॥ ५ ॥ १६ ॥ ८८ ॥

माया का सुख–दुख में प्रसार है। वह स्वर्ग में जन्म लेने वाले जीवों को सुख रूप में तथा नरक के जीवों को दुख रूप में प्रभावित करती है। यह धनवानों, कंगालों एवं शोभावानों पर प्रभाव करती देखी जाती है। यह लोभ रूप में जीवों में फैली हुई है और तमाम रोगों की जड़ है।। १।। माया अनेक विधियों से प्रभाव करती है। हे प्रभु ! तेरी शरण में साधु–संत इसके प्रभाव के बिना ही अपना जीवन व्यतीत करते हैं।। १।। रहाउ।। माया उससे लिपटी हुई है जो अहंबुद्धि से मदहोश हुआ है। जो अपने पुत्रों एवं भार्या के प्रेम में अनुरक्त हुआ है, माया उससे भी लिपटी हुई है। मोहिनी उससे लिपटी हुई है जो हाथियों, घोड़ों एवं सुन्दर वस्त्रों में लीन है। यह (मोहिनी) उस पुरुष से लिपटी हुई है जो सुन्दरता एवं यौवन के नशे में मस्त हुआ है।। २।। माया धरती के स्वामियों, निर्धनों एवं भोग–विलासियों से लिपटी हुई है। यह सभाओं में गीत एवं राग श्रवण करने वालों से लिपटी हुई है। यह सेज, हार–शृंगार, महलों में व्याप्त हुई है। यह मोह के अन्धेरे में कामादिक पांचों दूत बनकर प्रभाव डाल रही है।। ३।। यह मोहिनी उसके भीतर व्याप्त हुई है जो अहंकार में फँसकर अपना कर्म करता है। गृहस्थ में भी यह हम पर प्रभाव डालती है और त्याग में भी प्रभावित करती है। हमारे चरित्र, कामकाज और जाति द्वारा मोहिनी हम पर आक्रमण करती है। सिवाय उनके जो परमेश्वर के प्रेम में अनुरक्त है, यह प्रत्येक पदार्थ को चिपकती है।। ४।। संतों के बन्धन प्रभु ने काट दिए हैं। मोहिनी उनको किस तरह चिपक सकती है ? हे नानक ! मोहिनी उनके निकट नहीं आती जिसको संतों की चरण–धूलि प्राप्त हुई है।। ५।। १६।। ८८।।

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ नैनहु नीद पर द्रिसटि विकार ॥ स्रवण सोए सुणि निंद वीचार ॥ रसना सोई लोभि मीठै सादि ॥ मनु सोइआ माइआ बिसमादि ॥ १ ॥ इसु ग्रिह महि कोई जागतु रहै ॥ साबतु वसतु ओहु अपनी लहै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सगल सहेली अपनै रस माती ॥ ग्रिह अपुने की खबरि न जाती ॥ मुसनहार पंच बटवारे ॥ सूने नगरि परे ठगहारे ॥ २ ॥ उन ते राखै बापु न माई ॥ उन ते राखै मीतु न भाई ॥ दरबि सिआणप ना ओइ रहते ॥ साधसंगि ओइ दुसट वसि होते ॥ ३ ॥ करि किरपा मोहि सारिंगपाणि ॥ संतन धूरि सरब निधान ॥ साबतु पूंजी सतिगुर संगि ॥ नानकु जागै पारब्रहम कै रंगि ॥ ४ ॥ सो जागै जिसु प्रभु किरपालु ॥ इह पूंजी साबतु धनु मालु ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ २० ॥ ८९ ॥

पराई नारी के सौन्दर्य को कामवासना रूपी विकृत दृष्टि से देखने से नेत्र निद्रा में सोए हुए हैं। परनिन्दा के विचारों को सुनकर कान सोए हुए हैं। मीठे पदार्थों के स्वाद की तृष्णा–लालसा में जिह्वा सोई हुई है। मन माया की आश्चर्यजनक लीला को देखकर सोया हुआ है॥ १॥ शरीर रूपी घर में कोई विरला पुरुष ही जागता रहता है और वह अपनी पूँजी सुरक्षित पा लेता है॥ १॥ रहाउ॥ मन की सखियां पाँच ज्ञानेन्द्रियां अपने स्वाद में मस्त हैं। वह अपने घर की रक्षा करनी नहीं जानती। पांचों दुष्ट विकार अपहरणकर्त्ता एवं लुटेरे हैं। लुटेरे सुनसान नगर में आ जाते हैं॥ २॥ उनसे माता–पिता बचा नहीं सकते। मित्र एवं भाई भी उनसे रक्षा नहीं कर सकते। दौलत एवं चतुरता से वे नहीं रुकते। लेकिन सत्संग में वे दुष्ट वश में आ जाते हैं॥ ३॥ हे सारिंगपाणि प्रभु ! मुझ पर कृपा कीजिए। मुझे संतों की चरण–धूलि प्रदान कीजिए चूंकि मेरे लिए यह चरण–धूलि ही सर्वनिधि है। सतिगुरु की संगति में नाम रूपी पूँजी सुरक्षित रहती है। नानक पारब्रह्म प्रभु के प्रेम में जागता है॥ ४॥ केवल वही जागता है जिस पर प्रभु दयालु है। ये पूँजी, पदार्थ और सम्पत्ति फिर बचे रहते हैं॥ १॥ रहाउ दूजा॥ २०॥ ८९॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ जा कै वसि खान सुलतान ॥ जा कै वसि है सगल जहान ॥ जा का कीआ सभु किछु होइ ॥ तिस ते बाहरि नाही कोइ ॥ १ ॥ कहु बेनंती अपुने सतिगुर पाहि ॥ काज तुमारे देइ निबाहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभ ते ऊच जा का दरबारु ॥ सगल भगत जा का नामु अधारु ॥ सरब बिआपित पूरन धनी ॥ जा की सोभा घटि घटि बनी ॥ २ ॥ जिसु सिमरत दुख डेरा ढहै ॥ जिसु सिमरत जमु किछू न कहै ॥ जिसु सिमरत होत सूके हरे ॥ जिस सिमरत डूबत पाहन तरे ॥ ३ ॥ संत सभा कउ सदा जैकारु ॥ हरि हरि नामु जन प्रान अधारु ॥ कहु नानक मेरी सुणी अरदासि ॥ संत प्रसादि मो कउ नाम निवासि ॥ ४ ॥ २१ ॥ ९० ॥

हे प्राणी ! जिस प्रभु के वश में सरदार और सुल्तान हैं। जिसके अधीन सारा संसार है। जिसके करने से सब कुछ हो रहा है, उससे बाहर कुछ भी नहीं॥ १॥ हे प्राणी ! अपने सतिगुरु के पास विनती कर। वह तेरे समस्त कार्य सम्पूर्ण कर देगा॥ १॥ रहाउ॥ उस प्रभु का दरबार सबसे ऊँचा है। उसका नाम उसके समस्त भक्तों का आधार है। जगत् का स्वामी प्रभु सबमें विद्यमान है। उसकी शोभा समस्त जीवों के हृदय में प्रकट है॥ २॥ जिस प्रभु का सिमरन करने से दुखों का पहाड़ नष्ट हो जाता है। जिसका सिमरन करने से यमदूत तुझे दुख नहीं देता। जिसकी आराधना करने से नीरस मन प्रफुल्लित हो जाता है। जिसकी आराधना करने से डूबते हुए पत्थर अर्थात् पापी जीव भी भवसागर से पार हो जाते हैं॥ ३॥ संतों की सभा को मैं सदैव नमन करता हूँ। हरि–परमेश्वर का नाम संतजनों के प्राणों का आधार है। हे नानक ! प्रभु ने मेरी प्रार्थना सुन ली है। संतों की कृपा से मुझे ईश्वर के नाम में निवास मिल गया है॥ ४॥ २१॥ ९०॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ सतिगुर दरसनि अगनि निवारी ॥ सतिगुर भेटत हउमै मारी ॥ सतिगुर संगि नाही मनु डोलै ॥ अंम्रित बाणी गुरमुखि बोलै ॥ १ ॥ सभु जगु साचा जा सच महि राते ॥ सीतल साति गुर ते प्रभ जाते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संत प्रसादि जपै हरि नाउ ॥ संत प्रसादि हरि कीरतनु गाउ ॥ संत प्रसादि सगल दुख मिटे ॥ संत प्रसादि बंधन ते छुटे ॥ २ ॥ संत क्रिपा ते मिटे मोह भरम ॥ साध रेण मजन सभि धरम ॥ साध क्रिपाल दइआल गोविंदु ॥ साधा महि इह हमरी जिंदु ॥ ३ ॥ किरपा निधि किरपाल धिआवउ ॥ साधसंगि ता बैठणु पावउ ॥ मोहि निरगुण कउ प्रभि कीनी दइआ ॥ साधसंगि नानक नामु लइआ ॥ ४ ॥ २२ ॥ ६१ ॥

सतिगुरु के दर्शनों से तृष्णा की अग्नि बुझ गई है। सतिगुरु को मिलने से अहंकार मिट गया है। सतिगुरु की संगति में मन डाँवाडोल नहीं होता। गुरु के माध्यम से प्राणी अमृत वाणी का उच्चारण करता है॥ १॥ जब से मेरा मन सत्य के प्रेम में मग्न हुआ है, तब से मुझे वह सत्य–प्रभु सारी दुनिया में निवास करता दिखाई देता है। गुरु के माध्यम से प्रभु को जानकर मेरा मन शीतल एवं शांत–स्थिर हो गया है॥ १॥ रहाउ॥ संतों की कृपा से मनुष्य हरि का नाम स्मरण करता है। संतों के प्रसाद से मनुष्य हरि का यश कीर्त्तन करता है। संतों की दया से मनुष्य की समस्त पीड़ा दूर हो जाती है। संतों की कृपा से प्राणी (मोह–माया के) बंधनों से मुक्ति प्राप्त कर लेता है॥ २॥ संतों की कृपा से मोह एवं भ्रम मिट गए हैं। संतों की चरण–धूलि में स्नान करने से सभी धर्म कर्मों का फल मिल जाता है। जब संत कृपालु हैं तो गोविन्द दयालु हो जाता है। मेरे यह प्राण संतों में निवास करते हैं॥ ३॥ यदि मैं कृपा के भण्डार दयालु परमात्मा का चिन्तन करूँ, तो ही मैं संतों की संगति में बैठ सकता हूँ। हे नानक ! जब प्रभु ने मुझ गुणहीन पर दया की तो मैंने संतों की सभा में नाम–सिमरन किया है॥ ४॥ २२॥ ६१॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ साधसंगि जपिओ भगवंतु ॥ केवल नामु दीओ गुरि मंतु ॥ तजि अभिमान भए निरवैर ॥ आठ पहर पूजहु गुर पैर ॥ १ ॥ अब मति बिनसी दुसट बिगानी ॥ जब ते सुणिआ हरि जसु कानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहज सूख आनंद निधान ॥ राखनहार रखि लेइ निदान ॥ दूख दरद बिनसे भै भरम ॥ आवण जाण रखे करि करम ॥ २ ॥ पेखै बोलै सुणै सभु आपि ॥ सदा संगि ता कउ मन जापि ॥ संत प्रसादि भइओ परगासु ॥ पूरि रहे एकै गुणतासु ॥ ३ ॥ कहत पवित्र सुणत पुनीत ॥ गुण गोविंद गावहि नित नीत ॥ कहु नानक जा कउ होहु क्रिपाल ॥ तिसु जन की सभ पूरन घाल ॥ ४ ॥ २३ ॥ ६२ ॥

मैं संतों की सभा में मिलकर भगवान का सिमरन करता हूँ। गुरु ने मुझे केवल नाम का ही मंत्र प्रदान किया है। अपना अहंकार त्याग कर मैं निर्वेर हो गया हूँ। दिन के आठ प्रहर गुरु के चरणों की पूजा करो॥ १॥ जब से मैंने हरि का यश अपने कानों से सुना है, मेरी पराई दुष्ट बुद्धि नष्ट हो गई है॥ १॥ रहाउ॥ रक्षक प्रभु जो सहज सुख एवं आनन्द का भण्डार है, अन्तत मेरी रक्षा करेगा। मेरे दुख–दर्द एवं भय–भ्रम नाश हो गए हैं। प्रभु ने कृपा करके जन्म–मृत्यु के आवागमन से मेरी रक्षा की है॥ २॥ प्रभु स्वयं ही सब कुछ देखता, बोलता एवं सुनता है। हे मेरे मन ! उस प्रभु का सदैव ही सिमरन कर, जो सदैव तेरे साथ रहता है। संतों की कृपा से मेरे मन में प्रभु–ज्योति का प्रकाश हो गया है। गुणों का भण्डार एक ईश्वर सर्वत्र व्यापक हो रहा है॥ ३॥ जो व्यक्ति सदैव ही गोविन्द की महिमा–स्तुति करते रहते हैं, मुख से उसकी महिमा करते एवं सुनते रहते हैं, वे सभी पवित्र–पावन हो जाते हैं। हे नानक ! जिस पर ईश्वर कृपालु हो जाता है, उस प्राणी की नाम–साधना सम्पूर्ण हो जाती है॥ ४॥ २३॥ ६२॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ बंधन तोड़ि बोलावै रामु ॥ मन महि लागै साचु धिआनु ॥ मिटहि कलेस सुखी होइ रहीऐ ॥ ऐसा दाता सतिगुरु कहीऐ ॥ १ ॥ सो सुखदाता जि नामु जपावै ॥ करि किरपा तिसु संगि मिलावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसु होइ दइआलु तिसु आपि मिलावै ॥ सरब निधान गुरू ते पावै ॥ आपु तिआगि मिटै आवण जाणा ॥ साध कै संगि पारब्रहमु पछाणा ॥ २ ॥ जन ऊपरि प्रभ भए दइआल ॥ जन की टेक एक गोपाल ॥ एका लिव एको मनि भाउ ॥ सरब निधान जन कै हरि नाउ ॥ ३ ॥ पारब्रहम सिउ लागी प्रीति ॥ निरमल करणी साची रीति ॥ गुरि पूरै मेटिआ अंधिआरा ॥ नानक का प्रभु अपर अपारा ॥ ४ ॥ २४ ॥ ६३ ॥

सतिगुरु मोह–माया के बन्धन तोड़कर मनुष्य से राम का सिमरन करवाता है। उस व्यक्ति के मन में सत्य–परमेश्वर का ध्यान लग जाता है। उसके क्लेश मिट जाते हैं और वह मनुष्य सुखपूर्वक रहता है। ऐसे दाता को ही सतिगुरु कहा जाता है॥ १॥ केवल वही सुखदाता है, जो प्राणी से प्रभु के नाम का जाप करवाता है और कृपा करके उसके साथ मिला देता है॥ १॥ रहाउ॥ जिस व्यक्ति पर परमात्मा दयालु हो जाता है, उसको वह गुरु से मिला देता है। समस्त भण्डार सर्वनिधि वह गुरु द्वारा प्राप्त कर लेता है। जो व्यक्ति अपना अहंकार त्याग देता है, उसका जन्म–मरण का चक्र मिट जाता है। वह संतों की संगति करके पारब्रह्म को पहचान लेता है॥ २॥ अपने सेवक पर प्रभु दयालु हो गया है। उस सेवक का सहारा एक गोपाल ही है। वह सेवक एक परमेश्वर में ही अपनी सुरति लगाता है और उसके मन में एक प्रभु का ही प्रेम होता है। सेवक के लिए हरि का नाम ही तमाम भण्डार है॥ ३॥ जो पारब्रह्म से प्रेम करता है, उसके कर्म पवित्र और जीवन–आचरण सत्य है। पूर्ण गुरु ने अज्ञानता का अंधकार मिटा दिया है। नानक का प्रभु असीम एवं अनन्त है॥ ४॥ २४॥ ६३॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ जिसु मनि वसै तरै जनु सोइ ॥ जा कै करमि परापति होइ ॥ दूखु रोगु कछु भउ न बिआपै ॥ अंम्रित नामु रिदै हरि जापै ॥ १ ॥ पारब्रहमु परमेसुरु धिआईऐ ॥ गुर पूरे ते इह मति पाईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करण करावनहार दइआल ॥ जीअ जंत सगले प्रतिपाल ॥ अगम अगोचर सदा बेअंता ॥ सिमरि मना पूरे गुर मंता ॥ २ ॥ जा की सेवा सरब निधानु ॥ प्रभ की पूजा पाईऐ मानु ॥ जा की टहल न बिरथी जाइ ॥ सदा सदा हरि के गुण गाइ ॥ ३ ॥ करि किरपा प्रभ अंतरजामी ॥ सुख निधान हरि अलख सुआमी ॥ जीअ जंत तेरी सरणाई ॥ नानक नामु मिलै वडिआई ॥ ४ ॥ २५ ॥ ६४ ॥

जिस व्यक्ति के हृदय में ईश्वर निवास करता है, वह संसार सागर से पार हो जाता है। जिसकी किस्मत में लिखा होता है, वह ईश्वर को प्राप्त कर लेता है। दुख, रोग एवं भय उसको तनिक मात्र भी प्रभावित नहीं करते, जो अपने हृदय में ईश्वर के अमृत नाम का सिमरन करते रहते हैं॥ १॥ हमें पारब्रह्म–परमेश्वर का ही ध्यान करना चाहिए। पूर्ण गुरु से यह सूझ प्राप्त होती है॥ १॥ रहाउ॥ दयावान प्रभु स्वयं ही सब कुछ करने वाला एवं जीवों से कराने वाला है। वह सृष्टि के समस्त जीव–जन्तुओं की पालना करता है। प्रभु सदैव ही अगम्य, अगोचर एवं अनन्त है। हे मेरे मन! पूर्ण गुरु के उपदेश से प्रभु का सिमरन कर॥ २॥ प्रभु की सेवा करने से तमाम भण्डार प्राप्त हो जाते हैं। प्रभु की पूजा करने से मान–सम्मान प्राप्त होता है। प्रभु की सेवा व्यर्थ नहीं जाती, अतः नित्य ही उसका गुणानुवाद करते रहो॥ ३॥ अन्तर्यामी प्रभु मुझ पर कृपा कीजिए। जगत् का स्वामी, अलक्ष्य परमेश्वर सुखों का खजाना है। समस्त जीव–जन्तु तेरी शरण में हैं। हे नानक! मुझे प्रभु का नाम मिल जाए चूंकि उसका नाम ही मेरे लिए बड़ाई है॥ ४॥ २५॥ ६४॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ जीअ जुगति जा कै है हाथ ॥ सो सिमरहु अनाथ को नाथु ॥ प्रभ चिति आए सभु दुखु जाइ ॥ भै सभ बिनसहि हरि कै नाइ ॥ १ ॥ बिनु हरि भउ काहे का मानहि ॥ हरि बिसरत काहे सुखु जानहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनि धारे बहु धरणि अगास ॥ जा की जोति जीअ परगास ॥ जा की बखस न मेटै कोइ ॥ सिमरि सिमरि प्रभु निरभउ होइ ॥ २ ॥ आठ पहर सिमरहु प्रभ नामु ॥ अनिक तीरथ मजनु इसनानु ॥ पारब्रहम की सरणी पाहि ॥ कोटि कलंक खिन महि मिटि जाहि ॥ ३ ॥ बेमुहताजु पूरा पातिसाहु ॥ प्रभ सेवक साचा वेसाहु ॥ गुरि पूरै राखे दे हाथ ॥ नानक पारब्रहम समराथ ॥ ४ ॥ २६ ॥ ९५ ॥

जिस भगवान के वश में जीवों की जीवन–युक्ति है, उसका ही सिमरन करो। वह अनाथों का नाथ है। यदि मनुष्य भगवान को स्मरण करता रहे तो उसके समस्त दुख नष्ट हो जाते हैं। हरि के नाम सिमरन से समस्त भय नाश हो जाते हैं॥ १॥ हे प्राणी ! तू ईश्वर के अलावा किसी दूसरे का भय क्यों अनुभव करता है ? यदि तू प्रभु को विस्मृत कर देता है तो फिर तू अपने आप को सुख में क्यों समझते हो॥ १॥ रहाउ॥ जिसने अनेकों धरती–आकाश कायम किए हैं, जिसकी ज्योति का समस्त जीवों में प्रकाश है, जिसकी दया को कोई भी मिटा नहीं सकता। उस प्रभु का सिमरन करने से मनुष्य निर्भीक हो जाता है॥ २॥ दिन के आठ प्रहर प्रभु के नाम का सिमरन करते रहो। चूंकि प्रभु का नाम–सिमरन ही अनेकों तीर्थों का स्नान है। पारब्रह्म की शरण में आने से मनुष्य के करोड़ों ही कलंक एक क्षण में मिट जाते हैं॥ ३॥ वह बेपरवाह पूर्ण बादशाह है। ईश्वर के सेवक की उसमें सच्ची आस्था है। अपना हाथ देकर पूर्ण गुरु जी उसकी रक्षा करते हैं। हे नानक ! पारब्रह्म प्रभु सब कुछ करने में समर्थ है॥ ४॥ २६॥ ९५॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ गुर परसादि नामि मनु लागा ॥ जनम जनम का सोइआ जागा ॥ अंम्रित गुण उचरै प्रभ बाणी ॥ पूरे गुर की सुमति पराणी ॥ १ ॥ प्रभ सिमरत कुसल सभि पाए ॥ घरि बाहरि सुख सहज सबाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सोई पछाता जिनहि उपाइआ ॥ करि किरपा प्रभि आपि मिलाइआ ॥ बाह पकरि लीनो करि अपना ॥ हरि हरि कथा सदा जपु जपना ॥ २ ॥ मंत्रु तंत्रु अउखधु पुनहचारु ॥ हरि हरि नामु जीअ प्रान अधारु ॥ साचा धनु पाइओ हरि रंगि ॥ दुतरु तरे साध कै संगि ॥ ३ ॥ सुखि बैसहु संत सजन परवारु ॥ हरि धनु खटिओ जा का नाहि सुमारु ॥ जिसहि परापति तिसु गुरु देइ ॥ नानक बिरथा कोइ न हेइ ॥ ४ ॥ २७ ॥ ९६ ॥

गुरु की कृपा से मेरा मन प्रभु के नाम में लग गया है। यह मन जन्म–जन्मांतरों से अज्ञानता की निद्रा में सोया हुआ था परन्तु अब यह जाग गया है अर्थात् इसे ज्ञान हो गया है। वही प्राणी प्रभु की वाणी द्वारा उसके अमृतमयी गुणों का उच्चारण करता है, जिसे पूर्ण गुरु की सुमति प्राप्त हो जाती है॥ १॥ प्रभु का सिमरन करने से मुझे सर्वसुख प्राप्त हो गए हैं। घर के भीतर एवं बाहर मुझे सहज ही सर्वसुख प्राप्त हो गया है॥ १॥ रहाउ॥ मैंने उस प्रभु को पहचान लिया है, जिसने मुझे उत्पन्न किया है। प्रभु ने कृपा करके मुझे अपने साथ मिला लिया है। भुजा से पकड़कर प्रभु ने मुझे अपना बना लिया है। हरि की सुन्दर हरि–कथा एवं नाम का मैं हमेशा जाप जपता हूँ॥ २॥ मन्त्र–तन्त्र, औषधि, प्रायश्चित कर्म समूह प्रभु–परमेश्वर के नाम में विद्यमान है, जो मेरे मन एवं प्राणों का आधार है। मैंने प्रभु के प्रेम की सच्ची दौलत प्राप्त की है। साधु–संतों की संगत से ही विषम संसार सागर पार किया जा सकता है॥ ३॥ हे संतजनो ! सज्जनों के परिवार सहित सुख में विराजो। मैंने हरिनाम का धन कमाया है जो गणना से बाहर है। यह नाम–धन उसे ही मिलता है, जिसे गुरु जी देते हैं। हे नानक ! गुरु के द्वार से कोई भी व्यक्ति खाली हाथ नहीं जाता॥ ४॥ २७॥ ९६॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ हसत पुनीत होहि ततकाल ॥ बिनसि जाहि माइआ जंजाल ॥ रसना रमहु राम गुण नीत ॥ सुखु पावहु मेरे भाई मीत ॥ १ ॥ लिखु लेखणि कागदि मसवाणी ॥ राम नाम हरि अंम्रित बाणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इह कारजि तेरे जाहि बिकार ॥ सिमरत राम नाही जम मार ॥ धरम राइ के दूत न जोहै ॥ माइआ मगन न कछूऐ मोहै ॥ २ ॥ उधरहि आपि तरै संसारु ॥ राम नाम जपि एकंकारु ॥ आपि कमाउ अवरा उपदेस ॥ राम नाम हिरदै परवेस ॥ ३ ॥ जा कै माथै एहु निधानु ॥ सोई पुरखु जपै भगवानु ॥ आठ पहर हरि हरि गुण गाउ ॥ कहु नानक हउ तिसु बलि जाउ ॥ ४ ॥ २८ ॥ ९७ ॥

हे भाई! यदि जिह्वा के साथ सदैव ही राम का यशोगान किया जाए तो हाथ तत्काल ही पवित्र हो जाते हैं एवं माया के जंजाल नाश हो जाते हैं। हे मेरे भाई एवं मित्र! इस तरह तू सुख–शांति प्राप्त कर॥ १॥ अपनी कलम एवं दवात से तू कागज पर राम का नाम एवं हरि की अमृतमयी वाणी लिख॥ १॥ रहाउ॥ इस कर्म से तेरे पाप धुल जाएँगे। राम का भजन करने से यमदूत तुझे दण्ड नहीं देगा। धर्मराज के दूत तेरी ओर नहीं देख सकेंगे। मोहिनी का उन्माद तुझे तनिक मात्र भी मुग्ध नहीं करेगा॥ २॥ यदि तू राम का नाम सिमरन और एक ओंकार का स्मरण करता रहेगा तो तेरा स्वयं उद्धार हो जाएगा और तेरे द्वारा संसार का भी कल्याण हो जाएगा। नाम–स्मरण की स्वयं साधना कर और दूसरों को उपदेश दे। राम के नाम को अपने हृदय में विराजमान कर॥ ३॥ जिसके मस्तक पर उसकी किस्मत में नाम–भण्डार की उपलब्धि का लेख लिखा हुआ है, वही पुरुष भगवान की आराधना करता है। हे नानक! मैं उस व्यक्ति पर बलिहारी जाता हूँ, जो आठ प्रहर हरि– परमेश्वर की महिमा–स्तुति करता रहता है॥ ४॥ २८॥ ९७॥

रागु गउड़ी गुआरेरी महला ५ चउपदे दुपदे १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

जो पराइओ सोई अपना ॥ जो तजि छोडन तिसु सिउ मनु रचना ॥ १ ॥ कहहु गुसाई मिलीऐ केह ॥ जो बिबरजत तिस सिउ नेह ॥ १ ॥ रहाउ ॥ झूठु बात सा सचु करि जाती ॥ सति होवनु मनि लगै न राती ॥ २ ॥ बावै मारगु टेढा चलना ॥ सीधा छोडि अपूठा बुनना ॥ ३ ॥ दुहा सिरिआ का खसमु प्रभु सोई ॥ जिसु मेले नानक सो मुकता होई ॥ ४ ॥ २९ ॥ ९८ ॥

जो धन पराया हो जाना है, उसे मनुष्य अपना समझता है। जो कुछ त्याग जाना है, उससे उसका मन लीन रहता है॥ १॥ बताओ, गुसाई–प्रभु कैसे मिल सकता है? जो कुछ वर्जित किया हुआ है, उससे उसका स्नेह है॥ १॥ रहाउ॥ झूठी बात को वह सत्य करके जानता है। जो सदा सत्य है, क्षण भर भी हृदय उससे जुड़ा हुआ नहीं है॥ २॥ वह वाम मार्ग टेढा होकर चलता है। जीवन के सन्मार्ग को त्याग कर जीवन के ताने–बाने को उल्टा बुन रहा है॥ ३॥ लोक–परलोक दोनों कोनों का स्वामी प्रभु स्वयं ही है। हे नानक! जिसको परमात्मा अपने साथ मिला लेता है, वह मुक्ति प्राप्त कर लेता है॥ ४॥ २९॥ ९८॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ कलिजुग महि मिलि आए संजोग ॥ जिचरु आगिआ तिचरु भोगहि भोग ॥ १ ॥ जलै न पाईऐ राम सनेही ॥ किरति संजोगि सती उठि होई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ देखा देखी मनहठि जलि जाईऐ ॥ प्रिअ संगु न पावै बहु जोनि भवाईऐ ॥ २ ॥ सील संजमि प्रिअ आगिआ मानै ॥ तिसु नारी कउ दुखु न जमानै ॥ ३ ॥ कहु नानक जिनि प्रिउ परमेसरु करि जानिआ ॥ धंनु सती दरगह परवानिआ ॥ ४ ॥ ३० ॥ ९९ ॥

कलियुग में संयोगवश पति–पत्नी पूर्व संबंधों के कारण इहलोक में आकर मिलते है। जब तक परमात्मा का हुक्म होता है, तब तक वह भोग भोगते हैं॥ १॥ जो स्त्री अपने मृत पति के साथ जल कर मर जाती है, उसे प्रियतम राम नहीं मिलता। वह अपने किए हुए कर्मों के संयोग कारण उठकर अपने पति के साथ जल कर सती हो जाती है॥ १॥ रहाउ॥ देखादेखी और मन के हठ द्वारा जल जाती है। वह मरणोपरांत अपने मृत पति को भी नहीं मिलती और अनेक योनियों में भटकती रहती है॥ २॥ जिसके पास शील एवं संयम है और पति–परमेश्वर की आज्ञा मानती है, वह जीव–स्त्री यमदूतों से कष्ट नहीं प्राप्त करती॥ ३॥ हे नानक! जो जीव–स्त्री परमेश्वर को अपने पति के रूप में जानती है, वह जीव–स्त्री धन्य है और वह ईश्वर के दरबार में स्वीकार हो जाती है॥ ४॥ ३०॥ ६६॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ हम धनवंत भागठ सच नाइ ॥ हरि गुण गावह सहजि सुभाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पीऊ दादे का खोलि डिठा खजाना ॥ ता मेरै मनि भइआ निधाना ॥ १ ॥ रतन लाल जा का कछू न मोलु ॥ भरे भंडार अखूट अतोल ॥ २ ॥ खावहि खरचहि रलि मिलि भाई ॥ तोटि न आवै वधदो जाई ॥ ३ ॥ कहु नानक जिसु मसतकि लेखु लिखाइ ॥ सु एतु खजानै लइआ रलाइ ॥ ४ ॥ ३१ ॥ १०० ॥

प्रभु के सत्य–नाम से मैं धनवान एवं भाग्यशाली बन गया हूँ, मैं सहज–स्वभाव ही हरि–परमेश्वर की गुण–स्तुति करता रहता हूँ॥ १॥ रहाउ॥ जब मैंने अपने पिता और दादा का भण्डार अर्थात् गुरुओं की वाणी का भण्डार खोल कर देखा तो मेरे मन में आनंद का भण्डार भर गया॥ १॥ अक्षय एवं अतुल भण्डार प्रभु की गुणस्तुति के अमूल्य रत्न एवं जवाहरों से भरे हुए हैं॥ २॥ हे भाई! हम सभी मिलकर इन भण्डारों को सेवन और इस्तेमाल करते हैं। इस भण्डार में कोई कमी नहीं और प्रतिदिन वह अधिकाधिक बढ़ता जाता है॥ ३॥ हे नानक! जिस व्यक्ति के मस्तक पर विधाता ने ऐसी भाग्यरेखाएँ विद्यमान की हैं, वह इस (गुणस्तुति के) भण्डार में भागीदार बन जाता है॥ ४॥ ३१॥ १००॥

गउड़ी महला ५ ॥ डरि डरि मरते जब जानीऐ दूरि ॥ डरु चूका देखिआ भरपूरि ॥ १ ॥ सतिगुर अपुने कउ बलिहारै ॥ छोडि न जाई सरपर तारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दूखु रोगु सोगु बिसरै जब नामु ॥ सदा अनंदु जा हरि गुण गामु ॥ २ ॥ बुरा भला कोई न कहीजै ॥ छोडि मानु हरि चरन गहीजै ॥ ३ ॥ कहु नानक गुर मंत्रु चितारि ॥ सुखु पावहि साचै दरबारि ॥ ४ ॥ ३२ ॥ १०१ ॥

जब मैं प्रभु को दूर समझता था तो मैं डर–डर कर मरता रहता था। उस प्रभु को सर्वव्यापक देखकर मेरा भय दूर हो गया है॥ १॥ मैं अपने सतिगुरु पर बलिहारी जाता हूँ। मुझे छोड़कर वह कहीं नहीं जाता और निश्चित ही मुझे भवसागर से पार कर देगा॥ १॥ रहाउ॥ जब प्राणी ईश्वर के नाम को भुला देता है तो उसे दुख, रोग एवं संताप लग जाते हैं। लेकिन जब वह प्रभु का यश गायन करता है, उसको सदैव सुख प्राप्त हो जाता है॥ ३॥ हमें किसी को बुरा–भला नहीं कहना चाहिए और अपना अहंकार त्याग कर भगवान के चरण पकड़ लेने चाहिए॥ ३॥ नानक का कथन है कि (हे प्राणी!) गुरु के मन्त्र (उपदेश) को स्मरण करो। सत्य के दरबार में बड़ा सुख प्राप्त होगा॥ ४॥ ३२॥ १०१॥

गउड़ी महला ५ ॥ जा का मीतु साजनु है समीआ ॥ तिसु जन कउ कहु का की कमीआ ॥ १ ॥ जा की प्रीति गोबिंद सिउ लागी ॥ दूखु दरदु भ्रमु ता का भागी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कउ रसु हरि रसु है आइओ ॥ सो अन रस नाही लपटाइओ ॥ २ ॥ जा का कहिआ दरगह चलै ॥ सो किस कउ नदरि लै आवै तलै ॥ ३ ॥ जा का सभु किछु ता का होइ ॥ नानक ता कउ सदा सुखु होइ ॥ ४॥ ३३॥ १०२॥

हे भाई! जिसका मित्र एवं सज्जन सर्वव्यापक प्रभु है। बताओ–उस पुरुष को किस पदार्थ की कमी हो सकती है॥ १॥ जिसका प्रेम गोविन्द से हो जाता है, उसके दुख–दर्द एवं भ्रम भाग जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ जिस व्यक्ति को हरि–रस का आनंद प्राप्त हो जाता है, वह हरि–रस के सिवाय अन्य रसों से नहीं लिपटता॥ २॥ जिसका बोला हुआ शब्द प्रभु के दरबार में माना जाता है, वह किसकी चिन्ता करता है (अर्थात् उसे कोई आवश्यकता नहीं रहती)॥ ३॥ हे नानक! जिस ईश्वर ने सृष्टि की रचना की है, जीव–जन्तु अथवा समूचा जगत् उसका है, उस ईश्वर का भक्त जो मनुष्य बनता है, उसे सदैव सुख प्राप्त हो जाता है॥ ४॥ ३३॥ १०२॥

गउड़ी महला ५ ॥ जा कै दुखु सुखु सम करि जापै ॥ ता कउ काड़ा कहा बिआपै ॥ १ ॥ सहज अनंद हरि साधू माहि ॥ आगिआकारी हरि हरि राइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कै अचिंतु वसै मनि आइ ॥ ता कउ चिंता कतहूं नाहि ॥ २ ॥ जा कै बिनसिओ मन ते भरमा ॥ ता कै कछू नाही डरु जमा ॥ ३ ॥ जा कै हिरदै दीओ गुरि नामा ॥ कहु नानक ता कै सगल निधाना ॥ ४ ॥ ३४ ॥ १०३ ॥

जिस व्यक्ति को दुःख एवं सुख एक समान प्रतीत होते हैं, उसे कोई चिन्ता कैसे हो सकती है?॥१॥ जिस भगवान के साधू के मन में सहज आनंद उत्पन्न हो जाता है, वह सदैव प्रभु–परमेश्वर का आज्ञाकारी बना रहता है॥ १॥ रहाउ॥ जिसके हृदय में अचिंत परमशेवर आकर निवास कर जाता है, उसको चिन्ता कदापि नहीं लगती॥ २॥ जिसके हृदय से भ्रम निवृत्त हो गया है, उसको मृत्यु का लेशमात्र भी भय नहीं रहता॥ ३॥ जिसके हृदय में गुरदेव ने प्रभु–नाम प्रदान किया है। हे नानक! वह समस्त निधियों का स्वामी बन जाता है॥ ४॥ ३४॥ १०३॥

गउड़ी महला ५ ॥ अगम रूप का मन महि थाना ॥ गुर प्रसादि किनै विरलै जाना ॥ १ ॥ सहज कथा के अंम्रित कुंटा ॥ जिसहि परापति तिसु लै भुंचा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनहत बाणी थानु निराला ॥ ता की धुनि मोहे गोपाला ॥ २ ॥ तह सहज अखारे अनेक अनंता ॥ पारब्रहम के संगी संता ॥ ३ ॥ हरख अनंत सोग नही बीआ ॥ सो घरु गुरि नानक कउ दीआ ॥ ४ ॥ ३५ ॥ १०४ ॥

अगम्य स्वरूप परमेश्वर का मनुष्य के मन में निवास है। गुरु की कृपा से कोई विरला पुरुष ही इस तथ्य को समझता है॥ १॥ प्रभु की सहज कथा के अमृत–कुण्ड हैं। जिसकी इनको प्राप्ति हो जाती है, वह अमृत पान करता रहता है॥ १॥ रहाउ॥ बैकुण्ठ में एक अद्भुत स्थान है, जहाँ हर पल अनहद वाणी की मधुर ध्वनि गूंजती रहती है। इस मधुर ध्वनि को सुनकर गोपाल भी मुग्ध हो जाता है॥ २॥ वहाँ विभिन्न प्रकार के आनंददायक एवं अनन्त सुख के निवास स्थान हैं। वहाँ पारब्रह्म प्रभु के साथी, साधु निवास करते हैं॥ ३॥ वहाँ अनन्त हर्ष है और दुख अथवा द्वैत भाव नहीं। वह घर गुरु (ने) नानक को प्रदान किया है॥ ४॥ ३५॥ १०४॥

गउड़ी मः ५ ॥ कवन रूपु तेरा आराधउ ॥ कवन जोग काइआ ले साधउ ॥ १ ॥ कवन गुनु जो तुझु लै गावउ ॥ कवन बोल पारब्रहम रीझावउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कवन सु पूजा तेरी करउ ॥ कवन सु बिधि जितु भवजल तरउ ॥ २ ॥ कवन तपु जितु तपीआ होइ ॥ कवनु सु नामु हउमै मलु खोइ ॥ ३ ॥ गुण पूजा गिआन धिआन नानक सगल घाल ॥ जिस करि किरपा सतिगुरु मिलै दइआल ॥ ४ ॥ तिस ही गुनु तिन ही प्रभु जाता ॥ जिस की मानि लेइ सुखदाता ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ ३६ ॥ १०५ ॥

हे प्रभु ! तेरे तो अनन्त रूप हैं। इसलिए तेरा वह कौन–सा रूप है, जिसकी मैं आराधना करूँ। हे ईश्वर ! योग का वह कौन–सा साधन है जिससे मैं अपने तन को वश में करूँ॥ १॥ हे पारब्रह्म–प्रभु ! वह कौन–सी गुणस्तुति है, जिससे मैं तुझे प्रसन्न कर दूँ॥ १॥ रहाउ॥ हे नाथ ! वह कौन–सी पूजा–अर्चना है, जो मैं तेरी करूँ। हे दीनदयालु ! वह कौन–सी विधि है, जिससे मैं भयानक सागर से पार हो जाऊँ ?॥ २॥ हे प्रभु ! वह कौन–सी तपस्या है, जिससे मैं तपस्वी हो जाऊँ ? हे परमात्मा ! वह कौन–सा नाम है, जिस द्वारा अहंकार की मैल दूर हो जाती है॥ ३॥ हे नानक ! दयालु सतिगुरु अपनी कृपा करके जिस व्यक्ति को मिल जाते हैं, उसकी तमाम साधना, गुणानुवाद, पूजा, ज्ञान एवं ध्यान सफल हो जाते है॥ ४॥ केवल वही गुण (फल) प्राप्त करता है और केवल वही प्रभु को समझता है, जिसकी भक्ति सुखदाता स्वीकार कर लेता है॥ १॥ रहाउ दूजा॥ ३६॥ १०५॥

गउड़ी महला ५ ॥ आपन तनु नही जा को गरबा ॥ राज मिलख नही आपन दरबा ॥ १ ॥ आपन नही का कउ लपटाइओ ॥ आपन नामु सतिगुर ते पाइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुत बनिता आपन नही भाई ॥ इसट मीत आप बापु न माई ॥ २ ॥ सुइना रूपा फुनि नही दाम ॥ हैवर गैवर आपन नही काम ॥ ३ ॥ कहु नानक जो गुरि बखसि मिलाइआ ॥ तिस का सभु किछु जिस का हरि राइआ ॥ ४ ॥ ३७ ॥ १०६ ॥

हे प्राणी ! यह तन जिसका तुझे अभिमान है, यह तेरा अपना नहीं है। शासन, सम्पति, धन (सदा के लिए) तेरे नहीं है॥ १॥ हे प्राणी ! जब यह तेरे नहीं, तो फिर उनसे क्यों मोह करते हो ? केवल नाम ही तेरा है और वह तुझे सतिगुरु से प्राप्त होगा॥ १॥ रहाउ॥ हे प्राणी ! पुत्र, पत्नी एवं भाई तेरे नहीं। इष्ट मित्र, पिता एवं माता तेरे अपने नहीं हैं॥ २॥ सोना, चांदी एवं धन–दौलत भी तेरे नहीं हैं। कुशल घोड़े एवं सुन्दर हाथी तेरे किसी काम नहीं॥ ३॥ हे नानक ! जिसको गुरु जी क्षमा कर देते हैं, उसको वह प्रभु से मिला देते हैं। जिसका प्रभु–परमेश्वर है उसके पास सब कुछ है॥ ४॥ ॥ ३७॥ १०६॥

गउड़ी महला ५ ॥ गुर के चरण ऊपरि मेरे माथे ॥ ता ते दुख मेरे सगले लाथे ॥ १ ॥ सतिगुर अपुने कउ कुरबानी ॥ आतम चीनि परम रंग मानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरण रेणु गुर की मुखि लागी ॥ अहंबुधि तिनि सगल तिआगी ॥ २ ॥ गुर का सबदु लगो मनि मीठा ॥ पारब्रहमु ता ते मोहि डीठा ॥ ३ ॥ गुरु सुखदाता गुरु करतारु ॥ जीअ प्राण नानक गुरु आधारु ॥ ४ ॥ ३८ ॥ १०७ ॥

गुरु के चरण मेरे मस्तक पर विद्यमान हैं। इससे मेरे समस्त दुःख दूर हो गए हैं॥ १॥ मैं अपने सतिगुरु पर कुर्बान जाता हूँ। जिनके द्वारा मैंने अपने आत्मिक जीवन को समझ लिया है और सर्वोपरि आनन्द भोगता हूँ॥ १॥ रहाउ॥ गुरु की चरण–धूलि मेरे चेहरे पर लग गई है और उसने मेरी अहंबुद्धि सारी निवृत्त कर दी है॥ २॥ गुरु का शब्द मेरे मन को मीठा लग रहा है। पारब्रह्म प्रभु का इस कारण मैं दर्शन कर रहा हूँ॥ ३॥ गुरु ही सुखदाता और गुरु ही कर्त्तार हैं। हे नानक ! गुरु मेरी आत्मा एवं प्राणों का आधार है॥ ४॥ ३८॥ १०७॥

गउड़ी महला ५ ॥ रे मन मेरे तूं ता कउ आहि ॥ जा कै ऊणा कछहू नाहि ॥ १ ॥ हरि सा प्रीतमु करि मन मीत ॥ प्रान अधारु राखहु सद चीत ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रे मन मेरे तूं ता कउ सेवि ॥ आदि पुरख अपरंपर देव ॥ २ ॥ तिसु ऊपरि मन करि तूं आसा ॥ आदि जुगादि जा का भरवासा ॥ ३ ॥ जा की प्रीति सदा सुखु होइ ॥ नानकु गावै गुर मिलि सोइ ॥ ४ ॥ ३६ ॥ १०८ ॥

हे मेरे मन ! तू उस प्रभु के मिलन की लालसा कर, जिसके घर में किसी पदार्थ की कोई कमी नहीं है॥ १॥ हे मेरे मन ! तू उस प्रियतम हरि को अपना मित्र बना। तू सदैव ही प्रभु को अपने हृदय में बसा कर रख, जो तेरे प्राणों का आधार है॥ १॥ रहाउ॥ हे मेरे मन ! तू उसकी सेवा कर, जो आदिपुरुष एवं अपरंपार देव है॥ २॥ हे मेरे मन ! तू उस पर अपनी आशा रख, जो आदि एवं युगों के आरम्भ से प्राणियों का सहारा है॥ ३॥ जिसके प्रेम से हमेशा सुख–शांति प्राप्त होती है, हे नानक ! गुरु से मिलकर वह उसकी महिमा ही गायन करता है॥ ४॥ ३६॥ १०८॥

गउड़ी महला ५ ॥ मीतु करै सोई हम माना ॥ मीत के करतब कुसल समाना ॥ १ ॥ एका टेक मेरै मनि चीत ॥ जिसु किछु करणा सु हमरा मीत ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मीतु हमारा वेपरवाहा ॥ गुर किरपा ते मोहि असनाहा ॥ २ ॥ मीतु हमारा अंतरजामी ॥ समरथ पुरखु पारब्रहमु सुआमी ॥ ३ ॥ हम दासे तुम ठाकुर मेरे ॥ मानु महतु नानक प्रभु तेरे ॥ ४ ॥ ४० ॥ १०९ ॥

जो कुछ मेरा मित्र (प्रभु) करता है, उसको मैं सहर्ष स्वीकार करता हूँ। मेरे मित्र प्रभु के कार्य मुझे सुख के तुल्य प्रतीत होते हैं॥ १॥ मेरे मन एवं चित्त में एक ही प्रभु का सहारा है, जिसकी यह सब रचना है, वही मेरा मित्र–प्रभु है॥१॥ रहाउ॥ मेरा मित्र प्रभु बेपरवाह है। गुरु की दया से मेरा उससे प्रेम हो गया है॥ २॥ मेरा मित्र प्रभु अन्तर्यामी है। पारब्रह्म पुरुष रूप एवं सारे जगत् का स्वामी है और सब कुछ करने में समर्थ है॥ ३॥ हे प्रभु ! मैं तेरा दास हूँ और तू मेरा ठाकुर है। नानक का कथन है कि हे दयालु परमात्मा ! मुझे प्रतिष्ठा एवं मान–सम्मान तेरा ही दिया हुआ है॥४॥ ४०॥ १०९॥

गउड़ी महला ५ ॥ जा कउ तुम भए समरथ अंगा ॥ ता कउ कछु नाही कालंगा ॥ १ ॥ माधउ जा कउ है आस तुमारी ॥ ता कउ कछु नाही संसारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कै हिरदै ठाकुरु होइ ॥ ता कउ सहसा नाही कोइ ॥ २ ॥ जा कउ तुम दीनी प्रभ धीर ॥ ता कै निकटि न आवै पीर ॥ ३ ॥ कहु नानक मै सो गुरु पाइआ ॥ पारब्रहम पूरन देखाइआ ॥ ४ ॥ ४१ ॥ ११० ॥

हे सर्वशक्तिमान स्वामी ! तू जिस व्यक्ति की सहायता करता है, उसे कोई भी कलंक नहीं लग सकता॥ १॥ हे माधो ! जिसकी आशा तुझ में है, उसे संसार की तृष्णा लेशमात्र भी नहीं रहती॥ १॥ रहाउ॥ जिसके हृदय में जगत् का ठाकुर निवास करता है, उसको कोई भी दुःख–दर्द स्पर्श नहीं कर सकता॥ २॥ हे सर्वेश्वर प्रभु ! जिसे तू अपना धैर्य प्रदान करता है, उसके निकट कोई भी पीड़ा नहीं आती॥ ३॥ हे नानक ! मुझे वह गुरु प्राप्त हुआ है, जिसने मुझे पूर्ण पारब्रह्म प्रभु के दर्शन करवा दिए हैं॥ ४॥ ४१॥ ११०॥

गउड़ी महला ५ ॥ दुलभ देह पाई वडभागी ॥ नामु न जपहि ते आतम घाती ॥ १ ॥ मरि न जाही जिना बिसरत राम ॥ नाम बिहून जीवन कउन काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खात पीत खेलत हसत बिसथार ॥ कवन अरथ मिरतक सीगार ॥ २ ॥ जो न सुनहि जसु परमानंदा ॥ पसु पंखी त्रिगद जोनि ते मंदा ॥ ३ ॥ कहु नानक गुरि मंत्रु द्रिड़ाइआ ॥ केवल नामु रिद माहि समाइआ ॥ ४ ॥ ४२ ॥ १११ ॥

यह दुर्लभ मानव–देहि सौभाग्य से प्राप्त हुई है। जो ईश्वर का नाम–स्मरण नहीं करते, वे आत्मघाती हैं॥ १॥ जो व्यक्ति राम को विस्मृत करते हैं, वह मृत्यु को क्यों नहीं प्राप्त होते ? नाम के बिना यह जीवन किस काम का है॥ १॥ रहाउ॥ खाना–पीना, खेलना–हँसना इत्यादि साधन आडम्बर हैं, क्योंकि यह मृतक को आभूषणों से सज्जित करने के समान हैं॥ २॥ जो व्यक्ति परमानंद प्रभु का यश नहीं सुनता, वह पशु–पक्षियों, रेंगने वाले जीवों की योनियों से भी बुरा है॥ ३॥ हे नानक ! गुरु ने मेरे भीतर नाम मंत्र सुदृढ़ कर दिया है। केवल नाम ही मेरे हृदय में लीन रहता है॥ ४॥ ४२॥ १११॥

गउड़ी महला ५ ॥ का की माई का को बाप ॥ नाम धारीक झूठे सभि साक ॥ १ ॥ काहे कउ मूरख भखलाइआ ॥ मिलि संजोगि हुकमि तूं आइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एका माटी एका जोति ॥ एको पवनु कहा कउनु रोति ॥ २ ॥ मेरा मेरा करि बिललाही ॥ मरणहारु इहु जीअरा नाही ॥ ३ ॥ कहु नानक गुरि खोले कपाट ॥ मुकतु भए बिनसे भ्रम थाट ॥ ४ ॥ ४३ ॥ ११२ ॥

न कोई किसी की माता है और न कोई किसी का पिता है। ये सारे रिश्ते नाममात्र एवं झूठे हैं॥ १॥ हे मूर्ख ! तू किसके लिए दुहाई दे रहा है ? भगवान के हुक्म एवं संयोगवश तू इस दुनिया में आया है॥ १॥ रहाउ॥ समस्त प्राणियों में एक ही मिट्टी है और एक ही ब्रह्म-ज्योति है। सब में एक ही प्राण हैं, जिसके द्वारा जीव श्वास लेते एवं जीवित रहते हैं। अतः किसी के दुनिया से चले जाने से हम क्यों विलाप करें ?॥ २॥ लोग 'मेरा मेरा' कहकर विलाप करते हैं। परन्तु यह आत्मा नाशवंत नहीं॥ ३॥ हे नानक ! गुरु ने जिनके कपाट खोल दिए हैं, वे मुक्त हो गए हैं और उनका भ्रम का प्रसार नाश हो गया है॥ ४॥ ४३॥ ११२॥

गउड़ी महला ५ ॥ वडे वडे जो दीसहि लोग ॥ तिन कउ बिआपै चिंता रोग ॥ १ ॥ कउन वडा माइआ वडिआई ॥ सो वडा जिनि राम लिव लाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भूमीआ भूमि ऊपरि नित लुझै ॥ छोडि चलै त्रिसना नही बुझै ॥ २ ॥ कहु नानक इहु ततु बीचारा ॥ बिनु हरि भजन नाही छुटकारा ॥ ३ ॥ ४४ ॥ ११३ ॥

जितने भी बड़े-बड़े (धनवान) लोग दिखाई देते हैं, उनको चिन्ता का रोग लगा रहता है॥ १॥ माया की प्रशंसा के कारण कोई भी मनुष्य बड़ा नहीं बनता ? वही महान है जिसने राम से वृत्ति लगाई है॥ १॥ रहाउ॥ भूमि का स्वामी मनुष्य भूमि के लिए दूसरों से लड़ाई-झगड़ा करता है। लेकिन जिसकी खातिर वह लड़ता है, वह सारी भूमि यहीं छोड़कर चला जाता है परन्तु उसकी तृष्णा नहीं मिटती॥ २॥ हे नानक ! वास्तविक बात जिस पर मैंने विचार किया है, वह यह है कि भगवान के भजन के बिना किसी को भी मुक्ति नहीं मिलती॥ ३॥ ४४॥ ११३॥

गउड़ी महला ५ ॥ पूरा मारगु पूरा इसनानु ॥ सभु किछु पूरा हिरदै नामु ॥ १ ॥ पूरी रही जा पूरै राखी ॥ पारब्रहम की सरणि जन ताकी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूरा सुखु पूरा संतोखु ॥ पूरा तपु पूरन राजु जोगु ॥ २ ॥ हरि कै मारगि पतित पुनीत ॥ पूरी सोभा पूरा लोकीक ॥ ३ ॥ करणहारु सद वसै हदूरा ॥ कहु नानक मेरा सतिगुरु पूरा ॥ ४ ॥ ४५ ॥ ११४ ॥

जिस व्यक्ति के हृदय में नाम का निवास हो जाता है, उसका सब कुछ पूर्ण हो जाता है। प्रभु लब्धि हेतु नाम-मार्ग पूर्ण सही है और नाम-सिमरन ही पूर्ण तीर्थ-स्नान है॥ १॥ जब सेवक ने अपने स्वामी पारब्रह्म की शरण ली तो उस पूर्ण ब्रह्म ने उसकी पूर्ण प्रतिष्ठा रख ली॥ १॥ रहाउ॥ सेवक को पूर्ण सुख एवं पूर्ण संतोष प्राप्त हो गया है। नाम-सिमरन ही पूर्ण तपस्या और पूर्ण राज योग है॥२॥ भगवान के मार्ग पर चलने वाला पापी भी पवित्र हो जाता है और वह लोक-परलोक में पूर्ण शोभा प्राप्त करता है तथा लोगों से उसका व्यवहार भी अच्छा हो जाता है॥३॥ सृजनहार प्रभु सदैव उसके निकट वास करता है। हे नानक ! मेरा सतिगुरु पूर्ण है॥ ४॥ ४५॥ ११४॥

गउड़ी महला ५ ॥ संत की धूरि मिटे अघ कोट ॥ संत प्रसादि जनम मरण ते छोट ॥ १ ॥ संत का दरसु पूरन इसनानु ॥ संत क्रिपा ते जपीऐ नामु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संत कै संगि मिटिआ अहंकारु ॥ द्रिसटि आवै सभु एकंकारु ॥ २ ॥ संत सुप्रसंन आए वसि पंचा ॥ अंम्रितु नामु रिदै लै संचा ॥ ३ ॥ कहु नानक जा का पूरा करम ॥ तिसु भेटे साधू के चरन ॥ ४ ॥ ४६ ॥ ११५ ॥

संतों की चरण–धूलि से करोड़ों ही पाप मिट जाते हैं। संतों की कृपा से जन्म–मरण से मुक्ति हो जाती है॥ १॥ संतों के दर्शन ही पूर्ण तीर्थ स्नान है। संतों की कृपा से हरिनाम का जाप किया जाता है॥ १॥ रहाउ॥ संतों की संगति से मनुष्य का अहंत्व मिट जाता है और फिर सर्वत्र एक ईश्वर ही दृष्टिगोचर होता है॥ २॥ संतों की सुप्रसन्नता से पाँच विकार–(काम, क्रोध, लोभ, मोह–अहंकार) वश में आ जाते हैं। मनुष्य अपने हृदय को अमृत नाम से संचित कर लेता है॥ ३॥ हे नानक ! जिसकी किस्मत पूर्ण है, वही संतों के चरण स्पर्श करता है॥ ४॥ ४६॥ ११५॥

गउड़ी महला ५ ॥ हरि गुण जपत कमलु परगासै ॥ हरि सिमरत त्रास सभ नासै ॥ १ ॥ सा मति पूरी जितु हरि गुण गावै ॥ वडै भागि साधू संगु पावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधसंगि पाईऐ निधि नामा ॥ साधसंगि पूरन सभि कामा ॥ २ ॥ हरि की भगति जनमु परवाणु ॥ गुर किरपा ते नामु वखाणु ॥ ३ ॥ कहु नानक सो जनु परवानु ॥ जा कै रिदै वसै भगवानु ॥ ४ ॥ ४७ ॥ ११६ ॥

भगवान की महिमा–स्तुति करने से हृदय–कमल प्रफुल्लित हो जाता है। भगवान का सिमरन करने से समस्त भय नाश हो जाते हैं॥ १॥ वही मति पूर्ण है, जिससे भगवान का यश गायन किया जाता है। संतों की संगति किस्मत से ही मिलती है॥ १॥ रहाउ॥ संतों की संगति करने से नाम–निधि प्राप्त हो जाती है। संतों की संगति करने से समस्त कार्य सफल हो जाते हैं॥ २॥ भगवान की भक्ति करने से मनुष्य का जन्म सफल हो जाता है। गुरु की कृपा से प्रभु का नाम सिमरन होता है॥ ३॥ हे नानक ! जिस मनुष्य के हृदय में भगवान का निवास हो जाता है, वह सत्य के दरबार में स्वीकार हो जाता है॥ ४॥ ४७॥ ११६॥

गउड़ी महला ५ ॥ एकसु सिउ जा का मनु राता ॥ विसरी तिसै पराई ताता ॥ १ ॥ बिनु गोबिंद न दीसै कोई ॥ करन करावन करता सोई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनहि कमावै मुखि हरि हरि बोलै ॥ सो जनु इत उत कतहि न डोलै ॥ २ ॥ जा कै हरि धनु सो सच साहु ॥ गुरि पूरै करि दीनो विसाहु ॥ ३ ॥ जीवन पुरखु मिलिआ हरि राइआ ॥ कहु नानक परम पदु पाइआ ॥ ४ ॥ ४८ ॥ ११७ ॥

जिस व्यक्ति का मन एक ईश्वर के प्रेम में मग्न हो जाता है, वह दूसरों से ईर्ष्या–द्वेष करना भूल जाता है॥ १॥ उसे गोविन्द के अलावा दूसरा कोई नहीं दिखाई देता। उसे ज्ञान हो जाता है कि जगत् का कर्त्ता स्वयं ही सबकुछ करने वाला एवं जीवों से कराने वाला है॥ १॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति एकाग्रचित होकर नाम–सिमरन की साधना करता है और अपने मुख से हरि–परमेश्वर का नाम बोलता रहता है, वह लोक–परलोक में कहीं भी डगमगाता नहीं॥ २॥ जिस मनुष्य के पास हरि नाम रूपी धन है, वही सच्चा साहूकार है। पूर्ण गुरु ने उसकी प्रतिष्ठा बना दी है॥ ३॥ उसे जीवन पुरुष हरि–परमेश्वर मिल जाता है। हे नानक ! इस तरह वह परम पद प्राप्त कर लेता है॥ ४॥ ४८॥ ११७॥

गउड़ी महला ५ ॥ नामु भगत कै प्रान अधारु ॥ नामो धनु नामो बिउहारु ॥ १ ॥ नाम वडाई जनु सोभा पाए ॥ करि किरपा जिसु आपि दिवाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु भगत कै सुख असथानु ॥ नाम रतु सो भगतु परवानु ॥ २ ॥ हरि का नामु जन कउ धारै ॥ सासि सासि जनु नामु समारै ॥ ३ ॥ कहु नानक जिसु पूरा भागु ॥ नाम संगि ता का मनु लागु ॥ ४ ॥ ४९ ॥ ११८ ॥

प्रभु का नाम ही उसके भक्त के प्राणों का आधार है। नाम ही उसका धन है, नाम ही उसका व्यापार है॥ १॥ नाम द्वारा भक्त प्रशंसा एवं शोभा प्राप्त करता है। लेकिन यह नाम उसे ही प्राप्त होता है, जिसको प्रभु स्वयं कृपा करके दिलवाता है॥ १॥ रहाउ॥ नाम भक्त की सुख–शांति का निवास है।

जो भक्त नाम में मग्न रहता है, वह स्वीकार हो जाता है॥ २॥ हरि का नाम उसके सेवक को आधार प्रदान करता है। श्वास-श्वास से ईश्वर का सेवक नाम-सिमरन करता रहता है॥ ३॥ हे नानक! जिस व्यक्ति की किस्मत अच्छी होती है, उसका ही मन नाम से लगा रहता है॥४॥४६॥११८॥

गउड़ी महला ५ ॥ संत प्रसादि हरि नामु धिआइआ ॥ तब ते धावतु मनु त्रिपताइआ ॥ १ ॥ सुख बिस्रामु पाइआ गुण गाइ ॥ स्रमु मिटिआ मेरी हती बलाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरन कमल अराधि भगवंता ॥ हरि सिमरन ते मिटी मेरी चिंता ॥ २ ॥ सभ तजि अनाथु एक सरणि आइओ ॥ ऊच असथानु तब सहजे पाइओ ॥ ३ ॥ दूखु दरदु भरमु भउ नसिआ ॥ करणहारु नानक मनि बसिआ ॥ ४ ॥ ५० ॥ ११९ ॥

संत की कृपा से जब से मैंने भगवान के नाम का ध्यान किया है, तब से मेरा विकारों की ओर भटकता हुआ मन तृप्त हो गया है॥ १॥ प्रभु की गुणस्तुति करने से मुझे सुख का विश्राम प्राप्त हो गया है। मेरी पीड़ा दूर हो गई है और मेरे कुकर्मों का दैत्य नष्ट हो गया है॥ १॥ रहाउ॥ हे भाई! भगवान के चरण-कमलों का चिन्तन कर। हरि का सिमरन करने से मेरी चिन्ता मिट गई है॥ २॥ मैं अनाथ सब सहारों को त्याग चुका हूँ और एक ईश्वर की शरणागत हूँ। तब से मैंने सर्वोच्च स्थान को सहज ही प्राप्त कर लिया है॥ ३॥ मेरे दुःख-दर्द, भ्रम-भय नाश हो गए हैं। हे नानक! सृजनहार प्रभु ने हृदय में निवास कर लिया है॥ ४॥ ५०॥ ११९॥

गउड़ी महला ५ ॥ कर करि टहल रसना गुण गावउ ॥ चरन ठाकुर कै मारगि धावउ ॥ १ ॥ भलो समो सिमरन की बरीआ ॥ सिमरत नामु भै पारि उतरीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नेत्र संतन का दरसनु पेखु ॥ प्रभ अविनासी मन महि लेखु ॥ २ ॥ सुणि कीरतनु साध पहि जाइ ॥ जनम मरण की त्रास मिटाइ ॥ ३ ॥ चरण कमल ठाकुर उरि धारि ॥ दुलभ देह नानक निसतारि ॥ ४ ॥ ५१ ॥ १२० ॥

मैं अपने हाथों से प्रभु की सेवा करता हूँ और मुख से उसकी गुणस्तुति करता हूँ। चरणों से मैं ठाकुर के मार्ग का अनुसरण करता हूँ॥ १॥ जीवन का वह समय बड़ा शुभ है, जिसमें भगवान का सिमरन करने का अवसर मिलता है। भगवान का नाम-सिमरन करने से भयानक सागर से पार हुआ जा सकता है॥ १॥ रहाउ॥ हे भाई! अपने नेत्रों से संतों के दर्शन कर। अविनाशी प्रभु को अपने हृदय में धारण कर ले॥ २॥ संतों के पास जाकर ईश्वर का भजन सुन और इस प्रकार तेरा जन्म-मरण का भय दूर हो जाएगा॥ ३॥ हे भाई! ठाकुर जी के सुन्दर चरणों को अपने हृदय में बसाकर रख। हे नानक! इस तरह अपने अमूल्य मानव शरीर का कल्याण कर ले॥ ४॥ ५१॥ १२०॥

गउड़ी महला ५ ॥ जा कउ अपनी किरपा धारै ॥ सो जनु रसना नामु उचारै ॥ १ ॥ हरि बिसरत सहसा दुखु बिआपै ॥ सिमरत नामु भरमु भउ भागै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि कीरतनु सुणै हरि कीरतनु गावै ॥ तिसु जन दूखु निकटि नही आवै ॥ २ ॥ हरि की टहल करत जनु सोहै ॥ ता कउ माइआ अगनि न पोहै ॥ ३ ॥ मनि तनि मुखि हरि नामु दइआल ॥ नानक तजीअले अवरि जंजाल ॥ ४ ॥ ५२ ॥ १२१ ॥

जिस व्यक्ति पर ईश्वर अपनी कृपा धारण करता है, वह अपनी रसना से भगवान के नाम का जाप करता है॥ १॥ हरि को विस्मृत करके सन्देह एवं दुख प्राणी को लग जाते हैं। लेकिन नाम-सिमरन करने से भ्रम एवं भय भाग जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति ईश्वर का भजन सुनता है और ईश्वर का भजन गाता है, उस व्यक्ति के निकट कोई भी मुसीबत नहीं आती॥ २॥ ईश्वर का

सेवक उसकी सेवा करता हुआ सुन्दर लगता है। उसे माया की अग्नि स्पर्श नहीं करती॥ ३॥ हे नानक! दया के घर ईश्वर का नाम जिस व्यक्ति के ह्रदय एवं मुख में वास कर जाता है, उस व्यक्ति ने दूसरे समस्त जंजाल त्याग दिए हैं॥ ४॥ ५२॥ १२१॥

गउड़ी महला ५ ॥ छाडि सिआनप बहु चतुराई ॥ गुर पूरे की टेक टिकाई ॥ १ ॥ दुख बिनसे सुख हरि गुण गाइ ॥ गुरु पूरा भेटिआ लिव लाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि का नामु दीओ गुरि मंतु ॥ मिटे विसूरे उतरी चिंत ॥ २ ॥ अनद भए गुर मिलत क्रिपाल ॥ करि किरपा काटे जम जाल ॥ ३ ॥ कहु नानक गुरु पूरा पाइआ ॥ ता ते बहुरि न बिआपै माइआ ॥ ४ ॥ ५३ ॥ १२२ ॥

हे भाई! अपनी बुद्धिमता एवं अधिक चतुरता को त्याग कर पूर्ण गुरु की शरण ले॥ १॥ जिस व्यक्ति की पूर्ण गुरु से भेंट हो जाती है, वह गुरु की कृपा से भगवान में ही सुरति लगाता है। ऐसा व्यक्ति भगवान का गुणानुवाद करता हुआ सुखी हो जाता है और उसके तमाम दुख नाश हो जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ गुरु ने मुझे ईश्वर के नाम का मंत्र प्रदान किया है, जिससे मेरी चिन्ताएँ मिट गई हैं और व्याकुलता दूर हो गई है॥ २॥ कृपा के घर गुरु को मिलने से आनन्द प्राप्त हो गया है। अपनी कृपा धारण करके गुरु ने यमदूतों का फँदा काट दिया है॥ ३॥ हे नानक! मैंने पूर्ण गुरु को पा लिया है, इसलिए माया मुझे पुनः पीड़ित नहीं करेगी॥ ४॥ ५३॥ १२२॥

गउड़ी महला ५ ॥ राखि लीआ गुरि पूरै आपि ॥ मनमुख कउ लागो संतापु ॥ १ ॥ गुरू गुरू जपि मीत हमारे ॥ मुख ऊजल होवहि दरबारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर के चरण हिरदै वसाइ ॥ दुख दुसमन तेरी हतै बलाइ ॥ २ ॥ गुर का सबदु तेरै संगि सहाई ॥ दइआल भए सगले जीअ भाई ॥ ३ ॥ गुरि पूरै जब किरपा करी ॥ भनति नानक मेरी पूरी परी ॥ ४ ॥ ५४ ॥ १२३ ॥

पूर्ण गुरु ने स्वयं मेरी रक्षा की है। लेकिन स्वेच्छाचारी पर मुसीबतों का पहाड़ उमड़ पड़ा है॥ १॥ हे मेरे मित्र! गुरु को हमेशा स्मरण कर। प्रभु के दरबार में तेरा मुख उज्ज्वल होगा॥ १॥ रहाउ॥ हे मित्र! तू गुरु के चरण अपने ह्रदय में बसा, तेरा दुःख, शत्रु एवं आपदा नष्ट हो जाएँगे॥ २॥ गुरु का शब्द ही तेरा साथी एवं सहायक है। हे भाई! सभी लोग तुझ पर दयालु होंगे॥ ३॥ हे नानक! जब पूर्ण गुरु ने अपनी कृपा—दृष्टि की, तो मेरा जीवन परिपूर्ण हो गया॥ ४॥ ५४॥ १२३॥

गउड़ी महला ५ ॥ अनिक रसा खाए जैसे ढोर ॥ मोह की जेवरी बाधिओ चोर ॥ १ ॥ मिरतक देह साधसंग बिहूना ॥ आवत जात जोनी दुख खीना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनिक बसत्र सुंदर पहिराइआ ॥ जिउ डरना खेत माहि डराइआ ॥ २ ॥ सगल सरीर आवत सभ काम ॥ निहफल मानुखु जपै नही नाम ॥ ३ ॥ कहु नानक जा कउ भए दइआला ॥ साधसंगि मिलि भजहि गोपाला ॥ ४ ॥ ५५ ॥ १२४ ॥

मनुष्य अधिकतर स्वादिष्ट पदार्थ पशु की भाँति सेवन करता है और सांसारिक मोह की रस्सी से वह चोर की भाँति जकड़ा रहता है॥ १॥ हे भाई! जो व्यक्ति संतों की संगति से विहीन रहता है, उसका शरीर मृतक है। ऐसा व्यक्ति योनियों में फँसकर आवागमन करता रहता है और दुख से नष्ट हो जाता है॥ १॥ रहाउ॥ मनुष्य मोहवश विभिन्न प्रकार की सुन्दर पोशाकें धारण करता है, परन्तु निर्धनों के लिए वह ऐसा होता है जैसे फसल में पशुओं को डराने के लिए बनावटी रक्षक खड़ा किया होता है॥ २॥ दूसरे पशुओं इत्यादि के शरीर काम आ जाते हैं। लेकिन जो व्यक्ति भगवान के नाम का जाप नहीं करता, उसका दुनिया में आगमन निष्फल हो जाता है॥ ३॥ हे नानक! भगवान जिस व्यक्ति पर दयालु हो जाता है, वह संतों की संगति में शामिल होकर गोपाल का भजन करता रहता है॥ ४॥ ५५॥ १२४॥

गउड़ी महला ५ ॥ कलि कलेस गुर सबदि निवारे ॥ आवण जाण रहे सुख सारे ॥ १ ॥ भै बिनसे निरभउ हरि धिआइआ ॥ साधसंगि हरि के गुण गाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरन कवल रिद अंतरि धारे ॥ अगनि सागर गुरि पारि उतारे ॥ २ ॥ बूडत जात पूरै गुरि काढे ॥ जनम जनम के टूटे गाढे ॥ ३ ॥ कहु नानक तिसु गुर बलिहारी ॥ जिसु भेटत गति भई हमारी ॥ ४ ॥ ५६ ॥ १२५ ॥

गुरु की वाणी मानसिक क्लेश एवं कष्टों को दूर कर देती है। गुरु की वाणी के फलस्वरूप जन्म–मरण का चक्र मिट जाता है और सर्व सुख प्राप्त हो जाते हैं॥ १॥ निडर ईश्वर का ध्यान करने से मेरा भय दूर हो गया है। संतों की संगति में मैं ईश्वर की गुणस्तुति करता रहता हूँ॥ १॥ रहाउ॥ ईश्वर के चरण कमल मैंने अपने हृदय में टिका लिए हैं। गुरु ने मुझे तृष्णा के अग्नि सागर से पार कर दिया है॥ २॥ मैं भवसागर में डूब रहा था परन्तु पूर्ण गुरु ने मेरी रक्षा की है। गुरु ने मुझे प्रभु से मिला दिया है, जिससे मैं जन्म–जन्मांतरों से बिछुड़ा हुआ था॥ ३॥ हे नानक! मैं उस गुरु पर बलिहारी जाता हूँ, जिनको मिलने से मेरी मुक्ति हो गई है॥ ४॥ ५६॥ १२५॥

गउड़ी महला ५ ॥ साधसंगि ता की सरनी परहु ॥ मनु तनु अपना आगै धरहु ॥ १ ॥ अंम्रित नामु पीवहु मेरे भाई ॥ सिमरि सिमरि सभ तपति बुझाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तजि अभिमानु जनम मरणु निवारहु ॥ हरि के दास के चरण नमसकारहु ॥ २ ॥ सासि सासि प्रभु मनहि समाले ॥ सो धनु संचहु जो चालै नाले ॥ ३ ॥ तिसहि परापति जिसु मसतकि भागु ॥ कहु नानक ता की चरणी लागु ॥ ४ ॥ ५७ ॥ १२६ ॥

हे भाई! संतों की सभा में उसकी शरण में पड़ो। अपना मन एवं तन ईश्वर के समक्ष समर्पित कर दो॥ १॥ हे मेरे भाई! अमृत रूपी नाम पान करो। प्रभु की स्तुति एवं आराधना करने से मोह–माया की अग्नि पूर्णतया बुझ जाती है॥ १॥ रहाउ॥ अपना अभिमान त्याग कर अपने जन्म–मरण को समाप्त कर लो। ईश्वर के सेवक के चरणों पर प्रणाम करो॥ २॥ श्वास–श्वास से अपने मन में प्रभु स्मरण कर लो। हे भाई! वह नाम धन संचित करो जो तेरे साथ परलोक में जाएगा॥ ३॥ केवल वही व्यक्ति नाम धन को पाता है, जिसके मस्तक पर विधाता द्वारा भाग्यरेखाएँ विद्यमान होती हैं। हे नानक! तू उसके चरणों पर झुक॥ ४॥ ५७॥ १२६॥

गउड़ी महला ५ ॥ सूके हरे कीए खिन माहे ॥ अंम्रित द्रिसटि संचि जीवाए ॥ १ ॥ काटे कसट पूरे गुरदेव ॥ सेवक कउ दीनी अपुनी सेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मिटि गई चिंत पुनी मन आसा ॥ करी दइआ सतिगुरि गुणतासा ॥ २ ॥ दुख नाठे सुख आइ समाए ॥ ढील न परी जा गुरि फुरमाए ॥ ३ ॥ इछ पुनी पूरे गुर मिले ॥ नानक ते जन सुफल फले ॥ ४ ॥ ५८ ॥ १२७ ॥

नीरस (सूखों) को गुरदेव क्षण में ही हरा–भरा कर देता है। उसकी अमृत रूपी दृष्टि उनको सींच कर पुनजीर्वित कर देती है॥ १॥ पूर्ण गुरदेव ने मेरे कष्ट दूर कर दिए हैं। अपने सेवक को वह अपनी सेवा प्रदान करता है॥ १॥ रहाउ॥ जब से गुणों के भण्डार, सतिगुरु ने अपनी दया धारण की है, मेरी चिन्ता मिट गई है और मनोकामनाएँ पूर्ण हो गई हैं॥ २॥ जब गुरु जी आज्ञा करते हैं, दुख दौड़ जाते हैं और सुख आकर उसका स्थान ले लेता है। इसमें कोई देरी नहीं लगती॥ ३॥ हे नानक! जिन पुरुषों को पूर्ण गुरु जी मिल जाते हैं, उनकी तमाम इच्छाएँ पूरी हो जाती हैं और वे श्रेष्ठ फलों से प्रफुल्लित हो जाते हैं॥ ४॥ ५८॥ १२७॥

गउड़ी महला ५ ॥ ताप गए पाई प्रभि सांति ॥ सीतल भए कीनी प्रभ दाति ॥ १ ॥ प्रभ किरपा ते भए सुहेले ॥ जनम जनम के बिछुरे मेले ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिमरत सिमरत प्रभ का नाउ ॥ सगल रोग का बिनसिआ थाउ ॥ २ ॥ सहजि सुभाइ बोलै हरि बाणी ॥ आठ पहर प्रभ सिमरहु प्राणी ॥ ३ ॥ दूखु दरदु जमु नेड़ि न आवै ॥ कहु नानक जो हरि गुन गावै ॥ ४ ॥ ५६ ॥ १२८ ॥

जिन्हें प्रभु ने नाम की देन प्रदान की है, वे सभी शीतल हो गए हैं। प्रभु ने उन्हें ऐसी सुख–शांति प्रदान की है कि उनका ताप दूर हो गया है॥ १॥ प्रभु की कृपा से हम सुखी हो गए हैं। जन्म–जन्मांतरों के बिछुड़े हुओं को ईश्वर ने मिला दिया है॥ १॥ रहाउ॥ ईश्वर के नाम की स्तुति–आराधना करने से समस्त रोगों का स्थान नष्ट हो गया है॥ २॥ वह सहज स्वभाव हरि की वाणी बोलता रहता है। हे प्राणी! दिन के आठ प्रहर ही प्रभु का सिमरन करो। हे नानक! जो व्यक्ति ईश्वर का यशोगान करता है, दुख–दर्द एवं यमदूत उसके निकट नहीं आते॥ ४॥ ५६॥ १२८॥

गउड़ी महला ५ ॥ भले दिनस भले संजोग ॥ जितु भेटे पारब्रहम निरजोग ॥ १ ॥ ओह बेला कउ हउ बलि जाउ ॥ जितु मेरा मनु जपै हरि नाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सफल मूरतु सफल ओह घरी ॥ जितु रसना उचरै हरि हरी ॥ २ ॥ सफलु ओहु माथा संत नमसकारसि ॥ चरण पुनीत चलहि हरि मारगि ॥ ३ ॥ कहु नानक भला मेरा करम ॥ जितु भेटे साधू के चरन ॥ ४ ॥ ६० ॥ १२६ ॥

वह दिन बड़ा शुभ है और वह संयोग भी भला है, जब मुझे निर्लिप्त पारब्रह्म मिला॥ १॥ उस समय पर मैं बलिहारी जाता हूँ, जब मेरा मन ईश्वर के नाम की आराधना करता है॥ १॥ रहाउ॥ वह मुहूर्त सफल है और वह घड़ी भी सफल है, जब मेरी रसना हरि–प्रभु का नाम उच्चरित करती है॥ २॥ वह मस्तक भाग्यवान है जो संतों के समक्ष नतमस्तक होता है। वह चरण पवित्र हैं जो प्रभु–मार्ग का अनुसरण करते हैं॥ ३॥ हे नानक! मेरा भाग्य भला है, जिसके फलस्वरूप मैं संतों के चरणाश्रय लगा॥ ४॥ ६०॥ १२६॥

गउड़ी महला ५ ॥ गुर का सबदु राखु मन माहि ॥ नामु सिमरि चिंता सभ जाहि ॥ १ ॥ बिनु भगवंत नाही अन कोइ ॥ मारै राखै एको सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर के चरण रिदै उरि धारि ॥ अगनि सागरु जपि उतरहि पारि ॥ २ ॥ गुर मूरति सिउ लाइ धिआनु ॥ ईहा ऊहा पावहि मानु ॥ ३ ॥ सगल तिआगि गुर सरणी आइआ ॥ मिटे अंदेसे नानक सुखु पाइआ ॥ ४ ॥ ६१ ॥ १३० ॥

गुरु का शब्द अपने मन में धारण करो। प्रभु का नाम–सिमरन करने से समस्त चिन्ताएँ मिट जाती हैं॥ १॥ भगवान के अलावा प्राणी का दूसरा कोई नहीं। एक भगवान ही जीवों की रक्षा करता और नाश करता है॥ १॥ रहाउ॥ गुरु के चरणों को अपने हृदय में बसाओ। अग्नि का सागर तू परमेश्वर का स्मरण करने से पार कर लेगा॥ २॥ गुरु के स्वरूप पर ध्यान लगाने से तुझे लोक–परलोक में बड़ा सम्मान प्राप्त होगा॥ ३॥ हे नानक! सब कुछ त्यागकर उसने गुरु की शरण ली है और उसकी चिंताएँ मिट गई हैं एवं आत्मिक सुख प्राप्त हो गया है॥ ४॥ ६१॥ १३०॥

गउड़ी महला ५ ॥ जिसु सिमरत दूखु सभु जाइ ॥ नामु रतनु वसै मनि आइ ॥ १ ॥ जपि मन मेरे गोविंद की बाणी ॥ साधू जन रामु रसन वखाणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इकसु बिनु नाही दूजा कोइ ॥ जा की द्रिसटि सदा सुखु होइ ॥ २ ॥ साजनु मीतु सखा करि एकु ॥ हरि हरि अखर मन महि लेखु ॥ ३ ॥ रवि रहिआ सरबत सुआमी ॥ गुण गावै नानकु अंतरजामी ॥ ४ ॥ ६२ ॥ १३१ ॥

जिसका सिमरन करने से समस्त दुःख मिट जाते हैं और नाम–रत्न मन में आकर बस जाता है॥ १॥ हे मेरे मन! उस गोविन्द की वाणी का जाप कर। संतजन तो अपनी रसना से राम का ही

गुणानुवाद करते रहते हैं॥ १॥ रहाउ॥ दुनिया में एक ईश्वर के सिवाय दूसरा कोई नहीं। उसकी कृपादृष्टि से सदैव सुख प्राप्त हो जाता है॥ २॥ हे मेरे मन! एक ईश्वर को अपना मित्र, सखा एवं साथी बना। अपने हृदय में हरि-परमेश्वर की गुणस्तुति का अक्षर लिख ले॥ ३॥ इस जगत् का स्वामी हर जगह मौजूद है। हे नानक! वह तो अन्तर्यामी प्रभु का ही यशोगान करता रहता है?॥ ४॥ ॥ ६२॥ १३१॥

गउड़ी महला ५ ॥ भै महि रचिओ सभु संसारा ॥ तिसु भउ नाही जिसु नामु अधारा ॥ १ ॥ भउ न विआपै तेरी सरणा ॥ जो तुधु भावै सोई करणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सोग हरख महि आवण जाणा ॥ तिनि सुखु पाइआ जो प्रभ भाणा ॥ २ ॥ अगनि सागरु महा विआपै माइआ ॥ से सीतल जिन सतिगुरु पाइआ ॥ ३ ॥ राखि लेइ प्रभु राखनहारा ॥ कहु नानक किआ जंत विचारा ॥ ४ ॥ ६३ ॥ १३२ ॥

सारा जगत् (किसी न किसी) भय में दबा हुआ रहता है। जिस व्यक्ति को भगवान के नाम का आधार मिल जाता है, उसे कोई भय नहीं॥ १॥ हे प्रभु! जो तेरी शरण में आता है, उसे कोई भय नहीं लगता। हे प्रभु! तू वही करता है, जो तुझे लुभाता है॥ १॥ रहाउ॥ मनुष्य सुख एवं दुख में जन्मता-मरता रहता है। लेकिन जो ईश्वर को अच्छे लगते हैं, वह आत्मिक सुख पाते हैं॥ २॥ यह दुनिया तृष्णा की अग्नि का सागर है, जहाँ लोगों को माया प्रभावित करती रहती है। जिस व्यक्ति को सतिगुरु प्राप्त हो जाता है, वह माया में रहता हुआ भी शांत रहता है॥ ३॥ हे रक्षक प्रभु! हमारी रक्षा कीजिए। हे नानक! भय से बचने हेतु जीव बेचारा क्या कर सकता है?॥ ४॥ ६३॥ १३२॥

गउड़ी महला ५ ॥ तुमरी क्रिपा ते जपीऐ नाउ ॥ तुमरी क्रिपा ते दरगह थाउ ॥ १ ॥ तुझ बिनु पारब्रहम नही कोइ ॥ तुमरी क्रिपा ते सदा सुखु होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम मनि वसे तउ दूखु न लागै ॥ तुमरी क्रिपा ते भ्रमु भउ भागै ॥ २ ॥ पारब्रहम अपरंपर सुआमी ॥ सगल घटा के अंतरजामी ॥ ३ ॥ करउ अरदासि अपने सतिगुर पासि ॥ नानक नामु मिलै सचु रासि ॥ ४ ॥ ६४ ॥ १३३ ॥

हे प्रभु! तुम्हारी कृपा से ही नाम-स्मरण किया जा सकता है। तुम्हारी कृपा से ही तेरे दरबार में जीव को सम्मान मिलता है॥ १॥ हे पारब्रह्म प्रभु! तेरे सिवाय (जगत् में) दूसरा कोई नहीं। तुम्हारी कृपा से सदैव सुख प्राप्त हो जाता है॥ १॥ रहाउ॥ हे ठाकुर! यदि तू हृदय में बस जाए तो प्राणी को दुख नहीं लगता। तुम्हारी कृपा से भ्रम एवं भय दौड़ जाते हैं॥ २॥ हे अपरंपार पारब्रह्म प्रभु! हे जगत् के स्वामी! तू सबके दिलों का ज्ञाता हैं॥ ३॥ मैं नानक अपने गुरु के समक्ष विनती करता हूँ कि मुझे सत्य नाम की पूँजी की देन प्राप्त हो जाए॥ ४॥ ६४॥ १३३॥

गउड़ी महला ५ ॥ कण बिना जैसे थोथर तुखा ॥ नाम बिहून सूने से मुखा ॥ १ ॥ हरि हरि नामु जपहु नित प्राणी ॥ नाम बिहून ध्रिगु देह बिगानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नाम बिना नाही मुखि भागु ॥ भरत बिहून कहा सोहागु ॥ २ ॥ नामु बिसारि लगै अन सुआइ ॥ ता की आस न पूजै काइ ॥ ३ ॥ करि किरपा प्रभ अपनी दाति ॥ नानक नामु जपै दिन राति ॥ ४ ॥ ६५ ॥ १३४ ॥

जैसे अनाज के बिना भूसा शून्य है, वैसे ही वह मुख शून्य है जो नामविहीन है॥ १॥ हे नश्वर प्राणी! नित्य ही हरि-परमेश्वर का नाम-सिमरन करते रहो। प्रभु के नाम बिना यह शरीर धिक्कार योग्य है, जो पराया हो जाता है॥ १॥ रहाउ॥ नाम सिमरन के बिना चेहरा भाग्य से उदय नहीं होता। अपने पति के बिना सुहाग कहाँ है? ॥ २॥ जो व्यक्ति नाम को विस्मृत करके दूसरे रसों में लगा हुआ है, उसकी कोई भी आकांक्षा पूरी नहीं होती। नानक का कथन है कि हे प्रभु! जिस व्यक्ति को तू कृपा करके नाम की देन प्रदान करता है, वह दिन-रात तेरा नाम-सिमरन ही करता रहता है॥ ४॥ ६५॥ १३४॥

गउड़ी महला ५ ॥ तूं समरथु तूंहै मेरा सुआमी ॥ सभु किछु तुम ते तूं अंतरजामी ॥ १ ॥ पारब्रहम पूरन जन ओट ॥ तेरी सरणि उधरहि जन कोटि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जेते जीअ तेते सभि तेरे ॥ तुमरी क्रिपा ते सूख घनेरे ॥ २ ॥ जो किछु वरतै सभ तेरा भाणा ॥ हुकमु बूझै सो सचि समाणा ॥ ३ ॥ करि किरपा दीजै प्रभ दानु ॥ नानक सिमरै नामु निधानु ॥ ४ ॥ ६६ ॥ १३५ ॥

हे प्रभु ! तू सर्वशक्तिमान है और तू ही मेरा स्वामी है। हे ठाकुर ! तू अंतर्यामी है और इस दुनिया में सब कुछ तेरी प्रेरणा से ही हो रहा है॥ १॥ हे पूर्ण पारब्रह्म प्रभु ! तू ही सेवक का सहारा है। तेरी शरण लेकर करोड़ों ही प्राणी (भवसागर से) पार हो जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ हे गोविन्द ! संसार में जितने भी जीव–जन्तु हैं, वह सभी तेरे उत्पन्न किए हुए हैं, तेरी कृपा से हम जीवों को अनंत सुख उपलब्ध हो रहे हैं॥ २॥ हे प्रभु ! जगत् में जो कुछ भी घटित होता है, वह सब तेरी इच्छानुसार है। जो व्यक्ति भगवान के हुक्म को समझ लेता है, वह सत्य में ही समा जाता है॥ ३॥ नानक का कथन है कि हे मेरे प्रभु ! कृपा करके नाम की देन प्रदान कीजिए चूंकि वह तेरे नाम के भण्डार का ही सिमरन करता रहे॥ ४॥ ६६॥ १३५॥

गउड़ी महला ५ ॥ ता का दरसु पाईऐ वडभागी ॥ जा की राम नामि लिव लागी ॥ १ ॥ जा कै हरि वसिआ मन माही ॥ ता कउ दुखु सुपनै भी नाही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सरब निधान राखे जन माहि ॥ ता कै संगि किलविख दुख जाहि ॥ २ ॥ जन की महिमा कथी न जाइ ॥ पारब्रहमु जनु रहिआ समाइ ॥ ३ ॥ करि किरपा प्रभ बिनउ सुनीजै ॥ दास की धूरि नानक कउ दीजै ॥ ४ ॥ ६७ ॥ १३६ ॥

उस प्रभु के दर्शन वह भाग्यशाली ही प्राप्त करता है, जिसकी सुरति राम नाम में लग जाती है॥ १॥ जिसके हृदय में ईश्वर का निवास हो जाता है, उसे स्वप्न में भी कोई दुःख स्पर्श नहीं करता॥ १॥ रहाउ॥ गुणों के समूचे भण्डार ईश्वर ने अपने सेवक के हृदय में बसाए हैं। उसकी संगति में पाप व संताप निवृत्त हो जाते हैं॥ २॥ ईश्वर के सेवक की महिमा वर्णन नहीं की जा सकती। ऐसा सेवक पारब्रह्म–प्रभु में ही लीन रहता है॥ ३॥ हे प्रभु ! कृपा करके मेरी एक विनती सुन लो कि अपने दास की चरण–धूलि की देन नानक को दे दीजिए॥ ४॥ ६७॥ १३६॥

गउड़ी महला ५ ॥ हरि सिमरत तेरी जाइ बलाइ ॥ सरब कलिआण वसै मनि आइ ॥ १ ॥ भजु मन मेरे एको नाम ॥ जीअ तेरे कै आवै काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रैणि दिनसु गुण गाउ अनंता ॥ गुर पूरे का निरमल मंता ॥ २ ॥ छोडि उपाव एक टेक राखु ॥ महा पदारथु अंम्रित रसु चाखु ॥ ३ ॥ बिखम सागरु तेई जन तरे ॥ नानक जा कउ नदरि करे ॥ ४ ॥ ६८ ॥ १३७ ॥

हे जीव ! भगवान का नाम–सिमरन करने से तेरी विपदा दूर हो जाएगी और तेरे मन में सर्व कल्याण आकर वास कर जाएँगे॥ १॥ हे मेरे मन ! एक परमेश्वर के नाम का भजन कर ले, चूंकि यह नाम ही तेरी आत्मा के लिए परलोक में काम आएगा॥ १॥ रहाउ॥ पूर्ण गुरु के निर्मल मंत्र से रात–दिन अनन्त प्रभु का यशोगान करता रह॥ २॥ दूसरे उपाय त्याग दे और अपनी आस्था एक प्रभु पर रख। इस तरह तू महा पदार्थ अमृतमयी रस को चख लेगा॥ ३॥ हे नानक ! वही पुरुष भवसागर से (आत्मिक पूँजी सहित) पार होते हैं, जिन पर प्रभु कृपा–दृष्टि करता है॥ ४॥ ६८॥ १३७॥

गउड़ी महला ५ ॥ हिरदै चरन कमल प्रभ धारे ॥ पूरे सतिगुर मिलि निसतारे ॥ १ ॥ गोविंद गुण गावहु मेरे भाई ॥ मिलि साधू हरि नामु धिआई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुलभ देह होई परवानु ॥ सतिगुर ते पाइआ नाम नीसानु ॥ २ ॥ हरि सिमरत पूरन पदु पाइआ ॥ साधसंगि भै भरम मिटाइआ ॥ ३ ॥ जत कत देखउ तत रहिआ समाइ ॥ नानक दास हरि की सरणाइ ॥ ४ ॥ ६९ ॥ १३८ ॥

जिस व्यक्ति ने प्रभु के सुन्दर चरण–कमल अपने हृदय में धारण किए हैं, ऐसा व्यक्ति पूर्ण सतिगुरु से मिलकर भवसागर से मुक्ति प्राप्त कर लेता है॥ १॥ हे मेरे भाई! गोविन्द का यशोगान करते रहो। संतों से मिलकर भगवान के नाम का ध्यान करो॥ १॥ रहाउ॥ जब प्राणी को सतिगुरु से नाम का प्रमाण मिल जाता है तो उसकी दुर्लभ देहि सत्य के दरबार में स्वीकार हो जाती है॥ २॥ प्रभु का नाम–सिमरन करने से पूर्ण पद मिल जाता है। संतों की सभा में भय–भ्रम मिट जाते हैं॥ ३॥ जहाँ कहीं भी मैं देखता हूँ, वहाँ प्रभु व्यापक हो रहा है। इसलिए दास नानक ने ईश्वर की शरण ही ली है॥ ४॥ ६६॥ १३८॥

गउड़ी महला ५ ॥ गुर जी के दरसन कउ बलि जाउ ॥ जपि जपि जीवा सतिगुर नाउ ॥ १ ॥ पारब्रहम पूरन गुरदेव ॥ करि किरपा लागउ तेरी सेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरन कमल हिरदै उर धारी ॥ मन तन धन गुर प्रान अधारी ॥ २ ॥ सफल जनमु होवै परवाणु ॥ गुरु पारब्रहमु निकटि करि जाणु ॥ ३ ॥ संत धूरि पाईऐ वडभागी ॥ नानक गुर भेटत हरि सिउ लिव लागी ॥ ४ ॥ ७० ॥ १३६ ॥

मैं अपने गुरु जी के दर्शन पर तन–मन से कुर्बान जाता हूँ। मैं तो अपने सतिगुरु के नाम का निरंतर जाप करने से ही जीवित रहता हूँ॥ १॥ हे मेरे पूर्ण पारब्रह्म, गुरदेव! कृपा करो चूंकि जो मैं तेरी सेवा–भक्ति में जुट जाऊँ॥ १॥ रहाउ॥ गुरु के चरण–कमल मैं अपने हृदय में बसाता हूँ, चूंकि गुरदेव के सुन्दर चरण ही मेरे मन, तन, धन एवं प्राणों का एकमात्र आधार है॥ २॥ पारब्रह्म गुरदेव को अपने निकट समझने से तेरा जीवन सफल एवं सत्य के दरबार में स्वीकार हो जाएगा॥ ३॥ संतों की चरण–धूलि सौभाग्य से ही प्राप्त होती है। हे नानक! गुरु जी को मिलने से ईश्वर से प्रेम की लगन लग जाती है॥ ४॥ ७०॥ १३६॥

गउड़ी महला ५ ॥ करै दुहकरम दिखावै होरु ॥ राम की दरगह बाधा चोरु ॥ १ ॥ रामु रमै सोई रामाणा ॥ जलि थलि महीअलि एकु समाणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंतरि बिखु मुखि अंम्रितु सुणावै ॥ जम पुरि बाधा चोटा खावै ॥ २ ॥ अनिक पड़दे महि कमावै विकार ॥ खिन महि प्रगट होहि संसार ॥ ३ ॥ अंतरि साचि नामि रसि राता ॥ नानक तिसु किरपालु बिधाता ॥ ४ ॥ ७१ ॥ १४० ॥

मनुष्य दुष्कर्म करता है परन्तु बाहर लोगों को दूसरा रूप दिखाता है। ऐसा व्यक्ति राम के दरबार में चोर की भाँति जकड़ा जाएगा॥ १॥ जो व्यक्ति राम को स्मरण करता है, वह राम का ही उपासक है। एक ईश्वर जल, थल एवं आकाश में सर्वत्र मौजूद है॥ १॥ रहाउ॥ स्वेच्छाचारी व्यक्ति अपने मुख से अमृत सुनाता है परन्तु उसके भीतर विष विद्यमान है। ऐसा व्यक्ति यमलोक में बंधा हुआ चोटें खाता है॥ २॥ अनेक पर्दों में (पीछे) प्राणी पाप कर्म करता है। परन्तु एक क्षण में वह संसार के समक्ष प्रकट हो जाता है॥ ३॥ हे नानक! जो व्यक्ति सदा सत्य में मग्न रहता है और नाम अमृत से रंगा हुआ है, उस पर विधाता दयालु हो जाता है॥ ४॥ ७१॥ १४०॥

गउड़ी महला ५ ॥ राम रंगु कदे उतरि न जाइ ॥ गुरु पूरा जिसु देइ बुझाइ ॥ १ ॥ हरि रंगि राता सो मनु साचा ॥ लाल रंग पूरन पुरखु बिधाता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संतह संगि बैसि गुन गाइ ॥ ता का रंगु न उतरै जाइ ॥ २ ॥ बिनु हरि सिमरन सुखु नही पाइआ ॥ आन रंग फीके सभ माइआ ॥ ३ ॥ गुरि रंगे से भए निहाल ॥ कहु नानक गुर भए है दइआल ॥ ४ ॥ ७२ ॥ १४१ ॥

राम का प्रेम रंग कभी दूर नहीं होता, जिसको पूर्ण गुरु प्रदान करता है, वही इस प्रेम को पाता है॥ १॥ जिसका मन भगवान के रंग में मग्न रहता है, वही मन सच्चा है। उस पर माया का कोई

दूसरा रंग प्रभाव नहीं डाल सकता, वह मानो गहरे लाल रंग वाला हो जाता है, ऐसा व्यक्ति पूर्ण पुरुष विधाता का रूप हो जाता है॥ १॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति संतों के साथ विराजमान होकर प्रभु का यशोगान करता है, उसका प्रेम रंग कभी नहीं उतरता॥ २॥ भगवान के सिमरन के बिना सुख उपलब्ध नहीं होता और माया के अन्य सभी रंग फीके हैं॥ ३॥ जिस व्यक्ति को गुरु जी प्रभु के प्रेम से रंग देते हैं, वह कृतार्थ हो जाता है। हे नानक! उन पर गुरु जी दयालु हो गए हैं॥ ४॥ ७२॥ १४१॥

गउड़ी महला ५ ॥ सिमरत सुआमी किलविख नासे ॥ सूख सहज आनंद निवासे ॥ १ ॥ राम जना कउ राम भरोसा ॥ नामु जपत सभु मिटिओ अंदेसा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधसंगि कछु भउ न भराती ॥ गुण गोपाल गाईअहि दिनु राती ॥ २ ॥ करि किरपा प्रभ बंधन छोट ॥ चरण कमल की दीनी ओट ॥ ३ ॥ कहु नानक मनि भई परतीति ॥ निरमल जसु पीवहि जन नीति ॥ ४ ॥ ७३ ॥ १४२ ॥

जगत् के स्वामी प्रभु का नाम सिमरन करने से पाप नष्ट हो जाते हैं और मनुष्य सहज सुख एवं प्रसन्नता में वास करता है॥ १॥ राम के भक्तों को राम पर ही भरोसा है। भगवान का नाम–स्मरण करने से तमाम फिक्र मिट जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ सत्संग में रहने से कोई भय एवं दुविधा स्पर्श नहीं करती और दिन–रात गोपाल का यशोगान होता रहता है॥ २॥ प्रभु ने अपनी कृपा करके अपने भक्तों को (मोह–माया के) बंधनों से मुक्त कर दिया है और अपने चरण कमलों का सहारा दे दिया है॥ ३॥ हे नानक! प्रभु–भक्त के हृदय में आस्था बनी रहती है और वह सदैव ही प्रभु के निर्मल यश का पान करता रहता है॥ ४॥ ७३॥ १४२॥

गउड़ी महला ५ ॥ हरि चरणी जा का मनु लागा ॥ दूखु दरदु भ्रमु ता का भागा ॥ १ ॥ हरि धन को वापारी पूरा ॥ जिसहि निवाजे सो जनु सूरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कउ भए क्रिपाल गुसाई ॥ से जन लागे गुर की पाई ॥ २ ॥ सूख सहज सांति आनंदा ॥ जपि जपि जीवे परमानंदा ॥ ३ ॥ नाम रासि साधसंगि खाटी ॥ कहु नानक प्रभि अपदा काटी ॥ ४ ॥ ७४ ॥ १४३ ॥

जिस व्यक्ति का मन हरि के चरणों में लग जाता है, उसके दुःख, दर्द एवं भ्रम भाग जाते हैं॥ १॥ वह व्यापारी पूर्ण है, जो हरि के नाम रूपी धन का व्यापार करता है। जिसे परमात्मा नाम की देन देता है, वही शूरवीर होता है॥ १॥ रहाउ॥ जिस व्यक्ति पर भगवान कृपा के घर में आता है, ऐसा व्यक्ति ही गुरु के चरणों में आकर लगता है॥ २॥ उस व्यक्ति को सहज सुख, शांति एवं आनंद प्राप्त हो जाता है और वह परमानन्द प्रभु की स्तुति–आराधना करके ही जीता है॥ ३॥ हे नानक! जिस व्यक्ति ने सत्संग में रहकर ईश्वर के नाम–धन की पूँजी कमाई है, ईश्वर ने उसकी प्रत्येक विपदा निवृत्त कर दी है॥ ४॥ ७४॥ १४३॥

गउड़ी महला ५ ॥ हरि सिमरत सभि मिटहि कलेस ॥ चरण कमल मन महि परवेस ॥ १ ॥ उचरहु राम नामु लख बारी ॥ अंम्रित रसु पीवहु प्रभ पिआरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सूख सहज रस महा अनंदा ॥ जपि जपि जीवे परमानंदा ॥ २ ॥ काम क्रोध लोभ मद खोए ॥ साध कै संगि किलबिख सभ धोए ॥ ३ ॥ करि किरपा प्रभ दीन दइआला ॥ नानक दीजै साध रवाला ॥ ४ ॥ ७५ ॥ १४४ ॥

भगवान का सिमरन करने से तमाम दुख–कलेश मिट जाते हैं और प्रभु के सुन्दर चरण कमल मन में बस जाते हैं॥ १॥ हे प्यारी जिह्वा! राम नाम का लाखों बार उच्चारण कर। हे मेरी प्रिय जिह्वा! तू नाम रूपी अमृत रस का पान कर॥ १॥ रहाउ॥ परमानंद प्रभु का बार–बार भजन करने से अपना

जीवन व्यतीत करे तो तुझे सहज सुख एवं महा आनंद प्राप्त होगा॥ २॥ संतों की सभा में रहने से काम, क्रोध, लोभ, अहंकार इत्यादि विकार नष्ट हो जाते हैं और मनुष्य के तमाम पाप दूर हो जाते हैं॥ ३॥ हे दीनदयालु प्रभु! अपनी कृपा–दृष्टि करके नानक को संतों की चरण–धूलि प्रदान कीजिए ॥ ४॥ ७५॥ १४४॥

गउड़ी महला ५ ॥ जिस का दीआ पैनै खाइ ॥ तिसु सिउ आलसु किउ बनै माइ ॥ १ ॥ खसमु बिसारि आन कंमि लागहि ॥ कउडी बदले रतनु तिआगहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभू तिआगि लागत अन लोभा ॥ दासि सलामु करत कत सोभा ॥ २ ॥ अंम्रित रसु खावहि खान पान ॥ जिनि दीए तिसहि न जानहि सुआन ॥ ३ ॥ कहु नानक हम लूण हरामी ॥ बखसि लेहु प्रभ अंतरजामी ॥ ४ ॥ ७६ ॥ १४५ ॥

हे जननी! जिस भगवान का दिया हुआ वस्त्र इन्सान पहनता है और दिया हुआ भोजन खाता रहता है, उस भगवान का सिमरन करने में आलस्य नहीं करना चाहिए॥ १॥ जो जीव–स्त्री अपने प्रभु–पति को भुलाकर दूसरे कामों में व्यस्त होती है, वह कौड़ी के भाव अपने हीरे जैसे अमूल्य जीवन को व्यर्थ गंवा देती है॥ १॥ रहाउ॥ वह प्रभु को त्यागकर दूसरे पदार्थों की तृष्णा में लगी हुई है। लेकिन प्रभु की बजाय उसकी दासी माया को वन्दना करने से किसने शोभा पाई है?॥ २॥ मनुष्य अमृत समान स्वादिष्ट खानपान को चखता है परन्तु कुत्ता उसको नहीं जानता, जो (यह पदार्थ) प्रदान करता है॥ ३॥ नानक का कथन है कि हे ईश्वर! हम (प्राणी) कृतघ्न नमकहरामी हैं। हे अन्तर्यामी प्रभु! हमें क्षमा कर दीजिए॥ ४॥ ७६॥ १४५॥

गउड़ी महला ५ ॥ प्रभ के चरन मन माहि धिआनु ॥ सगल तीरथ मजन इसनानु ॥ १ ॥ हरि दिनु हरि सिमरनु मेरे भाई ॥ कोटि जनम की मलु लहि जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि की कथा रिद माहि बसाई ॥ मन बांछत सगले फल पाई ॥ २ ॥ जीवन मरणु जनमु परवानु ॥ जा कै रिदै वसै भगवानु ॥ ३ ॥ कहु नानक सेई जन पूरे ॥ जिना परापति साधू धूरे ॥ ४ ॥ ७७ ॥ १४६ ॥

हे मेरे भाई! प्रभु के चरणों का अपने मन में ध्यान करो। चूंकि प्रभु के चरणों का ध्यान ही तमाम तीर्थ–स्थानों का स्नान है॥ १॥ प्रतिदिन हरि–परमेश्वर का सिमरन करो। चूंकि हरि का सिमरन करने से करोड़ों जन्मों की मैल दूर हो जाती है॥ १॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति हरि की कथा अपने हृदय में बसा कर रखता है, उसे मनोवांछित फल प्राप्त हो जाते हैं॥ २॥ जिसके हृदय में भगवान निवास करता है, उसका जीवन, मृत्यु एवं जन्म स्वीकार हो जाता है॥ ३॥ हे नानक! वहीं व्यक्ति पूर्ण हैं, जिन्हें संतों की चरण–धूलि प्राप्त हो जाती है॥ ४॥ ७७॥ १४६॥

गउड़ी महला ५ ॥ खादा पैनदा मूकरि पाइ ॥ तिस नो जोहहि दूत धरम राइ ॥ १ ॥ तिसु सिउ बेमुखु जिनि जीउ पिंडु दीना ॥ कोटि जनम भरमहि बहु जूना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साकत की ऐसी है रीति ॥ जो किछु करै सगल बिपरीति ॥ २ ॥ जीउ प्राण जिनि मनु तनु धारिआ ॥ सोई ठाकुरु मनहु बिसारिआ ॥ ३ ॥ बधे बिकार लिखे बहु कागर ॥ नानक उधरु क्रिपा सुख सागर ॥ ४ ॥ पारब्रहम तेरी सरणाइ ॥ बंधन काटि तरै हरि नाइ ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ ७८ ॥ १४७ ॥

जो प्राणी प्रभु की नियामतें खाता और पहनता रहता है लेकिन इस बात को अस्वीकार करता है कि ये प्रभु ने दिए हैं, उस प्राणी को यमराज के दूत अपनी दृष्टि में रखते हैं॥ १॥ जिस भगवान ने मनुष्य को आत्मा एवं शरीर दिए हैं, वह उससे ही विमुख बना रहता है। प्रभु से विमुख रहने वाला

व्यक्ति करोड़ों ही जन्म अधिकतर योनियों में भटकता रहता है॥ १॥ रहाउ॥ भगवान से टूटे हुए शाक्त व्यक्ति का यही जीवन–आचरण है कि जो कुछ भी वह करता है, सब विपरीत ही करता है॥ २॥ जीव अपने मन से उस प्रभु को विस्मृत कर देता है, जिसने उसकी आत्मा, प्राण, मन और शरीर का निर्माण किया है॥ ३॥ नास्तिक प्राणी के पाप इतने बढ़ जाते हैं कि ढेर सारे कागजों पर लिखे जाते हैं। नानक की प्रार्थना है कि हे सुख के सागर! हम प्राणियों की रक्षा करो॥ ४॥ हे पारब्रह्म प्रभु! जो व्यक्ति तेरी शरण में आ जाता है, वह हरि–नाम के फलस्वरूप बन्धनों को तोड़कर भवसागर से पार हो जाता है॥ १॥ रहाउ दूजा॥ ७८॥ १४७॥

गउड़ी महला ५ ॥ अपने लोभ कउ कीनो मीतु ॥ सगल मनोरथ मुकति पदु दीतु ॥ १ ॥ ऐसा मीतु करहु सभु कोइ ॥ जा ते बिरथा कोइ न होइ ॥ १ ॥ रहाउ॥ अपुनै सुआइ रिदै लै धारिआ ॥ दूख दरद रोग सगल बिदारिआ ॥ २ ॥ रसना गीधी बोलत राम ॥ पूरन होए सगले काम ॥ ३ ॥ अनिक बार नानक बलिहारा ॥ सफल दरसनु गोबिंदु हमारा ॥ ४ ॥ ७९ ॥ १४८ ॥

मनुष्य अपने लोभ हेतु ईश्वर को अपना मित्र बनाता है। ईश्वर उसके सभी मनोरथ पूर्ण करता है और उसे मोक्ष की पदवी प्रदान कर देता है॥ १॥ हरेक मनुष्य ऐसे ईश्वर को अपना मित्र बनाए, जिसके द्वार से कोई खाली नहीं लौटता॥ १॥ रहाउ॥ जिस मनुष्य ने अपने स्वार्थ हेतु भी उस प्रभु को मन में बसाया है, प्रभु उसके दुःख–दर्द एवं तमाम रोग निवृत्त कर देता है॥ २॥ जिसकी जिह्वा राम का नाम उच्चारण करना चाहती है, उसके सभी मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं॥ ३॥ हे नानक! हम अपने गोबिन्द पर अनेक बार कुर्बान जाते हैं, हमारा गोबिन्द ऐसा है कि उसके दर्शन तमाम फल प्रदान करते हैं॥ ४॥ ७९॥ १४८॥

गउड़ी महला ५ ॥ कोटि बिघन हिरे खिन माहि ॥ हरि हरि कथा साधसंगि सुनाहि ॥ १ ॥ पीवत राम रसु अंम्रित गुण जासु ॥ जपि हरि चरण मिटी खुधि तासु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सरब कलिआण सुख सहज निधान ॥ जा कै रिदै वसहि भगवान ॥ २ ॥ अउखध मंत्र तंत सभि छारु ॥ करणैहारु रिदे महि धारु ॥ ३ ॥ तजि सभि भरम भजिओ पारब्रहमु ॥ कहु नानक अटल इहु धरमु ॥ ४ ॥ ८० ॥ १४९ ॥

जो व्यक्ति संतों की निर्मल सभा में हरि की हरिकथा सुनता है, उसके करोड़ों विघ्न एक क्षण में ही मिट जाते हैं॥ १॥ वह राम रस का पान करता है और अमृत गुणों का यश करता है। हरि के चरणों का ध्यान धारण करने से उसकी भूख निवृत्त हो जाती है॥ १॥ रहाउ॥ जिसके हृदय में भगवान का निवास हो जाता है, उसको सर्वकल्याण और सहज सुख के भण्डार प्राप्त हो जाते हैं॥ २॥ सृजनहार प्रभु को अपने हृदय में धारण करो चूंकि प्रभु के अलावा समस्त औषधियां एवं मंत्र–तंत्र व्यर्थ हैं॥ ३॥ हे नानक! सभी भ्रम त्यागकर पारब्रह्म प्रभु का ही भजन करो चूंकि यही अटल धर्म है॥ ४॥ ८०॥ १४९॥

गउड़ी महला ५ ॥ करि किरपा भेटे गुर सोई ॥ तितु बलि रोगु न बिआपै कोई ॥ १ ॥ राम रमण तरण भै सागर ॥ सरणि सूर फारे जम कागर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरि मंत्रु दीओ हरि नाम ॥ इह आसर पूरन भए काम ॥ २ ॥ जप तप संजम पूरी वडिआई ॥ गुर किरपाल हरि भए सहाई ॥ ३ ॥ मान मोह खोए गुरि भरम ॥ पेखु नानक पसरे पारब्रहम ॥ ४ ॥ ८१ ॥ १५० ॥

भगवान जिस व्यक्ति पर अपनी कृपा कर देता है, उसे गुरु मिल जाता है। ऐसे व्यक्ति को गुरु के बल के फलस्वरूप कोई रोग नहीं लगता॥ १॥ सर्वव्यापक राम की आराधना करने से भयानक संसार सागर पार किया जाता है। शूरवीर गुरु का आश्रय लेने से यमों के लेखे खत्म हो जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥

सतिगुरु ने मुझे हरि के नाम का मन्त्र प्रदान किया है। इस आश्रय द्वारा मेरे सभी कार्य सफल हो गए हैं॥ २॥ जब गुरु जी कृपा के घर में आए तो भगवान भी सहायक बन गए और मुझे ध्यान, तपस्या, संयम एवं पूर्ण प्रशंसा प्राप्त हो गए॥ ३॥ हे नानक! देख, गुरु ने जिस व्यक्ति के घमण्ड, मोह एवं भ्रम नाश कर दिए हैं, उस व्यक्ति को पारब्रह्म प्रभु के सर्वत्र दर्शन हो गए हैं॥ ४॥ ८१॥ १५०॥

गउड़ी महला ५ ॥ बिखै राज ते अंधुला भारी ॥ दुखि लागै राम नामु चितारी ॥ १ ॥ तेरे दास कउ तुही वडिआई ॥ माइआ मगनु नरकि लै जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रोग गिरसत चितारे नाउ ॥ बिखु माते का ठउर न ठाउ ॥ २ ॥ चरन कमल सिउ लागी प्रीति ॥ आन सुखा नही आवहि चीति ॥ ३ ॥ सदा सदा सिमरउ प्रभ सुआमी ॥ मिलु नानक हरि अंतरजामी ॥ ४ ॥ ८२ ॥ १५१ ॥

अन्धा मनुष्य अत्याचारी सम्राट से भला है। क्योंकि दुख लगने पर अंधा मनुष्य राम के नाम का भजन करता है॥ १॥ हे प्रभु! अपने सेवक की तू ही मान–प्रतिष्ठा है। माया का नशा प्राणी को नरक में ले जाता है॥ १॥ रहाउ॥ रोग से ग्रस्त हुआ अन्धा मनुष्य नाम का सिमरन करता है। परन्तु विकारों में मस्त हुए दुराचारी मनुष्य को कोई सुख का स्थान नहीं मिलता॥ २॥ जो व्यक्ति प्रभु के चरण–कमलों से प्रेम करता है, वह अन्य लौकिक सुखों का ध्यान ही नहीं करता॥ ३॥ सदैव ही जगत् के स्वामी प्रभु का भजन करो। नानक की प्रार्थना है कि हे अन्तर्यामी प्रभु! मुझे आकर मिलो॥ ४॥ ८२॥ १५१॥

गउड़ी महला ५ ॥ आठ पहर संगी बटवारे ॥ करि किरपा प्रभि लए निवारे ॥ १ ॥ ऐसा हरि रसु रमहु सभु कोइ ॥ सरब कला पूरन प्रभु सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ महा तपति सागर संसार ॥ प्रभ खिन महि पारि उतारणहार ॥ २ ॥ अनिक बंधन तोरे नही जाहि ॥ सिमरत नाम मुकति फल पाहि ॥ ३ ॥ उकति सिआनप इस ते कछु नाहि ॥ करि किरपा नानक गुण गाहि ॥ ४ ॥ ८३ ॥ १५२ ॥

आठों प्रहार (कामादिक पांचों विकार) लुटेरे मेरे साथी बने हुए थे। अपनी कृपा करके प्रभु ने उनको तितर–बितर (नष्ट) कर दिया है॥ १॥ वह ईश्वर सर्वकला सम्पूर्ण है। प्रत्येक प्राणी ऐसे समर्थाशाली प्रभु के नाम–रस का आस्वादन करे॥ १॥ रहाउ॥ कामादिक विकारों की संसार–सागर में बड़ी तेज गर्मी पड़ रही है। लेकिन प्रभु एक क्षण में ही प्राणी को इस जलन से पार कर देने वाला है॥ २॥ ऐसे अनेक बंधन हैं, जो काटे नहीं जा सकते। लेकिन भगवान के नाम का सिमरन करने से मनुष्य मोक्ष फल प्राप्त कर लेता है॥ ३॥ हे नानक! मनुष्य किसी युक्ति अथवा चतुरता से कुछ नहीं कर सकता। हे प्रभु! कृपा कर चूंकि वह तेरा ही यश गायन करता रहे॥ ४॥ ८३॥ १५२॥

गउड़ी महला ५ ॥ थाती पाई हरि को नाम ॥ बिचरु संसार पूरन सभि काम ॥ १ ॥ वडभागी हरि कीरतनु गाईऐ ॥ पारब्रहम तूं देहि त पाईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि के चरण हिरदै उरि धारि ॥ भव सागरु चड़ि उतरहि पारि ॥ २ ॥ साधू संगु करहु सभु कोइ ॥ सदा कलिआण फिरि दूखु न होइ ॥ ३ ॥ प्रेम भगति भजु गुणी निधानु ॥ नानक दरगह पाईऐ मानु ॥ ४ ॥ ८४ ॥ १५३ ॥

जिसे हरि के नाम का धन प्राप्त हो जाता है, वह निसंकोच होकर संसार में गतिमान होता है और उसके सारे कार्य सफल हो जाते हैं॥ १॥ सौभाग्यवश ही ईश्वर का भजन गायन किया जा सकता है। हे मेरे पारब्रह्म प्रभु! यदि तू हम प्राणियों को गुणस्तुति की देन प्रदान करे तो ही मिल सकती है॥ १॥ रहाउ॥ प्रभु के सुन्दर चरण अपने हृदय में बसाओ। प्रभु–चरणों के जहाज पर सवार होने से ही भवसागर से पार हुआ जा सकता है॥ २॥ प्रत्येक प्राणी को संतों की संगति करनी चाहिए, जिससे सदैव कल्याण मिलता है और पुनः कोई दुःख प्राप्त नहीं होता॥ ३॥ हे नानक! प्रेमा–भक्ति द्वारा गुणों के भण्डार भगवान का भजन करो, इस तरह प्रभु के दरबार में मान–सम्मान प्राप्त होता है॥ ४॥ ८४॥ १५३॥

गउड़ी महला ५ ॥ जलि थलि महीअलि पूरन हरि मीत ॥ भ्रम बिनसे गाए गुण नीत ॥ १ ॥ ऊठत सोवत हरि संगि पहरूआ ॥ जा कै सिमरणि जम नही डरूआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरण कमल प्रभ रिदै निवासु ॥ सगल दूख का होइआ नासु ॥ २ ॥ आसा माणु ताणु धनु एक ॥ साचे साह की मन महि टेक ॥ ३ ॥ महा गरीब जन साध अनाथ ॥ नानक प्रभि राखे दे हाथ ॥ ४ ॥ ८५ ॥ १५४ ॥

जल, धरती एवं गगन में मित्र—प्रभु सर्वव्यापक है। उस प्रभु का नित्य यशोगान करने से भ्रम निवृत्त हो जाते हैं॥ १॥ जागते—सोते हर समय प्रभु मनुष्य के साथ रक्षक—रूप में है। उस प्रभु का सिमरन करने से मनुष्य मृत्यु के दूत के भय से रहित हो जाता है॥ १॥ रहाउ॥ यदि प्रभु के सुन्दर चरण हृदय में निवास कर जाए तो तमाम दुःख—क्लेश नष्ट हो जाते हैं॥ २॥ एक ईश्वर ही मेरी आशा, प्रतिष्ठा, बल एवं धन है। मेरे हृदय में सच्चे साहूकार का ही सहारा है॥ ३॥ हे नानक! परमात्मा के संतों का मैं एक महा निर्धन एवं अनाथ सेवक हूँ। परन्तु ईश्वर ने अपना हाथ देकर मेरी रक्षा की है॥ ४॥ ८५॥ १५४॥

गउड़ी महला ५ ॥ हरि हरि नामि मजनु करि सूचे ॥ कोटि ग्रहण पुंन फल मूचे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि के चरण रिदे महि बसे ॥ जनम जनम के किलविख नसे ॥ १ ॥ साधसंगि कीरतन फलु पाइआ ॥ जम का मारगु द्रिसटि न आइआ ॥ २ ॥ मन बच क्रम गोविंद अधारु ॥ ता ते छुटिओ बिखु संसारु ॥ ३ ॥ करि किरपा प्रभि कीनो अपना ॥ नानक जापु जपे हरि जपना ॥ ४ ॥ ८६ ॥ १५५ ॥

हरि—परमेश्वर के नाम (तीर्थ) में स्नान करने से मैं पवित्र हो गया हूँ। नाम—तीर्थ में स्नान करने से करोड़ों ग्रहणों के समय किए दान—पुण्य से भी अधिक फल प्राप्त होता है॥ १॥ रहाउ॥ यदि भगवान के सुन्दर चरण हृदय में निवास कर जाएँ तो जन्म—जन्मांतरों के पाप नाश हो जाते हैं॥ १॥ सत्संग में ईश्वर का भजन गायन करने का फल मुझे मिल गया है और इसलिए मृत्यु का मार्ग दृष्टिगोचर नहीं होता॥ २॥ जो व्यक्ति अपने मन, वचन एवं कर्म का आधार गोविन्द के नाम को बना लेता है, वह विषैले भवसागर से पार हो जाता है॥ ३॥ हे नानक! भगवान ने जिस व्यक्ति को अपनी कृपा करके अपना बना लिया है, वह सदा प्रभु का जाप जपता है और प्रभु का भजन करता रहता है॥ ४॥ ८६॥ १५५॥

गउड़ी महला ५ ॥ पउ सरणाई जिनि हरि जाते ॥ मनु तनु सीतलु चरण हरि राते ॥ १ ॥ भै भंजन प्रभ मनि न बसाही ॥ डरपत डरपत जनम बहुतु जाही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कै रिदै बसिओ हरि नाम ॥ सगल मनोरथ ता के पूरन काम ॥ २ ॥ जनमु जरा मिरतु जिसु वासि ॥ सो समरथु सिमरि सासि गिरासि ॥ ३ ॥ मीतु साजनु सखा प्रभु एक ॥ नामु सुआमी का नानक टेक ॥ ४ ॥ ८७ ॥ १५६ ॥

हे जीव! जिन्होंने भगवान को समझ लिया है, उनकी शरण में पड़े रहो। भगवान के चरणों में मग्न होने से मन एवं तन शीतल हो जाते हैं॥ १॥ जो व्यक्ति भयनाशक प्रभु को अपने मन में नहीं बसाता, उसके अनेक जन्म इसी आतंक—भय में कांपते हुए बीत जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ जिसके हृदय में प्रभु का नाम निवास करता है, उसकी तमाम मनोकामनाएँ एवं कार्य सम्पूर्ण हो जाते हैं॥ २॥ जिसके वश में जन्म, बुढ़ापा एवं मृत्यु है उस सर्वशक्तिमान प्रभु को अपने हर श्वास एवं ग्रास से स्मरण करता रह॥ ३॥ हे नानक! एक ईश्वर ही हमारा मित्र, साजन और साथी है। जगत् के स्वामी प्रभु का नाम ही उसका एकमात्र सहारा है॥ ४॥ ८७॥ १५६॥

गउड़ी महला ५ ॥ बाहरि राखिओ रिदै समालि ॥ घरि आए गोविंदु लै नालि ॥ १ ॥ हरि हरि नामु संतन कै संगि ॥ मनु तनु राता राम कै रंगि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर परसादी सागरु तरिआ ॥ जनम जनम के किलविख सभि हिरिआ ॥ २ ॥ सोभा सुरति नामि भगवंतु ॥ पूरे गुर का निरमल मंतु ॥ ३ ॥ चरण कमल हिरदे महि जापु ॥ नानकु पेखि जीवै परतापु ॥ ४ ॥ ८८ ॥ १५७ ॥

संतजन संसार के साथ लोक–व्यवहार करते हुए गोविन्द को अपने मन में बसाकर रखते हैं। घर को लौटते हुए वह उसको साथ लेकर आते हैं॥ १॥ हरि–परमेश्वर का नाम संतजनों का साथी है। उनका मन एवं तन राम के प्रेम रंग में ही मग्न रहता है॥ १॥ रहाउ॥ गुरु की कृपा से संसार सागर से पार हुआ जा सकता है और जन्म–जन्मांतरों के तमाम पाप नाश हो जाते हैं॥ २॥ भगवान के नाम से ही मनुष्य को शोभा एवं सुरति प्राप्त होती है। पूर्ण गुरु का नाम–मंत्र सदैव निर्मल है॥ ३॥ भगवान के चरण–कमलों का हृदय में भजन कर। नानक तो उस ईश्वर का प्रताप देखकर जीवन प्राप्त करता है॥ ४॥ ८८॥ १५७॥

गउड़ी महला ५ ॥ धंनु इहु थानु गोविंद गुण गाए ॥ कुसल खेम प्रभि आपि बसाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिपति तहा जहा हरि सिमरनु नाही ॥ कोटि अनंद जह हरि गुन गाही ॥ १ ॥ हरि बिसरिऐ दुख रोग घनेरे ॥ प्रभ सेवा जमु लगै न नेरे ॥ २ ॥ सो वडभागी निहचल थानु ॥ जह जपीऐ प्रभ केवल नामु ॥ ३ ॥ जह जाईऐ तह नालि मेरा सुआमी ॥ नानक कउ मिलिआ अंतरजामी ॥ ४ ॥ ८६ ॥ १५८ ॥

वह स्थान बड़ा धन्य है, जहाँ गोविन्द की गुणस्तुति की जाती है। प्रभु स्वयं उनको सुख व आनंद में (कुशलक्षेम) बसाता है॥ १॥ रहाउ॥ जहाँ प्रभु का भजन नहीं होता है, वहाँ विपदा विद्यमान है। वहाँ करोड़ों ही आनंद हैं, जहाँ भगवान की महिमा का गायन किया जाता है॥ १॥ प्रभु को विस्मृत करने से मनुष्य को अधिकतर दुख एवं रोग लग जाते हैं। प्रभु की सेवा–भक्ति के फलस्वरूप यमदूत प्राणी के निकट नहीं आता॥ २॥ वह स्थान सौभाग्यशाली एवं अटल है, जहाँ केवल प्रभु के नाम का ही जाप होता रहता है॥ ३॥ जहाँ कहीं भी मैं जाता हूँ, वहाँ मेरा स्वामी मेरे साथ होता है। नानक को अन्तर्यामी प्रभु मिल गया है॥ ४॥ ८६॥ १५८॥

गउड़ी महला ५॥ जो प्राणी गोविंदु धिआवै ॥ पड़िआ अणपड़िआ परम गति पावै ॥ १ ॥ साधू संगि सिमरि गोपाल ॥ बिनु नावै झूठा धनु मालु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रूपवंतु सो चतुरु सिआणा ॥ जिनि जनि मानिआ प्रभ का भाणा ॥ २ ॥ जग महि आइआ सो परवाणु ॥ घटि घटि अपणा सुआमी जाणु ॥ ३ ॥ कहु नानक जा के पूरन भाग ॥ हरि चरणी ता का मनु लाग ॥ ४ ॥ ६० ॥ १५६ ॥

जो प्राणी गोविन्द का ध्यान करता है, वह चाहे विद्वान हो अथवा अनपढ़–वह परमगति प्राप्त कर लेता है॥ १॥ हे भाई! संतों की सभा में रहकर गोपाल का सिमरन करो, क्योंकि नाम के बिना धन–दौलत एवं सम्पत्ति सब झूठे हैं॥ १॥ रहाउ॥ केवल वही मनुष्य सुन्दर, चतुर एवं बुद्धिमान है, जो व्यक्ति प्रभु की इच्छा को स्वीकार करता है॥ २॥ इस दुनिया में उसका जन्म ही सफल होता है, जो सर्वव्यापक प्रभु को जान लेता है॥ ३॥ हे नानक! जिसके भाग्य पूर्ण हैं, वही व्यक्ति ईश्वर के चरणों में अपने मन को लगाता है॥ ४॥ ६०॥ १५६॥

गउड़ी महला ५ ॥ हरि के दास सिउ साकत नही संगु ॥ ओहु बिखई ओसु राम को रंगु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन असवार जैसे तुरी सीगारी ॥ जिउ कापुरखु पुचारै नारी ॥ १ ॥ बैल कउ नेत्रा पाइ दुहावै ॥ गऊ चरि सिंघ पाछै पावै ॥ २ ॥ गाडर ले कामधेनु करि पूजी ॥ सउदे कउ धावै बिनु पूंजी ॥ ३ ॥ नानक राम नामु जपि चीत ॥ सिमरि सुआमी हरि सा मीत ॥ ४ ॥ ६१ ॥ १६० ॥

प्रभु–भक्त के साथ (भगवान से टूटे हुए) शाक्त इन्सान का साथ नहीं होता। क्योंकि वह नास्तिक विषयों का प्रेमी होता है और उस भक्त को प्रभु का रंग चढ़ा होता है॥ १॥ रहाउ॥ उनका मिलन ऐसे है, जैसे अनाड़ी घुड़सवार के लिए एक सुसज्जित घोड़ी हो। जैसे कोई नपुंसक किसी नारी को प्रेम करता है॥ १॥ नास्तिक और आस्तिक का मिलन ऐसा है जैसे कोई व्यक्ति बछड़े द्वारा बैल दुहता हो। जैसे गाय पर सवार होकर व्यक्ति शेर का पीछा करता है॥ २॥ जैसे कोई व्यक्ति भेड़ लेकर उसे कामधेनु समझकर पूजा–अर्चना करने लगे अथवा जैसे धन–दौलत के बिना व्यक्ति सौदा खरीदने के लिए जाता है॥ ३॥ हे नानक! अपने मन में राम नाम का जाप कर। तू मित्र जैसे स्वामी प्रभु की आराधना कर॥ ४॥ ६१॥ १६०॥

गउड़ी महला ५ ॥ सा मति निरमल कहीअत धीर ॥ राम रसाइणु पीवत बीर ॥ १ ॥ हरि के चरण हिरदै करि ओट ॥ जनम मरण ते होवत छोट ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सो तनु निरमलु जितु उपजै न पापु ॥ राम रंगि निरमल परतापु ॥ २ ॥ साधसंगि मिटि जात बिकार ॥ सभ ते ऊच एहो उपकार ॥ ३ ॥ प्रेम भगति राते गोपाल ॥ नानक जाचै साध रवाल ॥ ४ ॥ ६२ ॥ १६१ ॥

हे भाई! वही बुद्धि निर्मल एवं धैर्यवान कही जाती है, जो राम के अमृत (नाम) का पान करती है॥ १॥ अपने हृदय में ईश्वर के चरणों का सहारा ले। इस तरह जन्म–मरण से तुझे मुक्ति प्राप्त हो जाएगी॥ १॥ रहाउ॥ वही शरीर निर्मल है, जिसके भीतर पाप उत्पन्न नहीं होता। राम के प्रेम (रंग) से व्यक्ति का निर्मल प्रताप बढ़ता जाता है॥ २॥ संतों की संगति में रहने से (मनुष्य के) पाप नष्ट हो जाते हैं। संतों की संगति का यही सर्वोच्च उपकार है॥ ३॥ नानक ऐसे संतों की चरण–धूलि की याचना करता है, जो गोपाल के प्रेमा–भक्ति के रंग में मग्न रहते हैं॥ ४॥ ६२॥ १६१॥

गउड़ी महला ५ ॥ ऐसी प्रीति गोविंद सिउ लागी ॥ मेलि लए पूरन वडभागी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भरता पेखि बिगसै जिउ नारी ॥ तिउ हरि जनु जीवै नामु चितारी ॥ १ ॥ पूत पेखि जिउ जीवत माता ॥ ओति पोति जनु हरि सिउ राता ॥ २ ॥ लोभी अनदु करै पेखि धना ॥ जन चरन कमल सिउ लागो मना ॥ ३ ॥ बिसरु नही इकु तिलु दातार ॥ नानक के प्रभ प्रान अधार ॥ ४ ॥ ६३ ॥ १६२ ॥

मुझे गोविन्द से ऐसा प्रेम हो गया है कि उसने मुझे अपने साथ मिला लिया है और मैं पूर्ण भाग्यशाली हो गया हूँ॥ १॥ रहाउ॥ जैसे पत्नी अपने पति को देख कर हर्षित होती है, वैसे ही प्रभु का सेवक उसके नाम को उच्चारण करने से आत्मिक प्रसन्नतापूर्वक जीता है॥ १॥ जैसे अपने पुत्र को देखकर माता जीवन ग्रहण करती है, वैसे ही प्रभु का भक्त परमात्मा के साथ ताने–बाने के धागे के तुल्य मग्न रहता है॥ २॥ जैसे कोई लोभी व्यक्ति धन को देख कर प्रसन्नता व्यक्त करता है, वैसे ही प्रभु के भक्त का मन प्रभु के चरण कमलों से लगा रहता है॥ ३॥ हे मेरे दाता! तुम मुझे क्षण भर के लिए विस्मृत न हों। नानक का प्रभु उसके प्राणों का सहारा है॥ ४॥ ६३॥ १६२॥

गउड़ी महला ५ ॥ राम रसाइणि जो जन गीधे ॥ चरन कमल प्रेम भगती बीधे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आन रसा दीसहि सभि छारु ॥ नाम बिना निहफल संसार ॥ १ ॥ अंध कूप ते काढे आपि ॥ गुण गोविंद अचरज परताप ॥ २ ॥ वणि त्रिणि त्रिभवणि पूरन गोपाल ॥ ब्रहम पसारु जीअ संगि दइआल ॥ ३ ॥ कहु नानक सा कथनी सारु ॥ मानि लेतु जिसु सिरजनहारु ॥ ४ ॥ ६४ ॥ १६३॥

जो भक्त राम के अमृत (नाम) में लीन हुए हैं, वह उसके चरण–कमलों की प्रेमा–भक्ति में बंधे हुए हैं॥ १॥ रहाउ॥ ऐसे भक्तों को दूसरे भोग–विलास राख के तुल्य दिखाई देते हैं। भगवान के नाम

के बिना इस दुनिया में जन्म लेना निष्फल है॥ १॥ ईश्वर स्वयं ही मनुष्य को अज्ञानता के अंधे कुएँ से बाहर निकाल देता है। गोविन्द की महिमा का तेज प्रताप अद्‌भुत है॥ २॥ वनों, वनस्पति एवं तीनों लोकों में गोपाल सर्वव्यापक है। सृष्टि में ब्रह्म का ही प्रसार है और भगवान जीवों के साथ दयालु दिखाई देता है॥ ३॥ हे नानक! केवल वही वाणी श्रेष्ठ है, जिसे कर्त्तार स्वीकार कर लेता है॥ ४॥ ६४॥ १६३॥

गउड़ी महला ५ ॥ नितप्रति नावणु राम सरि कीजै ॥ झोलि महा रसु हरि अंम्रितु पीजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निरमल उदकु गोविंद का नाम ॥ मजनु करत पूरन सभि काम ॥ १ ॥ संतसंगि तह गोसटि होइ ॥ कोटि जनम के किलविख खोइ ॥ २ ॥ सिमरहि साध करहि आनंदु ॥ मनि तनि रविआ परमानंदु ॥ ३ ॥ जिसहि परापति हरि चरण निधान ॥ नानक दास तिसहि कुरबान ॥ ४ ॥ ६५ ॥ १६४ ॥

राम के सरोवर में प्रतिदिन स्नान कीजिए। हरि के नाम अमृत के महारस का प्रेम पूर्वक पान कीजिए॥ १॥ रहाउ॥ गोविन्द के नाम का जल बड़ा निर्मल है। उसमें स्नान करने से सारे मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं॥ १॥ वहाँ सत्संग में प्रभु की कथा वार्ता होती है और करोड़ों जन्मों के पाप मिट जाते हैं॥ २॥ संतजन प्रभु को स्मरण करके बड़ा आनंद प्राप्त करते हैं। उनका मन एवं तन परमानंद में लीन रहता है॥ ३॥ दास नानक उस पर कुर्बान जाता है, जिसने ईश्वर के चरणों का भण्डार प्राप्त कर लिया है॥ ४॥ ६५॥ १६४॥

गउड़ी महला ५ ॥ सो किछु करि जितु मैलु न लागै ॥ हरि कीरतन महि एहु मनु जागै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एको सिमरि न दूजा भाउ ॥ संतसंगि जपि केवल नाउ ॥ १ ॥ करम धरम नेम ब्रत पूजा ॥ पारब्रहम बिनु जानु न दूजा ॥ २ ॥ ता की पूरन होई घाल ॥ जा की प्रीति अपुने प्रभ नालि ॥ ३ ॥ सो बैसनो है अपर अपारु ॥ कहु नानक जिनि तजे बिकार ॥ ४ ॥ ६६ ॥ १६५ ॥

हे मानव! वही कर्म कर, जिससे तेरे मन को मोह–माया की मैल न लग सके और तेरा यह मन प्रभु के भजन में जाग्रत रहे॥ १॥ रहाउ॥ हे मानव! एक ईश्वर का नाम सिमरन कर और अहंत्व की ओर ध्यान मत दे। महापुरुषों की संगति में केवल नाम का जाप कर॥ १॥ हे मानव! कर्म–धर्म, व्रत एवं पूजा–अर्चना इत्यादि सब प्रभु के बिना किसी दूसरे की पहचान न करने में आ जाते हैं॥ २॥ उस व्यक्ति की साधना सफल हो जाती है, जिसका प्रेम अपने ईश्वर के साथ होता है॥ ३॥ हे नानक! कर्म–धर्म, व्रत–पूजा करने वाला वैष्णव नहीं अपितु वही वैष्णव सर्वश्रेष्ठ है जिसने समस्त पाप (विकार) त्याग दिए हैं॥ ४॥ ६६॥ १६५॥

गउड़ी महला ५ ॥ जीवत छाडि जाहि देवाने ॥ मुइआ उन ते को वरसांने ॥ १ ॥ सिमरि गोविंदु मनि तनि धुरि लिखिआ ॥ काहू काज न आवत बिखिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिखै ठगउरी जिनि जिनि खाई ॥ ता की त्रिसना कबहूं न जाई ॥ २ ॥ दारन दुख दुतर संसारु ॥ राम नाम बिनु कैसे उतरसि पारि ॥ ३ ॥ साध संगि मिलि दुइ कुल साधि ॥ राम नाम नानक आराधि ॥ ४ ॥ ६७ ॥ १६६ ॥

हे पागल प्राणी! तेरे जीवन में भौतिक पदार्थ एवं संबंधी तुझे त्याग जाते हैं। मरणोपरांत क्या कोई उनसे लाभ प्राप्त कर सकता है॥ १॥ जिसके लिए विधाता ने ऐसा कर्म लिखा हुआ है, वह अपने मन एवं तन से गोविन्द को स्मरण करता है। माया (जिसके लिए मनुष्य भागदौड़ करता है) किसी काम नहीं आती॥ १॥ रहाउ॥ जिस किसी ने छल–कपट रूपी विष सेवन किया है, उसकी तृष्णा कभी निवृत्त नहीं होती॥ २॥ हे प्राणी! यह कठिन जगत् सागर भयानक दुःखों से भरा हुआ है। राम के नाम बिना प्राणी इससे किस तरह पार होगा?॥ ३॥ नानक का कथन है कि (हे प्राणी!) सत्संग में मिलकर राम के नाम का भजन कर और अपने लोक–परलोक दोनों ही संवार ले॥ ४॥ ६७॥ १६६॥

गउड़ी महला ५ ॥ गरीबा उपरि जि खिंजै दाड़ी ॥ पारब्रहमि सा अगनि महि साड़ी ॥ १ ॥ पूरा निआउ करे करतारु ॥ अपुने दास कउ राखनहारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आदि जुगादि प्रगटि परतापु ॥ निंदकु मुआ उपजि वड तापु ॥ २ ॥ तिनि मारिआ जि रखै न कोइ ॥ आगै पाछै मंदी सोइ ॥ ३ ॥ अपुने दास राखै कंठि लाइ ॥ सरणि नानक हरि नामु धिआइ ॥ ४ ॥ ९८ ॥ १६७ ॥

हे प्राणी! जो दाढ़ी निर्धनों पर खिझती रहती है, उस दाढ़ी को पारब्रहम–प्रभु ने अग्नि में जला दिया है (अर्थात् जो मनुष्य गुस्से में आकर अहंकारवश दूसरों को तंग करता है, वह स्वयं भी क्रोधाग्नि में जलता रहता है)॥ १॥ सृष्टि का निर्माता प्रभु पूर्ण न्याय करता है। वह अपने सेवकों का रखवाला है॥ १॥ रहाउ॥ हे प्राणी! सृष्टि के प्रारम्भ से, युगों के आदिकाल से ही प्रभु का प्रताप उजागर है। निंदक मनुष्य भारी ताप से प्राण त्याग देता है॥ २॥ उसको उस प्रभु ने मार दिया है, जिसे कोई बचा नहीं सकता। ऐसे मनुष्य की लोक–परलोक में बदनामी ही होती है॥ ३॥ हे नानक! अपने सेवकों को प्रभु अपने गले से लगाकर रखता है। हमें प्रभु की ही शरण लेनी चाहिए और भगवान के नाम का ध्यान करना चाहिए॥ ४॥ ९८॥ १६७॥

गउड़ी महला ५ ॥ महजरु झूठा कीतोनु आपि ॥ पापी कउ लागा संतापु ॥ १ ॥ जिसहि सहाई गोबिदु मेरा ॥ तिसु कउ जमु नही आवै नेरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साची दरगह बोलै कूड़ु ॥ सिरु हाथ पछोड़ै अंधा मूड़ु ॥ २ ॥ रोग बिआपे करदे पाप ॥ अदली होइ बैठा प्रभु आपि ॥ ३ ॥ अपन कमाइऐ आपे बाधे ॥ दरबु गइआ सभु जीअ कै साथै ॥ ४ ॥ नानक सरनि परे दरबारि ॥ राखी पैज मेरै करतारि ॥ ५ ॥ ९९ ॥ १६८ ॥

ईश्वर ने स्वयं दावा झूठा सिद्ध कर दिया है। अपराधी को विपदा पड़ गई है॥ १॥ जिसका सहायक मेरा गोबिन्द है। मृत्यु उसके निकट भी नहीं आती॥ १॥ रहाउ॥ ज्ञानहीन मूर्ख मनुष्य ईश्वर के सच्चे दरबार में झूठ बोलता है और अपने हाथों से अपना सिर पीटता है॥ २॥ जो व्यक्ति पाप करते रहते हैं, उन्हें अनेक रोग लग जाते हैं। ईश्वर स्वयं ही न्यायकर्त्ता बनकर बैठा हुआ है॥ ३॥ मनुष्य अपने कर्मों के कारण स्वयं ही बंध गए हैं। सारा धन–पदार्थ जीवन (प्राणों) के साथ ही चला जाता है॥ ४॥ हे नानक! जिन्होंने प्रभु के दरबार में शरण ली है। मेरे करतार ने उनकी प्रतिष्ठा रख ली है॥ ५॥ ९९॥ १६८॥

गउड़ी महला ५ ॥ जन की धूरि मन मीठ खटानी ॥ पूरबि करमि लिखिआ धुरि प्रानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अहंबुधि मन पूरि थिधाई ॥ साध धूरि करि सुध मंजाई ॥ १ ॥ अनिक जला जे धोवै देही ॥ मैलु न उतरै सुधु न तेही ॥ २ ॥ सतिगुरु भेटिओ सदा क्रिपाल ॥ हरि सिमरि सिमरि काटिआ भउ काल ॥ ३ ॥ मुकति भुगति जुगति हरि नाउ ॥ प्रेम भगति नानक गुण गाउ ॥ ४ ॥ १०० ॥ १६९ ॥

जिस प्राणी के ललाट पर पूर्व जन्म में किए कर्मों अनुसार आदि से लेख लिखा होता है, उसके मन को भगवान के सेवक की चरण–धूलि ही मीठी लगती है॥ १॥ रहाउ॥ जिस व्यक्ति का मन अहंकारी बुद्धि की चिकनाई से भरा हुआ होता है। संतों के चरणों की धूलि से साफ करके शुद्ध हो जाता है॥ १॥ यदि शरीर को अनेक जलों से धोया जाए, उससे इसकी मलिनता नहीं उतरती और यह शुद्ध नहीं होता॥ २॥ मुझे सदैव ही कृपा का घर सतिगुरु मिल गया है, और भगवान का सिमरन करने से मैंने मृत्यु के भय को निवृत्त कर दिया है॥ ३॥ भगवान का नाम ही मुक्ति, भुक्ति एवं युक्ति है। हे नानक! प्रेमा–भक्ति से ईश्वर की गुणस्तुति करते रहो॥ ४॥ १००॥ १६९॥

गउड़ी महला ५ ॥ जीवन पदवी हरि के दास ॥ जिन मिलिआ आतम परगासु ॥ १ ॥ हरि का सिमरनु सुनि मन कानी ॥ सुखु पावहि हरि दुआर परानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आठ पहर धिआईऐ गोपालु ॥ नानक दरसनु देखि निहालु ॥ २ ॥ १०१ ॥ १७० ॥

ईश्वर के सेवक (नाम सिमरन करके) जीवन पदवी प्राप्त कर लेते हैं। उन्हें मिलने से आत्मा को (ज्ञान का) प्रकाश मिलता है॥ १॥ हे नश्वर प्राणी! अपने मन से ध्यानपूर्वक भगवान का सिमरन सुनो, तुझे प्रभु के द्वार पर सुख प्राप्त होगा॥ १॥ रहाउ॥ हे नानक! हमें आठ प्रहर भगवान का ध्यान करना चाहिए, जिसके फलस्वरूप भगवान के दर्शन करने से मनुष्य का मन कृतार्थ हो जाता है॥ २॥१०१॥ १७०॥

गउड़ी महला ५ ॥ सांति भई गुर गोबिदि पाई ॥ ताप पाप बिनसे मेरे भाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राम नामु नित रसन बखान ॥ बिनसे रोग भए कलिआन ॥ १ ॥ पारब्रहम गुण अगम बीचार ॥ साधू संगमि है निसतार ॥ २ ॥ निरमल गुण गावहु नित नीत ॥ गई बिआधि उबरे जन मीत ॥ ३ ॥ मन बच क्रम प्रभु अपना धिआई ॥ नानक दास तेरी सरणाई ॥ ४ ॥ १०२ ॥ १७१ ॥

गोबिन्द गुरु ने जिस व्यक्ति को नाम की देन प्रदान की है, उसे शांति प्राप्त हो गई है। हे मेरे भाई! उस व्यक्ति की जलन एवं पाप नष्ट हो गए हैं॥ १॥ रहाउ॥ अपनी जिह्वा से नित्य ही राम के नाम का बखान करते रहो। तेरे समस्त रोग दूर हो जाएँगे और तुझे मुक्ति प्राप्त होगी॥ १॥ अगम्य पारब्रह्म के गुणों का चिन्तन करते रहो। संतों की संगति में रहने से कल्याण की प्राप्ति होती है॥ २॥ हे मेरे मित्र! जो मनुष्य सदैव हरि की पवित्र महिमा गायन करता है, उसके रोग दूर हो जाते हैं और वह भवसागर से बच जाता है॥ ३॥ मन, वचन एवं कर्म से मैं अपने प्रभु की आराधना करता रहता हूँ। हे प्रभु! दास नानक ने तेरी ही शरण ली है॥ ४॥ १०२॥ १७१॥

गउड़ी महला ५ ॥ नेत्र प्रगासु कीआ गुरदेव ॥ भरम गए पूरन भई सेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सीतला ते रखिआ बिहारी ॥ पारब्रहम प्रभ किरपा धारी ॥ १ ॥ नानक नामु जपै सो जीवै ॥ साधसंगि हरि अंम्रितु पीवै ॥ २ ॥ १०३ ॥ १७२ ॥

गुरदेव ने ज्ञान नेत्र दिए हैं। जिससे मेरे भ्रम दूर हो गए हैं और मेरी साधना सफल हो गई है॥ १॥ रहाउ॥ हे दयालु प्रभु! तूने ही दया करके सीतला से बचाया है। (वर्णनीय है कि गुरु हरिगोबिन्द जी बचपन में सीतला की लपेट में आ गए थे) पारब्रह्म प्रभु ने अपनी कृपा धारण की है॥ १॥ हे नानक! जो प्रभु के नाम का जाप करता है, उसे ही जीवन प्राप्त होता है। संतों की संगति में रहकर वह हरि अमृत का पान करता है॥ २॥ १०३॥ १७२॥

गउड़ी महला ५ ॥ धनु ओहु मसतकु धनु तेरे नेत ॥ धनु ओइ भगत जिन तुम संगि हेत ॥ १ ॥ नाम बिना कैसे सुखु लहीऐ ॥ रसना राम नाम जसु कहीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तिन ऊपरि जाईऐ कुरबाणु ॥ नानक जिनि जपिआ निरबाणु ॥ २ ॥ १०४ ॥ १७३ ॥

हे ईश्वर! वह मस्तक धन्य है (जो तेरे समक्ष झुकता है), वे नेत्र भी धन्य हैं जो तेरे दर्शन करते हैं। वह भक्त धन्य हैं जिनका तेरे साथ अनुराग बना रहता है॥ १॥ प्रभु के नाम-स्मरण के बिना कभी सुख नहीं मिल सकता। हमें अपनी रसना से राम नाम का ही यश बखान करना चाहिए॥ १॥ रहाउ॥ हे नानक! जिन्होंने निर्लिप्त प्रभु के नाम का जाप किया है, हमें उन पर सर्वदा ही कुर्बान होना चाहिए॥२॥ १०४॥ १७३॥

गउड़ी महला ५ ॥ तूंहै मसलति तूंहै नालि ॥ तूहै राखहि सारि समालि ॥ १ ॥ ऐसा रामु दीन दुनी सहाई ॥ दास की पैज रखै मेरे भाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आगै आपि इहु थानु वसि जा कै ॥ आठ पहर मनु हरि कउ जापै ॥ २ ॥ पति परवाणु सचु नीसाणु ॥ जा कउ आपि करहि फुरमानु ॥ ३ ॥ आपे दाता आपि प्रतिपालि ॥ नित नित नानक राम नामु समालि ॥ ४ ॥ १०५ ॥ १७४ ॥

हे भगवान ! तू ही मेरा सलाहकार हैं और तू ही मेरे साथ रहता है। तू ही ध्यानपूर्वक मेरी रक्षा करता है॥ १॥ हे मेरे भाई ! ऐसा है मेरा राम जो इहलोक एवं परलोक में मेरा सहायक है। वह अपने सेवक की लाज–प्रतिष्ठा रखता है॥ १॥ रहाउ॥ जिस प्रभु के वश में यह लोक है, वही स्वयं परलोक में भी रक्षक है। यह मन दिन–रात भगवान के नाम का जाप करता रहता है॥ २॥ उसकी प्रतिष्ठा स्वीकृत होती है और उसको ही सत्यनाम का चिन्ह लगता है, जिसके लिए प्रभु स्वयं हुक्म लागू करता है॥ ३॥ ईश्वर स्वयं दाता है और स्वयं ही पालनहार है। हे नानक ! हमेशा ही प्रभु के नाम की आराधना करते रहो॥ ४॥ १०५॥ १७४॥

गउड़ी महला ५ ॥ सतिगुरु पूरा भइआ क्रिपालु ॥ हिरदै वसिआ सदा गुपालु ॥ १ ॥ रामु रवत सद ही सुखु पाइआ ॥ मइआ करी पूरन हरि राइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहु नानक जा के पूरे भाग ॥ हरि हरि नामु असथिरु सोहागु ॥ २ ॥ १०६ ॥

जब पूर्ण सतिगुरु जी कृपा के घर में आ जाते हैं तो जगत् का मालिक गोपाल मनुष्य के हृदय में हमेशा के लिए निवास कर लेता है॥ १॥ राम का चिन्तन करने से मुझे सदैव सुख प्राप्त हो गया है। पूर्ण हरि–परमेश्वर ने मुझ पर बड़ी दया धारण की है॥ १॥ रहाउ॥ हे नानक ! कह – जिस व्यक्ति के मस्तक पर पूर्ण भाग्य उदय होते हैं, वह सदा प्रभु–परमेश्वर का नाम–स्मरण करता है और सदा स्थिर रहने वाला स्वामी अपना हाथ रखता है॥ २॥ १०६॥

गउड़ी महला ५ ॥ धोती खोलि विछाए हेठि ॥ गरधप वांगू लाहे पेटि ॥ १ ॥ बिनु करतूती मुकति न पाईऐ ॥ मुकति पदारथु नामु धिआईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूजा तिलक करत इसनानां ॥ छुरी काढि लेवै हथि दाना ॥ २ ॥ बेदु पड़ै मुखि मीठी बाणी ॥ जीआं कुहत न संगै पराणी ॥ ३ ॥ कहु नानक जिसु किरपा धारै ॥ हिरदा सुधु ब्रहमु बीचारै ॥ ४ ॥ १०७ ॥

हे मान्यवर ! ब्राह्मण अपनी धोती खोलकर अपने नीचे बिछा लेता है। जो कुछ उसके हाथ (खीर–पूरी इत्यादि) आता है, गधे की भाँति अपने पेट में डालता रहता है॥ १॥ शुभ कर्मों के बिना मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती। मुक्ति तो भगवान के नाम का ध्यान करने से ही मिलती है॥ १॥ रहाउ॥

ब्राह्मण पूजा–अर्चना एवं स्नान करता है और अपने माथे पर तिलक लगाता है। दान–पुण्य लेने के लिए स्वर्ग का धोखा देकर छुरी निकाल लेता है। (अर्थात् निर्दयता से दान लेता है)॥ २॥ वह अपने मुख से मधुर स्वर में वेदों का पाठ करता है। नश्वर मनुष्य जीव–जन्तुओं को मारने में संकोच नहीं करता॥ ३॥ हे नानक ! जिस व्यक्ति पर प्रभु कृपा करता है, उसका हृदय शुद्ध हो जाता है और वह प्रभु का चिन्तन करता रहता है॥ ४॥ १०७॥

गउड़ी महला ५ ॥ थिरु घरि बैसहु हरि जन पिआरे ॥ सतिगुरि तुमरे काज सवारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुसट दूत परमेसरि मारे ॥ जन की पैज रखी करतारे ॥ १ ॥ बादिसाह साह सभ वसि करि दीने ॥ अंम्रित नाम महा रस पीने ॥ २ ॥ निरभउ होइ भजहु भगवान ॥ साधसंगति मिलि कीनो दानु ॥ ३ ॥ सरणि परे प्रभ अंतरजामी ॥ नानक ओट पकरी प्रभ सुआमी ॥ ४ ॥ १०८ ॥

हे प्रभु के प्रिय भक्तजनों! अपने हृदय घर में एकाग्रचित होकर बैठो। सतिगुरु ने तुम्हारे कार्य संवार दिए हैं।। १।। रहाउ।। परमेश्वर ने दुष्ट एवं नीचों का नाश कर दिया है। अपने सेवक की प्रतिष्ठा सृजनहार प्रभु ने रखी है।। १।। संसार के राजा–महाराजा प्रभु ने अपने सेवक के सब अधीन कर दिए हैं। उसने प्रभु के अमृत नाम का परम रस पान किया है।। २।। निडर होकर भगवान का भजन करो। साध संगत में मिलकर प्रभु स्मरण का यह दान (फल) दूसरों को भी प्रदान करो।। ३।। नानक का कथन है कि हे अन्तर्यामी प्रभु! मैं तेरी शरण में हूँ और उसने जगत् के स्वामी प्रभु का सहारा ले लिया है।। ४।। १०८।।

गउड़ी महला ५ ॥ हरि संगि राते भाहि न जलै ॥ हरि संगि राते माइआ नही छलै ॥ हरि संगि राते नही डूबै जला ॥ हरि संगि राते सुफल फला ॥ १ ॥ सभ भै मिटहि तुमारै नाइ ॥ भेटत संगि हरि हरि गुन गाइ ॥ रहाउ ॥ हरि संगि राते मिटै सभ चिंता ॥ हरि सिउ सो रचै जिसु साध का मंता ॥ हरि संगि राते जम की नही त्रास ॥ हरि संगि राते पूरन आस ॥ २ ॥ हरि संगि राते दूखु न लागै ॥ हरि संगि राता अनदिनु जागै ॥ हरि संगि राता सहज घरि वसै ॥ हरि संगि राते भ्रमु भउ नसै ॥ ३ ॥ हरि संगि राते मति ऊतम होइ ॥ हरि संगि राते निरमल सोइ ॥ कहु नानक तिन कउ बलि जाई ॥ जिन कउ प्रभु मेरा बिसरत नाही ॥ ४ ॥ १०६ ॥

जो व्यक्ति भगवान की भक्ति में मग्न रहता है, वह तृष्णा की अग्नि में नहीं जलता। जो व्यक्ति प्रभु के प्रेम में मग्न रहता है, उससे माया किसी प्रकार का छल नहीं करती। जो व्यक्ति भगवान की स्मृति में मग्न रहता है, वह भवसागर के जल में नहीं डूबता। जो व्यक्ति प्रभु की प्रीति में मग्न रहता है, उसको जीवन का श्रेष्ठ फल प्राप्त होता है।। १।। हे प्रभु! तेरे नाम से सारे भय नाश हो जाते हैं। हे नश्वर प्राणी! सत्संग में मिलकर तू हरि प्रभु का यश–गायन करता रह।। रहाउ।। जो व्यक्ति भगवान की याद में मग्न रहता है, उसकी तमाम चिन्ता मिट जाती है। लेकिन भगवान की याद में वही व्यक्ति जुड़ता है जिसे साधु का नाम–मंत्र मिल जाता है। प्रभु की याद में अनुरक्त होने से मृत्यु का भय नहीं सताता। प्रभु की स्मृति में अनुरक्त होने से तमाम मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं।। २।। परमात्मा के चरणों में जुड़े रहने से कोई दुःख स्पर्श नहीं करता। प्रभु के चिंतन में मस्त हुआ व्यक्ति दिन–रात सचेत रहता है। प्रभु के चिंतन में जुड़े रहने से व्यक्ति सहज घर में वास करता है। प्रभु के स्मरण में रहने से मनुष्य का भ्रम एवं भय दौड़ जाते हैं।। ३।। प्रभु के चिन्तन में जुड़े रहने से बुद्धि श्रेष्ठ हो जाती है। प्रभु के स्मरण में जुड़े रहने से जीवन–आचरण निर्मल हो जाता है। हे नानक! मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ, जो मेरे प्रभु को विस्मृत नहीं करते।। ४।। १०६।।

गउड़ी महला ५ ॥ उदमु करत सीतल मन भए ॥ मारगि चलत सगल दुख गए ॥ नामु जपत मनि भए अनंद ॥ रसि गाए गुन परमानंद ॥ १ ॥ खेम भइआ कुसल घरि आए ॥ भेटत साधसंगि गई बलाए ॥ रहाउ ॥ नेत्र पुनीत पेखत ही दरस ॥ धनि मसतक चरन कमल ही परस ॥ गोबिंद की टहल सफल इह कांइआ ॥ संत प्रसादि परम पदु पाइआ ॥ २ ॥ जन की कीनी आपि सहाइ ॥ सुखु पाइआ लगि दासह पाइ ॥ आपु गइआ ता आपहि भए ॥ क्रिपा निधान की सरनी पए ॥ ३ ॥ जो चाहत सोई जब पाइआ ॥ तब ढूंढन कहा को जाइआ ॥ असथिर भए बसे सुख आसन ॥ गुर प्रसादि नानक सुख बासन ॥ ४ ॥ ११० ॥

संतों की पावन सभा में जाने का उद्यम करने से मन शीतल हो जाता है। प्रभु–मार्ग का अनुसरण करने से तमाम दुःख दूर हो गए हैं। प्रभु के नाम का जाप करने से मन प्रसन्न हो जाता है। प्रेमपूर्वक

प्रभु की महिमा गायन करने से परमानंद प्राप्त हो जाता है॥ १॥ संतों की सभा में रहने से तमाम मुसीबतें दूर हो गई हैं और चारों ओर खुशियाँ हो गई हैं तथा प्रसन्नता घर में आ गई है। ॥ १॥ रहाउ॥ गुरु जी के दर्शन करते ही नेत्र पुनीत हो जाते हैं। गुरु जी के चरणों को स्पर्श करते ही मस्तक प्रशंसनीय हो जाता है। यह शरीर गोविन्द की सेवा करने से फलदायक हो जाता है। संतों की कृपा से मुझे परम पद (मोक्ष) मिल गया है॥ २॥ अपने सेवकों की प्रभु स्वयं ही सहायता करता है। प्रभु के सेवकों के चरण स्पर्श करके मुझे सुख उपलब्ध हो गया है। जब अहंत्व चला जाता है तो मनुष्य स्वयं ही स्वामी हो जाता है और दया के भण्डार प्रभु की शरण लेता है॥ ३॥ जब मनुष्य भगवान को पा लेता है, जिसकी वह कामना करता रहता है, तब वह उसको ढूँढने के लिए किसी स्थान पर नहीं जाता। वह अमर हो जाता है और सुख के आसन में वास करता है। हे नानक! गुरु की कृपा से वह प्रसन्नता के घर में दाखिल हो गया है॥ ४॥ ११०॥

गउड़ी महला ५ ॥ कोटि मजन कीनो इसनान ॥ लाख अरब खरब दीनो दानु ॥ जा मनि वसिओ हरि को नामु ॥ १ ॥ सगल पवित गुन गाइ गुपाल ॥ पाप मिटहि साधू सरनि दइआल ॥ रहाउ ॥ बहुतु उरध तप साधन साधे ॥ अनिक लाभ मनोरथ लाधे ॥ हरि हरि नाम रसन आराधे ॥ २ ॥ सिम्रिति सासत बेद बखाने ॥ जोग गिआन सिध सुख जाने ॥ नामु जपत प्रभ सिउ मन माने ॥ ३ ॥ अगाधि बोधि हरि अगम अपारे ॥ नामु जपत नामु रिदे बीचारे ॥ नानक कउ प्रभ किरपा धारे ॥ ४ ॥ १११ ॥

जिस व्यक्ति के अन्तर्मन में भगवान का नाम निवास कर लेता है, उसने (मानो) करोड़ों तीर्थों पर स्नान कर लिए और लाखों, अरबों एवं खरबों पुण्यदान करने का फल प्राप्त कर लेता है॥ १॥ जो व्यक्ति गोपाल की गुणस्तुति करते हैं, वे सभी पवित्र हैं। दयालु संतों का आश्रय लेने से पाप नाश हो जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति अपनी रसना से हरि–परमेश्वर के नाम की आराधना करता रहता है, मानो उसने अधिकतर उल्टे लटककर अनेकों तपों के साधन साध लिए तथा अनेक लाभ और मनोकामनाएँ प्राप्त करने का फल पा लिया है॥ २॥ जब मनुष्य प्रभु से संतुष्ट हो जाता है और उसका नाम–स्मरण करता है, मानो उसने स्मृतियां, शास्त्र एवं वेदों का बखान कर लिया है और उसने योग, ज्ञान एवं सिद्धियों का सुख समझ लिया है॥ ३॥ उस अगम्य, अपरंपार भगवान का ज्ञान अगाध है। नानक पर ईश्वर ने कृपा की है और वह नाम का जाप करता है और हरि के नाम का ही वह अपने हृदय में ध्यान करता है॥ ४॥ १११॥

गउड़ी मः ५ ॥ सिमरि सिमरि सिमरि सुखु पाइआ ॥ चरन कमल गुर रिदै बसाइआ ॥ १ ॥ गुर गोबिंदु पारब्रहमु पूरा ॥ तिसहि अराधि मेरा मनु धीरा ॥ रहाउ ॥ अनदिनु जपउ गुरू गुर नाम ॥ ता ते सिधि भए सगल कांम ॥ २ ॥ दरसन देखि सीतल मन भए ॥ जनम जनम के किलबिख गए ॥ ३ ॥ कहु नानक कहा भै भाई ॥ अपने सेवक की आपि पैज रखाई ॥ ४ ॥ ११२ ॥

भगवान का सिमरन करने से मुझे सुख प्राप्त हो गया है और गुरु के सुन्दर चरण कमल अपने हृदय में बसा लिए हैं॥ १॥ पारब्रह्म, गुरु–गोबिन्द सर्वोपरि है। उसकी आराधना करने से मेरा मन धैर्यवान हो गया है॥ रहाउ॥ मैं तो रात–दिन गुरु का नाम ही जपता रहता हूँ। जिसकी कृपा से मेरे तमाम कार्य सम्पूर्ण हो गए हैं॥ २॥ गुरु जी के दर्शन करके मेरा मन शीतल हो गया है और मेरे जन्म–जन्मांतरों के पाप मिट गए हैं॥ ३॥ नानक का कथन है कि हे भाई! मेरे लिए अब भय कहाँ है? अपने सेवक की गुरु ने स्वयं ही लाज–प्रतिष्ठा रखी है॥ ४॥ ११२॥

गउड़ी महला ५ ॥ अपने सेवक कउ आपि सहाई ॥ नित प्रतिपारै बाप जैसे माई ॥ १ ॥ प्रभ की सरनि उबरै सभ कोइ ॥ करन करावन पूरन सचु सोइ ॥ रहाउ ॥ अब मनि बसिआ करनैहारा ॥ भै बिनसे आतम सुख सारा ॥ २ ॥ करि किरपा अपने जन राखे ॥ जनम जनम के किलबिख लाथे ॥ ३ ॥ कहनु न जाइ प्रभ की वडिआई ॥ नानक दास सदा सरनाई ॥ ४ ॥ ११३ ॥

भगवान अपने सेवक का स्वयं ही सहायक होता है। वह नित्य ही ऐसे देखभाल करता है जैसे माता–पिता करते हैं॥ १॥ प्रभु की शरण में आने से हरेक व्यक्ति का उद्धार हो जाता है। वह परमात्मा ही सबकुछ करता एवं जीवों से करवाता है, जो सदैव सत्य एवं सर्वव्यापक है॥ रहाउ॥ अब मेरा मन उस जगत् के रचयिता प्रभु में वास करता है। जिससे सभी भय नाश हो गए हैं और आत्मा को सुख प्राप्त हो गया है॥ २॥ अपने सेवकों को प्रभु ने कृपा धारण करके बचा लिया है। उनके जन्म–जन्मांतरों के पाप निवृत्त हो गए हैं॥ ३॥ प्रभु की महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता। हे नानक! प्रभु के सेवक सदैव प्रभु की शरण में रहते हैं॥ ४॥ ११३॥

रागु गउड़ी चेती महला ५ दुपदे १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

राम को बलु पूरन भाई ॥ ता ते ब्रिथा न बिआपै काई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जो चितवै दासु हरि माई ॥ सो सो करता आपि कराई ॥ १ ॥ निंदक की प्रभि पति गवाई ॥ नानक हरि गुण निरभउ गाई ॥ २ ॥ ११४ ॥

हे भाई! राम की शक्ति सर्वव्यापक है। राम की उस शक्ति के प्रभाव से कोई दुःख–क्लेश प्रभावित नहीं करता॥ १॥ रहाउ॥ हे मेरी माता! जो कुछ भी प्रभु का सेवक अपने मन में कल्पना करता है, वह सब कुछ परमात्मा स्वयं ही करवा देता है॥ १॥ निन्दा करने वालों की प्रभु इज्जत गंवा देता है। हे नानक! वह निडर प्रभु की गुणस्तुति करता रहता है॥ २॥ ११४॥

गउड़ी महला ५ ॥ भुज बल बीर ब्रहम सुख सागर गरत परत गहि लेहु अंगुरीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ स्रवनि न सुरति नैन सुंदर नही आरत दुआरि रटत पिंगुरीआ ॥ १ ॥ दीना नाथ अनाथ करुणा मै साजन मीत पिता महतरीआ ॥ चरन कवल हिरदै गहि नानक भै सागर संत पारि उतरीआ ॥ २ ॥ २ ॥ ११५ ॥

हे भुजबल शूरवीर प्रभु! हे सुखों के सागर! मैं (विकारों के) गड्ढे में गिर रहा हूँ, मुझे अंगुलि से पकड़ लीजिए॥ १॥ रहाउ॥ हे प्रभु! मेरे कानों में तेरी महिमा सुनने की सूझ नहीं, मेरे नयन सुन्दर नहीं और मैं दुखी एवं लंगड़ा तेरे द्वार पर पुकारता हूँ (कि मुझे विकारों के गड्ढे से बचा लो)॥ १॥ हे दीनानाथ! हे अनाथों पर करुणा करने वाले! तू ही मेरा मित्र, सखा, पिता एवं माता है। हे नानक! प्रभु के चरण कमलों को अपने हृदय से लगा कर रख, जो अपने संतों को भयानक सागर से पार कर देता है॥ २॥ २॥ ११५॥

रागु गउड़ी बैरागणि महला ५ १ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

दय गुसाई मीतुला तूं संगि हमारै बासु जीउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुझ बिनु घरी न जीवना ध्रिगु रहणा संसारि ॥ जीअ प्राण सुखदातिआ निमख निमख बलिहारि जी ॥ १ ॥ हसत अलंबनु देहु प्रभ गरतहु उधरु गोपाल ॥ मोहि निरगुन मति थोरीआ तूं सद ही दीन दइआल ॥ २ ॥ किआ सुख तेरे संमला

कवन बिधी बीचार ॥ सरणि समाई दास हित ऊचे अगम अपार ॥ ३ ॥ सगल पदारथ असट सिधि नाम महा रस माहि ॥ सुप्रसंन भए केसवा से जन हरि गुण गाहि ॥ ४ ॥ मात पिता सुत बंधपो तूं मेरे प्राण अधार ॥ साधसंगि नानकु भजै बिखु तरिआ संसारु ॥ ५ ॥ १ ॥ ११६ ॥

हे दया के पुंज! हे गुसाईं! तू मेरा प्रिय मित्र है और हमेशा ही मेरे साथ बसता रह॥ १॥ रहाउ॥ हे प्रभु! तेरे बिना मैं एक क्षण भर के लिए भी जीवित नहीं रह सकता और तेरे बिना इस दुनिया में जीना धिक्कार योग्य है। हे आत्मा, प्राण एवं सुख प्रदान करने वाले प्रभु! हर क्षण मैं तुझ पर कुर्बान जाता हूँ॥ १॥ हे गोपाल! मुझे अपने हाथ का आश्रय दीजिए और मुझे गड्ढे में से बाहर निकालें क्योंकि मैं निर्गुण एवं अल्पबुद्धि वाला हूँ लेकिन तू सदैव ही दीनदयाल है॥ २॥ तेरे दिए हुए कौन-कौन से सुख मैं स्मरण कर सकता हूँ और किस विधि से मैं तेरी आराधना कर सकता हूँ? हे सर्वोच्च, अगम्य एवं अपार प्रभु! तू अपने सेवकों से प्रेम करता है और जो तेरा आश्रय लेते हैं, उनको अपने साथ लीन कर लेता है॥ ३॥ हे भाई! संसार के समस्त पदार्थ, आठों सिद्धियाँ, महा रस नाम के परम अमृत में विद्यमान हैं। हे भाई! जिन पर केशव सुप्रसन्न होता है, वे व्यक्ति प्रभु की गुणस्तुति करते रहते हैं॥ ४॥ हे प्राणों के आधार प्रभु! तू ही मेरी माता, पिता, पुत्र, रिश्तेदार सब कुछ तू ही है। संतों की संगति में नानक तेरा भजन करता है, जो तेरी स्तुति करता है वह विष से भरे संसार सागर से पार हो जाता है॥५॥१॥ ११६॥

गउड़ी बैरागणि रहोए के छंत के घरि मः ५ १ओं सतिगुर प्रसादि॥

है कोई राम पिआरो गावै ॥ सरब कलिआण सूख सचु पावै ॥ रहाउ ॥ बनु बनु खोजत फिरत बैरागी ॥ बिरले काहू एक लिव लागी ॥ जिनि हरि पाइआ से वडभागी ॥ १ ॥ ब्रहमादिक सनकादिक चाहै ॥ जोगी जती सिध हरि आहै ॥ जिसहि परापति सो हरि गुण गाहै ॥ २ ॥ ता की सरणि जिन बिसरत नाही ॥ वडभागी हरि संत मिलाही ॥ जनम मरण तिह मूले नाही ॥ ३ ॥ करि किरपा मिलु प्रीतम पिआरे ॥ बिनउ सुनहु प्रभ ऊच अपारे ॥ नानकु मांगतु नामु अधारे ॥ ४ ॥ १ ॥ ११७ ॥

कोई विरला व्यक्ति ही प्रिय राम का यश गायन करता है? वह सत्य, सर्व कल्याण एवं सुख प्राप्त कर लेता है॥ रहाउ॥ वैरागी अनेकों वनों में प्रभु की खोज हेतु जाता है। परन्तु कोई विरला पुरुष ही है जिसकी सुरति एक ईश्वर से लगती है। जिन्होंने भगवान को पा लिया है, ऐसे व्यक्ति बड़े भाग्यशाली हैं॥ १॥ ब्रह्मा इत्यादि देवते एवं सनक, सनन्दन एवं सनत कुमार भी भगवान को मिलने की लालसा क़रते हैं। योगी, ब्रह्मचारी एवं सिद्ध पुरुष ईश्वर से मिलने की आशा करते रहते हैं। जिसको यह देन प्राप्त हुई है, वह ईश्वर की महिमा करता रहता है॥ २॥ मैंने उनकी शरण ली है, जिनको ईश्वर नहीं भूलता। बड़ी किस्मत से ही हरि का संत मिलता है। चूंकि वह जीवन-मृत्यु से वास्तव में मुक्त है॥ ३॥ हे मेरे प्रियतम प्यारे! कृपा करके मुझे दर्शन दीजिए। हे मेरे सर्वोपरि एवं अपार प्रभु! मेरी एक प्रार्थना सुनो, नानक तेरे नाम का आधार ही माँगता है॥ ४॥ १॥ ११७॥

रागु गउड़ी पूरबी महला ५ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

कवन गुन प्रानपति मिलउ मेरी माई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रूप हीन बुधि बल हीनी मोहि परदेसनि दूर ते आई ॥ १ ॥ नाहिन दरबु न जोबन माती मोहि अनाथ की करहु समाई ॥ २ ॥ खोजत खोजत भई बैरागनि प्रभ दरसन कउ हउ फिरत तिसाई ॥ ३ ॥ दीन दइआल क्रिपाल प्रभ नानक साधसंगि मेरी जलनि बुझाई ॥ ४ ॥ १ ॥ ११८ ॥

हे मेरी माता ! मैं कौन से गुण द्वारा प्राणपति प्रभु को मिल सकती हूँ ?॥ १॥ रहाउ॥ मैं रूपहीन, बुद्धिहीन एवं बलहीन हूँ और मैं परदेसिन विभिन्न योनियों की यात्रा से गुजरकर दूर से आई हूँ॥ १॥ मेरे पास न ही (नाम–) धन है और न ही यौवन का गर्व है। हे प्रभु ! मुझ अनाथ को अपने साथ मिला लो॥ २॥ ढूँढते–ढूँढते मैं बैरागिन हो गई हूँ। प्रभु के दर्शनों हेतु मैं प्यासी होकर फिर रही हूँ॥ ३॥ नानक का कथन है कि हे दीनदयाल ! हे कृपा के घर प्रभु ! संतों की संगति ने मेरी यह जुदाई की जलन बुझा दी है॥ ४॥ १॥ ११८॥

गउड़ी महला ५ ॥ प्रभ मिलबे कउ प्रीति मनि लागी ॥ पाइ लगउ मोहि करउ बेनती कोऊ संतु मिलै बडभागी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु अरपउ धनु राखउ आगै मन की मति मोहि सगल तिआगी ॥ जो प्रभ की हरि कथा सुनावै अनदिनु फिरउ तिसु पिछै विरागी ॥ १ ॥ पूरब करम अंकुर जब प्रगटे भेटिओ पुरखु रसिक बैरागी ॥ मिटिओ अंधेरु मिलत हरि नानक जनम जनम की सोई जागी ॥ २ ॥ २ ॥ ११९ ॥

मेरे मन में प्रभु को मिलने के लिए प्रेम उत्पन्न हो गया है। यदि मुझे सौभाग्य से कोई गुरु–संत आकर मिल जाए, तो मैं उसके चरण स्पर्श करती हूँ और उसे विनती करती हूँ॥ १॥ रहाउ॥ मैं अपना मन उसको अर्पण करती हूँ, उसके समक्ष अपना धन अर्पित करती हूँ और मैंने अपने मन की मति सब त्याग दी है, जो मुझे प्रभु की हरि–कथा सुनाता है। मैं वैराग्यवान होकर रात–दिन उसके आगे–पीछे फिरती हूँ॥ १॥ जब पूर्व जन्मों में किए शुभ कर्मों के अंकुर प्रकट हो गए तो उसे सर्वव्यापक प्रभु मिल गया है जो समस्त प्राणियों में विराजमान होकर रस भोगने वाला है और जो रसों से निर्लिप्त भी है। हे नानक ! ईश्वर को मिल जाने से मेरा (अज्ञानता का) अंधेरा मिट गया है और जन्म–जन्मांतरों की मोह–माया में सोई हुई मैं जाग गई हूँ॥ २॥ २॥ ११९॥

गउड़ी महला ५ ॥ निकसु रे पंखी सिमरि हरि पांख ॥ मिलि साधू सरणि गहु पूरन राम रतनु हीअरे संगि राखु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भ्रम की कूई त्रिसना रस पंकज अति तीख्यण मोह की फास ॥ काटनहार जगत गुर गोबिद चरन कमल ता के करहु निवास ॥ १ ॥ करि किरपा गोबिंद प्रभ प्रीतम दीना नाथ सुनहु अरदासि ॥ करु गहि लेहु नानक के सुआमी जीउ पिंडु सभु तुमरी रासि ॥ २ ॥ ३ ॥ १२० ॥

हे मेरे मन रूपी पक्षी ! भगवान के सिमरन को अपने पंख बनाकर संसार रूपी घोंसले से स्वयं को निकाल कर बचा ले। संतों से मिलकर उनकी शरण ले और प्रभु के पूर्ण नाम–रत्न को अपने हृदय से लगाकर रख॥ १॥ रहाउ॥ अंधविश्वास का एक लघु कुआँ है, हर्षोल्लास मनाने की तृष्णा इसका कीचड़ है और मोह की फाँसी अत्यंत तीक्ष्ण है। जगद्गुरु गोबिन्द उन बंधनों को काटने वाला है। उसके चरण कमलों में निवास करो॥ १॥ हे गोबिन्द ! हे दीनानाथ ! हे मेरे प्रियतम प्रभु ! कृपा करके मेरी प्रार्थना सुनो। हे नानक के स्वामी, मुझे हाथ से पकड़ ले, मेरी आत्मा और शरीर तमाम तेरी ही पूँजी हैं॥ २॥ ३॥ १२०॥

गउड़ी महला ५ ॥ हरि पेखन कउ सिमरत मनु मेरा ॥ आस पिआसी चितवउ दिनु रैनी है कोई संतु मिलावै नेरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सेवा करउ दास दासन की अनिक भांति तिसु करउ निहोरा ॥ तुला धारि तोले सुख सगले बिनु हरि दरस सभो ही थोरा ॥ १ ॥ संत प्रसादि गाए गुन सागर जनम जनम को जात बहोरा ॥ आनद सूख भेटत हरि नानक जनमु क्रितारथु सफलु सवेरा ॥ २ ॥ ४ ॥ १२१ ॥

मेरा मन भगवान के दर्शन करने के लिए उसका सिमरन करता रहता है। अपने स्वामी को देखने की आशा एवं प्यास में मैं दिन–रात उसका चिंतन करती हूँ। क्या कोई ऐसा संत है, जो मुझे निकट से उससे मिला दे॥ १॥ रहाउ॥ मैं अपने स्वामी के सेवकों के सेवकों की सेवा करती हूँ और अनेक उपायों से उसके समक्ष निवेदन करती हूँ। मैंने तमाम सुख तराजू में रखकर तोले हैं, लेकिन ईश्वर के दर्शनों के बिना सभी थोड़े हैं॥ १॥ संतों की कृपा से मैंने गुणों के सागर का यश गायन किया है और वह जन्म–जन्मांतरों के भटकते हुए को (जीवन–मृत्यु के चक्र में से) मोड़कर ले आता है। हे नानक! ईश्वर को मिलने से उसने आनंद एवं सुख प्राप्त कर लिए हैं और उसका जन्म कृतार्थ हो गया है तथा उसका सवेरा भी सफल हो गया है॥ २॥ ४॥ १२१॥

रागु गउड़ी पूरबी, महला ५ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

किन बिधि मिलै गुसाई मेरे राम राइ ॥ कोई ऐसा संतु सहज सुखदाता मोहि मारगु देइ बताई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंतरि अलखु न जाई लखिआ विचि पड़दा हउमै पाई ॥ माइआ मोहि सभो जगु सोइआ इहु भरमु कहहु किउ जाई ॥ १ ॥ एका संगति इकतु ग्रिहि बसते मिलि बात न करते भाई ॥ एक बसतु बिनु पंच दुहेले ओह बसतु अगोचर ठाई ॥ २ ॥ जिस का ग्रिहु तिनि दीआ ताला कुंजी गुर सउपाई ॥ अनिक उपाव करे नही पावै बिनु सतिगुर सरणाई ॥ ३ ॥ जिन के बंधन काटे सतिगुर तिन साधसंगति लिव लाई ॥ पंच जना मिलि मंगलु गाइआ हरि नानक भेदु न भाई ॥ ४ ॥ मेरे राम राइ इन बिधि मिलै गुसाई ॥ सहजु भइआ भ्रमु खिन महि नाठा मिलि जोती जोति समाई ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ १ ॥ १२२ ॥

हे मेरे राम! मैं किस विधि से अपने गोसाईं प्रभु से मिल सकता हूँ? क्या कोई ऐसा सहज सुखदाता संत है जो मुझे प्रभु का मार्ग बता दे॥ १॥ रहाउ॥ अलक्ष्य परमेश्वर जीव के अन्तर्मन में ही है, किन्तु अंतर में पड़े हुए अहंकार के पर्दे के कारण वह देखा नहीं जा सकता। सारी दुनिया मोह–माया में निद्रामग्न है। बताइए? यह भ्रम किस प्रकार दूर हो सकता है॥ १॥ हे भाई! आत्मा और परमात्मा की एक ही संगति है और इकट्ठे एक ही घर में वास करते हैं परन्तु वह एक दूसरे से बातचीत नहीं करते। ईश्वर नाम के एक पदार्थ के बिना पाँचों ज्ञानेन्द्रियां दुःखी हैं। वह पदार्थ अगोचर स्थान पर विद्यमान है॥ २॥ जिस भगवान का यह शरीर रूपी गृह है, उसने ही इसे मोह–माया का ताला लगा दिया है और कुंजी गुरु को सौंप दी है। सतिगुरु की शरण लिए बिना दूसरे अनेक उपाय करने पर भी मनुष्य उस कुंजी को प्राप्त नहीं कर सकता॥ ३॥ जिनके मोह–माया के बंधन सतिगुरु ने काट दिए हैं। उन्होंने ही साधसंगत में अपनी सुरति लगाई है। हे नानक! उनकी पाँचों ज्ञानेन्द्रियों ने मिलकर मंगल गीत गाए हैं। हे भाई! उनमें और ईश्वर में कोई अन्तर नहीं रह गया॥ ४॥ हे मेरे राम! गोसाईं प्रभु इस विधि से मिलता है। जिस व्यक्ति को सहज आनंद प्राप्त हो गया, उसकी दुविधा एक क्षण में ही दौड़ गई है और उसकी ज्योति परमज्योति में विलीन हो गई है॥ १॥ रहाउ दूजा॥ १॥ १२२॥

गउड़ी महला ५ ॥ ऐसो परचउ पाइओ ॥ करी क्रिपा दइआल बीठुलै सतिगुर मुझहि बताइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जत कत देखउ तत तत तुम ही मोहि इहु बिसुआसु होइ आइओ ॥ कै पहि करउ अरदासि बेनती जउ सुनतो है रघुराइओ ॥ १ ॥ लहिओ सहसा बंधन गुरि तोरे तां सदा सहज सुखु पाइओ ॥ होणा सा सोई फुनि होसी सुखु दुखु कहा दिखाइओ ॥ २ ॥ खंड ब्रहमंड का एको ठाणा

गुरि परदा खोलि दिखाइओ ॥ नउ निधि नामु निधानु इक ठाई तउ बाहरि कैठै जाइओ ॥ ३ ॥ एकै कनिक अनिक भाति साजी बहु परकार रचाइओ ॥ कहु नानक भरमु गुरि खोई है इव ततै ततु मिलाइओ ॥ ४ ॥ २ ॥ १२३ ॥

मेरी भगवान से ऐसी मैत्री पड़ गई है कि अपनी कृपा करके दयालु बिट्ठल प्रभु ने मुझे सतिगुरु का पता बता दिया है॥ १॥ रहाउ॥ जहाँ कहीं भी मैं देखता हूँ, वहाँ मैं तुझे ही पाता हूँ। अब मेरा यह दृढ़ विश्वास हो गया है। हे रघुराई ! मैं किसके पास विनती व प्रार्थना करूँ, जब तू सबकुछ स्वयं सुन रहा है॥ १॥ गुरु ने जिस व्यक्ति के मोह–माया के बन्धन तोड़ दिए हैं, उसकी दुविधा समाप्त हो गई है और उसे हमेशा के लिए सहज सुख मिल गया है। ईश्वरेच्छा से दुनिया में जो कुछ भी होना है, अंतत अवश्य होगा। भगवान के हुक्म के सिवाय दुःख एवं सुख तब कहाँ देखा जा सकता है ? ॥ २॥ खण्डों और ब्रह्माण्डों का एक प्रभु ही सहारा है। अज्ञानता का पर्दा दूर करके गुरु जी ने मुझे यह दिखा दिया है। नवनिधि एवं नाम रूपी भंडार एक स्थान (मन) में है। तब मनुष्य कौन से बाहरी स्थान को जाए ?॥ ३॥ जैसे एक सोने से सुनार ने आभूषणों की विभिन्न किस्मों की बनावट बना दी, उसी भाँति प्रभु ने अनेक किस्मों की यह सृष्टि–रचना की है। हे नानक ! गुरु ने जिसकी दुविधा निवृत्त कर दी है। जैसे सोने के आभूषण अंतत : सोना हो जाते हैं। उसी प्रकार प्रत्येक तत्व, मूल तत्व (ईश्वर) से मिल जाता है॥ ४॥ २॥ १२३॥

गउड़ी महला ५ ॥ अउध घटै दिनसु रैनारे ॥ मन गुर मिलि काज सवारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करउ बेनंती सुनहु मेरे मीता संत टहल की बेला ॥ ईहा खाटि चलहु हरि लाहा आगै बसनु सुहेला ॥ १ ॥ इहु संसारु बिकारु सहसे महि तरिओ ब्रहम गिआनी ॥ जिसहि जगाइ पीआए हरि रसु अकथ कथा तिनि जानी ॥ २ ॥ जा कउ आए सोई विहाझहु हरि गुर ते मनहि बसेरा ॥ निज घरि महलु पावहु सुख सहजे बहुरि न होइगो फेरा ॥ ३ ॥ अंतरजामी पुरख बिधाते सरधा मन की पूरे ॥ नानकु दासु इही सुखु मागै मो कउ करि संतन की धूरे ॥ ४ ॥ ३ ॥ १२४ ॥

हे मेरे मन ! तू इस दुनिया में जिस मनोरथ हेतु आया है, गुरु से मिलकर अपना वह कार्य संवार ले क्योंकि तेरी जीवन–अवधि दिन–रात कम होती जा रही है अर्थात् तेरी उम्र बीतती जा रही है॥ १॥ रहाउ॥ हे मेरे मित्र ! मैं एक प्रार्थना करता हूँ, ध्यानपूर्वक सुनो। साधुओं की सेवा करने का यह स्वर्णिम अवसर है। इहलोक में प्रभु–नाम का लाभ प्राप्त करके प्रस्थान कर। परलोक में तुझे सुन्दर निवास प्राप्त होगा॥ १॥ यह दुनिया विकारों एवं (मोह–माया के) सन्देह से भरी हुई है तथा केवल ब्रह्मज्ञानी ही भवसागर से पार होता है। भगवान जिस व्यक्ति को मोह–माया की निद्रा से जगा देता है, उसे ही वह हरि–रस का पान करवाता है और फिर वह अकथनीय प्रभु की कथा को समझ लेता है॥ २॥ हे जीव ! इस दुनिया में तू जिस नाम–पदार्थ का सौदा खरीदने के लिए आया है, उस नाम–पदार्थ को खरीद ले। गुरु की कृपा से प्रभु तेरे मन में निवास कर लेगा। अपने हृदय घर में ही प्रभु को पाकर तुझे सहज सुख प्राप्त हो जाएगा एवं तुझे पुन : जन्म–मरण का चक्कर नहीं लगाना पड़ेगा॥ ३॥ हे अन्तर्यामी विधाता ! मेरे मन की श्रद्धा पूरी करो। दास नानक यही सुख की कामना करता है कि मुझे अपने संतों की चरण–धूलि बना दे॥ ४॥ ३॥ १२४॥

गउड़ी महला ५ ॥ राखु पिता प्रभ मेरे ॥ मोहि निरगुनु सभ गुन तेरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंच बिखादी एकु गरीबा राखहु राखनहारे ॥ खेदु करहि अरु बहुतु संतावहि आइओ सरनि तुहारे ॥ १ ॥ करि करि

हारिओ अनिक बहु भाती छोडहि कतहूं नाही ॥ एक बात सुनि ताकी ओटा साधसंगि मिटि जाही ॥ २ ॥ करि किरपा संत मिले मोहि तिन ते धीरजु पाइआ ॥ संती मंतु दीओ मोहि निरभउ गुर का सबदु कमाइआ ॥ ३ ॥ जीति लए ओइ महा बिखादी सहज सुहेली बाणी ॥ कहु नानक मनि भइआ परगासा पाइआ पदु निरबाणी ॥ ४ ॥ ४ ॥ १२५ ॥

हे मेरे पिता—परमेश्वर ! मुझ गुणहीन की रक्षा करें। समस्त गुण तुझ में ही विद्यमान हैं॥ १॥ रहाउ॥ हे संरक्षक प्रभु ! मैं निर्धन अकेला हूँ और कामादिक मेरे पाँच शत्रु हैं। इसलिए मेरी रक्षा करें। वे मुझे बहुत दुःख देते हैं और अत्यंत तंग करते हैं, इसलिए मैं तेरी शरण में आया हूँ॥ १॥ मैं भरसक प्रयास करके हार गया हूँ, परन्तु ये किसी प्रकार भी मेरा पीछा नहीं छोड़ते। मैंने एक बात सुनी है कि संतजनों की संगति में उनकी जड़ें उखड़ जाती हैं। इसलिए मैंने उनकी शरण ली है॥ २॥ कृपा करके संत मुझे मिल गए हैं। उनसे मुझे धैर्य प्राप्त हो गया है। संतों ने मुझे निर्भय प्रभु का मंत्र (नाम) प्रदान किया है और मैंने गुरु के शब्द की कमाई की है॥ ३॥ सतिगुरु की आत्मिक स्थिरता एवं मधुर वाणी के प्रभाव से मैंने कामादिक झगड़ालु पाँचों शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर ली है। हे नानक ! मेरे मन में प्रभु ज्योति का प्रकाश हो गया है और मैंने निर्वाण पद प्राप्त कर लिया है॥ ४॥ ४॥ १२५॥

गउड़ी महला ५ ॥ ओहु अबिनासी राइआ ॥ निरभउ संगि तुमारै बसते इहु डरनु कहा ते आइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एक महलि तूं होहि अफारो एक महलि निमानो ॥ एक महलि तूं आपे आपे एक महलि गरीबानो ॥ १ ॥ एक महलि तूं पंडितु बकता एक महलि खलु होता ॥ एक महलि तूं सभु किछु ग्राहजु एक महलि कछू न लेता ॥ २ ॥ काठ की पुतरी कहा करै बपुरी खिलावनहारो जानै ॥ जैसा भेखु करावै बाजीगरु ओहु तैसो ही साजु आनै ॥ ३ ॥ अनिक कोठरी बहुतु भाति करीआ आपि होआ रखवारा ॥ जैसे महलि राखै तैसै रहना किआ इहु करै बिचारा ॥ ४ ॥ जिनि किछु कीआ सोई जानै जिनि इह सभ बिधि साजी ॥ कहु नानक अपरंपर सुआमी कीमति अपुने काजी ॥ ५ ॥ ५ ॥ १२६ ॥

हे मेरे प्रभु ! तुम एक वह राजा हो जो सदैव अनश्वर हो। हम (प्राणी) निडर होकर तेरे साथ निवास करते हैं। फिर यह भय कहाँ से आता है॥ १॥ रहाउ॥ एक शरीर में तुम ही अभिमानी हो और एक दूसरे शरीर में तुम विनीत हो। एक शरीर में तुम सर्वाधिकारी हो और दूसरे शरीर में तुम बिल्कुल निर्धन हो॥ १॥ एक शरीर में तुम विद्वान एवं वक्ता हो। एक शरीर में तुम मूर्ख हो। एक शरीर में तुम सब कुछ संग्रह कर लेते हो और एक शरीर में तुम (विरक्त बनकर) कोई पदार्थ भी स्वीकार नहीं करते हो॥ २॥ यह प्राणी बेचारा काठ की पुतली है, इसे खिलाने वाला (प्रभु) सब कुछ जानता है। बाजीगर (ईश्वर) जैसा वेष (स्वांग) रचाता है, वह प्राणी वैसा ही वेष (स्वांग) रचता है अर्थात् जैसी भूमिका (संसार में) प्रभु निभाने के लिए प्राणी को देता है, वैसे ही भूमिका प्राणी (संसार में) निभाता है॥ ३॥ ईश्वर ने (संसार में विभिन्न योनियों के प्राणियों की) अनेक (देहि) कोठड़ियाँ बना दी हैं और ईश्वर स्वयं ही सबका रक्षक बना हुआ है। जैसे शरीर रूपी मन्दिर में प्रभु प्राणी को रखता है, वैसे ही वह वास करता है। यह प्राणी बेचारा क्या कर सकता है ? ॥ ४॥ हे नानक ! जिस प्रभु ने सृष्टि की रचना की है, जिसने यह सारी क्रीड़ा बनाई है, वही उसके भेद को जानता है। वह प्रभु अपरंपार है। अपने कार्यों का मूल्य वह स्वयं ही जानता है॥ ५॥ ५॥ १२६॥

गउड़ी महला ५ ॥ छोडि छोडि रे बिखिआ के रसूआ ॥ उरझि रहिओ रे बावर गावर जिउ किरखै हरिआइओ पसूआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जानहि तूं अपुने काजै सो संगि न चालै तेरै तसूआ ॥ नागो आइओ नाग सिधासी फेरि फिरिओ अरु कालि गरसूआ ॥ १ ॥ पेखि पेखि रे कसुंभ की लीला राचि

माचि तिनहूं लउ हसूआ ॥ छीजत डोरि दिनसु अरु रैनी जीअ को काजु न कीनो कछूआ ॥ २ ॥ करत करत इव ही बिरधानो हारिओ उकते तनु खीनसूआ ॥ जिउ मोहिओ उनि मोहनी बाला उस ते घटै नाही रुच चसूआ ॥ ३ ॥ जगु ऐसा मोहि गुरहि दिखाइओ तउ सरणि परिओ तजि गरबसूआ ॥ मारगु प्रभ को संति बताइओ द्रिड़ी नानक दास भगति हरि जसूआ ॥ ४ ॥ ६ ॥ १२७ ॥

हे प्राणी ! मोह—माया के स्वादों को त्याग दे। हे मूर्ख प्राणी ! जैसे हरी—भरी फसल में पशु मस्त होता है वैसे ही तू (विकारों में) इन स्वादों में उलझा हुआ है॥ १॥ रहाउ॥ हे मूर्ख प्राणी ! जिस पदार्थ को तू अपने काम आने वाला समझता है, वह तनिकमात्र भी तेरे साथ नहीं जाता। हे प्राणी ! तू (जगत् में) नग्न आया था और नग्न ही (जगत् से) चला जाएगा। तू जन्म—मरण के चक्र में फँसकर योनियाँ काटेगा और मृत्यु का ग्रास हो जाएगा॥ १॥ हे प्राणी ! कुसुम के फूल की भाँति क्षणभंगुर सांसारिक खेलों को देख—देख कर तू उनमें कैसे मस्त हो रहा है और जब तक वह कायम है तू हंसता और खेलता है। तेरी अवस्था की डोरी दिन—रात क्षीण होती जा रही है। तूने अपनी आत्मा के काम आने वाला कोई भी कर्म नहीं किया॥ २॥ सांसारिक कर्म करता हुआ मनुष्य वृद्ध हो गया है। बुद्धि भी सुस्त हो गई है और शरीर भी दुर्बल हो गया है। जैसे तुझे उस माया ने बाल्यावस्था में मोहित कर लिया था, उस लोभ में अब तक तनिकमात्र भी कमी नहीं हुई॥ ३॥ हे नानक ! गुरु ने मुझे दिखा दिया है कि दुनिया का मोह ऐसा है तो मैंने अहंकार को त्याग कर संत (गुरु) की शरण ले ली। उस संत ने मुझे प्रभु—मिलन का मार्ग बता दिया है तथा अब मैंने भगवान की भक्ति एवं भगवान का यश अपने मन में दृढ़ कर लिया है॥ ४॥ ६॥ १२७॥

गउड़ी महला ५ ॥ तुझ बिनु कवनु हमारा ॥ मेरे प्रीतम प्रान अधारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंतर की बिधि तुम ही जानी तुम ही सजन सुहेले ॥ सरब सुखा मै तुझ ते पाए मेरे ठाकुर अगह अतोले ॥ १ ॥ बरनि न साकउ तुमरे रंगा गुण निधान सुखदाते ॥ अगम अगोचर प्रभ अबिनासी पूरे गुर ते जाते ॥ २ ॥ भ्रमु भउ काटि कीए निहकेवल जब ते हउमै मारी ॥ जनम मरण को चूको सहसा साधसंगति दरसारी ॥ ३ ॥ चरण पखारि करउ गुर सेवा बारि जाउ लख बरीआ ॥ जिह प्रसादि इहु भउजलु तरिआ जन नानक प्रिअ संगि मिरीआ ॥ ४ ॥ ७ ॥ १२८ ॥

हे मेरे प्रियतम ! हे प्राणों के आधार ! तेरे सिवाय हमारा अन्य कौन है ?॥ १॥ रहाउ॥ मेरे अन्तर्मन की दशा को केवल तुम ही जानते हो। तुम ही मेरे साजन एवं सुखदाता हो। हे मेरे ठाकुर ! हे मेरे अगम्य एवं अतुलनीय प्रभु ! तमाम सुख मैंने तुझ से ही प्राप्त किए हैं॥ १॥ हे गुणों के भण्डार ! हे सुखदाता ! मैं तेरे कौतुक वर्णन नहीं कर सकता। अगम्य, अगोचर एवं अविनाशी प्रभु का पूर्ण गुरु के द्वारा बोध प्राप्त होता है॥ २॥ जब भी मैंने अपना अहंकार निवृत्त किया है, मेरी दुविधा एवं भय नाश करके प्रभु ने मुझे पवित्र कर दिया है। हे ईश्वर ! तेरा दर्शन सत्संग में देखकर मेरा जन्म एवं मृत्यु की चिन्ता मिट गई है॥ ३॥ मैं गुरु जी के चरण धोकर उनकी सेवा करता हूँ और लाखों बार उन पर कुर्बान जाता हूँ। हे नानक ! जिनकी कृपा से उसने यह भयानक संसार सागर पार कर लिया है और वह अपने प्रियतम प्रभु में मिल गया है॥ ४॥ ७॥ १२८॥

गउड़ी महला ५ ॥ तुझ बिनु कवनु रीझावै तोही ॥ तेरो रूपु सगल देखि मोही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुरग पइआल मिरत भूअ मंडल सरब समानो एकै ओही ॥ सिव सिव करत सगल कर जोरहि सरब मइआ ठाकुर तेरी दोही ॥ १ ॥ पतित पावन ठाकुर नामु तुमरा सुखदाई निरमल सीतलोही ॥ गिआन धिआन नानक वडिआई संत तेरे सिउ गाल गलोही ॥ २ ॥ ८ ॥ १२९ ॥

हे प्रभु ! तेरे बिना तुझे कौन प्रसन्न कर सकता है ? तेरा सुन्दर रूप देखकर प्रत्येक व्यक्ति मुग्ध हो जाता है॥ १॥ रहाउ॥ स्वर्ग, पाताल, मृत्युलोक एवं भूमण्डल में सर्वत्र एक ईश्वर ही समाया हुआ है। हे दयालु परमेश्वर ! समस्त प्राणी हाथ जोड़ कर 'शिव शिव' कहकर तेरा नाम उच्चारण करते हैं और तेरे द्वार पर सहायतार्थ पुकारते हैं॥ १॥ हे ठाकुर जी ! तुम्हारा नाम पतितपावन है, तुम जीवों को सुख प्रदान करने वाले हो, बड़े निर्मल एवं शांति के पुंज हो। नानक का कथन है कि हे प्रभु ! ज्ञान, ध्यान एवं मान-सम्मान तेरे संतजनों के साथ धार्मिक-वार्ता करने में बसते हैं॥ २॥ ८॥ १२६॥

गउड़ी महला ५ ॥ मिलहु पिआरे जीआ ॥ प्रभ कीआ तुमारा थीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनिक जनम बहु जोनी भ्रमिआ बहुरि बहुरि दुखु पाइआ ॥ तुमरी क्रिपा ते मानुख देह पाई है देहु दरसु हरि राइआ ॥ १ ॥ सोई होआ जो तिसु भाणा अवरु न किन ही कीता ॥ तुमरै भाणै भरमि मोहि मोहिआ जागतु नाही सूता ॥ २ ॥ बिनउ सुनहु तुम प्रानपति पिआरे किरपा निधि दइआला ॥ राखि लेहु पिता प्रभ मेरे अनाथह करि प्रतिपाला ॥ ३ ॥ जिस नो तुमहि दिखाइओ दरसनु साधसंगति कै पाछै ॥ करि किरपा धूरि देहु संतन की सुखु नानकु इहु बाछै ॥ ४ ॥ ९ ॥ १३० ॥

हे मेरे प्रियतम प्रभु ! मुझे आकर मिलो। हे प्रभु ! इस दुनिया में सब कुछ तेरा किया ही क्रियान्वित है॥ १॥ रहाउ॥ अनेक जन्मों में अधिकतर योनियों में भटकते हुए मैंने बार-बार कष्ट सहन किया है। हे मेरे हरि प्रभु ! तुम्हारी कृपा से अब मुझे मानव शरीर प्राप्त हुआ है। अतः अब मुझे दर्शन दीजिए॥ १॥ दुनिया में वही कुछ हुआ है, जो प्रभु को अच्छा लगा है। ईश्वरेच्छा के बिना दूसरा कोई कुछ भी नहीं कर सकता। हे ठाकुर ! तेरी इच्छा में मोह की दुविधा एवं माया में मुग्ध हुआ प्राणी निद्रामग्न है और जागता नहीं॥ २॥ हे प्राणपति ! हे प्रियवर ! हे कृपा के भण्डार ! हे दया के घर ! तुम मेरी एक विनती सुनो। हे मेरे पिता प्रभु ! मेरी रक्षा कीजिए और मुझ अनाथ की पालना करो ॥ ३॥ हे ईश्वर ! जिस व्यक्ति को भी तूने अपने दर्शन दिए हैं, संतों की संगति के सहारे ही दिए हैं। हे प्रभु ! नानक तुझ से एक यही सुख की कामना करता है कि मुझे कृपा करके संतजनों की चरण-धूलि ही प्रदान करें॥ ४॥ ९॥ १३०॥

गउड़ी महला ५ ॥ हउ ता कै बलिहारी ॥ जा कै केवल नामु अधारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ महिमा ता की केतक गनीऐ जन पारब्रहम रंगि राते ॥ सूख सहज आनंद तिना संगि उन समसरि अवर न दाते ॥ १ ॥ जगत उधारण सेई आए जो जन दरस पिआसा ॥ उन की सरणि परै सो तरिआ संतसंगि पूरन आसा ॥ २ ॥ ता कै चरणि परउ ता जीवा जन कै संगि निहाला ॥ भगतन की रेणु होइ मनु मेरा होहु प्रभू किरपाला ॥ ३ ॥ राजु जोबनु अवध जो दीसै सभु किछु जुग महि घाटिआ ॥ नामु निधानु सद नवतनु निरमलु इहु नानक हरि धनु खाटिआ ॥ ४ ॥ १० ॥ १३१ ॥

मैं उन पर तन-मन से कुर्बान जाता हूँ, जिनका आधार केवल ईश्वर का नाम ही है॥ १॥ रहाउ॥ मैं उन संतजनों की महिमा कितनी गिन सकता हूँ, जो हमेशा पारब्रह्म के प्रेम-रंग में मग्न रहते हैं। सहज सुख एवं आनंद उनकी संगति में रहने से ही मिलता है और उनके तुल्य दूसरा कोई दाता नहीं है॥ १॥ जिन संतजनों को भगवान के दर्शनों की तीव्र लालसा लगी हुई है, वहीं जगत् का उद्धार करने के लिए आए हैं। जो भी प्राणी उनकी शरण में आता है, उसका इस संसार से कल्याण हो जाता है। संतों की संगति में रहने से समस्त मनोकामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं॥ २॥ यदि मैं उनके चरण स्पर्श कर लूँ, तो ही मैं जीवित रहता हूँ। प्रभु के भक्तों की संगति में मैं सदैव प्रसन्न रहता हूँ। हे प्रभु ! मुझ पर दयालु हो जाओ चूंकि मेरा मन तेरे भक्तों के चरणों की धूलि हो जाए॥

३॥ शासन, यौवन एवं आयु जो कुछ भी नश्वर संसार में दिखाई देता है, वह सब कुछ न्यून होता जा रहा है। ईश्वर के नाम का भण्डार सदैव ही नवीन एवं निर्मल है। नानक ने तो यह हरि नाम रूपी धन ही अर्जित किया है॥ ४॥ १०॥ १३१॥

गउड़ी महला ५ ॥ जोग जुगति सुनि आइओ गुर ते ॥ मो कउ सतिगुर सबदि बुझाइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नउ खंड प्रिथमी इसु तन महि रविआ निमख निमख नमसकारा ॥ दीखिआ गुर की मुंद्रा कानी द्रिड़िओ एकु निरंकारा ॥ १ ॥ पंच चेले मिलि भए इकत्रा एकसु कै वसि कीए ॥ दस बैरागनि आगिआकारी तब निरमल जोगी थीए ॥ २ ॥ भरमु जराइ चराई बिभूता पंथु एकु करि पेखिआ ॥ सहज सूख सो कीनी भुगता जो ठाकुरि मसतकि लेखिआ ॥ ३ ॥ जह भउ नाही तहा आसनु बाधिए सिंगी अनहत बानी ॥ ततु बीचारु डंडा करि राखिओ जुगति नामु मनि भानी ॥ ४ ॥ ऐसा जोगी वडभागी भेटै माइआ के बंधन काटै ॥ सेवा पूज करउ तिसु मूरति की नानकु तिसु पग चाटै ॥ ५ ॥ ११ ॥ १३२ ॥

योग की युक्ति मैंने गुरु जी से सुन ली है। मुझे सतिगुरु ने यह (युक्ति) अपनी वाणी द्वारा समझा दी है॥ १॥ रहाउ॥ मैं उस ईश्वर को पल–पल प्रणाम करता हूँ, जो पृथ्वी के नवखण्डों एवं इस शरीर में समाया हुआ है। गुरु की दीक्षा को अपने कानों की मुंद्रा बनाया है और एक निरंकार प्रभु को मैंने अपने हृदय में बसा लिया है॥ १॥ पाँचों शिष्यों (पाँचों ज्ञानेन्द्रियों) को इकट्ठा मिलाकर मैंने उनको एक सर्वोच्च सुरति के अधीन कर दिया है। जब दस इन्द्रियाँ (पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच कर्म इन्द्रियाँ) मेरी आज्ञाकारी हो गईं तो मैं निर्मल योगी बन गया॥ २॥ मैंने अपनी दुविधा को जला दिया है और इसकी विभूति मैंने अपने शरीर से लगा ली है। मेरा योग धर्म यही है कि मैं ईश्वर को समूचे जगत् में मौजूद देखता हूँ। उस सहज सुख को मैंने अपना भोजन बनाया है, जो कि ईश्वर ने मेरे लिए मेरे मस्तक पर लिखा हुआ था॥ ३॥ जहाँ कोई भय मौजूद नहीं, मैंने वहाँ आसन लगाया है और भगवान की महिमा की श्रृंगी से अनहद वाणी बजा रहा हूँ। जगत् के मूल परमात्मा की महिमा का चिंतन करना ही योगियों वाला डण्डा बनाकर रख लिया है। भगवान का नाम–सिमरन करना ही यह युक्ति मेरे मन को उपयुक्त लगी है॥ ४॥ ऐसा योगी किस्मत से ही मिलता है जो मोह–माया के बंधन दूर कर देता है। नानक ऐसे योगी महापुरुष की सेवा और पूजा करता तथा उसके चरण चाटता है॥ ५॥ ११॥ १३२॥

गउड़ी महला ५ ॥ अनूप पदारथु नामु सुनहु सगल धिआइले मीता ॥ हरि अउखधु जा कउ गुरि दीआ ता के निरमल चीता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंधकारु मिटिओ तिह तन ते गुरि सबदि दीपकु परगासा ॥ भ्रम की जाली ता की काटी जा कउ साधसंगति बिस्वासा ॥ १ ॥ तारीले भवजलु तारू बिखड़ा बोहिथ साधू संगा ॥ पूरन होई मन की आसा गुरु भेटिओ हरि रंगा ॥ २ ॥ नाम खजाना भगती पाइआ मन तन त्रिपति अघाए ॥ नानक हरि जीउ ता कउ देवै जा कउ हुकमु मनाए ॥ ३ ॥ १२ ॥ १३३ ॥

हे मित्रो ! ईश्वर का नाम एक अनूप धन है। सभी इसे सुनो एवं चिन्तन करो। गुरु ने जिस व्यक्ति को भी हरि–नाम रूपी औषधि दी है, उसका मन निर्मल हो गया है॥ १॥ रहाउ॥ उस गुरु ने जिस व्यक्ति के अन्तर्मन में अपने शब्द द्वारा ज्ञान का दीपक प्रज्वलित कर दिया है, उसके तन से अज्ञानता का अंधकार मिट गया है। जो व्यक्ति संतों की संगति में आस्था धारण करता है, उसका भ्रम का जाल कट जाता है॥ १॥ तैरने हेतु विषम एवं भयानक संसार सागर संतों की संगति के जहाज द्वारा पार किया जाता है। भगवान के रंग में मग्न रहने वाले गुरु से मिलकर मेरे मन की आशा पूरी हो गई

है॥ २॥ जिन भक्तों ने नाम का खजाना प्राप्त किया है, उनका मन एवं तन तृप्त व संतुष्ट हो गए हैं। हे नानक! (यह नाम का खजाना) पूज्य प्रभु केवल उसे ही देता है, जिनसे प्रभु अपने हुक्म का पालन करवाता है॥ ३॥ १२॥ १३३॥

गउड़ी महला ५ ॥ दइआ मइआ करि प्रानपति मोरे मोहि अनाथ सरणि प्रभ तोरी ॥ अंध कूप महि हाथ दे राखहु कछू सिआनप उकति न मोरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करन करावन सभ किछु तुम ही तुम समरथ नाही अन होरी ॥ तुमरी गति मिति तुम ही जानी से सेवक जिन भाग मथोरी ॥ १ ॥ अपुने सेवक संगि तुम प्रभ राते ओति पोति भगतन संगि जोरी ॥ प्रिउ प्रिउ नामु तेरा दरसनु चाहै जैसे द्रिसटि ओह चंद चकोरी ॥ २ ॥ राम संत महि भेदु किछु नाही एकु जनु कई महि लाख करोरी ॥ जा कै हीऐ प्रगटु प्रभु होआ अनदिनु कीरतनु रसन रमोरी ॥ ३ ॥ तुम समरथ अपार अति ऊचे सुखदाते प्रभ प्रान अधोरी ॥ नानक कउ प्रभ कीजै किरपा उन संतन कै संगि संगोरी ॥ ४ ॥ १३ ॥ १३४ ॥

हे मेरे प्राणपति! मुझ पर दया एवं कृपा करो। हे प्रभु! मैं अनाथ तेरी ही शरण में हूँ। अपना हाथ देकर इस अन्धे (मोह–माया के) कुएँ में से मुझे बाहर निकाल लीजिए। क्योंकि मेरी कोई भी अक्लमंदी एवं उक्ति सफल नहीं हो सकती॥ १॥ रहाउ॥ हे मेरे परमेश्वर! तुम स्वयं ही सबकुछ कर रहे हो और जीवों से करवा रहे हो। सब कुछ तुम ही हो, तू ही समर्थाशाली है। तेरे अलावा दूसरा कोई भी नहीं। हे ईश्वर! तेरी गति एवं विस्तार कैसा है! इसका भेद केवल तू ही जानता है। केवल वही तेरे सेवक बनते हैं जिनके मस्तक पर शुभ कर्मों के कारण भाग्यरेखाएँ विद्यमान हो॥ १॥ हे प्रभु! अपने सेवकों से तुम सदा प्रेम करते हो। जैसे ताने बाने में धागे मिले होते हैं, वैसे ही तुमने अपने भक्तों से प्रेम जोड़ा हुआ है। (वह तेरे प्रिय एवं मधुर नाम एवं दर्शनों के लिए ऐसे व्याकुल होते हैं।) जैसे चकोर की दृष्टि चाँद की ओर रहती है। तेरे भक्त तुझे 'प्रिय प्रिय' कहकर तेरा नाम स्मरण करते हैं और तेरे दर्शनों के अभिलाषी बने रहते हैं॥ २॥ राम एवं उसके संत में कोई अन्तर नहीं। लाखों और करोड़ों ही प्राणियों में कोई एक विरला ही है, जिसके हृदय में प्रभु प्रगट हुआ है, ऐसा व्यक्ति दिन–रात अपनी जिह्वा से उसका भजन करता रहता है॥ ३॥ हे मेरे प्राणों के आधार प्रभु! तुम सर्वशक्तिमान, अपार, सर्वोपरि एवं सुखदाता हो। हे प्रभु! नानक पर कृपा कीजिए चूंकि वह उन संतों की संगति में जुड़ा रहे॥ ४॥ १३॥ १३४॥

गउड़ी महला ५ ॥ तुम हरि सेती राते संतहु ॥ निबाहि लेहु मो कउ पुरख बिधाते ओड़ि पहुचावहु दाते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुमरा मरमु तुमा ही जानिआ तुम पूरन पुरख बिधाते ॥ राखहु सरणि अनाथ दीन कउ करहु हमारी गाते ॥ १ ॥ तरण सागर बोहिथ चरण तुमारे तुम जानहु अपुनी भाते ॥ करि किरपा जिसु राखहु संगे ते ते पारि पराते ॥ २ ॥ ईत ऊत प्रभ तुम समरथा सभु किछु तुमरै हाथे ॥ ऐसा निधानु देहु मो कउ हरि जन चलै हमारै साथे ॥ ३ ॥ निरगुनीआरे कउ गुनु कीजै हरि नामु मेरा मनु जापे ॥ संत प्रसादि नानक हरि भेटे मन तन सीतल ध्रापे ॥ ४ ॥ १४ ॥ १३५ ॥

हे संतजनो! तुम भगवान में मग्न हो। हे अकालपुरुष विधाता! हे मेरे दाता! मुझे भी (अपने प्रेम में) निभा ले और मुझे मेरी अंतिम मंजिल तक पहुँचा दे॥ १॥ रहाउ॥ तेरा भेद केवल तू ही जानता है। तू सर्वव्यापक अकालपुरुष विधाता है। मुझ दीन अनाथ को अपनी शरण में रखो और मुझे मोक्ष प्रदान करो॥ १॥ हे प्रभु! तेरे चरण संसार सागर से पार होने के लिए एक जहाज हैं। अपनी परम्परा को तू स्वयं ही जानता है। वे तमाम (प्राणी) जिन्हें तू कृपा धारण करके अपने साथ रखते हो, संसार

सागर से पार हो जाते हैं॥ २॥ हे ईश्वर! इहलोक एवं परलोक में तुम सर्वशक्तिशाली हो। सब कुछ तेरे ही वश में है। हे प्रभु के भक्तजनों! मुझे ऐसा नाम भण्डार प्रदान करो, जो परलोक में मेरे साथ जाए॥ ३॥ मुझ गुणहीन को ऐसा गुण प्रदान करो चूंकि मेरा मन प्रभु के नाम का ही जाप करता रहे। हे नानक! संतों की कृपा से जिन्हें भगवान मिल जाता है, उनका मन एवं तन शीतल तथा संतुष्ट हो जाते हैं॥ ४॥ १४॥ १३५॥

गउड़ी महला ५ ॥ सहजि समाइओ देव ॥ मो कउ सतिगुर भए दइआल देव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काटि जेवरी कीओ दासरो संतन टहलाइओ ॥ एक नाम को थीओ पूजारी मो कउ अचरजु गुरहि दिखाइओ ॥ १ ॥ भइओ प्रगासु सरब उजीआरा गुर गिआनु मनहि प्रगटाइओ ॥ अंम्रितु नामु पीओ मनु त्रिपतिआ अनभै ठहराइओ ॥ २ ॥ मानि आगिआ सरब सुख पाए दूखह ठाउ गवाइओ ॥ जउ सुप्रसंन भए प्रभ ठाकुर सभु आनद रूपु दिखाइओ ॥ ३ ॥ ना किछु आवत ना किछु जावत सभु खेलु कीओ हरि राइओ ॥ कहु नानक अगम अगम है ठाकुर भगत टेक हरि नाइओ ॥ ४ ॥ १५ ॥ १३६ ॥

हे ज्योतिस्वरूप परमेश्वर! मुझ पर सतिगुरु जी दयालु हो गए हैं और मैं सहज ही ईश्वर में समा गया हूँ॥ १॥ रहाउ॥ गुरु जी ने मेरी मृत्यु का रस्सा काट कर मुझे अपना सेवक बना लिया है और संतों की सेवा में लगा दिया है। मैं केवल नाम का ही पुजारी बन गया हूँ और गुरु जी ने मुझे प्रभु का अद्भुत रूप दिखा दिया है॥ १॥ गुरु जी ने मेरे मन में ही ज्ञान प्रगट कर दिया है और अब हर तरफ (ज्ञान का) प्रकाश एवं उजाला हो गया है। नाम अमृत का पान करने से मेरा मन तृप्त हो गया है और दूसरे भय दूर हट गए हैं॥ २॥ गुरु की आज्ञा मानकर मैंने सर्व सुख प्राप्त कर लिए हैं और दुःखों का आवास ध्वस्त कर दिया है। जब प्रभु-परमेश्वर सुप्रसन्न हो गया तो उसने प्रत्येक पदार्थ मुझे आनंद के स्वरूप में दिखा दिया॥ ३॥ न कुछ आता है और न ही कुछ जाता है। यह सारा खेल जगत् के मालिक प्रभु ने जारी किया है। हे नानक! वह ठाकुर प्रभु अगम्य एवं अपार है। उसके भक्तों को ईश्वर के नाम का ही सहारा है॥ ४॥ १५॥ १३६॥

गउड़ी महला ५ ॥ पारब्रहम पूरन परमेसुर मन ता की ओट गहीजै रे ॥ जिनि धारे ब्रहमंड खंड हरि ता को नामु जपीजै रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन की मति तिआगहु हरि जन हुकमु बूझि सुखु पाईऐ रे ॥ जो प्रभु करै सोई भल मानहु सुखि दुखि ओही धिआईऐ रे ॥ १ ॥ कोटि पतित उधारे खिन महि करते बार न लागै रे ॥ दीन दरद दुख भंजन सुआमी जिसु भावै तिसहि निवाजै रे ॥ २ ॥ सभ को मात पिता प्रतिपालक जीअ प्रान सुख सागरु रे ॥ देंदे तोटि नाही तिसु करते पूरि रहिओ रतनागरु रे ॥ ३ ॥ जाचिकु जाचै नामु तेरा सुआमी घट घट अंतरि सोई रे ॥ नानकु दासु ता की सरणाई जा ते ब्रिथा न कोई रे ॥ ४ ॥ १६ ॥ १३७ ॥

हे मेरे मन! हमें उस पूर्ण पारब्रह्म-परमेश्वर की शरण ही ग्रहण करनी चाहिए, जिसने ब्रह्माण्ड एवं भू-मण्डलों को धारण किया हुआ है। अतः हमें उस ईश्वर का नाम ही जपना चाहिए॥ १॥ रहाउ॥ हे परमात्मा के सेवको! मन की चतुरता को त्याग दीजिए। भगवान के हुक्म को समझने से ही सुख उपलब्ध हो सकता है। हे भक्तजनों! जो कुछ प्रभु करता है, उसको खुशी-खुशी स्वीकार करो। सुख एवं दुःख में उस ईश्वर का ध्यान करते रहना चाहिए॥ १॥ हे भक्तजनो! कर्त्तार प्रभु करोड़ों ही पापियों का एक क्षण में ही उद्धार कर देता है और उसमें कोई देरी नहीं लगती। हे दुख भंजन स्वामी! तुम दीनों के दुख-दर्द नाश करने वाले हो। जिस पर तुम प्रसन्न होते हो, उसे सम्मान प्रदान करते हो॥ २॥ हे भक्तजनो! प्रभु समस्त प्राणियों की माता, पिता एवं पालनहार है। वह समस्त

प्राणियों का प्राण दाता एवं सुख का सागर है। प्राणियों को देन देते वक्त ईश्वर के भण्डार में कमी नहीं आती। रत्नों की खान प्रभु सर्वव्यापक है॥ ३॥ हे मेरे स्वामी! भिखारी तेरे नाम का दान माँगता है। वह प्रभु सबके हृदय में समाया हुआ है। दास नानक ने उस प्रभु की शरण ली हुई है, जिसके द्वार से कोई भी खाली हाथ नहीं लौटता॥ ४॥ १६॥ १३७॥

रागु गउड़ी, पूरबी महला ५ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

हरि हरि कबहू न मनहु बिसारे ॥ ईहा ऊहा सरब सुखदाता सगल घटा प्रतिपारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ महा कसट काटै खिन भीतरि रसना नामु चितारे ॥ सीतल सांति सूख हरि सरणी जलती अगनि निवारे ॥ १ ॥ गरभ कुंड नरक ते राखै भवजलु पारि उतारे ॥ चरन कमल आराधत मन महि जम की त्रास बिदारे ॥ २ ॥ पूरन पारब्रहम परमेसुर ऊचा अगम अपारे ॥ गुण गावत धिआवत सुख सागर जूए जनमु न हारे ॥ ३ ॥ कामि क्रोधि लोभि मोहि मनु लीनो निरगुण के दातारे ॥ करि किरपा अपुनो नामु दीजै नानक सद बलिहारे ॥ ४ ॥ १ ॥ १३८ ॥

हमें अपने मन से प्रभु–परमेश्वर को कभी भी विस्मृत नहीं करना चाहिए। चूंकि वह ईश्वर ही लोक एवं परलोक में प्राणियों का सुखदाता है और तमाम शरीरों का पालन–पोषण करता है॥ १॥ रहाउ॥

यदि मनुष्य की रसना भगवान के नाम का जाप करे तो वह एक क्षण में ही महाकष्ट निवृत्त कर देता है। प्रभु की शरण में शीतलता, शांति एवं सुख विद्यमान हैं और वह जलती अग्नि बुझा देता है॥ १॥ प्रभु मनुष्य को गर्भ के नरककुण्ड से बचाता है और उसको भवसागर से पार कर देता है। प्रभु के सुन्दर चरणों की मन में आराधना करने से वह मृत्यु का भय दूर कर देता है॥ २॥ पारब्रह्म परमेश्वर सर्वव्यापक है, वह सर्वोपरि, अगम्य एवं अनन्त है। सुखों के सागर प्रभु की महिमा–स्तुति एवं ध्यान करने से प्राणी अपना जन्म व्यर्थ नहीं गंवा कर जाता॥ ३॥ हे निर्गुण के उदारचित्त दाता! मेरा मन भोग–विलास, क्रोध, लालच एवं सांसारिक मोह में लीन है। हे प्रभु! कृपा करके अपने नाम का दान दीजिए। चूंकि नानक तो सदैव ही तुझ पर कुर्बान जाता है॥ ४॥ १॥ १३८॥

रागु गउड़ी चेती, महला ५ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सुखु नाही रे हरि भगति बिना ॥ जीति जनमु इहु रतनु अमोलकु साधसंगति जपि इक खिना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुत संपति बनिता बिनोद ॥ छोडि गए बहु लोग भोग ॥ १ ॥ हैवर गैवर राज रंग ॥ तिआगि चलिओ है मूड़ नंग ॥ २ ॥ चोआ चंदन देह फूलिआ ॥ सो तनु धर संगि रूलिआ ॥ ३ ॥ मोहि मोहिआ जानै दूरि है ॥ कहु नानक सदा हदूरि है ॥ ४ ॥ १ ॥ १३९ ॥

भगवान की भक्ति के बिना कोई सुख उपलब्ध नहीं होता। साधसंगत में रहकर एक क्षण भर के लिए भी प्रभु का चिन्तन करके मनुष्य जीवन का यह अनमोल रत्न जीत ले॥ १॥ रहाउ॥

हे प्राणी! बहुत सारे ऐसे लोग हैं जो पुत्र, सम्पत्ति, पत्नी का प्रेम, हर्षोल्लास भरे मनोरंजन एवं भोग को त्याग गए हैं॥ १॥ अपने कुशल घोड़े, हाथी एवं शासन के आनन्द को त्याग कर मूर्ख मनुष्य नग्न ही अन्त में दुनिया से चला जाता है॥ २॥ जिस शरीर पर इत्र तथा चन्दन लगाकर मनुष्य अभिमान करता था, वह शरीर (अन्त में) पार्थिव (मिट्टी) हो जाता है॥ ३॥ हे नानक! दुनिया के मोह में मुग्ध हुआ मनुष्य ईश्वर को दूर समझता है। परन्तु ईश्वर सदा ही प्राणी के आसपास रहता है॥ ४॥ १॥ १३९॥

गउड़ी महला ५ ॥ मन धर तरबे हरि नाम नो ॥ सागर लहरि संसा संसारु गुरु बोहिथु पार गरामनो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कलि कालख अंधिआरीआ ॥ गुर गिआन दीपक उजिआरीआ ॥ १ ॥ बिखु बिखिआ पसरी अति घनी ॥ उबरे जपि जपि हरि गुनी ॥ २ ॥ मतवारो माइआ सोइआ ॥ गुर भेटत भ्रमु भउ खोइआ ॥ ३ ॥ कहु नानक एकु धिआइआ ॥ घटि घटि नदरी आइआ ॥ ४ ॥ २ ॥ १४० ॥

हे प्राणी ! तू ईश्वर–नाम के आधार से संसार सागर से पार हो जाएगा। संशय की लहरों से भरे हुए जगत् सागर से पार होने के लिए गुरु जी जहाज हैं॥ १॥ रहाउ॥ कलियुग में गहरा अंधकार है। गुरु के दिए हुए ज्ञान का दीपक उजाला कर देता है॥ १॥ मोह–माया का विष अधिक मात्रा में फैला हुआ है। ईश्वर की निरन्तर आराधना करने से महापुरुष बच जाते हैं॥ २॥ माया में मुग्ध हुआ मनुष्य (इस विष की मार से) सोया हुआ है। लेकिन गुरु को मिलने से दुविधा एवं भय दूर हो जाते हैं॥ ३॥ हे नानक ! जिस व्यक्ति ने एक ईश्वर का ध्यान किया है। उस व्यक्ति को ही भगवान कण–कण में मौजूद दिखाई दिया है॥ ४॥ २॥ १४०॥

गउड़ी महला ५ ॥ दीबानु हमारो तुही एक ॥ सेवा थारी गुरहि टेक ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनिक जुगति नही पाइआ ॥ गुरि चाकर लै लाइआ ॥ १ ॥ मारे पंच बिखादीआ ॥ गुर किरपा ते दलु साधिआ ॥ २ ॥ बखसीस वजहु मिलि एकु नाम ॥ सूख सहज आनंद बिस्राम ॥ ३ ॥ प्रभ के चाकर से भले ॥ नानक तिन मुख ऊजले ॥ ४ ॥ ३ ॥ १४१ ॥

हे ईश्वर ! एक तू ही हमारा सहारा है। गुरु की शरण में मैं तेरी ही सेवा करता रहता हूँ॥ १॥ रहाउ॥ हे प्रभु ! अनेक युक्तियों द्वारा मैं तुझे प्राप्त न कर सका। गुरु ने कृपा करके मुझे तेरी सेवा–भक्ति में लगा दिया है॥ १॥ मैंने पाँच दुष्टों (कामादिक विकारों) का नाश कर दिया है। गुरु की कृपा से मैंने बुराई की सेना को पराजित कर दिया है॥ २॥ मुझे एक नाम प्रभु के दान के तौर पर प्राप्त हुआ है। अब मेरा निवास सहज सुख एवं आनंद में है॥ ३॥ हे नानक ! जो ईश्वर के सेवक हैं, वे भले हैं। प्रभु के दरबार में उनके चेहरे उज्ज्वल हो जाते हैं॥४॥ ३॥ १४१॥

गउड़ी महला ५ ॥ जीअरे ओल्हा नाम का ॥ अवरु जि करन करावनो तिन महि भउ है जाम का ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अवर जतनि नही पाईऐ ॥ वडै भागि हरि धिआईऐ ॥ १ ॥ लाख हिकमती जानीऐ ॥ आगै तिलु नही मानीऐ ॥ २ ॥ अहंबुधि करम कमावने ॥ ग्रिह बालू नीरि बहावने ॥ ३ ॥ प्रभु क्रिपालु किरपा करै ॥ नामु नानक साधू संगि मिलै ॥ ४ ॥ ४ ॥ १४२ ॥

हे मेरे प्राण ! ईश्वर का नाम ही तेरा एकमात्र सहारा है। दूसरा जो कुछ भी किया एवं करवाया जाता है, उनमें मृत्यु का भय बना रहता है॥ १॥ रहाउ॥ किसी दूसरे उपाय द्वारा ईश्वर प्राप्त नहीं होता। भगवान का ध्यान बड़ी किस्मत से ही किया जा सकता है॥ १॥ मनुष्य चाहे लाखों चतुराइयां जानता हो परन्तु तनिकमात्र भी ये (परलोक में) आगे कारगर नहीं होतीं॥ २॥ अहंबुद्धि से किए गए धर्म–कर्म भी ऐसे बह जाते हैं जैसे रेत का घर पानी में बह जाता है॥ ३॥ हे नानक ! कृपा का घर प्रभु जिस इन्सान पर अपनी कृपा कर देता है, उसे संतों की संगति में भगवान का नाम मिल जाता है॥ ४॥ ४॥ १४२॥

गउड़ी महला ५ ॥ बारनै बलिहारनै लख बरीआ ॥ नामो हो नामु साहिब को प्रान अधरीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करन करावन तुही एक ॥ जीअ जंत की तुही टेक ॥ १ ॥ राज जोबन प्रभ तूं धनी ॥ तूं निरगुन तूं सरगुनी ॥ २ ॥ ईहा ऊहा तुम रखे ॥ गुर किरपा ते को लखे ॥ ३ ॥ अंतरजामी प्रभ सुजानु ॥ नानक तकीआ तुही ताणु ॥ ४ ॥ ५ ॥ १४३ ॥

हे सज्जन! मैं ईश्वर के नाम पर लाखों बार कुर्बान जाता हूँ। जगत् के स्वामी—प्रभु का नाम ही जीवों के प्राणों का आधार है॥ १॥ रहाउ॥ हे ईश्वर! एक तू ही जगत् में सब कुछ करता एवं जीवों से करवाता है। एक तू ही जीव—जन्तुओं का आसरा है॥ १॥ हे मेरे प्रभु! एक तू ही विश्व के शासन का स्वामी है और तू ही यौवन का स्वामी है। तू ही निर्गुण और तू ही सगुण है॥ २॥ हे ठाकुर! लोक—परलोक में तुम ही मेरे रक्षक हो। गुरु की कृपा से कोई विरला पुरुष ही तुझे समझता है॥ ३॥ हे सर्वज्ञ एवं अन्तर्यामी प्रभु! तू ही नानक का सहारा एवं शक्ति है॥ ४॥ ५॥ १४३॥

गउड़ी महला ५ ॥ हरि हरि हरि आराधीऐ ॥ संतसंगि हरि मनि वसै भरमु मोहु भउ साधीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बेद पुराण सिम्रिति भने ॥ सभ ऊच बिराजित जन सुने ॥ १ ॥ सगल असथान भै भीत चीन ॥ राम सेवक भै रहत कीन ॥ २ ॥ लख चउरासीह जोनि फिरहि ॥ गोबिंद लोक नही जनमि मरहि ॥ ३ ॥ बल बुधि सिआनप हउमै रही ॥ हरि साध सरणि नानक गही ॥ ४ ॥ ६ ॥ १४४ ॥

हमेशा ही हरि—परमेश्वर की आराधना करनी चाहिए। संतों की सभा में ही हरि मन में आकर निवास करता है, जिससे भ्रम, मोह एवं भय दूर हो जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ वेद, पुराण एवं स्मृतियाँ पुकारते हैं कि प्रभु के सेवक सर्वोच्च आत्मिक निवास में बसते सुने जाते हैं॥ १॥ दूसरे तमाम स्थान भयभीत देखे जाते हैं। लेकिन राम के भक्त भयरहित हैं॥ २॥ प्राणी चौरासी लाख योनियों में भटकते फिरते हैं लेकिन गोविन्द के भक्त आवागमन (जीवन—मृत्यु के चक्र) से मुक्त रहते हैं। नानक ने हरि के संतों की शरण ली है और उसका बल, बुद्धि, चतुरता एवं अहंकार दूर हो गए हैं॥ ४॥ ६॥ १४४॥

गउड़ी महला ५ ॥ मन राम नाम गुन गाईऐ ॥ नीत नीत हरि सेवीऐ सासि सासि हरि धिआईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संतसंगि हरि मनि वसै ॥ दुखु दरदु अनेरा भ्रमु नसै ॥ १ ॥ संत प्रसादि हरि जापीऐ ॥ सो जनु दूखि न विआपीऐ ॥ २ ॥ जा कउ गुरु हरि मंत्रु दे ॥ सो उबरिआ माइआ अगनि ते ॥ ३ ॥ नानक कउ प्रभ मइआ करि ॥ मेरै मनि तनि वासै नामु हरि ॥ ४ ॥ ७ ॥ १४५ ॥

हे मेरे मन! राम के नाम का गुणगान करते रहो। सदैव ही प्रभु की सेवा करो एवं अपने श्वास—श्वास से प्रभु का ध्यान करते रहो॥ १॥ रहाउ॥ संतों की संगति द्वारा ही ईश्वर मन में निवास करता है और दुःख—दर्द, अज्ञानता का अंधेरा एवं दुविधा दौड़ जाते हैं॥ १॥ संतों की कृपा से जो पुरुष प्रभु का जाप करते रहते हैं, ऐसे व्यक्ति कभी दुखी नहीं होते॥ २॥ जिस व्यक्ति को गुरु हरि—नाम रूपी मंत्र देता है, ऐसा व्यक्ति माया की अग्नि से बच जाता है॥ ३॥ हे ईश्वर! मुझ नानक पर कृपा करो चूंकि मेरे मन एवं तन में भगवान के नाम का निवास हो जाए॥ ४॥ ७॥ १४५॥

गउड़ी महला ५ ॥ रसना जपीऐ एकु नाम ॥ ईहा सुखु आनंदु घना आगै जीअ कै संगि काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कटीऐ तेरा अहं रोगु ॥ तूं गुर प्रसादि करि राज जोगु ॥ १ ॥ हरि रसु जिनि जनि चाखिआ ॥ ता की त्रिसना लाथीआ ॥ २ ॥ हरि बिस्राम निधि पाइआ ॥ सो बहुरि न कत ही धाइआ ॥ ३ ॥ हरि हरि नामु जा कउ गुरि दीआ ॥ नानक ता का भउ गइआ ॥ ४ ॥ ८ ॥ १४६ ॥

अपनी रसना से एक परमेश्वर के नाम का ही जाप करना चाहिए। परमेश्वर का नाम जपने से इहलोक में बड़ा सुख एवं आनंद उपलब्ध होता है और आगे परलोक में भी यह आत्मा के काम आता है और साथ रहता है॥ १॥ रहाउ॥ हे जीव! (परमात्मा का नाम जपने से) तेरा अहंकार का रोग निवृत्त हो जाएगा। गुरु की कृपा से तू सांसारिक एवं आत्मिक शासन करेगा॥ १॥ जिस व्यक्ति ने

भी हरि–रस का स्वाद चखा है, उसकी तृष्णा मिट गई है॥ २॥ जिसने सुख के भण्डार परमात्मा को पा लिया है, वह दोबारा अन्य कहीं नहीं जाता॥ ३॥ हे नानक ! जिस व्यक्ति को गुरु ने हरि–परमेश्वर का नाम दिया है, उसका भय दूर हो गया है॥ ४॥ ८॥ १४६॥

गउड़ी महला ५ ॥ जा कउ बिसरै राम नाम ताहू कउ पीर ॥ साधसंगति मिलि हरि रवहि से गुणी गहीर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कउ गुरमुखि रिदै बुधि ॥ ता कै कर तल नव निधि सिधि ॥ १ ॥ जो जानहि हरि प्रभ धनी ॥ किछु नाही ता कै कमी ॥ २ ॥ करणैहारु पछानिआ ॥ सरब सूख रंग माणिआ ॥ ३ ॥ हरि धनु जा कै ग्रिहि वसै ॥ कहु नानक तिन संगि दुखु नसै ॥ ४ ॥ ६ ॥ १४७ ॥

जिस व्यक्ति को राम का नाम भूल जाता है, ऐसे व्यक्ति को ही दुख–क्लेशों की पीड़ा लग जाती है। जो व्यक्ति संतों की संगति में मिलकर प्रभु का चिन्तन करते हैं, वहीं गुणवान एवं उदारचित हैं॥ १॥ रहाउ॥ गुरु की प्रेरणा से जिसके हृदय में ब्रह्म–ज्ञान विद्यमान है, उसके हाथ की हथेली में नवनिधि एवं तमाम सिद्धियाँ विद्यमान हैं॥ १॥ जो व्यक्ति गुणों के स्वामी हरि–प्रभु को जान लेता है, उसके घर में किसी पदार्थ की कोई कमी नहीं रहती॥२॥ जो सृष्टिकर्त्ता परमेश्वर की पहचान कर लेता है, वे सर्व सुख एवं आनंद प्राप्त करता है॥ ३॥ हे नानक ! जिस व्यक्ति के हृदय–घर में हरि नाम रूपी धन बसा रहता है, उसकी संगति में रहने से दुख नाश हो जाते हैं॥ ४॥ ६॥ १४७॥

गउड़ी महला ५ ॥ गरबु बडो मूलु इतनो ॥ रहनु नही गहु कितनो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बेबरजत बेद संतना उआहू सिउ रे हितनो ॥ हार जूआर जूआ बिधे इंद्री वसि लै जितनो ॥ १ ॥ हरन भरन संपूरना चरन कमल रंगि रितनो ॥ नानक उधरे साधसंगि किरपा निधि मै दितनो ॥ २ ॥ १० ॥ १४८ ॥

हे प्राणी ! तेरा अहंकार तो बहुत बड़ा है किन्तु इसका मूल तुच्छमात्र ही है। इस दुनिया में तेरा निवास अस्थाई है, जितना चाहे माया के प्रति आकर्षित रह॥ १॥ रहाउ॥ (जिस माया के प्रति) वेदों एवं संतों ने तुझे वर्जित किया है, उसी से तेरा आकर्षण अधिक है। जैसे जुए की बाजी पराजित जुआरी को भी अपने साथ सम्मिलित रखती है, वैसे ही भोग–इन्द्रिय तुझ पर विजय पा कर अपने वश में रखती है॥ १॥ हे प्राणी ! तू संहारक तथा पालनहार ईश्वर के सुन्दर चरणों के प्रेम से रिक्त है। हे नानक ! कृपा के भण्डार प्रभु ने मुझ नानक को संतों की संगति प्रदान की है, जिससे मैं भवसागर से पार हो गया हूँ॥ २॥ १०॥ १४८॥

गउड़ी महला ५ ॥ मोहि दासरो ठाकुर को ॥ धानु प्रभ का खाना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐसो है रे खसमु हमारा ॥ खिन महि साजि सवारणहारा ॥ १ ॥ कामु करी जे ठाकुर भावा ॥ गीत चरित प्रभ के गुन गावा ॥ २ ॥ सरणि परिओ ठाकुर वजीरा ॥ तिना देखि मेरा मनु धीरा ॥ ३ ॥ एक टेक एको आधारा ॥ जन नानक हरि की लागा कारा ॥ ४ ॥ ११ ॥ १४६ ॥

मैं अपने ठाकुर जी का तुच्छमात्र दास हूँ। परमात्मा जो कुछ भी मुझे (भोजन) देता है, मैं वहीं (भोजन) खाता हूँ॥ १॥ रहाउ॥ हे सज्जन ! हमारा मालिक–प्रभु ऐसा है, जो क्षण में ही सृष्टि–रचना करके उसे संवार देता है॥ १॥ मैं वही कार्य करता हूँ जो मेरे ठाकुर जी को लुभाता है। मैं प्रभु की गुणस्तुति एवं अद्भुत कौतुकों के गीत गायन करता रहता हूँ॥ २॥ मैंने ठाकुर जी के मन्त्री (गुरु जी) की शरण ली है। उनको देखकर मेरा हृदय धैर्यवान हो गया है॥ ३॥ हे नानक ! (प्रभु के मंत्री का आश्रय लेकर) मैंने एक ईश्वर को ही आधार एवं सहारा बनाया है और ईश्वर की सेवा (गुणस्तुति) में लगा हुआ हूँ॥ ४॥ ११॥ १४६॥

गउड़ी महला ५ ॥ है कोई ऐसा हउमै तोरै ॥ इसु मीठी ते इहु मनु होरै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अगिआनी मानुखु भइआ जो नाही सो लोरै ॥ रैणि अंधारी कारीआ कवन जुगति जितु भोरै ॥ १ ॥ भ्रमतो भ्रमतो हारिआ अनिक बिधी करि टोरै ॥ कहु नानक किरपा भई साधसंगति निधि मोरै ॥ २ ॥ १२ ॥ १५० ॥

हे सज्जन ! क्या कोई ऐसा व्यक्ति है जो अपने अहंत्व को चकनाचूर कर दे और इस मीठी माया से अपने मन को वर्जित कर ले॥ १॥ रहाउ॥ अज्ञानी मनुष्य अपनी बुद्धि गंवा चुका है, क्योंकि जो नहीं है, उसी को खोजता रहता है। मनुष्य के हृदय में मोह—माया की काली अन्धेरी रात्रि है। वह कौन—सी विधि हो सकती है, जिस द्वारा इसके भीतर ज्ञान का दिन उदय हो सके॥ १॥ मैं अनेक विधियों से खोज करता—करता और घूमता एवं भटकता हुआ थक गया हूँ। हे नानक ! ईश्वर ने मुझ पर कृपा की है और मुझे संतों की संगति का भण्डार मिल गया है॥ २॥ १२॥ १५०॥

गउड़ी महला ५ ॥ चिंतामणि करुणा मए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दीन दइआला पारब्रहम ॥ जा कै सिमरणि सुख भए ॥ १ ॥ अकाल पुरख अगाधि बोध ॥ सुनत जसो कोटि अघ खए ॥ २ ॥ किरपा निधि प्रभ मइआ धारि ॥ नानक हरि हरि नाम लए ॥ ३ ॥ १३ ॥ १५१ ॥

हे करुणामय परमेश्वर ! तू ही वह चिंतामणि है जो तमाम प्राणियों की मनोकामना पूर्ण करती है॥ १॥ हे पारब्रह्म ! तू ही वह दीनदयाल है, जिसका सिमरन करने से सुख प्राप्त होता है॥ १॥ हे अकालपुरुष ! तेरे स्वरूप का बोध अगाध है। तेरी महिमा सुनने से करोड़ों ही पाप मिट जाते हैं॥ २॥ नानक का कथन है कि हे कृपानिधि प्रभु ! मुझ पर ऐसी कृपा करो कि मैं तेरे हरि—परमेश्वर नाम का सिमरन करता रहूँ॥ ३॥ १३॥ १५१॥

गउड़ी पूरबी॥ महला ५ ॥ मेरे मन सरणि प्रभू सुख पाए ॥ जा दिनि बिसरै प्रान सुखदाता सो दिनु जात अजाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एक रैण के पाहुन तुम आए बहु जुग आस बधाए ॥ ग्रिह मंदर संपै जो दीसै जिउ तरवर की छाए ॥ १ ॥ तनु मेरा संपै सभ मेरी बाग मिलख सभ जाए ॥ देवनहारा बिसरिओ ठाकुरु खिन महि होत पराए ॥ २ ॥ पहिरै बागा करि इसनाना चोआ चंदन लाए ॥ निरभउ निरंकार नही चीनिआ जिउ हसती नावाए ॥ ३ ॥ जउ होइ क्रिपाल त सतिगुरु मेलै सभि सुख हरि के नाए ॥ मुकतु भइआ बंधन गुरि खोले जन नानक हरि गुण गाए ॥ ४ ॥ १४ ॥ १५२ ॥

हे मेरे मन ! जो व्यक्ति ईश्वर की शरण में आता है, उसे ही सुख उपलब्ध होता है। जिस दिन प्राणपति, सुखों का दाता प्रभु भूल जाता है, वह दिन व्यर्थ बीत जाता है॥ १॥ रहाउ॥ हे जीव ! तुम एक रात्रिकाल के अतिथि के तौर पर दुनिया में आए हो परन्तु तुमने अनेक युग रहने की आशा बढ़ा ली है। घर, मन्दिर एवं धन--दौलत जो कुछ भी दृष्टिमान होता है, वह तो एक पेड़ की छाया की भाँति है॥ १॥ मनुष्य कहता है कि यह तन मेरा है, यह धन—दौलत, बाग एवं संपति सब कुछ मेरा है लेकिन अंततः सब कुछ समाप्त हो जाएँगे। हे मानव ! तू देने वाले दाता जगत् के ठाकुर प्रभु को भूल गया है। एक क्षण में सब कुछ पराया हो जाता है॥ २॥ हे मानव ! तुम नहा धोकर सफेद वस्त्र पहनते हो और अपने आपको चन्दन के इत्र से सुगंधित करते हो। तुम निर्भय, निरंकार ईश्वर का चिन्तन नहीं करते, तेरा स्नान हाथी के नहाने जैसा है॥ ३॥ जब ईश्वर कृपा के घर में आता है तो वह सतिगुरु से मिला देता है। संसार के तमाम सुख ईश्वर के नाम में वास करते हैं। हे नानक ! गुरु ने उसके बन्धन खोलकर भवसागर से मुक्त कर दिया है और अब वह भगवान का ही गुणानुवाद करता रहता है॥ ४॥ १४॥ १५२॥

गउड़ी पूरबी महला ५ ॥ मेरे मन गुरु गुरु गुरु सद करीऐ ॥ रतन जनमु सफलु गुरि कीआ दरसन कउ बलिहरीऐ॥ १॥ रहाउ ॥ जेते सास ग्रास मनु लेता तेते ही गुन गाईऐ ॥ जउ होइ दैआलु सतिगुरु अपुना ता इह मति बुधि पाईऐ ॥ १ ॥ मेरे मन नामि लए जम बंध ते छूटहि सरब सुखा सुख पाईऐ ॥ सेवि सुआमी सतिगुरु दाता मन बंछत फल आईऐ ॥ २ ॥ नामु इसटु मीत सुत करता मन संगि तुहारै चालै ॥ करि सेवा सतिगुर अपुने की गुर ते पाईऐ पालै ॥ ३ ॥ गुरि किरपालि क्रिपा प्रभि धारी बिनसे सरब अंदेसा ॥ नानक सुखु पाइआ हरि कीरतनि मिटिओ सगल कलेसा ॥ ४ ॥ १५ ॥ १५३ ॥

हे मेरे मन! हमेशा ही गुरु को याद करते रहना चाहिए। जिस गुरु ने अमूल्य मानव–जन्म को सफल कर दिया है, उस गुरु के दर्शनों पर तन–मन से बलिहारी जाना चाहिए॥ १॥ रहाउ॥ हे मेरे मन! मनुष्य जितनी भी सांसें एवं ग्रास लेता है, उतनी बार ही भगवान की महिमा–स्तुति करनी चाहिए। जब सतिगुरु दयालु हो जाते हैं, तो ही यह बुद्धि एवं सुमति प्राप्त होती है॥ १॥ हे मेरे मन! यदि तू ईश्वर का नाम–सिमरन करता रहे तो यम के बन्धनों से तुझे मुक्ति मिल जाएगी (क्योंकि) ईश्वर के नाम का चिन्तन करने से सर्वसुखों में आत्मिक सुख उपलब्ध हो जाता है। जगत् के स्वामी प्रभु के नाम की देन देने वाले सतिगुरु की श्रद्धापूर्वक सेवा करने से मनोवांछित फल प्राप्त होते हैं॥ २॥ हे मेरे मन! परमात्मा का नाम ही तेरा वास्तविक प्रिय मित्र एवं पुत्र है और यही तेरे साथ परलोक में जाएगा। अपने सतिगुरु की श्रद्धापूर्वक सेवा कर। गुरु के द्वारा भगवान का नाम मिल जाता है॥ ३॥ जब कृपालु गुरु, प्रभु ने मुझ पर कृपा की तो मेरे समस्त दुःख मिट गए। हे नानक! ईश्वर की महिमा करने से उसने सुख प्राप्त किया है और उसके तमाम क्लेश मिट गए हैं॥ ४॥ १५॥ १५३॥

रागु गउड़ी महला ५ ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

त्रिसना बिरले ही की बुझी हे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोटि जोरे लाख क्रोरे मनु न होरे ॥ परै परै ही कउ लुझी हे ॥ १ ॥ सुंदर नारी अनिक परकारी पर ग्रिह बिकारी ॥ बुरा भला नही सुझी हे ॥ २ ॥ अनिक बंधन माइआ भरमतु भरमाइआ गुण निधि नही गाइआ ॥ मन बिखै ही महि लुझी हे ॥ ३ ॥ जा कउ रे किरपा करै जीवत सोई मरै साधसंगि माइआ तरै ॥ नानक सो जनु दरि हरि सिझी हे ॥ ४ ॥ १ ॥ १५४ ॥

दुनिया में किसी विरले पुरुष की ही तृष्णा निवृत्त हुई है॥ १॥ रहाउ॥ जीवन में मनुष्य करोड़ों कमाता है और लाखों–करोड़ों रुपए संग्रह करता है परन्तु फिर भी अपने मन पर अंकुश नहीं लगाता। वह अधिकाधिक धन–दौलत जमा करने के लिए तृष्णाग्नि में जलता रहता है॥ १॥ वह अपनी सुन्दर नारी के साथ बहुत प्रेम करता है लेकिन फिर भी पराई नारी के साथ व्यभिचार करता है। वह बुरे–भले की पहचान ही नहीं करता॥ २॥ ऐसा व्यक्ति मोह–माया के बन्धनों में फँसकर भटकता ही रहता है और गुणों के भण्डार परमेश्वर की महिमा–स्तुति नहीं करता। (क्योंकि) उसका मन नीच कर्मों में लीन रहता है॥ ३॥ जिस व्यक्ति पर परमात्मा दया धारण करता है, वह सांसारिक कर्म करता हुआ भी माया के मोह से दूर रहता है। वह सत्संग में रहकर माया के सागर से पार हो जाता है। हे नानक! ऐसा व्यक्ति परमात्मा के दरबार में सफल हो जाता है॥ ४॥ १॥ १५४॥

गउड़ी महला ५ ॥ सभहू को रसु हरि हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काहू जोग काहू भोग काहू गिआन काहू धिआन ॥ काहू हो डंड धरि हो ॥ १ ॥ काहू जाप काहू ताप काहू पूजा होम नेम ॥ काहू हो गउनु करि हो ॥ २ ॥ काहू तीर काहू नीर काहू बेद बीचार ॥ नानका भगति प्रिअ हो ॥ ३ ॥ २ ॥ १५५ ॥

ईश्वर का नाम ही समस्त जीवों का रस है॥ १॥ रहाउ॥ हे सज्जन! (ईश्वर नाम से विहीन होकर) किसी व्यक्ति को योग विद्या, किसी को सांसारिक पदार्थ भोगने का उत्साह है। किसी व्यक्ति को ज्ञान एवं किसी को ध्यान की लालसा है। किसी व्यक्ति को डण्डाधारी साधु होना पसन्द है॥ १॥ किसी को जाप, किसी को तपस्या अच्छी लगती है। किसी व्यक्ति को पूजा—उपासना एवं किसी को हवन, धार्मिक संस्कार प्यारे लगते हैं। किसी व्यक्ति को (महात्मा—संत बनकर) धरती पर भ्रमण वाला जीवन लुभाता है॥ २॥ किसी व्यक्ति को नदी के तट से प्रेम है। किसी को जल से एवं किसी को वेदों का अध्ययन प्रिय है। परन्तु नानक को प्रभु—भक्ति ही प्रिय है॥ ३॥ २॥ १५५॥

गउड़ी महला ५ ॥ गुन कीरति निधि मोरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तूंही रस तूंही जस तूंही रूप तूही रंग ॥ आस ओट प्रभ तोरी ॥ १ ॥ तूही मान तूंही धान तूही पति तूही प्रान ॥ गुरि तूटी लै जोरी ॥ २ ॥ तूही ग्रिहि तूही बनि तूही गाउ तूही सुनि ॥ है नानक नेर नेरी ॥ ३ ॥ ३ ॥ १५६ ॥

हे ईश्वर! तेरी महिमा की कीर्ति करना ही मेरी निधि है॥ १॥ रहाउ॥ हे प्रभु! तू ही मेरा रस है, तू ही मेरा यश है, तू ही मेरी सौन्दर्य एवं तू ही मेरा रंग है। हे ईश्वर! तू ही मेरी आशा एवं शरण है॥ १॥ हे प्रभु! तू ही मेरा मान है, तू ही मेरा धन है। तू ही मेरी प्रतिष्ठा है और तू ही मेरे प्राण है। हे ठाकुर! (मेरी टूटी हुई वृत्ति को) तेरे साथ गुरु जी ने मुझे मिला दिया है, जिससे मैं अलग हो गया था॥ २॥ हे ईश्वर! तू ही मेरे हृदय गृह में मौजूद है। तू ही वन में है, तू ही गाँव में एवं तू ही उजाड़ स्थल में है। हे नानक! ईश्वर (प्रत्येक जीव—जन्तु के) अत्यन्त निकट वास करता है॥ ३॥ ३॥ १५६॥

गउड़ी महला ५ ॥ मातो हरि रंगि मातो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ओुही पीओ ओुही खीओ गुरहि दीओ दानु कीओ ॥ उआहू सिउ मनु रातो ॥ १ ॥ ओुही भाठी ओुही पोचा उही पिआरो उही रूचा ॥ मनि ओहो सुखु जातो ॥ २ ॥ सहज केल अनद खेल रहे फेर भए मेल ॥ नानक गुर सबदि परातो ॥ ३ ॥ ४ ॥ १५७ ॥

(हे योगी!) मैं भी मतवाला हूँ, लेकिन ईश्वर की प्रेम—भक्ति की मदिरा से मतवाला हो रहा हूँ॥ १॥ रहाउ॥ मैं उस प्रेम की मदिरा का पान करता हूँ, उससे मैं मस्त हुआ हूँ। गुरु जी ने मुझे वह दान के तौर पर प्रदान की है। अब मेरा मन उस नाम—मद में ही मग्न है॥ १॥ (हे योगी!) ईश्वर का नाम ही अग्नि—कुण्ड है, प्रभु नाम ही शीतलदायक वस्त्र है, परमेश्वर का नाम ही प्याला है और नाम ही मेरी रुचि है। (हे योगी!) मेरा मन उसको ही सुख समझता है॥ २॥ हे नानक! मैं प्रभु से ही आनंद प्राप्त करता और हर्षोल्लास में खेलता हूँ। मेरा जन्म—मरण का चक्र मिट गया है और मैं उस ईश्वर में लीन हो गया हूँ। वह गुरु के शब्द में लीन हो गया है॥ ३॥ ४॥ १५७॥

रागु गौड़ी मालवा महला ५ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

हरि नामु लेहु मीता लेहु आगै बिखम पंथु भैआन ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सेवत सेवत सदा सेवि तेरै संगि बसतु है कालु ॥ करि सेवा तूं साध की हो काटीऐ जम जालु ॥ १ ॥ होम जग तीरथ कीए बिचि हउमै बधे बिकार ॥ नरकु सुरगु दुइ भुंचना होइ बहुरि बहुरि अवतार ॥ २ ॥ सिव पुरी ब्रहम इंद्र पुरी निहचलु को थाउ नाहि ॥ बिनु हरि सेवा सुखु नही हो साकत आवहि जाहि ॥ ३ ॥ जैसो गुरि उपदेसिआ मै तैसो कहिआ पुकारि ॥ नानकु कहै सुनि रे मना करि कीरतनु होइ उधारु ॥ ४ ॥ १ ॥ १५८ ॥

हे मेरे मित्र ! परमेश्वर के नाम का भजन करो। जिस जीवन पथ पर तुम चल रहे हो, वह पथ बड़ा विषम एवं भयानक है॥ १॥ रहाउ॥ परमेश्वर की सदैव पूजा–अर्चना, ध्यान एवं श्रद्धापूर्वक सेवा करो, क्योंकि काल (मृत्यु) तेरे सिर पर खड़ा है। तू संतों की भरपूर सेवा कर, इस तरह मृत्यु का फँदा कट जाता है॥ १॥ हवन, यज्ञ एवं तीर्थ यात्रा करने के अहंकार में पापों में और भी वृद्धि होती है। प्राणी नरक–स्वर्ग दोनों भोगता है और बार–बार नश्वर संसार में जन्म लेता है॥ २॥ शिवलोक, ब्रह्मलोक एवं इन्द्रलोक इनमें से कोई भी लोक अटल नहीं। प्रभु की सेवा–भक्ति के बिना कोई सुख नहीं। (भगवान से टूटा हुआ) शाक्त मनुष्य आवागमन के चक्र में ही फँसा रहता है॥ ३॥ जैसे गुरु ने मुझे उपदेश प्रदान किया है, वैसे ही मैंने उच्च स्वर में कथन किया है। नानक कहता है– हे मेरे मन ! ध्यानपूर्वक सुन, ईश्वर का भजन–कीर्त्तन करने से तेरी भवसागर से मुक्ति हो जाएगी ॥ ४॥ १॥ १५८॥

रागु गउड़ी माला महला ५ ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

पाइओ बाल बुधि सुखु रे ॥ हरख सोग हानि मिरतु दूख सुख चिति समसरि गुर मिले ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जउ लउ हउ किछु सोचउ चितवउ तउ लउ दुखनु भरे ॥ जउ क्रिपाल गुरु पूरा भेटिआ तउ आनद सहजे ॥ १ ॥ जेती सिआनप करम हउ कीए तेते बंध परे ॥ जउ साधू करु मसतकि धरिओ तब हम मुकत भए ॥ २ ॥ जउ लउ मेरो मेरो करतो तउ लउ बिखु घेरे ॥ मनु तनु बुधि अरपी ठाकुर कउ तब हम सहजि सोए ॥ ३ ॥ जउ लउ पोट उठाई चलिअउ तउ लउ डान भरे ॥ पोट डारि गुरु पूरा मिलिआ तउ नानक निरभए ॥ ४ ॥ १ ॥ १५६ ॥

हे बन्धु ! जिसने भी सुख प्राप्त किया है, उसने बालबुद्धि में ही प्राप्त किया है। गुरु को मिलने से हर्ष, शोक, हानि, मृत्यु, दुःख–सुख मेरे हृदय को एक समान लगते हैं॥ १॥ रहाउ॥ जब तक मैं कुछ कल्पनाएँ एवं युक्तियों की बातें करता रहा, तब तक मैं दुःखों से भरा रहा। लेकिन जब कृपा के घर पूर्ण गुरु जी मिल गए तो मुझे सहज ही प्रसन्नता प्राप्त हो गई॥ १॥ जितने अधिक कर्म मैंने चतुराई द्वारा किए, उतने ही अधिकतर बंधन पड़ते गए। जब संतों (गुरु) ने अपना हाथ मेरे मस्तक पर रख दिया तो मैं मुक्त हो गया॥ २॥ जब तक मैं कहता रहा कि, "यह (गृह) मेरा है, यह (धन) मेरा है," तब तक मुझे (मोह–माया के) विष ने घेरे हुआ था। जब मैंने अपना तन, मन एवं बुद्धि परमेश्वर को समर्पित कर दी, तो मैं सुख की नींद में सो गया॥ ३॥ हे नानक ! जब तक मैं सांसारिक मोह की पोटली सिर पर उठा कर घूमता रहा, तो मैं (सांसारिक भय का) दण्ड भरता रहा। जब मैंने इस पोटली को फैंक दिया तो मुझे पूर्ण गुरु जी मिल गए और मैं निडर हो गया हूँ॥ ४॥ १॥ १५६॥

गउड़ी माला महला ५ ॥ भावनु तिआगिओ री तिआगिओ ॥ तिआगिओ मै गुर मिलि तिआगिओ ॥ सरब सुख आनंद मंगल रस मानि गोबिंदै आगिओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मानु अभिमानु दोऊ समाने मसतकु डारि गुर पागिओ ॥ संपत हरखु न आपत दूखा रंगु ठाकुरै लागिओ ॥ १ ॥ बास बासरी एकै सुआमी उदिआन द्रिसटागिओ ॥ निरभउ भए संत भ्रमु डारिओ पूरन सरबागिओ ॥ २ ॥ जो किछु करतै कारणु कीनो मनि बुरो न लागिओ ॥ साधसंगति परसादि संतन कै सोइओ मनु जागिओ ॥ ३ ॥ जन नानक ओड़ि तुहारी परिओ आइओ सरणागिओ ॥ नाम रंग सहज रस माणे फिरि दूखु न लागिओ ॥ ४ ॥ २ ॥ १६० ॥

हे मेरी सखी! मैंने अपनी इच्छाएँ त्याग दी हैं, सदा के लिए इसे छोड़ दिया है। गुरु को मिलकर तमाम संकल्प–विकल्पों को मैंने त्याग दिया है। गोबिन्द की आज्ञा का पालन करके मैंने सर्वसुख, आनन्द, सौभाग्य एवं रस प्राप्त कर लिए हैं॥ १॥ रहाउ॥ मेरे लिए मान–अभिमान दोनों एक समान हैं। अपना मस्तक मैंने गुरु के चरणों पर अर्पित कर दिया है। मुझे धन–दौलत, हर्ष एवं विपदा दुखी नहीं करती क्योंकि मेरा प्रेम ठाकुर जी से हो गया है॥ १॥ एक ईश्वर हृदय–गृह में वास करता है और उद्यान में भी दृष्टिगोचर होता है। संतों ने मेरी दुविधा निवृत्त कर दी है और मैं निडर हो गया हूँ। सर्वज्ञ प्रभु सर्वत्र विद्यमान हो रहा है॥ २॥ संयोगवश प्रभु जो भी करता है, मेरे हृदय को बुरा नहीं लगता। साधसंगत एवं संतों की कृपा से मेरा मोह–माया में सोया हुआ मन जाग गया है॥३॥ नानक का कथन है कि हे प्रभु! मैं तुम्हारी ओट में आकर पड़ गया हूँ और तुम्हारी शरण में आ गया हूँ। अब वह नाम रंग में सहज ही आनंद भोगता है और अब उसे फिर से कोई दुख प्रभावित नहीं करता॥ ४॥ २॥ १६०॥

गउड़ी माला महला ५ ॥ पाइआ लालु रतनु मनि पाइआ ॥ तनु सीतलु मनु सीतलु थीआ सतगुर सबदि समाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लाथी भूख त्रिसन सभ लाथी चिंता सगल बिसारी ॥ करु मसतकि गुरि पूरै धरिओ मनु जीतो जगु सारी ॥ १ ॥ त्रिपति अघाइ रहे रिद अंतरि डोलन ते अब चूके ॥ अखुटु खजाना सतिगुरि दीआ तोटि नही रे मूके ॥ २ ॥ अचरजु एकु सुनहु रे भाई गुरि ऐसी बूझ बुझाई ॥ लाहि परदा ठाकुरु जउ भेटिओ तउ बिसरी ताति पराई ॥ ३ ॥ कहिओ न जाई एहु अचंभउ सो जानै जिनि चाखिआ ॥ कहु नानक सच भए बिगासा गुरि निधानु रिदै लै राखिआ ॥ ४ ॥ ३ ॥ १६१ ॥

मैंने अपने मन में ही लाल रत्न (माणिक जैसा प्रियतम) पा लिया है। मेरा तन शीतल हो गया है, मेरा मन भी शीतल हो गया है और मैं सतगुरु के शब्द में समा गया हूँ॥ १॥ रहाउ॥ मेरी मोह की भूख निवृत्त हो गई है, मेरी तमाम तृष्णाएँ खत्म हो गई हैं और मेरी सारी चिन्ता मिट गई है। पूर्ण गुरु ने अपना हाथ मेरे मस्तक पर रखा है और अपने मन पर विजय पाने से मैंने सम्पूर्ण संसार जीत लिया है॥ १॥ अपने हृदय के भीतर मैं तृप्त एवं संतुष्ट रहता हूँ और अब मैं डांवाडोल नहीं होता। नाम रूपी अक्षय भण्डार सतिगुरु ने मुझे प्रदान किया है, न ही यह कम होता है और न ही यह समाप्त होता है॥ २॥ हे भाई! एक आश्चर्यजनक बात सुनो, गुरु ने मुझे ऐसा ज्ञान दिया है कि जब पर्दा दूर हटाकर मैं अपने ईश्वर से मिला तो मुझे दूसरों से ईर्ष्या करनी भूल गई॥ ३॥ यह एक आश्चर्य है, जो वर्णन नहीं किया जा सकता। जिस व्यक्ति ने इसे चखा है, वही इसे जानता है। हे नानक! मेरे अन्तर्मन में सत्य का प्रकाश हो गया है। प्रभु–नाम रूपी धन गुरु जी से प्राप्त करके मैंने इसे अपने हृदय में बसा लिया है॥ ४॥ ३॥ १६१॥

गउड़ी माला महला ५ ॥ उबरत राजा राम की सरणी ॥ सरब लोक माइआ के मंडल गिरि गिरि परते धरणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सासत सिंम्रिति बेद बीचारे महा पुरखन इउ कहिआ ॥ बिनु हरि भजन नाही निसतारा सूखु न किनहूं लहिआ ॥ १ ॥ तीनि भवन की लखमी जोरी बूझत नाही लहरे ॥ बिनु हरि भगति कहा थिति पावै फिरतो पहरे पहरे ॥ २ ॥ अनिक बिलास करत मन मोहन पूरन होत न कामा ॥ जलतो जलतो कबहू न बूझत सगल ब्रिथे बिनु नामा ॥ ३ ॥ हरि का नामु जपहु मेरे मीता इहै सार सुखु पूरा ॥ साधसंगति जनम मरणु निवारै नानक जन की धूरा ॥ ४ ॥ ४ ॥ १६२ ॥

विश्व के राजा राम की शरण में आकर जीव (मोह–माया से) बच जाता है। इहलोक, आकाशलोक एवं पाताललोक के प्राणी माया के आकर्षण में ही फँसे हुए हैं। माया के आकर्षण के

कारण ये उच्चस्तर से गिर गिर कर निम्नस्तर पर आ जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ शास्त्रों, स्मृतियों एवं वेदों ने यही विचार किया है और महापुरुषों ने भी यही कहा है कि भगवान के भजन के बिना भवसागर से उद्धार नहीं हो सकता और न ही किसी को सुख उपलब्ध हुआ है॥ १॥ चाहे मनुष्य तीनों लोकों की लक्ष्मी (दौलत) एकत्रित कर ले परन्तु उसके लोभ की लहरें मिटती नहीं। भगवान की भक्ति के बिना मन को स्थिरता कहाँ प्राप्त हो सकती है और प्राणी हमेशा ही माया के आकर्षण में भटकता रहता है॥ २॥ मनुष्य मन को आकर्षित करने वाले विलासों में लिप्त होता है परन्तु उसकी तृष्णाएँ तृप्त नहीं होतीं। वह सदा तृष्णाग्नि में जलता रहता है और कदापि शांत नहीं होता। प्रभु के नाम बिना सबकुछ व्यर्थ हैं॥ ३॥ हे मेरे मित्र! भगवान के नाम का जाप करो, यह पूर्ण सुख का सार है। हे नानक! संतों की संगति में जन्म—मरण का चक्र समाप्त हो जाता है और वह प्रभु के सेवकों की धूलि हो जाता है॥ ४॥ ४॥ १६२॥

गउड़ी माला महला ५ ॥ मो कउ इह बिधि को समझावै ॥ करता होइ जनावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनजानत किछु इनहि कमानो जप तप कछू न साधा ॥ दह दिसि लै इहु मनु दउराइओ कवन करम करि बाधा ॥ १ ॥ मन तन धन भूमि का ठाकुरु हउ इस का इहु मेरा ॥ भरम मोह कछु सूझसि नाही इह पैखर पए पैरा ॥ २ ॥ तब इहु कहा कमावन परिआ जब इहु कछू न होता ॥ जब एक निरंजन निरंकार प्रभ सभु किछु आपहि करता ॥ ३ ॥ अपने करतब आपे जानै जिनि इहु रचनु रचाइआ ॥ कहु नानक करणहारु है आपे सतिगुरि भरमु चुकाइआ ॥ ४ ॥ ५ ॥ १६३ ॥

हे मान्यवर! मुझे यह विधि कौन समझा सकता है? यदि मनुष्य करने वाला हो, तो ही वह कर सकता है॥ १॥ रहाउ॥ यह मनुष्य अज्ञानता में सब कुछ करता है, परन्तु वह आराधना एवं तपस्या कुछ भी नहीं करता। तृष्णा में वह अपने इस मन को दसों दिशाओं में भगाता है। वह कौन—से कर्म द्वारा फँसा पड़ा है?॥ १॥ प्राणी यह कहता है कि मैं अपने मन, तन, धन एवं भूमि का स्वामी हूँ। मैं इनका हूँ और यह मेरे हैं। भ्रम एवं मोहवश उसको कुछ भी दिखाई नहीं देता। मोह—माया की जंजीर उसके पैरों को पड़ी हुई है॥ २॥ तब यह मनुष्य क्या कर्म करता था, जब इसका अस्तित्व ही नहीं था? जब निरंजन एवं निरंकार प्रभु स्वयं ही था, तब वह सब कुछ स्वयं ही करता था॥ ३॥ जिस परमात्मा ने इस सृष्टि की रचना की है, अपनी लीलाओं को वह स्वयं ही जानता है। हे नानक! ईश्वर स्वयं ही सब कुछ करने वाला है। सतिगुरु ने मेरा भ्रम दूर कर दिया है॥ ४॥ ५॥ १६३॥

गउड़ी माला महला ५ ॥ हरि बिनु अवर क्रिआ बिरथे ॥ जप तप संजम करम कमाणे इहि ओरै मूसे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बरत नेम संजम महि रहता तिन का आढु न पाइआ ॥ आगै चलणु अउरु है भाई ऊंहा कामि न आइआ ॥ १ ॥ तीरथि नाइ अरु धरनी भ्रमता आगै ठउर न पावै ॥ ऊहा कामि न आवै इह बिधि ओहु लोगन ही पतीआवै ॥ २ ॥ चतुर बेद मुख बचनी उचरै आगै महलु न पाईऐ ॥ बूझै नाही एकु सुधाखरु ओहु सगली झाख झखाईऐ ॥ ३ ॥ नानकु कहतो इहु बीचारा जि कमावै सु पार गरामी ॥ गुरु सेवहु अरु नामु धिआवहु तिआगहु मनहु गुमानी ॥ ४ ॥ ६ ॥ १६४ ॥

भगवान के सिमरन के सिवाय अन्य सभी कार्य व्यर्थ हैं। आडम्बरपूर्ण जाप, तपस्या, संयम एवं दूसरे संस्कारों का करना यह सब निकट ही छीन लिए जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ प्राणी व्रतों एवं संयमों के नियम में क्रियाशील रहता है परन्तु उन प्रयासों का फल उसे एक कौड़ी भी नहीं मिलता। हे सज्जन! प्राणी के साथ परलोक निभाने वाला पदार्थ दूसरा है, व्रत, नियम एवं संयम में से कोई

भी परलोक में काम नहीं आता॥ १॥ जो व्यक्ति तीर्थों पर स्नान करता है और धरती पर भ्रमण करता रहता है, उसको भी परलोक में कोई सुख का निवास नहीं मिलता। वहाँ यह विधि काम नहीं आती। इससे वह केवल लोगों को ही धार्मिक होने की भ्रान्ति ही कराता है॥ २॥ चारों ही वेदों का मौखिक पाठ करने से मनुष्य आगे प्रभु के दरबार को प्राप्त नहीं होता। जो मनुष्य प्रभु के पवित्र नाम का बोध नहीं करता, वह सब व्यर्थ की बकवाद करता है॥ ३॥ नानक यह एक विचार की बात व्यक्त करता है, जो इस बात पर अनुसरण करता है, वह भवसागर से पार हो जाता है। वह बात यह है कि गुरु की सेवा करो और प्रभु के नाम का ध्यान करो तथा अपने मन का अहंत्व त्याग दो॥ ४॥ ६॥ १६४॥

गउड़ी माला ५ ॥ माधउ हरि हरि हरि मुखि कहीऐ ॥ हम ते कछू न होवै सुआमी जिउ राखहु तिउ रहीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ किआ किछु करै कि करणैहारा किआ इसु हाथि बिचारे ॥ जितु तुम लावहु तित ही लागा पूरन खसम हमारे ॥ १ ॥ करहु क्रिपा सरब के दाते एक रूप लिव लावहु ॥ नानक की बेनंती हरि पहि अपुना नामु जपावहु ॥ २ ॥ ७ ॥ १६५ ॥

हे माधो ! हे हरि—परमेश्वर ! ऐसी कृपा करो कि हम अपने मुख से तेरा हरिनाम ही उच्चरित करते रहें। हे जगत् के स्वामी ! हम से कुछ भी नहीं हो सकता। जैसे तू हम जीवों को रखता है, वैसे ही हम रहते हैं॥ १॥ रहाउ॥ प्राणी बेचारा क्या कर सकता है, वह क्या करने योग्य है और इस विनीत प्राणी के वश में क्या है ? हे हमारे सर्वव्यापक मालिक ! प्राणी उस तरफ लगा रहता है, जिस तरफ तू उसे लगा देता है॥ १॥ हे समस्त जीवों के दाता ! मुझ पर कृपा करो और केवल अपने स्वरूप के साथ ही मेरी वृत्ति लगाओ। मुझ नानक की भगवान के समक्ष यही विनती है कि हे प्रभु ! मुझसे अपने नाम का जाप करवाओ॥ २॥ ७॥ १६५॥

रागु गउड़ी माझ महला ५   १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

दीन दइआल दमोदर राइआ जीउ ॥ कोटि जना करि सेव लगाइआ जीउ ॥ भगत वछलु तेरा बिरदु रखाइआ जीउ ॥ पूरन सभनी जाई जीउ ॥ १ ॥ किउ पेखा प्रीतमु कवण सुकरणी जीउ ॥ संता दासी सेवा चरणी जीउ ॥ इहु जीउ वताई बलि बलि जाई जीउ ॥ तिसु निवि निवि लागउ पाई जीउ ॥ २ ॥ पोथी पंडित बेद खोजंता जीउ ॥ होइ बैरागी तीरथि नावंता जीउ ॥ गीत नाद कीरतनु गावंता जीउ ॥ हरि निरभउ नामु धिआई जीउ ॥ ३ ॥ भए क्रिपाल सुआमी मेरे जीउ ॥ पतित पवित लगि गुर के पैरे जीउ ॥ भ्रमु भउ काटि कीए निरवैरे जीउ ॥ गुर मन की आस पूराई जीउ ॥ ४ ॥ जिनि नाउ पाइआ सो धनवंता जीउ ॥ जिनि प्रभु धिआइआ सु सोभावंता जीउ ॥ जिसु साधू संगति तिसु सभ सुकरणी जीउ ॥ जन नानक सहजि समाई जीउ ॥ ५ ॥ १ ॥ १६६ ॥

हे दीनदयाल ! हे पूज्य दमोदर ! तूने करोड़ों ही लोगों को अपनी भक्ति सेवा में लगाया हुआ है। तेरा विरद् भक्तवत्सल है अर्थात तुम अपने भक्तों के प्रिय हो और यहीं विरद तूने धारण किया हुआ है। हे प्रभु ! तू सर्वव्यापक है॥ १॥ मैं अपने प्रियतम को किस तरह देखूँगी ? वह कौन—सा शुभ कर्म है? संतों की दासी बनकर उनके चरणों की सेवा कर। मैं अपनी यह आत्मा उन पर न्यौछावर करती हूँ और तन—मन से उन पर बलिहारी जाती हूँ। मैं झुक—झुक कर उनके चरण स्पर्श करती हूँ॥ २॥ पण्डित ग्रंथों एवं वेदों का अध्ययन करता है। कोई व्यक्ति त्यागी होकर तीर्थ—स्थान पर स्नान करता है। कोई गीत एवं मधुर भजन का गायन करता है। किन्तु मैं निर्भय हरि के नाम का ही ध्यान करती हूँ॥ ३॥ मेरा प्रभु मुझ पर दयालु हो गया है। गुरु जी के चरण स्पर्श करके मैं पतित से पवित्र हो गई

हूँ। गुरु ने मेरी दुविधा एवं भय निवृत्त करके मुझे निर्वेर कर दिया है। गुरु ने मेरे मन की आशा पूर्ण कर दी है॥ ४॥ जिन्होंने नाम–धन प्राप्त किया है, वह धनवान बन गया है। जिन्होंने अपने प्रभु का ध्यान किया है, वह शोभायमान बन गया है। हे नानक! जो व्यक्ति संतों की संगति में रहता है, उसके तमाम कर्म श्रेष्ठ हैं और ऐसा व्यक्ति सहज ही सत्य में समा गया है॥ ५॥ १॥ १६६॥

गउड़ी महला ५ माझ ॥ आउ हमारै राम पिआरे जीउ ॥ रैणि दिनसु सासि सासि चितारे जीउ ॥ संत देउ संदेसा पै चरणारे जीउ ॥ तुधु बिनु कितु बिधि तरीऐ जीउ ॥ १ ॥ संगि तुमारै मै करे अनंदा जीउ ॥ वणि तिणि त्रिभवणि सुख परमानंदा जीउ ॥ सेज सुहावी इहु मनु बिगसंदा जीउ ॥ पेखि दरसनु इहु सुखु लहीऐ जीउ ॥ २ ॥ चरण पखारि करी नित सेवा जीउ ॥ पूजा अरचा बंदन देवा जीउ ॥ दासनि दासु नामु जपि लेवा जीउ ॥ बिनउ ठाकुर पहि कहीऐ जीउ ॥ ३ ॥ इछ पुंनी मेरी मनु तनु हरिआ जीउ ॥ दरसन पेखत सभ दुख परहरिआ जीउ॥ हरि हरि नामु जपे जपि तरिआ जीउ॥ इहु अजरु नानक सुखु सहीऐ जीउ ॥ ४ ॥ २ ॥ १६७ ॥

हे मेरे प्रिय राम जी! आओ, हमारे ह्रदय में आकर निवास कर लो। रात–दिन श्वास–श्वास से तेरा ही चिंतन करती रहती हूँ। हे संतजनो! मैं आपके चरण स्पर्श करती हूँ। मेरा यह सन्देश प्रभु को पहुँचा देना, तेरे अलावा मेरा किस तरह भवसागर से कल्याण हो सकता है॥ १॥ मैं तेरी संगति में आनन्द प्राप्त करती हूँ। हे प्रभु! तुम वन, वनस्पति एवं तीनों लोकों में विद्यमान हो। तुम सुख एवं परम आनन्द प्रदान करते हो। तेरे साथ मुझे यह सेज सुन्दर लगती है एवं मेरा यह मन कृतार्थ हो जाता है। हे स्वामी! तेरे दर्शन करने से मुझे यह सुख प्राप्त होता है॥ २॥ हे नाथ! मैं तेरे सुन्दर चरण धोती और प्रतिदिन तेरी श्रद्धापूर्वक सेवा करती हूँ। हे देव! मैं तेरी पूजा–अर्चना एवं पुष्प भेंट करके तेरी वन्दना करती हूँ। हे स्वामी! मैं तेरे दासों की दास हूँ और तेरे नाम का भजन करती हूँ। हे संतजनों! मेरी यह प्रार्थना मेरे ठाकुर जी के पास वर्णन कर देना॥ ३॥ मेरी मनोकामना पूर्ण हो गई है और मेरा मन एवं तन प्रफुल्लित हो गए हैं। प्रभु के दर्शन करने से मेरे तमाम दुःख दूर हो गए हैं। हरि–परमेश्वर के नाम का जाप जपने से मैं भवसागर से पार हो गई हूँ। हे नानक! उसने प्रभु दर्शनों के इस अक्षुण्ण सुख को सहन कर लिया है॥ ४॥ २॥ १६७॥

गउड़ी माझ महला ५ ॥ सुणि सुणि साजन मन मित पिआरे जीउ ॥ मनु तनु तेरा इहु जीउ भि वारे जीउ ॥ विसरु नाही प्रभ प्राण अधारे जीउ ॥ सदा तेरी सरणाई जीउ ॥ १ ॥ जिसु मिलिऐ मनु जीवै भाई जीउ ॥ गुर परसादी सो हरि हरि पाई जीउ ॥ सभु किछु प्रभ का प्रभ कीआ जाई जीउ ॥ प्रभ कउ सद बलि जाई जीउ ॥ २ ॥ एहु निधानु जपै वडभागी जीउ ॥ नाम निरंजन एक लिव लागी जीउ ॥ गुरु पूरा पाइआ सभु दुखु मिटाइआ जीउ ॥ आठ पहर गुण गाइआ जीउ ॥ ३ ॥ रतन पदारथ हरि नामु तुमारा जीउ ॥ तूं सचा साहु भगतु वणजारा जीउ ॥ हरि धनु रासि सचु वापारा जीउ ॥ जन नानक सद बलिहारा जीउ ॥ ४ ॥ ३ ॥ १६८ ॥

हे मेरे प्रिय साजन! हे मेरे मन के मीत! मेरी विनती ध्यानपूर्वक सुनो। हे प्रभु! मेरा मन एवं तन सब कुछ तेरा है और यह प्राण भी तुझ पर न्यौछावर हैं। हे स्वामी! मैं तुझे कभी भी विस्मृत न करूँ, तुम मेरे प्राणों का आधार हो। हे ठाकुर! मैं हमेशा ही तेरी शरण में रहती हूँ॥ १॥ हे भाई! जिसको मिलने से मेरा मन जीवित हो जाता है, गुरु की कृपा से मैंने उस हरि–परमेश्वर को प्राप्त कर लिया है। समस्त पदार्थ परमेश्वर के हैं और परमेश्वर के ही सर्वत्र स्थान हैं। मैं अपने प्रभु पर सदैव ही कुर्बान जाती हूँ॥ २॥ कोई भाग्यशाली ही इस नाम के भण्डार का भजन करता है। वह एक पवित्र

प्रभु के नाम से वृत्ति लगाता है। जिसे पूर्ण गुरु मिल जाता है, उसके तमाम दुःख मिट जाते हैं। मैं आठ पहर अपने प्रभु का यश गायन करता रहता हूँ॥ ३॥ हे प्रभु! तेरा नाम रत्नों का खजाना है। तू सच्चा साहूकार है और तेरा भक्त तेरे नाम का व्यापारी है। जिस व्यक्ति के पास हरि नाम रूपी धन है उसका व्यापार ही सच्चा है। जन नानक सदैव ही प्रभु पर बलिहारी जाता है॥ ४॥ ३॥ १६८॥

रागु गउड़ी माझ महला ५ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

तूं मेरा बहु माणु करते तूं मेरा बहु माणु ॥ जोरि तुमारै सुखि वसा सचु सबदु नीसाणु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभे गला जातीआ सुणि कै चुप कीआ ॥ कद ही सुरति न लधीआ माइआ मोहड़िआ ॥ १ ॥ देइ बुझारत सारता से अखी डिठड़िआ ॥ कोई जि मूरखु लोभीआ मूलि न सुणी कहिआ ॥ २ ॥ इकसु दुहु चहु किआ गणी सभ इकतु सादि मुठी ॥ इकु अधु नाइ रसीअड़ा का विरली जाइ वुठी ॥ ३ ॥ भगत सचे दरि सोहदे अनद करहि दिन राति ॥ रंगि रते परमेसरै जन नानक तिन बलि जात ॥ ४ ॥ १ ॥ १६९ ॥

हे सृष्टिकर्त्ता! मैं तुझ पर बड़ा गर्व करता हूँ, क्योंकि तू ही मेरा स्वाभिमान है। तेरी समर्था द्वारा मैं सुखपूर्वक निवास करता हूँ। तेरा सत्य नाम ही मेरा पथप्रदर्शक है॥ १॥ रहाउ॥

मनुष्य सबकुछ जानता है परन्तु सुनकर वह चुप ही रहता है। माया में मोहित हुआ वह कदापि ध्यान नहीं देता॥ १॥ पहेलियां एवं संकेत दिए गए हैं। उनको प्राणी अपने नयनों से देखता है। परन्तु मूर्ख एवं लोभी मनुष्य इस कथन को बिल्कुल ही नहीं सुनता॥ २॥ हे भाई! किसी एक, दो अथवा चार प्राणियों की बात क्या बताऊं? सारी दुनिया को उतना ही सांसारिक स्वादों ने ठगा हुआ है। कोई विरला व्यक्ति ही प्रभु के नाम का रसिया है और कोई विरला स्थान ही प्रफुल्लित रह गया है॥ ३॥ प्रभु के भक्त सत्य के दरबार में सुन्दर लगते हैं। वे दिन-रात आनन्द प्राप्त करते हैं। हे नानक! जो व्यक्ति परमेश्वर के प्रेम रंग में मग्न रहते हैं, मैं उन पर कुर्बान जाता हूँ॥ ४॥ १॥ १६९॥

गउड़ी महला ५ मांझ ॥ दुख भंजनु तेरा नामु जी दुख भंजनु तेरा नामु ॥ आठ पहर आराधीऐ पूरन सतिगुर गिआनु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जितु घटि वसै पारब्रहमु सोई सुहावा थाउ ॥ जम कंकरु नेड़ि न आवई रसना हरि गुण गाउ ॥ १ ॥ सेवा सुरति न जाणीआ ना जापै आराधि ॥ ओट तेरी जगजीवना मेरे ठाकुर अगम अगाधि ॥ २ ॥ भए क्रिपाल गुसाईआ नठे सोग संताप ॥ तती वाउ न लगई सतिगुरि रखे आपि ॥ ३ ॥ गुरु नाराइणु दयु गुरु गुरु सचा सिरजणहारु ॥ गुरि तुठै सभ किछु पाइआ जन नानक सद बलिहार ॥ ४ ॥ २ ॥ १७० ॥

हे भगवान! तेरा नाम दुखों का नाश करने वाला है। आठों प्रहर नाम की आराधना करनी चाहिए, पूर्ण सतिगुरु का यही ज्ञान है (जो ईश्वर से मिला सकता है)॥ १॥ रहाउ॥ जिस के अन्तर्मन में पारब्रह्म निवास करता है, वह सुन्दर स्थान है। जो व्यक्ति अपनी जिह्वा से प्रभु की गुणस्तुति करता है, यमदूत उसके निकट नहीं आता॥ १॥ मैंने प्रभु की सेवा में सावधान रहने के मूल्य को नहीं समझा और न ही मैंने उसकी आराधना को अनुभव किया है। हे जगजीवन! हे मेरे अगम्य एवं अगाध ठाकुर! अब तू ही मेरा सहारा है॥ २॥ जिस व्यक्ति पर गुसाईं कृपा के घर में आ जाता है, उसका शोक एवं संताप दूर हो जाते हैं। उसे किसी प्रकार का दुःख स्पर्श नहीं करता, जिसकी सतिगुरु स्वयं रक्षा करते हैं॥ ३॥ गुरु ही नारायण हैं, गुरु ही दया का घर ईश्वर एवं गुरु ही सत्यस्वरूप कर्त्तार हैं। जब गुरु प्रसन्न हो जाता है तो सब कुछ मिल जाता है। हे नानक! मैं गुरु पर हमेशा ही तन-मन से न्यौछावर हूँ॥ ४॥ २॥ १७०॥

गउड़ी माझ महला ५ ॥ हरि राम राम राम रामा ॥ जपि पूरन होए कामा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राम गोबिंद जपेदिआ होआ मुखु पवितु ॥ हरि जसु सुणीऐ जिस ते सोई भाई मितु ॥ १ ॥ सभि पदारथ सभि फला सरब गुणा जिसु माहि ॥ किउ गोबिंदु मनहु विसारीऐ जिसु सिमरत दुख जाहि ॥ २ ॥ जिसु लड़ि लगिऐ जीवीऐ भवजलु पईऐ पारि ॥ मिलि साधू संगि उधारु होइ मुख ऊजल दरबारि ॥ ३ ॥ जीवन रूप गोपाल जसु संत जना की रासि ॥ नानक उबरे नामु जपि दरि सचै साबासि ॥ ४ ॥ ३ ॥ १७१ ॥

हे जिज्ञासु ! हरि—राम—राम—राम का लगातार जाप करने से सभी कार्य संवर जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ राम गोबिन्द का जाप करने से मुख पवित्र हो जाता है। जो व्यक्ति मुझे भगवान का यश सुनाता है, वही मेरा मित्र एवं भाई है॥ १॥ हम अपने मन में से गोबिन्द को क्यों विस्मृत करें, जिसका सिमरन करने से तमाम दुःख निवृत्त हो जाते हैं और जिस गोबिन्द के वश में समस्त पदार्थ, समस्त फल एवं सर्वगुण हैं॥ २॥ हे जिज्ञासु ! उस भगवान का ही सिमरन करना चाहिए, जिसके दामन के साथ जुड़ने से मनुष्य को जीवन मिलता है और जीव भवसागर से पार हो जाता है। संतों की संगति में रहने से प्राणी का उद्धार हो जाता है और प्रभु के दरबार में उसका मुख उज्ज्वल हो जाता है॥ ३॥ सृष्टि के पालनहार गोपाल का यश जीवन का सारांश एवं संतजनों की पूँजी है। हे नानक ! प्रभु के नाम का भजन करने से संतों का उद्धार हो जाता है और सत्य के दरबार में उनको बड़ी शोभा मिलती है॥ ४॥ ३॥ १७१॥

गउड़ी माझ महला ५ ॥ मीठे हरि गुण गाउ जिंदू तूं मीठे हरि गुण गाउ ॥ सचे सेती रतिआ मिलिआ निथावे थाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ होरि साद सभि फिकिआ तनु मनु फिका होइ ॥ विणु परमेसर जो करे फिटु सु जीवणु सोइ ॥ १ ॥ अंचलु गहि कै साध का तरणा इहु संसारु ॥ पारब्रहमु आराधीऐ उधरै सभ परवारु ॥ २ ॥ साजनु बंधु सुमितु सो हरि नामु हिरदै देइ ॥ अउगण सभि मिटाइ कै परउपकारु करेइ ॥ ३ ॥ मालु खजाना थेहु घरु हरि के चरण निधान ॥ नानक जाचकु दरि तेरै प्रभ तुधनो मंगै दानु ॥ ४ ॥ ४ ॥ १७२ ॥

हे मेरे प्राण ! तू भगवान के मीठे गुण गाता जा, उसका ही गुणानुवाद कर। सत्यस्वरूप ईश्वर के साथ मग्न रहने से निराश्रय को भी आश्रय प्राप्त हो जाता है॥ १॥ रहाउ॥ दूसरे तमाम स्वाद फीके हैं और उन से तन—मन फीके हो जाते हैं। परमेश्वर का नाम स्मरण छोड़ कर मनुष्य जो कुछ भी करता है, उसका जीवन धिक्कार योग्य है॥ १॥ हे मेरे प्राण ! संतों का दामन पकड़ने से इस भवसागर से पार हुआ जा सकता है। हमें पारब्रह्म की आराधना करनी चाहिए, क्योंकि आराधना करने वाले का समूचा परिवार भी भवसागर से पार हो जाता है॥ २॥ वही मेरा साजन, बन्धु एवं प्रिय मित्र है, जो प्रभु के नाम को मेरे हृदय में स्थापित करता है। वह मेरे तमाम अवगुणों को मिटा देता है और मुझ पर बड़ा परोपकार करता है॥ ३॥ ईश्वर के चरण ही (तमाम पदार्थों के) भण्डार हैं, वही धन, भण्डार एवं प्राणी के लिए वास्तविक निवास है। हे प्रभु ! याचक नानक तेरे द्वार पर खड़ा है और तुझे ही अपने दान के तौर पर माँगता है॥ ४॥ ४॥ १७२॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रागु गउड़ी महला ९ ॥ साधो मन का मानु तिआगउ ॥ कामु क्रोधु संगति दुरजन की ता ते अहिनिसि भागउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुखु दुखु दोनो सम करि जानै अउरु मानु अपमाना ॥ हरख सोग ते रहै अतीता तिनि जगि ततु पछाना ॥ १ ॥ उसतति निंदा दोऊ तिआगै खोजै पदु निरबाना ॥ जन नानक इहु खेलु कठनु है किनहूं गुरमुखि जाना ॥ २ ॥ १ ॥

हे संतजनो! अपने मन का अभिमान त्याग दो। काम, क्रोध एवं दुर्जन लोगों की संगति से दिन–रात दूर रहो॥ १॥ रहाउ॥ जो इन्सान सुख–दुख एवं मान–सम्मान को एक समान समझता है और जो सुख एवं दुख से पृथक रहता है, वह जगत् में जीवन के तथ्य को पहचान लेता है॥ १॥ मनुष्य को किसी की प्रशंसा एवं निन्दा करना दोनों ही त्यागने योग्य हैं और उसके लिए मुक्ति पद को ढूँढना न्यायोचित है। हे दास नानक! यह खेल कठिन है। गुरु की प्रेरणा से किसी विरले को ही इसका ज्ञान होता है॥ २॥ १॥

गउड़ी महला ६ ॥ साधो रचना राम बनाई ॥ इकि बिनसै इक असथिरु मानै अचरजु लखिओ न जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काम क्रोध मोह बसि प्रानी हरि मूरति बिसराई ॥ झूठा तनु साचा करि मानिओ जिउ सुपना रैनाई ॥ १ ॥ जो दीसै सो सगल बिनासै जिउ बादर की छाई ॥ जन नानक जगु जानिओ मिथिआ रहिओ राम सरनाई ॥ २ ॥ २ ॥

हे संतजनो! राम ने (एक अद्भुत) सृष्टि की रचना की है। एक व्यक्ति अपने प्राण त्याग देता है और एक अपने आपको अनश्वर समझता है। यह एक अद्भुत लीला है जिसका बोध नहीं होता॥ १॥ रहाउ॥ नश्वर प्राणी कामवासना, क्रोध एवं सांसारिक मोह के वश में है और वह प्रभु के व्यक्तित्व को भूल गया है। मानव देहि जो रात्रि के स्वप्न की भाँति मिथ्या है, मनुष्य उसे सत्य समझता है॥ १॥ जो कुछ भी दिखाई देता है, वह बादल की छाया की भाँति समस्त लुप्त हो जाएगा। हे नानक! जो व्यक्ति संसार को मिथ्या समझता है, वह राम की शरण में रहता है॥ २॥ २॥

गउड़ी महला ६ ॥ प्रानी कउ हरि जसु मनि नही आवै ॥ अहिनिसि मगनु रहै माइआ मै कहु कैसे गुन गावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूत मीत माइआ ममता सिउ इह बिधि आपु बंधावै ॥ म्रिग त्रिसना जिउ झूठो इहु जग देखि तासि उठि धावै ॥ १ ॥ भुगति मुकति का कारनु सुआमी मूड़ ताहि बिसरावै ॥ जन नानक कोटन मै कोऊ भजनु राम को पावै ॥ २ ॥ ३ ॥

नश्वर प्राणी भगवान के यश को अपने हृदय में नहीं बसाता। वह दिन–रात माया के मोह में ही मग्न रहता है। बताइए, फिर वह किस तरह प्रभु की महिमा गायन कर सकता है॥ १॥ रहाउ॥ इस विधि से वह अपने आपको बच्चों, मित्र–बन्धुओं, माया एवं अहंत्व के साथ बांध लेता है। मृगतृष्णा की भाँति यह नश्वर संसार मिथ्या है। फिर भी उसको देखकर प्राणी इसके पीछे भागता है॥ १॥ परमात्मा भुक्ति (संसार के भोगों) एवं मुक्ति का स्वामी है। लेकिन मूर्ख मनुष्य उस परमात्मा को विस्मृत रखता है। हे नानक! करोड़ों में से कोई विरला ही व्यक्ति है, जो राम के भजन को प्राप्त करता है॥ २॥ ३॥

गउड़ी महला ६ ॥ साधो इहु मनु गहिओ न जाई ॥ चंचल त्रिसना संगि बसतु है या ते थिरु न रहाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कठन करोध घट ही के भीतरि जिह सुधि सभ बिसराई ॥ रतनु गिआनु सभ को हिरि लीना ता सिउ कछु न बसाई ॥ १ ॥ जोगी जतन करत सभि हारे गुनी रहे गुन गाई ॥ जन नानक हरि भए दइआला तउ सभ बिधि बनि आई ॥ २ ॥ ४ ॥

हे संतजनो! यह मन वश में नहीं किया जा सकता। चूंकि यह चंचल मन तृष्णा के साथ निवास करता है। इसलिए यह स्थिर होकर नहीं रहता॥ १॥ रहाउ॥ प्रचण्ड क्रोध हृदय के भीतर है, जो समस्त चेतना को विस्मृत कर देता है। इस क्रोध ने प्रत्येक व्यक्ति का ज्ञान–रत्न छीन लिया है। इसके समक्ष किसी का भी वश नहीं चलता॥ १॥ बहुत सारे योगी यत्न करते हुए पराजित हो गए हैं। विद्वान पुरुष प्रभु की स्तुति करते हुए थक गए हैं। हे दास नानक! जब ईश्वर दयालु हो जाता है तो प्रत्येक कोशिश सफल हो जाती है॥ २॥ ४॥

गउड़ी महला ९ ॥ साधो गोबिंद के गुन गावउ ॥ मानस जनमु अमोलकु पाइओ बिरथा काहि गवावउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पतित पुनीत दीन बंध हरि सरनि ताहि तुम आवउ ॥ गज को त्रासु मिटिओ जिह सिमरत तुम काहे बिसरावउ ॥ १ ॥ तजि अभिमान मोह माइआ फुनि भजन राम चितु लावउ ॥ नानक कहत मुकति पंथ इहु गुरमुखि होइ तुम पावउ ॥ २ ॥ ५ ॥

हे संतजनो ! सृष्टि के स्वामी गोबिन्द की गुणस्तुति करते रहो। आपको अनमोल मनुष्य जीवन मिला है। इसको व्यर्थ क्यों गंवा रहे हो॥ १॥ रहाउ॥ ईश्वर पापियों को पवित्र करने वाला एवं निर्धनों का संबंधी है। आप लोग उस भगवान की शरण में आओ। आप लोग उस भगवान को क्यों विस्मृत करते हो, जिसका सिमरन करने से हाथी का भय मिट गया था॥ १॥ अभिमान, मोह एवं माया को त्याग दीजिए और राम के भजन को अपने मन के साथ लगाओ। नानक कहते हैं–मोह–माया से मुक्त होने का यही मार्ग है। लेकिन गुरु का आश्रय लेकर ही तुम यह मार्ग प्राप्त कर सकते हो॥ २॥ ५॥

गउड़ी महला ९ ॥ कोऊ माई भूलिओ मनु समझावै ॥ बेद पुरान साध मग सुनि करि निमख न हरि गुन गावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुरलभ देह पाइ मानस की बिरथा जनमु सिरावै ॥ माइआ मोह महा संकट बन ता सिउ रुच उपजावै ॥ १ ॥ अंतरि बाहरि सदा संगि प्रभु ता सिउ नेहु न लावै ॥ नानक मुकति ताहि तुम मानहु जिह घटि रामु समावै ॥ २ ॥ ६ ॥

हे मेरी माता ! मुझे कोई ऐसा महापुरुष मिल जाए जो मेरे भटकते हुए मन को सुमति प्रदान करे। मनुष्य वेद–पुराण एवं संतों–महांपुरुषों के उपदेश को सुनता रहता है, परन्तु फिर भी वह एक क्षण भर के लिए भी प्रभु का गुणानुवाद नहीं करता॥ १॥ रहाउ॥ दुर्लभ मानव देहि प्राप्त करके वह जीवन को व्यर्थ ही गंवा रहा है। यह दुनिया मोह–माया का संकट से भरा हुआ वन है तो भी मनुष्य उससे ही रुचि उत्पन्न करता है॥ १॥ प्रभु हृदय के भीतर व बाहर सदैव ही प्राणी के साथ रहता है। परन्तु प्राणी प्रभु में वृत्ति नहीं लगाता। हे नानक ! उस व्यक्ति को ही मुक्ति मिली समझो, जिसके हृदय में राम वास कर रहा है॥ २॥ ६॥

गउड़ी महला ९ ॥ साधो राम सरनि बिसरामा ॥ बेद पुरान पड़े को इह गुन सिमरे हरि को नामा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लोभ मोह माइआ ममता फुनि अउ बिखिअन की सेवा ॥ हरख सोग परसै जिह नाहनि सो मूरति है देवा ॥ १ ॥ सुरग नरक अंम्रित बिखु ए सभ तिउ कंचन अरु पैसा ॥ उसतति निंदा ए सम जा कै लोभु मोहु फुनि तैसा ॥ २ ॥ दुखु सुखु ए बाधे जिह नाहनि तिह तुम जानउ गिआनी ॥ नानक मुकति ताहि तुम मानउ इह बिधि को जो प्रानी ॥ ३ ॥ ७ ॥

हे संतजनो ! राम की शरण में आने से ही सुख उपलब्ध होता है। वेदों एवं पुराणों के अध्ययन का लाभ यही है कि प्राणी भगवान के नाम का सिमरन करता रहे॥ १॥ रहाउ॥ लालच, मोह, माया, ममता, विषयों की सेवा एवं फिर हर्ष एवं शोक जिसे स्पर्श नहीं करते, वह पुरुष प्रभु का स्वरूप है॥ १॥ जिस व्यक्ति को स्वर्ग–नरक, अमृत एवं विष एक जैसे प्रतीत होते हैं और जिस इन्सान को सोना एवं तांबा ये सभी एक समान प्रतीत होते हैं। जिसके हृदय में प्रशंसा व निन्दा एक समान हैं, जिसके हृदय में लोभ तथा मोह कोई प्रभावित नहीं करते॥ २॥ जिसे कोई सुख अथवा दुख बन्धन में बांध नहीं सकता। आप उसको ज्ञानी समझो। हे नानक ! उस प्राणी को मोक्ष मिला समझो, जो प्राणी इस जीवन–आचरण वाला है॥ ३॥ ७॥

गउड़ी महला ९ ॥ मन रे कहा भइओ तै बउरा ॥ अहिनिसि अउध घटै नही जानै भइओ लोभ संगि हउरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो तनु तै अपनो करि मानिओ अरु सुंदर ग्रिह नारी ॥ इन मैं कछु तेरो रे नाहनि देखो सोच बिचारी ॥ १ ॥ रतन जनमु अपनो तै हारिओ गोबिंद गति नही जानी ॥ निमख न लीन भइओ चरनन सिंउ बिरथा अउध सिरानी ॥ २ ॥ कहु नानक सोई नरु सुखीआ राम नाम गुन गावै ॥ अउर सगल जगु माइआ मोहिआ निरभै पदु नही पावै ॥ ३ ॥ ८ ॥

हे मेरे मन ! तू क्यों बावला हो रहा है ? तू क्यों नहीं समझता कि तेरी जीवन–अवधि दिन–रात कम होती जा रही है। लोभ के साथ तू तुच्छ हो गया है॥ १॥ रहाउ॥ (हे मन !) वह तन एवं घर की सुन्दर नारी जिन्हें तुम अपना समझते हो, इनमें तेरा कुछ नहीं। देख और ध्यानपूर्वक सोच–विचार कर॥ १॥ तुम ने अपना अनमोल मनुष्य जीवन गंवा लिया है और सृष्टि के स्वामी गोबिन्द की गति को नहीं जाना। एक क्षण भर के लिए भी तू प्रभु के चरणों में नहीं समाया। तेरी अवस्था व्यर्थ ही बीत गई है॥ २॥ हे नानक ! वही व्यक्ति सुखी है, जो राम नाम का यश गायन करता रहता है। दूसरे तमाम लोग माया ने मुग्ध किए हुए हैं और वह निर्भय–पद को प्राप्त नहीं होते॥ ३॥ ८॥

गउड़ी महला ९ ॥ नर अचेत पाप ते डरु रे ॥ दीन दइआल सगल भै भंजन सरनि ताहि तुम परु रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बेद पुरान जास गुन गावत ता को नामु हीऐ मो धरु रे ॥ पावन नामु जगति मै हरि को सिमरि सिमरि कसमल सभ हरु रे ॥ १ ॥ मानस देह बहुरि नह पावै कछू उपाउ मुकति का करु रे ॥ नानक कहत गाइ करुना मै भव सागर कै पारि उतरु रे ॥ २ ॥ ९ ॥ २५१ ॥

हे चेतनाहीन प्राणी ! तू पापों से भय कर। उस दीनदयाल एवं समस्त भय नाश करने वाले प्रभु की शरण ले॥ १॥ रहाउ॥ अपने ह्रदय में उस प्रभु के नाम को बसा कर रख, जिसकी महिमा वेद एवं पुराण भी गायन करते हैं। ईश्वर का नाम इस संसार में पवित्र–पावन है। इसका भजन सिमरन करने से तू अपने तमाम पाप निवृत्त कर ले॥ १॥ हे प्राणी ! मानव देहि दोबारा तुझे प्राप्त नहीं होनी। इसलिए अपनी मुक्ति हेतु कुछ उपाय कर ले। नानक कहते हैं, हे जीव ! करुणानिधि परमेश्वर का भजन गायन कर के भवसागर से पार हो जा॥ २॥ ९॥ २५१॥

रागु गउड़ी असटपदीआ महला १ गउड़ी गुआरेरी ੴ सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

निधि सिधि निरमल नामु बीचारु ॥ पूरन पूरि रहिआ बिखु मारि ॥ त्रिकुटी छूटी बिमल मझारि ॥ गुर की मति जीइ आई कारि ॥ १ ॥ इन बिधि राम रमत मनु मानिआ ॥ गिआन अंजनु गुर सबदि पछानिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इकु सुखु मानिआ सहजि मिलाइआ ॥ निरमल बाणी भरमु चुकाइआ ॥ लाल भए सूहा रंगु माइआ ॥ नदरि भई बिखु ठाकि रहाइआ ॥ २ ॥ उलट भई जीवत मरि जागिआ ॥ सबदि रवे मनु हरि सिउ लागिआ ॥ रसु संग्रहि बिखु परहरि तिआगिआ ॥ भाइ बसे जम का भउ भागिआ ॥ ३ ॥ साद रहे बादं अहंकारा ॥ चितु हरि सिउ राता हुकमि अपारा ॥ जाति रहे पति के आचारा ॥ द्रिसटि भई सुखु आतम धारा ॥ ४ ॥ तुझ बिनु कोइ न देखउ मीतु ॥ किसु सेवउ किसु देवउ चीतु ॥ किसु पूछउ किसु लागउ पाइ ॥ किसु उपदेसि रहा लिव लाइ ॥ ५ ॥ गुर सेवी गुर लागउ पाइ ॥ भगति करी राचउ हरि नाइ ॥ सिखिआ दीखिआ भोजन भाउ ॥ हुकमि संजोगी निज घरि जाउ ॥ ६ ॥ गरब गतं सुख आतम धिआना ॥ जोति भई जोती माहि समाना ॥ लिखतु मिटै नही सबदु नीसाना ॥ करता करणा करता जाना ॥ ७ ॥ नह पंडितु नह चतुरु सिआना ॥ नह भूलो नह भरमि भुलाना ॥ कथउ न कथनी हुकमु पछाना ॥ नानक गुरमति सहजि समाना ॥ ८ ॥ १ ॥

नवनिधि एवं (अठारह) सिद्धियाँ पवित्र नाम के चिंतन में हैं। माया के विष का नाश करके मनुष्य परमात्मा को सर्वव्यापक देखता है। पवित्र प्रभु में वास करने से मैंने तीनों गुणों से मुक्ति प्राप्त कर ली है। गुरु जी का उपदेश ही मेरे मन के लिए लाभदायक (सिद्धियाँ) हैं॥ १॥ इस विधि से राम के नाम का जाप करने से मेरा मन संतुष्ट हो गया है। ज्ञान के सुरमे को मैंने गुरु के शब्द द्वारा पहचान लिया है॥ १॥ रहाउ॥ मैं अब एक सहज सुख को भोगता हूँ और प्रभु में लीन हो गया हूँ। पवित्र वाणी द्वारा मेरी शंका निवृत्त हो गई है। मोहिनी के लाल रंग के स्थान पर मैंने ईश्वर के नाम का गहरा लाल रंग धारण कर लिया है। जब प्रभु अपनी कृपा दृष्टि धारण करता है तो बुराई का विष नष्ट हो जाता है॥ २॥ मेरी वृत्ति मोह—माया से पृथक हो गई है, सांसारिक कर्म करते हुए ही मेरा मन मर गया है और मैं आत्मिक तौर पर जागृत हो गया हूँ। नाम का उच्चारण करने से मेरा मन प्रभु के साथ जुड़ गया है। माया के विष को त्याग कर मैंने प्रभु के अमृतरस का संग्रह किया है। प्रभु के प्रेम में वास करने से मेरा मृत्यु का भय भाग गया है॥ ३॥ मेरे सांसारिक रस, विवाद एवं अहंकार मिट गए हैं। अनंत ईश्वर के हुक्म द्वारा मेरा मन ईश्वर के साथ मग्न हो गया है। मेरे लोक व्यवहार के कार्य जाते रहे हैं। जब ईश्वर ने मुझ पर कृपा—दृष्टि की तो मैंने अलौकिक सुख को अपने हृदय में बसा लिया॥ ४॥ हे नाथ! तेरे बिना मैं अपना मित्र किसी को नहीं समझता। किसी दूसरे की मैं क्यों सेवा करूँ और किस को अपनी आत्मा समर्पित करूँ? मैं किससे पूछूँ और किसके चरण स्पर्श करूँ? किसके उपदेश द्वारा मैं प्रभु के प्रेम में लीन रह सकता हूँ?॥ ५॥ मैं गुरु की श्रद्धापूर्वक सेवा करता हूँ और गुरु के ही चरण स्पर्श करता हूँ। मैं प्रभु की भक्ति करता हुआ उसके नाम में समाया हुआ हूँ। प्रभु की प्रीति मेरे लिए उपदेश, प्रभु दीक्षा एवं भोजन है। प्रभु के हुक्म से जुड़कर मैंने अपने आत्मस्वरूप में प्रवेश कर लिया है॥ ६॥ अहंकार की निवृत्ति द्वारा आत्मा को सुख एवं ध्यान प्राप्त हो जाते हैं। ईश्वरीय ज्योत उदय हो गई है और मेरे प्राण परम ज्योति में लीन हो गए हैं। अनन्त लिखित मिटाई नहीं जा सकती और मैं प्रभु के नाम का तिरंगा प्राप्त कर लिया है। मैंने सृजनहार प्रभु को ही कर्तार एवं रचयिता जाना है॥ ७॥ अपने आप मनुष्य न विद्वान, चतुर अथवा बुद्धिमान है, न ही मार्ग से भटका हुआ, न ही भ्रम का गुमराह किया हुआ है। मैं व्यर्थ बातें नहीं करता, परन्तु हरि के हुक्म को पहचानता हूँ। हे नानक! गुरु के उपदेश द्वारा वह प्रभु में लीन हो गया है॥ ८॥ १॥

गउड़ी गुआरेरी महला १ ॥ मनु कुंचरु काइआ उदिआनै ॥ गुरु अंकसु सचु सबदु नीसानै ॥ राज दुआरै सोभ सु मानै ॥ १ ॥ चतुराई नह चीनिआ जाइ ॥ बिनु मारे किउ कीमति पाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घर महि अंम्रितु तसकरु लेई ॥ नंनाकारु न कोइ करेई ॥ राखै आपि वडिआई देई ॥ २ ॥ नील अनील अगनि इक ठाई ॥ जलि निवरी गुरि बूझ बुझाई ॥ मनु दे लीआ रहसि गुण गाई ॥ ३ ॥ जैसा घरि बाहरि सो तैसा ॥ बैसि गुफा महि आखउ कैसा ॥ सागरि डूगरि निरभउ ऐसा ॥ ४ ॥ मूए कउ कहु मारे कउनु ॥ निडरे कउ कैसा डरु कवनु ॥ सबदि पछानै तीने भउन ॥ ५ ॥ जिनि कहिआ तिनि कहनु वखानिआ ॥ जिनि बूझिआ तिनि सहजि पछानिआ ॥ देखि बीचारि मेरा मनु मानिआ ॥ ६ ॥ कीरति सूरति मुकति इक नाई ॥ तही निरंजनु रहिआ समाई ॥ निज घरि बिआपि रहिआ निज ठाई ॥ ७ ॥ उसतति करहि केते मुनि प्रीति ॥ तनि मनि सूचै साचु सु चीति ॥ नानक हरि भजु नीता नीति ॥ ८ ॥ २ ॥

काया रूपी उद्यान में मन रूपी एक हाथी है। गुरु जी अंकुश है, जब हाथी पर सत्यनाम का चिन्ह पड़ जाता है तो यह प्रभु के दरबार में मान—सम्मान प्राप्त करता है॥ १॥ किसी चतुराई से परमेश्वर

का बोध नहीं हो सकता। मन पर विजय पाने के बिना परमेश्वर का मूल्य किस तरह पाया जा सकता है॥ १॥ रहाउ॥ नाम अमृत मनुष्य के हृदय घर में ही विद्यमान है, जिसे चोर लिए जा रहे हैं। कोई भी उनको मना नहीं करता। यदि मनुष्य अमृत की रक्षा करे तो ईश्वर स्वयं उसको सम्मान प्रदान करता है॥ २॥ हजारों, अरबों एवं असंख्य इच्छाओं की अग्नियां हृदय में विद्यमान हैं, गुरु जी के विदित किए हुए ज्ञान रूपी जल से वह बुझ जाती हैं। अपनी आत्मा अर्पित करके मैंने ज्ञान प्राप्त किया है और अब मैं प्रसन्नतापूर्वक ईश्वर का यश गायन करता हूँ॥ ३॥ जैसे प्रभु हृदय-घर में है, वैसे ही वह बाहर है। गुफा में बैठकर मैं उसको किस तरह वर्णन कर सकता हूँ। निडर प्रभु सागरों एवं पहाड़ों में वैसा ही है॥ ४॥ बताइए, उसको कौन मार सकता है, जो आगे ही मृत है? कौन-सा भय, एवं कौन-सा पुरुष निडर को डरा सकता है। वह तीनों ही लोकों में प्रभु को पहचानता है॥ ५॥ जो केवल कहता ही है, वह केवल एक प्रसंग ही वर्णन करता है। जो वास्तविक समझता है, वह प्रभु को अनुभव कर लेता है। वास्तविकता को देखने एवं सोच-विचार करने से मेरा मन प्रभु के साथ मिल गया है॥ ६॥ शोभा, सौन्दर्य एवं मुक्ति एक नाम में है। उस नाम में ही निरंजन परमात्मा लीन रहता है। प्रभु अपने आत्म-स्वरूप एवं अपने स्थान नाम में निवास करता है॥ ७॥ अनेक मुनिजन प्रेमपूर्वक उसकी प्रशंसा करते हैं। उस सत्यनाम को हृदय में बसाने से उनका तन-मन पवित्र हो जाता है। हे नानक! तू नित्य परमेश्वर का भजन करता रह॥ ८॥ २॥

गउड़ी गुआरेरी महला १ ॥ ना मनु मरै न कारजु होइ ॥ मनु वसि दूता दुरमति दोइ ॥ मनु मानै गुर ते इकु होइ ॥ १ ॥ निरगुण रामु गुणह वसि होइ ॥ आपु निवारि बीचारे सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु भूलो बहु चितै विकारु ॥ मनु भूलो सिरि आवै भारु ॥ मनु मानै हरि एकंकारु ॥ २ ॥ मनु भूलो माइआ घरि जाइ ॥ कामि बिरूधउ रहै न ठाइ ॥ हरि भजु प्राणी रसन रसाइ ॥ ३ ॥ गैवर हैवर कंचन सुत नारी ॥ बहु चिंता पिड़ चाले हारी ॥ जूऐ खेलणु काची सारी ॥ ४ ॥ संपउ संची भए विकार ॥ हरख सोक उभे दरवारि ॥ सुखु सहजे जपि रिदै मुरारि ॥ ५ ॥ नदरि करे ता मेलि मिलाए ॥ गुण संग्रहि अउगण सबदि जलाए ॥ गुरमुखि नामु पदारथु पाए ॥ ६ ॥ बिनु नावै सभ दूख निवासु ॥ मनमुख मूड़ माइआ चित वासु ॥ गुरमुखि गिआनु धुरि करमि लिखिआसु ॥ ७ ॥ मनु चंचलु धावतु फुनि धावै ॥ साचे सूचे मैलु न भावै ॥ नानक गुरमुखि हरि गुण गावै ॥ ८ ॥ ३ ॥

मनुष्य का मन कामादिक विकारों के वश में होने के कारण मरता नहीं। इसलिए जीवन का मनोरथ सम्पूर्ण नहीं होता। मन दुष्कर्मों, मंदबुद्धि एवं द्वैतभाव के वश में है। गुरु से ज्ञान प्राप्त करके मन तृप्त हो जाता है और ईश्वर से एकरूप हो जाता है॥ १॥ निर्गुण राम गुणों के वश में है। जो व्यक्ति अपने अहंकार को मिटा देता है, वह प्रभु का चिन्तन करता है॥ १॥ रहाउ॥ भटका हुआ मन अधिकतर विकारों का ध्यान करता है। जब तक मन कुमार्ग चलता रहता है, तब तक पापों का बोझ उसके सिर पर पड़ता है। जब मन की संतुष्टि हो जाती है, तो वह केवल एक ईश्वर को अनुभव करता है॥ २॥ भटका हुआ मन पापों के गृह में प्रवेश करता है। कामग्रस्त मन उचित स्थान पर नहीं रहता। हे नश्वर प्राणी! प्रेमपूर्वक अपनी जिह्वा से प्रभु के नाम का भजन कर॥ ३॥ हाथी, घोड़े, सोना, पुत्र एवं पत्नी प्राप्त करने की अधिकतर चिन्ता में प्राणी (जीवन) खेल हार जाता है और कूच कर जाता है। शतरंज की खेल में उसका मोहरा चलता नहीं॥ ४॥ जैसे-जैसे मनुष्य धन संग्रह करता है। उससे विकार उत्पन्न हो जाता है और हर्ष एवं शोक उसके द्वार पर खड़े रहते हैं। हृदय में परमात्मा का जाप करने से सहज ही सुख प्राप्त हो जाता है॥ ५॥ जब प्रभु दया के घर में आता है, तब वह मनुष्य को गुरु से मिलाकर अपने साथ मिला लेता है। ऐसा मनुष्य गुरु की शरण में रहकर गुणों का संग्रह करता

है और गुरु के उपदेश द्वारा अपने अवगुणों को जला देता है और गुरु के समक्ष होकर नाम–धन प्राप्त कर लेता है॥ ६॥ प्रभु के नाम बिना समस्त दुख निवास करते हैं। मूर्ख स्वेच्छाचारी व्यक्ति के मन का निवास माया में ही होता है। पूर्व जन्म के शुभ कर्मों के कारण भाग्य की बदौलत मनुष्य गुरु से ज्ञान प्राप्त कर लेता है॥ ७॥ चंचल मन अस्थिर पदार्थों के पीछे बार–बार भागता है। सत्यस्वरूप एवं पवित्र प्रभु मलिनता को पसन्द नहीं करता। हे नानक! गुरमुख ईश्वर की महिमा गायन करता रहता है॥ ८॥ ३॥

गउड़ी गुआरेरी महला १ ॥ हउमै करतिआ नह सुखु होइ ॥ मनमति झूठी सचा सोइ ॥ सगल बिगूते भावै दोइ ॥ सो कमावै धुरि लिखिआ होइ ॥ १ ॥ ऐसा जगु देखिआ जूआरी ॥ सभि सुख मागै नामु बिसारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अदिसटु दिसै ता कहिआ जाइ ॥ बिनु देखे कहणा बिरथा जाइ ॥ गुरमुखि दीसै सहजि सुभाइ ॥ सेवा सुरति एक लिव लाइ ॥ २ ॥ सुखु मांगत दुखु आगल होइ ॥ सगल विकारी हारु परोइ ॥ एक बिना झूठे मुकति न होइ ॥ करि करि करता देखै सोइ ॥ ३ ॥ त्रिसना अगनि सबदि बुझाए ॥ दूजा भरमु सहजि सुभाए ॥ गुरमती नामु रिदै वसाए ॥ साची बाणी हरि गुण गाए ॥ ४ ॥ तन महि साचो गुरमुखि भाउ ॥ नाम बिना नाही निज ठाउ ॥ प्रेम पराइण प्रीतम राउ ॥ नदरि करै ता बूझै नाउ ॥ ५ ॥ माइआ मोहु सरब जंजाला ॥ मनमुख कुचील कुछित बिकराला ॥ सतिगुरु सेवे चूकै जंजाला ॥ अंम्रित नामु सदा सुखु नाला ॥ ६ ॥ गुरमुखि बूझै एक लिव लाए ॥ निज घरि वासै साचि समाए ॥ जंमणु मरणा ठाकि रहाए ॥ पूरे गुर ते इह मति पाए ॥ ७ ॥ कथनी कथउ न आवै ओरु ॥ गुरु पुछि देखिआ नाही दरु होरु ॥ दुखु सुखु भाणै तिसै रजाइ ॥ नानकु नीचु कहै लिव लाइ ॥ ८ ॥ ४ ॥

अहंकार करने से सुख प्राप्त नहीं होता। मन की बुद्धि झूठी है। लेकिन वह प्रभु ही सत्य है। जो व्यक्ति द्वैत भाव से प्रेम करते हैं, वह सभी बर्बाद हो जाते हैं। विधाता द्वारा जो प्राणी के भाग्य में लिखा होता है, उसी के अनुसार वह कर्म करता है॥ १॥ मैंने संसार को जुए का खेल खेलते देखा है जो प्रभु के नाम को विस्मृत करके सर्वसुखों की याचना करता रहता है॥ १॥ रहाउ॥ यदि अदृश्य प्रभु देख लिया जाए केवल तभी वह वर्णन किया जा सकता है। बिना देखे उसका वर्णन निरर्थक है। गुरु के समक्ष रहने वाले को प्रभु सहज ही दिखाई देता है। हे प्राणी! अपनी वृत्ति एक ईश्वर की सेवा एवं प्रेम के साथ लगा॥ २॥ सुख माँगने से मनुष्य का दुख बढ़ता है। चूंकि इन्सान अपने गले में विकारों की माला पहन लेता है। झूठे मोह में ग्रस्त हुए इन्सान को एक परमेश्वर के नाम बिना मुक्ति नहीं मिलती। परमात्मा खुद ही सृष्टि–रचना करके इस खेल को देखता रहता है॥ ३॥ ईश्वर का नाम तृष्णाग्नि को बुझा देता है। तब द्वैत–भाव एवं सन्देह सहज ही मिट जाते हैं। गुरु के उपदेश से नाम हृदय में वास करता है। सच्ची वाणी द्वारा मनुष्य प्रभु का यशोगान करता है॥ ४॥ सत्यस्वरूप प्रभु उसके मन में निवास करता है, जो गुरु के समक्ष रहकर उसके लिए प्रेम धारण करता है। नाम के बिना मनुष्य अपने आत्मस्वरूप को प्राप्त नहीं करता। प्रियतम पातशाह प्रेम परायण हुआ है। यदि प्रभु दया करे तो मनुष्य उसके नाम को समझ लेता है॥ ५॥ माया का मोह तमाम बन्धन ही है। स्वेच्छाचारी जीव मलिन, कुत्सित एवं भयानक है। सतिगुरु की सेवा से विपदा मिट जाती है। प्रभु के नाम अमृत से मनुष्य सदैव सुख में रहता है॥ ६॥ गुरमुख व्यक्ति प्रभु को समझ लेता है, वह अपनी वृत्ति एक ईश्वर में ही लगाता है। वह सदैव ही अपने आत्म–स्वरूप में रहता है और सत्य में ही समाया रहता है। उसका आवागमन (जन्म–मरण का चक्र) मिट जाता है। किन्तु यह ज्ञान उसे पूर्ण गुरु से ही मिलता है॥ ७॥ जिस भगवान की महिमा का कथन नहीं किया जा

सकता, मैं तो उसकी ही महिमा करता हूँ। मैंने गुरु से पूछ कर देख लिया है कि भगवान के बिना दूसरा सुख का द्वार नहीं। दुःख एवं सुख उसके हुक्म एवं इच्छा में है। विनीत नानक कहता है – हे प्राणी! तू प्रभु के साथ वृत्ति लगा॥ ८॥ ४॥

गउड़ी महला १ ॥ दूजी माइआ जगत चित वासु ॥ काम क्रोध अहंकार बिनासु ॥ १ ॥ दूजा कउणु कहा नही कोई ॥ सभ महि एकु निरंजनु सोई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दूजी दुरमति आखै दोइ ॥ १ ॥ आवै जाइ मरि दूजा होइ ॥ २ ॥ धरणि गगन नह देखउ दोइ ॥ नारी पुरख सबाई लोइ ॥ ३ ॥ रवि ससि देखउ दीपक उजिआला ॥ सरब निरंतरि प्रीतमु बाला ॥ ४ ॥ करि किरपा मेरा चितु लाइआ ॥ सतिगुरि मो कउ एकु बुझाइआ ॥ ५ ॥ एकु निरंजनु गुरमुखि जाता ॥ दूजा मारि सबदि पछाता ॥ ६ ॥ एको हुकमु वरतै सभ लोई ॥ एकसु ते सभ ओपति होई ॥ ७ ॥ राह दोवै खसमु एको जाणु ॥ गुर कै सबदि हुकमु पछाणु ॥ ८ ॥ सगल रूप वरन मन माही ॥ कहु नानक एको सालाही ॥ ९ ॥ ५ ॥

द्वैतवाद उत्पन्न करने वाली माया दुनिया के लोगों के मन में निवास करती है। कामवासना, क्रोध एवं अहंकार ने दुनिया के लोगों का जीवन नष्ट कर दिया है॥ १॥ मैं दूसरा किसे कहूँ, जब प्रभु के सिवाय दूसरा कोई है ही नहीं? समस्त प्राणियों में वह एक पवित्र प्रभु ही मौजूद है॥ १॥ रहाउ॥ द्वैतवाद उत्पन्न करने वाली माया ही इन्सान की खोटी बुद्धि को कहती रहती है कि उसका अस्तित्व परमात्मा से अलग है। जिसके फलस्वरूप इन्सान दुनिया में जन्मता–मरता रहता है जो द्वैतवाद की प्रीति धारण करता है॥ २॥ धरती एवं अम्बर पर मुझे दूसरा कोई दिखाई नहीं देता। तमाम नारियों एवं पुरुषों में ईश्वर की ज्योति मौजूद है॥३॥ मैं सूर्य, चन्द्रमा एवं दीपकों में ईश्वर का प्रकाश देखता हूँ। प्रत्येक व्यक्ति के अन्तर में मेरा यौवन सम्पन्न प्रियतम प्रभु ही दिखाई दे रहा है॥ ४॥ अपनी कृपा करके गुरु ने मेरा मन प्रभु के साथ लगा दिया है। सतिगुरु ने मुझे एक ईश्वर दिखा दिया है॥ ५॥ गुरमुख एक निरंजन को ही जानता है। सांसारिक मोह को मिटा कर वह प्रभु को पहचान लेता है॥ ६॥ ईश्वर का हुक्म ही समस्त लोकों में क्रियाशील है। एक ईश्वर से ही सभी उत्पन्न हुए हैं॥ ७॥ (मनमुख एवं गुरमुख) मार्ग दो हैं परन्तु सबका मालिक एक है, उसे ही समझो। गुरु के शब्द द्वारा उसके हुक्म को पहचान॥ ८॥ हे नानक! मैं एक ईश्वर की प्रशंसा करता हूँ जो तमाम रूपों, रंगों एवं हृदयों में व्यापक है॥ ९॥ ५॥

गउड़ी महला १ ॥ अधिआतम करम करे ता साचा ॥ मुकति भेदु किआ जाणै काचा ॥ १ ॥ ऐसा जोगी जुगति बीचारै ॥ पंच मारि साचु उरि धारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस कै अंतरि साचु वसावै ॥ जोग जुगति की कीमति पावै ॥ २ ॥ रवि ससि एको ग्रिह उदिआनै ॥ करणी कीरति करम समानै ॥ ३ ॥ एक सबद इक भिखिआ मागै ॥ गिआनु धिआनु जुगति सचु जागै ॥ ४ ॥ भै रचि रहै न बाहरि जाइ ॥ कीमति कउण रहै लिव लाइ ॥ ५ ॥ आपे मेले भरमु चुकाए ॥ गुर परसादि परम पदु पाए ॥ ६ ॥ गुर की सेवा सबदु वीचारु ॥ हउमै मारे करणी सारु ॥ ७ ॥ जप तप संजम पाठ पुराणु ॥ कहु नानक अपरंपर मानु ॥ ८ ॥ ६ ॥

यदि मनुष्य आध्यात्मिक कर्म करे तो ही वह सत्यवादी है। झूठा मनुष्य मोक्ष के भेद को क्या समझ सकता है?॥ १॥ ऐसा मनुष्य ही योगी है, जो प्रभु के मिलन–मार्ग का विचार करता है तथा पाँच कट्टर शत्रुओं (कामादिक विकारों) का वध करके सत्य (परमेश्वर) को अपने हृदय से लगाकर रखता है॥ १॥ रहाउ॥ ईश्वर जिसके हृदय में सत्य को बसाता है। वह उसके साथ योग युक्ति (मिलन मार्ग) के मूल्य को अनुभव कर लेता है॥ २॥ एक ईश्वर को वह सूर्य, चन्द्रमा, गृह एवं वन में देखता है।

ईश्वर का यश रूपी कर्म उसकी सामान्य करनी है॥ ३॥ वह केवल नाम का भजन करता है और एक ही ईश्वर के नाम का दान माँगता है। वह ज्ञान, ध्यान, जीवन युक्ति एवं सत्य में ही जागृत रहता है॥ ४॥ वह ईश्वर के भय में लीन रहता है और कदापि उस भय से बाहर नहीं होता। वह प्रभु की वृत्ति में लीन रहता है। ऐसे योगी का मूल्य कौन पा सकता है॥ ५॥ ईश्वर उसकी दुविधा दूर कर देता है और उसे अपने साथ मिला लेता है। गुरु की कृपा से वह परम पद प्राप्त कर लेता है॥ ६॥ वह गुरु की सेवा करता और शब्द का चिंतन करता रहता है। वह अपने अहंकार को मिटाकर शुभ कर्म करता है॥ ७॥ हे नानक! अपरंपार ईश्वर में आस्था धारण करना ही जाप, तपस्या, संयम एवं पुराणों का पाठ है॥ ८॥ ६॥

खिमा गही ब्रतु सील संतोखं ॥ रोगु न बिआपै ना जम दोखं ॥ मुकत भए प्रभ रूप न रेखं ॥ १ ॥ जोगी कउ कैसा डरु होइ ॥ रूखि बिरखि ग्रिहि बाहरि सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निरभउ जोगी निरंजनु धिआवै ॥ अनदिनु जागै सचि लिव लावै ॥ सो जोगी मेरै मनि भावै ॥ २ ॥ कालु जालु ब्रहम अगनी जारे ॥ जरा मरण गतु गरबु निवारे ॥ आपि तरै पितरी निसतारे ॥ ३ ॥ सतिगुरु सेवे सो जोगी होइ ॥ भै रचि रहै सु निरभउ होइ ॥ जैसा सेवै तैसो होइ ॥ ४ ॥ नर निहकेवल निरभउ नाउ ॥ अनाथह नाथ करे बलि जाउ ॥ पुनरपि जनमु नाही गुण गाउ ॥ ५ ॥ अंतरि बाहरि एको जाणै ॥ गुर कै सबदे आपु पछाणै ॥ साचै सबदि दरि नीसाणै ॥ ६ ॥ सबदि मरै तिसु निज घरि वासा ॥ आवै न जावै चूकै आसा ॥ गुर कै सबदि कमलु परगासा ॥ ७ ॥ जो दीसै सो आस निरासा ॥ काम क्रोध बिखु भूख पिआसा ॥ नानक बिरले मिलहि उदासा ॥ ८ ॥ ७ ॥

क्षमा कर देने का स्वभाव धारण करना मेरे लिए उपवास, उत्तम आचरण एवं संतोष है। इसलिए न रोग और न ही मृत्यु की पीड़ा मुझे तंग करती है। मैं रूपरेखा रहित ईश्वर में लीन होकर मुक्त हो गया हूँ॥ १॥ उस योगी को कैसा भय हो सकता है, जब वह प्रभु पेड़–पौधों एवं घर के भीतर एवं बाहर सर्वत्र व्यापक है॥ १॥ रहाउ॥ निर्भय योगी निरंजन प्रभु का ध्यान करता रहता है। वह रात–दिन मोह–माया से जाग्रत रहता है और सत्य नाम के साथ वृत्ति लगाता है। ऐसा योगी मेरे मन को भला लगता है॥ २॥ मृत्यु के जाल को वह ब्रह्म (के तेज) की अग्नि से जला देता है। वह बुढ़ापे एवं मृत्यु के भय को निवृत्त कर देता है और अपने अहंकार को मिटा देता है। ऐसा योगी स्वयं तो भवसागर पार हो जाता है और अपने पूर्वजों को भी बचा लेता है॥ ३॥ वहीं व्यक्ति योगी है, जो सतिगुरु की सेवा करता है। जो ईश्वर के भय में लीन रहता है, वह निडर हो जाता है। प्राणी जैसे प्रभु की सेवा करता है, वैसा ही आप बन जाता है॥ ४॥ प्राणी निर्भय प्रभु का नाम स्मरण करके पवित्र एवं निडर हो जाता है। प्रभु निराश्रितों को आश्रयवान बना देता है। मैं उस पर कुर्बान जाता हूँ। उसकी गुणस्तुति करने से मनुष्य इस संसार में पुनः जन्म नहीं लेता॥ ५॥ जो भीतर एवं बाहर एक ईश्वर को पहचानता है और जो गुरु के शब्द द्वारा अपने आपको समझता है, प्रभु के दरबार में उस पर सत्यनाम का चिन्ह विद्यमान होता है॥ ६॥ जो शब्द पर मरता है, उसका निवास सदा ही आत्मस्वरूप में रहता है। उसकी तृष्णा मिट जाती है और वह जीवन–मृत्यु के चक्र में नहीं पड़ता। गुरु के शब्द द्वारा उसका हृदय कमल प्रफुल्लित हो जाता है॥ ७॥ जो कोई भी दिखाई देता है, वह आशा, निराशा, कामचेष्टा, क्रोध, माया की भूख का प्यासा है। हे नानक! कोई विरला जगत् का त्यागी ही प्रभु को मिलता है॥ ८॥ ७॥

गउड़ी महला १ ॥ ऐसो दासु मिलै सुखु होई ॥ दुखु विसरै पावै सचु सोई ॥ १ ॥ दरसनु देखि भई मति पूरी ॥ अठसठि मजनु चरनह धूरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नेत्र संतोखे एक लिव तारा ॥ जिहवा

सूची हरि रस सारा ॥ २ ॥ सचु करणी अभ अंतरि सेवा ॥ मनु त्रिपतासिआ अलख अभेवा ॥ ३ ॥ जह जह देखउ तह तह साचा ॥ बिनु बूझे झगरत जगु काचा ॥ ४ ॥ गुरु समझावै सोझी होई ॥ गुरमुखि विरला बुझै कोई ॥ ५ ॥ करि किरपा राखहु रखवाले ॥ बिनु बूझे पसू भए बेताले ॥ ६ ॥ गुरि कहिआ अवरु नही दूजा ॥ किसु कहु देखि करउ अन पूजा ॥ ७ ॥ संत हेति प्रभि त्रिभवण धारे ॥ आतमु चीनै सु ततु बीचारे ॥ ८ ॥ साचु रिदै सचु प्रेम निवास ॥ प्रणवति नानक हम ता के दास ॥ ९ ॥ ८ ॥

जिसने ईश्वर को पा लिया है, ऐसे सेवक को मिलने से सुख प्राप्त होता है एवं दुख दूर हो जाता है॥ १॥ उसके दर्शन करने से मेरी बुद्धि पूर्ण हो गई है। उसकी चरण–धूलि अठसठ तीर्थों का स्नान है॥ १॥ रहाउ॥ एक ईश्वर में सुरति लगाने से मेरे नेत्र संतुष्ट हो गए हैं। हरि रस से मेरी जिह्वा शुद्ध हो गई है॥ २॥ मेरी करनी सत्य है और मेरे हृदय में प्रभु की सेवा विद्यमान है। अलक्ष्य तथा अकल्पनीय प्रभु से मेरा मन संतुष्ट हो गया है॥ ३॥ जहाँ कहीं भी मैं देखता हूँ, वहीं मैं सत्य स्वरूप ईश्वर के दर्शन करता हूँ। प्रभु की सूझ के बिना मिथ्या संसार विवाद करता है॥ ४॥ जब गुरु उपदेश प्रदान करते हैं तो सूझ प्राप्त हो जाती है। कोई विरला गुरमुख ही प्रभु को पहचानता है॥ ५॥ हे रखवाले प्रभु! कृपा करके हमारी रक्षा करो। प्रभु की सूझ बिना प्राणी पशु एवं प्रेत वृत्ति हो रहे हैं॥ ६॥ गुरु जी ने कहा है, ईश्वर बिना दूसरा कोई नहीं। बताइए, दूसरा किस को देखूँ और किस की पूजा करू॥ ७॥ संतजनों हेतु ईश्वर ने तीन लोक स्थापित किए हैं। जो अपने आत्म–स्वरूप को समझता है, वह वास्तविकता को समझ लेता है॥ ८॥ जिसके हृदय में सत्य निवास करता है, ईश्वर का प्रेम उसके हृदय में ही रहता है। नानक प्रार्थना करता है – मैं भी उसका दास हूँ॥ ९॥ ८॥

गउड़ी महला १ ॥ ब्रहमै गरबु कीआ नही जानिआ ॥ बेद की बिपति पड़ी पछुतानिआ ॥ जह प्रभ सिमरे तही मनु मानिआ ॥ १ ॥ ऐसा गरबु बुरा संसारै ॥ जिसु गुरु मिलै तिसु गरबु निवारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बलि राजा माइआ अहंकारी ॥ जगन करै बहु भार अफारी ॥ बिनु गुर पूछे जाइ पइआरी ॥ २ ॥ हरीचंदु दानु करै जसु लेवै ॥ बिनु गुर अंतु न पाइ अभेवै ॥ आपि भुलाइ आपे मति देवै ॥ ३ ॥ दुरमति हरणाखसु दुराचारी ॥ प्रभु नाराइणु गरब प्रहारी ॥ प्रहलाद उधारे किरपा धारी ॥ ४ ॥ भूलो रावणु मुगधु अचेति ॥ लूटी लंका सीस समेति ॥ गरबि गइआ बिनु सतिगुर हेति ॥ ५ ॥ सहसबाहु मधु कीट महिखासा ॥ हरणाखसु ले नखहु बिधासा ॥ दैत संघारे बिनु भगति अभिआसा ॥ ६ ॥ जरासंधि कालजमुन संघारे ॥ रकतबीजु कालुनेमु बिदारे ॥ दैत संघारि संत निसतारे ॥ ७ ॥ आपे सतिगुरु सबदु बीचारे ॥ दूजै भाइ दैत संघारे ॥ गुरमुखि साचि भगति निसतारे ॥ ८ ॥ बूडा दुरजोधनु पति खोई ॥ रामु न जानिआ करता सोई ॥ जन कउ दूखि पचै दुखु होई ॥ ९ ॥ जनमेजै गुर सबदु न जानिआ ॥ किउ सुखु पावै भरमि भुलानिआ ॥ इकु तिलु भूले बहुरि पछुतानिआ ॥ १० ॥ कंसु केसु चांडूरु न कोई ॥ रामु न चीनिआ अपनी पति खोई ॥ बिनु जगदीस न राखै कोई ॥ ११ ॥ बिनु गुर गरबु न मेटिआ जाइ ॥ गुरमति धरमु धीरजु हरि नाइ ॥ नानक नामु मिलै गुण गाइ ॥ १२ ॥ ९ ॥

ब्रह्मा ने अभिमान किया (कि मैं महान हूँ, फिर कमलनाभि से कैसे पैदा हो सकता हूँ) उसने भगवान की महिमा को नहीं समझा। जब उसका घमंड तोड़ने के लिए उस पर वेदों के चुराए जाने की विपदा पड़ी तो उसने पश्चाताप किया। जब उसने ईश्वर को स्मरण किया तो उसे आस्था हुई

कि ईश्वर ही महान है॥ १॥ दुनिया में अहंकार का विकार बहुत बुरा है। जिसे गुरु जी मिल जाते हैं, वह उसका अहंकार दूर कर देते हैं॥ १॥ रहाउ॥ राजा बलि को धन–दौलत का बहुत अभिमान था। उसने बहुत सारे यज्ञ किए। अहंकारवश बड़ा घमंडी हो गया। अपने गुरु शुक्राचार्य से पूछे बिना ही उसने विष्णु अवतार भगवान वामन को दान देना स्वीकार कर लिया था। जिसके कारण उसको पाताल में जाना पड़ा॥ २॥ राजा हरिश्चन्द्र ने बहुत दान किया और बड़ा यश प्राप्त किया। लेकिन गुरु के बिना उसको ईश्वर के अन्त का पता न लगा। प्रभु स्वयं ही गुमराह करता है और स्वयं ही ज्ञान प्रदान करता है॥ ३॥ दुर्बुद्धि हिरण्यकशिपु बड़ा अत्याचारी शासक था। नारायण स्वयं ही अहंकारियों का अहंकार नाश करने वाला है। कृपा के घर नारायण ने नृसिंह अवतार धारण करके अपने भक्त प्रहलाद का उद्धार किया था॥ ४॥ मूर्ख एवं चेतना रहित रावण ने प्रभु को विस्मृत कर दिया। उसकी सोने की लंका लुट गई और उसका सिर भी कट गया। अहंकारवश गुरु की शरण लिए बिना रावण का विनाश हुआ था॥ ५॥ हजार भुजाओं वाले सहस्रबाहु का परशुराम ने वध किया, मधु तथा कैटभ का विष्णु ने वध किया, महिषासुर का माता दुर्गा के हाथों वध हुआ, हिरण्यकशिपु का नृसिंह भगवान ने नाखुनों से वध किया। ये समस्त दानव–राक्षस प्रभु की भक्ति से विहीन होने के कारण मारे गए॥ ६॥ ईश्वर ने राक्षसों का वध करके ऋषि–मुनियों की रक्षा की। जरासंध तथा कालयवन प्रभु द्वारा नष्ट किए गए। रक्तबीज (माता दुर्गा के हाथों) मारा गया तथा कालनेमि भगवान विष्णु के सुदर्शन चक्र से मारा गया॥ ७॥ ईश्वर स्वयं ही गुरु रूप होकर अपने नाम की आराधना करता है। ईश्वर ने द्वैतभाव के कारण मोह–माया में फँसे राक्षसों का विनाश कर दिया। उनकी सच्ची सेवा–भक्ति के कारण प्रभु ने गुरु के समक्ष आई पवित्र आत्माओं का कल्याण कर दिया॥ ८॥ अहंकार में डूबकर दुर्योधन ने अपनी प्रतिष्ठा गंवा दी। अहंकारवश उसने सर्वव्यापक प्रभु कर्त्तार को स्मरण न किया। जो ईश्वर के सेवक को दुख देता है, वह स्वयं पीड़ा में दुखी होता है॥ ९॥ राजा जन्मेजय ने अपने गुरु के शब्द को न समझा। भ्रम में कुमार्गगामी होकर वह सुख किस तरह पा सकता था। ईश्वर को थोड़ी देर के लिए भूलकर मनुष्य बाद में पश्चाताप करता है॥ १०॥ मथुरा का राजा कंस, केशी एवं चांडूर के तुल्य कोई नहीं था। परन्तु अहंकारवश ईश्वर को समझे बिना उन्होंने अपनी प्रतिष्ठा गंवा दी। सृष्टिकर्त्ता जगदीश के अलावा कोई भी प्राणी को बचा नहीं सकता॥ ११॥ गुरु के बिना अहंत्व मिटाया नहीं जा सकता। गुरु की शिक्षा द्वारा धर्म, धैर्य एवं परमेश्वर का नाम प्राप्त होते हैं। हे नानक! ईश्वर की महिमा गायन करने से ही नाम प्राप्त होता है॥ १२॥ ६॥

गउड़ी महला १ ॥ चोआ चंदनु अंकि चड़ावउ ॥ पाट पटंबर पहिरि हढावउ ॥ बिनु हरि नाम कहा सुखु पावउ ॥ १ ॥ किआ पहिरउ किआ ओढि दिखावउ ॥ बिनु जगदीस कहा सुखु पावउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कानी कुंडल गलि मोतीअन की माला ॥ लाल निहाली फूल गुलाला ॥ बिनु जगदीस कहा सुखु भाला ॥ २ ॥ नैन सलोनी सुंदर नारी ॥ खोड़ सीगार करै अति पिआरी ॥ बिनु जगदीस भजे नित खुआरी ॥ ३ ॥ दर घर महला सेज सुखाली ॥ अहिनिसि फूल बिछावै माली ॥ बिनु हरि नाम सु देह दुखाली ॥ ४ ॥ हैवर गैवर नेजे वाजे ॥ लसकर नेब खवासी पाजे ॥ बिनु जगदीस झूठे दिवाजे ॥ ५ ॥ सिधु कहावउ रिधि सिधि बुलावउ ॥ ताज कुलह सिरि छत्रु बनावउ ॥ बिनु जगदीस कहा सचु पावउ ॥ ६ ॥ खानु मलूकु कहावउ राजा ॥ अबे तबे कूड़े है पाजा ॥ बिनु गुर सबद न सवरसि काजा ॥ ७ ॥ हउमै ममता गुर सबदि विसारी ॥ गुरमति जानिआ रिदै मुरारी ॥ प्रणवति नानक सरणि तुमारी ॥ ८ ॥ १० ॥

यद्यपि मैं चन्दन का इत्र अपनी देहि पर लगा लूँ, अपनी देहि पर रेशम एवं रेशमी वस्त्र पहन लूँ तो भी ईश्वर के नाम बिना कहाँ सुख प्राप्त कर सकता हूँ?॥ १॥ मैं क्या पहनूँ और कौन—सी परिधान में अपने आपको प्रकट करूँ? सृष्टि के स्वामी जगदीश के बिना मैं कैसे सुख प्राप्त कर सकता हूँ॥ १॥ यदि मैं कानों में कुण्डल पहन लूँ और गले में मोतियों की माला हो। मेरे पास चाहे लाल पलंग पोश एवं पुष्प गुलाल बिखेरा हो। फिर भी जगत् के रचयिता जगदीश के सिवाय मुझे कहाँ सुख प्राप्त हो सकता है॥ २॥ मेरे पास चाहे सुन्दर नयनों वाली रूपवती नारी हो, वह सोलह प्रकार का हार—शृंगार लगाए और अपने आपको परम मनमोहिनी बना ले। फिर भी परमात्मा के भजन के बिना नित्य दुख ही मिलता है॥ ३॥ अपने घर द्वार के मन्दिर में मनुष्य के पास चाहे सुखदायक पलंग हो, उस पर माली रात—दिन फूल बिखेरता रहे किन्तु फिर भी प्रभु के नाम सिमरन बिना उसका शरीर दुखी ही होगा॥ ४॥ यदि मेरे पास कुशल घोड़े, बढ़िया हाथी, नेजे, बाजे, सेना, द्वारपाल, सरकारी कर्मचारी हों, यह सारा आडम्बर हो, फिर भी जगत् के स्वामी जगदीश के भजन बिना ये सब आडम्बर व्यर्थ हैं॥ ५॥ यदि मैं अपने आपको करामाती सिद्ध कहलवाऊँ एवं ऋद्धियों—सिद्धियों को अपने पास बुला लूँ, अपने सीस के लिए मैं चाहे राजसी मुकुट एवं शाही छत्र झुला लूँ, फिर भी जगदीश के भजन बिना मैं कहाँ सत्य प्राप्त कर सकता हूँ॥ ६॥ यदि मैं अपने आपको सरदार, शहंशाह एवं राजा बनकर कहलवाऊँ, अहंकार में सरकारी कर्मियों को डांट झिड़क भी सकूँ, परन्तु यह सब कुछ झूठा आडम्बर है। गुरु के शब्द बिना कोई भी कार्य सफल नहीं होता॥ ७॥ अहंकार एवं अहंत्व को मैंने गुरु के शब्द से भुला दिया है। गुरु की शिक्षा से मुरारी प्रभु को अपने हृदय में मैंने जान लिया है। नानक वन्दना करता है— हे प्रभु! मैं तुम्हारी ही शरण में हूँ॥ ८॥ १०॥

गउड़ी महला १ ॥ सेवा एक न जानसि अवरे ॥ परपंच बिआधि तिआगै कवरे ॥ भाइ मिलै सचु साचै सचु रे ॥ १ ॥ ऐसा राम भगतु जनु होई ॥ हरि गुण गाइ मिलै मलु धोई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऊंधो कवलु सगल संसारै ॥ दुरमति अगनि जगत परजारै ॥ सो उबरै गुर सबदु बीचारै ॥ २ ॥ भ्रिंग पतंगु कुंचरु अरु मीना ॥ मिरगु मरै सहि अपुना कीना ॥ त्रिसना राचि ततु नही बीना ॥ ३ ॥ कामु चितै कामणि हितकारी ॥ क्रोधु बिनासै सगल विकारी ॥ पति मति खोवहि नामु विसारी ॥ ४ ॥ पर घरि चीतु मनमुखि डोलाइ ॥ गलि जेवरी धंधै लपटाइ ॥ गुरमुखि छूटसि हरि गुण गाइ ॥ ५ ॥ जिउ तनु बिधवा पर कउ देई ॥ कामि दामि चितु पर वसि सेई ॥ बिनु पिर त्रिपति न कबहूं होई ॥ ६ ॥ पड़ि पड़ि पोथी सिंम्रिति पाठा ॥ बेद पुराण पड़ै सुणि थाटा ॥ बिनु रस राते मनु बहु नाटा ॥ ७ ॥ जिउ चात्रिक जल प्रेम पिआसा ॥ जिउ मीना जल माहि उलासा ॥ नानक हरि रसु पी त्रिपतासा ॥ ८ ॥ ११ ॥

हे भाई! जो व्यक्ति एक ईश्वर की सेवा—भक्ति करता है, वह ईश्वर के सिवाय किसी दूसरे को नहीं जानता। वह कड़वे सांसारिक (कामादिक) विकारों को त्याग देता है। ईश्वर के प्रेम एवं सत्य द्वारा वह सत्यस्वरूप प्रभु में मिल जाता है॥ १॥ ऐसा व्यक्ति ही राम का भक्त होता है, जो अपनी मलिनता को धो देता है और प्रभु की गुणस्तुति करके प्रभु में ही मिल जाता है॥ १॥ रहाउ॥ सारी दुनिया का हृदय कंवल विपरीत है। दुर्बुद्धि की अग्नि संसार को जला रही है। वही प्राणी बच जाता है, जो गुरु के शब्द का ध्यान करता है॥ २॥ भँवरा, परवाना, हाथी, मछली एवं मृग अपने किए कर्मों का फल प्राप्त करते हैं और फिर मर जाते हैं। तृष्णा में लीन होकर वे वास्तविकता को नहीं देखते॥ ३॥ कामिनी (नारी) का प्रेमी भोग—विलास का ध्यान करता है। क्रोध सभी विकारियों को नष्ट कर देता है। प्रभु—नाम को विस्मृत करके मनुष्य अपनी प्रतिष्ठा एवं बुद्धि गंवा देता है॥ ४॥ स्वेच्छाचारी इन्सान का मन पराई नारी की लालसा करता है। उसकी गर्दन पर मृत्यु का फँदा

होता है और वह सांसारिक विवादों में फँसा रहता है। गुरमुख की ईश्वर की गुणस्तुति करने से मुक्ति हो जाती है॥ ५॥ जिस प्रकार एक आचरणहीन नारी, जो अपना तन पराए पुरुष को अर्पित कर देती है और भोगविलास अथवा धन की खातिर जिसका मन दूसरे के वश में हो जाता है, उसे अपने पति बिना संतोष नहीं होता। द्वैत भाव वाला मनुष्य वैसा ही है॥ ६॥ प्राणी ग्रंथों का अध्ययन करता है, स्मृतियों का पाठ करता है और वेदों, पुराणों एवं दूसरी रचनाओं का अध्ययन करता उसे सुनता है। परन्तु नाम–रस के साथ अनुरक्त हुए बिना मन बहुत डोलता है॥ ७॥ जैसे चात्रिक का वर्षा की बूँदों के साथ प्रेम एवं उल्लास है, जैसे मछली जल में प्रसन्न होती है, वैसे ही नानक हरि रस का पान करके तृप्त हो गया है॥ ८॥ ११॥

गउड़ी महला १ ॥ हठु करि मरै न लेखै पावै ॥ वेस करै बहु भसम लगावै ॥ नामु बिसारि बहुरि पछुतावै ॥ १ ॥ तूं मनि हरि जीउ तूं मनि सूख ॥ नामु बिसारि सहहि जम दूख ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चोआ चंदन अगर कपूरि ॥ माइआ मगनु परम पदु दूरि ॥ नामि बिसारिऐ सभु कूड़ो कूरि ॥ २ ॥ नेजे वाजे तखति सलामु ॥ अधकी त्रिसना विआपै कामु ॥ बिनु हरि जाचे भगति न नामु ॥ ३ ॥ वादि अहंकारि नाही प्रभ मेला ॥ मनु दे पावहि नामु सुहेला ॥ दूजै भाइ अगिआनु दुहेला ॥ ४ ॥ बिनु दम के सउदा नही हाट ॥ बिनु बोहिथ सागर नही वाट ॥ बिनु गुर सेवे घाटे घाटि ॥ ५ ॥ तिस कउ वाहु वाहु जि वाट दिखावै ॥ तिस कउ वाहु वाहु जि सबदु सुणावै ॥ तिस कउ वाहु वाहु जि मेलि मिलावै ॥ ६ ॥ वाहु वाहु तिस कउ जिस का इहु जीउ ॥ गुर सबदी मथि अंम्रितु पीउ ॥ नाम वडाई तुधु भाणै दीउ ॥ ७ ॥ नाम बिना किउ जीवा माइ ॥ अनदिनु जपतु रहउ तेरी सरणाइ ॥ नानक नामि रते पति पाइ ॥ ८ ॥ १२ ॥

जो व्यक्ति हठ करके मरता है, वह स्वीकार नहीं होता, चाहे वह धार्मिक वेशभूषा पहन ले अथवा अपने शरीर पर अधिकतर विभूति लगा ले। प्रभु नाम को विस्मृत करके वह अंततः पश्चाताप करता है॥ १॥ हे भाई! तू पारब्रह्म प्रभु की आराधना कर और अपने मन में आत्मिक सुख प्राप्त कर। प्रभु के नाम को विस्मृत करके तू मृत्यु का कष्ट सहन करेगा॥ १॥ रहाउ॥ चन्दन, अगर, कपूर, इत्र इत्यादि सुगन्धियां एवं सांसारिक पदार्थों की मस्ती मनुष्य को परम पद से बहुत दूर ले जाती है। प्रभु नाम को विस्मृत करके वह तमाम झूठों का झूठा अर्थात् व्यर्थ हो जाता है॥ २॥ नेजे, बैंड बाजे, राजसिंघासन एवं दूसरों से नमस्कारें लालसा को बढ़ाते हैं और प्राणी कामवासना में लीन हो जाता है। भगवान के दर से माँगे बिना उसकी भक्ति एवं नाम प्राप्त नहीं होते॥ ३॥ वाद–विवाद एवं अहंकार के कारण प्रभु से मिलन नहीं होता। अपने मन को प्रभु के समक्ष अर्पित करने से मनुष्य सुखदायक नाम को प्राप्त कर लेता है। अज्ञानता द्वारा प्राणी दूसरे की चाहत में उलझ जाता है, जो उसे बहुत दुखी कर देती है॥ ४॥ जैसे मूल्य बिना दुकान से सौदा प्राप्त नहीं किया जा सकता। जैसे जहाज के बिना सागर की यात्रा नहीं की जा सकती। वैसे ही गुरु की सेवा बिना आत्मिक पूँजी की दृष्टि से नुक्सान ही नुक्सान होता है॥ ५॥ (हे भाई!) वह गुरु धन्य, धन्य है, जो सही जीवन मार्ग दिखाता है। वह गुरु धन्य, धन्य है, जो मुझे शब्द सुनाता है। (हे भाई!) धन्य, धन्य है उसको जो मुझे ईश्वर के मिलन में मिलाता है॥ ६॥ धन्य, धन्य है उसको जिसका यह अमूल्य जीवन है। गुरु के शब्द से नाम अमृत का जाप एवं पान कर। हे प्रभु! नाम की शोभा तेरी इच्छा द्वारा प्रदान होती है॥ ७॥ हे मेरी माता! प्रभु नाम के बिना मैं किस तरह जीवित रह सकता हूँ। हे प्रभु! रात–दिन मैं नाम–स्मरण करता हूँ और तेरी शरणागत रहता हूँ। हे नानक! प्रभु नाम में मग्न होने से मनुष्य मान–सम्मान प्राप्त कर लेता है॥ ८॥ १२॥

गउड़ी महला १ ॥ हउमै करत भेखी नही जानिआ ॥ गुरमुखि भगति विरले मनु मानिआ ॥ १ ॥ हउ हउ करत नही सचु पाईऐ ॥ हउमै जाइ परम पदु पाईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हउमै करि राजे बहु धावहि ॥ हउमै खपहि जनमि मरि आवहि ॥ २ ॥ हउमै निवरै गुर सबदु वीचारै ॥ चंचल मति तिआगै पंच संघारै ॥ ३ ॥ अंतरि साचु सहज घरि आवहि ॥ राजनु जाणि परम गति पावहि ॥ ४ ॥ सचु करणी गुरु भरमु चुकावै ॥ निरभउ कै घरि ताड़ी लावै ॥ ५ ॥ हउ हउ करि मरणा किआ पावै ॥ पूरा गुरु भेटे सो झगरु चुकावै ॥ ६ ॥ जेती है तेती किहु नाही ॥ गुरमुखि गिआन भेटि गुण गाही ॥ ७ ॥ हउमै बंधन बंधि भवावै ॥ नानक राम भगति सुखु पावै ॥ ८ ॥ १३ ॥

अहंकार में प्रवृत्त होने से मनुष्य ईश्वर को नहीं जानता, चाहे वह कोई धार्मिक वेष धारण कर ले। कोई विरला पुरुष ही है, जिसका मन गुरु के आश्रय द्वारा प्रभु की भक्ति करने से तृप्त हुआ है॥ १॥ अहंत्व (मैं, मेरी) की करनी से सत्य (ईश्वर) प्राप्त नहीं होता। जब मनुष्य का अहंकार निवृत्त हो जाता है तो उसे परम पद प्राप्त हो जाता है॥ १॥ रहाउ॥ राजा (अपनी शक्ति का) बहुत अहंकार करते हैं और इसलिए दूसरे राज्यों पर आक्रमण करते हैं। अहंकारवश वे बर्बाद हो जाते हैं और परिणामस्वरूप जन्म—मरण के चक्र में पड़कर पुनः (संसार में) उत्पन्न होते हैं॥ २॥ गुरु के शब्द का चिन्तन करने से (मनुष्य का) अहंकार निवृत्त हो जाता है। ऐसा व्यक्ति अपने चंचल मन पर अंकुश लगाता है और पाँच (कामादिक) विकारों का संहार करता है॥ ३॥ जिस व्यक्ति के हृदय में सत्य नाम विद्यमान है, वह सहज घर में पहुँच जाता है। प्रभु पातशाह को समझकर वह परमगति प्राप्त कर लेता है॥ ४॥ गुरु जी उसकी दुविधा दूर कर देते हैं, जिसके कर्म शुभ (सच्चे) हैं। वह निर्भय ईश्वर के चरणों में अपनी वृत्ति लगाता है॥ ५॥ जो (मैं, मैं) अभिमान एवं घमण्ड करता हुआ प्राण त्याग देता है, वह क्या कर्म करता है? लेकिन जो पूर्ण गुरु से मिलता है, वह अपने तमाम वाद—विवाद मिटा लेता है॥ ६॥ जो कुछ भी है, वह वास्तव में कुछ भी नहीं। गुरमुख ज्ञान प्राप्त करके ईश्वर की गुणस्तुति करते रहते हैं॥ ७॥ अहंकार मनुष्य को बंधनों में जकड़ लेता है और उसको (जन्म—मरण के चक्र) आवागमन में भटकाता है। हे नानक! राम की भक्ति करने से ही सुख उपलब्ध होता है॥ ८॥ १३॥

गउड़ी महला १ ॥ प्रथमे ब्रहमा कालै घरि आइआ ॥ ब्रहम कमलु पइआलि न पाइआ ॥ आगिआ नही लीनी भरमि भुलाइआ ॥ १ ॥ जो उपजै सो कालि संघारिआ ॥ हम हरि राखे गुर सबदु बीचारिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माइआ मोहे देवी सभि देवा ॥ कालु न छोडै बिनु गुर की सेवा ॥ ओहु अबिनासी अलख अभेवा ॥ २ ॥ सुलतान खान बादिसाह नही रहना ॥ नामहु भूलै जम का दुखु सहना ॥ मै धर नामु जिउ राखहु रहना ॥ ३ ॥ चउधरी राजे नही किसै मुकामु ॥ साह मरहि संचहि माइआ दाम ॥ मै धनु दीजै हरि अंम्रित नामु ॥ ४ ॥ रयति महर मुकदम सिकदारै ॥ निहचलु कोइ न दिसै संसारै ॥ अफरिउ कालु कूड़ु सिरि मारै ॥ ५ ॥ निहचलु एकु सचा सचु सोई ॥ जिनि करि साजी तिनहि सभ गोई ॥ ओहु गुरमुखि जापै तां पति होई ॥ ६ ॥ काजी सेख भेख फकीरा ॥ वडे कहावहि हउमै तनि पीरा ॥ कालु न छोडै बिनु सतिगुर की धीरा ॥ ७ ॥ कालु जालु जिहवा अरु नैणी ॥ कानी कालु सुणै बिखु बैणी ॥ बिनु सबदै मूठे दिनु रैणी ॥ ८ ॥ हिरदै साचु वसै हरि नाइ ॥ कालु न जोहि सकै गुण गाइ ॥ नानक गुरमुखि सबदि समाइ ॥ ९ ॥ १४ ॥

सर्वप्रथम ब्रह्मा ही (इस संसार में) काल (मृत्यु) के वश में आया। ब्रह्मा (जिस नाभिकमल से उत्पन्न हुआ था उसका रहस्य जानने के लिए) दुविधा में पड़कर कमल में प्रवेश कर गया और पाताल

की खोज करके भी उसको कमल (ईश्वर) के अन्त का पता न चला। उसने प्रभु की आज्ञा को स्वीकार न किया और कुमार्गगामी होकर भटकता रहा॥ १॥ इस दुनिया में जिस व्यक्ति ने भी जन्म लिया है, काल (मृत्यु) ने उसका नाश कर दिया है। ईश्वर ने मेरी रक्षा की है, क्योंकि मैंने गुरु के शब्द का चिंतन किया है॥ १॥ रहाउ॥ माया ने समस्त देवी-देवताओं को मुग्ध किया हुआ है। गुरु की सेवा-भक्ति के बिना मृत्यु किसी को भी नहीं छोड़ती। केवल ईश्वर ही अमर, अदृश्य एवं अभेद है॥ २॥ (इस संसार में) महाराजा, सरदार एवं बादशाह कदापि नहीं रहेंगे (क्योंकि काल अटल है)। प्रभु के नाम को विस्मृत करके वह काल (मृत्यु) का दुःख सहन करेंगे। हे प्रभु! मेरा सहारा (केवल) नाम है, जैसे तुम मुझे (सुख-दुख में) रखते हो, मैं वैसे ही रहता हूँ॥ ३॥ चाहे चौधरी हो अथवा राजा हो किसी का भी इस संसार में स्थाई निवास नहीं। साहूकार धन-दौलत संग्रह करके प्राण त्याग देते हैं। हे प्रभु! मुझे अपने अमृतमयी नाम का धन प्रदान कीजिए॥ ४॥ प्रजा, सामन्त, प्रधान एवं चौधरी कोई भी नश्वर संसार में स्थिर दिखाई नहीं देता। अनिवार्य मृत्यु मोह-माया में लिप्त झूठे प्राणियों के सिर पर प्रहार करती है॥ ५॥ केवल परम सत्य प्रभु ही सदा स्थिर रहने वाला है, जिसने इस सृष्टि की रचना की है, वही तमाम जीव-जन्तुओं सहित सृष्टि का विनाश करता है। जब गुरु के आश्रय में आकर मनुष्य प्रभु को जान लेता है तो ही उसे शोभा प्राप्त होती है॥ ६॥ काजी, शेख एवं धार्मिक परिधान में फकीर अपने आपको महान कहलवाते हैं, किन्तु अहंकारवश उनके शरीर में पीड़ा विद्यमान है। सतिगुरु के आश्रय बिना काल (मृत्यु) उन्हें नहीं छोड़ता॥ ७॥ मृत्यु का फँदा मनुष्य की जिह्वा व नेत्रों पर है। मृत्यु उसके कानों पर विद्यमान है जब वह विषैली बातचीत श्रवण करता है। प्रभु नाम के बिना मनुष्य दिन-रात (आत्मिक गुणों से) लुटता जा रहा है॥ ८॥ जिस प्राणी के हृदय में प्रभु का नाम निवास करता है और जो प्रभु का यशोगान करता है, मृत्यु उसे कदापि दिखाई नहीं देती। हे नानक! गुरमुख शब्द में ही समा जाता है॥ ६॥ १४॥

गउड़ी महला १ ॥ बोलहि साचु मिथिआ नही राई ॥ चालहि गुरमुखि हुकमि रजाई ॥ रहहि अतीत सचे सरणाई ॥ १ ॥ सच घरि बैसै कालु न जोहै ॥ मनमुख कउ आवत जावत दुखु मोहै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपिउ पीअउ अकथु कथि रहीऐ ॥ निज घरि बैसि सहज घरु लहीऐ ॥ हरि रसि माते इहु सुखु कहीऐ ॥ २ ॥ गुरमति चाल निहचल नही डोलै ॥ गुरमति साचि सहजि हरि बोलै ॥ पीवै अंम्रितु ततु विरोलै ॥ ३ ॥ सतिगुरु देखिआ दीखिआ लीनी ॥ मनु तनु अरपिओ अंतरगति कीनी ॥ गति मिति पाई आतमु चीनी ॥ ४ ॥ भोजनु नामु निरंजन सारु ॥ परम हंसु सचु जोति अपार ॥ जह देखउ तह एकंकारु ॥ ५ ॥ रहै निरालमु एका सचु करणी ॥ परम पदु पाइआ सेवा गुर चरणी ॥ मन ते मनु मानिआ चूकी अहं भ्रमणी ॥ ६ ॥ इन बिधि कउणु कउणु नही तारिआ ॥ हरि जसि संत भगत निसतारिआ ॥ प्रभ पाए हम अवरु न भारिआ ॥ ७ ॥ साच महलि गुरि अलखु लखाइआ ॥ निहचल महलु नही छाइआ माइआ ॥ साचि संतोखे भरमु चुकाइआ ॥ ८ ॥ जिन कै मनि वसिआ सचु सोई ॥ तिन की संगति गुरमुखि होई ॥ नानक साचि नामि मलु खोई ॥ ६ ॥ १५ ॥

जो व्यक्ति गुरु के सान्निध्य में रहकर परमात्मा के हुक्म अनुसार चलता है। वह सदैव सत्य ही बोलता है और उसमें तनिक मात्र भी झूठ विद्यमान नहीं होता। ऐसा व्यक्ति सत्य (परमेश्वर) की शरण में ही निर्लिप्त रहता है॥ १॥ वह सत्य के गृह में वास करता है और मृत्यु उसे स्पर्श नहीं करती। लेकिन स्वेच्छाचारी व्यक्ति जगत् में जन्मता-मरता रहता है और सांसारिक मोह की पीड़ा सहन करता रहता है॥ १॥ रहाउ॥ नाम अमृत का पान करके तथा अनन्त ईश्वर की महिमा-स्तुति करके ही आत्म-स्वरूप में स्थिर रहा जा सकता है। उस आत्मस्वरूप में बैठकर प्रसन्नता का गृह प्राप्त किया

जा सकता है, यह प्रसन्नता उसको प्राप्त हुई कही जाती है, जो प्रभु के अमृत से अनुरक्त है॥ ३॥ गुरु की शिक्षा अनुसार जीवन–आचरण करने से स्थिर हुआ जा सकता है और कदापि डांवाडोल नहीं होना पड़ता। गुरु की शिक्षा से वह सहज ही प्रभु के सत्य नाम का उच्चारण करता है। वह अमृत पान करता है और वास्तविकता को खोजकर अलग निकाल लेता है। सतिगुरु के दर्शन करके मैंने उनसे दीक्षा प्राप्त की है। मैंने अपना मन एवं तन गुरु को अर्पित करके अपने अंतः करण की खोज कर ली है। अपने आपको समझने से मैंने मुक्ति का मूल्य अनुभव कर लिया है॥ ४॥ जो व्यक्ति निरंजन प्रभु के नाम को अपना भोजन बना लेता है, वह परमहंस बन जाता है और उसके अन्तर्मन में सत्यस्वरूप परमात्मा की ज्योति प्रज्वलित हो जाती है। वह जहाँ कहीं भी देखता है वहाँ वह एक ईश्वर को पाता है॥ ५॥ ऐसा व्यक्ति (मोह–माया से) निर्लिप्त रहता है और केवल शुभ कर्म करता है, वह परम पद प्राप्त कर लेता है और गुरु के चरणों की सेवा करता है। मन से ही उसके मन की संतुष्टि हो जाती है और उसका अहंकार में भटकना मिट जाता है॥ ६॥ इस विधि से किस–किस को प्रभु ने (संसार सागर से) पार नहीं किया। प्रभु के यश ने उसके संतों एवं भक्तों का कल्याण कर दिया है। एक ईश्वर को मैंने पा लिया है और अब मैं किसी दूसरे को नहीं ढूँढता॥ ७॥ गुरु जी ने मुझे अदृश्य प्रभु के सत्य मन्दिर में दर्शन करवा दिए हैं। प्रभु का यह मन्दिर अटल है। यह मोहिनी का प्रतिबिम्ब नहीं। सच्चाई द्वारा संतोष आ जाता है और दुविधा दूर हो जाती है॥ ८॥ जिसके हृदय में सत्यस्वरूप परमात्मा निवास करता है, उनकी संगति में प्राणी धर्मात्मा बन जाता है। हे नानक ! सत्य नाम (विकारों की) मलिनता स्वच्छ कर देता है॥ ६॥ १५॥

गउड़ी महला १ ॥ रामि नामि चितु रापै जा का ॥ उपजंपि दरसनु कीजै ता का ॥ १ ॥ राम न जपहु अभागु तुमारा ॥ जुगि जुगि दाता प्रभु रामु हमारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमति रामु जपै जनु पूरा ॥ तितु घट अनहत बाजे तूरा ॥ २ ॥ जो जन राम भगति हरि पिआरि ॥ से प्रभि राखे किरपा धारि ॥ ३ ॥ जिन कै हिरदै हरि हरि सोई ॥ तिन का दरसु परसि सुखु होई ॥ ४ ॥ सरब जीआ महि एको रवै ॥ मनमुखि अहंकारी फिरि जूनी भवै ॥ ५ ॥ सो बूझै जो सतिगुरु पाए ॥ हउमै मारे गुर सबदे पाए ॥ ६ ॥ अरध उरध की संधि किउ जानै ॥ गुरमुखि संधि मिलै मनु मानै ॥ ७ ॥ हम पापी निरगुण कउ गुणु करीऐ ॥ प्रभ होइ दइआलु नानक जन तरीऐ ॥ ८ ॥ १६ ॥ सोलह असटपदीआ गुआरेरी गउड़ी कीआ ॥

जिस व्यक्ति का हृदय राम के नाम में मग्न रहता है, उसके दर्शन प्रातःकाल उठते ही करने चाहिए॥ १॥ हे भाई ! यदि तुम राम का भजन–सिमरन नहीं करते तो यह तुम्हारा दुर्भाग्य है। युग–युगों से हमारा प्रभु राम हमें नियामतें देता आ रहा है॥ १॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति गुरु की मति द्वारा राम का नाम जपता रहता है, वही व्यक्ति पूर्ण बन जाता है। ऐसे पूर्ण व्यक्ति के हृदय में अनहद मधुर बाजे बजते रहते हैं॥ २॥ जो व्यक्ति राम एवं राम की भक्ति से प्रेम करते हैं, उनको ईश्वर कृपा करके भवसागर से बचा लेता है॥ ३॥ जिन लोगों के हृदय में हरि–परमेश्वर वास करता है, उनके दर्शन करने से आत्मिक सुख प्राप्त होता है॥ ४॥ समस्त जीवों के अन्तर में एक ईश्वर मौजूद है। अहंकारी पुरुष अंततः योनियों में भटकता रहता है॥ ५॥ जिसे सतिगुरु मिल जाता है, उसे ज्ञान हो जाता है। ऐसा प्राणी अपना अहंत्व निवृत्त करके गुरु के शब्द में लीन होकर ईश्वर को प्राप्त कर लेता है॥ ६॥ आत्मा के परमात्मा से मिलन बारे इन्सान किस तरह जान सकता है। गुरु की संगति एवं मन के संतोष द्वारा जीवात्मा प्रभु के मिलन में मिल जाता है॥ ७॥ हे प्रभु ! हम जीव गुणविहीन एवं पापी हैं, और हमें कृपा करके गुणवान बना दो। हे नानक ! जब प्रभु दया के घर में आ जाता है तो जीव भवसागर से पार हो जाता है॥ ८॥ १६॥ यह सोलह अष्टपदियां (राग) गउड़ी गुआरेरी की हैं।

गउड़ी बैरागणि महला १ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

जिउ गाई कउ गोइली राखहि करि सारा ॥ अहिनिसि पालहि राखि लेहि आतम सुखु धारा ॥ १ ॥ इत उत राखहु दीन दइआला ॥ तउ सरणागति नदरि निहाला ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जह देखउ तह रवि रहे रखु राखनहारा ॥ तूं दाता भुगता तूंहै तूं प्राण अधारा ॥ २ ॥ किरतु पइआ अध ऊरधी बिनु गिआन बीचारा ॥ बिनु उपमा जगदीस की बिनसै न अंधिआरा ॥ ३ ॥ जगु बिनसत हम देखिआ लोभे अहंकारा ॥ गुर सेवा प्रभु पाइआ सचु मुकति दुआरा ॥ ४ ॥ निज घरि महलु अपार को अपरंपरु सोई ॥ बिनु सबदै थिरु को नही बूझै सुखु होई ॥ ५ ॥ किआ लै आइआ ले जाइ किआ फासहि जम जाला ॥ डोलु बधा कसि जेवरी आकासि पताला ॥ ६ ॥ गुरमति नामु न वीसरै सहजे पति पाईऐ ॥ अंतरि सबदु निधानु है मिलि आपु गवाईऐ ॥ ७ ॥ नदरि करे प्रभु आपणी गुण अंकि समावै ॥ नानक मेलु न चूकई लाहा सचु पावै ॥ ८ ॥ १ ॥ १७ ॥

जैसे एक ग्वाला अपनी गायों की देखभाल करता है, वैसे ही प्रभु प्राणियों का दिन–रात पोषण एवं रक्षा करता है और उनके हृदय में आत्मिक सुख स्थापित करता है॥ १॥ हे दीनदयालु ईश्वर ! इहलोक एवं परलोक में मेरी रक्षा कीजिए। हे प्रभु ! मैं तेरी शरण में आया हूँ। इसलिए मुझ पर कृपा–दृष्टि कीजिए॥ १॥ रहाउ॥ हे रक्षक प्रभु ! जहाँ कहीं भी मैं देखता हूँ, वहाँ तुम सर्वव्यापक हो। मेरी रक्षा कीजिए। हे ईश्वर ! तू देन देने वाला दाता है, तू ही भोगनेवाला है और तू ही मेरे प्राणों का आधार है॥ २॥ ज्ञान को सोचने विचारने के बिना प्राणी अपने कर्मों अनुसार नीचे गिरता अथवा उच्च हो जाता है। सृष्टि के स्वामी जगदीश की उपमा के बिना (मोह–माया का) अंधकार दूर नहीं होता॥ ३॥ लालच एवं अभिमान में फँसकर मैंने जगत् का विनाश होते देखा है। गुरु की सेवा द्वारा परमेश्वर एवं मोक्ष का सच्चा द्वार प्राप्त होता है॥ ४॥ अनन्त परमेश्वर का आत्मस्वरूप प्राणी के अपने हृदय गृह में विद्यमान है और वह परमेश्वर अपरम्पार है। प्रभु नाम के बिना कुछ भी स्थिर नहीं। ईश्वर के बोध द्वारा आत्मिक सुख प्राप्त होता है॥ ५॥ हे भाई ! इस जगत् में तुम क्या लेकर आए थे और जब तुझे मृत्यु का फँदा फँसा लगा तो क्या लेकर जाओगे ? रस्सी के साथ बंधे हुए कुएँ के डोल की भाँति कभी तुम आकाश में होते हो और कभी पाताल में होते हो॥ ६॥ यदि गुरु के उपदेश से प्राणी प्रभु नाम को विस्मृत न करे तो वह सहज ही शोभा पा लेता है। मनुष्य के अन्तर्मन में ही प्रभु नाम का खजाना है, परन्तु यह (खजाना) अपने अहंकार को दूर करने से ही मिलता है॥ ७॥ यदि ईश्वर अपनी कृपा–दृष्टि करे तो प्राणी गुणवान बनकर परमात्मा की गोद में जाकर लीन होता है। हे नानक ! यह मिलन टूटता नहीं और सच्चा लाभ प्राप्त कर लेता है॥ ८॥ १॥ १७॥

गउड़ी महला १ ॥ गुर परसादी बूझि ले तउ होइ निबेरा ॥ घरि घरि नामु निरंजना सो ठाकुरु मेरा ॥ १ ॥ बिनु गुर सबद न छूटीऐ देखहु वीचारा ॥ जे लख करम कमावही बिनु गुर अंधिआरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंधे अकली बाहरे किआ तिन सिउ कहीऐ ॥ बिनु गुर पंथु न सूझई कितु बिधि निरबहीऐ ॥ २ ॥ खोटे कउ खरा कहै खरे सार न जाणै ॥ अंधे का नाउ पारखू कली काल विडाणै ॥ ३ ॥ सूते कउ जागतु कहै जागत कउ सूता ॥ जीवत कउ मूआ कहै मूए नही रोता ॥ ४ ॥ आवत कउ जाता कहै जाते कउ आइआ ॥ पर की कउ अपुनी कहै अपुनो नही भाइआ ॥ ५ ॥ मीठे कउ कउड़ा कहै कड़ूए कउ मीठा ॥ राते की निंदा करहि ऐसा कलि महि डीठा ॥ ६ ॥ चेरी की सेवा करहि ठाकुरु नही दीसै ॥ पोखरु नीरु विरोलीऐ माखनु नही रीसै ॥ ७ ॥ इसु पद जो अरथाइ लेइ सो गुरू

हमारा ॥ नानक चीनै आप कउ सो अपर अपारा ॥ ८ ॥ सभु आपे आपि वरतदा आपे भरमाइआ ॥ गुर किरपा ते बूझीऐ सभु ब्रहमु समाइआ ॥ ६ ॥ २ ॥ १८ ॥

हे जिज्ञासु ! यदि गुरु की कृपा से प्राणी ईश्वर की महिमा को समझ ले तो उसे आवागमन से मुक्ति प्राप्त हो जाती है। हे प्राणी ! जिसका नाम निरंजन (पवित्र) है और उसका नाम प्रत्येक हृदय में समा रहा है, वही मेरा ठाकुर है॥ १॥ गुरु के शब्द बिना मनुष्य की मुक्ति नहीं होती। इस बात का विचार करके देख ले। मनुष्य चाहे लाखों धर्म–कर्म कर ले परन्तु गुरु के ज्ञान बिना अन्धेरा ही अन्धेरा है॥ १॥ रहाउ॥ हम उन्हें क्या कह सकते हैं जो ज्ञान से अंधे एवं बुद्धि से विहीन हैं ? गुरु के बिना सत्य मार्ग दिखाई नहीं देता, तब मनुष्य का किस तरह निर्वाह चले ?॥ २॥ नकली को मनुष्य असली कहता है और असली का वह मूल्य ही नहीं पहचानता। यह कलियुग का समय आश्चर्यजनक है कि ज्ञानहीन मनुष्य को अक्लमंद कहा जा रहा है॥ ३॥ बड़ी अद्भुत बात है कि दुनिया अज्ञानता की निद्रा में सोए हुए इन्सान को जागता कह रही है और जो इन्सान भगवान की भक्ति में जाग्रत रहता है उसे दुनिया सोया हुआ कह रही है। जो व्यक्ति भगवान की भक्ति में मग्न रहता है, उसे दुनिया मृत कहती है और लेकिन वास्तव में मृतकों के लिए विलाप नहीं करता॥ ४॥ जो आ रहा है, वह कहता है जा रहा है और जो गया हुआ है उसको आया कहता है। मनुष्य पराए को अपना कहता है और अपने को पसंद नहीं करता॥ ५॥ जो मीठा है, उसको वह कड़वा कहता है और कड़वे को वह मीठा बताता है। भगवान की भक्ति में मग्न हुए भक्त की दुनिया निन्दा करती है। दुनिया में ऐसा तमाशा मैंने कलियुग में देखा है॥ ६॥ मनुष्य दासी (माया) की सेवा करता है परन्तु ठाकुर को वह देखता ही नहीं। तालाब का जल मथने से मक्खन नहीं निकलता॥ ७॥ जो इस परम अवस्था के अर्थ को समझता है, वह मेरा गुरु है। हे नानक ! जो अपने आत्म–स्वरूप को समझता है, वह अनन्त एवं अपार है॥ ८॥ परमेश्वर स्वयं ही सर्वव्यापक हो रहा है और स्वयं ही प्राणियों को कुमार्गगामी करता है। गुरु की कृपा से मनुष्य यह समझता है कि ईश्वर सर्वव्यापक है॥ ६॥ २॥ १८॥

रागु गउड़ी गुआरेरी महला ३ असटपदीआ १ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

मन का सूतकु दूजा भाउ ॥ भरमे भूले आवउ जाउ ॥ १ ॥ मनमुखि सूतकु कबहि न जाइ ॥ जिचरु सबदि न भीजै हरि कै नाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभो सूतकु जेता मोहु आकारु ॥ मरि मरि जंमै वारो वार ॥ २ ॥ सूतकि अगनि पउणै पाणी माहि ॥ सूतकु भोजनु जेता किछु खाहि ॥ ३ ॥ सूतकि करम न पूजा होइ ॥ नामि रते मनु निरमलु होइ ॥ ४ ॥ सतिगुरु सेविऐ सूतकु जाइ ॥ मरै न जनमै कालु न खाइ ॥ ५ ॥ सासत सिंम्रिति सोधि देखहु कोइ ॥ विणु नावै को मुकति न होइ ॥ ६ ॥ जुग चारे नामु उतमु सबदु बीचारि ॥ कलि महि गुरमुखि उतरसि पारि ॥ ७ ॥ साचा मरै न आवै जाइ ॥ नानक गुरमुखि रहै समाइ ॥ ८ ॥ १ ॥

ईश्वर को विस्मृत करके माया से मोह ही मन का सूतक (अपवित्रता) है। दुविधा के कारण मोह–माया में ग्रस्त हुआ मनुष्य आवागमन के चक्र में पड़कर संसार में जन्मता–मरता रहता है॥ १॥ स्वेच्छाचारी जीव के मन का सूतक (अपवित्रता) तब तक निवृत्त नहीं होता, जब तक वह गुरु के उपदेश अनुसार ईश्वर के नाम में तल्लीन नहीं होता॥ १॥ रहाउ॥ इस संसार का मोह जो कुछ भी दृष्टिमान है, यह तमाम सूतक का मूल है। परिणामस्वरूप प्राणी पुनः पुनः मर मर कर जन्म लेता है॥ २॥ सूतक अग्नि, पवन एवं जल में विद्यमान है। तमाम भोजन जो हम सेवन करते हैं, उसमें भी सूतक

विद्यमान है॥ ३॥ मनुष्य के कर्मों में भी सूतक विद्यमान है, क्योंकि वह प्रभु की पूजा–अर्चना नहीं करता। प्रभु के नाम में मग्न हो जाने से मन पवित्र हो जाता है॥ ४॥ सतिगुरु की सेवा करने से सूतक दूर हो जाता है। गुरु की शरण में आने से न मनुष्य मरता है, न ही पुनः संसार में जन्म लेता है। न ही मृत्यु उसे निगलती है॥ ५॥ (बेशक) कोई व्यक्ति शास्त्रों एवं स्मृतियों का अध्ययन करके देख ले। ईश्वर नाम के सिवाय कोई भी मुक्त नहीं होता॥ ६॥ चारों युगों (सतियुग, त्रैता, द्वापर एवं कलियुग) में नाम एवं शब्द का चिन्तन सर्वश्रेष्ठ पदार्थ है। लेकिन कलियुग में केवल गुरमुख का ही उद्धार होता है॥ ७॥ सत्यस्वरूप परमेश्वर अनश्वर है और आवागमन के चक्र में नहीं पड़ता। हे नानक! गुरमुख सत्य में ही समाया रहता है॥ ८॥ १॥

गउड़ी महला ३ ॥ गुरमुखि सेवा प्रान अधारा ॥ हरि जीउ राखहु हिरदै उर धारा ॥ गुरमुखि सोभा साचु दुआरा ॥ १ ॥ पंडित हरि पड़ु तजहु विकारा ॥ गुरमुखि भउजलु उतरहु पारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि विचहु हउमै जाइ ॥ गुरमुखि मैलु न लागै आइ ॥ गुरमुखि नामु वसै मनि आइ ॥ २ ॥ गुरमुखि करम धरम सचि होई ॥ गुरमुखि अहंकारु जलाए दोई ॥ गुरमुखि नामि रते सुखु होई ॥ ३ ॥ आपणा मनु परबोधहु बूझहु सोई ॥ लोक समझावहु सुणे न कोई ॥ गुरमुखि समझहु सदा सुखु होई ॥ ४ ॥ मनमुखि डंफु बहुतु चतुराई ॥ जो किछु कमावै सु थाइ न पाई ॥ आवै जावै ठउर न काई ॥ ५ ॥ मनमुख करम करे बहुतु अभिमाना ॥ बग जिउ लाइ बहै नित धिआना ॥ जमि पकड़िआ तब ही पछुताना ॥ ६ ॥ बिनु सतिगुर सेवे मुकति न होई ॥ गुर परसादी मिलै हरि सोई ॥ गुरु दाता जुग चारे होई ॥ ७ ॥ गुरमुखि जाति पति नामे वडिआई ॥ साइर की पुत्री बिदारि गवाई ॥ नानक बिनु नावै झूठी चतुराई ॥ ८ ॥ २ ॥

भगवान की भक्ति ही गुरमुख के प्राणों का आधार है। अतः पूज्य परमेश्वर को ही अपने हृदय एवं अन्तर्मन में बसाकर रखो। गुरमुख को सत्य के दरबार में बड़ी शोभा प्राप्त होती है॥ १॥ हे पण्डित! भगवान की महिमा का चिन्तन कर और विकारों को त्याग दे। गुरमुख भयानक संसार सागर से पार हो जाता है॥ १॥ रहाउ॥ गुरमुख के मन को विकारों की मैल नहीं लगती। गुरमुख के मन में भगवान का नाम आकर बस जाता है॥ २॥ गुरमुख का प्रत्येक कर्म–धर्म सत्य ही होता है। गुरमुख अहंकार एवं द्वेष को जला देता है। गुरमुख भगवान के नाम में मग्न रहकर ही सुखी होता है॥ ३॥ अपने मन को जागृत कर और परमेश्वर का बोध कर। अन्यथा जितना भी चाहे तू लोगों को उपदेश देता रह, कोई भी तेरी बात नहीं सुनेगा। गुरु के माध्यम से जीवन–मार्ग को समझो जिससे तुझे सदैव सुख प्राप्त होगा॥ ४॥ स्वेच्छाचारी जीव बड़ा पाखंडी और चतुर होता है। जो कुछ भी कर्म वह करता है, वह (प्रभु के दरबार में) स्वीकार नहीं होता। वह जीवन–मृत्यु के बन्धन में पड़कर संसार में जन्मता–मरता रहता है और उसे सुख का कोई भी स्थान नहीं मिलता॥ ५॥ स्वेच्छाचारी अपना प्रत्येक कर्म बड़े अहंकार में करता है। बगले की भाँति वह सदैव ही ध्यान लगाकर बैठता है। जब यमदूत उसे पकड़ता है तो वह बड़ा पश्चाताप करता है॥ ६॥ इसलिए (संसार में) सतिगुरु की सेवा बिना मुक्ति नहीं मिलती। गुरु की दया से वह प्रभु को मिल जाता है। चारों ही युगों (सतियुग, त्रैता, द्वापर, कलियुग) में गुरु नाम देने वाले दाता हैं॥ ७॥ ईश्वर का नाम गुरमुख की जाति, सम्मान एवं शोभा है। समुद्र की कन्या माया को उन्होंने पीट–पीट कर मार दिया है। हे नानक! नाम के बिना समस्त चतुराई झूठी है॥ ८॥ २॥

गउड़ी मः ३ ॥ इसु जुग का धरमु पड़हु तुम भाई ॥ पूरै गुरि सभ सोझी पाई ॥ ऐथै अगै हरि नामु सखाई ॥ १ ॥ राम पड़हु मनि करहु बीचारु ॥ गुर परसादी मैलु उतारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वादि विरोधि न पाइआ जाइ ॥ मनु तनु फीका दूजै भाइ ॥ गुर कै सबदि सचि लिव लाइ ॥ २ ॥ हउमै मैला इहु संसारा ॥ नित तीरथि नावै न जाइ अहंकारा ॥ बिनु गुर भेटे जमु करे खुआरा ॥ ३ ॥ सो जनु साचा जि हउमै मारै ॥ गुर कै सबदि पंच संघारै ॥ आपि तरै सगले कुल तारै ॥ ४ ॥ माइआ मोहि नटि बाजी पाई ॥ मनमुख अंध रहे लपटाई ॥ गुरमुखि अलिपत रहे लिव लाई ॥ ५ ॥ बहुते भेख करै भेखधारी ॥ अंतरि तिसना फिरै अहंकारी ॥ आपु न चीनै बाजी हारी ॥ ६ ॥ कापड़ पहिरि करे चतुराई ॥ माइआ मोहि अति भरमि भुलाई ॥ बिनु गुर सेवे बहुतु दुखु पाई ॥ ७ ॥ नामि रते सदा बैरागी ॥ ग्रिही अंतरि साचि लिव लागी ॥ नानक सतिगुरु सेवहि से वडभागी ॥ ८ ॥ ३ ॥

हे भाई ! आप लोग इस युग के धर्म (परमेश्वर नाम) का चिन्तन करो। क्योंकि पूर्ण गुरु ने मुझे सारी सूझ बता दी है। इस लोक एवं परलोक में ईश्वर का नाम ही प्राणी का सहारा है॥ १॥ (हे भाई !) राम के नाम का भजन करो और अपने हृदय में उसके गुणों का विचार करो। गुरु की कृपा से अपनी विकारों की मैल को साफ कर लो॥ १॥ रहाउ॥ वाद–विवाद एवं विरोध से प्रभु प्राप्त नहीं होता। मोह–माया की लगन से मन–तन फीके हो जाते हैं। इसलिए गुरु के शब्द द्वारा सत्य परमेश्वर में वृत्ति लगा॥ २॥ अहंकार के कारण सारा जगत् मैला हो गया है। प्रतिदिन तीर्थों का स्नान करने से अहंकार दूर नहीं होता। गुरु के मिलन बिना काल (मृत्यु) मनुष्य को बड़ा तंग करता है॥ ३॥ वही मनुष्य सत्यवादी है जो अपने अहंकार को मिटा देता है और गुरु के शब्द द्वारा पाँच विकारों का संहार कर देता है। ऐसा मनुष्य स्वयं भी बच जाता है और अपने समूचे वंश का भी उद्धार कर लेता है॥ ४॥ कलाकार (प्रभु) ने माया का मोह प्राणियों हेतु एक खेल रचा है। ज्ञानहीन स्वेच्छाचारी जीव मोह–माया से लिपटे रहते हैं। लेकिन गुरमुख इससे निर्लिप्त रहकर ईश्वर से वृत्ति लगाते हैं॥ ५॥ कपटी इन्सान अनेकों वेष धारण करता है। उसके भीतर तृष्णा विद्यमान है और वह अभिमानी होकर विचरता है। कपटी इन्सान अपने आपको समझता नहीं और जीवन की बाजी हार जाता है॥ ६॥ धार्मिक वेष धारण करके कई लोग चतुरता करते हैं। माया के मोह एवं दुविधा ने उनको बहुत कुमार्गगामी किया हुआ है। गुरु की सेवा–भक्ति के बिना वह बहुत कष्ट सहन करते हैं॥ ७॥ जो व्यक्ति ईश्वर के नाम में मग्न रहते हैं, वे सदैव ही (मोह माया से) निर्लिप्त रहते हैं। चाहे वे गृहस्थी हैं, वह अपने हृदय में सत्य के साथ वृत्ति लगाते हैं। हे नानक ! वे व्यक्ति बड़े भाग्यशाली हैं, जो सतिगुरु की सेवा करते हैं॥ ८॥ ३॥

गउड़ी महला ३ ॥ ब्रहमा मूलु वेद अभिआसा ॥ तिस ते उपजे देव मोह पिआसा ॥ त्रै गुण भरमे नाही निज घरि वासा ॥ १ ॥ हम हरि राखे सतिगुरू मिलाइआ ॥ अनदिनु भगति हरि नामु द्रिड़ाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रै गुण बाणी ब्रहम जंजाला ॥ पड़ि वादु वखाणहि सिरि मारे जमकाला ॥ ततु न चीनहि बंनहि पंड पराला ॥ २ ॥ मनमुख अगिआनि कुमारगि पाए ॥ हरि नामु बिसारिआ बहु करम द्रिड़ाए ॥ भवजलि डूबे दूजै भाए ॥ ३ ॥ माइआ का मुहताजु पंडितु कहावै ॥ बिखिआ राता बहुतु दुखु पावै ॥ जम का गलि जेवड़ा नित कालु संतावै ॥ ४ ॥ गुरमुखि जमकालु नेड़ि न आवै ॥ हउमै दूजा सबदि जलावै ॥ नामे राते हरि गुण गावै ॥ ५ ॥ माइआ दासी भगता की कार कमावै ॥ चरणी लागै ता महलु पावै ॥ सद ही निरमलु सहजि समावै ॥ ६ ॥ हरि कथा सुणहि से धनवंत दिसहि जुग माही ॥ तिन कउ सभि निवहि अनदिनु पूज कराही ॥ सहजे गुण रवहि साचे मन माही ॥७॥ पूरै सतिगुरि सबदु सुणाइआ ॥ त्रै गुण मेटे चउथै चितु लाइआ ॥ नानक हउमै मारि ब्रहम मिलाइआ ॥ ८ ॥ ४ ॥

ब्रह्मा वेदों के अध्ययन का रचयिता है। सांसारिक मोह एवं तृष्णा में फँसे हुए देवते उसी से उत्पन्न हुए है। वे तीन गुणों में भटकते रहे और उन्हें ईश्वर के चरणों में स्थान न मिला॥ १॥ हमें ईश्वर ने (मोह–माया से) बचा लिया है और सतिगुरु जी से मिला दिया है। रात–दिन भगवान की भक्ति एवं ईश्वर का नाम गुरु जी ने सुदृढ़ कर दिया है॥ १॥ रहाउ॥ ब्रह्मा की रचित वाणी लोगों को (माया के) तीन गुणों के जंजाल में फँसा देती है। उसका अध्ययन करके पण्डित वाद–विवाद करते हैं और यमदूत उनके सिर पर प्रहार करता है। वह वास्तविकता को नहीं समझते और घास–फूस की गठरी सिर पर बांधते हैं॥ २॥ अज्ञानी स्वेच्छाचारी जीव कुमार्ग ही पड़ा रहता है। वह ईश्वर के नाम को विस्मृत कर देता है और (मोह–माया के) अनेकों कर्म दृढ़ करता है। ऐसे स्वेच्छाचारी द्वैतवाद के कारण भयानक संसार सागर में डूब जाते हैं॥ ३॥ धन–दौलत का अभिलाषी अपने आपको पण्डित कहलवाता है। पापों में अनुरक्त हुआ वे बड़े कष्ट सहन करता है। यमदूत की रस्सी उसकी गर्दन के निकट है और मृत्यु हमेशा ही उसको पीड़ित करती है॥ ४॥ लेकिन गुरमुख के निकट यमदूत नहीं आता। ईश्वर का नाम उनके अहंकार एवं द्वैतवाद को जला देता है। गुरमुख नाम में मग्न होकर प्रभु की महिमा करता रहता है॥ ५॥ माया प्रभु के भक्तों की सेविका है और उनकी भरपूर सेवा करती है। यदि मनुष्य भक्तों के चरण–स्पर्श करता है तो उसे प्रभु का स्वरुप मिल जाता है। ऐसा व्यक्ति सदैव ही पवित्र है और सहज ही सत्य में समा जाता है॥ ६॥ जो व्यक्ति हरि कथा सुनता है, वह इस संसार में धनवान दिखाई देता है। सभी उसको प्रणाम करते हैं और लोग दिन–रात उसकी पूजा–अर्चना करते हैं। वह अपने हृदय में सहज ही सत्य परमेश्वर का यश गायन करते हैं॥ ७॥ पूर्ण सतिगुरु जी ने अपना उपदेश सुनाया है, जिससे (माया के) तीन गुणों का प्रभाव लुप्त हो गया है और मनुष्य का मन आत्मिक अवस्था से जुड़ गया है। हे नानक! अपना अहंकार निवृत्त करके वह ब्रह्म में मिल गया है॥ ८॥ ४॥

गउड़ी महला ३ ॥ ब्रहमा वेदु पड़ै वादु वखाणै ॥ अंतरि तामसु आपु न पछाणै ॥ ता प्रभु पाए गुर सबदु वखाणै ॥ १ ॥ गुर सेवा करउ फिरि कालु न खाइ ॥ मनमुख खाधे दूजै भाइ ॥ १ ॥ रहाउ॥ गुरमुखि प्राणी अपराधी सीधे ॥ गुर कै सबदि अंतरि सहजि रीधे ॥ मेरा प्रभु पाइआ गुर कै सबदि सीधे ॥ २ ॥ सतिगुरि मेले प्रभि आपि मिलाए ॥ मेरे प्रभ साचे कै मनि भाए ॥ हरि गुण गावहि सहजि सुभाए ॥ ३ ॥ बिनु गुर साचे भरमि भुलाए ॥ मनमुख अंधे सदा बिखु खाए ॥ जम डंडु सहहि सदा दुखु पाए ॥ ४ ॥ जमूआ न जोहै हरि की सरणाई ॥ हउमै मारि सचि लिव लाई ॥ सदा रहै हरि नामि लिव लाई ॥ ५ ॥ सतिगुरु सेवहि से जन निरमल पविता ॥ मन सिउ मनु मिलाइ सभु जगु जीता ॥ इन बिधि कुसलु तेरै मेरे मीता ॥ ६ ॥ सतिगुरू सेवे सो फलु पाए ॥ हिरदै नामु विचहु आपु गवाए ॥ अनहद बाणी सबदु वजाए ॥ ७ ॥ सतिगुर ते कवनु कवनु न सीधो मेरे भाई ॥ भगती सीधे दरि सोभा पाई ॥ नानक राम नामि वडिआई ॥ ८ ॥ ५ ॥

पण्डित ब्रह्मा के रचित वेदों का अध्ययन करता है और वाद–विवाद वर्णन करता है। उसकी अन्तर्रात्मा में क्रोध विद्यमान है, जिससे वह अपने आपको नहीं समझता। यदि वह गुरु के शब्द का बखान करे तभी उसे परमात्मा प्राप्त हो सकता है॥ १॥ हे भाई! गुरु की सेवा करो, तब तुझे मृत्यु अपना ग्रास नहीं बनाएगी। क्योंकि माया–मोह की लगन ने स्वेच्छाचारियों को निगल लिया है॥ १॥ रहाउ॥ गुरु के आश्रय में आने से पापी पुरुष भी पवित्र–पावन हो गए हैं। गुरु के शब्द से आत्मा परमात्मा से जुड़ जाती है। गुरु के शब्द से मनुष्य सुधर जाता है और मेरे प्रभु को पा लेता है॥ २॥ ईश्वर उनको अपने साथ

मिला लेता है, जिन्हें सतिगुरु जी मिलाना चाहते हैं। वे मेरे सत्यस्वरूप ईश्वर के हृदय को अच्छे लगने लगते हैं। वह सहज ही प्रभु की गुणस्तुति करते हैं॥ ३॥ गुरु के बिना प्राणी दुविधा में भूले हुए हैं। ज्ञानहीन स्वेच्छाचारी पुरुष सदैव ही (मोह--माया का) विष सेवन करते हैं। वे यमदूत का दण्ड सहन करते हैं और सदैव ही दुखी होते हैं॥ ४॥ लेकिन यदि मनुष्य परमेश्वर की शरण प्राप्त कर ले तो यमदूत उसे दुखी नहीं करता। अपने अहंत्व को निवृत्त करने से मनुष्य की वृत्ति प्रभु के साथ लग जाती है। वह सदैव ही अपनी वृत्ति ईश्वर नाम के साथ लगाकर रखता है॥ ५॥ जो पुरुष सतिगुरु की सेवा करते हैं, वही पुरुष पवित्र एवं पावन हैं। अपने मन को गुरु के मन के साथ जोड़ने से वे सारे जगत् पर विजय पा लेते हैं। हे मेरे मित्र! इस विधि से तुझे भी आनन्द प्राप्त होगा॥ ६॥ जो व्यक्ति सतिगुरु की निष्ठापूर्वक सेवा करता है, वह फल प्राप्त कर लेता है। उसके हृदय में नाम विद्यमान है और उसके भीतर से अहंकार दूर हो जाता है। उसके लिए अनहद वाणी का शब्द गूंजता रहता है॥ ७॥ हे मेरे भाई! कौन--कौन सा व्यक्ति सतिगुरु की शरण में नहीं सुधरा? प्रभु की भक्ति द्वारा वह उसके दरबार में शोभा पाते हैं। हे नानक! राम के नाम से बड़ी प्रशंसा मिलती है॥ ८॥ ५॥

गउड़ी महला ३ ॥ त्रै गुण वखाणै भरमु न जाइ ॥ बंधन न तूटहि मुकति न पाइ ॥ मुकति दाता सतिगुरु जुग माहि ॥ १ ॥ गुरमुखि प्राणी भरमु गवाइ ॥ सहज धुनि उपजै हरि लिव लाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रै गुण कालै की सिरि कारा ॥ नामु न चेतहि उपावणहारा ॥ मरि जंमहि फिरि वारो वारा ॥ २ ॥ अंधे गुरू ते भरमु न जाई ॥ मूलु छोडि लागे दूजै भाई ॥ बिखु का माता बिखु माहि समाई ॥ ३ ॥ माइआ करि मूलु जंत्र भरमाए ॥ हरि जीउ विसरिआ दूजै भाए ॥ जिसु नदरि करे सो परम गति पाए ॥ ४ ॥ अंतरि साचु बाहरि साचु वरताए ॥ साचु न छपै जे को रखै छपाए ॥ गिआनी बूझहि सहजि सुभाए ॥ ५ ॥ गुरमुखि साचि रहिआ लिव लाए ॥ हउमै माइआ सबदि जलाए ॥ मेरा प्रभु साचा मेलि मिलाए ॥ ६ ॥ सतिगुरु दाता सबदु सुणाए ॥ धावतु राखै ठाकि रहाए ॥ पूरे गुर ते सोझी पाए ॥ ७ ॥ आपे करता स्रिसटि सिरजि जिनि गोई ॥ तिसु बिनु दूजा अवरु न कोई ॥ नानक गुरमुखि बूझै कोई ॥ ८ ॥ ६ ॥

जो व्यक्ति त्रिगुणात्मक माया का बखान करता है, उसका भ्रम दूर नहीं होता। उसके मोह--माया के बंधन समाप्त नहीं होते और उसे मुक्ति नहीं मिलती। इस युग में मुक्ति देने वाला सतिगुरु ही है॥ १॥ गुरमुख प्राणी का भ्रम दूर हो जाता है। परमेश्वर के साथ वृत्ति लगाने से सहज ध्वनि उत्पन्न हो जाती है॥ १॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति त्रिगुणात्मक (माया) में वास करते हैं, वे मृत्यु की प्रजा हैं। वे सृजनहार प्रभु के नाम को स्मरण नहीं करते। इसलिए वह बार--बार जीवन मृत्यु के चक्र में फँसकर जन्म लेते और मरते हैं॥ २॥ अज्ञानी गुरु द्वारा दुविधा निवृत्त नहीं होती। संसार के मूल सृष्टिकर्त्ता को त्याग कर प्राणी द्वैतवाद से जुड़े हुए हैं। माया के विष में मग्न हुआ जीव माया के विष में ही समा जाता है॥ ३॥ माया को मूल सहारा जानकर प्राणी भटकते फिरते हैं। माया के मोह में उन्होंने पूज्य परमेश्वर को विस्मृत कर दिया है। ईश्वर जिस प्राणी पर कृपा--दृष्टि करता है, वह परमगति प्राप्त कर लेता है॥ ४॥ जिसके हृदय में सत्य विद्यमान है, वह बाहर भी सत्य ही बांटता है। सत्य छिपा नहीं रहता चाहे मनुष्य इसको छिपा कर ही रखे। ज्ञानी सहज ही सत्य का ज्ञान प्राप्त कर लेता है॥ ५॥ गुरुमुख सत्य में वृत्ति लगाकर रखता है। ऐसा व्यक्ति अहंकार एवं माया का मोह ईश्वर के नाम से जला देता है। मेरा सत्यस्वरूप परमेश्वर उसको अपने मिलाप में मिला लेता है॥ ६॥ नाम की देन देने वाला सतिगुरु अपना शब्द ही सुनाता है। वह माया के पीछे भागते मन पर विराम लगाकर उसे

नियंत्रित करता है। पूर्ण गुरु से प्राणी ज्ञान प्राप्त करता है॥ ७॥ सृजनहार प्रभु स्वयं सृष्टि की रचना करता है और स्वयं ही इसका विनाश भी करता है। उस प्रभु के बिना दूसरा कोई नहीं। हे नानक! कोई गुरमुख ही इस तथ्य को समझता है॥ ८॥ ६॥

गउड़ी महला ३ ॥ नामु अमोलकु गुरमुखि पावै ॥ नामो सेवे नामि सहजि समावै ॥ अंम्रितु नामु रसना नित गावै ॥ जिस नो क्रिपा करे सो हरि रसु पावै ॥ १ ॥ अनदिनु हिरदै जपउ जगदीसा ॥ गुरमुखि पावउ परम पदु सूखा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हिरदै सूखु भइआ परगासु ॥ गुरमुखि गावहि सचु गुणतासु ॥ दासनि दास नित होवहि दासु ॥ ग्रिह कुटंब महि सदा उदासु ॥ २ ॥ जीवन मुकतु गुरमुखि को होई ॥ परम पदारथु पावै सोई ॥ त्रै गुण मेटे निरमलु होई ॥ सहजे साचि मिलै प्रभु सोई ॥ ३ ॥ मोह कुटंब सिउ प्रीति न होइ ॥ जा हिरदै वसिआ सचु सोइ ॥ गुरमुखि मनु बेधिआ असथिरु होइ ॥ हुकमु पछाणै बूझै सचु सोइ ॥ ४ ॥ तूं करता मै अवरु न कोइ ॥ तुझु सेवी तुझ ते पति होइ ॥ किरपा करहि गावा प्रभु सोइ ॥ नाम रतनु सभ जग महि लोइ ॥ ५ ॥ गुरमुखि बाणी मीठी लागी ॥ अंतरु बिगसै अनदिनु लिव लागी ॥ सहजे सचु मिलिआ परसादी ॥ सतिगुरु पाइआ पूरै वडभागी ॥ ६ ॥ हउमै ममता दुरमति दुख नासु ॥ जब हिरदै राम नाम गुणतासु ॥ गुरमुखि बुधि प्रगटी प्रभ जासु ॥ जब हिरदै रविआ चरण निवासु ॥ ७ ॥ जिसु नामु देइ सोई जनु पाए ॥ गुरमुखि मेले आपु गवाए ॥ हिरदै साचा नामु वसाए ॥ नानक सहजे साचि समाए ॥ ८ ॥ ७ ॥

परमेश्वर का अमूल्य नाम गुरमुख ही प्राप्त करता है। वह नाम की सेवा करता रहता है और नाम में सहज ही समा जाता है। वह नित्य ही अपनी जिह्वा से अमृतमयी नाम का गुणानुवाद करता है। जिस पर भगवान अपनी कृपा करता है, वही व्यक्ति हरि रस प्राप्त करता है॥ १॥ हे जिज्ञासु! अपने मन में रात–दिन सृष्टि के स्वामी जगदीश का जाप करो। गुरु के माध्यम से तुझे परम पद अवस्था प्राप्त होगी॥ १॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति गुणों के भण्डार सत्यस्वरूप परमेश्वर का भजन करते है, उस गुरमुख के मन में प्रसन्नता प्रकट हो जाती है। वह सदा अपने ईश्वर के सेवकों के सेवकों का सेवक बना रहता है। वह अपने गृह एवं परिवार में हमेशा निर्लिप्त रहता है॥ २॥ कोई विरला गुरमुख ही जीवन में मोह–माया के बन्धनों से मुक्त होता है। केवल वही नाम पदार्थ को प्राप्त करता है। वह माया के त्रिगुणों को मिटा कर पवित्र हो जाता है। वह सहज ही उस सत्यस्वरूप परमेश्वर में लीन हो जाता है॥ ३॥ जिस व्यक्ति के हृदय में सत्य का निवास हो जाता है, उसका अपने परिवार से मोह एवं प्रेम नहीं रहता। गुरमुख का मन भगवान की भक्ति में लग जाता है और वह स्थिर रहता है। जो प्रभु के हुक्म को पहचानता है, वह सत्य को समझ लेता है॥ ४॥ हे प्रभु! तू स्रष्टा हैं, मैं किसी दूसरे को नहीं जानता। हे नाथ! मैं तेरी ही सेवा करता हूँ और तेरे द्वारा ही मैं शोभा पाता हूँ। यदि वह प्रभु दया करे तो मैं उसका यश गायन करता हूँ। समूचे जगत् में (प्रभु के) नाम रत्न का ही प्रकाश है॥ ५॥ गुरुमुख को वाणी बहुत मीठी लगती है। उसका हृदय प्रफुल्लित हो जाता है और रात–दिन उसकी वृत्ति इस पर केन्द्रित हुई रहती है। गुरु की कृपा से सत्य नाम सहज ही मिल जाता है। पूर्ण किस्मत से प्राणी को सतिगुरु मिलता है॥ ६॥ जब गुणों के सागर प्रभु का नाम हृदय में बसता है तो अहंकार, मोह, दुर्बुद्धि एवं दुख नाश हो जाते हैं। जब प्रभु के चरण हृदय में बसा कर गुरु के माध्यम से ईश्वर का भजन एवं उसका यश गायन किया जाता है तो मनुष्य की बुद्धि जाग जाती है॥ ७॥ जिसे प्रभु नाम प्रदान करता है, केवल वही पुरुष ही इसको पाता है। जो गुरु के माध्यम से अपने अहंकार को त्याग देते हैं, उनको प्रभु अपने साथ मिला लेता है। अपने हृदय में वह सत्य नाम को बसा लेते हैं। हे नानक! वे सहज ही सत्य में समा जाते हैं॥ ८॥ ७॥

गउड़ी महला ३ ॥ मन ही मनु सवारिआ भै सहजि सुभाइ ॥ सबदि मनु रंगिआ लिव लाइ ॥ निज घरि वसिआ प्रभ की रजाइ ॥ १ ॥ सतिगुरु सेविऐ जाइ अभिमानु ॥ गोविदु पाईऐ गुणी निधानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु बैरागी जा सबदि भउ खाइ ॥ मेरा प्रभु निरमला सभ तै रहिआ समाइ ॥ गुर किरपा ते मिलै मिलाइ ॥ २ ॥ हरि दासन को दासु सुखु पाए ॥ मेरा हरि प्रभु इन बिधि पाइआ जाए ॥ हरि किरपा ते राम गुण गाए ॥ ३ ॥ ध्रिगु बहु जीवणु जितु हरि नामि न लगै पिआरु ॥ ध्रिगु सेज सुखाली कामणि मोह गुबारु ॥ तिन सफलु जनमु जिन नामु अधारु ॥ ४ ॥ ध्रिगु ध्रिगु ग्रिहु कुटंबु जितु हरि प्रीति न होइ ॥ सोई हमारा मीतु जो हरि गुण गावै सोइ ॥ हरि नाम बिना मै अवरु न कोइ ॥ ५ ॥ सतिगुर ते हम गति पति पाई ॥ हरि नामु धिआइआ दूखु सगल मिटाई ॥ सदा अनंदु हरि नामि लिव लाई ॥ ६ ॥ गुरि मिलिऐ हम कउ सरीर सुधि भई ॥ हउमै त्रिसना सभ अगनि बुझई ॥ बिनसे क्रोध खिमा गहि लई ॥ ७ ॥ हरि आपे क्रिपा करे नामु देवै ॥ गुरमुखि रतनु को विरला लेवै ॥ नानकु गुण गावै हरि अलख अभेवै ॥ ८ ॥ ८ ॥

जिस व्यक्ति ने ईश्वर के भय में सहज स्वभाव ही मन को संवार लिया है, उसका मन नाम में मग्न रहता है और वह प्रभु में सुरति लगाकर रखता है। प्रभु की इच्छा से वह अपने आत्मस्वरूप में ही रहता है॥ १॥ सतिगुरु की सेवा करने से अभिमान दूर हो जाता है एवं गुणों का भण्डार गोविन्द प्राप्त हो जाता है॥ १॥ रहाउ॥ जब मनुष्य का मन प्रभु का भय धारण कर लेता है तो वह इच्छा रहित हो जाता है। मेरा निर्मल प्रभु सर्वत्र व्यापक हो रहा है। गुरु की कृपा से प्राणी प्रभु मिलन में मिल जाता है॥ २॥ ईश्वर के सेवकों का सेवक आत्मिक सुख प्राप्त करता है। मेरा प्रभु-परमेश्वर इस विधि से प्राप्त होता है। परमेश्वर की कृपा से मनुष्य राम की गुणस्तुति करता है॥ ३॥ ऐसे लम्बे जीवन पर धिक्कार है जिसमें प्रभु के नाम से प्रेम नहीं होता। सुन्दर स्त्री की सुखदायक सेज भी धिक्कार योग्य है जिससे मोह का अन्धेरा बना रहता है। उनका जीवन ही फलदायक है, जिन्हें नाम का सहारा प्राप्त है॥ ४॥ ऐसा गृहस्थ-जीवन एवं परिवार भी धिक्कार योग्य है, जिसके कारण प्रभु से प्रेम नहीं होता। केवल वही मेरा मित्र है, जो उस ईश्वर का यश गायन करता है। प्रभु के नाम बिना मेरा दूसरा कोई नहीं॥ ५॥ सतिगुरु से मैंने मुक्ति एवं शोभा प्राप्त की है। भगवान के नाम का ध्यान करने से सभी दुःख मिट गए हैं। भगवान के नाम में वृत्ति लगाने से सदैव आनंद प्राप्त हो गया है॥ ६॥ गुरु को मिलने से हमारा शरीर शुद्ध हो गया है। जिससे अहंकार एवं तृष्णा की अग्नि समस्त बुझ गए हैं। मेरा क्रोध मिट गया है और मैंने सहनशीलता धारण कर ली है॥ ७॥ भगवान स्वयं ही कृपा करके अपना नाम प्रदान करता है। कोई विरला गुरमुख ही नाम-रत्न को प्राप्त करता है। हे नानक! वह तो अलक्ष्य तथा अभेद परमेश्वर की ही गुणस्तुति करता है॥ ८॥ ८॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रागु गउड़ी बैरागणि महला ३ ॥ सतिगुर ते जो मुह फेरे ते वेमुख बुरे दिसंनि ॥ अनदिनु बधे मारीअनि फिरि वेला ना लहंनि ॥ १ ॥ हरि हरि राखहु क्रिपा धारि ॥ सतसंगति मेलाइ प्रभ हरि हिरदै हरि गुण सारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ से भगत हरि भावदे जो गुरमुखि भाइ चलंनि ॥ आपु छोडि सेवा करनि जीवत मुए रहंनि ॥ २ ॥ जिस दा पिंडु पराण है तिस की सिरि कार ॥ ओहु किउ मनहु विसारीऐ हरि रखीऐ हिरदै धारि ॥ ३ ॥ नामि मिलिऐ पति पाईऐ नामि मंनिऐ सुखु होइ ॥ सतिगुर ते नामु पाईऐ करमि मिलै प्रभु सोइ ॥ ४ ॥ सतिगुर ते जो मुहु फेरे ओइ भ्रमदे ना टिकंनि ॥ धरति असमानु न झलई विचि विसटा पए पचंनि ॥ ५ ॥ इहु जगु भरमि भुलाइआ मोह ठगउली

पाइ ॥ जिना सतिगुरु भेटिआ तिन नेड़ि न भिटै माइ ॥ ६ ॥ सतिगुरु सेवनि सो सोहणे हउमै मैलु गवाइ ॥ सबदि रते से निरमले चलहि सतिगुर भाइ ॥ ७ ॥ हरि प्रभ दाता एकु तूं तूं आपे बखसि मिलाइ ॥ जनु नानकु सरणागती जिउ भावै तिवै छडाइ ॥ ८ ॥ १ ॥ ६ ॥

जो इन्सान गुरु से मुँह फेर लेते हैं, ऐसे विमुख इन्सान बड़े बुरे दिखाई देते हैं। ऐसे व्यक्ति बन्धनों में फँसकर दिन–रात दुख भोगते रहते हैं और फिर उन्हें बन्धनों से बचने का अवसर प्राप्त नहीं होता॥ १॥ हे प्रभु–परमेश्वर ! कृपा धारण करके हमारी रक्षा करें। हे ईश्वर ! मुझे सत्संग में मिला दो, चूंकि मैं अपने मन में प्रभु–परमेश्वर के गुणों को स्मरण करता रहूँ॥ १॥ रहाउ॥ भगवान को वही भक्त अच्छे लगते हैं, जो गुरु की इच्छानुसार चलते हैं। वे अपना अहंकार त्यागकर प्रभु की सेवा–भक्ति करते हैं और संसार का कर्म करते हुए भी माया के मोह से मृत रहते हैं॥ २॥ जिस प्रभु का दिया हुआ यह शरीर और यह प्राण है, उसकी ही सरकार है अर्थात् उसका हुक्म सब पर है सक्रिय है। उसको अपने हृदय से किसी भी अवस्था में क्यों विस्मृत करें ? हमें ईश्वर को अपने हृदय से लगाकर रखना चाहिए॥ ३॥ यदि नाम प्राप्त हो जाए तो ही मनुष्य को मान–सम्मान मिलता है और नाम में आस्था रखने से उसको आत्मिक सुख मिलता है। सतिगुरु से ही नाम प्राप्त होता है। उसकी अपनी कृपा से ही वह प्रभु पाया जाता है॥ ४॥ जो व्यक्ति सतिगुरु से मुँह फेर लेते हैं, वह (संसार में) भटकते ही रहते है और उन्हें शांति नहीं मिलती। गुरु से विमुख होने वाले लोगों को धरती एवं गगन भी सहारा नहीं देते। विष्टा में गिरे हुए वह वहाँ गल–सड़ जाते हैं॥ ५॥ माया ने इस संसार को दुविधा में डालकर मोह की बूटी खिलाकर कुमार्गगामी बना दिया है लेकिन जिन्हें सतिगुरु जी मिल जाते हैं, माया उनके निकट नहीं आती॥ ६॥ जो व्यक्ति सतिगुरु की श्रद्धापूर्वक सेवा करते हैं, वह अति सुन्दर हैं। वह अपने अहंकार की मलिनता को दूर फैंक देते हैं। वही व्यक्ति निर्मल हैं जो गुरु के शब्द में मग्न रहते हैं। वह सतिगुरु के निर्देशानुसार अनुसरण करते हैं॥ ७॥ हे मेरे प्रभु–परमेश्वर ! एक तू ही दाता है, तू स्वयं ही प्राणियों को क्षमादान करके अपने साथ मिला लेता है। हे ईश्वर ! नानक ने तेरी शरण ली है। जैसे तुझे अच्छा लगता है, वैसे ही उसको तू मुक्ति प्रदान कर॥ ८॥ १॥ ६॥

रागु गउड़ी पूरबी महला ४ करहले ੧ओं सतिगुर प्रसादि ॥

करहले मन परदेसीआ किउ मिलीऐ हरि माइ ॥ गुरु भागि पूरै पाइआ गलि मिलिआ पिआरा आइ ॥ १ ॥ मन करहला सतिगुरु पुरखु धिआइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन करहला वीचारीआ हरि राम नाम धिआइ ॥ जिथै लेखा मंगीऐ हरि आपे लए छडाइ ॥ २ ॥ मन करहला अति निरमला मलु लागी हउमै आइ ॥ परतखि पिरु घरि नालि पिआरा विछुड़ि चोटा खाइ ॥ ३ ॥ मन करहला मेरे प्रीतमा हरि रिदै भालि भालाइ ॥ उपाइ कितै न लभई गुरु हिरदै हरि देखाइ ॥ ४ ॥ मन करहला मेरे प्रीतमा दिनु रैणि हरि लिव लाइ ॥ घरु जाइ पावहि रंग महली गुरु मेले हरि मेलाइ ॥ ५ ॥ मन करहला तूं मीतु मेरा पाखंडु लोभु तजाइ ॥ पाखंडि लोभी मारीऐ जम डंडु देइ सजाइ ॥ ६ ॥ मन करहला मेरे प्रान तूं मैलु पाखंडु भरमु गवाइ ॥ हरि अम्रित सरु गुरि पूरिआ मिलि संगती मलु लहि जाइ ॥ ७ ॥ मन करहला मेरे पिआरिआ इक गुर की सिख सुणाइ ॥ इहु मोहु माइआ पसरिआ अंति साथि न कोई जाइ ॥ ८ ॥ मन करहला मेरे साजना हरि खरचु लीआ पति पाइ ॥ हरि दरगह पैनाइआ हरि आपि लइआ गलि लाइ ॥ ९ ॥ मन करहला गुरि मंनिआ गुरमुखि कार कमाइ ॥ गुर आगै करि जोदड़ी जन नानक हरि मेलाइ ॥ १० ॥ १ ॥

हे मेरे ऊँट समान परदेसी मन! तू किस तरह अपनी माता समान प्रभु से मिल सकता है? जब पूर्ण सौभाग्य से गुरु मिल जाए तो ही प्रियतम (प्रभु) आलिंगन करके मिल सकता है॥ १॥ हे मेरे स्वेच्छाचारी मन! महापुरुष सतिगुरु का ध्यान करता रह॥ १॥ रहाउ॥ हे मेरे विचारवान भटकते मन! तू हरि राम के नाम का ध्यान कर। जिस स्थान पर कर्मों का लेखा-जोखा माँगा जाएगा, ईश्वर स्वयं तेरी मुक्ति करा देगा॥ २॥ हे मेरे स्वेच्छाचारी मन! कभी तुम अत्यंत निर्मल होते थे लेकिन अब तुझे अहंकार की मैल आकर लग गई है। प्रियतम प्रभु तेरे हृदय गृह में तेरे सामने ही प्रत्यक्ष है। उससे जुदा होकर तुम चोटें खा रहे हो॥ ३॥ हे मेरे प्यारे मन! कोशिश कर और अपने हृदय में ईश्वर की भलीभाँति खोज कर। किसी भी उपाय से वह मिल नहीं सकता, गुरु जी तेरे हृदय में ही तुझे ईश्वर के दर्शन करवा देंगे॥ ४॥ हे मेरे मन! दिन-रात प्रभु के चरणों में वृत्ति लगा। इस प्रकार प्रियतम के महल में जाकर अपना स्थान प्राप्त कर लोगे। लेकिन गुरु ही तुझे प्रियतम प्रभु से मिला सकता है॥ ५॥ हे मेरे मन! तुम मेरे मित्र हो, इसलिए तू पाखण्ड एवं लोभ को त्याग दे। क्योंकि पाखण्डी एवं लोभी की खूब पिटाई होती है, अपनी छड़ी से मृत्यु उनको दण्ड देती है॥ ६॥ हे मेरे स्वेच्छाचारी मन! तुम मेरे प्राण हो, तू पाखण्ड एवं दुविधा की मैल त्याग दे। हरि नाम रूपी अमृत का सरोवर पूर्ण गुरु ने भरा हुआ है। अत: सत्संग में मिलने से विकारों की मैल दूर हो जाती है॥ ७॥ हे मेरे परदेसी मन! एक गुरु की सीख सुन। माया का यह मोह अत्याधिक फैला हुआ है। अन्त में प्राणी के साथ कुछ भी नहीं जाता॥ ८॥ हे स्वेच्छाचारी मन! हे मेरे साजन! ईश्वर के नाम को अपनी यात्रा खर्च के तौर पर प्राप्त करके शोभा पा। ईश्वर के दरबार में तुझे मान-सम्मान की पोशाक पहनाई जाएगी और ईश्वर स्वयं तुझे अपने आलिंगन लगाएगा॥ ६॥ हे मेरे स्वेच्छाचारी मन! जो गुरु का आदेश मानता है, वह गुरु जी के उपदेश से प्रभु की सेवा करता है। हे नानक! गुरु के समक्ष प्रार्थना कर, वह तुझे ईश्वर के साथ मिला देंगे॥ १०॥ १॥

गउड़ी महला ४ ॥ मन करहला वीचारीआ वीचारि देखु समालि ॥ बन फिरि थके बन वासीआ पिरु गुरमति रिदै निहालि ॥ १ ॥ मन करहला गुर गोविंदु समालि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन करहला वीचारीआ मनमुख फाथिआ महा जालि ॥ गुरमुखि प्राणी मुकतु है हरि हरि नामु समालि ॥ २ ॥ मन करहला मेरे पिआरिआ सतसंगति सतिगुरु भालि ॥ सतसंगति लगि हरि धिआईऐ हरि हरि चलै तेरै नालि ॥ ३ ॥ मन करहला वडभागीआ हरि एक नदरि निहालि ॥ आपि छडाए छुटीऐ सतिगुर चरण समालि ॥ ४ ॥ मन करहला मेरे पिआरिआ विचि देही जोति समालि ॥ गुरि नउ निधि नामु विखालिआ हरि दाति करी दइआलि ॥ ५ ॥ मन करहला तूं चंचला चतुराई छडि विकरालि ॥ हरि हरि नामु समालि तूं हरि मुकति करे अंत कालि ॥ ६ ॥ मन करहला वडभागीआ तूं गिआनु रतनु समालि ॥ गुर गिआनु खड़गु हथि धारिआ जमु मारिअड़ा जमकालि ॥ ७ ॥ अंतरि निधानु मन करहले भ्रमि भवहि बाहरि भालि ॥ गुरु पुरखु पूरा भेटिआ हरि सजणु लधड़ा नालि ॥ ८ ॥ रंगि रतड़े मन करहले हरि रंगु सदा समालि ॥ हरि रंगु कदे न उतरै गुर सेवा सबदु समालि ॥ ६ ॥ हम पंखी मन करहले हरि तरवरु पुरखु अकालि ॥ वडभागी गुरमुखि पाइआ जन नानक नामु समालि ॥ १० ॥ २ ॥

हे मेरे विचारशील मन! विचार करके ध्यानपूर्वक देख। वनों में रहने वाले वनवासी वनों में भटकते थक गए हैं। गुरु की शिक्षा द्वारा प्रभु-पति को अपने हृदय में ही देख॥ १॥ हे मेरे स्वेच्छाचारी मन! गुरु गोबिन्द को स्मरण कर॥ १॥ रहाउ॥ हे मेरे विचारवान मन! स्वेच्छाचारी (मोह-माया के) भारी जाल में फँसे हुए हैं। गुरमुख प्राणी मोह-माया के बन्धनों से मुक्त है चूंकि वह हरि-परमेश्वर का नाम

ही याद करता रहता है॥ २॥ हे प्यारे मन ! सत्संग में सतिगुरु को खोज। संतों की संगति में रहकर भगवान के नाम का ध्यान करता रह, क्योंकि भगवान का नाम ही तेरे साथ (परलोक में) जाएगा ॥ ३॥ हे भटकते मन ! जिस व्यक्ति पर भगवान अपनी एक कृपा—दृष्टि कर देता है, वह भाग्यशाली हो जाता है। यदि ईश्वर तुझे स्वयं मुक्त करे, तुम मुक्त हो जाओगे। सतिगुरु के चरणों की तू उपासना कर॥ ४॥ हे मेरे प्रिय मन ! देहि में मौजूद ज्योति को ध्यानपूर्वक रख। गुरु जी ने नाम के नौ भण्डार दिखा दिए हैं। दयालु ईश्वर ने यह देन प्रदान कर दी है॥ ५॥ हे मेरे चंचल मन ! अपनी विकराल चतुराई को त्याग दे। प्रभु—परमेश्वर के नाम का तू भजन कर। अंतिम समय ईश्वर का नाम तेरा कल्याण करेगा॥ ६॥ हे मेरे स्वेच्छाचारी मन ! यदि तू ज्ञान रुपी रत्न की सँभाल कर ले तो तू बड़ा सौभाग्यशाली होगा। अपने हाथ में मृत्यु का वध करने वाली गुरु के ज्ञान की तलवार पकड़ कर तू यमदूत का संहार कर दे॥ ७॥ हे स्वेच्छाचारी मन ! तेरे भीतर नाम का भण्डार है, तू इसे ढूँढता हुआ दुविधा में बाहर भटकता फिरता है। महापुरुष गुरु जी जब तुझे मिलेंगे तो मित्र प्रभु को अपने साथ ही पा लोगे॥ ८॥ हे मेरे भटकते मन ! तू सांसारिक ऐश्वर्य—वैभव में लीन है। प्रभु के प्रेम को तू सदैव धारण कर। गुरु की सेवा करने और नाम—स्मरण द्वारा प्रभु का रंग फीका नहीं होता॥ ६॥ हे मेरे भटकते मन ! हम पक्षी हैं, प्रभु—परमेश्वर एक अमर वृक्ष है। हे नानक ! गुरु के माध्यम से भाग्यशाली ही नाम रूपी वृक्ष को प्राप्त करते हैं और नाम का चिंतन करते रहते हैं॥ १०॥ २॥

रागु गउड़ी गुआरेरी महला ५ असटपदीआ १ओं सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

जब इहु मन महि करत गुमाना ॥ तब इहु बावरु फिरत बिगाना ॥ जब इहु हूआ सगल की रीना ॥ ता ते रमईआ घटि घटि चीना ॥ १ ॥ सहज सुहेला फलु मसकीनी ॥ सतिगुर अपुनै मोहि दानु दीनी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब किस कउ इहु जानसि मंदा ॥ तब सगले इसु मेलहि फंदा ॥ मेर तेर जब इनहि चुकाई ॥ ता ते इसु संगि नही बैराई ॥ २ ॥ जब इनि अपुनी अपनी धारी ॥ तब इस कउ है मुसकलु भारी ॥ जब इनि करणैहारु पछाता ॥ तब इस नो नाही किछु ताता ॥ ३ ॥ जब इनि अपुनो बाधिओ मोहा ॥ आवै जाइ सदा जमि जोहा ॥ जब इस ते सभ बिनसे भरमा ॥ भेदु नाही है पारब्रहमा ॥ ४ ॥ जब इनि किछु करि माने भेदा ॥ तब ते दूख डंड अरु खेदा ॥ जब इनि एको एकी बूझिआ ॥ तब ते इस नो सभु किछु सूझिआ ॥ ५ ॥ जब इहु धावै माइआ अरथी ॥ नह त्रिपतावै नह तिस लाथी ॥ जब इस ते इहु होइओ जउला ॥ पीछै लागि चली उठि कउला ॥ ६ ॥ करि किरपा जउ सतिगुरु मिलिओ ॥ मन मंदर महि दीपकु जलिओ ॥ जीत हार की सोझी करी ॥ तउ इसु घर की कीमति परी ॥ ७ ॥ करन करावन सभु किछु एकै ॥ आपे बुधि बीचारि बिबेकै ॥ दूरि न नेरै सभ कै संगा ॥ सचु सालाहणु नानक हरि रंगा ॥ ८ ॥ १ ॥

जब इन्सान अपने मन में घमण्ड करता है तो वह पागल व पराया होकर भटकता रहता है। परन्तु जब यह सब की चरण—धूलि हो जाता है तो वह राम के प्रत्येक हृदय में दर्शन कर लेता है॥ १॥ विनम्रता का फल प्राकृतिक तौर पर सुहावना है। यह देन मेरे सतिगुरु ने मुझे दान की है॥ १॥ रहाउ॥ जब तक मनुष्य दूसरों को बुरा समझता है तो सभी उसको (बेईमानी के) जाल में फँसाते हैं। जब वह भेदभाव के अर्थों में ख्याल करने से हट जाता है तो उससे कोई भी शत्रुता नहीं करता॥ २॥ जब वह 'मेरी अपनी' का स्वार्थ रखता है तो उस पर भारी विपदा टूट पड़ती है। लेकिन जब वह अपने प्रभु को पहचान लेता है तो इसे कोई भी जलन नहीं होती॥ ३॥ जब मनुष्य अपने आपको सांसारिक

मोह में उलझा लेता है, तो वह जन्म–मरण के चक्र में पड़ा रहता है और सदा मृत्यु की दृष्टि में होता है। जब समस्त दुविधाएँ उससे निवृत्त हो जाती हैं तो इसमें पारब्रह्म प्रभु के बीच कोई अन्तर नहीं रहता॥ ४॥ जब से मनुष्य ने कुछ भेदभाव नियत किया है, तब से वह दुःख, दण्ड एवं विपदा सहन करता है। जब से यह केवल एक ईश्वर को जानने लग जाता है, तब से उसको सर्वस्व का ज्ञान हो जाता है॥ ५॥ जब वह धन–दौलत हेतु भाग–दौड़ करता है तो वह संतुष्ट नहीं होता और न ही उसकी प्यास बुझती है। जब वह इससे भाग जाता है तो लक्ष्मी उठकर उसके पीछे लग जाती है॥ ६॥ जब मनुष्य को कृपा करके सतिगुरु जी मिल जाते हैं तो मनुष्य के मन–मन्दिर में ज्ञान का दीपक प्रज्वलित हो जाता है। जब मनुष्य विजय एवं पराजय की अनुभूति कर लेता है तो वह इस घर के मूल्य को जान लेता है॥ ७॥ एक परमेश्वर सब कुछ करता और जीवों से करवाता है। वह स्वयं ही बुद्धि, विचार एवं विवेक है। वह कहीं दूर नहीं अपितु सबके निकट एवं पास ही है। हे नानक! सत्यस्वरूप परमेश्वर की प्रेमपूर्वक प्रशंसा कर॥ ८॥ १॥

गउड़ी महला ५ ॥ गुर सेवा ते नामे लागा ॥ तिस कउ मिलिआ जिसु मसतकि भागा ॥ तिस कै हिरदै रविआ सोइ ॥ मनु तनु सीतलु निहचलु होइ ॥ १ ॥ ऐसा कीरतनु करि मन मेरे ॥ ईहा ऊहा जो कामि तेरै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जासु जपत भउ अपदा जाइ ॥ धावत मनूआ आवै ठाइ ॥ जासु जपत फिरि दूखु न लागै ॥ जासु जपत इह हउमै भागै ॥ २ ॥ जासु जपत वसि आवहि पंचा ॥ जासु जपत रिदै अंम्रितु संचा ॥ जासु जपत इह त्रिसना बुझै ॥ जासु जपत हरि दरगह सिझै ॥ ३ ॥ जासु जपत कोटि मिटहि अपराध ॥ जासु जपत हरि होवहि साध ॥ जासु जपत मनु सीतलु होवै ॥ जासु जपत मलु सगली खोवै ॥ ४ ॥ जासु जपत रतनु हरि मिलै ॥ बहुरि न छोडै हरि संगि हिलै ॥ जासु जपत कई बैकुंठ वासु ॥ जासु जपत सुख सहजि निवासु ॥ ५ ॥ जासु जपत इह अगनि न पोहत ॥ जासु जपत इहु कालु न जोहत ॥ जासु जपत तेरा निरमल माथा ॥ जासु जपत सगला दुखु लाथा ॥ ६ ॥ जासु जपत मुसकलु कछू न बनै ॥ जासु जपत सुणि अनहत धुनै ॥ जासु जपत इह निरमल सोइ ॥ जासु जपत कमलु सीधा होइ ॥ ७ ॥ गुरि सुभ द्रिसटि सभ ऊपरि करी ॥ जिस कै हिरदै मंत्रु दे हरी ॥ अखंड कीरतनु तिनि भोजनु चूरा ॥ कहु नानक जिसु सतिगुरु पूरा ॥ ८ ॥ २ ॥

गुरु की श्रद्धापूर्वक सेवा करने से ही मनुष्य नाम के साथ लग जाता है। जिसके मस्तक पर भाग्यरेखाएँ विद्यमान हों केवल वहीं व्यक्ति नाम को प्राप्त करता है। वह प्रभु उसके हृदय में निवास करता है। (प्रभु के निवास से) मनुष्य का मन एवं तन शीतल तथा स्थिर हो जाते हैं॥ १॥ हे मेरे मन! ईश्वर का ऐसा भजन गायन कर, जो लोक तथा परलोक में तेरे काम आएगा॥ १॥ रहाउ॥ जिसकी महिमा–स्तुति करने से भय एवं विपदा दूर हो जाते हैं और भटकता हुआ मन स्थिर हो जाता है। जिसकी महिमा–स्तुति करने से पीड़ा दोबारा नहीं आती। जिसकी महिमा–स्तुति करने से यह अहंकार भाग जाता है॥ २॥ जिसकी महिमा–स्तुति करने से पाँच विकार (काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार) वश में आ जाते हैं। जिसकी महिमा–स्तुति करने से हरि–रस हृदय में संचित हो जाता है। जिसकी महिमा–स्तुति करने से यह तृष्णा मिट जाती है। जिसकी महिमा–स्तुति करने से प्रभु के दरबार में मनुष्य स्वीकार हो जाता है॥ ३॥ जिसकी महिमा–स्तुति करने से करोड़ों पाप नष्ट हो जाते हैं। जिसकी महिमा–स्तुति करने से मनुष्य हरि का संत बन जाता है। जिसकी महिमा–स्तुति करने से मन शीतल हो जाता है। जिसकी महिमा–स्तुति करने से तमाम (मोह–माया की) मैल साफ हो जाती

है॥ ४॥ जिसकी महिमा–स्तुति करने से हरि रत्न प्राप्त हो जाता है। मनुष्य दोबारा प्रभु को नहीं छोड़ता और उसके साथ घुलमिल जाता है। जिसकी महिमा–स्तुति करने से अधिकतर स्वर्ग में निवास पा लेते हैं। जिसका भजन करने से मनुष्य सहज ही आत्मिक सुख में निवास करता है॥ ५॥ जिसकी महिमा–स्तुति करने से यह अग्नि प्रभावित नहीं करती। जिसका भजन करने से यह मृत्यु दृष्टि नहीं करती। जिसकी महिमा–स्तुति करने से तेरा मस्तक निर्मल हो जाएगा। जिसकी महिमा–स्तुति करने से तमाम दुःख–क्लेश दूर हो जाता है॥ ६॥ जिसकी महिमा–स्तुति करने से मनुष्य पर कोई विपदा पेश नहीं आती। जिसकी महिमा–स्तुति करने से मनुष्य अनहद ध्वनि श्रवण करता है। जिसकी महिमा–स्तुति करने से प्राणी का जीवन पवित्र हो जाता है। जिसकी महिमा–स्तुति करने से हृदय कमल सीधा (सरल) हो जाता है॥ ७॥ जिनके हृदय में ईश्वर ने अपना नाम (मंत्र) प्रदान किया है, गुरु जी ने अपनी शुभ दृष्टि उन सब पर की है। हे नानक ! कह – जिनके पूर्ण सतिगुरु जी मार्गदर्शक हैं, वह प्रभु के अखंड कीर्त्तन को अपना आहार व सुन्दर भोजन मानते हैं॥ ८॥ २॥

गउड़ी महला ५ ॥ गुर का सबदु रिद अंतरि धारै ॥ पंच जना सिउ संगु निवारै ॥ दस इंद्री करि राखै वासि ॥ ता कै आतमै होइ परगासु ॥ १ ॥ ऐसी द्रिड़ता ता कै होइ ॥ जा कउ दइआ मइआ प्रभ सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साजनु दुसटु जा कै एक समानै ॥ जेता बोलणु तेता गिआनै ॥ जेता सुनणा तेता नामु ॥ जेता पेखनु तेता धिआनु ॥ २ ॥ सहजे जागणु सहजे सोइ ॥ सहजे होता जाइ सु होइ ॥ सहजि बैरागु सहजे ही हसना ॥ सहजे चूप सहजे ही जपना ॥ ३ ॥ सहजे भोजनु सहजे भाउ ॥ सहजे मिटिओ सगल दुराउ ॥ सहजे होआ साधू संगु ॥ सहजि मिलिओ पारब्रहमु निसंगु ॥ ४ ॥ सहजे ग्रिह महि सहजि उदासी ॥ सहजे दुबिधा तन की नासी ॥ जा कै सहजि मनि भइआ अनंदु ॥ ता कउ भेटिआ परमानंदु ॥ ५ ॥ सहजे अंम्रितु पीओ नामु ॥ सहजे कीनो जीअ को दानु ॥ सहज कथा महि आतमु रसिआ ॥ ता कै संगि अबिनासी वसिआ ॥ ६ ॥ सहजे आसणु असथिरु भाइआ ॥ सहजे अनहत सबदु वजाइआ ॥ सहजे रुण झुणकारु सुहाइआ ॥ ता कै घरि पारब्रहमु समाइआ ॥ ७ ॥ सहजे जा कउ परिओ करमा ॥ सहजे गुरु भेटिओ सचु धरमा ॥ जा कै सहजु भइआ सो जाणै ॥ नानक दास ता कै कुरबाणै ॥ ८ ॥ ३ ॥

जो व्यक्ति गुरु के शब्द को अपने हृदय में धारण कर लेता है, वह पाँच विकारों–काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अहंकार से अपना संबंध तोड़ लेता है और दसों इन्द्रियों (पाँच ज्ञान व पाँच कर्म) को अपने वश में कर लेता है। उसके हृदय में ज्ञान का प्रकाश हो जाता है॥ १॥ केवल उसे ही ऐसा आत्मबल प्राप्त होता है, जिस इन्सान पर प्रभु की दया एवं कृपा होती है॥ १॥ रहाउ॥ ऐसे इन्सान के लिए मित्र एवं शत्रु एक समान हैं। जो कुछ वह बोलता है, वह ज्ञान ही कहता है। जो कुछ वह सुनता है, वह प्रभु का नाम ही सुनता रहता है। जो कुछ वह दृष्टिगोचर करता है, उस सब में ईश्वर की अनुभूति है॥ २॥ वह सुख में जागता है और सुख में ही सोता है। जो कुछ प्राकृतिक होना है, वह उसके होने पर प्रसन्न रहता है। सहज ही वह वैराग्यवान होता है और सहज ही मुस्कराता है। सुख में ही वह खामोश रहता है और सुख में ही प्रभु के नाम का जाप करता है॥ ३॥ सहज ही वह भोजन करता है और सहज ही वह प्रभु से प्रेम करता है। उसका अज्ञानता का पर्दा सहज ही सब निवृत्त हो जाता है। वह सहज ही संतों की संगति में मिल जाता है। सहज ही उसे पारब्रह्म प्रभु प्रत्यक्ष रूप से मिल जाता है॥ ४॥ आत्मिक स्थिरता में वह घर में रहता है और आत्मिक स्थिरता में ही वह निर्लिप्त रहता है। सहज ही उसके शरीर की दुविधा नाश हो जाती है। जिसके पास सहज है, प्रसन्नता उसके हृदय में उदय हो जाती है। उसको परमानन्द प्रभु मिल जाता है॥ ५॥ सहज ही वह

नाम–अमृत का पान करता है। सहज ही वह आवश्यकतामंद प्राणियों को दान देता है। प्रभु की कथा में उसकी आत्मा स्वाद प्राप्त करती है। उसके साथ अनश्वर परमात्मा वास करता है॥ ६॥ सहज ही उसको आसन अच्छा लगने लग जाता है। सहज ही उसके हृदय में अनहद शब्द गूंजने लगता है। भीतर के आत्मिक आनन्द की मधुर ध्वनि सहज ही उसको शोभायमान कर देती है। उसके हृदय–घर में पारब्रह्म प्रभु निवास करता है॥ ७॥ जिसके भाग्य में प्रभु को मिलने का विधान लिखा हुआ है, वह सहज ही सच्चे धर्म वाले गुरु जी से मिल जाता है। केवल वही ईश्वर की अनुभूति करता है, जिसे सहज की देन प्राप्त हुई है। दास नानक उस पर कुर्बान जाता है॥ ८॥ ३॥

गउड़ी महला ५ ॥ प्रथमे गरभ वास ते टरिआ ॥ पुत्र कलत्र कुटंब संगि जुरिआ ॥ भोजनु अनिक प्रकार बहु कपरे ॥ सरपर गवनु करहिगे बपुरे ॥ १ ॥ कवनु असथानु जो कबहु न टरै ॥ कवनु सबदु जितु दुरमति हरै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इंद्र पुरी महि सरपर मरणा ॥ ब्रहम पुरी निहचलु नही रहणा ॥ सिव पुरी का होइगा काला ॥ त्रै गुण माइआ बिनसि बिताला ॥ २ ॥ गिरि तर धरणि गगन अरु तारे ॥ रवि ससि पवणु पावकु नीरारे ॥ दिनसु रैणि बरत अरु भेदा ॥ सासत सिंम्रिति बिनसहिगे बेदा ॥ ३ ॥ तीरथ देव देहुरा पोथी ॥ माला तिलकु सोच पाक होती ॥ धोती डंडउति परसादन भोगा ॥ गवनु करैगो सगलो लोगा ॥ ४ ॥ जाति वरन तुरक अरु हिंदू ॥ पसु पंखी अनिक जोनि जिंदू ॥ सगल पासारु दीसै पासारा ॥ बिनसि जाइगो सगल आकारा ॥ ५ ॥ सहज सिफति भगति ततु गिआना ॥ सदा अनंदु निहचलु सचु थाना ॥ तहा संगति साध गुण रसै ॥ अनभउ नगरु तहा सद वसै ॥ ६ ॥ तह भउ भरमा सोगु न चिंता ॥ आवणु जावणु मिरतु न होता ॥ तह सदा अनंद अनहत आखारे ॥ भगत वसहि कीरतन आधारे ॥ ७ ॥ पारब्रहम का अंतु न पारु ॥ कउणु करै ता का बीचारु ॥ कहु नानक जिसु किरपा करै ॥ निहचल थानु साधसंगि तरै ॥ ८ ॥ ४ ॥

सर्वप्रथम मनुष्य गर्भ (की पीड़ा) निवास से मुक्ति पाकर बाहर आता है। तदुपरांत वह अपने आपको पुत्र, पत्नी एवं परिवार के मोह में फँसा लेता है। हे विनीत मनुष्य! अनेक प्रकार के भोजन एवं अनेक प्रकार के वस्त्र निश्चित ही चले जाएँगे॥ १॥ कौन–सा निवास है जो कदाचित नाश नहीं होता। वह कौन–सी वाणी है, जिससे मंदबुद्धि दूर हो जाती है॥ १॥ रहाउ॥ इन्द्रलोक में मृत्यु निश्चित एवं अनिवार्य है। ब्रह्मा का लोक भी स्थिर नहीं रहना। शिवलोक का भी नाश हो जाएगा। तीन गुणों वाली माया एवं दानव लुप्त हो जाएँगे॥ २॥ पहाड़, वृक्ष, धरती, आकाश और सितारे, सूर्य, चन्द्रमा, पवन, अग्नि, दिन, रात, उपवास एवं उनके भेद, शास्त्र, स्मृतियां एवं वेद समस्त नाश हो जाएँगे॥ ३॥ तीर्थ स्थान, देवते, मन्दिर एवं ग्रंथ, माला, तिलक, चिन्तनशील, पवित्र, एवं हवन करने वाले, धोती, दण्डवत–नमस्कार, अन्नदान व भोग–विलास, ये तमाम पदार्थ एवं सारा संसार ही कूच कर जाएगा॥ ४॥ जाति, वर्ण, मुसलमान एवं हिन्दु, पशु, पक्षी, अनेक योनियों के प्राणी, सारा जगत् एवं रचना जो दृष्टिगोचर होता है, ये तमाम नष्ट हो जाएँगे॥ ५॥ प्रभु की प्रशंसा, उसकी भक्ति एवं यथार्थ ज्ञान द्वारा मनुष्य सदैव सुख एवं अटल सच्चा निवास पा लेता है। वहाँ सत्संग में वह प्रेमपूर्वक ईश्वर की गुणस्तुति करता है। वहाँ वह सदैव भयरहित नगर में रहता है॥ ६॥ वहाँ कोई भय, दुविधा, शोक एवं चिन्ता नहीं। वहाँ हमेशा प्रसन्नता एवं सहज कीर्त्तन के मंच हैं। प्रभु के भक्त वहाँ रहते हैं और ईश्वर का यश गायन करना उनका आधार है॥ ७॥ सर्वोपरि परमेश्वर का कोई अन्त एवं सीमा नहीं। सृष्टि में कोई भी ऐसा प्राणी नहीं जो उसके गुणों का अन्त पाने का विचार कर सके। हे नानक! जिस पर प्रभु कृपा धारण करता है, वह संतों की संगति द्वारा भवसागर से पार हो जाता है और अटल निवास को प्राप्त कर लेता है॥ ८॥ ४॥

गउड़ी महला ५ ॥ जो इसु मारे सोई सूरा ॥ जो इसु मारे सोई पूरा ॥ जो इसु मारे तिसहि वडिआई ॥ जो इसु मारे तिस का दुखु जाई ॥ १ ॥ ऐसा कोइ जि दुबिधा मारि गवावै ॥ इसहि मारि राज जोगु कमावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो इसु मारे तिस कउ भउ नाहि ॥ जो इसु मारे सु नामि समाहि ॥ जो इसु मारे तिस की त्रिसना बुझै ॥ जो इसु मारे सु दरगह सिझै ॥ २ ॥ जो इसु मारे सो धनवंता ॥ जो इसु मारे सो पतिवंता ॥ जो इसु मारे सोई जती ॥ जो इसु मारे तिसु होवै गती ॥ ३ ॥ जो इसु मारे तिस का आइआ गनी ॥ जो इसु मारे सु निहचलु धनी ॥ जो इसु मारे सो वडभागा ॥ जो इसु मारे सु अनदिनु जागा ॥ ४ ॥ जो इसु मारे सु जीवन मुकता ॥ जो इसु मारे तिस की निरमल जुगता ॥ जो इसु मारे सोई सुगिआनी ॥ जो इसु मारे सु सहज धिआनी ॥ ५ ॥ इसु मारी बिनु थाइ न परै ॥ कोटि करम जाप तप करै ॥ इसु मारी बिनु जनमु न मिटै ॥ इसु मारी बिनु जम ते नही छुटै ॥ ६ ॥ इसु मारी बिनु गिआनु न होई ॥ इसु मारी बिनु जूठि न धोई ॥ इसु मारी बिनु सभु किछु मैला ॥ इसु मारी बिनु सभु किछु जउला ॥ ७ ॥ जा कउ भए क्रिपाल क्रिपा निधि ॥ तिसु भई खलासी होई सगल सिधि ॥ गुरि दुबिधा जा की है मारी ॥ कहु नानक सो ब्रहम बीचारी ॥ ८ ॥ ५ ॥

वही व्यक्ति शूरवीर है, जो इस अहंत्व का नाश कर देता है। जो व्यक्ति इस अहंत्व को मार देता है, वही पूर्ण है। जो व्यक्ति इस अहंत्व को समाप्त कर देता है, वही यश प्राप्त कर लेता है। जो इस अहंत्व को मार देता है, वह दुखों से मुक्ति प्राप्त कर लेता है॥ १॥ कोई विरला ही ऐसा पुरुष है, जो अपने द्वैतवाद को मारकर दूर फैंकता है। इस अहंत्व को खत्म करके वह राजयोग प्राप्त करता है॥ १॥ रहाउ॥ जो इस दुविधा का नाश कर देता है, उसको कोई भय नहीं रहता। जो इस दुविधा का संहार कर देता है, वह नाम में लीन हो जाता है। जो व्यक्ति इस अहंत्व को समाप्त कर देता है, उसकी तृष्णा मिट जाती है। जो व्यक्ति इस अहंत्व का विनाश करता है, वह प्रभु के दरबार में स्वीकार हो जाता है॥ २॥ जो व्यक्ति दुविधा को मार देता है, वह धनवान हो जाता है। जो इस दुविधा का संहार कर देता है, वह आदरणीय हो जाता है। जो इस अहंत्व का नाश कर देता है, वह ब्रह्मचारी हो जाता है। जो इस दुविधा का विनाश कर देता है, वह मोक्ष प्राप्त कर लेता है॥ ३॥ जो इस अहंत्व का संहार कर देता है, उसका (संसार में) आगमन सफल हो जाता है। जो इस दुविधा का विनाश कर देता है, वही स्थिर एवं धनी है। जो इस अहंत्व का नाश कर देता है, वह बड़ा सौभाग्यशाली है। जो इस दुविधा का विनाश कर देता है, वह रात–दिन सतर्क रहता है॥ ४॥ जो इस (तेरे–मेरे) का नाश कर देता है, वह जीवित ही मुक्त हो जाता है। जो प्राणी इस अहंत्व का संहार करता है, उसका जीवन–आचरण पवित्र बन जाता है। जो इस दुविधा को तबाह कर देता है, वह ब्रह्मज्ञानी है। जो इस अहंत्व का विनाश करता है, वह प्रभु का विचारवान है॥ ५॥ इस अहंत्व के मोह का नाश किए बिना मनुष्य सफल नहीं होता, चाहे वह करोड़ों ही कर्म–धर्म, पूजा एवं तपस्या करता रहे। इस दुविधा का विनाश किए बिना प्राणी का जीवन–मृत्यु का चक्र समाप्त नहीं होता। इस (अहंत्व) का विनाश किए बिना मनुष्य मृत्यु से नहीं बच सकता॥ ६॥ इस अहंत्व का नाश किए बिना मनुष्य को (प्रभु बारे) ज्ञान प्राप्त नहीं होता। इस दुविधा का नाश किए बिना मनुष्य की अशुद्धता दूर नहीं होती। इस दुविधा का विनाश किए बिना सब कुछ मलिन रहता है। इस अहंत्व का नाश किए बिना संसार के प्रत्येक पदार्थ बंधन रूप हैं॥ ७॥ जिस मनुष्य पर कृपा का भण्डार प्रभु कृपालु हो जाता है, उसकी मुक्ति हो जाती है और वह पूर्णता सफल हो जाता है। हे नानक ! जिसकी दुविधा गुरु ने नाश कर दी है, वह प्रभु का चिन्तन करने वाला है॥ ८॥ ५॥

गउड़ी महला ५ ॥ हरि सिउ जुरै त सभु को मीतु ॥ हरि सिउ जुरै त निहचलु चीतु॥ हरि सिउ जुरै न विआपै काढा ॥ हरि सिउ जुरै त होइ निसतारा ॥ १ ॥ रे मन मेरे तूं हरि सिउ जोरु ॥ काजि तुहारै नाही होरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वडे वडे जो दुनीआदार ॥ काहू काजि नाही गावार ॥ हरि का दासु नीच कुलु सुणहि ॥ तिस कै संगि खिन महि उधरहि ॥ २ ॥ कोटि मजन जा कै सुणि नाम ॥ कोटि पूजा जा कै है धिआन ॥ कोटि पुंन सुणि हरि की बाणी ॥ कोटि फला गुर ते बिधि जाणी ॥ ३ ॥ मन अपुने महि फिरि फिरि चेत ॥ बिनसि जाहि माइआ के हेत ॥ हरि अबिनासी तुमरै संगि ॥ मन मेरे रचु राम कै रंगि ॥ ४ ॥ जा कै कामि उतरै सभ भूख ॥ जा कै कामि न जोहहि दूत ॥ जा कै कामि तेरा वड गमरु ॥ जा कै कामि होवहि तूं अमरु ॥ ५ ॥ जा के चाकर कउ नही डान ॥ जा के चाकर कउ नही बान ॥ जा कै दफतरि पुछै न लेखा ॥ ता की चाकरी करहु बिसेखा ॥ ६ ॥ जा कै ऊन नाही काहू बात ॥ एकहि आपि अनेकहि भाति ॥ जा की द्रिसटि होइ सदा निहाल ॥ मन मेरे करि ता की घाल ॥ ७ ॥ ना को चतुरु नाही को मूड़ा ॥ ना को हीणु नाही को सूरा ॥ जितु को लाइआ तित ही लागा ॥ सो सेवकु नानक जिसु भागा ॥ ८ ॥ ६ ॥

यदि इन्सान अपने मन को भगवान के साथ अनुरक्त कर ले तो हरेक व्यक्ति उसका मित्र बन जाता है। यदि इन्सान अपने मन को परमेश्वर के साथ जोड़ ले तो उसका मन स्थिर हो जाता है। फिर वह चिन्ता एवं फिक्र से मुक्त हो जाता है। यदि इन्सान ईश्वर के साथ अनुरक्त हो जाए तो उसका भवसागर से उद्धार हो जाता है॥ १॥ हे मेरे मन! तू अपने आपको ईश्वर के साथ अनुरक्त कर ले। क्योंकि इसके अलावा कोई दूसरा यत्न तेरे लाभ में नहीं आना॥ १॥ रहाउ॥ हे अज्ञानी मनुष्य! बड़े-बड़े एवं ऊँचे दुनिया के लोग किसी काम के नहीं। चाहे प्रभु का सेवक निम्न कुल में सुना जाता हो परन्तु उसकी संगति में तेरा एक क्षण में ही कल्याण हो जाएगा॥ २॥ जिस (प्रभु) का नाम सुनने से करोड़ों ही स्नानों का फल मिल जाता है। जिस (प्रभु) की आराधना करोड़ों ही पूजा के समान है। परमेश्वर की वाणी को सुनना ही करोड़ों दान पुण्यों के तुल्य है। गुरु जी से प्रभु के मार्ग का बोध करोड़ों ही फलों के समान है॥ ३॥ अपने हृदय में बार-बार ईश्वर को स्मरण कर। तेरा माया का मोह नाश हो जाएगा। अनश्वर ईश्वर तेरे साथ है। हे मेरे मन! तू राम के प्रेम में लीन हो जा॥ ४॥ जिसकी सेवा करने से सारी भूख दूर हो जाती है। जिसकी सेवा-भक्ति में यमदूत नहीं देखते। जिसकी सेवा करने से तुम महान उच्चपद प्राप्त कर लोगो। जिसकी सेवा से तुम अमर हो जाओगे॥ ५॥ जिसके सेवक को दण्ड नहीं मिलता, जिसका सेवक किसी बन्धन में नहीं पड़ता। जिसके दरबार में उससे लेखा-जोखा नहीं माँगा जाता। हे मनुष्य! उसकी सेवा-भक्ति तू भलीभाँति कर॥ ६॥ जिसके घर में किसी वस्तु की कमी नहीं। अनेकों स्वरूपों में दिखने के बावजूद ईश्वर स्वयं केवल एक ही है। जिसकी कृपा-दृष्टि से तुम सदा प्रसन्न रहोगे। हे मेरे मन! तू उसकी सेवा-भक्ति करता रह॥ ७॥ अपने आप न कोई बुद्धिमान है और न ही कोई मूर्ख है। अपने आप न कोई कायर है और न ही शूरवीर। जिसके साथ प्रभु प्राणी को लगाता है, उसके साथ वह लग जाता है। हे नानक! प्रभु का सेवक केवल वही व्यक्ति बनता है जो भाग्यशाली है॥ ८॥ ६॥

गउड़ी महला ५ ॥ बिनु सिमरन जैसे सरप आरजारी॥ तिउ जीवहि साकत नामु बिसारी ॥ १ ॥ एक निमख जो सिमरन महि जीआ ॥ कोटि दिनस लाख सदा थिरु थीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिनु सिमरन ध्रिगु करम करास ॥ काग बतन बिसटा महि वास ॥ २ ॥ बिनु सिमरन भए कूकर काम ॥ साकत बेसुआ पूत निनाम ॥ ३ ॥ बिनु सिमरन जैसे सीङ छतारा ॥ बोलहि कूरु साकत मुखु कारा

॥ ४ ॥ बिनु सिमरन गरधभ की निआई ॥ साकत थान भरिसट फिराही ॥ ५ ॥ बिनु सिमरन कूकर हरकाइआ ॥ साकत लोभी बंधु न पाइआ ॥ ६ ॥ बिनु सिमरन है आतम घाती ॥ साकत नीच तिसु कुलु नही जाती ॥ ७ ॥ जिसु भइआ क्रिपालु तिसु सतसंगि मिलाइआ ॥ कहु नानक गुरि जगतु तराइआ ॥ ८ ॥ ७ ॥

भगवान के सिमरन के बिना जैसे मनुष्य का जीवन सर्प जैसा है। वैसे ही (भगवान से टूटा हुआ) शाक्त इन्सान नाम को भुलाकर जीवन बिताता है॥ १॥ जो व्यक्ति एक पल भर के लिए भी भगवान के सिमरन में समय बिताता है, ऐसा व्यक्ति समझो लाखों, करोड़ों दिनों सदा के लिए स्थिर हो जाता है॥ १॥ रहाउ॥ भगवान के सिमरन बिना अन्य सांसारिक कर्म करने धिक्कार योग्य हैं। जिस तरह कौए की चोंच विष्टा में होती है, वैसे ही स्वेच्छाचारी का निवास विष्टा में होता है॥ २॥ भगवान के सिमरन बिना मनुष्य के कर्म कुत्ते जैसे हो जाते हैं। शाक्त इन्सान वेश्या के पुत्र की भाँति बदनाम हो जाते हैं॥ ३॥ भगवान के सिमरन बिना प्राणी सींगों वाले मेंढे की तरह है। शाक्त इन्सान झूठ व्यक्त करता है और जिस कारण दुनिया में उसका मुँह काला किया जाता है॥ ४॥ भगवान के सिमरन के बिना शाक्त इन्सान गधे की भाँति भ्रष्ट स्थानों पर भटकता रहता है॥५॥ भगवान के सिमरन बिना इन्सान पागल कुत्ते की तरह भौंकता रहता है। शाक्त इन्सान लोभ में फँसकर बन्धनों में ही पड़ा रहता है॥ ६॥ भगवान के सिमरन बिना मनुष्य आत्मघाती है। भगवान से टूटा हुआ इन्सान नीच है और उसकी कोई कुल अथवा जाति नहीं होती॥ ७॥ जिस व्यक्ति पर ईश्वर कृपालु हो जाता है, उसको वह संतों की संगति में मिला देता है। हे नानक! गुरु जी ने समूचे संसार का कल्याण कर दिया है॥ ८॥ ७॥

गउड़ी महला ५ ॥ गुर कै बचनि मोहि परम गति पाई ॥ गुरि पूरै मेरी पैज रखाई ॥ १ ॥ गुर कै बचनि धिआइओ मोहि नाउ ॥ गुर परसादि मोहि मिलिआ थाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर कै बचनि सुणि रसन वखाणी ॥ गुर किरपा ते अंम्रित मेरी बाणी ॥ २ ॥ गुर कै बचनि मिटिआ मेरा आपु ॥ गुर की दइआ ते मेरा वड परतापु ॥ ३ ॥ गुर कै बचनि मिटिआ मेरा भरमु ॥ गुर कै बचनि पेखिओ सभु ब्रहमु ॥ ४ ॥ गुर कै बचनि कीनो राजु जोगु ॥ गुर कै संगि तरिआ सभु लोगु ॥ ५ ॥ गुर कै बचनि मेरे कारज सिधि ॥ गुर कै बचनि पाइआ नाउ निधि ॥ ६ ॥ जिनि जिनि कीनी मेरे गुर की आसा ॥ तिस की कटीऐ जम की फासा ॥ ७ ॥ गुर कै बचनि जागिआ मेरा करमु ॥ नानक गुरु भेटिआ पारब्रहमु ॥ ८ ॥ ८ ॥

गुरु के वचन से मुझे परमगति मिल गई है। पूर्ण गुरु ने मेरा मान-सम्मान रख लिया है॥ १॥ गुरु के वचन से मैंने भगवान के नाम का ध्यान किया है। गुरु की कृपा से मुझे आत्मिक सुख का निवास प्राप्त हो गया है॥ १॥ रहाउ॥ मैं गुरु का वचन ही सुनता और अपनी जिह्वा से उच्चरित करता रहता हूँ। गुरु की कृपा से मेरी वाणी अमृत समान मधुर हो गई है॥ २॥ गुरु के वचन से मेरा अहंकार दूर हो गया है। गुरु की कृपा से मेरा दुनिया में बड़ा प्रताप हो गया है॥ ३॥ गुरु के वचन से मेरा भ्रम मिट गया है। गुरु के वचन से मैंने सर्वव्यापक परमात्मा के दर्शन कर लिए हैं॥ ४॥ गुरु के वचन से मुझे राजयोग प्राप्त हुआ है। गुरु की संगति करने से बहुत सारे लोग भवसागर से पार हो गए हैं॥५॥ गुरु के वचन से मेरे तमाम कार्य सफल हो गए हैं। गुरु के वचन से मुझे नाम का भण्डार मिल गया है॥ ६॥ जिस किसी व्यक्ति ने भी मेरे गुरु पर आस्था धारण की है, उसकी मृत्यु का बन्धन कट गया है॥ ७॥ गुरु के वचन से ही मेरे भाग्य जाग गए हैं। हे नानक! गुरु को मिलने से ही भगवान प्राप्त हो गया है॥ ८॥ ८॥

गउड़ी महला ५ ॥ तिसु गुर कउ सिमरउ सासि सासि ॥ गुरु मेरे प्राण सतिगुरु मेरी रासि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर का दरसनु देखि देखि जीवा ॥ गुर के चरण धोइ धोइ पीवा ॥ १ ॥ गुर की रेणु नित मजनु करउ ॥ जनम जनम की हउमै मलु हरउ ॥ २ ॥ तिसु गुर कउ झूलावउ पाखा ॥ महा अगनि ते हाथु दे राखा ॥ ३ ॥ तिसु गुर कै ग्रिहि ढोवउ पाणी ॥ जिसु गुर ते अकल गति जाणी ॥ ४ ॥ तिसु गुर कै ग्रिहि पीसउ नीत ॥ जिसु परसादि वैरी सभ मीत ॥ ५ ॥ जिनि गुरि मो कउ दीना जीउ ॥ आपुना दासरा आपे मुलि लीउ ॥ ६ ॥ आपे लाइओ अपना पिआरु ॥ सदा सदा तिसु गुर कउ करी नमसकारु ॥ ७ ॥ कलि कलेस भै भ्रम दुख लाथा ॥ कहु नानक मेरा गुरु समराथा ॥ ८ ॥ ९ ॥

उस गुरु को मैं श्वास–श्वास से याद करता रहता हूँ। गुरु मेरे प्राणों का आधार है, वह सतिगुरु ही मेरी जीवन–पूंजी हैं॥ १॥ रहाउ॥ मैं गुरु के दर्शन करके ही जीवित रहता हूँ। मैं गुरु के चरण धो–धोकर उस चरणामृत का पान करता हूँ॥ १॥ मैं गुरु की चरणधूलि में प्रतिदिन स्नान करता हूँ। यूं मैंने जन्म–जन्मांतरों के अहंकार की मैल को धो दिया है॥ २॥ उस गुरु को मैं पंखा करता हूँ। अपना हाथ देकर गुरु ने मुझे मोह–माया की महा अग्नि से बचा लिया है॥ ३॥ मैं उस गुरु के घर के लिए जल ढोता हूँ, जिन से मैंने ज्ञान का मार्ग समझा है॥ ४॥ उस गुरु के घर के लिए मैं सदा ही चक्की पीसता हूँ, जिसकी दया से मेरे तमाम शत्रु मित्र बन गए हैं॥ ५॥ जिस गुरु ने मुझे जीवन दिया है, उसने मुझे स्वयं खरीद लिया है और अपना सेवक बना लिया है॥ ६॥ गुरु ने मुझे स्वयं प्रेम की देन प्रदान की है। सदा–सदा मैं उस गुरु को प्रणाम करता रहता हूँ॥ ७॥ मेरे झगड़े, क्लेश, भय, भ्रम एवं तमाम दुःख दूर हो गए हैं। हे नानक! मेरा गुरदेव ऐसा शूरवीर है॥ ८॥ ९॥

गउड़ी महला ५ ॥ मिलु मेरे गोबिंद अपना नामु देहु ॥ नाम बिना ध्रिगु ध्रिगु असनेहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नाम बिना जो पहिरै खाइ ॥ जिउ कूकरु जूठन महि पाइ ॥ १ ॥ नाम बिना जेता बिउहारु ॥ जिउ मिरतक मिथिआ सीगारु ॥ २ ॥ नामु बिसारि करे रस भोग ॥ सुखु सुपनै नही तन महि रोग ॥ ३ ॥ नामु तिआगि करे अन काज ॥ बिनसि जाइ झूठे सभि पाज ॥ ४ ॥ नाम संगि मनि प्रीति न लावै ॥ कोटि करम करतो नरकि जावै ॥ ५ ॥ हरि का नामु जिनि मनि न आराधा ॥ चोर की निआई जम पुरि बाधा ॥ ६ ॥ लाख अडंबर बहुतु बिसथारा ॥ नाम बिना झूठे पासारा ॥ ७ ॥ हरि का नामु सोई जनु लेइ ॥ करि किरपा नानक जिसु देइ ॥ ८ ॥ १० ॥

हे मेरे गोबिन्द! मुझे दर्शन देकर अपना नाम प्रदान करो। नामविहीन सांसारिक प्रेम को धिक्कार है॥ १॥ रहाउ॥ भगवान के नाम बिना इन्सान जो कुछ पहनता एवं खाता रहता है, वह उस कुत्ते की तरह है जो जूठे पत्तलों में मुँह मारता रहता है॥ १॥ भगवान के नाम की स्मृति बिना समस्त कार्य–व्यवहार मृतक के हार–श्रृंगार की तरह व्यर्थ है॥ २॥ जो व्यक्ति नाम को भुलाकर भोग–विलास में पड़ता है, उसको स्वप्न में भी सुख नहीं मिलता और उसका शरीर रोगी हो जाता है॥ ३॥ प्रभु के नाम को त्याग कर यदि मनुष्य दूसरे काम धन्धे करता है, तो उसके झूठे आडम्बर सब के सब नाश हो जाते हैं॥ ४॥ जो इन्सान अपने हृदय में प्रभु का प्रेम नहीं लगाता, ऐसा व्यक्ति नरक में जाता है, चाहे वह करोड़ों ही कर्म–धर्म करता रहे॥ ५॥ जो व्यक्ति अपने हृदय में परमेश्वर के नाम की आराधना नहीं करता, वह यमलोक में चोर की भाँति पकड़ा जाता है॥ ६॥ लाखों ही आडम्बर एवं अनेक प्रसार, प्रभु के नाम बिना ये सब झूठे दिखावे हैं॥ ७॥ हे नानक! वही व्यक्ति भगवान के नाम का सिमरन करता है, जिस व्यक्ति को भगवान कृपा–दृष्टि करके देता है॥ ८॥ १०॥

गउड़ी महला ५ ॥ आदि मधि जो अंति निबाहै ॥ सो साजनु मेरा मनु चाहै ॥ १ ॥ हरि की प्रीति सदा संगि चालै ॥ दइआल पुरख पूरन प्रतिपालै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिनसत नाही छोडि न जाइ ॥ जह पेखा तह रहिआ समाइ ॥ २ ॥ सुंदरु सुघड़ु चतुरु जीअ दाता ॥ भाई पूतु पिता प्रभु माता ॥ ३ ॥ जीवन प्रान अधार मेरी रासि ॥ प्रीति लाई करि रिदै निवासि ॥ ४ ॥ माइआ सिलक काटी गोपालि ॥ करि अपुना लीनो नदरि निहालि ॥ ५ ॥ सिमरि सिमरि काटे सभि रोग ॥ चरण धिआन सरब सुख भोग ॥ ६ ॥ पूरन पुरखु नवतनु नित बाला ॥ हरि अंतरि बाहरि संगि रखवाला ॥ ७ ॥ कहु नानक हरि हरि पदु चीन ॥ सरबसु नामु भगत कउ दीन ॥ ८ ॥ ११ ॥

जो सृष्टि के आदि, मध्य, अंतकाल में जीव का साथ निभाता है, मेरा मन तो उस साजन–परमात्मा से मिलने का ही इच्छुक बना हुआ है॥ १॥ ईश्वर का प्रेम सदा प्राणी के साथ जाता है। सर्वव्यापक एवं दया का घर परमात्मा समस्त जीव–जन्तुओं का पालन पोषण करता है॥ १॥ रहाउ॥ प्रभु न ही कभी मरता है और न ही अपने प्राणियों को छोड़कर कहीं जाता है। जहाँ कहीं मैं देखता हूँ, वहाँ ईश्वर मौजूद है॥ २॥ ईश्वर अति सुन्दर, बुद्धिमान, चतुर एवं प्राणदाता है। वह ही मेरा भाई, पुत्र, पिता एवं माता है॥ ३॥ वह मेरा जीवन एवं प्राणों का आधार है और वही मेरी जीवन पूँजी है। मेरे ह्रदय में निवास करके प्रभु ने मेरे साथ प्रीति लगाई है॥ ४॥ सृष्टि के पालनहार गोपाल ने मेरा माया का बन्धन काट दिया है। मेरी ओर कृपा–दृष्टि से देखकर प्रभु ने मुझे अपना बना लिया है॥ ५॥ उसका सिमरन करने से तमाम रोग (दुःख) दूर हो गए हैं। उसके चरणों में वृत्ति लगा कर सर्व सुख प्राप्त कर लिए जाते हैं॥ ६॥ सर्वव्यापक प्रभु सदा नवांगतुक एवं यौवन सम्पन्न है। भीतर एवं बाहर ईश्वर ही मेरा रखवाला है। हे नानक! जो प्रभु–परमेश्वर के महान पद की अनुभूति करता है, उस भक्त को वह दुनिया का सर्वस्व अपने नाम के रूप में दे देता है॥ ८॥ ११॥

रागु गउड़ी माझ महला ५ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

खोजत फिरे असंख अंतु न पारीआ ॥ सेई होए भगत जिना किरपारीआ ॥ १ ॥ हउ वारीआ हरि वारीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुणि सुणि पंथु डराउ बहुतु भैहारीआ ॥ मै तकी ओट संताह लेहु उबारीआ ॥ २ ॥ मोहन लाल अनूप सरब साधारीआ ॥ गुर निवि निवि लागउ पाइ देहु दिखारीआ ॥ ३ ॥ मै कीए मित्र अनेक इकसु बलिहारीआ ॥ सभ गुण किस ही नाहि हरि पूर भंडारीआ ॥ ४ ॥ चहु दिसि जपीऐ नाउ सूखि सवारीआ ॥ मै आही ओड़ि तुहारि नानक बलिहारीआ ॥ ५ ॥ गुरि काढिओ भुजा पसारि मोह कूपारीआ ॥ मै जीतिओ जनमु अपारु बहुरि न हारीआ ॥ ६ ॥ मै पाइओ सरब निधानु अकथु कथारीआ ॥ हरि दरगह सोभावंत बाह लुडारीआ ॥ ७ ॥ जन नानक लधा रतनु अमोलु अपारीआ ॥ गुर सेवा भउजलु तरीऐ कहउ पुकारीआ ॥ ८ ॥ १२ ॥

असंख्य प्राणी भगवान को खोजते रहे हैं लेकिन किसी प्राणी को भी भगवान की महिमा का अन्त प्राप्त नहीं हुआ। जिन पर भगवान की कृपा–दृष्टि हो जाती है, ऐसे व्यक्ति ही भगवान के भक्त बनते हैं॥ १॥ हे मेरे प्रभु! मैं तुझ पर तन एवं मन से न्यौछावर हूँ॥ १॥ रहाउ॥ भवसागर भयानक मार्ग बारे सुन–सुन कर मैं अत्यंत भयभीत हो गया हूँ। अंतः मैंने संतों का सहारा लिया है। हे प्रभु के प्रिय जनो! आप मेरी रक्षा कीजिए॥ २॥ हे मन को मुग्ध करने वाले अनूप प्रभु! हे मोहन! तू समस्त जीवों को सहारा देने वाला है। मैं झुक–झुक कर गुरु के चरण स्पर्श करता हूँ। हे मेरे सतिगुरु! मुझे ईश्वर के

दर्शन कराओ॥ ३॥ मैंने अनेक मित्र बनाए हैं, लेकिन मैं केवल एक पर ही कुर्बान जाता हूँ। किसी में भी तमाम गुण विद्यमान नहीं। लेकिन भगवान गुणों का परिपूर्ण भण्डार है॥ ४॥ हे नानक! चारों ही दिशाओं में प्रभु के नाम का यश होता है। उसका यश करने वाले प्रसन्नता से सुशोभित होते हैं। (हे प्रभु!) मैंने तेरा ही सहारा देखा है और मैं (नानक) तुझ पर कुर्बान जाता हूँ॥ ५॥ अपनी भुजा आगे बढ़ाकर गुरु ने मुझे सांसारिक मोह के कुएँ में से बाहर निकाल लिया है। मैंने अनमोल मनुष्य जीवन विजय कर लिया है, जिसे मैं दुबारा नहीं हारुँगा॥ ६॥ मैंने सर्व भण्डार ईश्वर को पा लिया है, जिसकी कथा वर्णन से बाहर है। प्रभु के दरबार में शोभायमान होकर मैं प्रसन्नतापूर्वक अपनी भुजा लहराऊँगा॥ ७॥ नानक को अनन्त एवं अमूल्य रत्न मिल गया है कि गुरु की सेवा द्वारा भयानक संसार सागर पार किया जाता है। मैं सबको ऊँचा बोलकर यही बताता हूँ॥ ८॥ १२॥

गउड़ी महला ५ ੧ओं सतिगुर प्रसादि ॥

नाराइण हरि रंग रंगो ॥ जपि जिहवा हरि एक मंगो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तजि हउमै गुर गिआन भजो ॥ मिलि संगति धुरि करम लिखिओ ॥ १ ॥ जो दीसै सो संगि न गइओ ॥ साकतु मूड़ु लगे पचि मुइओ ॥ २ ॥ मोहन नामु सदा रवि रहिओ ॥ कोटि मधे किनै गुरमुखि लहिओ ॥ ३ ॥ हरि संतन करि नमो नमो ॥ नउ निधि पावहि अतुलु सुखो ॥ ४ ॥ नैन अलोवउ साध जनो ॥ हिरदै गावहु नाम निधो ॥ ५ ॥ काम क्रोध लोभु मोहु तजो ॥ जनम मरन दुहु ते रहिओ ॥ ६ ॥ दूखु अंधेरा घर ते मिटिओ ॥ गुरि गिआनु द्रिड़ाइओ दीप बलिओ ॥ ७ ॥ जिनि सेविआ सो पारि परिओ ॥ जन नानक गुरमुखि जगतु तरिओ ॥ ८ ॥ १ ॥ १३ ॥

हे जीव! अपने मन को नारायण प्रभु के प्रेम में रंग ले। अपनी जिह्वा से ईश्वर के नाम का जाप करता रह और केवल उसे ही मांग॥ १॥ रहाउ॥ अपना अहंकार त्यागकर गुरु के ज्ञान का चिन्तन करता रह। आदि से जिस मनुष्य के भाग्य में लिखा होता है, केवल वही संतों की संगति में मिलता है॥ १॥ जो कुछ भी दृष्टिगोचर होता है, वह मनुष्य के साथ नहीं जाता। भगवान से टूटा हुआ मूर्ख मनुष्य गल–सड़ कर मर जाता है॥ २॥ मुग्ध करने वाले मोहन का नाम सदा के लिए मौजूद है। करोड़ों में कोई विरला ही गुरु के माध्यम से नाम को प्राप्त करता है॥ ३॥ हे जीव! संतजनों को नमन करते रहो। इस तरह तुझे नौ भण्डार एवं अनन्त सुख प्राप्त हो जाएगा॥ ४॥ अपने नयनों से संतजनों के दर्शन करो। अपने हृदय में नाम–भण्डार का यश गायन करो॥ ५॥ हे जीव! कामवासना, क्रोध, लालच एवं सांसारिक मोह को त्याग दे। इस तरह जन्म–मरण दोनों के चक्र से मुक्ति प्राप्त हो जाएगी॥६॥ जब तेरे हृदय में गुरु ने ज्ञान दृढ़ कर दिया और प्रभु ज्योत प्रज्वलित कर दी तो तेरे हृदय घर से दुख का अन्धेरा निवृत्त हो जाएगा॥ ७॥ हे नानक! जिन्होंने भगवान की सेवा–भक्ति की है, वे भवसागर से पार हो गए हैं। गुरु के माध्यम से जगत् ही पार हो जाता है॥ ८॥ १॥ १३॥

महला ५ गउड़ी ॥ हरि हरि गुर गुर करत भरम गए ॥ मेरै मनि सभि सुख पाइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बलतो जलतो तउकिआ गुर चंदनु सीतलाइओ ॥ १ ॥ अगिआन अंधेरा मिटि गइआ गुर गिआनु दीपाइओ ॥ २ ॥ पावकु सागरु गहरो चरि संतन नाव तराइओ ॥ ३ ॥ ना हम करम न धरम सुच प्रभि गहि भुजा आपाइओ ॥ ४ ॥ भउ खंडनु दुख भंजनो भगति वछल हरि नाइओ ॥ ५ ॥ अनाथह नाथ क्रिपाल दीन संम्रिथ संत ओटाइओ ॥ ६ ॥ निरगुनीआरे की बेनती देहु दरसु हरि राइओ ॥ ७ ॥ नानक सरनि तुहारी ठाकुर सेवकु दुआरै आइओ ॥ ८ ॥ २ ॥ १४ ॥

हरि–परमेश्वर का सिमरन एवं गुरु को याद करते हुए मेरे भ्रम दूर हो गए हैं। मेरे मन ने सभी सुख प्राप्त कर लिए हैं॥ १॥ रहाउ॥ (कामादिक विकारों से) मेरे सुलगते एवं दग्ध मन पर गुरु जी ने (वाणी का) जल छिड़क दिया है। गुरु जी चन्दन की भाँति शीतल हैं॥ १॥ गुरु के ज्ञान की ज्योति से मेरा अज्ञानता का अँधेरा मिट गया है॥ २॥ (विकारों का) यह अग्नि सागर बहुत गहरा है, नाम की नैया पर सवार होकर सन्तजनों ने मेरा कल्याण कर दिया है॥ ३॥ हमारे पास शुभ कर्म, धर्म तथा पवित्रता नहीं। लेकिन फिर भी परमेश्वर ने भुजा से पकड़ कर मुझे अपना बना लिया है॥ ४॥ भगवान का नाम भय को नाश करने वाला, दुःख नाश करने वाला और भक्तवत्सल है॥ ५॥ परमेश्वर अनाथों का नाथ, दीनदयालु, सर्वशक्तिमान एवं संतजनों का सहारा है॥ ६॥ हे प्रभु पातशाह! मुझ गुणविहीन की यही प्रार्थना है कि मुझे अपने दर्शन दीजिए॥ ७॥ हे ठाकुर जी! नानक तेरी शरण में है और तेरा सेवक (नानक) तेरे द्वार पर आया है॥ ८॥ २॥ १४॥

गउड़ी महला ५ ॥ रंग संगि बिखिआ के भोगा इन संगि अंध न जानी ॥ १ ॥ हउ संचउ हउ खाटता सगली अवध बिहानी ॥ रहाउ ॥ हउ सूरा परधानु हउ को नाही मुझहि समानी ॥ २ ॥ जोबनवंत अचार कुलीना मन महि होइ गुमानी ॥ ३ ॥ जिउ उलझाइओ बाध बुधि का मरतिआ नही बिसरानी ॥ ४ ॥ भाई मीत बंधप सखे पाछे तिनहू कउ संपानी ॥ ५ ॥ जितु लागो मनु बासना अंति साई प्रगटानी ॥ ६ ॥ अहंबुधि सुचि करम करि इह बंधन बंधानी॥ ७॥ दइआल पुरख किरपा करहु नानक दास दसानी ॥ ८ ॥ ३ ॥ १५ ॥ ४४ ॥ जुमला

इन्सान दुनिया के विषय–विकारों के आनंद भोगने में डूब गया है तथा ज्ञानहीन (इन्सान) इन भोगों की संगति में फँसकर भगवान को नहीं जानता॥ १॥ वह कहता है कि "मैं माया एकत्र करता हूँ, मैं माया प्राप्त करता हूँ।" ऐसे ही उसकी सारी आयु बीत जाती है॥ रहाउ॥ वह कहता है, "मैं शूरवीर हूँ, मैं प्रधान हूँ, मेरे समान दूसरा कोई नहीं॥ २॥ वह कहता है, "मैं यौवन सम्पन्न, शुभ आचरण वाला एवं उच्च जाति का हूँ।" अपने हृदय में वह इस तरह अभिमानी बना हुआ है॥ ३॥ झूठी बुद्धि वाला इन्सान मोह–माया में फँसा रहता है, मृत्यु काल के समय भी वह अहंकार को नहीं भूलता॥ ४॥ वह मरने के पश्चात अपने भाई, मित्र, सगे–संबंधी एवं साथियों को ही अपनी दौलत–सम्पत्ति सौंप देता है॥ ५॥ जिस वासना से मन जुड़ा हुआ है, मृत्यु के समय आकर प्रकट होती है॥ ६॥ मनुष्य अहंबुद्धि से शुभ कर्म करता है। फिर वह इन बन्धनों में फँसा रहता है॥ ७॥ नानक का कथन है कि हे दयालु अकालपुरुष! मुझ पर अपनी कृपा करो और अपने दासों का दास बना लो॥ ८॥ ३॥ १५॥ ४४॥जोड़॥

१ओं सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥ रागु गउड़ी पूरबी छंत महला १ ॥ मुंध रैणि दुहेलड़ीआ जीउ नीद न आवै ॥ सा धन दुबलीआ जीउ पिर कै हावै ॥ धन थीई दुबलि कंत हावै केव नैणी देखए ॥ सीगार मिठ रस भोग भोजन सभु झूठु कितै न लेखए ॥ मै मत जोबनि गरबि गाली दुधा थणी न आवए ॥ नानक सा धन मिलै मिलाई बिनु पिर नीद न आवए ॥ १ ॥ मुंध निमानड़ीआ जीउ बिनु धनी पिआरे ॥ किउ सुखु पावैगी बिनु उर धारे ॥ नाह बिनु घर वासु नाही पुछहु सखी सहेलीआ ॥ बिनु नाम प्रीति पिआरु नाही वसहि साचि सुहेलीआ ॥ सचु मनि सजन संतोखि मेला गुरमती सहु जाणिआ ॥ नानक नामु न छोडै सा धन नामि सहजि समाणीआ ॥ २ ॥ मिलु सखी सहेलड़ीहो हम पिरु रावेहा ॥ गुर पुछि लिखउगी जीउ सबदि सनेहा ॥ सबदु साचा गुरि दिखाइआ मनमुखी पछुताणीआ ॥ निकसि जातउ रहै असथिरु जामि सचु पछाणिआ ॥ साच की मति सदा नउतन सबदि

नेहु नवेलओ ॥ नानक नदरी सहजि साचा मिलहु सखी सहेलीहो ॥ ३ ॥ मेरी इछ पुनी जीउ हम घरि साजनु आइआ ॥ मिलि वरु नारी मंगलु गाइआ ॥ गुण गाइ मंगलु प्रेमि रहसी मुंध मनि ओमाहओ ॥ साजन रहंसे दुसट विआपे साचु जपि सचु लाहओ ॥ कर जोड़ि सा धन करै बिनती रैणि दिनु रसि भिंनीआ ॥ नानक पिरु धन करहि रलीआ इछ मेरी पुंनीआ ॥ ४ ॥ १ ॥

पति—प्रभु की जुदाई में जीव—स्त्री के लिए रात्रि बड़ी दुखदायक है। अपने प्रियतम के वियोग में उसे नींद नहीं आती। अपने पति—प्रभु के विरह की वेदना में जीव—स्त्री कमजोर हो गई है। वह अपने पति—प्रभु के वियोग में यह कहती हुई कमजोर हो गई है, "मैं प्रियतम को अपने नेत्रों से किस तरह देखूँगी ? उसके लिए हार श्रृंगार, मीठे रस, काम—भोग एवं भोजन सभी झूठे हैं और किसी गणना में नहीं"। यौवन के अभिमान की मदिरा से मस्त हुई वह बर्बाद हो गई है। चोए हुए दुग्ध के दोबारा स्तनों में न आने की तरह उसको दोबारा अवसर नहीं मिलना। हे नानक ! जीव—स्त्री अपने प्रभु—पति से तभी मिल सकती है, यदि वह उसको अपने साथ मिलाता है। प्रभु—पति के बिना उसको नींद नहीं आती॥ १॥ अपने प्रियतम प्रभु के बिना जीव—स्त्री आदरहीन है। उसको अपने हृदय के साथ लगाए बिना वह सुख—शांति किस तरह प्राप्त कर सकती है ? पति—प्रभु के बिना घर रहने के योग्य नहीं चाहे अपनी सखियों—सहेलियों से पूछ लो। नाम के बिना कोई प्रीति एवं स्नेह नहीं। अपने सच्चे स्वामी के साथ वह सुख में वास करती है। सत्य एवं संतोष द्वारा मित्र (प्रभु) का मिलन प्राप्त होता है और गुरु के उपदेश द्वारा पति—परमेश्वर समझा जाता है। हे नानक ! जो दुल्हन (जीव—स्त्री) नाम को नहीं त्यागती, वह नाम के द्वारा प्रभु में लीन हो जाती है॥ २॥ आओ मेरी सखियो एवं सहेलियो ! हम अपने प्रियतम प्रभु का यश करें। मैं अपने गुरदेव से पूछूंगी और उनके उपदेश को अपने सन्देश के तौर पर लिखूंगी। सच्चा शब्द गुरु ने मुझे दिखा दिया है। लेकिन स्वेच्छाचारी पश्चाताप करेंगे। जब मैंने सत्य को पहचान लिया तो मेरा दौड़ता मन स्थिर हो गया है। सत्य का बोध हमेशा नवीन होता है और सत्य नाम का प्रेम सदैव नवीन रहता है। हे नानक ! सत्यस्वरूप परमेश्वर की कृपा—दृष्टि से सुख—शांति प्राप्त होती है। मेरी सखियो एवं सहेलियो ! उससे मिलो॥ ३॥ मेरी कामना पूरी हो गई है और मेरा साजन प्रभु मेरे (मन के) घर में आ गया है। पति व पत्नी के मिलन पर मंगलगीत गायन किया गया। पति—प्रभु की महिमा एवं प्रेम में मंगल (खुशी के) गीत गायन करने से जीव—स्त्री की आत्मा प्रसन्न हो गई है। मित्र प्रसन्न हैं और शत्रु (विकार) अप्रसन्न हैं। सद्पुरुष का भजन करने से सच्चा लाभ प्राप्त होता है। जीव—स्त्री हाथ जोड़कर विनती करती है कि रात—दिन वह अपने प्रभु के प्रेम में लीन रहे। हे नानक ! अब प्रियतम प्रभु एवं उसकी पत्नी (जीवात्मा) मिलकर आत्मिक आनन्द भोगते हैं और मेरी कामना पूर्ण हो गई है॥ ४॥ १॥

गउड़ी छंत महला १ ॥ सुणि नाह प्रभू जीउ एकलड़ी बन माहे ॥ किउ धीरैगी नाह बिना प्रभ वेपरवाहे ॥ धन नाह बाझहु रहि न साकै बिखम रैणि घणेरीआ॥ नह नीद आवै प्रेमु भावै सुणि बेनंती मेरीआ ॥ बाझहु पिआरे कोइ न सारे एकलड़ी कुरलाए ॥ नानक सा धन मिलै मिलाई बिनु प्रीतम दुखु पाए ॥ १ ॥ पिरि छोडिअड़ी जीउ कवणु मिलावै ॥ रसि प्रेमि मिली जीउ सबदि सुहावै ॥ सबदे सुहावै ता पति पावै दीपक देह उजारै ॥ सुणि सखी सहेली साचि सुहेली साचे के गुण सारै ॥ सतिगुरि मेली ता पिरि रावी बिगसी अंम्रित बाणी ॥ नानक सा धन ता पिरु रावे जा तिस कै मनि भाणी ॥ २ ॥ माइआ मोहणी नीघरीआ जीउ कूड़ि मुठी कूड़िआरे ॥ किउ खूलै गल जेवड़ीआ जीउ बिनु गुर अति पिआरे ॥ हरि प्रीति पिआरे सबदि वीचारे तिस ही का सो होवै ॥ पुंन दान अनेक नावण किउ अंतर मलु धोवै ॥ नाम बिना गति कोइ न पावै हठि निग्रहि बेबाणै ॥ नानक सच घरु सबदि सिञापै दुबिधा

महलु कि जाणै ॥ ३ ॥ तेरा नामु सचा जीउ सबदु सचा वीचारो ॥ तेरा महलु सचा जीउ नामु सचा वापारो ॥ नाम का वापारु मीठा भगति लाहा अनदिनो ॥ तिसु बाझु वखरु कोइ न सूझै नामु लेवहु खिनु खिनो ॥ परखि लेखा नदरि साची करमि पूरै पाइआ ॥ नानक नामु महा रसु मीठा गुरि पूरै सचु पाइआ ॥ ४ ॥ २ ॥

हे मेरे पूज्य परमेश्वर ! सुनो, मैं (जीवात्मा) इस वीराने (संसार) में अकेली हूँ। हे मेरे बेपरवाह प्रभु ! मैं तेरे बिना किस तरह धैर्य कर सकती हूँ ? जीव–स्त्री अपने पति (प्रभु) के बिना नहीं रह सकती। उसके लिए रात्रि बड़ी विषम है। हे मेरे प्रियतम पति ! आप मेरी प्रार्थना सुनो, मुझे (आपके बिना) नींद नहीं आती। मेरा प्रियतम ही मुझे लुभाता है। हे मेरे प्रियतम ! तेरे अलावा कोई भी मुझे नहीं पूछता। वीराने (संसार) में मैं अकेली रोती हूँ। हे नानक ! अपने प्रियतम के बिना जीव–स्त्री बड़े कष्ट सहन करती है। वह उसको केवल तभी मिलती है, जब वह अपने साथ मिलाता है॥ १॥ पति की त्यागी हुई नारी को उसके स्वामी से कौन मिला सकता है ? प्रभु–प्रेम एवं सुन्दर नाम का स्वाद लेने से वह अपने पूज्य पति को मिल जाती है। जब जीव–स्त्री नाम से श्रृंगारी जाती है, तो वह अपने पति को पा लेती है और उसकी काया ज्ञान के दीपक से उज्जवल हो जाती है। हे मेरी सखी–सहेली ! सुन, अपने सत्यस्वरूप स्वामी एवं सच्चे की महानताएँ स्मरण करके जीव–स्त्री सुखी हो जाती है। जब सतिगुरु ने अपनी वाणी में मिलाया तो प्रभु–पति ने उसे चरण–कंवलों में मिला लिया। अमृतमयी वाणी से वह प्रफुल्लित हो गई है। हे नानक ! प्रियतम अपनी पत्नी को तभी प्रेम करता है, जब उसके हृदय को वह लुभाती है॥ २॥ मोहित करने वाली मोहिनी ने उसको बेघर कर दिया है। झूठी को झूठ ने ठग लिया है। परम प्रिय गुरु के बिना उसकी गर्दन के पास वाला फँदा किस तरह खुल सकता है ? जो प्रिय प्रभु को प्रेम करता एवं उसके नाम का भजन करता है, वह उसका हो जाता है। दान–पुण्य करने एवं अधिकतर तीर्थों पर स्नान अन्तर्मन की मलिनता को किस तरह धो सकते हैं ? नाम के बिना किसी को भी मोक्ष नहीं मिलता। दुः साध्य इन्द्रियों को रोकने का प्रयत्न एवं वीराने में निवास का कोई लाभ नहीं। हे नानक ! सत्यस्वरूप परमात्मा का दरबार गुरु की वाणी द्वारा पहचाना जाता है। दुविधा से यह दरबार किस तरह जाना जा सकता है ?॥ ३॥ हे पूज्य परमेश्वर ! तेरा नाम सत्य है और तेरे नाम का भजन सत्य है। हे प्रभु ! तेरा दरबार सत्य है, तेरे नाम का व्यापार भी सत्य है। हे ईश्वर ! तेरे नाम का व्यापार बहुत मधुर है। तेरे भक्त दिन–रात इससे लाभ प्राप्त करते हैं। इसके अलावा मैं किसी और सौदे का ख्याल नहीं कर सकता। क्षण–क्षण प्रभु के नाम का भजन करो। सत्यस्वरूप परमेश्वर की दया एवं पूर्ण सौभाग्य से प्राणी ऐसे हिसाब की जाँच करके प्रभु को प्राप्त कर लेता है। हे नानक ! नाम अमृत का महारस बड़ा मीठा है और पूर्ण गुरु के द्वारा ही सत्य प्राप्त होता है॥ ४॥ २॥

रागु गउड़ी पूरबी छंत महला ३ १ओं सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

सा धन बिनउ करे जीउ हरि के गुण सारे ॥ खिनु पलु रहि न सकै जीउ बिनु हरि पिआरे ॥ बिनु हरि पिआरे रहि न साकै गुर बिनु महलु न पाईऐ ॥ जो गुरु कहै सोई परु कीजै तिसना अगनि बुझाईऐ ॥ हरि साचा सोई तिसु बिनु अवरु न कोई बिनु सेविऐ सुखु न पाए ॥ नानक सा धन मिलै मिलाई जिस नो आपि मिलाए ॥ १ ॥ धन रैणि सुहेलड़ीए जीउ हरि सिउ चितु लाए ॥ सतिगुरु सेवे भाउ करे जीउ विचहु आपु गवाए ॥ विचहु आपु गवाए हरि गुण गाए अनदिनु लागा भाओ ॥ सुणि सखी सहेली जीअ की मेली गुर कै सबदि समाओ ॥ हरि गुण सारी ता कंत पिआरी नामे धरी पिआरो ॥ नानक कामणि नाह पिआरी राम नामु गलि हारो ॥ २ ॥ धन एकलड़ी जीउ बिनु नाह पिआरे ॥ दूजै

भाइ मुठी जीउ बिनु गुर सबद करारे ॥ बिनु सबद पिआरे कउणु दुतरु तारे माइआ मोहि खुआई ॥ कूड़ि विगुती ता पिरि मुती सा धन महलु न पाई ॥ गुर सबदे राती सहजे माती अनदिनु रहै समाए ॥ नानक कामणि सदा रंगि राती हरि जीउ आपि मिलाए ॥ ३ ॥ ता मिलीऐ हरि मेले जीउ हरि बिनु कवणु मिलाए ॥ बिनु गुर प्रीतम आपणे जीउ कउणु भरमु चुकाए ॥ गुरु भरमु चुकाए इउ मिलीऐ माए ता सा धन सुखु पाए ॥ गुर सेवा बिनु घोर अंधारु बिनु गुर मगु न पाए ॥ कामणि रंगि राती सहजे माती गुर कै सबदि वीचारे ॥ नानक कामणि हरि वरु पाइआ गुर कै भाइ पिआरे ॥ ४ ॥ १ ॥

जीवात्मा अपने परमेश्वर के आगे विनती करती एवं उसके गुणों को स्मरण करती है। जीवात्मा एक क्षण–पल मात्र भी अपने प्रियतम प्रभु के बिना नहीं रह सकती। अपने प्रियतम प्रभु के दर्शनों बिना जीवात्मा नहीं रह सकती। गुरु जी के बिना उसे प्रभु का मन्दिर प्राप्त नहीं होता। गुरु जी जो कुछ भी वर्णन करते हैं, वह उसको निश्चित ही करना चाहिए। क्योंकि तृष्णा की अग्नि तभी बुझ सकती है। एक ईश्वर ही सत्य है और उसके अलावा दूसरा कोई नहीं। प्रभु की सेवा–भक्ति के बिना सुख प्राप्त नहीं होता। हे नानक ! वहीं जीवात्मा गुरु की मिलाई हुई परमात्मा से मिल सकती है, जिसे परमात्मा स्वयं कृपा करके अपने साथ मिलाता है॥ १॥ उस जीवात्मा की रात्रि सुन्दर हो जाती है, जो ईश्वर से अपने मन को जोड़ती है। वह सतिगुरु की प्रेमपूर्वक सेवा करती है। वह अपनी अन्तरात्मा से अहंत्व को निवृत्त कर देती है। अपनी अन्तरात्मा से अहंत्व को दूर करके और ईश्वर की गुणस्तुति करके वह दिन रात प्रभु से प्रेम करती है। हे मेरी सखी सहेली ! हे मेरे मन की संगिनी ! तू गुरु के शब्द में लीन हो जा। यदि तू प्रभु के गुणों को स्मरण करेगी तो तू अपने पति की प्रिया हो जाओगी और तेरा प्रेम नाम के साथ हो जाएगा। हे नानक ! जिस जीवात्मा के गले में राम के नाम की माला विद्यमान है, वह अपने पति–प्रभु की प्रियतमा है॥ २॥ अपने प्रियतम पति के बिना जीवात्मा बिल्कुल अकेली है। कारगर (इष्ट फलप्रद) गुरु के शब्द के बिना वह द्वैतवाद के प्रेम कारण ठगी गई है। शब्द के बिना उसको विषम सागर से कौन पार कर सकता है ? माया के मोह ने उसको कुमार्गगामी कर दिया है। जब झूठ ने उसको नष्ट कर दिया तो पति–प्रभु ने उसको त्याग दिया। फिर जीवात्मा प्रभु का महल प्राप्त नहीं करती। लेकिन जो जीवात्मा गुरु के शब्द में अनुरक्त है, वह प्रभु के प्रेम में मतवाली हो जाती है और दिन–रात उस में लीन रहती है। हे नानक ! जो जीवात्मा उसके प्रेम में सदा अनुरक्त रहती है, पूज्य परमेश्वर उस कामिनी (जीवात्मा) को अपने साथ मिला लेता है॥ ३॥ यदि ईश्वर अपने साथ मिलाए तो ही हम उसको मिल सकते हैं। ईश्वर के बिना कौन हमें उससे मिला सकता है ? अपने प्रियतम गुरु के बिना हमारी दुविधा कौन दूर कर सकता है ? गुरु के द्वारा दुविधा निवृत्त हो जाती है। हे मेरी माता ! यह है विधि ईश्वर से मिलने की और इस तरह दुल्हन (जीवात्मा) सुख प्राप्त करती है। गुरु की सेवा के अलावा घनघोर अन्धकार है। गुरु के (मार्गदर्शन) बिना मार्ग नहीं मिलता। जो जीवात्मा प्रभु रंग में लीन है, वह गुरु के शब्द का चिन्तन करती है। हे नानक ! प्रियतम गुरु से प्रेम पाकर जीवात्मा ने प्रभु को अपने पति के तौर पर पा लिया है॥ ४॥ १॥

गउड़ी महला ३ ॥ पिर बिनु खरी निमाणी जीउ बिनु पिर किउ जीवा मेरी माई ॥ पिर बिनु नीद न आवै जीउ कापड़ु तनि न सुहाई ॥ कापरु तनि सुहावै जा पिर भावै गुरमती चितु लाईऐ ॥ सदा सुहागणि जा सतिगुरु सेवे गुर कै अंकि समाईऐ ॥ गुर सबदै मेला ता पिरु रावी लाहा नामु संसारे ॥ नानक कामणि नाह पिआरी जा हरि के गुण सारे ॥ १ ॥ सा धन रंगु माणे जीउ आपणे नालि पिआरे ॥ अहिनिसि रंगि राती जीउ गुर सबदु वीचारे ॥ गुर सबदु वीचारे हउमै मारे इन बिधि मिलहु पिआरे ॥

सा धन सोहागणि सदा रंगि राती साचै नामि पिआरे ॥ अपुने गुर मिलि रहीऐ अंम्रितु गहीऐ दुबिधा मारि निवारे ॥ नानक कामणि हरि वरु पाइआ सगले दूख विसारे ॥ २ ॥ कामणि पिरहु भुली जीउ माइआ मोहि पिआरे ॥ झूठी झूठि लगी जीउ कूड़ि मुठी कूड़िआरे ॥ कूड़ु निवारे गुरमति सारे जूऐ जनमु न हारे ॥ गुर सबदु सेवे सचि समावै विचहु हउमै मारे ॥ हरि का नामु रिदै वसाए ऐसा करे सीगारो ॥ नानक कामणि सहजि समाणी जिसु साचा नामु अधारो ॥ ३ ॥ मिलु मेरे प्रीतमा जीउ तुधु बिनु खरी निमाणी ॥ मै नैणी नीद न आवै जीउ भावै अंनु न पाणी ॥ पाणी अंनु न भावै मरीऐ हावै बिनु पिर किउ सुखु पाईऐ ॥ गुर आगै करउ बिनंती जे गुर भावै जिउ मिलै तिवै मिलाईऐ ॥ आपे मेलि लए सुखदाता आपि मिलिआ घरि आए ॥ नानक कामणि सदा सुहागणि ना पिरु मरै न जाए ॥ ४ ॥ २ ॥

हे मेरी माता ! प्रभु–पति के बिना मैं बहुत लज्जाजनक–सी हूँ। मैं अपने स्वामी के बिना किस तरह जीवित रह सकती हूँ ? अपने पति के बिना मुझे नींद नहीं आती और कोई वस्त्र मेरे शरीर को शोभा नहीं देता। जब मैं अपने पति–प्रभु को अच्छी लगती हूँ तो मेरे शरीर पर वस्त्र बहुत शोभा देते हैं, गुरु के उपदेश से मेरा चित्त उससे एक ताल में हो गया है। यदि वह सतिगुरु की श्रद्धा से सेवा करे तो सदा सुहागिन हो जाती है और गुरु जी के अंक में लीन हो जाती है। यदि वह गुरु के शब्द द्वारा अपने प्रियतम से मिल जाए तो वह उसको प्रेम करता है। इस संसार में केवल नाम ही एक लाभदायक काम है। हे नानक ! जब जीवात्मा प्रभु की गुणस्तुति करती है तो वह अपने प्रभु–पति को अच्छी लगने लग जाती है॥ १॥ अपने प्रियतम के साथ पत्नी (जीवात्मा) उसके प्रेम का आनन्द प्राप्त करती है। वह दिन–रात उसके प्रेम में अनुरक्त हुई, गुरु के शब्द का चिन्तन करती है। वह गुरु के शब्द का ध्यान करती है, तथा अपने अहंत्व को मिटा देती है और यूं अपने प्रियतम प्रभु से मिल जाती है। जो जीवात्मा मधुर सत्यनाम के प्रेम में सदैव ही अनुरक्त है, वह अपने पति–प्रभु की प्रियतमा हो जाती है। अपने गुरु की संगति में रहने से हम नाम अमृत को ग्रहण कर लेते हैं और अपनी दुविधा का नाश करते हैं। हे नानक ! ईश्वर को अपने पति के तौर पर प्राप्त करके दुल्हन को तमाम दुःख भूल गए हैं॥ २॥ माया के मोह एवं लगाव के कारण पत्नी (जीवात्मा) अपने प्रियतम पति को भूल गई है। झूठी पत्नी (जीवात्मा) झूठ से जुड़ी हुई है। कपटी नारी कपट ने छल ली है। जो जीवात्मा असत्य त्याग देती है और गुरु के उपदेश पर अनुसरण करती है, वह अपने जीवन को जुए में नहीं हारती। जो जीवात्मा गुरु के शब्द का चिन्तन करती है, वह अपनी अन्तरात्मा से अहंत्व को दूर कर के सत्य में लीन हो जाती है। (हे जीवात्मा !) प्रभु के नाम को अपने हृदय मे बसा, तू ऐसा हार–शृंगार कर। हे नानक ! जिस दुल्हन का सहारा सत्य-नाम है, वह सहज ही स्वामी में लीन हो जाती है॥ ३॥ हे मेरे प्रियतम ! मुझे दर्शन दीजिए। तेरे बिना मैं बहुत ही बेइज्जत हूँ। मेरे नयनों में नींद नहीं आती और भोजन व जल मुझे अच्छे नहीं लगते और मैं उसके विरह के शोक से मर रही हूँ। अपने प्रियतम पति के बिना सुख किस तरह मिल सकता है ? मैं गुरु के समक्ष विनती करती हूँ यदि उनको अच्छा लगे। जैसे भी वह मिला सकता है, मुझे अपने साथ मिला ले। सुखों के दाता, प्रभु ने मुझे अपने साथ मिला लिया है और वह स्वयं ही मेरे हृदय घर में आकर मुझे मिल गया है। हे नानक ! ऐसी जीव–स्त्री हमेशा के लिए अपने पति–प्रभु की सौभाग्यवती है। प्रियतम प्रभु न कभी मरता है और न ही अलग होता है॥ ४॥ २॥

गउड़ी महला ३ ॥ कामणि हरि रसि बेधी जीउ हरि कै सहजि सुभाए ॥ मनु मोहनि मोहि लीआ जीउ दुबिधा सहजि समाए ॥ दुबिधा सहजि समाए कामणि वरु पाए गुरमती रंगु लाए ॥ इहु सरीरु

कूड़ि कुसति भरिआ गल ताई पाप कमाए ॥ गुरमुखि भगति जितु सहज धुनि उपजै बिनु भगती मैलु न जाए ॥ नानक कामणि पिरहि पिआरी विचहु आपु गवाए ॥ १ ॥ कामणि पिरु पाइआ जीउ गुर कै भाइ पिआरे ॥ रैणि सुखि सुती जीउ अंतरि उरि धारे ॥ अंतरि उरि धारे मिलीऐ पिआरे अनदिनु दुखु निवारे ॥ अंतरि महलु पिरु रावे कामणि गुरमती वीचारे ॥ अंम्रितु नामु पीआ दिन राती दुबिधा मारि निवारे ॥ नानक सचि मिली सोहागणि गुर कै हेति अपारे ॥ २ ॥ आवहु दइआ करे जीउ प्रीतम अति पिआरे ॥ कामणि बिनउ करे जीउ सचि सबदि सीगारे ॥ सचि सबदि सीगारे हउमै मारे गुरमुखि कारज सवारे ॥ जुगि जुगि एको सचा सोई बूझै गुर बीचारे ॥ मनमुखि कामि विआपी मोहि संतापी किसु आगै जाइ पुकारे ॥ नानक मनमुखि थाउ न पाए बिनु गुर अति पिआरे ॥ ३ ॥ मुंध इआणी भोली निगुणीआ जीउ पिरु अगम अपारा ॥ आपे मेलि मिलीऐ जीउ आपे बखसणहारा ॥ अवगण बखसणहारा कामणि कंतु पिआरा घटि घटि रहिआ समाई ॥ प्रेम प्रीति भाइ भगती पाईऐ सतिगुर बूझ बुझाई ॥ सदा अनंदि रहै दिन राती अनदिनु रहै लिव लाई ॥ नानक सहजे हरि वरु पाइआ सा धन नउ निधि पाई ॥ ४ ॥ ३ ॥

जीव–स्त्री सहज–स्वभाव ही हरि–रस में बिंध गई है। मनमोहन प्रभु ने उसको मुग्ध कर दिया है और उसकी दुविधा सहज ही नाश हो गई है। जीव–स्त्री सहज ही अपनी दुविधा निवृत्त करके और अपने पति–प्रभु को प्राप्त होकर गुरु के उपदेश द्वारा आनन्द प्राप्त करती है। यह शरीर गले तक झूठ एवं असत्य से भरा हुआ है और पाप करता रहता है। गुरु के माध्यम से भक्ति करने से ही सहज ध्वनि उत्पन्न होती है। प्रभु की भक्ति के बिना (विकारों की) मैल दूर नहीं होती। हे नानक! जो जीव–स्त्री अपने अहंकार को अपनी अन्तरात्मा से निकाल देती है, वह अपने प्रियतम की प्रिया हो जाती है॥ १॥ गुरु की प्रीति एवं प्रेम द्वारा पत्नी ने अपना प्रियतम स्वामी प्राप्त कर लिया है। गुरु को अपनी अन्तरात्मा एवं हृदय से लगाने से वह रात को सुख से सोती है। गुरु को अपनी अन्तरात्मा एवं हृदय में रात–दिन टिकाने से वह अपने प्रियतम से मिल जाती है और उसके दुःख दूर हो जाते हैं। गुरु के उपदेश का चिन्तन करने से अपने हृदय–मन्दिर में दुल्हन अपने दुल्हे (प्रभु) का प्रेम पाती है। दिन–रात वह नाम अमृत का पान करती है और अपनी दुविधा का नाश करती है। हे नानक! गुरु के अनन्त प्रेम द्वारा सौभाग्यवती पत्नी अपने सत्यस्वरूप स्वामी को मिल जाती है॥ २॥ हे मेरे प्रियतम! अपनी दया करो और मुझे अपने दर्शन प्रदान करें। उसको सत्य नाम से सुशोभित करने के लिए पत्नी (जीवात्मा) तुझे प्रार्थना करती है। सत्य नाम से श्रृंगारी हुई जीव–स्त्री अपने अहंकार को मिटा देती है और गुरु के माध्यम से उसके काम संवर जाते हैं। युग–युगों में वह एक प्रभु ही सत्य है और गुरु के प्रदान किए हुए विचार द्वारा वह जाना जाता है। स्वेच्छाचारी जीव–स्त्री कामवासना के विलास में लीन एवं सांसारिक मोह की पीड़ित की हुई है। वह किसके समक्ष जाकर पुकार करे? हे नानक! परम प्यारे गुरु के बिना स्वेच्छाचारी नारी को कोई सुख का ठिकाना नहीं मिलता॥ ३॥ जीव–स्त्री मूर्ख, भोली एवं गुणविहीन है। पति–प्रभु अगम्य एवं अनन्त है। ईश्वर स्वयं ही अपने मिलन में मिलाता है और स्वयं ही क्षमाशील है। जीव–स्त्री का प्रियतम पति दोषों को क्षमा करने वाला है और कण–कण में मौजूद है। गुरु ने मुझे यह बोध विदित कर दिया है कि प्रभु प्रेम, प्रीति एवं भक्ति द्वारा पाया जाता है। जो जीव–स्त्री अपने पति के स्नेह में रात–दिन लीन रहती है, वह रात–दिन प्रसन्न रहती है। हे नानक! जो जीव–स्त्री नाम के नौ भण्डार (नवनिधि) प्राप्त कर लेती है, वह सहज ही ईश्वर को अपने पति के तौर पर पा लेती है॥ ४॥ ३॥

गउड़ी महला ३॥ माइआ सरु सबलु वरतै जीउ किउ करि दुतरु तरिआ जाइ ॥ राम नामु करि बोहिथा जीउ सबदु खेवटु विचि पाइ ॥ सबदु खेवटु विचि पाए हरि आपि लघाए इन बिधि दुतरु तरीऐ ॥ गुरमुखि भगति परापति होवै जीवतिआ इउ मरीऐ ॥ खिन महि राम नामि किलविख काटे भए पवितु सरीरा ॥ नानक राम नामि निसतारा कंचन भए मनूरा ॥ १ ॥ इसतरी पुरख कामि विआपे जीउ राम नाम की बिधि नही जाणी ॥ मात पिता सुत भाई खरे पिआरे जीउ डूबि मुए बिनु पाणी ॥ डूबि मुए बिनु पाणी गति नही जाणी हउमै धातु संसारे ॥ जो आइआ सो सभु को जासी उबरे गुर वीचारे ॥ गुरमुखि होवै राम नामु वखाणै आपि तरै कुल तारे ॥ नानक नामु वसै घट अंतरि गुरमति मिले पिआरे ॥ २ ॥ राम नाम बिनु को थिरु नाही जीउ बाजी है संसारा ॥ द्रिड़ु भगति सची जीउ राम नामु वापारा ॥ राम नामु वापारा अगम अपारा गुरमती धनु पाईऐ ॥ सेवा सुरति भगति इह साची विचहु आपु गवाईऐ ॥ हम मति हीण मूरख मुगध अंधे सतिगुरि मारगि पाए ॥ नानक गुरमुखि सबदि सुहावे अनदिनु हरि गुण गाए ॥ ३ ॥ आपि कराए करे आपि जीउ आपे सबदि सवारे ॥ आपे सतिगुरु आपि सबदु जीउ जुगु जुगु भगत पिआरे ॥ जुगु जुग भगत पिआरे हरि आपि सवारे आपे भगती लाए ॥ आपे दाना आपे बीना आपे सेव कराए ॥ आपे गुणदाता अवगुण काटे हिरदै नामु वसाए ॥ नानक सद बलिहारी सचे विटहु आपे करे कराए ॥ ४ ॥ ४ ॥

माया का सागर अत्याधिक हलचल मचा रहा है, भयानक जगत् सागर किस तरह पार किया जा सकता है ? (हे प्राणी !) ईश्वर के नाम का जहाज बना और गुरु के शब्द को नाविक (मल्लाह) के तौर पर इसमें रख। जब गुरु के शब्द का नाविक (मल्लाह) उसमें रख लिया जाता है तो ईश्वर स्वयं भवसागर से पार कर देता है। इस विधि से अगम्य सागर पार किया जाता है। गुरु के माध्यम से ही प्रभु की भक्ति प्राप्त होती है और इस तरह मनुष्य जीवित ही मोह—माया से मृत रहता है। एक क्षण में ही राम का नाम उसके पाप मिटा देता है और उसका शरीर पवित्र हो जाता है। हे नानक ! राम के नाम द्वारा उद्धार हो जाता है और मन शुद्ध हो जाता है॥ १॥ स्त्री एवं पुरुष भोग—विलास में फँसे हुए हैं और राम के नाम का भजन करने की विधि नहीं जानते। माता, पिता, पुत्र एवं भाई सर्वप्रिय हैं और वह जल के बिना ही (मोह में) डूबकर मरते हैं। जो प्राणी मोक्ष के मार्ग को नहीं जानते और अहंकार में जगत् के अन्दर भटकते रहते हैं, वे जल के बिना ही डूबकर प्राण त्याग देते हैं। जो कोई भी इस संसार में आए हैं, वे सभी चले जाएँगे। लेकिन जो गुरु जी का चिन्तन करते हैं, उनका उद्धार हो जाता है। जो व्यक्ति गुरमुख बनकर राम के नाम का भजन करता है, ऐसा व्यक्ति स्वयं पार हो जाता है और अपने समूचे वंश का भी उद्धार कर लेता है। हे नानक ! नाम उसकी अन्तरात्मा में वास कर जाता है और गुरु के उपदेश द्वारा वह प्रियतम से मिल जाता है॥ २॥ राम के नाम बिना कुछ भी स्थिर नहीं। यह संसार एक लीला ही है। भगवान की भक्ति को अपने हृदय में सुदृढ़ कर और केवल राम के नाम का ही व्यापार कर। राम के नाम का व्यापार अगम्य एवं अनन्त है। गुरु के उपदेश द्वारा प्रभु नाम रूपी धन प्राप्त हो जाता है। भगवान की सेवा, भगवान में सुरति लगाना और भगवान की भक्ति ही सत्य है, जिससे हम अपने अन्तर्मन से अहंत्व को दूर कर सकते हैं। हम जीव बुद्धिहीन, मूर्ख, बेवकूफ, माया—मोह में अन्धे हैं। सतिगुरु ने हमें सन्मार्ग दिखा दिया है। हे नानक ! गुरुमुख ही शब्द से सुन्दर बने हैं और वे हमेशा ही भगवान की महिमा—स्तुति करते रहते है॥ ३॥ प्रभु स्वयं ही करता है और स्वयं ही जीवों से करवाता है। वह स्वयं ही मनुष्य को अपने नाम से संवारता है। ईश्वर स्वयं सतिगुरु है और स्वयं ही शब्द है। युग—युग में प्रभु के भक्त उसके प्रिय हैं। युग—युग में वह अपने

प्रिय भक्तों को स्वयं शोभायमान करता है। वह स्वयं ही उनको अपनी भक्ति में लगाता है। वह स्वयं ही परम बुद्धिमान और स्वयं ही सब कुछ देखने वाला है। वह स्वयं ही मनुष्य से अपनी भक्ति करवाता है। प्रभु स्वयं ही गुणों का दाता है और बुराईयों का नाश करता है। अपने नाम को वह स्वयं ही मनुष्य के हृदय में बसाता है। हे नानक! मैं उस सत्य के पुंज ईश्वर पर हमेशा कुर्बान जाता हूँ, जो स्वयं ही सब कुछ करता और जीवों से करवाता है॥ ४॥ ४॥

गउड़ी महला ३ ॥ गुर की सेवा करि पिरा जीउ हरि नामु धिआए ॥ मंञहु दूरि न जाहि पिरा जीउ घरि बैठिआ हरि पाए ॥ घरि बैठिआ हरि पाए सदा चितु लाए सहजे सति सुभाए ॥ गुर की सेवा खरी सुखाली जिस नो आपि कराए ॥ नामो बीजे नामो जंमै नामो मंनि वसाए ॥ नानक सचि नामि वडिआई पूरबि लिखिआ पाए ॥ १ ॥ हरि का नामु मीठा पिरा जीउ जा चाखहि चितु लाए ॥ रसना हरि रसु चाखु मुये जीउ अन रस साद गवाए ॥ सदा हरि रसु पाए जा हरि भाए रसना सबदि सुहाए ॥ नामु धिआए सदा सुखु पाए नामि रहै लिव लाए ॥ नामे उपजै नामे बिनसै नामे सचि समाए ॥ नानक नामु गुरमती पाईऐ आपे लए लवाए ॥ २ ॥ एह विडाणी चाकरी पिरा जीउ धन छोडि परदेसि सिधाए ॥ दूजै किनै सुखु न पाइओ पिरा जीउ बिखिआ लोभि लुभाए ॥ बिखिआ लोभि लुभाए भरमि भुलाए ओहु किउ करि सुखु पाए ॥ चाकरी विडाणी खरी दुखाली आपु वेचि धरमु गवाए ॥ माइआ बंधन टिकै नाही खिनु खिनु दुखु संताए ॥ नानक माइआ का दुखु तदे चूकै जा गुर सबदी चितु लाए ॥ ३ ॥ मनमुख मुगध गावारु पिरा जीउ सबदु मनि न वसाए ॥ माइआ का भ्रमु अंधु पिरा जीउ हरि मारगु किउ पाए ॥ किउ मारगु पाए बिनु सतिगुर भाए मनमुखि आपु गणाए ॥ हरि के चाकर सदा सुहेले गुर चरणी चितु लाए ॥ जिस नो हरि जीउ करे किरपा सदा हरि के गुण गाए ॥ नानक नामु रतनु जगि लाहा गुरमुखि आपि बुझाए ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७ ॥

हे मेरे प्रिय मन! गुरु की सेवा और भगवान के नाम का ध्यान करते रहो। हे मेरे प्रिय मन! मुझसे दूर मत जाना और हृदय–घर में बैठकर ही तू अपने ईश्वर को प्राप्त कर ले। सहज ही सत्य से हमेशा प्रभु से अपनी वृत्ति लगाने से तू अपने हृदय–घर में बसता हुआ उसे प्राप्त कर लेगा। गुरु की सेवा बड़ी सुखदायक है। गुरु की सेवा केवल वही व्यक्ति करता है, जिससे प्रभु स्वयं करवाता है। वह नाम को बोता है, नाम उसके भीतर अंकुरित होता है और नाम को ही वह अपने हृदय में बसा लेता है। हे नानक! सत्य नाम से ही शोभा प्राप्त होती है। मनुष्य वही प्राप्त करता है, जो विधाता के विधान द्वारा उसके लिए लिखा होता है॥ १॥ हे मेरे प्रिय मन! ईश्वर का नाम मधुर है। (लेकिन यह बोध तभी तुझे होगा) जब तू चित्त से लगा कर इसे (नाम–रस) चखोगे। हे प्राणघातक! अपनी जिह्वा से हरि रस चख और दूसरे रसों के आस्वादन त्याग दे। जब प्रभु को अच्छा लगेगा, तू हरि–रस को सदैव के लिए पा लोगे और तेरी जिह्वा उसके नाम से सुहावनी हो जाएगी। जो व्यक्ति नाम का ध्यान करता है और अपनी वृत्ति नाम पर केन्द्रित रखता है, वह सदैव सुख पा लेता है। प्रभु की इच्छा से प्राणी संसार में जन्म लेता है, उसकी इच्छा से ही वह प्राण त्याग देता है और उसकी इच्छा से ही वह सत्य में समा जाता है। हे नानक! नाम गुरु की शिक्षा द्वारा प्राप्त होता है। अपने नाम से वह स्वयं ही मिलाता है॥ २॥ हे प्रिय मन! किसी दूसरे की सेवा बुरी है। पत्नी को त्याग कर तुम परदेस चले गए हो। हे प्रिय मन! द्वैतवाद में कभी किसी ने सुख नहीं पाया। तुम पाप एवं लालच की तृष्णा करते हो। जो विष एवं लोभ के बहकाए हुए हैं और भ्रम में कुमार्गगामी हो गए हैं, वह किस तरह सुख पा सकते हैं ? किसी दूसरे की सेवा बहुत पीड़ादायक है। उसमें प्राणी अपने आपको बेच देता है और अपना धर्म गंवा

लेता है। माया के बन्धन में जकड़ा हुआ मन स्थिर नहीं रहता। क्षण—क्षण पीड़ा उसको पीड़ित करती है। हे नानक! सांसारिक माया का दुख केवल तभी दूर होता है, जब मनुष्य अपने मन को गुरु के शब्द में मिला लेता है॥ ३॥ हे मेरे प्रिय मन! स्वेच्छाचारी जीव मूर्ख एवं अनाड़ी हैं। प्रभु के नाम को तुम अपने हृदय में नहीं बसाते। माया के भ्रम कारण तुम (ज्ञान से) अन्धे हो गए हो। हे मेरे प्रिय मन! तुम प्रभु का मार्ग किस तरह प्राप्त कर सकते हो? जब तक सतिगुरु को अच्छा नहीं लगता, तुझे मार्ग किस तरह मिल सकता है? स्वेच्छाचारी अपने अहंत्व को प्रकट करता है। प्रभु के सेवक भक्त सदैव ही सुखी हैं। वह अपने मन को गुरु के चरणों से लगाते हैं। ईश्वर जिस व्यक्ति पर अपनी कृपा करता है, वह सदैव प्रभु की गुणस्तुति करता रहता है। हे नानक! इस संसार में केवल नाम के रत्न का ही लाभ है। गुरमुखों को प्रभु स्वयं यह सूझ प्रदान करता है॥ ४॥ ५॥ ७॥

रागु गउड़ी छंत महला ५ ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

मेरै मनि बैरागु भइआ जीउ किउ देखा प्रभ दाते ॥ मेरे मीत सखा हरि जीउ गुर पुरख बिधाते ॥ पुरखो बिधाता एकु स्रीधरु किउ मिलह तुझै उडीणीआ ॥ कर करहि सेवा सीसु चरणी मनि आस दरस निमाणीआ ॥ सासि सासि न घड़ी विसरै पलु मूरतु दिनु राते ॥ नानक सारिंग जिउ पिआसे किउ मिलीऐ प्रभ दाते ॥ १ ॥ इक बिनउ करउ जीउ सुणि कंत पिआरे ॥ मेरा मनु तनु मोहि लीआ जीउ देखि चलत तुमारे ॥ चलता तुमारे देखि मोही उदास धन किउ धीरए ॥ गुणवंत नाह दइआलु बाला सरब गुण भरपूरए ॥ पिर दोसु नाही सुखह दाते हउ विछुड़ी बुरिआरे ॥ बिनवंति नानक दइआ धारहु घरि आवहु नाह पिआरे ॥ २ ॥ हउ मनु अरपी सभु तनु अरपी अरपी सभि देसा ॥ हउ सिरु अरपी तिसु मीत पिआरे जो प्रभ देइ सदेसा ॥ अरपिआ त सीसु सुथानि गुर पहि संगि प्रभू दिखाइआ ॥ खिन माहि सगला दूखु मिटिआ मनहु चिंदिआ पाइआ ॥ दिनु रैणि रलीआ करै कामणि मिटे सगल अंदेसा॥ बिनवंति नानकु कंतु मिलिआ लोड़ते हम जैसा ॥ ३ ॥ मेरै मनि अनदु भइआ जीउ वजी वाधाई ॥ घरि लालु आइआ पिआरा सभ तिखा बुझाई ॥ मिलिआ त लालु गुपालु ठाकुरु सखी मंगलु गाइआ ॥ सभ मीत बंधप हरखु उपजिआ दूत थाउ गवाइआ ॥ अनहत वाजे वजहि घर महि पिर संगि सेज विछाई ॥ बिनवंति नानकु सहजि रहै हरि मिलिआ कंतु सुखदाई ॥ ४ ॥ १ ॥

मेरे मन में वैराग्य उत्पन्न हो गया है। मैं किस तरह अपने दाता प्रभु के दर्शन करूँ? पूज्य परमेश्वर, सर्वशक्तिमान विधाता ही मेरा मित्र एवं सखा है। हे भाग्य विधाता! हे श्रीधर! मैं व्याकुल तुझे किस तरह मिल सकता हूँ? हे प्रभु! मेरे हाथ तेरी सेवा—भक्ति करते हैं। मेरा सिर तेरे चरणों पर झुका हुआ है और मेरे विनीत मन में तेरे दर्शनों की अभिलाषा है। हे ईश्वर! श्वास—श्वास और एक घड़ी भर के लिए मैं तुझे विस्मृत नहीं करता। हर क्षण, मुहूर्त एवं दिन—रात मैं तुझे स्मरण करता हूँ। हे नानक! हे दाता प्रभु! हम जीव पपीहे की भाँति प्यासे हैं। तुझ से किस तरह मिलेंगे?॥ १॥ हे मेरे प्रिय प्राणनाथ! मैं एक विनती करती हूँ, इसे सुनिए। तेरी अद्भुत लीलाएँ देखकर मेरा मन एवं तन मुग्ध हो गए हैं। तेरी आश्चर्यजनक लीलाएँ देखकर मैं मुग्ध हो गई हूँ। लेकिन अब मैं तेरी (लीलाओं से) उदास हो गई हूँ, (तेरे मिलन बिना) मुझे धैर्य नहीं मिलता। हे गुणों के स्वामी! तू बड़ा दयालु, यौवन—सम्पन्न एवं समस्त गुणों से परिपूर्ण है। हे सुखों के दाता! तू दोष—रहित हैं। अपने पापों से मैं तुझ से जुदा हो गई हूँ। नानक विनती करते हैं, हे मेरे प्रिय पति! दया करो और मेरे हृदय घर में आ बसो॥ २॥ मैं अपनी आत्मा समर्पित करता हूँ, मैं अपना समूचा शरीर समर्पित करता हूँ

एवं अपनी समस्त भूमि समर्पित करता हूँ। मैं अपना शीश उस प्रिय मित्र को अर्पित करता हूँ, जो मुझे मेरे प्रभु का सन्देश दे। परम प्रतिष्ठित निवास वाले गुरु जी को मैंने अपना शीश समर्पित किया है और उन्होंने प्रभु को मेरे साथ ही दिखा दिया है। एक क्षण में मेरे तमाम दुख दूर हो गए हैं और सब कुछ जो मेरे हृदय की लालसा है, मुझे प्राप्त हो गया है। दिन–रात अब जीवात्मा आनन्द प्राप्त करती है और उसकी तमाम चिन्ताएँ मिट गई हैं। नानक वन्दना करते हैं कि उनको अपना मनपसन्द पति प्राप्त हो गया है॥ ३॥ मेरे हृदय में आनन्द विद्यमान है और बधाइयां मिल रही हैं। मेरा प्रियतम मेरे हृदय घर में आ गया है और मेरी प्यास बुझ गई है। मैं गोपाल ठाकुर जी को मिल गई हूँ और मेरी सखियों ने मंगल गीत गायन किए हैं। मेरे समस्त मित्र एवं सगे–संबंधी आनंदपूर्वक हैं और मेरे कट्टर (कामादिक) शत्रुओं का नामोनिशान मिट गया है। अब मेरे हृदय में अनहद भजन गूंज रहा है और मेरे तथा मेरे प्रियतम हेतु सेज बिछाई गई है। नानक वन्दना करते हैं कि अब मैं सहज में रहता हूँ। मेरा सुखों का दाता पति–परमेश्वर मुझे मिल गया है॥ ४॥ १॥

गउड़ी महला ५ ॥ मोहन तेरे ऊचे मंदर महल अपारा ॥ मोहन तेरे सोहनि दुआर जीउ संत धरम साला ॥ धरम साल अपार दैआर ठाकुर सदा कीरतनु गावहे ॥ जह साध संत इकत्र होवहि तहा तुझहि धिआवहे ॥ करि दइआ मइआ दइआल सुआमी होहु दीन क्रिपारा ॥ बिनवंति नानक दरस पिआसे मिलि दरसन सुखु सारा ॥ १ ॥ मोहन तेरे बचन अनूप चाल निराली ॥ मोहन तूं मानहि एकु जी अवर सभ राली ॥ मानहि त एकु अलेखु ठाकुरु जिनहि सभ कल धारीआ ॥ तुधु बचनि गुर कै वसि कीआ आदि पुरखु बनवारीआ ॥ तूं आपि चलिआ आपि रहिआ आपि सभ कल धारीआ ॥ बिनवंति नानक पैज राखहु सभ सेवक सरनि तुमारीआ ॥ २ ॥ मोहन तुधु सतसंगति धिआवै दरस धिआना ॥ मोहन जमु नेड़ि न आवै तुधु जपहि निदाना ॥ जमकालु तिन कउ लगै नाही जो इक मनि धिआवहे ॥ मनि बचनि करमि जि तुधु अराधहि से सभे फल पावहे ॥ मल मूत मूड़ जि मुगध होते सि देखि दरसु सुगिआना॥ बिनवंति नानक राजु निहचलु पूरन पुरख भगवाना ॥ ३ ॥ मोहन तूं सुफलु फलिआ सणु परवारे ॥ मोहन पुत्र मीत भाई कुटंब सभि तारे ॥ तारिआ जहानु लहिआ अभिमानु जिनी दरसनु पाइआ ॥ जिनी तुधनो धंनु कहिआ तिन जमु नेड़ि न आइआ ॥ बेअंत गुण तेरे कथे न जाही सतिगुर पुरख मुरारे ॥ बिनवंति नानक टेक राखी जितु लगि तरिआ संसारे ॥ ४ ॥ २ ॥

हे मेरे मोहन ! तेरे मन्दिर बहुत ऊँचे हैं और तेरा महल अनन्त है। हे मोहन ! तेरे द्वार अति सुन्दर हैं। वे साधु–संतों के लिए पूजा–स्थल हैं। तेरे मन्दिर में संतजन सदैव ही अनन्त एवं दयावान प्रभु का भजन गायन करते रहते हैं। जहाँ साधु एवं संतों की सभा होती है, वहाँ वह तेरी ही आराधना करते हैं। हे दयालु स्वामी ! दया एवं कृपा करो तथा दीनों पर कृपालु हो जाओ। नानक विनती करता है – मैं तेरे दर्शनों हेतु प्यासा हूँ। तेरे दर्शन करके मैं तमाम सुख प्राप्त कर लेता हूँ॥ १॥ हे मोहन ! तेरी वाणी बड़ी अनूप है और तेरी चाल (मर्यादा) बड़ी अनोखी है। हे मोहन ! तू एक ईश्वर में ही आस्था रखता है, तेरे लिए शेष समस्त धूल के तुल्य है। हे मोहन ! तुम एक परमात्मा की आराधना करते हो, जो अपनी अपार शक्ति द्वारा सृष्टि को सहारा दे रहा है। हे मोहन ! गुरु के उपदेश द्वारा तूने आदिपुरुष सृजनहार के हृदय को जीत लिया है। हे मोहन ! तू स्वयं ही (आयु भोगकर) चलते हो, स्वयं ही स्थिर व्यापक हो और स्वयं ही सृष्टि में अपनी सत्ता व्याप्त की हुई है। नानक प्रार्थना करता है – (हे प्रभु !) मेरी मान–प्रतिष्ठा की रक्षा कीजिए। तेरे समस्त सेवक तेरी शरण ढूँढते हैं॥ २॥ हे मोहन ! साधु–संतों की संगति (सत्संग) तेरा भजन करती है और तेरे दर्शनों का ध्यान करती है।

हे चित्तचोर मोहन ! जो प्राणी अन्तिम समय आपको स्मरण करते हैं, यमदूत उसके निकट नहीं आता। यमकाल (मृत्यु का समय) उसे स्पर्श नहीं कर सकता, जो प्राणी एक हृदय से प्रभु का भजन करता है। हे मोहन ! जो पुरुष अपने मन, वचन एवं कर्म द्वारा तेरी आराधना करता है, वह समस्त फल प्राप्त कर लेता है। जो प्राणी मल—मूत्र की भाँति गन्दे, मूर्ख एवं बेवकूफ हैं, वह तेरे दर्शन करके श्रेष्ठ ज्ञानी हो जाते हैं। नानक प्रार्थना करता है — हे मेरे पूर्ण सर्वव्यापक भगवान ! तेरी सत्ता सदैव स्थिर है॥ ३॥ हे मोहन ! तुम (संसार रूपी) बड़े परिवार से फलित विधि से प्रफुल्लित हुए हो। हे मोहन ! तुमने पुत्र, मित्र एवं कुटंब सहित सबका कल्याण कर दिया है। हे मोहन ! तुमने समस्त विश्व का कल्याण कर दिया है। जिन्होंने तेरे दर्शन किए, तूने उनका अभिमान त्याग दिया है। हे मोहन ! जो तुझे धन्य कहते हैं अर्थात् गुणस्तुति करते हैं, यमदूत उनके क़दापि निकट नहीं आता। हे मुरारी ! हे सच्चे गुरु ! तेरे गुण अनन्त हैं, जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता। नानक वन्दना करता है—(हे प्रभु !) मैंने वह सहारा पकड़ा है, जिससे जुड़कर समूचे जगत् का उद्धार हो जाता है॥ ४॥ २॥

गउड़ी महला ५ ॥ सलोकु ॥ पतित असंख पुनीत करि पुनह पुनह बलिहार ॥ नानक राम नामु जपि पावको तिन किलबिख दाहनहार ॥ १ ॥ छंत ॥ जपि मना तूं राम नराइणु गोविंदा हरि माधो ॥ धिआइ मना मुरारि मुकंदे कटीऐ काल दुख फाधो ॥ दुखहरण दीन सरण स्रीधर चरन कमल अराधीऐ ॥ जम पंथु बिखड़ा अगनि सागरु निमख सिमरत साधीऐ ॥ कलिमलह दहता सुधु करता दिनसु रैणि अराधो ॥ बिनवंति नानक करहु किरपा गोपाल गोबिंद माधो ॥ १ ॥ सिमरि मना दामोदरु दुखहरु भै भंजनु हरि राइआ ॥ स्रीरंगो दइआल मनोहरु भगति वछलु बिरदाइआ ॥ भगति वछल पुरख पूरन मनहि चिंदिआ पाईऐ ॥ तम अंध कूप ते उधारै नामु मंनि वसाईऐ ॥ सुर सिध गण गंधरब मुनि जन गुण अनिक भगती गाइआ ॥ बिनवंति नानक करहु किरपा पारब्रहम हरि राइआ ॥ २ ॥ चेति मना पारब्रहमु परमेसरु सरब कला जिनि धारी ॥ करुणा मै समरथु सुआमी घट घट प्राण अधारी ॥ प्राण मन तन जीअ दाता बेअंत अगम अपारो ॥ सरणि जोगु समरथु मोहनु सरब दोख बिदारो ॥ रोग सोग सभि दोख बिनसहि जपत नामु मुरारी ॥ बिनवंति नानक करहु किरपा समरथ सभ कल धारी ॥ ३ ॥ गुण गाउ मना अचुत अबिनासी सभ ते ऊच दइआला ॥ बिसंभरु देवन कउ एकै सरब करै प्रतिपाला ॥ प्रतिपाल महा दइआल दाना दइआ धारे सभ किसै ॥ कालु कंटकु लोभु मोहु नासै जीअ जा कै प्रभु बसै ॥ सुप्रसंन देवा सफल सेवा भई पूरन घाला॥ बिनवंत नानक इछ पुनी जपत दीन दैआला ॥ ४ ॥ ३ ॥

श्लोक॥ हे प्रभु ! असंख्य पापियों को तुम पवित्र पावन करते हो, मैं तुम पर बार—बार कुर्बान जाता हूँ। हे नानक ! राम नाम के भजन की अग्नि पापों को जला देने वाली है॥ १॥ छंद॥ हे मेरे मन ! तू राम, नारायण, गोविन्द, हरि का भजन कर, जो सृष्टि का रक्षक एवं माया का पति है। हे मेरे मन ! तू मुकुंद मुरारी का चिन्तन कर, जो दुखदायक मृत्यु की फाँसी को काट देता है। हे प्राणी ! प्रभु के सुन्दर चरणों की आराधना कर, जो दुखों का नाशक, निर्धनों का सहारा एवं लक्ष्मी का स्वामी श्रीधर है। एक क्षण भर के लिए प्रभु को स्मरण करने से मृत्यु के विषम मार्ग एवं अग्नि के सागर से उद्धार हो जाता है। हे प्राणी ! दिन—रात प्रभु का चिन्तन कर, जो कल्पना को नाश करने वाला एवं विकारों की मैल को पवित्र पावन करने वाला है। नानक प्रार्थना करता है — हे सृष्टि के पालनहार गोपाल ! हे गोबिन्द ! हे माधव ! मुझ पर कृपा करो॥ १॥ हे मेरे मन ! उस परमात्मा दामोदर को स्मरण कर, जो दुख दूर करने वाला और भय का नाश करने वाला है। हे बन्धु ! अपने स्वभाव अनुसार

दयालु प्रभु लक्ष्मीपति, मन को चुराने वाला मनोहर एवं भक्तवत्सल है। हे मन! पूर्ण परमेश्वर भक्तवत्सल है, उससे मनवांछित मनोकामनाएँ प्राप्त होती हैं। प्रभु मनुष्य को अन्धकूप से बाहर निकाल लेता है। उसके नाम को अपने हृदय में बसाओ। हे प्रभु! देवते, सिद्ध पुरुष, देवगण, गन्धर्व, मुनिजन एवं भक्त तेरी ही भक्ति का यशोगान करते हैं। नानक प्रार्थना करता है – हे मेरे पारब्रह्म! हे हरि बादशाह! मुझ पर कृपा करो॥ २॥ हे मेरे मन! उस पारब्रह्म परमेश्वर का भजन कर, जो सर्वकला सम्पूर्ण है। प्रभु समर्थावान एवं दया का पुंज है। वह प्रत्येक हृदय के प्राणों का आधार है। अनन्त, अगम्य, अपार प्रभु प्राण, मन एवं तन का दाता है। शरण में आने वाले की रक्षा करने वाला, समर्थावान एवं मन चुराने वाला मोहन तमाम दुख निवृत्त कर देता है। हे मन! मुरारी प्रभु के नाम का भजन करने से समस्त रोग, शोक एवं दोष नाश हो जाते हैं। नानक प्रार्थना करता है – हे समर्थावान प्रभु! तू सर्वकला सम्पूर्ण हैं, मुझ पर भी कृपा करो॥ ३॥ हे मेरे मन! जो सदा अटल रहने वाला, अनश्वर है एवं जो सर्वोपरि है, उस दया के घर परमात्मा की महिमा–स्तुति करते रहो। केवल विश्वंभर ही दुनिया को देन देने वाला है और वह समस्त जीव–जन्तुओं का पोषण करता है। परम दयालु एवं बुद्धिमान सृष्टि का पालनहार सब पर दया करता है। जिस इन्सान के हृदय में प्रभु आ बसता है, दुखदायक काल, लोभ, मोह उससे भाग जाते हैं। हे मन! जिस पर प्रभु देवा सुप्रसन्न हो जाता है, उसकी सेवा फलदायक एवं परिश्रम सम्पूर्ण हो जाता है। नानक प्रार्थना करता है–दीनदयाल ईश्वर का भजन करने से प्रत्येक इच्छा पूर्ण हो जाती है॥ ४॥ ३॥

गउड़ी महला ५ ॥ सुणि सखीए मिलि उदमु करेहा मनाइ लैहि हरि कंतै ॥ मानु तिआगि करि भगति ठगउरी मोहह साधू मंतै ॥ सखी वसि आइआ फिरि छोडि न जाई इह रीति भली भगवंतै ॥ नानक जरा मरण भै नरक निवारै पुनीत करै तिसु जंतै ॥ १ ॥ सुणि सखीए इह भली बिनंती एहु मतांतु पकाईऐ ॥ सहजि सुभाइ उपाधि रहत होइ गीत गोविंदहि गाईऐ ॥ कलि कलेस मिटहि भ्रम नासहि मनि चिंदिआ फलु पाईऐ ॥ पारब्रहम पूरन परमेसर नानक नामु धिआईऐ ॥ २ ॥ सखी इछ करी नित सुख मनाई प्रभ मेरी आस पुजाए ॥ चरन पिआसी दरस बैरागनि पेखउ थान सबाए ॥ खोजि लहउ हरि संत जना संगु संम्रिथ पुरख मिलाए ॥ नानक तिन मिलिआ सुरिजनु सुखदाता से वडभागी माए ॥ ३ ॥ सखी नालि वसा अपुने नाह पिआरे मेरा मनु तनु हरि संगि हिलिआ ॥ सुणि सखीए मेरी नीद भली मै आपनड़ा पिरु मिलिआ ॥ भ्रमु खोइओ सांति सहजि सुआमी परगासु भइआ कउलु खिलिआ ॥ वरु पाइआ प्रभु अंतरजामी नानक सोहागु न टलिआ ॥ ४ ॥ ४ ॥ २ ॥ ५ ॥ ११ ॥

हे मेरी सत्संगी सखी! सुन, हम मिलकर (भजन) उपाय करके अपने पति–परमेश्वर को प्रसन्न करें। अपना अहंकार त्यागकर भक्ति को ठगबूटी बनाकर और संतों (गुरु) के मन्त्र (वाणी) द्वारा आओ हम मिलकर उसे (पति) मुग्ध कर लें। हे मेरी सत्संगी सखी! यदि वह एक बार हमारे वश में हो जाए तो वह फिर हमें त्याग कर नहीं जाएगा। उस भगवान की यही सुन्दर मर्यादा है। हे नानक! (जो उसकी शरण में आता है) परमेश्वर उस प्राणी का बुढ़ापा, मृत्यु एवं नरक का भय दूर कर देता है और वह प्रसन्न होकर उसको पवित्र कर देता है॥ १॥ हे मेरी सखियो! इस भली प्रार्थना की तरफ ध्यान दो। आओ हम मिलकर सुदृढ़ फैसला करें। रोगों से रहित होकर आओ हम सहज ही गोविन्द का यश गायन करें। इससे (हमारे विकारों का) क्लेश एवं लड़ाई झगड़े निवृत्त हो जाएँगे। दुविधा मिट जाएगी और हम मनोवांछित फल प्राप्त कर लेंगे। हे नानक! आओ हम पूर्ण पारब्रह्म परमेश्वर के नाम का ध्यान करें॥ २॥ हे मेरी सत्संगी सखी! मैं सदैव उसकी इच्छा करती हूँ और उससे सुख माँगती हूँ। प्रभु मेरी आशा पूर्ण करे। मैं प्रभु के चरणों की प्यासी हूँ और उसके दर्शनों की इच्छा करती हूँ।

उसको मैं सर्वव्यापक देखती हूँ। (हे सखी!) ईश्वर को खोज कर मैं संतों की संगति प्राप्त करती हूँ। (क्योंकि) साधु–संत ही प्राणी को समर्थावान प्रभु से मिला देते हैं। हे नानक! हे माता! वही व्यक्ति भाग्यशाली हैं जिन्हें देवलोक का स्वामी एवं सुखों का दाता प्रभु मिल जाता है॥ ३॥ हे मेरी सत्संगी सखी! अब मैं प्रियतम पति के साथ रहती हूँ। मेरा मन एवं तन प्रभु के साथ एक हो गया है। हे मेरी सत्संगी सखी! सुनो, मेरी नींद भली है, क्योंकि मुझे अपना प्रियतम पति मिल गया है। मेरी दुविधा दूर हो गई है। मुझे शांति एवं सुख प्राप्त हो गए हैं। प्रभु का मेरे भीतर प्रकाश हो गया है और मेरा कंवल रूपी हृदय प्रफुल्लित हो गया है। हे नानक! अन्तर्यामी प्रभु को मैंने वर के रूप में पा लिया है, मेरा सुहाग कभी समाप्त नहीं होगा॥ ४॥ ४॥ २॥ ५॥ ११॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ गउड़ी बावन अखरी महला ५ ॥ सलोकु ॥ गुरदेव माता गुरदेव पिता गुरदेव सुआमी परमेसुरा ॥ गुरदेव सखा अगिआन भंजनु गुरदेव बंधिप सहोदरा ॥ गुरदेव दाता हरि नामु उपदेसै गुरदेव मंतु निरोधरा ॥ गुरदेव सांति सति बुधि मूरति गुरदेव पारस परस परा ॥ गुरदेव तीरथु अंम्रित सरोवरु गुर गिआन मजनु अपरंपरा ॥ गुरदेव करता सभि पाप हरता गुरदेव पतित पवित करा ॥ गुरदेव आदि जुगादि जुगु जुगु गुरदेव मंतु हरि जपि उधरा ॥ गुरदेव संगति प्रभ मेलि करि किरपा हम मूड़ पापी जितु लगि तरा ॥ गुरदेव सतिगुरु पारब्रहमु परमेसरु गुरदेव नानक हरि नमसकरा ॥ १ ॥

श्लोक॥ गुरु ही माता है, गुरु ही पिता है और गुरु ही जगत् का स्वामी परमेश्वर है। गुरु अज्ञानता का अन्धकार नाश करने वाला साथी है और गुरु ही संबंधी एवं भाई है। गुरु परमात्मा के नाम का दाता और उपदेशक है और गुरु ही अचूक मन्त्र है। गुरु सुख–शांति, सत्य एवं बुद्धि की मूर्त्त है। गुरु ऐसा पारस है, जिसको स्पर्श करने से प्राणी का उद्धार हो जाता है। गुरु ही तीर्थ एवं अमृत का सरोवर है। गुरु के ज्ञान में स्नान करने से मनुष्य अनन्त प्रभु को मिल जाता है। गुरु ही कर्त्तार एवं समस्त पापों को नाश करने वाला हैं। गुरु ही पतित को पवित्र पावन करने वाला है। गुरु आदि, युगों के आरम्भ से एवं युग–युग में विद्यमान हैं। गुरु हरि के नाम का मन्त्र है, जिसका भजन करने से प्राणी का भवसागर से उद्धार हो जाता है। हे मेरे प्रभु! कृपा करके मुझ मूर्ख एवं पापी को गुरदेव की संगति में मिला दो, जिससे मिलकर मैं जीवन के विषम सागर से पार हो जाऊँ। हे नानक! गुरु ही सतिगुरु एवं पारब्रह्म परमेश्वर है और उस गुरदेव हरि को नमस्कार है॥ १॥

सलोकु ॥ आपहि कीआ कराइआ आपहि करनै जोगु ॥ नानक एको रवि रहिआ दूसर होआ न होगु ॥ १ ॥

श्लोक॥ परमात्मा ने स्वयं ही सृष्टि–रचना की है और वह स्वयं ही इसे करने में समर्थ है। हे नानक! एक परमेश्वर ही सारी सृष्टि में मौजूद है और उसके सिवाय न कोई है और न ही कोई होगा॥ १॥

पउड़ी ॥ ओअं साध सतिगुर नमसकारं ॥ आदि मधि अंति निरंकारं ॥ आपहि सुंन आपहि सुख आसन ॥ आपहि सुनत आप ही जासन ॥ आपन आपु आपहि उपाइओ ॥ आपहि बाप आप ही माइओ ॥ आपहि सूखम आपहि असथूला ॥ लखी न जाई नानक लीला ॥ १ ॥ करि किरपा प्रभ दीन दइआला ॥ तेरे संतन की मनु होइ रवाला ॥ रहाउ॥

पउड़ी॥ मैं उस एक ईश्वर संत स्वरूप सतिगुरु को प्रणाम करता हूँ। निरंकार प्रभु संसार के प्रारंभ में भी स्वयं ही था, वर्तमान में भी है और भविष्य में भी स्वयं ही मौजूद रहेगा। प्रभु स्वयं ही शून्य अवस्था में

होता है और स्वयं ही सुख आसन (शांत समाधि) में होता है। वह स्वयं ही अपना यश सुनता है। अपना प्रत्यक्ष रूप उसने स्वयं ही उत्पन्न किया है। वह स्वयं ही अपना पिता है और स्वयं ही अपनी माता है। वह स्वयं ही प्रत्यक्ष है और स्वयं ही अप्रत्यक्ष है। हे नानक! उस ईश्वर की लीला कथन नहीं की जा सकती। हे दीनदयालु प्रभु! मुझ पर कृपा करो चूंकि मेरा मन तेरे संतों की चरण-धूलि बन जाए॥ रहाउ॥

सलोकु ॥ निरंकार आकार आपि निरगुन सरगुन एक ॥ एकहि एक बखाननो नानक एक अनेक ॥ १ ॥

श्लोक॥ निरंकार परमेश्वर स्वयं ही (सृष्टि) आकार की रचना करता है। वह स्वयं ही निर्गुण और सगुण है। हे नानक! यही बखान किया जा सकता है कि निरंकार ईश्वर अकेला स्वयं ही है चूंकि एक ईश्वर अनेक रूप बना लेता है॥ १॥

पउड़ी ॥ ओअं गुरमुखि कीओ अकारा ॥ एकहि सूति परोवनहारा ॥ भिंन भिंन त्रै गुण बिसथारं ॥ निरगुन ते सरगुन द्रिसटारं ॥ सगल भाति करि करहि उपाइओ ॥ जनम मरन मन मोहु बढाइओ ॥ दुहू भाति ते आपि निरारा ॥ नानक अंतु न पारावारा ॥ २ ॥

पउड़ी॥ एक ईश्वर ने गुरमुख बनने के लिए संसार की रचना की है। इस रचना में समस्त जीव-जन्तुओं को अपने एक ही सूत्र में पिरोया हुआ है। माया के तीन लक्षणों का उसने भिन्न-भिन्न प्रसार कर दिया है। निर्गुण से वह सगुण दृष्टिमान होता है। कर्त्तार ने अनेक प्रकार की संसार की रचना की है। जन्म-मरण का मूल सांसारिक मोह ईश्वर ने प्राणी के मन में खुद ही बढ़ाया हुआ है। लेकिन दोनों (जन्म-मरण) प्रकार से वह स्वयं अलग है। हे नानक! ईश्वर के आर-पार का अन्त नहीं मिल सकता॥ २॥

सलोकु ॥ सेई साह भगवंत से सचु संपै हरि रासि ॥ नानक सचु सुचि पाईऐ तिह संतन कै पासि ॥ १ ॥

श्लोक॥ वहीं व्यक्ति शाह एवं भाग्यवान है जिनके पास सत्य की संपति एवं प्रभु के नाम की पूँजी है। हे नानक! उन संतजनों के पास से ही सत्य (नाम) एवं पवित्रता की प्राप्त होती है॥ १॥

पवड़ी ॥ ससा सति सति सति सोऊ ॥ सति पुरख ते भिंन न कोऊ ॥ सोऊ सरनि परै जिह पायं ॥ सिमरि सिमरि गुन गाइ सुनायं ॥ संसै भरमु नही कछु बिआपत ॥ प्रगट प्रतापु ताहू को जापत ॥ सो साधू इह पहुचनहारा ॥ नानक ता कै सद बलिहारा ॥ ३ ॥

पउड़ी॥ स-वह परमात्मा सदैव सत्य, सत्यस्वरूप एवं सत्य का पुंज है। कोई भी सत्यस्वरूप प्रभु से अलग नहीं। जिस प्राणी को ईश्वर अपनी शरण में लेता है, केवल वही प्राणी उसकी शरण में आता है। ऐसा प्राणी प्रभु की महिमा-स्तुति ही करता रहता है और दूसरों को भी उसकी महिमा सुनाता रहता है। ऐसे प्राणी को दुविधा एवं भ्रम कदाचित प्रभाव नहीं डालते। उस प्राणी को प्रभु का प्रताप प्रत्यक्ष ही दिखाई देता है। केवल वही संत है, जो इस आत्मिक अवस्था को प्राप्त करता है, हे नानक! मैं उस पर सदैव कुर्बान जाता हूँ॥ ३॥

सलोकु ॥ धनु धनु कहा पुकारते माइआ मोह सभ कूर ॥ नाम बिहूने नानका होत जात सभु धूर ॥ १ ॥

श्लोक॥ (हे जीव!) तू हर वक्त धन की लालसा के लिए क्यों चिल्लाता रहता है। क्योंकि माया का मोह बिल्कुल मिथ्या है। हे नानक! नामविहीन सभी इन्सान धूलि होते जा रहे हैं॥ १॥

पवड़ी ॥ धधा धूरि पुनीत तेरे जनूआ ॥ धनि तेऊ जिह रुच इआ मनूआ ॥ धनु नही बाछहि सुरग न आछहि ॥ अति प्रिअ प्रीति साध रज राचहि ॥ धंधे कहा बिआपहि ताहू ॥ जो एक छाडि अन कतहि न जाहू ॥ जा कै हीऐ दीओ प्रभ नाम ॥ नानक साध पूरन भगवान ॥ ४ ॥

पउड़ी॥ ध–हे प्रभु ! तेरे सन्तों–भक्तों की चरण–धूलि पवित्र पावन है। जिनके हृदय में इस धूलि की इच्छा है, वे भाग्यशाली हैं। ऐसे लोग धन को नहीं चाहते और स्वर्ग की भी चाहत नहीं रखते। क्योंकि वह प्रिय प्रभु के प्रेम एवं संतों की चरण–धूलि में मग्न रहते हैं। जो लोग ईश्वर का सहारा त्याग कर कहीं ओर नहीं जाते, सांसारिक माया का बन्धन उन पर प्रभाव नहीं डाल सकता। हे नानक ! जिस व्यक्ति के हृदय में प्रभु ने अपना नाम बसा दिया है, वही व्यक्ति भगवान के पूर्ण संत हैं॥ ४॥

सलोक ॥ अनिक भेख अरु ङिआन धिआन मनहठि मिलिअउ न कोइ ॥ कहु नानक किरपा भई भगतु ङिआनी सोइ ॥ १ ॥

श्लोक॥ अनेक धार्मिक वेश धारण करने एवं ज्ञान, ध्यान एवं मन के हठ से भगवान में सुरति लगाने से कोई भी पुरुष ईश्वर से नहीं मिल सकता। हे नानक ! जिस व्यक्ति पर ईश्वर की कृपा हो जाती है, वही भक्त एवं ज्ञानी है॥ १॥

पउड़ी ॥ ङंङा ङिआनु नही मुख बातउ ॥ अनिक जुगति सासत्र करि भातउ ॥ ङिआनी सोइ जा कै द्रिड़ सोऊ ॥ कहत सुनत कछु जोगु न होऊ ॥ ङिआनी रहत आगिआ द्रिड़ु जा कै ॥ उसन सीत समसरि सभ ता कै ॥ ङिआनी ततु गुरमुखि बीचारी ॥ नानक जा कउ किरपा धारी ॥ ५ ॥

पउड़ी॥ ङ– ज्ञान केवल मौखिक बातों से प्राप्त नहीं होता। शास्त्रों की बताई हुई अनेकों विधियों की युक्तियों द्वारा भी प्राप्त नहीं होता। केवल वही ज्ञानी है, जिसके हृदय में प्रभु बसा हुआ है। कहने एवं सुनने से मनुष्य मूल रूप से ही योग्य नहीं होता। जो मनुष्य प्रभु की आज्ञा मानने में तत्पर रहता है, वही ईश्वर का वास्तविक ज्ञानी है। गर्मी और सर्दी (दुःख–सुख) सभी उसके लिए एक समान हैं। हे नानक ! ज्ञानी वहीं है, जो गुरु की शरण में प्रभु का भजन करता है और जिस पर वह अपनी कृपा करता है॥ ५॥

सलोकु ॥ आवन आए स्रिसटि महि बिनु बूझे पसु ढोर ॥ नानक गुरमुखि सो बुझै जा कै भाग मथोर ॥ १ ॥

श्लोक॥ आने वाले सृष्टि में आते हैं परन्तु जीवन का सन्मार्ग समझे बिना वे जानवर एवं पशुओं की भाँति ही रहे हैं। हे नानक ! गुरु की शरण में केवल वही प्रभु को समझता है, जिसके मस्तक पर भाग्यरेखाएँ विद्यमान होती हैं॥ १॥

पउड़ी ॥ या जुग महि एकहि कउ आइआ ॥ जनमत मोहिओ मोहनी माइआ ॥ गरभ कुंट महि उरध तप करते ॥ सासि सासि सिमरत प्रभु रहते ॥ उरझि परे जो छोडि छडाना ॥ देवनहारु मनहि बिसराना ॥ धारहु किरपा जिसहि गुसाई ॥ इत उत नानक तिसु बिसरहु नाही ॥ ६ ॥

पउड़ी॥ इस जगत् में मनुष्य ने प्रभु का भजन करने के लिए जन्म लिया है। लेकिन जन्म काल से ही मोह लेने वाली माया ने उसको मुग्ध कर लिया है। माता के गर्भ में विपरीत लटका हुआ प्राणी तपस्या करता था। वहाँ वह अपनी हर सांस से प्रभु की आराधना करता रहता था। वह उस माया से उलझ गया

है, जिसे उसने अवश्य छोड़ जाना है। दाता प्रभु को वह अपने हृदय से विस्मृत कर देता है। हे नानक! गोसाईं जिस व्यक्ति पर कृपा धारण करता है, वह लोक–परलोक में उसे नहीं भूलते॥ ६॥

सलोकु ॥ आवत हुकमि बिनास हुकमि आगिआ भिंन न कोइ ॥ आवन जाना तिह मिटै नानक जिह मनि सोइ ॥ १ ॥

श्लोक॥ इन्सान ईश्वर के हुक्म से दुनिया में जन्म लेता है, उसके हुक्म से वह मृत्यु प्राप्त करता है। कोई भी इन्सान ईश्वर के हुक्म का विरोध नहीं कर सकता। हे नानक! जिस इन्सान के हृदय में ईश्वर का निवास हो जाता है, उसका जन्म–मरण का चक्र मिट जाता है॥ १॥

पउड़ी ॥ एऊ जीअ बहुतु ग्रभ वासे ॥ मोह मगन मीठ जोनि फासे ॥ इनि माइआ त्रै गुण बसि कीने ॥ आपन मोह घटे घटि दीने ॥ ए साजन कछु कहहु उपाइआ ॥ जा ते तरउ बिखम इह माइआ ॥ करि किरपा सतसंगि मिलाए ॥ नानक ता कै निकटि न माए ॥ ७ ॥

पउड़ी॥ ये प्राणी अनेक योनियों में वास करते हैं। मीठे मोह में मस्त होकर प्राणी योनियों के चक्र में फँस जाते हैं। इस मोहिनी ने (प्राणियों को) अपने तीन गुणों के वश में किया हुआ है। इस मोहिनी ने प्रत्येक प्राणी के हृदय में अपना मोह टिका दिया है। हे मित्र! मुझे कोई ऐसा उपाय बता, जिससे मैं मोहिनी के विषम सागर से पार हो जाऊँ। हे नानक! जिस व्यक्ति पर ईश्वर कृपा–दृष्टि करके सत्संग में मिलाता है, माया उसके निकट नहीं आती॥ ७॥

सलोकु ॥ किरत कमावन सुभ असुभ कीने तिनि प्रभि आपि ॥ पसु आपन हउ हउ करै नानक बिनु हरि कहा कमाति ॥ १ ॥

श्लोक॥ ईश्वर स्वयं (प्राणी में विद्यमान होकर) उससे शुभ–अशुभ कर्म करवाता है। लेकिन इस बात का मूर्ख मनुष्य अहंकार एवं अभिमान करता है। लेकिन हे नानक! भगवान के अलावा प्राणी कुछ भी करने में सक्षम नहीं॥ १॥

पउड़ी ॥ एकहि आपि करावनहारा ॥ आपहि पाप पुंन बिसथारा ॥ इआ जुग जितु जितु आपहि लाइओ ॥ सो सो पाइओ जु आपि दिवाइओ ॥ उआ का अंतु न जानै कोऊ ॥ जो जो करै सोऊ फुनि होऊ ॥ एकहि ते सगला बिसथारा ॥ नानक आपि सवारनहारा ॥ ८ ॥

पउड़ी॥ एक ईश्वर ही प्राणियों से कर्म करवाता है। वह स्वयं पाप एवं पुण्य का प्रसार करता है। इस मनुष्य जन्म में प्रभु जिस–जिस ओर स्वयं लगाता है, उधर ही प्राणी लगते हैं। जो कुछ ईश्वर स्वयं प्रदान करता है, वह वही कुछ प्राप्त करते हैं। उस ईश्वर का अन्त कोई भी नहीं जानता। जो कुछ प्रभु (संसार में) करता है, आखिरकार वही कुछ होता है। इस जगत् का प्रसार केवल ईश्वर द्वारा ही हुआ है। हे नानक! ईश्वर स्वयं ही जीवों का जीवन संवारने वाला है॥ ८॥

सलोकु ॥ राचि रहे बनिता बिनोद कुसम रंग बिख सोर ॥ नानक तिह सरनी परउ बिनसि जाइ मै मोर ॥ १ ॥

श्लोक॥ मनुष्य नारियों एवं ऐश्वर्य–विलासों में लीन रहता है। विषय–विकारों का शोर–शराबा कुसुंभे के फूल की तरह क्षणभंगुर है। हे नानक! मैं तो उस ईश्वर की शरण लेता हूँ, जिसकी कृपा से अहंकार एवं मोह दूर हो जाते हैं॥ १॥

पउड़ी ॥ रे मन बिनु हरि जह रचहु तह तह बंधन पाहि ॥ जिह बिधि कतहू न छूटीऐ साकत तेऊ कमाहि ॥ हउ हउ करते करम रत ता को भारु अफार ॥ प्रीति नही जउ नाम सिउ तउ एऊ करम बिकार ॥ बाधे जम की जेवरी मीठी माइआ रंग ॥ भ्रम के मोहे नह बुझहि सो प्रभु सदहू संग ॥ लेखै गणत न छूटीऐ काची भीति न सुधि ॥ जिसहि बुझाए नानका तिह गुरमुखि निरमल बुधि ॥ ६ ॥

पउड़ी॥ हे मेरे मन! परमेश्वर के अलावा जिस किसी (मोह) में भी तू प्रवृत्त होता है, वहाँ ही तुझे बन्धन जकड़ लेते हैं। शाक्त इन्सान वही कर्म करता है, जिससे उसको कभी मुक्ति नहीं मिल सकती। कर्मों के प्रेमी अपने शुभ–अशुभ कर्मों का अहंकार करते रहते हैं, इस अहंकार का असह्य बोझ उन्हें ही सहन करना पड़ता है। जब प्रभु के नाम से प्रेम नहीं तो यह कर्म विकार भरे हैं। जो मधुर माया से प्रेम करते हैं, वे मृत्यु की फाँसी में फँसे हुए हैं। दुविधा में फँसे हुए प्राणी समझते नहीं कि ईश्वर सदैव उनके साथ है। जब उनके कुकर्मों का लेखा–जोखा किया जाता है उनको मुक्ति नहीं मिलती। गारे की कच्ची दीवार कभी स्वच्छ नहीं हो सकती। हे नानक! जिस मनुष्य को प्रभु स्वयं सूझ प्रदान करता है, उस गुरमुख की बुद्धि निर्मल हो जाती है॥ ६॥

सलोकु ॥ टूटे बंधन जासु के होआ साधू संगु ॥ जो राते रंग एक कै नानक गूड़ा रंगु ॥ १ ॥

श्लोक॥ जिस जीव के (माया के) बन्धन कट जाते हैं, उसे संतों की संगति मिल जाती है। हे नानक! जो जीव एक ईश्वर के प्रेम रंग में मग्न रहते हैं, उनका रंग बहुत गहरा होता है, जो कभी उतरता नहीं॥ १॥

पउड़ी ॥ रारा रंगहु इआ मनु अपना ॥ हरि हरि नामु जपहु जपु रसना ॥ रे रे दरगह कहै न कोऊ ॥ आउ बैठु आदरु सुभ देऊ ॥ उआ महली पावहि तू बासा ॥ जनम मरन नह होइ बिनासा ॥ मसतकि करमु लिखिओ धुरि जा कै ॥ हरि संपै नानक घरि ता कै ॥ १० ॥

पउड़ी॥ र – अपने इस मन को प्रभु के प्रेम से रंग लो। अपनी रसना से प्रभु–परमेश्वर के नाम का बार–बार भजन करो। प्रभु के दरबार में तुझे कोई निरादर के शब्द नहीं बोलेगा। सभी यह संबोधन करके तेरा स्वागत करेंगे, "आइए पधारिए"। प्रभु के उस दरबार में तुझे निवास मिलेगा। प्रभु के दरबार में कोई जन्म, मृत्यु एवं विनाश नहीं। हे नानक! जिसके माथे पर शुभ कर्मों द्वारा कृपा का लेख लिखा होता है, उसी व्यक्ति के हृदय–घर में हरि–नाम रूपी संपति होती है॥ १०॥

सलोकु ॥ लालच झूठ बिकार मोह बिआपत मूड़े अंध ॥ लागि परे दुरगंध सिउ नानक माइआ बंध ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे नानक! जो व्यक्ति लालच, झूठ, पाप, सांसारिक मोह के बन्धनों में फँस जाते हैं, उन ज्ञानहीन मूर्खों को ये विकार दबाव डालते रहते हैं। माया में फँसे हुए वे कुकर्मों में ही लगे रहते हैं॥ १॥

पउड़ी ॥ लला लपटि बिखै रस राते ॥ अहंबुधि माइआ मद माते ॥ इआ माइआ महि जनमहि मरना ॥ जिउ जिउ हुकमु तिवै तिउ करना ॥ कोऊ ऊन न कोऊ पूरा ॥ कोऊ सुघरु न कोऊ मूरा ॥ जितु जितु लावहु तितु तितु लगना ॥ नानक ठाकुर सदा अलिपना ॥ ११ ॥

पउड़ी॥ ल – मनुष्य पाप से भरे विकारों में लिपटे रहते हैं। वह अहंबुद्धि एवं माया के नशे में मग्न रहते हैं। इस मोहिनी के जाल में फँसकर प्राणी (जन्म–मरण के चक्र में पड़कर) संसार में

आते—जाते रहते हैं। (लेकिन प्राणी के वश में कुछ नहीं) जैसे जैसे ईश्वर की आज्ञा होती है, वैसे ही प्राणी करते हैं। कोई भी प्राणी अधूरा नहीं और कोई पूर्ण भी नहीं। अपने आप न कोई चतुर है और न ही कोई मूर्ख। जहाँ कहीं भी प्रभु प्राणी को लगाता है, वहीं वह लग जाता है। हे नानक! ईश्वर हमेशा (माया के प्रभाव से) निर्लिप्त रहता है॥ ११॥

सलोकु ॥ लाल गुपाल गोबिंद प्रभ गहिर गंभीर अथाह ॥ दूसर नाही अवर को नानक बेपरवाह ॥ १ ॥

श्लोक॥ वह गोविन्द गोपाल हम सबका प्रिय है। मेरा प्रियतम प्रभु सर्वज्ञाता, धैर्यवान एवं विशाल हृदय वाला तथा अथाह है। हे नानक! उस जैसा दूसरा कोई नहीं। वह बिल्कुल बेपरवाह है॥ १॥

पउड़ी ॥ लला ता कै लवै न कोऊ ॥ एकहि आपि अवर नह होऊ ॥ होवनहारु होत सद आइआ ॥ उआ का अंतु न काहू पाइआ ॥ कीट हसति महि पूर समाने ॥ प्रगट पुरख सभ ठाऊ जाने ॥ जा कउ दीनो हरि रसु अपना ॥ नानक गुरमुखि हरि हरि तिह जपना ॥ १२ ॥

पउड़ी॥ ल — उसके समान दूसरा कोई नहीं। वह ईश्वर एक है, उस जैसा दूसरा कोई होगा भी नहीं। वह अब भी अस्तित्व में है, वही होगा और सदा होता आया है। उसका अन्त कभी किसी को भी नहीं मिला। चींटी से लेकर हाथी तक सब में प्रभु मौजूद है। सर्वव्यापक परमेश्वर हर तरफ प्रत्यक्ष गोचर है। हे नानक! जिस किसी को भी प्रभु अपना हरि—रस प्रदान करता है, वह गुरु के आश्रय द्वारा हरि—परमेश्वर का भजन करता रहता है॥ १२॥

सलोकु ॥ आतम रसु जिह जानिआ हरि रंग सहजे माणु ॥ नानक धनि धनि धंनि जन आए ते परवाणु ॥ १ ॥

श्लोक॥ जो व्यक्ति प्रभु के अमृत के स्वाद को जानता है, वह सहज ही हरि के प्रेम का आनंद लेता है। हे नानक! वे व्यक्ति भाग्यशाली हैं एवं उनका इस संसार में जन्म लेना सफल है॥ १॥

पउड़ी ॥ आइआ सफल ताहू को गनीऐ ॥ जासु रसन हरि हरि जसु भनीऐ ॥ आइ बसहि साधू कै संगे ॥ अनदिनु नामु धिआवहि रंगे ॥ आवत सो जनु नामहि राता ॥ जा कउ दइआ मइआ बिधाता ॥ एकहि आवन फिरि जोनि न आइआ ॥ नानक हरि कै दरसि समाइआ ॥ १३ ॥

पउड़ी॥ जिसकी जिह्वा प्रभु—परमेश्वर की महिमा करती रहती है, उसका इस जगत् में आगमन सफल गिना जाता है। वह (संसार में) आकर संतों से संगति करता है और रात—दिन प्रेमपूर्वक नाम का ध्यान करता है। उस जीव का जन्म सफल है, जो प्रभु के नाम में मग्न हुआ है और जिस पर विधाता की दया एवं कृपा हुई है। ऐसा जीव (संसार में) एक बार ही जन्म लेता है और पुनः योनि के चक्र में नहीं पड़ता। हे नानक! ऐसा व्यक्ति प्रभु के दर्शनों में ही समा जाता है॥ १३॥

सलोकु ॥ यासु जपत मनि होइ अनंदु बिनसै दूजा भाउ ॥ दूख दरद त्रिसना बुझै नानक नामि समाउ ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे नानक! जिस ईश्वर का भजन करने से मन में प्रसन्नता उत्पन्न होती है, द्वैतवाद का मोह मिट जाता है एवं दुःख, दर्द व सांसारिक तृष्णा का नाश हो जाता है, उसके नाम में समा जाओ॥ १॥

पउड़ी ॥ यया जारउ दुरमति दोऊ ॥ तिसहि तिआगि सुख सहजे सोऊ ॥ यया जाइ परहु संत सरना ॥ जिह आसर इआ भवजलु तरना ॥ यया जनमि न आवै सोऊ ॥ एक नाम ले मनहि परोऊ ॥ यया जनमु न हारीऐ गुर पूरे की टेक ॥ नानक तिह सुखु पाइआ जा कै हीअरै एक ॥ १४ ॥

पउड़ी॥ य – अपनी दुर्बुद्धि एवं द्वैतवाद को जला दो। इनको त्याग कर सहज सुख में निद्रा करो। य – जाकर उन संतों की शरण में पड़ जाओ, जिनकी सहायता से भवसागर से पार हुआ जा सकता है। य – जिस व्यक्ति ने एक ईश्वर का नाम अपने मन में पिरो लिया है, वह बार–बार संसार में जन्म नहीं लेता। य – पूर्ण गुरु के आश्रय से अनमोल मनुष्य जीवन व्यर्थ नहीं जाता। हे नानक ! जिसके हृदय में एक परमेश्वर ही विद्यमान है, वह आत्मिक सुख प्राप्त कर लेता है॥ १४॥

सलोकु ॥ अंतरि मन तन बसि रहे ईत ऊत के मीत ॥ गुरि पूरै उपदेसिआ नानक जपीऐ नीत ॥ १ ॥

श्लोक॥ जो इस लोक एवं परलोक में जीव का मित्र है, वह उसके मन–तन में रहता है। हे नानक ! पूर्ण गुरु ने मुझे हमेशा प्रभु का भजन करने का उपदेश प्रदान किया है॥ १॥

पउड़ी ॥ अनदिनु सिमरहु तासु कउ जो अंति सहाई होइ ॥ इह बिखिआ दिन चारि छिअ छाडि चलिओ सभु कोइ ॥ का को मात पिता सुत धीआ ॥ ग्रिह बनिता कछु संगि न लीआ ॥ ऐसी संचि जु बिनसत नाही ॥ पति सेती अपुनै घरि जाही ॥ साधसंगि कलि कीरतनु गाइआ ॥ नानक ते ते बहुरि न आइआ ॥ १५ ॥

पउड़ी॥ रात–दिन उसका सिमरन करो, जो अन्तिम समय में जीव का सहायक बनता है। मोह–माया का यह विष केवल चार अथवा छ : दिनों का ही है। सभी इसे छोड़कर चले जाते हैं। माता, पिता, पुत्र एवं पुत्री कोई भी किसी का संगी नहीं है। कोई भी इन्सान घर, पत्नी एवं अन्य पदार्थ कुछ भी साथ लेकर नहीं जाता। इसलिए ऐसा नाम–धन संचित करो जो कभी नाश नहीं होता और जो सम्मानपूर्वक अपने घर (परलोक) में जा सके। हे नानक ! जो लोग अपने जीवन में सत्संग में प्रभु का भजन गायन करते हैं, वह पुनः जन्म–मरण के चक्र में फँसकर इस संसार में नहीं आते॥ १५॥

सलोकु ॥ अति सुंदर कुलीन चतुर मुखि ङिआनी धनवंत॥ मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत ॥ १ ॥

श्लोक॥ यदि कोई व्यक्ति अति सुन्दर, कुलीन, चतुर एवं उच्चकोटि का ज्ञानी एवं धनवान हो तो भी हे नानक ! जिनके हृदय में भगवान की प्रीति नहीं है, वे मृतक ही कहलाए जाएँगे॥ १॥

पउड़ी ॥ ङंङा खटु सासत्र होइ ङिआता ॥ पूरकु कुंभक रेचक करमाता ॥ ङिआन धिआन तीरथ इसनानी ॥ सोमपाक अपरस उदिआनी ॥ राम नाम संगि मनि नही हेता ॥ जो कछु कीनो सोऊ अनेता ॥ उआ ते ऊतमु गनउ चंडाला ॥ नानक जिह मनि बसहि गुपाला ॥ १६ ॥

पउड़ी॥ ङ – कोई व्यक्ति शास्त्रों का ज्ञाता हो, वह (योगी की भाँति) श्वास अन्दर खींचने, बाहर निकालने एवं टिकाने का कर्म करता हो, वह ज्ञान (धार्मिक) चर्चा, मनन, तीर्थ यात्रा एवं स्नान करता हो, वह अपना भोजन स्वयं पकाता हो, किसी के साथ न लगता हो एवं जंगल में रहता हो, यदि उसके हृदय में प्रभु के नाम से प्रीति नहीं तो सब कुछ जो वह करता है, वह नाशवान है। हे नानक ! उससे उत्तम उस चंडाल को समझो, जिसके मन में गोपाल निवास करता है॥ १६॥

सलोकु ॥ कुंट चारि दह दिसि भ्रमे करम किरति की रेख ॥ सूख दूख मुकति जोनि नानक लिखिओ लेख ॥ १ ॥

श्लोक॥ मनुष्य अपने किए कर्मों के संस्कारों के अनुसार संसार के चारों कुण्ट एवं दसों दिशाओं में भटकता रहता है। हे नानक! सुख–दुःख, मोक्ष एवं योनि (आवागमन) लिखी हुई किस्मत अनुसार ही मिलता है॥ १॥

पवड़ी ॥ कका कारन करता सोऊ ॥ लिखिओ लेखु न मेटत कोऊ ॥ नही होत कछु दोऊ बारा ॥ करनैहारु न भूलनहारा ॥ काहू पंथु दिखारै आपै ॥ काहू उदिआन भ्रमत पछुतापै ॥ आपन खेलु आप ही कीनो॥ जो जो दीनो सु नानक लीनो ॥ १७ ॥

पउड़ी॥ क – परमात्मा स्वयं ही संयोग बनाने वाला है। कोई भी प्राणी विधाता के विधान को मिटा नहीं सकता। ऐसा कोई भी कार्य नहीं है जो उसे फिर से करना पड़े, परमात्मा कभी भूल नहीं करता। कुछ जीवों को वह स्वयं ही सन्मार्ग दिखा देता है। कुछ जीवों को वह भयानक जंगल में भटकाता रहता है। यह समूचा जगत्–खेल भगवान ने स्वयं ही रचा है। हे नानक! जो कुछ भी प्रभु प्राणियों को देता है, वही उन्हें मिल जाता है॥ १७॥

सलोकु ॥ खात खरचत बिलछत रहे टूटि न जाहि भंडार ॥ हरि हरि जपत अनेक जन नानक नाहि सुमार ॥ १ ॥

श्लोक॥ (प्रभु के खजाने को) मनुष्य खाते, खर्च करते और भोगते रहते हैं परन्तु प्रभु का खजाना कभी समाप्त नहीं होता। हे नानक! हरि–परमेश्वर के नाम का अनेकों ही मनुष्य भजन करते रहते हैं, जो कि गणना से परे है॥ १॥

पउड़ी ॥ खखा खूना कछु नही तिसु संम्रथ कै पाहि ॥ जो देना सो दे रहिओ भावै तह तह जाहि ॥ खरचु खजाना नाम धनु इआ भगतन की रासि ॥ खिमा गरीबी अनद सहज जपत रहहि गुणतास ॥ खेलहि बिगसहि अनद सिउ जा कउ होत क्रिपाल ॥ सदीव गनीव सुहावने राम नाम ग्रिहि माल ॥ खेदु न दूखु न डानु तिह जा कउ नदरि करी ॥ नानक जो प्रभ भाणिआ पूरी तिना परी ॥ १८ ॥

पउड़ी॥ ख – परमात्मा जो समस्त शक्तियों का स्वामी है, उसके घर में किसी वस्तु की कोई कमी नहीं। जो कुछ प्रभु ने देना है, वह देता जा रहा है। मनुष्य चाहे जहाँ मन करता है, वहाँ चलता रहे। नाम–धन भक्तों के पास खर्च करने के लिए भण्डार है। यह उनकी राशि–पूंजी है। सहनशीलता, नम्रता, आनंद एवं सहजता से वह गुणों के भण्डार प्रभु का जाप करते जाते हैं। परमेश्वर जिन पर कृपा करता है, वह आनंदपूर्वक जीवन का खेल खेलते हैं और सदैव प्रसन्न रहते हैं। जिनके हृदय घर में राम के नाम का पदार्थ है, वह सदैव ही धनवान एवं सुन्दर हैं। ईश्वर जिन पर कृपा–दृष्टि करता है, उनको न ही कोई कष्ट होता है, न ही कोई पीड़ा एवं दण्ड मिलता है। हे नानक! जो प्रभु को भले लगते हैं, वह पूर्णतया सफल हो जाते हैं॥ १८॥

सलोकु ॥ गनि मिनि देखहु मनै माहि सरपर चलनो लोग ॥ आस अनित गुरमुखि मिटै नानक नाम अरोग ॥ १ ॥

श्लोक॥ (हे जिज्ञासु !) अपने चित्त में भलीभाँति विचार कर देख लो, कि लोगों ने इस दुनिया से निश्चित ही चले जाना है। हे नानक ! क्षणभंगुर पदार्थों की तृष्णा गुरु की शरण लेने से ही मिटती है। केवल भगवान के नाम में ही अरोग्यता है॥ १॥

पउड़ी ॥ गगा गोबिद गुण रवहु सासि सासि जपि नीत ॥ कहा बिसासा देह का बिलम न करिहो मीत ॥ नह बारिक नह जोबनै नह बिरधी कछु बंधु ॥ ओह बेरा नह बूझीऐ जउ आइ परै जम फंधु ॥ गिआनी धिआनी चतुर पेखि रहनु नही इह ठाइ ॥ छाडि छाडि सगली गई मूड़ तहा लपटाहि ॥ गुर प्रसादि सिमरत रहै जाहू मसतकि भाग ॥ नानक आए सफल ते जा कउ प्रिअहि सुहाग ॥ १९ ॥

पउड़ी॥ ग – (हे जिज्ञासु !) अपने प्रत्येक श्वास से गोबिन्द की गुणस्तुति करते रहो और नित्य उसका भजन करो। शरीर के ऊपर क्या विश्वास किया जा सकता है ? हे मेरे मित्र ! देरी न कर। चाहे बचपन हो, जवानी हो, बुढ़ापा हो, मृत्यु को आने से किसी समय भी रुकावट नहीं है। उस वक्त का पता नहीं लग सकता कि कब यमराज का रस्सा गले में आ पड़ता है। यह बात समझ लो चाहे कोई ज्ञानी हो, चाहे कोई ध्यानी हो, चाहे कोई चतुर हो, किसी ने भी दुनिया में सदा नहीं रहना। मूर्ख ही उन वस्तुओं की प्राप्ति में लगते हैं, जिन्हें समूचा जगत् त्याग गया है। जिसके माथे पर शुभ भाग्य लिखा हुआ है, वह गुरु की कृपा से प्रभु का भजन करता रहता है। हे नानक ! जिन्हें प्रियतम प्रभु का सौभाग्य प्राप्त है, उनका ही इस संसार में आगमन सफल है॥ १९॥

सलोकु ॥ घोखे सासत्र बेद सभ आन न कथतउ कोइ ॥ आदि जुगादी हुणि होवत नानक एकै सोइ ॥ १ ॥

श्लोक॥ मैंने समस्त शास्त्र एवं वेद अध्ययन करके देख लिए हैं। कोई भी यह नहीं बताता कि भगवान के अलावा कोई अन्य भी हमेशा रहने वाला है। हे नानक ! एक परमेश्वर ही सृष्टि के आदि में, युगों के आरम्भ में था, अब है और हमेशा ही रहने वाला है॥ १॥

पउड़ी ॥ घघा घालहु मनहि एह बिनु हरि दूसर नाहि ॥ नह होआ नह होवना जत कत ओही समाहि ॥ घूलहि तउ मन जउ आवहि सरना ॥ नाम ततु कलि महि पुनहचरना ॥ घालि घालि अनिक पछुतावहि ॥ बिनु हरि भगति कहा थिति पावहि ॥ घोलि महा रसु अंम्रितु तिह पीआ ॥ नानक हरि गुरि जा कउ दीआ ॥ २० ॥

पउड़ी॥ घ – अपने मन में यह बात दृढ़ कर लो कि प्रभु के अलावा कोई नहीं। न कोई था और न ही आगे कोई होगा। वह प्रभु सर्वव्यापक हो रहा है। हे मन ! यदि तू प्रभु की शरण लेगा तो ही प्रभु में लीन होगा। इस कलियुग में प्रभु का नाम ही वास्तविक प्रायश्चित कर्म है। दुविधा में मेहनत–परिश्रम करके अनेकों पश्चाताप करते हैं। भगवान की भक्ति के सिवाय कैसे शांति मिल सकती हैं ? हे नानक ! जिसे हरि रूप गुरु जी महारस अमृत प्रदान करते हैं, वह इसे घोलकर पान करता है॥ २०॥

सलोकु ॥ ङणि घाले सभ दिवस सास नह बढन घटन तिलु सार ॥ जीवन लोरहि भरम मोह नानक तेऊ गवार ॥ १ ॥

श्लोक॥ समस्त दिवस एवं श्वास प्रभु ने गिन कर ही मनुष्य में डाले हैं। वह एक तिलमात्र भी न अधिक होते हैं और न ही कम होते हैं। हे नानक ! जो व्यक्ति भ्रम एवं मोह में जिंदगी जीना चाहते हैं, ऐसे व्यक्ति मूर्ख हैं॥ १॥

पउड़ी ॥ ङंङा ङ्रासै कालु तिह जो साकत प्रभि कीन ॥ अनिक जोनि जनमहि मरहि आतम रामु न चीन ॥ ङिआन धिआन ताहू कउ आए ॥ करि किरपा जिह आपि दिवाए ॥ ङणती ङणी नही कोऊ छूटै ॥ काची गागरि सरपर फूटै ॥ सो जीवत जिह जीवत जपिआ ॥ प्रगट भए नानक नह छपिआ ॥ २१ ॥

पउड़ी॥ ङ – काल (मृत्यु) उसे अपना ग्रास बना लेता है, जिसे प्रभु ने नास्तिक बना दिया है। जो व्यक्ति राम को अनुभव नहीं करते, वे अनेकों योनियों में जन्मते–मरते रहते हैं। केवल वही व्यक्ति ज्ञान एवं ध्यान को प्राप्त करता है, जिस पर ईश्वर स्वयं कृपा करके देता है। कर्मों का लेखा पता करने से कोई भी मुक्त नहीं हो सकता। यह शरीर मिट्टी की कच्ची गागर है जिस ने निश्चित ही टूट जाना है, केवल वही जीवित है, जो जीवित ही प्रभु का भजन करता है। हे नानक ! भगवान का सिमरन करने वाला मनुष्य छिपा नहीं रहता अपितु जगत् में प्रसिद्ध हो जाता है॥ २१॥

सलोकु ॥ चिति चितवउ चरणारबिंद ऊध कवल बिगसांत ॥ प्रगट भए आपहि गोबिंद नानक संत मतांत ॥ १ ॥

श्लोक॥ अपने चित्त में प्रभु के सुन्दर चरणों का चिन्तन करने से मेरा विपरीत मन कंवल की भाँति प्रफुल्लित हो गया है। हे नानक ! संतजनों के उपदेश से गोबिन्द स्वयं ही प्रकट हो जाता है॥ १॥

पउड़ी ॥ चचा चरन कमल गुर लागा ॥ धनि धनि उआ दिन संजोग सभागा ॥ चारि कुंट दह दिसि भ्रमि आइओ ॥ भई क्रिपा तब दरसनु पाइओ ॥ चार बिचार बिनसिओ सभ दूआ ॥ साधसंगि मनु निरमल हूआ ॥ चिंत बिसारी एक द्रिसटेता ॥ नानक गिआन अंजनु जिह नेत्रा ॥ २२ ॥

पउड़ी॥ च – वह दिन बड़ा शुभ है, वह संयोग भी भाग्यशाली है, जब गुरु के सुन्दर चरणों में मन लगा। मैं चारों तरफ एवं दसों दिशाओं से भटक कर आया हूँ। जब प्रभु ने कृपा की तो ही मुझे गुरु के दर्शन प्राप्त हुए। भगवान की महिमा का विचार करने से समूह द्वैतवाद नाश हो गया है। संतों की संगति में मेरा मन निर्मल हो गया है। हे नानक ! जिसके नेत्रों में ज्ञान का सुरमा पड़ जाता है, वह चिन्ता को भूल जाता है और वह एक ईश्वर के दर्शन कर लेता है॥ २२॥

सलोकु ॥ छाती सीतल मनु सुखी छंत गोबिद गुन गाइ ॥ ऐसी किरपा करहु प्रभ नानक दास दसाइ ॥ १ ॥

श्लोक॥ गोबिन्द की महिमा के छंद गायन करने से छाती शीतल एवं मन सुखी हो जाता है। नानक की प्रार्थना है कि हे मेरे प्रभु ! मुझ पर ऐसी कृपा–दृष्टि करो कि मैं तेरे दासो का दास बन जाऊँ॥ १॥

पउड़ी ॥ छछा छोहरे दास तुमारे ॥ दास दासन के पानीहारे ॥ छछा छारु होत तेरे संता ॥ अपनी क्रिपा करहु भगवंता ॥ छाडि सिआनप बहु चतुराई ॥ संतन की मन टेक टिकाई ॥ छारु की पुतरी परम गति पाई ॥ नानक जा कउ संत सहाई ॥ २३ ॥

पउड़ी॥ छ – मैं तेरा दास बालक हूँ। मैं तेरे दासों के दासों का जल भरने वाला हूँ। छ – हे भगवान ! मुझ पर अपनी ऐसी कृपा करो कि मैं तेरे संतों की चरण–धूलि बन जाऊँ। मैंने अपनी अधिकतर बुद्धिमत्ता एवं चतुरता त्याग दी है और अपने मन को संतों के आसरे टिका दिया है। हे नानक ! संत जिस व्यक्ति की मदद करते हैं, उसकी यह देहि चाहे मिट्टी का पुतला है, वह परमगति प्राप्त कर लेता है॥ २३॥

सलोकु ॥ जोर जुलम फूलहि घनो काची देह बिकार ॥ अहंबुधि बंधन परे नानक नाम छुटार ॥ १ ॥

श्लोक॥ मासूम लोगों पर अत्याचार एवं जुल्म करके मनुष्य बड़ा ही अभिमान करता है और अपने नश्वर शरीर से पाप करता है। हे नानक! ऐसा व्यक्ति अहंबुद्धि के कारण बंधनों में फँस जाता है लेकिन उस व्यक्ति की परमेश्वर के नाम से ही मुक्ति होती है॥ १॥

पउड़ी ॥ जजा जानै हउ कछु हूआ ॥ बाधिओ जिउ नलिनी भ्रमि सूआ ॥ जउ जानै हउ भगतु गिआनी ॥ आगै ठाकुरि तिलु नही मानी ॥ जउ जानै मै कथनी करता ॥ बिआपारी बसुधा जिउ फिरता ॥ साधसंगि जिह हउमै मारी ॥ नानक ता कउ मिले मुरारी ॥ २४ ॥

पउड़ी॥ ज – यदि कोई मनुष्य यह सोचता है कि मैं कुछ बन गया हूँ, वह इस अभिमान में यूं फँस जाता है जिस तरह कोई तोता (दाने के) भ्रम में कमलिनी के साथ फँस जाता है। यदि कोई व्यक्ति अपने आपको भक्त एवं ज्ञानी समझता है तो परलोक में प्रभु उसको थोड़ा–सा भी सम्मान नहीं देता। यदि कोई व्यक्ति अपने आपको धार्मिक प्रचारक समझता है तो वह फेरी वाले व्यापारी की भाँति धरती पर भटकता रहता है। हे नानक! जो व्यक्ति संतों की संगति में अपने अहंकार का नाश कर देता है, उसे मुरारी प्रभु मिल जाता है॥ २४॥

सलोकु ॥ झालाघे उठि नामु जपि निसि बासुर आराधि ॥ कार्हा तुझै न बिआपई नानक मिटै उपाधि ॥ १ ॥

श्लोक॥ नानक का कथन है कि (हे जीव!) प्रातःकाल उठकर ईश्वर का नाम जप और रात–दिन उसकी आराधना कर। फिर तुझे कोई चिन्ता फिक्र प्रभावित नहीं करेगी और मुसीबत लुप्त हो जाएगी॥ १॥

पउड़ी ॥ झझा झूरनु मिटै तुमारो ॥ राम नाम सिउ करि बिउहारो ॥ झूरत झूरत साकत मूआ ॥ जा कै रिदै होत भाउ बीआ ॥ झरहि कसंमल पाप तेरे मनूआ ॥ अंम्रित कथा संतसंगि सुनूआ ॥ झरहि काम क्रोध द्रुसटाई ॥ नानक जा कउ क्रिपा गुसाई ॥ २५ ॥

पउड़ी॥ झ – परमेश्वर के नाम का व्यापार करने से तेरा पश्चाताप मिट जाएगा। शाक्त मनुष्य जिसके हृदय में मोह–माया की प्रीति है, वह बड़ी चिन्ता एवं दुःख से मर जाता है। हे मेरे मन! संतों की संगति में अमृत कथा सुनने से तेरे समस्त पाप–विकार एवं दोष मिट जाएँगे। हे नानक! जिस व्यक्ति पर परमात्मा कृपा कर देता है, उसके काम–क्रोध इत्यादि समूचे दुष्ट नाश हो जाते हैं॥ २५॥

सलोकु ॥ ञतन करहु तुम अनिक बिधि रहनु न पावहु मीत ॥ जीवत रहहु हरि हरि भजहु नानक नाम परीति ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे मेरे मित्र! चाहे तू अनेक प्रकार के उपाय कर ले, परन्तु दुनिया में सदा के लिए नहीं रह सकेगा। हे नानक! यदि हरि–परमेश्वर का भजन करोगे और नाम से प्रेम करोगे तो सदा के लिए आत्मिक जीवन प्राप्त हो जाएगा॥ १॥

पवड़ी ॥ ञंञा ञाणहु द्रिड़ु सही बिनसि जात एह हेत ॥ गणती गणउ न गणि सकउ ऊठि सिधारे केत ॥ ञो पेखउ सो बिनसतउ का सिउ करीऐ संगु ॥ ञाणहु इआ बिधि सही चित झूठउ माइआ रंगु ॥ ञाणत सोई संतु सुइ भ्रम ते कीचित भिंन ॥ अंध कूप ते तिह कढहु जिह होवहु सुप्रसंन ॥ ञा कै हाथि समरथ ते कारन करनै जोग ॥ नानक तिह उसतति करउ ञाहू कीओ संजोग ॥ २६ ॥

पउड़ी॥ ञ – यह बात निश्चित तौर पर समझ ले कि यह दुनिया का मोह नाश हो जाएगा। चाहे मैं गणना करता रहूँ किन्तु मैं गिन नहीं सकता कि कितने प्राणी संसार त्याग कर चले गए हैं? जिस किसी को भी मैं देखता हूँ, वह नाश होने वाला है। इसलिए मैं किससे संगति करूँ? इस प्रकार अपने मन में उचित समझ ले कि दुनिया के पदार्थों की प्रीति झूठी है। इस तथ्य को वहीं जानता है और वही संत है, जिसको प्रभु ने दुविधा से खाली किया है। हे ईश्वर! जिस मनुष्य पर तुम सुप्रसन्न होते हो, उसे तुम अन्धे कुएँ से बाहर निकाल लेते हो। जिसका हाथ सामर्थ्य है, वह संसार के संयोग बनाने के योग्य है। हे नानक! उस प्रभु की गुणस्तुति करते रहो, जो संयोग बनाने वाला है॥ २६॥

सलोकु ॥ टूटे बंधन जनम मरन साध सेव सुखु पाइ ॥ नानक मनहु न बीसरै गुण निधि गोबिद राइ ॥ १ ॥

श्लोक॥ संतों की निष्काम सेवा करने से जन्म–मरण के चक्र मिट जाते हैं और सुख उपलब्ध हो जाता है। हे नानक! गुणों का भण्डार गोविन्द–प्रभु उसके मन से कभी भी विस्मृत न हो॥ १॥

पउड़ी ॥ टहल करहु तउ एक की जा ते ब्रिथा न कोइ ॥ मनि तनि मुखि हीऐ बसै जो चाहहु सो होइ ॥ टहल महल ता कउ मिलै जा कउ साध क्रिपाल ॥ साधू संगति तउ बसै जउ आपन होहि दइआल ॥ टोहे टाहे बहु भवन बिनु नावै सुखु नाहि ॥ टलहि जाम के दूत तिह जु साधू संगि समाहि ॥ बारि बारि जाउ संत सदके ॥ नानक पाप बिनासे कदि के ॥ २७ ॥

पउड़ी॥ ट – उस एक ईश्वर की सेवा करते रहो, जिसके दरबार से कोई भी खाली हाथ नहीं लौटता। यदि प्रभु तेरे मन, शरीर, मुख एवं हृदय में बस जाए तो जो कुछ भी तुम चाहते हो, वही मिल जाएगा। जिन पर संत कृपा के घर में हैं, उन्हें भगवान की सेवा का मौका मिल जाता है। संतों की संगति में मनुष्य तभी निवास करता है, जब ईश्वर स्वयं दयाल होता है। मैंने अनेकों लोक ढूँढ लिए हैं परन्तु ईश्वर के नाम बिना सुख–शांति नहीं। जो व्यक्ति संतों की संगति में बसता है, यमदूत उससे दूर हट जाते हैं। हे नानक! मैं बार–बार संतों पर कुर्बान जाता हूँ, जिनके द्वारा मेरे कई जन्मों के किए अशुभ कर्मों के पाप नाश हो गए हैं॥ २७॥

सलोकु ॥ ठाक न होती तिनहु दरि जिह होवहु सुप्रसंन ॥ जो जन प्रभि अपुने करे नानक ते धनि धंनि ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे ईश्वर! जिन पर तुम सुप्रसन्न हो जाते हो, उनके मार्ग में तेरे दर पर पहुँचते हुए कोई रुकावट नहीं आती। हे नानक! वह पुरुष भाग्यशाली हैं, जिनको ईश्वर ने अपना बना लिया है॥ १॥

पउड़ी ॥ ठठा मनूआ ठाहहि नाही ॥ जो सगल तिआगि एकहि लपटाही ॥ ठहकि ठहकि माइआ संगि मूए ॥ उआ कै कुसल न कतहू हूए ॥ ठांढि परी संतह संगि बसिआ ॥ अंम्रित नामु तहा जीअ रसिआ ॥ ठाकुर अपुने जो जनु भाइआ ॥ नानक उआ का मनु सीतलाइआ ॥ २८ ॥

पउड़ी॥ ठ – जो सब कुछ त्याग कर एक ईश्वर से जुड़े हुए हैं, वह किसी के भी मन को दुःख नहीं पहुँचाते। जो लोग सांसारिक माया से उलझे हुए हैं, वह मृत हैं और उनको कहीं भी प्रसन्नता नहीं मिलती। जो व्यक्ति संतों की संगति में वास करता है, उसका मन शीतल हो जाता है और नाम अमृत उसके हृदय को बड़ा मीठा लगता है। हे नानक! जो व्यक्ति अपने ईश्वर को भला लगता है, उसका मन शीतल हो जाता है॥ २८॥

सलोकु ॥ डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ ॥ डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे नानक ! (इस तरह वन्दना कर–) हे सर्वकला सम्पूर्ण प्रभु ! मैं अनेक बार तुझे प्रणाम करता हूँ। मुझे अपना हाथ देकर माया के मोह में विचलित होने से बचा ले॥ १॥

पउड़ी ॥ डडा डेरा इहु नही जह डेरा तह जानु ॥ उआ डेरा का संजमो गुर कै सबदि पछानु ॥ इआ डेरा कउ स्रमु करि घालै ॥ जा का तसू नही संगि चालै ॥ उआ डेरा की सो मिति जानै ॥ जा कउ द्रिसटि पूरन भगवानै ॥ डेरा निहचलु सचु साधसंग पाइआ ॥ नानक ते जन नह डोलाइआ ॥ २६ ॥

पउड़ी॥ ड – (हे जीव !) यह जगत् तेरा निवास नहीं, उस स्थान को पहचान, जहाँ तेरा वास्तविक घर है। गुरु के शब्द द्वारा तू उस निवास में पहुँचने की विधि पहचान ले। संसार के इस निवास हेतु मनुष्य कड़ा परिश्रम करके साधना करता है, किन्तु मृत्यु आने पर इसका थोड़ा–सा भी इसके साथ नहीं जाता। उस निवास–स्थान की मर्यादा वही जानता है, जिस पर पूर्ण भगवान अपनी कृपा–दृष्टि करता है। यह निवास स्थान निश्चित एवं सच्चा है और यह सत्संग द्वारा ही प्राप्त होता है। हे नानक ! वह सेवक जो इस शाश्वत निवास को संतों की संगति द्वारा प्राप्त कर लेते हैं, उनका हृदय विचलित नहीं होता॥ २६॥

सलोकु ॥ ढाहन लागे धरम राइ किनहि न घालिओ बंध ॥ नानक उबरे जपि हरी साधसंगि सनबंध ॥ १ ॥

श्लोक॥ जब यमराज ध्वस्त करने लगता है तो कोई भी उसके मार्ग में रुकावट नहीं डाल सकता। हे नानक ! जो व्यक्ति सत्संग में संबंध जोड़ कर ईश्वर की आराधना करते हैं, उनका भवसागर से उद्धार हो जाता है॥ १॥

पउड़ी ॥ ढढा ढूढत कह फिरहु ढूढनु इआ मन माहि ॥ संगि तुहारै प्रभु बसै बनु बनु कहा फिराहि ॥ ढेरी ढाहहु साधसंगि अहंबुधि बिकराल ॥ सुखु पावहु सहजे बसहु दरसनु देखि निहाल ॥ ढेरी जामै जमि मरै गरभ जोनि दुख पाइ ॥ मोह मगन लपटत रहै हउ हउ आवै जाइ ॥ ढहत ढहत अब ढहि परे साध जना सरनाइ ॥ दुख के फाहे काटिआ नानक लीए समाइ ॥ ३० ॥

पउड़ी॥ ढ – तुम परमात्मा को ढूँढने के लिए कहाँ फिर रहे हो ? खोज–तलाश तो इस हृदय में ही करनी है। ईश्वर तेरे साथ ही रहता है, तुम वन–वन में क्यों भटकते फिरते हो ? सत्संग में अपनी अहंबुद्धि के विकराल ढेर को गिरा दो। ऐसे तुझे सुख प्राप्त होगा और सुख–शांति में वास करोगे तथा प्रभु के दर्शन करके प्रसन्न होवोगे। जिसके भीतर अहंकार का यह अम्बार विद्यमान है, वह जन्मता–मरता है और गर्भयोनि का कष्ट सहन करता है। जो व्यक्ति दुनिया के मोह में मस्त हुआ है और अहंकार एवं अहंत्व में फँसा है, वह जगत् में जन्मता–मरता रहता है। मैं अब शनेः शनेः साधु–संतों की शरण में आ गिरा हूँ। हे नानक ! ईश्वर ने मेरे दुःख–क्लेश के फंदे काट दिए हैं और मुझे अपने में लीन कर लिया है॥ ३०॥

सलोकु ॥ जह साधू गोबिद भजनु कीरतनु नानक नीत ॥ णा हउ णा तूं णह छुटहि निकटि न जाईअहु दूत ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे नानक ! जहाँ संत–महांपुरुष प्रतिदिन गोबिन्द के नाम का भजन–कीर्तन करते रहते हैं। यमराज संबोधन करता है, "हे दूतो ! उस निवास के निकट मत जाना, अन्यथा न ही मेरा और न ही तुम्हारा बचाव होगा"॥ १॥

पउड़ी ॥ णाणा रण ते सीझीऐ आतम जीतै कोइ ॥ हउमै अन सिउ लरि मरै सो सोभा दू होइ ॥ मणी मिटाइ जीवत मरै गुर पूरे उपदेस॥ मनूआ जीतै हरि मिलै तिह सूरतण वेस ॥ णा को जाणै आपणो एकहि टेक अधार ॥ रैणि दिणसु सिमरत रहै सो प्रभु पुरखु अपार ॥ रेण सगल इआ मनु करै एऊ करम कमाइ ॥ हुकमै बूझै सदा सुखु नानक लिखिआ पाइ ॥ ३१ ॥

पउड़ी॥ ण – यदि कोई व्यक्ति अपने मन को वश में कर लेता है, तो वह जीवन के युद्ध को विजय कर लेता है। जो व्यक्ति अपने अहंत्व एवं द्वैतवाद के साथ लड़ता मर जाता है, वही योद्धा है। जो व्यक्ति अपने अहंत्व को त्याग देता है, वह गुरु के उपदेश द्वारा जीवित ही मोह—माया से मरा रहता है। वह अपने मन को जीत कर ईश्वर से मिल जाता है और उसकी वीरता के लिए उसको सम्मान की वेशभूषा मिलती है। किसी पदार्थ को भी वह अपना नहीं समझता। एक ईश्वर ही उसका सहारा एवं आसरा होता है। वह रात—दिन अनन्त ईश्वर की आराधना करता रहता है। वह अपने इस मन को सबकी चरण धूलि बना देता है, ऐसे कर्म वह करता है। हे नानक ! ईश्वर के हुक्म को समझ कर वह सदैव सुख प्राप्त करता है और जो कुछ उसके भाग्य में लिखा होता है, उसको प्राप्त कर लेता है॥ ३१॥

सलोकु ॥ तनु मनु धनु अरपउ तिसै प्रभू मिलावै मोहि ॥ नानक भ्रम भउ काटीऐ चूकै जम की जोह ॥ १ ॥

श्लोक॥ मैं अपना तन, मन एवं धन उसको समर्पित करता हूँ, जो मुझे मेरे प्रभु से मिला दे। हे नानक ! चूंकि प्रभु—मिलाप से ही दुविधा एवं भय नाश हो जाते हैं और मृत्यु का आतंक भी दूर हो जाता है॥ १॥

पउड़ी ॥ तता ता सिउ प्रीति करि गुण निधि गोबिद राइ ॥ फल पावहि मन बाछते तपति तुहारी जाइ ॥ त्रास मिटै जम पंथ की जासु बसै मनि नाउ ॥ गति पावहि मति होइ प्रगास महली पावहि ठाउ ॥ ताहू संगि न धनु चलै ग्रिह जोबन नह राज ॥ संतसंगि सिमरत रहहु इहै तुहारै काज ॥ ताता कछू न होई है जउ ताप निवारै आप ॥ प्रतिपालै नानक हमहि आपहि माई बाप ॥ ३२ ॥

पउड़ी॥ त – उस परमात्मा से प्रीति करो जो गुणों का भण्डार एवं सृष्टि का स्वामी है। तुझे अपने मनोवांछित फल प्राप्त होंगे और तृष्णा मिट जाएगी। जिसके हृदय में नाम निवास करता है, उसको मृत्यु का मार्ग एवं भय नहीं सताता। वह मोक्ष प्राप्त कर लेता है और उसकी मति उज्जवल हो जाती है और उसको स्वामी के आत्मस्वरूप में निवास मिल जाता है। अन्तकाल जीव के साथ न ही धन साथ जाता है, न ही घर, जवानी एवं राज्य साथ जाता है। हे जीव ! संतों की संगति में ईश्वर का भजन करता रह, केवल वही परलोक में तेरे काम आएगा। जब ईश्वर स्वयं तेरे ताप का निवारण करेगा तो तुझे निश्चित ही कोई जलन नहीं होगी। हे नानक ! ईश्वर स्वयं ही हमारा पालन—पोषण करता है, वह हमारी माता एवं पिता है॥ ३२॥

सलोकु ॥ थाके बहु बिधि घालते त्रिपति न त्रिसना लाथ ॥ संचि संचि साकत मूए नानक माइआ न साथ ॥ १ ॥

श्लोक॥ स्वेच्छाचारी जीव अनेक विधियों से परिश्रम करके हार—थक गए हैं। उनकी तृप्ति नहीं हुई और न ही उनकी तृष्णा मिटी है। हे नानक ! शाक्त जीव धन संचित करते—करते मर जाते हैं परन्तु धन—दौलत उनके साथ नहीं जाता॥ १॥

पउड़ी ॥ थथा थिरु कोऊ नही काइ पसारहु पाव ॥ अनिक बंच बल छल करहु माइआ एक उपाव ॥ थैली संचहु स्रमु करहु थाकि परहु गावार ॥ मन कै कामि न आवई अंते अउसर बार ॥ थिति पावहु गोबिद भजहु संतह की सिख लेहु ॥ प्रीति करहु सद एक सिउ इआ साचा असनेहु ॥ कारन करन करावनो सभ बिधि एकै हाथ ॥ जितु जितु लावहु तितु तितु लगहि नानक जंत अनाथ ॥ ३३ ॥

पउड़ी॥ थ– कोई भी जीव स्थिर नहीं, तुम क्यों अपने चरण फैलाते हो ? केवल धन के प्रयास की खातिर तुम बहुत धोखे एवं छल–कपट करते हो। हे मूर्ख ! तुम थैली भरने के लिए परिश्रम करते हो और फिर हार–थक कर गिर जाते हो। यह अन्तिम अवसर तेरी आत्मा के किसी काम नहीं आना। इसलिए गोबिन्द का भजन करने एवं संतों के उपदेश का अनुसरण करने से तुझे स्थिरता प्राप्त हो जाएगी। सदैव एक ईश्वर से प्रेम करो। यही (तेरा) सच्चा प्रेम है। ईश्वर सब कुछ करने वाला एवं जीव से कराने वाला है। समस्त युक्तियाँ केवल उसके वश में है। नानक का कथन है कि हे प्रभु ! जीव तो असहाय एवं विवश हैं, चूंकि जीवों को तुम जहां–जहां भी लगा देते हो, वे उस तरफ ही लग जाते हैं॥ ३३॥

सलोकु ॥ दासह एकु निहारिआ सभु कछु देवनहार ॥ सासि सासि सिमरत रहहि नानक दरस अधार ॥ १ ॥

श्लोक॥ उसके दासों ने एक ईश्वर को देखा है, जो सब कुछ देने वाला है। हे नानक! वह श्वास–श्वास से ईश्वर का चिन्तन करते जाते हैं और उसके दर्शन ही उनके जीवन का आधार है॥ १॥

पउड़ी ॥ ददा दाता एकु है सभ कउ देवनहार ॥ देंदे तोटि न आवई अगनत भरे भंडार ॥ दैनहारु सद जीवनहारा ॥ मन मूरख किउ ताहि बिसारा ॥ दोसु नही काहू कउ मीता ॥ माइआ मोह बंधु प्रभि कीता ॥ दरद निवारहि जा के आपे ॥ नानक ते ते गुरमुखि ध्रापे ॥ ३४ ॥

पउड़ी॥ द– एक परमात्मा ही वह दाता है जो समस्त जीवों को भोजन–पदार्थ देने वाला है। जीवों को देते वक्त उसकी देन में कोई कमी नहीं आती, क्योंकि उसके अक्षय भण्डार भरपूर हैं। वह देने वाला सदैव जीवित है। हे मूर्ख मन ! तू उस देने वाले दाता को क्यों भूल रहा है ? हे मेरे मित्र ! इसमें किसी का दोष नहीं। क्योंकि माया–मोह के बन्धन ईश्वर ने ही रचे हैं। हे नानक ! जिस गुरमुख का वह स्वयं दुःख दूर कर देता है, वह कृतार्थ हो जाता है॥ ३४॥

सलोकु ॥ धर जीअरे इक टेक तू लाहि बिडानी आस ॥ नानक नामु धिआईऐ कारजु आवै रासि ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे मेरे मन ! तू एक ईश्वर का सहारा ले तथा किसी दूसरे की आशा को त्याग दे। हे नानक ! भगवान के नाम का ध्यान करने से समस्त कार्य संवर जाते हैं॥ १॥

पउड़ी ॥ धधा धावत तउ मिटै संतसंगि होइ बासु ॥ धुर ते किरपा करहु आपि तउ होइ मनहि परगासु ॥ धनु साचा तेऊ सच साहा ॥ हरि हरि पूंजी नाम बिसाहा ॥ धीरजु जसु सोभा तिह बनिआ ॥ हरि हरि नामु स्रवन जिह सुनिआ ॥ गुरमुखि जिह घटि रहे समाई ॥ नानक तिह जन मिली वडाई ॥ ३५ ॥

पउड़ी॥ ध– यदि संतों–महापुरुषों की संगति में निवास हो जाए तो मन की भटकना मिट जाती है। यदि ईश्वर स्वयं आदि से ही कृपा करे तो मन में ज्ञान का प्रकाश हो जाता है। जिनके पास सच्चा

नाम-धन है, वही सच्चे साहूकार हैं। हरि-परमेश्वर का नाम उनकी जीवन-पूंजी होती है और वह उसके नाम का व्यापार करते रहते हैं। जो आदमी अपने कानों से हरि-परमेश्वर का नाम सुनता रहता है, वही आदमी धैर्यवान होता है और उसे बड़ा यश एवं शोभा मिलती है। हे नानक ! जिस गुरमुख के अन्तर्मन में भगवान का नाम निवास कर लेता है, उसे ही दुनिया में ख्याति प्राप्त होती है॥ ३५॥

सलोकु ॥ नानक नामु नामु जपु जपिआ अंतरि बाहरि रंगि ॥ गुरि पूरै उपदेसिआ नरकु नाहि साधसंगि ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे नानक ! जो व्यक्ति भीतर एवं बाहर एकाग्रचित होकर ईश्वर के नाम का जाप करता रहता है, पूर्ण गुरु से उपदेश प्राप्त करता है और संतों की सभा में शामिल होता है, ऐसा व्यक्ति कभी नरक में नहीं जाता॥ १॥

पउड़ी ॥ नंना नरकि परहि ते नाही ॥ जा कै मनि तनि नामु बसाही ॥ नामु निधानु गुरमुखि जो जपते ॥ बिखु माइआ महि ना ओइ खपते ॥ नंनाकारु न होता ता कहु ॥ नामु मंत्रु गुरि दीनो जा कहु ॥ निधि निधान हरि अंम्रित पूरे ॥ तह बाजे नानक अनहद तूरे ॥ ३६ ॥

पउड़ी॥ न-जिस व्यक्ति के मन एवं तन में भगवान का नाम निवास करता है, वह नरक में नहीं पड़ता। जो गुरमुख नाम-भण्डार का भजन करते रहते हैं, वे माया के विष में नष्ट नहीं होते। जिन जिज्ञासुओं को गुरु ने नाम-मंत्र दिया है, उनके जीवन-मार्ग में कोई बाधा नहीं आती। हे नानक ! जिनके अन्तर्मन सर्वगुणों के भण्डार हरि-नाम के अमृत से भरे रहते हैं, उनके भीतर एक ऐसा आनन्द कायम रहता है, जिस तरह लगातार अनहद ध्वनि के सर्व प्रकार के संगीत मिले-जुले स्वर में गूंज रहे हों॥ ३६॥

सलोकु ॥ पति राखी गुरि पारब्रहम तजि परपंच मोह बिकार ॥ नानक सोऊ आराधीऐ अंतु न पारावारु ॥ १ ॥

श्लोक॥ जिस पुरुष का मान-सम्मान गुरु पारब्रह्म ने बचाया है, ऐसे पुरुष ने छल, मोह एवं पाप सब कुछ छोड़ दिए हैं। हे नानक ! हमें उस पारब्रह्म-प्रभु की आराधना करनी चाहिए, जिसकी महिमा का अंत नहीं मिल सकता तथा जिसके अस्तित्व का ओर-छोर भी प्राप्त नहीं हो सकता॥ १॥

पउड़ी ॥ पपा परमिति पारु न पाइआ ॥ पतित पावन अगम हरि राइआ ॥ होत पुनीत कोट अपराधू ॥ अंम्रित नामु जपहि मिलि साधू ॥ परपच ध्रोह मोह मिटनाई ॥ जा कउ राखहु आपि गुसाई ॥ पातिसाहु छत्र सिर सोऊ ॥ नानक दूसर अवरु न कोऊ ॥ ३७ ॥

पउड़ी॥ प- परमेश्वर अपरंपार है और उसका अंत नहीं पाया जा सकता। हरि-परमेश्वर अगम्य एवं पतितपावन है। ऐसे करोड़ों ही अपराधी पवित्र हो जाते हैं, जो संतों की संगति में मिलकर भगवान के अमृत नाम का जाप करते रहते हैं। हे गुसाई ! जिसकी तुम स्वयं रक्षा करते हो, उसका छल-कपट, धोखा एवं सांसारिक मोह मिट जाते हैं। हे नानक ! ईश्वर सर्वोपरि बादशाह है, वहीं वास्तविक छत्रधारी है, कोई दूसरा उसकी समानता करने योग्य नहीं है॥ ३७॥

सलोकु ॥ फाहे काटे मिटे गवन फतिह भई मनि जीत ॥ नानक गुर ते थित पाई फिरन मिटे नित नीत ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे नानक ! यदि मन को जीत लिया जाए तो वासनाओं पर विजय हासिल हो जाती है और मोह-माया के बन्धन मिट जाते हैं एवं मोहिनी के पीछे की शंका नष्ट हो जाती है। जिस व्यक्ति

को गुरु द्वारा मन की स्थिरता प्राप्त हो जाती है, उस व्यक्ति के जन्म–मरण के चक्र हमेशा के लिए मिट जाते हैं॥ १॥

पउड़ी ॥ फफा फिरत फिरत तू आइआ ॥ दूलभ देह कलिजुग महि पाइआ ॥ फिरि इआ अउसरु चरै न हाथा ॥ नामु जपहु तउ कटीअहि फासा ॥ फिरि फिरि आवन जानु न होई ॥ एकहि एक जपहु जपु सोई ॥ करहु क्रिपा प्रभ करनैहारे ॥ मेलि लेहु नानक बेचारे ॥ ३८ ॥

पउड़ी॥ फ – (हे जीव !) तू कितनी ही योनियों में भटकता आया है तथा इस कलियुग में तुझे दुर्लभ मनुष्य देहि प्राप्त हुई है। यदि तू मोह–माया के बन्धनों में फँसा रहा तो ऐसा सुनहरी अवसर दुबारा नहीं मिलेगा। ईश्वर के नाम की स्तुति करता रह, मृत्यु का बन्धन कट जाएगा। केवल एक ईश्वर के नाम का चिन्तन करने से तेरा बार–बार जन्म–मरण का चक्र मिट जाएगा। नानक का कथन है कि हे सृष्टिकर्त्ता प्रभु ! अपनी कृपा धारण करो और बेचारे जीव को अपने साथ मिला लो॥ ३८॥

सलोकु ॥ बिनउ सुनहु तुम पारब्रहम दीन दइआल गुपाल ॥ सुख संपै बहु भोग रस नानक साध रवाल ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे दीनदयाल ! हे गोपाल ! हे पारब्रह्म ! तुम मेरी एक विनती सुनो। हे नानक ! संतजनों की चरणधूलि ही विभिन्न सुखों, धन–पदार्थों एवं अनेक रसों के भोग के समान है॥ १॥

पउड़ी ॥ बबा ब्रहमु जानत ते ब्रहमा ॥ बैसनो ते गुरमुखि सुच धरमा ॥ बीरा आपन बुरा मिटावै ॥ ताहू बुरा निकटि नही आवै ॥ बाधिओ आपन हउ हउ बंधा ॥ दोसु देत आगह कउ अंधा ॥ बात चीत सभ रही सिआनप ॥ जिसहि जनावहु सो जानै नानक ॥ ३६ ॥

पउड़ी॥ ब – जो ब्रह्म को समझता है, वही वास्तविक ब्राह्मण है। वैष्णव वही है जो गुरु का सान्निध्य लेकर आत्मिक शुद्धता के धर्म का पालन करता है। जो व्यक्ति अपनी बुराई का नाश कर देता है, वही शूरवीर होता है तथा फिर बुराई उसके निकट नहीं आती। मनुष्य स्वयं ही अहंकार के बन्धनों में फँसा हुआ है। परन्तु ज्ञानहीन मनुष्य दूसरों पर दोष लगाता है। बातचीत एवं चतुरता किसी योग्य नहीं। हे नानक ! जिसको ईश्वर सूझ प्रदान करता है, वही उसको समझता है॥ ३६॥

सलोकु ॥ भै भंजन अघ दूख नास मनहि अराधि हरे ॥ संतसंग जिह रिद बसिओ नानक ते न भ्रमे ॥ १ ॥

श्लोक॥ (हे जीव !) अपने मन में उस भगवान की आराधना कर, जो भय को नष्ट करने वाला और सर्व प्रकार के पाप एवं दुःखों का नाश करने वाला है। हे नानक ! संतों की संगति में रहकर जिन लोगों के हृदय में प्रभु आ बसता है, उनके हर प्रकार के भ्रम समाप्त हो जाते है॥ १॥

पउड़ी ॥ भभा भरमु मिटावहु अपना ॥ इआ संसारु सगल है सुपना ॥ भरमे सुरि नर देवी देवा ॥ भरमे सिध साधिक ब्रहमेवा ॥ भरमि भरमि मानुख डहकाए ॥ दुतर महा बिखम इह माए ॥ गुरमुखि भ्रम भै मोह मिटाइआ ॥ नानक तेह परम सुख पाइआ ॥ ४० ॥

पउड़ी॥ भ–अपना भ्रम मिटा दो, क्योंकि यह समूचे संसार का साथ स्वप्न के तुल्य है। स्वर्ग निवासी पुरुष और देवी–देवते भी भ्रम में पड़ते रहे हैं। सिद्ध, साधक एवं ब्रह्मा भी भ्रम में भटकाए हुए हैं। भटक–भटक कर मनुष्य नष्ट हो गए हैं। यह माया का सागर बड़ा विषम एवं तैरने के लिए कठिन है। हे नानक ! जिसने गुरु की शरण में अपना भ्रम, भय एवं सांसारिक मोह को नष्ट कर दिया है, वह परम सुख प्राप्त कर लेता है॥ ४०॥

सलोकु ॥ माइआ डोलै बहु बिधी मनु लपटिओ तिह संग ॥ मागन ते जिह तुम रखहु सु नानक नामहि रंग ॥ १ ॥

श्लोक॥ इन्सान का चंचल मन बहुत प्रकार से माया हेतु डगमगाता रहता है और माया से ही लिपटता रहता है। नानक का कथन है कि हे ईश्वर! जिसे तुम माया माँगने से रोकते हो, उसका नाम से प्रेम हो जाता है॥ १॥

पउड़ी ॥ ममा मागनहार इआना ॥ देनहार दे रहिओ सुजाना ॥ जो दीनो सो एकहि बार ॥ मन मूरख कह करहि पुकार ॥ जउ मागहि तउ मागहि बीआ ॥ जा ते कुसल न काहू थीआ ॥ मागनि माग त एकहि माग ॥ नानक जा ते परहि पराग ॥ ४१ ॥

पउड़ी॥ म – माँगने वाला जीव मूर्ख है। देने वाला चतुर दाता देन देता जा रहा है। जो कुछ भी प्रभु ने देना होता है, वह उसको एक बार ही दे देता है। हे मूर्ख मन! तुम क्यों ऊँची–ऊँची पुकार कर रहे हो? जब कभी भी तुम माँगते हो, तब तुम सांसारिक पदार्थ ही माँगते हो, जिन से किसी को भी प्रसन्नता प्राप्त नहीं हुई। नानक का कथन है कि हे मूर्ख मन! यदि तूने दात ही माँगनी है तो एक ईश्वर के नाम की माँग, जिससे तेरा संसार सागर से कल्याण हो जाएगा॥ ४१॥

सलोकु ॥ मति पूरी परधान ते गुर पूरे मन मंत ॥ जिह जानिओ प्रभु आपुना नानक ते भगवंत ॥ १ ॥

श्लोक॥ जिनके मन में पूर्ण गुरु का मंत्र विद्यमान हो जाता है, उनकी बुद्धि पूर्ण हो जाती है और वे विख्यात हो जाते हैं। हे नानक! वे जीव बड़े भाग्यशाली हैं, जो अपने प्रभु को जान लेते हैं॥ १॥

पउड़ी ॥ ममा जाहू मरमु पछाना ॥ भेटत साधसंग पतीआना ॥ दुख सुख उआ कै समत बीचारा ॥ नरक सुरग रहत अउतारा ॥ ताहू संग ताहू निरलेपा ॥ पूरन घट घट पुरख बिसेखा ॥ उआ रस महि उआहू सुखु पाइआ ॥ नानक लिपत नही तिह माइआ ॥ ४२ ॥

पउड़ी॥ म–जिसने ईश्वर का भेद पा लिया है, वह संतों की संगति में मिलकर तृप्त हो जाता है। ऐसा व्यक्ति दुःख–सुख को एक समान समझता है। वह नरक–स्वर्ग में फँसने से बच जाता है। वह संसार के साथ रहता है, लेकिन फिर भी इससे निर्लिप्त रहता है। वह श्रेष्ठ प्रभु प्रत्येक हृदय में परिपूर्ण दिखता है। हे नानक! ईश्वर के उस प्रेम में ही उसे सुख प्राप्त होता है और माया उसको प्रभावित नहीं कर सकती॥ ४२॥

सलोकु ॥ यार मीत सुनि साजनहु बिनु हरि छूटनु नाहि ॥ नानक तिह बंधन कटे गुर की चरनी पाहि ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे मित्रो, हे सज्जनों एवं दोस्तो! ध्यानपूर्वक सुनो। भगवान के सिमरन बिना किसी को भी मुक्ति प्राप्त नहीं होती। हे नानक! जो लोग गुरु के चरण–स्पर्श करते हैं, उनके (मोह–माया के) बन्धन मिट जाते हैं॥ १॥

पवड़ी ॥ यया जतन करत बहु बिधीआ ॥ एक नाम बिनु कह लउ सिधीआ ॥ याहू जतन करि होत छुटारा ॥ उआहू जतन साध संगारा ॥ या उबरन धारै सभु कोऊ ॥ उआहि जपे बिनु उबर न होऊ ॥ याहू तरन तारन समराथा ॥ राखि लेहु निरगुन नरनाथा ॥ मन बच क्रम जिह आपि जनाई ॥ नानक तिह मति प्रगटी आई ॥ ४३ ॥

पउड़ी॥ य – इन्सान (मोक्ष की प्राप्ति हेतु) अनेक प्रकार के यत्न करता रहता है किन्तु भगवान का नाम–सिमरन किए बिना उसे कामयाबी नहीं मिलती। जिन यत्नों द्वारा मोक्ष मिल सकता है, वह यत्न यही है कि संतों की संगति की जाए। चाहे हरेक व्यक्ति मोक्ष का ख्याल धारण किए बैठा है परन्तु उस ईश्वर को स्मरण किए बिना मोक्ष नहीं मिल सकता। इस भवसागर को पार करने के लिए ईश्वर ही जहाज के सामर्थ्य है। हे प्रभु ! गुणविहीन प्राणियों की रक्षा कीजिए। हे नानक ! जिन लोगों के मन, कर्म, वचन में ईश्वर स्वयं सूझ उत्पन्न कर देता है, उनकी मति उज्जवल हो जाती है॥ ४३॥

सलोकु ॥ रोसु न काहू संग करहु आपन आपु बीचारि ॥ होइ निमाना जगि रहहु नानक नदरी पारि ॥ १ ॥

श्लोक॥ (हे मानव !) किसी अन्य पर क्रोध मत करो और अपने आप पर विचार करो। हे नानक ! यदि तू दुनिया में नम्रता सहित रहे तो ईश्वर की कृपा से तेरा भवसागर से उद्धार हो जाएगा॥ १॥

पउड़ी ॥ रारा रेन होत सभ जा की ॥ तजि अभिमानु छुटै तेरी बाकी ॥ रणि दरगहि तउ सीझहि भाई ॥ जउ गुरमुखि राम नाम लिव लाई ॥ रहत रहत रहि जाहि बिकारा गुर पूरे कै सबदि अपारा ॥ राते रंग नाम रस माते ॥ नानक हरि गुर कीनी दाते ॥ ४४ ॥

पउड़ी॥ र – सारा विश्व जिस गुरु की चरण–धूलि होता है, तू भी उसके समक्ष अपना अभिमान त्याग दे और तेरे सुपुर्द जो (विकारों का) बकाया है, वह खत्म हो जाएगा। हे भाई ! इस संसार–रूपी रणभूमि में एवं ईश्वर के दरबार में तभी तुझे कामयाबी मिल सकती है, यदि गुरु के सान्निध्य में रहकर ईश्वर के नाम में वृत्ति लगाएगा। पूर्ण गुरु के अपार शब्द द्वारा तेरे पाप धीरे–धीरे मिट जाएँगे। हे नानक ! जिन लोगों को गुरु ने ईश्वर–नाम की देन प्रदान की है, वे नाम के प्रेम में मग्न रहते हैं और ईश्वर नाम के रस में मस्त हो जाते हैं॥ ४४॥

सलोकु ॥ लालच झूठ बिखै बिआधि इआ देही महि बास ॥ हरि हरि अंम्रितु गुरमुखि पीआ नानक सूखि निवास ॥ १ ॥

श्लोक॥ इस तन में लोभ, झूठ एवं पापों–विकारों के रोग वास करते हैं। हे नानक ! जिस गुरमुख ने हरि–परमेश्वर के नाम का अमृत पान किया है, वह सुखपूर्वक निवास करता है॥ १॥

पउड़ी ॥ लला लावउ अउखध जाहू ॥ दूख दरद तिह मिटहि खिनाहू ॥ नाम अउखधु जिह रिदै हितावै ॥ ताहि रोगु सुपनै नही आवै ॥ हरि अउखधु सभ घट है भाई ॥ गुर पूरे बिनु बिधि न बनाई ॥ गुरि पूरै संजमु करि दीआ ॥ नानक तउ फिरि दूख न थीआ ॥ ४५ ॥

पउड़ी॥ ल – हे ईश्वर ! जिसे भी तुम अपने नाम की औषधि लगाते हो, एक क्षण में ही उसके दुःख–दर्द समाप्त हो जाते हैं। जो व्यक्ति अपने हृदय में ईश्वर के नाम की औषधि से प्रेम करता है, स्वप्न में भी रोग उसको नहीं सताते। हे भाई ! ईश्वर के नाम की औषधि प्रत्येक हृदय में विद्यमान है। पूर्ण गुरु के अलावा किसी को भी इसे तैयार करने की विधि नहीं आती। हे नानक ! जब पूर्ण गुरु संयम दर्शाकर औषधि देते हैं, मनुष्य पुनः दुखी नहीं होता॥ ४५॥

सलोकु ॥ वासुदेव सरबत्र मै ऊन न कतहू ठाइ ॥ अंतरि बाहरि संगि है नानक काइ दुराइ ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे नानक ! वासुदेव तो प्रत्येक स्थान पर मौजूद है, ऐसा कोई भी स्थान नहीं है, जहाँ वह मौजूद न हो। समस्त प्राणियों के भीतर एवं बाहर ईश्वर है, उससे क्या छिपाया जा सकता है॥ १॥

पउड़ी ॥ ववा वैरु न करीऐ काहू ॥ घट घट अंतरि ब्रहम समाहू ॥ वासुदेव जल थल महि रविआ ॥ गुर प्रसादि विरलै ही गविआ ॥ वैर विरोध मिटे तिह मन ते ॥ हरि कीरतनु गुरमुखि जो सुनते ॥ वरन चिहन सगलह ते रहता ॥ नानक हरि हरि गुरमुखि जो कहता ॥ ४६ ॥

पउड़ी॥ व — परमात्मा कण–कण में प्रत्येक हृदय में विद्यमान है, इसलिए किसी से भी वैर मत करो। वासुदेव सागर एवं धरती में व्यापक है। गुरु की कृपा से कोई विरला पुरुष ही उसका यशोगान करता है। जो व्यक्ति गुरु के सान्निध्य में रहकर भगवान का भजन–कीर्तन सुनते हैं, उनके मन से वैर–विरोध मिट जाते हैं। हे नानक! जो व्यक्ति गुरु के माध्यम से भगवान के नाम का चिन्तन करते हैं, वे जात–पात एवं रूपरेखा से मुक्त हो जाते हैं॥ ४६॥

सलोकु ॥ हउ हउ करत बिहानीआ साकत मुगध अजान ॥ ड़ड़कि मुए जिउ त्रिखावंत नानक किरति कमान ॥ १ ॥

श्लोक॥ शाक्त, मूर्ख एवं नासमझ इन्सान अहंकार करता हुआ अपनी आयु बिता देता है। हे नानक! दुःख में वह प्यासे पुरुष की भाँति मर जाता है और अपने किए कर्मों का फल भोगता है॥ १॥

पउड़ी ॥ ड़ाड़ा ड़ाड़ि मिटै संगि साधू ॥ करम धरम ततु नाम अराधू ॥ रूड़ो जिह बसिओ रिद माही ॥ उआ की ड़ाड़ि मिटत बिनसाही ॥ ड़ाड़ि करत साकत गावारा ॥ जेह हीऐ अहंबुधि बिकारा ॥ ड़ाड़ा गुरमुखि ड़ाड़ि मिटाई ॥ निमख माहि नानक समझाई ॥ ४७ ॥

पउड़ी॥ ड़ — संतजनों की संगति करने से मनुष्य के हर प्रकार के झगड़े समाप्त हो जाते हैं। भगवान के नाम की आराधना करनी ही कर्म एवं धर्म का मूल है। जिसके हृदय में सुन्दर प्रभु निवास करता है, उसका झगड़ा नाश हो जाता है। भगवान से टूटे हुए मूर्ख व्यक्ति के हृदय में अहंबुद्धि का पाप निवास करता है और वह विवाद उत्पन्न कर लेता है। हे नानक! गुरमुख का एक क्षण में ही झगड़ा मिट जाता है और उसे सुख उपलब्ध हो जाता है॥ ४७॥

सलोकु ॥ साधू की मन ओट गहु उकति सिआनप तिआगु ॥ गुर दीखिआ जिह मनि बसै नानक मसतकि भागु ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे मेरे मन! अपनी उक्ति एवं चतुराई को त्याग कर संतों की शरण ले। हे नानक! जिस व्यक्ति के हृदय में गुरु–उपदेश का वास हो जाता है, उसके माथे पर भाग्य उदय हो जाता है॥ १॥

पउड़ी ॥ ससा सरनि परे अब हारे ॥ सासत्र सिम्रिति बेद पूकारे ॥ सोधत सोधत सोधि बीचारा ॥ बिनु हर भजन नही छुटकारा ॥ सासि सासि हम भूलनहारे ॥ तुम समरथ अगनत अपारे ॥ सरनि परे की राखु दइआला ॥ नानक तुमरे बाल गुपाला ॥ ४८ ॥

पउड़ी॥ स—हे परमात्मा! अब हारकर तेरी शरण में आए हैं। विद्वान लोग शास्त्र, स्मृतियों का उच्च स्वर में अध्ययन करते हैं, जांच–पड़ताल एवं निर्णय करने से अनुभव कर लिया है कि भगवान के भजन के अलावा मनुष्य को मुक्ति नहीं मिलती। हम श्वास–श्वास से भूल करते रहते हैं। हे प्रभु! तुम सर्वशक्तिमान, गणना–रहित एवं अनन्त हो। हे दया के घर! शरण में आए हुओं की रक्षा करो। नानक का कथन है कि हे गोपाल! हम तो तेरी ही संतान हैं॥ ४८॥

सलोकु ॥ खुदी मिटी तब सुख भए मन तन भए अरोग ॥ नानक द्रिसटी आइआ उसतति करनै जोगु ॥ १ ॥

श्लोक॥ जब अहंकार मिट जाता है तो सुख–शांति उत्पन्न हो जाती है और मन एवं तन स्वस्थ हो जाते हैं। हे नानक ! अहंकार के मिटने से ही प्राणी को प्रभु दिखाई देता है, जो सत्य ही महिमा–स्तुति का हकदार है॥ १॥

पउड़ी ॥ खखा खरा सराहउ ताहू ॥ जो खिन महि ऊने सुभर भराहू ॥ खरा निमाना होत परानी ॥ अनदिनु जापै प्रभ निरबानी ॥ भावै खसम त उआ सुखु देता ॥ पारब्रहमु ऐसो आगनता ॥ असंख खते खिन बखसनहारा ॥ नानक साहिब सदा दइआरा ॥ ४६ ॥

पउड़ी॥ ख – उस परमात्मा की एकाग्रचित होकर प्रशंसा करते रहो, जो एक क्षण में ही उन हृदयों को शुभ गुणों से भरपूर कर देता है, जो पहले गुणों से शून्य थे। जब प्राणी भली प्रकार से विनीत हो जाता है तो वह रात–दिन निर्मल प्रभु का भजन करता रहता है। यदि ईश्वर को भला लगे तो वह सुख प्रदान करता है। पारब्रह्म प्रभु ऐसा अनन्त है। वह असंख्य पाप एक क्षण में क्षमा कर देता है। हे नानक! प्रभु सदैव ही दया का घर है॥ ४६॥

सलोकु ॥ सति कहउ सुनि मन मेरे सरनि परहु हरि राइ ॥ उकति सिआनप सगल तिआगि नानक लए समाइ ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे मेरे मन ! मैं तुझे सत्य कहता हूँ, जरा ध्यानपूर्वक सुन। हरि–परमेश्वर की शरण में आओ। हे नानक ! अपनी समस्त युक्तियाँ एवं चतुरता त्याग दे, फिर ईश्वर तुझे अपने भीतर लीन कर लेगा॥ १॥

पउड़ी ॥ ससा सिआनप छाडु इआना ॥ हिकमति हुकमि न प्रभु पतीआना ॥ सहस भाति करहि चतुराई ॥ संगि तुहारै एक न जाई ॥ सोऊ सोऊ जपि दिन राती ॥ रे जीअ चलै तुहारै साथी ॥ साध सेवा लावै जिह आपै ॥ नानक ता कउ दूखु न बिआपै ॥ ५० ॥

पउड़ी॥ स – हे मूर्ख प्राणी ! अपनी चतुरता को त्याग दे। ईश्वर चतुराइयों एवं हुक्म (उपदेश) करने से प्रसन्न नहीं होता। चाहे तू हजारों प्रकार की चतुरता भी करे परन्तु एक चतुराई भी तेरा साथ नहीं देगी। हे मेरे मन ! उस ईश्वर को ही दिन–रात स्मरण करता रह, ईश्वर की याद ने ही तेरे साथ जाना है। हे नानक ! जिस व्यक्ति को ईश्वर स्वयं संतों की सेवा में लगाता है, उसे कोई भी मुसीबत प्रभावित नहीं करती॥ ५०॥

सलोकु ॥ हरि हरि मुख ते बोलना मनि वूठै सुखु होइ ॥ नानक सभ महि रवि रहिआ थान थनंतरि सोइ ॥ १ ॥

श्लोक॥ हरि–परमेश्वर के नाम को मुख से बोलने एवं इसको हृदय में बसाने से सुख प्राप्त होता है। हे नानक ! प्रभु सर्वव्यापक है और प्रत्येक स्थान के भीतर वह मौजूद है॥ १॥

पउड़ी ॥ हेरउ घटि घटि सगल कै पूरि रहे भगवान ॥ होवत आए सद सदीव दुख भंजन गुर गिआन ॥ हउ छुटकै होइ अनंदु तिह हउ नाही तह आपि ॥ हते दूख जनमह मरन संतसंग परताप ॥ हित करि नाम द्रिड़ै दइआला ॥ संतह संगि होत किरपाला ॥ ओरै कछू न किनहू कीआ ॥ नानक सभु कछु प्रभ ते हूआ ॥ ५१ ॥

पउड़ी॥ देखो ! भगवान सबके हृदय में परिपूर्ण हो रहा है। ईश्वर सदैव अस्तित्व वाला चलायमान है, वह प्राणियों के दुःख नष्ट करने वाला है तथा यह सूझ गुरु का ज्ञान प्रदान करता है। अपना

अहंकार नष्ट करने से मनुष्य प्रसन्नता प्राप्त कर लेता है। जहाँ अहंकार नहीं वहाँ ईश्वर स्वयं मौजूद है। संतों की संगति के प्रताप द्वारा जन्म–मरण की पीड़ा निवृत्त हो जाती है। जो लोग संतों की संगति में रहकर प्रभु के नाम को प्रेमपूर्वक अपने हृदय में स्थित करते हैं, दया का घर ईश्वर उन पर कृपालु हो जाता है। यहाँ (इहलोक में) किसी ने कुछ भी स्वयं सम्पूर्ण नहीं किया। हे नानक! प्रभु ने ही यह सृष्टि रचना की हुई है॥ ५१॥

सलोकु ॥ लेखै कतहि न छूटीऐ खिनु खिनु भूलनहार ॥ बखसनहार बखसि लै नानक पारि उतार ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे नानक! यदि हम जीवों के कर्मों का हिसाब किया जाए तो हमें मुक्ति नहीं मिल सकती, क्योंकि हम हर समय भूल ही करते रहते हैं। हे क्षमाशील ईश्वर! तुम स्वयं ही हमारी भूल क्षमा करके हमें भवसागर से पार कर दो॥ १॥

पउड़ी ॥ लूण हरामी गुनहगार बेगाना अलप मति ॥ जीउ पिंडु जिनि सुख दीए ताहि न जानत तत ॥ लाहा माइआ कारने दह दिसि ढूढन जाइ ॥ देवनहार दातार प्रभ निमख न मनहि बसाइ ॥ लालच झूठ बिकार मोह इआ संपै मन माहि ॥ लंपट चोर निंदक महा तिनहू संगि बिहाइ ॥ तुधु भावै ता बखसि लैहि खोटे संगि खरे ॥ नानक भावै पारब्रहम पाहन नीरि तरे ॥ ५२ ॥

पउड़ी॥ मूर्ख एवं अल्पबुद्धि वाला जीव नमकहराम एवं गुनहगार है। जिस प्रभु ने उसे यह आत्मा, शरीर एवं सुख प्रदान किया है, उससे वह अपरिचित ही रहता है, उसे पहचानता ही नहीं। माया की खातिर वह दसों दिशाओं में खोज करने हेतु जाता है लेकिन सबकुछ देने वाले दाता–प्रभु को वह क्षण भर के लिए भी अपने हृदय में नहीं बसाता। लालच, झूठ, विकार एवं सांसारिक मोह, इनको वह अपने हृदय में एकत्र करता है। जो बड़े विषयी, तस्कर एवं निन्दक हैं, उनके साथ वह अपना जीवन व्यतीत करता है। हे परमात्मा! यदि तुझे उपयुक्त लगे तो तुम स्वयं ही बुरे लोगों को भले लोगों की संगति में रखकर क्षमा कर देते हो। हे नानक! यदि पारब्रह्म प्रभु को उपयुक्त लगे तो पत्थर भी जल में तैरने लग जाता है॥ ५२॥

सलोकु ॥ खात पीत खेलत हसत भरमे जनम अनेक ॥ भवजल ते काढहु प्रभू नानक तेरी टेक ॥ १ ॥

श्लोक॥ नानक का कथन है कि हे ईश्वर! हम प्राणी माया से संबंधित पदार्थ ही खाते–पीते एवं माया के विलासों में ही हंसते–खेलते कितनी ही योनियों में भटकते आ रहे हैं। हे प्रभु! हम जीवों को भवसागर से बाहर निकाल, क्योंकि हमें तो तेरा ही सहारा है॥ १॥

पउड़ी ॥ खेलत खेलत आइओ अनिक जोनि दुख पाइ ॥ खेद मिटे साधू मिलत सतिगुर बचन समाइ ॥ खिमा गही सचु संचिओ खाइओ अंम्रितु नाम ॥ खरी क्रिपा ठाकुर भई अनद सूख बिस्राम ॥ खेप निबाही बहुतु लाभ घरि आए पतिवंत ॥ खरा दिलासा गुरि दीआ आइ मिले भगवंत ॥ आपन कीआ करहि आपि आगै पाछै आपि ॥ नानक सोऊ सराहीऐ जि घटि घटि रहिआ बिआपि ॥ ५३ ॥

पउड़ी॥ जीव माया के विलासों में मन लगाता, अनगिनत योनियों से गुजरता हुआ, दुःख सहन करता आता है। संतों को मिलने एवं सतिगुरु के उपदेश में लीन होने से दुःख–क्लेश नष्ट हो जाते हैं। सहनशीलता को धारण करने और सत्य को एकत्र करने से मनुष्य नाम रूपी अमृत का सेवन करता है। जब प्रभु अपनी कृपा करता है तो हमें आनन्द एवं प्रसन्नता में सुख का निवास मिल जाता है। जिस

पुरुष ने (गुरु जी से विधि सीखकर गुणस्तुति का) व्यापार समस्त आयु निभाया, उसने लाभ प्राप्त किया है, और वह (दुविधा से बचकर) आदर–सत्कार पाता है। गुरु ने उसे भारी धैर्य प्रदान किया है और वह भगवान के चरणों में मिला है। हे ईश्वर ! यह सारी लीला तूने ही रची है, अब भी तुम स्वयं ही सब कुछ कर रहे हो। लोक–परलोक में प्राणियों के रक्षक तुम स्वयं हो। हे नानक ! केवल उस भगवान की महिमा–स्तुति करते रहो, जो प्रत्येक हृदय में समाया हुआ है॥ ५३॥

सलोकु ॥ आए प्रभ सरनागती किरपा निधि दइआल ॥ एक अखरु हरि मनि बसत नानक होत निहाल ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे कृपा के भण्डार, हे दया के घर प्रभु ! हम जीव तुम्हारी ही शरण में आए हैं। हे नानक ! जिस व्यक्ति के अन्तर्मन में एक अनश्वर परमात्मा मौजूद है, वह कृतार्थ हो जाता है॥ १॥

पउड़ी ॥ अखर महि त्रिभवन प्रभि धारे ॥ अखर करि करि बेद बीचारे ॥ अखर सासत्र सिंम्रिति पुराना ॥ अखर नाद कथन वख्याना ॥ अखर मुकति जुगति भै भरमा ॥ अखर करम किरति सुच धरमा ॥ द्रिसटिमान अखर है जेता ॥ नानक पारब्रहम निरलेपा ॥ ५४ ॥

पउड़ी॥ तीनों लोकों की रचना ईश्वर ने अपने हुक्म में की है। ईश्वर के हुक्मानुसार वेद रचे गए और अध्ययन किए गए। समस्त शास्त्र, स्मृतियां एवं पुराण भगवान के हुक्म का प्रकट रूप हैं। इन पुराणों, शास्त्रों एवं स्मृतियों के भजन, कथन एवं व्याख्या भी भगवान के हुक्म का ही प्रकाश है। संसार के भय एवं दुविधा से मुक्ति पाना भी भगवान के हुक्म का प्रकाश है। धार्मिक संस्कारों, सांसारिक कर्मों, पवित्रता एवं धर्म का वर्णन भी भगवान का हुक्म हैं। हे नानक ! जितना भी यह दृष्टिगोचर जगत् है, इसमें अनश्वर प्रभु का हुक्म सक्रिय है, फिर भी पारब्रह्म प्रभु निर्लिप्त है॥ ५४॥

सलोकु ॥ हथि कलंम अगंम मसतकि लिखावती ॥ उरझि रहिओ सभ संगि अनूप रूपावती ॥ उसतति कहनु न जाइ मुखहु तुहारीआ ॥ मोही देखि दरसु नानक बलिहारीआ ॥ १ ॥

श्लोक॥ उस अगम्य ईश्वर के हाथ में (हुक्म–रूपी) कलम है। वह समस्त जीवों के मस्तक पर कर्मों के अनुसार भाग्य लिख रहा है। अनूप सुन्दरता वाला प्रभु समस्त प्राणियों के साथ मिला हुआ है। नानक का कथन है कि हे प्रभु ! तेरी महिमा मैं अपने मुख से व्यक्त नहीं कर सकता। तेरे दर्शन करके मैं मुग्ध हो गया हूँ और तुझ पर न्यौछावर हो रहा हूँ॥ १॥

पउड़ी ॥ हे अचुत हे पारब्रहम अबिनासी अघ नास ॥ हे पूरन हे सरब मै दुख भंजन गुणतास ॥ हे संगी हे निरंकार हे निरगुण सभ टेक ॥ हे गोबिद हे गुण निधान जा कै सदा बिबेक ॥ हे अपरंपर हरि हरे हहि भी होवनहार ॥ हे संतह कै सदा संगि निधारा आधार ॥ हे ठाकुर हउ दासरो मै निरगुन गुनु नही कोइ ॥ नानक दीजै नाम दानु राखउ हीऐ परोइ ॥ ५५ ॥

पउड़ी॥ नानक का कथन है कि हे अच्युत ! हे पारब्रह्म ! हे अविनाशी ! हे पापनाशक ! हे सर्वव्यापक ! हे दुःखनाशक ! हे गुणों के भण्डार ! हे निरंकार प्रभु ! हे निर्गुण ! हे समस्त प्राणियों के सहारे ! हे गोबिन्द ! हे गुणों के खजाने ! तेरे पास सदैव विवेक है। हे अपरम्पार प्रभु ! तुम अब भी मौजूद हो, तुम सदा सत्यस्वरूप हो। हे संतों के सदा सहायक ! तू ही निराश्रितों का आश्रय है। हे ठाकुर ! मैं तेरा छोटा–सा (निम्न) सेवक हूँ। मैं गुणविहीन हूँ, मुझ में कोई भी गुण मौजूद नहीं। मुझे अपने नाम का दान प्रदान कीजिए चूंकि जो मैं इसे अपने हृदय में पिरोकर रखूँ॥ ५५॥

सलोकु ॥ गुरदेव माता गुरदेव पिता गुरदेव सुआमी परमेसुरा ॥ गुरदेव सखा अगिआन भंजनु गुरदेव बंधिप सहोदरा ॥ गुरदेव दाता हरि नामु उपदेसै गुरदेव मंतु निरोधरा ॥ गुरदेव सांति सति बुधि मूरति गुरदेव पारस परस परा ॥ गुरदेव तीरथु अंम्रित सरोवरु गुर गिआन मजनु अपरंपरा ॥ गुरदेव करता सभि पाप हरता गुरदेव पतित पवित करा ॥ गुरदेव आदि जुगादि जुगु जुगु गुरदेव मंतु हरि जपि उधरा ॥ गुरदेव संगति प्रभ मेलि करि किरपा हम मूड़ पापी जितु लगि तरा ॥ गुरदेव सतिगुरु पारब्रहमु परमेसरु गुरदेव नानक हरि नमसकरा ॥ १ ॥ एहु सलोकु आदि अंति पड़णा ॥

श्लोक॥ गुरु ही माता है, गुरु ही पिता है और गुरु ही जगत् का स्वामी परमेश्वर है। गुरु ही अज्ञानता का अँधेरा नाश करने वाला मित्र है। गुरु ही रिश्तेदार एवं भाई है। गुरु ही दाता एवं हरि नाम का उपदेशक है और गुरु ही मेरा अचूक मन्त्र है। गुरु सुख–शांति, सत्य एवं बुद्धि की मूर्ति है। गुरु ही ऐसा पारस है, जिसे स्पर्श करके प्राणी का भवसागर से उद्धार हो जाता है। गुरु ही तीर्थ एवं अमृत का सरोवर है। गुरु के ज्ञान में स्नान करने से मनुष्य अपरम्पार प्रभु को मिल जाता है। गुरु ही सृष्टिकर्त्ता एवं समूचे पापों का नाश करने वाले हैं और गुरु पतितों को पवित्र–पावन करने वाले हैं। जब से संसार की रचना हुई है, गुरु आदिकाल से ही हरेक युग में है। गुरु ईश्वर के नाम का मन्त्र है, जिसका जाप करने से प्राणी का उद्धार हो जाता है। हे प्रभु ! कृपा करके हमें गुरु की संगति प्रदान करो तांकि हम मूर्ख एवं पापी उसकी संगति में रहकर भवसागर से पार हो जाएँ। गुरु स्वयं ही पारब्रह्म एवं परमेश्वर है। हे नानक ! भगवान के रूप गुरु की वन्दना करनी चाहिए॥ १॥ यह श्लोक शुरु से लेकर अंत तक पढ़ना है।

गउड़ी सुखमनी मः ५ ॥ सलोकु ॥ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

आदि गुरए नमह ॥ जुगादि गुरए नमह ॥ सतिगुरए नमह ॥ स्री गुरदेवए नमह ॥ १ ॥

श्लोक॥ मैं आदि गुरु को प्रणाम करता हूँ। मैं पहले युगों के गुरु को प्रणाम करता हूँ। मैं सतिगुरु को प्रणाम करता हूँ। मैं श्री गुरुदेव जी को प्रणाम करता हूँ॥ १॥

असटपदी ॥ सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥ कलि कलेस तन माहि मिटावउ ॥ सिमरउ जासु बिसुंभर एकै ॥ नामु जपत अगनत अनेकै ॥ बेद पुरान सिंम्रिति सुधाख्यर ॥ कीने राम नाम इक आख्यर ॥ किनका एक जिसु जीअ बसावै ॥ ता की महिमा गनी न आवै ॥ कांखी एकै दरस तुहारो ॥ नानक उन संगि मोहि उधारो ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ परमात्मा का नाम सिमरन करो और नाम–सिमरन करके सुख हासिल करो। इस तन में जो दुःख–क्लेश हैं, उन्हें मिटा लो। केवल, एक जगत् के पालनहार प्रभु के यश को स्मरण करो। असंख्य लोग प्रभु के अनेक नामों का जाप करते हैं। पवित्र अक्षर वाले वेद, पुराण एवं स्मृतियां प्रभु के एक अक्षर की रचना है। जिसके हृदय में राम का नाम थोड़ा–सा भी वास करता है, उसकी महिमा व्यक्त नहीं की जा सकती। हे प्रभु ! जो लोग तेरे दर्शनों के अभिलाषी हैं, उनकी संगति में रखकर मुझ नानक का भी उद्धार कर दो॥ १॥

सुखमनी सुख अंम्रित प्रभ नामु ॥ भगत जना कै मनि बिस्राम ॥ रहाउ ॥ प्रभ कै सिमरनि गरभि न बसै ॥ प्रभ कै सिमरनि दूखु जमु नसै ॥ प्रभ कै सिमरनि कालु परहरै ॥ प्रभ कै सिमरनि दुसमनु टरै ॥ प्रभ सिमरत कछु बिघनु न लागै ॥ प्रभ कै सिमरनि अनदिनु जागै ॥ प्रभ कै सिमरनि भउ न बिआपै ॥ प्रभ कै सिमरनि दुखु न संतापै ॥ प्रभ का सिमरनु साध कै संगि ॥ सरब निधान नानक हरि रंगि ॥ २ ॥

सुखमनी प्रभु का सुख रूपी अमृत नाम है। जिसका भक्तजनों के मन में निवास होता है॥ रहाउ॥ प्रभु को स्मरण करने से प्राणी गर्भ में नहीं आता। प्रभु को स्मरण करने से दुःख एवं मृत्यु का भय निवृत्त हो जाता है। प्रभु का सिमरन करने से काल भी दूर हो जाता है। प्रभु को स्मरण करने से शत्रु टल जाता है। प्रभु को स्मरण करने से कोई विघ्न नहीं पड़ता। प्रभु को स्मरण करने से मनुष्य रात–दिन जाग्रत रहता है। प्रभु को स्मरण करने से भय प्रभावित नहीं करता। प्रभु को स्मरण करने से दुःख–क्लेश प्रभावित नहीं करता। ईश्वर को स्मरण करने से संतों की संगति प्राप्त होती है। हे नानक! समस्त निधियाँ ईश्वर की प्रीति में है॥ २॥

प्रभ कै सिमरनि रिधि सिधि नउ निधि ॥ प्रभ कै सिमरनि गिआनु धिआनु ततु बुधि ॥ प्रभ कै सिमरनि जप तप पूजा ॥ प्रभ कै सिमरनि बिनसै दूजा ॥ प्रभ कै सिमरनि तीरथ इसनानी ॥ प्रभ कै सिमरनि दरगह मानी ॥ प्रभ कै सिमरनि होइ सु भला ॥ प्रभ कै सिमरनि सुफल फला ॥ से सिमरहि जिन आपि सिमराए ॥ नानक ता कै लागउ पाए ॥ ३ ॥

प्रभु के सिमरन में ऋद्धि, सिद्धि एवं नौ निधियाँ हैं। प्रभु के सिमरन से ही मनुष्य ज्ञान, ध्यान, दिव्यदृष्टि एवं बुद्धि का सार प्राप्त करता है। प्रभु के सिमरन में ही, जप, तपस्या एवं पूजा है। प्रभु को स्मरण करने से द्वैतभाव दूर हो जाता है। प्रभु को स्मरण करने से तीर्थ स्नान का फल प्राप्त हो जाता है। प्रभु को स्मरण करने से प्राणी उसके दरबार में मान–सम्मान प्राप्त कर लेता है। प्रभु को स्मरण करने से प्राणी उसकी इच्छा को मीठा (भला) मानता है। प्रभु को स्मरण करने से मनुष्य–जन्म का मनोरथ सफल हो जाता है। केवल वही जीव उसे स्मरण करते हैं, जिन्हें वह स्वयं स्मरण करवाता है। हे नानक! मैं उन सिमरन करने वाले महापुरुषों के चरण–स्पर्श करता हूँ॥ ३॥

प्रभ का सिमरनु सभ ते ऊचा ॥ प्रभ कै सिमरनि उधरे मूचा ॥ प्रभ कै सिमरनि त्रिसना बुझै ॥ प्रभ कै सिमरनि सभु किछु सुझै ॥ प्रभ कै सिमरनि नाही जम त्रासा ॥ प्रभ कै सिमरनि पूरन आसा ॥ प्रभ कै सिमरनि मन की मलु जाइ ॥ अंम्रित नामु रिद माहि समाइ ॥ प्रभ जी बसहि साध की रसना ॥ नानक जन का दासनि दसना ॥ ४ ॥

प्रभु का सिमरन सबसे ऊँचा है। प्रभु का सिमरन करने से अनेक प्राणियों का उद्धार हो जाता है। प्रभु का सिमरन करने से तृष्णा मिट जाती है। प्रभु का सिमरन करने से सब कुछ सूझ जाता है। प्रभु का सिमरन करने से यम (मृत्यु) का भय निवृत्त हो जाता है। प्रभु का सिमरन करने से अभिलाषा पूरी हो जाती है। प्रभु का सिमरन करने से मन की मैल उतर जाती है और भगवान का अमृत नाम हृदय में समा जाता है। पूजनीय प्रभु अपने संत पुरुषों की रसना में निवास करते हैं। हे नानक! मैं गुरमुखों के दासों का दास हूँ॥ ४॥

प्रभ कउ सिमरहि से धनवंते ॥ प्रभ कउ सिमरहि से पतिवंते ॥ प्रभ कउ सिमरहि से जन परवान ॥ प्रभ कउ सिमरहि से पुरख प्रधान ॥ प्रभ कउ सिमरहि सि बेमुहताजे ॥ प्रभ कउ सिमरहि सि सरब के राजे ॥ प्रभ कउ सिमरहि से सुखवासी ॥ प्रभ कउ सिमरहि सदा अबिनासी ॥ सिमरन ते लागे जिन आपि दइआला ॥ नानक जन की मंगै रवाला ॥ ५ ॥

जो प्रभु का सिमरन करते हैं, ऐसे व्यक्ति ही धनवान हैं। जो प्रभु का सिमरन करते हैं, वही व्यक्ति इज्जतदार हैं। जो लोग प्रभु को स्मरण करते हैं, वे प्रभु के दरबार में स्वीकृत होते हैं। जो व्यक्ति प्रभु

का सिमरन करते हैं, वे जगत् में प्रसिद्ध हो जाते हैं। जो पुरुष प्रभु का सिमरन करते हैं, वे किसी के आश्रित नहीं रहते। जो प्राणी प्रभु का सिमरन करते हैं, वे सब के सम्राट हैं। जो प्राणी प्रभु को स्मरण करते हैं, वह सुख में निवास करते हैं। जो प्रभु को स्मरण करते हैं, वे अमर हो जाते हैं। जिन पर ईश्वर दयालु होता है, केवल वही व्यक्ति प्रभु का सिमरन करते हैं। हे नानक ! मैं प्रभु के सेवकों की चरणधूलि ही मांगता हूँ॥ ५॥

प्रभ कउ सिमरहि से परउपकारी ॥ प्रभ कउ सिमरहि तिन सद बलिहारी ॥ प्रभ कउ सिमरहि से मुख सुहावे ॥ प्रभ कउ सिमरहि तिन सूखि बिहावै ॥ प्रभ कउ सिमरहि तिन आतमु जीता ॥ प्रभ कउ सिमरहि तिन निरमल रीता ॥ प्रभ कउ सिमरहि तिन अनद घनेरे ॥ प्रभ कउ सिमरहि बसहि हरि नेरे ॥ संत क्रिपा ते अनदिनु जागि ॥ नानक सिमरनु पूरै भागि ॥ ६ ॥

जो व्यक्ति प्रभु का सिमरन करते हैं, ऐसे व्यक्ति परोपकारी बन जाते हैं। जो व्यक्ति प्रभु का सिमरन करते हैं, मैं उन पर हमेशा ही कुर्बान जाता हूँ। जो व्यक्ति प्रभु का सिमरन करते हैं, उनके मुख अति सुन्दर हैं। जो प्राणी प्रभु को स्मरण करते हैं, वह अपना जीवन सुखपूर्वक व्यतीत करते हैं। जो प्रभु का सिमरन करते हैं, वह अपने मन को जीत लेते हैं। जो प्राणी प्रभु को स्मरण करते हैं, उनका जीवन—आचरण पावन हो जाता है। जो प्रभु का सिमरन करते हैं, उन्हें अनेक खुशियाँ एवं हर्षोल्लास ही प्राप्त होते हैं। जो प्राणी प्रभु का सिमरन करते हैं, वह ईश्वर के निकट वास करते हैं। संतों की कृपा से वह रात—दिन जाग्रत रहते हैं। हे नानक ! प्रभु—सिमरन की देन भाग्य से ही प्राप्त होती है॥ ६॥

प्रभ कै सिमरनि कारज पूरे ॥ प्रभ कै सिमरनि कबहु न झूरे ॥ प्रभ कै सिमरनि हरि गुन बानी ॥ प्रभ कै सिमरनि सहजि समानी ॥ प्रभ कै सिमरनि निहचल आसनु ॥ प्रभ कै सिमरनि कमल बिगासनु ॥ प्रभ कै सिमरनि अनहद झुनकार ॥ सुखु प्रभ सिमरन का अंतु न पार ॥ सिमरहि से जन जिन कउ प्रभ मइआ ॥ नानक तिन जन सरनी पइआ ॥ ७ ॥

प्रभु का सिमरन करने से समस्त कार्य सम्पूर्ण हो जाते हैं। प्रभु का सिमरन करने से प्राणी कभी चिन्ता—क्लेश के वश में नहीं पड़ता। प्रभु के सिमरन द्वारा मनुष्य भगवान की गुणस्तुति की वाणी करता है। प्रभु के सिमरन द्वारा मनुष्य सहज ही परमात्मा में लीन हो जाता है। प्रभु के सिमरन द्वारा वह अटल आसन प्राप्त कर लेता है। प्रभु के सिमरन द्वारा मनुष्य का हृदय कमल प्रफुल्लित हो जाता है। प्रभु के सिमरन द्वारा दिव्य भजन गूंजता है। प्रभु के सिमरन द्वारा सुख का कोई अन्त अथवा पार नहीं। जिन प्राणियों पर प्रभु की कृपा होती है, वह उसका सिमरन करते रहते हैं। हे नानक ! (कोई किस्मत वाला ही) उन प्रभु—स्मरण करने वालों की शरण लेता है॥ ७॥

हरि सिमरनु करि भगत प्रगटाए ॥ हरि सिमरनि लगि बेद उपाए ॥ हरि सिमरनि भए सिध जती दाते ॥ हरि सिमरनि नीच चहु कुंट जाते ॥ हरि सिमरनि धारी सभ धरना ॥ सिमरि सिमरि हरि कारन करना ॥ हरि सिमरनि कीओ सगल अकारा ॥ हरि सिमरन महि आपि निरंकारा ॥ करि किरपा जिसु आपि बुझाइआ ॥ नानक गुरमुखि हरि सिमरनु तिनि पाइआ ॥ ८ ॥ १ ॥

भगवान का सिमरन करके भक्त दुनिया में लोकप्रिय हो जाते हैं। भगवान के सिमरन में ही सम्मिलित होकर वेद (इत्यादि धार्मिक ग्रंथ) रचे गए। भगवान के सिमरन द्वारा ही मनुष्य सिद्ध, ब्रह्मचारी एवं दानवीर बन जाते हैं। भगवान के सिमरन द्वारा नीच पुरुष चारों दिशाओं में प्रसिद्ध हो गए। भगवान के सिमरन ने ही सारी धरती को धारण किया हुआ है। हे जिज्ञासु ! संसार के कर्त्ता

परमेश्वर को सदा स्मरण करते रहो। प्रभु ने अपने सिमरन हेतु सृष्टि की रचना की है। जहाँ प्रभु का सिमरन होता है, उस स्थान पर स्वयं निरंकार विद्यमान है। हे नानक! भगवान जिसे कृपा करके सिमरन की सूझ प्रदान करता है, गुरु के माध्यम से ऐसे व्यक्ति को भगवान के सिमरन की देन मिल जाती है॥ ८॥ १॥

सलोकु ॥ दीन दरद दुख भंजना घटि घटि नाथ अनाथ ॥ सरणि तुम्हारी आइओ नानक के प्रभ साथ ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे दीनों के दर्द एवं दुःख का नाश करने वाले प्रभु! हे प्रत्येक शरीर में व्यापक स्वामी! हे अनाथों के नाथ परमात्मा! मैं तेरी शरण में आया हूँ, आप प्रभु मेरे साथ हो॥ १॥

असटपदी॥ जह मात पिता सुत मीत न भाई ॥ मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई ॥ जह महा भइआन दूत जम दलै ॥ तह केवल नामु संगि तेरै चलै ॥ जह मुसकल होवै अति भारी ॥ हरि को नामु खिन माहि उधारी ॥ अनिक पुनहचरन करत नही तरै ॥ हरि को नामु कोटि पाप परहरै ॥ गुरमुखि नामु जपहु मन मेरे ॥ नानक पावहु सूख घनेरे ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ जहाँ माता, पिता, पुत्र, मित्र एवं भाई, कोई (सहायक) नहीं, वहाँ हे मेरे मन! ईश्वर का नाम तेरे साथ सहायक होगा। जहाँ महा भयानक यमदूत तुझे कुचलेगा, वहाँ केवल प्रभु का नाम ही तेरे साथ जाएगा। जहाँ बहुत भारी विपत्ति बनेगी, वहाँ ईश्वर का नाम एक क्षण में ही तेरी रक्षा करेगा। अनेकों धार्मिक कर्म करने से भी मनुष्य की पापों से मुक्ति नहीं होती, परन्तु ईश्वर का नाम करोड़ों ही पापों का नाश कर देता है। हे मेरे मन! गुरु के सान्निध्य में रहकर प्रभु के नाम का जाप कर। हे नानक! ऐसे तुझे बहुत सुख प्राप्त होगा॥ १॥

सगल स्रिसटि को राजा दुखीआ ॥ हरि का नामु जपत होइ सुखीआ ॥ लाख करोरी बंधु न परै ॥ हरि का नामु जपत निसतरै ॥ अनिक माइआ रंग तिख न बुझावै ॥ हरि का नामु जपत आघावै ॥ जिह मारगि इहु जात इकेला ॥ तह हरि नामु संगि होत सुहेला ॥ ऐसा नामु मन सदा धिआईऐ ॥ नानक गुरमुखि परम गति पाईऐ ॥ २ ॥

सारे संसार का राजा (बनकर भी मनुष्य) दुखी होता है। लेकिन ईश्वर का नाम–स्मरण करने से सुखी हो जाता है। चाहे मनुष्य लाखों–करोड़ों बन्धनों में फँसा हो, (किन्तु) प्रभु के नाम का जाप करने से वह मुक्त हो जाता है। धन–दौलत की अत्याधिक खुशियाँ मनुष्य की तृष्णा को नहीं मिटा सकते। (लेकिन) ईश्वर का नाम–स्मरण करने से वह तृप्त हो जाता है। जिस (यम) मार्ग पर प्राणी अकेला जाता है, वहाँ ईश्वर का नाम सुखदायक होता है। हे मेरे मन! ऐसा नाम सदा स्मरण करो, हे नानक! गुरु की शरण में नाम–स्मरण करने से परमगति प्राप्त हो जाती है॥ २॥

छूटत नही कोटि लख बाही ॥ नामु जपत तह पारि पराही ॥ अनिक बिघन जह आइ संघारै ॥ हरि का नामु ततकाल उधारै ॥ अनिक जोनि जनमै मरि जाम ॥ नामु जपत पावै बिस्राम ॥ हउ मैला मलु कबहु न धोवै ॥ हरि का नामु कोटि पाप खोवै॥ ऐसा नामु जपहु मन रंगि ॥ नानक पाईऐ साध कै संगि ॥ ३ ॥

जहाँ लाखों–करोड़ों भुजाओं के होते हुए भी मनुष्य की मुक्ति नहीं हो सकती, वहाँ नाम–स्मरण करने से मनुष्य का उद्धार हो जाता है। जहाँ अनेक विपत्तियाँ आकर मनुष्य को नष्ट करती हैं, वहाँ प्रभु

का नाम तत्काल उसकी रक्षा करता है। जो व्यक्ति अनेक योनियों में जन्मता–मरता रहता है, वह प्रभु के नाम का जाप करने से सुख प्राप्त कर लेता है। अहंकार से मैला हुआ प्राणी कभी यह मैल धो नहीं सकता, (परन्तु) ईश्वर का नाम करोड़ों पापों को नाश कर देता है। हे मेरे मन ! ईश्वर के ऐसे नाम को प्रेमपूर्वक स्मरण करो। हे नानक ! ईश्वर का नाम संतों की संगति में ही प्राप्त होता है॥ ३॥

जिह मारग के गने जाहि न कोसा ॥ हरि का नामु ऊहा संगि तोसा ॥ जिह पैडै महा अंध गुबारा ॥ हरि का नामु संगि उजीआरा ॥ जहा पंथि तेरा को न सिञानू ॥ हरि का नामु तह नालि पछानू ॥ जह महा भइआन तपति बहु घाम ॥ तह हरि के नाम की तुम ऊपरि छाम ॥ जहा त्रिखा मन तुझु आकरखै ॥ तह नानक हरि हरि अंम्रितु बरखै ॥ ४ ॥

जिस (जीवन रूपी) मार्ग के कोस इत्यादि गिने नहीं जा सकते, ईश्वर का नाम वहाँ तेरे साथ राशि–पूंजी होगा। जिस मार्ग में घोर–अंधकार है, वहाँ ईश्वर का नाम तेरे साथ प्रकाश होगा। जिस मार्ग पर तेरा कोई जानकार नहीं, वहाँ ईश्वर का नाम तेरे साथ जानने वाला (जानकार) होगा। जहाँ अत्याधिक भयानक गर्मी एवं अत्याधिक धूप है, वहाँ ईश्वर के नाम की तुझ पर छाया होगी। हे प्राणी ! जहाँ (माया की) प्यास तुझे खींचती है, वहाँ हे नानक ! हरि–परमेश्वर के नाम के अमृत की वर्षा होती है॥ ४॥

भगत जना की बरतनि नामु ॥ संत जना कै मनि बिस्रामु ॥ हरि का नामु दास की ओट ॥ हरि कै नामि उधरे जन कोटि ॥ हरि जसु करत संत दिनु राति ॥ हरि हरि अउखधु साध कमाति ॥ हरि जन कै हरि नामु निधानु ॥ पारब्रहमि जन कीनो दान ॥ मन तन रंगि रते रंग एकै ॥ नानक जन कै बिरति बिबेकै ॥ ५ ॥

ईश्वर का नाम भक्तजनों हेतु व्यावहारिक सामग्री है। ईश्वर का नाम संतजनों के मन को सुख विश्राम देता है। ईश्वर का नाम उसके सेवक का सहारा है। ईश्वर के नाम द्वारा करोड़ों ही प्राणियों का कल्याण हो गया है। संतजन दिन–रात हरि का यशोगान करते रहते हैं। संत हरि–परमेश्वर के नाम को अपनी औषधि के रूप में उपयोग करते हैं। ईश्वर का नाम ईश्वर के सेवक का खजाना है। पारब्रह्म ने उसे यह दान किया है। जो मन एवं तन से एक ईश्वर के प्रेम में रंगे हुए हैं। हे नानक ! उन दासों की वृत्ति ज्ञान वाली हुई है॥ ५॥

हरि का नामु जन कउ मुकति जुगति ॥ हरि कै नामि जन कउ त्रिपति भुगति ॥ हरि का नामु जन का रूप रंगु ॥ हरि नामु जपत कब परै न भंगु ॥ हरि का नामु जन की वडिआई ॥ हरि कै नामि जन सोभा पाई ॥ हरि का नामु जन कउ भोग जोग ॥ हरि नामु जपत कछु नाहि बिओगु ॥ जनु राता हरि नाम की सेवा ॥ नानक पूजै हरि हरि देवा ॥ ६ ॥

भगवान का नाम ही भक्त हेतु मुक्ति का साधन है। भगवान का भक्त उसके नाम–भोजन से तृप्त हो जाता है। भगवान का नाम उसके भक्त का सौन्दर्य एवं हर्ष है। भगवान के नाम का जाप करने से मनुष्य को कभी बाधा नहीं पड़ती। भगवान का नाम उसके भक्त की मान–प्रतिष्ठा है। भगवान के नाम द्वारा उसके भक्त को दुनिया में शोभा प्राप्त होती है। भगवान का नाम ही भक्त के लिए योग (साधन) एवं गृहस्थी का माया–भोग है। भगवान के नाम का जाप करने से उसे कोई दुःख–क्लेश नहीं होता। भगवान का भक्त उसके नाम की सेवा में ही मग्न रहता है। हे नानक ! (भक्त सदैव) प्रभुदेवा परमेश्वर की ही पूजा करता है॥ ६॥

हरि हरि जन कै मालु खजीना ॥ हरि धनु जन कउ आपि प्रभि दीना ॥ हरि हरि जन कै ओट सताणी ॥ हरि प्रतापि जन अवर न जाणी ॥ ओति पोति जन हरि रसि राते ॥ सुंन समाधि नाम रस माते ॥ आठ पहर जनु हरि हरि जपै ॥ हरि का भगतु प्रगट नही छपै ॥ हरि की भगति मुकति बहु करे ॥ नानक जन संगि केते तरे ॥ ७ ॥

हरि–परमेश्वर का नाम भक्त के लिए धन का भण्डार है। हरि नाम रूपी धन प्रभु ने स्वयं अपने भक्त को दिया है। हरि–परमेश्वर का नाम उसके भक्त का सशक्त सहारा है। हरि के प्रताप से भक्तजन किसी दूसरे को नहीं जानता। ताने–बाने की भाँति प्रभु का भक्त हरि–रस में मग्न रहता है। शून्य समाधि में लीन वह नाम–रस में मस्त रहता है। भक्त दिन के आठ पहर हरि–परमेश्वर के नाम का ही जाप करता रहता है। हरि का भक्त दुनिया में लोकप्रिय हो जाता है, छिपा नहीं रहता। भगवान की भक्ति अनेकों को मोक्ष प्रदान करती है। हे नानक ! भक्तों की संगति में कितने ही भवसागर से पार हो जाते हैं॥ ७॥

पारजातु इहु हरि को नाम ॥ कामधेन हरि हरि गुण गाम ॥ सभ ते ऊतम हरि की कथा ॥ नामु सुनत दरद दुख लथा ॥ नाम की महिमा संत रिद वसै ॥ संत प्रतापि दुरतु सभु नसै ॥ संत का संगु वडभागी पाईऐ ॥ संत की सेवा नामु धिआईऐ ॥ नाम तुलि कछु अवरु न होइ ॥ नानक गुरमुखि नामु पावै जनु कोइ ॥ ८ ॥ २ ॥

हरि का नाम ही कल्पवृक्ष है। हरि–परमेश्वर के नाम का यशोगान करना ही कामधेनु है। हरि की कथा सबसे उत्तम है। भगवान का नाम सुनने से दुःख–दर्द दूर हो जाते हैं। नाम की महिमा संतों के हृदय में निवास करती है। संतों के तेज प्रताप से समस्त पाप नाश हो जाते हैं। संतों की संगति सौभाग्य से ही प्राप्त होती है। संतों की सेवा से नाम–सिमरन किया जाता है। ईश्वर के नाम के तुल्य कोई दूसरा नहीं। हे नानक ! कोई विरला गुरमुख ही नाम को प्राप्त करता है॥ ८॥ २॥

सलोकु ॥ बहु सासत्र बहु सिम्रिती पेखे सरब ढढोलि॥ पूजसि नाही हरि हरे नानक नाम अमोल ॥ १ ॥

श्लोक॥ बहुत सारे शास्त्र एवं बहुत सारी स्मृतियाँ देखी हैं और उन सबकी (भलीभाँति) खोज की है। (लेकिन) यह ईश्वर के नाम की बराबरी नहीं कर सकते। हे नानक ! हरि–परमेश्वर का नाम अमूल्य है॥ १॥

असटपदी ॥ जाप ताप गिआन सभि धिआन ॥ खट सासत्र सिम्रिति वखिआन ॥ जोग अभिआस करम ध्रम किरिआ ॥ सगल तिआगि बन मधे फिरिआ ॥ अनिक प्रकार कीए बहु जतना ॥ पुंन दान होमे बहु रतना ॥ सरीरु कटाइ होमै करि राती ॥ वरत नेम करै बहु भाती ॥ नही तुलि राम नाम बीचार ॥ नानक गुरमुखि नामु जपीऐ इक बार ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ जप, तपस्या, समस्त ज्ञान एवं ध्यान, छः शास्त्रों के ग्रंथ एवं स्मृतियों का बखान, योग का साधन एवं धार्मिक कर्म–काण्डों का करना, प्रत्येक वस्तु को त्याग देना एवं वन में भटकना, अनेक प्रकार के बहुत यत्न करे, दान–पुण्य, होम यज्ञ एवं अत्याधिक दान करना, शरीर को छोटे–छोटे टुकड़ों में काटना एवं उनकी अग्नि में आहूति देना, अनेक प्रकार के व्रत एवं नियमों की पालना, लेकिन यह सभी राम के नाम की आराधना के तुल्य नहीं हैं। हे नानक ! (चाहे) यह नाम एक बार ही गुरु की शरण में जपा जाए॥ १॥

नउ खंड प्रिथमी फिरै चिरु जीवै ॥ महा उदासु तपीसरु थीवै ॥ अगनि माहि होमत परान ॥ कनिक अस्व हैवर भूमि दान ॥ निउली करम करै बहु आसन ॥ जैन मारग संजम अति साधन ॥ निमख निमख करि सरीरु कटावै ॥ तउ भी हउमै मैलु न जावै ॥ हरि के नाम समसरि कछु नाहि ॥ नानक गुरमुखि नामु जपत गति पाहि ॥ २ ॥

इन्सान चाहे पृथ्वी के नौ खण्डों पर भ्रमण करे, चिरकाल (लम्बी आयु) तक जीता रहे, वह महा निर्वाण एवं तपस्वी हो जाए और अपने शरीर को अग्नि में होम कर दे, वह सोना, घोड़े एवं भूमिदान कर दें, वह निउली कर्म (योगासन का रूप) और बहुत सारे योगासन करें, वह जैनियों के मार्ग पर चलकर अत्यंत कठिन साधन तथा तपस्या करें, वह अपने शरीर को छोटा-छोटा करके कटवा दे, तो भी उसके अहंकार की मैल दूर नहीं होती। भगवान के नाम के बराबर कोई वस्तु नहीं। हे नानक! गुरु के माध्यम से भगवान के नाम का जाप करने से इन्सान को मुक्ति मिल जाती है॥ २॥

मन कामना तीरथ देह छुटै ॥ गरबु गुमानु न मन ते हुटै ॥ सोच करै दिनसु अरु राति ॥ मन की मैलु न तन ते जाति ॥ इसु देही कउ बहु साधना करै ॥ मन ते कबहू न बिखिआ टरै ॥ जलि धोवै बहु देह अनीति ॥ सुध कहा होइ काची भीति ॥ मन हरि के नाम की महिमा ऊच ॥ नानक नामि उधरे पतित बहु मूच ॥ ३ ॥

कुछ लोगों की मनोकामना होती है कि किसी तीर्थ-स्थान पर शरीर त्यागा जाए परन्तु (फिर भी) मनुष्य का अहंकार एवं अभिमान मन से दूर नहीं होते। चाहे मनुष्य दिन-रात पवित्रता करता है परन्तु मन की मैल उसके शरीर से दूर नहीं होती। चाहे मनुष्य अपने शरीर से बहुत संयम-साधना करता है, फिर भी माया के बुरे विकार उसके मन को नहीं त्यागते। चाहे मनुष्य इस नश्वर शरीर को कई बार पानी से साफ करता है, तो भी (यह शरीर रूपी) कच्ची दीवार कहाँ पवित्र हो सकती है? हे मेरे मन! हरि के नाम की महिमा बहुत ऊँची है। हे नानक! (प्रभु के) नाम से बहुत सारे पापी मुक्त हो गए हैं॥ ३॥

बहुतु सिआणप जम का भउ बिआपै ॥ अनिक जतन करि त्रिसन ना ध्रापै ॥ भेख अनेक अगनि नही बुझै ॥ कोटि उपाव दरगह नही सिझै ॥ छूटसि नाही ऊभ पइआलि ॥ मोहि बिआपहि माइआ जालि ॥ अवर करतूति सगली जमु डानै ॥ गोविंद भजन बिनु तिलु नही मानै ॥ हरि का नामु जपत दुखु जाइ ॥ नानक बोलै सहजि सुभाइ ॥ ४ ॥

अधिक चतुराई के कारण मनुष्य को मृत्यु का भय आ दबोचता है। अनेक यत्न करने से भी तृष्णा नहीं बुझती। अनेकों धार्मिक वेष बदलने से (तृष्णा की) अग्नि नहीं बुझती। (ऐसे) करोड़ों ही उपायों द्वारा मनुष्य प्रभु के दरबार में मुक्त नहीं होता। जो व्यक्ति मोह के कारण माया के जाल में फँसते हैं, वह चाहे आकाश में चले जाएँ अथवा पाताल में चले जाएँ, उनकी मुक्ति नहीं होती। मनुष्य की दूसरी सब करतूतों पर यमराज उन्हें दण्ड देता है। (लेकिन) गोविन्द के भजन के बिना मृत्यु तनिकमात्र भी परवाह नहीं करती। नानक सहज स्वभाव यही बोलता है कि भगवान के नाम का जाप करने से हर प्रकार के दुःख दूर हो जाते हैं॥ ४॥

चारि पदारथ जे को मागै ॥ साध जना की सेवा लागै ॥ जे को आपुना दूखु मिटावै ॥ हरि हरि नामु रिदै सद गावै ॥ जे को अपुनी सोभा लोरै ॥ साधसंगि इह हउमै छोरै ॥ जे को जनम मरण ते डरै ॥ साध जना की सरनी परै ॥ जिसु जन कउ प्रभ दरस पिआसा ॥ नानक ता कै बलि बलि जासा ॥ ५ ॥

यदि कोई व्यक्ति चार पदार्थों–धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का अभिलाषी हो तो उसे संतजनों की सेवा में लगना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति अपना दुःख मिटाना चाहता है तो उसे अपने हृदय में हरि–परमेश्वर का नाम सदैव स्मरण करना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति अपनी शोभा चाहता हो तो वह संतों की संगति में रहकर इस अहंकार को त्याग दे। यदि कोई व्यक्ति जन्म–मरण के दुःख से डरता है, तो उसे संतजनों की शरण लेनी चाहिए। जिस व्यक्ति को परमात्मा के दर्शनों की तीव्र लालसा है, हे नानक! मैं उस पर सदा कुर्बान जाता हूँ॥ ५॥

सगल पुरख महि पुरखु प्रधानु ॥ साधसंगि जा का मिटै अभिमानु ॥ आपस कउ जो जाणै नीचा ॥ सोऊ गनीऐ सभ ते ऊचा ॥ जा का मनु होइ सगल की रीना ॥ हरि हरि नामु तिनि घटि घटि चीना ॥ मन अपुने ते बुरा मिटाना ॥ पेखै सगल स्रिसटि साजना ॥ सूख दूख जन सम द्रिसटेता ॥ नानक पाप पुंन नही लेपा ॥ ६ ॥

समस्त पुरुषों में वहीं पुरुष प्रधान है जिस पुरुष का सत्संग में रहकर अभिमान मिट जाता है। जो पुरुष अपने आपको निम्न (विनीत) जानता है, वह सबसे भला (ऊँचा) समझा जाता है। जिस पुरुष का मन सबके चरणों की धूलि बन जाता है, वह हरि–परमेश्वर के नाम को प्रत्येक हृदय में देखता है। जो अपने मन से बुराई को मिटा देता है, वह सारी सृष्टि को अपना मित्र देखता है। हे नानक! जो पुरुष सुख–दुःख को एक समान देखता है, वह पाप–पुण्य से निर्लिप्त रहता है॥ ६॥

निरधन कउ धनु तेरो नाउ ॥ निथावे कउ नाउ तेरा थाउ ॥ निमाने कउ प्रभ तेरो मानु ॥ सगल घटा कउ देवहु दानु ॥ करन करावनहार सुआमी ॥ सगल घटा के अंतरजामी ॥ अपनी गति मिति जानहु आपे ॥ आपन संगि आपि प्रभ राते ॥ तुम्हरी उसतति तुम ते होइ ॥ नानक अवरु न जानसि कोइ ॥ ७ ॥

हे नाथ! निर्धन के लिए तेरा नाम ही धन–दौलत है। निराश्रित को तेरा नाम ही आश्रय है। हे प्रभु! निरादरों का तू आदर है। तू ही समस्त प्राणियों को दान देता है। हे जगत् के स्वामी! तुम स्वयं ही सब कुछ करते एवं स्वयं ही जीवों से करवाते हो। तू बड़ा अन्तर्यामी है। हे ठाकुर! अपनी गति एवं अपनी मर्यादा तुम स्वयं ही जानते हो। हे प्रभु! अपने आप से तुम स्वयं ही रंगे हुए हो। हे ईश्वर! अपनी महिमा केवल तुम ही कर सकते हो। हे नानक! कोई दूसरा तेरी महिमा को नहीं जानता॥ ७॥

सरब धरम महि स्रेसट धरमु ॥ हरि को नामु जपि निरमल करमु ॥ सगल क्रिआ महि ऊतम किरिआ ॥ साधसंगि दुरमति मलु हिरिआ ॥ सगल उदम महि उदमु भला ॥ हरि का नामु जपहु जीअ सदा ॥ सगल बानी महि अंम्रित बानी ॥ हरि को जसु सुनि रसन बखानी ॥ सगल थान ते ओहु ऊतम थानु ॥ नानक जिह घटि वसै हरि नामु ॥ ८ ॥ ३ ॥

समस्त धर्मों में ईश्वर के नाम का जाप करना एवं पवित्र कर्म करना ही सर्वोपरि धर्म है। समस्त धार्मिक क्रियाओं में सत्संग में मिलकर दुर्बुद्धि की मैल को धो फैंकना ही सर्वश्रेष्ठ क्रिया है। समस्त प्रयासों में उत्तम प्रयास यही है कि सदा मन में हरि के नाम का जाप करते रहो। समस्त वाणियों में ईश्वर की महिमा सुननी एवं इसको जिह्वा से उच्चारण करना अमृत वाणी है। हे नानक! समस्त स्थानों में वह स्थान उत्तम है, जिस में ईश्वर का नाम निवास करता है॥ ८॥ ३॥

सलोकु ॥ निरगुनीआर इआनिआ सो प्रभु सदा समालि॥ जिनि कीआ तिसु चीति रखु नानक निबही नालि ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे गुणविहीन एवं मूर्ख जीव! उस ईश्वर को सदैव स्मरण कर। हे नानक! जिसने तुझे उत्पन्न किया है, उसको अपने हृदय में बसा, केवल ईश्वर ही तेरा साथ देगा॥ १॥

असटपदी ॥ रमईआ के गुन चेति परानी ॥ कवन मूल ते कवन द्रिसटानी ॥ जिनि तूं साजि सवारि सीगारिआ ॥ गरभ अगनि महि जिनहि उबारिआ ॥ बार बिवसथा तुझहि पिआरै दूध ॥ भरि जोबन भोजन सुख सूध ॥ बिरधि भइआ ऊपरि साक सैन ॥ मुखि अपिआउ बैठ कउ दैन ॥ इहु निरगुनु गुनु कछू न बूझै ॥ बखसि लेहु तउ नानक सीझै ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ हे नश्वर प्राणी! सर्वव्यापक राम के गुण स्मरण कर। तेरा क्या मूल है और तू कैसा दिखाई देता हे। जिसने तुझे रचा, संवारा एवं सुशोभित किया है, जिसने तेरी गर्भ की अग्नि में रक्षा की है, जिसने तुझे बाल्यावस्था में पीने के लिए दूध दिया है, जिसने तुझे यौवन में भोजन, सुख एवं सूझ दी और जिसने जब तू बूढ़ा हुआ तो बैठे ही मुँह में भोजन डालने के लिए तेरी सेवा के लिए सगे–संबंधी एवं मित्र दिए हैं। यह गुणविहीन मनुष्य किए हुए उपकारों की कुछ भी कद्र नहीं करता। नानक का कथन है कि हे ईश्वर! यदि तू उसको क्षमा कर दे तो ही वह मोक्ष प्राप्त कर सकता है॥ १॥

जिह प्रसादि धर ऊपरि सुखि बसहि ॥ सुत भ्रात मीत बनिता संगि हसहि ॥ जिह प्रसादि पीवहि सीतल जला ॥ सुखदाई पवनु पावकु अमुला ॥ जिह प्रसादि भोगहि सभि रसा ॥ सगल समग्री संगि साथि बसा ॥ दीने हसत पाव करन नेत्र रसना ॥ तिसहि तिआगि अवर संगि रचना ॥ ऐसे दोख मूड़ अंध बिआपे ॥ नानक काढि लेहु प्रभ आपे ॥ २ ॥

(हे प्राणी!) जिसकी कृपा से तू धरती पर सुखपूर्वक रहता है और अपने पुत्र, भाई, मित्र एवं पत्नी के साथ हँसता खेलता है, जिसकी कृपा से तू शीतल जल पीता है और तुझे प्रसन्न करने वाली सुखदायक वायु एवं अमूल्य अग्नि मिली है, जिसकी कृपा से तुम तमाम रस भोगते हो और समस्त पदार्थों के साथ तुम रहते हो, जिसने तुझे हाथ, पैर, कान, आँख एवं जीभ प्रदान किए हैं, (हे प्राणी!) तुम उस ईश्वर को भुलाकर दूसरों के साथ प्रेम करते हो। ऐसे दोष ज्ञानहीन मूर्ख के साथ फँसे हुए हैं। नानक का कथन है कि हे प्रभु! इनकी तुम स्वयं ही रक्षा करो॥ २॥

आदि अंति जो राखनहारु ॥ तिस सिउ प्रीति न करै गवारु॥ जा की सेवा नव निधि पावै ॥ ता सिउ मूड़ा मनु नही लावै ॥ जो ठाकुरु सद सदा हजूरे ॥ ता कउ अंधा जानत दूरे ॥ जा की टहल पावै दरगह मानु ॥ तिसहि बिसारै मुगधु अजानु ॥ सदा सदा इहु भूलनहारु ॥ नानक राखनहारु अपारु ॥ ३ ॥

जो परमात्मा आदि से लेकर अंत तक (जन्म से मृत्यु तक) सबका रक्षक है, मूर्ख पुरुष उससे प्रेम नहीं करता। जिसकी सेवा से उसको नौ निधियाँ मिलती हैं, उसे मूर्ख जीव अपने हृदय से नहीं लगाता। जो ठाकुर सदैव ही प्रत्यक्ष है, उसको ज्ञानहीन जीव दूर जानता है। मूर्ख एवं अज्ञानी पुरुष उस ईश्वर को भुला देता है, जिसकी सेवा–भक्ति से उसने प्रभु के दरबार में शोभा प्राप्त करनी है। नश्वर प्राणी हमेशा ही भूल करता रहता है। हे नानक! केवल अनन्त ईश्वर ही रक्षक है॥ ३॥

रतनु तिआगि कउडी संगि रचै ॥ साचु छोडि झूठ संगि मचै ॥ जो छडना सु असथिरु करि मानै ॥ जो होवनु सो दूरि परानै॥ छोडि जाइ तिस का स्रमु करै ॥ संगि सहाई तिसु परहरै ॥ चंदन लेपु उतारै धोइ ॥ गरधब प्रीति भसम संगि होइ ॥ अंध कूप महि पतित बिकराल ॥ नानक काढि लेहु प्रभ दइआल ॥ ४ ॥

नाम–रत्न को त्याग कर मनुष्य माया रूपी कौड़ी के संग खुश रहता है। वह सत्य को त्यागकर झूठ के साथ प्रसन्न होता है। जिस दुनिया के पदार्थों को उसने त्याग जाना है, उसको वह सदैव स्थिर जानता है। जो कुछ होना है, उसको वह दूर समझता है। जिसे उसे छोड़ जाना है, उसके लिए वह कष्ट उठाता है। वह उस सहायक (प्रभु) को त्यागता है, जो सदैव उसके साथ है। वह चन्दन के लेप को धोकर उतार देता है। गधे का केवल भस्म (राख) से ही प्रेम है। मनुष्य भयंकर अन्धेरे कुएँ में गिरा पड़ा है। नानक की प्रार्थना है कि हे दया के घर ईश्वर! इन्हें तुम अन्धेरे कुएँ से बाहर निकाल लो॥ ४॥

करतूति पसू की मानस जाति ॥ लोक पचारा करै दिनु राति ॥ बाहरि भेख अंतरि मलु माइआ ॥ छपसि नाहि कछु करै छपाइआ ॥ बाहरि गिआन धिआन इसनान ॥ अंतरि बिआपै लोभु सुआनु ॥ अंतरि अगनि बाहरि तनु सुआह ॥ गलि पाथर कैसे तरै अथाह ॥ जा कै अंतरि बसै प्रभु आपि ॥ नानक ते जन सहजि समाति ॥ ५ ॥

जाति मनुष्य की है, लेकिन कर्म पशुओं वाले हैं। इन्सान रात–दिन लोगों के लिए आडम्बर करता रहता है। बाहर (देहि में) वह धार्मिक वेष धारण करता है परन्तु उसके मन में माया की मैल है। चाहे जितना दिल करे वह छिपाए परन्तु वह अपनी असलियत को छिपा नहीं सकता। वह ज्ञान, ध्यान एवं स्नान करने का दिखावा करता है। परन्तु उसके मन को लालच रूपी कुत्ता दबाव डाल रहा है। उसके शरीर में तृष्णा की अग्नि विद्यमान है और बाहर शरीर पर वैराग्य की भस्म विद्यमान है। अपनी गर्दन पर वासना रूपी पत्थर के साथ वह अति गहरे सागर से किस तरह पार हो सकता है? हे नानक! जिसके हृदय में ईश्वर स्वयं निवास करता है ऐसा व्यक्ति सहज ही प्रभु में समा जाता है॥ ५॥

सुनि अंधा कैसे मारगु पावै ॥ करु गहि लेहु ओड़ि निबहावै ॥ कहा बुझारति बूझै डोरा ॥ निसि कहीऐ तउ समझै भोरा ॥ कहा बिसनपद गावै गुंग ॥ जतन करै तउ भी सुर भंग ॥ कह पिंगुल परबत पर भवन ॥ नही होत ऊहा उसु गवन ॥ करतार करुणा मै दीनु बेनती करै ॥ नानक तुमरी किरपा तरै ॥ ६ ॥

केवल सुनने से ही अन्धा पुरुष किस तरह मार्ग ढूँढ सकता है? उसका हाथ पकड़ लो (चूंकि यह) अन्त तक प्रेम का निर्वाह कर सके। बहरा पुरुष बात किस तरह समझ सकता है? जब हम रात कहते हैं तो वह दिन समझता है। गूँगा पुरुष किस तरह बिसनपद गा सकता है? यदि वह कोशिश भी करे तो भी उसका स्वर भंग हो जाता है। लंगड़ा किस तरह पहाड़ पर चक्कर काट सकता है? उसका वहाँ जाना संभव नहीं। हे नानक! हे करुणामय! हे करतार! (यह) दीन सेवक प्रार्थना करता है कि तेरी कृपा से ही जीव भवसागर से पार हो सकता है॥ ६॥

संगि सहाई सु आवै न चीति ॥ जो बैराई ता सिउ प्रीति ॥ बलूआ के ग्रिह भीतरि बसै ॥ अनद केल माइआ रंगि रसै ॥ द्रिड़ु करि मानै मनहि प्रतीति ॥ कालु न आवै मूड़े चीति ॥ बैर बिरोध काम क्रोध मोह ॥ झूठ बिकार महा लोभ ध्रोह ॥ इआहू जुगति बिहाने कई जनम ॥ नानक राखि लेहु आपन करि करम ॥ ७ ॥

जो परमात्मा जीव का साथी एवं सहायक है, वह उसे अपने चित्त में याद नहीं करता। अपितु वह उससे प्रेम करता है, जो उसका शत्रु है। वह बालू (रेत) के घर में ही रहता है। वह आनंद के खेल एवं धन के रंग (खुशी) भोगता है। वह इन रंगरलियों का भरोसा मन में दृढ़ समझता है। लेकिन मूर्ख जीव अपने मन में काल (मृत्यु) को स्मरण ही नहीं करता। वैर, विरोध, कामवासना, क्रोध, मोह, झूठ, पाप, महालोभ एवं छल–कपट की युक्तियों में मनुष्य ने अनेकों जन्म व्यतीत कर दिए हैं। नानक की विनती है कि हे प्रभु! अपनी कृपा धारण करके जीव को भवसागर से बचा ले॥ ७॥

तू ठाकुरु तुम पहि अरदासि ॥ जीउ पिंडु सभु तेरी रासि ॥ तुम मात पिता हम बारिक तेरे ॥ तुमरी क्रिपा महि सूख घनेरे ॥ कोइ न जानै तुमरा अंतु ॥ ऊचे ते ऊचा भगवंत ॥ सगल समग्री तुमरै सूत्रि धारी ॥ तुम ते होइ सु आगिआकारी ॥ तुमरी गति मिति तुम ही जानी ॥ नानक दास सदा कुरबानी ॥ ८ ॥ ४ ॥

(हे ईश्वर !) तू हमारा ठाकुर है और हमारी तुझ से ही प्रार्थना है। यह आत्मा एवं शरीर सब तेरी ही पूँजी है। तुम हमारे माता–पिता हो और हम तेरे बालक हैं। तेरी कृपा में बहुत सारे सुख हैं। हे प्रभु ! तेरा अन्त कोई भी नहीं जानता। तू सर्वोपरि भगवान है। समूचा जगत् तेरे सूत्र (धागे) में पिरोया हुआ है। जो कुछ (सृष्टि) तुझ से उत्पन्न हुआ है, वह तेरा आज्ञाकारी है। तेरी गति एवं मर्यादा को केवल तू ही जानता है। हे नानक ! तेरा सेवक सदा ही तुझ पर कुर्बान जाता है॥ ८॥ ४॥

सलोकु ॥ देनहारु प्रभ छोडि कै लागहि आन सुआइ ॥ नानक कहू न सीझई बिनु नावै पति जाइ ॥ १ ॥

श्लोक॥ देने वाले दाता प्रभु को त्याग कर प्राणी दूसरे स्वादों में लगता है, (परन्तु) हे नानक ! ऐसा प्राणी कदापि सफल नहीं होता, क्योंकि प्रभु के नाम के बिना मान–सम्मान नहीं रहता॥ १॥

असटपदी ॥ दस बसतू ले पाछै पावै ॥ एक बसतु कारनि बिखोटि गवावै ॥ एक भी न देइ दस भी हिरि लेइ ॥ तउ मूड़ा कहु कहा करेइ ॥ जिसु ठाकुर सिउ नाही चारा ॥ ता कउ कीजै सद नमसकारा ॥ जा कै मनि लागा प्रभु मीठा ॥ सरब सूख ताहू मनि वूठा ॥ जिसु जन अपना हुकमु मनाइआ ॥ सरब थोक नानक तिनि पाइआ ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ मनुष्य (ईश्वर से) दस वस्तुएँ लेकर पीछे सँभाल लेता है। (परन्तु) एक वस्तु की खातिर वह अपना विश्वास गंवा लेता है। यदि प्रभु एक वस्तु भी न देवे और दस भी छीन ले तो बताओ यह मूर्ख क्या कर सकता है ? जिस ठाकुर के समक्ष कोई जोर नहीं चल सकता, उसके समक्ष सदैव प्रणाम करना चाहिए। जिसके मन को प्रभु मीठा लगता है, समस्त सुख उसके मन में वास करते हैं। हे नानक ! जिस पुरुष से परमेश्वर अपने हुक्म का पालन करवाता है, संसार के समस्त पदार्थ उसने पा लिए हैं॥ १॥

अगनत साहु अपनी दे रासि ॥ खात पीत बरतै अनद उलासि ॥ अपुनी अमान कछु बहुरि साहु लेइ ॥ अगिआनी मनि रोसु करेइ ॥ अपनी परतीति आप ही खोवै॥ बहुरि उस का बिस्वासु न होवै ॥ जिस की बसतु तिसु आगै राखै ॥ प्रभ की आगिआ मानै माथै ॥ उस ते चउगुन करै निहालु ॥ नानक साहिबु सदा दइआलु ॥ २ ॥

साहूकार प्रभु प्राणी को (पदार्थों की) असंख्य पूँजी प्रदान करता है। प्राणी इसको आनंद एवं उल्लास से खाता–पीता एवं उपयोग करता है। यदि साहूकार प्रभु अपनी धरोहर में से कुछ वापिस ले ले, तो मूर्ख व्यक्ति अपने मन में क्रोध करता है। इस तरह वह अपना विश्वास स्वयं ही गंवा लेता है। प्रभु दोबारा उस पर विश्वास नहीं करता। जिसकी वस्तु है, उसके समक्ष (स्वयं ही खुशी से) रख देनी चाहिए और प्रभु की आज्ञा उसके लिए सहर्ष मानने योग्य है। प्रभु उसे पहले की अपेक्षा चौगुणा कृतार्थ कर देता है। हे नानक ! ईश्वर सदैव ही दयालु है॥ २॥

अनिक भाति माइआ के हेत ॥ सरपर होवत जानु अनेत ॥ बिरख की छाइआ सिउ रंगु लावै ॥ ओह बिनसै उहु मनि पछुतावै ॥ जो दीसै सो चालनहारु ॥ लपटि रहिओ तह अंध अंधारु ॥ बटाऊ सिउ जो लावै नेह ॥ ता कउ हाथि न आवै केह ॥ मन हरि के नाम की प्रीति सुखदाई ॥ करि किरपा नानक आपि लए लाई ॥ ३ ॥

माया के मोह अनेक प्रकार के हैं, परन्तु यह तमाम अन्त में नाश हो जाने वाले समझो। मनुष्य वृक्ष की छाया से प्रेम करता है। (परन्तु) जब वह नाश होता है तो वह अपने मन में पश्चाताप करता है। दृष्टिगोचर जगत् क्षणभंगुर है, इस जगत् से ज्ञानहीन इन्सान अपनत्व बनाए बैठा है। जो भी पुरुष यात्री से प्रेम लगाता है, आखिरकार उसके हाथ कुछ नहीं आता। हे मेरे मन! भगवान के नाम का प्रेम सुखदायक है। हे नानक! भगवान उनको अपने साथ लगाता है, जिन पर वह कृपा धारण करता है॥ ३॥

मिथिआ तनु धनु कुटंबु सबाइआ ॥ मिथिआ हउमै ममता माइआ ॥ मिथिआ राज जोबन धन माल ॥ मिथिआ काम क्रोध बिकराल ॥ मिथिआ रथ हसती अस्व बसत्रा ॥ मिथिआ रंग संगि माइआ पेखि हसता ॥ मिथिआ ध्रोह मोह अभिमानु ॥ मिथिआ आपस ऊपरि करत गुमानु ॥ असथिरु भगति साध की सरन ॥ नानक जपि जपि जीवै हरि के चरन ॥ ४ ॥

यह शरीर, धन–दौलत एवं परिवार सब झूठा है। अहंकार, ममता एवं माया भी झूठे हैं। राज्य, यौवन, धन एवं सम्पत्ति सब कुछ मिथ्या हैं। काम एवं विकराल क्रोध सब नश्वर हैं। सुन्दर रथ, हाथी, घोड़े एवं सुन्दर वस्त्र ये सभी नश्वर (मिथ्या) हैं। धन–दौलत संग्रह करने की प्रीति, जिसे देख कर मनुष्य हँसता है, यह भी मिथ्या है। छल–कपट, सांसारिक मोह एवं अभिमान भी क्षणभंगुर हैं। अपने ऊपर घमण्ड करना झूठा है। भगवान की भक्ति एवं संतों की शरण अटल है। हे नानक! भगवान के चरणों को ही जप कर प्राणी वास्तविक जीवन जीता है॥ ४॥

मिथिआ स्रवन पर निंदा सुनहि ॥ मिथिआ हसत पर दरब कउ हिरहि ॥ मिथिआ नेत्र पेखत पर त्रिअ रूपाद ॥ मिथिआ रसना भोजन अन स्वाद ॥ मिथिआ चरन पर बिकार कउ धावहि ॥ मिथिआ मन पर लोभ लुभावहि ॥ मिथिआ तन नही परउपकारा ॥ मिथिआ बासु लेत बिकारा ॥ बिनु बूझे मिथिआ सभ भए ॥ सफल देह नानक हरि हरि नाम लए ॥ ५ ॥

इन्सान के वे कान झूठे हैं जो पराई निन्दा सुनते हैं। वे हाथ भी झूठे हैं जो पराया धन चुराते हैं। वे नेत्र मिथ्या हैं, जो पराई नारी का सौन्दर्य रूप देखते हैं। वह जिह्वा भी मिथ्या है, जो पकवान एवं दूसरे स्वाद भोगती है। वे चरण झूठे हैं, जो दूसरों का बुरा करने के लिए दौड़ते हैं। वह मन भी झूठा है जो पराए धन का लोभ करता है। वे शरीर मिथ्या है, जो परोपकार नहीं करता। वह नाक व्यर्थ है, जो विषय–विकारों की गन्ध सूंघ रही है। ऐसी समझ के बिना प्रत्येक अंग नश्वर है। हे नानक! वह शरीर सफल है, जो हरि–परमेश्वर का नाम जपता रहता है॥ ५॥

बिरथी साकत की आरजा ॥ साच बिना कह होवत सूचा ॥ बिरथा नाम बिना तनु अंध ॥ मुखि आवत ता कै दुरगंध ॥ बिनु सिमरन दिनु रैनि ब्रिथा बिहाइ ॥ मेघ बिना जिउ खेती जाइ ॥ गोबिद भजन बिनु ब्रिथे सभ काम ॥ जिउ किरपन के निरारथ दाम ॥ धंनि धंनि ते जन जिह घटि बसिओ हरि नाउ ॥ नानक ता कै बलि बलि जाउ ॥ ६ ॥

शाक्त इन्सान का जीवन व्यर्थ है। सत्य के बिना वह कैसे शुद्ध हो सकता है ? नाम के बिना अज्ञानी पुरुष का शरीर व्यर्थ है। (क्योंकि) उसके मुख से बदबू आती है। प्रभु के सिमरन के बिना दिन और रात व्यर्थ गुजर जाते हैं, जिस तरह वर्षा के बिना फसल नष्ट हो जाती है। गोबिन्द के भजन बिना तमाम कार्य व्यर्थ हैं, जैसे कंजूस पुरुष की दौलत व्यर्थ है। वह इन्सान बड़ा भाग्यशाली है, जिसके हृदय में भगवान का नाम वास करता है। हे नानक ! मैं उन पर कुर्बान जाता हूँ॥ ६॥

रहत अवर कछु अवर कमावत ॥ मनि नही प्रीति मुखहु गंढ लावत ॥ जाननहार प्रभू परबीन ॥ बाहरि भेख न काहू भीन ॥ अवर उपदेसै आपि न करै ॥ आवत जावत जनमै मरै ॥ जिस कै अंतरि बसै निरंकारु ॥ तिस की सीख तरै संसारु ॥ जो तुम भाने तिन प्रभु जाता ॥ नानक उन जन चरन पराता ॥ ७ ॥

मनुष्य कहता कुछ है और करता बिल्कुल ही कुछ और है। उसके हृदय में (प्रभु के प्रति) प्रेम नहीं लेकिन मुख से व्यर्थ बातें करता है। सबकुछ जानने वाला प्रभु बड़ा चतुर है, (वह कभी) किसी के बाहरी वेष से खुश नहीं होता। जो दूसरों को उपदेश देता है और स्वयं उस पर अनुसरण नहीं करता, वह (जगत् में) आता–जाता एवं जन्मता–मरता रहता है। जिस पुरुष के हृदय में निरंकार वास करता है, उसके उपदेश से समूचा जगत् (विकारों से) बच जाता है। हे प्रभु ! जो तुझे अच्छे लगते हैं, केवल वही तुझे जान सकते हैं। हे नानक ! मैं ऐसे भक्तों के चरण–स्पर्श करता हूँ॥ ७॥

करउ बेनती पारब्रहमु सभु जानै ॥ अपना कीआ आपहि मानै ॥ आपहि आप आपि करत निबेरा ॥ किसै दूरि जनावत किसै बुझावत नेरा ॥ उपाव सिआनप सगल ते रहत ॥ सभु कछु जानै आतम की रहत ॥ जिसु भावै तिसु लए लड़ि लाइ ॥ थान थनंतरि रहिआ समाइ ॥ सो सेवकु जिसु किरपा करी ॥ निमख निमख जपि नानक हरी ॥ ८ ॥ ५ ॥

मैं उस पारब्रह्म के समक्ष प्रार्थना करता हूँ, जो सब कुछ जानता है। अपने उत्पन्न किए प्राणी को वह स्वयं ही सम्मान प्रदान करता है। ईश्वर स्वयं ही (प्राणियों के कर्मों के अनुसार) न्याय करता है। किसी को यह सूझ प्रदान करता है कि ईश्वर हमारे समीप है और किसी को लगता है कि ईश्वर कहीं दूर है। समस्त कोशिशों एवं चतुराईयों से ईश्वर परे है। (क्योंकि) वह मनुष्य के मन की अवस्था भलीभाँति समझता है। वह उसको अपने साथ मिला लेता है, जो उसको भला लगता है। प्रभु समस्त स्थानों एवं स्थानों की दूरी पर सर्वव्यापक हो रहा है। जिस पर ईश्वर कृपा धारण करता है, वही उसका सेवक है। हे नानक ! क्षण–क्षण हरि का जाप करते रहो॥ ८॥ ५॥

सलोकु ॥ काम क्रोध अरु लोभ मोह बिनसि जाइ अहंमेव ॥ नानक प्रभ सरणागती करि प्रसादु गुरदेव ॥ १ ॥

श्लोक॥ नानक की प्रार्थना है कि हे ईश्वर ! मैं तेरी शरण में आया हूँ, हे गुरुदेव ! मुझ पर ऐसी कृपा करें ताकि मेरा काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अहंकार निवृत्त हो जाए॥ १॥

असटपदी ॥ जिह प्रसादि छतीह अंम्रित खाहि ॥ तिसु ठाकुर कउ रखु मन माहि ॥ जिह प्रसादि सुगंधत तनि लावहि ॥ तिस कउ सिमरत परम गति पावहि ॥ जिह प्रसादि बसहि सुख मंदरि ॥ तिसहि धिआइ सदा मन अंदरि ॥ जिह प्रसादि ग्रिह संगि सुख बसना ॥ आठ पहर सिमरहु तिसु रसना ॥ जिह प्रसादि रंग रस भोग ॥ नानक सदा धिआईऐ धिआवन जोग ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ (हे जीव !) जिसकी कृपा से तू छत्तीस प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन खाता है, उस प्रभु को अपने मन में याद कर। जिसकी कृपा से तुम अपने शरीर पर सुगंधियाँ लगाते हो, उसका भजन

करने से तुझे परमगति मिल जाएगी। जिसकी कृपा से तुम महलों में सुख से रहते हो, अपने मन में हमेशा उसका ध्यान करो। जिसकी कृपा से तुम अपने घर में सुखपूर्वक रहते हो, अपनी जिह्वा से आठ पहर उसका सिमरन करो। हे नानक ! जिस की कृपा से रंग तमाशे, स्वादिष्ट व्यंजन एवं पदार्थ प्राप्त होते हैं, उस याद करने योग्य ईश्वर का सदैव ध्यान करना चाहिए॥ १॥

जिह प्रसादि पाट पटंबर हढावहि ॥ तिसहि तिआगि कत अवर लुभावहि ॥ जिह प्रसादि सुखि सेज सोईजै ॥ मन आठ पहर ता का जसु गावीजै ॥ जिह प्रसादि तुझु सभु कोऊ मानै ॥ मुखि ता को जसु रसन बखानै ॥ जिह प्रसादि तेरो रहता धरमु ॥ मन सदा धिआइ केवल पारब्रहमु ॥ प्रभ जी जपत दरगह मानु पावहि ॥ नानक पति सेती घरि जावहि ॥ २ ॥

जिसकी कृपा से तुम रेशमी वस्त्र पहनते हो, उसे भुलाकर क्यों दूसरों में मस्त हो रहे हो। जिसकी कृपा से तुम सुखपूर्वक सेज पर सोते हो। हे मेरे मन ! उस प्रभु का आठों प्रहर यशोगान करना चाहिए। जिसकी कृपा से प्रत्येक व्यक्ति तेरा आदर–सत्कार करता है, अपने मुँह एवं जिह्वा से उसका यश सदैव बखान कर। जिसकी कृपा से तेरा धर्म कायम रहता है, हे मेरे मन ! तू हमेशा उस पारब्रह्म का ध्यान कर। पूज्य परमेश्वर की आराधना करने से तू उसके दरबार में शोभा प्राप्त करेगा। हे नानक ! इस तरह तुम प्रतिष्ठा सहित अपने धाम (परलोक) जाओगे॥ २॥

जिह प्रसादि आरोग कंचन देही ॥ लिव लावहु तिसु राम सनेही ॥ जिह प्रसादि तेरा ओला रहत ॥ मन सुखु पावहि हरि हरि जसु कहत ॥ जिह प्रसादि तेरे सगल छिद्र ढाके ॥ मन सरनी परु ठाकुर प्रभ ता कै ॥ जिह प्रसादि तुझु को न पहूचै ॥ मन सासि सासि सिमरहु प्रभ ऊचे ॥ जिह प्रसादि पाई द्रुलभ देह ॥ नानक ता की भगति करेह ॥ ३ ॥

हे मन ! जिसकी कृपा से तुझे सोने जैसा सुन्दर शरीर मिला है, उस प्रियतम राम से वृत्ति लगा। जिसकी कृपा से तेरा पर्दा रहता है, उस प्रभु–परमेश्वर की स्तुति करने से तुम सुख प्राप्त कर लोगे। जिसकी कृपा से तेरे तमाम पाप छिप जाते हैं। हे मन ! उस प्रभु–परमेश्वर की शरण ले। जिसकी कृपा से कोई तेरे बराबर नहीं पहुँचता, हे मेरे मन ! अपने श्वास–श्वास से सर्वोपरि प्रभु को याद कर। जिसकी कृपा से तुझे दुर्लभ मनुष्य शरीर मिला है, हे नानक ! उस भगवान की भक्ति किया कर॥ ३॥

जिह प्रसादि आभूखन पहिरीजै ॥ मन तिसु सिमरत किउ आलसु कीजै ॥ जिह प्रसादि अस्व हसति असवारी ॥ मन तिसु प्रभ कउ कबहू न बिसारी ॥ जिह प्रसादि बाग मिलख धना ॥ राखु परोइ प्रभु अपुने मना ॥ जिनि तेरी मन बनत बनाई ॥ ऊठत बैठत सद तिसहि धिआई ॥ तिसहि धिआइ जो एक अलखै ॥ ईहा ऊहा नानक तेरी रखै ॥ ४ ॥

जिसकी कृपा से आभूषण पहने जाते हैं, हे मन ! उसकी आराधना करते हुए आलस्य क्यों किया जाए ? जिसकी कृपा से तुम घोड़ों एवं हाथियों की सवारी करते हो, हे मन ! उस ईश्वर को कभी विस्मृत न कर। जिसकी कृपा से उद्यान, धरती एवं धन प्राप्त हुए हैं, उस ईश्वर को अपने मन में पिरोकर रख। हे मन ! जिस ईश्वर ने तेरी रचना की है, उठते–बैठते हर वक्त उसका ध्यान करते रहना चाहिए। हे नानक ! उस एक अदृश्य प्रभु का चिन्तन कर। वह लोक–परलोक दोनों में तेरी रक्षा करेगा॥ ४॥

जिह प्रसादि करहि पुंन बहु दान ॥ मन आठ पहर करि तिस का धिआन ॥ जिह प्रसादि तू आचार बिउहारी ॥ तिसु प्रभ कउ सासि सासि चितारी ॥ जिह प्रसादि तेरा सुंदर रूपु ॥ सो प्रभु

सिमरहु सदा अनूपु ॥ जिह प्रसादि तेरी नीकी जाति ॥ सो प्रभु सिमरि सदा दिन राति ॥ जिह प्रसादि तेरी पति रहै ॥ गुर प्रसादि नानक जसु कहै॥ ५ ॥

जिसकी कृपा से तुम बड़ा दान—पुण्य करते हो, हे मन! आठों पहर उसका ही ध्यान करना चाहिए। जिसकी कृपा से तू धार्मिक संस्कार एवं सांसारिक कर्म करता है, अपने श्वास—श्वास से उस प्रभु का चिन्तन करना चाहिए। जिसकी कृपा से तेरा सुन्दर रूप है, उस अनुपम प्रभु का हमेशा सिमरन करना चाहिए। जिसकी दया से तुझे उच्च (मनुष्य) जाति मिली है, सदा उस प्रभु का दिन—रात चिन्तन कर। जिसकी कृपा से तेरी प्रतिष्ठा बरकरार रही है, हे नानक! गुरु की कृपा से उसकी महिमा किया कर॥ ५॥

जिह प्रसादि सुनहि करन नाद ॥ जिह प्रसादि पेखहि बिसमाद ॥ जिह प्रसादि बोलहि अंम्रित रसना ॥ जिह प्रसादि सुखि सहजे बसना ॥ जिह प्रसादि हसत कर चलहि ॥ जिह प्रसादि संपूरन फलहि ॥ जिह प्रसादि परम गति पावहि ॥ जिह प्रसादि सुखि सहजि समावहि ॥ ऐसा प्रभु तिआगि अवर कत लागहु ॥ गुर प्रसादि नानक मनि जागहु ॥ ६ ॥

जिसकी दया से तू कानों से शब्द सुनता है। जिसकी दया से तू आश्चर्यजनक कौतुक देखता है। जिसकी दया से तू अपनी जिह्वा से मीठे वचन बोलता है। जिसकी कृपा से तू सहज ही सुखपूर्वक रहता है। जिसकी दया से तेरे हाथ हिलते और काम करते हैं। जिसकी दया से तेरे सम्पूर्ण काम सफल होते हैं। जिसकी दया से तुझे परमगति मिलती है। जिसकी दया से तुम सहज सुख में लीन हो जाओगे, ऐसे प्रभु को छोड़कर तुम क्यों किसी दूसरे से लग रहे हो? हे नानक! गुरु की कृपा से अपने मन को ईश्वर की ओर जाग्रत कर॥ ६॥

जिह प्रसादि तूं प्रगटु संसारि ॥ तिसु प्रभ कउ मूलि न मनहु बिसारि ॥ जिह प्रसादि तेरा परतापु ॥ रे मन मूड़ तू ता कउ जापु ॥ जिह प्रसादि तेरे कारज पूरे ॥ तिसहि जानु मन सदा हजूरे ॥ जिह प्रसादि तूं पावहि साचु ॥ रे मन मेरे तूं ता सिउ राचु ॥ जिह प्रसादि सभ की गति होइ ॥ नानक जापु जपै जपु सोइ ॥ ७ ॥

जिसकी कृपा से तू दुनिया में लोकप्रिय हुआ है, उस प्रभु को कभी अपने हृदय से न भुला। जिसकी कृपा से तेरा तेज—प्रताप बना है, हे मेरे मूर्ख मन! तू उसकी आराधना करता रह। जिसकी दया से तेरे समस्त कार्य सम्पूर्ण हुए हैं, अपने हृदय में उसको सदा निकट समझ। जिसकी दया से तुझे सत्य प्राप्त होता है, हे मेरे मन! तू उससे प्रेम कर। जिसकी कृपा से सबकी गति हो जाती है, हे नानक! उस प्रभु के नाम का एक रस जाप करना चाहिए॥ ७॥

आपि जपाए जपै सो नाउ ॥ आपि गावाए सु हरि गुन गाउ ॥ प्रभ किरपा ते होइ प्रगासु ॥ प्रभू दइआ ते कमल बिगासु ॥ प्रभ सुप्रसंन बसै मनि सोइ ॥ प्रभ दइआ ते मति ऊतम होइ ॥ सरब निधान प्रभ तेरी मइआ ॥ आपहु कछू न किनहू लइआ ॥ जितु जितु लावहु तितु लगहि हरि नाथ ॥ नानक इन कै कछू न हाथ ॥ ८ ॥ ६ ॥

वही पुरुष ईश्वर का नाम जपता है, जिससे वह स्वयं जपाता है। केवल वही ईश्वर का यशोगान करता है, जिससे वह स्वयं गुणगान करवाता है। प्रभु की कृपा से प्रकाश होता है। प्रभु की कृपा से हृदय—कमल प्रफुल्लित होता है। जब प्रभु सुप्रसन्न होता है, तो वह मनुष्य के हृदय में आ निवास

करता है। प्रभु की दया से मनुष्य की बुद्धि उत्तम हो जाती है। हे प्रभु! समस्त खजाने तेरी दया में हैं। अपने आप किसी को कुछ भी प्राप्त नहीं होता। हे हरि–परमेश्वर! तुम जहाँ प्राणियों को लगाते हो, वे उधर ही लग जाते हैं। हे नानक! इन प्राणियों के वश में कुछ नहीं है॥ ८॥ ६॥

सलोकु ॥ अगम अगाधि पारब्रहमु सोइ ॥ जो जो कहै सु मुकता होइ ॥ सुनि मीता नानकु बिनवंता ॥ साध जना की अचरज कथा॥ १ ॥

श्लोक॥ वह पारब्रह्म प्रभु अगम्य एवं अनन्त है। जो कोई भी उसके नाम का जाप करता है, वह मोक्ष प्राप्त कर लेता है। नानक प्रार्थना करता है, हे मेरे मित्र! ध्यानपूर्वक सुन, साधुओं की कथा बड़ी अद्भुत है॥ १॥

असटपदी ॥ साध कै संगि मुख ऊजल होत ॥ साधसंगि मलु सगली खोत ॥ साध कै संगि मिटै अभिमानु ॥ साध कै संगि प्रगटै सुगिआनु ॥ साध कै संगि बुझै प्रभु नेरा ॥ साधसंगि सभु होत निबेरा ॥ साध कै संगि पाए नाम रतनु ॥ साध कै संगि एक ऊपरि जतनु ॥ साध की महिमा बरनै कउनु प्रानी ॥ नानक साध की सोभा प्रभ माहि समानी ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ साधुओं की संगति करने से मुख उज्ज्वल हो जाता है। साधुओं की संगति करने से विकारों की तमाम मैल दूर हो जाती है। साधुओं की संगति करने से अभिमान मिट जाता है। साधुओं की संगति करने से आत्म–ज्ञान प्रगट हो जाता है। साधुओं की संगति करने से प्रभु निकट ही रहता हुआ प्रतीत होता है। साधुओं की संगति करने से तमाम विवाद निपट जाते हैं। साधुओं की संगति करने से नाम–रत्न प्राप्त हो जाता है। साधुओं की संगति में मनुष्य केवल एक ईश्वर हेतु ही प्रयास करता है। कौन–सा प्राणी साधुओं की महिमा का वर्णन कर सकता है? हे नानक! साधुओं की शोभा प्रभु (की महिमा) में ही लीन हुई है॥ १॥

साध कै संगि अगोचरु मिलै ॥ साध कै संगि सदा परफुलै ॥ साध कै संगि आवहि बसि पंचा ॥ साधसंगि अंम्रित रसु भुंचा ॥ साधसंगि होइ सभ की रेन ॥ साध कै संगि मनोहर बैन ॥ साध कै संगि न कतहूं धावै ॥ साधसंगि असथिति मनु पावै ॥ साध कै संगि माइआ ते भिंन ॥ साधसंगि नानक प्रभ सुप्रसंन ॥ २ ॥

साधुओं की संगति करने से अगोचर प्रभु मिल जाता है। साधुओं की संगति करने से प्राणी सदा प्रफुल्लित रहता है। साधुओं की संगति करने से पाँच शत्रु (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) वश में आ जाते हैं। साधुओं की संगति करने से मनुष्य अमृत रूप नाम का रस चख लेता है। साधुओं की संगति करने से मनुष्य सबकी धूलि बन जाता है। साधुओं की संगति करने से वाणी मनोहर हो जाती है। साधुओं की संगति करने से मन कहीं नहीं जाता। साधुओं की संगति करने से मन स्थिरता प्राप्त कर लेता है। साधुओं की संगति में यह माया से मुक्ति प्राप्त कर लेता है। हे नानक! साधुओं की संगति में रहने से प्रभु सुप्रसन्न हो जाता है॥ २॥

साधसंगि दुसमन सभि मीत ॥ साधू कै संगि महा पुनीत ॥ साधसंगि किस सिउ नही बैरु ॥ साध कै संगि न बीगा पैरु ॥ साध कै संगि नाही को मंदा ॥ साधसंगि जाने परमानंदा ॥ साध कै संगि नाही हउ तापु ॥ साध कै संगि तजै सभु आपु ॥ आपे जानै साध बडाई ॥ नानक साध प्रभू बनि आई ॥ ३ ॥

साधु की संगति करने से सभी दुश्मन भी मित्र बन जाते हैं। साधु की संगति करने से मनुष्य महापवित्र हो जाता है। साधुओं की संगति करने से वह किसी से वैर नहीं करता। साधुओं की संगति

में रहने से मनुष्य कुमार्ग की ओर चरण नहीं करता। साधु की संगति करने से कोई बुरा दिखाई नहीं देता। साधुओं की संगति करने से मनुष्य महान सुख के मालिक ईश्वर को ही जानता है। साधुओं की संगति करने से मनुष्य के अहंकार का ताप उतर जाता है। साधुओं की संगति करने से मनुष्य तमाम अहंत्व को त्याग देता है। ईश्वर स्वयं ही साधुओं की महिमा को जानता है। हे नानक! साधु एवं परमेश्वर का प्रेम परिपक्व हो जाता है॥ ३॥

साध कै संगि न कबहू धावै ॥ साध कै संगि सदा सुखु पावै ॥ साधसंगि बसतु अगोचर लहै ॥ साधू कै संगि अजरु सहै ॥ साध कै संगि बसै थानि ऊचै ॥ साधू कै संगि महलि पहूचै ॥ साध कै संगि द्रिड़ै सभि धरम ॥ साध कै संगि केवल पारब्रहम ॥ साध कै संगि पाए नाम निधान ॥ नानक साधू कै कुरबान ॥ ४ ॥

साधु की संगति करने से प्राणी का मन कभी नहीं भटकता। साधु की संगति करने से वह सदा सुख प्राप्त करता है। साधुओं की संगति करने से नाम रूपी अगोचर वस्तु प्राप्त हो जाती है। साधुओं की संगति करने से मनुष्य शिथिल न होने वाली शक्ति को सहन कर लेता है। साधुओं की संगति करने से प्राणी सर्वोच्च स्थान में निवास करता है। साधुओं की संगति में रहने से मनुष्य आत्मस्वरूप में पहुँच जाता है। साधुओं की संगति करने से प्राणी का धर्म पूरी तरह सुदृढ़ हो जाता है। साधुओं की संगति में रहने से मनुष्य केवल पारब्रह्म की ही आराधना करता है। साधुओं की संगति में रहने से मनुष्य नाम रूपी खजाना प्राप्त कर लेता है। हे नानक! मैं उन साधुओं पर तन—मन से न्यौछावर हूँ॥ ४॥

साध कै संगि सभ कुल उधारै ॥ साधसंगि साजन मीत कुटंब निसतारै ॥ साधू कै संगि सो धनु पावै ॥ जिसु धन ते सभु को वरसावै ॥ साधसंगि धरम राइ करे सेवा ॥ साध कै संगि सोभा सुरदेवा ॥ साधू कै संगि पाप पलाइन ॥ साधसंगि अंम्रित गुन गाइन ॥ साध कै संगि स्रब थान गंमि ॥ नानक साध कै संगि सफल जनंम ॥ ५ ॥

साधुओं की संगति द्वारा मनुष्य के समूचे वंश का उद्धार हो जाता है। साधुओं की संगति में रहने से मनुष्य के मित्र—सज्जन एवं परिवार का भवसागर से उद्धार हो जाता है। साधुओं की संगति में रहने से वह धन प्राप्त हो जाता है, जिस धन से हरेक पुरुष लाभ प्राप्त करता है और तृप्त हो जाता है। साधुओं की संगति में रहने से यमराज भी सेवा करता है। जो साधुओं की संगति में रहता है, देवदूत एवं देवते भी उसका यशोगान करते हैं। साधुओं की संगति करने से समूचे पाप नाश हो जाते हैं। साधुओं की संगति द्वारा मनुष्य अमृतमयी नाम का यश गायन करता है। साधुओं की संगति द्वारा मनुष्य की समस्त स्थानों पर पहुँच हो जाती है। हे नानक! साधुओं की संगति में रहने से मनुष्य—जन्म सफल हो जाता है॥ ५॥

साध कै संगि नही कछु घाल ॥ दरसनु भेटत होत निहाल ॥ साध कै संगि कलूखत हरै ॥ साध कै संगि नरक परहरै ॥ साध कै संगि ईहा ऊहा सुहेला ॥ साधसंगि बिछुरत हरि मेला ॥ जो इछै सोई फलु पावै ॥ साध कै संगि न बिरथा जावै ॥ पारब्रहमु साध रिद बसै ॥ नानक उधरै साध सुनि रसै ॥ ६ ॥

साधुओं की संगति करने से मनुष्य को मेहनत नहीं करनी पड़ती। साधुओं के दर्शनमात्र एवं भेंट से मनुष्य कृतार्थ हो जाता है। साधुओं की संगति करने से मनुष्य के तमाम पाप नाश हो जाते हैं। साधुओं की संगति करने से मनुष्य नरक से बच जाता है। साधुओं की संगति करने से प्राणी लोक—परलोक में सुखी हो जाता है। साधुओं की संगति करने से जो ईश्वर से जुदा हुए हैं, वे उससे

मिल जाते हैं। साधुओं की संगति करने से मनुष्य खाली हाथ नहीं जाता, अपितु जिस फल का वह इच्छुक होता है, उसे मिल जाता है। पारब्रह्म–प्रभु साधुओं के हृदय में निवास करता है। हे नानक! साधुओं की जिह्वा से ईश्वर का नाम सुनकर जीव पार हो जाता है॥ ६॥

साध कै संगि सुनउ हरि नाउ ॥ साधसंगि हरि के गुन गाउ ॥ साध कै संगि न मन ते बिसरै ॥ साधसंगि सरपर निसतरै ॥ साध कै संगि लगै प्रभु मीठा ॥ साधू कै संगि घटि घटि डीठा ॥ साधसंगि भए आगिआकारी ॥ साधसंगि गति भई हमारी ॥ साध कै संगि मिटे सभि रोग ॥ नानक साध भेटे संजोग ॥ ७ ॥

साधु की संगति में रहकर भगवान का नाम सुनो। साधुओं की संगति में ईश्वर का गुणानुवाद करो। साधुओं की संगति में मनुष्य प्रभु को अपने हृदय से नहीं भुलाता। साधुओं की संगति में उसका निश्चित ही भवसागर से उद्धार हो जाता है। साधुओं की संगति में रहने से मनुष्य को प्रभु मीठा लगने लगता है। साधुओं की संगति में ईश्वर प्रत्येक हृदय में दिखाई देता है। साधुओं की संगति में मनुष्य ईश्वर का आज्ञाकारी हो जाता है। साधुओं की संगति में हमारी गति हो गई है। साधुओं की संगति में रहने से तमाम रोग मिट जाते हैं। हे नानक! संयोग से ही साधु मिलते हैं॥ ७॥

साध की महिमा बेद न जानहि ॥ जेता सुनहि तेता बखिआनहि ॥ साध की उपमा तिहु गुण ते दूरि ॥ साध की उपमा रही भरपूरि ॥ साध की सोभा का नाही अंत ॥ साध की सोभा सदा बेअंत ॥ साध की सोभा ऊच ते ऊची ॥ साध की सोभा मूच ते मूची ॥ साध की सोभा साध बनि आई ॥ नानक साध प्रभ भेदु न भाई ॥ ८ ॥ ७ ॥

साधु की महिमा वेद भी नहीं जानते। वे उनके बारे जितना सुनते हैं, उतना ही बखान करते हैं। साधु की उपमा (माया के) तीनों ही गुणों से दूर है। साधु की उपमा सर्वव्यापक है। साधु की शोभा का कोई अन्त नहीं। साधु की शोभा सदैव ही अनन्त है। साधु की शोभा सर्वोच्च एवं महान है। साधु की शोभा महानों में बड़ी महान है। साधु की शोभा केवल साधु को ही उपयुक्त लगती है। नानक का कथन है कि हे मेरे भाई! साधु एवं प्रभु में कोई भेद नहीं॥ ८॥ ७॥

सलोकु ॥ मनि साचा मुखि साचा सोइ ॥ अवरु न पेखै एकसु बिनु कोइ ॥ नानक इह लछण ब्रहम गिआनी होइ ॥ १ ॥

श्लोक॥ जिसके मन में सत्य है और मुँह में भी वही सत्य है और जो एक परमात्मा के अलावा किसी दूसरे को नहीं देखता, हे नानक! यह गुण ब्रह्मज्ञानी के होते हैं॥ १॥

असटपदी॥ ब्रहम गिआनी सदा निरलेप ॥ जैसे जल महि कमल अलेप ॥ ब्रहम गिआनी सदा निरदोख ॥ जैसे सूरु सरब कउ सोख ॥ ब्रहम गिआनी कै द्रिसटि समानि ॥ जैसे राज रंक कउ लागै तुलि पवान ॥ ब्रहम गिआनी कै धीरजु एक ॥ जिउ बसुधा कोऊ खोदै कोऊ चंदन लेप ॥ ब्रहम गिआनी का इहै गुनाउ ॥ नानक जिउ पावक का सहज सुभाउ ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ ब्रह्मज्ञानी हमेशा निर्लिप्त रहता है, जैसे जल में कमल का फूल स्वच्छ होता है। ब्रह्मज्ञानी सदा निर्दोष है, जैसे सूर्य समस्त (रसों को) सुखा देता है। ब्रह्मज्ञानी सबको एक आँख से देखता है, जैसे हवा राजा और कंगाल को एक समान लगती है। ब्रह्मज्ञानी की सहनशीलता एक समान होती है, जैसे कोई धरती को खोदता है और कोई चन्दन का लेप करता है। ब्रह्मज्ञानी का यही गुण है। हे नानक! जैसे अग्नि का सहज स्वभाव होता है॥ १॥

ब्रहम गिआनी निरमल ते निरमला ॥ जैसे मैलु न लागै जला ॥ ब्रहम गिआनी कै मनि होइ प्रगासु ॥ जैसे धर ऊपरि आकासु ॥ ब्रहम गिआनी कै मित्र सत्रु समानि ॥ ब्रहम गिआनी कै नाही अभिमान ॥ ब्रहम गिआनी ऊच ते ऊचा ॥ मनि अपनै है सभ ते नीचा ॥ ब्रहम गिआनी से जन भए ॥ नानक जिन प्रभु आपि करेइ ॥ २ ॥

ब्रह्मज्ञानी निर्मल से भी परम निर्मल है, जैसे जल को मैल नहीं लगती। पृथ्वी के ऊपर आकाश की भाँति ब्रह्मज्ञानी के मन में यूं प्रकाश होता है। ब्रह्मज्ञानी के लिए मित्र एवं शत्रु एक समान होते हैं। ब्रह्मज्ञानी में थोड़ा–सा भी अभिमान नहीं होता। ब्रह्मज्ञानी सर्वोच्च है। परन्तु अपने मन में वह सबसे निम्न होता है। हे नानक ! केवल वही पुरुष ब्रह्मज्ञानी बनता है, जिन्हें परमेश्वर स्वयं बनाता है॥ २॥

ब्रहम गिआनी सगल की रीना ॥ आतम रसु ब्रहम गिआनी चीना ॥ ब्रहम गिआनी की सभ ऊपरि मइआ ॥ ब्रहम गिआनी ते कछु बुरा न भइआ ॥ ब्रहम गिआनी सदा समदरसी ॥ ब्रहम गिआनी की द्रिसटि अंम्रितु बरसी ॥ ब्रहम गिआनी बंधन ते मुकता ॥ ब्रहम गिआनी की निरमल जुगता ॥ ब्रहम गिआनी का भोजनु गिआन ॥ नानक ब्रहम गिआनी का ब्रहम धिआनु ॥ ३ ॥

ब्रह्मज्ञानी सबकी चरण–धूलि है। ब्रह्मज्ञानी आत्मिक आनन्द को अनुभव करता है। ब्रह्मज्ञानी सब पर कृपा करता है। ब्रह्मज्ञानी के पास कोई बुराई नहीं होती और वह कुछ भी बुरा नहीं करता। ब्रह्मज्ञानी सदैव समदर्शी होता है। ब्रह्मज्ञानी की दृष्टि से अमृत बरसता है। ब्रह्मज्ञानी बन्धनों से मुक्त रहता है। ब्रह्मज्ञानी का जीवन–आचरण बड़ा पवित्र है। ब्रह्मज्ञानी का भोजन ज्ञान होता है। हे नानक ! ब्रह्मज्ञानी भगवान के ध्यान में ही मग्न रहता है॥ ३॥

ब्रहम गिआनी एक ऊपरि आस ॥ ब्रहम गिआनी का नही बिनास ॥ ब्रहम गिआनी कै गरीबी समाहा ॥ ब्रहम गिआनी परउपकार उमाहा ॥ ब्रहम गिआनी कै नाही धंधा ॥ ब्रहम गिआनी ले धावतु बंधा ॥ ब्रहम गिआनी कै होइ सु भला ॥ ब्रहम गिआनी सुफल फला॥ ब्रहम गिआनी संगि सगल उधारु॥ नानक ब्रहम गिआनी जपै सगल संसारु ॥ ४ ॥

ब्रह्मज्ञानी की एक ईश्वर पर ही आशा होती है। ब्रह्मज्ञानी का विनाश नहीं होता। ब्रह्मज्ञानी नम्रता में ही टिका रहता है। ब्रह्मज्ञानी को परोपकार करने का उत्साह बना रहता है। ब्रह्मज्ञानी सांसारिक विवादों से परे होता है। ब्रह्मज्ञानी अपने भागते मन को नियंत्रण में कर लेता है। ब्रह्मज्ञानी के कर्म श्रेष्ठ हैं, वह जो भी करता है, भला ही करता है। ब्रह्मज्ञानी भलीभाँति सफल होता है। ब्रह्मज्ञानी की संगति में रहने से सबका उद्धार हो जाता है। हे नानक ! सारी दुनिया ब्रह्मज्ञानी की प्रशंसा करती है॥ ४॥

ब्रहम गिआनी कै एकै रंग ॥ ब्रहम गिआनी कै बसै प्रभु संग ॥ ब्रहम गिआनी कै नामु आधारु ॥ ब्रहम गिआनी कै नामु परवारु ॥ ब्रहम गिआनी सदा सद जागत ॥ ब्रहम गिआनी अहंबुधि तिआगत ॥ ब्रहम गिआनी कै मनि परमानंद ॥ ब्रहम गिआनी कै घरि सदा अनंद ॥ ब्रहम गिआनी सुख सहज निवास ॥ नानक ब्रहम गिआनी का नही बिनास ॥ ५ ॥

ब्रह्मज्ञानी केवल एक ईश्वर से ही प्रेम करता है। ईश्वर ब्रह्मज्ञानी के साथ–साथ रहता है। ईश्वर का नाम ही ब्रह्मज्ञानी का आधार है। ईश्वर का नाम ही ब्रह्मज्ञानी का परिवार है। ब्रह्मज्ञानी हमेशा जाग्रत रहता है। ब्रह्मज्ञानी अपनी अहंबुद्धि को त्याग देता है। ब्रह्मज्ञानी के हृदय में परमानन्द वास करता है। ब्रह्मज्ञानी के हृदय–रूपी घर में सदा आनंद बना रहता है। ब्रह्मज्ञानी हमेशा सहज सुख में निवास करता है। हे नानक ! ब्रह्मज्ञानी का विनाश नहीं होता॥ ५॥

ब्रहम गिआनी ब्रहम का बेता ॥ ब्रहम गिआनी एक संगि हेता ॥ ब्रहम गिआनी कै होइ अचिंत ॥ ब्रहम गिआनी का निरमल मंत ॥ ब्रहम गिआनी जिसु करै प्रभु आपि ॥ ब्रहम गिआनी का बड परताप ॥ ब्रहम गिआनी का दरसु बडभागी पाईऐ ॥ ब्रहम गिआनी कउ बलि बलि जाईऐ ॥ ब्रहम गिआनी कउ खोजहि महेसुर ॥ नानक ब्रहम गिआनी आपि परमेसुर ॥ ६ ॥

ब्रह्मज्ञानी ब्रह्म ज्ञाता होता है। ब्रह्मज्ञानी एक ईश्वर से ही प्रेम करता है। ब्रह्मज्ञानी के हृदय में हमेशा बेफिक्री रहती है। ब्रह्मज्ञानी का मन्त्र पवित्र करने वाला होता है। ब्रह्मज्ञानी वही होता है, जिसे ईश्वर स्वयं लोकप्रिय बनाता है। ब्रह्मज्ञानी का बड़ा प्रताप है। ब्रह्मज्ञानी के दर्शन किसी भाग्यशाली को ही प्राप्त होते हैं। ब्रह्मज्ञानी पर हमेशा बलिहारी जाना चाहिए। ब्रह्मज्ञानी को शिवशंकर भी खोजते रहते हैं। हे नानक! परमेश्वर स्वयं ही ब्रह्मज्ञानी है॥ ६॥

ब्रहम गिआनी की कीमति नाहि ॥ ब्रहम गिआनी कै सगल मन माहि ॥ ब्रहम गिआनी का कउन जानै भेदु ॥ ब्रहम गिआनी कउ सदा अदेसु ॥ ब्रहम गिआनी का कथिआ न जाइ अधाख्यरु ॥ ब्रहम गिआनी सरब का ठाकुरु ॥ ब्रहम गिआनी की मिति कउनु बखानै ॥ ब्रहम गिआनी की गति ब्रहम गिआनी जानै ॥ ब्रहम गिआनी का अंतु न पारु ॥ नानक ब्रहम गिआनी कउ सदा नमसकारु ॥ ७ ॥

ब्रह्मज्ञानी के गुणों का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। सब गुण ब्रह्मज्ञानी के हृदय में विद्यमान हैं। ब्रह्मज्ञानी के भेद को कौन जान सकता है? ब्रह्मज्ञानी को सदैव प्रणाम करना चाहिए। ब्रह्मज्ञानी की महिमा का एक आधा अक्षर भी वर्णन नहीं किया जा सकता। ब्रह्मज्ञानी समस्त जीवों का पूज्य स्वामी है। ब्रह्मज्ञानी का अनुमान कौन लगा सकता है। केवल ब्रह्मज्ञानी ही ब्रह्मज्ञानी की गति को जानता है। ब्रह्मज्ञानी के गुणों का कोई आर–पार नहीं। हे नानक! ब्रह्मज्ञानी को हमेशा ही प्रणाम करते रहो॥ ७॥

ब्रहम गिआनी सभ स्रिसटि का करता ॥ ब्रहम गिआनी सद जीवै नही मरता ॥ ब्रहम गिआनी मुकति जुगति जीअ का दाता ॥ ब्रहम गिआनी पूरन पुरखु बिधाता ॥ ब्रहम गिआनी अनाथ का नाथु ॥ ब्रहम गिआनी का सभ ऊपरि हाथु ॥ ब्रहम गिआनी का सगल अकारु ॥ ब्रहम गिआनी आपि निरंकारु ॥ ब्रहम गिआनी की सोभा ब्रहम गिआनी बनी ॥ नानक ब्रहम गिआनी सरब का धनी ॥ ८ ॥ ८ ॥

ब्रह्मज्ञानी सारी दुनिया का कर्त्तार है। ब्रह्मज्ञानी सदैव ही जीवित रहता है और मरता नहीं। ब्रह्मज्ञानी जीवों को मुक्ति, युक्ति एवं जीवन देने वाला दाता है। ब्रह्मज्ञानी पूर्ण पुरुष विधाता है। ब्रह्मज्ञानी अनाथों का नाथ है। ब्रह्मज्ञानी का रक्षक हाथ समस्त मानव जाति पर है। यह सारा जगत्–प्रसार ब्रह्मज्ञानी का ही है। ब्रह्मज्ञानी स्वयं ही निरंकार है। ब्रह्मज्ञानी की शोभा केवल ब्रह्मज्ञानी को ही बनती है। हे नानक! ब्रह्मज्ञानी सबका मालिक है॥ ८॥ ८॥

सलोकु ॥ उरि धारै जो अंतरि नामु ॥ सरब मै पेखै भगवानु ॥ निमख निमख ठाकुर नमसकारै ॥ नानक ओहु अपरसु सगल निसतारै ॥ १ ॥

श्लोक॥ जो व्यक्ति अपने हृदय में भगवान के नाम को बसाता है, जो सब में भगवान के दर्शन करता है और क्षण–क्षण प्रभु को प्रणाम करता है, हे नानक! ऐसा सत्यवादी निर्लिप्त महापुरुष समस्त प्राणियों का भवसागर से उद्धार कर देता है॥ १॥

असटपदी॥ मिथिआ नाही रसना परस ॥ मन महि प्रीति निरंजन दरस ॥ पर त्रिअ रूपु न पेखै नेत्र ॥ साध की टहल संतसंगि हेत ॥ करन न सुनै काहू की निंदा ॥ सभ ते जानै आपस कउ मंदा ॥ गुर प्रसादि बिखिआ परहरै ॥ मन की बासना मन ते टरै ॥ इंद्री जित पंच दोख ते रहत ॥ नानक कोटि मधे को ऐसा अपरस ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ जो व्यक्ति जिह्वा से झूठ नहीं बोलता, जिसके हृदय में पवित्र प्रभु के दर्शनों की अभिलाषा बनी रहती है, जिसके नेत्र पराई नारी के सौन्दर्य को नहीं देखते, जो साधुओं की श्रद्धापूर्वक सेवा करता है और संतों की संगति से प्रेम करता है, जो अपने कानों से किसी की निन्दा नहीं सुनता, जो अपने आपको बुरा (निम्न) समझता है, जो गुरु की कृपा से बुराई को त्याग देता है, जो अपने मन की वासना अपने मन से दूर कर देता है और जो अपनी ज्ञान-इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर लेता है और पाँचों ही विकारों (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) से बचा रहता है, हे नानक! करोड़ों में से कोई ऐसा विरला पुरुष 'अपरस' (पवित्र-पावन) होता है॥ १॥

बैसनो सो जिसु ऊपरि सुप्रसंन ॥ बिसन की माइआ ते होइ भिंन ॥ करम करत होवै निहकरम ॥ तिसु बैसनो का निरमल धरम ॥ काहू फल की इछा नही बाछै ॥ केवल भगति कीरतन संगि राचै ॥ मन तन अंतरि सिमरन गोपाल ॥ सभ ऊपरि होवत किरपाल ॥ आपि द्रिड़ै अवरह नामु जपावै ॥ नानक ओहु बैसनो परम गति पावै ॥ २ ॥

जिस व्यक्ति पर परमात्मा प्रसन्न है, वही वैष्णव है। वह विष्णु की माया से अलग रहता है और शुभकर्म करता हुआ निष्कर्मी ही रहता है। उस वैष्णव का धर्म भी पवित्र है। वह किसी फल की इच्छा नहीं करता। वह केवल प्रभु-भक्ति एवं उसके कीर्तन में ही समाया रहता है। उसकी आत्मा एवं शरीर में सृष्टि के पालनहार गोपाल का सिमरन ही होता है। वह समस्त जीवों पर कृपालु होता है। वह स्वयं ईश्वर का नाम अपने मन में बसाता है और दूसरों से नाम का जाप करवाता है। हे नानक! ऐसा वैष्णव परमगति प्राप्त कर लेता है॥ २॥

भगउती भगवंत भगति का रंगु ॥ सगल तिआगै दुसट का संगु ॥ मन ते बिनसै सगला भरमु ॥ करि पूजै सगल पारब्रहमु ॥ साधसंगि पापा मलु खोवै ॥ तिसु भगउती की मति ऊतम होवै ॥ भगवंत की टहल करै नित नीति ॥ मनु तनु अरपै बिसन परीति ॥ हरि के चरन हिरदै बसावै ॥ नानक ऐसा भगउती भगवंत कउ पावै ॥ ३ ॥

जिसके चित्त में भगवान की भक्ति का प्रेम होता है, वही भगवान का वास्तविक भक्त है। वह समस्त दुष्टों की संगति त्याग देता है और उसके मन से हर प्रकार की दुविधा मिट जाती है। वह पारब्रह्म को हर जगह मौजूद समझता है और केवल उसकी ही पूजा करता है। जो साधुओं-संतों की संगति में रहकर पापों की मैल मन से निवृत्त कर देता है, ऐसे भक्त की बुद्धि उत्तम हो जाती है। वह अपने भगवान की नित्य सेवा करता रहता है। वह अपना मन एवं तन अपने प्रभु के प्रेम में समर्पित कर देता है। वह भगवान के चरण अपने हृदय में बसाता है। हे नानक! ऐसा भक्त ही भगवान को प्राप्त करता है॥ ३॥

सो पंडितु जो मनु परबोधै ॥ राम नामु आतम महि सोधै ॥ राम नाम सारु रसु पीवै ॥ उसु पंडित कै उपदेसि जगु जीवै ॥ हरि की कथा हिरदै बसावै ॥ सो पंडितु फिरि जोनि न आवै ॥ बेद पुरान सिम्रिति बूझै मूल ॥ सूखम महि जानै असथूलु ॥ चहु वरना कउ दे उपदेसु ॥ नानक उसु पंडित कउ सदा अदेसु ॥ ४ ॥

पण्डित वही है, जो अपने मन को उपदेश प्रदान करता है। वह राम के नाम को अपने हृदय में खोजता है। उस पण्डित के उपदेश द्वारा सारा जगत् जीता है, जो राम–नाम का मीठा रस सेवन करता है। जो पण्डित हरि की कथा को अपने हृदय में बसाता है, ऐसा पण्डित दोबारा योनियों में प्रवेश नहीं करता। वह वेद, पुराणों एवं स्मृतियों के मूल तत्त्व का विचार करता है, वह दृष्टिगोचर संसार को अदृश्य प्रभु में अनुभव करता है और चारों ही वर्णों (जातियों) को उपदेश देता है। हे नानक! उस पण्डित को सदैव ही प्रणाम है॥ ४॥

बीज मंत्रु सरब को गिआनु ॥ चहु वरना महि जपै कोऊ नामु॥ जो जो जपै तिस की गति होइ ॥ साधसंगि पावै जनु कोइ ॥ करि किरपा अंतरि उर धारै॥ पसु प्रेत मुघद पाथर कउ तारै ॥ सरब रोग का अउखदु नामु ॥ कलिआण रूप मंगल गुण गाम॥ काहू जुगति कितै न पाईऐ धरमि ॥ नानक तिसु मिलै जिसु लिखिआ धुरि करमि ॥ ५ ॥

समस्त मंत्रों का बीज मंत्र ज्ञान है। चारों ही वर्णों में कोई भी पुरुष नाम का जाप करे। जो जो नाम जपता है, उसकी गति हो जाती है। कोई पुरुष ही इसे सत्संगति में रहकर प्राप्त करता है। यदि प्रभु अपनी कृपा से हृदय में नाम बसा दे तो पशु, प्रेत, मूर्ख, पत्थर दिल भी पार हो जाते हैं। ईश्वर का नाम समस्त रोगों की औषधि है। भगवान की गुणस्तुति करना कल्याण एवं मुक्ति का रूप है। किसी युक्ति अथवा किसी धर्म–कर्म द्वारा ईश्वर का नाम प्राप्त नहीं किया जा सकता। हे नानक! भगवान का नाम उस इन्सान को ही मिलता हैं, जिसकी किस्मत में आदि से ही लिखा होता है॥ ५॥

जिस कै मनि पारब्रहम का निवासु ॥ तिस का नामु सति रामदासु ॥ आतम रामु तिसु नदरी आइआ ॥ दास दसंतण भाइ तिनि पाइआ ॥ सदा निकटि निकटि हरि जानु ॥ सो दासु दरगह परवानु ॥ अपुने दास कउ आपि किरपा करै ॥ तिसु दास कउ सभ सोझी परै ॥ सगल संगि आतम उदासु ॥ ऐसी जुगति नानक रामदासु ॥ ६ ॥

जिसके मन में भगवान का निवास है, उसका नाम सत्य ही रामदास है। उसे अपने अन्तर में ही राम दिखाई दे गया है। सेवकों का सेवक होने के स्वभाव से उसने ईश्वर को पाया है। जो हमेशा ही भगवान को अपने निकट समझता है, वह सेवक प्रभु के दरबार में स्वीकार होता है। ईश्वर अपने सेवक पर स्वयं कृपा–दृष्टि करता है और उस सेवक को समूचा ज्ञान हो जाता है। समूचे परिवार में (रहता हुआ भी) वह मन से निर्लिप्त रहता है, हे नानक! ऐसी जीवन–युक्ति वाला रामदास होता है॥ ६॥

प्रभ की आगिआ आतम हितावै ॥ जीवन मुकति सोऊ कहावै ॥ तैसा हरखु तैसा उसु सोगु ॥ सदा अनंदु तह नही बिओगु ॥ तैसा सुवरनु तैसी उसु माटी ॥ तैसा अंम्रितु तैसी बिखु खाटी ॥ तैसा मानु तैसा अभिमानु॥ तैसा रंकु तैसा राजानु ॥ जो वरताए साई जुगति ॥ नानक ओहु पुरखु कहीऐ जीवन मुकति ॥ ७ ॥

जो प्रभु की आज्ञा को सच्चे मन से मानता है, वही जीवन मुक्त कहलाता है। उसके लिए सुख एवं दुःख एक समान होते हैं। उसे हमेशा ही आनंद मिलता है और कोई वियोग नहीं होता। सोना तथा मिट्टी भी उस पुरुष के लिए एक समान हैं, उसके लिए अमृत एवं खट्टा विष भी एक समान है। उसके लिए मान एवं अभिमान भी एक समान है। रंक तथा राजा भी उसकी नजर में बराबर हैं। जो भगवान करता है, वही उसकी जीवन–युक्ति होती है। हे नानक! वह पुरुष ही जीवन मुक्त कहा जाता है॥ ७॥

पारब्रहम के सगले ठाउ ॥ जितु जितु घरि राखै तैसा तिन नाउ ॥ आपे करन करावन जोगु ॥ प्रभ भावै सोई फुनि होगु ॥ पसरिओ आपि होइ अनत तरंग ॥ लखे न जाहि पारब्रहम के रंग ॥ जैसी मति देइ तैसा परगास ॥ पारब्रहमु करता अबिनास ॥ सदा सदा सदा दइआल ॥ सिमरि सिमरि नानक भए निहाल ॥ ८ ॥ ९ ॥

परमात्मा के ही समस्त स्थान हैं। जिस–जिस स्थान पर ईश्वर प्राणियों को रखता है, वैसा ही वह नाम धारण कर लेते हैं। भगवान स्वयं ही सब कुछ करने और (प्राणियों से) करवाने में समर्थ है। जो परमात्मा को भला लगता है, वही होता है। परमात्मा ने अपने आपको अनन्त लहरों में मौजूद होकर फैलाया हुआ है। परमात्मा के कौतुक जाने नहीं जा सकते। परमात्मा जैसी बुद्धि प्रदान करता है, वैसा ही प्रकाश होता है। सृष्टिकर्त्ता परमात्मा अनश्वर है। ईश्वर हमेशा ही दयालु है। हे नानक! उस परमात्मा का सिमरन करके कितने ही जीव कृतार्थ हो गए हैं॥ ८॥ ९॥

सलोकु ॥ उसतति करहि अनेक जन अंतु न पारावार ॥ नानक रचना प्रभि रची बहु बिधि अनिक प्रकार ॥ १ ॥

श्लोक॥ बहुत सारे मनुष्य प्रभु की गुणस्तुति करते रहते हैं, परन्तु परमात्मा के गुणों का कोई ओर–छोर नहीं मिलता। हे नानक! परमात्मा ने जो यह सृष्टि–रचना की है, वह अनेक प्रकार की होने के कारण बहुत सारी विधियों से रची है॥ १॥

असटपदी ॥ कई कोटि होए पूजारी ॥ कई कोटि आचार बिउहारी ॥ कई कोटि भए तीरथ वासी ॥ कई कोटि बन भ्रमहि उदासी ॥ कई कोटि बेद के स्रोते ॥ कई कोटि तपीसुर होते ॥ कई कोटि आतम धिआनु धारहि ॥ कई कोटि कबि काबि बीचारहि ॥ कई कोटि नवतन नाम धिआवहि ॥ नानक करते का अंतु न पावहि ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ कई करोड़ जीव उसकी पूजा करने वाले हुए हैं। कई करोड़ धार्मिक एवं सांसारिक आचरण–व्यवहार करने वाले हुए हैं। कई करोड़ जीव तीर्थों के निवासी हुए हैं। कई करोड़ जीव वैरागी बनकर जंगलों में भटकते रहते हैं। कई करोड़ वेदों के श्रोता हैं। कई करोड़ तपस्वी बने हुए हैं। कई करोड़ अपनी आत्मा में प्रभु–ध्यान को धारण करने वाले हैं। कई करोड़ कवि काव्य–रचनाओं द्वारा विचार करते हैं। कई करोड़ पुरुष नित्य नवीन नाम का ध्यान करते रहते हैं, तो भी हे नानक! उस परमात्मा का कोई भेद नहीं पा सकते॥ १॥

कई कोटि भए अभिमानी ॥ कई कोटि अंध अगिआनी ॥ कई कोटि किरपन कठोर ॥ कई कोटि अभिग आतम निकोर ॥ कई कोटि पर दरब कउ हिरहि ॥ कई कोटि पर दूखना करहि ॥ कई कोटि माइआ स्रम माहि ॥ कई कोटि परदेस भ्रमाहि ॥ जितु जितु लावहु तितु तितु लगना ॥ नानक करते की जानै करता रचना ॥ २ ॥

इस दुनिया में कई करोड़ (पुरुष) अभिमानी हैं। कई करोड़ (पुरुष) अन्धे अज्ञानी हैं। कई करोड़ (पुरुष) पत्थर दिल कंजूस हैं। कई करोड़ (मनुष्य) शुष्क एवं संवेदनहीन हैं। कई करोड़ (मनुष्य) दूसरों का धन चुराते हैं। कई करोड़ (मनुष्य) दूसरों की निन्दा करते हैं। कई करोड़ (पुरुष) धन संग्रह करने हेतु श्रम में लगे हैं। कई करोड़ दूसरे देशों में भटक रहे हैं। हे प्रभु! जहाँ कहीं तुम जीवों को (काम में) लगाते हो, वहाँ–वहाँ वे लग जाते हैं। हे नानक! कर्त्ता–प्रभु की सृष्टि रचना (का भेद) कर्त्ता–प्रभु ही जानता है॥ २॥

कई कोटि सिध जती जोगी ॥ कई कोटि राजे रस भोगी ॥ कई कोटि पंखी सरप उपाए ॥ कई कोटि पाथर बिरख निपजाए ॥ कई कोटि पवण पाणी बैसंतर ॥ कई कोटि देस भू मंडल ॥ कई कोटि ससीअर सूर नख्यत्र ॥ कई कोटि देव दानव इंद्र सिरि छत्र ॥ सगल समग्री अपनै सूति धारै ॥ नानक जिसु जिसु भावै तिसु तिसु निसतारै ॥ ३ ॥

इस दुनिया में कई करोड़ सिद्ध, ब्रह्मचारी एवं योगी हैं। कई करोड़ रस भोगने वाले राजा हैं। कई करोड़ पक्षी एवं साँप परमात्मा ने पैदा किए हैं, कई करोड़ पत्थर एवं वृक्ष उगाए गए हैं। कई करोड़ हवाएँ, जल एवं अग्नियां हैं। कई करोड़ देश एवं भूमण्डल हैं। कई करोड़ चन्द्रमा, सूर्य एवं तारे हैं। कई करोड़ देवते, राक्षस एवं इन्द्र हैं, जिनके सिर पर छत्र हैं। ईश्वर ने सारी सृष्टि को अपने (हुक्म के) धागे में पिरोया हुआ है। हे नानक! जो जो परमात्मा को भला लगता है, उसे ही वह भवसागर से पार कर देता है॥ ३॥

कई कोटि राजस तामस सातक ॥ कई कोटि बेद पुरान सिम्रिति अरु सासत ॥ कई कोटि कीए रतन समुद ॥ कई कोटि नाना प्रकार जंत ॥ कई कोटि कीए चिर जीवे ॥ कई कोटि गिरी मेर सुवरन थीवे ॥ कई कोटि जख्य किंनर पिसाच ॥ कई कोटि भूत प्रेत सूकर म्रिगाच ॥ सभ ते नेरै सभहू ते दूरि ॥ नानक आपि अलिपतु रहिआ भरपूरि ॥ ४ ॥

कई करोड़ रजोगुणी, तमोगुणी एवं सतोगुणी जीव हैं। कई करोड़ वेद, पुराण, स्मृतियां एवं शास्त्र हैं। कई करोड़ समुद्रों में रत्न पैदा कर दिए हैं। कई करोड़ विभिन्न प्रकार के जीव-जन्तु हैं। करोड़ों प्राणी लम्बी आयु वाले बनाए गए हैं। (परमात्मा के हुक्म द्वारा) कई करोड़ ही सोने के सुमेर पर्वत बन गए हैं। कई करोड़ यक्ष, किन्नर एवं पिशाच हैं। कई करोड़ ही भूत-प्रेत, सूअर एवं शेर हैं। ईश्वर सबके निकट और सबके ही दूर है। हे नानक! ईश्वर हरेक में परिपूर्ण हो रहा है, जबकि वह स्वयं निर्लिप्त रहता है॥ ४॥

कई कोटि पाताल के वासी ॥ कई कोटि नरक सुरग निवासी ॥ कई कोटि जनमहि जीवहि मरहि ॥ कई कोटि बहु जोनी फिरहि ॥ कई कोटि बैठत ही खाहि ॥ कई कोटि घालहि थकि पाहि ॥ कई कोटि कीए धनवंत ॥ कई कोटि माइआ महि चिंत ॥ जह जह भाणा तह तह राखे ॥ नानक सभु किछु प्रभ कै हाथै ॥ ५ ॥

कई करोड़ जीव पाताल के निवासी हैं। कई करोड़ जीव नरकों तथा स्वर्गों में रहते हैं। कई करोड़ जीव जन्मते, जीते और मरते हैं। कई करोड़ जीव अनेक योनियों में भटक रहे हैं। कई करोड़ (व्यर्थ) बैठकर खाते हैं। करोड़ों ही जीव परिश्रम से थककर टूट जाते हैं। कई करोड़ जीव धनवान बनाए गए हैं। करोड़ों ही जीव धन-दौलत की चिन्ता में लीन हैं। ईश्वर जहाँ कहीं चाहता है, वहाँ ही वह जीवों को रखता है। हे नानक! सब कुछ ईश्वर के अपने हाथ में है॥ ५॥

कई कोटि भए बैरागी ॥ राम नाम संगि तिनि लिव लागी ॥ कई कोटि प्रभ कउ खोजंते ॥ आतम महि पारब्रहमु लहंते ॥ कई कोटि दरसन प्रभ पिआस ॥ तिन कउ मिलिओ प्रभु अबिनास ॥ कई कोटि मागहि सतसंगु॥ पारब्रहम तिन लागा रंगु ॥ जिन कउ होए आपि सुप्रसंन ॥ नानक ते जन सदा धनि धंनि ॥ ६ ॥

इस दुनिया में कई करोड़ जीव वैराग्यवान बने हुए हैं और राम के नाम से उनकी वृत्ति लगी हुई है। करोड़ों ही जीव परमात्मा को खोजते रहते हैं और अपनी आत्मा में ही भगवान को पा लेते हैं।

करोड़ों ही प्राणियों को ईश्वर के दर्शनों की प्यास (अभिलाषा) लगी रहती है, उन्हें अनश्वर प्रभु मिल जाता है। कई करोड़ प्राणी सत्संगति की माँग करते हैं। वे भगवान के प्रेम में ही मग्न रहते हैं। हे नानक! जिन पर ईश्वर स्वयं सुप्रसन्न होता है, ऐसे व्यक्ति हमेशा ही भाग्यवान हैं॥ ६॥

कई कोटि खाणी अरु खंड ॥ कई कोटि अकास ब्रहमंड ॥ कई कोटि होए अवतार ॥ कई जुगति कीनो बिसथार ॥ कई बार पसरिओ पासार ॥ सदा सदा इकु एकंकार ॥ कई कोटि कीने बहु भाति ॥ प्रभ ते होए प्रभ माहि समाति ॥ ता का अंतु न जानै कोइ ॥ आपे आपि नानक प्रभु सोइ ॥ ७ ॥

धरती के नौ खण्डों एवं (चार) दिशाओं में करोड़ों ही प्राणी पैदा हुए हैं। कई करोड़ आकाश एवं ब्रह्माण्ड हैं। करोड़ों ही अवतार हो चुके हैं। कई युक्तियों से ईश्वर ने सृष्टि की रचना की है। इस सृष्टि का कई बार प्रसार हुआ है लेकिन परमात्मा हमेशा से एक ही है। कई करोड़ जीव ईश्वर ने अनेक विधियों के बनाए हैं। परमेश्वर से वे (जीव) उत्पन्न हुए हैं और परमेश्वर में ही समा गए हैं। उसके अन्त को कोई नहीं जानता। हे नानक! वह परमेश्वर सब कुछ आप ही है॥ ७॥

कई कोटि पारब्रहम के दास ॥ तिन होवत आतम परगास ॥ कई कोटि तत के बेते ॥ सदा निहारहि एको नेत्रे ॥ कई कोटि नाम रसु पीवहि ॥ अमर भए सद सद ही जीवहि ॥ कई कोटि नाम गुन गावहि ॥ आतम रसि सुखि सहजि समावहि ॥ अपुने जन कउ सासि सासि समारे ॥ नानक ओइ परमेसुर के पिआरे ॥ ८ ॥ १० ॥

इस दुनिया में कई करोड़ जीव परमात्मा के दास हैं और उनकी आत्मा में प्रकाश हो जाता है। कई करोड़ जीव तत्त्व ज्ञाता हैं, और अपने नेत्रों से वे सदैव एक ईश्वर के दर्शन करते रहते हैं। कई करोड़ जीव नाम–रस पीते रहते हैं, जो अमर होकर हमेशा ही जीते हैं। करोड़ों ही जीव नाम का यशोगान करते रहते हैं। वे आत्म–रस के सुख में सहज ही समा जाते हैं। अपने भक्तों की प्रभु श्वास–श्वास से देखभाल करता है। हे नानक! ऐसे भक्त ही परमेश्वर के प्रिय होते हैं॥ ८॥ १०॥

सलोकु ॥ करण कारण प्रभु एकु है दूसर नाही कोइ ॥ नानक तिसु बलिहारणै जलि थलि महीअलि सोइ ॥ १ ॥

श्लोक॥ एक ईश्वर ही सृष्टि का मूल कारण (सर्जक) है, उसके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं। हे नानक! मैं उस ईश्वर पर कुर्बान जाता हूँ, जो जल, धरती, पाताल एवं आकाश में विद्यमान है॥ १॥

असटपदी ॥ करन करावन करनै जोगु ॥ जो तिसु भावै सोई होगु ॥ खिन महि थापि उथापनहारा ॥ अंतु नही किछु पारावारा ॥ हुकमे धारि अधर रहावै ॥ हुकमे उपजै हुकमि समावै ॥ हुकमे ऊच नीच बिउहार ॥ हुकमे अनिक रंग परकार ॥ करि करि देखै अपनी वडिआई ॥ नानक सभ महि रहिआ समाई ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ हर कार्य करने और जीवों से कराने वाला एक ईश्वर सब कुछ करने में समर्थ है। जो कुछ उसे भला लगता है, वही होता है। वह क्षण भर में इस सृष्टि को उत्पन्न करने एवं नाश भी करने वाला (प्रभु) है। उसकी ताकत का कोई ओर–छोर नहीं। अपने हुक्म द्वारा उसने धरती की स्थापना की है और बिना किसी सहारे के उसने (टिकाया) रखा हुआ है। जो कुछ उसके हुक्म द्वारा उत्पन्न हुआ है, अन्त में उसके हुक्म में लीन हो जाता है। भले तथा बुरे कर्म उसकी इच्छा (रज़ा)

अनुसार हैं। उसके हुक्म द्वारा अनेकों प्रकार के खेल–तमाशे हो रहे हैं। सृष्टि–रचना करके वह अपनी महिमा को देखता रहता है। हे नानक ! ईश्वर समस्त जीवों में समा रहा है॥ १॥

प्रभ भावै मानुख गति पावै ॥ प्रभ भावै ता पाथर तरावै ॥ प्रभ भावै बिनु सास ते राखै ॥ प्रभ भावै ता हरि गुण भाखै ॥ प्रभ भावै ता पतित उधारै ॥ आपि करै आपन बीचारै ॥ दुहा सिरिआ का आपि सुआमी ॥ खेलै बिगसै अंतरजामी ॥ जो भावै सो कार करावै ॥ नानक द्रिसटी अवरु न आवै ॥ २ ॥

यदि प्रभु को भला लगे तो मनुष्य मोक्ष प्राप्त कर लेता है। यदि प्रभु को भला लगे तो पत्थर को भी पार कर देता है। यदि प्रभु को भला लगे तो श्वासों के बिना भी प्राणी को (मृत्यु से) बचाकर रखता है। यदि प्रभु को भला लगे तो मनुष्य ईश्वर की गुणस्तुति करता रहता है। यदि प्रभु को भला लगे तो वह पापियों का भी उद्धार कर देता है। ईश्वर स्वयं ही सब कुछ करता है और स्वयं ही विचार करता है। ईश्वर स्वयं ही लोक–परलोक का स्वामी है। अन्तर्यामी प्रभु जगत्–खेल खेलता रहता है और (इसे देखकर) खुश होता है। जो कुछ प्रभु को लुभाता है, वही काम मनुष्य से करवाता है। हे नानक ! उस जैसा दूसरा कोई नजर नहीं आता॥ २॥

कहु मानुख ते किआ होइ आवै ॥ जो तिसु भावै सोई करावै ॥ इस कै हाथि होइ ता सभु किछु लेइ ॥ जो तिसु भावै सोई करेइ ॥ अनजानत बिखिआ महि रचै ॥ जे जानत आपन आप बचै ॥ भरमे भूला दह दिसि धावै ॥ निमख माहि चारि कुंट फिरि आवै ॥ करि किरपा जिसु अपनी भगति देइ ॥ नानक ते जन नामि मिलेइ ॥ ३ ॥

बताओ, मनुष्य से कौन–सा काम हो सकता है ? जो ईश्वर को भला लगता है, वही (काम) प्राणी से करवाता है। यदि मनुष्य के वश में हो तो वह हरेक पदार्थ सँभाल ले। जो कुछ परमात्मा को उपयुक्त लगता है, वह वही कुछ करता है। ज्ञान न होने के कारण मनुष्य विषय–विकारों में मग्न रहता है। यदि वह जानता हो तो वह अपने आपको (विकारों से) बचा ले। भ्रम में भूला हुआ उसका मन दसों दिशाओं में भटकता रहता है। चारों कोनों में चक्कर काट कर वह एक क्षण में वापिस लौट आता है। जिसे कृपा करके प्रभु अपनी भक्ति प्रदान करता है। हे नानक ! वह पुरुष नाम में लीन हो जाता है॥ ३॥

खिन महि नीच कीट कउ राज ॥ पारब्रहम गरीब निवाज ॥ जा का द्रिसटि कछू न आवै ॥ तिसु ततकाल दह दिस प्रगटावै ॥ जा कउ अपुनी करै बखसीस ॥ ता का लेखा न गनै जगदीस ॥ जीउ पिंडु सभ तिस की रासि ॥ घटि घटि पूरन ब्रहम प्रगास ॥ अपनी बणत आपि बनाई ॥ नानक जीवै देखि बडाई ॥ ४ ॥

क्षण में ही ईश्वर कीड़े समान निम्न (पुरुष) को (राज्य प्रदान करके) राजा बना देता है। भगवान गरीबों पर दया करने वाला है। जिस प्राणी का कोई गुण दिखाई नहीं देता, उसे क्षण भर में तुरन्त ही दसों दिशाओं में लोकप्रिय कर देता है। विश्व का स्वामी जगदीश जिस पर अपनी कृपा–दृष्टि कर देता है, वह उसके कर्मों का लेखा–जोखा नहीं गिनता। यह आत्मा एवं शरीर सब उसकी दी हुई पूँजी है। पूर्ण ब्रह्म का प्रत्येक हृदय में प्रकाश है। यह सृष्टि–रचना उसने स्वयं ही रची है। हे नानक ! मैं उसकी महिमा को देखकर जी रहा हूँ॥ ४॥

इस का बलु नाही इसु हाथ ॥ करन करावन सरब को नाथ ॥ आगिआकारी बपुरा जीउ ॥ जो तिसु भावै सोई फुनि थीउ ॥ कबहू ऊच नीच महि बसै ॥ कबहू सोग हरख रंगि हसै ॥ कबहू निंद चिंद बिउहार ॥ कबहू ऊभ अकास पइआल ॥ कबहू बेता ब्रहम बीचार ॥ नानक आपि मिलावणहार ॥ ५ ॥

सबका मालिक एक परमात्मा ही सबकुछ करने एवं जीव से कराने वाला है, इसलिए इस जीव का बल इसके अपने हाथ में नहीं है। बेचारा जीव तो परमात्मा का आज्ञाकारी है। जो कुछ ईश्वर को भला लगता है, अंतः वही होता है। मनुष्य कभी उच्च जातियों एवं कभी निम्न जातियों में बसता है। कभी वह दुःख में दुखी होता है और कभी खुशी में प्रसन्नता से हंसता है। कभी निन्दा करना ही उसका व्यवसाय होता है। कभी वह आकाश में होता है और कभी पाताल में। कभी वह ब्रह्म विचार का ज्ञाता होता है। हे नानक ! ईश्वर मनुष्य को अपने साथ मिलाने वाला स्वयं ही है॥ ५॥

कबहू निरति करै बहु भाति ॥ कबहू सोइ रहै दिनु राति ॥ कबहू महा क्रोध बिकराल ॥ कबहूं सरब की होत रवाल ॥ कबहू होइ बहै बड राजा ॥ कबहु भेखारी नीच का साजा ॥ कबहू अपकीरति महि आवै ॥ कबहू भला भला कहावै ॥ जिउ प्रभु राखै तिव ही रहै ॥ गुर प्रसादि नानक सचु कहै ॥ ६ ॥

यह जीव कभी अनेक प्रकार के नृत्य कर रहा है। कभी वह दिन—रात सोया रहता है। कभी वह अपने महाक्रोध में भयानक हो जाता है। कभी वह सब की चरण—धूलि बना रहता है। कभी वह महान राजा बन बैठता है। कभी वह नीच भिखारी का वेष धारण कर लेता है। कभी वह अपकीर्ति (बदनामी) में आ जाता है। कभी वह बहुत भला कहलवाता है। जिस तरह प्रभु उसको रखता है, वैसे ही जीव रहता है। गुरु की कृपा से नानक सत्य ही कहता है॥ ६॥

कबहू होइ पंडितु करे बख्यानु ॥ कबहू मोनिधारी लावै धिआनु ॥ कबहू तट तीरथ इसनान ॥ कबहू सिध साधिक मुखि गिआन ॥ कबहू कीट हसति पतंग होइ जीआ ॥ अनिक जोनि भरमै भरमीआ ॥ नाना रूप जिउ स्वागी दिखावै ॥ जिउ प्रभ भावै तिवै नचावै ॥ जो तिसु भावै सोई होइ ॥ नानक दूजा अवरु न कोइ ॥ ७ ॥

कभी मनुष्य पण्डित बनकर उपदेश देता है। कभी वह मौनधारी साधु बनकर ध्यान लगाए बैठा है। कभी वह तीर्थों के किनारे जाकर स्नान करता है। कभी वह सिद्ध, साधक बनकर मुख से ज्ञान करता है। कभी मनुष्य कीड़ा, हाथी अथवा पतंगा बना रहता है और अनेक योनियों में लगातार भटकता रहता है। बहुरूपिए की भाँति वह अत्याधिक रूप धारण करता हुआ भी दिखाई देता है। जिस तरह प्रभु को उपयुक्त लगता है, वैसे ही नचाता है जैसे उसको अच्छा लगता है, वही होता है। हे नानक ! उसके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं॥ ७॥

कबहू साधसंगति इहु पावै ॥ उसु असथान ते बहुरि न आवै ॥ अंतरि होइ गिआन परगासु ॥ उसु असथान का नही बिनासु ॥ मन तन नामि रते इक रंगि ॥ सदा बसहि पारब्रहम कै संगि ॥ जिउ जल महि जलु आइ खटाना ॥ तिउ जोती संगि जोति समाना ॥ मिटि गए गवन पाए बिस्राम ॥ नानक प्रभ कै सद कुरबान ॥ ८ ॥ ११ ॥

यह जीव कभी सत्संगति को पाता है तो उस (पवित्र) स्थान से दोबारा वह लौटकर नहीं आता। उसके हृदय में ज्ञान का प्रकाश होता है। उस निवास का कभी विनाश नहीं होता। जिसका मन एवं तन ईश्वर के नाम एवं प्रेम में मग्न रहता हैं। वह हमेशा ही परमात्मा के संग बसता है। जैसे जल आकर जल में ही मिल जाता है, वैसे ही उसकी ज्योति परम ज्योति में लीन हो जाती है। उसका आवागमन (जन्म—मरण) मिट जाता है और वह सुख पा लेता है। हे नानक ! ऐसे प्रभु पर मैं सदैव कुर्बान जाता हूँ॥ ८॥ ११॥

सलोकु ॥ सुखी बसै मसकीनीआ आपु निवारि तले ॥ बडे बडे अहंकारीआ नानक गरबि गले ॥ १ ॥

श्लोक॥ विनम्र स्वभाव वाला पुरुष सुख में रहता है। वह अपने अहंकार को त्याग कर विनीत हो जाता है। (परन्तु) हे नानक! बड़े–बड़े अहंकारी इन्सान अपने अहंकार में ही नाश हो जाते हैं॥ १॥

असटपदी ॥ जिस कै अंतरि राज अभिमानु ॥ सो नरकपाती होवत सुआनु ॥ जो जानै मै जोबनवंतु ॥ सो होवत बिसटा का जंतु ॥ आपस कउ करमवंतु कहावै ॥ जनमि मरै बहु जोनि भ्रमावै ॥ धन भूमि का जो करै गुमानु ॥ सो मूरखु अंधा अगिआनु ॥ करि किरपा जिस कै हिरदै गरीबी बसावै ॥ नानक ईहा मुकतु आगै सुखु पावै ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ जिस व्यक्ति के हृदय में शासन का अभिमान होता है, ऐसा व्यक्ति नरक में पड़ने वाला कुत्ता होता है। जो पुरुष अहंकार में अपने आपको अति सुन्दर (यौवन सम्पन्न) समझता है, वह विष्टा का कीड़ा होता है। जो व्यक्ति स्वयं को शुभकर्मों वाला कहलाता है, वह जन्म–मरण के चक्र में फँसकर अधिकतर योनियों में भटकता रहता है। जो प्राणी अपने धन एवं भूमि का घमण्ड करता है, वह मूर्ख, अन्धा एवं अज्ञानी है। जिस इन्सान के हृदय में प्रभु कृपा करके विनम्रता बसा देता है, हे नानक! ऐसा इन्सान इहलोक में मोक्ष तथा परलोक में सुख प्राप्त करता है॥ १॥

धनवंता होइ करि गरबावै ॥ त्रिण समानि कछु संगि न जावै ॥ बहु लसकर मानुख ऊपरि करे आस ॥ पल भीतरि ता का होइ बिनास ॥ सभ ते आप जानै बलवंतु ॥ खिन महि होइ जाइ भसमंतु ॥ किसै न बदै आपि अहंकारी ॥ धरम राइ तिसु करे खुआरी ॥ गुर प्रसादि जा का मिटै अभिमानु ॥ सो जनु नानक दरगह परवानु ॥ २ ॥

जो आदमी धनवान होकर अपने धन का अभिमान करता है, एक तिनके के बराबर भी कुछ उसके साथ नहीं जाता। जो आदमी बहुत बड़ी सेना एवं लोगों पर आशा लगाए रखता है, उसका एक क्षण में ही नाश हो जाता है। जो आदमी अपने आपको सबसे शक्तिशाली समझता है, वह एक क्षण में भस्म हो जाता है। जो आदमी अपने अहंकार में किसी की भी परवाह नहीं करता, यमराज अन्त में उसे बड़ा दुःख देता है। हे नानक! गुरु की कृपा से जिस इन्सान का अभिमान मिट जाता है, ऐसा इन्सान ही प्रभु के दरबार में स्वीकार होता है॥ २॥

कोटि करम करै हउ धारे ॥ स्रमु पावै सगले बिरथारे ॥ अनिक तपसिआ करे अहंकार ॥ नरक सुरग फिरि फिरि अवतार ॥ अनिक जतन करि आतम नही द्रवै ॥ हरि दरगह कहु कैसे गवै ॥ आपस कउ जो भला कहावै ॥ तिसहि भलाई निकटि न आवै ॥ सरब की रेन जा का मनु होइ ॥ कहु नानक ता की निरमल सोइ ॥ ३ ॥

यदि व्यक्ति करोड़ों शुभ कर्म करता हुआ अभिमान करे, तो वह दुःख ही उठाता है। उसके तमाम कार्य व्यर्थ हो जाते हैं। जो व्यक्ति अनेक तपस्या करके अहंकार करता है, वह पुनः पुनः नरक–स्वर्ग में जन्म लेता रहता है। जिसका हृदय अधिकतर यत्न करने के बावजूद भी विनम्र नहीं होता, तो बताओ, वह पुरुष भगवान के दरबार में कैसे जा सकता है? जो पुरुष अपने आपको भला कहलाता है, भलाई उसके निकट नहीं आती। हे नानक! जिसका मन सबकी चरण–धूलि बन जाता है, उसकी निर्मल शोभा होती है॥ ३॥

जब लगु जानै मुझ ते कछु होइ ॥ तब इस कउ सुखु नाही कोइ ॥ जब इह जानै मै किछु करता ॥ तब लगु गरभ जोनि महि फिरता ॥ जब धारै कोऊ बैरी मीतु ॥ तब लगु निहचलु नाही चीतु ॥ जब लगु मोह मगन संगि माइ ॥ तब लगु धरम राइ देइ सजाइ ॥ प्रभ किरपा ते बंधन तूटै ॥ गुर प्रसादि नानक हउ छूटै ॥ ४ ॥

जब तक इन्सान यह समझने लगता है कि मुझे से कुछ हो सकता है, तब तक उसको कोई सुख उपलब्ध नहीं होता। जब तक इन्सान यह समझने लगता है कि मैं कुछ करता हूँ, तब तक वह गर्भ की योनियों में भटकता रहता है। जब तक इन्सान किसी को शत्रु एवं किसी को मित्र समझता है, तब तक उसका मन स्थिर नहीं होता। जब तक इन्सान माया के मोह में मग्न रहता है, तब तक यमराज उसको दण्डित करता रहता है। प्रभु की कृपा से इन्सान के बन्धन टूट जाते हैं। हे नानक! गुरु की कृपा से अहंकार मिट जाता है॥ ४॥

सहस खटे लख कउ उठि धावै ॥ त्रिपति न आवै माइआ पाछै पावै ॥ अनिक भोग बिखिआ के करै ॥ नह त्रिपतावै खपि खपि मरै ॥ बिना संतोख नही कोऊ राजै ॥ सुपन मनोरथ ब्रिथे सभ काजै ॥ नाम रंगि सरब सुखु होइ ॥ बडभागी किसै परापति होइ ॥ करन करावन आपे आपि ॥ सदा सदा नानक हरि जापि ॥ ५ ॥

इन्सान हजारों कमा कर भी लाखों के लिए भाग—दौड़ करता है। धन—दौलत की तलाश में उसकी तृप्ति नहीं होती। इन्सान अधिकतर विषय—विकारों के भोग में लगा रहता है, परन्तु वह तृप्त नहीं होता और उसकी अभिलाषा करता हुआ मर मिटता है। संतोष के बिना किसी को तृप्ति नहीं होती। उसके सब कार्य स्वप्न के मनोरथ की भाँति व्यर्थ हैं। भगवान के नाम रंग द्वारा सर्व सुख प्राप्त हो जाते हैं। किसी भाग्यशाली इन्सान को ही नाम की प्राप्ति होती है। प्रभु स्वयं सब कुछ करने तथा जीवों से कराने में समर्थ है। हे नानक! हरि के नाम का जाप सदैव करो॥ ५॥

करन करावन करनैहारु ॥ इस कै हाथि कहा बीचारु ॥ जैसी द्रिसटि करे तैसा होइ ॥ आपे आपि आपि प्रभु सोइ ॥ जो किछु कीनो सु अपनै रंगि ॥ सभ ते दूरि सभहू कै संगि ॥ बूझै देखै करै बिबेक ॥ आपहि एक आपहि अनेक ॥ मरै न बिनसै आवै न जाइ ॥ नानक सद ही रहिआ समाइ ॥ ६ ॥

केवल परमात्मा ही करने एवं कराने वाला है। विचार कर देख लो, प्राणी के वश में कुछ नहीं। जैसी दृष्टि परमात्मा धारण करता है, मनुष्य वैसा ही हो जाता है। वह प्रभु स्वयं ही सब कुछ है। जो कुछ उसने किया है, वह उसकी इच्छा के अनुकूल है। वह सबसे दूर है, फिर भी सबके साथ है। वह समझता, देखता और निर्णय करता है। परमात्मा स्वयं ही एक है और स्वयं ही अनेक रूप है। परमात्मा न ही मरता है और न ही नाश होता है। वह न ही आता है और न ही जाता है। हे नानक! परमात्मा सदा सब में समाया हुआ है॥ ६॥

आपि उपदेसै समझै आपि ॥ आपे रचिआ सभ कै साथि ॥ आपि कीनो आपन बिसथारु ॥ सभु कछु उस का ओहु करनैहारु ॥ उस ते भिंन कहहु किछु होइ ॥ थान थनंतरि एकै सोइ ॥ अपुने चलित आपि करणैहार ॥ कउतक करै रंग आपार ॥ मन महि आपि मन अपुने माहि ॥ नानक कीमति कहनु न जाइ ॥ ७ ॥

वह स्वयं ही उपदेश देता है और स्वयं ही समझता है। परमात्मा स्वयं ही सबके साथ मिला हुआ है। अपना विस्तार उसने स्वयं ही किया है। प्रत्येक वस्तु उसकी है, वह सृजनहार है। बताओ, उससे अलग कुछ हो सकता है ? एक ईश्वर स्थानों एवं उनकी सीमाओं पर सर्वत्र मौजूद है। अपनी लीलाओं को वह स्वयं ही करने वाला है। वह कौतुक रचता है और उसके रंग अनन्त हैं। (जीवों के) मन में स्वयं वास कर रहा है, (जीवों को) अपने मन में स्थिर किए बैठा है। हे नानक ! उस (परमात्मा) का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता॥ ७॥

सति सति सति प्रभु सुआमी ॥ गुर परसादि किनै वखिआनी ॥ सचु सचु सचु सभु कीना ॥ कोटि मधे किनै बिरलै चीना ॥ भला भला भला तेरा रूप ॥ अति सुंदर अपार अनूप ॥ निरमल निरमल निरमल तेरी बाणी ॥ घटि घटि सुनी स्रवन बख्याणी ॥ पवित्र पवित्र पवित्र पुनीत ॥ नामु जपै नानक मनि प्रीति ॥ ८ ॥ १२ ॥

जगत् का स्वामी परमात्मा सदैव सत्य है। यह बात गुरु की कृपा से किसी विरले ने ही बखान की है। परमात्मा जिसने सबकी रचना की है, वह भी सत्य है। करोड़ों में कोई विरला ही उसको जानता है। हे प्रभु ! तेरा रूप कितना भला—सुन्दर है। हे ईश्वर ! तुम अत्यंत सुन्दर, अपार एवं अनूप हो। हे परमात्मा ! तेरी वाणी अति पवित्र, निर्मल एवं मधुर है। प्रत्येक व्यक्ति इसको कानों से सुनता एवं व्याख्या करता है। हे नानक ! जो व्यक्ति अपने मन में प्रेम से भगवान के नाम का जाप करता है। वह पवित्र पावन हो जाता है॥ ८॥ १२॥

सलोकु ॥ संत सरनि जो जनु परै सो जनु उधरनहार ॥ संत की निंदा नानका बहुरि बहुरि अवतार ॥ १ ॥

श्लोक॥ जो व्यक्ति संतों की शरण में आता है, उस व्यक्ति का उद्धार हो जाता है। हे नानक ! संतों की निन्दा करने से प्राणी पुनः पुनः जन्म लेता रहता है॥ १॥

असटपदी ॥ संत कै दूखनि आरजा घटै ॥ संत कै दूखनि जम ते नही छुटै ॥ संत कै दूखनि सुखु सभु जाइ ॥ संत कै दूखनि नरक महि पाइ ॥ संत कै दूखनि मति होइ मलीन ॥ संत कै दूखनि सोभा ते हीन ॥ संत के हते कउ रखै न कोइ ॥ संत कै दूखनि थान भ्रसटु होइ ॥ संत क्रिपाल क्रिपा जे करै ॥ नानक संतसंगि निंदकु भी तरै ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ संत को दुखी करने से मनुष्य की आयु कम हो जाती है। संत को दुःखी करने से मनुष्य यमदूतों से नहीं बच सकता। संत को दुखी करने से मनुष्य के समस्त सुख नाश हो जाते हैं। संत को दुखी करने से मनुष्य नरक में जाता है। संत को दुखी करने से बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। संत को दुखी करने से मनुष्य की शोभा समाप्त हो जाती है। संत से तिरस्कृत पुरुष की कोई भी रक्षा नहीं कर सकता। संत को दुखी करने से स्थान भ्रष्ट हो जाता है। हे नानक ! यदि कृपा के घर संत स्वयं कृपा करे तो सत्संगति में निंदक भी (भवसागर से) पार हो जाता है॥ १॥

संत के दूखन ते मुखु भवै ॥ संतन कै दूखनि काग जिउ लवै ॥ संतन कै दूखनि सरप जोनि पाइ ॥ संत कै दूखनि त्रिगद जोनि किरमाइ ॥ संतन कै दूखनि त्रिसना महि जलै ॥ संत कै दूखनि सभु को छलै ॥ संत कै दूखनि तेजु सभु जाइ ॥ संत कै दूखनि नीचु नीचाइ ॥ संत दोखी का थाउ को नाहि ॥ नानक संत भावै ता ओइ भी गति पाहि ॥ २ ॥

संत को दुखी करने से मुख भ्रष्ट हो जाता है। संत को दुखी करने वाला पुरुष कौए के समान निन्दा करता रहता है। संत को दुखी करने से मनुष्य सर्पयोनि में पड़ता है। संत को दुखी करने वाला मनुष्य कीड़े इत्यादि की त्रिगद योनि में भटकता है। संत को दुखी करने वाला मनुष्य तृष्णा की अग्नि में जलता रहता है। संत को दुखी करने वाला सबके साथ छल–कपट करता रहता है। संत को दुखी करने से मनुष्य का सारा तेज–प्रताप नाश हो जाता है। संत को दुखी करने से मनुष्य नीचों का महानीच हो जाता है। संत के दोषी का कोई सुख का सहारा नहीं रहता। हे नानक ! यदि संत को भला लगे तो निंदक भी मोक्ष प्राप्त कर लेता है॥ २॥

संत का निंदकु महा अतताई ॥ संत का निंदकु खिनु टिकनु न पाई ॥ संत का निंदकु महा हतिआरा ॥ संत का निंदकु परमेसुरि मारा ॥ संत का निंदकु राज ते हीनु ॥ संत का निंदकु दुखीआ अरु दीनु ॥ संत के निंदक कउ सरब रोग ॥ संत के निंदक कउ सदा बिजोग ॥ संत की निंदा दोख महि दोखु ॥ नानक संत भावै ता उस का भी होइ मोखु ॥ ३ ॥

संत की निन्दा करने वाला सबसे बुरे कर्म करने वाला महानीच है। संत की निन्दा करने वाले को क्षण भर भी सुख नहीं मिलता। संत की निन्दा करने वाला महा हत्यारा है। संत की निन्दा करने वाला परमेश्वर की ओर से तिरस्कृत होता है। संत की निन्दा करने वाला शासन से रिक्त रहता है। संत की निन्दा करने वाला दुखी तथा निर्धन हो जाता है। संत की निन्दा करने वाले को सर्व रोग लग जाते हैं। संत की निन्दा करने वाला सदा वियोग में रहता है। संत की निंदा दोषों का भी दोष महापाप है। हे नानक ! यदि संत को भला लगे तो उसकी भी मुक्ति हो जाती है॥ ३॥

संत का दोखी सदा अपवितु ॥ संत का दोखी किसै का नही मितु ॥ संत के दोखी कउ डानु लागै ॥ संत के दोखी कउ सभ तिआगै ॥ संत का दोखी महा अहंकारी ॥ संत का दोखी सदा बिकारी ॥ संत का दोखी जनमै मरै ॥ संत की दूखना सुख ते टरै ॥ संत के दोखी कउ नाही ठाउ ॥ नानक संत भावै ता लए मिलाइ ॥ ४ ॥

संत का दोषी सदैव अपवित्र है। संत का दोषी किसी भी मनुष्य का मित्र नहीं होता। संत के दोषी को (धर्मराज से) दण्ड मिलता है। संत के दोषी को सभी त्याग देते हैं। संत का दोषी महा अहंकारी होता है। संत का दोषी सदैव पापी होता है। संत का दोषी जन्मता–मरता रहता है। संत का निन्दक सुख से खाली हो जाता है। संत के दोषी को कोई रहने का स्थान नहीं मिलता। हे नानक ! यदि संत को लुभाए तो वह उसको अपने साथ मिला लेता है॥ ४॥

संत का दोखी अध बीच ते टूटै ॥ संत का दोखी कितै काजि न पहूचै ॥ संत के दोखी कउ उदिआन भ्रमाईऐ ॥ संत का दोखी उझड़ि पाईऐ ॥ संत का दोखी अंतर ते थोथा ॥ जिउ सास बिना मिरतक की लोथा ॥ संत के दोखी की जड़ किछु नाहि ॥ आपन बीजि आपे ही खाहि ॥ संत के दोखी कउ अवरु न राखनहारु ॥ नानक संत भावै ता लए उबारि ॥ ५ ॥

संत का दोषी बीच में टूट जाता है। संत का दोषी किसी काम में सफ़ल नहीं होता। संत का दोषी भयानक जंगलों में भटकता रहता है। संत का दोषी कुमार्ग में डाल दिया जाता है। संत का दोषी वैसे ही भीतर से खाली होता है, जैसे मृतक व्यक्ति का शव श्वास के बिना होता है। संत के दोषी की जड़ बिल्कुल ही नहीं होती। जो कुछ उसने बोया है, वह स्वयं ही खाता है। संत के दोषी का कोई भी रक्षक नहीं हो सकता। हे नानक ! यदि संत को भला लगे तो वह उसको बचा लेता है॥ ५॥

संत का दोखी इउ बिललाइ ॥ जिउ जल बिहून मछुली तड़फड़ाइ ॥ संत का दोखी भूखा नही राजै ॥ जिउ पावकु ईधनि नही ध्रापै ॥ संत का दोखी छुटै इकेला ॥ जिउ बूआड़ु तिलु खेत माहि दुहेला ॥ संत का दोखी धरम ते रहत ॥ संत का दोखी सद मिथिआ कहत ॥ किरतु निंदक का धुरि ही पइआ ॥ नानक जो तिसु भावै सोई थिआ ॥ ६ ॥

संत का दोषी यूं विलाप करता है, जैसे जल के बिना मछली दुःख में तड़पती है। संत का दोषी हमेशा भूखा ही रहता है और तृप्त नहीं होता, जैसे अग्नि ईंधन से तृप्त नहीं होती। संत का दोषी वैसे ही अकेला पड़ा रहता है, जैसे भीतर से जला हुआ तिल का पौधा खेत में व्यर्थ पड़ा रहता है। संत का दोषी धर्म से भ्रष्ट होता है। संत का दोषी सदा झूठ बोलता रहता है। निन्दक का भाग्य आदि से ही ऐसा लिखा हुआ है। हे नानक ! जो कुछ प्रभु को भला लगता है, वही होता है॥ ६॥

संत का दोखी बिगड़ रूपु होइ जाइ ॥ संत के दोखी कउ दरगह मिलै सजाइ ॥ संत का दोखी सदा सहकाईऐ ॥ संत का दोखी न मरै न जीवाईऐ ॥ संत के दोखी की पुजै न आसा ॥ संत का दोखी उठि चलै निरासा ॥ संत कै दोखि न त्रिसटै कोइ ॥ जैसा भावै तैसा कोई होइ ॥ पइआ किरतु न मेटै कोइ ॥ नानक जानै सचा सोइ ॥ ७ ॥

संत का दोषी बदसूरत रूप वाला हो जाता है। संत पर दोष लगाने वाला ईश्वर के दरबार में दण्ड प्राप्त करता है। संत का दोषी सदा मृत्यु—निकट होता है। संत का दोषी जीवन एवं मृत्यु के बीच लटकता है। संत के दोषी की आशा पूर्ण नहीं होती। संत का दोषी निराश चला जाता है। संत को दोषी को स्थिरता प्राप्त नहीं होती। जैसे ईश्वर की इच्छा होती है, वैसा ही मनुष्य हो जाता है। कोई भी व्यक्ति पूर्व जन्म के कर्मों को मिटा नहीं सकता। हे नानक ! वह सच्चा प्रभु सब कुछ जानता है॥ ७॥

सभ घट तिस के ओहु करनैहारु ॥ सदा सदा तिस कउ नमसकारु ॥ प्रभ की उसतति करहु दिनु राति ॥ तिसहि धिआवहु सासि गिरासि ॥ सभु कछु वरतै तिस का कीआ ॥ जैसा करे तैसा को थीआ ॥ अपना खेलु आपि करनैहारु ॥ दूसर कउनु कहै बीचारु ॥ जिस नो क्रिपा करै तिसु आपन नामु देइ ॥ बडभागी नानक जन सेइ ॥ ८ ॥ १३ ॥

समस्त जीव—जन्तु उस परमात्मा के हैं। उसको हमेशा प्रणाम करते रहो। भगवान का गुणानुवाद दिन—रात करते रहो। अपने प्रत्येक श्वास एवं ग्रास से उसका ही ध्यान करते रहो। सब कुछ उस (परमात्मा) का किया ही होता है। ईश्वर जैसे मनुष्य को बनाता है, वैसा ही वह बन जाता है। अपनी खेल का वह स्वयं ही निर्माता है। दूसरा कौन उसका विचार कर सकता है। परमात्मा जिस पर अपनी कृपा करता है, उसे ही अपना नाम दे देता है। हे नानक ! ऐसा व्यक्ति बड़ा भाग्यशाली है॥ ८॥ १३॥

सलोकु ॥ तजहु सिआनप सुरि जनहु सिमरहु हरि हरि राइ ॥ एक आस हरि मनि रखहु नानक दूखु भरमु भउ जाइ ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे भद्रपुरुषो ! अपनी चतुराई त्याग कर हरि—परमेश्वर का सिमरन करो। अपने मन में भगवान की आशा रखो। हे नानक ! इस तरह दुख, भ्रम एवं भय दूर हो जाएँगे॥ १॥

असटपदी ॥ मानुख की टेक ब्रिथी सभ जानु ॥ देवन कउ एकै भगवानु ॥ जिस कै दीऐ रहै अघाइ ॥ बहुरि न त्रिसना लागै आइ ॥ मारै राखै एको आपि ॥ मानुख कै किछु नाही हाथि ॥ तिस का हुकमु बूझि सुखु होइ ॥ तिस का नामु रखु कंठि परोइ ॥ सिमरि सिमरि सिमरि प्रभु सोइ ॥ नानक बिघनु न लागै कोइ ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ (हे प्राणी!) किसी मनुष्य पर भरोसा रखना सब व्यर्थ है। एक भगवान ही सब को देने वाला है। जिसके देने से ही तृप्ति होती है और फिर तृष्णा आकर नहीं लगती। एक ईश्वर स्वयं ही मारता है और रक्षा करता है। मनुष्य के वश में कुछ भी नहीं है। उसका हुक्म समझने से सुख उपलब्ध होता है। उसके नाम को पिरोकर अपने कण्ठ में डालकर रखो। हे नानक! उस प्रभु को हमेशा स्मरण करते रहो, कोई विघ्न नहीं आएगा॥ १॥

उसतति मन महि करि निरंकार ॥ करि मन मेरे सति बिउहार ॥ निरमल रसना अंम्रितु पीउ ॥ सदा सुहेला करि लेहि जीउ ॥ नैनहु पेखु ठाकुर का रंगु ॥ साधसंगि बिनसै सभ संगु ॥ चरन चलउ मारगि गोबिंद ॥ मिटहि पाप जपीऐ हरि बिंद ॥ कर हरि करम स्रवनि हरि कथा ॥ हरि दरगह नानक ऊजल मथा ॥ २ ॥

अपने मन में परमात्मा की महिमा—स्तुति करो। हे मेरे मन! सत्य का कार्य—व्यवहार कर। नाम का अमृत पान करने से तेरी जिह्वा पवित्र हो जाएगी और तू अपनी आत्मा को हमेशा के लिए सुखदायक बना लेगा। अपने नेत्रों से ईश्वर का कौतुक देख। सत्संगति में मिलने से दूसरे तमाम मेल—मिलाप लुप्त हो जाते हैं। अपने चरणों से गोबिन्द के मार्ग पर चलो। एक क्षण भर के लिए भी हरि का जाप करने से पाप मिट जाते हैं। प्रभु की सेवा करो और कानों से हरि कथा सुनो। हे नानक! (इस प्रकार) प्रभु के दरबार में तेरा मस्तक उज्ज्वल हो जाएगा॥ २॥

बडभागी ते जन जग माहि ॥ सदा सदा हरि के गुन गाहि ॥ राम नाम जो करहि बीचार ॥ से धनवंत गनी संसार ॥ मनि तनि मुखि बोलहि हरि मुखी ॥ सदा सदा जानहु ते सुखी ॥ एको एकु एकु पछानै ॥ इत उत की ओहु सोझी जानै ॥ नाम संगि जिस का मनु मानिआ ॥ नानक तिनहि निरंजनु जानिआ ॥ ३ ॥

दुनिया में वही व्यक्ति भाग्यशाली हैं, जो हमेशा भगवान की महिमा गाते रहते हैं। जो व्यक्ति राम के नाम का चिन्तन करते रहते हैं, वही व्यक्ति जगत् में धनवान गिने जाते हैं। जो व्यक्ति अपने मन, तन एवं मुख से परमेश्वर के नाम का उच्चारण करते हैं, समझ लीजिए कि वे हमेशा सुखी हैं। जो पुरुष केवल एक प्रभु को ही पहचानता है, उसे इहलोक एवं परलोक का ज्ञान हो जाता है। हे नानक! जिसका मन ईश्वर के नाम में मिल जाता है, वह प्रभु को पहचान लेता है॥ ३॥

गुर प्रसादि आपन आपु सुझै ॥ तिस की जानहु त्रिसना बुझै ॥ साधसंगि हरि हरि जसु कहत ॥ सरब रोग ते ओहु हरि जनु रहत ॥ अनदिनु कीरतनु केवल बख्यानु ॥ ग्रिहसत महि सोई निरबानु ॥ एक ऊपरि जिसु जन की आसा ॥ तिस की कटीऐ जम की फासा ॥ पारब्रहम की जिसु मनि भूख ॥ नानक तिसहि न लागहि दूख ॥ ४ ॥

गुरु की कृपा से जो व्यक्ति अपने आपको समझ लेता है, जान लीजिए कि उसकी तृष्णा मिट गई है। जो व्यक्ति संतों की संगति में हरि—परमेश्वर का यश करता रहता है, वह प्रभु भक्त तमाम रोगों से मुक्ति प्राप्त कर लेता है। जो व्यक्ति रात—दिन केवल ईश्वर का भजन ही बखान करता है, वह अपने गृहस्थ में ही निर्लिप्त रहता है। जिस मनुष्य ने एक ईश्वर पर आशा रखी है, उसके लिए मृत्यु का फँदा कट जाता है। जिसके मन में पारब्रह्म की भूख है, हे नानक! उसको कोई दुख नहीं लगता॥ ४॥

जिस कउ हरि प्रभु मनि चिति आवै ॥ सो संतु सुहेला नही डुलावै ॥ जिसु प्रभु अपुना किरपा करै ॥ सो सेवकु कहु किस ते डरै ॥ जैसा सा तैसा द्रिसटाइआ ॥ अपुने कारज महि आपि समाइआ ॥ सोधत सोधत सोधत सीझिआ ॥ गुर प्रसादि ततु सभु बूझिआ ॥ जब देखउ तब सभु किछु मूलु ॥ नानक सो सूखमु सोई असथूलु ॥ ५ ॥

जिसको हरि-प्रभु मन में याद आता है, वह संत सुखी है और उसका मन कभी नहीं डगमगाता। जिस पर ईश्वर अपनी कृपा धारण करता है, कहो वह सेवक किससे डर सकता है ? जैसा ईश्वर है, वैसा ही उसको दिखाई देता है। अपनी रचना में प्रभु स्वयं ही समाया हुआ है। अनेक बार विचार करके विचार लिया है। गुरु की कृपा से समस्त वास्तविकता को समझ लिया है। जब मैं देखता हूँ तो सबकुछ परमात्मा ही है। हे नानक ! वह स्वयं ही सूक्ष्म और स्वयं ही अस्थूल है।। ५।।

नह किछु जनमै नह किछु मरै ॥ आपन चलितु आप ही करै ॥ आवनु जावनु द्रिसटि अनद्रिसटि ॥ आगिआकारी धारी सभ स्रिसटि ॥ आपे आपि सगल महि आपि ॥ अनिक जुगति रचि थापि उथापि ॥ अबिनासी नाही किछु खंड ॥ धारण धारि रहिओ ब्रहमंड ॥ अलख अभेव पुरख परताप ॥ आपि जपाए त नानक जाप ॥ ६ ॥

न कुछ जन्मता है, न कुछ मरता है। भगवान अपनी लीला स्वयं ही करता है। जन्म-मरण, गोचर एवं अगोचर-यह समूचा जगत् उसने अपने आज्ञाकारी बनाए हुए हैं। सब कुछ वह अपने आप से ही है। वह स्वयं ही सब (जीव-जन्तुओं) में विद्यमान है। अनेक युक्तियों द्वारा वह सृष्टि की रचना करता एवं उसका नाश भी करता है। लेकिन अनश्वर परमात्मा का कुछ भी नाश नहीं होता। वह ब्रह्माण्ड को सहारा दे रहा है। प्रभु का तेज-प्रताप अलक्ष्य एवं भेद रहित है। हे नानक ! यदि वह अपना जाप मनुष्य से स्वयं करवाए तो ही वह जाप करता है।। ६।।

जिन प्रभु जाता सु सोभावंत ॥ सगल संसारु उधरै तिन मंत ॥ प्रभ के सेवक सगल उधारन ॥ प्रभ के सेवक दूख बिसारन ॥ आपे मेलि लए किरपाल ॥ गुर का सबदु जपि भए निहाल ॥ उन की सेवा सोई लागै ॥ जिस नो क्रिपा करहि बडभागै ॥ नामु जपत पावहि बिस्रामु ॥ नानक तिन पुरख कउ ऊतम करि मानु ॥ ७ ॥

जो प्रभु को जानते हैं, वे शोभायमान हैं। समूचा जगत् उनके मन्त्र (उपदेश) द्वारा बच जाता है। प्रभु के सेवक सबका कल्याण कर देते हैं। प्रभु के सेवकों की संगति द्वारा दुःख भूल जाता है। कृपालु प्रभु उनको अपने साथ मिला लेता है। गुरु के शब्द का जाप करने से वह कृतार्थ हो जाते हैं। केवल वही सौभाग्यशाली उनकी सेवा में लगता है, जिस पर प्रभु कृपा धारण करता है। जो प्रभु के नाम का जाप करते हैं, वे सुख पाते हैं। हे नानक ! उन पुरुषों को महान समझो।। ७।।

जो किछु करै सु प्रभ कै रंगि ॥ सदा सदा बसै हरि संगि ॥ सहज सुभाइ होवै सो होइ ॥ करणैहारु पछाणै सोइ ॥ प्रभ का कीआ जन मीठ लगाना ॥ जैसा सा तैसा द्रिसटाना ॥ जिस ते उपजे तिसु माहि समाए ॥ ओइ सुख निधान उनहू बनि आए ॥ आपस कउ आपि दीनो मानु ॥ नानक प्रभ जनु एको जानु ॥ ८ ॥ १४ ॥

वह जो कुछ करता है, प्रभु की रज़ा में करता है। वह हमेशा के लिए प्रभु के साथ बसता है। जो कुछ होता है, वह सहज स्वभाव ही होता है। वह उस सृजनहार प्रभु को ही पहचानता है। प्रभु का

किया उसके सेवकों को मीठा लगता है। जैसा प्रभु है, वैसा ही उसको दिखाई देता है। वह उसमें लीन हो जाता है, जिससे वह उत्पन्न हुआ था। वह सुखों का भण्डार है। यह प्रतिष्ठा केवल उसको ही शोभा देती है। अपने सेवक को प्रभु ने स्वयं ही शोभा प्रदान की है। हे नानक! समझो कि प्रभु एवं उसका सेवक एक समान ही हैं॥ ८॥ १४॥

सलोकु ॥ सरब कला भरपूर प्रभ बिरथा जाननहार ॥ जा कै सिमरनि उधरीऐ नानक तिसु बलिहार ॥ १ ॥

श्लोक॥ प्रभु सर्वकला सम्पूर्ण है और हमारे दुःखों को जानने वाला है। हे नानक! जिसका सिमरन करने से मनुष्य का उद्धार हो जाता है, मैं उस पर कुर्बान जाता हूँ॥ १॥

असटपदी ॥ टूटी गाढनहार गोपाल ॥ सरब जीआ आपे प्रतिपाल ॥ सगल की चिंता जिसु मन माहि ॥ तिस ते बिरथा कोई नाहि ॥ रे मन मेरे सदा हरि जापि ॥ अबिनासी प्रभु आपे आपि ॥ आपन कीआ कछू न होइ ॥ जे सउ प्रानी लोचै कोइ ॥ तिसु बिनु नाही तेरै किछु काम ॥ गति नानक जपि एक हरि नाम ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ जगत्पालक गोपाल टूटों को जोड़ने वाला है। वह स्वयं ही समस्त प्राणियों का पालन–पोषण करता है। जिसके मन में सब की चिन्ता है, उससे कोई भी खाली हाथ नहीं लौटता। हे मेरे मन! सदा ही परमात्मा का जाप कर। अनश्वर प्रभु सब कुछ स्वयं ही है। प्राणी के अपने करने से कुछ नहीं हो सकता, चाहे वह सैंकड़ों बार इसकी इच्छा करे। उसके अतिरिक्त कुछ भी तेरे काम का नहीं। हे नानक! एक ईश्वर के नाम का जाप करने से मोक्ष की प्राप्ति होती है॥ १॥

रूपवंतु होइ नाही मोहै ॥ प्रभ की जोति सगल घट सोहै ॥ धनवंता होइ किआ को गरबै ॥ जा सभु किछु तिस का दीआ दरबै ॥ अति सूरा जे कोऊ कहावै ॥ प्रभ की कला बिना कह धावै ॥ जे को होइ बहै दातारु ॥ तिसु देनहारु जानै गावारु ॥ जिसु गुर प्रसादि तूटै हउ रोगु ॥ नानक सो जनु सदा अरोगु ॥ २ ॥

यदि प्राणी अति सुन्दर है तो अपने आप वह दूसरों को मोहित नहीं करता। प्रभु की ज्योति ही समस्त शरीरों में सुन्दर लगती है। धनवान होकर कोई पुरुष क्या अभिमान करे, जब समस्त धन उसका दिया हुआ है। यदि कोई पुरुष अपने आपको महान शूरवीर कहलवाता हो, प्रभु की कला (शक्ति) बिना वह क्या प्रयास कर सकता है? यदि कोई पुरुष दानी बन बैठे तो दाता प्रभु उसको मूर्ख समझता है। गुरु की कृपा से जिसके अहंकार का रोग दूर होता है, हे नानक! वह मनुष्य सदैव स्वस्थ है॥ २॥

जिउ मंदर कउ थामै थंमनु ॥ तिउ गुर का सबदु मनहि असथंमनु ॥ जिउ पाखाणु नाव चड़ि तरै ॥ प्राणी गुर चरण लगतु निसतरै ॥ जिउ अंधकार दीपक परगासु ॥ गुर दरसनु देखि मनि होइ बिगासु ॥ जिउ महा उदिआन महि मारगु पावै ॥ तिउ साधू संगि मिलि जोति प्रगटावै ॥ तिन संतन की बाछउ धूरि ॥ नानक की हरि लोचा पूरि ॥ ३ ॥

जैसे मन्दिर को एक खम्भा सहारा देता है, वैसे ही गुरु का शब्द मन को सहारा देता है। जैसे नाव में रखा पत्थर पार हो जाता है, वैसे ही प्राणी गुरु के चरणों से लगकर भवसागर से पार हो जाता है। जैसे दीपक अन्धेरे में प्रकाश कर देता है, वैसे ही गुरु के दर्शन करके मन प्रफुल्लित हो जाता

है। जैसे मनुष्य को महा जंगल में पथ मिल जाता है, वैसे ही सत्संगति में रहने से प्रभु की ज्योति मनुष्य के भीतर प्रकट हो जाती है। मैं उन संतों के चरणों की धूलि माँगता हूँ। हे ईश्वर ! नानक की आकांक्षा पूर्ण करो॥ ३॥

मन मूरख काहे बिललाईऐ ॥ पुरब लिखे का लिखिआ पाईऐ ॥ दूख सूख प्रभ देवनहारु ॥ अवर तिआगि तू तिसहि चितारु ॥ जो कछु करै सोई सुखु मानु ॥ भूला काहे फिरहि अजान ॥ कउन बसतु आई तेरै संग ॥ लपटि रहिओ रसि लोभी पतंग ॥ राम नाम जपि हिरदे माहि ॥ नानक पति सेती घरि जाहि ॥ ४ ॥

हे मूर्ख मन ! क्यों विलाप करते हो ! तुझे वह कुछ मिलेगा, जो तेरे पूर्व जन्म के कर्मों द्वारा लिखा हुआ है। प्रभु दुःख एवं सुख देने वाला है। अन्य सब कुछ छोड़कर तू उसकी ही आराधना कर। परमात्मा जो कुछ करता है, उसको सुख समझ। हे मूर्ख ! तुम क्यों भटकते फिरते हो। कौन–सी वस्तु तेरे साथ आई है। हे लालची परवाने ! तुम सांसारिक ऐश्वर्य–भोग में मस्त हो रहे हो ? तू अपने मन में राम के नाम का जाप कर। हे नानक ! इस तरह तुम सम्मानपूर्वक अपने धाम (परलोक) को जाओगे॥ ४॥

जिसु वखर कउ लैनि तू आइआ ॥ राम नामु संतन घरि पाइआ ॥ तजि अभिमानु लेहु मन मोलि ॥ राम नामु हिरदे महि तोलि ॥ लादि खेप संतह संगि चालु ॥ अवर तिआगि बिखिआ जंजाल ॥ धंनि धंनि कहै सभु कोइ ॥ मुख ऊजल हरि दरगह सोइ ॥ इहु वापारु विरला वापारै ॥ नानक ता कै सद बलिहारै ॥ ५ ॥

(हे जीव !) जिस सौदे को लेने लिए तू दुनिया में आया है, वह राम नाम रूपी सौदा संतों के घर से मिलता है। अपने अभिमान को त्याग दे, राम का नाम अपने हृदय में तोल और अपने मन से इसे खरीद। अपना सौदा लाद ले और संतों के संग चल। माया के दूसरे जंजाल त्याग दे। हरेक तुझे धन्य ! धन्य !! कहेगा। उस प्रभु के दरबार में तेरा मुख उज्ज्वल होगा। यह व्यापार कोई विरला व्यापारी ही करता है। हे नानक ! मैं ऐसे व्यापारी पर सदा बलिहारी जाता हूँ॥ ५॥

चरन साध के धोइ धोइ पीउ ॥ अरपि साध कउ अपना जीउ ॥ साध की धूरि करहु इसनानु ॥ साध ऊपरि जाईऐ कुरबानु ॥ साध सेवा वडभागी पाईऐ ॥ साधसंगि हरि कीरतनु गाईऐ ॥ अनिक बिघन ते साधू राखै ॥ हरि गुन गाइ अंम्रित रसु चाखै ॥ ओट गही संतह दरि आइआ ॥ सरब सूख नानक तिह पाइआ ॥ ६ ॥

(हे जीव !) साधुओं के चरण धो–धोकर पी। साधुओं पर अपनी आत्मा भी अर्पण कर दे। साधुओं के चरणों की धूलि से स्नान कर। साधु पर कुर्बान हो जाना चाहिए। साधु की सेवा सौभाग्य से ही मिलती है। साधु की संगति में हरि का भजन गान करना चाहिए। साधु अनेक विघ्नों से मनुष्य की रक्षा करता है। जो प्रभु की गुणस्तुति करता है, वह अमृत रस को चखता है। जिसने संतों का सहारा पकड़ा है और उनके द्वार पर आ गिरा है, हे नानक ! वह सर्व सुख प्राप्त कर लेता है॥ ६॥

मिरतक कउ जीवालनहार ॥ भूखे कउ देवत अधार ॥ सरब निधान जा की द्रिसटी माहि ॥ पुरब लिखे का लहणा पाहि ॥ सभु किछु तिस का ओहु करनै जोगु ॥ तिसु बिनु दूसर होआ न होगु ॥ जपि जन सदा सदा दिनु रैणी ॥ सभ ते ऊच निरमल इह करणी ॥ करि किरपा जिस कउ नामु दीआ ॥ नानक सो जनु निरमलु थीआ ॥ ७ ॥

परमात्मा मृतक प्राणी को भी जीवित करने वाला है। वह भूखे को भी भोजन प्रदान करता है। तमाम खजाने उसकी दृष्टि में हैं। (परन्तु प्राणी) अपने पूर्व जन्म के किए कर्मों का फल भोगते हैं। सबकुछ उस परमात्मा का ही है और वही सब कुछ करने में समर्थावान है। उसके अलावा कोई दूसरा न ही था और न ही होगा। हे जीव! दिन–रात सदैव उसकी आराधना कर। यह जीवन–आचरण सबसे ऊँचा एवं पवित्र है। हे नानक! जिस पुरुष पर परमात्मा ने कृपा धारण करके अपना नाम प्रदान किया है, वह पवित्र हो जाता है॥ ७॥

जा कै मनि गुर की परतीति ॥ तिसु जन आवै हरि प्रभु चीति ॥ भगतु भगतु सुनीऐ तिहु लोइ ॥ जा कै हिरदै एको होइ ॥ सचु करणी सचु ता की रहत ॥ सचु हिरदै सति मुखि कहत ॥ साची द्रिसटि साचा आकारु ॥ सचु वरतै साचा पासारु ॥ पारब्रहमु जिनि सचु करि जाता ॥ नानक सो जनु सचि समाता ॥ ८ ॥ १५ ॥

जिसके मन में गुरु जी पर आस्था है, वह मनुष्य हरि–प्रभु को स्मरण करने लग जाता है। जिसके हृदय में एक ईश्वर विद्यमान होता है, वह तीनों लोकों में प्रसिद्ध भक्त हो जाता है। उसका कर्म सत्य है और जीवन–मर्यादा भी सत्य है। उसके मन में सत्य है और वह अपने मुख से सत्य ही बोलता है। उसकी दृष्टि सत्य है और उसका स्वरूप भी सत्य है। वह सत्य बांटता है और सत्य ही फैलाता है। हे नानक! जो पुरुष पारब्रह्म को सत्य समझता है, वह पुरुष सत्य में ही समा जाता है॥ ८॥ १५॥

सलोकु ॥ रूपु न रेख न रंगु किछु त्रिहु गुण ते प्रभ भिंन ॥ तिसहि बुझाए नानका जिसु होवै सुप्रसंन ॥ १ ॥

श्लोक॥ परमेश्वर का न कोई रूप अथवा चिन्ह है और न ही कोई रंग है। वह माया के तीनों गुणों से परे है। हे नानक! परमात्मा स्वयं उस पुरुष को समझाता है, जिस पर स्वयं प्रसन्न होता है॥ १॥

असटपदी ॥ अबिनासी प्रभु मन महि राखु ॥ मानुख की तू प्रीति तिआगु ॥ तिस ते परै नाही किछु कोइ ॥ सरब निरंतरि एको सोइ ॥ आपे बीना आपे दाना ॥ गहिर गंभीरु गहीरु सुजाना ॥ पारब्रहम परमेसुर गोबिंद ॥ क्रिपा निधान दइआल बखसंद ॥ साध तेरे की चरनी पाउ ॥ नानक कै मनि इहु अनराउ ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ (हे जीव!) अपने मन में अनश्वर प्रभु को याद रख और मनुष्य का प्रेम (मोह) त्याग दे। उससे परे कोई वस्तु नहीं। वह एक ईश्वर समस्त जीव–जन्तुओं के भीतर मौजूद है। वह स्वयं सबकुछ देखने वाला और स्वयं ही सब कुछ जानने वाला है। प्रभु अथाह गम्भीर, गहरा एवं परम बुद्धिमान है। वह पारब्रह्म, परमेश्वर एवं गोबिन्द कृपा का भण्डार, बड़ा दयालु एवं क्षमाशील है। हे प्रभु! नानक के मन में यही अभिलाषा है कि वह तेरे साधुओं के चरणों पर नतमस्तक होवे॥ १॥

मनसा पूरन सरना जोग ॥ जो करि पाइआ सोई होगु ॥ हरन भरन जा का नेत्र फोरु ॥ तिस का मंत्रु न जानै होरु ॥ अनद रूप मंगल सद जा कै ॥ सरब थोक सुनीअहि घरि ता कै ॥ राज महि राजु जोग महि जोगी ॥ तप महि तपीसरु ग्रिहसत महि भोगी ॥ धिआइ धिआइ भगतह सुखु पाइआ ॥ नानक तिसु पुरख का किनै अंतु न पाइआ ॥ २ ॥

भगवान मनोकामना पूर्ण करने वाला एवं शरण देने योग्य है। जो कुछ ईश्वर ने अपने हाथ से लिख दिया है, वही होता है। वह पलक झपकते ही सृष्टि की रचना एवं विनाश कर देता है। दूसरा

कोई उसके भेद को नहीं जानता। वह प्रसन्नता का रूप है एवं उसके मन्दिर में सदैव मंगल—खुशियाँ हैं। मैंने सुना है कि समस्त पदार्थ उसके घर में मौजूद हैं। राजाओं में वह महान राजा एवं योगियों में महायोगी है। तपस्वियों में वह महान तपस्वी है और गृहस्थियों में भी स्वयं ही गृहस्थी है। उस एक ईश्वर का ध्यान करने से भक्तजनों ने सुख प्राप्त कर लिया है। हे नानक ! उस परमात्मा का किसी ने भी अन्त नहीं पाया॥ २॥

जा की लीला की मिति नाहि ॥ सगल देव हारे अवगाहि ॥ पिता का जनमु कि जानै पूतु ॥ सगल परोई अपुनै सूति ॥ सुमति गिआनु धिआनु जिन देइ ॥ जन दास नामु धिआवहि सेइ ॥ तिहु गुण महि जा कउ भरमाए ॥ जनमि मरै फिरि आवै जाए ॥ ऊच नीच तिस के असथान ॥ जैसा जनावै तैसा नानक जान ॥ ३ ॥

जिस भगवान की (सृष्टि—रूपी) लीला का कोई अंत नहीं, उसे खोज—खोजकर देवता भी थक चुके हैं। चूंकि अपने पिता के जन्म बारे पुत्र क्या जानता है ? सारी सृष्टि ईश्वर ने अपने (हुक्म रूपी) धागे में पिरोई हुई है। जिन्हें प्रभु सुमति, ज्ञान एवं ध्यान प्रदान करता है, उसके सेवक एवं दास उसका ही ध्यान करते रहते हैं। जिसको प्रभु माया के तीन गुणों में भटकाता है, वह जन्मता—मरता रहता है और आवागमन के चक्र में पड़ा रहता है। ऊँच—नीच सब उसके ही स्थान हैं। हे नानक ! जैसी सूझ वह देता है, वैसे ही सूझ वाला प्राणी बन जाता है॥ ३॥

नाना रूप नाना जा के रंग ॥ नाना भेख करहि इक रंग ॥ नाना बिधि कीनो बिसथारु ॥ प्रभु अबिनासी एकंकारु ॥ नाना चलित करे खिन माहि ॥ पूरि रहिओ पूरनु सभ ठाइ ॥ नाना बिधि करि बनत बनाई ॥ अपनी कीमति आपे पाई ॥ सभ घट तिस के सभ तिस के ठाउ ॥ जपि जपि जीवै नानक हरि नाउ ॥ ४ ॥

ईश्वर के अनेक रूप हैं और अनेक उसके रंग हैं। अनेक वेष धारण करते हुए वह फिर भी एक ही रहता है। अनश्वर प्रभु जो एक ही है, उसने विभिन्न विधियों से अपनी सृष्टि का प्रसार किया हुआ है। एक क्षण में वह विभिन्न खेल रच देता है। पूर्ण प्रभु समस्त स्थानों में समा रहा है। अनेक विधियों से उसने सृष्टि—रचना की है। अपना मूल्यांकन उसने स्वयं ही पाया है। समस्त हृदय उसके हैं और उसके ही समस्त स्थान हैं। हे नानक ! मैं हरि का नाम जप—जप कर ही जीता हूँ॥ ४॥

नाम के धारे सगले जंत ॥ नाम के धारे खंड ब्रहमंड ॥ नाम के धारे सिम्रिति बेद पुरान ॥ नाम के धारे सुनन गिआन धिआन ॥ नाम के धारे आगास पाताल ॥ नाम के धारे सगल आकार ॥ नाम के धारे पुरीआ सभ भवन ॥ नाम कै संगि उधरे सुनि स्रवन ॥ करि किरपा जिसु आपनै नामि लाए ॥ नानक चउथे पद महि सो जनु गति पाए ॥ ५ ॥

ईश्वर नाम ने ही समस्त जीव—जन्तुओं को सहारा दिया हुआ है। धरती के खण्ड एवं ब्रह्माण्ड ईश्वर नाम ने ही टिकाए हुए हैं। ईश्वर के नाम ने ही स्मृतियों, वेदों एवं पुराणों को सहारा दिया हुआ है। नाम के सहारे द्वारा प्राणी ज्ञान एवं मनन बारे सुनते हैं। परमेश्वर का नाम ही आकाशों एवं पातालों का सहारा है। ईश्वर का नाम समस्त शरीरों का सहारा है। तीनों भवन एवं चौदह लोक ईश्वर के नाम ने टिकाए हुए हैं। नाम की संगति करने एवं कानों से इसको श्रवण करने से मनुष्य पार हो गए हैं। जिस पर प्रभु कृपा धारण करके अपने नाम के साथ मिलाता है, हे नानक ! वह मनुष्य चतुर्थ स्थान में पहुँचकर मोक्ष प्राप्त कर लेता है॥ ५॥

रूपु सति जा का सति असथानु ॥ पुरखु सति केवल परधानु ॥ करतूति सति सति जा की बाणी ॥ सति पुरख सभ माहि समाणी ॥ सति करमु जा की रचना सति ॥ मूलु सति सति उतपति ॥ सति करणी निरमल निरमली ॥ जिसहि बुझाए तिसहि सभ भली ॥ सति नामु प्रभ का सुखदाई ॥ बिस्वासु सति नानक गुर ते पाई ॥ ६ ॥

जिस भगवान का रूप सत्य है, उसका निवास भी सत्य है। केवल वह सद्पुरुष ही प्रधान है। उसके करतब सत्य हैं और उसकी वाणी सत्य है। सत्यस्वरूप प्रभु सब में समाया हुआ है। उसके कर्म सत्य हैं और उसकी सृष्टि भी सत्य है। उसका मूल सत्य है एवं जो कुछ उससे उत्पन्न होता है, वह भी सत्य है। उसकी करनी सत्य है और पवित्र से भी पवित्र है। भगवान जिसे समझाता है, उसे सब भला ही लगता है। प्रभु का सत्यनाम सुख देने वाला है। हे नानक! (प्राणी को) यह सच्चा विश्वास गुरु से मिलता है॥ ६॥

सति बचन साधू उपदेस ॥ सति ते जन जा कै रिदै प्रवेस ॥ सति निरति बूझै जे कोइ ॥ नामु जपत ता की गति होइ ॥ आपि सति कीआ सभु सति ॥ आपे जानै अपनी मिति गति ॥ जिस की स्रिसटि सु करणैहारु ॥ अवर न बूझि करत बीचारु ॥ करते की मिति न जानै कीआ ॥ नानक जो तिसु भावै सो वरतीआ ॥ ७ ॥

साधु का उपदेश सत्य वचन हैं। वे पुरुष सत्य हैं, जिनके हृदय में सत्य प्रवेश करता है। यदि कोई व्यक्ति सत्य को समझे और प्रेम करे, तो नाम जपने से उसकी गति हो जाती है। प्रभु स्वयं सत्यस्वरूप है और उसका किया सब सत्य है। वह स्वयं ही अपने अनुमान एवं अवस्था को जानता है। जिसकी यह सृष्टि है, वही उसका सृजनहार है। कोई दूसरा उसको नहीं समझता, चाहे वह कैसे विचार करे। करतार का विस्तार, उसका उत्पन्न किया हुआ जीव नहीं जान सकता। हे नानक! जो कुछ उसे लुभाता है, केवल वही होता है॥ ७॥

बिसमन बिसम भए बिसमाद ॥ जिनि बूझिआ तिसु आइआ स्वाद ॥ प्रभ कै रंगि राचि जन रहे ॥ गुर कै बचनि पदारथ लहे ॥ ओइ दाते दुख काटनहार ॥ जा कै संगि तरै संसार ॥ जन का सेवकु सो वडभागी ॥ जन कै संगि एक लिव लागी ॥ गुन गोबिद कीरतनु जनु गावै ॥ गुर प्रसादि नानक फलु पावै ॥ ८ ॥ १६ ॥

प्रभु के अद्‌भुत, आश्चर्यजनक कौतुक देखकर मैं चकित हो गया हूँ। जो प्रभु की महिमा को समझता है, वही आनन्द प्राप्त करता है। प्रभु के सेवक उसके प्रेम में लीन रहते हैं। गुरु के उपदेश द्वारा वह (नाम—) पदार्थ को प्राप्त कर लेते हैं। वह दानी एवं दुःख दूर करने वाले हैं। उनकी संगति में संसार का कल्याण हो जाता है। ऐसे सेवकों का सेवक सौभाग्यशाली है। उसके सेवक की संगति में मनुष्य की वृत्ति एक ईश्वर से लग जाती है। प्रभु का सेवक उसकी गुणस्तुति एवं भजन गायन करता है। हे नानक! गुरु की कृपा से वह फल प्राप्त कर लेता है॥ ८॥ १६॥

सलोकु ॥ आदि सचु जुगादि सचु ॥ है भि सचु नानक होसी भि सचु ॥ १ ॥

श्लोक॥ भगवान सृष्टि—रचना से पहले सत्य था, युगों के प्रारम्भ में भी सत्य था, अब वर्तमान में उसी का अस्तित्व है। हे नानक! भविष्य में भी उस सत्यस्वरूप भगवान का अस्तित्व होगा॥ १॥

असटपदी ॥ चरन सति सति परसनहार ॥ पूजा सति सति सेवदार ॥ दरसनु सति सति पेखनहार ॥ नामु सति सति धिआवनहार ॥ आपि सति सति सभ धारी ॥ आपे गुण आपे गुणकारी ॥

सबदु सति सति प्रभु बकता ॥ सुरति सति सति जसु सुनता ॥ बुझनहार कउ सति सभ होइ ॥ नानक सति सति प्रभु सोइ ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ प्रभु के चरण सत्य हैं और सत्य है वह जो उसके चरण–स्पर्श करता है। उसकी पूजा सत्य है एवं उसकी पूजा करने वाला भी सत्य है। उसके दर्शन सत्य हैं और दर्शन करने वाला भी सत्य है। उसका नाम सत्य है और वह भी सत्य है जो इसका ध्यान करता है। वह स्वयं सत्यस्वरूप है, सत्य है प्रत्येक वस्तु जिसे उसने सहारा दिया हुआ है। वह स्वयं ही गुण है और स्वयं ही गुणकारी है। प्रभु की वाणी सत्य है और वह सत्य वक्ता है। वह कान सत्य हैं जो सद्पुरुष का यशोगान सुनते हैं। जो प्रभु को समझता है, उसके लिए सब सत्य ही है। हे नानक! वह प्रभु सदा सर्वदा सत्य है॥ १॥

सति सरूपु रिदै जिनि मानिआ ॥ करन करावन तिनि मूलु पछानिआ ॥ जा कै रिदै बिस्वासु प्रभ आइआ ॥ ततु गिआनु तिसु मनि प्रगटाइआ ॥ भै ते निरभउ होइ बसाना ॥ जिस ते उपजिआ तिसु माहि समाना ॥ बसतु माहि ले बसतु गडाई ॥ ता कउ भिंन न कहना जाई ॥ बूझै बूझनहारु बिबेक ॥ नाराइन मिले नानक एक ॥ २ ॥

जो मनुष्य अपने हृदय में सत्यस्वरूप परमात्मा पर आस्था धारण करता है, वह सब कुछ करने वाले एवं कराने वाले (सृष्टि के) मूल को समझ लेता है। जिसके हृदय में प्रभु का विश्वास प्रवेश कर गया है, उसके मन में तत्व ज्ञान प्रत्यक्ष होता है। डर को त्याग कर वह निडर होकर बसता है और जिससे वह उत्पन्न हुआ था, उस में ही समा जाता है। जब एक वस्तु अपनी प्रकार की दूसरी वस्तु से मिल जाती है तो वह इससे भिन्न नहीं कही जा सकती। इस विचार को कोई सूझवान ही समझता है। हे नानक! जो प्राणी नारायण से मिल चुके हैं, वे उसके साथ एक हो चुके हैं॥ २॥

ठाकुर का सेवकु आगिआकारी ॥ ठाकुर का सेवकु सदा पूजारी ॥ ठाकुर के सेवक कै मनि परतीति ॥ ठाकुर के सेवक के निरमल रीति ॥ ठाकुर कउ सेवकु जानै संगि ॥ प्रभ का सेवकु नाम कै रंगि ॥ सेवक कउ प्रभ पालनहारा ॥ सेवक की राखै निरंकारा ॥ सो सेवकु जिसु दइआ प्रभु धारै ॥ नानक सो सेवकु सासि सासि समारै ॥ ३ ॥

भगवान का सेवक उसका आज्ञाकारी होता है। भगवान का सेवक सदा उसकी ही पूजा करता रहता है। ईश्वर के सेवक के मन में आस्था होती है। प्रभु के सेवक का जीवन–आचरण पवित्र होता है। प्रभु का सेवक जानता है कि उसका स्वामी सदैव उसके साथ है। परमेश्वर का सेवक उसके नाम की प्रीति में बसता है। अपने सेवक का प्रभु पालन–पोषणहार है। निरंकार प्रभु अपने सेवक की प्रतिष्ठा रखता है। वही सेवक है, जिस पर प्रभु दया करता है। हे नानक! वह सेवक प्रत्येक श्वास से ईश्वर को स्मरण करता रहता है॥ ३॥

अपुने जन का परदा ढाकै ॥ अपने सेवक की सरपर राखै ॥ अपने दास कउ देइ वडाई ॥ अपने सेवक कउ नामु जपाई ॥ अपने सेवक की आपि पति राखै ॥ ता की गति मिति कोइ न लाखै ॥ प्रभ के सेवक कउ को न पहूचै ॥ प्रभ के सेवक ऊच ते ऊचे ॥ जो प्रभि अपनी सेवा लाइआ ॥ नानक सो सेवकु दह दिसि प्रगटाइआ ॥ ४ ॥

परमात्मा अपने सेवक का पर्दा रखता है। वह अपने सेवक की निश्चित ही प्रतिष्ठा रखता है। प्रभु अपने सेवक को मान–सम्मान प्रदान करता है। अपने सेवक से वह अपने नाम का जाप करवाता

है। अपने सेवक की वह स्वयं ही लाज रखता है। उसकी गति एवं अनुमान को कोई नहीं जानता। कोई भी व्यक्ति प्रभु के सेवक की बराबरी नहीं कर सकता। ईश्वर के सेवक सर्वोच्च हैं। प्रभु जिसको अपनी सेवा में लगाता है, हे नानक! वह सेवक दसों दिशाओं में लोकप्रिय हो जाता है॥ ४॥

नीकी कीरी महि कल राखै ॥ भसम करै लसकर कोटि लाखै ॥ जिस का सासु न काढत आपि ॥ ता कउ राखत दे करि हाथ ॥ मानस जतन करत बहु भाति ॥ तिस के करतब बिरथे जाति ॥ मारै न राखै अवरु न कोइ ॥ सरब जीआ का राखा सोइ ॥ काहे सोच करहि रे प्राणी ॥ जपि नानक प्रभ अलख विडाणी ॥ ५ ॥

यदि प्रभु छोटी-सी चींटी में शक्ति भर दे तो वह लाखों, करोड़ों लश्करों को भस्म बना सकती है। जिस प्राणी का श्वास परमेश्वर स्वयं नहीं निकालता, उसको वह अपना हाथ देकर बचा लेता है। मनुष्य अनेक विधियों से यत्न करता है, परन्तु उसके काम असफल हो जाते हैं। ईश्वर के अलावा दूसरा कोई मार अथवा बचा नहीं सकता। समस्त जीव-जन्तुओं का परमात्मा ही रखवाला है। हे नश्वर प्राणी! तुम क्यों चिन्ता करते हो? हे नानक! अलक्ष्य एवं आश्चर्यजनक परमात्मा को स्मरण कर॥ ५॥

बारं बार बार प्रभु जपीऐ ॥ पी अंम्रितु इहु मनु तनु ध्रपीऐ ॥ नाम-रतनु जिनि गुरमुखि पाइआ ॥ तिसु किछु अवरु नाही द्रिसटाइआ ॥ नामु धनु नामो रूपु रंगु ॥ नामो सुखु हरि नाम का संगु ॥ नाम रसि जो जन त्रिपताने ॥ मन तन नामहि नामि समाने ॥ ऊठत बैठत सोवत नाम ॥ कहु नानक जन कै सद काम ॥ ६ ॥

बार-बार ईश्वर के नाम का जाप करना चाहिए। नाम-अमृत पीकर यह मन एवं शरीर तृप्त हो जाते हैं। जिस गुरमुख को नाम-रत्न प्राप्त हुआ है, वह ईश्वर के अलावा किसी दूसरे को नहीं देखता। नाम उसका धन है और नाम ही उसका रूप, रंग है। नाम उसका सुख है और हरि का नाम ही उसका साथी होता है। जो मनुष्य नाम-अमृत से तृप्त हो जाते हैं, उनकी आत्मा एवं शरीर केवल नाम में ही लीन हो जाते हैं। हे नानक! उठते-बैठते, सोते हुए सदैव ईश्वर का नाम-स्मरण ही सेवकों का काम होता है॥ ६॥

बोलहु जसु जिहबा दिनु राति ॥ प्रभि अपनै जन कीनी दाति ॥ करहि भगति आतम कै चाइ ॥ प्रभ अपने सिउ रहहि समाइ ॥ जो होआ होवत सो जानै ॥ प्रभ अपने का हुकमु पछानै ॥ तिस की महिमा कउन बखानउ ॥ तिस का गुनु कहि एक न जानउ ॥ आठ पहर प्रभ बसहि हजूरे ॥ कहु नानक सेई जन पूरे ॥ ७ ॥

अपनी जिह्वा से दिन-रात परमेश्वर की गुणस्तुति करो। यह देन परमेश्वर ने अपने सेवक को प्रदान की है। वह मन के उत्साह से भक्ति करता है और अपने प्रभु में ही लीन रहता है। वह जो कुछ हो रहा है, भगवान की इच्छा से सहर्ष जानता है और अपने प्रभु के हुक्म को पहचानता है। उसकी महिमा कौन वर्णन कर सकता है? उसकी एक प्रशंसा को भी मैं वर्णन करना नहीं जानता। जो सारा दिन प्रभु की उपस्थिति में बसते हैं, हे नानक! वह पूर्ण पुरुष हैं॥ ७॥

मन मेरे तिन की ओट लेहि ॥ मनु तनु अपना तिन जन देहि ॥ जिनि जनि अपना प्रभू पछाता ॥ सो जनु सरब थोक का दाता ॥ तिस की सरनि सरब सुख पावहि ॥ तिस कै दरसि सभ पाप मिटावहि ॥ अवर सिआनप सगली छाडु ॥ तिसु जन की तू सेवा लागु ॥ आवनु जानु न होवी तेरा ॥ नानक तिसु जन के पूजहु सद पैरा ॥ ८ ॥ १७ ॥

हे मेरे मन ! तू उनकी शरण ले। अपना मन एवं तन उन पुरुषों को समर्पित कर दे। जिस पुरुष ने अपने प्रभु को पहचान लिया है, वह मनुष्य समस्त वस्तुएँ देने वाला है। उसकी शरण में तुम्हें सर्व सुख मिल जाएँगे। उसके दर्शन द्वारा समस्त पाप नाश हो जाएँगे। दूसरी चतुराई त्याग कर प्रभु के उस सेवक की सेवा में स्वयं को लगा ले। तेरा आवागमन मिट जाएगा। हे नानक ! सदैव ही उस सेवक के चरणों की पूजा करो॥ ८॥ १७॥

सलोकु ॥ सति पुरखु जिनि जानिआ सतिगुरु तिस का नाउ ॥ तिस कै संगि सिखु उधरै नानक हरि गुन गाउ ॥ १ ॥

श्लोक॥ जिसने सत्यस्वरूप परमात्मा को जान लिया है, उसका नाम सतिगुरु है। हे नानक ! उसकी संगति में ईश्वर की गुणस्तुति करने से उसका शिष्य भी पार हो जाता है॥ १॥

असटपदी ॥ सतिगुरु सिख की करै प्रतिपाल ॥ सेवक कउ गुरु सदा दइआल ॥ सिख की गुरु दुरमति मलु हिरै ॥ गुर बचनी हरि नामु उचरै ॥ सतिगुरु सिख के बंधन काटै ॥ गुर का सिखु बिकार ते हाटै ॥ सतिगुरु सिख कउ नाम धनु देइ ॥ गुर का सिखु वडभागी हे ॥ सतिगुरु सिख का हलतु पलतु सवारै ॥ नानक सतिगुरु सिख कउ जीअ नालि समारै ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ सतिगुरु अपने शिष्य का पालन—पोषण करता है। अपने सेवक पर गुरु जी हमेशा दयालु रहते हैं। गुरु अपने शिष्य की मन्दबुद्धि रूपी मैल को साफ कर देते हैं। गुरु के उपदेश द्वारा वह हरि के नाम का जाप करता है। सतिगुरु अपने शिष्य के बन्धन काट देते हैं। गुरु का शिष्य विकारों से हट जाता है। सतिगुरु अपने शिष्य को ईश्वर—नाम रूपी धन प्रदान करते हैं। गुरु का शिष्य बड़ा भाग्यशाली है। सतिगुरु अपने शिष्य का इहलोक एवं परलोक संवार देते हैं। हे नानक ! सतिगुरु अपने शिष्य को अपने हृदय से लगाकर रखता है॥ १॥

गुर कै ग्रिहि सेवकु जो रहै ॥ गुर की आगिआ मन महि सहै ॥ आपस कउ करि कछु न जनावै ॥ हरि हरि नामु रिदै सद धिआवै ॥ मनु बेचै सतिगुर कै पासि ॥ तिसु सेवक के कारज रासि ॥ सेवा करत होइ निहकामी ॥ तिस कउ होत परापति सुआमी ॥ अपनी क्रिपा जिसु आपि करेइ ॥ नानक सो सेवकु गुर की मति लेइ ॥ २ ॥

जो सेवक गुरु के घर में रहता है, वह गुरु की आज्ञा सहर्ष मन में स्वीकार करता है। वह अपने आपको बड़ा नहीं जतलाता। वह अपने हृदय में हमेशा ही हरि—परमेश्वर के नाम का ध्यान करता रहता है। जो अपना मन सतिगुरु के समक्ष बेच देता है, उस सेवक के तमाम कार्य संवर जाते हैं। जो सेवक निष्काम भावना से गुरु की सेवा करता है, वह प्रभु को पा लेता है। हे नानक ! जिस पर गुरु जी स्वयं कृपा करते हैं, वह सेवक गुरु की शिक्षा प्राप्त करता है॥ २॥

बीस बिसवे गुर का मनु मानै ॥ सो सेवकु परमेसुर की गति जानै ॥ सो सतिगुरु जिसु रिदै हरि नाउ ॥ अनिक बार गुर कउ बलि जाउ ॥ सरब निधान जीअ का दाता ॥ आठ पहर पारब्रहम रंगि राता ॥ ब्रहम महि जनु जन महि पारब्रहमु ॥ एकहि आपि नही कछु भरमु ॥ सहस सिआनप लइआ न जाईऐ ॥ नानक ऐसा गुरु बडभागी पाईऐ ॥ ३ ॥

जो सेवक अपने गुरु का मन पूर्णतया जीत लेता है, वह परमेश्वर की गति को जान लेता है। सतिगुरु वही है, जिसके हृदय में हरि का नाम है। मैं अनेक बार अपने गुरु पर बलिहारी जाता हूँ।

गुरु जी प्रत्येक पदार्थ के खजाने एवं जीवन प्रदान करने वाले हैं। वह आठ प्रहर ही पारब्रह्म के रंग में मग्न रहते हैं। भक्त ब्रह्म में बसता है और पारब्रह्म भक्त में बसता है। प्रभु केवल एक ही है इसमें कोई सन्देह नहीं। हे नानक! हजारों ही चतुराइयों द्वारा गुरु प्राप्त नहीं होता, ऐसा गुरु बड़े भाग्य से ही मिलता है॥ ३॥

सफल दरसनु पेखत पुनीत ॥ परसत चरन गति निरमल रीति ॥ भेटत संगि राम गुन रवे ॥ पारब्रहम की दरगह गवे ॥ सुनि करि बचन करन आघाने ॥ मनि संतोखु आतम पतीआने ॥ पूरा गुरु अख्यओ जा का मंत्र ॥ अंम्रित द्रिसटि पेखै होइ संत ॥ गुण बिअंत कीमति नही पाइ ॥ नानक जिसु भावै तिसु लए मिलाइ ॥ ४ ॥

गुरु का दर्शन फल प्रदान करने वाला है तथा दर्शन—मात्र से ही मनुष्य पवित्र हो जाता है। उनके चरण स्पर्श करने से मनुष्य की अवस्था एवं जीवन—आचरण निर्मल हो जाते हैं। गुरु की संगति करने से प्राणी राम की गुणस्तुति करता है और पारब्रह्म के दरबार में पहुँच जाता है। गुरु के वचन सुनने से कान तृप्त हो जाते हैं तथा मन में संतोष आ जाता है और आत्मा तृप्त हो जाती है। गुरु पूर्ण पुरुष हैं और उनका मंत्र सदैव अटल है। जिसे वह अपनी अमृत दृष्टि से देखते हैं, वह संत बन जाता है। गुरु के गुण अनन्त हैं, जिसका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। हे नानक! ईश्वर को जो प्राणी अच्छा लगता है, उसे वह गुरु से मिला देता है॥ ४॥

जिहबा एक उसतति अनेक ॥ सति पुरख पूरन बिबेक ॥ काहू बोल न पहुचत प्रानी ॥ अगम अगोचर प्रभ निरबानी ॥ निराहार निरवैर सुखदाई ॥ ता की कीमति किनै न पाई ॥ अनिक भगत बंदन नित करहि ॥ चरन कमल हिरदै सिमरहि ॥ सद बलिहारी सतिगुर अपने ॥ नानक जिसु प्रसादि ऐसा प्रभु जपने ॥ ५ ॥

जिह्वा एक है परन्तु ईश्वर के गुण अनन्त हैं। वह सद्पुरुष पूर्ण विवेक वाला है। किसी भी वचन द्वारा प्राणी ईश्वर के गुणों तक पहुँच नहीं सकता। प्रभु अगम्य, अगोचर एवं पवित्र पावन है। प्रभु को भोजन की आवश्यकता नहीं, वह वैर—रहित एवं सुख प्रदान करने वाला है। कोई भी प्राणी उसका मूल्यांकन नहीं कर पाया। अनेकों भक्त नित्य उसकी वन्दना करते रहते हैं। उसके चरण कमलों को वह अपने हृदय में स्मरण करते हैं। हे नानक! अपने सतिगुरु पर हमेशा बलिहारी जाता हूँ, जिनकी कृपा से वह ऐसे प्रभु का नाम—स्मरण करता है॥ ५॥

इहु हरि रसु पावै जनु कोइ ॥ अंम्रितु पीवै अमरु सो होइ ॥ उसु पुरख का नाही कदे बिनास ॥ जा कै मनि प्रगटे गुनतास ॥ आठ पहर हरि का नामु लेइ ॥ सचु उपदेसु सेवक कउ देइ ॥ मोह माइआ कै संगि न लेपु ॥ मन महि राखै हरि हरि एकु ॥ अंधकार दीपक परगासे ॥ नानक भरम मोह दुख तह ते नासे ॥ ६ ॥

यह हरि रस किसी विरले पुरुष को ही प्राप्त होता है। जो इस अमृत का पान करता है, वह अमर हो जाता है। उस पुरुष का कभी नाश नहीं होता, जिसके हृदय में गुणों का भण्डार प्रकट हो जाता है। आठ पहर ही वह हरि का नाम लेता है और अपने सेवक को सच्चा उपदेश प्रदान करता है। मोह—माया के साथ उसका कभी मेल नहीं होता। वह अपने हृदय में एक हरि—परमेश्वर को ही बसाता है। अज्ञानता रूपी अन्धेरे में उसके लिए नाम रूपी दीपक रौशन हो जाता है। हे नानक! दुविधा, मोह एवं दुःख उससे दूर भाग जाते हैं॥ ६॥

तपति माहि ठाढि वरताई ॥ अनदु भइआ दुख नाठे भाई ॥ जनम मरन के मिटे अंदेसे ॥ साधू के पूरन उपदेसे ॥ भउ चूका निरभउ होइ बसे ॥ सगल बिआधि मन ते खै नसे ॥ जिस का सा तिनि किरपा धारी ॥ साधसंगि जपि नामु मुरारी ॥ थिति पाई चूके भ्रम गवन ॥ सुनि नानक हरि हरि जसु स्रवन ॥ ७ ॥

गुरु के पूर्ण उपदेश ने मोह–माया की अग्नि में शीतलता प्रविष्ट करा दी है, प्रसन्नता उत्पन्न हो गई है व दुःख दूर हो गया है और जन्म–मरण का भय मिट गया है। भय नाश हो गया है और निडर रहते हैं। तमाम रोग नष्ट होकर मन से लुप्त हो गए हैं। जिस गुरु के थे, उसने कृपा की है, सत्संगति में वह मुरारी के नाम का जाप करता है। हे नानक! हरि–परमेश्वर की महिमा कानों से सुनकर शांति मिल गई है और भय एवं दुविधा मिट गए हैं॥ ७॥

निरगुनु आपि सरगुनु भी ओही ॥ कला धारि जिनि सगली मोही ॥ अपने चरित प्रभि आपि बनाए ॥ अपुनी कीमति आपे पाए ॥ हरि बिनु दूजा नाही कोइ ॥ सरब निरंतरि एको सोइ ॥ ओति पोति रविआ रूप रंग ॥ भए प्रगास साध कै संग ॥ रचि रचना अपनी कल धारी ॥ अनिक बार नानक बलिहारी ॥ ८ ॥ १८ ॥

वह स्वयं निर्गुण स्वामी है और वह ही सर्गुण है, जिसने अपनी कला (शक्ति) प्रकट करके समूचे विश्व को मुग्ध किया हुआ है। अपने कौतुक प्रभु ने स्वयं ही रचे हैं। अपना मूल्यांकन वह स्वयं ही जानता है। ईश्वर के अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं। सबके भीतर वह अकालपुरुष स्वयं ही मौजूद है। ताने–बाने की तरह वह तमाम रूप–रंगों में समा रहा है। संतों की संगति करने से वह प्रगट हो जाता है। सृष्टि की रचना करके प्रभु ने अपनी सत्ता टिकाई है। हे नानक! मैं अनेक बार उस (प्रभु) पर कुर्बान जाता हूँ॥ ८॥ १८॥

सलोकु ॥ साथि न चालै बिनु भजन बिखिआ सगली छारु ॥ हरि हरि नामु कमावना नानक इहु धनु सारु ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे प्राणी! भगवान के भजन के सिवाय कुछ भी साथ नहीं जाता, सभी विषय–विकार धूल समान हैं। हे नानक! हरि–परमेश्वर के नाम–स्मरण की कमाई करना ही अति उत्तम धन है॥ १॥

असटपदी ॥ संत जना मिलि करहु बीचारु ॥ एकु सिमरि नाम आधारु ॥ अवरि उपाव सभि मीत बिसारहु ॥ चरन कमल रिद महि उरि धारहु ॥ करन कारन सो प्रभु समरथु ॥ द्रिड़ु करि गहहु नामु हरि वथु ॥ इहु धनु संचहु होवहु भगवंत ॥ संत जना का निरमल मंत ॥ एक आस राखहु मन माहि ॥ सरब रोग नानक मिटि जाहि ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ संतजनों की संगति में मिलकर यही विचार करो। एक ईश्वर को स्मरण करो और नाम का सहारा लो। हे मेरे मित्र! दूसरे तमाम प्रयास भुला दो। ईश्वर के चरण कमल अपने मन एवं हृदय में बसाओ। वह ईश्वर तमाम कार्य करने व जीव से करवाने में सामर्थ्य रखता है। ईश्वर के नाम रूपी वस्तु को दृढ़ करके पकड़ लो। इस (प्रभु के नाम रूपी) धन को एकत्रित करो और भाग्यशाली बन जाओ। संतजनों का मंत्र पवित्र–पावन है। एक ईश्वर की आशा अपने मन में रखो। हे नानक! इस तरह तेरे तमाम रोग मिट जाएँगे॥ १॥

जिसु धन कउ चारि कुंट उठि धावहि ॥ सो धनु हरि सेवा ते पावहि ॥ जिसु सुख कउ नित बाछहि मीत ॥ सो सुखु साधू संगि परीति ॥ जिसु सोभा कउ करहि भली करनी ॥ सा सोभा भजु

हरि की सरनी ॥ अनिक उपावी रोगु न जाइ ॥ रोगु मिटै हरि अवखधु लाइ ॥ सरब निधान महि हरि नामु निधानु ॥ जपि नानक दरगहि परवानु ॥ २ ॥

(हे मित्र !) जिस धन हेतु तू चारों ओर भागता–फिरता है, वह धन तुझे ईश्वर की सेवा से प्राप्त होगा। हे मेरे मित्र ! जिस सुख की तू नित्य इच्छा करता है, वह सुख तुझे संतों की संगति में प्रेम करने से मिलेगा। जिस शोभा के लिए तू शुभ कर्म करता है, वह शोभा भगवान की शरण में जाने से मिलती है। जो रोग अनेक प्रयासों से नहीं मिटता, वह रोग हरि नाम रूपी औषधि लेने से मिट जाता है। तमाम खजानों में ईश्वर का नाम सर्वश्रेष्ठ खजाना है। हे नानक ! उसके नाम का जाप कर, ईश्वर के दरबार में स्वीकार हो जाओगे॥ २॥

मनु परबोधहु हरि कै नाइ ॥ दह दिसि धावत आवै ठाइ ॥ ता कउ बिघनु न लागै कोइ ॥ जा कै रिदै बसै हरि सोइ ॥ कलि ताती ठांढा हरि नाउ ॥ सिमरि सिमरि सदा सुख पाउ ॥ भउ बिनसै पूरन होइ आस ॥ भगति भाइ आतम परगास ॥ तितु घरि जाइ बसै अबिनासी ॥ कहु नानक काटी जम फासी ॥ ३ ॥

अपने मन को भगवान के नाम द्वारा जगाओ। दसों दिशाओं में भटकता हुआ यह मन इस तरह अपने गृह आ जाएगा। जिसके हृदय में वह ईश्वर बसता है, उसे कोई संकट नहीं आता। यह कलियुग गर्म (अग्नि) है और हरि का नाम शीतल है। उसे सदैव स्मरण करो एवं सुख पाओ। नाम–सिमरन से भय नाश हो जाता है और आशा पूर्ण हो जाती है। प्रभु की भक्ति के साथ प्रेम करने से आत्मा उज्ज्वल हो जाती है। जो नाम–स्मरण करता है, उसके हृदय–घर में अनश्वर प्रभु आ बसता है। हे नानक ! (नाम का जाप करने से) यम की फाँसी कट जाती है॥ ३॥

ततु बीचारु कहै जनु साचा ॥ जनमि मरै सो काचो काचा ॥ आवा गवनु मिटै प्रभ सेव ॥ आपु तिआगि सरनि गुरदेव ॥ इउ रतन जनम का होइ उधारु ॥ हरि हरि सिमरि प्रान आधारु ॥ अनिक उपाव न छूटनहारे ॥ सिम्रिति सासत बेद बीचारे ॥ हरि की भगति करहु मनु लाइ ॥ मनि बंछत नानक फल पाइ ॥ ४ ॥

वही सच्चा मनुष्य है, जो सार–तत्व के स्मरण का उपदेश देता है। वह बिल्कुल कच्चा (झूठा) है, जो आवागमन (जन्म–मरण के चक्र) में पड़ता है। प्रभु की सेवा से आवागमन मिट जाता है। अपना अहंत्व त्याग दे और गुरदेव की शरण ले। इस तरह अनमोल जीवन का उद्धार हो जाता है। हरि–परमेश्वर की आराधना कर, जो तेरे प्राणों का आधार है। अनेक उपाय करने से छुटकारा नहीं होता। चाहे स्मृतियों, शास्त्रों व वेदों का विचार करके देख लो। मन लगाकर केवल भगवान की भक्ति ही करो। हे नानक ! (जो भक्ति करता है) उसे मनोवांछित फल मिलता है॥ ४॥

संगि न चालसि तेरै धना ॥ तूं किआ लपटावहि मूरख मना ॥ सुत मीत कुटंब अरु बनिता ॥ इन ते कहहु तुम कवन सनाथा ॥ राज रंग माइआ बिसथार ॥ इन ते कहहु कवन छुटकार ॥ असु हसती रथ असवारी ॥ झूठा डंफु झूठु पासारी ॥ जिनि दीए तिसु बुझै न बिगाना ॥ नामु बिसारि नानक पछुताना ॥ ५ ॥

हे मूर्ख मन ! धन–दौलत तेरे साथ नहीं जाने वाला, फिर तू क्यों इससे लिपटा हुआ है। पुत्र, मित्र, परिवार एवं पत्नी – इन में से तू बता कौन तेरा सहायक है ? राज्य, रंगरलियां एवं धन–दौलत

का विस्तार इनमें से बता कौन कब बचा है ? अश्व, हाथी एवं रथों की सवारी करनी – यह सब झूठा आडम्बर है। मूर्ख पुरुष उस परमात्मा को नहीं जानता, जिसने ये तमाम पदार्थ दिए हैं। हे नानक! नाम को भुला कर प्राणी अन्त में पश्चाताप करता है॥ ५॥

गुर की मति तूं लेहि इआने ॥ भगति बिना बहु डूबे सिआने ॥ हरि की भगति करहु मन मीत ॥ निरमल होइ तुम्हारो चीत ॥ चरन कमल राखहु मन माहि ॥ जनम जनम के किलबिख जाहि ॥ आपि जपहु अवरा नामु जपावहु ॥ सुनत कहत रहत गति पावहु ॥ सार भूत सति हरि को नाउ ॥ सहजि सुभाइ नानक गुन गाउ ॥ ६ ॥

हे मूर्ख मनुष्य! तू गुरु की शिक्षा ले। प्रभु की भक्ति के बिना बड़े बुद्धिमान लोग भी डूब गए हैं। हे मेरे मित्र! अपने मन में भगवान की भक्ति कर, उससे तेरा मन निर्मल हो जाएगा। प्रभु के चरण कमल अपने हृदय में बसा, तेरे जन्म–जन्मांतर के पाप दूर हो जाएँगे। स्वयं ईश्वर के नाम का जाप कर और दूसरों से भी नाम का जाप करवा। सुनने, कहने एवं इस आचरण में रहने से मुक्ति मिल जाएगी। सारभूत हरि का सत्य नाम है। हे नानक! सहज स्वभाव से प्रभु की गुणस्तुति कर॥ ६॥

गुन गावत तेरी उतरसि मैलु ॥ बिनसि जाइ हउमै बिखु फैलु ॥ होहि अचिंतु बसै सुख नालि ॥ सासि ग्रासि हरि नामु समालि ॥ छाडि सिआनप सगली मना ॥ साधसंगि पावहि सचु धना ॥ हरि पूंजी संचि करहु बिउहारु ॥ ईहा सुखु दरगह जैकारु ॥ सरब निरंतरि एको देखु ॥ कहु नानक जा कै मसतकि लेखु ॥ ७ ॥

(हे जीव!) ईश्वर के गुण गाते हुए तेरी पापों की मैल उतर जाएगी एवं अहंकार–रूपी विष का विस्तार भी मिट जाएगा। अपने प्रत्येक श्वास एवं ग्रास से हरि के नाम की आराधना करने से बेफिक्र हो जाएगा और सुखपूर्वक बसेगा। हे मन! अपनी तमाम चतुरता त्याग दे। साधसंगत करने से सच्चा धन मिल जाएगा। ईश्वर के नाम की पूँजी संचित कर और उसका ही व्यापार कर। इस तरह इस जीवन में सुख मिलेगा और प्रभु के दरबार में सत्कार होगा। हे नानक! जिसके माथे पर भाग्य विद्यमान है, वह एक ईश्वर को सर्वत्र देखता है॥ ७॥

एको जपि एको सालाहि ॥ एकु सिमरि एको मन आहि ॥ एकस के गुन गाउ अनंत ॥ मनि तनि जापि एक भगवंत ॥ एको एकु एकु हरि आपि ॥ पूरन पूरि रहिओ प्रभु बिआपि ॥ अनिक बिसथार एक ते भए ॥ एकु अराधि पराछत गए ॥ मन तन अंतरि एकु प्रभु राता ॥ गुर प्रसादि नानक इकु जाता ॥ ८ ॥ १६ ॥

एक ईश्वर के नाम का जाप कर और केवल उसकी ही सराहना कर। एक ईश्वर का चिन्तन कर और केवल उसे ही अपने हृदय में बसा। उस अनन्त एक ईश्वर के गुण गायन कर। मन एवं तन से एक भगवान का जाप कर। वह परमात्मा आप ही आप है। जीवों में व्यापक होकर प्रभु सब ओर बस रहा है। एक ईश्वर से अनेक प्रसार हुए हैं। भगवान की आराधना करने से पाप मिट जाते हैं। मेरा मन एवं शरीर एक प्रभु में मग्न हुए हैं। हे नानक! गुरु की कृपा से उसने एक ईश्वर को ही जाना है॥ ८॥ १६॥

सलोकु ॥ फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ ॥ नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे पूज्य प्रभु ! मैं भटक–भटक कर तेरी ही शरण में आया हूँ। हे प्रभु ! नानक एक यही विनती करता है कि मुझे अपनी भक्ति में लगा ले॥ १॥

असटपदी ॥ जाचक जनु जाचै प्रभ दानु ॥ करि किरपा देवहु हरि नामु ॥ साध जना की मागउ धूरि ॥ पारब्रहम मेरी सरधा पूरि ॥ सदा सदा प्रभ के गुन गावउ ॥ सासि सासि प्रभ तुमहि धिआवउ ॥ चरन कमल सिउ लागै प्रीति ॥ भगति करउ प्रभ की नित नीति ॥ एक ओट एको आधारु ॥ नानकु मागै नामु प्रभ सारु ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ हे प्रभु ! मैं भिखारी तेरे नाम का दान माँगता हूँ। हे हरि ! कृपा करके मुझे अपना नाम प्रदान कीजिए। मैं तो साधुओं के चरणों की धूलि ही मांगता हूँ। हे पारब्रह्म ! मेरी श्रद्धा पूर्ण कीजिए। मैं हमेशा ही प्रभु का गुणानुवाद करता रहूँ। हे प्रभु ! प्रत्येक श्वास से मैं तेरी ही आराधना करूँ। प्रभु के चरणों से मेरा प्रेम पड़ा हुआ है। मैं हमेशा ही प्रभु की भक्ति करता रहूँ। हे भगवान ! तुम ही मेरी एक ओट तथा एक सहारा हो। हे मेरे प्रभु ! नानक तेरे सर्वोत्तम नाम की याचना करता है॥ १॥

प्रभ की द्रिसटि महा सुखु होइ ॥ हरि रसु पावै बिरला कोइ ॥ जिन चाखिआ से जन त्रिपताने ॥ पूरन पुरख नही डोलाने ॥ सुभर भरे प्रेम रस रंगि ॥ उपजै चाउ साध कै संगि ॥ परे सरनि आन सभ तिआगि ॥ अंतरि प्रगास अनदिनु लिव लागि ॥ बडभागी जपिआ प्रभु सोइ ॥ नानक नामि रते सुखु होइ ॥ २ ॥

प्रभु की करुणा–दृष्टि से परम सुख उपलब्ध होता है। कोई विरला पुरुष ही हरि–रस को पाता है। जो इसे चखते हैं, वे जीव तृप्त हो जाते हैं। वे पूर्ण पुरुष बन जाते हैं और कभी (माया में) डगमगाते नहीं। वह प्रभु के प्रेम की मिठास एवं आनंद से पूर्णता भरे रहते हैं। साधुओं की संगति में उनके मन में आत्मिक चाव उत्पन्न हो जाता है। अन्य सब कुछ त्याग कर वह प्रभु की शरण लेते हैं। उनका हृदय उज्ज्वल हो जाता है और दिन–रात वह अपनी वृत्ति ईश्वर में लगाते हैं। भाग्यशाली पुरुषों ने ही प्रभु का जाप किया है। हे नानक ! जो पुरुष प्रभु के नाम में मग्न रहते हैं, वे सुख पाते हैं॥ २॥

सेवक की मनसा पूरी भई ॥ सतिगुर ते निरमल मति लई ॥ जन कउ प्रभु होइओ दइआलु ॥ सेवकु कीनो सदा निहालु ॥ बंधन काटि मुकति जनु भइआ ॥ जनम मरन दूखु भ्रमु गइआ ॥ इछ पुनी सरधा सभ पूरी ॥ रवि रहिआ सद संगि हजूरी ॥ जिस का सा तिनि लीआ मिलाइ ॥ नानक भगती नामि समाइ ॥ ३ ॥

सतिगुरु से निर्मल उपदेश लेकर सेवक की मनोकामना पूर्ण हो गई है। अपने सेवक पर प्रभु कृपालु हो गया है। अपने सेवक को हमेशा के लिए उसने कृतार्थ कर दिया है। सेवक के (माया के) बन्धन कट गए हैं और उसने मोक्ष प्राप्त कर लिया है। उसका जन्म–मरण, दुःख एवं दुविधा दूर हो गए हैं। उसकी इच्छा पूर्ण हो गई है और श्रद्धा भी पूरी हो गई है। भगवान हमेशा साथ बस रहा है। जिसका था, उसने अपने साथ मिला लिया है। हे नानक ! प्रभु की भक्ति से सेवक नाम में लीन हो गया है॥ ३॥

सो किउ बिसरै जि घाल न भानै ॥ सो किउ बिसरै जि कीआ जानै ॥ सो किउ बिसरै जिनि सभु किछु दीआ ॥ सो किउ बिसरै जि जीवन जीआ ॥ सो किउ बिसरै जि अगनि महि राखै ॥ गुर प्रसादि को बिरला लाखै ॥ सो किउ बिसरै जि बिखु ते काढै ॥ जनम जनम का टूटा गाढै ॥ गुरि पूरै ततु इहै बुझाइआ ॥ प्रभु अपना नानक जन धिआइआ ॥ ४ ॥

उस भगवान को क्यों भुलाएँ, जो इन्सान की सेवा–भक्ति की उपेक्षा नहीं करता। उस भगवान को क्यों भुलाएँ, जो किए को जानता है। वह ईश्वर क्यों विस्मृत हो, जिसने हमें सब कुछ दिया है। वह परमात्मा क्यों विस्मृत हो, जो जीवों के जीवन का आधार है। उस अकालपुरुष को क्यों भुलाएँ, जो गर्भ की अग्नि में हमारी रक्षा करता है। गुरु की कृपा से कोई विरला पुरुष ही इसको देखता है। उस ईश्वर को क्यों भुलाएँ, जो मनुष्य को पाप से बचाता है और स्वयं से जन्म–जन्मांतरों से बिछुड़े हुए को अपने साथ मिला लेता है ? पूर्ण गुरु ने मुझे यह वास्तविकता समझाई है। हे नानक ! उसने तो अपने प्रभु का ही ध्यान किया है॥ ४॥

साजन संत करहु इहु कामु ॥ आन तिआगि जपहु हरि नामु ॥ सिमरि सिमरि सिमरि सुख पावहु ॥ आपि जपहु अवरह नामु जपावहु ॥ भगति भाइ तरीऐ संसारु ॥ बिनु भगती तनु होसी छारु ॥ सरब कलिआण सूख निधि नामु ॥ बूडत जात पाए बिस्रामु ॥ सगल दूख का होवत नासु ॥ नानक नामु जपहु गुनतासु ॥ ५ ॥

हे सज्जन, संतजनों ! यह कार्य करो। अन्य सबकुछ छोड़कर भगवान के नाम का जाप करो। भगवान के नाम का सिमरन करके सुख पाओ। आप भी नाम का जाप करो और दूसरों से भी नाम का जाप करवाओ। प्रभु की भक्ति द्वारा यह संसार सागर पार किया जाता है। भक्ति के बिना यह शरीर भस्म हो जाएगा। प्रभु का नाम सर्व कल्याण एवं सुखों का खजाना है, डूबता हुआ जीव भी इसमें सुख पा लेता है। समस्त दुखों का नाश हो जाता है। हे नानक ! गुणों के भण्डार के नाम का जाप करते रहो॥ ५॥

उपजी प्रीति प्रेम रसु चाउ ॥ मन तन अंतरि इही सुआउ ॥ नेत्रहु पेखि दरसु सुखु होइ ॥ मनु बिगसै साध चरन धोइ ॥ भगत जना कै मनि तनि रंगु ॥ बिरला कोऊ पावै संगु ॥ एक बसतु दीजै करि मइआ ॥ गुर प्रसादि नामु जपि लइआ ॥ ता की उपमा कही न जाइ ॥ नानक रहिआ सरब समाइ ॥ ६ ॥

भगवान की प्रीति व प्रेम रस का चाव उत्पन्न हुआ है। मन–तन के भीतर यही स्वाद भर गया है। अपने नेत्रों से प्रभु के दर्शन करके मैं सुख पाता हूँ। संतों के चरण धोकर मेरा मन प्रसन्न हो गया है। भक्तजनों की आत्मा एवं शरीर में प्रभु की प्रीति विद्यमान है। कोई विरला पुरुष ही उनकी संगति प्राप्त करता है। हे ईश्वर ! दया करके हमें एक नाम–वस्तु प्रदान कीजिए (तांकि) गुरु की दया से तेरा नाम जप सकें। हे नानक ! ईश्वर तो सर्वव्यापक है, उसकी उपमा वर्णन नहीं की जा सकती॥ ६॥

प्रभ बखसंद दीन दइआल ॥ भगति वछल सदा किरपाल ॥ अनाथ नाथ गोबिंद गुपाल ॥ सरब घटा करत प्रतिपाल ॥ आदि पुरख कारण करतार ॥ भगत जना के प्रान अधार ॥ जो जो जपै सु होइ पुनीत ॥ भगति भाइ लावै मन हीत ॥ हम निरगुनीआर नीच अजान ॥ नानक तुमरी सरनि पुरख भगवान ॥ ७ ॥

परमात्मा क्षमाशील एवं दीनदयालु है। वह भक्तवत्सल एवं सदैव कृपालु है। वह गोविन्द, गोपाल अनाथों का नाथ है। वह समस्त जीव–जन्तुओं का पोषण करता है। वह आदिपुरुष एवं सृष्टि का रचयिता है। वह भक्तजनों के प्राणों का आधार है। जो कोई भी उसका जाप करता है, वह पवित्र–पावन हो जाता है। वह अपने मन का प्रेम ईश्वर की भक्ति पर केन्द्रित करता है। नानक का कथन है कि हे सर्वशक्तिमान भगवान ! हम गुणविहीन, नीच व मूर्ख तुम्हारी शरण में आए हैं॥ ७॥

सरब बैकुंठ मुकति मोख पाए ॥ एक निमख हरि के गुन गाए ॥ अनिक राज भोग बडिआई ॥ हरि के नाम की कथा मनि भाई ॥ बहु भोजन कापर संगीत ॥ रसना जपती हरि हरि नीत ॥ भली सु करनी सोभा धनवंत ॥ हिरदै बसे पूरन गुर मंत ॥ साधसंगि प्रभ देहु निवास ॥ सरब सूख नानक परगास ॥ ८ ॥ २० ॥

जिस जीव ने एक क्षण भर के लिए भी भगवान की महिमा—स्तुति की है, उसने तमाम स्वर्ग और मोक्ष प्राप्त कर लिए हैं। जिसके मन को हरि के नाम की कथा भली लगती है, वह अनेक राज्य, भोग—पदार्थ एवं उपलब्धियां प्राप्त करता है। जिसकी रसना सदैव हरि—परमेश्वर के नाम का जाप करती रहती है, वह अनेक प्रकार के भोजन, वस्त्र एवं संगीत का आनंद प्राप्त करता है। जिसके हृदय में पूर्ण गुरु का मंत्र बसता है, उसके कर्म शुभ हैं, उसी को शोभा मिलती है और वही धनवान है। हे ईश्वर ! अपने संतों की संगति में स्थान दीजिए। हे नानक ! सत्संगति में रहने से सर्व सुखों का आलोक हो जाता है॥ ८॥ २०॥

सलोकु ॥ सरगुन निरगुन निरंकार सुंन समाधी आपि ॥ आपन कीआ नानका आपे ही फिरि जापि ॥ १ ॥

श्लोक॥ निरंकार प्रभु स्वयं ही सर्गुण एवं निर्गुण है। वह स्वयं ही शून्य समाधि में रहता है। हे नानक ! निरंकार प्रभु ने स्वयं ही सृष्टि—रचना की है और फिर स्वयं ही (जीवों द्वारा) जाप करता है॥ १॥

असटपदी ॥ जब अकारु इहु कछु न द्रिसटेता ॥ पाप पुंन तब कह ते होता ॥ जब धारी आपन सुंन समाधि ॥ तब बैर बिरोध किसु संगि कमाति ॥ जब इस का बरनु चिहनु न जापत ॥ तब हरख सोग कहु किसहि बिआपत ॥ जब आपन आप आपि पारब्रहम ॥ तब मोह कहा किसु होवत भरम ॥ आपन खेलु आपि वरतीजा ॥ नानक करनैहारु न दूजा ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ जब इस सृष्टि का प्रसार कुछ भी दिखाई नहीं देता था, तब पाप अथवा पुण्य किस (प्राणी) से हो सकता था ? जब परमात्मा स्वयं शून्य समाधि में था, तब वैर—विरोध कोई किससे करता था। जब (दुनिया का) कोई वर्ण अथवा चिन्ह दिखाई नहीं देता था, बताओ तब हर्ष एवं शोक किसे स्पर्श कर सकते थे। जब पारब्रह्म स्वयं ही सब कुछ था, तब मोह कहाँ हो सकता था और दुविधा किसे हो सकती थी ? हे नानक ! (सृष्टि रूपी) अपनी लीला अकालपुरुष ने स्वयं ही रची है, इसके अलावा दूसरा कोई रचयिता नहीं॥ १॥

जब होवत प्रभ केवल धनी ॥ तब बंध मुकति कहु किस कउ गनी ॥ जब एकहि हरि अगम अपार ॥ तब नरक सुरग कहु कउन अउतार ॥ जब निरगुन प्रभ सहज सुभाइ ॥ तब सिव सकति कहहु कितु ठाइ ॥ जब आपहि आपि अपनी जोति धरै ॥ तब कवन निडरु कवन कत डरै ॥ आपन चलित आपि करनैहार ॥ नानक ठाकुर अगम अपार ॥ २ ॥

जब जगत् का स्वामी परमात्मा केवल स्वयं ही था, तब बताओ किसे बन्धनयुक्त एवं किसे बन्धनमुक्त गिना जाता था ? जब केवल अगम्य एवं अपार हरि ही था, तब बताओ, नरकों तथा स्वर्गों में आने वाले कौन से प्राणी थे। जब निर्गुण परमात्मा अपने सहज स्वभाव सहित था, तब बताओ शिव—शक्ति किस स्थान पर थे ? जब परमात्मा स्वयं ही अपनी ज्योति प्रज्वलित किए बैठा था, तब कौन निडर था और कौन किससे डरता था ? हे नानक ! परमात्मा अगम्य एवं अपार है। अपने कौतुक स्वयं ही करने वाला है॥ २॥

अबिनासी सुख आपन आसन ॥ तह जनम मरन कहु कहा बिनासन ॥ जब पूरन करता प्रभु सोइ ॥ तब जम की त्रास कहहु किसु होइ ॥ जब अबिगत अगोचर प्रभ एका ॥ तब चित्र गुपत किसु पूछत लेखा ॥ जब नाथ निरंजन अगोचर अगाधे ॥ तब कउन छुटे कउन बंधन बाधे ॥ आपन आप आप ही अचरजा ॥ नानक आपन रूप आप ही उपरजा ॥ ३ ॥

जब अमर परमात्मा अपने सुखदायक आसन पर विराजमान था, बताओ तब जन्म–मरण और विनाश (काल) कहाँ थे ? जब पूर्ण अकालपुरुष कर्त्तार ही था, बताओ तब मृत्यु का भय किसे हो सकता था ? जब केवल अलक्ष्य एवं अगोचर परमात्मा ही था, तब चित्रगुप्त किस से लेखा पूछते थे ? जब केवल निरंजन, अगोचर एवं अथाह नाथ (परमात्मा) ही था, तब कौन माया के बन्धन से मुक्त थे और कौन बन्धनों में फंसे हुए थे ? परमात्मा सबकुछ अपने आप से ही है, वह स्वयं ही अद्‌भुत है। हे नानक ! अपना रूप उसने स्वयं ही उत्पन्न किया है॥ ३॥

जह निरमल पुरखु पुरख पति होता ॥ तह बिनु मैलु कहहु किआ धोता ॥ जह निरंजन निरंकार निरबान ॥ तह कउन कउ मान कउन अभिमान ॥ जह सरूप केवल जगदीस ॥ तह छल छिद्र लगत कहु कीस ॥ जह जोति सरूपी जोति संगि समावै ॥ तह किसहि भूख कवनु त्रिपतावै ॥ करन करावन करनैहारु ॥ नानक करते का नाहि सुमारु ॥ ४ ॥

जहां निर्मल पुरुष ही पुरुषों का पति होता था और वहाँ कोई मैल नहीं थी, बताओ ! तब वहाँ स्वच्छ करने को क्या था ? जहाँ केवल निरंजन, निरंकार एवं निर्लिप्त परमात्मा ही था, वहाँ किसका मान एवं किसका अभिमान होता था ? जहाँ केवल सृष्टि के स्वामी जगदीश का ही रूप था, बताओ, वहाँ छल–कपट एवं पाप किसको दुःखी करते थे ? जहाँ ज्योति स्वरूप अपनी ज्योति से ही समाया हुआ था, तब वहाँ किसे भूख लगती थी और किसे तृप्ति आती थी ? सृष्टि का रचयिता करतार स्वयं ही सबकुछ करने वाला और प्राणियों से कराने वाला है। हे नानक ! दुनिया का निर्माण करने वाले परमात्मा का कोई अन्त नहीं है॥ ४॥

जब अपनी सोभा आपन संगि बनाई ॥ तब कवन माइ बाप मित्र सुत भाई ॥ जह सरब कला आपहि परबीन ॥ तह बेद कतेब कहा कोऊ चीन ॥ जब आपन आपु आपि उरि धारै ॥ तउ सगन अपसगन कहा बीचारै ॥ जह आपन ऊच आपन आपि नेरा ॥ तह कउन ठाकुरु कउनु कहीऐ चेरा ॥ बिसमन बिसम रहे बिसमाद ॥ नानक अपनी गति जानहु आपि ॥ ५ ॥

जब परमात्मा ने अपनी शोभा अपने साथ ही बनाई थी, तब माता–पिता, मित्र, पुत्र एवं भाई कौन थे ? जब वह स्वयं ही सर्वकला में पूरी तरह प्रवीण था, तब वेद तथा कतेब को कहाँ कोई पहचानता था। जब अकालपुरुष अपने आपको अपने हृदय में ही धारण किए रखता था, तब शगुन (शुभ) एवं अपशगुन (अशुभ लग्नों) का कौन सोचता था ? जहाँ परमात्मा स्वयं ही ऊँचा और स्वयं ही निकट था, वहाँ कौन स्वामी और कौन सेवक कहा जा सकता था ? मैं प्रभु के अद्‌भुत कौतुक देखकर चकित हो रहा हूँ। नानक का कथन है कि हे परमेश्वर ! अपनी गति तू स्वयं ही जानता है॥ ५॥

जह अछल अछेद अभेद समाइआ ॥ ऊहा किसहि बिआपत माइआ ॥ आपस कउ आपहि आदेसु ॥ तिहु गुण का नाही परवेसु ॥ जह एकहि एक एक भगवंता ॥ तह कउनु अचिंतु किसु लागै चिंता ॥ जह आपन आपु आपि पतीआरा ॥ तह कउनु कथै कउनु सुननैहारा ॥ बहु बेअंत ऊच ते ऊचा ॥ नानक आपस कउ आपहि पहूचा ॥ ६ ॥

जहाँ छलरहित, अछेद एवं अभेद परमेश्वर अपने आप में लीन था, वहाँ माया किस पर प्रभाव करती थी ? जब ईश्वर स्वयं अपने आपको प्रणाम करता था, तब (माया के) त्रिगुणों का (जगत् में) प्रवेश नहीं हुआ था। जहाँ केवल एक आप ही भगवान था, वहाँ कौन बेफिक्र था और किसे चिन्ता लगती थी ? जहाँ परमात्मा अपने आप से स्वयं संतुष्ट था, वहाँ कौन कहने वाला और कौन सुनने वाला था ? हे नानक ! परमात्मा बड़ा अनन्त एवं सर्वोपरि है, केवल वही अपने आप तक पहुँचता है॥ ६॥

जह आपि रचिओ परपंचु अकारु ॥ तिहु गुण महि कीनो बिसथारु ॥ पापु पुंनु तह भई कहावत ॥ कोऊ नरक कोऊ सुरग बंछावत ॥ आल जाल माइआ जंजाल ॥ हउमै मोह भरम भै भार ॥ दूख सूख मान अपमान ॥ अनिक प्रकार कीओ बख्यान ॥ आपन खेलु आपि करि देखै ॥ खेलु संकोचै तउ नानक एकै ॥ ७ ॥

जब परमात्मा ने स्वयं सृष्टि का परपंच रच दिया और माया के त्रिगुणों का प्रसार जगत् में कर दिया, तो यह बात प्रचलित हो गई कि यह पाप है अथवा यह पुण्य है। कोई नरक में जाने लगा और कोई स्वर्ग की अभिलाषा करने लगा। ईश्वर ने सांसारिक विवाद, धन—दौलत के जंजाल, अहंकार, मोह, दुविधा एवं भय के भार बना दिए। दुःख—सुख, मान—अपमान अनेक प्रकार से वर्णन होने प्रारम्भ हो गए। अपनी लीला प्रभु स्वयं ही रचता और देखता है। हे नानक ! जब परमात्मा अपनी लीला को समेट लेता है तो केवल वही रह जाता है॥ ७॥

जह अबिगतु भगतु तह आपि ॥ जह पसरै पासारु संत परतापि ॥ दुहू पाख का आपहि धनी ॥ उन की सोभा उनहू बनी ॥ आपहि कउतक करै अनद चोज ॥ आपहि रस भोगन निरजोग ॥ जिसु भावै तिसु आपन नाइ लावै ॥ जिसु भावै तिसु खेल खिलावै ॥ बेसुमार अथाह अगनत अतोलै ॥ जिउ बुलावहु तिउ नानक दास बोलै ॥ ८ ॥ २१ ॥

जहाँ पर अनन्त परमात्मा है, वहीं उसका भक्त है, जहाँ पर भक्त है, वहीं परमात्मा स्वयं है। जहाँ कहीं वह रचना का प्रसार करता है, वह उसके संत के प्रताप के लिए है। दोनों पक्षों का वह स्वयं ही मालिक है। उसकी शोभा केवल उसी को ही शोभा देती है। भगवान स्वयं ही लीला एवं खेल करता है। वह स्वयं ही आनंद भोगता है और फिर भी निर्लिप्त रहता है। जिस किसी को वह चाहता है, उसको अपने नाम के साथ लगा लेता है। जिस किसी को वह चाहता है, उसको संसार का खेल खिलाता है। नानक का कथन है कि हे अनन्त ! हे अ ाह ! हे गणना—रहित, अतुलनीय परमात्मा ! जैसे तुम बुलाते हो, वैसे ही यह दास बोलता है॥ ८॥ २१॥

सलोकु ॥ जीअ जंत के ठाकुरा आपे वरतणहार ॥ नानक एको पसरिआ दूजा कह द्रिसटार ॥ १ ॥

श्लोक॥ हे जीव—जन्तुओं के पालनहार परमेश्वर ! तू स्वयं ही सर्वव्यापक है। हे नानक ! एक ईश्वर ही सर्वत्र व्यापक है। इसके अलावा दूसरा कोई कहाँ दिखाई देता है॥ १॥

असटपदी ॥ आपि कथै आपि सुननैहारु ॥ आपहि एकु आपि बिसथारु ॥ जा तिसु भावै ता स्रिसटि उपाए ॥ आपनै भाणै लए समाए ॥ तुम ते भिंन नही किछु होइ ॥ आपन सूति सभु जगतु परोइ ॥ जा कउ प्रभ जीउ आपि बुझाए ॥ सचु नामु सोई जनु पाए ॥ सो समदरसी तत का बेता ॥ नानक सगल स्रिसटि का जेता ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ वह स्वयं ही वक्ता है और स्वयं ही श्रोता है। वह स्वयं ही एक है और स्वयं ही उसका विस्तार है। जब उसे भला लगता है तो वह सृष्टि की रचना कर देता है। अपनी इच्छानुसार वह इसे स्वयं में लीन कर देता है। हे परमात्मा ! तुम्हारे बिना कुछ भी किया नहीं जा सकता। तूने समूचे जगत्

को एक सूत्र में पिरोया हुआ है। जिसे पूज्य परमेश्वर स्वयं ज्ञान देता है, वह मनुष्य सत्यनाम प्राप्त कर लेता है। वह समदर्शी तथा तत्वज्ञाता है। हे नानक ! वह समूचे जगत् को विजयी करने वाला है।। १।।

जीअ जंत्र सभ ता कै हाथ ॥ दीन दइआल अनाथ को नाथु ॥ जिसु राखै तिसु कोइ न मारै ॥ सो मूआ जिसु मनहु बिसारै ॥ तिसु तजि अवर कहा को जाइ ॥ सभ सिरि एकु निरंजन राइ ॥ जीअ की जुगति जा कै सभ हाथि ॥ अंतरि बाहरि जानहु साथि ॥ गुन निधान बेअंत अपार ॥ नानक दास सदा बलिहार ॥ २ ॥

समस्त जीव–जन्तु उस परमात्मा के वश में हैं। वह दीनदयालु एवं अनाथों का नाथ है। जिसकी परमात्मा रक्षा करता है, उसे कोई भी मार नहीं सकता। जिसे वह अपने हृदय से विस्मृत कर देता है, वह पूर्व ही मृत है। उसे छोड़कर कोई मनुष्य दूसरे के पास क्यों जाए ? सबके सिर पर एक निरंजन प्रभु है। जिसके वश में प्राणी की समस्त युक्तियां हैं, समझ ले कि वह भीतर एवं बाहर तेरे साथ है। दास नानक सदैव उस गुणों के भण्डार, अनंत एवं अपार परमात्मा पर बलिहारी जाता है।। २।।

पूरन पूरि रहे दइआल ॥ सभ ऊपरि होवत किरपाल ॥ अपने करतब जानै आपि ॥ अंतरजामी रहिओ बिआपि ॥ प्रतिपालै जीअन बहु भाति ॥ जो जो रचिओ सु तिसहि धिआति ॥ जिसु भावै तिसु लए मिलाइ ॥ भगति करहि हरि के गुण गाइ ॥ मन अंतरि बिस्वासु करि मानिआ ॥ करनहारु नानक इकु जानिआ ॥ ३ ॥

दयालु परमात्मा हर जगह पर मौजूद है और समस्त जीवों पर कृपालु होता है। अपनी लीला वह स्वयं ही जानता है। अन्तर्यामी प्रभु सबमें समाया हुआ है। वह अनेक विधियों से जीवों का पोषण करता है। जिस किसी की भी उसने उत्पत्ति की है, वह उसका ध्यान करता रहता है। जो कोई भी भगवान को भला लगता है, उसे वह अपने साथ मिला लेता है। ऐसा भक्त हरि–प्रभु की भक्ति एवं गुणस्तुति करता है। हे नानक ! जिसने मन में श्रद्धा धारण करके भगवान को माना है, उसने एक सृष्टिकर्त्ता प्रभु को ही जाना है।। ३।।

जनु लागा हरि एकै नाइ ॥ तिस की आस न बिरथी जाइ ॥ सेवक कउ सेवा बनि आई ॥ हुकमु बूझि परम पदु पाई ॥ इस ते ऊपरि नही बीचारु ॥ जा कै मनि बसिआ निरंकारु ॥ बंधन तोरि भए निरवैर ॥ अनदिनु पूजहि गुर के पैर ॥ इह लोक सुखीए परलोक सुहेले ॥ नानक हरि प्रभि आपहि मेले ॥ ४ ॥

जो भक्त भगवान के एक नाम में लगा है, उसकी आशा व्यर्थ नहीं जाती। सेवक को सेवा करनी ही शोभा देती है। प्रभु के हुक्म का पालन करके वह परम पद (मोक्ष) प्राप्त कर लेता है। जिसके हृदय में निरंकार प्रभु बसता है, उसे इससे ऊपर और कोई भी विचार नहीं आता। वह अपने बन्धन तोड़कर निर्वैर हो जाता है और दिन–रात गुरु के चरणों की पूजा–अर्चना करता है। वह इहलोक में सुखी एवं परलोक में आनंद–प्रसन्न होता है। हे नानक ! हरि–प्रभु उसे अपने साथ मिला लेता है।। ४।।

साधसंगि मिलि करहु अनंद ॥ गुन गावहु प्रभ परमानंद ॥ राम नाम ततु करहु बीचारु ॥ द्रुलभ देह का करहु उधारु ॥ अंम्रित बचन हरि के गुन गाउ ॥ प्रान तरन का इहै सुआउ ॥ आठ पहर प्रभ पेखहु नेरा ॥ मिटै अगिआनु बिनसै अंधेरा ॥ सुनि उपदेसु हिरदै बसावहु ॥ मन इछे नानक फल पावहु ॥ ५ ॥

साधसंगत में मिलकर आनंद करो और परमानन्द प्रभु की गुणस्तुति करते रहो। राम-नाम के तत्व का विचार करो। इस तरह दुर्लभ मानव शरीर का कल्याण कर लो। परमेश्वर की महिमा के अमृत वचन गायन करो। अपनी आत्मा का कल्याण करने की यही विधि है। आठ पहर प्रभु को निकट देखो। (इससे) अज्ञान मिट जाएगा और अन्धकार का नाश हो जाएगा। गुरु का उपदेश सुनकर इसे अपने हृदय में बसाओ। हे नानक! इस तरह तुझे मनोवांछित फल प्राप्त होगा॥ ५॥

हलतु पलतु दुइ लेहु सवारि ॥ राम नामु अंतरि उरि धारि ॥ पूरे गुर की पूरी दीखिआ ॥ जिसु मनि बसै तिसु साचु परीखिआ ॥ मनि तनि नामु जपहु लिव लाइ ॥ दूखु दरदु मन ते भउ जाइ ॥ सचु वापारु करहु वापारी ॥ दरगह निबहै खेप तुमारी ॥ एका टेक रखहु मन माहि ॥ नानक बहुरि न आवहि जाहि ॥ ६ ॥

राम के नाम को अपने हृदय में बसाकर लोक एवं परलोक दोनों को संवार लो। पूर्ण गुरु का पूर्ण उपदेश है। जिसके हृदय में यह बसता है, वह सत्य का निरीक्षण कर लेता है। अपने मन एवं तन से वृत्ति लगाकर प्रभु के नाम का जाप करो। इस तरह दुःख-दर्द एवं भय मन से निवृत्त हो जाएँगे। हे व्यापारी! तू सच्चा व्यापार कर। तेरा सौदा ईश्वर के दरबार में सुरक्षित पहुँच जाएगा। एक ईश्वर का सहारा अपने हृदय में कायम कर। हे नानक! तेरा आवागमन (जन्म-मरण का चक्र) पुनः नहीं होगा॥ ६॥

तिस ते दूरि कहा को जाइ ॥ उबरै राखनहारु धिआइ ॥ निरभउ जपै सगल भउ मिटै ॥ प्रभ किरपा ते प्राणी छुटै ॥ जिसु प्रभु राखै तिसु नाही दूख ॥ नामु जपत मनि होवत सूख ॥ चिंता जाइ मिटै अहंकारु ॥ तिसु जन कउ कोइ न पहुचनहारु ॥ सिर ऊपरि ठाढा गुरु सूरा ॥ नानक ता के कारज पूरा ॥ ७ ॥

उससे दूर कोई मनुष्य कहाँ जा सकता है? रक्षक परमात्मा का चिन्तन करने से मनुष्य बच जाता है। उस निर्भय प्रभु का जाप करने से सब भय मिट जाते हैं। प्रभु की कृपा से जीव की मुक्ति हो जाती है। जिसकी ईश्वर रक्षा करता है, उसे कोई दुःख नहीं लगता। नाम की आराधना करने से मन को सुख प्राप्त हो जाता है। उससे चिन्ता दूर हो जाती है और अहंकार मिट जाता है। उस प्रभु के भक्त की कोई समानता नहीं कर सकता। हे नानक! जिसके सिर पर शूरवीर गुरु खड़ा हो, उसके तमाम कार्य सम्पूर्ण हो जाते हैं॥ ७॥

मति पूरी अंम्रितु जा की द्रिसटि ॥ दरसनु पेखत उधरत स्रिसटि ॥ चरन कमल जा के अनूप ॥ सफल दरसनु सुंदर हरि रूप ॥ धंनु सेवा सेवकु परवानु ॥ अंतरजामी पुरखु प्रधानु ॥ जिसु मनि बसै सु होत निहालु ॥ ता कै निकटि न आवत कालु ॥ अमर भए अमरा पदु पाइआ ॥ साधसंगि नानक हरि धिआइआ ॥ ८ ॥ २२ ॥

जिस (गुरु) की बुद्धि पूर्ण है और जिसकी दृष्टि से अमृत बरसता रहता है, उनके दर्शन करके दुनिया का कल्याण हो जाता है। उनके चरण कमल अनूप हैं। उनके दर्शन सफल हैं और परमेश्वर जैसा अति सुन्दर उनका रूप है। उनकी सेवा धन्य है एवं उनका सेवक स्वीकृत है। वह (गुरु) अन्तर्यामी एवं प्रधान पुरुष है। जिसके हृदय में गुरु निवास करते हैं, वह कृतार्थ हो जाता है। काल (मृत्यु) उसके निकट नहीं आता। हे नानक! जिन्होंने साधुओं की संगति में भगवान का ध्यान किया है, वे अमर हो गए हैं और अमरपद प्राप्त कर लिया है॥ ८॥ २२॥

सलोकु ॥ गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु ॥ हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु ॥ १ ॥

श्लोक॥ गुरु ने ज्ञान रूपी सुरमा प्रदान किया है, जिससे अज्ञान के अंधेरे का नाश हो गया है। हे नानक! भगवान की कृपा से संत–गुरु मिला है, जिससे मन में ज्ञान का प्रकाश हो गया है॥ १॥

असटपदी ॥ संतसंगि अंतरि प्रभु डीठा ॥ नामु प्रभू का लागा मीठा ॥ सगल समिग्री एकसु घट माहि ॥ अनिक रंग नाना द्रिसटाहि ॥ नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु ॥ देही महि इस का बिस्रामु ॥ सुंन समाधि अनहत तह नाद ॥ कहनु न जाई अचरज बिसमाद ॥ तिनि देखिआ जिसु आपि दिखाए ॥ नानक तिसु जन सोझी पाए ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ संतों की संगति में अन्तर्मन में ही प्रभु के दर्शन कर लिए हैं। प्रभु का नाम मुझे मधुर मीठा लगा है। समस्त सृष्टि एक परमात्मा के स्वरूप में है, जिसके विभिन्न प्रकार के अनेक रंग दिखाई दे रहे हैं। प्रभु का अमृत नाम नवनिधि है। मानव शरीर में ही इसका निवास है। वहाँ शून्य समाधि में अनहद शब्द होता है। इस आश्चर्यचकित एवं विस्माद का वर्णन नहीं किया जा सकता। जिसको ईश्वर स्वयं दिखाता है, वही इसको देखता है। हे नानक! ऐसा पुरुष ज्ञान प्राप्त कर लेता है॥ १॥

सो अंतरि सो बाहरि अनंत ॥ घटि घटि बिआपि रहिआ भगवंत ॥ धरनि माहि आकास पइआल ॥ सरब लोक पूरन प्रतिपाल ॥ बनि तिनि परबति है पारब्रहमु ॥ जैसी आगिआ तैसा करमु ॥ पउण पाणी बैसंतर माहि ॥ चारि कुंट दह दिसे समाहि ॥ तिस ते भिंन नही को ठाउ ॥ गुर प्रसादि नानक सुखु पाउ ॥ २ ॥

वह अनन्त परमात्मा अन्तर्मन में भी है और बाहर भी विद्यमान है। भगवान कण–कण में मौजूद है। वह धरती, गगन एवं पाताल में मौजूद है। समस्त लोकों का वह पूर्ण पालनहार है। पारब्रह्म–प्रभु वनों, तृणों एवं पर्वतों में व्यापक है। जैसी उसकी आज्ञा होती है, वैसे ही जीव के कर्म हैं। भगवान पवन, जल एवं अग्नि में विद्यमान है। वह चारों तरफ और दसों दिशाओं में समाया हुआ है। उससे भिन्न कोई स्थान नहीं। गुरु की कृपा से नानक ने सुख पा लिया है॥ २॥

बेद पुरान सिंम्रिति महि देखु ॥ ससीअर सूर नख्यत्र महि एकु ॥ बाणी प्रभ की सभु को बोलै ॥ आपि अडोलु न कबहू डोलै ॥ सरब कला करि खेलै खेल ॥ मोलि न पाईऐ गुणह अमोल ॥ सरब जोति महि जा की जोति ॥ धारि रहिओ सुआमी ओति पोति ॥ गुर परसादि भरम का नासु ॥ नानक तिन महि एहु बिसासु ॥ ३ ॥

उस भगवान को वेद, पुराण एवं स्मृतियों में देखो। चन्द्रमा, सूर्य एवं तारों में वही एक ईश्वर है। प्रत्येक जीव प्रभु की वाणी बोलता है। वह अटल है और कभी विचलित नहीं होता। सर्व कला रचकर (सृष्टि का) खेल खेलता है। उसका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता, (क्योंकि) उसके गुण अमूल्य हैं। ईश्वर की ज्योति समस्त ज्योतियों में प्रज्वलित है। प्रभु ने संसार का ताना–बाना अपने वश में किया हुआ है। हे नानक! गुरु की कृपा से जिसके भ्रम का नाश हो जाता है, उसके भीतर यह दृढ़ विश्वास बन जाता है॥ ३॥

संत जना का पेखनु सभु ब्रहम ॥ संत जना कै हिरदै सभि धरम ॥ संत जना सुनहि सुभ बचन ॥ सरब बिआपी राम संगि रचन ॥ जिनि जाता तिस की इह रहत ॥ सति बचन साधू सभि कहत ॥ जो

जो होइ सोई सुखु मानै ॥ करन करावनहारु प्रभु जानै ॥ अंतरि बसे बाहरि भी अही ॥ नानक दरसनु देखि सभ मोही ॥ ४ ॥

संतजन हर जगह पर भगवान को ही देखते हैं। संतजनों के मन में सब धर्म ही होता है। संतजन शुभ वचन सुनते हैं। वे सर्वव्यापक राम में लीन रहते हैं। जिस जिस संत–धर्मात्मा ने (ईश्वर को) समझ लिया है, उसका जीवन–आचरण ही यह बन जाता है। साधु सदैव सत्य वचन करता है। जो कुछ भी होता है, वह इसे सुख मानता है। वह जानता है कि प्रभु समस्त कार्य करने वाला एवं कराने वाला है। संतजनों हेतु ईश्वर भीतर–बाहर सर्वत्र बसता है। हे नानक ! उसके दर्शन करके हरेक व्यक्ति मुग्ध हो जाता है॥ ४॥

आपि सति कीआ सभु सति ॥ तिसु प्रभ ते सगली उतपति ॥ तिसु भावै ता करे बिसथारु ॥ तिसु भावै ता एकंकारु ॥ अनिक कला लखी नह जाइ ॥ जिसु भावै तिसु लए मिलाइ ॥ कवन निकटि कवन कहीऐ दूरि ॥ आपे आपि आप भरपूरि ॥ अंतरगति जिसु आपि जनाए ॥ नानक तिसु जन आपि बुझाए ॥ ५ ॥

ईश्वर सत्य है और उसकी सृष्टि–रचना भी सत्य है। उस परमेश्वर से समूचा जगत् उत्पन्न हुआ है। जब उसे भला लगता है तो वह सृष्टि का प्रसार कर देता है। यदि एक ईश्वर को उपयुक्त लगे तो वह स्वयं ही एक रूप हो जाता है। उसकी अनेक कलाएँ (शक्तियां) हैं, जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता। जिस किसी को वह चाहता है, उसे अपने साथ मिला लेता है। वह पारब्रह्म किसी से दूर एवं किसी से निकट कहा जा सकता है? लेकिन ईश्वर स्वयं ही सर्वव्यापक है। हे नानक! वह उस मनुष्य को (अपनी सर्वव्यापकता की) सूझ देता है, जिसे (ईश्वर) स्वयं भीतरी उच्च अवस्था सुझा देता है॥ ५॥

सरब भूत आपि वरतारा ॥ सरब नैन आपि पेखनहारा ॥ सगल समग्री जा का तना ॥ आपन जसु आप ही सुना ॥ आवन जानु इकु खेलु बनाइआ ॥ आगिआकारी कीनी माइआ ॥ सभ कै मधि अलिपतो रहै ॥ जो किछु कहणा सु आपे कहै ॥ आगिआ आवै आगिआ जाइ ॥ नानक जा भावै ता लए समाइ ॥ ६ ॥

सारी दुनिया के लोगों में परमात्मा स्वयं ही मौजूद है। सर्व नयनों द्वारा वह स्वयं ही देख रहा है। यह सारी सृष्टि–रचना उसका शरीर है। वह अपनी महिमा स्वयं ही सुनता है। लोगों का आवागमन (जन्म–मरण) ईश्वर ने एक खेल रचा है। माया को उसने अपना आज्ञाकारी बनाया हुआ है। सबके भीतर होता हुआ भी प्रभु निर्लिप्त रहता है। जो कुछ कहना होता है, वह स्वयं ही कहता है। उसकी आज्ञानुसार प्राणी (दुनिया में) जन्म लेता है और आज्ञानुसार प्राण त्याग देता है। हे नानक ! जब उसे लुभाता है तो वह प्राणी को अपने साथ मिला लेता है॥ ६॥

इस ते होइ सु नाही बुरा ॥ ओरै कहहु किनै कछु करा ॥ आपि भला करतूति अति नीकी ॥ आपे जानै अपने जी की ॥ आपि साचु धारी सभ साचु ॥ ओति पोति आपन संगि राचु ॥ ता की गति मिति कही न जाइ ॥ दूसर होइ त सोझी पाइ ॥ तिस का कीआ सभु परवानु ॥ गुर प्रसादि नानक इहु जानु ॥ ७ ॥

भगवान द्वारा जो कुछ भी होता है, दुनिया के लिए बुरा नहीं होता। कहो, उस भगवान के अलावा कभी किसी ने कुछ किया है? ईश्वर स्वयं भला है और सबसे भले उसके कर्म हैं। अपने हृदय की

बात वह स्वयं ही जानता है। वह स्वयं सत्य है और उसकी सृष्टि–रचना भी सत्य है। ताने–बाने की भाँति उसने स्वयं सृष्टि को अपने साथ मिलाया हुआ है। उसकी गति एवं विस्तार व्यक्त नहीं किए जा सकते। यदि कोई दूसरा उस समान होता तो वह उसको समझ सकता। हे नानक ! गुरु की कृपा से यह तथ्य समझो कि ईश्वर का किया हुआ लोगों को स्वीकार करना पड़ता है॥ ७॥

जो जानै तिसु सदा सुखु होइ ॥ आपि मिलाइ लए प्रभु सोइ ॥ ओहु धनवंतु कुलवंतु पतिवंतु ॥ जीवन मुकति जिसु रिदै भगवंतु ॥ धंनु धंनु धंनु जनु आइआ ॥ जिसु प्रसादि सभु जगतु तराइआ ॥ जन आवन का इहै सुआउ ॥ जन कै संगि चिति आवै नाउ ॥ आपि मुकतु मुकतु करै संसारु ॥ नानक तिसु जन कउ सदा नमसकारु ॥ ८ ॥ २३ ॥

जो व्यक्ति ईश्वर को समझता है, उसे सदैव सुख मिलता है। वह ईश्वर उसे अपने साथ मिला लेता है। जिस जीव के हृदय में भगवान बसता है, वह जीवित ही मुक्ति पा लेता है। वह धनवान, कुलवान एवं मान–प्रतिष्ठा वाला बन जाता है। उस महापुरुष का दुनिया में जन्म लेना धन्य–धन्य है, जिसकी कृपा से सारे जगत् का उद्धार हो जाता है। महापुरुष के आगमन का यही मनोरथ है कि उसकी संगति में रहकर दूसरे प्राणियों को ईश्वर का नाम–स्मरण आता है। ऐसा महापुरुष स्वयं मुक्त होकर संसार को भी मुक्त करा देता है। हे नानक ! ऐसे महापुरुष को हमारा सदैव प्रणाम है॥ ८॥२३॥

सलोकु ॥ पूरा प्रभु आराधिआ पूरा जा का नाउ ॥ नानक पूरा पाइआ पूरे के गुन गाउ ॥ १ ॥

श्लोक॥ उस पूर्ण नाम वाले पूर्ण प्रभु की आराधना की है। हे नानक! मैंने पूर्ण प्रभु को पा लिया है, तुम भी पूर्ण प्रभु की महिमा गाओ॥ १॥

असटपदी ॥ पूरे गुर का सुनि उपदेसु ॥ पारब्रहमु निकटि करि पेखु ॥ सासि सासि सिमरहु गोबिंद ॥ मन अंतर की उतरै चिंद ॥ आस अनित तिआगहु तरंग ॥ संत जना की धूरि मन मंग ॥ आपु छोडि बेनती करहु ॥ साधसंगि अगनि सागरु तरहु ॥ हरि धन के भरि लेहु भंडार ॥ नानक गुर पूरे नमसकार ॥ १ ॥

अष्टपदी॥ पूर्ण गुरु का उपदेश सुनो और पारब्रह्म को निकट समझ कर देखो। अपनी प्रत्येक सांस से गोबिन्द का सिमरन करो, इससे तेरे मन के भीतर की चिन्ता मिट जाएगी। तृष्णाओं की तरंगों को त्याग कर संतजनों की चरण धूलि की मन से याचना करो। अपना अहंकार त्याग कर प्रार्थना करो। सत्संगति में रहकर (विकारों की) अग्नि के सागर से पार हो जाओ। हे नानक ! परमेश्वर के नाम–धन से अपने खजाने भरपूर कर ले एवं पूर्ण गुरु को प्रणाम करो॥ १॥

खेम कुसल सहज आनंद ॥ साधसंगि भजु परमानंद ॥ नरक निवारि उधारहु जीउ ॥ गुन गोबिंद अंम्रित रसु पीउ ॥ चिति चितवहु नाराइण एक ॥ एक रूप जा के रंग अनेक ॥ गोपाल दामोदर दीन दइआल ॥ दुख भंजन पूरन किरपाल ॥ सिमरि सिमरि नामु बारं बार ॥ नानक जीअ का इहै अधार ॥ २ ॥

संतों की संगति में परमानंद प्रभु का भजन करो, इससे मुक्ति, प्रसन्नता एवं सहज आनंद प्राप्त होंगे। गोबिन्द की गुणस्तुति करके नाम–अमृत का रसपान करो, इससे नरक में जाने से बच जाओगे और आत्मा पार हो जाएगी। अपने मन में एक नारायण का ध्यान करो, जिसका रूप एक एवं रंग अनेक हैं। वह गोपाल, दामोदर, दीनदयालु, दुःखनाशक एवं पूर्ण कृपालु है। हे नानक ! बार–बार उसके नाम का सिमरन करते रहो चूंकि जीव का एकमात्र यही सहारा है॥ २॥

उतम सलोक साध के बचन ॥ अमुलीक लाल एहि रतन ॥ सुनत कमावत होत उधार ॥ आपि तरै लोकह निसतार ॥ सफल जीवनु सफलु ता का संगु ॥ जा कै मनि लागा हरि रंगु ॥ जै जै सबदु अनाहदु वाजै ॥ सुनि सुनि अनद करे प्रभु गाजै ॥ प्रगटे गुपाल महांत कै माथे ॥ नानक उधरे तिन कै साथे ॥ ३ ॥

साधु के वचन उत्तम श्लोक हैं। यही अमूल्य रत्न एवं जवाहर है। जो व्यक्ति इन वचनों को सुनता और पालन करता है, उसका भवसागर से उद्धार हो जाता है। वह स्वयं भवसागर से पार हो जाता है और दूसरे लोगों का भी कल्याण कर देता है। जिसके हृदय में ईश्वर का प्रेम बन जाता है, उसका जीवन सफल हो जाता है और उसकी संगति दूसरों की कामनाएँ पूर्ण करती हैं। उसकी जय, जय है, जिसके लिए अनहद ध्वनि होती है। जिसे सुनकर वह हर्षित होता है और प्रभु की महिमा की मुनादी करता है। ऐसे महापुरुषों के मस्तक पर परमात्मा प्रगट होता है। हे नानक ! ऐसे महापुरुष की संगति करने से बहुत सारे लोगों का उद्धार हो जाता है॥ ३॥

सरनि जोगु सुनि सरनी आए ॥ करि किरपा प्रभ आप मिलाए ॥ मिटि गए बैर भए सभ रेन ॥ अंम्रित नामु साधसंगि लैन ॥ सुप्रसंन भए गुरदेव ॥ पूरन होई सेवक की सेव ॥ आल जंजाल बिकार ते रहते ॥ राम नाम सुनि रसना कहते ॥ करि प्रसादु दइआ प्रभि धारी ॥ नानक निबही खेप हमारी ॥ ४ ॥

हे भगवान ! यह सुनकर कि तू जीवों को शरण देने में समर्थ है, अतः हम तेरी शरण में आए हैं। प्रभु ने दया करके हमें अपने साथ मिला लिया है। अब हमारे, वैर मिट गए हैं और हम सबकी चरण–धूलि हो गए हैं। साधसंगत से नाम–अमृत लेने वाले हुए हैं। गुरुदेव हम पर सुप्रसन्न हो गए हैं और सेवक की सेवा सफल हो गई है। राम का नाम सुनकर और अपनी जिह्वा से इसको उच्चरित करने से हम सांसारिक धंधों एवं विकारों से बच गए हैं। हे नानक ! भगवान ने कृपा करके (हम पर) यह दया की है और हमारा किया हुआ परिश्रम प्रभु–दरबार में सफल हो गया है॥ ४॥

प्रभ की उसतति करहु संत मीत ॥ सावधान एकागर चीत ॥ सुखमनी सहज गोबिंद गुन नाम ॥ जिसु मनि बसै सु होत निधान ॥ सरब इछा ता की पूरन होइ ॥ प्रधान पुरखु प्रगटु सभ लोइ ॥ सभ ते ऊच पाए असथानु ॥ बहुरि न होवै आवन जानु ॥ हरि धनु खाटि चलै जनु सोइ ॥ नानक जिसहि परापति होइ ॥ ५ ॥

हे संत मित्रो ! सावधान एवं एकाग्रचित होकर प्रभु की महिमा–स्तुति करो। सुखमनी में सहज सुख एवं गोबिन्द की महिमा एवं नाम है। जिसके मन में यह बसती है, वह धनवान बन जाता है। उसकी तमाम मनोकामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। वह प्रधान पुरुष बन जाता है और सारी दुनिया में लोकप्रिय हो जाता है। वह सर्वोच्च निवास पा लेता है। उसे पुनः जीवन–मृत्यु का चक्र नहीं पड़ता। हे नानक ! जिस इन्सान को (सुखमनी) यह देन (ईश्वर से) मिलती है, वह मनुष्य हरि नामरूपी धन प्राप्त करके दुनिया से चला जाता है॥ ५॥

खेम सांति रिधि नव निधि ॥ बुधि गिआनु सरब तह सिधि ॥ बिदिआ तपु जोगु प्रभ धिआनु ॥ गिआनु स्रेसट ऊतम इसनानु ॥ चारि पदारथ कमल प्रगास ॥ सभ कै मधि सगल ते उदास ॥ सुंदरु चतुरु तत का बेता ॥ समदरसी एक द्रिसटेता ॥ इह फल तिसु जन कै मुखि भने ॥ गुर नानक नाम बचन मनि सुने ॥ ६ ॥

सहज सुख, शांति, रिद्धियां, नवनिधियां, बुद्धि, ज्ञान एवं सर्व सिद्धियाँ उस प्राणी को मिलती हैं; विद्या, तपस्या, योग, प्रभु का ध्यान, श्रेष्ठ ज्ञान, उत्तम स्नान, चारों पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष), हृदय कंवल का खिलना, सब में रहते हुए सबसे तटस्थ रहना, सुन्दरता, बुद्धिमत्ता एवं तत्ववेत्ता, समदर्शी एवं एक दृष्टि से ईश्वर को देखना, हे नानक ! ये तमाम फल उसे मिलते हैं, जो अपने मुँह से (सुखमनी) सुखों की मणि का जाप करता है और गुरु के वचन तथा प्रभु के नाम की महिमा मन लगाकर सुनता है॥ ६॥

इहु निधानु जपै मनि कोइ ॥ सभ जुग महि ता की गति होइ ॥ गुण गोबिंद नाम धुनि बाणी ॥ सिम्रिति सासत्र बेद बखाणी ॥ सगल मतांत केवल हरि नाम॥ गोबिंद भगत कै मनि बिस्राम ॥ कोटि अप्राध साधसंगि मिटै ॥ संत क्रिपा ते जम ते छुटै ॥ जा कै मसतकि करम प्रभि पाए ॥ साध सरणि नानक ते आए ॥ ७ ॥

जो भी जीव इस गुणों के भण्डार का हृदय से जाप करता है, उसकी समस्त युगों में गति हो जाती है। यह वाणी गोबिन्द का यश एवं नाम की ध्वनि है, जिस बारे स्मृतियाँ, शास्त्र एवं वेद वर्णन करते हैं। समस्त धर्मों का सारांश भगवान का नाम ही है। इस नाम का निवास गोबिन्द के भक्त के हृदय में होता है। करोड़ों ही अपराध संतों की संगति करने से नाश हो जाते हैं। संतों की कृपा से जीव यमों से छूट जाता है। हे नानक ! जिस व्यक्ति के मस्तक पर ईश्वर ने भाग्य लिख दिया है, वही व्यक्ति साधु की शरण में आता है॥ ७॥

जिसु मनि बसै सुनै लाइ प्रीति ॥ तिसु जन आवै हरि प्रभु चीति ॥ जनम मरन ता का दूखु निवारै ॥ दुलभ देह ततकाल उधारै ॥ निरमल सोभा अंम्रित ता की बानी ॥ एकु नामु मन माहि समानी ॥ दूख रोग बिनसे भै भरम ॥ साध नाम निरमल ता के करम ॥ सभ ते ऊच ता की सोभा बनी ॥ नानक इह गुणि नामु सुखमनी ॥ ८ ॥ २४ ॥

जिस पुरुष के हृदय में सुखमनी निवास करती है और जो इसे प्रेमपूर्वक सुनता है, वही हरि–प्रभु को स्मरण करता है। उसके जन्म–मरण के दुःख नाश हो जाते हैं। वह इस दुर्लभ शरीर को तत्काल विकारों से बचा लेता है। उसकी शोभा निर्मल है एवं उसकी वाणी अमृत रूप होती है। एक ईश्वर का नाम ही उसके मन में समाया रहता है। दुःख, रोग, भय एवं दुविधा उससे दूर हो जाते हैं। उसका नाम साधु हो जाता है और उसके कर्म पवित्र होते हैं। उसकी शोभा सर्वोच्च हो जाती है। हे नानक ! इन गुणों के कारण (ईश्वर की) इस वाणी का नाम सुखमनी है॥ ८॥ २४॥

थिती गउड़ी महला ५ ॥ सलोकु ॥ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

जलि थलि महीअलि पूरिआ सुआमी सिरजनहारु ॥ अनिक भांति होइ पसरिआ नानक एकंकारु ॥ १ ॥

श्लोक॥ इस विश्व का रचयिता परमात्मा जल, धरती एवं गगन में सर्वव्यापक है। हे नानक ! सबका मालिक एक प्रभु अनेक प्रकार से सारे विश्व में फैला हुआ है॥ १॥

पउड़ी ॥ एकम एकंकारु प्रभु करउ बंदना धिआइ ॥ गुण गोबिंद गुपाल प्रभ सरनि परउ हरि राइ ॥ ता की आस कलिआण सुख जा ते सभु कछु होइ ॥ चारि कुंट दह दिसि भ्रमिओ तिसु बिनु अवरु न कोइ ॥ बेद पुरान सिम्रिति सुने बहु बिधि करउ बीचारु ॥ पतित उधारन भै हरन सुख सागर

निरंकार ॥ दाता भुगता देनहारु तिसु बिनु अवरु न जाइ ॥ जो चाहहि सोई मिलै नानक हरि गुन गाइ ॥ १ ॥ गोबिंद जसु गाईऐ हरि नीत ॥ मिलि भजीऐ साधसंगि मेरे मीत ॥ १ ॥ रहाउ ॥

पउड़ी॥ एकम— ईश्वर एक है और उस एक प्रभु की ही वंदना करो और उसे ही स्मरण करना चाहिए। उस गोबिन्द गोपाल का यशोगान करो एवं अकाल पुरुष की शरण लो। मोक्ष एवं सुख पाने के लिए उसमें अपनी आशा रखो, जिसके हुक्म से सबकुछ होता है। मैंने चारों कोनों एवं दसों दिशाओं में भटक कर देख लिया है, उस (प्रभु—परमश्वेर) के अलावा दूसरा कोई (रक्षक) नहीं है। (हे जीव!) वेद, पुराण एवं स्मृतियां सुनकर मैंने उन पर बहुत विधियों से विचार किया है। केवल निरंकार परमात्मा ही पापियों का उद्धार करने वाला, भयनाशक एवं सुखों का सागर है। प्रभु ही दाता, भोगनहार एवं देन देने वाला है। उस (प्रभु) के अलावा दूसरा कोई नहीं। हे नानक! परमात्मा की गुणस्तुति करने से मनुष्य को सब कुछ मिल जाता है, जिसकी वह अभिलाषा करता है॥ १॥ हे मेरे मित्र! नित्य ही गोबिन्द की गुणस्तुति करनी चाहिए, साधसंगति में मिलकर उस भगवान का भजन करना चाहिए॥ १॥ रहाउ॥

सलोकु ॥ करउ बंदना अनिक वार सरनि परउ हरि राइ ॥ भ्रमु कटीऐ नानक साधसंगि दुतीआ भाउ मिटाइ ॥ २ ॥

श्लोक॥ ईश्वर को अनेक बार प्रणाम कर और उस प्रभु की शरण में आओ। हे नानक! साधसंगत करने से दुनिया का मोह व द्वैतवाद मिट जाता है और तमाम भ्रम नाश हो जाते हैं॥ २॥

पउड़ी ॥ दुतीआ दुरमति दूरि करि गुर सेवा करि नीत ॥ राम रतनु मनि तनि बसै तजि कामु क्रोधु लोभु मीत ॥ मरणु मिटै जीवनु मिलै बिनसहि सगल कलेस ॥ आपु तजहु गोबिंद भजहु भाउ भगति परवेस ॥ लाभु मिलै तोटा हिरै हरि दरगह पतिवंत ॥ राम नाम धनु संचवै साच साह भगवंत ॥ ऊठत बैठत हरि भजहु साधू संगि परीति ॥ नानक दुरमति छुटि गई पारब्रहम बसे चीति ॥ २ ॥

पउड़ी॥ द्वितीय— अपनी मंदबुद्धि को त्याग कर सदैव ही गुरु की सेवा करनी चाहिए। हे मित्र! काम, क्रोध एवं लालच त्याग देने से राम नाम रूपी रत्न तेरी आत्मा एवं शरीर में आ बसेगा। तेरा मरण मिट जाएगा और जीवन मिल जाएगा तथा तेरे तमाम दुःख—क्लेश नाश हो जाएँगे। अपना अहंकार त्यागकर गोबिन्द का भजन करो, प्रभु की भक्ति मन में प्रवेश कर जाएगी। तुझे लाभ प्राप्त होगा और कोई नुक्सान नहीं होगा एवं ईश्वर के दरबार में मान—सम्मान मिलेगा। जो व्यक्ति राम नाम रूपी धन एकत्र करता है वही व्यक्ति सच्चा साहूकार एवं भाग्यवान है। उठते—बैठते हरि का भजन करो एवं सत्संगति में प्रेम उत्पन्न करो। हे नानक! जब पारब्रह्म प्रभु मनुष्य के हृदय में बस जाता है तो उसकी दुर्बुद्धि नाश हो जाती है॥ २॥

सलोकु ॥ तीनि बिआपहि जगत कउ तुरीआ पावै कोइ ॥ नानक संत निरमल भए जिन मनि वसिआ सोइ ॥ ३ ॥

श्लोक॥ माया के तीण गुण दुनिया को बड़ा दुःखी कर रहे हैं, लेकिन कोई विरला पुरुष ही तुरीय अवस्था को पाता है। हे नानक! जिनके हृदय में प्रभु—परमेश्वर निवास करता है, वह संत पवित्र—पावन हो जाते हैं॥ ३॥

पउड़ी ॥ त्रितीआ त्रै गुण बिखै फल कब उतम कब नीचु ॥ नरक सुरग भ्रमतउ घणो सदा संघारै मीचु ॥ हरख सोग सहसा संसारु हउ हउ करत बिहाइ ॥ जिनि कीए तिसहि न जाणनी

चितवहि अनिक उपाइ ॥ आधि बिआधि उपाधि रस कबहु न तूटै ताप ॥ पारब्रहम पूरन धनी नह बूझै परताप ॥ मोह भरम बूडत घणो महा नरक महि वास ॥ करि किरपा प्रभ राखि लेहु नानक तेरी आस ॥ ३ ॥

पउड़ी॥ तृतीय– माया के तीन गुणों वाले मनुष्य (विषय–विकारों के) विष को फल के तौर पर एकत्रित करते हैं। कभी वे भले हैं और कभी वे बुरे हैं। वह नरक–स्वर्ग में अधिकतर भटकते हैं और मृत्यु सदैव ही उनका संहार करती है। दुनिया के हर्ष, शोक एवं दुविधा के चक्र में फँसे हुए वह अपना अमूल्य जीवन अहंकार करते हुए बिता देते हैं। जिस ईश्वर ने उनको उत्पन्न किया है, उसे वे नहीं जानते और दूसरे अनेक उपाय सोचते रहते हैं। लौकिक आस्वादनों के कारण प्राणी को मन एवं तन के रोग तथा दूसरे झंझट भी लगे रहते हैं, कभी इसके मन का दुःख क्लेश मिटता नहीं है। वह सर्वव्यापक पारब्रह्म–प्रभु के तेज–प्रताप को अनुभव नहीं करते। मोह एवं दुविधा में अत्याधिक सांसारिक लोग डूब गए हैं और कुंभी नरक में वे निवास पाते हैं। नानक का कथन है कि हे प्रभु! कृपा करके मेरी रक्षा करो, चूंकि मुझे तेरी ही आशा है॥ ३॥

सलोकु ॥ चतुर सिआणा सुघड़ु सोइ जिनि तजिआ अभिमानु ॥ चारि पदारथ असट सिधि भजु नानक हरि नामु ॥ ४ ॥

श्लोक॥ जो मनुष्य अपना अभिमान त्याग देता है, वही चतुर, बुद्धिमान एवं गुणवान है। हे नानक! भगवान के नाम का भजन करने से संसार के चार उत्तम पदार्थ एवं आठ सिद्धियाँ मिल जाती हैं॥ ४॥

पउड़ी ॥ चतुरथि चारे बेद सुणि सोधिओ ततु बीचारु ॥ सरब खेम कलिआण निधि राम नामु जपि सारु ॥ नरक निवारै दुख हरै तूटहि अनिक कलेस ॥ मीचु हुटै जम ते छुटै हरि कीरतन परवेस ॥ भउ बिनसै अंम्रितु रसै रंगि रते निरंकार ॥ दुख दारिद अपवित्रता नासहि नाम अधार ॥ सुरि नर मुनि जन खोजते सुख सागर गोपाल ॥ मनु निरमलु मुखु ऊजला होइ नानक साध रवाल ॥ ४ ॥

पउड़ी॥ चतुर्थी– चारों वेद सुनकर और उनके यथार्थ को विचार कर मैंने निर्णय किया है कि राम के नाम का भजन, तमाम हर्ष एवं सुखों का भण्डार है। परमेश्वर के भजन में लीन होने से नरक मिट जाता है। दुःख नाश हो जाता है और अनेक क्लेश नष्ट हो जाते हैं, आत्मिक मृत्यु मिट जाती है और प्राणी यमराज से मुक्ति प्राप्त कर लेता है। निरंकार परमात्मा के प्रेम में मग्न होने से मनुष्य का भय नाश हो जाता है और वह अमृत रस पान करता है। ईश्वर नाम के सहारे से दुःख, दर्द एवं अपवित्रता नष्ट हो जाते हैं। देवते, मनुष्य एवं मुनिजन भी सुख के सागर गोपाल की खोज करते हैं। हे नानक! संतों की चरण–धूलि लेने से मन पवित्र एवं (लोक–परलोक में) मुख उज्ज्वल हो जाता है॥ ४॥

सलोकु ॥ पंच बिकार मन महि बसे राचे माइआ संगि ॥ साधसंगि होइ निरमला नानक प्रभ कै रंगि ॥ ५ ॥

श्लोक॥ जीव माया के मोह में ही मग्न रहता है, जिसके कारण पाँच विकार (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) उसके हृदय में बसे रहते हैं। हे नानक! किन्तु सत्संगति करने से जीव पवित्र हो जाता है और वह प्रभु के रंग में मग्न रहता है॥ ५॥

पउड़ी ॥ पंचमि पंच प्रधान ते जिह जानिओ परपंचु ॥ कुसम बास बहु रंगु घणो सभ मिथिआ बलबंचु ॥ नह जापै नह बूझीऐ नह कछु करत बीचारु ॥ सुआद मोह रस बेधिओ अगिआनि रचिओ

संसारु ॥ जनम मरण बहु जोनि भ्रमण कीने करम अनेक ॥ रचनहारु नह सिमरिओ मनि न बीचारि बिबेक ॥ भाउ भगति भगवान संगि माइआ लिपत न रंच ॥ नानक बिरले पाईअहि जो न रचहि परपंच ॥ ५ ॥

पउड़ी॥ पंचमी– संसार में वही महापुरुष सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं, जिन्होंने इस संसार के परपंच को समझ लिया है। पुष्पों की अधिक सुगन्धि एवं अनेक रंगों की भाँति समस्त छल–कपट झूठे हैं। मनुष्य देखता नहीं, वह यथार्थ को समझता नहीं, न ही वह थोड़ा–सा भी विचार करता है। दुनिया आस्वादनों, मोह, रस में बंधी रहती है और अज्ञान में लीन रहती है। जो मनुष्य अनेक कर्म करते हैं परन्तु कर्त्तार की आराधना नहीं करते और जिनके हृदय में विचार कर (भले बुरे काम की) परख नहीं, वे जन्म मरण के चक्र में पड़ते हैं और अनेक योनियों में भटकते रहते हैं। जो व्यक्ति भगवान की भक्ति तथा भगवान में श्रद्धा धारण करते हैं, उनके साथ माया बिल्कुल लिप्त नहीं होती। हे नानक ! दुनिया में विरले इन्सान ही मिलते हैं जो दुनिया के परपंच में नहीं फँसते॥ ५॥

सलोकु ॥ खट सासत्र ऊचौ कहहि अंतु न पारावार ॥ भगत सोहहि गुण गावते नानक प्रभ कै दुआर ॥ ६ ॥

श्लोक॥ षट्शास्त्र उच्च स्वर से पुकारते हुए कहते हैं कि भगवान की महिमा का अन्त नहीं मिल सकता तथा उसके अस्तित्व का ओर–छोर नहीं पाया जा सकता। हे नानक ! भगवान के भक्त भगवान के द्वार पर उसका गुणानुवाद करते हुए अति सुन्दर लगते हैं॥ ६॥

पउड़ी ॥ खसटमि खट सासत्र कहहि सिंम्रिति कथहि अनेक ॥ ऊतमु ऊचौ पारब्रहमु गुण अंतु न जाणहि सेख ॥ नारद मुनि जन सुक बिआस जसु गावत गोबिंद ॥ रस गीधे हरि सिउ बीधे भगत रचे भगवंत ॥ मोह मान भ्रमु बिनसिओ पाई सरनि दइआल ॥ चरन कमल मनि तनि बसे दरसनु देखि निहाल ॥ लाभु मिलै तोटा हिरै साधसंगि लिव लाइ ॥ खाटि खजाना गुण निधि हरे नानक नामु धिआइ ॥ ६ ॥

पउड़ी॥ षष्ठी– षट्शास्त्र कहते हैं, अनेक स्मृतियाँ भी कथन करती हैं कि भगवान बड़ा महान एवं सर्वोपरि है, जिसकी महिमा का अन्त अनेकों शेषनाग भी नहीं जान सकते। नारद मुनि, मुनिजन, शुकदेव एवं व्यास भी गोबिन्द की महिमा का गायन करते हैं। ईश्वर के भक्त उसके नाम–रस में भीगे रहते हैं, उसके स्मरण में ओत–प्रोत रहते हैं और भगवान के भजन में लीन रहते हैं। दया के घर भगवान की शरण लेने से मोह, अभिमान एवं दुविधा नाश हो जाते हैं। जिनके मन तथा तन में ईश्वर के सुन्दर चरण बस गए, ईश्वर के दर्शन करके वे कृतार्थ हो जाते हैं। साधसंगत द्वारा ईश्वर चरणों में सुरति लगाकर लाभ प्राप्त किया जाता है। हे नानक ! नाम का ध्यान करके गुणों के भण्डार भगवान का नाम रूपी भण्डार उपलब्ध कर लो॥ ६॥

सलोकु ॥ संत मंडल हरि जसु कथहि बोलहि सति सुभाइ ॥ नानक मनु संतोखीऐ एकसु सिउ लिव लाइ ॥ ७ ॥

श्लोक॥ संतों की मण्डली हमेशा ही भगवान का यश कथन करती रहती है और सहज स्वभाव सत्य ही बोलती रहती है। हे नानक ! एक ईश्वर में सुरति लगाने से मन संतुष्ट हो जाता है॥ ७॥

पउड़ी ॥ सपतमि संचहु नाम धनु टूटि न जाहि भंडार ॥ संतसंगति महि पाईऐ अंतु न पारावार ॥ आपु तजहु गोबिंद भजहु सरनि परहु हरि राइ ॥ दूख हरै भवजलु तरै मन चिंदिआ फलु पाइ ॥ आठ पहर मनि हरि जपै सफलु जनमु परवाणु ॥ अंतरि बाहरि सदा संगि करनैहारु पछाणु ॥ सो साजनु सो सखा मीतु जो हरि की मति देइ ॥ नानक तिसु बलिहारणै हरि हरि नामु जपेइ ॥ ७ ॥

पउड़ी॥ सप्तमी– प्रभु का नाम रूपी धन संचित करो, क्योंकि नाम–धन का भण्डार कभी समाप्त नहीं होता। (यह नाम धन) संतों की संगति करने से ही प्राप्त होता है, जिस प्रभु के गुणों का कोई अन्त नहीं, जिसके स्वरूप का ओर–छोर नहीं मिलता। हे जिज्ञासुओ! अपना अहंकार त्याग कर भगवान का भजन करते रहो और उस प्रभु की शरण में ही आओ। भगवान की शरण में आने से दुख दूर हो जाते हैं, भवसागर भी पार हो जाता है तथा मनोवांछित फल की प्राप्ति होती है। जो मनुष्य दिन–रात अपने मन में ईश्वर का नाम–सिमरन करता है, उसका जन्म सफल हो जाता है। जो परमेश्वर (प्रत्येक जीव के) भीतर–बाहर सदैव साथ है, वह कर्त्तार प्रभु उस मनुष्य का मित्र बन जाता है। हे जीव! जो व्यक्ति (हमें) भगवान का नाम जपने का उपदेश देता है, वही हमारा वास्तविक मित्र, सखा एवं साथी है। हे नानक! जो पुरुष हरि–परमेश्वर के नाम का जाप करता है, मैं उस पर कुर्बान जाता हूँ॥७॥

सलोकु ॥ आठ पहर गुन गाईअहि तजीअहि अवरि जंजाल ॥ जमकंकरु जोहि न सकई नानक प्रभू दइआल ॥ ८ ॥

श्लोक॥ यदि हम आठों प्रहर भगवान की महिमा– स्तुति करते रहें और दूसरे तमाम बन्धन त्याग दें तो हे नानक! भगवान प्रसन्न होकर दया के घर में आ जाता है तथा यमदूत भी दृष्टि नहीं कर सकता॥ ८॥

पउड़ी ॥ असटमी असट सिधि नव निधि ॥ सगल पदारथ पूरन बुधि ॥ कवल प्रगास सदा आनंद ॥ निरमल रीति निरोधर मंत ॥ सगल धरम पवित्र इसनानु ॥ सभ महि ऊच बिसेख गिआनु ॥ हरि हरि भजनु पूरे गुर संगि ॥ जपि तरीऐ नानक नाम हरि रंगि ॥ ८ ॥

पउड़ी॥ अष्टमी– आठ सिद्धियाँ, नौ निधियाँ, समस्त बहुमूल्य पदार्थ, पूर्ण बुद्धि, हृदय कमल का प्रकाश, सदैव आनंद, पवित्र जीवन आचरण, अचूक उपदेश, समस्त धर्म (गुण), पवित्र स्नान एवं सर्वोच्च तथा श्रेष्ठ ज्ञान, पूर्ण गुरु की संगति करने से प्रभु–परमेश्वर के भजन द्वारा प्राप्त हो जाते हैं। हे नानक! प्रेमपूर्वक ईश्वर का नाम–स्मरण करने से मनुष्य भवसागर से पार हो जाता है॥ ८॥

सलोकु ॥ नाराइणु नह सिमरिओ मोहिओ सुआद बिकार ॥ नानक नामि बिसारिऐ नरक सुरग अवतार ॥ ६ ॥

श्लोक॥ जो व्यक्ति नारायण का नाम–सिमरन नहीं करता, ऐसे व्यक्ति को हमेशा विकारों के रसों ने मुग्ध किया हुआ है। हे नानक! यदि जीव भगवान का नाम भुला दे तो उसे बार–बार नरक–स्वर्ग में जन्म लेना पड़ता है॥ ६॥

पउड़ी ॥ नउमी नवे छिद्र अपवीत ॥ हरि नामु न जपहि करत बिपरीति ॥ पर त्रिअ रमहि बकहि साध निंद ॥ करन न सुनही हरि जसु बिंद ॥ हिरहि पर दरबु उदर कै ताई ॥ अगनि न निवरै त्रिसना न बुझाई ॥ हरि सेवा बिनु एह फल लागे ॥ नानक प्रभ बिसरत मरि जमहि अभागे ॥ ६ ॥

पउड़ी॥ नवमी– शरीर की नौ इन्द्रियाँ (नाक–कान इत्यादि) अपवित्र रहती हैं। जीव प्रभु का नाम स्मरण नहीं करते और विपरीत कर्म करते रहते हैं। ईश्वर के नाम–स्मरण से विहीन मनुष्य पराई

नारियाँ भोगते हैं और साधुओं की निन्दा करते रहते हैं और अपने कानों से तनिक मात्र भी भगवान का यश नहीं सुनते। वे अपना पेट भरने के लिए पराया धन चुराते रहते हैं। फिर भी उनकी लालच की अग्नि तृप्त नहीं होती और न ही उनकी तृष्णा दूर होती है। प्रभु की भक्ति के बिना उनके तमाम प्रयासों को ऐसे फल ही लगते हैं। हे नानक ! भगवान को भुलाकर भाग्यहीन लोग आवागमन के चक्र में फँसे रहते हैं॥ ६॥

सलोकु ॥ दस दिस खोजत मै फिरिओ जत देखउ तत सोइ ॥ मनु बसि आवै नानका जे पूरन किरपा होइ ॥ १० ॥

श्लोक॥ मैं दसों दिशाओं में ही खोज रहा हूँ। लेकिन जिधर कहीं भी देखता हूँ, उधर ही भगवान को मैं पाता हूँ। हे नानक ! मनुष्य का मन वश में तभी आता है, यदि परमेश्वर उस पर पूर्ण कृपा करता है॥ १०॥

पउड़ी ॥ दसमी दस दुआर बसि कीने ॥ मनि संतोखु नाम जपि लीने ॥ करनी सुनीऐ जसु गोपाल ॥ नैनी पेखत साध दइआल ॥ रसना गुन गावै बेअंत ॥ मन महि चितवै पूरन भगवंत ॥ हसत चरन संत टहल कमाईऐ ॥ नानक इहु संजमु प्रभ किरपा पाईऐ ॥ १० ॥

पउड़ी॥ दसमी— जो मनुष्य अपनी दसों इन्द्रियों (पाँच ज्ञान एवं पाँच कर्म इन्द्रियों) को वश में कर लेता है, परमात्मा का नाम जपने से उसके मन में संतोष उत्पन्न हो जाता है। अपने कानों से गोपाल का यश सुनो। अपने नेत्रों से दयालु संतों को देखो। अपनी जिह्वा से अनन्त परमात्मा की गुणस्तुति करो। अपने हृदय में पूर्ण भगवान का चिन्तन करो। अपने हाथों एवं चरणों से साधुओं की सेवा करो। हे नानक ! यह जीवन—आचरण ईश्वर की कृपा से ही प्राप्त होता है॥ १०॥

सलोकु ॥ एको एकु बखानीऐ बिरला जाणै स्वादु ॥ गुण गोबिंद न जाणीऐ नानक सभु बिसमादु ॥ ११ ॥

श्लोक॥ केवल एक ईश्वर की महिमा का ही बखान करना चाहिए, ऐसे स्वाद को कोई विरला पुरुष ही जानता है। गोबिन्द की महिमा को जाना नहीं जा सकता। हे नानक ! वह तो बहुत अद्भुत रूप है॥ ११॥

पउड़ी ॥ एकादसी निकटि पेखहु हरि रामु ॥ इंद्री बसि करि सुणहु हरि नामु ॥ मनि संतोखु सरब जीअ दइआ ॥ इन बिधि बरतु संपूरन भइआ ॥ धावत मनु राखै इक ठाइ ॥ मनु तनु सुधु जपत हरि नाइ ॥ सभ महि पूरि रहे पारब्रहम ॥ नानक हरि कीरतनु करि अटल एहु धरम ॥ ११ ॥

पउड़ी॥ एकादशी— प्रभु—परमेश्वर को सदैव निकट देखो। अपनी इन्द्रियों को वश में करके प्रभु का नाम सुनो। जो व्यक्ति अपने मन में संतोष धारण करता है और समस्त जीवों के साथ दया करता है, इस विधि से उसका व्रत सफल हो जाता है। ऐसा करके वह अपने भागते हुए मन को स्थिर करके रखता है। भगवान के नाम का जाप करने से मन एवं शरीर शुद्ध हो जाते हैं। भगवान दुनिया में हर जगह मौजूद है, इसलिए हे नानक ! भगवान का कीर्त्तन हरदम करते रहो चूंकि यही एक अटल धर्म है॥ ११॥

सलोकु ॥ दुरमति हरी सेवा करी भेटे साध क्रिपाल ॥ नानक प्रभ सिउ मिलि रहे बिनसे सगल जंजाल ॥ १२ ॥

श्लोक॥ कृपा के घर संतों को मिलने एवं उनकी सेवा करने से दुर्मति मिट जाती है। हे नानक! जो लोग प्रभु के साथ मिले रहते हैं, उनके हर प्रकार के बन्धन नाश हो जाते हैं॥ १२॥

पउड़ी ॥ दुआदसी दानु नामु इसनानु ॥ हरि की भगति करहु तजि मानु ॥ हरि अंम्रित पान करहु साधसंगि ॥ मन त्रिपतासै कीरतन प्रभ रंगि ॥ कोमल बाणी सभ कउ संतोखै ॥ पंच भू आतमा हरि नाम रसि पोखै ॥ गुर पूरे ते एह निहचउ पाईऐ ॥ नानक राम रमत फिरि जोनि न आईऐ ॥ १२ ॥

पउड़ी॥ द्वादशी– दान–पुण्य करो, ईश्वर का नाम–सिमरन करो और जीवन पवित्र रखो। अपना अभिमान त्याग कर भगवान की भक्ति करते रहो। संतों की संगति में शामिल होकर हरि नाम रूपी अमृत का पान करो। प्रेमपूर्वक प्रभु का कीर्त्तन करने से मन तृप्त हो जाता है। मधुर वाणी हर किसी को संतोष प्रदान करती है। पंचभूतक आत्मा हरि–नाम रूपी रस से आनंदित हो जाती है। पूर्ण गुरु द्वारा यह निश्चय ही मिल जाता है। हे नानक! राम का नाम–सिमरन करने से जीव फिर से योनियों में नहीं आता॥ १२॥

सलोकु ॥ तीनि गुणा महि बिआपिआ पूरन होत न काम ॥ पतित उधारणु मनि बसै नानक छूटै नाम ॥ १३ ॥

श्लोक॥ दुनिया माया के तीन गुणों के दबाव में फँसी रहती है, इसलिए उसके कार्य पूर्ण नहीं होते। हे नानक! वही प्राणी मोक्ष प्राप्त करता है, जिसके हृदय में पतितों का उद्धार करने वाला ईश्वर का नाम बस जाता है॥ १३॥

पउड़ी ॥ त्रउदसी तीनि ताप संसार ॥ आवत जात नरक अवतार ॥ हरि हरि भजनु न मन महि आइओ ॥ सुख सागर प्रभु निमख न गाइओ ॥ हरख सोग का देह करि बाधिओ ॥ दीरघ रोगु माइआ आसाधिओ ॥ दिनहि बिकार करत स्रमु पाइओ ॥ नैनी नीद सुपन बरड़ाइओ ॥ हरि बिसरत होवत एह हाल ॥ सरनि नानक प्रभ पुरख दइआल ॥ १३ ॥

पउड़ी॥ त्रयोदशी– यह संसार तीन गुणों के ताप से दुःखी पड़ा हुआ है। जिससे यह जन्म–मरण के चक्र में पड़कर नरक में जाता है। प्रभु–परमेश्वर का भजन इसके मन में प्रवेश नहीं करता। सुखों के सागर प्रभु की महिमा मनुष्य एक क्षण भर के लिए भी नहीं करता। हर्ष एवं शोक का यह शरीर पुतला है। इसे माया का दीर्घ एवं असाध्य रोग लगा हुआ है। वह दिन रात विकारों का कार्य करता है और हार थक जाता है। आँखों में नींद से वह स्वप्न में भी बातें करता है। भगवान को भुला कर उसकी यह दशा हो जाती है। नानक ने दया के घर प्रभु की शरण ली है॥ १३॥

सलोकु ॥ चारि कुंट चउदह भवन सगल बिआपत राम ॥ नानक ऊन न देखीऐ पूरन ता के काम ॥ १४ ॥

श्लोक॥ परमात्मा चारों दिशाओं एवं चौदह लोकों में हर जगह पर मौजूद है। हे नानक! उस ईश्वर के भण्डारों में कोई कमी नहीं देखी जाती, प्रभु द्वारा किए तमाम कार्य सफल होते हैं॥ १४॥

पउड़ी ॥ चउदहि चारि कुंट प्रभ आप ॥ सगल भवन पूरन परताप ॥ दसे दिसा रविआ प्रभु एकु ॥ धरनि अकास सभ महि प्रभ पेखु ॥ जल थल बन परबत पाताल ॥ परमेस्वर तह बसहि दइआल ॥ सूखम असथूल सगल भगवान ॥ नानक गुरमुखि ब्रहमु पछान ॥ १४ ॥

पउड़ी॥ चौदश– चारों दिशाओं में ईश्वर स्वयं ही बस रहा है। सभी लोकों में उसका तेज–प्रताप चमक रहा है। दसों दिशाओं में एक प्रभु ही व्यापक है। धरती एवं आकाश हर स्थान पर ईश्वर को

देखो। जल, धरती, वन, पहाड़ एवं पाताल—इन सब में दयालु परमेश्वर बस रहा है। गोचर एवं अगोचर समूचे जगत् में भगवान मौजूद है। हे नानक! गुरमुख ईश्वर को पहचान लेता है॥ १४॥

सलोकु ॥ आतमु जीता गुरमती गुण गाए गोबिंद ॥ संत प्रसादी भै मिटे नानक बिनसी चिंद ॥ १५ ॥

श्लोक॥ गुरु के उपदेश द्वारा गोबिन्द की गुणस्तुति करने से आत्मा को जीता जा सकता है। हे नानक! संतों की कृपा से भय मिट जाता है और संशय निवृत्त हो जाता है॥ १५॥

पउड़ी ॥ अमावस आतम सुखी भए संतोखु दीआ गुरदेव ॥ मनु तनु सीतलु सांति सहज लागा प्रभ की सेव ॥ टूटे बंधन बहु बिकार सफल पूरन ता के काम ॥ दुरमति मिटी हउमै छुटी सिमरत हरि को नाम ॥ सरनि गही पारब्रहम की मिटिआ आवा गवन ॥ आपि तरिआ कुटंब सिउ गुण गुबिंद प्रभ रवन ॥ हरि की टहल कमावणी जपीऐ प्रभ का नामु ॥ गुर पूरे ते पाइआ नानक सुख बिस्रामु ॥ १५ ॥

पउड़ी॥ अमावस्या—जिस व्यक्ति को गुरदेव ने संतोष प्रदान किया है, उसकी आत्मा सुखी हो गई है। (गुरु की कृपा से) वह ईश्वर की भक्ति में लग गया है, जिससे उसका मन तन शीतल हो गया, उसके भीतर शांति एवं सहज सुख उत्पन्न हो गया। जो मनुष्य प्रभु का नाम—स्मरण करते हैं, उनके विकारों के बन्धन और अनेक पाप नाश हो जाते हैं। उसके तमाम कार्य सफल एवं सम्पूर्ण हो जाते हैं, उनकी दुर्बुद्धि नाश हो जाती है और उनका अहंकार निवृत्त हो जाता है। पारब्रह्म की शरण लेने से मनुष्य का जन्म—मरण का चक्र मिट जाता है। गोबिन्द प्रभु की महिमा—स्तुति के कारण वह अपने कुटुंब सहित (भवसागर से) पार हो जाता है। हे जीव! ईश्वर की भक्ति ही करनी चाहिए और भगवान के नाम का जाप करना चाहिए। हे नानक! सर्व सुखों का मूल वह परमात्मा पूर्ण गुरु के द्वारा मिलता है॥ १५॥

सलोकु ॥ पूरनु कबहु न डोलता पूरा कीआ प्रभ आपि ॥ दिनु दिनु चड़ै सवाइआ नानक होत न घाटि ॥ १६ ॥

श्लोक॥ पूर्ण मनुष्य जिसे परमात्मा ने स्वयं पूर्ण किया है, वह कभी विचलित नहीं होता। हे नानक! वह दिन—रात प्रगति करता रहता है और जीवन में असफल नहीं होता॥ १६॥

पउड़ी ॥ पूरनमा पूरन प्रभ एकु करण कारण समरथु ॥ जीअ जंत दइआल पुरखु सभ ऊपरि जा का हथु ॥ गुण निधान गोबिंद गुर कीआ जा का होइ ॥ अंतरजामी प्रभु सुजानु अलख निरंजन सोइ ॥ पारब्रहमु परमेसरो सभ बिधि जानणहार ॥ संत सहाई सरनि जोगु आठ पहर नमसकार ॥ अकथ कथा नह बूझीऐ सिमरहु हरि के चरन ॥ पतित उधारन अनाथ नाथ नानक प्रभ की सरन ॥ १६ ॥

पउड़ी॥ पूर्णिमा— केवल एक परमेश्वर ही पूर्ण है। वह सब कुछ करने एवं करवाने में समर्थ है। सर्वव्यापक परमात्मा समस्त जीव—जन्तुओं पर दयालु रहता है, समस्त जीवों पर उसका रक्षा करने वाला हाथ है। गोबिन्द जिसकी इच्छानुसार सब कुछ होता है, गुणों का भण्डार है। वह बुद्धिमान, अदृश्य एवं निरंजन प्रभु अन्तर्यामी है। पारब्रह्म—परमेश्वर समस्त विधियों को जानने वाला है। वह संतों का सहायक एवं शरण देने में समर्थ है। मैं सदैव उसको प्रणाम करता हूँ। मैं हरि के सुन्दर चरणों की आराधना करता हूँ, जिसकी अकथनीय कथा जानी नहीं जा सकती। हे नानक! मैंने उस प्रभु की शरण ली है, जो पतितों का उद्धार करने वाला एवं अनाथों का नाथ है॥ १६॥

सलोकु ॥ दुख बिनसे सहसा गइओ सरनि गही हरि राइ ॥ मनि चिंदे फल पाइआ नानक हरि गुन गाइ ॥ १७ ॥

श्लोक॥ जब से मैंने भगवान की शरण ली है, मेरा दुःख नाश हो गया है और दुविधा भाग गई है। हे नानक! भगवान का यशोगान करने से मैंने मनोवांछित फल प्राप्त कर लिए हैं॥ १७॥

पउड़ी ॥ कोई गावै को सुणै कोई करै बीचारु ॥ को उपदेसै को द्रिड़ै तिस का होइ उधारु ॥ किलबिख काटै होइ निरमला जनम जनम मलु जाइ ॥ हलति पलति मुखु ऊजला नह पोहै तिसु माइ ॥ सो सुरता सो बैसनो सो गिआनी धनवंतु ॥ सो सूरा कुलवंतु सोइ जिनि भजिआ भगवंतु ॥ खत्री ब्राहमणु सूदु बैसु उधरै सिमरि चंडाल ॥ जिनि जानिओ प्रभु आपना नानक तिसहि रवाल ॥ १७ ॥

पउड़ी॥ चाहे कोई मनुष्य भगवान के नाम का गायन करे, चाहे कोई मनुष्य भगवान का नाम सुने, चाहे कोई मनुष्य विचार करे, चाहे कोई मनुष्य उपदेश करे एवं चाहे कोई मनुष्य इसको अपने मन में दृढ़ करे, उसका उद्धार हो जाता है। उसके पाप मिट जाते हैं, वह निर्मल हो जाता है और उसके जन्म–जन्मांतरों की मैल दूर हो जाती है। इस लोक एवं परलोक में उसका मुख उज्ज्वल होता है और माया उस पर प्रभाव नहीं करती। वह बुद्धिमान मनुष्य है, वही वैष्णो, वही ज्ञानी एवं धनवान है, वही शूरवीर एवं वही उच्च कुल का है, जिसने भगवान का भजन किया है। क्षत्रिय, ब्राह्मण, शूद्र, वैश्य एवं चण्डाल जातियों वाले भी प्रभु का सिमरन करने से पार हो गए हैं। नानक, उसके चरणों की धूलि है, जो अपने ईश्वर को जानता है॥ १७॥

गउड़ी की वार महला ४ ॥ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सलोक मः ४ ॥ सतिगुरु पुरखु दइआलु है जिस नो समतु सभु कोइ ॥ एक द्रिसटि करि देखदा मन भावनी ते सिधि होइ ॥ सतिगुर विचि अंम्रितु है हरि उतमु हरि पदु सोइ ॥ नानक किरपा ते हरि धिआईऐ गुरमुखि पावै कोइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ महापुरुष सतिगुरु समस्त जीवों पर दयालु है, उसके लिए सभी जीव एक समान हैं। वह सबको एक दृष्टि से देखता है परन्तु वह मन की श्रद्धा से ही पाया जाता है। सतिगुरु के भीतर नाम–अमृत बसता है। वह प्रभु की भाँति उत्तम है और हरि पद रखता है। हे नानक! गुरु की कृपा से ही भगवान का ध्यान किया जाता है, तथा विरले गुरमुख ही भगवान को प्राप्त करते हैं॥ १॥

मः ४ ॥ हउमै माइआ सभ बिखु है नित जगि तोटा संसारि ॥ लाहा हरि धनु खटिआ गुरमुखि सबदु वीचारि ॥ हउमै मैलु बिखु उतरै हरि अंम्रितु हरि उर धारि ॥ सभि कारज तिन के सिधि हहि जिन गुरमुखि किरपा धारि ॥ नानक जो धुरि मिले से मिलि रहे हरि मेले सिरजणहारि ॥ २ ॥

महला ४॥ अहंकार एवं माया समस्त विष है। उनके साथ लगकर मनुष्य इस दुनिया में सदैव नुक्सान प्राप्त करता है। शब्द का चिन्तन करने से गुरमुख हरि–नाम रूपी धन का लाभ कमा लेता है। हरि एवं हरि–अमृत को हृदय में बसाने से अहंकार की मैल का विष उतर जाता है। जिन गुरमुखों पर वह कृपा करता है, उनके तमाम कार्य सफल हो जाते हैं। हे नानक! ईश्वर को वही मिले हैं, जो आदि से मिले हैं और जिन्हें दुनिया के रचयिता भगवान ने स्वयं मिलाया है॥ २॥

पउड़ी ॥ तू सचा साहिबु सचु है सचु सचा गोसाई ॥ तुधुनो सभ धिआइदी सभ लगै तेरी पाई ॥ तेरी सिफति सुआलिउ सरूपु है जिनि कीती तिसु पारि लघाई ॥ गुरमुखा नो फलु पाइदा सचि नामि समाई ॥ वडे मेरे साहिबा वडी तेरी वडिआई ॥ १ ॥

पउड़ी॥ हे मेरे सच्चे मालिक ! हे गुसाई ! तू सदैव सत्य है। सारी दुनिया तेरा ही ध्यान करती रहती है और तेरे समक्ष नतमस्तक होती है। तेरी कीर्त्ति सुन्दर एवं सुन्दरता का घर है। जो भी तेरी सराहना करता है, उसे तू पार कर देता है। गुरमुखों को तुम फल प्रदान करते हो और वह सत्यनाम में समा जाते हैं। हे मेरे महान मालिक ! तेरी महिमा महान है॥ १॥

सलोक मः ४ ॥ विणु नावै होरु सलाहणा सभु बोलणु फिका सादु ॥ मनमुख अहंकारु सलाहदे हउमै ममता वादु ॥ जिन सालाहनि से मरहि खपि जावै सभु अपवादु ॥ जन नानक गुरमुखि उबरे जपि हरि हरि परमानादु ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ भगवान के नाम के सिवाय किसी अन्य की सराहना करना एवं तमाम बातचीत का स्वाद फीका है। स्वेच्छाचारी जीव अपने अहंकार की प्रशंसा करते हैं परन्तु अहंत्व का मोह व्यर्थ है। जिनकी वह सराहना करते हैं, वे मर जाते हैं। वह तमाम विवादों में नष्ट हो जाते हैं। हे नानक ! परमानंद हरि-परमेश्वर की आराधना करके गुरमुख बच गए हैं॥ १॥

मः ४ ॥ सतिगुर हरि प्रभु दसि नामु धिआई मनि हरी ॥ नानक नामु पवितु हरि मुखि बोली सभि दुख परहरी ॥ २ ॥

महला ४॥ हे सतिगुरु ! मुझे हरि-प्रभु की बातें सुनाइए, चूंकि मैं अपने मन में उसके नाम का ध्यान करूँ। हे नानक ! भगवान का नाम बड़ा पावन है, इसलिए मेरी यही इच्छा है कि मैं अपने मुख से (हरि-नाम) बोलकर अपने सभी दुख समाप्त कर लूँ॥ २॥

पउड़ी ॥ तू आपे आपि निरंकारु है निरंजन हरि राइआ ॥ जिनी तू इक मनि सचु धिआइआ तिन का सभु दुखु गवाइआ ॥ तेरा सरीकु को नाही जिस नो लवै लाइ सुणाइआ ॥ तुधु जेवडु दाता तूहै निरंजना तूहै सचु मेरै मनि भाइआ ॥ सचे मेरे साहिबा सचे सचु नाइआ ॥ २ ॥

पउड़ी॥ हे निरंजन प्रभु ! तू स्वयं ही निरंकार है। हे सत्य परमेश्वर ! जिन्होंने एकाग्रचित होकर तेरा ध्यान किया है, तूने उनके तमाम दुःख नाश कर दिए हैं। तेरी बराबरी करने वाला कोई नहीं, जिसे पास बैठा कर मैं तेरा जिक्र करूँ। हे निरंजन प्रभु ! तेरे जैसा बड़ा दाता तू ही है और तू ही मेरे हृदय को प्रिय लगता है। हे मेरे सच्चे मालिक ! तेरी महिमा सत्य है॥ २॥

सलोक मः ४ ॥ मन अंतरि हउमै रोगु है भ्रमि भूले मनमुख दुरजना ॥ नानक रोगु गवाइ मिलि सतिगुर साधू सजना ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ जिनके अन्तर्मन में अहंकार का रोग विद्यमान है, ऐसे स्वेच्छाचारी दुर्जन जीव दुविधा में भटके हुए हैं। हे नानक ! यह अहंकार का रोग सतिगुरु से मिलकर एवं साधु-सज्जनों की संगति करके निवृत्त किया जा सकता है॥ १॥

मः ४ ॥ मनु तनु रता रंग सिउ गुरमुखि हरि गुणतासु ॥ जन नानक हरि सरणागती हरि मेले गुर साबासि ॥ २॥

महला ४॥ गुरमुखों का मन एवं शरीर गुणों के भण्डार परमात्मा की प्रीति में मग्न रहते हैं। हे नानक ! उसने भगवान की शरण ली है। वह गुरु धन्य हैं, जिन्होंने उसे ईश्वर से मिला दिया है॥ २॥

पउड़ी ॥ तू करता पुरखु अगंमु है किसु नालि तू वड़ीऐ ॥ तुधु जेवडु होइ सु आखीऐ तुधु जेहा तूहै पड़ीऐ ॥ तू घटि घटि इकु वरतदा गुरमुखि परगड़ीऐ ॥ तू सचा सभस दा खसमु है सभ दू तू चड़ीऐ ॥ तू करहि सु सचे होइसी ता काइतु कड़ीऐ ॥ ३ ॥

पउड़ी॥ हे सर्वशक्तिशाली प्रभु ! तू अगम्य है, फिर मैं तेरी तुलना किससे करूँ ? यदि कोई तेरे जैसा महान हो तो मैं उसका नाम लूँ। लेकिन तेरे जैसा केवल तू ही कहा जाता है। (हे नाथ !) तू प्रत्येक शरीर में मौजूद है, परन्तु यह बात उन पर प्रकट होती है जो सतिगुरु के समक्ष होते हैं। हे प्रभु ! तू ही सत्य एवं हम सबका मालिक है और तू ही सर्वोपरि है। हे सत्यस्वरूप परमेश्वर ! यदि हमें यह विश्वस्त हो जाए कि जो कुछ तू करता है केवल वही होता है, तब हम क्यों अफसोस करें ?॥ ३॥

सलोक मः ४ ॥ मै मनि तनि प्रेमु पिरंम का अठे पहर लगंनि ॥ जन नानक किरपा धारि प्रभ सतिगुर सुखि वसंनि ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ मेरा मन एवं तन आठों प्रहर प्रियतम के प्रेम में मग्न रहे। हे नानक ! जिन पर भगवान अपनी कृपा धारण करता है, वे सतिगुरु के सुख में रहते हैं॥ १॥

मः ४ ॥ जिन अंदरि प्रीति पिरंम की जिउ बोलनि तिवै सोहंनि ॥ नानक हरि आपे जाणदा जिनि लाई प्रीति पिरंनि ॥ २ ॥

महला ४॥ जिनके अन्तर्मन में भगवान का प्रेम है, जब वह प्रभु का यशोगान करते हैं, तो वह बहुत सुन्दर लगते हैं। हे नानक ! जिस भगवान ने यह प्रेम लगाया है, वह स्वयं ही जानता है॥ २॥

पउड़ी ॥ तू करता आपि अभुलु है भुलण विचि नाही ॥ तू करहि सु सचे भला है गुर सबदि बुझाही ॥ तू करण कारण समरथु है दूजा को नाही ॥ तू साहिबु अगमु दइआलु है सभि तुधु धिआही ॥ सभि जीअ तेरे तू सभस दा तू सभ छडाही ॥ ४ ॥

पउड़ी॥ हे विश्व के रचयिता प्रभु ! तू स्वयं अविस्मरणीय है, इसलिए कोई भूल नहीं करते। हे सच्चे ! जो कुछ तू करता है, वह शुभ करता है। गुरु के शब्द द्वारा यह ज्ञान प्राप्त होता है। हे प्रभु ! तू समस्त कार्य करने एवं जीवों से करवाने में समर्थ है। तेरे अलावा दूसरा कोई नहीं। हे मेरे मालिक ! तू अगम्य एवं दया का घर है और सारी दुनिया तेरा ही ध्यान करती रहती है। समस्त जीव–जन्तु तेरे हैं और तू सबका मालिक है। तू समस्त जीव–जन्तुओं को मुक्ति प्रदान करता है॥ ४॥

सलोक मः ४ ॥ सुणि साजन प्रेम संदेसरा अखी तार लगंनि ॥ गुरि तुठै सजणु मेलिआ जन नानक सुखि सवंनि ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ साजन प्रभु का प्रेम भरा सन्देश सुनकर जिनके नेत्र दर्शनों की आशा में लग जाते हैं, हे नानक ! गुरु ने प्रसन्न होकर उन्हें साजन प्रभु से मिला दिया है एवं वे सुखपूर्वक रहते हैं॥ १॥

मः ४ ॥ सतिगुरु दाता दइआलु है जिस नो दइआ सदा होइ ॥ सतिगुरु अंदरहु निरवैरु है सभु देखै ब्रहमु इकु सोइ ॥ निरवैरा नालि जि वैरु चलाइदे तिन विचहु तिसटिआ न कोइ ॥ सतिगुरु सभना दा भला मनाइदा तिस दा बुरा किउ होइ ॥ सतिगुर नो जेहा को इछदा तेहा फलु पाए कोइ ॥ नानक करता सभु किछु जाणदा जिदू किछु गुझा न होइ ॥ २ ॥

महला ४॥ दाता सतिगुरु बड़े दयालु हैं। वह सदैव दया के घर में बसते हैं। सतिगुरु के हृदय में किसी के साथ शत्रुता नहीं, वह सर्वत्र एक ईश्वर को देखते रहते हैं। जो प्राणी निर्वैर के साथ वैर

करते हैं, उन में से कोई सुखी नहीं होता। सतिगुरु जी सबका भला चाहते हैं। उनका बुरा किस तरह हो सकता है? जिस श्रद्धा भावना से कोई मनुष्य सतिगुरु के पास जाता है, उसे वैसा ही फल प्राप्त होता है। हे नानक! विश्व की रचना करने वाले परमात्मा से कोई बात छिपाई नहीं जा सकती, चूंकि वह सबकुछ जानता है॥ २॥

पउड़ी ॥ जिस नो साहिबु वडा करे सोई वड जाणी ॥ जिसु साहिब भावै तिसु बखसि लए सो साहिब मनि भाणी ॥ जे को ओस दी रीस करे सो मूड़ अजाणी ॥ जिस नो सतिगुरु मेले सु गुण रवै गुण आखि वखाणी ॥ नानक सचा सचु है बुझि सचु समाणी ॥ ५ ॥

पउड़ी॥ जिसे मालिक बड़ा महान करता है, उसे ही महान समझना चाहिए। जिसे मालिक पसंद करता है, वह उसे क्षमा कर देता है और वह मालिक के मन में प्रिय लगता है। वह (जीव–स्त्री) मूर्ख एवं बुद्धिहीन है, जो उससे तुलना करती है। जिसे सद्गुरु प्रभु से मिलाते हैं वही मिलती है एवं प्रभु की गुणस्तुति करके दूसरों को सुनाती है। हे नानक! परमात्मा सदैव सत्य है, जो इस तथ्य को समझता है, वह सत्य में ही समा जाता है॥ ५॥

सलोक मः ४ ॥ हरि सति निरंजन अमरु है निरभउ निरवैरु निरंकारु ॥ जिन जपिआ इक मनि इक चिति तिन लथा हउमै भारु ॥ जिन गुरमुखि हरि आराधिआ तिन संत जना जैकारु ॥ कोई निंदा करे पूरे सतिगुरू की तिस नो फिटु फिटु कहै सभु संसारु ॥ सतिगुर विचि आपि वरतदा हरि आपे रखणहारु ॥ धनु धंनु गुरू गुण गावदा तिस नो सदा सदा नमसकारु ॥ जन नानक तिन कउ वारिआ जिन जपिआ सिरजणहारु ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ भगवान सत्य है, माया से रहित है, अनश्वर, निडर, निर्वैर एवं निराकार है। जो मनुष्य एकाग्रचित्त होकर उसका सिमरन करते हैं, वे अहंकार के भार से मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं। जिन गुरमुखों ने भगवान की आराधना की है, ऐसे संतजनों को विश्व में बड़ी लोकप्रियता हासिल होती है। यदि कोई व्यक्ति पूर्ण सतिगुरु की निन्दा करता है तो उसको सारी दुनिया प्रताड़ित करती है। सतिगुरु के भीतर स्वयं भगवान बसता है और स्वयं ही उनका रक्षक है। वह गुरु धन्य! धन्य! है, जो प्रभु की गुणस्तुति करता रहता है। उसको मैं सदैव प्रणाम करता हूँ। हे नानक! मैं उन पर तन–मन से न्यौछावर हूँ, जिन्होंने सृजनहार परमेश्वर की आराधना की है॥ १॥

मः ४ ॥ आपे धरती साजीअनु आपे आकासु ॥ विचि आपे जंत उपाइअनु मुखि आपे देइ गिरासु ॥ सभु आपे आपि वरतदा आपे ही गुणतासु ॥ जन नानक नामु धिआइ तू सभि किलविख कटे तासु ॥ २ ॥

महला ४॥ ईश्वर ने स्वयं ही धरती बनाई और स्वयं ही आकाश बनाया। इस धरती में ईश्वर ने जीव–जन्तु उत्पन्न किए और स्वयं ही प्राणियों के मुख में भोजन दिया है। अपने आप ही वह सर्वव्यापक हो रहा है और स्वयं ही गुणों का भण्डार है। हे नानक! तू प्रभु के नाम की आराधना कर, वह तेरे तमाम पाप नाश कर देगा॥ २॥

पउड़ी ॥ तू सचा साहिबु सचु है सचु सचे भावै ॥ जो तुधु सचु सलाहदे तिन जम कंकरु नेड़ि न आवै ॥ तिन के मुख दरि उजले जिन हरि हिरदै सचा भावै ॥ कूड़िआर पिछाहा सटीअनि कूड़ु हिरदै कपटु महा दुखु पावै ॥ मुह काले कूड़िआरीआ कूड़िआर कूड़ो होइ जावै ॥ ६ ॥

पउड़ी॥ हे सत्य के पुंज परमात्मा ! तू सदैव सत्य है। उस सत्य के पुंज को सत्य ही प्रिय लगता है। हे सत्यस्वरूप प्रभु ! जो जो प्राणी तेरी प्रशंसा करते हैं, यमदूत उनके निकट नहीं आता। जिनके हृदय को सत्य प्रभु अच्छा लगता है, उनके मुख उसके दरबार में उज्ज्वल हो जाते हैं। झूठे पीछे धकेल दिए जाते हैं, मन में झूठ एवं छल—कपट होने के कारण वह महा कष्ट सहन करते हैं। झूठों के मुख सत्य के दरबार में काले होते हैं। झूठे केवल झूठे ही रहते हैं॥ ६॥

सलोक मः ४ ॥ सतिगुरु धरती धरम है तिसु विचि जेहा को बीजे तेहा फलु पाइ ॥ गुरसिखी अंम्रितु बीजिआ तिन अंम्रित फलु हरि पाए ॥ ओना हलति पलति मुख उजले ओइ हरि दरगह सची पैनाए ॥ इकन्हा अंदरि खोटु नित खोटु कमावहि ओहु जेहा बीजे तेहा फलु खाए ॥ जा सतिगुरु सराफु नदरि करि देखै सुआवगीर सभि उघड़ि आए ॥ ओइ जेहा चितवहि नित तेहा पाइनि ओइ तेहो जेहे दयि वजाए ॥ नानक दुही सिरी खसमु आपे वरतै नित करि करि देखै चलत सबाए ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ सतिगुरु धर्म की धरती है। उसमें जैसा कोई बीज बोता है, वैसा ही फल प्राप्त करता है। गुरु के सिक्ख नाम—अमृत बोते हैं एवं ईश्वर को अपने अमृत फल के रूप में प्राप्त करते हैं। इस लोक एवं परलोक में उनके मुख उज्ज्वल होते हैं। प्रभु के सच्चे दरबार में उनको मान—सम्मान मिलता है। कुछ लोगों के मन में कपट होता है और वह सदैव ही कपट कमाते हैं, जैसा वह बोते हैं, वैसा ही फल खाते हैं। (क्योंकि) जब सर्राफ सतिगुरु जी दूरदृष्टि से देखता है तो सभी स्वार्थी प्रकट हो जाते हैं। जैसी उनके हृदय की भावना होती है, वैसा ही उन्हें फल मिलता है। प्रभु—परमेश्वर के द्वारा वे उसी तरह पुरस्कृत अथवा तिरस्कृत होते हैं। (किन्तु) हे नानक ! (प्राणी के क्या वश ?) ये तमाम कौतुक ईश्वर आप हमेशा करके देख रहा है और दोनों तरफ (गुरमुखों एवं स्वार्थियों में) स्वयं ही ईश्वर विद्यमान है॥ १॥

मः ४ ॥ इकु मनु इकु वरतदा जितु लगै सो थाइ पाइ ॥ कोई गला करे घनेरीआ जि घरि वथु होवै साई खाइ ॥ बिनु सतिगुर सोझी ना पवै अहंकारु न विचहु जाइ ॥ अहंकारीआ नो दुख भुख है हथु तडहि घरि घरि मंगाइ ॥ कूड़ु ठगी गुझी ना रहै मुलंमा पाजु लहि जाइ ॥ जिसु होवै पूरबि लिखिआ तिसु सतिगुरु मिलै प्रभु आइ ॥ जिउ लोहा पारसि भेटीऐ मिलि संगति सुवरनु होइ जाइ ॥ जन नानक के प्रभ तू धणी जिउ भावै तिवै चलाइ ॥ २ ॥

महला ४॥ हरेक मनुष्य में एक ईश्वर व्यापक हो रहा है। जिस किसी से वह जुड़ता है, उसमें वह सफल हो जाता है। प्राणी चाहे अधिकतर बातें करें परन्तु वह वही चीज़ खाता है, जो उसके घर में विद्यमान हो। सतिगुरु के अतिरिक्त ज्ञान प्राप्त नहीं होता। न ही अहंकार भीतर से जाता है। अहंकारी जीवों को दुख एवं भूख सताते हैं। वह अपना हाथ फैला—फैलाकर द्वार—द्वार माँगते फिरते हैं। झूठ एवं छल छिपे नहीं रहते। उनका पाज का मुलम्मा उतर जाता है। पूर्व कर्मों के अनुसार जिनके भले संस्कार लिखे हुए हैं, उन्हें पूर्ण सतिगुरु मिल जाते हैं। जैसे पारस के स्पर्श से लोहा सोना बन जाता है, वैसे ही गुरु की संगति से मिलकर मनुष्य अनमोल बन जाता है। हे नानक के प्रभु ! (जीवों के वश में कुछ नहीं) तू सबका मालिक है। जैसे तुझे भला लगता है, वैसे ही तू जीवों को चलाता है॥ २॥

पउड़ी ॥ जिन हरि हिरदै सेविआ तिन हरि आपि मिलाए ॥ गुण की साझि तिन सिउ करी सभि अवगण सबदि जलाए ॥ अउगण विकणि पलरी जिसु देहि सु सचे पाए ॥ बलिहारी गुर आपणे जिनि अउगण मेटि गुण परगटीआए ॥ वडी वडिआई वडे की गुरमुखि आलाए ॥ ७ ॥

पउड़ी॥ जिन प्राणियों ने हृदय में ईश्वर का सिमरन किया है, उन्हें ईश्वर अपने साथ मिला लेता है। मैं उनके साथ गुणों की सांझ करता हूँ और शब्द द्वारा अवगुणों को जलाता हूँ। घास—फूस की भाँति पाप सस्ते खरीदे जाते हैं। केवल वही गुण प्राप्त करता है, जिसे वह सत्यस्वरूप परमात्मा प्रदान करता है। मैं अपने सतिगुरु पर बलिहारी जाता हूँ, जिन्होंने पाप मिटा कर मुझ में गुणों का प्रकाश कर दिया है। जो प्राणी सतिगुरु के समक्ष होता है, वही महान प्रभु की महिमा—स्तुति करने लग जाता है॥ ७॥

सलोक मः ४ ॥ सतिगुर विचि वडी वडिआई जो अनदिनु हरि हरि नामु धिआवै ॥ हरि हरि नामु रमत सुच संजमु हरि नामे ही त्रिपतावै ॥ हरि नामु ताणु हरि नामु दीबाणु हरि नामो रख करावै ॥ जो चितु लाइ पूजे गुर मूरति सो मन इछे फल पावै ॥ जो निंदा करे सतिगुर पूरे की तिसु करता मार दिवावै ॥ फेरि ओह वेला ओसु हथि न आवै ओहु आपणा बीजिआ आपे खावै ॥ नरकि घोरि मुहि कालै खड़िआ जिउ तसकरु पाइ गलावै ॥ फिरि सतिगुर की सरणी पवै ता उबरै जा हरि हरि नामु धिआवै ॥ हरि बाता आखि सुणाए नानकु हरि करते एवै भावै ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ सतिगुरु में यही महान गुण है कि वह हर समय भगवान के नाम का ही ध्यान करता रहता है। भगवान के नाम का जाप ही सतिगुरु की पवित्रता एवं संयम है। वह भगवान के नाम से ही तृप्त रहते हैं। भगवान का नाम उनका बल है और भगवान का नाम ही उनकी सभा है। भगवान का नाम ही उनका रक्षक है। जो व्यक्ति श्रद्धा से गुरु—मूर्ति की पूजा करता है, वह मनोवांछित फल प्राप्त करता है। जो मनुष्य पूर्ण सतिगुरु की निंदा करता है, उसका कर्त्तार विनाश कर देता है। वह अवसर उसे दोबारा नहीं मिलता। जो कुछ उसने बोया है, वह स्वयं ही सेवन करता है। जैसे चोर को गले में रस्सी डालकर ले जाया जाता है, वैसे ही मुँह काला करके उसे भयानक नरककुण्ड में डाला जाता है। जब वह दोबारा सतिगुरु की शरण लेता है और भगवान का नाम—सिमरन करता है तो वह (भयानक नरक से) पार हो जाता है। नानक भगवान की महिमा की बातें कह कर सुनाता है। चूंकि विश्व के रचयिता भगवान को ऐसे ही भला लगता है॥ १॥

मः ४ ॥ पूरे गुर का हुकमु न मंनै ओहु मनमुखु अगिआनु मुठा बिखु माइआ ॥ ओसु अंदरि कूड़ु कूड़ो करि बुझै अणहोदे झगड़े दयि ओस दै गलि पाइआ ॥ ओहु गल फरोसी करे बहुतेरी ओस दा बोलिआ किसै न भाइआ ॥ ओहु घरि घरि हंढै जिउ रंन दोहागणि ओसु नालि मुहु जोड़े ओसु भी लछणु लाइआ ॥ गुरमुखि होइ सु अलिपतो वरतै ओस दा पासु छडि गुर पासि बहि जाइआ ॥ जो गुरु गोपे आपणा सु भला नाही पंचहु ओनि लाहा मूलु सभु गवाइआ ॥ पहिला आगमु निगमु नानकु आखि सुणाए पूरे गुर का बचनु उपरि आइआ ॥ गुरसिखा वडिआई भावै गुर पूरे की मनमुखा ओह वेला हथि न आइआ ॥ २ ॥

महला ४॥ जो मनुष्य गुरु के हुक्म की उल्लंघना करता है, वह स्वेच्छाचारी, अज्ञानी मनुष्य माया रूपी विष द्वारा ठग लिया गया है। उसके हृदय में झूठ विद्यमान है और वह हरेक को झूठा ही समझता है। इसलिए ईश्वर ने व्यर्थ के विवाद उसके गले में डाल दिए हैं। वह व्यर्थ बकवास करता है, परन्तु जो कुछ वह करता है, वह किसी को भी अच्छा नहीं लगता। वह दुहागिन नारी की भाँति घर—घर फिरता है। जो कोई भी उससे मेल—मिलाप करता है, उसे भी बुराई का तिलक (चिन्ह) लग जाता है। जो गुरमुख होता है, वह मनमुख से अलग रहता है, वह स्वेच्छाचारी की संगति त्यागकर गुरु के

महला ४॥ स्वेच्छाचारी मनुष्य सारा दिन लोभ में प्रवृत्त हुआ रहता है, चाहे बातें वह दूसरी ही करता है। वह रात को नींद में घुट जाता है, उसकी तमाम इन्द्रियाँ शिथिल हो जाती हैं। ऐसे स्वेच्छाचारी मनुष्यों पर स्त्रियों का हुक्म चलता है और वह उन्हें सदैव ही अच्छे-अच्छे पदार्थ लाकर देते हैं। जो पुरुष स्त्रियों का कहना मानते हैं, वे अपवित्र, बुद्धिहीन एवं मूर्ख होते हैं। अशुद्ध पुरुष कामवासना में लीन रहते हैं, वह स्त्रियों से परामर्श लेते हैं और उसके आदेशानुसार चलते हैं। जो सतिगुरु के हुक्म अनुसार चलता है, वह पुरुष सच्चा तथा सर्वोत्कृष्ट है। समस्त स्त्रियाँ एवं पुरुष ईश्वर ने स्वयं उत्पन्न किए हैं। ईश्वर ही तमाम खेलें खेलता है। नानक का कथन है कि हे प्रभु! सृष्टि की यह तमाम रचना तेरी रची हुई है, जो कुछ तूने किया है, सब भला है॥ २॥

पउड़ी ॥ तू वेपरवाहु अथाहु है अतुलु किउ तुलीऐ ॥ से वडभागी जि तुधु धिआइदे जिन सतिगुरु मिलीऐ ॥ सतिगुर की बाणी सति सरूपु है गुरबाणी बणीऐ ॥ सतिगुर की रीसै होरि कचु पिचु बोलदे से कूड़िआर कूड़े झड़ि पड़ीऐ ॥ ओन्हा अंदरि होरु मुखि होरु है बिखु माइआ नो झखि मरदे कड़ीऐ ॥ ६ ॥

पउड़ी॥ हे मेरे मालिक! तू बेपरवाह, अथाह एवं अतुलनीय है, फिर तुझे कैसे तोला जा सकता है? हे गोबिन्द! जो तुझे याद करते हैं और जिन्हें सतिगुरु मिलता है, वे बड़े भाग्यशाली हैं। सतिगुरु की वाणी सत्य स्वरूप है। गुरुवाणी द्वारा मनुष्य पूर्ण जाना जाता है। कई दूसरे झूठ के व्यापारी सतिगुरु की नकल करके अधकचरी वाणी उच्चरित करते हैं परन्तु हृदय में झूठ होने के कारण शीघ्र ही नाश हो जाते हैं। उनके हृदय में कुछ और होता है तथा मुँह में कुछ और, वे विष रूपी माया का संग्रह करने के लिए पीड़ित होते हैं और खप-खप कर मरते हैं॥ ६॥

सलोक मः ४ ॥ सतिगुर की सेवा निरमली निरमल जनु होइ सु सेवा घाले ॥ जिन अंदरि कपटु विकारु झूठु ओइ आपे सचै वखि कढे जजमाले ॥ सचिआर सिख बहि सतिगुर पासि घालनि कूड़िआर न लभनी कितै थाइ भाले ॥ जिना सतिगुर का आखिआ सुखावै नाही तिना मुह भलेरे फिरहि दयि गाले ॥ जिन अंदरि प्रीति नही हरि केरी से किचरकु वेराईअनि मनमुख बेताले ॥ सतिगुर नो मिलै सु आपणा मनु थाइ रखै ओहु आपि वरतै आपणी वथु नाले ॥ जन नानक इकना गुरु मेलि सुखु देवै इकि आपे वखि कढै ठगवाले ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ सतिगुरु की सेवा बड़ी निर्मल है, जो व्यक्ति निर्मल होता है, वही यह चुनौतीपूर्ण कार्य कर सकता है। जिनके अन्तर्मन में कपट, विकार एवं झूठ होता है, सत्यस्वरूप ईश्वर ने स्वयं ही उन कोढ़ियों को अलग कर दिया है। सत्यवादी सिक्ख सतिगुरु के पास बैठते हैं और उनकी सेवा करते हैं। झूठों को खोज-तलाश करते हुए कहीं भी स्थान नहीं मिलता। जिन्हें सतिगुरु के वचन अच्छे नहीं लगते, उनके चेहरे तिरस्कृत हैं और ईश्वर से अपमानित हुए वे भटकते फिरते हैं। जिनके हृदय में ईश्वर का प्रेम नहीं, उन स्वेच्छाचारी बेताल लोगों को कितनी देर तक दिलासा दिया जा सकता है? जो मनुष्य सतिगुरु को मिलता है, वह अपने मन को (विकारों से) अंकुश लगाकर रखता है। साथ ही, प्रभु के नाम की अपनी पूँजी का वह स्वयं ही इस्तेमाल करता है। हे नानक! (जीव के वश में कुछ नहीं) गुरु से मिलाकर कुछ लोगों को प्रभु सुख प्रदान करता है एवं कुछ कपट करने वालों को अलग कर देता है॥ १॥

मः ४ ॥ जिना अंदरि नामु निधानु हरि तिन के काज दयि आदे रासि ॥ तिन चूकी मुहताजी लोकन की हरि प्रभु अंगु करि बैठा पासि ॥ जां करता वलि ता सभु को वलि सभि दरसनु देखि करहि

समक्ष बैठता है। हे संतजनों ! जो अपने गुरु की निंदा करता है, वह भला पुरुष नहीं। वह अपना मूल लाभ समस्त गंवा देता है। नानक कहकर सुनाता है कि पहले लोग शास्त्रों एवं वेदों को पढ़ते एवं प्रचार करते थे परन्तु पूर्ण गुरु की वाणी उन सबमें सर्वोच्च प्रामाणिक है। गुरु के सिक्खों को गुरु की प्रशंसा अच्छी लगती है। लेकिन स्वेच्छाचारी को यह अवसर प्राप्त नहीं होता॥ २॥

पउड़ी ॥ सचु सचा सभ दू वडा है सो लए जिसु सतिगुरु टिके ॥ सो सतिगुरु जि सचु धिआइदा सचु सचा सतिगुरु इके ॥ सोई सतिगुरु पुरखु है जिनि पंजे दूत कीते वसि छिके ॥ जि बिनु सतिगुर सेवे आपु गणाइदे तिन अंदरि कूड़ु फिटु फिटु मुह फिके ॥ ओइ बोले किसै न भावनी मुह काले सतिगुर ते चुके ॥ ८ ॥

पउड़ी॥ सत्यस्वरूप परमात्मा सर्वोपरि है। यह (प्रभु) उस मनुष्य को मिलता है, जिसे सतिगुरु तिलक (आशीर्वाद) दें। सतिगुरु भी वही है जो सत्य का ध्यान–मनन करता है। यह सत्य है कि सत्यस्वरूप परमात्मा एवं सतिगुरु एक ही हैं। वही महापुरुष सतिगुरु है, जिसने (कामादिक) विकारों को अपने वश में किया हुआ है। जो मनुष्य सतिगुरु की सेवा से विहीन रहते हैं और अपने आपको बड़ा कहलवाते हैं, उनके भीतर झूठ विद्यमान है। उनके रुक्ष चेहरे पर धिक्कार है। वह सतिगुरु से बिछुड़ा होता है, उसका मुख तिरस्कृत किया हुआ होता है और उसकी वार्तालाप किसी को भी अच्छी नहीं लगती॥ ८॥

सलोक मः ४ ॥ हरि प्रभ का सभु खेतु है हरि आपि किरसाणी लाइआ ॥ गुरमुखि बखसि जमाईअनु मनमुखी मूलु गवाइआ ॥ सभु को बीजे आपणे भले नो हरि भावै सो खेतु जमाइआ ॥ गुरसिखी हरि अंम्रितु बीजिआ हरि अंम्रित नामु फलु अंम्रितु पाइआ ॥ जमु चूहा किरस नित कुरकदा हरि करतै मारि कढाइआ ॥ किरसाणी जंमी भाउ करि हरि बोहल बखस जमाइआ ॥ तिन का काड़ा अंदेसा सभु लाहिओनु जिनी सतिगुरु पुरखु धिआइआ ॥ जन नानक नामु अराधिआ आपि तरिआ सभु जगतु तराइआ ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ सारी दुनिया भगवान का खेत है। भगवान स्वयं ही (जीवों से) कृषि करवाता है। गुरमुख प्रभु की कृपा की फसल पैदा करता है। लेकिन स्वेच्छाचारी अपना मूल भी गंवा देता है। हरेक व्यक्ति अपने लाभ हेतु बोता है। लेकिन भगवान उस फसल को उगाता है, जो उसे अच्छी लगती है। गुरु का सिक्ख भगवान के नाम रूपी अमृत को बोता है और वह भगवान के अमृतमयी नाम को अपने अमृत फल के तौर पर प्राप्त करता है। मृत्यु रूपी चूहा प्रतिदिन फसल को कुतरता है परन्तु विश्व के रचयिता ईश्वर ने इसे पीट कर बाहर निकाल दिया है। इसलिए गुरमुखों की फसल प्रेम–पूर्वक उगती है और ईश्वर की दया से अनाज के दानों का अम्बार लग जाता है। जिन्होंने महापुरुष सतिगुरु का ध्यान किया है, ईश्वर ने उनकी तमाम चिंता एवं दुःख नष्ट कर दिए हैं। हे नानक ! जो मनुष्य हरि–नाम की आराधना करता है, वह स्वयं पार हो जाता है और सारे जगत् का भी कल्याण कर देता है॥ १॥

मः ४ ॥ सारा दिनु लालचि अटिआ मनमुखि होरे गला ॥ राती ऊघै दबिआ नवे सोत सभि ढिला ॥ मनमुखा दै सिरि जोरा अमरु है नित देवहि भला ॥ जोरा दा आखिआ पुरख कमावदे से अपवित अमेध खला ॥ कामि विआपे कुसुध नर से जोरा पुछि चला ॥ सतिगुर कै आखिऐ जो चलै सो सति पुरखु भल भला ॥ जोरा पुरख सभि आपि उपाइअनु हरि खेल सभि खिला ॥ सभ तेरी बणत बणावणी नानक भल भला ॥ २ ॥

साबासि ॥ साहु पातिसाहु सभु हरि का कीआ सभि जन कउ आइ करहि रहरासि ॥ गुर पूरे की वडी वडिआई हरि वडा सेवि अतुलु सुखु पाइआ ॥ गुरि पूरै दानु दीआ हरि निहचलु नित बखसे चड़ै सवाइआ ॥ कोई निंदकु वडिआई देखि न सकै सो करतै आपि पचाइआ ॥ जनु नानकु गुण बोलै करते के भगता नो सदा रखदा आइआ ॥ २ ॥

महला ४॥ जिनके अन्तर्मन में भगवान का नाम रूपी भण्डार है, उनके कार्य ईश्वर स्वयं संवार देता है। उन्हें दूसरे लोगों के सहारे की आवश्यकता नहीं रहती, क्योंकि ईश्वर उनको अपना कर सदैव उनके साथ–साथ रहता है। सब लोग उनका दर्शन करके उनकी प्रशंसा करते हैं क्योंकि जब सृजनहार परमात्मा स्वयं उनका पक्ष करता है तो प्रत्येक ही उनका पक्ष करेगा। भगवान के बनाए हुए राजे–महाराजे भी प्रभु के सेवक के समक्ष वन्दना करते हैं। पूर्ण गुरु की महिमा महान है। महान ईश्वर की सेवा करने से अतुलनीय सुख प्राप्त होता है। पूर्ण गुरु के द्वारा ईश्वर ने दान दिया है, वह समाप्त नहीं होता, क्योंकि ईश्वर सदैव ही दया किए जाता है और वह दान दिनों–दिन बढ़ता रहता है। जो कोई निंदक (ऐसे प्रभु के सेवक की) महानता देखकर सहन नहीं कर सकता, उसे सृजनहार ने स्वयं ईर्ष्याग्नि में पीड़ित किया है। दास नानक विश्व के रचयिता परमात्मा की गुणस्तुति करता है, जो अपने भक्तों की सदैव रक्षा करता आया है॥ २॥

पउड़ी ॥ तू साहिबु अगम दइआलु है वड दाता दाणा ॥ तुधु जेवडु मै होरु को दिसि न आवई तूहैं सुघड़ु मेरै मनि भाणा ॥ मोहु कुटंबु दिसि आवदा सभु चलणहारा आवण जाणा ॥ जो बिनु सचे होरतु चितु लाइदे से कूड़िआर कूड़ा तिन माणा ॥ नानक सचु धिआइ तू बिनु सचे पचि पचि मुए अजाणा ॥ १० ॥

पउड़ी॥ हे मेरे मालिक ! तू अगम्य एवं दया का घर है, बड़ा दाता एवं चतुर है, मुझे तेरे समान बड़ा दूसरा कोई दिखाई नहीं देता, तुम ही बुद्धिमान हो, जो मेरे मन को प्रिय लगे हो। जो मोह रूपी कुटुम्ब दिखाई देता है, सब क्षणभंगुर है और जन्म–मरण के अधीन है। जो मनुष्य सत्यस्वरूप परमात्मा के अलावा किसी दूसरे से मन लगाते हैं, वह झूठ के व्यापारी हैं और उनका इस पर अभिमान भी झूठा है। हे नानक ! सत्यस्वरूप परमात्मा का ध्यान कर, चूंकि सत्य (ईश्वर) से विहीन हुए मूर्ख जीव दुखी होकर मरते रहते हैं॥ १०॥

सलोक मः ४ ॥ अगो दे सत भाउ न दिचै पिछो दे आखिआ कंमि न आवै ॥ अध विचि फिरै मनमुखु वेचारा गली किउ सुखु पावै ॥ जिसु अंदरि प्रीति नही सतिगुर की सु कूड़ी आवै कूड़ी जावै ॥ जे क्रिपा करे मेरा हरि प्रभु करता तां सतिगुरु पारब्रहमु नदरी आवै ॥ ता अपिउ पीवै सबदु गुर केरा सभु काड़ा अंदेसा भरमु चुकावै ॥ सदा अनंदि रहै दिनु राती जन नानक अनदिनु हरि गुण गावै ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ स्वेच्छाचारी पुरुष पहले तो सतिगुरु को सम्मान नहीं देता, तत्पश्चात् उसकी शिक्षा का कोई फायदा नहीं होता, वह भाग्यहीन दुविधा में ही भटकता रहता है, यदि गुरु के प्रति श्रद्धा न हो तो सिर्फ बातों से कैसे सुख मिल सकता है ? जिसके अन्तर्मन में सतिगुरु का प्रेम नहीं, वह दिखावे के लिए (गुरु–द्वार पर) आता जाता है। यदि जगत् का रचयिता प्रभु–परमेश्वर दया करे तो दिखाई दे जाता है कि सतिगुरु भगवान का रूप है। वह तब गुरु का शब्द रूपी अमृत पान करता है और उसकी तमाम ईर्ष्या, चिन्ता एवं दुविधा मिट जाते हैं। हे नानक ! वह दिन–रात सदैव ही प्रसन्न रहता है और सदा ही परमेश्वर की गुणस्तुति करता रहता है॥ १॥

मः ४ ॥ गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ॥ उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अंम्रित सरि नावै ॥ उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै सभि किलविख पाप दोख लहि जावै ॥ फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै बहदिआ उठदिआ हरि नामु धिआवै ॥ जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि सो गुरसिखु गुरू मनि भावै ॥ जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी तिसु गुरसिख गुरू उपदेसु सुणावै ॥ जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की जो आपि जपै अवरह नामु जपावै ॥ २ ॥

महला ४॥ जो मनुष्य सतिगुरु का (सच्चा) सिक्ख कहलाता है, वह प्रभातकाल उठकर ईश्वर के नाम का सिमरन करता है। वह प्रतिदिन सुबह उद्यम करता है, स्नान करता है और फिर नाम–रूपी अमृत के सरोवर में डुबकी लगाता है। गुरु के उपदेश द्वारा वह प्रभु–परमेश्वर के नाम का जाप जपता है और इस प्रकार उसके तमाम पाप दोष निवृत्त हो जाते हैं। फिर दिन निकलने पर गुरु की वाणी का कीर्त्तन करता है और उठते–बैठते प्रभु का नाम सिमरन करता रहता है। जो गुरु का सिक्ख अपनी हर सांस एवं ग्रास से मेरे हरि–परमेश्वर की आराधना करता है, वह गुरु के मन को अच्छा लगने लग जाता है। जिस पर मेरा स्वामी दयालु होता है, उस गुरसिक्ख को गुरु उपदेश देता है। नानक भी उस गुरसिक्ख की चरण–धूलि माँगता है, जो स्वयं नाम जपता है और दूसरों को जपाता है॥ २॥

पउड़ी ॥ जो तुधु सचु धिआइदे से विरले थोड़े ॥ जो मनि चिति इकु अराधदे तिन की बरकति खाहि असंख करोड़े ॥ तुधुनो सभ धिआइदी से थाइ पए जो साहिब लोड़े ॥ जो बिनु सतिगुर सेवे खादे पैनदे से मुए मरि जंमे कोढे ॥ ओइ हाजरु मिठा बोलदे बाहरि विसु कढहि मुखि घोले ॥ मनि खोटे दयि विछोड़े ॥ ११ ॥

पउड़ी॥ हे सत्यस्वरूप प्रभु ! वे बहुत थोड़े व्यक्ति हैं, जो तेरा ध्यान–मनन करते हैं। जो मनुष्य पूर्ण एकाग्रचित होकर एक ईश्वर की आराधना करते हैं, उनकी बरकत अनन्त जीव खाते हैं। हे प्रभु ! वैसे तो सारी सृष्टि तेरा चिन्तन करती है परन्तु स्वीकृत वही होते हैं, जिन्हें तुम पसन्द करते हो। सतिगुरु की सेवा से विहीन रहकर जो मनुष्य खाने–पीने एवं पहनने के रसों में मग्न रहते हैं, वे कोढ़ी बार–बार जन्म लेते हैं। ऐसे मनुष्य सामने तो मीठी बातें करते हैं परन्तु तत्पश्चात विष घोलकर निकालते हैं। ऐसे मन से खोटे पुरुषों को ईश्वर ने जुदा कर दिया है॥ ११॥

सलोक मः ४ ॥ मलु जूई भरिआ नीला काला खिधोलड़ा तिनि वेमुखि वेमुखै नो पाइआ ॥ पासि न देई कोई बहणि जगत महि गूह पड़ि सगवी मलु लाइ मनमुखु आइआ ॥ पराई जो निंदा चुगली नो वेमुखु करि कै भेजिआ ओथै भी मुहु काला दुहा वेमुखा दा कराइआ ॥ तड़ सुणिआ सभतु जगत विचि भाई वेमुखु सणै नफरै पउली पउदी फावा होइ कै उठि घरि आइआ ॥ अगै संगती कुड़मी वेमुखु रलणा न मिलै ता वहुटी भतीजीं फिरि आणि घरि पाइआ ॥ हलतु पलतु दोवै गए नित भुखा कूके तिहाइआ ॥ धनु धनु सुआमी करता पुरखु है जिनि निआउ सचु बहि आपि कराइआ ॥ जो निंदा करे सतिगुर पूरे की सो साचै मारि पचाइआ॥ एहु अखरु तिनि आखिआ जिनि जगतु सभु उपाइआ ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ उस विमुख ने दूसरे विमुख को जूओं से भरा हुआ नीला एवं काला पहरावा डाल दिया है। इस जगत् में उसे कोई निकट नहीं बैठने देता, गन्दगी में पड़कर अपितु बहुत–सी मैल लगाकर मनमुख (वापिस) आया। जो मनुष्य पराई निन्दा एवं चुगली करने के लिए परामर्श करके भेजा

गया था, वहाँ भी दोनों का मुँह काला किया गया। हे भाई! जगत् में सब ओर एक—दम सुना गया कि विमुख को नौकर सहित जूतियाँ (खानी) पड़ीं और खूब हल्का होकर घर को उठ आया है। आगे संबंधियों में विमुख को बैठना मिले भी तो फिर पत्नी तथा भतीजों ने लाकर घर में स्थान दिया, उसके लोक—परलोक दोनों व्यर्थ गए और अब भूखा तथा प्यासा रोता है। जगत् का स्वामी कर्ता पुरुष धन्य धन्य है, जिसने न्याय के आसन पर विराज कर स्वयं सच्चा न्याय करवाया है। जो मनुष्य पूर्ण सतिगुरु की निन्दा करता है, उसको सच्चा स्वामी दण्ड देकर मार फैंकता है। यह न्याय का वचन उस ईश्वर ने स्वयं कहा है, जिसने इस सृष्टि की रचना की है॥ १॥

मः ४ ॥ साहिबु जिस का नंगा भुखा होवै तिस दा नफरु किथहु रजि खाए ॥ जि साहिब कै घरि वथु होवै सु नफरै हथि आवै अणहोदी किथहु पाए ॥ जिस दी सेवा कीती फिरि लेखा मंगीऐ सा सेवा अउखी होई ॥ नानक सेवा करहु हरि गुर सफल दरसन की फिरि लेखा मंगै न कोई ॥ २ ॥

महला ४॥ जिसका स्वामी कंगाल है, उसका नौकर कहाँ पेट भर कर खा सकता है। यदि स्वामी के घर में कोई वस्तु हो तो उसे उसका नौकर प्राप्त कर सकता है परन्तु यदि है ही नहीं तो उसे वह कहाँ से ले सकता है। जिसकी सेवा करने पर भी लेखा माँगा जाना हो, वह सेवा कठिन है। हे नानक! जिस ईश्वर एवं गुरु का दर्शन (मानव जन्म को) सफल (करता) है, उसकी सेवा करो तांकि फिर कोई लेखा न माँगे॥ २॥

पउड़ी ॥ नानक वीचारहि संत जन चारि वेद कहंदे ॥ भगत मुखै ते बोलदे से वचन होवंदे ॥ प्रगट पहारा जापदा सभि लोक सुणंदे ॥ सुखु न पाइनि मुगध नर संत नालि खहंदे ॥ ओइ लोचनि ओना गुणै नो ओइ अहंकारि सड़ंदे ॥ ओइ विचारे किआ करहि जा भाग धुरि मंदे ॥ जो मारे तिनि पारब्रहमि से किसै न संदे ॥ वैरु करहि निरवैर नालि धरम निआइ पचंदे ॥ जो जो संति सरापिआ से फिरहि भवंदे ॥ पेडु मुंढाहूं कटिआ तिसु डाल सुकंदे ॥ १२ ॥

पउड़ी॥ हे नानक! संतजन विचार करते हैं और चारों वेद कहते हैं कि भक्तजन जो वचन मुँह से बोलते हैं, वे सत्य ही पूरे हो जाते हैं। भक्त समूचे जगत् में लोकप्रिय हो जाते हैं, उनकी शोभा सभी लोग सुनते हैं। जो मूर्ख लोग संतों से वैर—विरोध करते हैं, वे सुख नहीं पाते। वे दोषी जलते तो अहंकार में हैं परन्तु संतजनों के गुणों को तरसते हैं। इन दोषी मनुष्यों के वश में भी क्या है? चूंकि आदि काल से कुसंस्कार ही उनका भाग्य है। जिनका उस पारब्रह्म ने नाश किया है, वह किसी के भी मित्र नहीं। यह धर्म का न्याय है कि जो निर्वेर से वैर करते हैं, वह नष्ट हो जाते हैं। जिन्हें संतों ने तिरस्कृत किया है, वे भटकते रहते हैं। जब वृक्ष जड़ सहित उखाड़ दिया जाता है, उसकी टहनियाँ भी सूख जाती हैं॥ १२॥

सलोक मः ४ ॥ अंतरि हरि गुरू धिआइदा वडी वडिआई ॥ तुसि दिती पूरै सतिगुरू घटै नाही इकु तिलु किसै दी घटाई ॥ सचु साहिबु सतिगुरू कै वलि है तां झखि झखि मरै सभ लुोकाई ॥ निंदका के मुह काले करे हरि करतै आपि वधाई ॥ जिउ जिउ निंदक निंद करहि तिउ तिउ नित नित चड़ै सवाई ॥ जन नानक हरि आराधिआ तिनि पैरी आणि सभ पाई ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ गुरु की महिमा महान है, चूंकि वह अपने अन्तर्मन में भगवान का ध्यान करता रहता है। परमात्मा ने खुश होकर यह महिमा प्रदान की है, इसलिए किसी के घटाने पर तिल मात्र भी कम नहीं होती। जब सच्चा मालिक सतिगुरु के पक्ष में है तो सारी दुनिया के जितने भी लोग गुरु

के विरुद्ध होते हैं, वे खप–खप कर मर जाते हैं। सतिगुरु की महिमा कर्त्तार ने स्वयं बढ़ाई है और दोषियों के मुँह काले किए हैं। ज्यों–ज्यों निंदक मनुष्य सतिगुरु की निंदा करते, त्यों–त्यों सतिगुरु की महिमा बढ़ती रहती है। हे नानक ! सतिगुरु ने जिस ईश्वर का स्मरण किया है, उसने सारा संसार लाकर गुरु के चरणों में रख दिया है॥ १॥

मः ४ ॥ सतिगुर सेती गणत जि रखै हलतु पलतु सभु तिस का गइआ ॥ नित झहीआ पाए झगू सुटे झखदा झखदा झड़ि पइआ ॥ नित उपाव करै माइआ धन कारणि अगला धनु भी उडि गइआ ॥ किआ ओहु खटे किआ ओहु खावै जिसु अंदरि सहसा दुखु पइआ ॥ निरवैरै नालि जि वैरु रचाए सभु पापु जगतै का तिनि सिरि लइआ ॥ ओसु अगै पिछै ढोई नाही जिसु अंदरि निंदा मुहि अंबु पइआ ॥ जे सुइने नो ओहु हथु पाए ता खेहू सेती रलि गइआ ॥ जे गुर की सरणी फिरि ओहु आवै ता पिछले अउगण बखसि लइआ ॥ जन नानक अनदिनु नामु धिआइआ हरि सिमरत किलविख पाप गइआ ॥ २ ॥

महला ४॥ जो मनुष्य सतिगुरु के साथ वैर–विरोध करता है, उसका लोक–परलोक समूचे ही व्यर्थ जाते हैं। उसका वश नहीं चलता इसलिए वह सदा क्षुब्ध होता है और दांत पीसता है। धन एवं पदार्थ हेतु वह निरन्तर ही प्रयास करता है परन्तु उसका पहला पदार्थ भी समाप्त हो जाता है। वह क्या कमाएगा और क्या खाएगा, जिसके हृदय में दुःख चिन्ता की पीड़ा है! जो निर्वेर से शत्रुता करता है, वह संसार के तमाम पाप अपने सिर पर ले लेता है। जिसका मुँह उसके हृदय की निन्दा करता हो पर मुँह में मिठास हो, उसे लोक–परलोक में कोई सहारा नहीं देता। ऐसा खोटा मनुष्य यदि सोने को हाथ डाले तो वह भी राख हो जाता है। फिर भी यदि वह गुरु की शरण ले तो उसके पहले पाप क्षमा हो जाते हैं। हे नानक ! जो मनुष्य (गुरु की शरण लेकर) प्रतिदिन नाम–स्मरण करता है, ईश्वर का सिमरन करते हुए उसके अपराध मिट जाते हैं॥ २॥

पउड़ी ॥ तूहै सचा सचु तू सभ दू उपरि तू दीबाणु ॥ जो तुधु सचु धिआइदे सचु सेवनि सचे तेरा माणु ॥ ओना अंदरि सचु मुख उजले सचु बोलनि सचे तेरा ताणु ॥ से भगत जिनी गुरमुखि सालाहिआ सचु सबदु नीसाणु ॥ सचु जि सचे सेवदे तिन वारी सद कुरबाणु ॥ १३ ॥

पउड़ी॥ हे सत्यस्वरूप परमेश्वर ! तू सदैव सत्य है। तेरी कचहरी सर्वोपरि है। हे सत्य के पुंज ! जो तेरा ध्यान करते हैं, तेरी सेवा भक्ति करते हैं, उन्हें तेरा ही मान है। उनके हृदय में सत्य है इसलिए उनके चेहरे उज्ज्वल रहते हैं, वे सत्य बोलते हैं और हे सत्य प्रभु ! तेरा ही उन्हें आश्रय है। जो व्यक्ति गुरु के माध्यम से भगवान की सराहना करते हैं, वही सच्चे भक्त हैं और उनके पास सच्चा शब्द रूपी चिन्ह है। मैं उन पर न्यौछावर हूँ, बलिहारी हूँ, जो सत्यस्वरूप ईश्वर की सेवा–भक्ति करते रहते हैं॥ १३॥

सलोक मः ४ ॥ धुरि मारे पूरै सतिगुरू सेई हुणि सतिगुरि मारे ॥ जे मेलण नो बहुतेरा लोचीऐ न देई मिलण करतारे ॥ सतसंगति ढोई ना लहनि विचि संगति गुरि वीचारे ॥ कोई जाइ मिलै हुणि ओना नो तिसु मारे जमु जंदारे ॥ गुरि बाबै फिटके से फिटे गुरि अंगदि कीते कूड़िआरे ॥ गुरि तीजी पीड़ी वीचारिआ किआ हथि एना वेचारे ॥ गुरु चउथी पीड़ी टिकिआ तिनि निंदक दुसट सभि तारे ॥ कोई पुतु सिखु सेवा करे सतिगुरू की तिसु कारज सभि सवारे ॥ जो इछै सो फलु पाइसी पुतु धनु लखमी खड़ि मेले हरि निसतारे ॥ सभि निधान सतिगुरू विचि जिसु अंदरि हरि उर धारे ॥ सो पाए पूरा सतिगुरू जिसु लिखिआ लिखतु लिलारे ॥ जनु नानकु मागै धूड़ि तिन जो गुरसिख मित पिआरे ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ जो आदि से ही पूर्ण सतिगुरु द्वारा शापित हुए हैं, वे अब पुन: सतिगुरु की ओर से तिरस्कृत हो गए हैं, यदि उन्हें गुरु के साथ मिलाप की तीव्र लालसा भी हो तो भी परमात्मा ऐसे शापितों को मिलने नहीं देता। उन्हें सत्संगति में भी आश्रय नहीं मिलता। गुरु ने भी संगति में यही विचार किया है। यदि कोई भी अब जाकर उनको मिलता है, उसे मृत्यु का निर्दयी यमदूत प्रताड़ित करता है। जिन लोगों को गुरु नानक देव जी ने भी धिक्कार दिया, उन तिरस्कृत व्यक्तियों को गुरु अंगद देव ने भी झूठा घोषित किया। उस समय तीसरी पीढ़ी वाले श्री गुरु अमरदास जी ने विचार किया कि इन निर्धन लोगों के वश में क्या है? जिन सतिगुरु ने चौथे स्थान पर गुरु नियुक्त किया था, उन्होंने तमाम निंदक एवं दुष्टों का कल्याण कर दिया। कोई पुत्र अथवा सिक्ख जो कोई भी सतिगुरु की सेवा करता है, उसके सारे काम गुरु जी संवार देते हैं। पुत्र, धन, लक्ष्मी जिस भी वस्तु की वह इच्छा करे, वही फल उसे मिलता है। सतिगुरु उसे ले जाकर ईश्वर से मिलाता है और ईश्वर उसे पार कर देता है। जिस सतिगुरु के हृदय में भगवान का निवास है, उसमें सारे खजाने विद्यमान हैं। केवल वही मनुष्य सतिगुरु को पाता है जिसके माथे पर पूर्वकृत शुभ कर्मों के संस्कार रूप लेख लिखे हुए हैं। नानक उनकी चरण–धूलि मांगता है, जो गुरसिक्ख मित्र प्यारे हैं॥ १॥

मः ४ ॥ जिन कउ आपि देइ वडिआई जगतु भी आपे आणि तिन कउ पैरी पाए ॥ डरीऐ तां जे किछु आप दू कीचै सभु करता आपणी कला वधाए ॥ देखहु भाई एहु अखाड़ा हरि प्रीतम सचे का जिनि आपणै जोरि सभि आणि निवाए ॥ आपणिआ भगता की रख करे हरि सुआमी निंदका दुसटा के मुह काले कराए ॥ सतिगुर की वडिआई नित चड़ै सवाई हरि कीरति भगति नित आपि कराए ॥ अनदिनु नामु जपहु गुरसिखहु हरि करता सतिगुरु घरी वसाए ॥ सतिगुर की बाणी सति सति करि जाणहु गुरसिखहु हरि करता आपि मुहहु कढाए ॥ गुरसिखा के मुह उजले करे हरि पिआरा गुर का जैकारु संसारि सभतु कराए ॥ जनु नानकु हरि का दासु है हरि दासन की हरि पैज रखाए ॥ २ ॥

महला ४॥ जिन्हें ईश्वर स्वयं शोभा देता है, उनके चरणों में सारे जगत् को भी डाल देता है। केवल तभी हमें डरना चाहिए, यदि हम स्वयं कुछ करें। परमात्मा अपनी कला स्वयं बढ़ा रहा है। हे भाई! याद रखो, जिस ईश्वर ने अपने बल से जीवों को लाकर गुरु के समक्ष झुकाया है, उस सच्चे प्रियतम का यह जगत् एक अखाड़ा है, जिसमें जगत् का स्वामी प्रभु अपने भक्तों की रक्षा करता है और निंदक दुष्टों के मुँह काले कराता है। सतिगुरु की शोभा दिन–ब–दिन बढ़ती जाती है। ईश्वर अपने भक्तों को हमेशा अपना यश एवं भक्ति स्वयं ही करवाता है। हे गुरसिक्खो! दिन–रात नाम का जाप करो और सतिगुरु के द्वारा हरि कर्त्तार को अपने हृदय में बसाओ। हे गुरसिक्खो! सतिगुरु की वाणी बिल्कुल सत्य समझो चूंकि विश्व का रचयिता परमात्मा स्वयं यह वाणी सतिगुरु के मुख से कहलवाता है। प्रियतम प्रभु गुरसिक्खों के मुख उज्ज्वल करता है और सारी दुनिया में गुरु की जय–जयकार करवाता है। नानक हरि का दास है। हरि के दासों की हरि स्वयं ही लाज रखता है॥ २॥

पउड़ी ॥ तू सचा साहिबु आपि है सचु साह हमारे ॥ सचु पूजी नामु द्रिड़ाइ प्रभ वणजारे थारे ॥ सचु सेवहि सचु वणंजि लैहि गुण कथह निरारे ॥ सेवक भाइ से जन मिले गुर सबदि सवारे ॥ तू सचा साहिबु अलखु है गुर सबदि लखारे ॥ १४ ॥

पउड़ी॥ हे मेरे सच्चे शाह! तू स्वयं ही सच्चा मालिक है। हे प्रभु! हमें सत्य नाम रूपी पूँजी दृढ़ करवाओ, चूंकि हम तेरे ही वणजारे हैं। जो व्यक्ति सत्य नाम को जपते हैं, सत्य नाम का व्यापार

करते हैं, वह गुणों का कथन करते हैं, वे दुनिया से निराले हैं। जिन्होंने गुरु के शब्द द्वारा मन को संवार लिया है, वही व्यक्ति सेवक भावना वाले बनकर परमात्मा से जा मिले हैं। हे प्रभु ! तू सच्चा साहिब अलक्ष्य है (परन्तु) गुरु के शब्द द्वारा ही तेरी सूझ होती है॥ १४॥

सलोक मः ४ ॥ जिसु अंदरि ताति पराई होवै तिस का कदे न होवी भला ॥ ओस दै आखिऐ कोई न लगै नित ओजाड़ी पूकारे खला ॥ जिसु अंदरि चुगली चुगलो वजै कीता करतिआ ओस दा सभु गइआ ॥ नित चुगली करे अणहोदी पराई मुहु कढि न सकै ओस दा काला भइआ ॥ करम धरती सरीरु कलिजुग विचि जेहा को बीजे तेहा को खाए ॥ गला उपरि तपावसु न होई विसु खाधी ततकाल मरि जाए ॥ भाई वेखहु निआउ सचु करते का जेहा कोई करे तेहा कोई पाए ॥ जन नानक कउ सभ सोझी पाई हरि दर कीआ बाता आखि सुणाए ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ जिस व्यक्ति के अन्तर्मन में दूसरों को दुखी करने की द्वेष–भावना होती है, उस व्यक्ति का कभी भला नहीं होता। उस व्यक्ति के वचन पर कोई भरोसा नहीं करता, वह हमेशा उजाड़ में खड़ा पुकारता रहता है। जिस मनुष्य के हृदय में चुगली होती है, वह चुगलखोर के नाम से प्रसिद्ध हो जाता है, उसकी सारी की हुई कमाई निष्फल हो जाती है। ऐसा व्यक्ति नित्य पराई झूठी चुगली करता है, इस लांछन के कारण वह किसी के सम्मुख भी नहीं जा सकता, फलस्वरूप उसका मुँह काला हो जाता है। इस कलियुग में शरीर कर्म रूपी धरती है, इसमें जैसा बीज इन्सान बोता है, वैसा ही फल खाता है, यूं ही बातों द्वारा कभी न्याय नहीं होता, यदि विष खाए तो तुरन्त मर जाता है। हे भाई ! सच्चे परमात्मा का इन्साफ देखो, जैसे कोई कर्म करता है, वैसा ही उसका फल पाता है। नानक को प्रभु ने यह ज्ञान दिया है, और वह प्रभु के द्वार की ये बातें करके सुना रहा है॥ १॥

मः ४ ॥ होदै परतखि गुरू जो विछुड़े तिन कउ दरि ढोई नाही ॥ कोई जाइ मिलै तिन निंदका मुह फिके थुक थुक मुहि पाही ॥ जो सतिगुरि फिटके से सभ जगति फिटके नित भंभल भूसे खाही ॥ जिन गुरु गोपिआ आपणा से लैदे ढहा फिराही ॥ तिन की भुख कदे न उतरै नित भुखा भुख कूकाही ॥ ओना दा आखिआ को ना सुणै नित हउले हउलि मराही ॥ सतिगुर की वडिआई वेखि न सकनी ओना अगै पिछै थाउ नाही ॥ जो सतिगुरि मारे तिन जाइ मिलहि रहदी खुहदी सभ पति गवाही ॥ ओइ अगै कुसटी गुर के फिटके जि ओसु मिलै तिसु कुसटु उठाही ॥ हरि तिन का दरसनु ना करहु जो दूजै भाइ चितु लाही ॥ धुरि करतै आपि लिखि पाइआ तिसु नालि किहु चारा नाही ॥ जन नानक नामु अराधि तू तिसु अपड़ि को न सकाही ॥ नावै की वडिआई वडी है नित सवाई चड़ै चड़ाही ॥ २ ॥

महला ४॥ जो व्यक्ति गुरु के समक्ष होते हुए भी बिछुड़ चुके हैं। उन्हें सत्य के दरबार में कोई सहारा नहीं मिलता। यदि कोई उन निंदकों को जाकर मिलता भी है, तो उसका भी मुँह फीका एवं काला होता है (अर्थात् लोक उसे तिरस्कृत करते हैं) चूंकि जो लोग सतिगुरु की ओर से तिरस्कृत हुए हैं, वे दुनिया में भी तिरस्कृत हुए हैं और वे हमेशा भटकते रहते हैं। जो व्यक्ति गुरु की निन्दा करते हैं, वे हमेशा रोते फिरते हैं। उनकी तृष्णा कभी नहीं बुझती और सदा भूख–भूख चिल्लाते हैं। कोई उनकी बात पर भरोसा नहीं करता इसलिए वे सदा चिन्ता–फिक्र में ही खपते हैं। जो मनुष्य गुरु की महिमा सहन नहीं करते, उन्हें लोक–परलोक में स्थान नहीं मिलता। गुरु से शापित हुए व्यक्तियों को जो मनुष्य जाकर मिलते हैं, वह भी अपनी थोड़ी–बहुत प्रतिष्ठा गंवा लेते हैं, क्योंकि गुरु से शापित वे तो पहले ही कोढ़ी हैं। जो भी व्यक्ति ऐसे व्यक्ति का साथ करता है, उसे भी कोढ़ लग जाता है।

हे जिज्ञासुओ ! भगवान के लिए उनके दर्शन भी मत करो, जो सतिगुरु को त्याग कर माया के मोह में लगते हैं। उनके साथ उन्हें कोई उपाय सफल नहीं होता। चूंकि परमात्मा ने आदिकाल से ही उनके द्वारा किए कर्मों के अनुसार ऐसे द्वैतभाव के संस्कार ही लिख दिए हैं। हे नानक ! तुम नाम की आराधना करो, चूंकि नाम की आराधना वाले की समानता कोई नहीं कर सकता, नाम की महिमा महान है जो दिन–प्रतिदिन बढ़ती जाती है।। २।।

मः ४ ॥ जि हौंदै गुरू बहि टिकिआ तिसु जन की वडिआई वडी होई ॥ तिसु कउ जगतु निविआ सभु पैरी पइआ जसु वरतिआ लोई ॥ तिस कउ खंड ब्रहमंड नमसकारु करहि जिस कै मसतकि हथु धरिआ गुरि पूरै सो पूरा होई ॥ गुर की वडिआई नित चड़ै सवाई अपड़ि को न सकोई ॥ जनु नानकु हरि करतै आपि बहि टिकिआ आपे पैज रखै प्रभु सोई ॥ ३ ॥

महला ४।। जिसे गुरु ने स्वयं बैठकर तिलक किया हो, उसकी बहुत शोभा होती है। उसके समक्ष सारी दुनिया झुकती है और उसके चरण स्पर्श करती है। उसकी शोभा सारे विश्व में फैल जाती है। जिस मस्तक पर पूर्ण गुरु ने हाथ रखा हो, वह समस्त गुणों में पूर्ण हो गया और समस्त खण्डों – ब्रह्माण्डों के जीव उसे प्रणाम करते हैं। गुरु की महिमा दिनों–दिन बढ़ती है, कोई मनुष्य उसकी समानता नहीं कर सकता, क्योंकि अपने सेवक नानक को सृजनहार प्रभु ने स्वयं मान दिया है इसलिए ईश्वर स्वयं ही उसकी लाज रखता है।। ३।।

पउड़ी ॥ काइआ कोटु अपारु है अंदरि हटनाले ॥ गुरमुखि सउदा जो करे हरि वसतु समाले ॥ नामु निधानु हरि वणजीऐ हीरे परवाले ॥ विणु काइआ जि होर थै धनु खोजदे से मूड़ बेताले ॥ से उझड़ि भरमि भवाईअहि जिउ झाड़ मिरगु भाले ॥ १५ ॥

पउड़ी।। काया रूपी किला अपार है, जिसके भीतर इन्द्रियाँ रूपी बाज़ार है। जो गुरमुख इन्द्रियाँ रूपी बाजार में से नाम रूपी सौदा खरीदते हैं, वे भगवान की नाम रूपी वस्तु संभाल लेते हैं। काया रूपी किले में ही ईश्वर के नाम के खजाने का व्यापार किया जा सकता है, यही सौदे साथ–साथ निभने वाले हीरे तथा मूंगे हैं। जो व्यक्ति इस सौदे को काया के बिना किसी दूसरे स्थान पर खोजते हैं, वे मूर्ख हैं और मनुष्य काया में आए हुए भूत–प्रेत हैं। जैसे मृग कस्तूरी की सुगन्धि हेतु झाड़ियों को खोजता फिरता है, वैसे ही ऐसे मनुष्य भ्रम में फँसे हुए वनों में भटकते रहते हैं।। १५।।

सलोक मः ४ ॥ जो निंदा करे सतिगुर पूरे की सु अउखा जग महि होइआ ॥ नरक घोरु दुख खूहु है ओथै पकड़ि ओहु ढोइआ ॥ कूक पुकार को न सुणे ओहु अउखा होइ होइ रोइआ ॥ ओनि हलतु पलतु सभु गवाइआ लाहा मूलु सभु खोइआ ॥ ओहु तेली संदा बलदु करि नित भलके उठि प्रभि जोइआ ॥ हरि वेखै सुणै नित सभु किछु तिदू किछु गुझा न होइआ ॥ जैसा बीजे सो लुणै जेहा पुरबि किनै बोइआ ॥ जिसु क्रिपा करे प्रभु आपणी तिसु सतिगुर के चरण धोइआ ॥ गुर सतिगुर पिछै तरि गइआ जिउ लोहा काठ संगोइआ ॥ जन नानक नामु धिआइ तू जपि हरि हरि नामि सुखु होइआ ॥ १ ॥

श्लोक महला ४।। जो व्यक्ति पूर्ण सतिगुरु की निन्दा करता है, वह दुनिया में हमेशा दुखी रहता है। दुखों का कुआँ रूपी जो घोर नरक है, उस निंदक को पकड़कर उसमें डाला जाता है, जहाँ उसकी विनती कोई नहीं सुनता और वह दुखी होकर रोता है। ऐसा व्यक्ति लोक–परलोक, नाम–रूपी लाभ एवं मानव जन्म रूपी मूल सब कुछ गंवा देता है। अंत में ऐसा व्यक्ति तेली का बैल बनकर

प्रतिदिन नए सूर्य की भाँति ईश्वर के आदेश में लगाया जाता है। प्रभु सदैव (यह) सब कुछ देखता एवं सुनता है, उससे कोई बात छिपी नहीं रह सकती। जैसा बीज किसी इन्सान ने आदि से बोया है और जैसा वर्तमान में बो रहा है, वैसा ही फल खाता है। जिस प्राणी पर ईश्वर अपनी कृपा–दृष्टि करता है, वह सतिगुरु के चरण धोता है। जैसे लोहा काठ के साथ तैरता है, उसी प्रकार सतिगुरु के दिशा–निर्देश पर चलकर भवसागर से पार हो जाता है। हे नानक ! तुम नाम की आराधना करो चूंकि हरि–परमेश्वर के नाम का जाप करने से ही सुख उपलब्ध होता है॥ १॥

मः ४ ॥ वडभागीआ सोहागणी जिना गुरमुखि मिलिआ हरि राइ ॥ अंतर जोति प्रगासीआ नानक नामि समाइ ॥ २ ॥

महला ४॥ वे जीव–स्त्रियाँ बड़ी भाग्यवान एवं सुहागिन हैं, जिन्हें गुरु के माध्यम से हरि–प्रभु मिल गया है। हे नानक ! ईश्वर की ज्योति ने उनका हृदय रोशन कर दिया है और वे उसके नाम में लीन हो गई हैं॥ २॥

पउड़ी ॥ इहु सरीरु सभु धरमु है जिसु अंदरि सचे की विचि जोति ॥ गुहज रतन विचि लुकि रहे कोई गुरमुखि सेवकु कढै खोति ॥ सभु आतम रामु पछाणिआ तां इकु रविआ इको ओति पोति ॥ इकु देखिआ इकु मंनिआ इको सुणिआ स्रवण सरोति ॥ जन नानक नामु सलाहि तू सचु सचे सेवा तेरी होति ॥ १६ ॥

पउड़ी॥ यह सारा शरीर धर्म है, इसमें सत्य (प्रभु) की ज्योति विद्यमान है। इस (शरीर) में दिव्य रत्न छिपे हैं। कोई विरला गुरमुख सेवक ही इन्हें खोजकर निकालता है। जब प्राणी राम को अनुभव करता है तो वह एक ईश्वर को सर्वव्यापक विद्यमान हुआ ऐसे देखता है जैसे ताने–बाने में एक धागा होता है। वह एक ईश्वर को ही देखता है, उस पर ही आस्था रखता है और अपने कानों से उसकी बातें सुनता है। हे नानक ! तुम प्रभु के नाम की महिमा–स्तुति करो, सचमुच तेरी यह सेवा ईश्वर के द्वार पर स्वीकृत होगी॥ १६॥

सलोक मः ४ ॥ सभि रस तिन कै रिदै हहि जिन हरि वसिआ मन माहि ॥ हरि दरगहि ते मुख उजले तिन कउ सभि देखण जाहि ॥ जिन निरभउ नामु धिआइआ तिन कउ भउ कोई नाहि ॥ हरि उतमु तिनी सरेविआ जिन कउ धुरि लिखिआ आहि ॥ ते हरि दरगहि पैनाईअहि जिन हरि वुठा मन माहि ॥ ओइ आपि तरे सभ कुटंब सिउ तिन पिछै सभु जगतु छडाहि ॥ जन नानक कउ हरि मेलि जन तिन वेखि वेखि हम जीवाहि ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ जिनके मन में भगवान निवास करता है, तमाम रस (खुशियां) उनके भीतर मौजूद हैं। भगवान के दरबार में उनके मुख उज्ज्वल होते हैं और सभी उनके दर्शन हेतु जाते हैं। जिन लोगों ने निर्भय परमेश्वर के नाम का ध्यान किया है, उन्हें कोई भय नहीं होता। जिनकी तकदीर में आदि से ही लिखा होता है, उन्होंने उत्तम परमात्मा का सिमरन किया है। जिनके मन में भगवान निवास करता है, उन्हें उसके दरबार में ख्याति मिलती है। वह अपने समूचे परिवार सहित भवसागर से पार हो जाते हैं और उनके पद्‌चिन्हों पर चलकर सारी दुनिया मुक्त हो जाती है। नानक का कथन है कि हे भगवान ! मुझे भी ऐसे महापुरुषों से मिला दे, जिन्हें देख–देख कर हम जीते रहें॥ १॥

मः ४ ॥ सा धरती भई हरीआवली जिथै मेरा सतिगुरु बैठा आइ ॥ से जंत भए हरीआवले जिनी मेरा सतिगुरु देखिआ जाइ ॥ धनु धंनु पिता धनु धंनु कुलु धनु धनु सु जननी जिनि गुरू जणिआ माइ॥

धनु धंनु गुरू जिनि नामु अराधिआ आपि तरिआ जिनी डिठा तिना लई छडाइ ॥ हरि सतिगुरु मेलहु दइआ करि जनु नानकु धोवै पाइ ॥ २ ॥

महला ४॥ जिस धरती पर मेरा सतिगुरु आकर बैठा है, वह धरती समृद्ध हो गई है। वे लोग भी कृतार्थ हो चुके हैं, जिन्होंने मेरे सतिगुरु के जाकर दर्शन प्राप्त किए हैं। हे माँ! वह पिता बड़ा भाग्यशाली है, वह कुल भी भाग्यवान है, वह माँ बड़ी भाग्यवान है, जिसने गुरु को जन्म दिया है। वह गुरु धन्य–धन्य है, जिसने भगवान के नाम की आराधना की है। वह स्वयं भी भवसागर से पार हुए हैं और जिन्होंने गुरु के दर्शन किए हैं, उन्हें भी गुरु ने भवसागर से मुक्त करवा दिया है। हे हरि! दया करके मुझे (ऐसे) गुरु से मिला दे, चूंकि नानक उनके चरण जल से धोए॥ २॥

पउड़ी ॥ सचु सचा सतिगुरु अमरु है जिसु अंदरि हरि उरि धारिआ ॥ सचु सचा सतिगुरु पुरखु है जिनि कामु क्रोधु बिखु मारिआ ॥ जा डिठा पूरा सतिगुरू तां अंदरहु मनु साधारिआ ॥ बलिहारी गुर आपणे सदा सदा घुमि वारिआ ॥ गुरमुखि जिता मनमुखि हारिआ ॥ १७ ॥

पउड़ी॥ सत्य का पुंज सतिगुरु अमर है, जिसने ईश्वर को अपने हृदय में बसाया है। सत्य का पुंज सतिगुरु ऐसे महापुरुष हैं, जिन्होंने अपने हृदय से काम–क्रोध रूपी विष को नाश कर दिया है। जब पूर्ण सतिगुरु के दर्शन किए तो मुझ में धैर्य हो गया, (इसलिए) मैं अपने गुरु पर कुर्बान जाता हूँ और सदैव उन पर न्यौछावर हूँ। गुरमुख ने मानव जन्म सफल कर लिया है और स्वेच्छाचारी ने मानव जन्म व्यर्थ गंवा दिया है॥ १७॥

सलोक मः ४ ॥ करि किरपा सतिगुरु मेलिओनु मुखि गुरमुखि नामु धिआइसी ॥ सो करे जि सतिगुर भावसी गुरु पूरा घरी वसाइसी ॥ जिन अंदरि नामु निधानु है तिन का भउ सभु गवाइसी ॥ जिन रखण कउ हरि आपि होइ होर केती झखि झखि जाइसी ॥ जन नानक नामु धिआइ तू हरि हलति पलति छोडाइसी ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ भगवान ने कृपा करके जिस व्यक्ति को सतिगुरु से मिला दिया है, ऐसा गुरमुख अपने मुख से भगवान के नाम का ही ध्यान करता रहता है। वह गुरमुख वही कार्य करता है, जो कार्य सतिगुरु को अच्छा लगता है। अत: पूर्ण गुरु उसे आत्मस्वरूप में बसाते हैं। जिनके अन्तर्मन में नाम रूपी खजाना है, गुरु उसका तमाम भय निवृत्त कर देता है। जिनकी भगवान स्वयं रक्षा करता है, अनेकों ही उनको नुक्सान पहुँचाने के प्रयास में खप–खप कर मर जाते हैं। हे नानक! तुम भगवान के नाम का ध्यान करो। भगवान लोक तथा परलोक में मुक्त कर देगा॥ १॥

मः ४ ॥ गुरसिखा कै मनि भावदी गुर सतिगुर की वडिआई ॥ हरि राखहु पैज सतिगुरू की नित चड़ै सवाई ॥ गुर सतिगुर कै मनि पारब्रहमु है पारब्रहमु छडाई ॥ गुर सतिगुरु ताणु दीबाणु हरि तिनि सभ आणि निवाई ॥ जिनी डिठा मेरा सतिगुरु भाउ करि तिन के सभि पाप गवाई ॥ हरि दरगह ते मुख उजले बहु सोभा पाई ॥ जनु नानकु मंगै धूड़ि तिन जो गुर के सिख मेरे भाई ॥ २ ॥

महला ४॥ सतिगुरु की महिमा गुरु के सिक्खों को बड़ी प्यारी लगती है। भगवान स्वयं ही सतिगुरु की लाज–प्रतिष्ठा रखता है, इसलिए सतिगुरु की महिमा नित्य ही बढ़ती रहती है। सतिगुरु के हृदय में भगवान निवास कर रहा है, इसलिए भगवान स्वयं ही गुरु को दुष्टों से बचाता है। भगवान ही गुरु का बल एवं सहारा है। उस भगवान ने सारी दुनिया लाकर गुरु के समक्ष झुका दी है। जिन्होंने

श्रद्धा से मेरे सतिगुरु के दर्शन किए हैं, उनके सभी पाप नाश हो गए हैं। भगवान के दरबार में ऐसे लोगों के मुख उज्जवल हुए हैं और उन्होंने बड़ी शोभा प्राप्त की है। नानक का कथन है कि मैं उनकी चरण—धूलि माँगता हूँ जो गुरु के सिक्ख मेरे भाई हैं॥ २॥

पउड़ी ॥ हउ आखि सलाही सिफति सचु सचु सचे की वडिआई ॥ सालाही सचु सलाह सचु सचु कीमति किनै न पाई ॥ सचु सचा रसु जिनी चखिआ से त्रिपति रहे आघाई ॥ इहु हरि रसु सेई जाणदे जिउ गूंगै मिठिआई खाई ॥ गुरि पूरै हरि प्रभु सेविआ मनि वजी वाधाई ॥ १८ ॥

पउड़ी॥ जिस सत्य के पुंज सच्चे परमात्मा की कीर्त्ति सारे विश्व में हो रही है, मैं उस सच्चे (परमात्मा) की अपने मुख से महिमा—स्तुति करता हूँ। वह सच्चा परमात्मा जो हमेशा ही सराहनीय है, उस सच्चे का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। जिन्होंने सत्यनाम रूपी रस चखा है, वे तृप्त होकर शांत हो गए हैं। इस हरि—रस के आनंद को वहीं गुरमुख जानते हैं, जिन्होंने यह रस चखा है। जैसे गूंगे की खाई हुई मिठाई के स्वाद को वह गूँगा ही जानता है, अन्य कोई नहीं जान सकता। जिन्होंने पूर्ण गुरु के द्वारा हरि—प्रभु की आराधना की है, उनके मन में आनंद की शुभकामनाएँ प्रगट हुई हैं॥ १८॥

सलोक मः ४ ॥ जिना अंदरि उमरथल सेई जाणनि सूलीआ ॥ हरि जाणहि सेई बिरहु हउ तिन विटहु सद घुमि घोलीआ ॥ हरि मेलहु सजणु पुरखु मेरा सिरु तिन विटहु तल रोलीआ ॥ जो सिख गुर कार कमावहि हउ गुलमु तिना का गोलीआ ॥ हरि रंगि चलूलै जो रते तिन भिनी हरि रंगि चोलीआ ॥ करि किरपा नानक मेलि गुर पहि सिरु वेचिआ मोलीआ ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ जिस तरह जिनके शरीर में फोड़ा है, उसकी पीड़ा को वही व्यक्ति जानते हैं। वैसे ही जिन जिज्ञासुओं के भीतर भगवान की जुदाई है, उस जुदाई की पीड़ा को वहीं जानते हैं। मैं उन पर हमेशा ही न्यौछावर हूँ, जो ईश्वर से जुदाई की पीड़ा को जानते हैं। हे प्रभु! मुझे किसी ऐसे (गुरु) सज्जन महापुरुष से मिला दे। जिनके लिए मेरा सिर उनके पैरों के नीचे झुक जाए। जो सिक्ख गुरु की बताई हुई करनी करते हैं, मैं उनके गुलामों का गुलाम हूँ। जिनके ह्रदय प्रभु नाम के गहरे रंग में रंगे हैं, उनके चोले (अर्थात् शरीर) प्रभु—प्रेम में भीगे हुए होते हैं। हे नानक! भगवान ने दया करके उन्हें गुरु से मिलाया है और उन्होंने अपना सिर गुरु के समक्ष बेच दिया है॥ १॥

मः ४ ॥ अउगणी भरिआ सरीरु है किउ संतहु निरमलु होइ ॥ गुरमुखि गुण वेहाझीअहि मलु हउमै कढै धोइ ॥ सचु वणंजहि रंग सिउ सचु सउदा होइ ॥ तोटा मूलि न आवई लाहा हरि भावै सोइ ॥ नानक तिन सचु वणंजिआ जिना धुरि लिखिआ परापति होइ ॥ २ ॥

महला ४॥ हे संतजनों! यह शरीर अवगुणों से भरा हुआ है, यह कैसे पवित्र हो सकता है? यदि गुरमुख बनकर गुण खरीदे जाएँ तो अहंकार रूपी मैल को निकाल कर यह शरीर निर्मल हो सकता है। जो मनुष्य प्रेम—पूर्वक सत्य को खरीदते हैं, इनका यह सौदा सदा साथ निभाता है, (इस सौदे में) घाटा कभी नहीं होता और जिस तरह प्रभु की इच्छा होती है, वह लाभ प्राप्त करता है। हे नानक! सत्य नाम की खरीद वहीं मनुष्य करते हैं, जिनकी किस्मत में आदि से ही लिखा होता है॥ २॥

पउड़ी ॥ सालाही सचु सालाहणा सचु सचा पुरखु निराले ॥ सचु सेवी सचु मनि वसै सचु सचा हरि रखवाले ॥ सचु सचा जिनी अराधिआ से जाइ रले सच नाले ॥ सचु सचा जिनी न सेविआ से मनमुख मूड़ बेताले ॥ ओह आलु पतालु मुहहु बोलदे जिउ पीतै मदि मतवाले ॥ १९ ॥

पउड़ी॥ मैं उस सराहनीय सत्य प्रभु की महिमा—स्तुति करता हूँ। सत्यस्वरूप भगवान सत्य ही निराला है। सद्‌पुरुष की सेवा करने से सत्य हृदय में बस जाता है। सत्य का पुंज हरि सबका रक्षक है। जिन्होंने सचमुच सच्चे हरि की आराधना की है, वे उस सच्चे के साथ विलीन हो गए हैं। जो सत्यस्वरूप हरि की सेवा नहीं करते, वे मनमुख मूर्ख एवं बेताल (भूत) हैं। शराब पीकर धुत हुए शराबी की भाँति वे अपने मुख से बकवास करते हैं॥ १६॥

सलोक महला ३॥ गउड़ी रागि सुलखणी जे खसमै चिति करेइ ॥ भाणै चलै सतिगुरू कै ऐसा सीगारु करेइ ॥ सचा सबदु भतारु है सदा सदा रावेइ ॥ जिउ उबली मजीठै रंगु गहगहा तिउ सचे नो जीउ देइ ॥ रंगि चलूलै अति रती सचे सिउ लगा नेहु ॥ कूड़ु ठगी गुझी ना रहै कूड़ु मुलंमा पलेटि धरेहु ॥ कूड़ी करनि वडाईआ कूड़े सिउ लगा नेहु ॥ नानक सचा आपि है आपे नदरि करेइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ गउड़ी रागिनी तो ही सुलक्षणा है, यदि वह मालिक प्रभु को चित्त में बसा ले। वह सतिगुरु की इच्छानुसार चले, ऐसा हार—श्रृंगार उसके लिए करना उचित है। सच्चा शब्द प्राणी का कंत (पति) है, हमेशा उसे उसी का आनंद लेना चाहिए। जैसे मजीठ उबाल सहन करती है एवं उसका रंग गहरा लाल हो जाता है, वैसे ही (जीव रूपी स्त्री) अपनी आत्मा कंत (पति) पर न्यौछावर करे, तो उसका सत्यस्वरूप परमात्मा के साथ प्रेम हो जाता है, वह (नाम के) गहरे रंग में रंग जाती है। मिथ्या (रूपी) मुलम्मा (निसंदेह सत्य के साथ) लपेट कर रखो, (फिर भी) जो झूठ एवं ठगी है, वे छिपे नहीं रह सकते। जिनका झूठ से प्रेम होता है। वह दुनिया की झूठी ही प्रशंसा करते हैं। हे नानक! ईश्वर ही सत्य है और वह स्वयं ही अपनी कृपा की दृष्टि करता है॥ १॥

मः ४ ॥ सतसंगति महि हरि उसतति है संगि साधू मिले पिआरिआ ॥ ओइ पुरख प्राणी धंनि जन हहि उपदेसु करहि परउपकारिआ ॥ हरि नामु द्रिड़ावहि हरि नामु सुणावहि हरि नामे जगु निसतारिआ ॥ गुर वेखण कउ सभु कोई लोचै नव खंड जगति नमसकारिआ ॥ तुधु आपे आपु रखिआ सतिगुर विचि गुरु आपे तुधु सवारिआ ॥ तू आपे पूजहि पूज करावहि सतिगुर कउ सिरजणहारिआ ॥ कोई विछुड़ि जाइ सतिगुरू पासहु तिसु काला मुहु जमि मारिआ ॥ तिसु अगै पिछै ढोई नाही गुरसिखी मनि वीचारिआ ॥ सतिगुरू नो मिले सेई जन उबरे जिन हिरदै नामु समारिआ ॥ जन नानक के गुरसिख पुतहहु हरि जपिअहु हरि निसतारिआ ॥ २ ॥

महला ४॥ सत्संग में प्रभु की गुणस्तुति होती है, (क्योंकि) संतों की संगति करने से ही प्रियतम मिलता है। वे पुरुष—प्राणी भाग्यवान हैं (क्योंकि) वे परोपकार हेतु उपदेश करते हैं। ईश्वर के नाम में आस्था रखते हैं, ईश्वर का नाम ही सुनाते हैं और ईश्वर के नाम के द्वारा ही संसार का कल्याण करते हैं। हरेक जीव गुरु के दर्शनों की अभिलाषा करता है और संसार में नवखण्ड के जीव सतिगुरु के समक्ष प्रणाम करते हैं। हे भगवान! तूने अपना आप सतिगुरु में छिपा रखा है और तूने स्वयं ही गुरु को सुन्दर बनाया है। हे सतिगुरु को पैदा करने वाले परमात्मा! तुम स्वयं सतिगुरु की पूजा करते हो और दूसरों से उनकी पूजा करवाते हो। यदि कोई मनुष्य सतिगुरु से बिछुड़ जाए, उसका मुँह काला होता है और यमराज से उसे बड़ी मार पड़ती है। गुरु के सिक्खों ने अपने हृदय में विचार कर लिया है कि उसे लोक—परलोक में सहारा नहीं मिलता है। जो मनुष्य सतिगुरु से जाकर मिलते हैं और अपने हृदय में नाम का चिंतन करते हैं, वे भवसागर से पार हो जाते हैं। नानक के गुरसिक्ख पुत्रो! ईश्वर का नाम जपो (क्योंकि) ईश्वर भवसागर से पार करवा देता है॥ २॥

महला ३ ॥ हउमै जगतु भुलाइआ दुरमति बिखिआ बिकार ॥ सतिगुरु मिलै त नदरि होइ मनमुख अंध अंधिआर ॥ नानक आपे मेलि लए जिस नो सबदि लाए पिआरु ॥ ३ ॥

महला ३॥ अहंकार ने सारी दुनिया को भटकाया हुआ है, इसलिए दुनिया दुर्मति के कारण विषय–विकारों में फँसती है। जिस मनुष्य को गुरु मिलता है, उस पर भगवान की कृपा–दृष्टि होती है, अन्यथा स्वेच्छाचारी मनुष्य के लिए अज्ञान रूपी अँधेरा ही बना रहता है। हे नानक! प्रभु जिस मनुष्य का प्रेम 'शब्द' में लगाता है, उसे वह स्वयं ही अपने साथ मिला लेता है॥ ३॥

पउड़ी ॥ सचु सचे की सिफति सलाह है सो करे जिसु अंदरु भिजै ॥ जिनी इक मनि इकु अराधिआ तिन का कंधु न कबहू छिजै ॥ धनु धनु पुरख साबासि है जिन सचु रसना अंम्रितु पिजै ॥ सचु सचा जिन मनि भावदा से मनि सची दरगह लिजै ॥ धनु धंनु जनमु सचिआरीआ मुख उजल सचु करिजै ॥ २० ॥

पउड़ी॥ सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति सदैव स्थिर रहने वाली है, (यह गुणस्तुति) वही मनुष्य कर सकता है, जिसका हृदय भी प्रशंसा में भीगा हुआ हो। जो मनुष्य एकाग्रचित्त होकर एक ईश्वर का स्मरण करते हैं, उनका शरीर कभी क्षीण नहीं होता। वह पुरुष धन्य! धन्य! एवं उपमायोग्य हैं, जिनकी रसना सत्यनाम के अमृत को चखती है। जिनके हृदय में सत्यस्वरूप परमात्मा सचमुच प्रिय लगता है, वे सत्य के दरबार में सम्मानित होते हैं। सत्यवादियों का जन्म धन्य है जिनके चेहरे को सत्य उज्ज्वल कर देता है॥ २०॥

सलोक मः ४ ॥ साकत जाइ निवहि गुर आगै मनि खोटे कूड़ि कूड़िआरे ॥ जा गुरु कहै उठहु मेरे भाई बहि जाहि घुसरि बगुलारे ॥ गुरसिखा अंदरि सतिगुरु वरतै चुणि कढे लधोवारे ॥ ओइ अगै पिछै बहि मुहु छपाइनि न रलनी खोटेआरे ॥ ओना दा भखु सु ओथै नाही जाइ कूड़ु लहनि भेडारे ॥ जे साकतु नरु खावाईऐ लोचीऐ बिखु कढै मुखि उगलारे ॥ हरि साकत सेती संगु न करीअहु ओइ मारे सिरजणहारे ॥ जिस का इहु खेलु सोई करि वेखै जन नानक नामु समारे ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ यदि शाक्त इन्सान गुरु के समक्ष जाकर झुक भी जाए तो भी वह मन में खोट होने के कारण झूठ का व्यापारी बना रहता है। जब गुरु जी कहते है – 'हे मेरे भाइओ, सावधान हो जाओ।' फिर यह शाक्त भी बगुलों के समान मिलकर बैठ जाते हैं। गुरसिक्खों के मन में सतिगुरु बसता है, इसलिए सिक्खों में मिलकर बैठे हुए भी शाक्त जांच–पड़ताल के समय चुनकर निकाल दिए जाते हैं। वे आगे–पीछे होकर मुँह तो बहुत छिपाते हैं, लेकिन झूठ के व्यापारी सत्संगत में मिल नहीं सकते। शाक्त लोगों का भोजन वहाँ (गुरमुखों के साथ में) नहीं होता, (इसलिए) भेड़ों के समान (किसी अन्य स्थान पर) जाकर झूठ को प्राप्त करते हैं। यदि शाक्त मनुष्य को (नाम–रूपी) भला पदार्थ खिलाने की इच्छा भी करें तो भी वह मुँह से (निन्दा रूपी) विष ही उगलकर निकालता है। (हे संतजनों!) शाक्त के साथ संगति मत करो, क्योंकि जगत् के रचयिता ने स्वयं उन्हें मृत कर दिया है, जिस ईश्वर का यह खेल है, वह स्वयं इस खेल को रचकर देख रहा है। हे नानक! तुम ईश्वर का नाम–सिमरन करते रहो॥ १॥

मः ४ ॥ सतिगुरु पुरखु अगंमु है जिसु अंदरि हरि उरि धारिआ ॥ सतिगुरू नो अपड़ि कोइ न सकई जिसु वलि सिरजणहारिआ ॥ सतिगुरू का खड़गु संजोउ हरि भगति है जितु कालु कंटकु मारि विडारिआ ॥ सतिगुरू का रखणहारा हरि आपि है सतिगुरू कै पिछै हरि सभि उबारिआ ॥ जो मंदा

चितवै पूरे सतिगुरू का सो आपि उपावणहारै मारिआ ॥ एह गल होवै हरि दरगह सचे की जन नानक अगमु वीचारिआ ॥ २ ॥

महला ४॥ महापुरुष सतिगुरु अगम्य है, जिसने अपने हृदय में भगवान को धारण किया हुआ है। सतिगुरु की समानता कोई नहीं कर सकता, क्योंकि परमात्मा उसके पक्ष में है। भगवान की भक्ति ही सतिगुरु का खड्ग और बख्तर है, जिससे उसने काल (रूपी) कंटक को मारकर दूर फैंक दिया है। ईश्वर स्वयं सतिगुरु का रखवाला है। जो सतिगुरु के पद्चिन्हों पर चलते हैं, प्रभु उन सबको ही आप बचा लेता है। जो मनुष्य पूर्ण सतिगुरु का बुरा सोचता है, उसे पैदा करने वाला प्रभु स्वयं ही नष्ट कर देता है। यह न्याय भगवान के दरबार में होता है। हे नानक ! अगम्य हरि का सिमरन करने से यह सूझ पैदा होती है॥ २॥

पउड़ी ॥ सचु सुतिआ जिनी अराधिआ जा उठे ता सचु चवे ॥ से विरले जुग महि जाणीअहि जो गुरमुखि सचु रवे ॥ हउ बलिहारी तिन कउ जि अनदिनु सचु लवे ॥ जिन मनि तनि सचा भावदा से सची दरगह गवे ॥ जनु नानकु बोलै सचु नामु सचु सचा सदा नवे ॥ २१ ॥

पउड़ी॥ जो व्यक्ति सोते समय भी सत्य की आराधना करते हैं और उठते समय भी सत्य–नाम का जाप करते हैं। ऐसे व्यक्ति कलियुग में विरले ही मिलते हैं, जो गुरमुख सत्य नाम में मग्न रहते हैं। मैं उन पर तन–मन से न्यौछावर हूँ जो रात–दिन सत्यनाम उच्चरित करते रहते हैं। जिन लोगों के मन एवं तन में सत्य भला लगता है, वह सत्य के दरबार में पहुँच जाते हैं। दास नानक भी सत्य नाम बोलता रहता है। वह सत्य प्रभु सदैव ही नवीन है॥ २१॥

सलोकु मः ४ ॥ किआ सवणा किआ जागणा गुरमुखि ते परवाणु ॥ जिना सासि गिरासि न विसरै से पूरे पुरख परधान ॥ करमी सतिगुरु पाईऐ अनदिनु लगै धिआनु ॥ तिन की संगति मिलि रहा दरगह पाई मानु ॥ सउदे वाहु वाहु उचरहि उठदे भी वाहु करेनि ॥ नानक ते मुख उजले जि नित उठि संमालेनि ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ क्या सोना और क्या जागना ? गुरमुखों के लिए तो सब कुछ स्वीकार्य है। जिन्हें श्वास लेते और भोजन खाते समय एक क्षण भर के लिए भी भगवान का नाम विस्मृत नहीं होता, वही सर्वगुणसम्पन्न एवं प्रधान हैं। भगवान की कृपा से सतिगुरु (उन्हें) मिलता है और उनका ध्यान रात–दिन भगवान में लगा रहता है। मैं भी उन गुरमुखों की संगति करूँ ताकि भगवान के दरबार में सम्मान प्राप्त हो। वे सोते और जागते वक्त ईश्वर की गुणस्तुति करते हैं। हे नानक ! उनके चेहरे उज्ज्वल हैं जो प्रतिदिन सुबह जागकर ईश्वर को स्मरण करते हैं॥ १॥

मः ४ ॥ सतिगुरु सेवीऐ आपणा पाईऐ नामु अपारु ॥ भउजलि डुबदिआ कढि लए हरि दाति करे दातारु ॥ धंनु धंनु से साह है जि नामि करहि वापारु ॥ वणजारे सिख आवदे सबदि लघावणहारु ॥ जन नानक जिन कउ क्रिपा भई तिन सेविआ सिरजणहारु ॥ २ ॥

महला ४॥ अपने सतिगुरु की सेवा करने से मनुष्य अपार नाम प्राप्त करता है। दाता गुरदेव ईश्वर के नाम की देन प्रदान करता है और डूबते हुए मनुष्य को भयानक संसार–सागर में से निकाल लेता है। वह शाह धन्य–धन्य हैं जो ईश्वर के नाम का व्यापार करते हैं। सिक्ख व्यापारी आते हैं और सतिगुरु उन्हें शब्द द्वारा भवसागर से पार करवा देता है। हे नानक ! सृजनहार प्रभु की सेवा–भक्ति वही मनुष्य करते हैं, जिस पर वह स्वयं कृपा करता है॥ २॥

पउड़ी ॥ सचु सचे के जन भगत हहि सचु सचा जिनी अराधिआ ॥ जिन गुरमुखि खोजि ढंढोलिआ तिन अंदरहु ही सचु लाधिआ ॥ सचु साहिबु सचु जिनी सेविआ कालु कंटकु मारि तिनी साधिआ ॥ सचु सचा सभ दू वडा है सचु सेवनि से सचि रलाधिआ ॥ सचु सचे नो साबासि है सचु सचा सेवि फलाधिआ ॥ २२ ॥

पउड़ी॥ जो सत्य के पुंज परमात्मा की सत्य ही भक्ति करते हैं, वही (परमात्मा) के भक्त है। जो मनुष्य गुरु के समक्ष होकर खोजकर ढूँढते हैं, वे अपने हृदय में ही प्रभु को प्राप्त कर लेते हैं। जिन मनुष्यों ने सच्चे मालिक की सचमुच सेवा की है, उन्होंने दुःखदायक काल को मारकर नियंत्रित कर लिया है। सत्य का पुंज परमात्मा महान है, उसकी सेवा—भक्ति जो मनुष्य करते हैं, वे सत्य में ही लीन हो जाते हैं। वह सत्य का पुंज परमात्मा धन्य है, जो व्यक्ति सच्चे (परमात्मा) की भक्ति करते हैं, उन्हें उत्तम फल मिलता है॥ २२॥

सलोक मः ४ ॥ मनमुखु प्राणी मुगधु है नामहीण भरमाइ ॥ बिन गुर मनूआ ना टिकै फिरि फिरि जूनी पाइ ॥ हरि प्रभु आपि दइआल होहि तां सतिगुरु मिलिआ आइ ॥ जन नानक नामु सलाहि तू जनम मरण दुखु जाइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ स्वेच्छाचारी प्राणी मूर्ख है, चूंकि ऐसा नामविहीन इन्सान भटकता ही रहता है। गुरु के बिना उसका मन स्थिर नहीं होता और वह बार—बार गर्भ—योनि में पड़ता है। जब हरि—प्रभु स्वयं दया के घर में आता है तो इसे सतिगुरु आकर मिल जाता है। (इसलिए) हे नानक! तुम भी नाम की महिमा—स्तुति करो चूंकि तेरा जन्म—मरण का दुःख मिट जाए॥ १॥

मः ४ ॥ गुरु सालाही आपणा बहु बिधि रंगि सुभाइ ॥ सतिगुर सेती मनु रता रखिआ बणत बणाइ ॥ जिहवा सालाहि न रजई हरि प्रीतम चितु लाइ ॥ नानक नावै की मनि भुख है मनु त्रिपतै हरि रसु खाइ ॥ २ ॥

महला ४॥ मैं अपने गुरु की बड़े प्रेम से अनेक विधियों से प्रशंसा करता हूँ। मेरा मन गुरु के साथ मग्न है। गुरु जी ने मेरे मन को संवार दिया है। मेरी रसना प्रशंसा करके तृप्त नहीं होती और मन प्रियतम—प्रभु के साथ प्रेम करके तृप्त नहीं होता। हे नानक! मन को नाम की भूख है और मन हरि—रस को पान करने से तृप्त होता है॥ २॥

पउड़ी ॥ सचु सचा कुदरति जाणीऐ दिनु राती जिनि बणाईआ ॥ सो सचु सलाही सदा सदा सचु सचे कीआ वडिआईआ ॥ सालाही सचु सलाह सचु सचु कीमति किनै न पाईआ ॥ जा मिलिआ पूरा सतिगुरू ता हाजरु नदरी आईआ ॥ सचु गुरमुखि जिनी सलाहिआ तिना भुखा सभि गवाईआ ॥ २३ ॥

पउड़ी॥ सत्यस्वरूप प्रभु जिसने दिन और रात बनाए हैं, वह सत्य का पुंज (इस) कुदरत से ही सचमुच बड़ी महानता वाला मालूम होता है। मैं सदैव उस सत्यस्वरूप परमात्मा की प्रशंसा करता हूँ और सच्चे (परमात्मा) की महिमा सत्य है। प्रशंसनीय परमात्मा सत्य है और उसकी प्रशंसा भी सत्य है। सत्यस्वरूप परमात्मा का कोई भी मूल्यांकन नहीं जान सका। जब पूर्ण सतिगुरु मिलता है तो परमात्मा प्रत्यक्ष दिखाई देता है। जो गुरमुख सत्य का यश गाते हैं, उनकी तमाम भूख निवृत्त हो जाती है॥ २३॥

सलोक मः ४ ॥ मै मनु तनु खोजि खोजेदिआ सो प्रभु लधा लोड़ि ॥ विसटु गुरू मै पाइआ जिनि हरि प्रभु दिता जोड़ि ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ अपने मन एवं तन में ही भलीभाँति खोज–खोजकर मैंने उस प्रभु को ढूंढ लिया है, जिसे मैं चाहता था। मुझे गुरु वकील मिल गया है, जिसने मुझे प्रभु–परमेश्वर से मिला दिया है॥ १॥

मः ३ ॥ माइआधारी अति अंना बोला ॥ सबदु न सुणई बहु रोल घचोला ॥ गुरमुखि जापै सबदि लिव लाइ ॥ हरि नामु सुणि मंने हरि नामि समाइ ॥ जो तिसु भावै सु करे कराइआ ॥ नानक वजदा जंतु वजाइआ ॥ २ ॥

महला ३॥ मायाधारी बड़ा अन्धा एवं बहरा है। ऐसा व्यक्ति गुरु के शब्द को ध्यानपूर्वक नहीं सुनता और बड़ा शोर–शराबा करता है। गुरमुख शब्द में सुरति लगाने से ही जाना जाता है। वे ईश्वर के नाम को सुनते और उसमें आस्था रखते हैं और ईश्वर के नाम में ही वे समा जाते हैं। (परन्तु मायाधारी अथवा गुरमुख के क्या वश ?) जो कुछ उस ईश्वर को भला लगता है, (उसके अनुसार) यह जीव कराने से काम करता है। हे नानक ! जीव रूपी बाजा वैसे बजता है, जैसे प्रभु उसे बजाता है॥ २॥

पउड़ी ॥ तू करता सभु किछु जाणदा जो जीआ अंदरि वरतै ॥ तू करता आपि अगणतु है सभु जगु विचि गणतै ॥ सभु कीता तेरा वरतदा सभ तेरी बणतै ॥ तू घटि घटि इकु वरतदा सचु साहिब चलतै ॥ सतिगुर नो मिले सु हरि मिले नाही किसै परतै ॥ २४ ॥

पउड़ी॥ हे विश्व के रचयिता प्रभु ! तुम सबकुछ जानते हो, जो कुछ जीवों के हृदय में होता है। समूचा जगत् ही इस चिन्तना में है। हे परमात्मा ! एक तुम इससे परे हो (क्योंकि) जो कुछ हो रहा है, सब तेरा किया हुआ हो रहा है, सारी (सृष्टि की) रचना ही तेरी बनाई हुई है। हे सच्चे मालिक ! तुम कण–कण में सर्वव्यापक हो, तेरे खेल अद्भुत हैं। जो मनुष्य सतिगुरु से मिला है, उसे ही भगवान प्राप्त हुआ है और किसी ने उन्हें भगवान की ओर से नहीं हटाया॥ २४॥

सलोकु मः ४ ॥ इहु मनूआ द्रिड़ु करि रखीऐ गुरमुखि लाईऐ चितु ॥ किउ सासि गिरासि विसारीऐ बहदिआ उठदिआ नित ॥ मरण जीवण की चिंता गई इहु जीअड़ा हरि प्रभ वसि ॥ जिउ भावै तिउ रखु तू जन नानक नामु बखसि ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ यह चंचल मन स्थिर करके वश में रखना चाहिए और गुरु के माध्यम से अपना चित्त परमात्मा में लगाना चाहिए। उठते–बैठते अपनी हरेक श्वास एवं ग्रास से हम क्यों उस प्रभु को कभी विस्मृत करें ? अब जबकि यह आत्मा प्रभु–परमेश्वर के वश में कर दी है, इसलिए मेरी जन्म–मरण की चिन्ता मिट गई है। (हे प्रभु !) जैसे तुझे अच्छा लगे वैसे (मुझे) नानक को नाम की देन प्रदान कर चूंकि नाम ही मन की चिन्ता को मिटा सकता है॥ १॥

मः ३ ॥ मनमुखु अहंकारी महलु न जाणै खिनु आगै खिनु पीछै ॥ सदा बुलाईऐ महलि न आवै किउ करि दरगह सीझै ॥ सतिगुर का महलु विरला जाणै सदा रहै कर जोड़ि ॥ आपणी क्रिपा करे हरि मेरा नानक लए बहोड़ि ॥ २ ॥

महला ३॥ अहंकार में मस्त हुआ मनमुख इन्सान सतिगुरु के महल (अर्थात् सत्संग) को नहीं पहचानता और हर वक्त दुविधा में रहता है। हमेशा ही बुलाए जाने के बावजूद वह सतिगुरु के महल (सत्संग) में उपस्थित नहीं होता। प्रभु के दरबार में वह किस तरह स्वीकृत होगा ? कोई विरला पुरुष ही सतिगुरु के महल (सत्संग) को जानता है और जो जानता है, वह सदा हाथ जोड़कर खड़ा रहता है। हे नानक ! यदि मेरा हरि अपनी कृपा करे तो वह मनुष्य को (मनमुखता से) मोड़ लेता है॥ २॥

पउड़ी ॥ सा सेवा कीती सफल है जितु सतिगुर का मनु मंने ॥ जा सतिगुर का मनु मंनिआ ता पाप कसंमल भंने ॥ उपदेसु जि दिता सतिगुरू सो सुणिआ सिखी कंने ॥ जिन सतिगुर का भाणा मंनिआ तिन चड़ी चवगणि वंने ॥ इह चाल निराली गुरमुखी गुर दीखिआ सुणि मनु भिंने ॥ २५ ॥

पउड़ी॥ जिस सेवा से सतिगुरु का मन प्रसन्न हो जाए, वहीं की हुई सेवा फलदायक है। (क्योंकि) जब सतिगुरु का मन प्रसन्न हो जाए, तभी पाप–विकार भी दूर हो जाते हैं। सतिगुरु जो उपदेश सिक्खों को देते हैं, वे ध्यानपूर्वक उसे सुनते हैं। जो सिक्ख सतिगुरु की इच्छा को मानते हैं, उन्हें चौगुनी रंगत चढ़ जाती है। गुरमुखों का यह अद्‌भुत जीवन–आचरण है कि गुरु का उपदेश सुनकर उनका मन प्रसन्न हो जाता है॥ २५॥

सलोकु मः ३ ॥ जिनि गुरु गोपिआ आपणा तिसु ठउर न ठाउ ॥ हलतु पलतु दोवै गए दरगह नाही थाउ ॥ ओह वेला हथि न आवई फिरि सतिगुर लगहि पाइ ॥ सतिगुर की गणतै घुसीऐ दुखे दुखि विहाइ ॥ सतिगुरु पुरखु निरवैरु है आपे लए जिसु लाइ ॥ नानक दरसनु जिना वेखालिओनु तिना दरगह लए छडाइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ जिस व्यक्ति ने अपने गुरु की निंदा की है, उसे कहीं भी स्थान नहीं मिलता। उसका लोक एवं परलोक दोनों व्यर्थ हो जाते हैं और प्रभु के दरबार में भी उसे स्थान नहीं मिलता। सतिगुरु के चरण–स्पर्श का यह सुनहरी अवसर फिर से प्राप्त नहीं होता। (क्योंकि) सतिगुरु की निंदा करने में एक बार यदि पथभ्रष्ट हो जाए तो बिल्कुल दुखों में ही जीवन व्यतीत होता है। महापुरुष सतिगुरु की किसी से शत्रुता नहीं है। जिस किसी को वह चाहता है, वह अपने साथ मिला लेता है। हे नानक! सत्य के दरबार में गुरु उनकी मुक्ति करवा देता है, जिन्हें वह प्रभु के दर्शन करवाता है॥ १॥

मः ३ ॥ मनमुखु अगिआनु दुरमति अहंकारी ॥ अंतरि क्रोधु जूऐ मति हारी ॥ कूड़ु कुसतु ओहु पाप कमावै ॥ किआ ओहु सुणै किआ आखि सुणावै ॥ अंना बोला खुइ उझड़ि पाइ ॥ मनमुखु अंधा आवै जाइ ॥ बिनु सतिगुर भेटे थाइ न पाइ ॥ नानक पूरबि लिखिआ कमाइ ॥ २ ॥

महला ३॥ स्वेच्छाचारी पुरुष अज्ञानी, खोटी बुद्धि वाला एवं अहंकारी होता है, उसके मन में क्रोध ही होता है और वह जुए में बुद्धि गंवा देता है। वह छल–कपट तथा पाप के काम करता है (इसलिए) वह क्या सुन सकता है और दूसरों को क्या बता सकता है? वह अन्धा और बहरा मनुष्य भटक गया है और जन्मता–मरता रहता है। सतिगुरु से साक्षात्कार हुए बिना वह परलोक में स्वीकार नहीं होता। हे नानक! पूर्व जन्म के कर्मों के अनुसार जो उनकी किस्मत में लिखा होता है, वहीं उसे मिलता है॥ २॥

पउड़ी ॥ जिन के चित कठोर हहि से बहहि न सतिगुर पासि ॥ ओथै सचु वरतदा कूड़िआरा चित उदासि ॥ ओइ वलु छलु करि झति कढदे फिरि जाइ बहहि कूड़िआरा पासि ॥ विचि सचे कूड़ु न गडई मनि वेखहु को निरजासि ॥ कूड़िआर कूड़िआरी जाइ रले सचिआर सिख बैठे सतिगुर पासि ॥ २६ ॥

पउड़ी॥ जिनके हृदय कठोर होते हैं, वे सतिगुरु के पास नहीं बैठते। वहाँ सत्य प्रवृत्त हो रहा है और झूठे लोग मानसिक तौर पर उदास रहते हैं। वे छल–कपट करके समय बिताते हैं और दुबारा जाकर झूठों के पास बैठ जाते हैं। सत्य में झूठ नहीं मिलता, हे मेरे मन! तू निर्णय करके देख ले। झूठे जाकर झूठों से मिल जाते हैं तथा सत्यवादी सिक्ख सतिगुरु के पास बैठते हैं॥ २६॥

सलोक मः ५ ॥ रहदे खुहदे निंदक मारिअनु करि आपे आहरु ॥ संत सहाई नानका वरतै सभ जाहरु ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ शेष बचे हुए निन्दकों को भगवान ने स्वयं ही (प्रयास करके) समाप्त कर दिया है। हे नानक ! संतजनों की सहायता करने वाला भगवान सर्वत्र प्रत्यक्ष रूप में व्यापक हो रहा है॥ १॥

मः ५ ॥ मुंढहु भुले मुंढ ते किथै पाइनि हथु ॥ तिंनै मारे नानका जि करण कारण समरथु ॥ २ ॥

महला ५॥ जो पुरुष पहले से ही भगवान को भूल गए हैं, वे और किसका सहारा लें ? (क्योंकि) हे नानक ! इनको उस प्रभु ने मारा हुआ है, जो जगत् का मूल प्रत्येक कार्य करने एवं करवाने में समर्थ है॥ २॥

पउड़ी ५ ॥ लै फाहे राती तुरहि प्रभु जाणै प्राणी ॥ तकहि नारि पराईआ लुकि अंदरि ठाणी ॥ संन्ही देन्हि विखंम थाइ मिठा मदु माणी ॥ करमी आपो आपणी आपे पछुताणी ॥ अजराईलु फरेसता तिल पीड़े घाणी ॥ २७ ॥

पउड़ी ५॥ मनुष्य रात को कमन्द लेकर चलते हैं परन्तु ईश्वर उन्हें जानता है, भीतर छिपकर पराई औरतों की ओर देखते हैं, विषम स्थान पर सेंध लगाते हैं और मदिरा को मीठा मानते हैं। आखिरकार आप अपने किए कर्मों के अनुसार स्वयं ही पश्चाताप करते हैं चूंकि अजराईल मृत्यु का फरिश्ता नीच कर्म करने वालों को ऐसे पीसता है, जैसे कोल्हू में तिल॥ २७॥

सलोक मः ५ ॥ सेवक सचे साह के सेई परवाणु ॥ दूजा सेवनि नानका से पचि पचि मुए अजाण ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ जो व्यक्ति सच्चे शाह के सेवक होते हैं, वही सत्य के दरबार में स्वीकार होते हैं। हे नानक ! जो भगवान के अलावा किसी दूसरे की सेवा करते हैं, ऐसे मूर्ख व्यक्ति बहुत दुखी होकर मरते हैं॥ १॥

मः ५ ॥ जो धुरि लिखिआ लेखु प्रभ मेटणा न जाइ ॥ राम नामु धनु वखरो नानक सदा धिआइ ॥ २ ॥

महला ५॥ परमात्मा ने आदि से जो लेख लिखा होता है, उसे मिटाया नहीं जा सकता। हे नानक ! राम नाम रूपी धन ही उत्तम पूँजी है, इसलिए हमेशा ही नाम का ध्यान करते रहना चाहिए॥ २॥

पउड़ी ५ ॥ नाराइणि लइआ नाठूंगड़ा पैर किथै रखै ॥ करदा पाप अमितिआ नित विसो चखै ॥ निंदा करदा पचि मुआ विचि देही भखै ॥ सचै साहिब मारिआ कउणु तिस नो रखै ॥ नानक तिसु सरणागती जो पुरखु अलखै ॥ २८ ॥

पउड़ी ५॥ जिस इन्सान को नारायण की ओर से ठोकर लगे, वह जीवन के सन्मार्ग पर स्थिर नहीं रह सकता। ऐसा व्यक्ति बेशुमार पाप करता है और हमेशा ही विकार रूपी विष चखता है। दूसरों की निंदा करता हुआ वह गल सड़कर मर जाता है। अपने शरीर में भी वह सड़ता रहता है। जिसे सच्चे प्रभु ने मार दिया है, उसे कौन बचा सकता है। हे नानक ! उस अलक्ष्य परमात्मा की शरण प्राप्त करो॥ २८॥

सलोक मः ५ ॥ नरक घोर बहु दुख घणे अकिरतघणा का थानु ॥ तिनि प्रभि मारे नानका होइ होइ मुए हरामु ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ कृतघ्न लोगों का निवास घोर नरक में ही होता है, जहाँ उन्हें बहुत कष्टदायक दुख भोगने पड़ते हैं। हे नानक ! प्रभु द्वारा मारे हुए ऐसे लोग बड़े दुखी होकर मरते हैं॥ १॥

मः ५ ॥ अवखध सभे कीतिअनु निंदक का दारू नाहि ॥ आपि भुलाए नानका पचि पचि जोनी पाहि ॥ २ ॥

महला ५॥ उस ईश्वर ने समस्त रोगों की औषधियाँ बनाई हैं परन्तु निंदकों का कोई उपचार नहीं। हे नानक ! जिन्हें ईश्वर स्वयं कुमार्गगामी करता है, ऐसे निन्दक इन्सान योनियों में गलते-सड़ते रहते हैं॥ २॥

पउड़ी ५ ॥ तुसि दिता पूरै सतिगुरू हरि धनु सचु अखुटु ॥ सभि अंदेसे मिटि गए जम का भउ छुटु ॥ काम क्रोध बुरिआईआं संगि साधू तुटु ॥ विणु सचे दूजा सेवदे हुइ मरसनि बुटु ॥ नानक कउ गुरि बखसिआ नामै संगि जुटु ॥ २६ ॥

पउड़ी ५॥ जिस व्यक्ति को पूर्ण सतिगुरु ने प्रसन्न होकर हरि नाम रूपी सच्चा एवं अक्षय धन दिया है, उसके सभी संशय मिट जाते हैं एवं मृत्यु का भय भी समाप्त हो जाता है। काम, क्रोध एवं बुराइयां संतों की संगति करने से मिट जाते हैं। सच्चे प्रभु के अतिरिक्त जो दूसरों की सेवा करते हैं, वे निराश्रित होकर मर जाते हैं। नानक को गुरु ने क्षमा कर दिया है और वह ईश्वर के नाम में प्रवृत्त हो गया है॥ २६॥

सलोक मः ४ ॥ तपा न होवै अंद्रहु लोभी नित माइआ नो फिरै जजमालिआ ॥ अगो दे सदिआ सतै दी भिखिआ लए नाही पिछो दे पछुताइ कै आणि तपै पुतु विचि बहालिआ ॥ पंच लोग सभि हसण लगे तपा लोभि लहरि है गालिआ ॥ जिथै थोड़ा धनु वेखै तिथै तपा भिटै नाही धनि बहुतै डिठै तपै धरमु हारिआ ॥ भाई एहु तपा न होवी बगुला है बहि साध जना वीचारिआ ॥ सत पुरख की तपा निंदा करै संसारै की उसतती विचि होवै एतु दोखै तपा दयि मारिआ ॥ महा पुरखां की निंदा का वेखु जि तपे नो फलु लगा सभु गइआ तपे का घालिआ ॥ बाहरि बहै पंचा विचि तपा सदाए ॥ अंदरि बहै तपा पाप कमाए ॥ हरि अंदरला पापु पंचा नो उघा करि वेखालिआ ॥ धरम राइ जमकंकरा नो आखि छडिआ एसु तपे नो तिथै खड़ि पाइहु जिथै महा महां हतिआरिआ ॥ फिरि एसु तपे दै मुहि कोई लगहु नाही एहु सतिगुरि है फिटकारिआ ॥ हरि कै दरि वरतिआ सु नानकि आखि सुणाइआ ॥ सो बूझै जु दयि सवारिआ ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ वह व्यक्ति तपस्वी नहीं हो सकता, जिसका मन लालची होता है और कोढ़ी की तरह नित्य धन के लिए भटकता रहता है। जब इसे पहले निमंत्रण देकर बुलाया गया तो इसने सत्य की भिक्षा लेने से इन्कार कर दिया लेकिन तदुपरांत पश्चाताप करके उसने अपने पुत्र को लाकर संगत में बिठा दिया। गांव के बड़े आदमी यह कह कर हँसने लग पड़े कि लालच की लहर ने तपस्वी को नष्ट कर दिया है। तपस्वी जहाँ कम धन-पदार्थ देखता है, उस स्थान के वह निकट नहीं जाता। अधिक धन देखकर तपस्वी अपना धर्म भी हार जाता है। संतजनों ने बैठकर विचार किया है कि हे भाई ! यह तपस्वी नहीं है अपितु बगुला है। तपस्वी महापुरुषों की निन्दा करता है और दुनिया की

उस्तति गाता है। इस दोष के कारण ईश्वर ने उसे धिक्कार दिया है। देखो ! महापुरुषों की निन्दा करने का इसे यह फल मिला है कि इसकी सारी मेहनत निष्फल हो गई है। वह बाहर मुखियों के पास बैठता है और तपस्वी कहलवाता है। जब वह भीतर बैठता है तो नीच कर्म करता है। भगवान ने तपस्वी का भीतरी पाप पंचों को प्रकट करके दिखा दिया है। धर्मराज ने अपने यमदूतों को कह दिया है कि इस तपस्वी को ले जाकर उस स्थान पर डाल दो, जहाँ बड़े से बड़े महाहत्यारे डाले जाते हैं। वहाँ भी इसके मुँह कोई न लगे, क्योंकि यह तपस्वी सतिगुरु की ओर से तिरस्कृत है। हे नानक ! जो कुछ यह ईश्वर के दरबार में हुआ है, उसे कहकर सुना दिया है, इस तथ्य को वही इन्सान समझता है, जिसे परमात्मा ने संवारा हुआ है॥ १॥

मः ४ ॥ हरि भगतां हरि आराधिआ हरि की वडिआई ॥ हरि कीरतनु भगत नित गांवदे हरि नामु सुखदाई ॥ हरि भगतां नो नित नावै दी वडिआई बखसीअनु नित चड़ै सवाई ॥ हरि भगतां नो थिरु घरी बहालिअनु अपणी पैज रखाई ॥ निंदकां पासहु हरि लेखा मंगसी बहु देइ सजाई ॥ जेहा निंदक अपणै जीइ कमावदे तेहो फलु पाई ॥ अंदरि कमाणा सरपर उघड़ै भावै कोई बहि धरती विचि कमाई ॥ जन नानकु देखि विगसिआ हरि की वडिआई ॥ २ ॥

महला ४॥ भगवान के भक्त भगवान की आराधना करते हैं और भगवान की गुणस्तुति करते हैं। भक्त नित्य भगवान का भजन कीर्तन करते हैं। भगवान का नाम बड़ा सुखदायक है। अपने भक्तों को भगवान ने हमेशा के लिए नाम का गुण प्रदान किया है, जो दिन–ब–दिन बढ़ता जाता है। भगवान ने अपने विरद की लाज रखी है और उसने अपने भक्तों को आत्मस्वरूप स्थिर घर में बिठा दिया है। निन्दकों से भगवान लेखा माँगता है और बहुत कठोर दण्ड देता है। निन्दक जैसा अपने मन में कमाते हैं, वैसा ही फल उन्हें मिलता है। (क्योंकि) भीतर बैठकर किया हुआ काम निश्चित ही प्रत्यक्ष हो जाता है चाहे कोई इसे धरती के नीचे करे। नानक भगवान की महिमा देखकर कृतार्थ हो रहा है॥ २॥

पउड़ी मः ५ ॥ भगत जनां का राखा हरि आपि है किआ पापी करीऐ ॥ गुमानु करहि मूड़ गुमानीआ विसु खाधी मरीऐ ॥ आइ लगे नी दिह थोड़ड़े जिउ पका खेतु लुणीऐ ॥ जेहे करम कमावदे तेवेहो भणीऐ ॥ जन नानक का खसमु वडा है सभना दा धणीऐ ॥ ३० ॥

पउड़ी महला ५॥ भगवान अपने भक्तों का स्वयं रखवाला है। पापी क्या कर सकता है ? मूर्ख घमण्डी इन्सान बड़ा घमण्ड करता है और (अहंकार–रूपी) विष खाकर मर जाता है। जीवन के थोड़े दिन जो उसने व्यतीत करने थे, समाप्त हो गए हैं और पकी हुई फसल की भाँति काट लिया जाएगा। मनुष्य जैसे जैसे करता है, (प्रभु के दरबार में भी) वैसे ही कहलवाते हैं। नानक का मालिक प्रभु महान है, जो सारी दुनिया का ही मालिक है॥ ३०॥

सलोक मः ४ ॥ मनमुख मूलहु भुलिआ विचि लबु लोभु अहंकारु ॥ झगड़ा करदिआ अनदिनु गुदरै सबदि न करहि वीचारु ॥ सुधि मति करतै सभ हिरि लई बोलनि सभु विकारु ॥ दितै कितै न संतोखीअहि अंतरि तिसना बहु अगिआनु अंध्यारु ॥ नानक मनमुखा नालो तुटी भली जिन माइआ मोह पिआरु ॥ १ ॥

श्लोक महला ४॥ झूठ, लालच एवं अहंकार के कारण स्वेच्छाचारी इन्सान अपने मूल (भगवान) को ही भुला देते हैं। उनके रात–दिन झगड़ा करते हुए ही बीत जाते हैं और वे शब्द का चिन्तन नहीं करते। परमात्मा ने उनकी सारी मति–बुद्धि छीन ली है और वह सब विकार ही बोलते हैं। वे किसी की

देन से संतुष्ट नहीं होते, क्योंकि उनके हृदय में तृष्णा एवं अज्ञानता का अँधेरा बना होता है। हे नानक! ऐसे स्वेच्छाचारी लोगों से तो संबंधविच्छेद ही बेहतर है, जिनका मोह—माया से ही प्रेम होता है॥ १॥

मः ४ ॥ जिना अंदरि दूजा भाउ है तिन्हा गुरमुखि प्रीति न होइ ॥ ओहु आवै जाइ भवाईऐ सुपनै सुखु न कोइ ॥ कूड़ु कमावै कूड़ु उचरै कूड़ि लगिआ कूड़ु होइ ॥ माइआ मोहु सभु दुखु है दुखि बिनसै दुखु रोइ ॥ नानक धातु लिवै जोड़ु न आवई जे लोचै सभु कोइ ॥ जिन कउ पोतै पुंनु पइआ तिना गुर सबदी सुखु होइ ॥ २ ॥

महला ४॥ जिन लोगों के अन्तर्मन में द्वैत भावना से प्रेम होता है, वह गुरमुखों से प्रेम नहीं करते। ऐसे व्यक्ति जन्मते—मरते और आवागमन में भटकते हैं, और उन्हें स्वप्न में भी सुख नहीं मिलता। वह झूठ का ही कार्य करते हैं, झूठ ही बोलते हैं और झूठ से जुड़कर वह झूठे हो जाते हैं। माया का मोह दुःख ही है। दुख द्वारा मनुष्य मरता है और दुख द्वारा ही वह विलाप करता है। हे नानक! माया एवं ईश्वर का प्रेम शोभायमान नहीं हो सकता, चाहे हरेक मनुष्य इच्छा करे। जिनके खजाने में पुण्य हैं, वे गुरु के शब्द द्वारा सुख प्राप्त करते हैं॥ २॥

पउड़ी मः ५ ॥ नानक वीचारहि संत मुनि जनां चारि वेद कहंदे ॥ भगत मुखै ते बोलदे से वचन होवंदे ॥ परगट पाहारै जापदे सभि लोक सुणंदे ॥ सुखु न पाइनि मुगध नर संत नालि खहंदे ॥ ओइ लोचनि ओना गुणा नो ओइ अहंकारि सड़ंदे ॥ ओइ वेचारे किआ करहि जां भाग धुरि मंदे ॥ जो मारे तिनि पारब्रहमि से किसै न संदे ॥ वैरु करनि निरवैर नालि धरमि निआइ पचंदे ॥ जो जो संति सरापिआ से फिरहि भवंदे ॥ पेडु मुंढाहू कटिआ तिसु डाल सुकंदे ॥ ३१ ॥

पउड़ी महला ५॥ हे नानक! संत एवं मुनिजन विचार करते हैं और चारों वेद भी कहते हैं कि भक्तजन जो वचन मुख से बोलते हैं, वे (सत्य) पूरे हो जाते हैं। भक्त सारी दुनिया में लोकप्रिय होते हैं और उनकी शोभा सभी लोग सुनते हैं। जो मूर्ख मनुष्य संतों से वैर करते हैं, वे दोषी जलते तो अहंकार में हैं परन्तु भक्तजनों के गुणों के लिए तरसते हैं। इन दोषी मनुष्यों के वश में भी क्या है? क्योंकि आदि से (नीच कर्मों के कारण) नीच संस्कार ही उनका भाग्य है। जो मनुष्य पारब्रह्म द्वारा मृत हैं, वे किसी के (सगे) नहीं। यह धर्म का न्याय है कि जो लोग निर्वेरों के साथ वैर करते हैं, वे बहुत दुखी होते हैं। जो व्यक्ति संतों से शापित हैं, वे योनियों में भटकते रहते हैं। जब वृक्ष जड़ से उखाड़ दिया जाता है तो इसकी टहनियाँ भी सूख जाती हैं॥ ३१॥

सलोक मः ५ ॥ गुर नानक हरि नामु द्रिड़ाइआ भंनण घड़ण समरथु ॥ प्रभु सदा समालहि मित्र तू दुखु सबाइआ लथु ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ हे नानक! मेरे मन में गुरु ने उस भगवान का नाम दृढ़ किया है, जो सहज ही सृष्टि की रचना एवं सृष्टि का विनाश करने में समर्थ है। हे मित्र! यदि तू भगवान को सदैव स्मरण करे तो तेरे तमाम दुःख निवृत्त हो जाएँ॥ १॥

मः ५ ॥ खुधिआवंतु न जाणई लाज कुलाज कुबोलु ॥ नानकु मांगै नामु हरि करि किरपा संजोगु ॥ २ ॥

महला ५॥ भूखा मनुष्य मान—अपमान तथा अपशब्दों की परवाह नहीं करता। हे हरि! नानक तो तेरा नाम ही माँगता है, इसलिए कृपा करके ऐसा संयोग बना दे॥ २॥

पउड़ी ॥ जेवेहे करम कमावदा तेवेहे फलते ॥ चबे तता लोह सारु विचि संघै पलते ॥ घति गलावां चालिआ तिनि दूति अमल ते ॥ काई आस न पुंनीआ नित पर मलु हिरते ॥ कीआ न जाणै अकिरतघण विचि जोनी फिरते ॥ सभे धिरां निखुटीअसु हिरि लईअसु धर ते ॥ विझण कलह न देवदा तां लइआ करते ॥ जो जो करते अहंमेउ झड़ि धरती पड़ते ॥ ३२ ॥

पउड़ी॥ इन्सान जैसा कर्म करता है, उसका वैसा ही फल प्राप्त करता है। यदि कोई इन्सान गर्म एवं कड़ा लोहा चबाए तो वह गले में चुभ जाता है। उसके खोटे कर्मों के कारण यमदूत उसके गले में रस्सा डालकर आगे धकेल देता है। उसकी कोई भी आशा पूरी नहीं होती, वह हमेशा पराई मैल चोरी करता है। कृतघ्न इन्सान भगवान के किए हुए उपकार का आभार व्यक्त नहीं करता, इसलिए योनियों में भटकता रहता है। जब उसके समस्त सहारे समाप्त हो जाते हैं तो फल भोगने हेतु ईश्वर उसे दुनिया से उठा लेता है। वह लड़ाई की अग्नि को बुझने नहीं देता था, इसलिए परमात्मा ने उसे समेट लिया है। जो जो लोग अभिमान करते हैं, वे ढह कर धरती पर ही गिरते हैं॥ ३२॥

सलोक मः ३ ॥ गुरमुखि गिआनु बिबेक बुधि होइ ॥ हरि गुण गावै हिरदै हारु परोइ ॥ पवितु पावनु परम बीचारी ॥ जि ओसु मिलै तिसु पारि उतारी ॥ अंतरि हरि नामु बासना समाणी ॥ हरि दरि सोभा महा उतम बाणी ॥ जि पुरखु सुणै सु होइ निहालु ॥ नानक सतिगुर मिलिऐ पाइआ नामु धनु मालु ॥ १ ॥

श्लोक महला ३॥ गुरमुख में ही ज्ञान तथा विवेक बुद्धि होती है। वह भगवान की महिमा—स्तुति करता है और अपने हृदय में उनकी माला पिरोता है। वह पवित्र—पावन एवं उच्च बुद्धि वाला होता है। जो व्यक्ति उसकी संगति करता है, वह उसे भी भवसागर से पार करवा देता है। उसके हृदय में प्रभु नाम (रूपी) सुगन्ध समाई होती है, वह भगवान के दरबार में बड़ी शोभा प्राप्त करता है और उसकी वाणी सर्वोत्तम होती है, जो पुरुष उस वाणी को सुनता है, वह कृतार्थ हो जाता है। हे नानक ! सतिगुरु को मिलकर उसने यह नाम (रूपी) धन—सम्पत्ति प्राप्त की है॥ १॥

मः ४ ॥ सतिगुर के जीअ की सार न जापै कि पूरै सतिगुर भावै ॥ गुरसिखां अंदरि सतिगुरू वरतै जो सिखां नो लोचै सो गुर खुसी आवै ॥ सतिगुरू आखै सु कार कमावनि सु जपु कमावहि गुरसिखां की घाल सचा थाइ पावै ॥ विणु सतिगुर के हुकमै जि गुरसिखां पासहु कंमु कराइआ लोड़े तिसु गुरसिखु फिरि नेड़ि न आवै ॥ गुर सतिगुर अगै को जीउ लाइ घालै तिसु अगै गुरसिखु कार कमावै ॥ जि ठगी आवै ठगी उठि जाइ तिसु नेड़ै गुरसिखु मूलि न आवै ॥ ब्रहमु बीचारु नानकु आखि सुणावै ॥ जि विणु सतिगुर के मनु मंने कंमु कराए सो जंतु महा दुखु पावै ॥ २ ॥

महला ४॥ सतिगुरु के हृदय का भेद इन्सान की समझ में नहीं आ सकता कि सतिगुरु को क्या भला लगता है। परन्तु सतिगुरु गुरसिक्खों के हृदय में मौजूद है। जो मनुष्य उनकी (सेवा की) कामना करता है, वह गुरु की प्रसन्नता के दायरे में आ जाता है। (क्योंकि) सतिगुरु जो आज्ञा देता है, वही काम गुरसिक्ख करते हैं। सत्य के घर में गुरु के सिक्खों की सेवा स्वीकार हो जाती है। जो मनुष्य सतिगुरु की आज्ञा के विरुद्ध गुरसिक्खों के पास से काम कराना चाहे, गुरु का सिक्ख फिर उसके निकट नहीं जाता, (परन्तु) जो मनुष्य सतिगुरु के दरबार में एकाग्रचित होकर सेवा करता है, गुरसिक्ख उसकी सेवा करता है। जो मनुष्य छल—कपट करने हेतु आता है और छल—कपट के ख्याल में चला जाता है, उसके निकट गुरु का सिक्ख कभी नहीं आता। नानक यही ब्रह्म विचार कह कर सुनाता है कि जो व्यक्ति सतिगुरु के मन को प्रसन्न किए बिना कार्य कराता है, वह व्यक्ति बहुत दुख भोगता है॥ २॥

पउड़ी ॥ तूं सचा साहिबु अति वडा तुहि जेवडु तूं वड वडे ॥ जिसु तूं मेलहि सो तुधु मिलै तूं आपे बखसि लैहि लेखा छडे ॥ जिस नो तूं आपि मिलाइदा सो सतिगुरु सेवे मनु गड गडे ॥ तूं सचा साहिबु सचु तू सभु जीउ पिंडु चंमु तेरा हडे ॥ जिउ भावै तिउ रखु तूं सचिआ नानक मनि आस तेरी वड वडे ॥ ३३ ॥ १ ॥ सुधु ॥

पउड़ी॥ हे परमात्मा! तू ही सच्चा मालिक है जो सबसे महान है तथा तुझ जैसा तू स्वयं ही महान है, अन्य कोई नहीं। जिसे तू अपने साथ मिलाता है, वही तुझसे मिलता है। तू स्वयं ही उसका लेखा छोड़कर उसे क्षमा कर देता है। जिसे तू आप मिलाता है, वही मन लगाकर सतिगुरु की सेवा करता है। हे प्रभु! तू सत्य है, तू सच्चा मालिक है, जीवों का सब कुछ–प्राण, शरीर, त्वचा, अस्थि–तेरा ही दिया हुआ है। हे सत्यस्वरूप परमात्मा! जैसे तुझे उपयुक्त लगता है, वैसे ही हमें रख लो, नानक के मन में तेरी ही आशा है॥ ३३॥ १॥ शुद्ध॥

गउड़ी की वार महला ५ राइ कमालदी मोजदी की वार की धुनि उपरि गावणी

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सलोक मः ५ ॥ हरि हरि नामु जो जनु जपै सो आइआ परवाणु ॥ तिसु जन कै बलिहारणै जिनि भजिआ प्रभु निरबाणु ॥ जनम मरन दुखु कटिआ हरि भेटिआ पुरखु सुजाणु ॥ संतसंगि सागरु तरे जन नानक सचा ताणु ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ जो व्यक्ति भगवान के नाम का सिमरन करता है, उसका दुनिया में जन्म लेना सफल है। जिस व्यक्ति ने निर्लेप प्रभु का भजन किया है, मैं उस पर बलिहारी जाता हूँ। उसे सर्वज्ञ हरि मिल गया है, उसका जन्म–मरण का दुःख–क्लेश मिट गया है। हे नानक! उसे एक सत्यस्वरूप परमात्मा का ही सहारा है, उसने सत्संग में रहकर भवसागर पार कर लिया है॥ १॥

मः ५ ॥ भलके उठि पराहुणा मेरै घरि आवउ ॥ पाउ पखाला तिस के मनि तनि नित भावउ ॥ नामु सुणे नामु संग्रहै नामे लिव लावउ ॥ ग्रिहु धनु सभु पवित्रु होइ हरि के गुण गावउ ॥ हरि नाम वापारी नानका वडभागी पावउ ॥ २ ॥

महला ५॥ यदि प्रातः काल उठकर कोई महापुरुष अतिथि मेरे घर आए, मैं उस महापुरुष के चरण धोऊं और मेरे मन एवं तन को वह सदा प्यारा लगे। वह महापुरुष नित्य नाम सुने, नाम–धन संचित करे और नाम में ही सुरति लगाकर रखे। उसके आगमन से मेरा सारा घर पवित्र हो जाए, मैं भी भगवान का गुणानुवाद करता रहूँ। हे नानक! ऐसा प्रभु के नाम का व्यापारी भाग्य से ही मिल सकता है॥ २॥

पउड़ी ॥ जो तुधु भावै सो भला सचु तेरा भाणा ॥ तू सभ महि एकु वरतदा सभ माहि समाणा ॥ थान थनंतरि रवि रहिआ जीअ अंदरि जाणा ॥ साधसंगि मिलि पाईऐ मनि सचे भाणा ॥ नानक प्रभ सरणागती सद सद कुरबाणा ॥ १ ॥

पउड़ी॥ हे परमात्मा! जो कुछ तुझे भला लगता है, तेरा वही हुक्म भला है। तुम सब जीव–जन्तुओं में मौजूद हो, सब में समाए हुए हो। हे प्रभु! तुम सर्वव्यापक हो और समस्त प्राणियों में तुम ही जाने जाते हो। परमात्मा की इच्छा को स्वीकार करने से वह सत्य प्रभु सत्संग में रहकर ही प्राप्त होता है। नानक तो उस ईश्वर की शरण में है और उस पर सदैव ही न्यौछावर है॥ १॥

सलोक मः ५ ॥ चेता ई तां चेति साहिबु सचा सो धणी ॥ नानक सतिगुरु सेवि चड़ि बोहिथि भउजलु पारि पउ ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ यदि तुझे स्मरण है तो उस सच्चे साहिब को याद कर, जो सबका मालिक है। हे नानक ! सतिगुरु की सेवा रूपी जहाज पर सवार होकर भयानक संसार—सागर से पार हो जा॥ १॥

मः ५ ॥ वाऊ संदे कपड़े पहिरहि गरबि गवार ॥ नानक नालि न चलनी जलि बलि होए छारु ॥ २ ॥

महला ५॥ मूर्ख इन्सान सुन्दर सूक्ष्म वस्त्र बड़े अभिमान से पहनते हैं, परन्तु हे नानक ! मरणोपरांत ये वस्त्र प्राणी के साथ नहीं जाते, यहीं जलकर राख हो जाते हैं॥ २॥

पउड़ी ॥ सेई उबरे जगै विचि जो सचै रखे ॥ मुहि डिठै तिन कै जीवीऐ हरि अंम्रितु चखे ॥ कामु क्रोधु लोभु मोहु संगि साधा भखे ॥ करि किरपा प्रभि आपणी हरि आपि परखे ॥ नानक चलत न जापनी को सकै न लखे ॥ २ ॥

पउड़ी॥ केवल वही इन्सान इस दुनिया में बचे हैं, जिनकी सच्चे परमेश्वर ने रक्षा की है। ऐसे लोगों के दर्शन करके हरि—नाम रूपी अमृत चखा जा सकता है। संतों की संगति करने से काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि विकार नष्ट हो जाते हैं। प्रभु स्वयं उनकी जांच—पड़ताल करता है, जिन पर वह अपनी कृपा—दृष्टि करता है। हे नानक ! भगवान के कौतुक समझे नहीं जा सकते, कोई प्राणी समझ नहीं सकता॥ २॥

सलोक मः ५ ॥ नानक सोई दिनसु सुहावड़ा जितु प्रभु आवै चिति ॥ जितु दिनि विसरै पारब्रहमु फिटु भलेरी रुति ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ हे नानक ! वही दिन शुभ एवं सुन्दर है, जिस दिन ईश्वर मन में याद आता है। जिस दिन भगवान भूल जाता है, वह ऋतु अशुभ एवं धिक्कार योग्य है॥ १॥

मः ५ ॥ नानक मित्राई तिसु सिउ सभ किछु जिस कै हाथि ॥ कुमित्रा सेई कांढीअहि इक विख न चलहि साथि ॥ २॥

महला ५॥ हे नानक ! उस (ईश्वर) के साथ मित्रता कर, जिसके वश में सब कुछ है। जो एक कदम भी मनुष्य के साथ नहीं चलते, वे कुमित्र कहलाते हैं॥ २॥

पउड़ी ॥ अंम्रितु नामु निधानु है मिलि पीवहु भाई ॥ जिसु सिमरत सुखु पाईऐ सभ तिखा बुझाई ॥ करि सेवा पारब्रहम गुर भुख रहै न काई ॥ सगल मनोरथ पुंनिआ अमरा पदु पाई ॥ तुधु जेवडु तूहै पारब्रहम नानक सरणाई ॥ ३ ॥

पउड़ी॥ हे भाई ! ईश्वर का नाम अमृत (रूपी) खजाना है, उस अमृत को सत्संग में मिलकर पियो। जिसका सिमरन करने से सुख प्राप्त होता है और सारी तृष्णा मिट जाती है। गुरु पारब्रह्म की सेवा करने से कोई भूख नहीं रहेगी। (नाम—सिमरन करने से) सारे मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं और अमरपद प्राप्त हो जाता है। हे पारब्रह्म ! तुझ जैसा तू ही है और नानक तेरी शरण में है॥ ३॥

सलोक मः ५ ॥ डिठड़ो हभ ठाइ ऊण न काई जाइ ॥ नानक लधा तिन सुआउ जिना सतिगुरु भेटिआ ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ मैंने हर जगह पर (भगवान को) देखा है, कोई भी स्थान उससे खाली नहीं है। हे नानक! जिन्हें सतिगुरु मिल गया है, उन्हें जीवन का आनंद मिल गया है॥ १॥

मः ५ ॥ दामनी चमतकार तिउ वरतारा जग खे ॥ वथु सुहावी साइ नानक नाउ जपंदो तिसु धणी ॥ २ ॥

महला ५॥ दुनिया का व्यवहार वैसा है, जैसे दामिनी की चमक है। हे नानक! केवल वही वस्तु सुन्दर है, जो उस मालिक–प्रभु का नाम जपना है॥ २॥

पउड़ी ॥ सिम्रिति सासत्र सोधि सभि किनै कीम न जाणी ॥ जो जनु भेटै साधसंगि सो हरि रंगु माणी ॥ सचु नामु करता पुरखु एह रतना खाणी ॥ मसतकि होवै लिखिआ हरि सिमरि पराणी ॥ तोसा दिचै सचु नामु नानक मिहमाणी ॥ ४ ॥

पउड़ी॥ मनुष्यों ने स्मृतियाँ, शास्त्र भली प्रकार देखे हैं परन्तु किसी ने भी ईश्वर का मूल्यांकन नहीं जाना। जो पुरुष संतों की संगति के साथ मिलता है, वह प्रभु की प्रीति का आनंद भोगता है। सृष्टि के रचयिता ईश्वर का सत्य नाम, रत्नों की खान है। जिसके मस्तक पर (शुभ कर्मों से) भाग्य हों, वही मनुष्य भगवान का चिन्तन करता है। हे स्वामी! नानक का आतिथ्य–सत्कार यही है कि अपना सत्य नाम परलोक के लिए खर्च के रूप में दे॥ ४॥

सलोक मः ५ ॥ अंतरि चिंता नैणी सुखी मूलि न उतरै भुख ॥ नानक सचे नाम बिनु किसै न लथो दुखु ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ जिस पुरुष के मन में चिन्ता है, लेकिन नयनों से देखने से सुखी प्रतीत होता है, उसकी माया की भूख बिल्कुल नहीं मिटती। हे नानक! सत्य नाम के अतिरिक्त किसी का भी दुःख दूर नहीं होता॥ १॥

मः ५ ॥ मुठड़े सेई साथ जिनी सचु न लदिआ ॥ नानक से साबासि जिनी गुर मिलि इकु पछाणिआ ॥ २ ॥

महला ५॥ उन (जीव–) व्यापारियों के समूह के समूह लुट गए (मानो) जिन्होंने ईश्वर का नाम–रूपी सौदा नहीं लादा। (परन्तु) हे नानक! जिन्होंने गुरु को मिलकर ईश्वर को पहचान लिया है, उनको शुभकामनाएँ मिलती हैं॥ २॥

पउड़ी ॥ जिथै बैसनि साध जन सो थानु सुहंदा ॥ ओइ सेवनि संम्रिथु आपणा बिनसै सभु मंदा ॥ पतित उधारण पारब्रहम संत बेदु कहंदा ॥ भगति वछलु तेरा बिरदु है जुगि जुगि वरतंदा ॥ नानकु जाचै एकु नामु मनि तनि भावंदा ॥ ५ ॥

पउड़ी॥ जहाँ साधुजन विराजमान होते हैं, वह स्थान अति सुन्दर है। चूंकि ऐसे व्यक्ति अपने समर्थ प्रभु को स्मरण करते हैं, जिससे उनके मन से तमाम पाप (विकार) मिट जाते हैं। हे पारब्रह्म! तुम पतित प्राणियों का उद्धार करने वाले हो– यह बात संतजन और वेद भी कहते हैं। तेरा विरद् भक्तवत्सल है, जो युगों–युगांतरों में इस्तेमाल होता है। नानक एक तेरा ही नाम माँगता है, जो उसके मन एवं शरीर को भला लगता है॥ ५॥

सलोक मः ५ ॥ चिड़ी चुहकी पहु फुटी वगनि बहुतु तरंग ॥ अचरज रूप संतन रचे नानक नामहि रंग ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ जब पौ फूटती है अर्थात् थोड़ा–सा उजाला होता है तो चिड़ियाँ चहकती हैं और उस समय भक्तों के हृदय में स्मरण की लहरें उठती हैं। हे नानक! जिन संतजनों का ईश्वर के नाम में प्रेम होता है, उन्होंने पौ फूटने के समय कौतुकमय रूप रचे होते हैं॥ १॥

मः ५ ॥ घर मंदर खुसीआ तही जह तू आवहि चिति ॥ दुनीआ कीआ वडिआईआ नानक सभि कुमित ॥ २ ॥

महला ५॥ हे ईश्वर! उन घरों, मन्दिरों में ही हर्षोल्लास होता है, जहाँ तू याद आता है। हे नानक! यदि ईश्वर भूल जाए तो दुनिया का तमाम ऐश्वर्य–वैभव खोटे मित्र समान है॥ २॥

पउड़ी ॥ हरि धनु सची रासि है किनै विरलै जाता ॥ तिसै परापति भाइरहु जिसु देइ बिधाता ॥ मन तन भीतरि मउलिआ हरि रंगि जनु राता ॥ साधसंगि गुण गाइआ सभि दोखह खाता ॥ नानक सोई जीविआ जिनि इकु पछाता ॥ ६ ॥

पउड़ी॥ हे भाइयो! ईश्वर का नाम रूपी धन ही सच्ची पूँजी है। लेकिन किसी विरले पुरुष ने ही यह बात समझी है, केवल यह पूंजी उसे ही प्राप्त होती है, जिसे विधाता स्वयं प्रदान करता है। ईश्वर का सेवक (जिसे नाम–राशि मिलती है) ईश्वर के रंग में मग्न हो जाता है, वह अपने तन–मन में कृतार्थ हो जाता है। सत्संग में वह भगवान की प्रशंसा करता है और इस प्रकार तमाम दुःखों से मुक्ति प्राप्त कर लेता है। हे नानक! केवल वही मनुष्य जीता है, जिसने एक ईश्वर को पहचान लिया है॥ ६॥

सलोक मः ५ ॥ खखड़ीआ सुहावीआ लगड़ीआ अक कंठि ॥ बिरह विछोड़ा धणी सिउ नानक सहसै गंठि ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ आक के फूल तब तक सुन्दर हैं जब तक आक के साथ लगे हुए हैं, (परन्तु) हे नानक! अपने मालिक से प्रीति टूटने पर उनके हजारों टुकड़े हो जाते हैं॥ १॥

मः ५ ॥ विसारेदे मरि गए मरि भि न सकहि मूलि ॥ वेमुख होए राम ते जिउ तसकर उपरि सूलि ॥ २ ॥

महला ५॥ ईश्वर को भुलाने वाले प्राणी प्राण त्याग गए हैं, परन्तु वे अच्छी प्रकार मर भी नहीं सके। जो राम से विमुख हुए हैं, वे इस प्रकार हैं जैसे सूली पर चढ़ाए गए चोर हों॥ २॥

पउड़ी ॥ सुख निधानु प्रभु एकु है अबिनासी सुणिआ ॥ जलि थलि महीअलि पूरिआ घटि घटि हरि भणिआ ॥ ऊच नीच सभ इक समानि कीट हसती बणिआ ॥ मीत सखा सुत बंधिपो सभि तिस दे जणिआ ॥ तुसि नानकु देवै जिसु नामु तिनि हरि रंगु मणिआ ॥ ७ ॥

पउड़ी॥ एक ईश्वर ही सर्व सुखों का भण्डार है जो अविनाशी सुना जाता है। ईश्वर सागर, पृथ्वी, गगन हर जगह पर सर्वव्यापक है, वह तो कण–कण में मौजूद कहा जाता है, वह ऊँचे–नीचे तमाम जीवों में एक समान विद्यमान है। कीड़े से लेकर हाथी तक सभी उस ईश्वर से ही बने हैं। मित्र, साथी, पुत्र, रिश्तेदार सभी उस ईश्वर के ही पैदा किए हुए हैं। हे नानक! जिसे ईश्वर अपनी प्रसन्नता द्वारा अपना 'नाम' प्रदान करता है, वह उसकी प्रीति का आनंद प्राप्त करता है॥ ७॥

सलोक मः ५ ॥ जिना सासि गिरासि न विसरै हरि नामां मनि मंतु ॥ धंनु सि सेई नानका पूरनु सोई संतु ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ हे नानक ! जिन लोगों को श्वास लेते एवं खाते समय कभी भी ईश्वर नहीं भूलता, जिनके हृदय में हरि नाम–रूपी मन्त्र है, ऐसे व्यक्ति ही भाग्यवान हैं और वही पूर्ण संत हैं॥ १॥

मः ५ ॥ अठे पहर भउदा फिरै खावण संदड़ै सूलि ॥ दोजकि पउदा किउ रहै जा चिति न होइ रसूलि ॥ २ ॥

महला ५॥ जो व्यक्ति खाने के दुःख में दिन–रात भटकता फिरता है, ऐसा व्यक्ति नरक में पड़ने से किस तरह बच सकता है, यदि वह अपने हृदय में गुरु–पैगम्बर के माध्यम से ईश्वर को ही स्मरण नहीं करता॥ २॥

पउड़ी ॥ तिसै सरेवहु प्राणीहो जिस दै नाउ पलै ॥ ऐथै रहहु सुहेलिआ अगै नालि चलै ॥ घरु बंधहु सच धरम का गडि थंमु अहलै ॥ ओट लैहु नाराइणै दीन दुनीआ झलै ॥ नानक पकड़े चरण हरि तिसु दरगह मलै ॥ ८ ॥

पउड़ी॥ हे प्राणियों ! उस गुरु की सेवा करो जिसके पास ईश्वर का नाम है। इस तरह तुम इहलोक में सुखपूर्वक रहोगे तथा परलोक में भी नाम तुम्हारे साथ जाएगा। सत्य धर्म का अटल स्तम्भ स्थापित करके भक्ति का घर बनाओ, उस नारायण की ओट लो जो दीन एवं दुनिया को सहारा देता है। हे नानक ! जिस प्राणी ने ईश्वर के चरण पकड़े हैं, वह उसके दरबार को हमेशा के लिए प्राप्त कर लेता है॥ ८॥

सलोक मः ५ ॥ जाचकु मंगै दानु देहि पिआरिआ ॥ देवणहारु दातारु मै नित चितारिआ ॥ निखुटि न जाई मूलि अतुल भंडारिआ ॥ नानक सबदु अपारु तिनि सभु किछु सारिआ ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ हे मेरे प्रियतम ! मैं भिखारी दान माँगता हूँ, मुझे भीख दे। देन देने वाले दाता मैं तुझे हमेशा याद करता हूँ। (हे प्रभु !) तेरा खजाना अपरंपार व अतुलनीय है जो कभी समाप्त नहीं होता। हे नानक ! शब्द अपार है, इस शब्द ने मेरा प्रत्येक कार्य संवार दिया है॥ १॥

मः ५ ॥ सिखहु सबदु पिआरिहो जनम मरन की टेक ॥ मुख ऊजल सदा सुखी नानक सिमरत एक ॥ २ ॥

महला ५॥ हे प्रिय सज्जनों ! शब्द की साधना करो चूंकि यह जीवन एवं मृत्यु दोनों का सहारा है। हे नानक ! एक ईश्वर को याद करने से मुख उज्ज्वल हो जाते हैं और सदैव सुख उपलब्ध होता है॥ २॥

पउड़ी ॥ ओथै अंम्रितु वंडीऐ सुखीआ हरि करणे ॥ जम कै पंथि न पाईअहि फिरि नाही मरणे ॥ जिस नो आइआ प्रेम रसु तिसै ही जरणे ॥ बाणी उचरहि साध जन अमिउ चलहि झरणे ॥ पेखि दरसनु नानकु जीविआ मन अंदरि धरणे ॥ ९ ॥

पउड़ी॥ वहाँ सत्संग में समस्त जीवों को सुखी करने वाला अमृत बाँटा जाता है। वे यम के मार्ग पर नहीं डाले जाते, उन्हें पुनः मृत्यु का भय स्पर्श नहीं करता। जिस पुरुष को हरि–नाम के प्रेम का स्वाद आता है, वह इस स्वाद को अपने भीतर टिकाता है। साधुजन वाणी उच्चरित करते हैं, वहाँ अमृत

के मानों झरने चल पड़ते हैं। नानक भी उन महापुरुषों के दर्शन करके जी रहा है, जिन्होंने हृदय में नाम को धारण किया हुआ है॥ ६॥

सलोक मः ५ ॥ सतिगुरि पूरै सेविऐ दूखा का होइ नासु ॥ नानक नामि अराधिऐ कारजु आवै रासि ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ पूर्ण सतिगुरु की सेवा करने से दुखों का नाश हो जाता है। हे नानक! ईश्वर के नाम की आराधना करने से सभी कार्य सफल हो जाते हैं॥ १॥

मः ५ ॥ जिसु सिमरत संकट छुटहि अनद मंगल बिस्राम ॥ नानक जपीऐ सदा हरि निमख न बिसरउ नामु ॥ २ ॥

महला ५॥ जिस भगवान का सिमरन करने से संकट दूर हो जाते हैं और मनुष्य आनंद–मंगल में रहता है। हे नानक! उस भगवान के नाम का हमेशा ही जाप करना चाहिए और एक पल भर के लिए उसके नाम को भूलना नहीं चाहिए॥ २॥

पउड़ी ॥ तिन की सोभा किआ गणी जिनी हरि हरि लधा ॥ साधा सरणी जो पवै सो छुटै बधा ॥ गुण गावै अबिनासीऐ जोनि गरभि न दधा ॥ गुरु भेटिआ पारब्रहमु हरि पड़ि बुझि समधा ॥ नानक पाइआ सो धणी हरि अगम अगधा ॥ १० ॥

पउड़ी॥ जिन महापुरुषों को भगवान मिल गया है, उनकी शोभा का बखान नहीं किया जा सकता। जो व्यक्ति संतों की शरण में आता है, वह माया के बन्धनों से मुक्ति प्राप्त कर लेता है। जो व्यक्ति अनश्वर परमात्मा के गुण गाता है, वह गर्भ–योनियों में नहीं पड़ता। जो पुरुष गुरु से मिलता है, वह ईश्वर के गुणों बारे पढ़ एवं समझकर समाधि स्थिर हो जाता है। हे नानक! उसने अगम्य एवं अथाह हरि–प्रभु को प्राप्त कर लिया है॥ १०॥

सलोक मः ५ ॥ कामु न करही आपणा फिरहि अवता लोइ ॥ नानक नाइ विसारिऐ सुखु किनेहा होइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ इन्सान अपने जीवन का यथार्थ कार्य (भगवान का भजन) नहीं करता और दुनिया में स्वेच्छाचारी बनकर घूमता रहता है। हे नानक! भगवान के नाम को भुलाने से (उसे) कैसे सुख उपलब्ध हो सकता है?॥ १॥

मः ५ ॥ बिखै कउड़तणि सगल माहि जगति रही लपटाइ ॥ नानक जनि वीचारिआ मीठा हरि का नाउ ॥ २ ॥

महला ५॥ विष की कड़वाहट तमाम प्राणियों में है, जो संसार में सबको लिपटी हुई है। हे नानक! सेवक ने यही विचार किया है कि ईश्वर का नाम ही मीठा है॥ २॥

पउड़ी ॥ इह नीसाणी साध की जिसु भेटत तरीऐ ॥ जमकंकरु नेड़ि न आवई फिरि बहुड़ि न मरीऐ ॥ भव सागरु संसारु बिखु सो पारि उतरीऐ ॥ हरि गुण गुंफहु मनि माल हरि सभ मलु परहरीऐ ॥ नानक प्रीतम मिलि रहे पारब्रहम नरहरीऐ ॥ ११ ॥

पउड़ी॥ संत की निशानी यही है कि उसको मिलने से मनुष्य भवसागर से पार हो जाता है। यमदूत उसके निकट नहीं आता और बार–बार मरना नहीं पड़ता है। वह उस विषैले एवं भयानक

भवसागर से पार हो जाता है। हे मानव ! हृदय में ईश्वर के गुणों की माया गूंथों, इससे हृदय की तमाम मैल दूर हो जाती है। हे नानक ! (जिन मनुष्यों ने यह माला गूंथी है) वे पारब्रह्म प्रभु में विलीन हुए रहते हैं॥ ११॥

सलोक मः ५ ॥ नानक आए से परवाणु है जिन हरि वुठा चिति ॥ गाल्ही अल पलालीआ कंमि न आवहि मित ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ हे नानक ! उन लोगों का इस दुनिया में जन्म लेना सफल है, जिनके मन में भगवान आकर बस गया है। हे मित्र ! व्यर्थ बातें किसी काम नहीं आतीं॥ १॥

मः ५ ॥ पारब्रहमु प्रभु द्रिसटी आइआ पूरन अगम बिसमाद ॥ नानक राम नामु धनु कीता पूरे गुर परसादि ॥ २ ॥

महला ५॥ मुझे सर्वव्यापक, अगम्य एवं अद्भुत पारब्रह्म–प्रभु नज़र आया है। हे नानक ! पूर्ण गुरु की कृपा से उसने राम के नाम को अपना धन बनाया है॥ २॥

पउड़ी ॥ धोहु न चली खसम नालि लबि मोहि विगुते ॥ करतब करनि भलेरिआ मदि माइआ सुते ॥ फिरि फिरि जूनि भवाईअनि जम मारगि मुते ॥ कीता पाइनि आपणा दुख सेती जुते ॥ नानक नाइ विसारिऐ सभ मंदी रुते ॥ १२ ॥

पउड़ी॥ जगत् के मालिक प्रभु के साथ किसी प्रकार का धोखा सफल नहीं हो सकता। लोभ एवं मोह द्वारा प्राणी नष्ट हो जाता है। माया के नशे में सोए हुए मनुष्य नीच कर्म करते हैं और वह बार–बार योनियों में धकेले जाते हैं तथा यमराज के मार्ग में छोड़ दिए जाते हैं। दुःखों से बंधे हुए वह अपने कर्मों का फल पाते हैं। हे नानक ! यदि भगवान के नाम को विस्मृत कर दिया जाए तो सभी ऋतु व्यर्थ ही हैं॥ १२॥

सलोक मः ५ ॥ उठंदिआ बहंदिआ सवंदिआ सुखु सोइ ॥ नानक नामि सलाहिऐ मनु तनु सीतलु होइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ हे नानक ! भगवान के नाम की सराहना करने से मन एवं तन शीतल हो जाते हैं और यह सुख उठते–बैठते, सोते समय हमेशा बना रहता है॥ १॥

मः ५ ॥ लालचि अटिआ नित फिरै सुआरथु करे न कोइ ॥ जिसु गुरु भेटै नानका तिसु मनि वसिआ सोइ ॥ २ ॥

महला ५॥ प्राणी हमेशा लोभ में फँसा हुआ भटकता रहता है और कोई भी शुभ कर्म नहीं करता। हे नानक ! जिस इन्सान को गुरु मिल जाता है, उसके हृदय में ईश्वर निवास कर जाता है॥ २॥

पउड़ी ॥ सभे वसतू कउड़ीआ सचे नाउ मिठा ॥ सादु आइआ तिन हरि जनां चखि साधी डिठा ॥ पारब्रहमि जिसु लिखिआ मनि तिसै वुठा ॥ इकु निरंजनु रवि रहिआ भाउ दुया कुठा ॥ हरि नानकु मंगै जोड़ि कर प्रभु देवै तुठा ॥ १३ ॥

पउड़ी॥ संसार की समस्त वस्तुएँ कड़वी हो जाती हैं, लेकिन एक ईश्वर का नाम ही सदा मीठा रहता है। (परन्तु) यह स्वाद भगवान के उन भक्तों को आता है, जिन्होंने यह नाम–रस चखकर देखा

है। उसी मनुष्य के मन में यह नाम (रस) बसता है, जिसके लिए पारब्रह्म ने ऐसा लिख छोड़ा है। एक निरंजन प्रभु ही हर जगह पर दिखता है। (मनुष्य का) द्वैतभाव नष्ट हो जाता है। नानक भी दोनों हाथ जोड़कर ईश्वर का नाम माँगता है, लेकिन ईश्वर जिस पर अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता है, उसे ही देता है॥ १३॥

सलोक मः ५ ॥ जाचड़ी सा सारु जो जाचंदी हेकड़ो ॥ गाल्ही बिआ विकार नानक धणी विहूणीआ ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ वही याचना सर्वोत्तम है जो एक ईश्वर (के नाम) को माँगना है। हे नानक! विश्व के मालिक परमेश्वर के नाम के सिवाय सब बातें व्यर्थ हैं॥ १॥

मः ५ ॥ नीहि जि विधा मंनु पछाणू विरलो थिओ ॥ जोड़णहारा संतु नानक पाधरु पधरो ॥ २ ॥

महला ५॥ जिसका मन ईश्वर के प्रेम में बिंधा हो, ऐसा (प्रभु की) पहचान करने वाला कोई विरला पुरुष ही होता है। हे नानक! संत भगवान से मिलाने में समर्थ होता है और प्रभु को मिलने हेतु सन्मार्ग दिखा देता है॥ २॥

पउड़ी ॥ सोई सेविहु जीअड़े दाता बखसिंदु ॥ किलविख सभि बिनासु होनि सिमरत गोविंदु ॥ हरि मारगु साधू दसिआ जपीऐ गुर मंतु ॥ माइआ सुआद सभि फिकिआ हरि मनि भावंदु ॥ धिआइ नानक परमेसरै जिनि दिती जिंदु ॥ १४ ॥

पउड़ी॥ हे मेरे मन! उस ईश्वर को याद कर, जो सबका दाता एवं क्षमाशील है। गोबिन्द का भजन करने से पापों का विनाश हो जाता है। गुरु ने ईश्वर के मिलन का मार्ग बतलाया है। गुरु का मन्त्र सदैव याद करना चाहिए। माया के तमाम रस फीके लगते हैं और केवल ईश्वर ही मन में प्रिय लगता है। हे नानक! जिस परमेश्वर ने यह प्राण दिए हैं, उसका हमेशा ही ध्यान करना चाहिए॥ १४॥

सलोक मः ५ ॥ वत लगी सचे नाम की जो बीजे सो खाइ ॥ तिसहि परापति नानका जिस नो लिखिआ आइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ सत्यनाम रूपी बीज बोने हेतु शुभ समय आया है, जो व्यक्ति नाम रूपी बीज बोता है, वही इसका फल सेवन करता है। हे नानक! यह वस्तु उस पुरुष को ही प्राप्त होती है, जिसकी किस्मत में लिखा होता है॥ १॥

मः ५ ॥ मंगणा त सचु इकु जिसु तुसि देवै आपि ॥ जितु खाधै मनु त्रिपतीऐ नानक साहिब दाति ॥ २ ॥

महला ५॥ यदि इन्सान ने माँगना है तो उसे एक सत्य-नाम ही माँगना चाहिए। यह सत्य-नाम उसे ही मिलता है, जिसे ईश्वर स्वयं अपनी खुशी से प्रदान करता है। हे नानक! यह परमेश्वर की ही देन है, जिसे खाने से मन तृप्त हो जाता है॥ २॥

पउड़ी ॥ लाहा जग महि से खटहि जिन हरि धनु रासि ॥ दुतीआ भाउ न जाणनी सचे दी आस ॥ निहचलु एकु सरेविआ होरु सभ विणासु ॥ पारब्रहमु जिसु विसरै तिसु बिरथा सासु ॥ कंठि लाइ जन रखिआ नानक बलि जासु ॥ १५ ॥

पउड़ी॥ दुनिया में वहीं लोग लाभ प्राप्त करते हैं, जिनके पास हरि नाम-रूपी धन एवं पूँजी है। वे किसी दूसरे के साथ मोह करना नहीं जानते, उन्हें एक ईश्वर पर ही भरोसा होता है। वे सारी दुनिया

को नश्वर समझते हुए एक अटल परमेश्वर की ही भक्ति करते हैं। जिस व्यक्ति को ईश्वर भूल जाता है, उसका प्रत्येक श्वास निष्फल हो जाता है। हे नानक! जिस ईश्वर ने अपने सेवकों को स्वयं अपने गले से लगाकर बचाया है, मैं उस पर हमेशा ही न्यौछावर हूँ॥ १५॥

सलोक मः ५ ॥ पारब्रहमि फुरमाइआ मीहु वुठा सहजि सुभाइ ॥ अंनु धंनु बहुतु उपजिआ प्रिथमी रजी तिपति अघाइ ॥ सदा सदा गुण उचरै दुखु दालदु गइआ बिलाइ ॥ पूरबि लिखिआ पाइआ मिलिआ तिसै रजाइ ॥ परमेसरि जीवालिआ नानक तिसै धिआइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ जब भगवान का हुक्म हुआ तो सहज स्वभाव ही बरसात होने लगी। इससे अधिक मात्रा में अन्न एवं धन उत्पन्न हुए और पृथ्वी भलीभांति तृप्त एवं संतुष्ट हो गई। साधु हमेशा ही प्रभु की महिमा उच्चरित करता है और उसके दुःख–दारिद्र दूर हो गए हैं। इन्सान वही कुछ हासिल करता है, जो आदि से उसकी किस्मत में लिखा होता है और यह परमेश्वर की इच्छानुसार मिलता है। हे नानक! जिसने यह अमूल्य जीवन प्रदान किया है, उस परमेश्वर को स्मरण कर॥ १॥

मः ५ ॥ जीवन पदु निरबाणु इको सिमरीऐ ॥ दूजी नाही जाइ किनि बिधि धीरीऐ ॥ डिठा सभु संसारु सुखु न नाम बिनु ॥ तनु धनु होसी छारु जाणै कोइ जनु ॥ रंग रूप रस बादि कि करहि पराणीआ ॥ जिसु भुलाए आपि तिसु कल नही जाणीआ ॥ रंगि रते निरबाणु सचा गावही ॥ नानक सरणि दुआरि जे तुधु भावही ॥ २ ॥

महला ५॥ जीवन पदवी पाने के लिए एक पवित्र प्रभु की आराधना करो। दूसरा कोई स्थान नहीं, (क्योंकि) किसी दूसरे से हमारी कैसे संतुष्टि हो सकती है? मैंने सारा संसार देख लिया है, ईश्वर के नाम के अलावा कोई सुख नहीं। यह तन एवं धन नष्ट हो जाएँगे परन्तु कोई विरला पुरुष ही इसे समझता है। हे नश्वर प्राणी! तुम क्या कर रहे हो? रंग–रूप एवं रस सब व्यर्थ हैं। (परन्तु प्राणी के भी क्या वश?) ईश्वर जिस पुरुष को स्वयं कुमार्गगामी करता है, वह उसकी शक्ति को नहीं समझता। जो मनुष्य पवित्र प्रभु के प्रेम में मग्न रहते हैं, वे सत्यनाम का गायन करते हैं। नानक का कथन है कि हे प्रभु! जो भी जीव तुझे अच्छे लगते हैं, वे तेरे द्वार पर शरण हेतु आ जाते हैं॥ २॥

पउड़ी ॥ जंमणु मरणु न तिन्ह कउ जो हरि लड़ि लागे ॥ जीवत से परवाणु होए हरि कीरतनि जागे ॥ साधसंगु जिन पाइआ सेई वडभागे ॥ नाइ विसरिऐ ध्रिगु जीवणा तूटे कच धागे ॥ नानक धूड़ि पुनीत साध लख कोटि पिरागे ॥ १६ ॥

पउड़ी॥ जो व्यक्ति ईश्वर का सहारा लेते हैं, उनका जन्म–मरण का चक्र मिट जाता है। जो ईश्वर के भजन कीर्तन में सचेत रहते हैं, वे इस जीवन में सत्कृत हो जाते हैं। जिन लोगों को संतों की संगति प्राप्त होती है, वे बड़े भाग्यवान हैं। परन्तु यदि परमेश्वर का नाम भूल जाए तो यह जीवन धिक्कार योग्य है तथा यह कच्चे धागे की भाँति टूट जाता है। हे नानक! संतों की चरण–धूलि लाखों–करोड़ों प्रयागराज इत्यादि तीर्थों से अधिक पावन है॥ १६॥

सलोकु मः ५ ॥ धरणि सुवंनी खड़ रतन जड़ावी हरि प्रेम पुरखु मनि वुठा ॥ सभे काज सुहेलड़े थीए गुरु नानकु सतिगुरु तुठा ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ जिस हृदय में हरि–परमेश्वर के प्रेम का निवास है, वह हृदय ऐसा है जैसे ओस–मोतियों से जड़ित घास वाली धरती सुन्दर रंग वाली हो जाती है। हे नानक! जिस पुरुष पर गुरु नानक प्रसन्न हो जाता है, उसके तमाम कार्य सहज ही (सफल) हो जाते हैं॥ १॥

मः ५ ॥ फिरदी फिरदी दह दिसा जल परबत बनराइ ॥ जिथै डिठा मिरतको इल बहिठी आइ ॥ २॥

महला ५॥ दसों दिशाओं में नदियों, पर्वतों एवं जंगलों पर उड़ती–उड़ती चील ने जहाँ शव देखा वहीं आ बैठी॥ २॥

पउड़ी ॥ जिसु सरब सुखा फल लोड़ीअहि सो सचु कमावउ ॥ नेड़ै देखउ पारब्रहमु इकु नामु धिआवउ ॥ होइ सगल की रेणुका हरि संगि समावउ ॥ दूखु न देई किसै जीअ पति सिउ घरि जावउ ॥ पतित पुनीत करता पुरखु नानक सुणावउ ॥ १७ ॥

पउड़ी॥ मैं उस सत्य के पुंज ईश्वर का चिन्तन करूँ, जिससे सर्व सुख एवं फल माँगे जाते हैं। उस पारब्रह्म को अपने साथ–साथ ही देखूँ और उसके नाम का ध्यान करता रहूँ। मैं सबकी चरण–धूलि होकर उस ईश्वर में समा जाऊँ। मैं किसी भी प्राणी को दुःख न दूँ और प्रतिष्ठा से अपने वास्तविक घर में जाऊँ। हे नानक ! मैं दूसरों को भी सुनाता हूँ कि विश्व का रचयिता परमात्मा पतित जीवों को भी पवित्र करने वाला है॥ १७॥

सलोक दोहा मः ५ ॥ एकु जि साजनु मै कीआ सरब कला समरथु ॥ जीउ हमारा खंनीऐ हरि मन तन संदड़ी वथु ॥ १ ॥

श्लोक दोहा महला ५॥ मैंने उस एक ईश्वर को अपना साजन बनाया है जो सर्वकला सम्पूर्ण है। मेरी आत्मा उस पर न्यौछावर है और वह परमेश्वर ही मेरे मन एवं तन की यथार्थ दौलत है॥ १॥

मः ५ ॥ जे करु गहहि पिआरड़े तुधु न छोडा मूलि ॥ हरि छोडनि से दुरजना पड़हि दोजक कै सूलि ॥ २ ॥

महला ५॥ हे मेरे प्रियतम ! यदि तू मेरा हाथ थाम ले तो मैं तुझे कभी भी छोड़ नहीं सकूँगा। जो मनुष्य ईश्वर को त्याग देते हैं, ऐसे दुर्जन इन्सान नरक की असहनीय पीड़ा में पड़ते हैं॥ २॥

पउड़ी ॥ सभि निधान घरि जिस दै हरि करे सु होवै ॥ जपि जपि जीवहि संत जन पापा मलु धोवै ॥ चरन कमल हिरदै वसहि संकट सभि खोवै ॥ गुरु पूरा जिसु भेटीऐ मरि जनमि न रोवै ॥ प्रभ दरस पिआस नानक घणी किरपा करि देवै ॥ १८ ॥

पउड़ी॥ सारे खजाने उस ईश्वर के घर में हैं। परमात्मा जो कुछ करता है, वही होता है। संतजन उसका भजन–सिमरन करके जीते हैं, और वह उनके पापों की तमाम मैल स्वच्छ कर देता है। ईश्वर के चरण–कमल हृदय में बसाने से तमाम संकट दूर हो जाते हैं। जो मनुष्य पूर्ण गुरु से साक्षात्कार करता है, वह जन्म–मरण के चक्र में विलाप नहीं करता। नानक को भी प्रभु के दर्शनों की तीव्र लालसा है लेकिन अपनी कृपा–दृष्टि से ही वह दर्शनों की देन प्रदान करता है॥ १८॥

सलोक डखणा मः ५ ॥ भोरी भरमु वञाइ पिरी मुहबति हिकु तू ॥ जिथहु वंञै जाइ तिथाऊ मउजूदु सोइ ॥ १ ॥

श्लोक डखणा महला ५॥ यदि तू थोड़ा–सा भी भ्रम दूर कर दे और अपने प्रियतम (परमात्मा) के साथ मुहब्बत करे तो जहाँ कहीं भी जाओगे, वहाँ ईश्वर तुझे मौजूद दिखेगा॥ १॥

मः ५ ॥ चड़ि कै घोड़ड़ै कुंदे पकड़हि खूंडी दी खेडारी ॥ हंसा सेती चितु उलासहि कुकड़ दी ओडारी ॥ २ ॥

महला ५॥ जो व्यक्ति साधारण खेल खेलना जानते हों (लेकिन) सुन्दर घोड़े पर सवार होकर बन्दूक के हत्थे पकड़ते हों (उन्हें ऐसा समझो कि) उड़ान तो मुर्गे की उड़ना जानते हों और हंसों के साथ उड़ने के लिए मन को उत्साह देते हों॥ २॥

पउड़ी ॥ रसना उचरै हरि स्रवणी सुणै सो उधरै मिता ॥ हरि जसु लिखहि लाइ भावनी से हसत पविता ॥ अठसठि तीरथ मजना सभि पुंन तिनि किता ॥ संसार सागर ते उधरे बिखिआ गड़ु जिता ॥ नानक लड़ि लाइ उधारिअनु दयु सेवि अमिता ॥ १९ ॥

पउड़ी॥ हे मित्र! जो व्यक्ति अपनी रसना से भगवान के नाम का उच्चारण करता है और कानों से सुनता है, ऐसे व्यक्ति का उद्धार हो जाता है। जो हाथ श्रद्धा से भगवान का यश लिखते हैं, वे बड़े पवित्र हैं। ऐसा पुरुष अठसठ तीर्थों के स्नान का फल पा लेता है और यह मान लिया जाता है कि उसने पुण्यकर्म कर लिए हैं। वह संसार—सागर से पार हो जाता है और माया रूपी विकारों के किले को विजय कर लेता है। हे नानक! ऐसे अनन्त परमात्मा का चिन्तन कर, जो अपने साथ लगाकर तुझे (संसार सागर से) पार कर देगा॥ १९॥

सलोक मः ५ ॥ धंधड़े कुलाह चिति न आवै हेकड़ो ॥ नानक सेई तंन फुटंनि जिना सांई विसरै ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ दुनिया के ऐसे धन्धे नुक्सानदायक हैं, जिनके कारण एक ईश्वर चित्त में नहीं आता। हे नानक! वे शरीर विकारों से नाश हो जाते हैं, जिन्हें जगत् का मालिक परमात्मा भूल जाता है॥ १॥

मः ५ ॥ परेतहु कीतोनु देवता तिनि करणैहारे ॥ सभे सिख उबारिअनु प्रभि काज सवारे ॥ निंदक पकड़ि पछाड़िअनु झूठे दरबारे ॥ नानक का प्रभु वडा है आपि साजि सवारे ॥ २ ॥

महला ५॥ उस सृष्टि के रचयिता प्रभु ने प्रेत से देवता बना दिया है। ईश्वर ने गुरु के समस्त सिक्खों का उद्धार कर दिया है और उनके कार्य संवार दिए हैं। झूठे निंदकों को पकड़कर ईश्वर ने धरती पर पटका कर मारा है और अपने दरबार में उनको झूठा घोषित कर दिया है। नानक का प्रभु महान है। वह स्वयं ही इन्सान को पैदा करता है और संवारता है॥ २॥

पउड़ी ॥ प्रभु बेअंतु किछु अंतु नाहि सभु तिसै करणा ॥ अगम अगोचरु साहिबो जीआं का परणा ॥ हसत देइ प्रतिपालदा भरण पोखणु करणा ॥ मिहरवानु बखसिंदु आपि जपि सचे तरणा ॥ जो तुधु भावै सो भला नानक दास सरणा ॥ २० ॥

पउड़ी॥ प्रभु अनन्त है, उसका कोई अन्त नहीं जाना जा सकता, सब कुछ वही करता है, उसने ही यह सृष्टि बनाई है। अगम्य एवं अगोचर प्रभु समस्त जीवों का आधार है। अपना हाथ देकर वह सबकी रक्षा करता है। वह सब जीवों का भरण—पोषण करता है। वह स्वयं मेहरबान एवं क्षमाशील है। उस सच्चे मालिक का जाप करने से प्राणी (भवसागर) से पार हो जाता है। नानक का कथन है, हे प्रभु! जो कुछ तुझे उपयुक्त लगता है, केवल वही भला है, हम प्राणी तेरी शरण में हैं॥ २०॥

सलोक मः ५ ॥ तिंना भुख न का रही जिस दा प्रभु है सोइ ॥ नानक चरणी लगिआ उधरै सभो कोइ ॥ १ ॥

श्लोक महला ५॥ जिस व्यक्ति का सहारा वह परमात्मा आप है, उसे कोई भूख नहीं रहती। हे नानक! भगवान के चरणों में लगने से प्रत्येक प्राणी का उद्धार हो जाता है॥ १॥

मः ५ ॥ जाचिकु मंगै नित नामु साहिबु करे कबूलु ॥ नानक परमेसरु जजमानु तिसहि भुख न मूलि ॥ २ ॥

महला ५॥ जो पुरुष याचक बनकर प्रभु—परमेश्वर से नाम की देन माँगता है, उसकी प्रार्थना वह स्वीकार कर लेता है। हे नानक! जिस पुरुष का यजमान (स्वयं) परमात्मा है, उसे थोड़ी—सी भी भूख नहीं रहती॥ २॥

पउड़ी ॥ मनु रता गोविंद संगि सचु भोजनु जोड़े ॥ प्रीति लगी हरि नाम सिउ ए हसती घोड़े ॥ राज मिलख खुसीआ घणी धिआइ मुखु न मोड़े ॥ ढाढी दरि प्रभ मंगणा दरु कदे न छोड़े ॥ नानक मनि तनि चाउ एहु नित प्रभ कउ लोड़े ॥ २१ ॥ १ ॥ सुधु कीचे

पउड़ी॥ जिस व्यक्ति का मन गोविन्द के साथ मग्न हो जाता है, उसके लिए उसका नाम ही उत्तम भोजन एवं पहरावा बन जाता है। हरि के नाम के साथ उसका प्रेम बन जाता है, यही उसके लिए हाथी एवं घोड़े हैं। उसके लिए तो सहर्ष भगवान के नाम का ध्यान ही राज्य, सम्पत्ति एवं अनन्त प्रसन्नता होती है। ढाढी ने ईश्वर के द्वार की ही याचना करनी है, जो उसने कभी नहीं त्यागना। हे नानक! उसके मन एवं शरीर में सदैव उमंग बनी रहती है, तथा वह हमेशा ईश्वर से मिलन की ही अभिलाषा करता है॥ २१॥ १॥

रागु गउड़ी भगतां की बाणी ੧ਓं सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

गउड़ी गुआरेरी स्री कबीर जीउ के चउपदे १४ ॥ अब मोहि जलत राम जलु पाइआ ॥ राम उदकि तनु जलत बुझाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु मारण कारणि बन जाईऐ ॥ सो जलु बिनु भगवंत न पाईऐ ॥ १ ॥ जिह पावक सुरि नर है जारे ॥ राम उदकि जन जलत उबारे ॥ २ ॥ भव सागर सुख सागर माही ॥ पीवि रहे जल निखुटत नाही ॥ ३ ॥ कहि कबीर भजु सारिंगपानी ॥ राम उदकि मेरी तिखा बुझानी ॥ ४ ॥ १ ॥

अब मुझ तृष्णा में जल रहे को राम नाम रूपी अमृत (जल) मिल गया है। राम नाम रूपी अमृत (जल) ने मेरे जलते शरीर को शीतल कर दिया है॥ १॥ रहाउ॥ कुछ लोग अपने मन को वश में करने के लिए वनों में जाते हैं परन्तु तृष्णाग्नि को बुझाने हेतु नाम रूपी अमृत (जल) भगवान के बिना नहीं मिलता॥ १॥ जिस तृष्णा की अग्नि ने देवते एवं मनुष्य जला दिए हैं, राम नाम रूपी अमृत ने भक्तों को उस तृष्णाग्नि से बचा लिया है॥ २॥ भवसागर में ही एक सुखों का सागर है। मैं नाम रूपी अमृत पान करता जाता हूँ परन्तु अमृत समाप्त नहीं होता॥ ३॥ कबीर जी कहते हैं – उस भगवान का ही भजन करो चूंकि राम नाम रूपी अमृत ने मेरी तृष्णा मिटा दी है॥ ४॥ १॥

गउड़ी कबीर जी ॥ माधउ जल की पिआस न जाइ ॥ जल महि अगनि उठी अधिकाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तूं जलनिधि हउ जल का मीनु ॥ जल महि रहउ जलहि बिनु खीनु ॥ १ ॥ तूं पिंजरु हउ

सूअटा तोर ॥ जमु मंजारु कहा करै मोर ॥ २ ॥ तूं तरवरु हउ पंखी आहि ॥ मंदभागी तेरो दरसनु नाहि ॥ ३ ॥ तूं सतिगुरु हउ नउतनु चेला ॥ कहि कबीर मिलु अंत की बेला ॥ ४ ॥ २ ॥

हे माधव ! तेरे नाम रूपी अमृत के लिए मेरी प्यास नहीं मिटती। तेरा नाम—अमृत पान करते हुए तीव्र लालसा उत्पन्न हो रही है॥ १॥ रहाउ॥ हे ईश्वर ! तू जल की निधि है और मैं उस जल की एक मछली हूँ। मैं (मछली) जल में ही रहती हूँ और जल के बिना नाश हो जाती हूँ॥ १॥ हे भगवान ! तू मेरा पिंजरा है और मैं तेरा तोता हूँ, यम—रूपी बिडाल मेरा क्या बिगाड़ सकता है ?॥ २॥ हे प्रभु ! तू सुन्दर वृक्ष है और मैं एक पक्षी हूँ। (मुझ) भाग्यहीन को अब तक तेरे दर्शन नहीं हुए॥ ३॥ हे मेरे मालिक ! तू सतिगुरु है और मैं तेरा नया चेला हूँ। कबीर जी कहते हैं — हे प्रभु ! अब तो जीवन के अन्तिम क्षण हैं, अपने दर्शन प्रदान कीजिए॥ ४॥ २॥

गउड़ी कबीर जी ॥ जब हम एको एकु करि जानिआ ॥ तब लोगह काहे दुखु मानिआ ॥ १ ॥ हम अपतह अपुनी पति खोई ॥ हमरै खोजि परहु मति कोई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हम मंदे मंदे मन माही ॥ साझ पाति काहू सिउ नाही ॥ २ ॥ पति अपति ता की नही लाज ॥ तब जानहुगे जब उघरैगो पाज ॥ ३ ॥ कहु कबीर पति हरि परवानु ॥ सरब तिआगि भजु केवल रामु ॥ ४ ॥ ३ ॥

जब मैंने यह जान लिया है कि एक ईश्वर ही सर्वव्यापक है तो लोगों को इस बात का क्यों दुख अनुभव होता है॥ १॥ मैं अपमानित हूँ और मैंने अपनी इज्जत गंवा दी है। इसलिए मेरे पीछे कोई न लगे॥ १॥ रहाउ॥ यदि मैं बुरा हूँ तो चित्त में ही बुरा हूँ। मैंने किसी के साथ भी साझ (मेल मिलाप) नहीं रखी॥ २॥ मान एवं अपमान की मुझे कोई शर्म नहीं परन्तु आपको तब पता लगेगा, जब आपका पर्दाफाश होगा॥ ३॥ कबीर जी कहते हैं — मान—प्रतिष्ठा उसी की है, जिसे ईश्वर स्वीकृत करता है। इसलिए सब कुछ त्यागकर केवल राम का भजन करो॥ ४॥ ३॥

गउड़ी कबीर जी ॥ नगन फिरत जौ पाईऐ जोगु ॥ बन का मिरगु मुकति सभु होगु ॥ १ ॥ किआ नागे किआ बाधे चाम ॥ जब नही चीनसि आतम राम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मूड मुंडाए जौ सिधि पाई ॥ मुकती भेड न गईआ काई ॥ २ ॥ बिंदु राखि जौ तरीऐ भाई ॥ खुसरै किउ न परम गति पाई ॥ ३ ॥ कहु कबीर सुनहु नर भाई ॥ राम नाम बिनु किनि गति पाई ॥ ४ ॥ ४ ॥

यदि नग्न घूमने से ईश्वर से मिलन हो सकता है तो वन के सभी मृग मुक्त हो जाने चाहिएँ॥ १॥ (हे जीव !) जब तक तुम राम को याद नहीं करते, तब तक तेरा नग्न रहने से क्या बनेगा तथा शरीर पर (मृग की) खाल लपेटने से क्या मिलना है ?॥ १॥ रहाउ॥ यदि सिर मुंडाने से सिद्धि मिल सकती है तो कोई भी भेड़ अब तक मुक्त क्यों नहीं हुई?॥ २॥ हे भाई ! यदि ब्रह्मचारी बनने से भवसागर से पार हुआ जा सकता है तो हिजड़े को क्यों परमगति नहीं मिली ?॥ ३॥ कबीर जी कहते हैं— हे मेरे मानव भाईयो ! ध्यानपूर्वक सुनो, राम नाम के बिना किसी को मुक्ति नहीं मिली है॥ ४॥ ४॥

गउड़ी कबीर जी ॥ संधिआ प्रात इस्नानु कराही ॥ जिउ भए दादुर पानी माही ॥ १ ॥ जउ पै राम राम रति नाही ॥ ते सभि धरम राइ कै जाही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काइआ रति बहु रूप रचाही ॥ तिन कउ दइआ सुपनै भी नाही ॥ २ ॥ चारि चरन कहहि बहु आगर ॥ साधू सुखु पावहि कलि सागर ॥ ३ ॥ कहु कबीर बहु काइ करीजै ॥ सरबसु छोडि महा रसु पीजै ॥ ४ ॥ ५ ॥

जो व्यक्ति प्रातः काल एवं सायंकाल के समय स्नान ही करते हैं तथा सोचते हैं कि हम पावन हो गए हैं, वे ऐसे हैं जैसे जल में मेंढक रहते हैं॥ १॥ यदि उनके मन में राम के नाम का प्रेम नहीं

है तो वह सभी अपने कर्मों का हिसाब देने हेतु धर्मराज के वश में पड़ते हैं॥ १॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति अपनी काया से प्रेम करते हैं और अनेक रूप धारण करते हैं, वे कभी स्वप्न में भी दया अनुभव नहीं करते॥ २॥ अनेकों बुद्धिमान लोग एवं चार चरण (सत्य, तप, दया एवं दान) भी यहीं कहते हैं कि संतजन ही वास्तव में संसार-सागर में सुख पाते हैं। हे कबीर! हम इतने संस्कार क्यों करें? शेष सब कुछ छोड़कर केवल नाम के महारस का पान कीजिए॥ ४॥ ५॥

कबीर जी गउड़ी ॥ किआ जपु किआ तपु किआ ब्रत पूजा ॥ जा कै रिदै भाउ है दूजा ॥ १ ॥ रे जन मनु माधउ सिउ लाईऐ ॥ चतुराई न चतुरभुजु पाईऐ ॥ रहाउ ॥ परहरु लोभु अरु लोकाचारु ॥ परहरु कामु क्रोधु अहंकारु ॥ २ ॥ करम करत बधे अहंमेव ॥ मिलि पाथर की करही सेव ॥ ३ ॥ कहु कबीर भगति करि पाइआ ॥ भोले भाइ मिले रघुराइआ ॥ ४ ॥ ६ ॥

जिस व्यक्ति के हृदय में ईश्वर के सिवाय किसी दूसरे का प्रेम है, उसके लिए जप, तपस्या, व्रत एवं पूजा करने का कोई अभिप्राय नहीं॥ १॥ हे भाई! मन को भगवान के साथ लगाना चाहिए। किसी चतुराई से चतुर्भुज प्रभु प्राप्त नहीं होता॥ रहाउ॥ (हे भाई!) लोभ एवं लोकाचार, काम, क्रोध एवं अहंकार को त्याग दो॥ २॥ कर्मकाण्ड करने से मनुष्य अहंकार में फँस जाता है। ऐसे मनुष्य मिलकर पत्थर की ही पूजा करते हैं॥ ३॥ हे कबीर! भक्ति करने से ही भगवान मिल सकता है। भोलेपन से ही रघुराम मिलता है॥ ४॥ ६॥

गउड़ी कबीर जी ॥ गरभ वास महि कुलु नही जाती ॥ ब्रहम बिंदु ते सभ उतपाती ॥ १ ॥ कहु रे पंडित बामन कब के होए ॥ बामन कहि कहि जनमु मत खोए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जौ तूं ब्राहमणु ब्रहमणी जाइआ ॥ तउ आन बाट काहे नही आइआ ॥ २ ॥ तुम कत ब्राहमण हम कत सूद ॥ हम कत लोहू तुम कत दूध ॥ ३ ॥ कहु कबीर जो ब्रहमु बीचारै ॥ सो ब्राहमणु कहीअतु है हमारै ॥ ४ ॥ ७ ॥

प्रभु के अंश से ही समस्त जीव-जन्तु उत्पन्न हुए हैं। माँ के गर्भ में प्राणी को यह पता नहीं होता कि मैं किस कुल एवं जाति का हूँ॥ १॥ हे पण्डित! कहो, तुम ब्राह्मण कब से बन चुके हो? अपने आपको ब्राह्मण कह-कहकर अपना अनमोल जीवन बर्बाद मत कर॥ १॥ रहाउ॥ यदि (हे पण्डित!) तुम सचमुच ब्राह्मण हो और तुमने ब्राह्मणी माता के गर्भ से जन्म लिया है तो किसी दूसरे मार्ग द्वारा क्यों नहीं उत्पन्न हुए?॥ २॥ (हे पण्डित!) तुम ब्राह्मण कैसे हो? और हम किस तरह शूद्र हैं? हमारे शरीर में कैसे रक्त ही है? तुम्हारे शरीर में किस प्रकार (रक्त के स्थान पर) दूध है?॥ ३॥ हे कबीर! हम केवल उसी को ब्राह्मण कहते हैं जो ब्रह्म का चिंतन करता है॥ ४॥ ७॥

गउड़ी कबीर जी ॥ अंधकार सुखि कबहि न सोई है ॥ राजा रंकु दोऊ मिलि रोई है ॥ १ ॥ जउ पै रसना रामु न कहिबो ॥ उपजत बिनसत रोवत रहिबो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जस देखीऐ तरवर की छाइआ ॥ प्रान गए कहु का की माइआ ॥ २ ॥ जस जंती महि जीउ समाना ॥ मूए मरमु को का कर जाना ॥ ३ ॥ हंसा सरवरु कालु सरीर ॥ राम रसाइन पीउ रे कबीर ॥ ४ ॥ ८ ॥

भगवान को विस्मृत करके अज्ञानता रूपी अंधेरे में कभी सुखपूर्वक नहीं सोया जा सकता। राजा हो अथवा रंक हो, दोनों ही दुखी होकर रोते हैं॥ १॥ (हे जिज्ञासु!) जब तक मनुष्य की जिह्वा राम नाम को उच्चरित नहीं करती, तब तक वे जन्मते-मरते तथा रोते रहेंगे॥ १॥ रहाउ॥ जैसे पेड़ की छाया देखी जाती है, (वैसे ही इस माया का हाल है) जब मनुष्य के प्राण निकल जाते हैं तो कहो,

यह माया किसकी होगी ?॥ २॥ जैसे राग की ध्वनि वाद्ययन्त्र के बीच में समा जाती है, वैसे ही प्राण हैं। इसलिए मृतक इन्सान का रहस्य कोई प्राणी कैसे जान सकता है ?॥ ३॥ जैसे राज हंस सरोवर के आसपास घूमता है, वैसे ही मृत्यु मनुष्य के शरीर पर मंडराती है। इसलिए हे कबीर ! समस्त रसों में उत्तम राम रसायन का पान करो॥ ४॥ ८॥

गउड़ी कबीर जी ॥ जोति की जाति जाति की जोती ॥ तितु लागे कंचूआ फल मोती ॥ १ ॥ कवनु सु घरु जो निरभउ कहीऐ ॥ भउ भजि जाइ अभै होइ रहीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तटि तीरथि नही मनु पतीआइ ॥ चार अचार रहे उरझाइ ॥ २ ॥ पाप पुंन दुइ एक समान ॥ निज घरि पारसु तजहु गुन आन ॥ ३ ॥ कबीर निरगुण नाम न रोसु ॥ इसु परचाइ परचि रहु एसु ॥ ४ ॥ ९ ॥

भगवान द्वारा रचित सारी दुनिया के लोगों की बुद्धि में कांच मोतियों के फल लगे हुए हैं॥ १॥ वह कौन–सा घर है, जिसे भय से मुक्त कहा जा सकता है। जहाँ भय दूर हो जाता है और मनुष्य निडर होकर रहता है॥ १॥ रहाउ॥ किसी पवित्र नदी के तट अथवा तीर्थ पर जाकर मन संतुष्ट नहीं होता, वहाँ भी कुछ व्यक्ति पाप–पुण्य में अग्रसर हैं॥ २॥ लेकिन पाप एवं पुण्य दोनों ही एक समान हैं। (हे मन !) तेरे हृदय घर के भीतर ही (काया–पलट देने वाला) पारस प्रभु है, इसलिए किसी दूसरे से गुण प्राप्त करने का ख्याल त्याग दे॥ ३॥ हे कबीर ! मोह–माया से सर्वोपरि प्रभु के नाम को विस्मृत मत कर एवं अपने मन को (बहलाने में मत बहला और) नाम सिमरन में लगाकर नाम में मग्न रह॥ ४॥ ९॥

गउड़ी कबीर जी ॥ जो जन परमिति परमनु जाना ॥ बातन ही बैकुंठ समाना ॥ १ ॥ ना जाना बैकुंठ कहा ही ॥ जानु जानु सभि कहहि तहा ही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहन कहावन नह पतीअई है ॥ तउ मनु मानै जा ते हउमै जई है ॥ २ ॥ जब लगु मनि बैकुंठ की आस ॥ तब लगु होइ नही चरन निवासु ॥ ३ ॥ कहु कबीर इह कहीऐ काहि ॥ साधसंगति बैकुंठै आहि ॥ ४ ॥ १० ॥

जो मनुष्य बेअंदाज एवं अगम्य प्रभु को नहीं जानता, वह कोरी (व्यर्थ) बातों से ही स्वर्ग में प्रवेश करना चाहता है॥ १॥ मैं नहीं जानता कि स्वर्ग कहाँ है। हरेक मनुष्य कहता है कि वह वहाँ जाना एवं पहुँचना चाहता है॥ १॥ रहाउ॥ व्यर्थ बातचीत से मनुष्य के मन की संतुष्टि नहीं होती। मन को संतुष्टि तभी होती है, जब अहंकार नष्ट हो जाता है॥ २॥ जब तक मनुष्य के हृदय में स्वर्ग की लालसा है, तब तक उसका प्रभु के चरणों में निवास नहीं होता॥ ३॥ हे कबीर ! यह बात मैं किस तरह बताऊँ कि साधु–संतों की संगति ही स्वर्ग है॥ ४॥ १०॥

गउड़ी कबीर जी ॥ उपजै निपजै निपजि समाई ॥ नैनह देखत इहु जगु जाई ॥ १ ॥ लाज न मरहु कहहु घरु मेरा ॥ अंत की बार नही कछु तेरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनिक जतन करि काइआ पाली ॥ मरती बार अगनि संगि जाली ॥ २ ॥ चोआ चंदनु मरदन अंगा ॥ सो तनु जलै काठ कै संगा ॥ ३ ॥ कहु कबीर सुनहु रे गुनीआ ॥ बिनसैगो रूपु देखै सभ दुनीआ ॥ ४ ॥ ११ ॥

(सर्वप्रथम जीव का आरम्भ पिता के वीर्य की बूँद से होता है, फिर माँ के गर्भ में आता है और) जीव जन्म लेता है, वह बड़ा होता है और बड़ा होने के पश्चात् प्राण त्याग कर मर जाता है। हमारे नेत्रों के समक्ष ही यह जगत् आता–जाता (जन्मता–मरता) दिखता है॥ १॥ (हे जीव !) तू घर को अपना कहता हुआ लज्जा से नहीं मरता। अंतिम समय तेरा कुछ भी नहीं (अर्थात् जिस समय मृत्यु आएगी तब कोई भी वस्तु तेरी नहीं रहेगी)॥ १॥ रहाउ॥ अनेक प्रयासों द्वारा इस शरीर का पालन पोषण किया जाता है लेकिन जब मृत्यु आती है, इसे अग्नि से जला दिया जाता है॥ २॥ वह शरीर

जिसके अंगों को इत्र एवं चन्दन लगाया जाता था। वह शरीर आखिरकार लकड़ियों से जला दिया जाता है॥ ३॥ कबीर का कथन है कि हे गुणवान पुरुष! मेरी बात ध्यानपूर्वक सुन, तेरी यह सुन्दरता नाश हो जाएगी, यह सारी दुनिया देखेगी॥ ४॥ ११॥

गउड़ी कबीर जी ॥ अवर मूए किआ सोगु करीजै ॥ तउ कीजै जउ आपन जीजै ॥ १ ॥ मै न मरउ मरिबो संसारा ॥ अब मोहि मिलिओ है जीआवनहारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इआ देही परमल महकंदा ॥ ता सुख बिसरे परमानंदा ॥ २ ॥ कूअटा एकु पंच पनिहारी ॥ टूटी लाजु भरै मति हारी ॥ ३ ॥ कहु कबीर इक बुधि बीचारी ॥ ना ओहु कूअटा ना पनिहारी ॥ ४ ॥ १२ ॥

जब कोई व्यक्ति मरता है तो उसकी मृत्यु पर शोक करने का क्या अभिप्राय? वियोग तब करना चाहिए, यदि आप सदैव जीवित रहना हो॥ १॥ मैं वैसे नहीं मरूँगा, जैसे जगत् मरता है, क्योंकि अब मुझे जीवन देने वाला प्रभु मिल गया है॥ १॥ रहाउ॥ प्राणी इस शरीर को कई सुगन्धियाँ लगाकर महकाता है और इन सुखों में इसे परमानन्द प्रभु ही भूल जाता है॥ २॥ (यह शरीर, मानो) एक छोटा—सा कुआँ है (पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, मानो) पाँच चर्खियाँ हैं। मृत बुद्धि रस्सी के बिना जल भर रही है॥ ३॥ हे कबीर! जब विचारों वाली बुद्धि भीतर जाग पड़ी तो यह शारीरिक मोह नहीं रहा और न ही विकारों की ओर मुग्ध करने वाली इन्द्रियाँ रहीं॥ ४॥ १२॥

गउड़ी कबीर जी ॥ असथावर जंगम कीट पतंगा ॥ अनिक जनम कीए बहु रंगा ॥ १ ॥ ऐसे घर हम बहुतु बसाए ॥ जब हम राम गरभ होइ आए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जोगी जती तपी ब्रहमचारी ॥ कबहू राजा छत्रपति कबहू भेखारी ॥ २ ॥ साकत मरहि संत सभि जीवहि ॥ राम रसाइनु रसना पीवहि ॥ ३ ॥ कहु कबीर प्रभ किरपा कीजै ॥ हारि परे अब पूरा दीजै ॥ ४ ॥ १३ ॥

हमने स्थावर, जंगम, कीट—पतंगे यूं कई प्रकार के जन्म धारण किए हैं॥ १॥ हे राम! जब मैं अपनी माता के गर्भ में डाला गया था तो उससे पहले मैंने ऐसे बहुत से शरीरों में निवास किया था॥ १॥ रहाउ॥ मैं कभी योगी, कभी यती, कभी तपस्वी एवं कभी ब्रह्मचारी बना और कभी मैं छत्रपति राजा बना और कभी भिखारी बना॥ २॥ शाक्त इन्सान मर जाएँगे परन्तु साधु सभी जीवित रहेंगे और अपनी जिह्वा से राम—अमृत का पान करेंगे॥ ३॥ कबीर का कथन है कि हे मेरे प्रभु! मुझ पर कृपा करो, अब मैं थक—टूट गया हूँ, अब मुझे पूर्ण ज्ञान दीजिए॥ ४॥ १३॥

गउड़ी कबीर जी की नालि रलाइ लिखिआ महला ५ ॥ ऐसो अचरजु देखिओ कबीर ॥ दधि कै भोलै बिरोलै नीरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरी अंगूरी गदहा चरै ॥ नित उठि हासै हीगै मरै ॥ १ ॥ माता भैसा अंमुहा जाइ ॥ कुदि कुदि चरै रसातलि पाइ ॥ २ ॥ कहु कबीर परगटु भई खेड ॥ लेले कउ चूघै नित भेड ॥ ३ ॥ राम रमत मति परगटी आई ॥ कहु कबीर गुरि सोझी पाई ॥ ४ ॥ १ ॥ १४ ॥

हे कबीर! मैंने यह अद्भुत कौतुक देखा है कि मनुष्य दहीं के भ्रम में जल का मन्थन कर रहा है॥ १॥ रहाउ॥ गधा हरी अंगूरी चरता है और प्रतिदिन उठकर वह हँसता, हींगता रहता है आखिरकार मर जाता है (अर्थात् मूर्ख जीव मनभावन विकार भोगता है, इस प्रकार हँसता तथा ही—ही करता रहता है अंतः जन्म—मरण के चक्र में पड़ जाता है)॥ १॥ मतवाला भैंसा अनियंत्रित होकर भागता फिरता है। वह नाचता, कूदता, खाता और आखिरकार नरक में पड़ जाता है॥ २॥ हे कबीर! यह अद्भुत खेल प्रकट हो गई है। भेड़ हमेशा अपने लेले को चूंघती है। राम का नाम उच्चरित करने से मेरी बुद्धि उज्ज्वल हो गई है। हे कबीर! गुरु ने मुझे यह ज्ञान प्रदान किया है॥ ४॥ १॥ १४॥

गउड़ी कबीर जी पंचपदे॥ जिउ जल छोडि बाहरि भइओ मीना ॥ पूरब जनम हउ तप का हीना ॥ १ ॥ अब कहु राम कवन गति मोरी ॥ तजी ले बनारस मति भई थोरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सगल जनमु सिव पुरी गवाइआ ॥ मरती बार मगहरि उठि आइआ ॥ २ ॥ बहुतु बरस तपु कीआ कासी ॥ मरनु भइआ मगहर की बासी ॥ ३ ॥ कासी मगहर सम बीचारी ॥ ओछी भगति कैसे उतरसि पारी ॥ ४ ॥ कहु गुर गज सिव सभु को जानै ॥ मुआ कबीरु रमत स्री रामै ॥ ५ ॥ १५ ॥

जैसे मछली जल को त्यागकर बाहर निकल आती है (तो पीड़ित होकर प्राण त्याग देती है, वैसे ही) मैंने भी पूर्व जन्मों में तपस्या नहीं की थी॥ १॥ हे मेरे राम! अब बताओ, मेरी क्या गति होगी? लोग मुझे कहते हैं कि जब मैं बनारस छोड़ गया तो मेरी बुद्धि भ्रष्ट हो गई?॥ १॥ रहाउ॥ मैंने अपनी समस्त आयु शिवपुरी (काशी) में गंवा दी है। मृत्यु के समय (काशी) छोड़कर मगहर चला आया हूँ॥ २॥ मैंने कई वर्ष काशी में रहकर तप किया। अब जब मृत्यु का समय आया तो मगहर आकर निवास कर लिया है॥ ३॥ मैंने काशी और मगहर को एक समान समझ लिया है, इस ओच्छी भक्ति से किस प्रकार भवसागर से पार हो सकता हूँ॥ ४॥ हे कबीर! मेरा गुरु (रामानंद), गणेश एवं भगवान शिव सभी जानते हैं कि कबीर श्री राम के नाम का जाप करता हुआ मर गया॥ ५॥ १५॥

गउड़ी कबीर जी ॥ चोआ चंदन मरदन अंगा ॥ सो तनु जलै काठ कै संगा ॥ १ ॥ इसु तन धन की कवन बडाई ॥ धरनि परै उरवारि न जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राति जि सोवहि दिन करहि काम ॥ इकु खिनु लेहि न हरि को नाम ॥ २ ॥ हाथि त डोर मुखि खाइओ तंबोर ॥ मरती बार कसि बाधिओ चोर ॥ ३ ॥ गुरमति रसि रसि हरि गुन गावै ॥ रामै राम रमत सुखु पावै ॥ ४ ॥ किरपा करि कै नामु द्रिड़ाई ॥ हरि हरि बासु सुगंध बसाई ॥ ५ ॥ कहत कबीर चेति रे अंधा ॥ सति रामु झूठा सभु धंधा ॥ ६ ॥ १६ ॥

जिस सुन्दर शरीर के अंगों पर इत्र एवं चन्दन मला जाता है, वह आखिरकार लकड़ियों से जला दिया जाता है॥ १॥ इस शरीर एवं धन पर क्या अभिमान करना हुआ? ये यहीं पृथ्वी पर पड़े रह जाते हैं और प्राणी के साथ परलोक को नहीं जाते॥ १॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति रात सोने में बिता देते हैं और दिन में काम करते हैं और एक क्षणमात्र भी भगवान का नाम याद नहीं करते॥ २॥ जिनके हाथ में डोर है और मुख में पान चबा रहे हैं, ऐसे व्यक्ति मृत्यु के समय चोरों की भाँति कसकर बाँधे जाते हैं॥ ३॥ जो इन्सान गुरु की मति लेकर प्रेमपूर्वक भगवान के गुण गाता है, वह केवल प्रभु–परमेश्वर को ही याद करके सुख हासिल करता है॥ ४॥ जिस व्यक्ति के भीतर कृपा धारण करके प्रभु अपना नाम बसा देता है, वह हरि–परमेश्वर की महक एवं सुगन्ध को अपने हृदय में बसा लेता है॥ ५॥ कबीर जी कहते हैं कि हे मूर्ख जीव! (अपने परमेश्वर को) याद कर, चूंकि राम ही सत्य है और दुनिया के शेष धन्धे क्षणभंगुर हैं॥ ६॥ १६॥

गउड़ी कबीर जी तिपदे चारतुके॥ जम ते उलटि भए है राम ॥ दुख बिनसे सुख कीओ बिसराम ॥ बैरी उलटि भए है मीता ॥ साकत उलटि सुजन भए चीता ॥ १ ॥ अब मोहि सरब कुसल करि मानिआ ॥ सांति भई जब गोबिदु जानिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तन महि होती कोटि उपाधि ॥ उलटि भई सुख सहजि समाधि ॥ आपु पछानै आपै आप ॥ रोगु न बिआपै तीनौ ताप ॥ २ ॥ अब मनु उलटि सनातनु हूआ ॥ तब जानिआ जब जीवत मूआ ॥ कहु कबीर सुखि सहजि समावउ ॥ आपि न डरउ न अवर डरावउ ॥ ३ ॥ १७ ॥

यम (मृत्यु) की तरफ जाने की बजाय अब मैंने राम का पक्ष ले लिया है। जिससे मेरे दुःख मिट गए हैं और मैं सुखपूर्वक विश्राम करता हूँ। मेरे शत्रु भी बदलकर मेरे मित्र बन गए हैं। भगवान से टूटे हुए शाक्त पुरुष बदलकर भद्रपुरुष बन गए हैं॥ १॥ अब मुझे समस्त सुख एवं मंगल प्रतीत हो रहे हैं, जब से मैंने गोबिन्द को अनुभव किया है, मेरे भीतर सुख–शांति हो गई है॥ १॥ रहाउ॥ इस शरीर में करोड़ों ही रोग थे। ईश्वर का नाम–सिमरन करने से अब वे भी सहज सुख एवं समाधि में बदल गए हैं। मेरे मन ने अपने यथार्थ स्वरूप को पहचान लिया है, अब इसे ईश्वर ही ईश्वर दृष्टिमान हो रहा है, रोग एवं तीनों ताप प्रभावित नहीं कर सकते॥ २॥ अब मेरा मन हटकर सनातन (ईश्वर का रूप) हो गया है, इस बात का तब ज्ञान होता है, जब यह मन माया में विचरण करता हुआ भी माया के मोह से सर्वोच्च हो गया। हे कबीर! अब मैं सहज सुख में समा गया हूँ। इसलिए अब न मैं स्वयं किसी दूसरे से भयभीत होता हूँ और न ही किसी दूसरे को भयभीत करता हूँ॥ ३॥ १७॥

गउड़ी कबीर जी ॥ पिंडि मूऐ जीउ किह घरि जाता ॥ सबदि अतीति अनाहदि राता ॥ जिनि रामु जानिआ तिनहि पछानिआ ॥ जिउ गूंगे साकर मनु मानिआ ॥ १ ॥ ऐसा गिआनु कथै बनवारी ॥ मन रे पवन द्रिड़ सुखमन नारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सो गुरु करहु जि बहुरि न करना ॥ सो पदु रवहु जि बहुरि न रवना ॥ सो धिआनु धरहु जि बहुरि न धरना ॥ ऐसे मरहु जि बहुरि न मरना ॥ २ ॥ उलटी गंगा जमुन मिलावउ ॥ बिनु जल संगम मन महि न्हावउ ॥ लोचा समसरि इहु बिउहारा ॥ ततु बीचारि किआ अवरि बीचारा ॥ ३ ॥ अपु तेजु बाइ प्रिथमी आकासा ॥ ऐसी रहत रहउ हरि पासा ॥ कहै कबीर निरंजन धिआवउ ॥ तितु घरि जाउ जि बहुरि न आवउ ॥ ४ ॥ १८ ॥

(प्रश्न) जब किसी महापुरुष का शरीर प्राण त्याग देता है तो आत्मा कहाँ चली जाती है? (उत्तर–) यह पवित्रात्मा शब्द के प्रभाव से अमर प्रभु में लीन हो जाती है। जो राम को समझता है, वही उसके स्वाद को अनुभव करता है, जैसे गूंगे मनुष्य का मन शक्कर खाने से संतुष्ट हो जाता है॥ १॥ ऐसा ज्ञान ईश्वर ही प्रकट करता है। हे मन! प्रत्येक श्वास से नाम–स्मरण कर, यही सुषुम्ना नाड़ी का अभ्यास है॥ १॥ रहाउ॥ ऐसा गुरु धारण कर जो तुझे पुनः गुरु धारण करने की आवश्यकता न पड़े; ऐसा शब्द उच्चारण कर चूंकि जो तुझे और उच्चारण न करना पड़े। ऐसा ध्यान लगाओ कि फिर ध्यान लगाने की आवश्यकता ही न रहे। इस विधि से मरो कि तुझे जन्म–मरण के चक्र में न पड़ना पड़े॥ २॥ मैंने अपने मन का ध्यान बदल दिया है इस प्रकार मैं गंगा और यमुना को मिला रहा हूँ। इस प्रकार (मैं उस मन–रूपी त्रिवेणी) संगम में स्नान कर रहा हूँ, जहाँ (गंगा, जमुना, सरस्वती वाला) जल नहीं है, अब मैं इन नेत्रों से सबको एक समान देख रहा हूँ। यही मेरा जीवन–व्यवहार है। एक ईश्वर का चिन्तन कर, और चिन्तन की आवश्यकता नहीं॥ ३॥ ईश्वर के चरणों में लगकर मैं इस प्रकार का जीवन–आचरण कर रहा हूँ, जैसे जल, अग्नि, पवन, धरती एवं आकाश। कबीर जी कहते हैं कि तू निरंजन प्रभु का ध्यान कर, जिससे उस घर में पहुँच जहाँ से लौटकर न आना पड़े॥ ४॥ १८॥

गउड़ी कबीर जी तिपदे ॥ कंचन सिउ पाईऐ नही तोलि ॥ मनु दे रामु लीआ है मोलि ॥ १ ॥ अब मोहि रामु अपुना करि जानिआ ॥ सहज सुभाइ मेरा मनु मानिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ब्रहमै कथि कथि अंतु न पाइआ ॥ राम भगति बैठे घरि आइआ ॥ २ ॥ कहु कबीर चंचल मति तिआगी ॥ केवल राम भगति निज भागी ॥ ३ ॥ १ ॥ १९ ॥

अपने वजन जितना सोना दान देने से भगवान प्राप्त नहीं होता। मैंने तो अपना मन मूल्य के रूप में देकर राम को प्राप्त किया है॥ १॥ अब मुझे आस्था हो गई कि राम मेरा अपना ही है, मेरा मन

सहज स्वभाव उससे प्रसन्न है॥ १॥ रहाउ॥ जिस ईश्वर के गुण बतला–बतलाकर ब्रह्मा ने भी अन्त नहीं पाया, वह ईश्वर मेरी राम–भक्ति से मेरे हृदय (घर) में बैठ गया है॥ २॥ हे कबीर! मैंने अपनी चंचल मति त्याग दी है, केवल राम की भक्ति ही मेरे अपने भाग्यों में आई है॥ ३॥ १॥ १६॥

गउड़ी कबीर जी ॥ जिह मरनै सभु जगतु तरासिआ ॥ सो मरना गुर सबदि प्रगासिआ ॥ १ ॥ अब कैसे मरउ मरनि मनु मानिआ ॥ मरि मरि जाते जिन रामु न जानिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मरनो मरनु कहै सभु कोई ॥ सहजे मरै अमरु होइ सोई ॥ २ ॥ कहु कबीर मनि भइआ अनंदा ॥ गइआ भरमु रहिआ परमानंदा ॥ ३ ॥ २० ॥

जिस मृत्यु से सारी दुनिया भयभीत हुई रहती है, उस मृत्यु का यथार्थ गुरु के शब्द द्वारा प्रकट हो गया है (कि मृत्यु वास्तव में क्या है)॥ १॥ अब मैं कैसे जन्म–मरण (के चक्र) में पड़ूँगा? मेरे मन ने मृत्यु को वश में कर लिया है। जो लोग राम को नहीं जानते, वे बार–बार जन्मते–मरते रहते हैं॥ १॥ रहाउ॥ दुनिया में प्रत्येक प्राणी 'मृत्यु' 'मृत्यु' कह रहा है, केवल वही (मनुष्य) अमर होता है, जो ज्ञान द्वारा मरता है॥ २॥ हे कबीर! मेरे मन में आनंद उत्पन्न हो गया है। मेरी दुविधा का नाश हो गया है और परमानंद हृदय में स्थित है॥ ३॥ २०॥

गउड़ी कबीर जी ॥ कत नही ठउर मूलु कत लावउ ॥ खोजत तन महि ठउर न पावउ ॥ १ ॥ लागी होइ सु जानै पीर ॥ राम भगति अनीआले तीर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एक भाइ देखउ सभ नारी ॥ किआ जानउ सह कउन पिआरी ॥ २ ॥ कहु कबीर जा कै मसतकि भागु ॥ सभ परहरि ता कउ मिलै सुहागु ॥ ३ ॥ २१ ॥

इस शरीर में कोई (विशेष) स्थान नहीं मिला जहाँ आत्मा को पीड़ा होती है तो फिर मैं औषधि कहाँ इस्तेमाल करूँ? मैंने अपने शरीर की खोज कर ली है, परन्तु मुझे कोई ऐसा स्थान नहीं मिला॥ १॥ जिसे पीड़ा अनुभव हुई है, वही इसे जानता है। राम की भक्ति के बाण बड़े तीक्ष्ण हैं॥ १॥ रहाउ॥ मैं समस्त नारियों (जीव–स्त्रियों) को एक दृष्टि से देखता हूँ परन्तु मैं क्या जानूँ कि कौन–सी नारी (जीव–स्त्री) पति–प्रभु की प्रिया है॥ २॥ हे कबीर! जिस जीव–स्त्री के माथे पर शुभ भाग्य हैं, पति–प्रभु सबको छोड़कर उसे आ मिलता है॥ ३॥ २१॥

गउड़ी कबीर जी ॥ जा कै हरि सा ठाकुरु भाई ॥ मुकति अनंत पुकारणि जाई ॥ १ ॥ अब कहु राम भरोसा तोरा ॥ तब काहू का कवनु निहोरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तीनि लोक जा कै हहि भार ॥ सो काहे न करै प्रतिपार ॥ २ ॥ कहु कबीर इक बुधि बीचारी ॥ किआ बसु जउ बिखु दे महतारी ॥ ३ ॥ २२ ॥

हे भाई! जिसका भगवान जैसा ठाकुर मौजूद है, अनन्त मुक्तियाँ उसके समक्ष अपने आप न्यौछावर होती हैं॥ १॥ हे राम! बताओ! अब जब मुझे तेरा ही भरोसा है तो अब मुझे किसी दूसरे की खुशामद करने की आवश्यकता नहीं॥ १॥ रहाउ॥ प्रभु जो तीनों लोकों स्वर्ग लोक, पाताल लोक एवं मृत्युलोक का भार सहन कर रहा है, वह क्यों देखभाल नहीं करेगा?॥ २॥ हे कबीर! मैंने अपनी बुद्धि में इस बात पर ही विचार किया है कि यदि माता ही अपनी संतान को विष देने लगे तो हम क्या कर सकते हैं?॥ ३॥ २२॥

गउड़ी कबीर जी ॥ बिनु सत सती होइ कैसे नारि ॥ पंडित देखहु रिदै बीचारि ॥ १ ॥ प्रीति बिना कैसे बधै सनेहु ॥ जब लगु रसु तब लगु नही नेहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साहनि सतु करै जीअ अपनै ॥ सो रमये कउ मिलै न सुपनै ॥ २ ॥ तनु मनु धनु ग्रिहु सउपि सरीरु ॥ सोई सुहागनि कहै कबीरु ॥ ३ ॥ २३ ॥

हे पण्डित! हृदय में सोच–विचार कर देख, भला पतिव्रता एवं सदाचारण के सिवाय कोई नारी कैसे सती बन सकती है?॥ १॥ यदि पत्नी का प्रभु–पति से प्रेम नहीं तो प्रभु–पति का उससे प्रेम कैसे बढ़ सकता है? जब तक सांसारिक मोह है, तब तक ईश्वरीय प्रीति नहीं हो सकती॥ १॥ रहाउ॥ जो व्यक्ति अपने हृदय में माया को सत्य समझता है, वह राम को अपने स्वप्न में भी नहीं मिलता॥ २॥ कबीर जी कहते हैं कि वही नारी सुहागिन व भाग्यवान है, जो अपना तन, मन, धन, घर और शरीर अपने स्वामी को अर्पण कर देती है॥ ३॥ २३॥

गउड़ी कबीर जी ॥ बिखिआ बिआपिआ सगल संसारु ॥ बिखिआ लै डूबी परवारु ॥ १ ॥ रे नर नाव चउड़ि कत बोड़ी ॥ हरि सिउ तोड़ि बिखिआ संगि जोड़ी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुरि नर दाधे लागी आगि ॥ निकटि नीरु पसु पीवसि न झागि ॥ २ ॥ चेतत चेतत निकसिओ नीरु ॥ सो जलु निरमलु कथत कबीरु ॥ ३ ॥ २४ ॥

सारी दुनिया ही माया के विकारों में फँसी हुई है। माया के विकारों ने परिवारों को (जीवों को) ही डुबो दिया है॥ १॥ हे नश्वर मनुष्य! तूने (अपने जीवन की) नाव कहाँ नष्ट कर छोड़ी है। तूने ईश्वर से प्रीति तोड़कर माया से सम्बन्ध कायम कर लिया है॥ १॥ रहाउ॥ सारी दुनिया में माया की तृष्णा की अग्नि लगी हुई है, देवता एवं मनुष्य (अग्नि में) जल रहे हैं। प्रभु का नाम–रूपी जल निकट ही है। बुरे–विकारों की झाग को दूर हटाकर पशु (जीव) इसका पान नहीं करता॥ २॥ हे कबीर! वह नाम रूपी जल निरन्तर स्मरण करते हुए ही प्रकट होता है, वह जल बड़ा निर्मल होता है॥ ३॥ २४॥

गउड़ी कबीर जी ॥ जिह कुलि पूतु न गिआन बीचारी ॥ बिधवा कस न भई महतारी ॥ १ ॥ जिह नर राम भगति नहि साधी ॥ जनमत कस न मुओ अपराधी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मुचु मुचु गरभ गए कीन बचिआ ॥ बुडभुज रूप जीवे जग मझिआ ॥ २ ॥ कहु कबीर जैसे सुंदर सरूप ॥ नाम बिना जैसे कुबज कुरूप ॥ ३ ॥ २५ ॥

उस कुल की माता विधवा क्यों न हो गई, जिसके पुत्र को ज्ञान नहीं और जो प्रभु के नाम का चिन्तन नहीं करता॥ १॥ जिस मनुष्य ने राम–भक्ति हेतु साधना नहीं की, वह अपराधी जन्म लेते ही क्यों न मर गया?॥ १॥ रहाउ॥ (सृष्टि में) कई गर्भ गिर जाते हैं, वह क्यों बच गया है। भयानक आकृति वाला पुरुष जगत् में नीच जीवन व्यतीत कर रहा है॥ २॥ हे कबीर! जो पुरुष ईश्वर के नाम से विहीन हैं, वे चाहे देखने में सुन्दर रूप वाले हैं लेकिन वास्तव में कुबड़े तथा कुरूप हैं॥ ३॥ २५॥

गउड़ी कबीर जी ॥ जो जन लेहि खसम का नाउ ॥ तिन कै सद बलिहारै जाउ ॥ १ ॥ सो निरमलु निरमल हरि गुन गावै ॥ सो भाई मेरै मनि भावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिह घट रामु रहिआ भरपूरि ॥ तिन की पग पंकज हम धूरि ॥ २ ॥ जाति जुलाहा मति का धीरु ॥ सहजि सहजि गुण रमै कबीरु ॥ ३ ॥ २६ ॥

मैं हमेशा उन पर बलिहारी जाता हूँ, जो व्यक्ति जगत् के मालिक प्रभु का नाम लेते हैं ॥ १॥ जो व्यक्ति पवित्र पावन है, वे भगवान के निर्मल गुण ही गाते रहते हैं, वो भाई मेरे मन को बहुत प्रिय लगते हैं॥ १॥ रहाउ॥ जिनके हृदय में राम मौजूद हो गया है, मैं उनके कमल–पुष्प जैसे सुन्दर चरणों की धूलि हूँ॥ २॥ मैं जाति से जुलाहा हूँ और स्वभाव से धैर्यवान हूँ। कबीर धीरे–धीरे (सहज ही) राम की गुणस्तुति करता है॥ ३॥ २६॥

गउड़ी कबीर जी ॥ गगनि रसाल चुऐ मेरी भाठी ॥ संचि महा रसु तनु भइआ काठी ॥ १ ॥ उआ कउ कहीऐ सहज मतवारा ॥ पीवत राम रसु गिआन बीचारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहज कलालनि जउ मिलि आई ॥ आनंदि माते अनदिनु जाई ॥ २ ॥ चीनत चीतु निरंजन लाइआ ॥ कहु कबीर तौ अनभउ पाइआ ॥ ३ ॥ २७ ॥

मेरी गगन—रूपी भट्ठी में से स्वादिष्ट अमृत टपक रहा है। अपने शरीर को लकड़ियाँ बनाकर मैंने प्रभु नाम के महारस को एकत्रित किया है॥ १॥ केवल वही सहज तौर पर मतवाला कहा जाता है। जिसने ज्ञान के विचार द्वारा राम रस का पान किया है॥ १॥ रहाउ॥ जब सहज अवस्था रूपी मदिरा पिलाने वाली आ मिलती है, तब दिन और रात आनंद में मस्त होकर बीतते हैं॥ २॥ हे कबीर! जब स्मरण द्वारा मैंने अपना मन निरंजन से जोड़ लिया तो मुझे निर्भय प्रभु प्राप्त हो गया॥ ३॥ २७॥

गउड़ी कबीर जी ॥ मन का सुभाउ मनहि बिआपी ॥ मनहि मारि कवन सिधि थापी ॥ १ ॥ कवनु सु मुनि जो मनु मारै ॥ मन कउ मारि कहहु किसु तारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन अंतरि बोलै सभु कोई ॥ मन मारे बिनु भगति न होई ॥ २ ॥ कहु कबीर जो जानै भेउ ॥ मनु मधुसूदनु त्रिभवण देउ ॥ ३ ॥ २८ ॥

मन का स्वभाव है, मन के पीछे पड़ना और इसका सुधार करना। अपने मन को मार कर कौन सिद्ध बना है?॥ १॥ वह कौन—सा मुनि है, जिसने अपने मन को मार दिया है? कहो, मन को नष्ट करके वह किसका कल्याण करता है?॥ १॥ रहाउ॥ मन के द्वारा ही हरेक मनुष्य बोलता है। मन को मारे बिना प्रभु की भक्ति नहीं होती॥ २॥ हे कबीर! जो पुरुष इस भेद को समझता है, वह अपने मन में ही तीन लोकों के स्वामी मधुसूदन के दर्शन कर लेता है॥ ३॥ २८॥

गउड़ी कबीर जी ॥ ओइ जु दीसहि अंबरि तारे ॥ किनि ओइ चीते चीतनहारे ॥ १ ॥ कहु रे पंडित अंबरु का सिउ लागा ॥ बूझै बूझनहारु सभागा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सूरज चंदु करहि उजीआरा ॥ सभ महि पसरिआ ब्रहम पसारा ॥ २ ॥ कहु कबीर जानैगा सोइ ॥ हिरदै रामु मुखि रामै होइ ॥ ३ ॥ २६ ॥

वे झिलमिलाते तारे जो अन्तरिक्ष में नजर आ रहे हैं, किस चित्रकार ने चित्रित किए हैं?॥ १॥ हे पण्डित! बताओ, अन्तरिक्ष किसके सहारे कायम है। इस बात को जानने वाला कोई भाग्यवान ही है॥ १॥ रहाउ॥ सूर्य एवं चन्द्रमा (दुनिया में) उजाला करते हैं। इस सृष्टि में ईश्वर की ज्योति का ही प्रकाश फैला हुआ है॥ २॥ हे कबीर! (इस रहस्य को) केवल वही मनुष्य समझेगा, जिसके हृदय में राम है और मुँह में भी केवल राम ही है॥ ३॥ २६॥

गउड़ी कबीर जी ॥ बेद की पुत्री सिंम्रिति भाई ॥ सांकल जेवरी लै है आई ॥ १ ॥ आपन नगरु आप ते बाधिआ ॥ मोह कै फाधि काल सरु सांधिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कटी न कटै तूटि नह जाई ॥ सा सापनि होइ जग कउ खाई ॥ २ ॥ हम देखत जिनि सभु जगु लूटिआ ॥ कहु कबीर मै राम कहि छूटिआ ॥ ३ ॥ ३० ॥

हे भाई! यह स्मृति वेदों की पुत्री है। वह मनुष्यों हेतु (मानों कर्मकाण्ड की) जंजीरें एवं रस्सियाँ लेकर आई है॥ १॥ इसने स्वयं ही अपने नगर में श्रद्धालु कैद कर लिए हैं। इसने मोह की फाँसी में फँसाकर मृत्यु का तीर खिंचा हुआ है॥ १॥ रहाउ॥ यह स्मृति—रूपी रस्सी श्रद्धालुओं से काटने पर भी नहीं काटी जा सकती और न ही यह टूटती है। यह नागिन बनकर दुनिया को निगल रही है॥ २॥ हे कबीर! हमारी आँखों के समक्ष देखते ही देखते इस स्मृति ने सारी दुनिया को लूट लिया है, लेकिन मैं राम का सिमरन करके इससे छूट गया हूँ॥ ३॥ ३०॥

गउड़ी कबीर जी ॥ देइ मुहार लगामु पहिरावउ ॥ सगल त जीनु गगन दउरावउ ॥ १ ॥ अपनै बीचारि असवारी कीजै ॥ सहज कै पावड़ै पगु धरि लीजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चलु रे बैकुंठ तुझहि ले तारउ ॥ हिचहि त प्रेम कै चाबुक मारउ ॥ २ ॥ कहत कबीर भले असवारा ॥ बेद कतेब ते रहहि निरारा ॥ ३ ॥ ३१ ॥

मैं अपने मन रूपी घोड़े को प्रशंसा–निंदा से वर्जित करने की पूँजी देकर प्यार की लगन की लगाम डालता हूँ और ईश्वर को हर जगह समझना –यह काठी डालकर मन को भगवान के देश की उड़ान भरता हूँ॥ १॥ अपने स्वरूप के ज्ञान–रूपी घोड़े पर सवार हो जाओ तथा बुद्धि–रूपी चरण को सहज के रकाब में रखो॥ १॥ रहाउ॥ हे मन रूपी घोड़े! चल, तुझे स्वर्ग की सैर कराऊँ, यदि जिद्द करोगे तो मैं तुझे प्रेम की चाबुक मारूँगा॥ २॥ हे कबीर! ऐसे चतुर सवार, वेदों एवं कतेब से तटस्थ रहते हैं॥ ३॥ ३१॥

गउड़ी कबीर जी ॥ जिह मुखि पांचउ अंम्रित खाए ॥ तिह मुख देखत लूकट लाए ॥ १ ॥ इकु दुखु राम राइ काटहु मेरा ॥ अगनि दहै अरु गरभ बसेरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काइआ बिगूती बहु बिधि भाती ॥ को जारे को गडि ले माटी ॥ २ ॥ कहु कबीर हरि चरण दिखावहु ॥ पाछै ते जमु किउ न पठावहु ॥ ३ ॥ ३२ ॥

जिस मुख से पाँचों ही अमृत पदार्थ खाए जाते थे, (मरणोपरांत) उस मुख को अपने सामने ही लकड़ी जलाकर लगा दी जाती है॥ १॥ हे मेरे राम! यह जो तृष्णाग्नि जलाती है तथा बार–बार गर्भ का वास है, मेरा यह दुःख दूर कर दो॥ १॥ रहाउ॥ (मरणोपरांत) यह सुन्दर शरीर अनेकों ढंग एवं विधियों से खत्म किया जाता है। कोई मनुष्य इसे अग्नि में जला देता है और कोई इसे मिट्टी में दफन कर देता है॥ २॥ कबीर जी कहते हैं कि हे भगवान! मुझे अपने चरणों के दर्शन करवा दीजिए, तदुपरांत चाहे यमराज को ही भेज देना॥ ३॥ ३२॥

गउड़ी कबीर जी ॥ आपे पावकु आपे पवना ॥ जारै खसमु त राखै कवना ॥ १ ॥ राम जपत तनु जरि की न जाइ ॥ राम नाम चितु रहिआ समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ का को जरै काहि होइ हानि ॥ नट वट खेलै सारिगपानि ॥ २ ॥ कहु कबीर अखर दुइ भाखि ॥ होइगा खसमु त लेइगा राखि ॥ ३ ॥ ३३ ॥

भगवान स्वयं ही अग्नि है और स्वयं ही वायु है। यदि मालिक स्वयं ही (प्राणी को) जलाने लगे तो कौन रक्षा कर सकता है॥ १॥ राम के नाम का जाप करते हुए चाहे निःसंदेह मेरा शरीर ही जल जाए? मेरा मन राम के नाम में मग्न रहता है॥ १॥ रहाउ॥ न किसी का कुछ जलता है, न किसी का कोई नुक्सान होता है, परमेश्वर स्वयं ही सर्वत्र नटखट खेल कर रहा है॥ २॥ हे कबीर! तू ('राम' के) दो अक्षर उच्चरित कर, यदि मेरा मालिक है तो मुझे भवसागर से बचा लेगा॥ ३॥ ३३॥

गउड़ी कबीर जी दुपदे $_{२}$ ॥ ना मै जोग धिआन चितु लाइआ ॥ बिनु बैराग न छूटसि माइआ ॥ १ ॥ कैसे जीवनु होइ हमारा ॥ जब न होइ राम नाम अधारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहु कबीर खोजउ असमान ॥ राम समान न देखउ आन ॥ २ ॥ ३४ ॥

न ही मैंने योग विद्या की तरफ अपना ध्यान अथवा मन लगाया। फिर वैराग्य के बिना माया से मुक्ति नहीं हो सकती॥ १॥ मेरा जीवन कैसे व्यतीत होगा, जब राम के नाम का आधार नहीं होगा॥ १॥ रहाउ॥ हे कबीर! मैं आकाश तक खोज कर चुका हूँ परन्तु मुझे राम के तुल्य दूसरा कोई दिखाई नहीं दिया॥ २॥ ३४॥

गउड़ी कबीर जी ॥ जिह सिरि रचि रचि बाधत पाग ॥ सो सिरु चुंच सवारहि काग ॥ १ ॥ इसु तन धन को किआ गरबईआ ॥ राम नामु काहे न द्रिढीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहत कबीर सुनहु मन मेरे ॥ इही हवाल होहिगे तेरे ॥ २ ॥ ३५ ॥ गउड़ी गुआरेरी के पदे पैतीस ॥

जिस सिर पर इन्सान संवार–संवार कर पगड़ी बाँधता है, (मरणोपरांत) उस सिर को कौए अपनी चोंचों से संवारते हैं॥ १॥ इस शरीर एवं धन पर क्या अहंकार किया जा सकता है? (हे प्राणी!) तू राम के नाम को क्यों याद नहीं करता?॥ १॥ रहाउ॥ कबीर जी कहते हैं–हे मेरे मन! सुन, जब मृत्यु आएगी तो तेरा भी यही हाल होगा॥ २॥ ३५॥

रागु गउड़ी गुआरेरी असटपदी कबीर जी की

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सुखु मांगत दुखु आगै आवै ॥ सो सुखु हमहु न मांगिआ भावै ॥ १ ॥ बिखिआ अजहु सुरति सुख आसा ॥ कैसे होई है राजा राम निवासा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इसु सुख ते सिव ब्रहम डराना ॥ सो सुखु हमहु साचु करि जाना ॥ २ ॥ सनकादिक नारद मुनि सेखा ॥ तिन भी तन महि मनु नही पेखा ॥ ३ ॥ इसु मन कउ कोई खोजहु भाई ॥ तन छूटे मनु कहा समाई ॥ ४ ॥ गुर परसादी जैदेउ नामां ॥ भगति कै प्रेमि इन ही है जानां ॥ ५ ॥ इसु मन कउ नही आवन जाना ॥ जिस का भरमु गइआ तिनि साचु पछाना ॥ ६ ॥ इसु मन कउ रूपु न रेखिआ काई ॥ हुकमे होइआ हुकमु बूझि समाई ॥ ७ ॥ इस मन का कोई जानै भेउ ॥ इह मनि लीण भए सुखदेउ ॥ ८ ॥ जीउ एकु अरु सगल सरीरा ॥ इसु मन कउ रवि रहे कबीरा ॥ ९ ॥ १ ॥ ३६ ॥

इन्सान सुख माँगता है, परन्तु उसे दुःख आकर मिलता है। (इसलिए) मुझे उस सुख की कामना अच्छी नहीं लगती, जिस सुख से दुःख प्राप्त होता है॥ १॥ इन्सान की वृत्ति माया के विकारों में लगी हुई है लेकिन वह सुख की अभिलाषा करता है। तो फिर वह किस तरह राजा राम में निवास पाएगा॥ १॥ रहाउ॥ इस (माया के) सुख से शिवजी एवं ब्रह्मा (जैसे देवते भी) भयभीत हैं। इस सुख को मैं सत्य करके जानता हूँ॥ २॥ ब्रह्म के चारों पुत्र सनकादिक, नारद मुनि एवं शेषनाग–इन्होंने भी अपनी आत्मा को अपने शरीर में नहीं देखा॥ ३॥ हे भाई! कोई इस आत्मा की खोज करो कि शरीर से जुदा होकर यह आत्मा कहाँ चली जाती है?॥ ४॥ गुरु की कृपा से जयदेव, नामदेव जैसे भक्तों ने भी इस रहस्य को प्रभु–भक्ति के चाव से जाना है॥ ५॥ जिस व्यक्ति का भ्रम मिट जाता है, वह सत्य को पहचान लेता है, और उसकी आत्मा जन्म–मरण के चक्र में नहीं पड़ती॥ ६॥ वास्तव में इस आत्मा का कोई स्वरूप अथवा चक्र–चिन्ह नहीं। प्रभु के हुक्म द्वारा ही इसकी रचना की गई थी और उसके हुक्म को समझ कर यह उसमें समा जाएगी॥ ७॥ क्या कोई मनुष्य इस आत्मा के रहस्य को जानता है? यह आत्मा अंत: सुखदाता प्रभु में ही समा जाती है॥ ८॥ आत्मा एक है लेकिन यह समस्त शरीरों में समाई हुई है। इस आत्मा (अर्थात् प्रभु) का ही कबीर चिन्तन कर रहा है॥ ९॥ १॥ ३६॥

गउड़ी गुआरेरी ॥ अहिनिसि एक नाम जो जागे ॥ केतक सिध भए लिव लागे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधक सिध सगल मुनि हारे ॥ एक नाम कलिप तर तारे ॥ १ ॥ जो हरि हरे सु होहि न आना ॥ कहि कबीर राम नाम पछाना ॥ २ ॥ ३७ ॥

उन लोगों में जो केवल नाम–सिमरन में ही दिन–रात जाग्रत रहते थे, बहुत सारे ऐसे व्यक्ति प्रभु के साथ वृत्ति लगाने से सिद्ध बन गए हैं॥ १॥ रहाउ॥ साधक, सिद्ध एवं मुनिजन हार गए हैं।

केवल एक ईश्वर का नाम ही कल्पवृक्ष है जो जीवों का (भवसागर से) उद्धार कर देता है॥ १॥ कबीर जी कहते हैं—जो व्यक्ति हरि का सिमरन करते हैं, उनका दुनिया में जन्म—मरण का चक्र समाप्त हो जाता है। वह केवल राम के नाम को ही पहचानते हैं॥ २॥ ३७॥

गउड़ी भी सोरठि भी ॥ रे जीअ निलज लाज तोहि नाही ॥ हरि तजि कत काहू के जांही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा को ठाकुरु ऊचा होई ॥ सो जनु पर घर जात न सोही ॥ १ ॥ सो साहिबु रहिआ भरपूरि ॥ सदा संगि नाही हरि दूरि ॥ २ ॥ कवला चरन सरन है जा के ॥ कहु जन का नाही घर ता के ॥ ३ ॥ सभु कोऊ कहै जासु की बाता ॥ सो संम्रथु निज पति है दाता ॥ ४ ॥ कहै कबीरु पूरन जग सोई ॥ जा के हिरदै अवरु न होई ॥ ५ ॥ ३८ ॥

हे निर्लज्ज जीव ! क्या तुझे शर्म नहीं आती ? ईश्वर को छोड़कर तू कहाँ और किसके पास जाता है ?॥ १॥ रहाउ॥ जिसका मालिक सर्वोपरि होता है, वह पुरुष पराए घर को जाता शोभा नहीं पाता॥ १॥ वह प्रभु—परमेश्वर हर जगह मौजूद है। वह सदा हमारे साथ है और कभी भी दूर नहीं॥ २॥ जिसके चरणों की शरण धन की देवी लक्ष्मी भी लिए बैठी है, हे भाई ! बता, उस श्री हरि के घर किस वस्तु की कमी है ?॥ ३॥ जिस परमात्मा की यश की बातें हरेक प्राणी कर रहा है, वह सर्वशक्तिमान, अपने आप का स्वयं स्वामी और दाता है॥ ४॥ कबीर जी कहते हैं—इस दुनिया में केवल वही मनुष्य गुणवान है, जिसके हृदय में ईश्वर के अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं बसता॥ ५॥ ३८॥

कउनु को पूतु पिता को का को ॥ कउनु मरै को देइ संतापो ॥ १ ॥ हरि ठग जग कउ ठगउरी लाई ॥ हरि के बिओग कैसे जीअउ मेरी माई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कउन को पुरखु कउन की नारी ॥ इआ तत लेहु सरीर बिचारी ॥ २ ॥ कहि कबीर ठग सिउ मनु मानिआ ॥ गई ठगउरी ठगु पहिचानिआ ॥ ३ ॥ ३९ ॥

कौन कोई किसी का पुत्र है? कौन कोई किसी का पिता है? अर्थात् कोई किसी का रक्षक नहीं। कौन कोई मरता है और कौन कोई किसी को दुःख देता है ?॥ १॥ उस छलिया भगवान ने सारी दुनिया को मोहरूपी ठग बूटी लगा कर मुग्ध किया हुआ है। हे मेरी माँ ! भगवान से बिछुड़कर मैं कैसे जीवित रहूँगा॥ १॥ रहाउ॥ कौन कोई किसी का पति है और कौन कोई किसी की पत्नी है ? इस यथार्थ को (हे भाई !) तू अपने शरीर में ही विचार कर॥ २॥ कबीर जी कहते हैं कि छलिया भगवान से मेरा मन अब एक हो गया है। मेरी दुविधा दूर हो गई है और मैंने उस छलिया (भगवान) को पहचान लिया है॥ ३॥ ३९॥

अब मो कउ भए राजा राम सहाई ॥ जनम मरन कटि परम गति पाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधू संगति दीओ रलाइ ॥ पंच दूत ते लीओ छडाइ ॥ अंम्रित नामु जपउ जपु रसना ॥ अमोल दासु करि लीनो अपना ॥ १ ॥ सतिगुर कीनो परउपकारु ॥ काढि लीन सागर संसार ॥ चरन कमल सिउ लागी प्रीति ॥ गोबिंदु बसै निता नित चीत ॥ २ ॥ माइआ तपति बुझिआ अंगिआरु ॥ मनि संतोखु नामु आधारु ॥ जलि थलि पूरि रहे प्रभ सुआमी ॥ जत पेखउ तत अंतरजामी ॥ ३ ॥ अपनी भगति आप ही द्रिड़ाई ॥ पूरब लिखतु मिलिआ मेरे भाई ॥ जिसु क्रिपा करे तिसु पूरन साज ॥ कबीर को सुआमी गरीब निवाज ॥ ४ ॥ ४० ॥

इस दुनिया का राजा राम अब मेरा सहायक बन गया है। जन्म—मरण की जंजीर काटकर मुझे परमगति मिल गई है॥ १॥ रहाउ॥ भगवान ने मुझे साधुओं की संगति में मिला दिया है और

(कामादिक) पाँच विकारों से उसने मुझे बचा लिया है। अपनी जीभ से मैं अमृत नाम रूपी जाप जपता हूँ। भगवान ने मुझे बिना मूल्य के अपना सेवक बना लिया है॥ १॥ सतिगुरु ने मुझ पर बड़ा परोपकार किया है, उन्होंने मुझे भवसागर से बचा लिया है। अब प्रभु के सुन्दर चरणों से मेरा प्रेम बन गया है। गोबिन्द हर समय मेरे हृदय में बस रहा है॥ २॥ मोहिनी की दग्ध अग्नि बुझ गई है। (ईश्वर के) नाम के आधार से अब मेरे मन में संतोष है। जगत् का स्वामी प्रभु समुद्र, धरती सर्वत्र मौजूद है। जहाँ कहीं भी मैं देखता हूँ, वहीं अन्तर्यामी प्रभु विद्यमान है॥ ३॥ ईश्वर ने अपनी भक्ति स्वयं ही मेरे मन में दृढ़ की है। हे मेरे भाई! पूर्व जन्म के किए कर्मों का फल मुझे मिल गया है। वह जिस पर कृपा करता है, उसका संयोग सुन्दर बनाकर रख देता है। कबीर का स्वामी गरीबनिवाज है॥ ४॥ ४०॥

जलि है सूतकु थलि है सूतकु सूतक ओपति होई ॥ जनमे सूतकु मूए फुनि सूतकु सूतक परज बिगोई ॥ १ ॥ कहु रे पंडीआ कउन पवीता ॥ ऐसा गिआनु जपहु मेरे मीता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नैनहु सूतकु बैनहु सूतकु सूतकु स्रवनी होई ॥ ऊठत बैठत सूतकु लागै सूतकु परै रसोई ॥ २ ॥ फासन की बिधि सभु कोऊ जानै छूटन की इकु कोई ॥ कहि कबीर रामु रिदै बिचारै सूतकु तिनै न होई ॥ ३ ॥ ४१ ॥

जल में सूतक (अपवित्रता) है, पृथ्वी में सूतक है और जो कुछ उत्पन्न हुआ है, उसमें भी सूतक की उत्पति है। जीव के जन्म में सूतक है तथा मरने पर भी सूतक है। प्रभु की खलकत को सूतक ने नष्ट कर दिया है॥ १॥ हे पण्डित! बता, (फिर) कौन पवित्र है? हे मेरे मित्र! इस ज्ञान का ध्यानपूर्वक चिन्तन कर॥ १॥ रहाउ॥ नयनों में सूतक है, बोलने में सूतक है, कानों में भी सूतक है। उठते–बैठते हर समय प्राणी को सूतक लगता है। सूतक रसोई में भी प्रवेश करता है॥ २॥ हरेक प्राणी (सूतक के भ्रमों में) फँसने का ही ढंग जानता है परन्तु इससे मुक्ति पाने की सूझ किसी विरले को ही है। कबीर जी कहते हैं – जो व्यक्ति अपने हृदय में राम को स्मरण करता है, उसे कोई सूतक नहीं लगता॥ ३॥ ४१॥

गउड़ी ॥ झगरा एकु निबेरहु राम ॥ जउ तुम अपने जन सौ कामु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इहु मनु बडा कि जा सउ मनु मानिआ ॥ रामु बडा कै रामहि जानिआ ॥ १ ॥ ब्रहमा बडा कि जासु उपाइआ ॥ बेदु बडा कि जहां ते आइआ ॥ २ ॥ कहि कबीर हउ भइआ उदासु ॥ तीरथु बडा कि हरि का दासु ॥ ३ ॥ ४२ ॥

हे राम! एक झगड़े का फैसला करो, यदि तूने अपने सेवक से कोई सेवा लेनी है॥ १॥ रहाउ॥ क्या यह आत्मा महान है अथवा वह (प्रभु) जिससे यह आत्मा मिली हुई है। क्या राम महान है अथवा वह महान जो राम को जानता है?॥ १॥ क्या ब्रह्मा महान है अथवा वह जिसने उसे पैदा किया है? वेद महान है अथवा वह जिससे (यह ज्ञान) आया है?॥ २॥ कबीर जी कहते हैं कि मैं इस बात से उदास हूँ कि तीर्थ–स्थल महान है अथवा भगवान का भक्त॥ ३॥ ४२॥

रागु गउड़ी चेती ॥ देखौ भाई ग्यान की आई आंधी ॥ सभै उडानी भ्रम की टाटी रहै न माइआ बांधी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुचिते की दुइ थूनि गिरानी मोह बलेडा टूटा ॥ तिसना छानि परी धर ऊपरि दुरमति भांडा फूटा ॥ १ ॥ आंधी पाछे जो जलु बरखै तिहि तेरा जनु भीनां ॥ कहि कबीर मनि भइआ प्रगासा उदै भानु जब चीना ॥ २ ॥ ४३ ॥

हे भाइयो ! देखो, ज्ञान की आँधी आई है। इस दुविधा के छप्पर को पूर्णतया उड़ा कर ले गई है और माया के बँधन तक भी शेष नहीं बचे॥ १॥ रहाउ॥ द्वैतवाद के दोनों स्तम्भ गिर गए हैं और दुनिया का मोह–रूपी लकड़ी का डण्डा भी गिरकर टूट गया है। तृष्णा का छप्पर (लकड़ी टूटने पर) धरती पर आ गिरा है और दुर्मति का बर्तन फूट गया है॥ १॥ ज्ञान की अन्धेरी के पश्चात जो (नाम की) वर्षा होती है, उसमें तेरा भक्त भीग जाता है। कबीर जी कहते हैं– जब मैं सूर्य को उदय होता देखता हूँ तो मेरे हृदय में उजाला ही उजाला हो जाता है॥ २॥ ४३॥

गउड़ी चेती ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

हरि जसु सुनहि न हरि गुन गावहि ॥ बातन ही असमानु गिरावहि ॥ १ ॥ ऐसे लोगन सिउ किआ कहीऐ ॥ जो प्रभ कीए भगति ते बाहज तिन ते सदा डराने रहीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपि न देहि चुरू भरि पानी ॥ तिह निंदहि जिह गंगा आनी ॥ २ ॥ बैठत उठत कुटिलता चालहि ॥ आपु गए अउरन हू घालहि ॥ ३ ॥ छाडि कुचरचा आन न जानहि ॥ ब्रहमा हू को कहिओ न मानहि ॥ ४ ॥ आपु गए अउरन हू खोवहि ॥ आगि लगाइ मंदर मै सोवहि ॥ ५ ॥ अवरन हसत आप हहि कांने ॥ तिन कउ देखि कबीर लजाने ॥ ६ ॥ १ ॥ ४४ ॥

कुछ लोग न कभी भगवान का यश सुनते हैं और न ही कभी भगवान के गुण गाते हैं, परन्तु अपनी व्यर्थ बातों से ही (मानो) आसमान को गिरा लेते हैं॥ १॥ ऐसे लोगों को उपदेश देने का कोई अभिप्राय नहीं, जिन्हें भगवान ने अपनी भक्ति से वंचित रखा हुआ है, उनसे सदैव ही डरना चाहिए॥ १॥ रहाउ॥ वे लोग स्वयं तो अंजुलि भर जल भी नहीं देते परन्तु उनकी निंदा करते हैं, जिन्होंने गंगा बहा दी है॥ २॥ उठते–बैठते वे कुटिल चालें चलते हैं, वे तो स्वयं नष्ट हो गए हैं और दूसरों को भी नष्ट करते हैं॥ ३॥ व्यर्थ वाद–विवाद के बिना वह अन्य कुछ नहीं जानते। वह ब्रह्मा जी की बात भी नहीं मानते॥ ४॥ ऐसे लोग आप कुमार्गगामी हुए हैं और दूसरों को भी गुमराह ही करते हैं, वे मानो मन्दिर में आग लगाकर सो रहे हैं॥ ५॥ वे स्वयं तो एक आँख वाले काने हैं लेकिन दूसरों की हँसी उड़ाते हैं। हे कबीर ! ऐसे लोगों को देखकर मुझे लज्जा आती है॥ ६॥ १॥ ४४॥

राग गउड़ी बैरागणि कबीर जी ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

जीवत पितर न मानै कोऊ मूएं सिराध कराही ॥ पितर भी बपुरे कहु किउ पावहि कऊआ कूकर खाही ॥ १ ॥ मो कउ कुसलु बतावहु कोई ॥ कुसलु कुसलु करते जगु बिनसै कुसलु भी कैसे होई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माटी के करि देवी देवा तिसु आगै जीउ देही ॥ ऐसे पितर तुमारे कहीअहि आपन कहिआ न लेही ॥ २ ॥ सरजीउ काटहि निरजीउ पूजहि अंत काल कउ भारी ॥ राम नाम की गति नही जानी भै डूबे संसारी ॥ ३ ॥ देवी देवा पूजहि डोलहि पारब्रहमु नही जाना ॥ कहत कबीर अकुलु नही चेतिआ बिखिआ सिउ लपटाना ॥ ४ ॥ १ ॥ ४५ ॥

मनुष्य अपने पूर्वजों (माता–पिता) की उनके जीवित रहने तक तो सेवा नहीं करते परन्तु (उनके) मरणोपरांत पितरों का श्राद्ध करवाते हैं। बताओ, बेचारे पितर भला श्राद्धों का भोजन कैसे पाएँगे ? इसे तो कौए–कुत्ते खा जाते हैं॥ १॥ कोई मुझे बताओ कि सुख–खुशी क्या है ? सारी दुनिया (इसी दुविधा में) सुख–मंगल कहती मरती जा रही है (कि श्राद्ध कराने से घर में सुख मिलता है) आत्मिक सुख किस प्रकार प्राप्त हो सकता है ?॥ १॥ रहाउ॥ लोग मिट्टी के देवी–देवता बनाकर उस देवी या देवता

के समक्ष जीवों की बलि देते हैं। (हे भाई!) इसी प्रकार तुम्हारे मृत पितर कहे जाते हैं, जो कुछ वह लेना चाहते हैं, कह कर नहीं ले सकते॥ २॥ लोग जीवित जीवों को मारते हैं और निर्जीव (मिट्टी के बनाए हुए) देवताओं की पूजा करते हैं। अंतकाल (मृत्यु के समय) तुम्हें बहुत मुश्किल होगा। आप राम के नाम की गति नहीं जानते, (इससे) आप भयानक संसार सागर में डूब जाओगे॥ ३॥ हे नश्वर प्राणी! तुम लोग देवी—देवताओं की पूजा करते हो। अपने भरोसे में डावांडोल होते रहते हो और पारब्रह्म को नहीं समझते। कबीर जी कहते हैं—आप लोग कुलरहित भगवान को याद नहीं करते और माया के विकारों में फँसे रहते हो॥ ४॥ १॥ ४५॥

गउड़ी ॥ जीवत मरै मरै फुनि जीवै ऐसे सुंनि समाइआ ॥ अंजन माहि निरंजनि रहीऐ बहुड़ि न भवजलि पाइआ ॥ १ ॥ मेरे राम ऐसा खीरु बिलोईऐ ॥ गुरमति मनूआ असथिरु राखहु इन बिधि अंम्रितु पीओईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर कै बाणि बजर कल छेदी प्रगटिआ पदु परगासा ॥ सकति अधेर जेवड़ी भ्रमु चूका निहचलु सिव घरि बासा ॥ २ ॥ तिनि बिनु बाणै धनखु चढाईऐ इहु जगु बेधिआ भाई ॥ दह दिस बूडी पवनु झुलावै डोरि रही लिव लाई ॥ ३ ॥ उनमनि मनूआ सुंनि समाना दुबिधा दुरमति भागी ॥ कहु कबीर अनभउ इकु देखिआ राम नामि लिव लागी ॥ ४ ॥ २ ॥ ४६ ॥

मनुष्य को विकारों की ओर से जीवित ही मरे रहना चाहिए और विकारों की ओर से मरकर प्रभु—नाम के द्वारा दोबारा जीना चाहिए। इस प्रकार वह निर्गुण प्रभु में लीन हो जाता है। वह माया में रहता हुआ भी माया—रहित परमात्मा में रहकर दोबारा भयानक संसार—सागर में नहीं पड़ता॥ १॥ हे मेरे राम! ऐसे दूध मंथन किया जा सकता है। हे प्रभु! मुझे गुरु का उपदेश देकर मेरा कमजोर मन स्थिर रख। इस विधि से प्रभु का नाम—अमृत पान किया जा सकता है॥ १॥ रहाउ॥ गुरु के बाण ने वज्र कलियुग को छेद दिया है और प्रकाश की अवस्था मुझ पर प्रकाशमान हुई है। शक्ति के अंधेरे के कारण रस्सी को साँप समझने की मेरी दुविधा दूर हो गई है और मैं अब प्रभु के निहचल मन्दिर में निवास करता हूँ॥ २॥ हे मेरे भाई! उस माया ने तीर के बिना ही धनुष खींचा है और इस संसार को छेद दिया है। (माया के विकारों में) डूबा हुआ प्राणी हवा में दसों दिशाओं में झूलता है परन्तु मैं प्रभु की प्रीति के धागे से जुड़ा हुआ हूँ॥ ३॥ उखड़ी हुई आत्मा ईश्वर में लीन हो गई है और दुविधा तथा दुर्बुद्धि भाग गए हैं। हे कबीर! राम के नाम से वृत्ति लगाकर मैंने निर्भय एक प्रभु को देख लिया है॥ ४॥ २॥ ४६॥

गउड़ी बैरागणि तिपदे ॥ उलटत पवन चक्र खटु भेदे सुरति सुंन अनरागी ॥ आवै न जाइ मरै न जीवै तासु खोजु बैरागी ॥ १ ॥ मेरे मन मन ही उलटि समाना ॥ गुर परसादि अकलि भई अवरै नातरु था बेगाना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निवरै दूरि दूरि फुनि निवरै जिनि जैसा करि मानिआ ॥ अलउती का जैसे भइआ बरेडा जिनि पीआ तिनि जानिआ ॥ २ ॥ तेरी निरगुन कथा काइ सिउ कहीऐ ऐसा कोइ बिबेकी ॥ कहु कबीर जिनि दीआ पलीता तिनि तैसी झल देखी ॥ ३ ॥ ३ ॥ ४७ ॥

अपनी सोच को ईश्वर की तरफ जोड़कर मैंने शरीर के छः चक्रों को भेद दिया है और मेरा मन प्रभु पर मुग्ध हो गया है। हे बैरागी! उस प्रभु की खोज कर, जो न आता है, न जाता है, न मरता है, न जन्मता है॥ १॥ मेरा मन विकारों के प्रति मन की दौड़ को मोड़कर प्रभु में लीन हो गया है। गुरु की कृपा से मेरी बुद्धि विभिन्न हो गई है, अन्यथा मैं बिल्कुल ही अज्ञानी था॥ १॥ रहाउ॥ जो निकट था, वह दूर हो गया और दोबारा जो दूर था, वह निकट हो गया है। उसके लिए जो प्रभु को जैसा वह है, वैसा ही अनुभव करता है। जैसे मिश्री का शरबत हो तो उसका आनन्द उसी पुरुष ने

जाना है, जिसने वह शरबत पान किया है॥ २॥ हे प्रभु ! तेरी निर्गुण कथा किसे बताऊँ ? क्या कोई ऐसा विवेकी पुरुष है ? हे कबीर ! मनुष्य जैसी आत्मिक ज्ञान की चिंगारी लगाता है, वैसी ही ईश्वरीय झलक वह देख लेता है॥ ३॥ ३॥ ४७॥

गउड़ी ॥ तह पावस सिंधु धूप नही छहीआ तह उतपति परलउ नाही ॥ जीवन मिरतु न दुखु सुखु बिआपै सुंन समाधि दोऊ तह नाही ॥ १ ॥ सहज की अकथ कथा है निरारी ॥ तुलि नही चढै जाइ न मुकाती हलुकी लगै न भारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अरध उरध दोऊ तह नाही राति दिनसु तह नाही ॥ जलु नही पवनु पावकु फुनि नाही सतिगुर तहा समाही ॥ २ ॥ अगम अगोचरु रहै निरंतरि गुर किरपा ते लहीऐ ॥ कहु कबीर बलि जाउ गुर अपुने सतसंगति मिलि रहीऐ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ४८ ॥

वहाँ ईश्वर के पास कोई वर्षा, ऋतु, सागर, धूप एवं छाया नहीं। वहाँ उत्पत्ति अथवा प्रलय भी नहीं। वहाँ जीवन–मृत्यु नहीं, न ही दुख–सुख अनुभव होता है। वहाँ केवल शून्य समाधि है तथा दुविधा नहीं॥ १॥ सहज अवस्था की कथा अनुपम एवं अकथनीय है। यह न ही तोली जाती है और न ही समाप्त होती है। न ही यह हल्की लगती और न ही भारी लगती है॥ १॥ रहाउ॥ लोक अथवा परलोक दोनों ही वहाँ नहीं हैं। रात और दिन भी वहाँ नहीं। फिर वहाँ जल, पवन एवं अग्नि भी नहीं। सतिगुरु वहाँ समा रहा है॥ २॥ अगम्य एवं अगोचर परमात्मा वहाँ अपने आप में ही निवास करता है। गुरु की कृपा से ही परमात्मा पाया जाता है। हे कबीर ! मैं अपने गुरु पर न्यौछावर हूँ, और सत्संगति में मिला रहता हूँ॥ ३॥ ४॥ ४८॥

गउड़ी$_{२}$ ॥ पापु पुंनु दुइ बैल बिसाहे पवनु पूजी परगासिओ ॥ त्रिसना गूणि भरी घट भीतरि इन बिधि टांड बिसाहिओ ॥ १ ॥ ऐसा नाइकु रामु हमारा ॥ सगल संसारु कीओ बनजारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कामु क्रोधु दुइ भए जगाती मन तरंग बटवारा ॥ पंच ततु मिलि दानु निबेरहि टांडा उतरिओ पारा ॥ २ ॥ कहत कबीरु सुनहु रे संतहु अब ऐसी बनि आई ॥ घाटी चढत बैलु इकु थाका चलो गोनि छिटकाई ॥ ३ ॥ ५ ॥ ४९ ॥

पाप एवं पुण्य दोनों से शरीर रूपी बैल मूल्य लिया गया है और प्राण पूँजी के तौर पर प्रकट हुए हैं। इस विधि से बैल खरीदा गया है। बैल की पीठ पर हृदय की बोरी तृष्णाओं से भरी हुई है॥ १॥ हमारा राम ऐसा धनी साहूकार है, जिसने सारी दुनिया को अपना व्यापारी बनाया हुआ है॥ १॥ रहाउ॥ काम और क्रोध दोनों (प्राणियों के पथ पर चुंगी वसूलने वाले हैं) अर्थात् श्वासों की पूँजी का कुछ भाग काम एवं क्रोध में फँसने से नष्ट होता जा रहा है और प्राणियों के मन की तरंगें लुटेरे हैं। पाँच विकार (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) मिलकर लूट के माल को आपस में बाँट लेते हैं। इस प्रकार बैल पार हो जाता है॥ २॥ कबीर जी कहते हैं–हे संतजनों ! सुनो, अब ऐसी अवस्था आ बनी है कि (प्रभु–स्मरण–रूपी) ऊँची पहाड़ी पर चढ़ते एक बैल थक गया है और तृष्णा का सौदा फैंककर वह अपनी यात्रा पर चलता बना है॥ ३॥ ५॥ ४९॥

गउड़ी$_{३}$ पंचपदा ॥ पेवकड़ै दिन चारि है साहुरड़ै जाणा ॥ अंधा लोकु न जाणई मूरखु एआणा ॥ १ ॥ कहु डडीआ बाधै धन खड़ी ॥ पाहू घरि आए मुकलाऊ आए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ओह जि दिसै खूहड़ी कउन लाजु वहारी ॥ लाजु घड़ी सिउ तूटि पड़ी उठि चली पनिहारी ॥ २ ॥ साहिबु होइ दइआलु क्रिपा करे अपुना कारजु सवारे ॥ ता सोहागणि जाणीऐ गुर सबदु बीचारे ॥ ३ ॥ किरत की बांधी सभ फिरै देखहु बीचारी ॥ एस नो किआ आखीऐ किआ करे विचारी ॥ ४ ॥ भई निरासी उठि चली चित बंधि न धीरा ॥ हरि की चरणी लागि रहु भजु सरणि कबीरा ॥ ५ ॥ ६ ॥ ५० ॥

मूर्ख, नादान एवं ज्ञानहीन दुनिया यह नहीं समझती कि जीव–स्त्री ने (इहलोक रूपी) पीहर में चार दिन ही रहना है, तदुपरांत उसने (परलोक–रूपी) ससुराल ही जाना है॥ १॥ बताओ! (यह क्या कौतुक है?) गौना लेकर जाने वाले अतिथि घर में पहुँच गए हैं और उसका पति उसे लेने के लिए आ गया है, लेकिन पत्नी अभी लापरवाही से आधी धोती ही पहन कर खड़ी है॥ १॥ रहाउ॥ यह जो सुन्दर कुआँ है इसमें कौन–सी स्त्री रस्सी डाल रही है। जिसकी रस्सी घड़े सहित टूट जाती है, वह जल भरने वाली इहलोक से उठकर परलोक को चली जाती है॥ २॥ यदि मालिक दया के घर में आ जाए और अपनी कृपादृष्टि धारण करे तो जीव–स्त्री अपने कार्य संवार लेगी। केवल तभी वह (जीव स्त्री) सौभाग्यवती समझी जाती है यदि वह गुरु के शब्द का चिन्तन करती है॥ ३॥ (लेकिन हे भाई!) इसे क्या कहें? यह बेचारी क्या कर सकती है? अपने किए हुए कर्मों के कारण हरेक जीव–स्त्री भटक रही है। आँखें खोलकर आप इस तरफ ध्यान दीजिए॥ ४॥ वह निराश होकर (दुनिया से) चली जाती है। उसके मन में कोई सहारा एवं धैर्य नहीं। हे कबीर! भगवान के चरणों से लगा रह और उसकी शरण का भजन कर॥ ५॥ ६॥ ५०॥

गउड़ी॥ जोगी कहहि जोगु भल मीठा अवरु न दूजा भाई ॥ रुंडित मुंडित एकै सबदी एइ कहहि सिधि पाई ॥ १ ॥ हरि बिनु भरमि भुलाने अंधा ॥ जा पहि जाउ आपु छुटकावनि ते बाधे बहु फंधा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जह ते उपजी तही समानी इह बिधि बिसरी तब ही ॥ पंडित गुणी सूर हम दाते एहि कहहि बड हम ही ॥ २ ॥ जिसहि बुझाए सोई बूझै बिनु बूझे किउ रहीऐ ॥ सतिगुरु मिलै अंधेरा चूकै इन बिधि माणकु लहीऐ ॥ ३ ॥ तजि बावे दाहने बिकारा हरि पदु द्रिड़ु करि रहीऐ ॥ कहु कबीर गूंगै गुड़ु खाइआ पूछे ते किआ कहीऐ ॥ ४ ॥ ७ ॥ ५१ ॥

योगी कहता है–हे भाई! योग (मार्ग) ही भला एवं मीठा है तथा अन्य कोई (उपयुक्त) नहीं। कनफटे, संन्यासी एवं अवधूत–यही कहते हैं कि उन्होंने ही सिद्धि प्राप्त की है॥ १॥ ज्ञानहीन इन्सान भगवान को विस्मृत करके दुविधा में फँसे हुए हैं, इसलिए मैं जिनके पास अपने अहंत्व से मुक्ति कराने के लिए जाता हूँ, वे सभी स्वयं ही अहंत्व के अनेक बन्धनों में फँसे हुए हैं॥ १॥ रहाउ॥ जब मनुष्य इस प्रकार का अहंकार भूल जाता है तो आत्मा उसमें लीन हो जाती है, जहाँ यह उत्पन्न हुई थी। पण्डित, गुणवान, शूरवीर एवं दानवीर–यही कहते हैं कि केवल हम ही महान हैं॥ २॥ भगवान जिस व्यक्ति को स्वयं सूझ प्रदान करता है, वही समझता है तथा उसे समझे बिना जीवन ही व्यर्थ है। सतिगुरु को मिलने से अज्ञानता का अंधकार दूर हो जाता है। इस विधि से प्रभु नाम रूपी हीरा प्राप्त हो जाता है॥ ३॥ अपने बाएँ हाथ एवं दाएँ के पापों को छोड़कर ईश्वर के चरण पकड़ कर रखने चाहिएँ। हे कबीर! यदि गूंगे आदमी ने गुड़ खाया हो तो पूछे जाने पर वह क्या कह सकता है॥ ४॥ ७॥ ५१॥

रागु गउड़ी पूरबी, कबीर जी ॥ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

जह कछु अहा तहा किछु नाही पंच ततु तह नाही ॥ इड़ा पिंगुला सुखमन बंदे ए अवगन कत जाही ॥ १ ॥ तागा तूटा गगनु बिनसि गइआ तेरा बोलतु कहा समाई ॥ एह संसा मो कउ अनदिनु बिआपै मो कउ को न कहै समझाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जह बरभंडु पिंडु तह नाही रचनहारु तह नाही ॥ जोड़णहारो सदा अतीता इह कहीऐ किसु माही ॥ २ ॥ जोड़ी जुड़ै न तोड़ी तूटै जब लगु होइ बिनासी ॥ का को ठाकुरु का को सेवकु को काहू कै जासी ॥ ३ ॥ कहु कबीर लिव लागि रही है जहा बसे दिन राती ॥ उआ का मरमु ओही परु जानै ओहु तउ सदा अबिनासी ॥ ४ ॥ १ ॥ ५२ ॥

जहाँ कुछ था, वहाँ अब कुछ भी नहीं। पाँच तत्व भी वहाँ नहीं हैं। हे मनुष्य! इड़ा, पिंगला तथा सुषुम्ना नाड़ी अब ये किस तरह गिने जा सकते हैं॥ १॥ (मोह का) धागा टूट गया है और बुद्धि नाश हो गई है। तेरा वचन कहाँ लुप्त हो गया है। यह दुविधा मुझे रात–दिन लगी रहती है। कोई मनुष्य इसे वर्णन करके मुझे समझा नहीं सकता॥ १॥ रहाउ॥ जहाँ यह दुनिया है, शरीर वहाँ नहीं। इसका रचयिता भी वहाँ नहीं। जोड़ने वाला सदैव ही निर्लिप्त है। अब यह आत्मा किसके भीतर समाई हुई कही जा सकती है?॥ २॥ मिलाने से मनुष्य तत्वों को मिला नहीं सकता। जब तक शरीर का नाश न हो, वह अलग करने से इनको अलग नहीं कर सकता। आत्मा किसकी मालिक है और किसकी सेविका? यह कहाँ एवं किसके पास जा सकती है?॥ ३॥ हे कबीर! मेरी वृत्ति वहाँ लगी रहती है, जहाँ दिन–रात प्रभु निवास करता है। उसका रहस्य वह स्वयं ही जानता है और वह हमेशा ही अमर है॥ ४॥ १॥ ५२॥

गउड़ी ॥ सुरति सिम्रिति दुइ कंनी मुंदा परमिति बाहरि खिंथा ॥ सुंन गुफा महि आसणु बैसणु कलप बिबरजित पंथा ॥ १ ॥ मेरे राजन मै बैरागी जोगी ॥ मरत न सोग बिओगी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खंड ब्रहमंड महि सिंङी मेरा बटूआ सभु जगु भसमाधारी ॥ ताड़ी लागी त्रिपलु पलटीऐ छूटै होइ पसारी ॥ २ ॥ मनु पवनु दुइ तूंबा करी है जुग जुग सारद साजी ॥ थिरु भई तंती तूटसि नाही अनहद किंगुरी बाजी ॥ ३ ॥ सुनि मन मगन भए है पूरे माइआ डोल न लागी ॥ कहु कबीर ता कउ पुनरपि जनमु नही खेलि गइओ बैरागी ॥ ४ ॥ २ ॥ ५३ ॥

भगवान के चरणों में वृत्ति जोड़नी और नाम–सिमरन दोनों ही (मानों) मेरे कानों की दो मुद्राएँ हैं और भगवान का यथार्थ ज्ञान–यह मैंने अपने तन पर गुदड़ी ली हुई है। ध्यान अवस्था रूपी गुफा में मैं आसन लगाकर विराजमान हूँ और कल्पना का विवर्जित मेरा योग–मार्ग है॥ १॥ हे मेरे राजन! मैं ईश्वर की प्रीति से रंगा हुआ योगी हूँ। (इसलिए) मुझे मृत्यु, शोक एवं वियोग स्पर्श नहीं कर सकते हैं॥ १॥ रहाउ॥ समूचे ब्रह्माण्ड में (भगवान के अस्तित्व का सबको सन्देश देना) यह, मानों मैं बाजा बजा रहा हूँ। सारी दुनिया को क्षणभंगुर समझना यह मेरा भस्म डालने वाला थैला है। तीन गुणों वाली माया से मुक्ति एवं संसार से मोक्ष मेरा समाधि लगाना है॥ २॥ अपने हृदय एवं श्वास को मैंने वीणा के दो तुंबे बनाया है और सभी युगों में विद्यमान प्रभु को मैंने इसकी डण्डी बनाया है। तार स्थिर हो गई है और टूटती नहीं तथा (मेरे भीतर) सहज ही अनहद किंगुरी बज रही है॥ ३॥ इसको सुनने से मेरा मन मग्न हो जाता है और उसे मोहिनी का धक्का नहीं लगता। हे कबीर! जो प्रभु प्रीति वाला योगी ऐसा खेल–खेलकर जाता है, वह दोबारा जन्म नहीं लेता॥ ४॥ २॥ ५३॥

गउड़ी ॥ गज नव गज दस गज इकीस पुरीआ एक तनाई ॥ साठ सूत नव खंड बहतरि पाटु लगो अधिकाई ॥ १ ॥ गई बुनावन माहो ॥ घर छोडिऐ जाइ जुलाहो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गजी न मिनीऐ तोलि न तुलीऐ पाचनु सेर अढाई ॥ जौ करि पाचनु बेगि न पावै झगरु करै घरहाई ॥ २ ॥ दिन की बैठ खसम की बरकस इह बेला कत आई ॥ छूटे कूंडे भीगै पुरीआ चलिओ जुलाहो रीसाई ॥ ३ ॥ छोछी नली तंतु नही निकसै नतर रही उरझाई ॥ छोडि पसारु ईहा रहु बपुरी कहु कबीर समझाई ॥ ४ ॥ ३ ॥ ५४ ॥

नौ गज (गोलक), दस गज (नाड़ियाँ) और इक्कीस गजों का एक पूरा थान (ताना) बुन दे। साठ धागों (नाड़ियों के ताने) एवं बहत्तर पेटे (छोटी नाड़ियाँ) साथ नौ जोड़ (भाग) और मिला दे॥ १॥

सूत बुनाने के लिए गई हुई आत्मा ने कहा। अपने पुराने घर (शरीर) को छोड़कर आत्मा जुलाहे के बुने हुए में चली जाती है॥ १॥ रहाउ॥ शरीर गजों से मापा अथवा बाट से तोला नहीं जाता। इसकी खुराक ढाई सेर है। यदि शरीर को खुराक शीघ्र न मिले तो आत्मा झगड़ा करती है और शरीर का घर नष्ट हो जाता है॥ २॥ हे प्रभु के प्रतिकूल आत्मा! तूने कितने दिन यहाँ बैठे रहना है? यह अवसर तुझे दोबारा कब मिलेगा? बर्तन एवं गीली नलियों को छोड़कर जुलाही आत्मा क्रोध में चली जाती है॥ ३॥ श्वास का धागा खाली हवा की नाली में से नहीं निकलता। उलझ कर श्वास का धागा टूट गया है। हे भाग्यहीन आत्मा! यहाँ (इहलोक में) रहती हुई तू संसार को त्याग दे। तुझे यह ज्ञान देने के लिए कबीर यह कहता है॥ ४॥ ३॥ ५४॥

गउड़ी ॥ एक जोति एका मिली किंबा होइ महोइ ॥ जितु घटि नामु न ऊपजै फूटि मरै जनु सोइ ॥ १ ॥ सावल सुंदर रामईआ ॥ मेरा मनु लागा तोहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधु मिलै सिधि पाईऐ कि एहु जोगु कि भोगु ॥ दुहु मिलि कारजु ऊपजै राम नाम संजोगु ॥ २ ॥ लोगु जानै इहु गीतु है इहु तउ ब्रहम बीचार ॥ जिउ कासी उपदेसु होइ मानस मरती बार ॥ ३ ॥ कोई गावै को सुणै हरि नामा चितु लाइ ॥ कहु कबीर संसा नही अंति परम गति पाइ ॥ ४ ॥ १ ॥ ४ ॥ ५५ ॥

एक ज्योति परम ज्योति से मिल जाती है। क्या यह दोबारा अलग हो सकती है अथवा नहीं? जिस व्यक्ति के हृदय में ईश्वर का नाम अंकुरित नहीं होता, वह फूट–फूट कर दुखी होकर मरता है॥ १॥ हे मेरे सांवले एवं सुन्दर राम! मेरा मन तो तेरे चरणों से लगा हुआ है॥ १॥ रहाउ॥ संतों को मिलने से सिद्धि प्राप्त होती है। क्या लाभ है इस योग–मार्ग का और क्या भोग का? जब गुरु (की वाणी) एवं सिक्ख (की वृत्ति) दोनों आपस में मिल जाते हैं तो कार्य सफल हो जाता है और राम के नाम से संयोग कायम हो जाता है॥ २॥ लोग समझते हैं कि यह (गुरु का शब्द) एक गीत है परन्तु यह तो ब्रह्म का चिन्तन है। यह उस उपदेश की भाँति है जो बनारस में मनुष्य को मरते समय दिया जाता है॥ ३॥ जो भी व्यक्ति चित्त लगाकर भगवान के नाम को गायन करता अथवा सुनता है, हे कबीर! इसमें कोई सन्देह नहीं है कि वह अवश्य ही परमगति प्राप्त कर लेता है॥ ४॥ १॥ ४॥ ५५॥

गउड़ी ॥ जेते जतन करत ते डूबे भव सागरु नही तारिओ रे ॥ करम धरम करते बहु संजम अहंबुधि मनु जारिओ रे ॥ १ ॥ सास ग्रास को दातो ठाकुरु सो किउ मनहु बिसारिओ रे ॥ हीरा लालु अमोलु जनमु है कउडी बदलै हारिओ रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रिसना त्रिखा भूख भ्रमि लागी हिरदै नाहि बीचारिओ रे ॥ उनमत मान हिरिओ मन माही गुर का सबदु न धारिओ रे ॥ २ ॥ सुआद लुभत इंद्री रस प्रेरिओ मद रस लैत बिकारिओ रे ॥ करम भाग संतन संगाने कासट लोह उधारिओ रे ॥ ३ ॥ धावत जोनि जनम भ्रमि थाके अब दुख करि हम हारिओ रे ॥ कहि कबीर गुर मिलत महा रसु प्रेम भगति निसतारिओ रे ॥ ४ ॥ १ ॥ ५ ॥ ५६ ॥

भगवान के सिमरन के बिना मनुष्य जितने भी यत्न करते हैं, वे भवसागर में डूब जाते हैं और पार नहीं होते हैं। जो व्यक्ति धर्म, कर्म एवं बहुत संयम करते हैं, अहंबुद्धि उनके मन को जला देती है॥ १॥ हे नश्वर प्राणी! तूने उस ठाकुर को अपने हृदय में से क्यों भुला दिया है, जिसने तुझे जीवन एवं भोजन प्रदान किए हैं? यह मनुष्य–जन्म (मानो) हीरा एवं अमूल्य लाल है, लेकिन तूने इसे कौड़ी के लिए गंवा दिया है॥ १॥ रहाउ॥ हे भाई! तुझे तृष्णा की प्यास एवं दुविधा की भूख का दुःख लगा हुआ है, क्योंकि अपने हृदय में तुम ईश्वर के नाम का चिंतन नहीं करते। धर्म–कर्म का नशा उनको

ठग लेता है, जो गुरु का शब्द अपने हृदय में नहीं बसाते॥ २॥ ऐसे व्यक्ति पापी हैं जो दुनिया के स्वादों में आकर्षित हैं, जो विषय–भोग के रसों में लीन हैं और मदिरा का स्वाद लेते हैं। जो उत्तम भाग्य एवं किस्मत द्वारा संतों की संगति से जुड़ते हैं, वह लकड़ी से लगे लोहे की भाँति (भवसागर से) पार हो जाते हैं॥ ३॥ भ्रम में फँसकर मैं अनेक योनियों के जन्मों में दौड़–दौड़कर भटकता हार गया हूँ। अब मैं इस दुःख से थक गया हूँ। हे कबीर ! गुरु को मिलने से मुझे महा रस प्राप्त हुआ है और प्रेम–भक्ति ने मुझे (विकारों से) बचा लिया है॥ ४॥ १॥ ५॥ ५६॥

गउड़ी ॥ कालबूत की हसतनी मन बउरा रे चलतु रचिओ जगदीस ॥ काम सुआइ गज बसि परे मन बउरा रे अंकसु सहिओ सीस ॥ १ ॥ बिखै बाचु हरि राचु समझु मन बउरा रे ॥ निरभै होइ न हरि भजे मन बउरा रे गहिओ न राम जहाजु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मरकट मुसटी अनाज की मन बउरा रे लीनी हाथु पसारि ॥ छूटन को सहसा परिआ मन बउरा रे नाचिओ घर घर बारि ॥ २ ॥ जिउ नलनी सूअटा गहिओ मन बउरा रे माया इहु बिउहारु ॥ जैसा रंगु कसुंभ का मन बउरा रे तिउ पसरिओ पासारु ॥ ३ ॥ नावन कउ तीरथ घने मन बउरा रे पूजन कउ बहु देव ॥ कहु कबीर छूटनु नही मन बउरा रे छूटनु हरि की सेव ॥ ४ ॥ १ ॥ ६ ॥ ५७ ॥

हे मूर्ख मन ! भगवान ने यह दुनिया एक लीला रची है, जैसे हाथी को पकड़ने हेतु लोग कालबूत की हथिनी बनाते हैं। हे मूर्ख मन ! कामवासना के वशीभूत हाथी पकड़ में आ जाता है और अपने सिर पर महावत का अंकुश सहता है॥ १॥ हे मूर्ख मन ! विषय–विकारों से बच, ईश्वर में लीन हो और यह उपदेश धारण कर। हे मूर्ख मन ! तूने निडर होकर भगवान का भजन नहीं किया और राम नाम रूपी जहाज पर सवार नहीं हुआ॥ १॥ रहाउ॥ हे मेरे मूर्ख मन ! अपना हाथ आगे फैलाकर बन्दर दानों की मुट्ठी भर लेता है। हे मेरे मूर्ख मन ! मुक्ति पाने की चिन्ता धारण कर, उसे हरेक घर के द्वार पर नाचना पड़ता है॥ २॥ हे मेरे मूर्ख मन ! जैसे तोता नलिनी पर बैठकर फँस जाता है, वैसे ही दुनिया की माया का प्रसार है और मनुष्य इसमें फँस जाता है। हे मूर्ख मन ! जैसे कसुंभे का रंग थोड़े ही दिन का है वैसे ही दुनिया का प्रसार (चार दिन हेतु) बिखरा हुआ है॥ ३॥ हे मूर्ख मन ! स्नान करने के लिए बहुत सारे धार्मिक तीर्थ हैं और पूजा करने के लिए अनेक देवी–देवता हैं। कबीर जी कहते हैं कि हे मूर्ख मन ! इस तरह तेरी मुक्ति नहीं होनी। मुक्ति केवल भगवान का सिमरन एवं भक्ति करने से ही मिलेगी॥ ४॥ १॥ ६॥ ५७॥

गउड़ी ॥ अगनि न दहै पवनु नही मगनै तसकरु नेरि न आवै ॥ राम नाम धनु करि संचउनी सो धनु कत ही न जावै ॥ १ ॥ हमरा धनु माधउ गोबिंदु धरणीधरु इहै सार धनु कहीऐ ॥ जो सुखु प्रभ गोबिंद की सेवा सो सुखु राजि न लहीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इसु धन कारणि सिव सनकादिक खोजत भए उदासी ॥ मनि मुकंदु जिहबा नाराइनु परै न जम की फासी ॥ २ ॥ निज धनु गिआनु भगति गुरि दीनी तासु सुमति मनु लागा ॥ जलत अंभ थंभि मनु धावत भरम बंधन भउ भागा ॥ ३ ॥ कहै कबीरु मदन के माते हिरदै देखु बीचारी ॥ तुम घरि लाख कोटि अस्व हसती हम घरि एकु मुरारी ॥ ४ ॥ १ ॥ ७ ॥ ५८ ॥

(हे जीव !) राम नाम रूपी धन संचित कर। चूंकि यह धन कहीं नहीं जाता। इस नाम–धन को न अग्नि जला सकती है, न पवन उड़ाकर ले जा सकती है और इस धन के निकट चोर भी नहीं आता॥ १॥ हमारा धन तो माधव गोविन्द ही है, जो सारी धरती का सहारा है। इसी धन को सब धनों

में सर्वोत्तम कहा जाता है। जो सुख प्रभु गोविन्द के भजन में मिलता है, वह सुख राज्य-शासन में भी नहीं मिलता॥ १॥ रहाउ॥ इस धन के लिए शिवजी एवं (ब्रह्मा के पुत्र) सनकादिक खोज करते-करते संसार से विरक्त हुए। जिस जीव के हृदय में मुक्तिदाता ईश्वर रहता है, जिसकी जिह्वा पर नारायण विद्यमान है, उसे यम की फाँसी नहीं लग सकती॥ २॥ भगवान की भक्ति एवं ज्ञान ही (जीव का) यथार्थ धन है। जिस सुमति वाले को गुरु ने यह देन प्रदान की है, उसका मन उस प्रभु में बसता है। प्रभु का नाम (तृष्णा में) जलती हुई आत्मा हेतु जल है और भागते-दौड़ते मन हेतु स्तम्भ है। उससे दुविधा के बन्धनों का भय दूर हो जाता है॥ ३॥ कबीर जी कहते हैं-हे कामवासना में लिप्त मानव! अपने हृदय में सोच-विचार कर देख, यदि तेरे घर में लाखों-करोड़ों हाथी तथा घोड़े हैं तो मेरे हृदय-घर में एक मुरारी ही है॥ ४॥ १॥ ७॥ ५८॥

गउड़ी ॥ जिउ कपि के कर मुसटि चनन की लुबधि न तिआगु दइओ ॥ जो जो करम कीए लालच सिउ ते फिरि गरहि परिओ ॥ १ ॥ भगति बिनु बिरथे जनमु गइओ ॥ साधसंगति भगवान भजन बिनु कही न सचु रहिओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिउ उदिआन कुसम परफुलित किनहि न घ्राउ लइओ ॥ तैसे भ्रमत अनेक जोनि महि फिरि फिरि काल हइओ ॥ २ ॥ इआ धन जोबन अरु सुत दारा पेखन कउ जु दइओ ॥ तिन ही माहि अटकि जो उरझे इंद्री प्रेरि लइओ ॥ ३ ॥ अउध अनल तनु तिन को मंदरु चहु दिस ठाटु ठइओ ॥ कहि कबीर भै सागर तरन कउ मै सतिगुर ओट लइओ ॥ ४ ॥ १ ॥ ८ ॥ ५९ ॥

जैसे लालच कारण बन्दर अपने हाथ में (भुने हुए) चनों की मुट्ठी को नहीं छोड़ता और इस कारण वह फँस जाता है, वैसे ही जीव लालच के वशीभूत होकर जो-जो कर्म करता है, वे सभी दोबारा उसके गले में ही पड़ते हैं॥ १॥ भगवान की भक्ति के बिना मनुष्य-जन्म व्यर्थ ही जाता है। साधसंगत में भगवान का भजन किए बिना सत्य कहीं भी निवास नहीं करता॥ १॥ रहाउ॥ जैसे भयानक वन में खिले हुए फूलों की सुगन्धि कोई नहीं ले सकता, वैसे ही प्रभु-वन्दना एवं भक्ति के बिना मनुष्य कई योनियों में भटकता है और मृत्यु उसे बार-बार नष्ट करती है॥ २॥ यह धन, यौवन, पुत्र एवं पत्नी- जो प्रभु के दिए हुए हैं, केवल एक बीत जाने वाला दृश्य है। जो इनमें फँस और उलझ जाते हैं, उनको इन्द्रियाँ आकर्षित करके कुमार्गगामी कर देती हैं॥ ३॥ आयु अग्नि है और शरीर तिनकों का घर है। चारों तरफ सर्वत्र यहीं बनावट बनी हुई है। हे कबीर! इस भयानक संसार-सागर से पार होने के लिए मैंने सतिगुरु की शरण ली है॥ ४॥ १॥ ८॥ ५९॥

गउड़ी ॥ पानी मैला माटी गोरी ॥ इस माटी की पुतरी जोरी ॥ १ ॥ मै नाही कछु आहि न मोरा ॥ तनु धनु सभु रसु गोबिंद तोरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इस माटी महि पवनु समाइआ ॥ झूठा परपंचु जोरि चलाइआ ॥ २ ॥ किनहू लाख पांच की जोरी ॥ अंत की बार गगरीआ फोरी ॥ ३ ॥ कहि कबीर इक नीव उसारी ॥ खिन महि बिनसि जाइ अहंकारी ॥ ४ ॥ १ ॥ ९ ॥ ६० ॥

पिता के वीर्य की मलिन बूँद एवं माँ के रक्त से भगवान ने जीव का यह मिट्टी का शरीर बनाया है॥ १॥ हे मेरे गोविन्द! मेरा कोई वजूद नहीं है और मेरे पास कुछ भी नहीं है। यह शरीर, धन एवं यह आत्मा सब तेरे दिए हुए हैं॥ १॥ रहाउ॥ इस मिट्टी के शरीर में प्राण डाल दिए गए हैं, लेकिन जीव सब झुठलाकर झूठा परपंच करके बैठ जाता है॥ २॥ कई मनुष्यों ने पाँच लाख की सम्पति जोड़ ली है, मृत्यु आने पर उनकी भी शरीर-रूपी गागर टूट जाती है॥ ३॥ कबीर जी कहते हैं-हे अभिमानी जीव! तेरी जीवन की जो बुनियाद रखी गई है, वह एक पलक में ही नाश होने वाली है॥ ४॥ १॥ ९॥ ६०॥

गउड़ी ॥ राम जपउ जीअ ऐसे ऐसे ॥ ध्रू प्रहिलाद जपिओ हरि जैसे ॥ १ ॥ दीन दइआल भरोसे तेरे ॥ सभु परवारु चड़ाइआ बेड़े ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा तिसु भावै ता हुकमु मनावै ॥ इस बेड़े कउ पारि लघावै ॥ २ ॥ गुर परसादि ऐसी बुधि समानी ॥ चूकि गई फिरि आवन जानी ॥ ३ ॥ कहु कबीर भजु सारिगपानी ॥ उरवारि पारि सभ एको दानी ॥ ४ ॥ २ ॥ १० ॥ ६१ ॥

हे मेरी आत्मा ! ऐसे राम का नाम जपो, जैसे ध्रुव एवं भक्त प्रहलाद ने श्री हरि की आराधना की थी॥ १॥ हे दीनदयालु! तेरे भरोसे पर मैंने अपना सारा परिवार ही तेरे नाम रूपी जहाज पर चढ़ा दिया है॥ १॥ रहाउ॥ जब प्रभु को अच्छा लगता है तो वह (इस सारे परिवार से) अपना हुक्म मनवाता है, और इस प्रकार परिवार सहित इस जहाज को विकारों की लहरों से पार कर देता है॥ २॥ गुरु की कृपा से मेरे भीतर ऐसी बुद्धि प्रकट हो गई है कि मेरा जन्म–मरण का चक्र ही मिट गया है॥ ३॥ हे कबीर ! तू सारंगपाणि प्रभु का भजन कर, इस लोक एवं परलोक में सर्वत्र केवल वही दाता है॥ ४॥ २॥ १०॥ ६१॥

गउड़ी ९ ॥ जोनि छाडि जउ जग महि आइओ ॥ लागत पवन खसमु बिसराइओ ॥ १ ॥ जीअरा हरि के गुना गाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गरभ जोनि महि उरध तपु करता ॥ तउ जठर अगनि महि रहता ॥ २ ॥ लख चउरासीह जोनि भ्रमि आइओ ॥ अब के छुटके ठउर न ठाइओ ॥ ३ ॥ कहु कबीर भजु सारिगपानी ॥ आवत दीसै जात न जानी ॥ ४ ॥ १ ॥ ११ ॥ ६२ ॥

माँ का गर्भ छोड़कर जब प्राणी दुनिया में आता है तो (माया रूपी) हवा लगते ही मालिक–प्रभु को विस्मृत कर देता है॥ १॥ हे मेरे मन ! भगवान की महिमा–स्तुति कर॥ १॥ रहाउ॥ (हे मन !) जब तू गर्भ योनि में उल्टा लटका हुआ तपस्या करता था तो तू पेट की अग्नि में रहता था॥ २॥ जीव चौरासी लाख योनियों में भटकता हुआ इस दुनिया में आया है। लेकिन दुनिया में भी खाली घूमते हुए फिर कोई स्थान नहीं मिलता॥ ३॥ हे कबीर ! सारंगपाणि प्रभु का भजन कर, जो न जन्मता दिखता है और न मरता हुआ सुना जाता है॥ ४॥ १॥ ११॥ ६२॥

गउड़ी पूरबी ॥ सुरग बासु न बाछीऐ डरीऐ न नरकि निवासु ॥ होना है सो होई है मनहि न कीजै आस ॥ १ ॥ रमईआ गुन गाईऐ ॥ जा ते पाईऐ परम निधानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ किआ जपु किआ तपु संजमो किआ बरतु किआ इसनानु ॥ जब लगु जुगति न जानीऐ भाउ भगति भगवान ॥ २ ॥ संपै देखि न हरखीऐ बिपति देखि न रोइ ॥ जिउ संपै तिउ बिपति है बिध ने रचिआ सो होइ ॥ ३ ॥ कहि कबीर अब जानिआ संतन रिदै मझारि ॥ सेवक सो सेवा भले जिह घट बसै मुरारि ॥ ४ ॥ १ ॥ १२ ॥ ६३ ॥

(हे जीव !) स्वर्ग में निवास के लिए कामना नहीं करनी चाहिए और न ही नरक में वास करने से डरना चाहिए। जो कुछ होना है, वह निश्चित ही होगा। इसलिए अपने मन में कोई आशा मत रख॥ १॥ (हे जीव !) भगवान की महिमा–स्तुति करते रहना चाहिए, इस प्रकार नाम रूपी सर्वश्रेष्ठ खजाना प्राप्त होता है॥ १॥ रहाउ॥ क्या लाभ जप का, क्या तपस्या का, क्या संयम का, क्या व्रत का एवं क्या लाभ स्नान करने का। जब तक भगवान के साथ प्रेम एवं उसकी भक्ति की युक्ति ही नहीं आती ?॥ २॥ संपति देखकर खुश नहीं होना चाहिए और न ही विपत्ति देखकर रोना चाहिए। जो कुछ भगवान करता है वही होता है, जैसे संपत्ति है वैसे ही विपत्ति है॥ ३॥ कबीर जी कहते हैं–अब यह ज्ञान हुआ है (कि ईश्वर) संतों के हृदय में बसता है, वही सेवक सेवा करते हुए भले लगते हैं, जिनके हृदय में ईश्वर बसता है॥ ४॥ १॥ १२॥ ६३॥

गउड़ी ॥ रे मन तेरो कोइ नही खिंचि लेइ जिनि भारु ॥ बिरख बसेरो पंखि को तैसो इहु संसारु ॥ १ ॥ राम रसु पीआ रे ॥ जिह रस बिसरि गए रस अउर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अउर मुए किआ रोईऐ जउ आपा थिरु न रहाइ ॥ जो उपजै सो बिनसि है दुखु करि रोवै बलाइ ॥ २ ॥ जह की उपजी तह रची पीवत मरदन लाग ॥ कहि कबीर चिति चेतिआ राम सिमरि बैराग ॥ ३ ॥ २ ॥ १३ ॥ ६४ ॥

हे मन ! अंतकाल तेरा कोई सहायक नहीं बनेगा, चाहे (दूसरे रिश्तेदारों का) भार खींचकर अपने सिर पर ले ले। जैसे पक्षियों का बसेरा वृक्षों पर होता है, वैसे ही इस दुनिया का निवास है॥ १॥ हे भाई ! मैंने राम रस का पान किया है जिस रस से मुझे दूसरे रस (स्वाद) भूल गए हैं॥ १॥ रहाउ॥ किसी दूसरे की मृत्यु पर विलाप करने का क्या अभिप्राय, जब हमने आप ही सदा निवास नहीं करना। जो–जो इन्सान जन्म लेता है, उसकी मृत्यु हो जाती है, फिर तो इस दुःख कारण मेरे भूत–प्रेत ही रोएँ॥ २॥ जब इन्सान महापुरुषों की संगति में लगता है और नाम–अमृत पान करता है तो उसकी आत्मा उसमें लीन हो जाती है, जिससे वह उत्पन्न हुई थी। कबीर जी कहते हैं–मैंने अपने हृदय में राम को स्मरण किया है और उसे ही प्रेमपूर्वक याद करता हूँ॥ ३॥ २॥ १३॥ ६४॥

रागु गउड़ी ॥ पंथु निहारै कामनी लोचन भरी ले उसासा ॥ उर न भीजै पगु ना खिसै हरि दरसन की आसा ॥ १ ॥ उडहु न कागा कारे ॥ बेगि मिलीजै अपुने राम पिआरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहि कबीर जीवन पद कारनि हरि की भगति करीजै ॥ एकु आधारु नामु नाराइन रसना रामु रवीजै ॥ २ ॥ १ ॥ १४ ॥ ६५ ॥

आहें भरती और अश्रुओं से भरी आँखों से जीव–स्त्री पति–प्रभु का मार्ग देखती है। उसका हृदय प्रसन्न नहीं और भगवान के दर्शनों की आशा में वह अपने चरण पीछे नहीं हटाती॥ १॥ हे काले कौए ! उड़ जा, चूंकि जो मैं अपने प्रियतम प्रभु को शीघ्र मिल जाऊँ॥ १॥ रहाउ॥ कबीर जी कहते हैं– जीवन पदवी प्राप्त करने के लिए भगवान की भक्ति करनी चाहिए। नारायण के नाम का ही एकमात्र सहारा होना चाहिए और जिह्वा से राम को ही स्मरण करना चाहिए॥ २॥ १॥ १४॥ ६५॥

रागु गउड़ी ११ ॥ आस पास घन तुरसी का बिरवा माझ बना रसि गाऊं रे ॥ उआ का सरूपु देखि मोही गुआरनि मो कउ छोडि न आउ न जाहू रे ॥ १ ॥ तोहि चरन मनु लागो सारिंगधर ॥ सो मिलै जो बडभागो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिंद्राबन मन हरन मनोहर क्रिसन चरावत गाऊ रे ॥ जा का ठाकुरु तुही सारिंगधर मोहि कबीरा नाऊ रे ॥ २ ॥ २ ॥ १५ ॥ ६६ ॥

जिस मुरली मनोहर के आसपास तुलसी के सघन पौधे थे तथा जो तुलसी के वन में प्रेमपूर्वक गाएँ चराता गा रहा था, उसका दर्शन करके गोकुल की ग्वालिनी मुग्ध हो गई और कहने लगी, हे प्रियवर ! मुझे छोड़कर किसी अन्य स्थान पर मत जाना॥ १॥ हे सारिंगधर प्रभु ! मेरा मन तेरे चरणों से लगा हुआ है, लेकिन तुझे वही मिलता है जो भाग्यशाली होता है॥ १॥ रहाउ॥ वृंदावन मन को लुभाने वाला है, जहाँ मनोहर कृष्ण गौएँ चराता था। हे सारिंगधर ! मेरा नाम कबीर है, जिसका ठाकुर तू है॥ २॥ २॥ १५॥ ६६॥

गउड़ी पूरबी १२ ॥ बिपल बसत्र केते है पहिरे किआ बन मधे बासा ॥ कहा भइआ नर देवा धोखे किआ जलि बोरिओ गिआता ॥ १ ॥ जीअरे जाहिगा मै जानां ॥ अबिगत समझु इआना ॥ जत जत देखउ बहुरि न पेखउ संगि माइआ लपटाना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गिआनी धिआनी बहु उपदेसी इहु जगु सगलो धंधा ॥ कहि कबीर इक राम नाम बिनु इआ जगु माइआ अंधा ॥ २ ॥ १ ॥ १६ ॥ ६७ ॥

कुछ व्यक्ति अनेक प्रकार के वस्त्र पहनते हैं। जंगल में बसेरा करने का क्या लाभ? यदि धूप इत्यादि जलाकर देवताओं की पूजा कर ली तो क्या लाभ हुआ? और यदि अपने शरीर को (तीर्थों के) जल में डुबा लिया तो क्या लाभ हुआ?॥ १॥ हे मन! मैं जानता हूँ कि तुम (इस दुनिया से) चले जाओगे। हे मूर्ख प्राणी! एक परमेश्वर को समझ। जो कुछ भी प्राणी अब देखता है, वह उसे दोबारा नहीं देखेगा परन्तु तो भी वह माया से लिपटा हुआ है॥ १॥ रहाउ॥ कोई ज्ञान—चर्चा कर रहा है, कोई मनन कर रहा है, कोई दूसरों को उपदेश दे रहा है, लेकिन यह समूचा जगत् माया का जंजाल ही है। कबीर जी कहते हैं—एक राम का नाम—सिमरन किए बिना यह दुनिया माया ने ज्ञानहीन बनाई हुई है॥ २॥ १॥ १६॥ ६७॥

गउड़ी १२ ॥ मन रे छाडहु भरमु प्रगट होइ नाचहु इआ माइआ के डांडे ॥ सूरु कि सनमुख रन ते डरपै सती कि सांचै भांडे ॥ १ ॥ डगमग छाडि रे मन बउरा ॥ अब तउ जरे मरे सिधि पाईऐ लीनो हाथि संधउरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काम क्रोध माइआ के लीने इआ बिधि जगतु बिगूता ॥ कहि कबीर राजा राम न छोडउ सगल ऊच ते ऊचा ॥ २ ॥ २ ॥ १७ ॥ ६८॥

हे मेरे मन! भ्रम छोड़ दे और प्रत्यक्ष तौर पर नृत्य कर। चूंकि यह सब माया के झगड़े हैं। वह कैसा शूरवीर है जो आमने—सामने लड़ाई से डरता है और वह नारी सती नहीं हो सकती जो घर के बर्तन एकत्रित करने लग जाती है?॥ १॥ हे मूर्ख मन! डगमगाना त्याग दे। जिस नारी ने हाथ में सिंदूर लगाया हुआ नारियल ले लिया उसे तो अब जल कर ही सिद्धि प्राप्त होगी॥ १॥ रहाउ॥ सारी दुनिया काम, क्रोध एवं माया में लीन है। इस तरह यह दुनिया नाश हो रही है। कबीर जी कहते हैं— तू राजा राम को मत त्याग, जो सर्वोपरि है॥ २॥ २॥ १७॥ ६८॥

गउड़ी १३ ॥ फुरमानु तेरा सिरै ऊपरि फिरि न करत बीचार ॥ तुही दरीआ तुही करीआ तुझै ते निसतार ॥ १ ॥ बंदे बंदगी इकतीआर ॥ साहिबु रोसु धरउ कि पिआरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु तेरा आधारु मेरा जिउ फूलु जई है नारि ॥ कहि कबीर गुलामु घर का जीआइ भावै मारि ॥ २ ॥ १८ ॥ ६९ ॥

हे भगवान! तेरा हुक्म मुझे मंजूर है और पुनः इस पर विचार नहीं करता। हे प्रभु! तू ही दरिया है और तू ही मल्लाह है। तुझ से ही मेरा कल्याण है॥ १॥ हे मनुष्य! प्रभु की भक्ति स्वीकार कर, चाहे तेरा मालिक तुझ पर क्रोधित होवे अथवा तुझ से प्रेम करे॥१॥ रहाउ॥ (हे भगवान!) तेरा नाम ही मेरा ऐसे आधार है, जैसे फूल जल में खिला रहता है। कबीर जी कहते हैं—मैं तेरे घर का गुलाम हूँ, चाहे जीवित रखो, चाहे जीवन लीला समाप्त कर दो॥ २॥ १८॥ ६९॥

गउड़ी ५ ॥ लख चउरासीह जीअ जोनि महि भ्रमत नंदु बहु थाको रे ॥ भगति हेति अवतारु लीओ है भागु बडो बपुरा को रे ॥ १ ॥ तुम्ह जु कहत हउ नंद को नंदनु नंद सु नंदनु का को रे ॥ धरनि अकासु दसो दिस नाही तब इहु नंदु कहा थो रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संकटि नही परै जोनि नही आवै नामु निरंजन जा को रे ॥ कबीर को सुआमी ऐसो ठाकुरु जा कै माई न बापो रे ॥ २ ॥ १९ ॥ ७० ॥

हे जिज्ञासु! चौरासी लाख जीवों की योनियों में भटक—भटक कर (श्रीकृष्ण का पालनहार पिता) नन्द बहुत थक गया था। उसकी भक्ति पर खुश होकर श्रीकृष्ण ने उसके घर अवतार धारण किया। तब उस बेचारे नन्द का भाग्य उदय हुआ॥ १॥ हे जिज्ञासु! तुम कहते हो कि श्री कृष्ण नन्द का पुत्र था, वह नन्द स्वयं किसका पुत्र था? जब यह धरती, आकाश एवं दसों दिशाएँ नहीं होते थे, तब यह नन्द कहाँ था?॥ १॥ रहाउ॥ हे जिज्ञासु! सत्य यही है कि जिस भगवान का नाम निरंजन है,

वह संकट में नहीं पड़ता और न ही कोई योनि धारण करता है। कबीर का स्वामी ऐसा ठाकुर है, जिसकी न कोई माता है और न ही पिता है॥ २॥ १६॥ ७०॥

गउड़ी ॥ निंदउ निंदउ मो कउ लोगु निंदउ ॥ निंदा जन कउ खरी पिआरी ॥ निंदा बापु निंदा महतारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निंदा होइ त बैकुंठि जाईऐ ॥ नामु पदारथु मनहि बसाईऐ ॥ रिदै सुध जउ निंदा होइ ॥ हमरे कपरे निंदकु धोइ ॥ १ ॥ निंदा करै सु हमरा मीतु ॥ निंदक माहि हमारा चीतु ॥ निंदकु सो जो निंदा होरै ॥ हमरा जीवनु निंदकु लोरै ॥ २ ॥ निंदा हमरी प्रेम पिआरु ॥ निंदा हमरा करै उधारु ॥ जन कबीर कउ निंदा सारु ॥ निंदकु डूबा हम उतरे पारि ॥ ३ ॥ २० ॥ ७१ ॥

हे निन्दा करने वाले लोगो ! तुम लोग निन्दक बनकर जितनी चाहे मेरी निन्दा करो। मुझ प्रभु के सेवक को निन्दा बड़ी मीठी एवं प्यारी लगती है। निन्दा मेरा पिता है और निन्दा ही मेरी माता है॥ १॥ रहाउ॥ यदि लोग मेरी निन्दा करें तो ही मैं स्वर्ग जा सकता हूँ और प्रभु का नाम रूपी धन मेरे मन में बस सकता है। यदि ह्वदय शुद्ध होते हुए हमारी निन्दा हो तो निंदक हमारे कपड़े धोता है अर्थात् हमें पवित्र करने में सहयोग देता है॥ १॥ जो मनुष्य हमारी निन्दा करता है, वह हमारा मित्र है, क्योंकि हमारी वृत्ति अपने निंदक पर रहती है। हमारा निंदक मनुष्य वह है जो हमारी बुराइयों को नष्ट होने से विराम लगाता है अपितु निंदक से तो हमारा जीवन भला बनता है॥ २॥ मैं उससे प्रेम एवं स्नेह करता हूँ, जो मेरी निन्दा करता है। निन्दा हमारा उद्धार करती है। दास कबीर के लिए तो उसके अवगुणों का नाश होना सर्वोत्तम बात है। परन्तु निंदक (दूसरों की निन्दा करता स्वयं अवगुणों में) डूब जाता है और हम (अवगुणों से सचेत होकर) बच जाते हैं॥ ३॥ २०॥ ७१॥

राजा राम तूं ऐसा निरभउ तरन तारन राम राइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब हम होते तब तुम नाही अब तुम हहु हम नाही ॥ अब हम तुम एक भए हहि एकै देखत मनु पतीआही ॥ १ ॥ जब बुधि होती तब बलु कैसा अब बुधि बलु न खटाई ॥ कहि कबीर बुधि हरि लई मेरी बुधि बदली सिधि पाई ॥ २ ॥ २१ ॥ ७२ ॥

हे मेरे राजा राम ! तू बहुत ही निडर है। हे स्वामी राम ! जीवों को भवसागर से पार करवाने के लिए तू एक नैया है॥ १॥ रहाउ॥ हे प्रभु ! (तेरा कुछ अद्‌भुत ही स्वभाव है) जब मैं अभिमानी था तुम मुझ में नहीं थे। अब जब तुम मुझ में हो, मैं अभिमानी नहीं हूँ। हे प्रभु ! अब तुम और हम एकरूप हो गए हैं, अब तुम्हें देखकर हमारा मन कृतार्थ हो गया है॥ १॥ (हे स्वामी !) जब तक हम जीवों में अपनी बुद्धि (का अभिमान) होता है, तब तक हमारे भीतर कोई आत्मिक बल नहीं होता, लेकिन अब (जब तुम स्वयं हमारे भीतर प्रकट हुए हो) तब हमारी बुद्धि एवं बल का हमें अभिमान नहीं रहा। कबीर जी कहते हैं – (हे राम !) तुमने मेरी (अहंकारग्रस्त) बुद्धि छीन ली है, अब वह बदल गई है और सिद्धि प्राप्त हो गई है॥ २॥ २१॥ ७२॥

गउड़ी ॥ खट नेम करि कोठड़ी बांधी बसतु अनूपु बीच पाई ॥ कुंजी कुलफु प्रान करि राखे करते बार न लाई ॥ १ ॥ अब मन जागत रहु रे भाई ॥ गाफलु होइ कै जनमु गवाइओ चोरु मुसै घरु जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंच पहरूआ दर महि रहते तिन का नही पतीआरा ॥ चेति सुचेत चित होइ रहु तउ लै परगासु उजारा ॥ २ ॥ नउ घर देखि जु कामनि भूली बसतु अनूप न पाई ॥ कहतु कबीर नवै घर मूसे दसवैं ततु समाई ॥ ३ ॥ २२ ॥ ७३ ॥

भगवान ने षट्चक्र बनाकर (मानव शरीर–रूपी) छोटा–सा घर बना दिया है और इसमें उसने (अपनी ज्योति–रूपी) अनुपम वस्तु रख दी है। ताला और चाबी की भाँति प्राणों को उसका रक्षक

बनाया गया है। इस खेल को करने में परमात्मा ने कोई देरी नहीं की॥ १॥ हे भाई! अब तू अपनी आत्मा को जाग्रत रख। क्योंकि लापरवाह होकर तूने अपना अनमोल मानव–जीवन गंवा दिया है। तेरा घर विकार रूपी चोर लूटते जा रहे हैं॥ १॥ रहाउ॥ पाँच प्रहरी इस घर के द्वार पर पहरेदार खड़े हैं, परन्तु उन पर कोई भरोसा नहीं किया जा सकता। जब तक तुम अपने सुचेत मन में जागते हो, तुझे (प्रभु का) प्रकाश एवं उजाला प्राप्त होगा॥ २॥ जो जीव–स्त्री शरीर के नौ घरों को देखकर भटक जाती है, उसे ईश्वर के नाम की अनूप वस्तु प्राप्त नहीं होती। कबीर जी कहते हैं–जब ये नौ ही घर वश में आ जाते हैं तो परमात्मा की ज्योति दसवें घर में समा जाती है॥ ३॥ २२॥ ७३॥

गउड़ी ॥ माई मोहि अवरु न जानिओ आनानां ॥ सिव सनकादि जासु गुन गावहि तासु बसहि मोरे प्रानानां ॥ रहाउ ॥ हिरदे प्रगासु गिआन गुर गंमित गगन मंडल महि धिआनानां ॥ बिखै रोग भै बंधन भागे मन निज घरि सुखु जानाना ॥ १ ॥ एक सुमति रति जानि मानि प्रभ दूसर मनहि न आनाना ॥ चंदन बासु भए मन बासन तिआगि घटिओ अभिमानाना ॥ २ ॥ जो जन गाइ धिआइ जसु ठाकुर तासु प्रभू है थानानां ॥ तिह बड भाग बसिओ मनि जा कै करम प्रधान मथानाना ॥ ३ ॥ काटि सकति सिव सहजु प्रगासिओ एकै एक समानाना ॥ कहि कबीर गुर भेटि महा सुख भ्रमत रहे मनु मानानां ॥ ४ ॥ २३ ॥ ७४ ॥

हे मेरी माता! मैं भगवान के अलावा किसी दूसरे को नहीं जानता, क्योंकि मेरे प्राण तो उस (भगवान) में बस रहे हैं, जिसका यश एवं महिमा शिव और सनकादिक भी गाते हैं॥ रहाउ॥ गुरु को मिलने से ज्ञान का प्रकाश मेरे हृदय में प्रवेश कर गया है और मेरा ध्यान गगन मण्डल (दसम द्वार) में स्थिर हो गया है। पाप का रोग, भय एवं दुनिया के बन्धन दौड़ गए हैं और मेरी आत्मा ने अपने आत्मस्वरूप में ही सुख अनुभव कर लिया है॥ १॥ मेरी सुमति का प्रेम एक ईश्वर में ही बन गया है। एक ईश्वर को (सहारा) समझकर और उसमें विश्वस्त होकर किसी दूसरे को अब मन में नहीं लाता। मन की तृष्णाओं को त्यागकर चन्दन की सुगन्धि पैदा हो गई है और अहंकार मिट गया है॥ २॥ जो व्यक्ति ठाकुर जी का यश गाता है, उसका ध्यान करता है, उसके हृदय में ईश्वर का निवास हो जाता है। जिसके हृदय में ईश्वर बस गया, उसकी किस्मत समझो, उसके माथे पर उत्तम भाग्य प्रकट हो गया॥ ३॥ शक्ति का प्रभाव दूर करके प्रभु–ज्योति का प्रकाश हो गया तो सदैव पवित्र एक ईश्वर में मन लीन रहता है। कबीर जी कहते हैं–गुरु को मिलकर मुझे महासुख प्राप्त हो गया है। मेरा मन दुविधा में भटकने से हटकर प्रसन्न हो गया है॥ ४॥ २३॥ ७४॥

रागु गउड़ी पूरबी बावन अखरी कबीर जीउ की १ओं सिति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

बावन अछर लोक त्रै सभु कछु इन ही माहि ॥ ए अखर खिरि जाहिगे ओइ अखर इन महि नाहि ॥ १ ॥

तीनों लोकों (आकाश, पाताल एवं पृथ्वी) से लेकर सब कुछ जो पदार्थ हैं, वह इन बावन अक्षरों में ही हैं। ये अक्षर नाश हो जाएँगे। लेकिन वह अनश्वर परमात्मा इन अक्षरों द्वारा वर्णन नहीं किया जा सकता॥ १॥

जहा बोलि तह अछर आवा ॥ जह अबोल तह मनु न रहावा ॥ बोल अबोल मधि है सोई ॥ जस ओहु है तस लखै न कोई ॥ २ ॥

जहाँ बोल हैं, वहाँ अक्षर हैं। जहाँ वचन (बोल) नहीं, वहाँ मन स्थिर नहीं रहता। वचन एवं चुप (मौन) दोनों में वह प्रभु बसता है। जैसा प्रभु है, वैसा उसे कोई समझ नहीं सकता॥ २॥

अलह लहउ तउ किआ कहउ कहउ त को उपकार ॥ बटक बीज महि रवि रहिओ जा को तीनि लोक बिसथार ॥ ३ ॥

अ—यदि मैं अल्लाह को प्राप्त कर भी लूँ तो मैं उसका सही वर्णन नहीं कर सकता। उसका यशोगान करने से मैं दूसरों का क्या भला कर सकता हूँ ? जिस परमेश्वर का प्रसार तीन लोकों में मौजूद है, वह (ऐसे व्याप्त है जैसे) बरगद के वृक्ष के बीज में व्यापक हो रहा है॥ ३॥

अलह लहंता भेद छै कछु कछु पाइओ भेद ॥ उलटि भेद मनु बेधिओ पाइओ अभंग अछेद ॥ ४ ॥

अ—जो अल्लाह को समझता है और उसके रहस्य को अल्पमात्र भी समझता है, उसके लिए जुदाई लुप्त हो जाती है। जब प्राणी दुनिया की ओर से पलट जाता है, उसका हृदय प्रभु के रहस्य से बिंध जाता है और वह अमर एवं अबोध प्रभु को पा लेता है॥ ४॥

तुरक तरीकति जानीऐ हिंदू बेद पुरान ॥ मन समझावन कारने कछूअक पड़ीऐ गिआन ॥ ५ ॥

मुसलमान तरीकत द्वारा अल्लाह को समझता है और हिन्दु वेदों एवं पुराणों द्वारा भगवान को समझता है। अपने मन को सन्मार्ग पर लगाने के लिए मनुष्य को कुछ ज्ञान एवं विद्या का अध्ययन करना चाहिए॥ ५॥

ओअंकार आदि मै जाना ॥ लिखि अरु मेटै ताहि न माना ॥ ओअंकार लखै जउ कोई ॥ सोई लखि मेटणा न होई ॥ ६ ॥

ओ—जो ओंकार सबकी रचना करने वाला है, मैं केवल उस प्रभु को जानता हूँ। मैं उस पर भरोसा नहीं रखता, जिसे प्रभु लिखता (रचना करता) और मिटा देता है। यदि कोई एक ईश्वर के दर्शन कर ले तो दर्शन करने से उसका नाश नहीं होता॥ ६॥

कका किरणि कमल महि पावा ॥ ससि बिगास संपट नही आवा ॥ अरु जे तहा कुसम रसु पावा ॥ अकह कहा कहि का समझावा ॥ ७ ॥

क—जब ज्ञान की किरणें हृदय—कमल में प्रवेश कर जाती हैं तो (माया रूपी) चन्द्रमा की चांदनी हृदय कमल में प्रवेश नहीं करती और यदि मनुष्य वहाँ आत्मिक पुष्प के रस को प्राप्त कर ले तो वह उस अकथनीय स्वाद का कथन नहीं कर सकेगा। वर्णन करने से वह किसे इसका बोध करवा सकता है ?॥ ७॥

खखा इहै खोड़ि मन आवा ॥ खोड़े छाडि न दह दिस धावा ॥ खसमहि जाणि खिमा करि रहै ॥ तउ होइ निखिअउ अखै पदु लहै ॥ ८ ॥

ख—यह आत्मा प्रभु की गुफा में प्रवेश कर गई है। गुफा को त्याग कर यह आत्मा अब दसों दिशाओं में नहीं भटकती। जब मालिक प्रभु को अनुभव करके मनुष्य दया में विचरता है तो वह अमर हो जाता है और अमर पदवी प्राप्त कर लेता है॥ ८॥

गगा गुर के बचन पछाना ॥ दूजी बात न धरई काना ॥ रहै बिहंगम कतहि न जाई ॥ अगह गहै गहि गगन रहाई ॥ ९ ॥

ग—जो मनुष्य गुरु के वचन को पहचानता है, वह दूसरी बातों की तरफ अपने कान ही नहीं करता। वह पक्षी की भाँति सदैव निर्लिप्त रहता है, कभी भी नहीं भटकता। जिस ईश्वर को संसार की मोहिनी प्रभावित नहीं कर सकती, उसे वह अपने हृदय में बसा लेता है, हृदय में बसाकर अपनी वृत्ति को प्रभु—चरणों में टिकाए रखता है॥ ९॥

घघा घटि घटि निमसै सोई ॥ घट फूटे घटि कबहि न होई ॥ ता घट माहि घाट जउ पावा ॥ सो घटु छाडि अवघट कत धावा ॥ १० ॥

घ–वह प्रभु कण–कण (हरेक हृदय) में वास करता है। जब शरीर रूपी घड़ा टूट जाता है तो वह कभी कम नहीं होता। जब उस हृदय में मनुष्य प्रभु–मार्ग प्राप्त कर लेता है तो उस मार्ग को त्याग कर वह दूसरे विषम मार्ग की तरफ क्यों जाए ?॥ १०॥

ङंङा निग्रहि सनेहु करि निरवारो संदेह ॥ नाही देखि न भाजीऐ परम सिआनप एह ॥ ११ ॥

ङ–हे भाई ! अपनी इन्द्रियों पर अंकुश लगा, अपने प्रभु से प्रेम कर और अपनी दुविधा दूर कर दे। चाहे तुझे अपने प्रभु का मार्ग दिखाई नहीं देता तो (इस काम से) भागना नहीं चाहिए। यही बड़ी बुद्धिमानी है॥ ११॥

चचा रचित चित्र है भारी ॥ तजि चित्रै चेतहु चितकारी ॥ चित्र बचित्र इहै अवझेरा ॥ तजि चित्रै चितु राखि चितेरा ॥ १२ ॥

च–ईश्वर द्वारा रचित यह दुनिया एक बहुत बड़ा चित्र है। हे प्राणी ! चित्रकारी (दुनिया) को त्याग कर चित्रकार (प्रभु) को स्मरण कर। यह विचित्र चित्र (दुनिया) ही विवादों का मूल है। चित्र छोड़कर चित्रकार (प्रभु) में अपने हृदय को पिरोकर रख॥ १२॥

छछा इहै छत्रपति पासा ॥ छकि कि न रहहु छाडि कि न आसा ॥ रे मन मै तउ छिन छिन समझावा ॥ ताहि छाडि कत आपु बधावा ॥ १३ ॥

छ–छत्रपति प्रभु यहाँ तेरे साथ ही है। हे मन ! तू क्यों और किसके लिए तृष्णाएँ त्यागकर प्रसन्न नहीं रहता ? हे मन ! क्षण–क्षण मैं तुझे उपदेश देता हूँ। उसे (प्रभु को) त्याग कर तू क्यों अपने आपको माया के विकारों में फँसाते हो ?॥ १३॥

जजा जउ तन जीवत जरावै ॥ जोबन जारि जुगति सो पावै ॥ अस जरि पर जरि जरि जब रहै ॥ तब जाइ जोति उजारउ लहै ॥ १४ ॥

ज–जब (कोई प्राणी) माया में रहता हुआ ही शरीर (की लालसाएँ) जला लेता है, वह मनुष्य यौवन जलाकर सन्मार्ग पा लेता है। जब मनुष्य अपने धन के अहंकार को एवं पराई दौलत को जलाकर संयम में रहता है, तो स्वोच्च अवस्था में पहुँचकर ईश्वर की ज्योति का उजाला प्राप्त करता है॥ १४॥

झझा उरझि सुरझि नही जाना ॥ रहिओ झझकि नाही परवाना ॥ कत झखि झखि अउरन समझावा ॥ झगरु कीए झगरउ ही पावा ॥ १५ ॥

झ–हे जीव ! तू दुनिया (के मोह) में उलझ गया है और अपने आपको इससे मुक्त करवाना नहीं जानता। तुम संकोच कर रहे हो और ईश्वर को स्वीकृत नहीं हुए। दूसरों को संतुष्ट करवाने के लिए तुम क्यों वाद–विवाद करते हो ? क्योंकि झगड़ा करने से झगड़ा ही तुझे मिलेगा॥ १५॥

ञंञा निकटि जु घट रहिओ दूरि कहा तजि जाइ ॥ जा कारणि जगु ढूढिअउ नेरउ पाइअउ ताहि ॥ १६ ॥

ञ–वह परमात्मा तेरे निकट तेरे हृदय में बसता है, उसे छोड़कर तू दूर कहाँ जाता है ? जिस प्रभु के लिए मैंने सारा जगत् खोजा है, उसे मैंने निकट ही प्राप्त कर लिया है॥ १६॥

टटा बिकट घाट घट माही ॥ खोलि कपाट महलि कि न जाही ॥ देखि अटल टलि कतहि न जावा ॥ रहै लपटि घट परचउ पावा ॥ १७ ॥

ट—ईश्वर का कठिन मार्ग मनुष्य के हृदय में ही है। कपाट खोलकर तू क्यों उसके महल में नहीं पहुँचता ? सदा स्थिर प्रभु को देखकर तुम डगमगा कर कहीं नहीं जाओगे। तुम प्रभु से लिपटे रहोगे और तेरा हृदय प्रसन्न होगा॥ १७॥

ठठा इहै दूरि ठग नीरा ॥ नीठि नीठि मनु कीआ धीरा ॥ जिनि ठगि ठगिआ सगल जगु खावा ॥ सो ठगु ठगिआ ठउर मनु आवा ॥ १८ ॥

ठ—(हे जीव !) इस माया की मृगतृष्णा के जल से अपने आपको दूर रख। बड़ी मुश्किल से मैंने अपने मन को धैर्यवान किया है। मैंने उस छलिया (प्रभु) को छल लिया है, जिस छलिए ने सारे जगत् को छल कर निगल लिया है। मेरा हृदय अब सुख में है॥ १८॥

डडा डर उपजे डरु जाई ॥ ता डर महि डरु रहिआ समाई ॥ जउ डर डरै त फिरि डरु लागै ॥ निडर हूआ डरु उर होइ भागै ॥ १९ ॥

ड—जब प्रभु का डर उत्पन्न हो जाता है तो दूसरे डर निवृत्त हो जाते हैं। उस डर में दूसरे डर लीन रहते हैं। जब मनुष्य प्रभु के डर को त्याग देता है तो उसे दूसरे डर आकर लिपट जाते हैं। यदि वह निडर हो जाए तो उसके मन के डर दौड़ जाते हैं॥ १९॥

ढढा ढिग ढूढहि कत आना ॥ ढूढत ही ढहि गए पराना ॥ चड़ि सुमेरि ढूढि जब आवा ॥ जिह गड़ु गड़िओ सु गड़ महि पावा ॥ २० ॥

ढ—ईश्वर तो तेरे समीप ही है, तू उसे कहाँ ढूँढता है ? बाहर ढूँढते—ढूँढते तेरे प्राण भी थक गए हैं। सुमेर पर्वत पर भी चढ़कर और ईश्वर को ढूँढते—ढूँढते जब मनुष्य अपने देहि में आता है (अर्थात् अपने भीतर देखता है), तो वह ईश्वर इस (देहि रूपी) किले में ही मिल जाता है, जिसने यह देहि—रूपी किला रचा है॥ २०॥

णाणा रणि रूतउ नर नेही करै ॥ ना निवै ना फुनि संचरै ॥ धंनि जनमु ताही को गणै ॥ मारै एकहि तजि जाइ घणै ॥ २१ ॥

ण—रणभूमि में जूझता हुआ जो व्यक्ति विकारों को वश में करने की सामर्थ्य हासिल कर लेता है, जो न झुकता है और न ही विकारों से मेल करता है, संसार उसी व्यक्ति को तकदीर वाला मानता है, क्योंकि वह मनुष्य एक मन को मारता है और इन अधिकतर विकारों को त्याग देता है॥ २१॥

तता अतर तरिओ नह जाई ॥ तन त्रिभवण महि रहिओ समाई ॥ जउ त्रिभवण तन माहि समावा ॥ तउ ततहि तत मिलिआ सचु पावा ॥ २२ ॥

त—यह नश्वर दुनिया एक ऐसा सागर है, जिसे पार करना विषम है, जिसमें से पार हुआ नहीं जा सकता (क्योंकि) नेत्र, कान, नाक इत्यादि ज्ञानेन्द्रियाँ दुनिया के रसों में डूबे रहते हैं, परन्तु जब दुनिया के रस देहि के भीतर ही नाश हो जाते हैं तब (प्राणी की) आत्मा परम ज्योति में लीन हो जाती है, तब सत्यस्वरूप परमात्मा मिल जाता है॥ २२॥

थथा अथाह थाह नही पावा ॥ ओहु अथाह इहु थिरु न रहावा ॥ थोड़ै थलि थानक आरंभै ॥ बिनु ही थाभह मंदिरु थंभै ॥ २३ ॥

थ—परमेश्वर अथाह है। उसकी गहराई जानी नहीं जा सकती। प्रभु अनन्त है परन्तु यह शरीर स्थिर नहीं रहता (अर्थात् मिट्टी हो जाता है) थोड़ी—सी भूमि पर मनुष्य नगर का निर्माण प्रारम्भ कर देता है। स्तम्भों के बिना वह महल को ठहराना चाहता है॥ २३॥

ददा देखि जु बिनसनहारा ॥ जस अदेखि तस राखि बिचारा ॥ दसवै दुआरि कुंची जब दीजै ॥ तउ दइआल को दरसनु कीजै ॥ २४ ॥

द—जो यह जगत् दिखाई दे रहा है, यह समूचा नाशवान है, (हे भाई !) तू सदा ईश्वर में वृत्ति लगा, जो (इन नेत्रों से) दिखाई नहीं देता है। लेकिन जब दसम द्वार में ज्ञान की कुंजी लगाई जाती है तो दयालु ईश्वर के दर्शन किए जा सकते हैं॥ २४॥

धधा अरधहि उरध निबेरा ॥ अरधहि उरधह मंझि बसेरा ॥ अरधह छाडि उरध जउ आवा ॥ तउ अरधहि उरध मिलिआ सुख पावा ॥ २५ ॥

ध—यदि मनुष्य निम्न मण्डल से उच्च मण्डल को उड़ान भर ले तो सारी बात समाप्त हो जाती है। धरती एवं गगन में ईश्वर का बसेरा है। जब धरती को त्याग आत्मा गगन में जाती है तो आत्मा एवं परमात्मा मिल जाते हैं और सुख प्राप्त होता है॥ २५॥

नंना निसि दिनु निरखत जाई ॥ निरखत नैन रहे रतवाई ॥ निरखत निरखत जब जाइ पावा ॥ तब ले निरखहि निरख मिलावा ॥ २६ ॥

न—प्रभु को देखते प्रतीक्षा में मेरी रात्रि एवं दिन गुजरते हैं। इस तरह देखने से (प्रतीक्षा में) मेरे नेत्र रक्त समान लाल हो गए हैं। दर्शन की अभिलाषा करते—करते जब अंततः दर्शन होता है तो वह इष्ट—प्रभु दर्शन के अभिलाषी अपने भक्त को अपने साथ मिला लेता है॥ २६॥

पपा अपर पारु नही पावा ॥ परम जोति सिउ परचउ लावा ॥ पांचउ इंद्री निग्रह करई ॥ पापु पुंनु दोऊ निरवरई ॥ २७ ॥

प—परमात्मा अपार है और उसका पार जाना नहीं जा सकता। मैंने परम ज्योति (प्रभु) से प्रेम लगा लिया है। जो कोई मनुष्य अपनी पाँचों—ज्ञानेन्द्रियों को वश में कर लेता है, वह पाप एवं पुण्य दोनों से मुक्ति पा लेता है॥ २७॥

फफा बिनु फूलह फलु होई ॥ ता फल फंक लखै जउ कोई ॥ दूणि न परई फंक बिचारै ॥ ता फल फंक सभै तन फारै ॥ २८ ॥

फ—फूल के बिना ही फल उत्पन्न हुआ है। यदि कोई मनुष्य उस फल की फांक को देख ले और उस फांक का चिन्तन करता है, वह (जन्म—मरण) आवागमन में नहीं पड़ता। फल की वह फांक समस्त शरीरों को फाड़ देती है॥ २८॥

बबा बिंदहि बिंद मिलावा ॥ बिंदहि बिंदि न बिछुरन पावा ॥ बंदउ होइ बंदगी गहै ॥ बंदक होइ बंध सुधि लहै ॥ २९ ॥

ब—जब बूँद से बूँद मिल जाती है तो यह बूँदें पुनः अलग नहीं होतीं। प्रभु का सेवक बनकर जो मनुष्य प्रेमपूर्वक प्रभु—भक्ति करता है, वह (प्रभु के द्वार का) स्तुति करने वाला (माया—मोह के) बन्धनों का रहस्य पा लेता है॥ २९॥

भभा भेदहि भेद मिलावा ॥ अब भउ भानि भरोसउ आवा ॥ जो बाहरि सो भीतरि जानिआ ॥ भइआ भेदु भूपति पहिचानिआ ॥ ३० ॥

भ—दुविधा को भेदने (दूर करने) से मनुष्य का प्रभु से मिलन हो जाता है। भय को नाश करके अब मेरी ईश्वर में श्रद्धा बन गई है। जिसे मैं अपने आप से बाहर ख्याल करता था, उसे अब मैं अपने भीतर समझता हूँ। जब मुझे इस भेद का ज्ञान हुआ तो मैंने जगत् के मालिक को पहचान लिया॥ ३०॥

ममा मूल गहिआ मनु मानै ॥ मरमी होइ सु मन कउ जानै ॥ मत कोई मन मिलता बिलमावै ॥ मगन भइआ ते सो सचु पावै ॥ ३१ ॥

म—यदि सृष्टि के मूल परमात्मा को अपने मन में बसा लिया जाए तो मन कुमार्गगामी होने से बच जाता है। जो जीव यह रहस्य पा लेता है, वह मन को समझ लेता है। (इसलिए) कोई भी मनुष्य अपनी आत्मा को प्रभु के साथ सम्मिलित करने में देरी न करे। जो मनुष्य सत्यस्वरूप परमात्मा को पा लेते हैं, वे प्रसन्नता में भीग जाते हैं॥ ३१॥

ममा मन सिउ काजु है मन साधे सिधि होइ ॥ मन ही मन सिउ कहै कबीरा मन सा मिलिआ न कोइ ॥ ३२ ॥

जीवात्मा का काम अपने मन के साथ है। जो मन को वश में करता है, वह मनोरथ की सफलता पा लेता है। कबीर जी कहते हैं—मेरा आदान—प्रदान केवल अपने मन से है। मुझे मन जैसा दूसरा कोई नहीं मिला॥ ३२॥

इहु मनु सकती इहु मनु सीउ ॥ इहु मनु पंच तत को जीउ ॥ इहु मनु ले जउ उनमनि रहै ॥ तउ तीनि लोक की बातै कहै ॥ ३३ ॥

यह मन शक्ति है। यह मन शिव है। यह मन शरीर के पाँच तत्वों के प्राण हैं। अपने मन को वश में करके जब मनुष्य परम—प्रसन्नता की अवस्था में विचरता है तो वह तीनों लोकों के रहस्य बता सकता है॥ ३३॥

यया जउ जानहि तउ दुरमति हनि करि बसि काइआ गाउ ॥ रणि रूतउ भाजै नही सूरउ थारउ नाउ ॥ ३४ ॥

य—(हे भाई !) यदि तुम कुछ जानते हो तो अपनी दुर्बुद्धि का नाश कर दो और अपने शरीर रूपी गांव को वश में करो। यदि तू इस युद्ध में लगकर पराजित नहीं होवोगे तो ही तेरा नाम शूरवीर हो सकता है॥ ३४॥

रारा रसु निरस करि जानिआ ॥ होइ निरस सु रसु पहिचानिआ ॥ इह रस छाडे उह रसु आवा ॥ उह रसु पीआ इह रसु नही भावा ॥ ३५ ॥

र—जिस प्राणी ने माया के स्वाद को फीका—सा समझ लिया है, उसने भौतिक आस्वादनों से बचे रहकर वह आत्मिक आनंद प्राप्त कर लिया है। जिसने यह लौकिक आस्वादन त्याग दिए हैं, उसे वह (ईश्वर के नाम का आनन्द) प्राप्त हो गया है, जिसने वह (नाम) रस पान किया है, उसे (यह माया वाला) आस्वादन अच्छा नहीं लगता॥ ३५॥

लला ऐसे लिव मनु लावै ॥ अनत न जाइ परम सचु पावै ॥ अरु जउ तहा प्रेम लिव लावै ॥ तउ अलह लहै लहि चरन समावै ॥ ३६ ॥

ल—अपने मन में मनुष्य को प्रभु से ऐसा प्रेम लगाना चाहिए कि वह किसी दूसरे के पास मत जाए और सत्य को प्राप्त करे और यदि वहाँ, वह उसके लिए प्रेम एवं प्रीति उत्पन्न कर ले, वह प्रभु को प्राप्त कर लेता है और प्राप्त करके उसके चरणों में लीन हो जाता है।। ३६।।

ववा बार बार बिसन सम्हारि ॥ बिसन सम्हारि न आवै हारि ॥ बलि बलि जे बिसनतना जसु गावै ॥ विसन मिले सभ ही सचु पावै ॥ ३७ ॥

व—बार—बार अपने प्रभु को स्मरण कर। प्रभु को स्मरण करने से तुझे जीवन रूपी बाजी में पराजित नहीं होना पड़ेगा। मैं उन भक्तजनों पर तन—मन से न्यौछावर हूँ जो प्रभु का यश गाते हैं। प्रभु को मिलने से सत्य प्राप्त होता है।। ३७।।

वावा वाही जानीऐ वा जाने इहु होइ ॥ इहु अरु ओहु जब मिलै तब मिलत न जानै कोइ ॥ ३८ ॥

व—(हे भाई !) उस परमेश्वर के साथ जान—पहचान करनी चाहिए। उसे अनुभव करने से यह जीव उस जैसा ही हो जाता है। जब यह जीव एवं वह प्रभु एकरूप हो जाते हैं तो इस मिलन को कोई नहीं समझ सकता।। ३८।।

ससा सो नीका करि सोधहु ॥ घट परचा की बात निरोधहु ॥ घट परचै जउ उपजै भाउ ॥ पूरि रहिआ तह त्रिभवण राउ ॥ ३६ ॥

स—उस मन को पूर्णतया साध लो। अपने आपको हरेक बात से रोको, जो मन को बहकाती है। जब प्रभु का प्रेम उत्पन्न हो जाता है तो मन प्रसन्न हो जाता है। वह तीन लोकों का राजा हर जगह मौजूद है।। ३६।।

खखा खोजि परै जउ कोई ॥ जो खोजै सो बहुरि न होई ॥ खोज बूझि जउ करै बीचारा ॥ तउ भवजल तरत न लावै बारा ॥ ४० ॥

ख—यदि कोई मनुष्य प्रभु की खोज में लग जाए और उसे खोज कर पा लेता है तो वह दोबारा जन्मता—मरता नहीं। जब मनुष्य प्रभु को खोजता, समझता एवं उसका चिन्तन करता है तो उसे भयानक संसार—सागर से पार होते देरी नहीं लगती।। ४०।।

ससा सो सह सेज सवारै ॥ सोई सही संदेह निवारै ॥ अलप सुख छाडि परम सुख पावा ॥ तब इह त्रीअ ओहु कंतु कहावा ॥ ४१ ॥

स—जिस जीव—स्त्री की सेज को कंत — प्रभु सुशोभित करता है, वह अपने संदेह को दूर कर देती है। तुच्छ सुख को त्याग कर वह परम सुख को पा लेती है। तब यह पत्नी कही जाती है और वह इसका पति कहलाता है।। ४१।।

हाहा होत होइ नही जाना ॥ जब ही होइ तबहि मनु माना ॥ है तउ सही लखै जउ कोई ॥ तब ओही उहु एहु न होई ॥ ४२ ॥

ह—ईश्वर कण—कण में विद्यमान है परन्तु मनुष्य उसके अस्तित्व को नहीं जानता। जब वह उसके अस्तित्व को अनुभव कर लेता है, तो उसकी आत्मा विश्वस्त हो जाती है। ईश्वर तो अवश्य है लेकिन इस विश्वास का लाभ तब ही होता है जब कोई प्राणी इस बात को समझ ले। तब यह प्राणी उस प्रभु का रूप हो जाता है, यह अलग अस्तित्व वाला नहीं रह जाता।। ४२।।

लिंउ लिंउ करत फिरै सभु लोगु ॥ ता कारणि बिआपै बहु सोगु ॥ लखिमी बर सिउ जउ लिउ लावै ॥ सोगु मिटै सभ ही सुख पावै ॥ ४३ ॥

समूचा संसार यही कहता फिरता है कि मैं (माया) सँभाल लूँ, मैं (माया) एकत्रित कर लूँ। इस माया के कारण ही फिर प्राणी को बड़ी चिन्ता हो जाती है। परन्तु जब प्राणी लक्ष्मीपति प्रभु के साथ प्रीति लगाता है तो उसकी चिन्ता मिट जाती है और वह समस्त सुख प्राप्त कर लेता है॥ ४३॥

खखा खिरत खपत गए केते ॥ खिरत खपत अजहूं नह चेते ॥ अब जगु जानि जउ मना रहै ॥ जह का बिछुरा तह थिरु लहै ॥ ४४ ॥

ख—अनेकों ही मनुष्य मरते—खपते नाश हो गए हैं। इस तरह मरते—खपते आवागमन में पड़ा हुआ मनुष्य अभी तक प्रभु को स्मरण नहीं करता। अब यदि संसार के यथार्थ को समझकर मन प्रभु में टिक जाए तो जिस प्रभु से यह जुदा हुआ है, उसमें इसे बसेरा मिल सकता है॥ ४४॥

बावन अखर जोरे आनि ॥ सकिआ न अखरु एकु पछानि ॥ सत का सबदु कबीरा कहै ॥ पंडित होइ सु अनभै रहै ॥ पंडित लोगह कउ बिउहार ॥ गिआनवंत कउ ततु बीचार ॥ जा कै जीअ जैसी बुधि होई ॥ कहि कबीर जानैगा सोई ॥ ४५ ॥

मनुष्य ने बावन अक्षर जोड़ लिए हैं। परन्तु वह ईश्वर के एक शब्द को नहीं पहचान सकता। कबीर सत्य वचन कहता है कि पण्डित वही है, जो निडर होकर विचरता है। अक्षरों को जोड़ना पण्डित पुरुषों का काम—धंधा है। ज्ञानवान ज्ञानी मनुष्य यथार्थ को सोचता—समझता है। कबीर जी कहते हैं— जैसी बुद्धि प्राणी के मन में है, वैसा ही वह समझता है॥ ४५॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रागु गउड़ी थितीं कबीर जी कीं ॥ सलोकु ॥ पंद्रह थितीं सात वार ॥ कहि कबीर उरवार न पार ॥ साधिक सिध लखै जउ भेउ ॥ आपे करता आपे देउ ॥ १ ॥

श्लोक॥ पन्द्रह तिथियाँ एवं सात सप्ताह के दिन हैं। कबीर कहता है—मैं उस ईश्वर का गुणानुवाद करता हूँ जो अनन्त है। साधक एवं सिद्ध जब प्रभु के रहस्य को समझ लेते हैं, वह स्वयं सृजनहार—स्वरूप एवं स्वयं ही प्रभु रूप हो जाते हैं॥ १॥

थितीं ॥ अंमावस महि आस निवारहु ॥ अंतरजामी रामु समारहु ॥ जीवत पावहु मोख दुआर ॥ अनभउ सबदु ततु निजु सार ॥ १ ॥ चरन कमल गोबिंद रंगु लागा ॥ संत प्रसादि भए मन निरमल हरि कीरतन महि अनदिनु जागा ॥ १ ॥ रहाउ ॥

तिथि॥ अमावस्या के दिन अपनी अभिलाषाएँ त्याग कर अन्तर्यामी राम को (अपने हृदय में) स्मरण करो। इस प्रकार इसी जन्म में मोक्ष द्वार प्राप्त कर लोगे। (इस स्मरण के प्रभाव से) तुम्हारा यथार्थ तत्व जाग जाएगा, गुरु का शब्द अनुभवी रूप में संचरित होगा॥ १॥ जिस प्राणी का प्रेम गोविन्द के सुन्दर चरणों के साथ बन जाता है और संतों की कृपा से जिसका मन पवित्र हो जाता है, वह रात—दिन हरि का भजन करने में जागता रहता है॥ १॥ रहाउ॥

परिवा प्रीतम करहु बीचार ॥ घट महि खेलै अघट अपार ॥ काल कलपना कदे न खाइ ॥ आदि पुरख महि रहै समाइ ॥ २ ॥

एकम तिथि के दिन हे भाई! प्रियतम प्रभु का चिन्तन करो। अनन्त प्रभु हरेक हृदय में खेल रहा है। जो मनुष्य आदिपुरुष परमात्मा में लीन रहता है, मृत्यु का भय उसे कभी स्पर्श नहीं कर सकता॥ २॥

दुतीआ दुह करि जानै अंग ॥ माइआ ब्रहम रमै सभ संग ॥ ना ओहु बढै न घटता जाइ ॥ अकुल निरंजन एकै भाइ ॥ ३ ॥

द्वितीय—हे भाई ! समझ ले कि शरीर के अंग में (माया और ब्रह्म) दोनों खेल रहे हैं। माया एवं ब्रह्म कण—कण से अभेद हुए हैं। वह अकुल, निरंजन प्रभु न बढ़ता है और न ही घटता है॥ ३॥

त्रितीआ तीने सम करि लिआवै ॥ आनद मूल परम पदु पावै ॥ साधसंगति उपजै बिस्वास ॥ बाहरि भीतरि सदा प्रगास ॥ ४ ॥

तृतीय—यदि प्रभु की स्तुति करने वाला मनुष्य माया के तीनों गुणों को सहज अवस्था में समान रखता है, वह मनुष्य परम पद प्राप्त कर लेता है, जो आनंद का स्रोत है। सत्संगति में रहकर मनुष्य के भीतर यह विश्वास पैदा होता है कि भीतर—बाहर सर्वत्र उस प्रभु का ही प्रकाश है॥ ४॥

चउथहि चंचल मन कउ गहहु ॥ काम क्रोध संगि कबहु न बहहु ॥ जल थल माहे आपहि आप ॥ आपै जपहु आपना जाप ॥ ५ ॥

चतुर्थी—हे प्राणी ! अपने चंचल मन को वश में करके रख और काम, क्रोध की संगति में मत बैठ। जो ईश्वर समुद्र, पृथ्वी में सर्वत्र आप ही मौजूद है, वह स्वयं ही अपना जाप करता है॥ ५॥

पांचै पंच तत बिसथार ॥ कनिक कामिनी जुग बिउहार ॥ प्रेम सुधा रसु पीवै कोइ ॥ जरा मरण दुखु फेरि न होइ ॥ ६ ॥

पंचमी—यह संसार पाँच मूल अंशों का विस्तार है। स्वर्ण (धन) एवं स्त्री की तलाश इसके दो धन्धे हैं। कोई विरला पुरुष ही प्रभु—प्रेम का सुधारस पान करता है। वह दोबारा बुढ़ापा एवं मृत्यु का दुःख सहन नहीं करता॥ ६॥

छठि खटु चक्र छहूं दिस धाइ ॥ बिनु परचै नही थिरा रहाइ ॥ दुबिधा मेटि खिमा गहि रहहु ॥ करम धरम की सूल न सहहु ॥ ७॥

षष्ठी—मनुष्य की पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ एवं छठा मन—यह सारा साथ संसार (के पदार्थों की लालसा) में भटकता फिरता है, जब तक प्राणी ईश्वर के स्मरण में नहीं लगता, तब तक यह साथ (इन भटकावों में से) हटता नहीं। हे बन्धु ! दुविधा मिटाकर सहनशीलता धारण करो और धर्म—कर्म का यह लम्बा विवाद त्याग दे॥ ७॥

सातैं सति करि बाचा जाणि ॥ आतम रामु लेहु परवाणि ॥ छूटै संसा मिटि जाइ दुख ॥ सुंन सरोवरि पावहु सुख ॥ ८ ॥

सप्तमी—हे भाई ! गुरु की वाणी में श्रद्धा धारण करो और इसके द्वारा प्रभु (के नाम) को अपने हृदय में पिरो लो। इस प्रकार दुविधा दूर हो जाएगी और दुःख—क्लेश मिट जाएँगे और बैकुंठी सरोवर का सुख प्राप्त करोगे॥ ८॥

असटमी असट धातु की काइआ ॥ ता महि अकुल महा निधि राइआ ॥ गुर गम गिआन बतावै भेद ॥ उलटा रहै अभंग अछेद ॥ ६ ॥

अष्टमी—यह शरीर आठ धातुओं का बना हुआ है। इसमें महानिधि अगाध प्रभु बस रहा है। ज्ञान को जानने वाला गुरु यह रहस्य बतलाता है। सांसारिक मोह से हटकर मनुष्य अमर प्रभु में बसता है॥ ६॥

नउमी नवै दुआर कउ साधि ॥ बहती मनसा राखहु बांधि ॥ लोभ मोह सभ बीसरि जाहु ॥ जुगु जुगु जीवहु अमर फल खाहु ॥ १० ॥

नवमी—हे भाई ! शारीरिक इन्द्रियों को वश में रखो, इनसे उठती हुई तृष्णाओं पर अंकुश लगाओ। लोभ तथा मोह इत्यादि विकार भुला दो। इस परिश्रम का ऐसा फल मिलेगा जो कभी खत्म नहीं होगा, ऐसा सुन्दर जीवन जियोगे जो सदा स्थिर रहेगा॥ १०॥

दसमी दह दिस होइ अनंद ॥ छूटै भरमु मिलै गोबिंद ॥ जोति सरूपी तत अनूप ॥ अमल न मल न छाह नही धूप ॥ ११ ॥

दसमी—दसों दिशाओं में आनन्द ही आनन्द विद्यमान है। दुविधा दूर हो जाती है और गोबिन्द मिल जाता है। ज्योति—स्वरूप का तत्व अनूप है। वह पवित्र एवं मलिनता रहित है जहाँ वह बसता है, वहाँ कोई छाया अथवा धूप नहीं॥ ११॥

एकादसी एक दिस धावै ॥ तउ जोनी संकट बहुरि न आवै ॥ सीतल निरमल भइआ सरीरा ॥ दूरि बतावत पाइआ नीरा ॥ १२ ॥

एकादशी—यदि इन्सान एक परमात्मा की स्मृति में लीन रहे तो वह दोबारा योनियों के संकट में नहीं आता, उसका शरीर शीतल एवं निर्मल हो जाता है। प्रभु जो दूर कहा जाता है, उसे वह निकट ही पा लेता है॥ १२॥

बारसि बारह उगवै सूर ॥ अहिनिसि बाजे अनहद तूर ॥ देखिआ तिहूं लोक का पीउ ॥ अचरजु भइआ जीव ते सीउ ॥ १३ ॥

द्वादशी—आकाश में बारह सूर्य चढ़ जाते हैं और दिन—रात अनहद बाजे बजते हैं। प्राणी तब तीन लोकों के पिता—प्रभु को देख लेता है। एक आश्चर्यजनक खेल बन जाता है कि वह मनुष्य साधारण पुरुष से प्रभु—रूप हो जाता है॥ १३॥

तेरसि तेरह अगम बखाणि ॥ अरध उरध बिचि सम पहिचाणि ॥ नीच ऊच नही मान अमान ॥ बिआपिक राम सगल सामान ॥ १४ ॥

त्रयोदशी—धार्मिक ग्रंथ कहते हैं कि आकाश—पाताल दोनों में प्रभु की पहचान करो। उसके लिए कोई ऊँचा अथवा निम्न और न ही आदर वाला अथवा निरादर वाला है। सर्वव्यापक राम सबके भीतर एक समान समाया हुआ है॥ १४॥

चउदसि चउदह लोक मझारि ॥ रोम रोम महि बसहि मुरारि ॥ सत संतोख का धरहु धिआन ॥ कथनी कथीऐ ब्रहम गिआन ॥ १५ ॥

चतुदर्शी—चौदह लोकों एवं रोम—रोम में मुरारी प्रभु बसता है। हे भाई ! अपना ध्यान सत्य एवं संतोष में लगाओ। ब्रह्म—ज्ञान की कथा कथन करो॥ १५॥

पूनिउ पूरा चंद अकास ॥ पसरहि कला सहज परगास ॥ आदि अंति मधि होइ रहिआ थीर ॥ सुख सागर महि रमहि कबीर ॥ १६ ॥

पूर्णिमा के दिन आकाश में पूर्ण चाँद होता है। इसकी किरणों की कला से सहज ही प्रकाश फैल जाता है। आदि, अंत एवं मध्य में प्रभु पूर्णतया स्थिर हो रहा है। कबीर सुखों के सागर में लीन हुआ है॥ १६॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रागु गउड़ी वार कबीर जीउ के ७ ॥ बार बार हरि के गुन गावउ ॥ गुर गमि भेदु सु हरि का पावउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥

राग गउड़ी सप्ताह के दिन कबीर जी के—सप्ताह के सभी दिन हरि का गुणगान करो। हे भाई! गुरु के चरणों में पहुँचकर ईश्वर का रहस्य प्राप्त करो॥ १॥ रहाउ॥

आदित करै भगति आरंभ ॥ काइआ मंदर मनसा थंभ ॥ अहिनिसि अखंड सुरही जाइ ॥ तउ अनहद बेणु सहज महि बाइ ॥ १ ॥

रविवार—प्रभु की भक्ति प्रारम्भ करो और शरीर रूपी मन्दिर में ही तृष्णाओं को वश में करो। जब दिन—रात मनुष्य की वृत्ति अखंड स्थान पर लगी रहती है तो बांसुरी सहज ही अनहद बजाती है॥ १॥

सोमवारि ससि अंम्रितु झरै ॥ चाखत बेगि सगल बिख हरै ॥ बाणी रोकिआ रहै दुआर ॥ तउ मनु मतवारो पीवनहार ॥ २ ॥

सोमवार—चन्द्रमा से अमृत टपकता है। जब (यह अमृत) चखा जाता है तो यह तुरन्त ही सारे विष (विकारों) को दूर कर देता है। गुरु की वाणी के प्रभाव से संयमित मन प्रभु के द्वार पर टिका रहता है और मतवाला मन उस अमृत का पान करता रहता है॥ २॥

मंगलवारे ले माहीति ॥ पंच चोर की जाणै रीति ॥ घर छोडें बाहरि जिनि जाइ ॥ नातरु खरा रिसै है राइ ॥ ३ ॥

मंगलवार—यथार्थ को देख और कामादिक पाँच चोरों के आक्रमण करने के ढंग को समझ। हे भाई! अपने किले को छोड़कर बाहर कभी मत जाना (अर्थात् अपने मन को बाहर मत भटकने देना) अन्यथा प्रभु बहुत ही क्रुद्ध होगा॥ ३॥

बुधवारि बुधि करै प्रगास ॥ हिरदै कमल महि हरि का बास ॥ गुर मिलि दोऊ एक सम धरै ॥ उरध पंक लै सूधा करै ॥ ४ ॥

बुधवार—मनुष्य अपनी बुद्धि से प्रभु—नाम का प्रकाश पैदा कर लेता है, हृदय कमल में प्रभु का निवास बना लेता है। गुरु से मिलकर उसे सुख एवं दुःख दोनों को एक समान समझना चाहिए। अपने हृदय के उल्टे कमल को लेकर सीधा करना चाहिए॥ ४॥

ब्रिहसपति बिखिआ देइ बहाइ ॥ तीनि देव एक संगि लाइ ॥ तीनि नदी तह त्रिकुटी माहि ॥ अहिनिसि कसमल धोवहि नाहि ॥ ५ ॥

बृहस्पति—मनुष्य को अपने पाप धो देने चाहिए (अर्थात् विकार दूर कर देने चाहिए) तीन देवताओं को छोड़कर उसे एक ईश्वर से मन लगाना चाहिए। वह माया की त्रिगुणात्मक नदियों में ही गोते खाते हैं, दिन—रात नीच कर्म करते हैं, गुणस्तुति से विहीन रहकर उन्हें धोते नहीं हैं॥ ५॥

सुक्रितु सहारै सु इह ब्रति चड़ै ॥ अनदिन आपि आप सिउ लड़ै ॥ सुरखी पांचउ राखै सबै ॥ तउ दूजी द्रिसटि न पैसै कबै ॥ ६ ॥

शुक्रवार—जो रात—दिन अपने आप से युद्ध करता है और सहनशीलता की कमाई करता है, उसका यह व्रत सफलता प्राप्त कर जाता है। यदि प्राणी अपनी पाँचों ही ज्ञानेन्द्रियों को वश में कर ले तो किसी पर भी कभी उसकी मेर—तेर की दृष्टि नहीं पड़ती॥ ६॥

थावर थिरु करि राखै सोइ ॥ जोति दी वटी घट महि जोइ ॥ बाहरि भीतरि भइआ प्रगासु ॥ तब हूआ सगल करम का नासु ॥ ७ ॥

शनिवार–जो मनुष्य प्रभु–ज्योति की बत्ती को स्थिर रखता है, जो उसकी अन्तरात्मा में हैं, वह भीतर से बाहर उज्ज्वल हो जाती है और तब उसके तमाम दुष्कर्म मिट जाते हैं॥ ७॥

जब लगु घट महि दूजी आन ॥ तउ लउ महलि न लाभै जान ॥ रमत राम सिउ लागो रंगु ॥ कहि कबीर तब निरमल अंग ॥ ८ ॥ १ ॥

लेकिन जब तक मनुष्य के हृदय में सांसारिक मोह की वासना है, तब तक वह प्रभु–चरणों की शरण में लग नहीं सकता। कबीर जी कहते हैं–जब राम का सिमरन करते करते मनुष्य का प्रेम राम के साथ हो जाता है तो उसका हृदय पावन हो जाता है॥ ८॥ १॥

रागु गउड़ी चेती बाणी नामदेउ जीउ की   १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

देवा पाहन तारीअले ॥ राम कहत जन कस न तरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तारीले गनिका बिनु रूप कुबिजा बिआधि अजामलु तारीअले ॥ चरन बधिक जन तेऊ मुकति भए ॥ हउ बलि बलि जिन राम कहे ॥ १ ॥ दासी सुत जनु बिदरु सुदामा उग्रसैन कउ राज दीए ॥ जप हीन तप हीन कुल हीन क्रम हीन नामे के सुआमी तेऊ तरे ॥ २ ॥ १ ॥

राम ने वे पत्थर भी सागर पर तार दिए हैं (जिन पर राम का नाम लिखा हुआ था) तेरे नाम का जाप करने से मैं तेरा सेवक कैसे (संसार–सागर से) पार नहीं होऊंगा ?॥ १॥ रहाउ॥

हे प्रभु ! तुमने गनिका (वेश्या) को बचा लिया, तुमने कुरूप कुब्जा का कोढ़ दूर किया और पापों में ग्रस्त अजामल को पार कर दिया, (श्रीकृष्ण के) चरणों में निशाना लगाने वाले शिकारी तथा कई विकारी व्यक्ति मोक्ष प्राप्त कर गए। जिन्होंने राम का नाम याद किया है, मैं उन पर तन–मन से बलिहारी जाता हूँ॥ १॥

हे परमात्मा ! दासी–पुत्र विदुर तेरा भक्त लोकप्रिय हुआ; सुदामा (जिसका तूने दारिद्रय दूर किया), उग्रसेन को शासन प्रदान किया। हे नामदेव के स्वामी ! तेरी दया से वे (संसार–सागर से) पार हो गए हैं, जिन्होंने कोई जप नहीं किया, कोई तपस्या नहीं की, जिनकी कोई उच्च जाति नहीं थी और जिनके कर्म भी शुभ नहीं थे॥ २॥ १॥

रागु गउड़ी रविदास जी के पदे गउड़ी गुआरेरी

१ओं सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥ मेरी संगति पोच सोच दिनु राती ॥ मेरा करमु कुटिलता जनमु कुभांती ॥ १ ॥ राम गुसईआ जीअ के जीवना ॥ मोहि न बिसारहु मै जनु तेरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरी हरहु बिपति जन करहु सुभाई ॥ चरण न छाडउ सरीर कल जाई ॥ २ ॥ कहु रविदास परउ तेरी साभा ॥ बेगि मिलहु जन करि न बिलांबा ॥ ३ ॥ १ ॥

हे प्रभु ! मुझे दिन–रात यह चिन्ता लगी रहती है कि मेरी संगति बुरी है (अर्थात् नीच लोगों के साथ मेरा रहन–सहन है), मेरे कर्म भी कुटिल हैं और मेरा जन्म भी नीच जाति में से है॥ १॥ हे मेरे राम ! हे गुसाईं ! हे मेरे प्राणों के सहारे ! मुझे मत भुलाओ, मैं तेरा सेवक हूँ॥ १॥ रहाउ॥

हे प्रभु ! मेरी विपत्ति दूर कीजिए और मुझ सेवक को अपनी श्रेष्ठ प्रीति प्रदान कीजिए। मैं तेरे चरण नहीं छोड़ूँगा, चाहे मेरे शरीर की शक्ति भी चली जाए॥ २॥ हे रविदास ! मैंने तेरी शरण ली है, हे प्रभु ! अपने सेवक को शीघ्र मिल एवं विलम्ब मत कर॥ ३॥ १॥

बेगम पुरा सहर को नाउ ॥ दूखु अंदोहु नही तिहि ठाउ ॥ नां तसवीस खिराजु न मालु ॥ खउफु न खता न तरसु जवालु ॥ १ ॥ अब मोहि खूब वतन गह पाई ॥ ऊहां खैरि सदा मेरे भाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काइमु दाइमु सदा पातिसाही ॥ दोम न सेम एक सो आही ॥ आबादानु सदा मसहूर ॥ ऊहां गनी बसहि मामूर ॥ २ ॥ तिउ तिउ सैल करहि जिउ भावै ॥ महरम महल न को अटकावै ॥ कहि रविदास खलास चमारा ॥ जो हम सहरी सु मीतु हमारा ॥ ३ ॥ २ ॥

बेगमपुरा (उस) शहर का नाम है। उस स्थान पर कोई दुःख एवं क्लेश नहीं। वहाँ सांसारिक धन नहीं और न ही उस धन को चुंगी लगने का भय है। वहाँ न कोई खौफ, न भूल, न ही प्यास और न ही कोई गिरावट है॥ १॥ हे मेरे भाई ! मुझे वहाँ बसने के लिए सुन्दर वतन मिल गया है। वहाँ सदा सुख—मंगल ही है॥ १॥ रहाउ॥ प्रभु की सत्ता दृढ़, स्थिर एवं सदैव ही है। दूसरा अथवा तीसरा कोई नहीं, सब एक जैसे हैं, केवल वहीं वहाँ है। वह शहर हमेशा मशहूर है और समृद्ध है। वहाँ धनवान एवं तृप्त लोग रहते हैं॥ २॥ वे उस मालिक के मन्दिर के जानकार हैं, इसलिए उन्हें कोई नहीं रोकता। जिस तरह उनको भला लगता है, वैसे ही वहाँ विचरण करते हैं। बँधनों से मुक्त हुआ चमार रविदास कहता है—जो मेरे शहर का वासी है, वह मेरा मित्र है॥ ३॥ २॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ गउड़ी बैरागणि रविदास जीउ ॥ घट अवघट डूगर घणा इकु निरगुणु बैलु हमार ॥ रमईए सिउ इक बेनती मेरी पूंजी राखु मुरारि ॥ १ ॥ को बनजारो राम को मेरा टांडा लादिआ जाइ रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हउ बनजारो राम को सहज करउ ब्यापारु ॥ मै राम नाम धनु लादिआ बिखु लादी संसारि ॥ २ ॥ उरवार पार के दानीआ लिखि लेहु आल पतालु ॥ मोहि जम डंडु न लागई तजीले सरब जंजाल ॥ ३ ॥ जैसा रंगु कसुंभ का तैसा इहु संसारु ॥ मेरे रमईए रंगु मजीठ का कहु रविदास चमार ॥ ४ ॥ १ ॥

प्रभु का मार्ग बड़ा विषम एवं पहाड़ी है और मेरा बैल निर्गुण (छोटा—सा) है। प्रियतम प्रभु के समक्ष मेरी वन्दना है—हे मुरारी ! मेरी पूँजी की तुम स्वयं रक्षा करना॥ १॥ क्या कोई राम का व्यापारी है, जो मेरे साथ मिलकर चले ? मेरा माल (नाम—धन) भी लदा हुआ जा रहा है॥ १॥ रहाउ॥ मैं राम का व्यापारी हूँ और सहज ही ज्ञान का व्यापार करता हूँ। मैंने राम के नाम का पदार्थ लादा है परन्तु संसार ने माया—रूपी विष का व्यापार किया है॥ २॥ प्राणियों के लोक—परलोक के सभी कर्म जानने वाले हे चित्रगुप्त ! मेरे बारे में जो तुम्हारा मन करे लिख लेना अर्थात् यमराज के पास उपस्थित करने हेतु मेरे कार्यों में तुम्हें कुछ भी नहीं मिलेगा, क्योंकि ईश्वर की दया से मैंने समस्त जंजाल छोड़ दिए हुए हैं, इसलिए मुझे यम का दण्ड नहीं मिलेगा॥ ३॥ हे चमार रविदास ! कहो—जैसे जैसे मैं प्रभु—नाम का व्यापार कर रहा हूँ, मेरी आस्था हो रही है कि यह दुनिया ऐसे है जैसे कुसुंभड़े का रंग और मेरे प्रियतम प्रभु का नाम रंग इस तरह है जिस तरह मजीठ का रंग॥ ४॥ १॥

गउड़ी पूरबी रविदास जीउ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

कूपु भरिओ जैसे दादिरा कछु देसु बिदेसु न बूझ ॥ ऐसे मेरा मनु बिखिआ बिमोहिआ कछु आरा पारु न सूझ ॥ १ ॥ सगल भवन के नाइका इकु छिनु दरसु दिखाइ जी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मलिन भई मति माधवा तेरी गति लखी न जाइ ॥ करहु क्रिपा भ्रमु चूकई मै सुमति देहु समझाइ ॥ २ ॥ जोगीसर पावहि नही तुअ गुण कथनु अपार ॥ प्रेम भगति कै कारणै कहु रविदास चमार ॥ ३ ॥ १ ॥

जैसे जल से भरे कुएँ के मेंढक को अपने देश एवं परदेस का कुछ भी पता नहीं होता, वैसे ही मेरा मन माया (के कुएँ) में इतनी बुरी तरह फँसा हुआ है कि इस लोक—परलोक की कुछ भी सूझ

नहीं॥१॥ हे समस्त लोकों के मालिक! मुझे एक क्षण भर के लिए ही दर्शन दीजिए॥ १॥ रहाउ॥ हे माधव! मेरी बुद्धि (विकारों से) मैली हो गई है और मुझे तेरी गति की समझ नहीं आती। मुझ पर दया करो चूंकि मेरी दुविधा नाश हो जाए और मुझे सुमति प्रदान करो॥ २॥ हे प्रभु! महान योगी भी तेरे अनन्त गुणों का रहस्य नहीं पा सकते (पर) हे रविदास चमार! तू ईश्वर की महिमा–स्तुति कर, चूंकि तुझे प्रेम–भक्ति की देन मिल जाए॥ ३॥ १॥

गउड़ी बैरागणि १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सतजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजाचार ॥ तीनौ जुग तीनौ दिड़े कलि केवल नाम अधार ॥ १ ॥ पारु कैसे पाइबो रे ॥ मो सउ कोऊ न कहै समझाइ ॥ जा ते आवा गवनु बिलाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बहु बिधि धरम निरूपीऐ करता दीसै सभ लोइ ॥ कवन करम ते छूटीऐ जिह साधे सभ सिधि होइ ॥ २ ॥ करम अकरम बिचारीऐ संका सुनि बेद पुरान ॥ संसा सद हिरदै बसै कउनु हिरै अभिमानु ॥ ३ ॥ बाहरु उदकि पखारीऐ घट भीतरि बिबिधि बिकार ॥ सुध कवन पर होइबो सुच कुंचर बिधि बिउहार ॥ ४ ॥ रवि प्रगास रजनी जथा गति जानत सभ संसार ॥ पारस मानो ताबो छुए कनक होत नही बार ॥ ५ ॥ परम परस गुरु भेटीऐ पूरब लिखत लिलाट ॥ उनमन मन मन ही मिले छुटकत बजर कपाट ॥ ६ ॥ भगति जुगति मति सति करी भ्रम बंधन काटि बिकार ॥ सोई बसि रसि मन मिले गुन निरगुन एक बिचार ॥ ७ ॥ अनिक जतन निग्रह कीए टारी न टरै भ्रम फास ॥ प्रेम भगति नही ऊपजै ता ते रविदास उदास ॥ ८ ॥ १ ॥

सतियुग में सत्य (दान–पुण्य इत्यादि) प्रधान था, त्रेता युग यज्ञों में लीन रहा, द्वापर में देवी–देवताओं की पूजा प्रधान कर्म था, तीनों युग इन तीन कर्मों–धर्मों पर बल देते हैं और कलियुग में केवल नाम का ही सहारा है॥ १॥ मैं किस तरह (संसार सागर से) पार होऊँगा? मुझे कोई इस तरह कहता और निश्चित नहीं करवाता, जिससे मेरा जन्म–मरण का चक्र मिट जाए॥ १॥ रहाउ॥ धर्म के अनेकों स्वरूप वर्णन किए जाते हैं और सारा संसार उन पर अनुसरण करता दिखाई देता है। वह कौन–से कर्म हैं, जिन से मुझे मोक्ष प्राप्त हो जाए और जिनकी साधना से मुझे सिद्धि प्राप्त हो जाए॥ २॥ यदि वेदों एवं पुराणों को सुन कर पाप–पुण्य का निर्णय किया जाए तो शंका पैदा हो जाती है। संशय हमेशा हृदय में रहता है। मेरे अभिमान को कौन दूर कर सकता है?॥ ३॥ मनुष्य अपने शरीर का बाहरी भाग (तीर्थों के) जल से धो लेता है परन्तु उसके मन में अनेक विकार विद्यमान हैं परन्तु वह किस तरह शुद्ध होगा? उसका शुद्धता को प्राप्त करने का तरीका हाथी के स्नान–कर्म जैसा है॥ ४॥ जैसे सारी दुनिया यह बात जानती है कि सूर्योदय होने पर रात का अँधेरा समाप्त हो जाता है। यह बात भी स्मरणीय है कि तांबे के पारस द्वारा स्पर्श किए जाने पर उसके सोना बनने में देर नहीं लगती॥ ५॥ इसी तरह यदि पूर्वकालीन भाग्य जागें तो गुरु मिल जाता है, जो समस्त पारसों से सर्वोपरि पारस है। गुरु की कृपा से मन में प्रभु से मिलने की लालसा उत्पन्न हो जाती है, वह अन्तरात्मा में ही प्रभु को मिल जाता है और मन के वज्र कपाट खुल जाते हैं॥ ६॥ जो मनुष्य प्रभु–भक्ति की युक्ति को अपने हृदय में दृढ़ करता है, उसके तमाम बन्धन एवं विकार मिट जाते हैं। वह अपने मन को रोकता है, प्रसन्नता पाता है और केवल उस प्रभु का चिंतन करता है जो माया के तीनों गुणों से परे है॥ ७॥ मैंने अनेक यत्न करके देखे हैं परन्तु दूर हटाने से संदेह की फाँसी दूर नहीं हटाई जा सकती। कर्मकाण्ड के इन यत्नों से प्रभु की प्रेम–भक्ति मुझ से उत्पन्न नहीं हुई इसलिए रविदास उदास है॥ ८॥ १॥

☆☆☆